Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
पुस्तकालय

विषय संख्या
पुस्तक संख्या
आगत पंजिका संख्या

पुस्तक पर किसी प्रकार का निशान लगाना वर्जित है। कृपया १५ दिन से अधिक समय तक पुस्तक अपने पास न रखें।

112552

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

~~46030~~

~~46089~~

25 AUG 1983

V. 8/2 अध्याय

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

जनवरी, १९५६

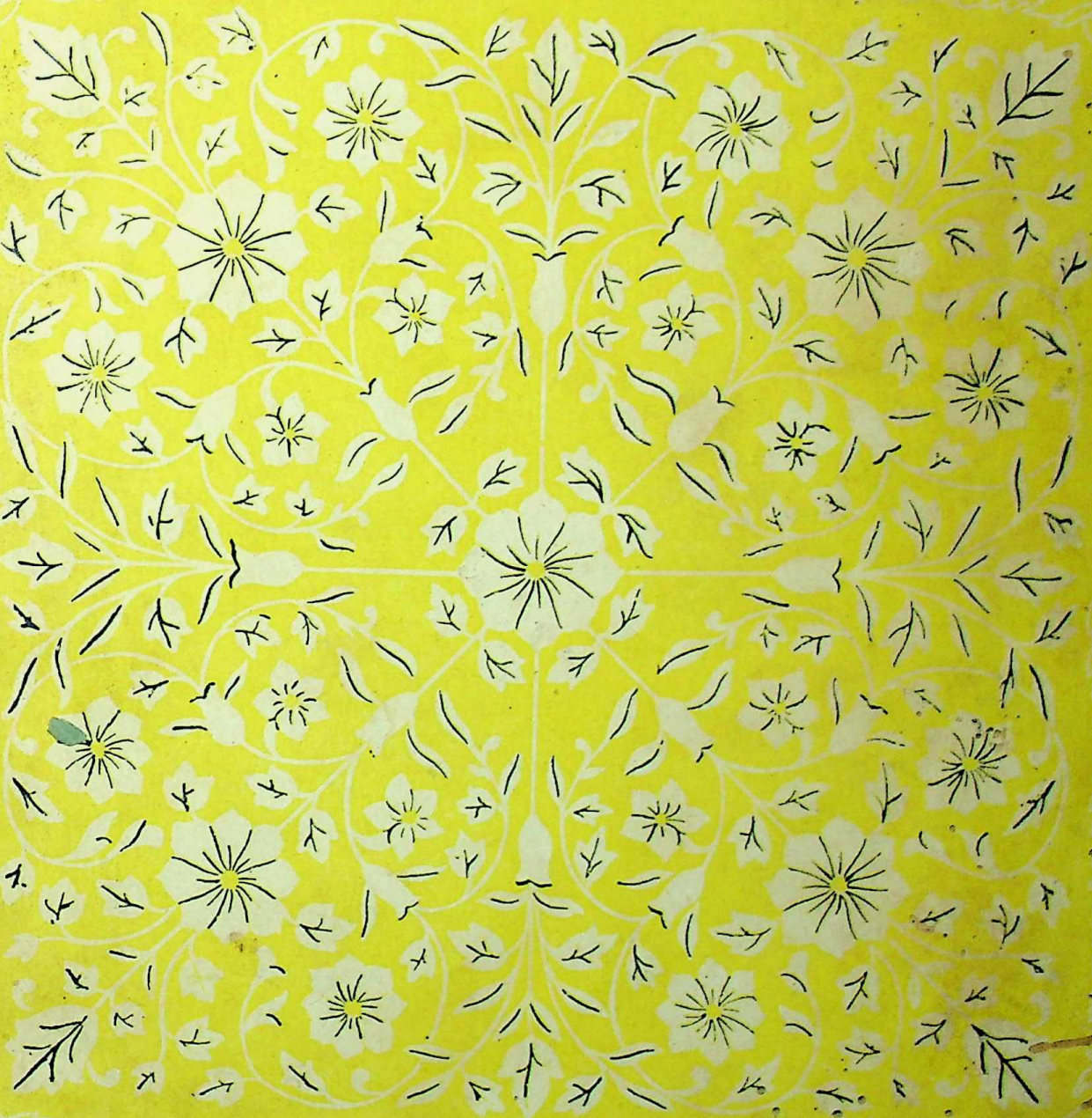

राष्ट्र भाषा प्रचार समिति, वर्धा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* 'राष्ट्रभारती' के *

वर्ष ६]

जनवरी ५६ के अिस अंकमें पढ़िअे।

[संख्या १

		लेखक	पृ० सं०
१. लेख :			
१. बापूकी मंडलीमें (संस्मरण)	...	महापंडित राहुल सांकृत्यायन	३
२. गुजराती साहित्यके भीष्मपितामह स्वर्गीय गोवर्धनराम त्रिपाठी	...	श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी, अनु०—शंकरदेव विद्यालंकार	८
३. देवस्वामी	...	प्रो० राजनाथ पांडेय अेम. अे.	१६
४ भारतीय काव्य परम्परा		आचार्य गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश' बी. अे.	२५
५. महामना मदनमोहन मालवीय (जीवन-पराग)		आचार्य सीताराम चतुर्वेदी अेम. अे.	३०
६. संस्कृत साहित्यकी सार्वभौम भूमिका	...	श्रीमती विदुषी सावित्रीदेवी अेम. अे.	४०
७. अैतिहासिक रस: अितिहास रसका अुपन्यास	..	प्रो. राजेश्वर गुरु अेम. अे.	४४
८. पंजाबकी आवाज : अमृता प्रीतम	...	भाअी श्री प्रीतमसिंह 'पंछी'	४८
२. कविता :			
१. हिमालयपर अुजाला	...	पंडित माखनलाल चतुर्वेदी 'भारतीय आत्मा'	१
२. नवल वर्ष !	...	श्री सुरेन्द्रमोहन मिश्र	२
३. रात अगहनी ! (शरद-गीत)	...	श्री 'राकेश'	१५
४. सृजनकी सीढ़ियाँ	...	श्री 'विद्रोही'	२३
५. गीत	...	श्री पुरुषोत्तम खरे	५१
६. ओ नयो माणस शूं छे ?	....	डा. कन्हैयालाल सहल अेम. अे., पी-अेच. डी.	५२
३. कहानी :			
१. अेक था आदमी	...	श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'	३५
२. हिमालय-किरण (तेलुगु)	...	स्व० अडिवि बापिराजु अनु०—श्री बालशौरि रेड्डी सा. र.	५३
४. देवनागर :			
१. तमिळ, गुजराती, मराठी	...	सर्वश्री सोमसुन्दरम् और सौ. शारदा वझे	६१
५. साहित्यालोचन :	...	सर्वश्री प्रो० प्रमोद वर्मा अेम. अे., अनिलकुमार सा. र., रामेश्वर दयाल दुबे अेम. अे. सा. र., और विजयशंकर त्रिवेदी सा. र.	६४
६. सम्पादकीय :	...	...	७०

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

रियायत— समितिके सभी प्रमाणित प्रचारकों, केन्द्र-व्यवस्थापकों और स्कूल-कालेजों तथा सार्वजनिक पुस्तकालय-वाचनालयोंको अेक वर्षतक केवल ५) रु. वार्षिक चंदेमें मिलेगी।

पता :— राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

112552

112552

राष्ट्र भारती

[समग्र भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

वर्ष ६] जनवरी-१९५६ [अंक १

हिमालयपर अुजाला

—श्री माखनलाल चतुर्वेदी

लिपटकर गिर गअीं बलवान चाहें,
घिसी-सी हो गअीं निर्माल्य आहें।
भृकुटियाँ किन्तु हैं निज तीर ताने,
हुअे जड़ पर सफल कोमल निशाने।
लटें लटकें, भले ही ओठ चूमें,
पुतलियाँ प्राणपर सौ साँस झूमें।
यहाँ है किन्तु अठखेली नवेली,
हिमालयके चढ़ी सिर अेक बेली।
नगाधिपमें हवा कुछ छन रही है,
नगाधिपमें हवा कुछ बन रही है।
किरनका अेक भाला कह रहा है,
हिमालयपर अुजाला हो रहा है॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवल वर्ष !

—श्री सुरेन्द्रमोहन मिश्र

ओ मेरे नवल वर्ष
कोटि-कोटि हृदयोंसे
तुम्हारा अभिनन्दन है !

आजकी रातको
लम्बे घंटा घरके
बारहके अक्षरपर
दोनों ही सुअियाँ जब
अेकदम गिर जाअेंगी,
पतझरके वृक्षके
अंतिम पत्तेकी तरह
वर्षका अंतिम
क्षण भी गिर जाअेगा
समयकी सीढ़ीसे
अितिहासकी छातीपर

ओ मेरे नवल वर्ष
कोटि-कोटि हृदयोंसे
तुम्हारा अभिनन्दन है !

समयकी सीढ़ीपर
तुम्हारा ये प्रथम पग
तुम्हें शुभ मंगल हो
तुम्हारे साम्राज्यमें
शांतिके देवताका
अेक छत्र राज्य हो
तुम्हारे साम्राज्यमें
धरतीका हर अेक
अिन्सान अेक हो ।
ओ मेरे नवल वर्ष
कोटि-कोटि हृदयोंसे
तुम्हारा अभिनन्दन है !

जनवरी—फरवरी
और तब
दिसम्बरकी
आखिरी तारीखकी
आखिरी रातको
तुम्हारा शरीर भी
क्षणोंसे घुल-घुलकर
धरतीपर गिर पड़ेगा,
पतझरके वृक्षकी
पत्तियाँ गिर पड़ेंगी
बारहके अक्षरपर
दोनों ही सुअियाँ जब
अेकाकार हो जाअेंगी ।
ओ मेरे नवल वर्ष
कोटि-कोटि हृदयोंसे
तुम्हारा अभिनन्दन है !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बापूकी मंडलीमें*

—श्री राहुल सांकृत्यायन

भंसालीः—सेवाग्रामके सन्त पुरुषोंमें यह अेक थे। अिनकी शिक्षा-दीक्षा विलायतमें हुअी थी। किसी कालेजमें प्रोफेसर थे, पर अब बापूके आश्रममें रह रहे थे। वह छोटे-छोटे बच्चोंको पढ़ानेके कामको भार नहीं, प्रेमके वश होकर करते थे। अुनके पढ़ानेका ढंग अितना सुन्दर था कि बच्चे अुनको छोड़ना नहीं चाहते थे। वह अुन्हें कहानियाँ सुनाते, हँसते-हँसते बच्चे लोट-पोट हो जाते। जब कोअी लड़का नहीं आता, तो भन्सालीजी अुसके घरपर पहुँच जाते। अुन्होंने भागीरथीजीको भी कहा—"राणीजी, तुम क्यों नहीं पढ़ने आतीं।" राणीजी समझती थीं, कि बच्चोंका काम और आश्रमका काम मेरे लिअे पर्याप्त है। वह बच्चोंको पढ़ाते रहते, और अुनके सामने खड़े-खड़े सलगम, गाजर आदिकी टोकरी निकालकर कट्-कट् खा रहे हैं। फलोंके अतिरिक्त अुन्हें हर रोज सेर-दो-सेर दूध-दही मिल जाता था। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं, कि यह भोजन शरीर-पोषणके लिअे अपर्याप्त नहीं था, और स्वाद तो बहुत कुछ अभ्यासकी बात है। अेक और भी अुनमें विचित्रता थी, कि वह निद्राजित होनेके लिअे प्रतिज्ञाबद्ध थे। दिन भर वह पढ़ाते या दूसरा काम करते बिता देते थे। रातको नींद अचानक हमला न बोल दे, अिसलिअे वह रुअी धुनने लगते या रात-रात चक्की पीसते। मन-मन भर आटा पीसकर रख देते। लेकिन, निद्राको अिस तरह परास्त थोड़े ही किया जा सकता था। दो-चार दिनकी प्रतीक्षाके बाद वह अेकाअेक आकर दबोचती। भन्सालीजी खड़े-खड़े गिर पड़ते। अुस वक्त अुन्हें अुठाना मना था। वह वहीं गिरी हुअी जगहपर अेक-दो दिन तक पड़े कअी दिनोंकी नींदकी कसर पूरी करते। अुनकी नाकमें कीड़े-चीटियाँ घुस जातीं, लेकिन कुम्भ-कर्णकी तरह अुनको कोअी खबर नहीं होती। वह बड़े गम्भीर प्रकृतिके पुरुष थे, हँसना तो अेक तरह जानते नहीं थे। बापू अुनसे मजाक करते, तो वह चुपचाप सुन लेते। अेक दिन किसीने अुन्हें अुत्तेजित कर दिया, और अुनके मुँहसे कुछ अैसे शब्द निकल गअे, जिनको भन्सालीजी अनुचित समझते थे। फिर क्या था, अुन्हें भारी पश्चात्ताप हुआ। डोरा डालकर सूअीसे अपने दोनों ओठोंको अुन्होंने सी दिया। चार-पाँच टाँके थे। वह टाँके कपड़ेमें नहीं पड़े थे, ओठोंसे खून बहने लगा था, और अुनका सारा कपड़ा रंग गया। हाँ, मुँहने क्यों अैसे अनुचित शब्द अपने भीतरसे निकाले, अिसे दण्ड मिलना चाहिअे। कोअी कहेगा—अुचित-अनुचितका देखना ओठों या मुँहका नहीं। अुसकी जिम्मेवारी तो मनकी है। भन्सालीजी अनपढ़ गँवार नहीं थे, वह भी अिसे जानते थे। अुस भूमिकामें पहुँचकर वह कहते, ओठोंके सिलनेका दुख भी तो मनको ही होगा, और अिस प्रकार अुसे ही दण्ड मिल रहा है। कोअी दौड़ा-दौड़ा बापूके पास गया। वह भन्सालीके पास पहुँचे। कैंचीसे काटकर ओठकी सिलाअी तोड़ी गअी, घावको अच्छा होनेमें कुछ समय लगा।

आश्रममें अेक मद्रासी तरुण था, जिसे मिर्गी आया करती थी। अचानक ही जब दौरा पड़ता, तो वह कटे पेड़की तरह गिर पड़ता। कितनी ही देरतक अुसके हाथ-पैर काँपते रहते, मुँहसे झाग निकलती। फिर थोड़ी देरमें प्रकृतिस्थ हो जाता, और चरखा कातने या किसी दूसरे काममें लग जाता। वह नीमकी पत्तियाँ खाया करता, बापूकी बतलाअी विधिसे प्राकृतिक चिकित्सा करता। डाक्टर भी आकर देखा करता। पर, बड़े भाअीके वहाँ रहते समय तक अुसको अपने रोगसे मुक्ति नहीं मिली थी।

सच्चिदानन्द स्वामी आश्रमके ब्रह्मज्ञानी थे। वह अस्पतालके पीछे बाहरकी ओर अेक कोनेमें रहा करते थे। बैठने-लेटनेके लिअे अुनका मिट्टीका चबूतरा

* "वीर चन्द्रसिंह गढ़वाली" से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। कोढ़के कारण अुनके हाथ-पैरकी अँगुलियाँ गिर गअी थीं, नाक भी गल गअी थी। हाथ-पैरको सफेद कपड़ेसे बाँधकर रखते। अुनके शरीरपर खादीका सफेद कुर्ता रहता। पहले लोग अुनके पास नहीं जाते थे। बापू स्वयं जाकर अुनके घावको अपने हाथोंसे धोते, पट्टी बाँधते। बापूके ज़ीवनकी यह भी अेक अद्भुत झलक थी। हर रोज शाम-सबेरे जब घूमकर लौटते, तो बापू सच्चिदानन्द स्वामीके पास जरूर जाते। वह बहुत सुशिक्षित थे, शास्त्रोंको भी पढ़ा था, और अंग्रेजीके भी विद्वान् थे। बापू दस-पन्द्रह मिनिट जो अुनसे बात करते थे, अिसके कारण अुस कोढ़ी पुरुषको कितना आनन्द होता होगा? बड़े भाअीको अुनकी टट्टी और कुटियाके साफ करनेका काम मिला था। वह दोनों वक्त वहाँ जाते। आश्रमकी सफाअी ही अिसका कारण थी, जो कि वहाँ मक्खियाँ नहीं भिनभिनाती थीं। स्वामीके पास पुस्तकें थीं, वह अुन्हें पढ़ते रहते थे।

अेक दिन अन्धेरा हो गया था, जब कि बिच्छूने बड़े भाअीके पैरमें काट खाया। बत्तीकी रोशनीमें अुन्होंने देखा, कि लाल-लाल बड़ा बिच्छू काम करके भागा जा रहा है। अेकदम अुठकर अुन्होंने अुसे मार दिया। शिवजीकी बरात चिल्ला अुठी, कोअी कहता—'तुम आदमी नहीं हो', दूसरा कहता—'तुम जानवर हो। बेचारे प्राणीको मार डाला। बड़े भाअी कैसे समझ सकते थे, कि वह निरीह प्राणी है। वह अुसी कोठरीमें रहें, कल वह माधवीको डंक मार सकता है, या किसी दूसरेको। अुसका जीवित रहना दूसरोंके लिअे अनिष्टकर हो सकता है। शिवजीकी बरात शिकायत लेकर बापूके पास पहुँची—'बापू, अनर्थ हो गया। बड़ा भाअी तो आश्रमके हरेक नियमको पैरोंसे रौंदना चाहता है। अुसने बिच्छू मार दिया।'

बापूने हँसते हुअे कहा—"बिच्छूको लोग मारा ही करते हैं, यह आश्रमकी सभी बातोंको नहीं जानते। बड़े भाअीको समझाअिअे।" आश्रम अैसी जगह था, जहाँ बिच्छू और साँप अक्सर निकला करते थे। लोग अेक बड़े चिमटेसे अुन्हें पकड़कर घड़ेमें डाल देते, फिर कहीं दूर छोड़ आते। धर्मात्मा लोग थे, प्राणिमात्रके अूपर अनुकम्पा करना अपना कर्तव्य समझते थे।

बापू लोकमतकी जबर्दस्त शक्तिको जानते थे। अिसीलिअे देश और विदेशके लोकमतको अपने पक्षमें करनेके लिअे हमेशा कोशिश करते। जब कोअी अंग्रेज, अमेरिकन या दूसरा विदेशी अुनके विचारों और कामको जाननेके लिअे आता, तो वह अुनका स्वागत करते और अुसे परिचय प्राप्त करनेका हरेक अवसर प्रस्तुत करते। चाहे अमेरिकन हो या अंग्रेज या भारतीय, सबको गांधीजीके कमरेमें बाहर जूता खोलकर जाना पड़ता था। अैसी मुलाकातके समय अिस्तुस्सलामको छोड़कर किसीको बापूके पास रहनेकी अिजाजत नहीं थी।

गांधीजीके पट्ट शिष्य विनोबा थे, अिसे सभी जानते हैं। लेकिन पट्ट शिष्यका रहना गुरुके आश्रममें नहीं होता था। वह वहाँसे तीन मील दूर पौनारमें रहते थे। व्यक्तिगत सत्याग्रहके लिअे सबसे पहले बापूने अुन्हींको चुना था। अुस समय अखबारोंमें अुनके फोटोके साथ लेख छपे थे। बड़े भाअीकी भी अिच्छा विनोबाके दर्शन की हुअी। अुनके भाअीको अुन्होंने आश्रममें देखा था, जो टी० बी० के मरीज थे, और भैषज्यगुरुकी देखरेखमें अुनकी चिकित्सा हो रही थी। बड़े भाअीने सोचा, जिसकी प्रशंसा बापू स्वयं अपने मुँहसे करते हैं, अुसे और अुसके आश्रमको भी देखना चाहिअे। अेक दिन दो-तीन और आश्रमियोंके साथ बड़े भाअी पौनारकी ओर चले। जाकर विनोबाको नमस्कार किया। पौनारके सन्त अपने गुरुसे भी अधिक गम्भीर प्रकृतिके हैं। वह दो-चार बातें कहकर चुप हो गअे। बड़े भाअीने अुनकी कुटियाको अच्छी तरह देखा, फिर चले आअे।

२६ जनवरीके समारोहके लिअे आश्रममें अेक सभा हुअी, जिसके प्रधान विनोबा हुअे। वहीं अुन्हें अुस आदमीके चमत्कारिक भाषणको सुननेका अवसर मिला, जिसे कि वह चुप्पी समझकर अुस दिन लौट आअे थे। विनोबा बीच-बीचमें चुटकुले कहते, पुराणोंकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानियाँ अुद्धृत करते। सारे श्रोता अुनके भाषणपर मुग्ध थे।

जैनी लोग वर्षमें अेक दिन साल भरके लिअे अुपभोगकी अेक चीजके छोड़नेका व्रत लेते हैं। आश्रममें भी यह प्रथा चली थी। अुस दिन "शिवजीकी बारात" प्रतिज्ञा ले रही थी। कोअी कहता--मैं साल भर गायका दूध नहीं पीअूँगा। दूसरा कहता--मैं भैंसका दूध नहीं पीअूँगा। तीसरा कहता--मैं बकरीका दूध नहीं पीअूँगा। अिसी प्रकार किसीने छाते, जूते अिस्तेमाल न करनेकी भी प्रतिज्ञा ली। भागीरथी और बड़े भाअी चुप रहे। बापूका ध्यान अुधर गया और अुन्होंने पूछ दिया—बड़े भाअी, सबने प्रण लिया, तुम क्यों चुप रहे?

बड़े भाअीने कहा--मैंने अेक चीजका प्रण लिया है, अुसको ही अभी नहीं पूरा कर सका। अब अेक और प्रण लेकर मैं गदहा नहीं बनना चाहता। बापू, मुझे क्षमा कीजिअे।

बापूने अिसी बातको लेकर अेक छोटा-सा भाषण दिया--बड़े भाअीकी बात सच है। देशके आजाद करनेका प्रण बड़े भाअीने लिया है, और अभी वह प्रण पूरा नहीं हो पाया है। फिर दूसरा प्रण कैसे लेते? मेरे पास बड़े भाअी जैसे अगर चार आदमी मिल जाते, तो देश आजाद हो गया होता।

बापूका स्वास्थ्य शरीरको देखते बहुत अच्छा था। जिस तरह कामके लिअे वह कठोर नियमका पालन करते थे, वैसे ही खान-पानमें भी बहुत संयम रखते थे।

अेक दिन बापूने कहा--बड़ा भाअी, मैं बम्बअी जा रहा हूँ, तीन दिनमें लौट आअूँगा।

दीनबन्धु अेण्ड्रूके स्मारकके लिअे बापू भीख माँगनेके लिअे निकले थे। बापू और मालवीयजी भिखमंगोंके राजा थे। वह खूब माँगते थे, और लोग भी अुनकी झोलियोंको खूब भरकर देते थे। लौटकर आनेपर बापू बड़े प्रसन्न थे। अुन्होंने कहा—कुछ ही घंटोंमें आशासे भी अधिक रुपया मिल गया।

'४२–अगस्तके महान् अभियानका समय नजदीक आ गया था। अिसी समय आचार्य नरेन्द्रदेवजी और नेहरूजीने निश्चय किया, कि बड़े भाअीको काशी विद्यापीठ भेज दिया जाअे। बापूसे भी अिसके बारेमें पूछ लिया था। जब विद्यापीठ जानेकी बात आअी, तो अुन्होंने बापूसे पूछा—बापू, विद्यापीठमें मैं क्या बनकर जा रहा हूँ। मेरी पढ़ाअी तो सिर्फ चौथे दर्जे तककी है।

बापूने हँसते हुअे कहा—तुम्हें हम प्रोफेसर बनाकर भेज रहे हैं।

—मैं विद्यार्थी भी होने लायक नहीं हूँ, मुझसे वहाँ विद्यार्थी क्या पढ़ेंगे?

बापूने कहा—छह महीनेमें जो हमने यहाँ तुमसे पढ़ा, वही विद्यार्थी वहाँ पढ़ेंगे।

बड़े भाअीकी आश्रमसे जानेकी अिच्छा नहीं थी। नेता क्यों काशी विद्यापीठ भेज रहे हैं, यह भी अुन्हें समझमें नहीं आया। शायद वह समझते थे, कि बड़े भाअीमें तरुणोंमें जीवन डालनेकी शक्ति है। अिस समय बनारसमें जाकर वह कुछ कर सकते हैं।

चलनेसे पहले बड़े भाअीने बापूसे कहा--मैं छह महीने आश्रममें रहा, अब बाहर जा रहा हूँ। लोग आश्रमके बारेमें पूछेंगे। मैं नहीं चाहता, कि अुनके सामने कोअी गलत बात बताअूँ। बापूका आश्रम अेक तीर्थ है। यहाँ कितने ही तीर्थयात्री आया करते हैं। हमारे देशमें बदरीनाथका धाम है। वहाँ लम्बा चूल्हा खुदा हुआ है, जिसमें सूखी भोजपत्रकी लकड़ी जलती है। भात पकानेके लिअे पाँतीसे पतीलियाँ रखी जाती हैं, और हरेक पतीलीके अूपर क्रमशः छोटी होती जाती कअी पतीलियाँ रहती हैं। सबसे अूपरकी पतीली बहुत छोटी होती। आग जलानेपर भुर्जकी लकड़ी बड़े जोरसे जलती है और अुसकी लौ सभी पतीलियोंको लपेट लेती हैं। पकना चाहिअे सबसे निचली पतीली भातको, लेकिन सबसे पहले अूपरकी पतीलीका भात पकता है। बदरीनाथके यात्री अिसे बड़ा चमत्कार समझते हैं, और वह अिस बातको अपने देशमें जाकर लोगोंको सुनाते हैं – बदरीनाथ सचमुच बहुत चमत्कारिक देवता है। यह अुनका भ्रम है। वह नहीं ख्याल करते, कि कम पानी होनेकी वजहसे अूपर तक पहुँची हुअी ज्वाला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबसे पहले छोटी पतीलीको ही अधिक गरम करने अर्थात् भात पकानेमें समर्थ होती है। मैं अिसी तरह अपनी राये आश्रमके बारेमें नहीं बतलाना चाहता हूँ।

बापूने कहा--अच्छा तो बड़े भाअी, शामकी प्रार्थनामें तुम्हें व्याख्यान देना होगा।

बापूने बड़े भाअीके लिअे भारी धर्म-संकट पैदा कर दिया। व्याख्यान देनेका अुन्हें अभ्यास नहीं था। अितने महान् नेताके सामने भाषण देनेमें तो अुनके लिअे मरण-सा हो रहा था। अुनका दिल दहल गया। लेकिन, जानते थे, कि अब पिण्ड नहीं छूटेगा। वह वहाँसे आकर जंगलकी ओर चले गअे। मनमें आया, कि जो कुछ शामको बोलना है, अुसका यहाँ रिहर्सल कर लूं। वह अेकके बाद अेक बातोंको मनमें बैठाने लगे। दिनभर यह भी मनाते रहे, कि किसी तरह यह बला टलती।

बापूने आश्रमवासियोंको अबतक बड़े भाअीका अितना ही परिचय दिया था, कि यह मेरे मित्र हैं। आश्रमवासी अुतना ही भर जानते थे। आज शामके वक्त प्रार्थनाके बाद बापूने बड़े भाअीका पूरा परिचय दिया। पेशावरमें किस तरह अहिंसाका पालन करते हुअे देशके लिअे अुन्होंने अपने प्राणोंकी बलि चढ़ाअी थी, अिसे बतलाया। सारे आश्रमवासी सुनकर बड़े आश्चर्य और सम्मानके साथ बड़े भाअीकी ओर देखने लगे। बापूके कहनेपर अुन्होंने बोलना शुरू किया--

"मैं आश्रममें छह महीने रहा। मैं गाँवका गँवार हूँ। न मुझमें विद्या है न बुद्धि। अिसलिअे बापू और अुनके आश्रमको समझना मेरी शक्तिसे बाहर है। लेकिन, मैंने जो कुछ समझा, अुसमें तीन बातें मुझे खास जान पड़ीं--(१) बापूने आश्रममें स्वावलम्बी होनेका पाठ पढ़ाना चाहा। अिसीलिअे यह चरखा कातना, कपड़ा बुनना, साग-सब्जी अुगाना, शरीरसे परिश्रम करना और पाखाना अुठाने जैसे कामको नीच न समझना आदि बातें चलाअीं। (२) मानव-जाति अनेक धर्मोंको मानती है। आदमियोंके भी विचार भिन्न-भिन्न होते हैं। बापूकी प्रार्थनामें सभी धर्मवाले अेक साथ प्रार्थना करते हैं, और अिम्तुस्सलाम कुरानकी आयतें पढ़कर अुसे खतम करते हैं। मनुष्य मात्र भाअी-भाअी हैं, यह दूसरा अुद्देश्य है बापू और अुनके आश्रमका। (३) बापू अपने जीवनसे बतलाते हैं, कि समयका बड़ा महत्व है, हमें अुसे यों ही बरबाद नहीं करना चाहिअे। अिसीलिअे वह अेक साथ दो-दो काम करते हैं।

बापूके सत्य और अहिंसाके बारेमें मैंने पूरी तौरसे अध्ययन नहीं किया। अिसलिअे अुसके बारेमें कुछ नहीं कह सकता। यहाँ न मन्दिर है, न मूर्ति, न पीपल। बापू ही यहाँ मूर्ति हैं, और अुनके कुअेंमें तीर्थका जल भरा हुआ है। लोग मूढ़ भक्ति दिखलाते हैं, लेकिन अुन्हें कोअी नहीं रोकता। बाहरके लोग आश्रमके दर्शनके लिअे आते हैं। मुझे अफसोस है, कि आश्रमवासी अुनकी मूढ़ श्रद्धाको हटाकर सच्ची और बहुमूल्य बातको समझानेकी कोशिश नहीं करते। मैं दो महीने तक पाखानेकी सफाअी करता रहा, लेकिन मुझे अुसमें घृणाकी बात तो दूर, अेक तरहका अभिमान और आनन्द मालूम होता था। आश्रमकी अिन बातोंको लोगोंको मालूम होना चाहिअे। आश्रममें कौन लोग रसोअी बनाते हैं, किस तरह वहाँ जाति-धर्म, छुआ-छूतका कोअी भेद नहीं। बदरीनाथमें गढ़वालके सबसे अूँचे ब्राह्मण (डिमरी) ही रसोअिया होते हैं, दूसरा कोअी वहाँ भीतर घुस नहीं सकता। हमारी रसोअीमें यहाँ चमार भी हैं, मुसलमान भी हैं, अीसाअी भी हैं। सभी हमारे डिमरी हैं। बापूके प्रचारसे देशमें लोग बड़ी संख्यामें खद्दरधारी हैं। खान-पानकी छुआ-छुतको आश्रममें हटा देख-सुनकर लोग अिसका भी अनुकरण कर सकते हैं। यहाँ बिना मसालेका अुबला हुआ भोजन पहले मुझे फीका-फीका लगा था, लेकिन कुछ दिनोंमें ही स्वादिष्ट लगने लगा, और कितना स्वास्थ्यकर। यह भी अनुकरणकी बात है।"

बड़े भाअीने छोटी ही छोटी बातें कहीं, लेकिन भाषण बड़ा प्रभावशाली रहा।

बापूके भोजनालयमें मिर्च-मसालेको जाने नहीं दिया जाता था। लेकिन, बड़े भाअीको मालूम था, कि महादेवभाअी और मश्रूवालाके घरोंमें सिल-बट्टेसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मसाला खूब पीसा जाता है। वह यह भी जानते थे, कि आश्रम थोड़ी बातोंमें ही स्वावलम्बी है। अुसे दूधके लिअे भी श्री जमनालाल बजाजकी गौशालाका मुँह ताकना पड़ता है। कमियाँ थीं, लेकिन अुनके कारण आश्रमके गुणोंको बड़े भाअी भुला नहीं सकते थे, न गान्धीजीके स्निग्ध जीवनको ही। छोटी-छोटी बातोंको लेकर बापू आश्रमवासियोंको बड़ी सुन्दर शिक्षा दिया करते थे। वह कहा करते थे, यहाँ तो शिवजीकी बरात जमा हुअी है। मेरे हटते ही सारी बरात बिखर जाअेगी। वह देखते ही रहते थे, कि अधिक समझदार आदमी आश्रममें कम आते हैं, और मूढ़ोंकी श्रद्धा चौबीसों घंटे अुनकी रखवाली नहीं कर सकती। वह आपसमें अीर्ष्यासे जले जाते। जरा-सी बातमें झगड़ पड़ते, हरेक अपनेको महासिद्धान्ती साबित करना चाहता। अेक दिन बापू अपनी मण्डलीके साथ टहलने जा रहे थे। रास्तेमें किसीने थूक दिया था। अुसपर मक्खियाँ बैठी थीं। बापूने अुसीको लेकर कहा—तुम रास्तेमें थूक देते हो। ये मक्खियाँ अिसपर बैठी रो रही हैं। अिसके कारण बीमारी होगी, ये लोग मर जाअेंगे, अिसीके लिअे बेचारी रो रही हैं। साथ-साथ कोशिश कर रही हैं, कि जहाँ तक हो सके अिस थूकको मिटा दें। लेकिन, मक्खी बेचारी तो छोटी-छोटी होती हैं।

बड़े भाअी आश्रमसे प्रस्थान करने लगे। सड़कपर कपड़ोंके गट्ठर, बिस्तरे और बक्सोंका ढेर लगा हुआ था। आखिर पूराका पूरा कुनबा साथमें था। बापू बिदाअी देनेके लिअे आअे। अुन्होंने हँसते हुअे कहा--बड़ा भाअी, अितने सामानके ले जानेके लिअे गढ़वालमें ताँगा कहाँसे मिलेगा?

—बापू, गढ़वालमें दरवाजेमें ताला नहीं लगाया जाता, क्योंकि वहाँ चोरी-डकैती नहीं होती। कोटद्वार तक मुझे रेलसे जाना है। बाकी सामान वहीं छोड़ दूँगा, और जो अुठा सकूँगा, अुसे पीठपर लादके ले जाअूँगा। बाकीको फिर दूसरी या तीसरी बार ले जाअूँगा।

ये सनातन !

मारुतोंमें साँस अुनकी गूँजती है
सप्त-सागरकी लहरमें फेन अुठते हैं;
आगमें है ताप अुनका, देवता प्रतिरूप भर हैं।
स्वप्न-आकुल, शुभ्र सागरके तले पातालमें
ये नागशय्याको सजाते हैं, जहाँ
जीवन हमारा जन्म लेता है नियतिके क्रोड़में।

देव-मंदिरके सरोवरके
कमल-सा मेरा खिले जीवन, समर्पित
हो सदा अस्तित्वके आनन्दको
और आशीर्वाद वत्सल गुरुजनोंका
मुझे हो सम्पत्ति, सम्बल;
और मेरा गीत अुनकी प्रेरणासे
गन्ध-मधु हो तृप्तिके सब पिपासाकुल यात्रियोंको।

—"नेहरू-अभिनन्दन ग्रन्थ"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुजराती साहित्यके भीष्मपितामह स्व० गोवर्धनराम त्रिपाठी

—श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी

पचास वर्ष पूर्वकी बात है। अुस समय प्रत्येक शिक्षित गुजराती अपनेको "सरस्वतीचन्द्र' मानकर, गोवर्धनरामकी कल्पना-सृष्टिमें विहार किया करता था।

"नहीं अूँचे, नहीं नीचे,
मळे आधार घन हींचे"

अिस प्रकार मनकी तरंगोंमें अुड़ा करता था। अिसके अतिरिक्त किसी "कुसुम सुंदरी" को वरनेके अुन्मादमें अपनी 'गृह-दीपिका' को निहारकर आहें भरता था। अैसे युवकोंमें अेक मैं भी था।

सन् १९१० से, दिवंगत श्री चन्द्रशंकर पंड्या और श्री कांतिलाल पंड्या सरीखे मित्रोंके संग मैंने बम्बअीमें अपना जीवन प्रारम्भ किया। अुनकी अिन नडियादी-मंडलीमें मैं घुलमिल गया और घड़ा गया। अिन सबका स्नेह मेरे हृदयमें रम गया। श्री गोवर्धनराम अिस मंडलीके पूजास्पद, जीवित-जाग्रत प्रेरणामूर्ति थे, अतः परोक्ष भावसे अुनकी प्रेरणा प्राप्त करनेका सौभाग्य मुझको भी प्राप्त हुआ।

* * *

ठीक सौ वर्ष पूर्व, विजयादशमीके दिन गोवर्धन-रामका जन्म नडियादमें, वड़नगरा नागर ब्राह्मणोंके कुलमें हुआ था।

वड़नगरा नागरोंकी छोटी-सी ज्ञातिकी महत्ताका मूल खोजनेके लिअे हमको गुप्त सम्राटोंके सुवर्ण-युगमें जाना होगा। अुस समयमें आनर्तके, अुत्तर गुजरातके तथा विद्या-केन्द्र आनन्दनगर (वड़नगर) के ब्राह्मण अपनेको नागर कहते थे।

पंद्रह सौ वर्षोंमें अिस जातिके विद्वानों, वेदांतियों, राजनीतिज्ञों और योद्धाओंमें कुछ अेकके नाम वल्लभी-युग, प्रतिहारयुग और चौलुक्य युगके अितिहासमें मिलते हैं। नवीं शतीमें अुत्तर गुजरात कान्यकुब्जके गुर्जरेश्वर मिहिरभोज (कथानकोंमें जिसे कल्याण कटकका भुवड कहा गया है) के साम्राज्यमें था। अुस समय विद्या-विशारद नागरभट्टके वडनगरसें ग्वालियर जानेका अुल्लेख है। अुसका पुत्र वैलभट्ट और पौत्र अल्लभट्ट वहाँके दुर्गपाल बनाअे गअे, अिस बातका भी अुल्लेख है।

चौलुक्य-कुलभूषण मूलराजने जब गुजरातका श्रीगणेश किया अुस समय माधव, लूल और भाम नामके तीन नागर मंत्री-पदपर मौजूद थे तथा नागर पंडित "सोल" पाटणेशका राज-पुरोहित था।

गुजरातके विश्वकर्मा जयसिंहदेव सिद्धराज और अुसके अुत्तराधिकारी कुमारपालके राज्यकालमें दादाक मेहता महामात्यके और अुसके वीरपुत्र महादेव मालवाके दंडनायक थे। अुस समयमें सर्वदेव और अुसके पुत्र आमिग राजगुरु थे। कविकुल शिरोमणि श्रीपालको चक्रवर्तीका सगा भाअी मानते थे।

तेरहवीं शतीमें तो राजगुरु सोलके वंशज कवि सोमेश्वरका नाम अितिहासमें सुवर्णाक्षरसे अंकित है। "कीर्ति कौमुदी" द्वारा अिसने गुजरातके अतीतको अुज्ज्वल बना दिया। भोले भीमदेवके समयमें गुजरात छिन्न-भिन्न हो गया था और अुस समय अैन मौकेपर सोमेश्वरने वृद्ध लवणप्रसादको प्रेरित करके और वसुपाल तेजपालकी सहायता प्राप्त करके गुजरातका अुद्धार किया था।

अितिहास तो निष्पक्ष है, कलंकको ढाँकने नहीं देता। खिलजीने चौलुक्य-कालीन गुजरातका विनाश किया अुसमें भी नागर माधवका हाथ था। अितिहासके साथ कल्पनाकी बात भी जोड़ देता हूँ कि माधव द्वारा किअे गअे पापका प्रायश्चित्त मुझे कराना पड़ा है, वह भी सोमेश्वरके वंशज नागर गंगेश्वर मुनिके हाथसे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९ वीं शतीके पूर्वार्धमें अधेड़ अुम्रके नागर वेदांती, कर्मकांडी अथवा शाक्त होते थे। वे बड़े विद्याव्यासंगी थे। काठियावाड़में गोकुलजी झाला तथा गंगा ओझा राज्य करते थे और अन्य नागर राज्यकी खटपट्टमें व्यस्त रहते थे। अिने-गिने नागर व्यापार भी करते थे। सभी "कलम, कडछी और बरछी" चलानेके गर्वमें मस्त रहते थे, अपनेको सबसे पृथक् तथा सर्वोपरि मानते थे।

ब्रिटिश शासन आया और अुसमें शिक्षण और शासन कार्यके नवीन मार्ग खुले। अिन मार्गोंपर भी युवक नागर सबसे पहले आगे बढ़ रहे थे। नर्मदाशंकर भोलानाथ साराभाअी, नंदशंकर तुलजाशंकर, महीपतराम रूपराम, और झवेरीलाल याज्ञिक आदिके नामोंसे कौन अपरिचित है?

* * *

गोवर्धनरामके भोलेभाले पिता माधवरामने धंधेमें पैसे खोअे। हाथसे वैभव निकल जानेपर नडियादमें आकर भगवद्भक्तिमें तल्लीन हो गअे। अुनकी माता अतिशय व्यवहार-कुशल, दृढ़ और तेज मिजाजवाली थीं। गोवर्धनरामका बाल्यकाल नवभारतके सर्जनका अुषःकाल था।

लगभग १८२० में गुजरातमें स्वामीनारायणने नअे जीवनकी नींव रखी। अुसके दो सूत्र थे--**सदाचार विहीन भक्ति प्रभुको प्रिय नहीं और साधुपद प्राप्त करनेका ब्राह्मण और शूद्र दोनोंको समान अधिकार है।**

सन् १८२२ में "मुम्बअी समाचार" स्थापित हुआ। रणछोडदास गिरधरभाअीने अर्वाचीन गुजराती शिक्षण पद्धतिका प्रचार किया। सन् १८२७ में अेल्फिन्स्टन अिंस्टिट्यूट बंबअी, अँगरेजी शिक्षणका केन्द्र बना और पश्चिमका सम्पर्क प्रारम्भ हुआ।

सन् १८४८ में अलेग्जेण्डर किन्लाक फार्ब्स (१८२१-१८६१) ने "गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी"की स्थापना की और कवि दलपतरामके सहयोगके परिणाम स्वरूप "रासमाला" रचकर गुजरातके भूतकालकी कुछ झाँकी कराअी।

सन् १८५१ में रणछोडभाअीके सभापतित्वमें "बुद्धिवर्धक सभा" की स्थापना हुअी और अुत्साही युवकोंने सुधारणाकी घोषणा की। नर्मदाशंकर "जंग जीतने" आगे आअे और सिद्धराजका स्मरण करके गुणवंती गुजरातके पुनरुत्थानकी कामना करने लगे।

सन् १८५५ में नवीन सुधारणा की गंगोत्री स्वरूप "बुद्धिवर्धक सभा" मेंसे प्रखर अुत्साह प्रवाहित होने लगा। अुसी वर्ष खुशरो काबराजीने "पारसीमित्र" अखबार निकाला। अीश्वरचन्द्र विद्यासागरकी प्रेरणासे "विधवा विवाह विधेयक" अुसी वर्ष पास हुआ। सूरतमें दुर्गाराम महेताजीने नवीन विचारोंको फैलाना प्रारम्भ किया।

धर्मचुस्त और रूढ़िचुस्त कट्टर नडियाद नगर अभी जागा नहीं था। स्वर्गीय झवेरीलाल याज्ञिक बम्बअीमें पढ़ रहे थे और दिवंगत मनसुखराम सूर्यराम अहमदाबादमें। ये दोनों नागरोंके विद्याप्रेमके वारिस थे और प्राचीन विद्या अेवं संस्कारमें दृढ़ श्रद्धा रखकर अुसकी पुनः प्रतिष्ठाके स्वप्न ले रहे थे।

सन् १८५७ में प्रथम स्वातन्त्र्य संग्राममें (अिसके लिअे बलवा शब्द अयुक्त है) हुआ। अुसमें हमलोग हार गअे। भारतने स्वतंत्रता खो दी। झाँसीकी रानी लक्ष्मीबाअीका अवसान हुआ। मध्यकालीन भारत पूर्णतया समाप्त हो गया और अर्वाचीन युगका प्रारंभ हुआ। मुम्बअीमें विश्वविद्यालयकी स्थापना हुअी। सन् १८५८ में "बुद्धिवर्धक" का संपादकत्व स्वीकार करके अर्वाचीनोंके आद्य श्री नर्मदाशंकरने सामाजिक क्रांति प्रारंभ की।

गोवर्धनरामके संस्कार पुराने जमानेके; परन्तु समृद्ध थे। अिनके पिताके गुरु "मुनिमहाराज" का घरमें प्रभाव था। बाणभट्टकी पौराणिक कथाओंसे अिनका बाल-मानस भींगा हुआ था। सन् १८८६ में पितृतुल्य मनसुखराम बम्बअीके अेल्फिन्स्टन कॉलेजमें पढ़ने गअे, अुस समय अुनकी निष्ठा और विद्याप्रेमका गहरा प्रभाव अिनके मनपर पड़ा।

सन् १८६४ में बंगदेशमें बंकिमचंद्र चट्टोपाध्यायने "दुर्गेशनन्दिनी" अुपन्यास प्रकाशित किया और अिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार भारतीय साहित्यकी अर्वाचीन पुनर्-रचनाके अिस सूत्रधारने नांदीका गीत गाया। गुजरातमें सन् १८६५ में "नर्मगद्य" पुस्तक प्रकट हुअी। १८६६ में नंदशंकरका "करणघेलो", और १८६७ में नवलरामका "भटनुं भोपालुं" प्रकाशित हुअे। अिस प्रकार प्रभातकी नवीन किरणोंका स्वागत करनेवाले अिन रसिकने अपने परिन्दों (विहगों) ने पंख फड़फडाअे और कल-कूजन प्रारंभ किया।

सत्रह वर्षकी अुम्रमें गोवर्धनराम बम्बअी अेल्-फिन्स्टन कॉलेजमें भर्ती हुअे। संस्कृत प्रधान नवीन सांस्कृतिक-प्रवृत्तिके अेक अग्रगण्य निर्माता विद्वद्वर्य रामकृष्ण गोपाल भांडारकर वहाँपर प्राध्यापक थे। अुनके तथा अुदारचरित्र प्रधान आचार्य वर्डस्वर्थ, दोनों गुरुजनोंके वे विश्वासपात्र और आशाभाजन बन गअे। श्री काशीनाथ त्र्यंबक तेलंग और श्री महादेव गोविन्द रानडे सरीखे नवीन संस्कार-निर्माताओंका परिचय भी अिनको प्राप्त हुआ।

अिन सबके सम्पर्क द्वारा गोवर्धनराममें अुत्कट विद्याप्रेम प्रकट हुआ। अपना तथा जगत्का अुद्धार करनेका अदम्य अुत्साह भी अिनकी चेतनामें प्रकट हुआ। अिन्होंने संस्कृत, गुजराती और अंग्रेजीका सम्यक् अध्ययन किया, साथ ही भारत, अिंग्लैण्ड, रोम और ग्रीसके अितिहासका भी अनुशीलन किया। अुस समयका अध्ययन-क्रम आजकलके पाठ्यक्रमकी तरह संकुचित और अेकांगी नहीं था। मानसिक विकास और चरित्र निर्माण अुसका प्रथम ध्येय था। नर्मदाशंकर और मनसुखरामको जाने और समझे बिना नवीन गुजरातको नहीं समझा जा सकता।

सन् १८६२ में मनसुखराम पढ़ाअी छोड़कर त्रिपाठी कुलकी श्रीकृष्ण-वासुदेवकी दूकान (फर्म) में आ गअे। साथ ही पुराने गुजराती साहित्यके अुद्धारका और गुजरातीको संस्कृतमय बनानेका प्रयत्न भी करने लगे।

मनसुखराम प्रभावशाली पुरुष थे। अल्प समयमें ही अुनके भविष्यने पलटा खाया। जूनागढ़के दीवान गोकुलजी झालाने अिनको अुक्त राज्यका अेजेन्ट नियुक्त किया। शनैः-शनैः अिन्होंने गुजरातके अन्य देशी राज्योंपर भी अपना प्रभाव डाला। फलतः वे राज्योंके दीवान घड़नेवाले शिल्पी बन गअे।

मुंबअीमें अिनके घरपर भोजराजका दरबार जुटने लगा। अुसमें अुदीयमान साहित्यकार और मुंबअीके विद्वान भी आया करते थे। नडियादके राजनीतिज्ञ देसाअी बिहारीलाल भी आते थे। काठिया-वाड़ी राजनीतिक खटपटिये तो आते ही थे। अिस प्रकार चहुँ-ओर मनसुखरामका डंका बजने लगा। पुरानी गुजरातीके काव्योंका भी अिन्होंने अुद्धार किया। आर्य-धर्म और संस्कृतिमें अिनकी परम निष्ठा थी, अुसके आधारपर अिन्होंने "अस्तोदय" संप्रदाय स्थापित किया और "बुद्धिवर्धक" संप्रदायके विरोधमें शंखनाद किया—"**सुधारणा अधःपतन करनेवाली है।**"

गोवर्धनरामने अिनसे बहुत कुछ सीखा, परन्तु अपनी स्वभावजन्य समदृष्टि द्वारा नवीन सरणी स्थापित की। नया और पुराना तथा प्राचीन, अर्वाचीन और सनातन अिन सबका अपनी विवेक बुद्धिसे अुन्होंने निरीक्षण करना प्रारंभ किया। परन्तु अेक बात अिनको दीपककी तरह स्पष्ट ज्ञात हुअी कि समाज और व्यक्तिकी नवीन रचना पुरानी नींवपर ही अच्छी तरह हो सकती है। विप्लव तो विध्वंसक है, सर्जनात्मक नहीं।

* * *

गोवर्धनराम सन् १८७५ में विश्वविद्यालयके स्नातक (बी. अे.) बने। अनिवार्य कठिनाअियोंके कारण अिन्होंने दीवान शामलदास मेहताकी छत्रछायामें भावनगर राज्यकी नौकरी स्वीकार की। सन् १८८४ में अेल० अेल० बी० की परीक्षा पास करके तत्काल ही प्रतिज्ञाकी पूर्तिके लिअे अिन्होंने मुंबअीके अुच्च न्यायालयमें अपील सुननेवाले विभागमें वकालत प्रारंभ की। दस वर्षमें तो अिस व्यवसायमें अुन्होंने अग्रगण्य स्थान प्राप्त कर लिया और पिताका ऋण चुका दिया।

जन्म पानेसे पूर्व ही गोवर्धनराम मानो कसौटीपर चढ़ गअे थे। ये अपनी माताके अुदरमें थे अुसी समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिनकी माताने अपनी अेक सहेलीके गर्भके साथ अिनका वाग्दान (सगाअी) कर दिया था। पहले सहेलीके घर पुत्रीका जन्म हुआ और कुछ मासके पश्चात् गोवर्धनराम अुत्पन्न हुअे। दोनों वाक्प्रदत्तोंका सन् १८६८ में ब्याह हो गया और दोनोंके बीचमें प्रेमकी गाँठ बँधी। परन्तु सास-बहूका विग्रह-प्रेम कौन भूल सका है? परिणामतः गोवर्धनरामका कोमल मन दुखी होने लगा।

गोवर्धनराम सदा ही प्रेमके प्यासे थे। अपने कॉलेज जीवनमें अनेक मित्रोंसे अिन्होंने प्रेम किया और अनेकोंका प्रेम प्राप्त किया। अिनके अवसानके छह वर्ष बाद मैं हाअीकोर्ट आया तब भी अिनके पुराने मित्रोंके मनसे अिनका प्रेम मुरझाया नहीं था। सन् १८९७ में मान्य कृष्णलाल काका गोवर्धनरामके साथ व्यवसायमें सम्मिलित हुअे। हमारा यह सौभाग्य है कि साहित्यके ये भीष्म पितामह अभी तक हमको प्रेरणा दे रहे हैं। आज भी जब वे गोवर्धनरामकी बात करते हैं, तब अुनका हृदय स्नेहसे गद्गद् हो जाता है।

प्रेमी-हृदय गोवर्धनरामको पारिवारिक दृष्टिसे बहुत दुख सहन करना पड़ा था। १९ वें वर्ष अिनकी प्रथम पत्नी स्वर्गवासिनी हो गअीं। प्रेमके भूखे अिनके मृदुल हृदयको बड़ा भारी आघात लगा। अिनका हृदय रो अुठा—

तुज स्नेह थी नथी हुँ धरायो,
नथी दुःख कायर बनी नाठो,
तुज पाछळ हुँ नथी थाक्यो,
हजी रोवा थी।

सुखदुःख भुलावण अे तो,
तुज मोहिनी नथी हते तो,
मन, थातुं विरक्त गमे तो,
रोअी रोअी मरी।

नहीं तो स्मरी मोहनी तारी,
बळचां करजे॥

—('स्नेहमुद्रा' से)

क्षणभरको अिनके मनमें वैराग्य आ गया और संसार छोड़नेका अिन्होंने संकल्प भी किया। अन्तमें अश्रुओंको काव्य रूपमें प्रवाहित करते हुअे अिन्होंने "हृदय रुदित शतक" लिखा।

अन्तमें अिनका वैराग्य स्थिर त्यागवृत्तिमें परिवर्तित हो गया। अिक्कीस वर्षमें जिस समय सबकी आँखोंके सामने जीवनके सुवर्ण रंग फैले हुअे दिखाअी देते हैं, अुस समय अिन्होंने तीन प्रतिज्ञाअें कीं—स्वतंत्र व्यवसाय करना, नौकरी नहीं करनी, स्वयं कमाकर पिताका ऋण चुका देना। चालीस वर्ष पूर्ण होनेपर वानप्रस्थी होकर शेष जीवन साहित्य-सेवामें अर्पण कर देना। कच्ची अुमरमें की हुअी ये सब प्रतिज्ञाअें अिन्होंने पालीं।

अिनके जीवनमें आर्थिक कठिनाअियाँ और कौटुम्बिक परेशानियाँ भी बराबर आती रहीं। स्वास्थ्य भी अिनका सदा शिथिल रहता था। समय कुसमय गंभीर बीमारियाँ अिनको विकल करती रहीं तथापि सौम्यता अिन्होंने कभी नहीं खोअी, और न अपनी कर्तव्य परायणताको ही अिन्होंने कभी भुलाया।

अिनकी अनुभूति सूक्ष्म थी तथापि प्रथम पत्नीके वियोगके पश्चात् अुल्लासकी लहरें अिनके हृदयमें नहीं अुठीं, सो कभी नहीं अुठीं। अिनकी कृतियोंमें अिनका आक्रन्दन सुनाअी देता रहता है—

दिसे आ शुं सर्व, तिमिर बधुं आखा भवनमां,
अुरे भार्या अग्नि भड़भड़ बळे, हाय, शुंज अे।
स्नेही जनोनां सुख जोवाने बदले दुःखमें जोयां रे,
रतिरूप हसवाने बदले सअु हृदय चीरी-चीरी रोयां।
दुःख-दुःख सहु पासे वर्षे, रात्रि घोर बनी गाजे रे,
निष्फल लोचन थअि गयां, ते हृदय पड्युं मुज त्रासेरे।

—स्नेहमुद्रा

बाअीसवें वर्ष अिन्होंने "प्रवृत्तिमय संन्यास" के भगवे धारण किअे और कोमल हृदयको अन्ततक शान्त रखा। परन्तु अिनकी परीक्षा तो चालू ही रही।

तीसवें वर्ष अिनकी "प्रिय भगिनी" जो "सरस्वतीचन्द्र" की 'मूल प्रोत्साहिनी" थी, दिवंगत हो गअी! हृदयके घात फिरसे काव्य रूपमें बहने लगे—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर्ष शोक ना दर्भ राशि माँ,
लगाड़ी छे में ल्हाय ।
अेक क्रमे तेमां पड़ी भगिनी--
मृत्युशोक होमाय ।
अे होमें आहुति देतो,
नयन न अश्रु धरतो;
कठिन हृदयनो भ्रात काष्ठभर,
भगिनी चितापर भरतो ।

—'निवापांजलि'
(सरस्वतीचन्द्र भाग—३)

४७ वें वर्ष फिर अिनके हृदयको कठोर आघात लगा । अतिप्रिय पुत्री लीलावती--जड़ भरतकी मृगी- चल बसी और श्रान्त हृदयने लिखा--

"At 5-30 P. M. yesterday my poor Lilavati died after a stainless, spotless life of suffering"

अिनके अश्रुओंमें बहनेका जोर नहीं रहा । पुनः "निष्फल लोचन हो गअे ।" हृदयको वज्र-सा कठोर बनाकर गोवर्धनराम जीवनसिद्धान्तसे चिपटे रहे-- To the man who seeks pleasure in work of other, work is duty ।

अिनका समस्त जीवन बिना गिराअे हुअे अश्रु और अपने हाथों अुठाअे हुअे कर्तव्यधर्मके बीचमें झूलता रहता है ।

❀ ❀ ❀

सन् १८८६ में नर्मदाशंकर विदेह हो गअे, अुस समय गुजरात नवीन शैली, नूतन वस्तु और नवीन सर्जनाकी प्रतीक्षा करता हुआ खड़ा था । सन् १८८७ में "सरस्वतीचन्द्र" का प्रथम भाग--"बुद्धिधनका कर्त्तृत्व"--प्रकट हुआ । गुजरात अुसपर तुरन्त मुग्ध हो गया । अुसी वर्ष नरसिंहराव भोलानाथ दिवेटियाकी "कुसुममाला" प्रकाशित हुअी ।

"सरस्वतीचन्द्र" के चार भाग अेक नवलकथा (अुपन्यास) नहीं, अेक पुराणके चार स्कंध हैं । बीस वर्ष तक लिखे गअे १७०० पन्नोंमें, अेक समान विषय और पात्रोंकी सर्जना कोअी भी साहित्यकार नहीं कर पाया है । प्रथम भाग स्वतंत्र अुपन्यास है और साथ ही गोवर्धनरामका अपना अक्षर देह है ।

अिस पुस्तकमें गुजराती शैली नवीन कथन प्रभाव--अभिव्यंजना शक्ति--प्राप्त करती है तथापि रचयिताकी शैलीमें अभीतक अेक-समान वेग नहीं आया था । वह तो पचीस वर्षके पश्चात् पाँचवें भागमें आनेवाला था ।

अिस पुस्तकमें संस्कृत गद्यकी आडम्बरभरी वाक्य-रचना, अंगरेजी गद्यका कथन प्रभाव, पुरानी गुजरातीकी पंक्तियाँ तथा बातचीतके शब्द, कहावतें और रूढ़िप्रयोग साथ-साथ बह रहे हैं । ये प्रयोग अनेक बार सर्वथा पृथक् प्रतीत होते हुअे, कहीं-कहीं अेकत्र रूपमें और क्वचित् अेकरूपमें प्रवाहित होते हुअे दृष्टिगोचर होते हैं । तथापि पहली बार गुजराती गद्य अर्वाचीनकी सूक्ष्मता प्रदर्शित करनेका माध्यम बन पाया है ।

अिस अुपन्यासमें अुस समयके गुजराती जीवनके संघर्षों और विसंवादों, सौन्दर्य और कुरूपता, अुत्साहों और निराशाओं आदिकी ध्वनि है । अिसके अतिरिक्त अुसमें अमरतत्व भी विद्यामान है ।

१८ वीं शतीके मध्यकालसे मानव जीवनका नवीन कालखंड प्रारम्भ हुआ था । फ्रैंच विचारक रूसो अुसका सूत्रधार था । अुसके प्रतापसे साहित्यमें "रोमेन्टिसिज्म" प्रकट हुआ । रोमेन्टिसिज्मके लिअे अभीतक अपनी भाषाओंमें अुपयुक्त शब्द आयोजित नहीं हुआ है ।

हृदयके स्पंदनोंको सुनाना और व्यक्त करना, अिस प्रकारके साहित्यका लक्षण माना गया है । यह लक्षण भारतीय साहित्यमें आने लगा था और सरस्वतीचन्द्रके प्रथम भागमें--"बुद्धिधनके कर्त्तृत्व"-में स्पष्टतया प्रस्फुटित हुआ है ।

अिस मुद्रणप्रधान कालखंडमें अुपन्यास, साहित्यका अेक विशेष प्रकार है । अूर्मिगीत (लिरिक्)की तरह वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हृदयहारी नहीं परन्तु साहित्य स्वामी अुसको हृदयवेधक बना सकता है। अुपन्यास नाटककी तरह मोहक नहीं तथापि अुसमें नाटककी मोहिनी आ सकती है।

अुपन्यास लोकप्रिय है क्योंकि यह प्रकार अर्वाचीन स्त्री-पुरुषोंके हृदयकी आवश्यकताको पूर्ण करके अुनकी अूपर-अूपरकी रसिकताको पुष्ट कर सकता है। जिसमें आन्तरिक ध्वनि सुननेकी शक्ति हो अुसे वह ध्वनि सुनानेका सामर्थ्य भी, कोअी अेक अुपन्यासकार अुसमें ला सकता है।

रचयिताको अुपन्यासको सफल और सजीव बनानेका जादू करना पड़ता है। पहले वह हृदयकी गहराअीमें स्थित अनुभूतियोंको कल्पना द्वारा सत्यस्वरूपमें मूर्त करता है, और वह भी अैसे जगत्में जो वास्तविक प्रतीत होता है, तथापि अुसमें नग्न वास्तविकताके विसंवाद और क्लिष्टता न दीखनी चाहिअे!

❀ ❀ ❀

"सरस्वतीचंद्र" के प्रथम भागमें गोवर्धनराम अपने अनुभवोंको मूर्त करते हैं। अुनके पिताजीकी फर्म डगमगाअी, अुसी प्रकार सरस्वतीचन्द्रके पिताकी भी डगमगाअी। शठराय, बुद्धिधन, नरमराम, स्पष्टतया भावनगरके अनुभवोंमेंसे प्रकट हुअे हैं। सौभाग्य देवी, अलककिशोरी और गुमान गुजरातके घर-घरमें आज भी मिल सकते हैं। ये पात्र और नायक, नायिका अितने ही जगत्में सजीव हैं।

"सरस्वतीचंद्र" में गोवर्धनरामका आधा अंग मूर्त हुआ है। अिनकी प्रथम पत्नी दिवंगत हो गअी और अिनके मनमें संसार छोड़कर "निराधार निराकार" गतिसे चलनेकी जो क्षणिकवृत्ति पैदा हुअी, वह अिस शिथिलसंकल्प स्वैरविहारीमें आअी है। लेखकने अुसको प्रबल आत्मबलसे पोषित अपना दूसरा आधा तत्व नहीं दिया है।

कुमुदके पात्रमें प्रथम पत्नीकी सुशीलता और जिस पढ़ी हुअी कन्यासे अिनका विवाह नहीं हो सका, अुन दोनोंका संमिश्रण करके कल्पना-चित्र बताया हो तो अिसमें आश्चर्य नहीं। कुमुदको छोड़ दिया, अुसके पीछे सरस्वतीचंद्रके विलापमें "हृदयरुदित शतक" की तथा "स्नेहमुद्रा" की प्रतिनिधि है।

गोवर्धनरामके संयमी हृदयमें भरा हुआ 'रोमेन्टिक' स्वभाव "सरस्वतीचंद्र" में प्रकाशित होता है। वह कल्पना-विलासी है। अपूर्व बननेके लिअे अधीर है। अुसकी अनुभव शक्ति "चुम्बककी सूअी" की तरह जरासे कंपनसे स्पंदित हो जाती है।

वह आदर्श पुत्र होना चाहता है, परन्तु बाप जरा अविश्वास प्रकट करता है और वह घरसे भाग जाता है। अुसकी माँ वैरभाव-युक्त है, तो भी अुक्त आदर्श सेवन करनेकी अुसे आकांक्षा है। प्रणयकी वांछा सरस्वतीचन्द्रके हृदयको कुतर डालती है, तथापि बिना अपराधके वह बिचारी प्रणयिनीको, वनमें विलखती हुअी वैदर्भी (दमयन्ती) की तरह, छोड़कर चला जाता है।

सरस्वतीचंद्र सदा ही सत्यमार्गोंकी खोजमें रहता है, परन्तु कदम-कदमपर वह असत्य पथपर भटक जाता है। वह असत्यमेंसे सत्यको पृथक् करनेका प्रयत्न करता है, परन्तु समस्याअें अुपस्थित होनेपर दूर भाग जाता हैं। जिस प्रकार गोवर्धनराम हृदयके विकल होनेपर कल्पना और विचार जगत्में भाग जाते हैं। परन्तु रोमेन्टिक मानसके साहसवृत्ति, धृष्टता और विजिगीषा आदि कअी अंग सरस्वतीचंद्रमें नहीं आ पाअे। वे गुण सरस्वतीचंद्रके स्रष्टामें भी नहीं थे।

❀ ❀ ❀

कुमुद और सरस्वतीके पारस्परिक आकर्षणमें अर्वाचीन संस्कारवान् हृदयकी रसिकता और प्रणयवांछा विद्यमान है। जैसी "स्नेहमुद्रा" में दृष्टिगोचर होती है, अुससे भी अधिक सूक्ष्म है वह प्रणयवांछा। तथापि अुसके अंदर पश्चिमकी स्थूलता नहीं है। दोनों प्रणयियोंके प्रथम सम्मिलनके समय, अपना भारतीय संस्कार-सुलभ स्पर्शसंकोच दिखाअी देता है। प्रणयमूर्तिको हृदय-मंदिरमें बिठा लिया है, तथापि कुमुद ठीक मौकेपर आर्यानुकूल संयम रख पाती है। आचरण शुद्ध रखनेका दोनोंका यह संकल्प, यौन-आकर्षणको अुदात्तता (सब्लीमेशन) की चोटीपर पहुँचा देता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस कल्पना विलासी और वैविध्यपूर्ण प्रणयकी सर्जना करते समय, जयदेव द्वारा "गीत गोविन्द" में और अुसके पश्चात् सैकड़ों कवियों द्वारा वर्णित श्रृंगार, मेघाडम्बरकी तरह, संस्कारवान् हृदयोंमेंसे बिखर जाता है, और अभी यही आशा है। वह अभीतक बिखरा हुआ रहा है और रहेगा। यदि नर-नारीके संबंधमेंसे भावना-मयता (सब्लीमेशन=अुदात्तता=अूर्ध्वता) चली जाअे तो फिर क्या शेष रहता है, केवल पशुवृत्ति।

अिस रचनामें विशेषतः ग्रन्थके अन्तिम प्रकरणोंमें सरस्वतीचंद्र और कुमुदके हृदयोंके स्पंदन स्पष्टतया सुनाअी देते हैं, और वाचकके हृदयोंमें भी अुनकी गंभीर और गहन प्रतिध्वनि सुनाअी पड़ती है। अिसके साथ ही पुराने साहित्य द्वारा मानव हृदयपर फैलाया हुआ आवरण भी खिसक पड़ता है। गोवर्धनरामकी कला पराकाष्ठापर पहुँचकर अमरत्वको प्राप्त करती है।

गोवर्धनरामने जो कुछ देखा, समझा और सहन किया, वह अेक प्रकारसे मर्यादित था। तथापि अुसको प्रदर्शित करनेके लिअे अुसने अपने हृदयके द्वार खोल दिअे, साथ ही हमारे हृदयद्वार भी खोल दिअे और और अुनमें हम सबको निःसंकोच विहार करनेका अवसर दिया।

जब हमारे हृदय-द्वार अिस प्रकार खुल गअे, अुसी वर्ष श्री. नरसिंहरावने गुजरातको "कुसुममाला" अर्पित की और आन्तरिक अूर्मियोंके नवकुसुमोंकी सुवास प्रसारित की।

सन् १८८७ के पश्चात् गुजरातने साहित्यिक और सांस्कृतिक दिशामें बहुत-सी मंजिलें तै कर लीं। श्री. हरगोविन्ददास काँटावाला और श्री. अिच्छाराम सूर्यराम देसाअीके प्रयत्नसे बहुत-सा पुराना साहित्य बच गया। सन् १८८५ में डॉ० भगवानलाल अिन्द्रजीने गुजरातके अितिहासको प्रथमवार संकलित रूप दिया। सन् १८९० और १९०० के बीचमें वाघजी और मूलजी आशाराम, बड़े और छोटे त्र्यंबक और मूलशंकर मूलाणीने गुजराती रंगभूमिको नया स्वरूप प्रदान किया।

१८९२ में "सरस्वतीचन्द्र" का दूसरा भाग प्रकट हुआ, अुसमें तो अेक ही व्यक्तिका अपूर्व शब्द-चित्र है। सन् १८९६ में तीसरा भाग और सन् १९०१ में चौथा भाग प्रकट हुआ। अिन भागोंमें गोवर्धनरामने अनेक विषयोंपर अपने विचार, स्पष्ट और अस्पष्ट अस्वाभाविक कथाके सूत्र द्वारा बाँध डाले हैं।

सन् १८९८ में ४३ वर्षकी अुमरमें, जब अन्य वकील अपने व्यवसायके अुत्कर्षपर आनेके लिअे अपने प्राणोंको पटक रहे होते हैं, अुस समय गोवर्धनरामने अपना वकीलका व्यवसाय छोड़ दिया और वानप्रस्थी रहनेकी प्रतिज्ञा पालन की।

जीवनभर वे अध्ययनशील रहे और अुसके प्रतापसे अुन्होंने गुजरातका गुरुपद प्राप्त किया। अुन्होंने हमको जो कुछ प्रदान किया है वह हमारे मानसमें बस चुका है। अतः अिस समय अुसका आदर करना कठिन हो रहा है।

आजतक अुनकी समस्त कृतियोंकी अेकत्र आवृत्ति भी नहीं छप सकी है; यह गुजरातके माथे कलंकका विषय है। वह छप जाअें तो हमको अिस बातका ठीक-ठीक ख्याल आ सकता है कि अुनका हमपर कितना ऋण है।

सन् १९०४ तकके समयमें गोवर्धनरामने गुजरातके नवीन मानसकी नींव रखी और हमारी सामुदायिक मनोभावनाको संतुलन सिखाया। १९०५ में गुजरातकी अव्यक्त अस्मिताके मंदिरके रूपमें दिवंगत रणजीतराम बावा भाअीने गुजराती साहित्य परिषद्को स्थापित किया और गोवर्धनरामने अुसमें प्राण-प्रतिष्ठा की।

सन् १९०७ में गोवर्धनराम स्वर्गवासी हो गअे। अुन्होंने जिन कल्पनाओं, भावनाओं और विचारोंका मंदिर बनाया है, अुसे समयानुसार बदलने, विस्तृत करने तथा सजानेका, आजतकके संस्कारशील गुजरातियोंने अपना कर्तव्य समझा है। मनुष्य अिससे बड़ी कौन-सी सिद्धिको वर सकता है?

गोवर्धनरामका ऋण भुलाया नहीं जा सकता। पाश्चात्य-संस्कृतिका प्रवाह बढ़ता आ रहा था, अुस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय भारतीय संस्कारोंके सनातन सत्योंपर पैर टिकाकर, विवेककी जटा फैलाकर, अुसमें अुसके वेगको सहन कर लिया। अुस प्रवाहके लिअे सुन्दर मापयुक्त बाँध और घाट बाँध दिअे। अिस प्रकार हमारे सामुदायिक जीवनको "सुजल और सुफल" बनानेके लिअे अुन्होंने अुस प्रवाहको मोड़ दिया।

भारतकी अर्वाचीन साहित्यिक पुनर्निर्मितिके पिता बंकिमचन्द्रका कल्पना वैविध्य और वस्तु ग्रंथन कौशल गोवर्धनराममें नहीं था। परन्तु हृदयके निःसीम राज्य विस्तारका वारसा (अुत्तराधिकार) देकर गुजरातको अुन्होंने आंतरिक वैभव प्रदान किया और भारतीय साहित्यमें वे नवीन रंग लाअे।

अिस चिन्तक, सर्जक और प्रवृत्तिमय संन्यासीको किसी ऋषिके अवतार-स्वरूप अपने अिस ज्योतिर्धरको मैं जपनी ओरसे, आपकी ओरसे तथा समस्त गुजरातकी ओरसे, पूज्य भावनाके साथ, अंजलि अर्पित करता हूँ!! *

---

* श्री गोवर्धनराम शताब्दी महोत्सवके सभापति पदसे दिया हुआ अविकल भाषण।

(हिन्दी रूपान्तर कर्ता— श्री शंकरदेव विद्यालंकार)

शरद्-गीत

रात अगहनी !....

--श्री 'राकेश'

१. छुओ-मुओके लाज सरीखी,
यह पहली अगहनकी रात!
झिझक रही है रह-रह कर;
ज्यों-ज्यों बढ़ते चन्दाके हाथ!

२. सुनसान तलअियोंकी गवअीमें,
जाग रही कुमुदोंकी टोली!
वीरान डगरमें भटकी-भूली;
हों जैसे बालाअें भोली!

३. हरसिंगारकी हर टपकन,
मौन-निमंत्रण प्रतिक्षण देती!
निरबसिया मन रह-रह कहता--
अरी निगोड़ी तू चुप क्यों बैठी?...

४. दूर कहीं टीलेपर बैठा--
कोअी, रह-रह बाँसुरिया टेरे!...
'का पै करौं सिंगार हो रामा,
पिया मोरा बाअुर बा रे!...

५. आँगनकी मुँडेरपर वह
कौवा कल भी बोल गया!...
पर आनेको कौन कहे सखि
रीता मन भी वह लूट गया!!

६. अम्बर-पलनेमें, दो दिनका--
शिशु वह चंदा है किलक रहा!
वर्षोंसे सूनी मेरी यह गोदी;
सखि, आज यही है साल रहा!...

७. गुम-सुम खड़ी पास तुलसीके
आज मनौती मैं करती रे!
अुमस रहा मन भीतरको ही
रात अगहनी, पिय आ जा रे!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवस्वामी—

—श्री राजनाथ पांडेय

(सबेरा)

रोहिन-रापती-नारायनी और सरजू-गंडकका देश। सरजू वही जिसके तटपर वाल्मीकि और तुलसीकी कभी भी पराजित न होनेवाली अयोध्या बसी है। रोहिन जिसकी तरंगोंमें कभी कपिलवस्तुके राज-प्रासादोंके तोरण प्रतिबिम्बित रहते थे; और रापती या अचिरवती वह जिसके किनारे कितने ही अनेक बार तथागतने चंक्रमण किअे, और जिसकी क्रुद्ध धाराने कपिलवस्तुको डहाकर लौटे हुअे आतताअी कोशल-कुमार विडूडम (विरुद्धक) को अुसकी समस्त सेना समेत पलक मारते ही जल-समाधि दे दी थी! और नारायनी तथा गंडक अिन दोनोंने तो अपनी विध्वंसकारी बाढ़ोंके कारण 'शोक की सरिता' कहलानेका कलंक सदाके लिअे अपने अूपर सहेज लिया है।

पर ये पुरानी बातें हैं। हम जिस बातकी चर्चा कर रहे हैं वह अुतनी पुरानी नहीं है।

अुन्नीसवीं शताब्दी बीत कर बीसवीं आरंभ हुअी थी। अुन्नीसवींके अन्तिम वर्ष (१८९९) का अन्तिम महीना जाते-जाते रोहिन-रापतीके देशमें विपत्तिकी भीषण वर्षा करता गया। सारी फसल नष्ट हो गअी थी। पर जब वसन्तका आगमन हुआ और दखिनैया तथा पुरवैया हवाअें संगम करके बहने लगीं तो सारा वन विहँस अुठा। आमकी फुनगियोंपर सिर अुठाअे हुअे और समस्त वन-प्रान्तको गहगह करते हुअे गाँवके घर-घरमें सुगन्धी पाटने लगे। मधूक वृक्षोंकी टहनी-टहनीपर फूलोंके गुच्छे रस और गन्धमें कसमसा पड़े। होली आ गअी थी। घरमें दाना न होनेपर भी दिल तो कहीं गअे न थे। सोता पड़ जानेपर भी आधीरातके पार काफी आगे तक फागकी मादक धुनसे अुठी हुअी ढोलक और डफकी गमक रह-रह कर दूर-दूर तक घुमड़ जाती थी!

फरवरी महीनेके पिछले दिनोंकी अैसी ही अेक रात बीतकर सबेरा हो चुका था जब रोहिन-रापती-के देशमें दो बादशाहतोंके बीच सीमा विभाजक बनने-वाली छोटी पहाड़ी नदीके अुस पारसे किसी सधे कंठसे अुठे संगीतके कुछ अनसुने बोल सुसंस्कृत कानोंके लिअे अिस पारतक ललक-ललककर यों संचरण करने लगे :—

जानकीसकी कृपा जगावती सुजान जीव,
जागि त्यागि मूढ़तानुराग श्रीहरे।
करि विचार तजि विकार भजु अुदार रामचंद्र,
भद्रसिन्धु, दीनबन्धु बेद बदत रे॥

वर्तमान अुत्तर-प्रदेशके बस्ती जिलेके किसी अन्तिम छोरपर बीचकी क्षीण पहाड़ी नदीके अुसपार, जहाँ तबके अँगरेजी-साम्राज्य और आजके स्वाधीन भारतकी सीमासे नेपाल-राज्यकी सरहद लग जाती है पथरीले पटपर सपाट नदीके अुस तटपर अेक पलाशका पेड़। अुसके नीचे जमीनपर कम्बल डालकर मैली चादरमें सिरसे पाँव तक सारा शरीर लपेटे निश्चेष्ट पड़ा हुआ कोअी अेक। पत्र-विहीन पलाशकी अेक पतली डालीपर लटकता अेक अँगोछा। और प्रभातकी चमकीली किरणें नदीके जलसे, पलाशके फूलके गुच्छोंसे और डालीपर लटकते अँगोछेसे, सबसे, अठखेलियाँ कर रही थीं। अेक ओर सुप्रभात और सूर्यकी सुवर्ण रश्मियाँ और दूसरी ओर स्वर्गिक संगीतकी सुन्दर स्वर-लहरियाँ—अुस पारका सारा वातावरण झलझला रहा था!

और अिसपार? अिसपार अूँचा टीला, बड़े-बड़े वृक्षोंका झुरमुट, और अुनके बीच अुभरा हुआ विशाल सरकारी डाक-बंगला जो सबेरा होनेपर भी अभी तक अेकदम नीरव और प्रशान्त पड़ा था। जैसे अुसपार रातमें शिकार मारकर नदीके अिसपोर सन्तोषमें लेटा हुआ शेर सबेरा होनेपर भी अभी शयन कर रहा हो। जैसे रातमें मुँह और नाकमें लगे खूनके कारण सिंहकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साँसोंके साथ खुर्राटोंसे निकली हवाकी दुर्गन्ध आस-पास फैल जाती है वैसे ही अुस डाक-बंगलेके बावर्चीखानेमें 'बड़ा साहब' के प्रातःकालीन नाश्तेके लिअे बघारे जा चुके आमिष खाद्यकी चिराँयध अभीतक वहाँ व्याप्त थी। और अुसमें पगे खानसामा हुसेनीके दिमागमें तथा अुस छाँय-छाँयसे अभ्यस्त अुसके कानोंमें अुसपारसे आनेवाले वैराग्य-विलसित मन्द-विलन्द-पगगामी राग विभासके अलबेले स्वर रेगिस्तानमें पड़ी अमृतकी बूँदोंकी तरह लुप्त होते जा रहे थे।

संक्षेपमें अुसपार प्रभात होनेके पूर्वसे ही प्रकाशकी व्याप्ति हो गअी थी तो अिसपार सबेरा हो जानेपर भी अभी धूप नहीं पहुँच पाअी थी। अुसपार सुषुप्तिमें भी जागरण था तो अिसपार जागरणमें भी अभी सुषुप्ति थी। और अुसपार वहाँ नेपाल-राज्यका आरम्भ था तो अिसपार यहीं भारतमें अँगरेजी साम्राज्यका अन्त था!

× × × ×

साहबके नाश्ता कर चुकनेपर हुसेनी जब जूठे बरतन लेकर बावर्चीखानेकी तरफ जानेके लिअे बंगलेकी सीढ़ियोंसे अुतर रहा था, सूर्यकी धूप अुसके चेहरेपर पड़ी और अुसी समय अुसपारसे आ रहे संगीतके कुछ शब्दोंका प्रथम बार अुसके कानोंको भी परिचय मिला। बावर्चीखानेके दरवाजे तक पहुँचते-पहुँचते अुससे न रहा गया। नदी पारके पलाश वृक्षकी ओर अुँगली अुठाकर बोला, "जान पड़ता है रातभर रीं-रीं-रीं-रीं यही फटीचर करता रहा है। अिसने तो अिस रात मेरी नींद ही हराम कर दी, झकरी भाअी! सुनते हैं अूपरकी सब पहाड़ियोंसे अुतरकर रातमें शेर-बाघ अिसी पेड़के नीचे नदीमें पानी पीने आया करते हैं। मानों अिस रात नैपाली शेरोंको प्यास ही नहीं लगी, नहीं तो बच्चूकी सारी रीं-रीं गायब हो जाती।"

"तुम नहीं समझते हो हुसेनी!" झकरीने कहा, "वहाँ रातमें रीं-रीं यह क्या खाकर करेगा? अिसका बाप भी नहीं कर सकता! हम तो यहाँ आज बीस सालसे आते हैं। अुधरके लोग दूर-दूरसे अुसी जगह अपने मुर्दे जलाने आते हैं। वह जगह मसान है मसान। रातमें हमारी भी नींद खुली थी। डह डह अँजोरिया फैली हुअी थी और पेड़के नीचे बैठी हुअी कोअी जनाना गा रही थी। हाय, हाय, कैसा गजब वह गीत था! कोअी दूसरा होता तो अुसके सुरसे बँधकर वहाँ जरूर चला जाता। पर हम सब जानते हैं। जोगिनी थी—जोगिनी। जो अुसके गानेमें फँसकर वहाँ चला गया, बस गया वह अुसके पेटमें! तुम अभी बच्चे हो। भले कालामाटी और रँगून हो आअे हो। अच्छा हुआ जो खाट छोड़कर रातमें अुठे नहीं!"

"लेकिन सबेरे सबेरे रे-रे तो यही कर रहा है झकरी भैया! महराज रामचन्नरको और बेद-पुरान-कुरान सबको रे-रे कह रहा है। तुमको सुनाअी देता है न?" हुसेनीने कहा। वास्तवमें पदके प्रथम चरणकी दूसरी पंक्ति "करि विचार तजि विकार भजु अुदार रामचन्द्र भद्रसिन्धु दीनबन्धु बेद बदत रे!" रह-रहकर गानेवाला दोहराता था और रामचन्द्र, वेद और रे-रे बस कुल तीन ही शब्द विचारे हुसेनीके असंस्कृत कानोंकी पकड़में आ पाते थे।

"कोअी औघड़ है, औघड़!" जैसे अेकदम नतीजेपर पहुँचकर कहते-कहते हुसेनी बावर्चीखानेमें बर्तन रखने लगा और बर्तन रखकर वह बाहर निकला था कि अुधर साहब बँगलेके बाहर आ गअे; और अुसी समय अुस पारसे आ रहे निम्न शब्द साहबके सुसंस्कृत कानोंमें गूँज अुठे :—

मोहमय कुहू-निसा विसाल काल विपुल सोयो
खोयो सो अनूप रूप सुपन जो परे।
अब प्रभात प्रकट ज्ञान-भानुके प्रकास
वासना, सराग मोह-द्वेष निविड़ तम टरे॥

साहबने अेक बार पलभर नदीके पार देखकर बावर्चीखानेकी ओर देखा। फिर अपने अर्दलीको निहारा और जब वह अपने खास लहजेमें 'हजोर' कहकर झुक-झुक सलाम करता हुआ पास आकर खड़ा हो गया तो अपने पेशकारके कमरेकी तरफ अँगुली अुठाकर अुन्होंने संकेतसे अर्दलीसे कुछ पूछा। झकरी लपककर दबे पाँव अुस कमरेके पास गया और दरवाजेपर कान रखकर कुछ देर वहीं खड़ा रहा। फिर धीरेसे किवाड़ हटाकर अन्दर झाँका और फिर अुसी तरह किवाड़ भिड़ा, कमरेकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साँकल चढ़ा, हवामें कुछ गोल-गोल-सा हाथ घुमा साहबके पास आकर चुपचाप खड़ा हो गया।

साहबने झकरी भगत* को कमरेके दरवाजेकी साँकल लगाते देख यह समझ लिया था कि अुनके पेशकार वहाँ नहीं थे। पर झकरीने साहबके कुछ बोले बिना ही वे क्या कहना चाहते थे, यह समझ लिया। पढ़े-लिखे लोग बोले हुअे शब्दों द्वारा ही मनोभाव जाननेके अभ्यस्त होनेके कारण अिंगित और आकारसे ही मनके भाव आँक लेनेकी शक्ति खो देते हैं। किन्तु झकरी पढ़ा-लिखा न था। अुसकी वफादारीने स्वामीकी मनोदशाकी हर चढ़ती-अुतरती लहरको ठीक-ठीक समझ लेनेकी शक्ति अुसके हृदयमें खूब ठूँसकर भर रखी थी। अेक दिन पहले शामको साहब और पेशकारके बीच अँग्रेजीमें जो-जी बातें हुअी थीं, अुसके मर्मको भी अुसने काफी समझा था। रातमें जब पेशकार अपना भोजन पका रहे थे अुस समयकी अुनकी नित्यसे विपरीत गम्भीर मुद्राको भी अुसने कुछ भाप लिया था। अुसने कहा, "हजोर! कमरेमें जूता, पगड़ी छड़ी सब तो वैसे ही धरा है। पेशकार बाबू संग कुछ नहीं ले गये। रातमें भी यहाँ नहीं थे। हुजूर! झमेलेकी बात है।" फिर कुछ ठहरकर बोला, "थोड़ी दूरपर अेक मन्दिर है। वहीं होंगे। मैं खोज लाता हूँ।"

"अच्छा, हम सरको जाता है।" साहबने कहा।

भागे मद-मान चोर भोर जाति जातुधान
काम-कोह-लोभ-छोभ निकर अपडरे।
देखत रघुबर प्रताप बीते संताप-पाप
ताप त्रिविध प्रेम आप दूर ही करे॥

साहबने अेक निगाह फिर नदीके अुसपार डाली और मुड़कर बँगलेके बाहर ढालपर अुतरने लगे।

---

* झकरी, ज़कारिया, खुसरू, खिज़र, कैसर, ज़ार सीज़र, काअिज़ार, तथा संस्कृतका केसरी (सिंह) अेक ही मूल शब्दके विभिन्न रूप हैं। गोरखपुरमें झकरी नामके हिन्दू, मुसलमान और अीसाअी सभी हैं। पुराने लोगोंमें हुसेनी नामके कितने ही हिन्दू वहाँ अब भी मौजूद हैं। —लेखक

(दुपहरिया)

गोरखपुर—कमिश्नरीका बड़ा साहब कमिश्नर चैपमन सैर करने जा रहा था। साहब दौरेपर निकला था। आज तीन दिनसे वहाँ कमिश्नरका डेरा पड़ा हुआ है। बँगलेके नीचे ढलावसे सटे मैदानमें कितने ही खेमा-तम्बू तने हैं जिनमें पुलिसके दरोगा, कानूनगो, तहसीलदार दर्जनों साहब-सूबा कमिश्नर साहबकी अवाअीके तीन दिन पहलेसे ही सब अिन्तजाम कर रखनेके लिअे वहाँ डटे हुअे हैं। अुस तरफसे साहबको निकलते देख पलभरमें सब छोटे-बड़े कतार बाँधकर खड़े हो गअे और लगे झुक-झुककर सलाम करने। किन्तु जैसे भूखा न रहनेपर जंगलमें शेर मेमनोंकी तरफ आँख अुठाकर ताकता तक नहीं वैसे ही साहबने भी अुनकी तरफ नहीं देखा।

वह अेक जमाना था जब कमिश्नर छोटा लाट होता था और मिस्टर चैपमन वह कमिश्नर थे जिसके बंगलेके हातेमें बड़े-बड़े लखपती और करोड़पती रअीसों तककी जोड़ी-फिटिन नहीं जा सकती थी। सवारीको सड़कके किनारे लगाकर दो फर्लांग पैदल चलकर ही अुन्हें साहबका दर्शन मिल पाता था!

अिसपार मिस्टर चैपमन जिस समय अपने भक्तोंको बगलसे अैसे अनासक्त भावसे निकले चले जा रहे थे, अुसपार पलाश वृक्षके नीचे पड़ा वह कोअी अपने गीतका अन्तिम पद समाप्त कर रहा था :—

श्रवण सुनि गिरा गँभीर, जागे अति धीर वीर,
वर विराग-तोष सकल सन्त आदरे।
तुलसिदास प्रभु कृपालु निरखि जीव-जन विहालु,
भंज्यो भव-जाल परम मंगलाचरे॥

गीत समाप्त कर वह अुठ बैठा। स्नानसे गीले, डालीपर सूखनेके लिअे डाले हुअे अँगोछेको अुसने पहिना, कम्मल ओढ़ लिया और अुस मैली चादरकी सिरपर पगड़ी बाँध अेक बार अिसपारवाले बंगलेकी तरफ देखा। बावर्चीखानेका धुआँ अूपर अुठ रहा था। किन्तु जिस प्रकार भूखा होनेपर भी सिंह दूसरेके मारे हुअे शिकारको अुपेक्षाकी दृष्टिसे देखता चला जाता है वैसे ही अुत्तर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर पहाड़ीमें अति दूर बसे स्वतन्त्र देशके स्वतन्त्र गाँवकी तरह सँभाल-सँभालकर पग रखता हुआ वह पुरुष भी चला गया।

घण्टेभर बाद साहब टहलकर लौट आअे। पर अर्दली झकरी अभी नहीं लौटा था। आध घण्टे बाद जब झकरी लौटा तो अुसे देखते ही नदी पारके पलाश-वृक्षकी ओर संकेत करके हुसेनीने हड़-बड़ाकर कहा, "तुम ठीक कहते थे झकरी भैया! वह गायब हो गया।"

अर्दलीने साहबके पास जाकर कुछ कहा। साहबने अुसके साथ आकर पेशकारके कमरेकी साँकल खुलवाअी। अपनी आँखोंसे पेशकारका सामान देखा। फिर साँकल चढ़वाकर ताला बन्द कराया और बंगलेमें गअे। दोपहरके भोजनका समय हो गया था। भोजन किया। और जब पाअिपमें तमाखू भरकर पीने लगे अुस समय पहिली बार अपने पेशकारके लिअे अुन्हें चिन्ता हुअी। क्षणभरके लिअे अुन्हें पाअिपकी तमाखू खुश्क और अुसका धुआँ कड़वा लगा। वे सोचते थे अुन्होंने ज्यादती की। अितवार सबके लिअे छुट्टीका दिन है। वह अितवारकी ही छुट्टी तो माँगता था। काम भी तो कुछ खास नहीं था। फिर मैंने छुट्टी क्यों नहीं दे दी? और जब छुट्टी भी दी, तो यह कहकर कि सनीचरके बारह बजे रातके बाद ही अितवार शुरू होता है! अुसने भी जिद पकड़ ली। काम न होनेपर भी मैं बारह बजे रात तक जागता रहा, यह जाननेके लिअे कि देखें बारह बजे, रातके बाद पेशकार कैसे कहाँ जाता है। पर वह बारह बजे रातके बाद ही गया। अब वह आज बारह बजे रातके पहिले हरगिज न लौटेगा। और रातमें अुसे कहीं शेर खा गया तो? अिस अिलाकेमें तो शाम होते ही पहाड़ोंपर शेरकी दहाड़ सुनाअी पड़ने लगती है। सचमुच झमेलेकी बात हो गअी! बिचारा पेशकार! बड़ा विनम्र, बड़ा मुस्तैद, बड़ा गंभीर और ड्यूटीमें बड़ा पाबन्द। अुसने अेकाअेक किस कामके लिअे छुट्टी लेनेकी अैसी जिद पकड़ ली? यहाँ अुसे अचानक अुन्माद तो नहीं हो गया?

जिस समय साहबको अिस तरहके विचार पीड़ित कर रहे थे अर्दली झकरीने देखा कि सिरपर अेक गठरी धरे और अेक हाथमें जलता हुआ अुपला और दूसरेमें अेक हाँड़ी लिअे अेक आदमी नदीके अुसपार गाँवकी तरफसे आकर अुसी पलाश वृक्षके नीचे खड़ा है। फिर वह पुरुष सिरसे गठरी अुतारकर अुसमेंसे अुपले निकाल अहरा तयार करता है और हाँड़ीमें नदीसे पानी ला अुसे अहरेपर रखकर अुसमें कुछ चावल-दाल छोड़ देता है और फिर कम्बल जमीनपर बिछाकर अुसपर लेटकर कुछ गुनगुनाने लगता है।

हाँड़ी लेकर जिस समय वह पुरुष नदीमें जल लाने जा रहा था अुस समय अुसके ललाटके चौड़ेपनको देखकर झकरी अर्दलीको न जाने क्यों अकस्मात् अुस व्यक्तिमें अपने पेशकार बाबूकी झलक दीख पड़ी। अुसे अेकदम निश्चय हो गया कि वह और कोअी नहीं अुसके पेशकार बाबू ही हैं। अैसे संजीदा, अैसे चुस्त, अैसे चाक-चौबन्दा अुसके पेशकार बाबू आज अिस वेषमें, जिसकी अुसने कभी कल्पना भी नहीं की थी, क्यों हैं? अुसे अेक वेदना हुअी और वह दौड़कर साहबके पास गया। साहब बंगलेके बाहर अपना दूर-दर्शक-यंत्र हाथमें लिअे हुअे आअे और अुस यंत्रके सहारे बार-बार देखकर बोले, "ओह! पेशकार। वहाँ क्या कर रहा है?"

"ओह! पेशकार बाबू?" झकरीने भी मन-ही-मन कहा, "अैसे कलावन्त हैं बाबूजी।"

जिसे अुसने जोगिनी समझ रखा था; वह अुसके पेशकार बाबू निकले। और वह 'गजब गीत' भी अुन्हींका गाया हुआ था। हुसेनी खानसामाके शब्दोंमें प्रभातवाला 'रे-रे' नहीं कोअी 'री-री' वाला गीत!

निदान दो बजते-बजते अुसपार खिचड़ी तैयार हुअी और अुसे खाकर वह पुरुष फिर अुसी कम्बलपर पीठके बल लेटकर कुछ गुनगुनाने लगा।

अिसपार झकरी और हुसेनी अुसपारकी सारी कार्रवाअी गौरसे देखते और साहबको अुसकी सूचना देते रहे।

कमिश्नर चैपमनने कुछ करना निश्चित किया और नदी लाँघकर पलाश-वृक्षके नीचे जा खड़े हुअे। अुनके पीछे अुनका अर्दली झकरी भी खड़ा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मिस्टर प्रसाद ! यहाँ अिस तरह क्या करता है ?" कमिश्नरने पूछा । मिस्टर प्रसादने कोअी जवाब न दिया । वे अपने भजनके आनन्दमें मग्न पलकें बन्द किअे पूर्ववत् गुनगुनाते ही रहे। कमिश्नरको सिरहानेसे पैताने आना पड़ा । अिस बार कमिश्नरके प्रश्न करनेपर अुनकी पलकें खुल गअीं । अुन्होंने केवल मुसकिरा दिया । वे सचमुच प्रेशकार ही थे किन्तु यह मुसकान पेशकारकी नहीं अुनमें छिपे किसी दैवी पुरुषकी थी जिसकी पवित्र धाराके सामने जगत्का कोअी कलुष टिक नहीं सकता ।

"मिस्टर चैपमन ! आज मेरे जीवनका यह अेक-अेक बड़ा अनमोल क्षण है । अिसमें कोअी बाधा न डाले," पेशकारने लेटे ही लेटे बड़ी विनम्रतासे कहा ।

साहबकी समझमें कुछ नहीं आ रहा था । "यह क्या बात है ? तुम किस वास्ते यहाँ आया है ?" अुन्होंने पूछा ।

"यह देखनेके लिअे कि स्वतंत्र देशकी वायु कितनी शुद्ध होती है, पानी कितना मीठा होता है और धूप कितनी जानदार होती है । मिस्टर चैपमन ! सदा गुलाम रहनेके लिअे पैदा हुआ मैं नाचीज यह तो अब कह ही सकूँगा कि जिन्दगीका कम-से-कम अेक दिन मैंने भी स्वतन्त्र देशमें बिताया है !"

"हूँ, यंह बात ?" मिस्टर चैपमनके मुँहसे निकल पड़ा और वे चुपचाप तनकर खड़े रहे । कोअी दस मिनटतक अुन दोनोंमेंसे कोअी कुछ न बोला । फिर मिस्टर चैपमनने अेकाअेक अपना हैट सिरसे अुतारकर पेशकारको सैलूट किया और बोले, "तुम बेशक बड़ा आदमी है !"

पेशकार अब लेटा न था । साहबने अुसे स्वयं अुठाकर खड़ा किया । अुसका कम्बल स्वयं समेटकर तह करने लगे तो अर्दलीने अुसे ले लिया । साहब पेशकारको साथ लेकर अिसपार लौटा ।

अुसी क्षणसे कमिश्नर वह कमिश्नर न रहा । अेक स्वाभिमानी भारतीयने 'छोटा लाट' को सदाके लिअे विनम्र बना दिया । कहते हैं अुस दिनके बादसे कचहरीमें कमिश्नरके आनेपर पेशकार जब अुनके सम्मानमें खड़े हो जाते तो साहब कुर्सीपर तभी बैठता था जब पहले पेशकार बैठ जाते थे । यही अुन दोनोंका पारस्परिक समझौता था । और जहाँ-जहाँ मिस्टर चैपमन कमिश्नर गअे अपने संग अपने पेशकारको भी ले गअे ।

और कमिश्नर साहबके आग्रह करनेपर दूसरे दिन प्रातःकाल पेशकार साहबने अपना वह गीत :

माअी री ! हौं गोविन्द गुन गाअूँ ।
गोकुलकी चिन्तामनि माधौ जो माँगू सो पाअूँ ।।

सूर्योदयके पूर्व जब अपने कमरेमें अेकदम खुलकर गाया तो झकरी अर्दली चुपचाप वहाँ आकर अुनके चरणोंपर गिर पड़ा और रोते-रोते बोला, "हमको क्षमा करना स्वामी ! अिस अधमने सरकारका स्वरूप अबतक नहीं पहिचाना था !"

(तिजहरिया)

देवस्वामीका प्रथम साक्षात्कार हमें सन् १९३९ में पंडित देवकली दीनजी* के निवासस्थान अपनी ससुराल सुलतानपुरमें हुआ था । अुस समय वे ७२ पार कर चुके थे और महात्मा देवकलीप्रसाद 'बजते' (कहलाते) थे । बाबू देवकलीप्रसादका जन्म सन् १८६६ में फैजाबाद जिलेमें खजूरहटसे छह मील दूर अेक गाँवमें दूसरे श्रीवास्तव कायस्थ-कुलमें हुआ था । सन् १९२३ में अुन्होंने कमिश्नरके चीफ रीडर (पेशकार) के पदसे पेंशन ली । पेंशन लेनेके बहुत पूर्वसे ही वे आर्यसमाजके अेक दृढ़ स्तंभ बन चुके थे और आर्य-जगतमें महाशय देवकलीप्रसादकी याद अभी भी कुछ लोगोंको अवश्य ही होगी । पिछले आठ-दस वर्षोंसे अुन्होंने वैराग्य ले लिया था और देवस्वामी कहलाते थे ।

---

* पं. देवकली दीनशर्मा बी. अे. अेल्. अेल्. बी. सुलतानपुर (अवध) के प्रसिद्ध आर्यसमाजी और काँग्रेसके अेक तपे हुअे सेवक । अिस समय वहाँके जिला बोर्ड प्रेसिडेंट । —लेखक ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

76080

महीना जूनका था जब महात्मा देवकलीप्रसाद मेरे श्वशुरजीके घर पधारे थे। दो दिन पहले ही अुनके आगमनकी सूचना प्राप्त हो चुकी थी। मैं भी बड़ा अुत्सुक था अुनके दर्शनोंके लिअे। मस्तकपर शुद्ध खद्दरकी पाग अेकदम कसकर बँधी हुअी; प्रशस्त ललाट जिसपर पसीनेकी बुँदकियोंकी अेक जाली बुनीसी; बड़ी-बड़ी आँखें जो तिहत्तर वर्षतक धूप-छाँह झेलकर भी अत्यन्त स्वच्छ और चमकती हुअी भरपूर; और पतले चुस्त सटे हुअे होठोंके भीतरसे मानों आनन्दके पूर्ण पात्रकी पसीजनके रूपमें अविरल प्रवाहित मन्द-मन्द मुसकानकी अेक छटा! कौन था जो अुस महर्षिके सम्मुख अनायास नतमस्तक न हो जाता? किन्तु मेरे हाथ अुन्होंने पकड़ लिअे। बोले, "आप हमारे जामाता हैं। हमें आपका चरण स्पर्श करना चाहिअे। नमस्ते!" ससुरालमें दामादकी अिज्जत तरुण तपस्वीके रूपमें होती है। तरुण तपस्वी और वृद्ध तपस्वीकी अच्छी भेंट हुअी। दो-तीन दिनका अुनका सत्संग जीवनमें न जाने कितनी ही प्रेरणाओंका विधाता बना।

महरा न रहता तो कुअेंकी जून महीनेकी गहराअीसे तिहत्तर वर्षकी अुम्रमें भी अपने लिअे जल काढ़नेमें अुन्हें तनिक आलस्य न होता। मुझे अपने लिअे कुअेंसे पानी न खींचने देते। अितिहासके, विशेषतः अनुश्रुत-अितिहासके जिसके संगम बिना लिखित अितिहास, निर्जीवसा रहता है वे प्रकांड पंडित थे। अनुस्मृतियों और आख्यानोंके वे मूर्तिमान भांडार थे। अैसे तो देवकलीदीन तथा देवकलीप्रसाद दोनों ही 'देवकुलिक'* किन्तु 'दीन' जी 'प्रसाद' जीको देवजी कहते और देवतुल्य ही अुनसे श्रद्धा भी रखते। 'दीन' और 'देव' की जोड़ी राम और लक्ष्मणकी जोड़ी नहीं; कही जा सकती थी। राम और शत्रुघ्नकी भी नहीं क्योंकि देवजी दीनजीसे कम-से-कम तीस-पैंतीस वर्ष बड़े थे। किन्तु अिन दो देवकुलिकों, अिन दो आर्य-रत्नोंकी जोड़ी बड़ी दुर्लभ और अद्वितीय थी!

कहते हैं देवजी ओजस्विता संभूत अुग्रता रखनेवाले प्राणी थे किन्तु जीवनमें जिस अवस्थामें मैंने अुन्हें देखा था वे मृदुलता और करुणामें बराबर पिघलते हुअे दीखते थे। जैसे चाँदिनीमें पिघलती हुअी चन्द्रकान्त मणि!

जीवनके अन्तिम वर्षोंमें वे सन्यासी होकर पर्यटन करते रहे और जब निर्वाणका समय निकट आया तो अपने 'दीन' जीके पास सुलतानपुर चले आअे। बोले, "मुझे शान्तिसे मरण तुम्हारे ही समीप प्राप्त होगा अिसीलिअे अब यहाँ आ गया हूँ।" 'दीन' जीने अुन्हें अग्रज ही नहीं वस्तुतः पिताके समान माना और अुनकी सब प्रकारसे सेवा की। महाप्रयाणकी अन्तिम घड़ियोंतक किसीको यह सन्देह न हो पाया कि देवस्वामी देवलोककी यात्राके लिअे तैयार खड़े हैं। सन्ध्याको भोजनवाहक जब भोजन लेकर गया तो बोले, "आज भोजन न करूँगा।" फिर कुछ सोचकर मुसकराने लगे और बोले, "पंडितानीको मत बताना। आज यह भोजन तुम खा डालो।"

और दूसरे दिन १२ फरवरी (१९५५) को प्रातःकाल समाचार मिला कि देवस्वामी ब्राह्मवेलामें देवलोकवासी हो गअे!!

मरनेके कुछ महीनों पूर्व अेक बार देवस्वामीको जब मैंने देखा तो अुस दिन मुझे बड़ी वेदना हुअी। किसी समय स्वास्थ्य, संयम और मनस्विता तथा ओजस्विताकी साकार प्रतिमाको अुस दिन अुस विगलित अवस्थामें देखकर प्रतिमा-पूजनमें मेरा विश्वास अटल हो गया। पत्थरकी प्रतिमा बोलती नहीं तो क्या? वह अैसी जीर्ण और विगलित तो कभी नहीं हो सकती। वह अपनी जीर्णतासे अुपासकको अितना रुलाती तो नहीं।

सन्ध्या और रात

१४ नवम्बर १९५५ की सन्ध्या। श्वशुरजीकी बीमारीका सम्वाद पाकर मैं सुल्तानपुर गया था।

---

*हमारी मान्यता है कि देवकली शब्द 'देवकुलिक' का ही अपभ्रंश है। 'देवकुलिक' के लिअे देखिअे चन्द्रधर शर्मा गुलेरीका निबन्ध 'देवकुल'—

—लेखक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्वशुरजीको देखने अुनके कितने ही सहयोगी वकील अुनके पास बैठे थे। नाना प्रकारकी चर्चाअें हो रही थीं। अुसी दिन वकालतखानेमें अेक वकीलने जो कभी जिलाबोर्डके प्रेसिडेंट रह चुके हैं और कभी वह स्थान रिक्त होनेपर फिर भी अपने लिअे कुछ आशा रखते हैं, पंडित देवकलिदीनजीके स्वास्थ्यके सम्बन्धमें बड़े कुतूहलके साथ जिज्ञासा की थी और अेक महानुभावने अुनको जिस प्रकारसे अुत्तर दिया था अुस बातकी भी चर्चा छिड़ी। जिन्होंने वकालतखानेमें भूतपूर्व चेयरमैन-साहबको 'निराशाजनक' अुत्तर दिया था वे स्वयं ही बयान कर रहे थे। अुनका कहना था—"देवकली-दीनजी बड़े कुशल हैं। यमके दूत जब फरवरीमें अुनके (दीनजीके) पास आअे तो वे अेकदम बिगड़ खड़े हुअे और बोले, तुम लोग गलती कर रहे हो। अरे यह मैं नहीं, देवस्वामी हैं। अुनके पास जाओ। अुनका भी नाम देवकलि ही है! बस यमके दूत लौट गअे और देवकलिप्रसाद (देवस्वामी) को ले गअे। सो अब यमके दूत भी देवकलिदीनजीके अिशारेपर काम करने लगे तो आप क्या अुम्मीद रख सकते हैं?"

वकीलोंका समुदाय तो अिस बातपर खिलखिला-कर हँस पड़ा था और मुझे यह सोचकर बड़ी व्यथा हुअी कि अेक महापुरुषका मरण भी वकीलोंके हास्यका विषय बने बिना नहीं रह पाता!

अुसी रात मुझे अेक बड़ा विचित्र स्वप्न हुआ।

तीन मार्च सन् १९५५ को मेरे पिताजी ८५ वर्षकी अवस्थामें परलोकवासी हुअे और १२ फरवरीको देवस्वामी अुस रात स्वप्नमें, मुझे वे दोनों ही दीख पड़े। अलग-अलग नहीं अेकसाथ, अेक ही रूपमें, अेक ही में दोनों ही। कभी अुसी शरीरमें देवस्वामी दिखते और कभी मेरे शरीरके जनक मेरे पूज्य पिताजी और कभी अेक ही में जुड़ी दोनोंकी ही आकृति स्पष्ट दीख रही थी! निद्रा टूटकर भी नहीं टूटी थी। न जाने कबतक हिचकी आती रही। तकिया आँसुओंकी धारसे भीग गया था। और तब प्रथम बार यह ज्ञात हुआ कि मनुष्यका स्थायित्व नश्वर शरीरमें नहीं, अुसकी आत्माकी प्रेरणामें है, जो प्रस्तर, लौह या वज्रसे भी अधिक पुष्ट और अविनाशी है!

समानो मन्त्रः समितिः समानी।
समानं मनः सहचित्तमेषाम्॥
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः।
समानेन वो हविषा जुहोमि॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

112552

सृजनकी सीढ़ियाँ !

—श्री 'विद्रोही'

गलत जाननेसे, गलत माननेसे; गलत पीढ़ियाँ और आगे भी होंगी !
गलत नींव मंजिलकी रक्खोगे गर तो, गलत सीढ़ियाँ और आगे भी होंगी !!

(१)

ये मिट्टी औ' पत्थरके मन्दिर व मस्जिद,
मगर अिनके सोनेके कलशे-कँगूरे !
कि देवोंके घरमें बहुत रोज देखे—
मनुजताके नाटक अधूरे-सधूरे !!

(२)

ये सच है बहुत रोज चलता रहा है,
मगर बन्द करना पड़ेगा ये किस्सा !
कि अब तो खुदासे भी लड़-लड़के लेना—
है अिंसाँको अपना बराबरका हिस्सा !!

(३)

अहिंसाका आँचल जो अर्जुनने थामा,
सुनाअी जनार्दनने जीवनकी गीता !
तो अपन ही मनसे जो हारा था अुसने—
था भारतका पूरा महायुद्ध जीता !!

(४)

ये हिंसा अहिंसा हैं जीनेके साधन,
नहीं जिन्दगीसे बड़ी चीज हैं रे !
दुफसली है भारतकी खेती किसानो—
खरीफ औ' रबीके अलग बीज हैं रे !!

(५)

कथा ग्रीसकी है पुराणोंमें अैसी,
कभी 'अेंटियस' था धरा-पुत्र बाँका !
जमींसे ही बल जिसको मिलता था सारा—
जमींसे ही जीवन था जिस शूरमाका !!

(६)

अुठाकर अुसे 'हरकुलिश' ने यों मारा,
जमींसे कि अुसका जो सम्पर्क छूटा !
कि पैरोंके नीचेकी धरती जो खिसकी--
तो सरपर भी अूपरसे आकाश टूटा !!

(७)

जो धरतीपर चलते व फिरते बहुत कम,
हवाओंमें अुड़ते हैं अूपर ही अूपर !
औ' अूपरसे धरतीपर आगी अुगलते -
अुन्हीं अटपटोंका हुआ राज भूपर !!

(८)

यों धरतीपर ही हों जब धरतीके दुश्मन,
तो दुनियाके सारे धरा-पुत्र जागो !
जमींसे ही बल लो जमींसे ही जीवन—
जमींके सहारे धरा पुत्र जागो !!

(९)

किसानो-मजूरो जमींनें न छोड़ो,
नहीं अेंटियस-सा बुरा हाल होगा !
कि मिट्टीकी खुशबूसे जीवनका अंकुर -
हर आँधी औ' पानीमें खुशहाल होगा !!

(१०)

ये मिट्टीसे जीवनकी सुर्खी जो फूटी,
अुसीसे हरी व भरी क्यारियाँ हैं !
औ' नीचे दबे जैसे रहते हैं अंकुर—
दबी सबके दिलमें यों चिनगारियाँ हैं !!

(११)

तो अपनी ही साँसोंकी धुकनीसे धोंको,
औ' अन्दरकी चिनगी जगाओ तो भाअी !
जमानेकी चलती हवाओंकी रौमें--
कि भीतरकी लौको मिलाओ तो भाअी !!

(१२)

हवा गर्म होगी औ' सुलगेगी आगी,
मगर आगमें क्या बड़े और छोटे !
सचाअीकी सच्ची परख ही की खातिर—
कि अींधन बनेंगे खरे और खोटे !!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१३)

जो ईंधन जुटेगा तो ज्वाला बढ़ेगी,
मगर ये गलत है कि सब कुछ जलेगा !
कि दमकेगा कुन्दन अिसी आगमें रे—
औ' जीवनका सच्चा नगीना ढलेगा !!

(१४)

जेवरकी कायल नहीं है मनुजता,
कि जीवनका जेवर असलमें है जौहर !
जिसने भी जौहर किया है जहाँमें—
वही जिन्दगीका है आबदार गौहर !!

(१५)

कि मोतीकी आभा है पानीसे जैसे,
पानी बिना है न कौड़ीका मोती !
वैसा ही मानवका ओमान है रे—
सचाअी वही जो स्वयम् सिद्ध होती !!

(१६)

तो जनताके दिलके समुन्दरमें बैठो,
वो जिसके कि अन्दर है जीवनकी ज्योती !
अिसीके हृदयकी सृजन-सीपियोंमें—
कि ढलते रहे हैं मनुजताके मोती !!

(१७)

सचाअीकी खातिर समर्पित रहो तुम,
मगर यार है यह कड़ाअीका पेशा !
कि डग-डगपर जगमें जो बैठी बुराअी —
अुसीसे लिखी है लड़ाअी हमेशा !!

(१८)

यही मंत्र है रे यही तन्त्र जगका,
मनुजता है महँगी, मनुज है कि सस्ता !
भले ही मनुजके कदम डगमगाअें—
मनुजताका सीधा औ' सच्चा है रस्ता !!

(१९)

अिसी रास्तेपर हमें चलना होगा, सहज जैसे चन्दा औ' सूरज हैं चलते !
कि पूरबसे पश्चिम तक जाना है हमको ये बादल औ' बिजलीके घरसे निकलते !!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय काव्य-परम्परा

—श्री गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश'

योरपमें अफलातूनने भी काव्यके प्रकृत स्वरूपकी अपूर्ण कल्पना ही की थी। अुसके बाद अरस्तूके समयसे लेकर बीसवीं शताब्दी तक आदर्शवाद और यथार्थवादके अनेक फेरे हुअे और अब वहाँ काव्य यथार्थवादके चंगुलमें पड़ गया है। यथार्थवादका भी कोअी अैसा स्वरूप नहीं संगठित हो रहा है, जिसमें जीवनकी समस्याओंमें व्यस्त जन-साधारणको अधिकार-निवारक प्रकाशकी किरणें फूटती दिखाअी पड़ें। अब हमें अेक सरसरी दृष्टि भारतीय समीक्षा-सिद्धान्तोंके विकासपर डालनी चाहिअे। शुक्लजीके सम्पूर्ण समालोचक-व्यक्तित्वको समझनेके लिअे अुनके व्यंग्य, अुनके आक्रमण सबका सच्चा स्वरूप हृदयंगम करने तथा अिन सभीके प्रति सहानुभूतिका भाव प्राप्त करनेके लिअ यह आवश्यक है।

अितिहास वेत्ताओंका मत है कि वाल्मीकि महात्मा बुद्धके आविर्भावके पहले हुअे। * बुद्धदेवके सम्बन्धमें यह निश्चित रूपसे ज्ञात है कि वे अीसाके छह शताब्दी पूर्व हुअे। वाल्मीकि बुद्धदेवसे कितने पूर्व हुअे यह विवाद-ग्रस्त हो सकता है; किन्तु यदि हम अन्तसाक्ष्यपर निर्भर रहें तो यह कह सकते हैं कि रामायणमें वर्णाश्रम व्यवस्थाका जो रूप मिलता है अुसकी विकृतिपर ही बौद्ध धर्मका अुदय संभव है और यह विकृति सौ-पचास वर्षोंमें ही क्रियाशील नहीं हो सकती। यह स्मरण रखना चाहिअे कि वाल्मीकि रामके समसामयिक थे और राम वर्णाश्रम-व्यवस्थाके मर्यादा-रक्षक होनेके कारण ही मर्यादापुरुषोत्तम कहलाअे। अैसी अवस्थामें अिस आधार-पर कि अेक दूसरेसे सर्वथा भिन्न दो महान् युगोंके प्रवर्तकोंके बीचमें यदि सहस्रों वर्षोंका नहीं तो सैकड़ों वर्षोंका अन्तर तो अवश्य ही होना चाहिअे। वाल्मीकिका समय होमरसे भी पहले मान लेनेमें कोअी आपत्ति नहीं दिखाअी पड़ती। जो हो होमरके समसामयिक तो वे अवश्य ही ठहरते हैं, यद्यपि मैं जो बात आगे कहने जा रहा हूँ अुससे अुनके होमरके परवर्ती होनेसे भी कोअी क्षति नहीं होती है।

भारतीय वाङ्मयमें वाल्मीकि 'आदि कवि' कहे गअे हैं। अिसकी चर्चा करते हुअे श्री आर्थर अे० मैक्डानल * ने अपने संस्कृतके अितिहासमें कहा है—

"वास्तवमें रामायण परवर्ती काव्यके अरुणोदयका प्रतिनिधित्व करता है। बहुत सम्भवतः यह अुस कलाका प्रत्यक्ष प्रसार और विकास प्रगट करता है जिसे वाल्मीकिकी रचनाके आवृत्तिकारोंकी परम्पराने प्रस्तुत किया है। महाकवियोंने अुन्हें आदि कवि कहकर अिस सम्बन्धको स्पष्ट रूपसे मान्यता दी है।"

शान्त तपोवनमें महर्षि वाल्मीकि विराजमान थे। सहसा अेक दुर्घटना घटित हो गअी। अेक व्याधने काम-क्रीड़ा-रत क्रौंच-पक्षी युगलपर बाण चला दिया। आहत होकर क्रौंच धराशायी हो गया। यह अत्याचार देखकर तथा व्यथिता क्रौंचीका चीत्कार सुनकर महर्षि बहुत विकल हुअे, सहज ही अुनकी करुण वाणीसे ये शब्द निकले—

---

* the balance of the evidence in relation to Buddism seems to favour the pre-Buddistic Origin of the genuine Ramayan.

—Arthur A: Macdonell in history of Sanskrit literature.

* The Ramayan in fact represents the dawn of the later artificial poetry (Kavya) which was in all probability the direct continuation and development of the art handed down by the rhepsodists who recited Valmiki's work. Such a relationship is distinctly recognised by the authors of the great classical epics when they refer to him as the Adikavi or first poet.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शास्वतीः समाः
यत्क्रौंच मिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ।"+

जितना ही प्रखर व्याधका अज्ञान था, जितनी ही तीव्र, क्रौंचीकी वेदना थी, अुतने ही मार्मिक और कठोर महर्षिके ये शब्द थे । ये कहाँसे आअे ? अुच्च कोटिकी रागात्मिका वृत्तिसे सम्पन्न महर्षिके अुस अन्तस्तलसे ये शब्द निकले थे जिसमें मानव मात्रहीके लिअे नहीं, समस्त मानवेतर सृष्टिके लिअे अपरिमित दया, अनन्त करुणा, असीम स्नेह था, जहाँ तक क्रौंचीकी पीड़ाका प्रश्न था, अुनकी सहानुभूति सर्वथा अुचित थी, किन्तु वह अितनी सक्रिय क्यों हुअी कि व्याध अभिशापका पात्र हो गया ? यह सोचकर महर्षिका विचलित हो जाना स्वाभाविक था । आँखोंके सामने सहसा ही हो गअे अप्रिय लोक-व्यापार और तत्काल ही प्रभाव ग्रहण कर अुनके द्वारा क्षोभकी अभिव्यक्ति, यह सारा प्रसंग अुन्हें अपनी वैयक्तिक साधनामें विघ्न अुपस्थित करता जान पड़ा । वे बड़े असमंजसमें पड़ गअे ।

महर्षिने असमंजसके निवारणके लिअे प्रकाशकी खोज की, वह, प्रकाश अुन्हें शीघ्र ही मिला, ब्रह्मा पधारे और बोले, हे मुनि ! तुम संशयमें क्यों पड़े हो ? तुम्हारा शोक साधारण शोक नहीं है, वह तो असाधारण होकर श्लोकत्वको प्राप्त हो गया । ब्रह्माके अिस कथनमें ही, यदि हम ध्यान देकर देखें तो, काव्यके सच्चे स्वरूपका दर्शन मिल जाअेगा ।

जो शोक व्यक्तिगत स्तरसे अूपर अुठाकर, व्यक्तिकी सामान्य स्वार्थ भावना और संकीर्णतासे मुक्त होकर सर्वसाधारण स्तरपर पहुँच गया, लोककल्याण और लोकसेवा ही जिसका लक्षण है, वही शोक, वही क्रोध, वही क्षोभ सच्चा श्लोक है, सच्चा काव्य है । महर्षिका क्षोभ अिसी कोटिका था, अिसी कारण सहृदय समाजको अुससे रसकी प्राप्ति हुअी ।

+ हे निषाद ! अगणित वर्षोंतक तुम प्रतिष्ठाको न प्राप्त होओ, क्योंकि तुमने कामक्रीड़ामें रत काम मोहित क्रौंचको मार डाला है ।

यहाँ हमें काव्य सम्बन्धी अेक मूल्यवान तत्वकी अुपलब्धि होती है, प्रभावशाली आलम्बनके अुपस्थित होनेपर सहृदय आश्रममें किसी-न-किसी प्रकारकी प्रतिक्रिया होगी ही, वाल्मीकि जैसे आश्रयने तो केवल अभिशाप वचन ही कहे और अुनके व्यक्तित्वकी यह अुच्चता थी कि अपनी शापमयी वाणी द्वारा निषादको दंडित करनेके औचित्यमें भी अुनको सन्देह हो गया किन्तु अैसे भी सहृदय आश्रयकी कल्पना की जा सकती है जो तत्काल ही निषादको शस्त्र द्वारा दण्ड देता । सामने अत्याचार देखकर यदि कोअी व्यक्ति अत्याचारी और अत्याचारके पात्रमें प्रस्तुत अन्यायपूर्ण व्यवहारका प्रतीकार करनेके लिअे निर्विशेष, निर्लिप्त भावसे, अग्रसर होता है तो निस्सन्देह यह भी श्लोकत्वकी मर्यादाके भीतर मान्य होगा ।

संसारमें सबल और निर्बल सदैव रहे हैं और सदैव रहेंगे, निर्बल सबलके खाद्य बनेंगे और निर्बलको खाकर जीना सबल अपना अधिकार मानेंगे । निस्सन्देह यह सत्य है, किन्तु जितना ही सत्य यह है अुतना ही सत्य यह भी है कि दोनोंके मध्यमें समीकरणका अत्याचारीके दण्डविधान तथा निर्बलके शक्तिवर्द्धनका प्रयत्न सृष्टिके अेक शाश्वत नियमके द्वारा रागात्मक भाव विकासके रूपमें होता रहेगा । देश और कालके अनुसार आलम्बन बदलेंगे और अुनसे प्रभावित होनेवाला आश्रय, सहृदय जन भी भिन्न-भिन्न रूपोंमें अुपस्थित होंगे । यद्यपि अुनका प्रभाव-ग्रहण अुनके द्वारा जो अुपकार कार्य करावेगा वह प्रत्येक अवस्थामें स्वार्थ-मुक्त तथा अनासक्तिपूर्ण होगा तथापि यह कल्पना की जा सकती है कि अुनकी वैयक्तिक साधना अेक स्तर-विशेषकी होकर भी अुन्हें कर्मकी भिन्न-भिन्न स्थितियोंमें अवतीर्ण करेगी । शुद्ध प्रेमकी भूमिपर विचरण करनेवाली, कर्मकी अिन समस्त स्थितियोंमें सौन्दर्यके किसी-न-किसी रूपका निवास रहेगा और यदि शुक्लजी "करुणासे आर्द्र और फिर रोषसे प्रज्वलित होकर पीड़ितों और अत्याचारियोंके बीच अुत्साह पूर्वक खड़े होनेमें तथा अपने अूपर अत्याचार पीड़ा सहने और प्राण देनेके लिअे तत्पर होनेमें अधिक सौन्दर्य रखते हैं, तो देश-कालकी मर्यादाके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भीतर अुनमें कोअी अनौचित्य नहीं है, यदि वे करुणा और क्रोधके अिसी सामंजस्यमें मनुष्यके कर्म-सौन्दर्यकी पूर्ण अभिव्यक्ति और काव्यकी चरम सफलता मानते हैं, तो देश-कालकी सीमाके भीतर अिसके विरोधमें भी कुछ नहीं कहा जा सकता। मैं अपने कथनके चारों ओर देश-कालका जो घेरा बाँध रहा हूँ अुसका भी अेक कारण है, अुसे भी मैं यहाँ स्पष्ट कर देना चाहता हूँ।

निषादको अभिशाप देकर महर्षि वाल्मीकि जितने संतुष्ट हुअे अुससे अधिक अशान्त और विचलित हो गअे। अुनकी वैयक्तिक साधनाके स्थिर स्वरूपने निषादको आवश्यक दंड देकर क्षणिक समाधान तो प्राप्त कर लिया, किन्तु अुक्त साधनाके गतिशील स्वरूपने अुन्हें और भी अूँचे अुठाकर वस्तु-स्थितिपर विचार करनेके लिअे प्रेरित किया और तब वे अनुभव करने लगे कि कहीं मेरे द्वारा अन्याय तो नहीं हो गया। बहुत खोजनेपर भी अन्यायकी अुन्हें कहीं झलक नहीं मिली, निषादकी विषम-से-विषम परिस्थितिमें भी, रागात्मक भाव प्रेरित कल्पना द्वारा पहुँचकर महर्षिने विचार किया, किन्तु फिर भी अुसके आचरणको अनिन्दनीय ठहरानेवाली कोअी बात अुन्हें नहीं दिखाअी पड़ी। अब विचारणीय यह है कि महर्षि जहाँ थे वहाँ होते हुअे भी क्या देश-काल विशिष्ट कोअी अैसी परिस्थिति नहीं हो सकती थी, जिसके द्वारा वे अभिशाप-गत प्रतिक्रियासे मुक्त हो सकते? क्या अभिशाप ही अेकमात्र गति थी? क्या अन्य कोअी विकल्प संभव नहीं था?

जिस स्थानपर क्रौंचका वध हुआ था अुसके समीप ही रहकर, सम्पूर्ण बाह्य जगत भी जिसकी अेक आंशिक अभिव्यक्ति है अुस अव्यक्तके चिन्तनमें यदि महर्षि लीन और समाधिस्थ होते, यदि अुनकी अुस समाधिने अुनकी समस्त ज्ञानेन्द्रियोंको निष्क्रिय कर दिया होता तो भी अभिशाप-विषयक जिस प्रतिक्रियाके लिअे वे विवश हुअे क्या अुसका कोअी प्रश्न खड़ा होता? वैयक्तिक साधनाकी अिस परमोच्च स्थितिमें वे अुस समय नहीं थे जब विचाराधीन दुर्घटना हुअी, यह तो स्पष्ट ही है, किन्तु यदि वे अैसी अवस्थामें होते तो भी क्या देश-कालकी कार्यकारिणी शक्तिको सीमित बनानेवाली अेक महान् परिस्थिति अुन्हें अुनके घेरेके बाहर कर देनेमें समर्थ न हो सकती?

नहीं, देश-काल संबंधी प्रेरणा अनिवार्य है भी, और अेक सीमाके बाद नहीं भी हैं। अुपस्थित प्रसंगका अुपयोग हमारी साधनाको जितने अंशोंमें व्यक्त कर सकता है अुससे अधिक अंशोंमें व्यक्त कर सकनेवाला साधन यदि हमें सुलभ है तो हमें देश-कालकी बाधा स्पर्श नहीं कर सकती। शंकरकी समाधि प्रसिद्ध है, जो तीनों लोकोंमें अनन्त हाहाकार मच जानेपर भी अविचल ही रही और जिसे भंग करनेके लिअे कामदेवको अपनी समस्त शक्ति लगा देनी पड़ी थी। अुस समाधिने तो विचाराधीन क्रौंच पक्षीपर किअे गअे अत्याचारके ढंगके करोड़ों, अरबों ही क्यों, संख्यातीत अत्याचारोंकी अुपेक्षा कर दी थी, और फिर भी वह शंकरको अक्षत, अदोष ही रख सकी, वे शंकर जो लोक-संग्रहके प्रतीक माने जाते हैं और जिन्होंने अुसके संबंधमें, हलाहल पान करके प्रामाणिकता प्राप्त की थी। क्या अिसी प्रकारकी समाधि महर्षि वाल्मीकिकी कल्पनामें तो नहीं थी जो अुनके शाप-गत क्रोध और शोकको अपेक्षाकृत हलका ठहराकर अुन्हें अस्थिर बना रही थी?

वाल्मीकिने अपनी सम्पूर्ण शक्तिके साथ अपने अंतरमें स्थित ब्रह्मसे पूछा—समाधिकी ओर न जाकर यह मैं किधर चला गया, 'किमिदं व्याहृतं मया', मेरे द्वारा यह क्या हो गया? ब्रह्मके प्रतिनिधिसे अुन्हें अुत्तर मिला, तुम अपनी अुसी भावनाके साथ रामका चरित्र लिखो। वे समाधिके लिअे न प्रेरित किअे जाकर महाकाव्यके प्रणयन-कार्यमें लगाअे गअे, क्रौंच-वध कांडके छोटेसे क्षेत्रमें अुनकी परीक्षा हो चुकी थी, अुसमें वे सफल हो चुके थे, अब अुनके हृदयको अपनी अभिव्यक्तिके लिअे अनाचारका अेक विशाल क्षेत्र मिला, जिसमें निषादके स्थानपर रावण था, हत क्रौंच पक्षीके स्थानपर दलित, पीड़ित, लोक-मानस था, विरह-विधुरा क्रौंच-प्रियाके स्थानपर सामाजिक शान्ति-रूपिणी सीता थी और सहृदयतासे प्रसूत अभिशापके स्थानपर रामचन्द्रका बाण था, यह अुनका अर्जित क्षेत्र था, अिसे वे अस्वीकार नहीं कर सकते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्तु अिसका यह अर्थ नहीं कि समाधिका कोअी महत्व ही नहीं रह गया; नहीं, अपने स्थानपर अुसका यदि अधिक नहीं तो कम-से-कम अुतना ही महत्व है जितना अन्तरात्माके आदेशसे रामायण-रचनाका हो सकता है, ठीक अुसी प्रकार जिस प्रकार शंकरकी समाधिका अुतना ही मूल्य है, जितना अुनके हलाहल-पानका अथवा लोक-कल्याणके निमित्त पार्वती-विवाह-का। अिनमें यदि कोअी अंतर हो सकता है तो यही कि समाधि स्थिर सौन्दर्यका प्रतिनिधित्व करती है तथा लोक-हित-साधक कार्यावली गतिशील सौन्दर्यका।

स्थिर सौन्दर्य ही से शक्ति प्राप्त करके गतिशील सौन्दर्य आगे अपना मार्ग प्राप्त करता है और गतिशील सौन्दर्यकी प्रगतिसे ही स्थिर सौन्दर्यके सुदूर-स्थित भवनमें हमारा प्रवेश संभव है। अतअेव, अिनमेंसे किसी अेकको त्यागकर केवल दूसरेको ग्रहण करना अुचित नहीं है, अैसा करके हम सत्यके समीप कभी न पहुँच सकेंगे, क्योंकि सत्य दोनोंके सामंजस्यमें है, न कि दोनोंके विरोधमें।

काव्यका आदर्श निर्धारित करनेके सम्बन्धमें अितनी दूरतक हम आजसे लगभग तीन हजार वर्षों पहले ही पहुँच चुके थे, यद्यपि वैयक्तिक साधनाकी प्रधानता निर्विवाद रहेगी, तथापि लोक-साधनाकी वह अुपेक्षा नहीं कर सकेगी, क्योंकि अन्ततोगत्वा व्यक्ति धर्ममें कोअी विरोध नहीं है। यहाँ यह भी कह देना आवश्यक है कि वह वैयक्तिक साधना सदोष समझी जाअेगी जो लोकसाधना अथवा लोकधर्मकी विपरीत-दिशामें गमन करेगी जितनी ही मात्रामें अुसके द्वारा लोकधर्मकी अवमानना होगी अुतनी ही मात्रामें वह असफल और विकार-ग्रस्त मानी जाअेगी। व्यक्ति-साधना और लोक-साधना दोनों ही ताल ठोंककर अेक-दूसरेके विरुद्ध अखाड़ेमें खड़ी हों, अिससे अधिक असंगत दूसरी कोअी बात नहीं हो सकती।*

लोकसाधना और व्यक्तिसाधनाके जिस हार्दिक समन्वयका संकेत हमें आद्रि कविके शाप-असमंजसमें मिलता है, वह बहुत अधिक स्पष्ट रूपमें श्रीमद्भगवत् गीतामें हमें कर्मयोग और ज्ञानयोगके अभिन्नपरिणामी होनेके रूपमें दिखाई पड़ता है। जिस प्रकार ब्रह्माने आदि कविके शोकको श्लोक कहकर रामायण-रचनाके प्रयासमें लगनेके लिअे अुनसे अनुरोध किया, अुसी प्रकार श्रीकृष्णने अर्जुनको बताया कि आसक्तिसे मुक्त होकर किया जानेवाला धर्म परब्रह्म परमात्माके पास पहुँचता है, अतअेव अुसे वैसा ही कर्म करना चाहिअे। अपने व्याख्यानमें अुन्होंने कहा कि हे अर्जुन, ध्यान-निष्ठ चित्तसे अपने सब कर्मोंको मुझे देकर तथा आशा और ममतासे रहित होकर, क्लेशका न अनुभव करते हुअे तू युद्ध कर। अिस प्रकार यह स्पष्ट है कि कर्म वही निन्दनीय हो सकता है जो आदर्श, परम केन्द्रसे कटकर अलग जा पड़ा हो और जिसके कारण अुक्त केन्द्रकी ओरकी प्रगतिमें बाधा पड़ती है। कर्मका जितना स्वरूप लोकसेवा, लोकरंजन आदिमें व्यक्त होता है अुसके सम्बन्धमें यही बात समझनी चाहिअे।

किन्तु जैसे कर्मका अेक स्वरूप बहिर्मुखी होकर भी अन्तरके अपने केन्द्रके शासनमें रहनेके लिअे बाध्य है, केन्द्र द्वारा नियमित परिधिके बाहर नहीं जा सकता, वैसे ही कर्मका स्वरूप भी जो निरन्तर अन्तर्मुखी होता जा रहा है, जो समाधिकी ओर अुन्मुख है, अपनी सहज प्रकृतिके कारण सुव्यवस्थित, सुशासित बहिर्मुखी कर्मसे भिन्न नहीं हो सकता, अुसकी संगतिका त्यागकर नहीं चल सकता, सच बात तो यह है कि अपने प्रकृत स्वरूपमें रहकर बहिर्मुखी कर्म भी स्थिति ही की ओर अुन्मुख होता है। केन्द्रोन्मुख तथा लोक-परिधिकी ओर अुन्मुख, दोनों ही प्रकारके कर्म अेक ही वृक्षकी दो शाखाअें हैं जो अपने पोषक आहारके लिअे अेक ही मूलकी कृपाकी अपेक्षा रखती हैं। अिसीसे यह न समझना चाहिअे कि स्थान-स्थानपर भ्रमण करनेवाले, लोगोंको ज्ञानका प्रकाश देकर सुखी बनानेवाले महात्मा बुद्ध, समाधिस्थ महात्मा बुद्धकी अपेक्षा किसी प्रकार हीन हैं अथवा श्रेष्ठ हैं। अैसा समझना ही सम बुद्धिको खोना है।

---

* "तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः।
मयि सर्वाणि कर्माणि संन्यास्याध्यात्मचेतसा।
निराशीर्निर्ममो भूत्वा युध्यस्व विगतज्वरः।"
—गीता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्मयोग द्वारा ब्रह्मतत्वकी, प्राप्ति सम्भव है, अिसकी चर्चाके अुपरान्त हमें यह देखना चाहिअे कि वह ज्ञानयोग द्वारा सम्भव है या नहीं, वह ज्ञानयोग जो व्यक्तिसाधनाका अधिक मात्रामें प्रतिनिधित्व करता है। * अिस सम्बन्धमें हमें गीताके बारहवें अध्यायमें अर्जुनके प्रति श्रीकृष्णके वचनोंकी ओर ध्यान देना चाहिअे। वे कहते हैं, हे अर्जुन, जो अपने समस्त कर्म मुझे भक्ति पूर्वक अर्पण करके तैलधाराके सदृश त्रुटिहीन ध्यानयोगसे मेरी अुपासना करते हैं, जो मुझमें ही अपने सम्पूर्ण चित्तको लगा देते हैं, अुन्हें मैं शीघ्र ही मृत्यु-लोक रूपी समुद्रसे, अर्थात् प्रतिक्षण भयंकर रूपोंमें मृत्युको अुपस्थित करनेवाली परिस्थितियोंके जालसे मुक्त कर देता हूँ। अतअेव, अपने मन और बुद्धिको मुझमें ही केन्द्रीभूत कर, अैसा करके मुझमें ही निवास करेगा।

व्यक्तिसाधना * के अिस रूपमें लोक-साधनाके अुस सम्पूर्ण रूपका विसर्जन हो जाता है जो लोकके भीतर प्रसार प्राप्त करके नाना कार्यके रूपमें प्रगट होता है। अिसे यों भी कह सकते हैं कि व्यक्ति-साधना लोक-साधनाका शयनागार है और लोकसाधना व्यक्ति-साधनाका अभिसार है। प्रियतमसे दोनों ही जगह भेंट होती है, अेकमें घर बैठे और दूसरेमें नियत स्थानपर पहुँचनेपर।

वाल्मीकि और व्यास द्वारा प्रस्तुत अिन सिद्धान्तों-पर चलनेवाले भारतीय साहित्यके अन्तर्गत न नाटकके विकासमें कोअी कठिनाअी खड़ी हुअी और न काव्यके विकासमें। व्यक्तिसाधनाके घेरेके भीतर रहकर गीति-काव्यका विकास अनेक स्तरोंपर हो सका तथा लोक-साधनाके अधीनस्थ होकर प्रबन्धकाव्यने अपनी प्रगति प्राप्त की। साथ ही गीतिकाव्य लोकसाधनाको तथा प्रबन्धकाव्य व्यक्तिसाधनाको अपना अुचित सहयोग देता ही रहा।

संस्कृतके साहित्याचार्योंने अनेक मतमतान्तर खड़े किअे, किन्तु रचनात्मक साहित्य मात्रके लिअे मान्य रस-सिद्धान्तको नितान्त अुन्मूलित कोअी नहीं कर सका, अपने सिद्धान्तका पोषण करके भी वे रस-सिद्धान्तकी अुपयोगिताको मानते रहे। अिसका कारण यही है कि वाल्मीकि और व्यास द्वारा प्रस्तुत अनासक्त कर्म और समाधिके सिद्धान्तोंसे पल्लवित होनेके कारण रस-मत अत्यन्त दृढ़ आधारसे सम्पन्न है। अुसमें विश्व-जीवनकी आन्तरिक अेकताको हृदयंगम करा देनेकी विशेष सामर्थ्य है।

शुक्लजीके हृदयमें योरोपीय काव्यके वादोंके प्रति आस्था और भारतीय काव्यके रागात्मिका-वृत्ति-आधारित रस-सिद्धान्तपर आस्था क्यों थी, अिसका अत्यन्त संक्षिप्त यहाँ दिग्दर्शन कराया गया है।

हिन्दी-साहित्यमें समीक्षाका कार्य अभी थोड़े समयसे शुरू हुआ है। भारतेन्दुके समयतक तो जो कुछ रस, अलकार, नायिका भेद आदिके सम्बन्धमें चर्चा होती रही अुसका आधार संस्कृतके ग्रन्थ ही रहते थे। अुसके अनन्तर पत्रकारिताके पथपर चलकर हम क्रमशः नवीन प्रकाशनोंकी समालोचनाके अभ्यासी हुअे और विश्वविद्यालयोंमें हिन्दी साहित्यका पठन-पाठन आरम्भ हो जानेपर अँगरेजी भाषाके माध्यमसे योरोपीय चिन्तकोंके विचारोंसे परिचित हुअे। वर्तमान समयमें हम यही नहीं समझ रहे हैं कि हमारी समीक्षा-पद्धति किस मार्गपर चले। हम यह स्वीकार करनेके लिअे तैयार नहीं हैं कि योरोपीय विचार-धाराओंके आघातसे हमारे मस्तिष्ककी शक्ति कुंठित हो गअी है, और फिर भी यह सत्य बात है कि हममेंसे अनेकको मार्क्स और फ्रायडको छोड़कर हमारा अन्य कोअी अुद्धारकर्ता दिखाअी नहीं पड़ता। अपना कोअी स्वतन्त्र मार्ग निकालनेकी हममें क्षमता नहीं है, अुधार लेकर खाना और अुसीपर गर्व करना अिस समय हमें प्रिय हो रहा है। हमें आत्म-निरीक्षण द्वारा अपनी त्रुटियोंसे परिचय प्राप्त करना चाहिअे।

---

* "ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सन्यस्य मत्पराः।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त अुपासते।
तेषामहंसमुद्धर्त्ता मृत्यु संसार सागरात्।
भवामि न चिरात्पार्थ मय्यावेशित चेतसाम्।
मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धि निवेशय।
निवसिष्यसि मय्येव अत अूर्ध्व न सन्शयः।"

* आत्मबोध और जगद् बोधके बीच ज्ञानियोंने गहरी खाअी खोदी, पर हृदयने कभी अुसकी परवाह न की, भावना दोनोंको अेक ही मान कर चलती रही। अिस दृश्य जगतके बीच जिस आनन्द मंगलकी विभूतिका साक्षात्कार होता रहा अुसीके स्वरूपकी नित्य और चरम भावना द्वारा भक्तोंके हृदयमें भगवानके स्वरूपकी प्रतिष्ठा हुअी। लोकमें अिसी स्वरूपके प्रकाशको किसीने रामराज्य कहा, किसीने आसमानकी बादशाहत।—

—चिन्तामणि, प्रथम भाग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महामना मदनमोहन मालवीय

—श्री सीताराम चतुर्वेदी

महामना मालवीयजीका जन्म पौष कृष्ण अष्टमी सं. १९१८ वि. (२५ दिसम्बर सन् १८६१) को प्रयागमें हुआ था। निर्धन किन्तु तपःपूत सात्त्विक मनस्वितासे सम्पन्न परम भक्त माता-पिताकी पावन स्नेह-छायामें अपनी शिशुता और किशोरताका संस्कार सँवारकर मालवीयजी महाराजने आशावाद, वाङ्माधुर्य, महत्वाकांक्षा और अध्यवसाय आदि गुणोंका वरदान पाकर भारतके विभिन्न क्षेत्रोंका सफल नेतृत्व प्रारम्भ कर दिया।

जब पढ़ाअीका व्यय भी दूभर हो गया हो, बड़े परिवारकी बड़ी आवश्यकताअें भी जहाँ सदा अभाव बनी रहती हों, दूसरोंकी दी हुअी छात्रवृत्तिसे पोथीका काम भी न चल सकता हो, तब भी दरिद्रताके क्रूर गर्जनकी भर्त्सना करके मालवीयजीने अुस पवित्र संकल्पमय स्वप्नकी सृष्टि की जिसमें वशिष्ठके गुरुकुलसे चली आती हुअी परम्पराने काशी, तक्षशिला और नालन्दाके विश्व-विश्रुत विद्या-केन्द्रोंकी पावन प्रेरणासे पूर्ण होकर, आधुनिक विश्वविद्यालयोंकी व्यापक ज्ञानराशिका समन्वय करके, सुन्दर भारतीय विद्यापीठका स्वरूप धारण कर लिया और जिसकी कल्पना अुस दीन ब्राह्मण-बालकके मुखसे सुनकर अुसके सभी सहपाठी स्वाभाविक कुतूहलसे दृढ़ अविश्वासकी परिहास-पूर्ण हँसी हँस देते रहे। किन्तु मालवीयजीकी आशावादी महत्वाकांक्षाने अुन अुपेक्षा-भरी हँसियों और ठिठोलियोंसे तनिक भी हतोत्साह न होकर अपनी स्वप्नमयी कल्पनाको निरंतर चिन्तन और मित्रोंकी सम्मतिसे पुष्ट करके अितना शक्तिशाली कर लिया कि वह स्वप्न धीरे-धीरे अमूर्तसे मूर्त होकर अप्रत्यक्षसे प्रत्यक्ष होकर दिखाअी देने लगा।

अनेक प्रकारकी पारिवारिक और आर्थिक अड़चनोंके होते हुअे भी, पं० ब्रजनाथजीने अपने तृतीय पुत्र मदन-मोहनकी महात्वाकांक्षाको कभी दुर्बल नहीं होने दिया। सामर्थ्य न होते हुअे भी अुन्होंने मालवीयजीको अँग्रेजी शिक्षा प्राप्त करनेके लिअे प्रोत्साहन दिया। किन्तु जबतक अिन्होंने बी. अे. किया तबतक परिवारकी शक्ति शिथिल हो चुकी थी। अत्यन्त अनिच्छापूर्वक अिन्हें अपनी गृहस्थीका बोझ सँभालनेको विवश होना पड़ा और अुन्होंने प्रयागके गवर्नमेन्ट स्कूलमें ५० रु० पर अध्यापनकार्य स्वीकार करके नअे दायित्वका भार सँभालना प्रारम्भ कर दिया।

सच्चरित्रता, मृदुभाषिता और पाण्डित्य, अिन तीन गुणोंसे अलंकृत होकर थोड़े ही दिनोंमें मालवीयजीके आकर्षक व्यक्तित्वने गवर्नमेन्ट स्कूलके पूरे वातावरणमें अेक प्रकारका सांस्कृतिक प्रभाव व्याप्त कर दिया। पढ़ानेके सहानुभूतिपूर्ण ढंग और कोमल स्निग्ध व्यवहारने छात्रोंको तो मन्त्रमुग्ध किया ही, साथ ही वहाँके अधिकारी भी मालवीयजीसे अितने प्रभावित हुअे कि दो वर्षोंमें ही अुनका वेतन ७५ रु० हो गया। अिस नून-तेल लकड़ीके जकड़े हुअे बन्धनमें भी मालवीयजीका स्वप्न रह-रहकर अिन्हें व्याकुल कर रहा था किन्तु अभी समय नहीं जागा था, मुहूर्त नहीं बन पाया था। अचानक सन् १८८६ में कलकत्तेकी कांग्रेस हुअी। वहाँ मालवीयजीके ओजस्वी भाषणने सहसा अुन्हें अुठाकर बहुत अूँचे पहुँचा दिया और वे केवल अध्यापक न रह सके, देशके नेता बन गअे। कालाकाँकरके राजा रामपालसिंहकी गुणग्राहकताने अुन्हें दैनिक 'हिन्दुस्थान' सौंप दिया; किन्तु राजा साहबकी तामसी दिनचर्यासे अिनकी सात्विक निष्ठा मेल न खा सकी। और अिसलिअे अकस्मात् अेक दिन वे सम्पादन परित्याग करके चले आअे और अुन्होंने वकालत पढ़नी आरम्भ कर दी। सन् १८९१ में वकालत पास करके वे पूरे वकील बन गअे। यों तो शेरकोटकी रानी-वाले मुकदमेने अुन्हें यश दिया ही किन्तु अुनकी वकालतकी सबसे अखण्ड कीर्ति है चौरी-चौराका मुकदमा जिसमें अुनकी तर्कपूर्ण वाणीने फाँसीपर झूलते हुअे सैकड़ों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कण्ठ अुतार लिअे, सैकड़ों माँगोंका सिन्दूर रख लिया, सैकड़ों हाथोंकी चूड़ियाँ बचा लीं और सैकड़ों नारियोंके सोहाग चिरजीवी करके अुनका कृतज्ञतापूर्ण आशीर्वाद पाया।

अिसी वकालतके दिनोंमें मालवीयजीकी घनिष्ठता पं० "सर" सुन्दरलालसे बढ़ रही थी और अिस घनिष्ठताके फलस्वरूप भावी विश्वविद्यालयकी योजना भी कुछ मूर्त रूप धारण कर रही थी। अन्तमें मालवीयजीने देखा कि दिन बीत रहे हैं, तपस्याके बिना अितनी बड़ी योजना सफल नहीं हो पाअेगी, बस वे सब कुछ छोड़कर अपनी जमी-जमाअी वकालतको लात मारकर चल दिअे शिक्षाका व्रत लेकर। सन् १९०४ अी. में काशी नरेश महाराज सर प्रभुनारायणसिंहके सभापतित्वमें काशीके मिन्ट हाअसमें सर्वप्रथम मालवीयजीने हिन्दू विश्व-विद्यालयकी विशाल योजना अुपस्थित की जिसे सुनकर सभी स्तम्भित रह गअे। किसीको भी विश्वास न हुआ कि पूर्व या पश्चिमकी समस्त विद्याओंको अपने भीतर संचित करनेवाला अितना बड़ा विश्वविद्यालय किसी प्रकार भी बन पाअेगा। अगले वर्ष सन् १९०५ में राष्ट्रीय महासभा (कांग्रेस) के अवसरपर ३१ दिसम्बर सन् १९०५ को काशीके टाअून हालमें सब धर्मोंके प्रति-निधियों और भारतके प्रसिद्ध शिक्षा-प्रेमियोंके सामने यह योजना अुपस्थित की गअी जहाँ अेक स्वरसे सबने अिनका हार्दिक समर्थन किया। अगले दिन अेक जनवरी सन् १९०६ को अुसी कांग्रेसके पंडालमें ही हिन्दू विश्व-विद्यालय स्थापित करनेकी घोषणा कर दी गअी। अुसी वर्ष २० से २९ जनवरी तक प्रयागमें साधुओं तथा विद्वानोंकी सनातन-धर्म महासभामें यह प्रस्ताव स्वीकार हुआ कि "भारतीय विश्वविद्यालयके नामसे काशीमें अेक हिन्दू विश्वविद्यालयकी स्थापना की जाअे।"

अुसी वर्ष बंग-भंग हुआ, स्वदेशी आन्दोलन छिड़ गया और सन् १९०७ में चारों ओर अितने विप्लवकारी आन्दोलन प्रारम्भ हुअे कि विश्वविद्यालयके बहुतसे समर्थक भारतसे निर्वासित कर दिअे गअे या जेलोंमें ठूँस दिअे गअे, हिन्दू-विश्वविद्यालयका विचार थोड़े दिनोंके लिअे थप-थपाकर सुला दिया गया। सन् १९११ में दरभंगा नरेशका सनातन-धर्म विद्यालय, डा. अेनी बेसेन्टका थियोसोफ़िकल विश्वविद्यालय और मालवीयजीका हिन्दू विश्वविद्यालय तीनों आ मिले और हिन्दू विश्वविद्यालयकी झोली लेकर ये शिक्षा-महारथी भिक्षा माँगने निकल पड़े। समूचे भारतने अिनका स्वागत किया और दो वर्षोंके भीतर भारतने अिनकी थैलीमें अेक करोड़से अधिक रुपया अुदारता और श्रद्धासे डाल दिया। प्रसिद्ध अुर्दू कवि चकबस्तने अिन्हींके लिअे कहा था—'फकीर कौमके आअे हैं झोलियाँ भर दो।'

अेक अक्तूबर सन् १९१५ को हिन्दू युनिवर्सिटी बिल स्वीकृत हुआ और ४ फरवरी सन् १९१६ को बसंत पंचमीके दिन गंगाजीके तटपर काशी हिन्दू-विश्व-विद्यालयका शिलान्यास हुआ जिसमें देशभरके राजा, महाराजा, नेता, धर्मगुरु, तथा विद्वान् अितनी संख्यामें पधारे कि जैसा अुत्सव विश्व-विद्यालयके शिलान्यासके अवसरपर हुआ वैसा सन् १९११ के दिल्ली दरबारके पश्चात् फिर कभी न हुआ, न होगा।

सन् १९१४ में जब श्रीमती अेनीबेसेन्टने होमरूल आन्दोलन चलाया तो मालवीयजी अुसके साथ भी रहे और जब वे सन् १७ में नजरबन्द कर ली गअीं तब भी मालवीयजी अुस आन्दोलनको चलाते रहे। अुनके व्याख्यान सुनकर अेक शायरने कहा था—

कहते हैं मालवीयजी हम होमरूल लेंगे
दीवाने हो गअे हैं गूलरसे फूल लेंगे।

अिसपर मैथिलीशरण गुप्तने अुन्हें अुत्तर दिया था—

जब होमरूल होगा बरकंक जन्म लेंगे।
हाँ, हाँ, जनाब तब तो गूलर भी फूल देंगे॥

६ फरवरी सन् १९१९ को विलियम विन्सेन्टने जो रौलट विप्लव नामका काला कानून अुपस्थित किया था अुसपर मालवीयजीने भाषण दिया। वह भारतके अितिहासमें अत्यन्त प्रसिद्ध भाषण है। १३ अप्रैल सन् १९१९ को जब जनरल डायरने फूलसे कोमल बच्चों, अबला नारियों और निःशस्त्र पुरुषोंको जलियानवाले बागका द्वार रोककर अुन्हें गोलियोंसे भून दिया, घायल प्राणियोंको रातभर खुले बागमें तड़पते रहने दिया,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नलोंका पानी बन्द कर दिया, बिजलीके तार काट दिअे, लोगोंको पेटके बल रेंगाया, प्रतिष्ठित नागरिकोंको खुले आम बेत लगाअी और अन्धाधुन्ध सजाअें दी गअीं। तब मालवीयजी महाराज ब्रिटिश सरकारके आदेशोंकी अवज्ञा करके पंजाब जा पहुँचे और वहाँ पण्डित मोतीलाल नेहरू, स्वामी श्रद्धानन्द और महात्मा गांधीके साथ मिलकर पीड़ितोंकी सहायता की और जाँच की। मालवीयजी असहयोग आन्दोलनके पक्षमें नहीं थे और वे यह नहीं चाहते थे कि छात्र पढ़ना छोड़ें। किन्तु सन् ९९३० में जब सब नेता पकड़ लिअे गअे तब मालवीयजी भी व्यवस्थापिका सभाको नमस्कार करके चले आअे और पंजाबका दौरा किया। अुधर जब बम्बअीमें सब नेता बन्दी कर लिअे गअे तब मालवीयजीने जलूसका नेतृत्व किया और अन्तमें वे भी बन्दी कर लिअे गअे। मालवीयजीके सहयोगसे और सप्रू-जयकरके अुद्योगसे २५ दिसम्बरको गांधी-अिरविन समझौता हुआ, गोलमेज परिषद् बुलाअी गअी जिसमें मालवीयजी भी सम्मिलित हुअे। वहाँसे लौटनेपर गांधीजी बन्दी कर लिअे गअे और अुन्होंने जेलमें आमरण अनशन प्रारम्भ किया। अुस समय मालवीयजीने ही पुनः दौड़-धूप की और बड़ी कठिनाअीसे अुन्होंने अुस समस्याको सुलझाया और गाँधीजीके अमूल्य प्राणोंकी रक्षाका यश लिया।

सन् १८८६ अी० में कलकत्ता काँग्रेसमें ही पं० दीनदयाल शर्मा व्याख्यानवाचस्पतिजीसे मालवीयजीकी भेंट हुअी और अुन्होंने सोचा कि सनातन-धर्मियोंकी भी क्यों न अैसी संस्था संगठित की जाअे। तदनुसार सन् १८८७ अी० में हरिद्वारमें सनातनधर्मियोंकी बड़ी भारी सभा बुलाअी गअी जिसमें भारतधर्म महामण्डलकी स्थापना की गअी। अिस महामंडलके महोपदेशकोंमें मालवीयजी महाराज सबसे प्रमुख थे। और तदनन्तर २७ जनवरी सन् १९२८ को बसन्त पंचमीके दिन काशी हिन्दू-विश्वविद्यालयमें अखिल भारत वर्षीय सनातन-धर्म सभाकी नींव डाली गअी जिसके अध्यक्ष मालवीयजी अन्ततक रहे।

हिन्दुओंके विशेषतः सनातनधर्मियोंके अनेक पर्वों, अुत्सवों और मेलोंके अवसरपर बहुत-सी स्त्रियाँ और बच्चे सो जाया करते थे या कुछ गुंडे अुन्हें बहकाकर अुड़ा ले जाया करते थे। अुन सबकी रक्षाके लिअे सन् १९२४ में अखिल भारतीय सनातनधर्म महावीर दलकी स्थापना की गअी। अुसी वर्ष मालवीयजीने यह भी अुपदेश दिया कि अछूतोंको सार्वजनिक कुओंसे जल भरने दिया जाअे और अुन्हें सार्वजनिक स्कूलोंमें पढ़ने दिया जाअे। सन् १९२५ में अुन्होंने धर्मयज्ञ कराकर अमृतसरके प्रसिद्ध दुर्गियाना मन्दिर और सरोवरकी स्थापना की।

सन् १९१४ तथा १६ में सरकारी नहर विभागमें जब हरिद्वारमें गंगाजीका पूरा प्रवाह रोककर नहर निकालनेका प्रयत्न किया अुस समय हिन्दुओंने गंगाजीकी धारा अविच्छिन रखनेके लिअे बड़ा भारी आन्दोलन किया जिसका नेतृत्व स्वयं मालवीयजी कर रहे थे किन्तु सरकारको सुबुद्धि आअी और अुन्होंने मालवीयजीका सुझाव मानकर नहर भी निकाल ली और गंगाजीकी धारा भी अविच्छिन्न रह गअी।

सन् १९२४ में प्रयोगमें अर्धकुम्भीके समय अधिकारियोंने आज्ञा निकाल दी कि गंगाजीकी तीव्रधाराके कारण त्रिवेणी संगमपर कोअी स्नान न करे। अधिकारियोंसे बहुत कहने-सुननेपर भी जब कोअी फल न निकला तब अुन्होंने सत्याग्रह करनेका निश्चय किया। ठीक संगमपर अेक बल्लियोंका बाँध बँधा हुआ था जिससे लोग संगमपर स्नान न कर सके, वहाँ पहुँचनेपर पुलिसने मालवीयजीको रोक लिया और सीढ़ी भी ले ली। मालवीयजीके साथ पं. जवाहरलाल नेहरू भी थे। थोड़ी देरतक तो ये लोग खड़े रहे। अितनेमें ही जवाहरलालजी अुचककर अुस बन्दपर जा चढ़े और मालवीयजी भी घुड़सवारों और पैदल सिपाहियोंके बीचसे बाणके समान निकल गअे। पं. जवाहरलालजीने अिस घटनाके सम्बन्धमें लिखा है—"मालवीयजीने अुस समय जो कर्तव दिखाया वह साधारण पुरुषके लिअे भी कठिन था; फिर बुढ़ापेकी कायामें लिपटकर अैसी फुर्ती दिखाना तो बड़े आश्चर्यकी बात थी।" फिर तो सब लोग अुनके पीछे-पीछे धारामें कूद पड़े और सत्याग्रहकी जीत हो गअी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अप्रैल सन् १९२७ में हरिद्वार कुम्भपर बहुत विरोध करने और बहुत कहने-सुननेपर भी मेलेके अधिकारियोंने ब्रह्मकुंड (हरकी पैड़ी) पर अेक पुलिया बना दी जिसपर सरकारी अधिकारी जूता पहिनकर चढ़ते और आते-जाते थे। अुनकी अिस धृष्टताके विरोधमें मालवीयजीने १३०० शब्दोंका लम्बा-चौड़ा तार संयुक्त-प्रान्तके गवर्नरके नाम भेजा जिसका परिणाम यह हुआ कि "गवर्नरने मेलेके अधिकारियोंको अुनका प्रयोग न करनेका आदेश दे दिया और वह झगड़ा सुलझ गया।" मालवीयजी पक्के सनातनधर्मी थे पर अुनका सनातन-धर्म अितना विस्तृत और विशाल था कि जहाँ वह व्यक्तिगत साधनमें तो कुछ कट्टर दिखाअी पड़ता था वहाँ वह अत्यन्त विशाल और विस्तृत भी था। जिस समय गांधीजीने हरिजन-आन्दोलन प्रारम्भ किया था अुसी समय मालवीयजीने अन्य अन्त्यजों और अछूत जातियोंके अुद्धारके लिअे धर्मशास्त्रसे विहित मार्ग निकाला और अुन्होंने काशी, कलकत्ता और नासिकमें मंत्र-दीक्षा भी दी। अुनका मत था कि 'विरोध करके, संघर्ष अुत्पन्न करके सामाजिक विषमताको प्रोत्साहन देकर कोअी काम न लिया जाअे। जो कुछ किया जाअे अुसमें विद्वानोंकी सम्मति लेकर और जितने पक्ष अुससे सम्बद्ध हों, सबको सन्तुष्ट और प्रसन्न करके कोअी काम किया जाअे। अिसीलिअे अुन्होंने गान्धीजीसे भी कहा था कि "मैं यह नहीं चाहता कि शूद्रोंको मंदिरोंमें प्रवेश करनेका अधिकार सरकारी कानून द्वारा मिले। मैं चाहता हूँ कि पारस्परिक सद्भावना अुत्पन्न करके ही यह कार्य किया जाअे।"

भारतीय गोधनकी रक्षाके लिअे भी मालवीयजीने कुछ कम कार्य नहीं किया। अुनका सबसे बड़ा कार्य तो यह था कि वे स्वयं चमड़ेके जूतों या सामग्रियोंका प्रयोग ही नहीं करते थे। अपने जीवन कालमें अुन्होंने सैकड़ों गोशालाओं और पिंजरापोलोंके लिअे रुपया अिकट्ठा किया, राजाओं, महाराजाओं, जमींदारों और ताल्लुकेदारोंसे मिलकर गोचर भूमिके लिअे जगह छुड़वाअी। अुनका गोप्रेम अत्यन्त सात्विक था। अेक बार गोरखपुरमें दौरा करते हुअे रातके अंधेरेमें अुनकी मोटर बैलगाड़ीसे टकरा गअी जिसमें मालवीयजीको भी चोट आअी किन्तु वे अपनी चिन्ता भुलाकर यह देखनेके लिअे आगे बढ़ गअे कि कहीं बैलोंको चोट नहीं है। मौलवी अब्दुल अहद अुनके सा थे। अुनके हृदयपर अिस बातका बड़ा गम्भीर प्रभाव पड़ा। मालवीयजीका अुपदेश ही है कि 'सब जाति, धर्म और सम्प्रदायके मनुष्योंको गोवंशकी रक्षा करने, अुसके साथ न्याय और दयाका बर्ताव बढ़ा में प्रेमके साथ सम्मिलित होना चाहिअे।'

यह बहुत कम लोग जानते होंगे कि मालवीयजी कवि भी थे और बबुआ साहब अर्थात् भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजीके हरिश्चन्द्र चन्द्रिकामें मकरन्द नामसे समस्या-पूर्ति भी भेजा करते थे।

अिन्दु सुधा बरस्यो नलिनीन पै,
वे न बिना रविके हरखानी।
त्यों रवितेज दिखायो तअू बिनु,
अिन्दु कुमोदिनि ना बिकसानी॥
न्यारी कछू अेक प्रीतिकी रीति,
नहीं "मकरन्द जू" जात बखानी।
साँवरे कामरीवारे गुपाल पै,
रीझि लटू भअी राधिका रानी॥
वे कबके अुत ठाढ़े अहैं अित,
बैठि अहौ तुम नारि चुपानी।
थाकी तुम्हें समुझावत साँझते,
अैसी मैं रावरी बानि न जानी॥
मोहि कहा पै यहै "मकरन्दहुँ"
जो कहूँ खीजि कै रूसन ठानी।
आजु मनाअे न मानति हौ कल,
आपु मनाअिहौ राधिका रानी॥
ढूंढ्यो चहूँ झझरीन झरोखन,
ढूंढ्यो किते भर दाव पहारन।
मंजुल कुंजन ढूंढ़ फिर्यो पर,
हाय मिल्यो न कहूँ गिरधारन॥
लावत नाहिं तअू परतीति
सह्यो, अितनो दुख प्रीतिके कारन।
जानत श्याम अजौं अुतही चित,
चौंकत देखि कदम्बकी डारन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने कालेजके जीवनमें अिन्होंने झक्कड़सिंहके नामसे जैन्टुलमैन नामका प्रहसन लिखा था जिसमें अिन्होंने दो कविताअें लिखी थीं। अेक अपने संबंधमें——

गले जूहीके हैं गजरे पड़ा रंगी डुपट्टा तन।
भला क्या पूछिअे धोती तो ढ़ाकेसे मँगाते हैं,
कभी हम वार्निश पहिनें, कभी पंजाबका जोड़ा
हमेशा पास डंडा है यह झक्कड़सिंह गाते हैं॥
न अूधोसे हमें लेना न माधोका हमें देना
करें पैदा जो खाते हैं व दुखियोंको खिलाते हैं।
नहीं डिप्टी बना चाहें, न चाहें हम तसिल्दारी
पड़े अलमस्त रहते हैं युँहीं हम दिन बिताते हैं॥

अुसमें जैन्टिलमैनोंका चित्र खींचते हुअे अुन्होंने कहा था——

बाबू औ चाचा का कहना लाअिक हम करता नहीं।
पापा कहना अपने बच्चोंको भी सिखलाता है हम॥
कोट और पतलून पहने हैट अेक सिरपर धरे।
ओविनिंगमें वाक करने पार्कमें जाता है हम।

चौदह वर्षकी अवस्थामें ही शृंगाररसके विषयमें आपने अेक दोहा कहा था——

यह रस अैसो है बुरो, मनको देत बिगारि।
याके पास न जाअिअे, जब लौं होअि अनारि॥

अेक बार अेक सज्जनसे सुन्दर कविताअें सुनकर मालवीयजीने अपना सोरठा कहा था——

गुनी जननको साथ, रसमय कविता माँहि रुचि।
सदा दीजियो नाथ, जब जब अिहाँ पठाअियो॥

अिन्होंने बालकृष्ण भट्टजीके 'हिन्दी प्रदीप' में लेख लिखकर, 'हिन्दुस्तान' पत्रका सम्पादन करके और 'अभ्युदय' तथा 'सनातनधर्म' पत्रोंमें अपने लेखोंके द्वारा हिन्दीकी जो सेवा की है वह हम सबके गौरवकी बात है। सन् १८९५ में जब मालवीयजी महाराजने अपना समय देकर और परिश्रम करके 'कचहरीकी लिपि और अुत्तर पच्छिमी प्रान्तमें प्रारम्भिक शिक्षा' नामका लेख लिखकर गहरी छानबीनके साथ नागरीके पक्षमें प्रमाण और आँकड़े अिकट्ठे करके सन् १८९५में अेन्टनी मैकडानलको दिअे और अुन्होंने मालवीयजीका यह कथन मान लिया कि नागरी लिपि ही कचहरीके लिअे अधिक अुपयुक्त है। सर्वप्रथम हिन्दीको यह राज्य तिलक मालवीयजीके हाथों ही हुआ। अुसके पश्चात् नागरी प्रचारिणी सभाकी गोदमें १० अक्टूबर सन् १९१० को जब हिन्दी साहित्य सम्मेलनका जन्म हुआ अुसके प्रथम सभापति भी मालवीयजी ही चुने गअे। बीचमें जब हिन्दुस्तानी भाषा और देवनागरी लिपिके सुधारकी बात चली अुस समय मालवीयजीने काशीके सम्मेलनके अधिवेशनपर स्वागत भाषणमें कहा था कि "सुधारके नामपर नागरी लिपिका जो बिगाड़ किया जा रहा है अुससे हम लोगोंको सावधान हो जाना चाहिअे। कअी सदियोंके निरंतर कलात्मक विकास होनेके बाद नागरी अक्षरोंने अेक सुन्दर रूप स्थिर कर लिया है और अुस लिपिको सीखनेवाला बिना किसी बाधाके लिख-पढ़ लेता है, अिससे अधिक लिपिकी श्रेष्ठताका क्या प्रमाण हो सकता है।"

भाषाके सम्बन्धमें भी अुन्होंने कहा था कि "जीवित भाषाओंकी यह स्वाभाविक गति है कि अुनमें प्रयोजनके अनुसार दूसरी भाषाके शब्द मिला लिअे जाते हैं किन्तु अिसका यह अर्थ कदापि नहीं होना चाहिअे कि हम अपने शब्द छोड़कर अुनके स्थानपर दूसरी भाषाके शब्द ग्रहण करें। हमें केवल अुन्हीं विदेशी शब्दोंको ग्रहण करना चाहिअे जिनके लिअे हमारे यहाँ शब्द न हों, जिनसे हमारी भाषाकी शक्ति बढ़े और भाव स्पष्ट करनेमें सहायता मिले।"

साहित्य और संस्कृतिके प्रचारके लिअे अुन्होंने सं. २००० को विक्रमादित्यकी स्मृतिमें अखिल भारतीय विक्रम परिषद्की स्थापना की जिसके द्वारा अनेक प्रतिष्ठित ग्रन्थ प्रकाशित हुअे और हो रहे हैं। अुनकी मधुरवाणीके सम्बन्धमें अेक अुर्दू कविने तो लिखा था कि——

किसीके आँखमें जादू तेरी जबानमें है।

स्वदेशी आन्दोलनके लिअे अुन्होंने जो कुछ किया वह सारा देश जानता है। अुनके सम्बन्धमें लीडरके सम्पादक सी. वाअी. चिन्तामणिने कहा था कि मालवीयजी नीचेसे अूपरतक केवल हृदय है। गांधीजी अुन्हें बड़ा भाअी कहते थे। अुनके निधनपर किसीने कहा था—अितना पवित्र आत्मा अिधर सैकड़ों वर्षोंमें भारतमें नहीं हुआ जिसके हृदयमें भूलकर भी अपने शत्रुके प्रति भी असद्भाव हो। सन् १९४७ में जब नोआखालीकी रोमांचकारी घटनाअें मालवीयजीने सुनीं अुससे वे अितने विक्षुब्ध हो गअे कि अुसी चिन्तामें अुनका पुण्यात्मा यह लोक छोड़कर मुक्त हो गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

अेक था आदमी

—श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

अभी जिन्दा है, मरा नहीं, बदल जरूर गया है। अितना तो नहीं बदला कि वह मुझे पहचाने ही नहीं; पर हाँ, मुझे देखकर कतराता जरूर है और यदि संयोग-से कतरानेका मौका नहीं मिला तो फिर अेक विचित्र हँसी हँसकर मुझे तपाकसे सलाम करता है और सलामके साथ-साथ अेक ही साँसमें बोलता है—"कहिअे शेखरजी, कैसे हैं? अच्छे! अच्छे ही रहिअे, फिर मिलूँगा, अभी मेरा अेक जगह अेपोंअिन्टमेन्ट है।" और मैं कुछ अुत्तर दूँ, अिसके पहले वह मुझसे काफी दूर भाग जाता है।

अिसका नाम बहुत ही प्यारा है—मनमोहन! पर, मैं अुसे मोहनजी ही कहता हूँ। लेकिन आज अिसका चेहरा अिस स्थितिको पहुँच गया है कि वह अपने नामकी सार्थकता शतांश रूपमें भी नहीं कर रहा है। जीवन-संघर्षके थपेड़े अिसके चेहरेपर झुर्रियोंका रूप धारण करके प्रकट होने लग गअे हैं। अेक थकी-हारी जिन्दगी अुसके चेहरेपर चमकती है। अुसकी धँसी हुअी गंभीर बड़ी-बड़ी आँखें अुसकी भावुकताकी साक्षी दे रही हैं। कह रही हैं कि यह व्यक्ति किसी समय कवि या लेखक था। अिसके हृदयमें चाँद-तारे कल्पनाका नित्य नया रूप धारण करके झिलमिलाते थे, बादलोंकी काली-घटा जरूर अिसकी प्रेयसीकी लट बनकर अिसके मनपर छा जाती थी और प्रकृतिका हर संकेत अुसके प्रेममें डूबा रहता था।

लेकिन आज तो वह पब्लिसिटी ऑफिसर है, सिनेमा-कम्पनीका पब्लिसिटी ऑफिसर। अपनी सारी विद्वत्तासे वह चित्रोंका विज्ञापन करता है। चित्रोंके कामुकता और बेहूदेपनको वह जनताके मनोरंजनका साधन बनाता है और हर चित्रके विज्ञापनपर 'दिल फड़कानेवाले मदभरे गीत, गुदगुदी पैदा करनेवाले नृत्य'की पंक्तियाँ 'फोर लाअिन' की टाअिपमें लिखवाता है। और अिसके अेवजमें अुसे काफी पैसा मिलता है। वह अुस पैसेसे अपने परिवारका शाही-शानसे पोषण करता है, जीवनके सुख-साधन अेकत्रित करता है और अपने वातावरणको मौजूँ बनाता है।

मैं भी अुसे बहुत बड़ा आदमी समझता हूँ। वह हमेशा बढ़िया पोशाकमें रहता है। हर समय अेक सिगरेटपर अेक सिगरेट पीता रहता है। यही कारण है कि अुसके होठों और दो अंगुलियोंके बीच हल्का-हल्का भरा-सा दाग हो गया है।

मैं लगातार अुससे परिचय करनेकी कोशिशमें था लेकिन कोअी मौका नहीं लगा। मैं जैसे ही अेक प्रकाशन संस्थाका सम्पादक बना तो मेरे अेक साहित्यिक मित्रने मेरा परिचय अुससे करवा दिया।

वह मुझसे अितनी शिष्टता और शालीनतासे पेश आअे कि मैं अपनेपर विश्वास नहीं कर सका। अुस दिनके प्रथम व्यवहारसे अुसके व्यक्तित्वकी मेरे हृदयपर छाप अंकित हो गअी और जब अुसने मुझे अपने घर भोजनका निमन्त्रण दिया तो मैं महसूस करने लगा कि अकड़कर चलनेवाला यह व्यक्ति अितना सहृदय और व्यावहारिक हो सकता है? सत्यमें संदेहका स्थान नहीं, मुझे अुसका निमन्त्रण स्वीकार करना पड़ा।

दूसरे दिन मैं ठीक १० बजेकी जगह ११ बजे अुसके घर पहुँचा। अुसका घर बहुत ही सुन्दर व आकर्षक था। मुझे अपना निवास-स्थान जो टीनका बना हुआ था याद आया और अेक डाह-सी अुत्पन्न हुअी मेरे दिलमें। लेकिन मैंने अपने भावोंपर शीघ्र ही काबू पाया और अुससे बहुत प्रेमपूर्वक मिला। मिलनके समय अुसके चेहरेपर जो भाव आअे अिससे सहजतासे यह अनुमान लगाया जा सकता था कि अुसने मुझे अपने जीवनका बहुत महत्वपूर्ण व्यक्ति समझा है।

"आअिअे शंकरजी! मैं आपकी बड़ी बेचैनीसे प्रतीक्षा कर रहा था।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने हँसते हुअे कहा--"घरसे हम दोनों ठीक ही समयपर चले थे।" मेरी आँखें मेरी साथी साहित्यिक मित्र शीलभद्रपर थीं--पर कुछ कलकत्तेकी हवा ही अैसी है कि चायके कपका मोह नहीं छोड़ा जाता, कोअी कह देता है तो पीने बैठ ही जाते हैं।"

अिसपर वह ठहाका मारकर हँस पड़ा। मैं बिलकुल गंभीर हो गया। सोचा कि नअे-नअे परिचितसे अितनी खुलकर बातचीत नहीं करनी चाहिअे, अैसा करनेसे लेखकीय गंभीरताको ठेस लगती है।

अिसके बाद कुछ कालतक कोअी महत्वपूर्ण बात-चीत नहीं हुअी। भोजनके साथ सिर्फ निरुद्देश्य साहित्यिक चर्चाने ही तूल पाया। लेखकोंके दैनिक व्यवहार-बर्ताव, अुनकी व्यक्तिगत जिन्दगीके काले कारनामोंकी छीछालेदर, अुसे क्या आता है, वह अैसा है, यह अैसा है, यही चर्चा प्रमाण सहित।

जब सबका पेट भर गया तो मोहन चौंककर अिस तरह बोला, जैसे अुसे कोअी भूली हुअी बात याद आअी हो--"शेखरजी! जीवनके अिस विकट पथका मुझे बहुत गहरा अनुभव है, अुसके अुतार-चढ़ावसे मैं भली-भाँति परिचित हूँ। अिसके प्रत्येक क्षण-को मैंने खूब सोचा, समझा और देखा है। लेकिन मैं यह कहता हूँ कि मनुष्यको अूपरी टीप-टाप या अैसे कमरे देखकर मोहित नहीं होना चाहिअे।" अुसका संकेत अपने कमरेकी ओर था पर मेरा अन्दाज था कि हम तीन साहित्यकार अेकत्रित हुअे हैं तब कोअी गंभीर विषयोंपर वाद-विवाद होगा। आजकी साहित्यकी ज्वलन्त समस्या मनोविश्लेषणकी अति या व्यक्तिवादी अुपन्यासोंके अभावोंपर गर्मागर्म बहस होगी लेकिन मोहन हमें बोलनेका मौका ही नहीं दे रहा था।

"दर असल जितनी तकलीफ और मानसिक झंझट आजकल मुझे है, शायद ही और किसीको हो।" --अुसने अेक लम्बी आह छोड़ी। अुस अोहके साथ जो प्रस्फुटित हुआ वह बहुत ही निराशामें डूबा हुआ था-- "आज जब मैं अपने विगत साहित्यिक जीवनपर दृष्टि-पात करता हूँ तो हृदय अुस स्मृतिमें फला नहीं समाता है। कितना स्वतंत्र और अुत्साही जीवन था। खूब लिखता था। देखिअे ये हैं मेरी तीन पुस्तकें।"

वह अुठा और तीन पुस्तकें सामनेकी हरी किवाड़ोंकी आलमारीके भीतरसे निकाल लाया। मैं तो अिसलिअे अवाक् था कि क्या अिस व्यक्तिकी भी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं? तभी धम्-सी हल्की आवाज करती तीनों पुस्तकें मेरे सामने आ पड़ीं। मैंने अेक बार अुनपर अविश्वास भरी निगाह डाली। पुस्तकोंपर जमी गर्दिश कह रही थी कि महीनोंके बाद हमारा हमारे स्वामीकी अँगुलियोंसे स्पर्श हुआ है! मोहनकी अँगुलि-योंके निशान भी अुसी पुस्तकपर अंकित हो गअे थे।

मैंने पुस्तकोंके पन्ने पलटते हुअे शान्त व गम्भीर स्वरमें पूछा- "ये पुस्तकें कब प्रकाशित हुअी थीं?"

"लगभग छह सात साल हो गअे हैं। अुस समय मेरी रगोंमें और हृदयमें आप सबकी भाँति साहित्यके प्रति या लिखनेके प्रति असीम मोह और अुत्साह था। अुस समय मेरी पहली पत्नी भी जीवित····।"

"तो क्या यह····।"

"हाँ शेखरजी, मेरी पहली पत्नी आज अिस संसारमें नहीं है। लेकिन आज भी अुसकी याद मेरी हर धड़कनमें बसी है। अुसने तो मेरे जीवनमें स्वर्ग बना दिया था। वह बहुत ही सुशील और प्यारी थी। आज भी अुसकी यादपर दिल भर आता है।" और मोहनने अपनी व्यथित पलकोंको नीचे झुका लिया।

मैंने अुन्हें सान्त्वना दी, "मरेकी स्मृतिके सहारे जीवन गुजारा जाता है। हर प्राणीका महत्व अुसके अभावसे ही मालूम होता है पर किसी स्मृतिमें जीवनके महत्वको घटा देना शायद श्रेयस्कर न हो, क्योंकि जीवन बार-बार नहीं मिलता।"

"आप ठीक कहते हैं। पर, मेरी नअी पत्नीकी जरूरतें मेरी आपके अनुकूल नहीं है। अुसे जिस चीजकी जरूरत हो, अुसी समय अुसके सामने हाजिर की जाअे वरना वह मुझसे अच्छी तरहसे बात भी नहीं करती।

"शेखरजी! यह पब्लिसिटीका धन्धा है, जब पैसा आने लगता है तो कोअी थाह नहीं। अन्यथा अेक पैसा भी नहीं दीखता।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह व्यक्ति अितना दुखी हो सकता है, मुझे कल्पना नहीं थी। क्योंकि मैंने अिसे जब कभी भी देखा, अुस समय अुसके चेहरेपर अहम्की रेखाअें नाचा करती थीं और ओठोंपर मुस्कान थिरका करती थी।

जब मेरे पास पैसा नहीं होता है तो आप जानते हैं कि मेरी बीवी भी मुझसे अुतनी आत्मीयतासे नहीं बोलती जितनी आत्मीयता पसोंकी झंकारके साथ अुसकी आवाजमें पैदा होती थी। अुस समय मुझे कितना दुख होता है? शेखरजी! मेरी पहली बीवीकी लड़कीने तो मेरी जिन्दगी और तबाह कर दी है, मुझे अितना दुखी कर दिया है कि मेरी हर साँस घुटी-घुटी-सी लगती है। कभी-कभी तो मैं अितनी भयानक कल्पना कर लेता हूँ कि अेक दिन मेरा दम घुट जाअेगा और मैं मर जाअूँगा। अुसके बाद मेरे ये नन्हें-नन्हें बच्चे।"

"छिः छिः यह आप क्या कह रहे हैं! अैसी अशुभ बात मुँहसे नहीं निकालनी चाहिअे।"

तभी अुनकी छोटी बच्ची आकर बड़े ही नटखटपनसे अपने मीठे और तेज स्वरमें बोली—"बाबूजी! माँ कहती है कि चाय घरमें नहीं है।"

"नहीं है तो, अपनी माँसे कह दो कि नीचेसे मँगा लो।"

"पर पैसे···।"

मोहनने अपने हाथसे बच्चीका मुँह बन्द कर दिया और हम सबकी परवाह किअे बिना ही वह तीर-सा निकल गया। भीतरसे जो अुनकी दबीदबी कर्कश आवाज आ रही थी, अुससे साफ जाहिर हो रहा था कि वह अपनी बीवीको डाँट रहा है और अुसकी बीवी पाषाण-प्रतिमा न बनकर अींटका जवाब पत्थरसे दे रही है। मेरा हृदय बोझिल-सा हो गया था। साथी शीलभद्रसे कहा—"यहाँ आकर हमने अच्छा नहीं किया। हमें यहाँसे चले चलना चाहिअे, अिसका अूपरी और घरके बाहरका रूप ही महान् है पर परिवार और घर तो अेक नरकसे भी...।"

बीचमें ही शील बोला—"शेखर, यह पब्लिसिटी ऑफिसर है, बहुत कमाता है, काफी रुपया....।"

"चुप, वह आ रहा है।"—हम दोनों बिलकुल चुप हो गअे।

बाहर धूप चमकने लगी थी। अुसकी अेक-दो किरणें कमरेमें नाचने लगी थीं। हवा अेकदम रुक गअी थी अिसलिअे खिड़कीके हरे रंगके पर्दे हिलने बिलकुल बन्द हो गअे थे।

अुसने आते ही अपनी पत्नीकी शिकायत की—"यह औरत कितनी मूर्ख है साहब, टेबलकी दराजमें पैसे पड़े हैं लेकिन आपने खोजनेकी कोशिश नहीं की और कहलवा दिया कि पैसे नहीं हैं। अिसलिअे मैं कहता हूँ कि मेरी पहली पत्नी बहुत अच्छी थी। अुसके लिअे अेक अिशारा काफी था और जब मेहमान आते तब तो वह अुन्हें खूब प्रेमसे खिलाती-पिलाती थी। यह अुसको जैसे शौक-सा था।....हाँ तो मैं क्या कह रहा था?....हाँ! याद आया, अिस नीरस जिन्दगीमें आजकल मुझे कुछ नहीं रुचता। हर चीजसे मुझे विरक्ति-सी हो गअी है। चाहता हूँ, कभी दूर चला जाअूँ?"

"मैं आपके अिस विचारसे जरा भी सहमत नहीं हूँ।" शीलभद्र हल्के स्वरमें गर्जा—"जीवन-संघर्षसे भागना आजके युगका सन्देश नहीं।"

"फिर मैं क्या करूँ?" अुसने यह कहकर अैसी मुद्रा बनाअी कि जैसे वह कोअी गलती कर गया है पर दूसरे ही क्षण अुसके हृदयकी पीड़ा अुसकी आज्ञा लिअे बिना ही चीख पड़ी—"हर माहका खर्च छह सौ रुपअे है, अितने रुपअे लाअूँ कहाँसे? अिन फिल्म कम्पनियोंका कोअी ठीक भरोसा नहीं, अपनी शानकी रक्षा तो मुझे किसी तरह करनी ही पड़ती है। लोग मुझे पब्लिसिटी ऑफिसर समझते हैं; पैसेवाला समझते हैं पर मैं आजकल बहुत तंगीमें हूँ, शेखरजी! मुझे आपकी मदद चाहिअे।" अुसकी आँखें मेरे अूपर जम गअीं।

"आप यह क्या कह रहे हैं? मोहनजी! मैं तो आपके बच्चेकी तरह हूँ, मुझे शर्मिन्दा मत कीजिअे।"—और वास्तवमें मैं शर्मसे गड़ गया। मेरी आँखें नीची हो गअीं। बहुत ही धीमे स्वरमें बोला—"आप मुझे अुपन्यास लिखकर दीजिअे, मैं अुसे छापूँगा। पैसे आपको अेड्वांस दिला दूँगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अब मैं यही काम करूँगा पर मेरा दिमाग आजकल जरा भी काम नहीं करता शेखरजी। परिवारका अितना सारा कोल्हू-सा भारी बोझ और अेक बैल! अिसपर बड़ी लड़की और अुसके पतिका खर्चा,....धंधेकी मन्दी....ओह!"

"अैसा क्यों मोहनजी? क्या आपकी लड़की पति....।"

"शेखरजी! जिसकी माँ देवी थी, जिसके नारीत्वमें ओज था, जिसके चरित्रका हर अध्याय पूनमके चाँदकी तरह अुज्ज्वल और निर्मल था, अुसकी लड़की अेक आवारा बंगालीके प्रेमके चक्करमें पड़कर अुससे ब्याह कर ले, प्रेम विवाह रचा ले, और बाद अुसका पति अपने ससुरका जोंककी तरह खून चूसने लगे तो.....?"

हम दोनों चुपचाप अुसकी आँखोंकी चहकती हुअी अंगारोंसी चमकको देख रहे थे।

"अुसने मेरा खून चूस लिया, मुझे खोखला बना दिया। मेरी लड़की अुसके प्रेममें पागल है और वह निकम्मा दिन भर गधेकी तरह खाता है और पड़ा रहता है। अभी भी भीतर ही होगा।"

"तो आप अुसे घरसे बाहर....।"

"यही तो मैं नहीं कर सकता। मैं बाप हूँ, मैंने अपनी बेटीकी जिन्दगीके लिअे अुसके मनपसन्द साथीसे अुसका ब्याह कराया। लेखक और भावुक हूँ अिसलिअे बेटीके आँसू और अुसकी तकलीफोंकी जिन्दगीकी कल्पना करके सिहर जाता हूँ। अुसकी भूल मुझसे नअी भूल करा दे फिर अुसमें और मुझमें अन्तर ही क्या रहा? मैं जानता हूँ कि अुसको अपनेसे अलग करनेका यही नतीजा हो सकता है कि या तो वह आवारा मेरी बेटीकी चमड़ी-पर अपने जुल्मके दाग बना दे अथवा वह अुसके अत्या-चारसे डरकर आत्महत्या कर ले।....वह बड़ा निर्दयी है, हृदयहीन है तभी तो मैं चुप हूँ। आप अिसे दुर्बलता कहेंगे, मैं अिसे स्वीकार करूँगा लेकिन आखिर मैं करूँ क्या? शेखरजी! आप मुझे रास्ता बताअिअे, अपना साहित्यिक-प्रतिनिधि बनाअिअे ताकि लोग याद रखें कि यह शेखरजीकी देन है।"

वह कुछ देरतक मौन रहा। अुसकी आँखोंमें पीड़ा आँसू बनकर छलकना चाहती थी। वह फिर बोला—"मैं बहुत दुखी हूँ, अपने आप असन्तुष्ट हूँ। अपनी अिस स्थितिका हर क्षण मुझे पीड़ाजनक महसूस होता है। जिस कार्यको मैं कर रहा हूँ, अुससे मेरी तबीयत मितला रही है। अिन वेश्याओंके चित्रोंको देखते-देखते मेरे हृदयकी भावना भी अब अिनसे समझौता करने लगी है। अैसा महसूस होता है शेखरजी! जैसे मेरा साहित्यकार मर रहा है पर आप अुसे मत मरने दीजिअे, मत मरने दीजिअे।"

"मेरा सारा प्रयास अुसे जिन्दा रखनेमें लगेगा। मैं आपकी पुस्तकें छापूँगा, बस आप तुरन्त लिखकर दीजिअे।" मैंने अुससे प्रतिज्ञा-सी की।

अुसने सान्त्वनाकी आह छोड़कर धीरे किन्तु अेहसान भरे स्वरमें कहा—"आज मुझे अैसा महसूस हो रहा है जैसे मुझे नया जीवन मिल गया है। मेरी आत्मा बहुत ही प्रसन्न है। शेखरजी! आजकल मैं बहुत ही विपत्तिमें हूँ। पैसोंकी अितनी तंगी है कि कभी-कभी चायतकका पैसा नहीं होता है।"

जीवनका कठोर सत्य अुससे अपनी सत्य परिस्थितिका बयान कर रहा था। वह खुद क्या कह रहा है अिससे वह बिलकुल अनजान था।

"आप मुझसे अुम्रमें बहुत छोटे हैं, मेरे बच्चेकी तरह हैं पर आपका यह आश्वासन मेरे भविष्यमें अेक-सूत्रता लाअेगा, निश्चितता लाअेगा।...मैं अैसा अुपन्यास आपको लिखकर दूँगा जिसमें मानवता भी हर पुकारपर मनुष्यकी प्रत्येक भावना विसर्जन होती होगी। अेक मनुष्य और अेक धर्मका नारा होगा। बस मुझे आपका सहारा चाहिअे, आजकल मैं बहुत तंगीमें हूँ, परेशान हूँ।"

"आप विश्वास रखें।"—हम दोनों अुठ खड़े हुअे। दरवाजेके बाहर निकलते-निकलते मुझे अुसने फिर याद दिलाया—"आप मेरी बातको नहीं भूलेंगे।.... आपमें महान् प्रतिभा है। होनहार हैं। मुझे कष्टके लिअे क्षमा कीजिअे, फिर आनका कष्ट कीजिअेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं बस अब आपका ही काम शुरू करूँगा।" और अुसने मुझे छातीसे चिपका लिया। अुसकी हर धड़कन-की आवाजमें मैं सुन रहा था—अेक आलीशान कमरेमें रहनेवाले सफेद बाबूकी वास्तविक स्थितिकी कम्पन।

मैंने सीढ़ियोंमें ही शीलभद्रसे कहा—"यह मोहनजी नहीं बोल रहे हैं, यह अिनकी आजकी तंगी बोल रही है।"

अिसके बाद वे जब कभी भी मुझसे मिलते थे त्योंही विचित्र हँसी हँसकर कहते थे—"बस आपका ही काम कर रहा हूँ।"

अेक माह बीत गया।

मैंने अिस माहमें यह अनुभव किया कि मोहनके मनमें वह अुमंग और अुत्साह नहीं है जो अुस दिन था। वह अपनापन नहीं है जिसका अेहसास मैंने अुस दिन अुसकी छातीसे लगकर महसूस किया था। और अेक दिन मुझे पता चला कि आजकल अुसका पब्लिसिटीका धंधा खूब जोरोंपर है तो मुझे अिन सभी बातोंके कारणोंका पता लग गया।

मेरे मनमें चोट-सी लगी—वह आदमी तो मर गया जो मुझसे अेक दिन अपने घरमें मिला था। जिसकी आवाजमें अेक भूखे, अेक तंग आदमीका असन्तोष था। जिसके शब्द-शब्दमें आग, जोश और अिन्कलाब था। पर, यह तो अब मुझसे आँखें चुराता है, जैसे मैं अुसके जीवनके सुखद क्षणोंका हिस्सा बँटा लूँगा। वह मुझसे झूठी हँसी हँसता, जबरदस्ती प्रेम करता है, मुझसे दूर भागता है, जैसे अेक चोर अब अिसके दिलमें बैठकर अिसको सही रास्तेसे भटका रहा है।

कबीरका मरण !

कर ले सिंगार चतुर अलबेली,
साजनके घर जाना होगा ॥
मिट्टी ओढ़ावन मिट्टी बिछावन,
मिट्टीमें मिल जाना होगा ॥
नहा ले धो ले, सीस गुँथा ले,
फिर वहाँसे नहीं आना होगा ॥
कर ले सिंगार.....

यह गीत कितना सुन्दर है! कितना पवित्र है! अिसके भाव कितने सुन्दर हैं! मरणका मतलब है, संसारसे वियोग लेकिन परमात्मासे मिलन; आत्मा और परमात्माका मिलन ही मृत्यु है। जब मनुष्य मर जाता है तब हम अुसको नअे कपड़े पहनाते हैं। अुसे स्नान कराते हैं। अुसे सजाते हैं। मानों वह विवाह जैसा मंगल-कार्य हो। मरण मानो विवाह मंगल, साजनके घर जाना!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कृत-साहित्यकी सार्वभौम भूमिका

—श्रीमती सावित्री देवी

भारतीय वाङ्मय-मानस-सरकी पीयूषधारा संस्कृत साहित्य है जिसकी शतशः लहरियाँ शास्त्रों और ग्रन्थोंके रूपमें अुछल-अुछलकर भारत-वसुन्धराको हजारों वर्षोंसे सींचती आ रही हैं।

औपनिषद ऋषियोंसे लेकर व्यास, वाल्मीकि, पाणिनि, कात्यायन, कौटिल्य, पतंजलि, भास, कालिदास, भवभूति, दंडी, वाण, श्रीहर्ष, राजशेखर आदि अनेक प्रकांड आचार्योंकी वाग्देवताने अिसका मूर्द्धाभिषेक कर अिसे विश्व-वाङ्मयके सर्वोच्च सिंहासनपर आसीन किया है। संस्कृत साहित्य अखण्ड और प्राचीनतम है। आधुनिक युगमें अँग्रेजी भाषा और अिसका साहित्य विश्व-साहित्य शिरोमणि माना जाता है। परन्तु यह भी हमारी संस्कृत भाषाका सगा कुटुम्बी है। अधिकांश नहीं, ९० प्रति सैकड़ा शब्द संस्कृत शब्दोंके अपभ्रंश हैं—देवतावाचक डी टी, डिवाअिन शब्द दिव धातुसे सिद्ध होते हैं। अँग्रेजीमें लड़कीको डाटर और फारसीमें दुख्तर कहते हैं—ये शब्द दुहित्-दुहिताके अपभ्रंश अथवा तद्भव हैं। देवर शब्द संस्कृत है, रूसी भाषामें अिसका अुच्चारण ज्योंका-त्यों देवर ही किया जाता है। अिसी प्रकार समस्त भाषाओंके शब्द संस्कृतजन्य या अपभ्रंश हैं।

जब हम विश्वकी समुन्नत भाषाओंके अितिहासोंको पढ़ते हैं तो हमें संस्कृतके अतिरिक्त किसी भी भाषाका साहित्य अैसा नहीं मिलता जो श्रृंखलाबद्ध हो। सुप्रसिद्ध भाषा अँग्रेजीका साहित्य अुसके आदि कवि चासरसे लेकर आज तक रत्तीभर विश्रृंखल नहीं हुआ। अिसीसे टेन नामक फ्रेंच लेखक अँग्रेजी साहित्यपर मुग्ध हो गया था। केवल साढ़े पाँच सौ से भी न्यून वर्षोंकी न टूटनेवाली श्रृंखलापर टेनको अितना आश्चर्य हुआ कि जिसका ठिकाना न था। यदि अुसे अीसासे हजारों वर्ष पूर्वसे श्रृंखलाबद्ध चले आते हुअे हमारे संस्कृत साहित्यका ज्ञान हो जाता तो निश्चय वह भावुक विद्वान पागल बन जाता। जर्मनीकी कील युनिवर्सिटीके प्रोफेसर मैक्समूलरका कहना है कि लगभग ७०० वर्षों तक संस्कृत साहित्य विश्रृंखल दिखाअी पड़ता है। यह समय बौद्धधर्मके अुदयकालसे गुप्त राजाओंके अुदयकाल तक माना जाता है। परन्तु यह अुनका कोरा भ्रम है। सम्भवतः भाषा (प्राकृत) सम्बन्धी परिवर्तनोंके कारण ही अुन्होंने संस्कृत साहित्यको विश्रृंखल मान लिया है। महाभाष्य और चाणक्यका कौटिल्य-शास्त्र आदिकी रचनाअें अिसीके अन्तर्गत हुअी हैं। भासके नाटकोंके अवतरण चाणक्यके कौटिल्य-शास्त्रमें स्थान-स्थानपर पाअे जाते हैं। अिससे सिद्ध होता है कि कौटिल्य अर्थशास्त्रके पूर्व भासने अपने ग्रन्थोंकी रचना की थी। कोहल, शाण्डिल्य आदिने नाट्यशास्त्रपर आकर ग्रन्थ लिखे हैं। अश्वघोष, नागार्जुन, आर्यदेव आदिने अीसाकी पहली शताब्दीसे लेकर तीसरी शताब्दी तक लगातार ग्रन्थ रचना की है। फिर भला विश्रृंखलता कहाँ? यह मैक्समूलरका भ्रम ही नहीं, अनभिज्ञता है अुनकी। धार्मिक, सामाजिक, नैतिक अनेक क्रान्तियोंके होते हुअे भी संस्कृत साहित्य अविच्छिन्न रूपसे प्रवहित होता रहा। अिसकी गति, अिसकी श्रृंखला कभी भंग नहीं हुअी। यदि अुत्तरी भारतमें क्रान्तियाँ हुअीं तो संस्कृत साहित्यका निर्माण दक्षिणी भारत अथवा देशमें हुआ। तात्पर्य यह है कि भारतभूमिके किसी-न-किसी कोनेपर अिसका सृजन होता रहा।

१४ वीं शताब्दी भारतवर्षके लिअे प्रलय कही जाअे तो अत्युक्ति नहीं, मुगलों और तुर्कोंके आक्रमण और निर्दयतापूर्ण अधार्मिक शासनसे जाति और धर्म बचाना मुश्किल हो रहा था। फिर भी अिस संकट-कालमें कर्नाटकमें माध्वाचार्य, मिथिलामें चण्डेश्वर आदि कितने ही विद्वान् संस्कृत साहित्य सृजन करते रहे। हमें अपने संस्कृत साहित्यकी प्राचीनता और अखण्डताका पूर्ण गर्व है। संस्कृत साहित्य हमें अपना पुराना अितिहास परिवर्तन विवर्तन आदि बतलाता है। वह केवल विस्तृत ही नहीं, बल्कि परिपुष्ट भी है। अिसके अन्तर्गत अनेक अुपयोगी विषय और शास्त्र भरे पड़े हैं। महर्षि सनत्कुमारके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूछनेपर देवर्षि नारदने कहा था कि मैंने ये विद्याअें पढ़ी ह—"सहोवाचऋग्वेदं सामवेद माथर्वणं चतुर्थमितिहास पुराणं पंचमं वेदानां वेदं पित्र्यं राशिदैवं निधिं वाको वाक्य मेकायनं देवविद्यां ब्रह्मविद्यां भूतिविद्यां क्षत्र विद्यां नक्षत्र विद्यां सर्प देव याजन विद्यामेतद्भगवो ध्येमि"--छान्दोग्योपनिषद् । अिन विद्याओंकी व्याख्या भारतवर्षके अितिहासमें अिस प्रकार की गअी है—अितिहास पुराण (हिस्ट्री) वेदानां वेदं (का करण निरुक्तादि । पित्र्यम् (पितरोंको प्रसन्न रखनेकी विद्या) राशि (गणित विद्या) दैवम् (भूकम्प, जल प्लावन, विद्युत्कोप, वायुकोप) निधिम् (खनिज पदार्थ) वाक्यो वाक्यम् (तर्कशास्त्र) अेकायनम् (नीति विद्या) देव-विद्याम् (सम्पूर्ण तत्व विद्या, रसायन शिल्पादि सभी विद्याअें) ब्रह्मविद्यां (ब्रहनिरूपण) भूत विद्याम् (प्राणि-शास्त्र) क्षत्रविद्याम् (राज्यशास्त्र, धनुर्विद्या) नक्षत्र विद्याम् (ज्योतिष) सर्पदेवयाजन विद्याम् (सर्पके विष आदि अुतारनेकी विद्या और देवता मनुष्यको वशमें करनेकी विद्याअें मैंने पढ़ी हैं ।

यदि हम पाली, मागधी, शूरसेनी आदि प्रान्तीय भाषाओंको छोड़ भी दें तो संस्कृत साहित्यका अंग भंग नहीं होगा । लैटिन और ग्रीक अिन दोनों भाषाओंका साहित्य मिलकर भी संस्कृत साहित्यकी बराबरी नहीं कर सकता । संस्कृत साहित्यके पचासों सहस्र हस्तलिखित ग्रन्थ भी अुपलब्ध हैं; अितना ही नहीं, भारतके बाहर अेशियाके गोवी नामक रेगिस्तानमें भी गड़ी हुअी संस्कृत पुस्तकें प्राप्त हुअी हैं । चीन, तावान, कोरिया, तिब्बत और मंगोलियामें भी संस्कृत ग्रन्थ मिलते हैं । संस्कृत साहित्यमें अनेक अमूल्य रत्न भरे पड़े हैं ।

वेद

विश्व साहित्य भूषण वेद संस्कृत साहित्यके प्रधान रत्न हैं--संसारमें अिन्हींके ज्ञान दीपकका प्रकाश हो रहा है । अिंजील और कुरान आदिसे हजारों वर्ष पूर्व वेद-ज्योतिसे भारत भूमि जागी थी । परमात्माने अिन्हें सृष्टिके आरम्भमें हमें दिया था । जिनका वास्तविक मर्म आजतक किसीको ज्ञात न हो सका । भारतीय संस्कृत और धर्मके मूल स्तम्भ चारों वेद चारों सुखके सार हैं । चारों दिशाओंमें अिन्हींकी विजय वजन्ती फहरा रही है । विज्ञानके भण्डार वेद आचारके आधार और पुण्यके पारावार हैं ।

अुपनिषद्

अुपनिषद् विद्या हमारे हृदयकी अमूल्य सम्पत्ति है । अिससे अुभय लोककी संसिद्धि प्राप्त होती है । जर्मन तत्ववेत्ता स्कोपनहारने लिखा था—कि "अुपनिषदोंके प्रत्येक पदसे गम्भीर और नवीन विचार अुत्पन्न होते हैं और सभीमें अुत्कृष्ट, पवित्र, और सच्चे भाव विद्यमान हैं ।

समस्त संसारमें अिनसे अतिरिक्त और कोअी अैसी विद्या नहीं है जो लाभदायक और हृदयको अुच्च बनावे । अिसने मेरे जीवनको पूर्ण शान्ति प्रदान की है ।"

सूत्रग्रन्थ

हमारे पूर्वज ऋषियोंने अिन सूत्र ग्रन्थोंको लिखकर गागरमें सागर भर दिया है । अल्प शब्दोंमें ये सम्पूर्ण शिक्षा तत्वोंसे भरे पड़े हैं ।

दर्शन

अिन दिव्य दर्शनोंके कारण यूनान, यूरुप, अरब आदि सुशिक्षित देश हमारे सदैव ऋणी रहेंगे । गौतम, कपिल, कणाद, पतंजलि, जैमिन आदि भारतीय दार्शनिकोंसे ही समस्त संसारने दार्शनिक सन्देश पाया है । प्रसिद्ध विदेशीय विद्वान् मानिपर विलियन्स स्वयं स्वीकार करता है कि—"यूरुपके प्रथम दार्शनिक प्लेटो और पैथागोरस दोनों ही दर्शनशास्त्रके लिअे भारतवासी हिन्दुओंके निकट सब तरहसे ऋणी हैं ।" लैथब्रिज साहबने अपने अितिहासमें हिन्दुओंके विषयमें लिखते हुअे बहुत ही दुराग्रह और पक्षपात किया है किन्तु फिर भी अुसे मानना ही पड़ा है कि दर्शन शास्त्रके आदि गुरु भारतीय आर्य ही हैं ।

हमारी तथा हमारे साहित्यकी अुच्चताके अुदाहरण हमारे दर्शन शास्त्र ही हैं--अिसे हम ही नहीं; बल्कि सारा संसार भुजाअें अुठाकर चिल्ला-चिल्लाकर स्वीकार कर रहा है । हिन्दू सुपीरियरटीमें प्रोफेसर मैक्समूलरने लखा है कि "जो राजा अुन्नतिके अुच्च शिखरपर होता है और अुसमें किसी प्रकारकी क्रान्ति या आक्रमणकी आशंका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं रहती, जिस राष्ट्रके लोग धन-सम्पत्तिकी वृद्धिके साथ अनेक विद्यामन्दिर स्थापित करके बिना किसी विघ्न बाधाके विद्याकी आलोचनामें मन लगा सकते हैं, अुसी समय समुन्नत राष्ट्रमें दर्शनशास्त्रका आविर्भाव होता है।"

धर्म-शास्त्र

यदि मनु और याज्ञवल्क्य आदि ऋषि स्मृतियाँ न बनाते तो आज ताजीरात हिन्दका कोअी दूसरा ही रूप होता। सभी स्मृतियाँ-विधि निषेधके विधान और अुभयलोककी शान्तिके सोपान हैं। हिन्दुओंके देवताओंकी वंशावलीके लेखक कौण्टजार्न्स जेनोने लिखा है कि "कानूनका ज्ञान भी यूरुपवालोंको पहले भारतवासियोंके द्वारा ही प्राप्त हुआ है। हिन्दुओंकी सभ्यता क्रमशः पश्चिमकी ओर अिथोपिया अीजिप्ट और फोनोशियातक पूर्वमें स्याम, चीन और जापानतक दक्षिणमें जावा, सुमात्रा और लंकातक अुत्तर पश्चिममें चाल्डिया और कोल्विस और वहाँसे यूनान रोम हियरवोरियंन्सके रहनेके स्थानतक पहुँची।"

नीति

हम लोगोंको नीति विद्यापर अितना गर्व था कि जिस दिशा और जिस पथपर चलें, वही सर्वथा सत्पथ था – अुदयनाचार्यने कहा है कि––

वयमिहविद्यांतर्कमन्वीक्षिकीं वा,
यदिपथि विपथोवा वर्तयामः सपन्थाः
अुदयतिदिशियस्यांभानुमानसैवपूर्वा,
नहितरणिरूदीनेदिक्पराधीनवृत्तिः

चाणक्य अैसे धुरन्धर राजनीतिज्ञ हमारे यहाँ हो गअे हैं जिनका कौटिल्य अर्थशास्त्र संसारके साहित्यमें बेजोड़ है। विष्णु शर्माने पंचतन्त्र लिखकर सचमुच घड़ेमें सिन्धुको भर दिया है। कहानियों द्वारा जड़ोंको भी पूर्ण पण्डित बना दिया। पंचतंत्रके विषयमें प्रसिद्ध अितिहासकार आर० सी० दत्त साहबका कथन है कि "अिस ग्रन्थका अनुवाद नौशेरखांके राज्यमें (५३१–५७२) फारसीमें किया गया था। फारसी अनुवादका अुल्था अरबी भाषामें हुआ और अरबीसे समीअनसेठने सन् १०८० के लगभग अिसका अनुवाद यूनानी भाषामें किया। फिर यूनानीसे अिसका अनुवाद लैटिन भाषामें प्रेसिनसने किया, और अिसका हिब्रू भाषामें अनुवाद रेवोजेलने सन् १२५० में किया, अरबी अनुवादका अेक अुल्था सन् १२५१ में स्पेन भाषामें हुआ। जर्मन भाषामें पहला अनुवाद १५ वीं शताब्दीमें हुआ। तबसे अिस ग्रन्थ रत्नका अनुवाद यूरुपकी सभी भाषाओंमें हो गया। और यह पिलपे या विड़पेकी कहानियोंके नामसे प्रसिद्ध हो गया।

ज्योतिष

खगोल विद्याका ज्ञान सर्वप्रथम भारतीयोंने ही प्राप्त किया था। क्रान्ति मण्डलका ज्ञान अुन्हींसे अन्य देशोंके विद्वानोंने सीखा था। प्रोफेसर बेवर और कोलबुक साहबने केवल माना ही नहीं बल्कि सिद्ध किया है कि चीन और अरबकी ज्योतिष विद्याका विकास भारतवर्षसे ही हुआ है। प्रसिद्ध विद्वान अेलबरूनीने लिखा है कि–– ज्योतिष शास्त्रमें हिन्दूलोग सबसे बढ़कर हैं। मैंने अनेक भाषाओंके अंकोंके नामोंको सीखा है किन्तु हजारसे अधिक संख्याका नाम किसीमें भी नहीं पाया। परन्तु हिन्दुओंमें अठारह अंकोंकी संख्या होती है, जिसे वे परार्द्ध कहते हैं।

रेखागणित

रेखागणितके ज्ञाता ही नहीं हम लोग आदि विधाता हैं। सुल्व सूत्रोंके जन्मदाता भारतीय ही हैं। हमारी यज्ञवेदियोंकी रचनामें रेखागणितके कौशलको आज भी बतला रही हैं। मानियर विलियन्सने लिखा है कि रेखागणित तथा बीजगणितका आविष्कार ज्योतिषके साथ ही साथ सर्वप्रथम हिन्दुओंने ही किया है। डाक्टर थीबो लिखता है कि संसार रेखागणितके लिअे भारतका ऋणी है––यूनानका नहीं।

अंकगणित

हिन्दुओंके देदीप्यमान ज्ञानकी अेक लघु किरण अंकगणित है जिसके विषयमें विपक्षियोंके मुँहमें ताला बन्द हो जाता है। हमीं लोगोंसे सर्वप्रथम अरबवालोंने अिस विद्याको भी सीखा था, जिसे वे आज भी "अिल्मे हिन्द सा" कहते हैं। खेद है प्राचीन यूनानी और रोमन लोग अिस अंकगणितको न सीख सके अिसलिअे अिस विद्यामें वे आजतक पिछड़े हुअे हैं।

सामुद्रिक विद्या

शरीरकी रेखाओं और बनावटोंको देखकर ही भूत, भविष्य और वर्तमानका फल बतला देनेवाली सामुद्रिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(हस्तरेखा) विद्याका आविष्कार हमीं लोगोंने किया है। यह फलित ज्योतिष विज्ञानसे सिद्ध है। अिसकी सत्यता मद्रासके वी० सूर्यनारायणराव वी० अे० ने सरस्वतीके बारहवें भागकी बारहवीं संख्यामें प्रमाणित की है।

आयुर्वेद

आयुर्वेदकी अुन्नति और अुसके ज्ञानके प्रमाण चरक और सुश्रुत विद्यमान हैं। लगभग ३२ वर्ष पूर्व अेक बंगालीको चरकका अँग्रेजीमें अनुवाद करनेपर सरकारने ६ हजार रुपया पुरस्कार दिया था। बड़े-बड़े डॉक्टर जिस रोगीको असाध्य बताकर अच्छा करनेसे अिनकार करते हैं अुसे ही हमारे वैद्य मामूली वनौषधि तथा योग द्वारा स्वस्थ कर देते हैं। प्राचीनकालमें दूर-दूर देशोंके राजा लोग सम्मानपूर्वक भारतीय वैद्योंको बुलाया करते थे। अितिहास अिसके आज भी साक्षी हैं। मौलाना हालीने लिखा है कि 'अिल्म तिब्ब (वैद्यक) के निहायत कदीम मुसन्निफ, जिनकी तसानीफ अबतक मौजूद है चरक और सुश्रुत हैं।" अुनकी किताबोंका तर्जुमा अरबी जबानमें हुआ और जिन गालिब है कि अरबवाले अुनका तर्जुमा होते ही तहसील अुलूमकी तरफ मुजवज्जह हुअे। अरबी जबानके मुसन्निफ अेलानिया अिकरार करते हैं कि हमने हिन्दोस्तानके तबीबोंसे बेशक फायदा अुठाया है। अिब्तिदामें अहल यूरोपने अिस अिल्मकी तालीम अुन्हीं (हिन्दुओं) से पाअी और जमाना हालमें भी कोंतकी फलीसे कीड़ोंका अिलाज करना अुन्हींसे सीखा है। प्रसिद्ध अितिहासकार आर० सी० दत्तने लिखा है कि "जब आजकल भारतवर्षके प्रत्येक भागसे स्वास्थ्य और चिकित्साके लिअे विदेशियोंकी विद्या और निपुणताकी आवश्यकता होती है तब २२०० वर्ष पूर्व सिकन्दरने अपने यहाँ अुन लोगोंकी चिकित्साके लिअे हिन्दू वैद्योंको रखा था। जिनकी चिकित्सा यूनानी वैद्य नहीं कर सकते थे और ११०० वर्ष हुअे कि बगदादके हारूँ रशीदने अपने यहाँ दो हिन्दू वैद्य रखे थे जो अरबी ग्रन्थोंमें मनका और सलहके नामसे विख्यात हैं। डॉक्टर हंटरने लिखा है कि आठवीं शताब्दीमें संस्कृतसे जो पुस्तकें अनुवादित हुअीं अुन्हींपर अरबके वैद्यककी नींव पड़ी और सत्रहवीं शताब्दीतक यूरोपके वैद्य अरबवालों (वास्तवमें हिन्दुओंके) के नियमोंपर चलते थे। आठवीं शताब्दीसे पन्द्रहवीं शताब्दीतक वैद्यककी जो पुस्तकें योरोपमें बनती रहीं अुनमें चरकके वाक्योंके प्रमाण दिअे गअे हैं।"

आरनेवुल अलफेन्सटन साहबने भी लिखा है कि शास्त्र चिकित्सामें जो सफलता हिन्दुओंने प्राप्त की थी वह अुसी प्रकार आश्चर्यजनक है, जिस प्रकार रसायन शास्त्रकी अुन्नतिमें अुनकी सफलता।

व्याकरण

हमारी संस्कृत भाषा केवल पुरानी ही नहीं है; बल्कि प्रौढ़ व्याकरणसे भी सुसज्जित है। यह व्युत्पत्ति रूपी प्राणसे अनुप्राणित है। अन्य भाषाओंके शब्द अिसके सामने मृतकके समान हैं। संसारकी प्रचलित भाषाओंमें कोअी अितनी पूर्ण नहीं है जितनी कि संस्कृत। अितने शब्दोंके धातुओंका पता साफ-साफ रीतिसे किसी भी भाषामें नहीं मिलता जितना कि संस्कृतमें।

डब्ल्यू० सी० टेलर साहबकी राय है कि संस्कृतकी समता संसारकी कोअी भाषा नहीं कर सकती। योरोपकी तमाम भाषाअें जिनको हम "क्लासिकल" कहते हैं— अिसीसे निकली हैं।

संसारमें केवल हिन्दुओं और यूनानियोंने ही व्याकरणमें अुन्नति की है, किन्तु हमारे प्रकाण्ड वैयाकरणी पाणिनिके सामने यूनानी तुच्छ हैं।

अिस संक्षिप्त विवेचनसे स्पष्ट हो जाता है कि हमारा संस्कृत साहित्य अक्षुण्ण है, अटल है, परिपूर्ण है और परिपुष्ट है।

अिस समय अिसे लोकमतकी अपेक्षा है। अखिल हिन्दू-समाजका अेक स्वर, अेक सम्मति जब संस्कृतके पक्षमें होगी तो अिसे विकास या परिवर्द्धनकी शक्ति अुपलब्ध होगी। सामयिक वातावरण और देशकालके अनुसार जब अिसका चलन हो जाअेगा तो आशा है, विश्वास है कि संस्कृत साहित्य पुनः सार्वजनीन साहित्य हो जाअेगा। विलम्ब है केवल अिस दिशामें होनेवाली क्रान्तिका।

पण्डित-समाज, विद्यार्थी-समाजका प्रथम कर्तव्य होगा कि वह अिसे सार्वजनीन बनानेमें अुपेक्षा और प्रमादका परित्याग करे। हमें अपने स्वार्थोंकी बलि चढ़ानी होगी। अपवाद-प्रतिवादोंके तूफानोंको सहना पड़ेगा। विपक्षियोंको रास्तेपर लानेका अुद्योग करना पड़ेगा।

अुत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अैतिहासिक रस : अितिहास रसका अुपन्यास

—प्रो. राजेश्वर गुरु

आचार्य चतुरसेन शास्त्री हिन्दीके माने हुअे साहित्यकार हैं, और अुन्होंने अपने लम्बे साहित्यिक जीवनमें अनेकानेक अैतिहासिक कहानियाँ और अुपन्यास लिखे हैं। अभी-अभी दिल्लीमें अपने सम्मानमें आयोजित अेक जलसेमें अुन्होंने अैतिहासिक अुपन्यासोंपर विस्तारसे चर्चा की है। अिस चर्चाके प्रसंगमें अुन्होंने सुझाया है कि हमें 'अैतिहासिक अुपन्यास' शब्दका प्रयोग नहीं करना चाहिअे, अिसके बदलेमें 'अितिहास रसका अुपन्यास' कहना चाहिअे। आचार्यका सुझाव विचारणीय है।

लेकिन क्या "अितिहास रस" या "अैतिहासिक रस" संभव है? भरत मुनि द्वारा दी गअी रस-तालिकामें अिस रसके बारेमें कुछ भी नहीं लिखा है। रस सम्प्रदायियोंने अिस रसका अस्तित्व कहीं स्वीकार नहीं किया है। फिर अिस प्रकारकी शास्त्र-असिद्ध धारणाको किस प्रकार प्रश्रय दिया जाअे। ये और अैसे ही प्रश्न कभी-कभी दिलो-दिमागमें पैदा हो जाते हैं, जिनका समुचित अुत्तर अपेक्षित है।

अूपर-अूपरसे अैसे तर्क अुचित भी जान पड़ते हैं। अिस प्रकारके प्रश्नोंका औचित्य वैसा ही है, जैसा गाँधीजीके हरिजन प्रेमके विरुद्ध शास्त्रोंमेंसे व्यवस्था देनेवाले पोंगा-पंडितोंका। लेकिन अिस प्रकारका तर्क देनेकी बजाय अधिक अच्छा होगा, यदि हम अितिहास रस या अैतिहासिक रसकी वैज्ञानिक व्याख्या कर सकें। "विभावानुभावसंचारिसंयोगाद्रसनिष्पतिः" कहनेवाले भरत मुनिने रसके आवश्यक तत्वोंमें भावकी सम्पूर्ण अुपलब्धिके लिअे अनुभाव, संचारी भाव और विभाव का अुल्लेख किया है। अिन्हींके "संयोग" से रस-निष्पत्ति होती है। अिन तत्वोंमेंसे विभाव तत्व ही रसका मूलाधार ठहरता है। विभावके अन्तर्गत आलम्बन और अुद्दीपन दोनों आते हैं। आलम्बनके माध्यमसे भाव अिस रूपमें जागरित होते हैं कि रस कोटिमें आ सकें। आलम्बनोंके तीन प्रकार आचार्योंने बताअे हैं। प्रत्यक्ष रूप-विधान, स्मृत रूप-विधान और सम्भावित या कल्पित रूप-विधान।

स्मृति रूप-विधान या तो अपने शुद्ध रूपमें देखा जाता है या स्मृत्याभास कल्पनाके रूपमें। स्मृत्याभास कल्पनाके सम्बन्धमें आचार्य रामचन्द्र शुक्लने लिखा है:—

> अिस प्रकारकी स्मृति या प्रत्यभिज्ञानमें पहले देखी हुअी वस्तुओं या बातोंके स्थानपर या तो पहले सुनी या पढ़ी हुअी बातें हुआ करती हैं अथवा अनुमान द्वारा पूर्णतया निश्चित। बुद्धि और वाणीके प्रसार द्वारा मनुष्यका ज्ञान प्रत्यक्ष बोधतक ही परिमित नहीं रहता, वर्तमानके आगे-पीछे भी जाता है। आगे आनेवाली बातोंसे यहाँ प्रयोजन नहीं, प्रयोजन है अतीतसे। अतीतकी कल्पना भावुकोंमें स्मृतिकी-सी सजीवता प्राप्त करती है। और कभी-कभी अतीतका कोअी बचा हुआ चिह्न पाकर प्रत्यभिज्ञानका-सा रूप ग्रहण करती है। अैसी कल्पनाके विशेष मार्मिक प्रभावका कारण यह है कि यह सत्यका आधार लेकर खड़ी होती है। अिसका आधार या तो आप्त शब्द होता है अथवा शुद्ध अनुमान।"
>
> आचार्य रामचन्द्र शुक्ल यह मानकर चलते हैं कि स्मृत्याभास कल्पना, जिसका आधार आप्त शब्द होता है, विशेष मार्मिक प्रभाव सम्पन्न होती है।

आप्त शब्द या अितिहासका आधार लेकर स्वरूप ग्रहण करनेवाली स्मृत्याभास कल्पनाका विशद विवेचन आचार्य रामचद्र शुक्लने अपनी रस-मीमांसा पुस्तकमें किया है। अिस पुस्तकके स्मृत रूप-विधान परिच्छेदमेंसे कुछ अंश अुद्धृत किया जाता है:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे अपने व्यक्तिगत अतीत जीवनकी मधुर स्मृति मनुष्यमें होती है वैसे ही समष्टि रूपमें अतीत नर-जीवनकी भी अेक प्रकारकी स्मृत्याभास कल्पना होती है जो अितिहासके संकेतपर जगती है। अिसकी मार्मिकता भी निजके अतीत जीवन की मार्मिकताके ही समान होती है। मानव जीवनकी चिरकालसे चली आती हुअी अखंड परम्पराके साथ तादात्म्यकी यह भावना आत्माके शुद्ध स्वरूपकी नित्यता, अखंडता और व्यापकताका आभास देती है।

आगे अपनी बातको स्पष्ट करते हुअे आचार्य शुक्ल कहते हैं :—

> मानव जीवनका नित्य और प्रकृत स्वरूप देखनेके लिअे दृष्टि जैसी शुद्ध होनी चाहिअे वैसी अतीतके क्षेत्रके बीच ही होती है। वर्तमानमें तो वह हमारे व्यक्तिगत राग-द्वेषसे अैसी बँधी रहती है कि हम बहुत-सी बातोंको देखकर भी नहीं देखते। प्रसिद्ध प्राचीन नगरों और गढ़ोंके खंडहर, राजप्रासाद आदि जिस प्रकार सम्राटोंके अैश्वर्य, विभूति, प्रताप, आमोद-प्रमोद और भोग-विलासके स्मारक हैं, अुसी प्रकार अुनके अवसाद, विषाद, नैराश्य और घोर पतनके। मनुष्यके अैश्वर्य, विभूति, सुख, सौन्दर्यकी वासना अभिव्यक्त होकर जगतके किसी छोटे या बड़े खंडको अपने रंगमें रंगकर मानुषी सजीवता प्रदान करती है। धीरे-धीरे काल अुस वासनाके आश्रय मनुष्योंको हटाकर किनारे कर देता है। धीरे-धीरे अुनका चढ़ाया हुआ अैश्वर्य-विभूतिका वह रंग भी मिटता जाता है। जो कुछ शेष रह जाता है वह बहुत दिनोंतक ओंट-पत्थरकी भाषामें अेक पुरानी कहानी कहता रहता है। संसारका पथिक मनुष्य अुसे अपनी कहानी समझकर सुनता है, क्योंकि अुसके भीतर झलकता है जीवनका नित्य और प्रकृत स्वरूप।

अिस मार्मिकताका अेक और कारण है। आचार्य शुक्ल आगे कहते हैं :—

> सम्राटोंकी अतीत जीवन-लीलाके ध्वस्त रंगमंच वैषम्यकी अेक विशेष भावना जगाते हैं। अुनमें जिस प्रकार भाग्यके अूँचे-से-अूँचे अुत्थानका दृश्य निहित रहता है वैसे ही गहरे-से-गहरे पतनका भी। जो जितने ही अूँचेपर चढ़ा दिखाअी देता है, गिरनेपर वह अुतना ही नीचे जाता दिखाअी देता है। दर्शकोंको अुसके अुत्थानकी अूँचाअी जितनी कुतूहलपूर्ण और विस्मयकारिणी होती है अुतनी ही अुसके पतनकी गहराअी मार्मिक और आकर्षक होती है। असामान्यकी ओर लोगोंकी दृष्टि भी अधिक दौड़ती है और टकटकी भी अधिक लगती है। अत्यन्त अूँचाअीसे गिरनेका दृश्य कोअी कुतूहलके साथ देखता है, कोअी गंभीर वेदनाके साथ।

अितिहासके विशेष, असामान्य और मार्मिक प्रभावके सम्बन्धमें अितना कथन पर्याप्त है। अिस कथनके आधारपर यह स्पष्ट हो जाता है कि स्मृत्याभास कल्पना अतीतकी जो अनुभूति प्रदान करती है, वह अनुभूति सामान्य सुख-दुखात्मक अनुभूतियोंसे भिन्न प्रकारकी होती है। अिस अनुभूतिको भरत मुनि द्वारा निर्दिष्ट नव-भाव-तालिकामें स्थान प्राप्त नहीं है। अिसीलिअे नव रसोंके सम्बन्धमें लिखते समय अिसके सम्बन्धमें भरत मुनिने कोअी अुल्लेख नहीं किया है। अिस अनुल्लेखका कारण अुस युगकी परिस्थितियोंमें खोजा जा सकता है। वह अलग शोधका विषय है।

यहाँ यह बात मानकर कि भरत मुनिने अिस बारेमें कुछ नहीं लिखा है, रवीन्द्रनाथ ठाकुरके अिस अुद्धरणके साथ अितिहासके विशेष रसका अेक और पक्ष देखा जा सकता है। रवीन्द्रनाथ ठाकुरने अैतिहासिक अुपन्यास-शीर्षकसे अेक लेख लिखा है। अुसमें वे कहते हैं :

> हमारे अलंकार शास्त्रोंमें नौ मूल रसोंका अुल्लेख किया गया है, किन्तु बहुतसे अनिर्वचनीय मिश्र भी हैं जिनके अुल्लेख करनेका प्रयत्न नहीं किया गया। अिन्हीं समस्त अनिर्दिष्ट रसोंके अन्दर अेकका नाम अैतिहासिक रस रखा जा सकता है और अेक रस महाकाव्योंका प्राण-स्वरूप होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामान्य सुख-दुखात्मक अनुभूतियोंसे भिन्न अैतिहासिक रसानुभूतिको स्पष्ट करते हुअे रवीन्द्रनाथ ठाकुर कहते हैं :—

> व्यक्तिविशेषका सुख-दुख अुसके निजके लिअे कम नहीं है। संसारकी बड़ीसे बड़ी घटनाअें अुसके सामने छाया-सी प्रतीत होती हैं। अिस प्रकार यदि व्यक्तिविशेष या कुछ व्यक्तियोंके जीवनके अुत्थान-पतन या घात-प्रतिघातका अुपन्यासमें ठीक अुसी प्रकार वर्णन किया जाअे, तो रसकी तीव्रता बढ़ जाती है और यह रसावेश लोगोंके अत्यन्त निकट आकर आक्रमण करता है। हम लोगोंमेंसे अधिकांशकी परिधि सीमाबद्ध है—हमारे जीवनकी तरंगोंका क्षोभ कुछ आत्मीय बंधु-बांधवोंके अन्दर ही समाप्त हो जाता है। किन्तु पृथ्वीमें अिस प्रकारके बहुत ही थोड़े लोगोंका अभ्युदय होता है, जिनके सुख-दुख संसारकी बृहत् घटनाओंके साथ बँधे हुअे होते हैं। राज्योंके अुत्थान-पतन और महाकालकी भविष्यकी कार्य-परम्परा जो कि समुद्रके गर्जन-सहित अुठती और गिरा करती है; अिसी महान काल संगीतके स्वरमें अुनका वैयक्तिक विराग-अनुराग बजा करता है। अुनकी कहानी जब गीत बन जाती है, तब रुद्र वीणाके अेक तारमें मूल रागिनी बजती है और बजानेवालेकी शेष चार अंगुलियाँ पिछले-पिछले मोटे-पतले सब तारोंमें निरंतर अेक विचित्र गंभीर और दूरतक फैलनेवाली झंकारको जाग्रत कर देती है। हमारा प्रतिदिनके साधारण सुख-दुखसे दूर हो जाना, अर्थात् जब हम नौकरी करके रो-गाकर खा-पीकर समय बिता रहे हैं, अुस समय संसारके राजपथसे जो बड़े-बड़े सारथी काल-रथको चलाते हुअे जा रहे हैं अुनकी क्षण कालके लिअे अुपलब्धि करके क्षुद्र-परिधिसे मुक्ति प्राप्त कर लेना—यही अितिहासका वास्तविक रसास्वाद है।"

आचार्य और गुरुदेव, दोनोंने अपने-अपने विशद विवेचनोंके द्वारा यह बात साफ कर दी है कि सामान्य सुख-दुखमें मिलनेवाली रस-दशा अितिहासके सुख-दुखमें मिलनेवाली रस-दशासे भिन्न है। यह भिन्नता अिस कारण है कि अितिहासके सुख-दुख, अेक ओर सुख-दुख और अुत्थान-पतनके असामान्य वैषम्यका असाधारण प्रभाव जाग्रत करते हैं, दूसरी ओर मानव जीवनकी चिरकालसे चली आती हुअी अखंड परम्पराके साथ तादात्म्य स्थापित करते हैं, और तीसरी ओर क्षुद्र वैयक्तिक जीवनके नहीं, अैसे चरित्रोंका चित्रण करते हैं, जो महा-सारथियोंकी भाँति संसारके राजपथसे कालके रथको हाँके चले जा रहे हैं।

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुरने अपने कथनको समझाते हुअे अुदाहरण दिया है। वे कहते हैं :

> शेक्सपियरके "अेण्टोनी और क्लियोपेट्रा" नाटकका जो मूल व्यापार है, वह संसारके लिअे अेक प्रतिदिनका परीक्षित और परिचित सत्य बहुतसे अप्रसिद्ध, अज्ञात और सुयोग्य पुरुषोंने मुग्धकारिणी नारीके मायाजालमें अपने अिहलोक और परलोकको बिगाड़ लिया है। अिस प्रकारके क्षुद्र महत्व और मनुष्यत्वके शोचनीय भग्नावशेषोंसे संसारका रास्ता भरा हुआ है।
>
> हमारे लिअे सुप्रत्यक्ष नर और नारीकी विष तथा अमृतमयी प्रणय-लीलाको कविने अेक विशाल अैतिहासिक रंगभूमिके अन्दर स्थापित करके अुसे विराट बना दिया है। हृदयके विप्लवके पश्चात् राष्ट्र-विप्लव अुमड़ता है। प्रेमद्वन्द्वके साथ अेक बन्धनके द्वारा बद्ध रोममें परस्पर फूट डालनेवाली प्रचंड युद्धकी तैयारी होती है। अेक ओर क्लियोपेट्राके विलास-भवनमें वीणा बज रही है और दूसरी ओर दूर समुद्रके किनारेसे भैरवकी संहार-भेरी अुसके साथ स्वर मिलाकर और भी जोरसे बज अुठती है। कविने आदि और करुण रसके साथ अैतिहासिक रसको मिला दिया है, अिसलिअे अुसमें अेक चित्तको विस्मयमें डालनेवाली दूरता और बृहत्ता मिल गअी हैं।

यह अुद्धरण अितिहासमें मिलनेवाले विशेष आनन्दके स्वरूपको व्यक्त करता हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजके युगमें, नअे ज्ञानकी किरणोंमें अितिहास केवल मात्र अतीतका चित्रांकन नहीं करता। अितिहासके शास्त्रीय अध्ययनकी प्रणालियाँ चलनेके बादसे अिसमें राजाओंके चित्र-चरित्रोंके बदले सम्पूर्ण युगकी महती आशा-आकांक्षाओंका अध्ययन किया जाने लगा है। साथ ही नअे युगने जहाँ राजवंशोंको समाप्त करके जनताके गौरवको अुद्दीप्त किया है, वहाँ मानव-महासागरमें अुत्ताल अुठनेवाली तरंगोंका दर्शन वैयक्तिक सुख-दुखकी साँसोंसे अेकदम अपूर्व अनुभूतिमय होगा। टाल्सटायका "वार अेंड पीस" अैसा ही अुपन्यास है।

भरत मुनिने नव-रस योजना की। आगे चलकर आवश्यकताने वात्सल्यको दशम रस मानकर स्वीकार कर लिया। क्या आजके आचार्य यह अनुभव नहीं करते कि अैतिहासिक अुपन्यासोंका अपूर्व आनन्द अैतिहासिक रसके नामसे अलग व्यक्त किया जा सकता है। यहाँ अेक बात और विचारणीय है। शताब्दियों पूर्व भरत मुनिने दृश्य काव्यको आधार मानकर जो रस-मीमांसा की है, क्या आजकी बदली हुअी परिस्थितियोंमें, नअी-नअी मान्यताओंके बीच रस-सिद्धान्तका पुनरध्ययन आवश्यक नहीं है? काका कालेलकर जैसे समाज-शास्त्री और साहित्यकार तथा रामचन्द्र शुक्ल जैसे आलोचक प्रवरने अिस आवश्यकताकी ओर संकेत किया है। काका कालेलकरने लिखा है:—

> "पूर्वाचार्योंने जिन नव रसोंका विवेचन किया है, यह जरूरी नहीं है कि हम अुनके वही नाम और अुतनी ही संख्या मान लें। हमारे संस्कारी जीवनमें कलात्मक रस कौन-कौनसे हैं, अब अिसकी स्वतंत्रतापूर्वक छान-बीन होनी चाहिअे। साहित्यकारोंने जो कुछ विवेचन किया है, अुसे ध्यानमें रखकर और अुसका संस्कार कर अुसको और भी अधिक व्यापक बननेकी आवश्यकता है।"

अिस अपने लेख—रसोंका संस्कार—में काका कालेलकरने विभिन्न रसोंको संस्कृत और नवीनीकृत करके अुपस्थित किया है। रामचन्द्र शुक्लने अिस प्रकारके प्रयत्नमें भावोंका वर्गीकरण करके पुनरध्ययनके लिअे रास्ता सुझाया है। "शैंड" ने भाव विधानकी जो मीमांसा की है, रामचन्द्र शुक्ल अुसे सबसे आधुनिक मानकर चलते हैं। शैंडके अनुसार अंतःकरण-वृत्तियोंका विधान भी अेक शासन-व्यवस्थाके रूपमें है, जिसके अनुसार विशेष-विशेष वेग और प्रवृत्तियाँ, विशेष-विशेष भावोंके शासनके भीतर रहती हैं और भावोंका भी भाव-कोशोंके भीतर न्यास होता है। किसी अेक अवसरपर अुपयुक्त तीन अवयवोंसे युक्त जो चित्त-विकार अुपस्थित होगा वह तो भाव होगा। पर चित्तमें अैसी स्थिर प्रणालीकी प्रतिष्ठा हो जाती है जिसके कारण या जिसके भीतर समय-समयपर कअी भावोंकी अभिव्यक्ति हुआ करती है। अिस स्थिर प्रणालीका नाम भाव-कोश है। अिस निरूपणके अनुसार प्रीति, रति और वैरभाव नहीं हैं, भाव-कोश मात्र हैं जिनके भीतर स्थिति-भेदसे अनेक भाव प्रगट होते रहते हैं। रतिको ही लीजिअे। प्रियका साक्षात्कार होनेपर हर्ष, वियोग होनेपर विषाद, अुसपर कोअी विपत्ति आनेसे अुसे खोनेकी शंका, अुसे दुख पहुँचानेवालेको क्रोध अित्यादि अनेक भावोंका स्फुरण "रति" की प्रणाली स्थिर हो जानेसे हुआ करती है। अिन भावोंके अतिरिक्त रतिकी न तो कोअी स्वतन्त्र सत्ता है, न कोअी विशेष स्वरूप। अित्यादि।

अिस प्रकार आजके साहित्य-शास्त्रियोंके सामने रसोंके संस्कारका प्रश्न विचारणीय है। रसोंके संकारसे संभवतः हिन्दीको साहित्यालोचनका सुदृढ़ आधार प्राप्त हो सके। आजकी समाजवादी आलोचना पद्धतिको भी रसोंके परिष्कृत रूपसे बहुत कुछ प्राप्त हो सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजाबकी आवाज़ : अमृता प्रीतम

—भाअी प्रीतमसिंह 'पंछी'

अमृता प्रीतम आज अपनी धरतीके लहू मिट्टीमें घुले-मिले और पाँच नदियोंकी गुनगुनाती धाराओंकी जबानी प्रेमियोंकी महान् गाथाअें कहते, अुनकी पीड़ाको संजोअे हुअे गीतोंके लिअे पंजाबकी आवाज बन गअी है। जब अुसके गीतोंने फूलोंकी नन्हीं कोंपलोंकी तरह मुँह खोला था तब अुसके देशमें पाँचों नदियाँ अपनी मस्तानी चालसे स्वच्छन्द बहती हुअी पंजाबके गौरवमय अितिहासकी याद दिलाती थीं। भंगड़ा, झूमर और गिद्धे जैसे लोक-नृत्योंकी महान् परम्पराने पंजाबकी सारी धरतीके भाँति-भाँतिकी जातियोंके लोगोंको अेकताके सुदृढ़ सूत्रमें बाँध रखा था। सदियोंसे त्यौहारोंके हर्षोल्लासके क्षणोंका पंजाबियोंके जीवनसे अटूट सम्बन्ध बना चला आ रहा था। लेकिन देशके बँटवारेसे पंजाबके अंग छिन्न-भिन्न हो जानेपर अमृता प्रीतमके गीत आहत हो गअे। वे लहूकी भरी पाँच नदियोंकी कलकलमें पीड़ित पंजाबका दर्द भरा स्वर सुनने लगे।

देशका समृद्धशाली अंग होते हुअे पंजाब अपनी रंगीनियों तथा सांस्कृतिक विशेषताओंके लिअे प्रसिद्ध है। अिसका अितिहास, लोक-कथाओं और किंवदंतियाँ प्रेमकी भावनासे ओत-प्रोत हैं और समय-समयपर जो भी कवि आया पंजाबकी अिस परम्पराको जीवित रखने और अिसमें और अधिक प्राण फूँकनेका भरसक प्रयत्न करता गया। "हीर रांझा" की लोक-गाथाने वारस शाहको अमर बना दिया और सदियाँ बीत जानेपर भी वारिसकी अमिट छाप सामंती रूढ़ियोंके विरुद्ध मानवी प्रेमके घोर संघर्षकी कहानी कहती हुअी पंजाबियोंके दिलोंमें अंकित है।

अमृता प्रीतमका जन्म ३१ अगस्त १९१९ को गुजरांवालाँमें हुआ था। वह अपने माता-पिताकी अेक मात्र संतान थी। अुसके पिता सरदार करतारसिंह हितकारी संस्कृत अेवं हिन्दीके प्रकांड पंडित थे और अुन्होंने हिन्दी और पंजाबीमें कअी पुस्तकें लिखी थीं। प्रारम्भमें अुन्हींकी शिक्षा-दीक्षासे अमृताको कविता लिखनेकी प्रेरणा मिली और अुसका पहला कविता-संग्रह १९३६ में प्रकाशित हुआ। परम्परागत कवियोंकी भाँति अुसने अपनी प्रारम्भिक कविताओंमें आदमीके गुण-अवगुण, परोपकार, भलाअी आदि नैतिक विषयोंको चुना। अिन कविताओंमें अुसके कवि-पिताका प्रभाव स्पष्टतः झलकता है।

किन्तु आगे चलकर अमृता प्रीतमकी कवितामें सामाजिक चेतनाके चिह्न दृष्टिगोचर होने शुरू हुअे। अुसके विचारों और मान्यताओंमें अेक नया मोड़ आने लगा। यद्यपि अुसके बदलते हुअे नअे दृष्टिकोणका कोअी मानदंड अभी निर्धारित नहीं हो पाया था; तथापि वह अेक नअी दिशाकी ओर अग्रसर हो रही थी। अुसका स्त्रीत्व जाग रहा था। समाजमें स्त्रीके प्रति घोर अन्यायको देखते हुअे अुसके विचार अेक नअी करवट लेने लगे थे। अुत्पीड़त स्त्रीके वेदनामय स्वरोंको वह सुनने और पहचानने लगी थी। पहले वह समाजमें स्त्रीकी दुर्दशापर आँसू बहाकर ही संतोष कर लेती रही; किन्तु जैसे-जैसे अुसके विचारोंमें सामाजिक चेतनाका प्रकाश प्रदीप्त होता गया वह स्त्रीमें सामाजिक रूढ़ियोंके प्रति विद्रोहकी भावना भरने लगी।

मंडियोंमें अन्य व्यापारकी भाँति स्त्रीके शरीरका भी व्यापार चलता है और कुछ सिक्कोंके लिअे अुसकी आत्मा तकका सौदा होता है। मनुष्यने कभी स्त्रीके स्वतंत्र अस्तित्वको मानना गँवारा नहीं किया, सदा अुसे अपनी सम्पत्ति समझा और अुसे अपनी दुर्भावनाओंका शिकार बनाअे रखा है। अमृता प्रीतमको स्त्रीकी कुचली हुअी भावनाओं और अरमानोंके गहरे अेहसासने लिखनेपर बाध्य किया।

जिस्मां दा वपार, तकड़ी दे दो छाबियाँ वाकर
अेक मर्द अिक नार, रोज तौल दे मास, रोज बेचदे लहू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(शरीरका व्यापार होता है। तराजूके दो पलड़ोंकी भाँति, अेक आदमी, अेक स्त्री—- रोज माँस तोलते हैं— लहू बेचते हैं।)

दूसरे महायुद्धके दिनों जब भारत विदेशी पराधीनताकी चक्कीके दो पाटोंके बीच पिस रहा था और बंगालमें अकालसे सहस्रों लोग भूखसे अकुलाते प्राणोंकी आहुति दे रहे थे, अमृता प्रीतम अपने परम्परागत मार्गको छोड़कर और व्यक्तिगत प्रेमके गीतोंसे विदाअी ले; अेक नअी दिशा ढूँढने लगी थीं।

ते जित्थे रोटी बणी सवाल,
की आखे अुत्थे अिश्क दर्द ते सोज़
ते अज्ज संदली जुलफां बिक गअीयाँ
अिक अिक रोटी दे मुल्ल तों

(जहाँ रोटी तक अेक समस्या बन गअी है, वहाँ अिश्क और दर्द क्या कहेगा—- और, आज संदली जुलफें अेक अेक रोटीके मूल्यपर बिक रही हैं।)

युद्धकी विभीषिकाने कवयित्रीके कोमल मनको विक्षुब्ध कर दिया। मानवकी सदियोंके परिश्रमसे निर्मित संस्कृतिका विध्वंस देखकर वह भला कैसे खामोश बैठी रह सकती थी।

रंग बणे अज्ज खून रंग
राग बणे कुरलाहट

(जीवनके रंग आज खूनमें रंग गअे हैं और संगीत करुण क्रन्दन बन गया है।)

बंगाल भूखा मर रहा था। युद्धकी मनहूस भीषण छाया सारी दुनियापर मंडरा रही थी; लेकिन धनी मुनाफाखोर लोग किसी और ही दुनियाँमें विचरण कर रहे थे। अमृता प्रीतमके तीखे व्यंग्यसे वे भला कैसे बच जाते!

होटल दे मेज़ ते
कविता दियां गल्लां
संगीत दियां गल्ला
निघा निघा सूप पीदियाँ
धर्म दियां गल्लां
'अिक पलेट कतलस होर'
राजसी मामले, जं दे पहलू

(होटलके मेज़पर कविताकी बातें, संगीतकी बातें, गर्म गर्म सूप पीते हुअे धर्मकी बातें—अेक कप्लस पलेट और—राजनीतिक मामले-जंगके पहलू।)

विनाशकारी युद्ध मानवताके ह्रासका कारण ही नहीं बनता; वरन् संगीत तथा प्रेम भी अुसकी बलि चढ़ जाते हैं। अिसका अनुभव अमृता प्रीतमने किया और अिस अनुभवको अुसने कवितामें बाँध दिया।

देस-देस दा, कौम-कौम दा
मनुख मनुख दा वैर
बुलबुलने नग्मा गाणो
कर दित्ता अिन्कार
भिज्जे पलक अज हुसन दे.....
ते जंग दी बलि प्यार....

(देश, कौम और मनुष्य परस्पर दुश्मन बन गअे हैं। बुलबुल नगमे नहीं गाती। आज हुस्नकी पलकें भींगी हुअी हैं और प्यार जंगकी बलि चढ़ गया है।)

भारतका बँटवारा अितिहासकी अेक असाधारण घटना थी। देशोंके राज्य बदलने और साम्राज्य बनते-बिगड़ते रहे किन्तु हमारी पीढ़ीने जो अपनी आँखोंसे १९४७ में देखा वह अितना भयावह, अितना डरावना और अप्रत्याशित था कि मनुष्य निरीह प्राणी बनकर रह गया। गतिमय जीवन जड़ हो गया। किन्तु अिस सबके बावजूद भावुक हृदय रखनेवाले कुछ लोग अब भी मौजूद थे जो अिन असाधारण घटनाओंके परिणामोंको भली भाँति समझते थे। जैसे बंगालके अकालने लेखकों, कवियोंको मनुष्यताके, ह्रासका अहसास कराया था अैसे ही देशके बँटवारेसे पैदा हुअी परिस्थितियोंके कवियों और लेखकोंके धीरज खोने नहीं दिया। वरन् अिन्हें अितिहासकी अिन अमानती घटनाओंकी वास्तविकता जान-बूझकर मनुष्यताके अवशेषको सुरक्षित बनाअे रखनेके लिअे प्रहरी नियुक्त किया।

अुन प्रहरियोंमें अमृता प्रीतम अग्रणी हैं। अुसकी कलामें जो नया मोड़ बंगालके अकाल और युद्धके भयंकर परिणामोंसे अाना शुरू हुआ था अब वह निखरने लगा था और वह व्यक्तिगत प्रेम तथा रोमांसकी-दलदलसे निकल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर जन-पीड़ाके गीत रचने लगीं। अुसका व्यक्तिगत प्रेम सामूहिक प्रेममें परिवर्तित हो गया। बँटवारेमें जाने कितने मासूमोंका खून हुआ और स्त्रीकी लाज खो गअी। स्त्री सबसे अधिक अिस दुर्भाग्यका शिकार बनी। अुसका नारी हृदय तड़प अुठा :

किसे न गुन्दियाँ मेढीयाँ, किसे न पाअे फुल
किसे न पाअ न्नौंकके, जुलफां गअीयाँ खुल
किसे न डोली पाअी वे किसे न गाअे सुहाग

(किसीने बालोंकी मेढियाँ नहीं गूँथी और न ही किसीने फूल लगाअे और न ही किसीने चौंक पाया, जुलफें बिखर गअीं—न किसीने डोली पाया और न ही सुहाग गाअे गअे।)

पाँच नदियोंका बँटवारा ही नहीं हुआ, खेतों खलियानों, डोर-डंगरों तकका बँटवारा हो गया। चर्खे, पीढ़े, सुहागिनोंके पलंग तक बाँटे गअे। अेक साथ मनाअे जानेवाले त्योहारों और गीतोंकी महान् परम्पराके बीच खूनकी अेक रेखा खींच दी गअी। गेहूँकी बालियाँ बँट गअी, देखकर अमृता प्रीतमने 'गेहूँका गीत' रचा :

असां कढियाँ-सी गोडियाँ
अिकठियाँ-सी बीजियाँ
औअे किने आके सिदासिदा दाना दाना वन्डियाँ
हो कणकां छन्डियाँ

(हमने मिलकर गेहूँ बोया, गोड़ी की और छाँटकर तैयार की—ये कौन हैं जिसने आकर गेहूँकी अेक-अेक बाली और दाना बाँट दिया।)

पंजाबके बँटवारेने सारे देशको झँझोड़ डाला। अमृता प्रीतमकी भावनाअें जगीं और बेघर, बेद्वार हो गअे लाखों जनोंकी पीड़ाका अनुभव करते हुअे अुसने महान रचनाअें लिखीं। अुसने 'अज्ज आखां वारिस नूं' लिखकर अुसमें मानव हृदयका सारा दर्द सारी वेदना और पीड़ा अुँडेल दी :

अज्ज आखां वारिस शाह नूं तू कब्रां विच्चों बोल
ते अज्ज किताबे अिश्क दा कोअी अगला वरका फोल
अिक रोअी सी धी पंजाब दी तू लिख-लिख मारे वैण
अज्ज लखां धीयां रोंदियां तैनूं वारिस शाह नूं कहण

× × × ×

अुठ दर्दमन्दां दिया दर्दिया अुठ तक अपणा पंजाब
अज्ज जंगल लाशां बिछियां अते लहू दी भरी चनाब

× × × ×

धरती ते लहू वसिया कब्रां पअीयां चोण
प्रीत दियां शहज़ादियां अज्ज विच मज़ारां रोण

× × × ×

(आज वारिस शाह * से कहती हूँ कहीं कब्रोंमेंसे बोल और आज अिश्ककी किताबका कोअी अगला पृष्ठ खोल। पंजाबकी अेक बेटी (हीर) को रोता देखकर तुमने कितने ही करुणायुक्त गीत रच डाले। पर आज लाखों बेटियाँ (पंजाबकी बेटियाँ) रोती हुअी वारिस शाह तुमसे कह रही हैं :

ओ दुखियोंके दर्दके जाननेवाले! अुठ देख अपने पंजाबको। आज जंगल लाशोंसे और चिनाब दरिया लहूसे भरा है।

धरतीपर लहूकी वर्षा हुअी है, कब्रें भी चू पड़ी हैं और प्रीतकी शाहजादियाँ आज मजारोंपर रो रही हैं।)

भारत और पाकिस्तान दोनों देशोंमें यह कविता लोक-प्रिय हुअी। पाकिस्तानके अेक प्रसिद्ध लेखकने लिखा था कि अुसने अपनी आँखोंसे अैसे लोगोंको देखा जो अमृता प्रीतमकी कविता 'अज्ज आखां वारिसशाह नूं' की नकल करके हर समय जेबमें रखते थे, अेकांतमें अुसे पढ़ते, गुनगुनाते और साथ-साथ रोते थे। अेक प्रसिद्ध लेखकने अिस कविताको पढ़कर कहा था कि हर कोअी वारिसशाहको कब्रोंमेंसे बोलनेको नहीं कह सकता और न ही कोअी 'गेहूँका गीत' रच सकता है।

आज अमृता प्रीतमकी कविता शिखरको छूने लगी है और अुसका दृष्टिकोण व्यापक तथा प्रौढ़ होता जा रहा है। अुसमें सर्वोन्मुखी प्रतिभा है। अुसके ग्यारह कविता संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। कविताके अतिरिक्त तीन अुपन्यास, दो कहानी-संग्रह और दो पंजाबी लोक-गीतोंके

---

* हीररांझाकी प्रेम-गाथा लिखनेवाला पंजाबका महान् लोक-कवि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संग्रह पंजाबी साहित्यको देन हैं। तीनों अुपन्यास हिन्दीमें अनूदित हो हिन्दी पाठकोंमें लोक-प्रिय हुअे हैं। अुसकी कअी रचनाअें अँग्रेजी, मराठी, गुजराती और अुर्दूमें अनूदित हो चुकी हैं।

वह अपने नअे कविता-संग्रह "सुनेहड़े" (संदेश) में कहती हैं :—

"गोटेको तेज रोशनीसे अिश्क हो गया था। वह कहता था कि अुसका हृदय अुस फूलकी तरह था जो सूर्यास्त होते अुसके साथ ही सिमट जाता था। वान-गागको जब जीवनने निमिषमात्र सुख देनेसे अिनकार कर दिया तो अुसने सूर्यसे शरण माँगी और वह सूर्यको विजित करनेके लिअे दीवाना बन गया।"

अमृता प्रीतमने अपनी कवितामें अुन वर्षोंका बयान किया जिन वर्षोंमें बत्तीसे प्रकाश ओझल रहा किन्तु अुसने मनुष्यके मनकी निराश परिस्थितियोंमें किरणों-सा संदेश देते हुअे अपनी कलमसे कहा कि तू मनुष्यकी पीड़ाका दारू (दवा) बन जा।

अुसने यह सन्देश प्रत्येक अुस व्यक्तिको दिया है जिसके हाथमें कलम है।

नवीं रुत दा कोअी संदेश देणा
अिस कानी दी लाज नू पालण वे !

(अिस कलमकी लाजको तभी रखा जा सकता है अगर यह मानवताको कोअी नया संदेश देनेका अपना कर्तव्य सदा निभाती रहे।)

गीत

—श्री पुरुषोत्तम खरे

हिंडोलेमें साँसोंके
शिशुप्राण जन्मा।
मनुज यों पला अंकमें मृत्तिकाके
कि जैसे गिरे बीज, औ लहलहाअे !

× × ×

जिसे चूमनेको
गगन-सेज तजकर किरन-मंगला
द्वारपर आ बुलाती !
दियोंमें झमकती हुअी साँझ
जिसके चरणके परसका
अभय-पुण्य पाती
दिव्य खोलकर जिन्दगी बाँटनेको
लहर स्नेहकी बाँहमें थामनेको
कभी दौड़ आअे ! कभी छटपटाअे
सपनमें जगनमें, तपनमें थकनमें
धरासे गगन तक कभी घर अुठाअे
धरासे गगन तक कभी स्वर बिछाअे !

भटकता हुआ सत्य जब लड़खड़ाया
फिरीं याचनाकी पुकारें अनाश्रित
कि जिससे
अबोला ! हुआ शब्द चित्रित
अरूपी—हुआ
कण-कणोंमें प्रतिष्ठित
गरजसे कि जिसकी, दिशाअें दहलतीं
समयकी अिशारोंसे गतियाँ बदलतीं
कि जिसपर नयन चाँद सूरज टिकाअे !
मनुज सृष्टिकी जिन्दगीका 'सुहागी'
कि जिसने हैं दुनियाके नक्शे रचाअे
युगोंसे लिअे जा रहा——
संस्कृति, सभ्यता-शांतिके——
काफिलोंको चलाअे——!

× × ×

हिंडोलेमें साँसोंके
शिशु प्राण जन्मा
मनुज यों पला अंकमें मृत्तिकाके
कि जैसे गिरे बीज औ' लहलहाअे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul K

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ नयो माणस शूं छे ?

—डा० कन्हैयालाल सहल

दो-दो समुद्र अुमड़ते हैं यहाँ--
अेक ओर जल-समुद्र
तो दूजी ओर, बीजी ओर
जन-समुद्र लहराता है
मैरिन लाअिन्ससे मलाड़
औ' मलाड़से मैरिनलाअिन्स
मिनट-मिनटपर छूटती हैं यहाँ गाड़ियाँ;
दफ्तरोंके कर्मचारी
कितने ही क्लर्क औ' कितने ही अन्यजन
बेशुमार हैं
भरे अिन गाड़ियोंमें।
मलाड़ औ' अन्धेरी जैसे अुपप्रदेश ये
बम्बअीके जन-समुद्रके
दूर-दूर फैले हुअे किनारे हैं
किसी-किसी परिवारके जन तो
भोर ही निकल अिन प्रदेशोंसे
रात होनेपर ही लौटते
अपने घरोंको
और अुस परिवारके
नन्हे
सलोने बच्चे तो
सप्ताहभर अपने पिताका
दर्शन तक न कर पाते हैं!
रविवारको अलबत
छुट्टीकी वजहसे
अैसे पिताको भी
कामसे कुछ राहत मिल जाती है
नहीं तो
पूर्व ही शिशु-जागरणके
निकल पड़ता है पिता
घरसे
लौटता है रातको जब
बच्चे निद्राकी शरण लेते हैं
अेक परिवारके अेक बच्चेने
रविवारके दिन
अपने पिताको
अजनबी-से किसी जनको
कोष्ठककी तरह
अथवा वाक्यके
क्लाज-पैरेन्थेटिकल-सा
घरमें देखा तो
लगा कहने—
"अरी माँ! ओ नयो माणस शूं छे!!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिमालय-किरण.

—स्व. अडिवि बापिराजु

[तेलुगु कहानीकारका संक्षिप्त परिचय—जन्मस्थान आन्ध्रके पश्चिम गोदावरी जिलेका भीमवरम अेक छोटा-सा नगर। जन्मदिन ८ अक्टूबर सन् १८९५। राजमहेन्द्रीके गवर्नमेण्ट कालेजसे बी. अे. किया। सन् १९२१–२२ के स्वराज्य-संग्राममें आन्दोलनकारी होनेके कारण कारावास। मछलीपट्टनम्की प्रसिद्ध आन्ध्रजातीय कलाशाला (राष्ट्रीय महाविद्यालय) में प्रख्यात चित्रकार श्री प्रमोदकुमार चट्टोपाध्यायके समीप चित्रकलाका अभ्यास कर मद्रासके कॉलेजमें भर्ती होकर बी. अेल. (कानूनी) परीक्षा पास की। कुछ समयतक अपने जन्म-स्थानमें वकालतका धन्धा। 'त्रिवेणी' नामक साहित्य, संस्कृति, कला, पुरातत्वकी अँग्रेजी मासिक पत्रिकाके संयुक्त सम्पादक पदपर। सन् १९३५ से ३९ तक मछलीपट्टनम्के अुक्त राष्ट्रीय महाविद्यालयमें प्रिन्सिपालके पदपर योग्यतापूर्वक कार्य किया। कुछ समयतक सिनेमा क्षेत्रमें आर्ट डाअिरेक्टर रहे। फिर हैदराबादसे निकलनेवाले दैनिक "मीजान" के प्रधान सम्पादक रहे। आन्ध्र विश्वविद्यालयसे आपके प्रसिद्ध सर्वश्रेष्ठ दो चित्रों—'नारायणराव पेशवा' और 'तिक्कन सोमयाजी' पर आपको पुरस्कार मिला।

हिमाविन्दु, नारायणराव, गानेगन्नरेड्डी, कोनगि, जाजियल्लि, ये अडिविके प्रसिद्ध अुपन्यास हैं।

अंजलि, हम्पीके खँडहर आदि कहानी संग्रह, तोलकरि, हारती, गीतोंके संग्रह और 'दुक्किटेडु' अुषासुन्दरी, भोगीरलोय, रेडियो रूपक हैं।

आन्ध्रके अनेक युवकोंको चित्रकलाकी अुच्च शिक्षा दी। मृत्यु—१९५२ की २२ सितम्बर। —सं.]

अेक दिन सबेरे-ही-सबेरे आनन्दस्वामीने हरिद्वार-के स्नान-घाटपर अुस युवतीको देखा। देखते ही अुनके हृदयमें अेक भीषण टीसकी ज्वाला जागृत हुअी। अुनका शरीर कँप गया। मुख-मण्डल लाल हो गया। अुनकी तपस्या अन्तर्धान हुअी। स्वामीजीकी दृष्टि अुनके नियंत्रणसे हटकर स्नान करनेवाली अुस सौन्दर्यराशि नारीपर जा अटकी। अुस युवतीके भीगे हुअे कपड़ोंसे अुसका सौन्दर्य झलक रहा था। शिशुता और जोबनकी दीप्ति धूपछाँव रेशमी वस्त्रकी तरह चमक रही है। स्वामीजीकी दृष्टि शिशुत्व अेवं मुग्धत्वके साथ झूलने-वाली अुस युवतीके मुख-मण्डलपर केन्द्रित हुअी और अुस युवतीके कंठ, बाहु-मूल, अुरोज तथा आँखमिचौनी खेलनेवाले कटि-विलासपर कभी-कभी संचार करने लगी।

सहज भावसे प्रशांत हो, दिव्य ज्योतिकी भाँति प्रकाशित होनेवाले अुस बाल-योगीका मुख-मण्डल विवर्ण हो गया।

अिसी समय बाल-शंकर स्वरूपका स्मरण दिलाने-वाले अुन आनन्दस्वामीको, जो स्नान कर रहे थे, काश्मीरी सुन्दरीने देखा।

वह सुन्दरी ? श्रीनगरकी अेक काश्मीरी ब्राह्मण-बाला है। अुसका शिरोमुण्डन करानेके अभिप्रायसे अुस बालाके पिता अुसे हरिद्वार ले आअे हैं। छह वर्षकी छोटी अवस्थामें अुस बालाका विवाह अेक अभागेके साथ हुआ, लेकिन वह अुस दुधमुँही लड़कीको निरीह छोड़, सदाके लिअे अिस संसारसे चल बसा।

वह बाला संसारसे सदा अनभिज्ञ ही रही। अुसे अिस बातका दुख नहीं, वह भर्तृविहीना है। जब कभी अुसकी माता अुसे अपने आलिंगनमें लेकर कहती—"मेरी बेटी, तेरे भाग्यका सितारा डूब गया है, तेरे जीवनका आधार अितनी छोटी अुम्रमें ही टूट गया है।" तो अुसका भाव बिलकुल अिसकी समझमें न आता।

१६ सालकी अवस्थामें वह युवती कमल जैसी विकसित हुअी। अुसके मुख-मण्डलपर वैधव्य नहीं दीखता था, बल्कि वह सौभाग्य देवी मालूम होती थी।

वह अपरिचित सौन्दर्य-राशि शिल्प-कलाके सुन्दर नमूनेकी मूर्ति अुस काश्मीरी ब्राह्मणके गृहको ज्योतिर्मय बना रही थी। १८ सालकी अुम्रमें तो अैसी दिखाअी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देती थी मानों अुसकी ओर देखने मात्रसे नजर लग जाअेगी।

अुस युवतीकी फूफीने कहा—"हमारे घरमें अिस सौन्दर्यके रहनेसे वह अष्टविध पापकृत्योंका आश्रय बन जाअेगा। अिस बालविधवाका सिर मुँड़वा देना चाहिअे।" अुसकी माता कुढ़कर रह गअी।

आनन्दस्वामीजी? राजमहेन्द्रीमें बी. अे. पास करके, कृष्णा जिलेके कलेक्टरेटमें ४०) मासिक वेतनपर नियुक्त हुअे। २५ वर्षकी अुम्रतक रेविन्यू अिन्सपेक्टरी करते भीमवरममें निवास कर रहे थे—रामचन्द्रराव नाम था। वह अेक कुलीन घरानेमें पैदा हुअे थे। अुनका विवाह भी अेक सुसम्पन्न घरकी युवतीसे हुआ। अुनका पारिवारिक जीवन शान्तिपूर्वक चला जा रहा था। स्वर्णमूर्ति जैसी पत्नी और दो लड़के और दो लड़कियाँ अुनके घरको सुखका आगार बना रहे थे।

अेक दिन, रातको न मालूम रामचन्द्ररावके मनमें कौन-सी भावना जागृत हुअी कि वह किसीसे बिना कहे अुस अमावस्याकी अँधियारीमें अेकाअेक भीमवरमसे अन्तर्धान हो गअे।

सबेरे रामचन्द्ररावके पत्रको देखा। सिर पीटते हुअे बच्चोंका ख्याल न कर कुँअेमें गिर पड़ी। लोगोंने अुसे बाहर निकाला। सबने रामचन्द्ररावके लौटनेकी आशा की, लेकिन व्यर्थ। मित्रोंने रामचन्द्ररावको मूर्ख और कायर कहकर सन्तोष किया।

अिस समाचारसे अवगत अेक व्यक्तिने जो काशीकी यात्राको गया था, वहाँपर रामचन्द्ररावको देखा और अुसके ससुरको तार दिया। "रामचन्द्रराव यहाँपर हैं। शायद संन्यास ले रखा है। अुनकी पत्नी व बच्चोंको लेकर जल्दी आ जाअिअे।" सब लोग वहाँ पहुँचे। देखा, रावजी सन्यासियोंके साथ योगाभ्यास कर रहे हैं। अुन्हें देखकर अुनकी पत्नी मूर्छित हो गअी। बच्चे आँखें फाड़-फाड़कर पिताजीको विस्मय दृष्टिसे देखते रह गअे।

सबने घर लौटनेकी प्रार्थना की। लेकिन रामचन्द्रराव संसारसे तर जानेके लिअे वैराग्य ही अेक मात्र साधन है, शंकर-भाष्यका अुपदेश देने लगे।

रामचन्द्ररावके गुरु यतीश्वरानन्दनजीने सबको समझाया-बुझाया। हिमालयके बुलानेपर कौन लौट सकता है? वही रामचन्द्रराव वहाँके आश्रममें आनन्दन स्वामी हैं!

[२]

अुस युवतीको देखते हुअे आनन्दजीका शरीर अपने नियन्त्रणसे मुक्त होता जा रहा था। अुनका दिल रेलके अिंजनकी भाँति धड़कने लगा। अुनका मन आज जैसा काबूसे बाहर हो गया था, वैसा कभी नहीं हुआ।

सहमते हुअे आनन्दने स्नान किया और हरिद्वारके समीपमें स्थित आश्रममें चले गअे।

यह कहाँका घोर पाप है! सारा विश्व क्या रसातल लोकमें धँसता जा रहा है? हिमालय तो नहीं टूट रहे हैं? अपना सर जमीनपर पटकने लगे!

आज तक की तपस्या भग्न हो गअी। गंगोत्रीके समीप आनन्द स्वामीने तीन वर्ष तक परम तप किया था। अुन्होंने प्राकृतिक सत्यको कभी मिथ्या नहीं माना था!

पिछले दिनों अुनका मन चंचल रहता। 'शिवोहं' का ध्यान और दीक्षासे पूर्ण महायोग द्वारा मन स्थिर हो गया। कुंडलीको जगाया। षट्चक्रोंको पारकर अूपर अुठा। प्राण शक्ति विकल्प समाधि—आगेकी सीढ़ियाँ हैं।

अुस नीरव अंधकारमें अेकाकी बैठे हैं। देह शिथिल है, हृदय जम गया है, कुछ सप्ताह तक चेतना रहित हो पड़े रहे। बाह्य ज्ञान नहीं रहा। अन्तर्ज्ञानका तो कभीका अन्त हो चुका था! हुआ क्या था?

अेक दिन अचानक वह जागृत हुअे। गुरुभाअियोंके "शिवोहं" "शिवोहं" का जाप सुनाअी दिया। धीरे-धीरे फलाहार प्रारम्भ किया। दूध, रोटी लेने लगे।

गुरु यतीश्वरानन्दजीने आनन्दको आदेश दिया—"प्रथम सीढ़ी तुमने पार की है, दूसरीके लिअे तैयार हो जाओ।" अुनकी आत्मा महाशान्तिमें स्थित रही। अुनके भालपर तेज दमकने लगा। गुरुजीके समक्ष अनेक ग्रन्थोंका अध्ययन किया, वेदान्तकी विविध वैराग्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भावनाओंको अवगत किया। सब अैसा मालूम होता था, मानों अुन सबसे वह पहले ही परिचित हैं।

कैलास पर्वतके निकटकी अेक गुफामें आनन्द स्वामीने दूसरी बार तपस्या करनेके हेतु पद्मासन लगाया। अिस बार वह जल्दी ही विकल्प समाधिमें पहुँचे। अुनके शरीरमें मानों हजारों विद्युल्लताअें दौड गअीं।

छह मास तक अखण्ड समाधि! अपार आनन्द! ओं....ओं!! ओं!!! का प्रणव मन्त्र!

आनन्दजीने अपने नेत्रद्वय खोले। अुनका मुख सम्पूर्ण चन्द्रमण्डल ही था! अुनकी देहसे प्रकाश फूट रहा था! अुनके ओंठोंसे मंदहास छूट रहा था। अुनके नेत्रोंसे दिव्य ज्ञान-ज्योति निकल रही थी।

आनन्दजीको अपने गुरुदेवसे आज्ञा मिली थी—"हरिद्वारके समीपमें अपना आश्रम बनाओ। प्रति-दिन भगवानके मन्दिरके सामने स्थित स्नान-घाटपर स्नान कर अुनके दर्शन करो। तदनंतर आश्रममें जा तप करो।"

अुस सुन्दरीका मुख-मण्डल झलकता हर मिनट सामने दिखाअी दे रहा था। आनन्दजी सिर घुमाकर पद्मासन लगा ध्यान करने लगे। वह काश्मीरी बाला थालीमें फल और फूल लेकर पासमें आअी और नमस्कार कर पार्श्वमें बैठ गअी। अुस बालाके अंग आनन्दजीके शरीरका स्पर्श करने लगे। युवतीने आनन्दजीके भालको चूमा।

"ओह!" कहते आनन्दजी तुरन्त अुठ बैठे। वहाँपर कोअी नहीं है। थाली नहीं, युवती भी नहीं है। अकेले वही मात्र हैं और चारों तरफ शून्य कुटीर!

तपोभंग हुआ। अुनके अनेक जन्म व्यर्थ हुअे। वह अब अपने गुरुदेवको अपना मुँह कैसे दिखा सकेंगे। अपना सर जमीनपर टेकने लगे। रोअे। लाठी लेकर शरीरपर प्रहार किया। शरीर फूलकर कष्ट देने लगा।

वह बाला अपनी ओर हाथ फैलाकर अत्यन्त प्रेमके साथ आगे बढ़ती आ रही है।

आनन्दजी जोरोंसे हरिका नाम स्मरण करते अुन्मत्त हो गंगाके किनारे दौड़ रहे हैं। गंगाकी धारा प्रतिध्वनित होने लगी।

"मेरी प्यारी बेटी! तेरा भाग्य ही कहाँ रहा? अब तेरा शिरोमुंडन कराना ही होगा। क्या मैंने नहीं कराया? माना, तूने केश रखे भी, अुन्हें देख संतोष करनेवाला कौन है?" कहते, निरुपमाकी फूफी अुसे मजबूरन खींच रही है। अुसकी माता मुँहपर घूँघट खींचे फूट-फूटकर रो रही है। पिता पंडित दीनानाथ पुत्रीका हाथ पकड़कर नाअीकी ओर खींच रहे हैं।

नाअी हँसते हुअे अुस्तरेको सानपर चढ़ाता अस्पष्ट स्वरमें कह रहा है—"कितनी ही सुन्दरियोंकी सुन्दर वेणियोंको निगलकर अिस अुस्तरेने गंगा माअीको अर्पण किया है।"

"अरे मैं अपना सिर नहीं मुँड़ाअूँगी।" कहती निरुपमा बाघके सामने पड़ी हुअी हिरणीकी भाँति छटपटाती पीछे हटती जा रही थी। अुसे अपने पतिकी मृत्युका दुख नहीं है। अुसे लोग घृणाकी दृष्टिसे क्यों देखते हैं, यह भी अुसे मालूम न था। वह सदा अपने घरमें, श्रीनगरमें खेला करती थी। पिता धनवान थे। बस, वही अुनकी अेकमात्र संतान थी।

पंडित दीनानाथ चुस्त सनातनी हैं। अपने आँसुओंको रोकते कोपका अभिनय करते अपनी पुत्री निरुपमाकी दोनों भुजाअें पकड़े जबर्दस्ती अुसे नाअीके पास बिठाना चाहते थे। अितनेमें वह युवती "स्वामीजी!! मेरी रक्षा कीजिअे" कहकर नीचे गिर पड़ी।

गंगाके तटपर अुन्मत्तकी तरह दौड़नेवाले आनन्द स्वामी अुस समय वहाँ पहुँचे।—"कौन है?" नाअीने कहा—"प्रभु! अिस बदनसीब बाल-विधवाकी वेणीको गंगा माअीको अर्पण करने जा रहे हैं।"

स्वामीजीने पासमें काश्मीर युवतीको बेहोश पड़ी देखा। तुरन्त अुसे अुठाकर अुसके मस्तकको अपनी गोदमें रखा और "शिवोहं" "शिवोहं" जपने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवतीने आँखें खोलीं। लज्जासे युवती अुठ खड़ी हुअी और घूँघट सँवारने लगी।

पंडित दीनानाथ स्तब्ध हो देखते रह गअे। स्वामीजी प्रलयकालके रुद्रकी तरह गर्जन करते शास्त्र और शास्त्रातीत विषयोंका अुपदेश देने लगे--"अिस अबोध बालाको कुरूपा करनेको तुम कैसे तैयार हो गअे हो? किसीको क्या जबर्दस्ती वैराग्य दिलाया जा सकता है? जो वैराग्य मनमें नहीं है, वह क्या सिरके केश मुँड़ा देनेसे पैदा हो सकता है?"

पंडित दीनानाथका मन वास्तवमें शिरोमुण्डन करानेको नहीं मानता था, लेकिन समाजके डरसे ही वे तैयार हो गअे थे। अिसलिअे वह स्वामीजीसे क्षमा माँगने लगे--"स्वामीजी, क्षमा कर दीजिअे। जबतक मेरी पुत्री स्वयं योगिनका वेष धारण करनेकी अिच्छा प्रकट नहीं करेगी, तबतक मैं अुसके केशोंको नहीं निकलवाअूँगा; लेकिन आप जैसे ऋषियोंके अुपदेशामृत पाकर हमारा परिवार धन्य हो जाअेगा।"

[३]

आनन्दजीका हृदय तूफानके समयका महासमुद्र हो गया है। क्या विश्वामित्रका तपोभंग नहीं हुआ था? वह तात्कालिक मात्र था। अुसका अंत अुस सुन्दर कांता परिष्वंगसे ही हुआ था। वह क्या महापाप नहीं है? तो क्या अपने कर्तव्यकी च्युति हुअी? पलभर के लिअे अुस युवतीका सुन्दर वदन अुनके हृदय-पटल परसे विलग नहीं होता। अुस दिव्य सुन्दरीने जब अुनका स्पर्श किया, तो अुनकी देहमें जो पुलक प्रकट हुअे, जो आनन्द हुआ, वह क्या समाधिसे प्राप्त आनन्द-से अुत्कृष्ट आनन्द है अथवा तत्समान?

अपन पापका कोअी निराकरण नहीं है? अपने अिस अधःपतनका अंत कहाँ होगा?

आनन्दजीने कितने ही देशोंका अिस अवस्थामें भ्रमण किया था! जहाँ कहीं गअे, सबने सम्मान पुरस्सर बड़ा आतिथ्य सत्कार किया। स्वामीजीके मुँहपर जो मोहकी हिलोरें अुठ रही थीं, अुन्हें विधवा स्त्रियोंने दिव्य पारलौकिक कांति समझा।

अिस बीच अितने ही तीर्थ व पुण्य स्थानोंका भ्रमण किया अुन्होंने। कहाँ-कहाँ गअे, अुन्हें स्वयं नहीं मालूम। यह परिव्राजकता थी अथवा अुस भामिनीमें आसक्तिपूर्ण परवशता थी, बताया नहीं जा सकता। घूम-घूमकर नेत्र खोलकर देखा तो वह काश्मीर देश ही है। श्रीनगरकी गलीमें अेक भवनके सामने अुन्होंने अपनेको खड़ा पाया है।

"स्वामीजी, प्रणाम!" अुस काश्मीर पंडितका साष्टांग प्रणामका दृश्य!

स्वामीजीको घरके अन्दर ले जाया गया। आतिथ्य सेवा हुअी। अब आनन्दजी काश्मीरी पंडित दीनानाथके गृह-गुरु हैं। स्वामीजीके हृदयकी जड़को हिलानेवाली वह बाला अुनकी परिचर्या कर रही है।

जिस दिन सन्यासी आनन्दस्वामीजीने अुस युवतीकी रक्षा की थी, तबसे वह अुस बालाके साक्षात् अीश्वरा-वतार बन गअे। हिमालयके धवल शृंगोंपर नृत्य करनेवाले नटेश्वर ही मानों अुस बालाके लिअे वे बालसन्यासी बने।

सदा स्वामीजीकी सेवा करनेसे अुस बालाका जन्म धन्य हो गया!

जब अुनकी गोदमें वह पड़ी थी, अुस समय अुसका शरीर आनन्दसे परवश हो गया था, अुनके मुख-मण्डल-परका मंदहास अैसा प्रतीत होता था, मानों हिम शिखरपर ज्योत्स्ना छिटकी हुअी हो। क्या मनुष्य रूप धरे वह भगवान तो नहीं हैं! प्रतिदिन अुनकी सेवा करनेसे ही तृप्ति होगी। अुनके पैर दाबने होंगे। वे भी अुसे मुक्ति-मार्गका ज्ञान कराते सिरपर हाथ रख आशीर्वाद देंगे।....

अिस तरहके विचारोंमें डूबी अुस काश्मीरी बालाको "स्वामीजी पधारे हैं"--अपने पिताके ये शब्द सुनाअी दिअे। वह कँप गअी। नेत्रोंमें आनन्दाश्रु भर आअे। सारा शरीर अतिशय आनन्दके मारे हल्का हो गया। स्वामीजीने अुनकी कामना सुनी है। अुनका तप व्यर्थ नहीं गया है। अुनके गुरु स्वयं अुन्हें खोजते हुअे नहीं आअे हैं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामीजी घरमें आअे। पैरोंपर गिर पड़ी। पाद-धूलि सिरपर चढ़ा लअे।

अुस नगरमें आबाल वृद्ध स्वामीजीकी परिचर्या कर रहे हैं। फल, दूध, मिठाअी आदि पहुँचा रहे हैं। स्वामीजीको पल भरके लिअे भी अवकाश नहीं है। लोग सदा अुन्हें घेरे रहते हैं।

स्वामीजीने संसारकी असारता, मनकी दुर्बलता, कर्म, ज्ञान आदिकी अुत्कृष्टताका निरूपण किया। सैकड़ोंकी संख्यामें अुनके भक्त बैठे थे। स्वामीजी अुन्हें अुपदेश दे रहे थे।

रातोंमें स्वामीजीकी परिचर्या निरुपमा ही करती रही। बिस्तरपर दुप्पट्टे और शाल बिछे थे। जपके लिअे कृष्ण-मृगकी छाल वगैरह। स्वामीके कपड़े धोना, फलोंके छिलके निकालना, दूध गरम करना, पैर दबाना, शरीर दबाना अित्यादि निरुपमाके काम थे। अिससे दोनोंको आनन्द प्राप्त होता था। भक्तिके साथ परिचर्यामें लीन पुत्रीको देख माता-पिताको संतोष होता। वैराग्य पथमें चलती वह समस्त दुखोंको भूल जाअेगी न!

अितने वर्षोंकी तपश्चर्याका बल संभवतः और भी हो। वह बाला अुनके पास रहकर परिचर्या करती रहती तो मोहको रोक नहीं पाती। अुसके साथ कामकी कल्पना मात्रसे स्वामीजी डरते थे। तो भी अुनका मन विवश हो पतवार-च्युत नावकी तरह समुद्रमें कूदनेको तैयार था।

स्वामीजी किसी-न-किसी बहाने अुस युवतीका स्पर्श करते थे। अुसके केश सँवारते और आध्यात्मिक रहस्योंका बोध कराते समय अुसे बीच-बीचमें हृदयसे लगाते।

स्वामीजीपर अुसका मोह नहीं, स्वामीजी ही अुसके देवता हैं, सर्वस्व हैं। स्वामीजीकी आज्ञा हो तो वह अुन्हें अपना देह तक अर्पण कर सकती है, अपने पिताके हृदयपर कटार भोंक सकती है और झेलम नदीमें भी कूदकर प्राण त्याग सकती है। वह अपने सर्वस्वका त्याग कर सकती है। परन्तु स्वामीजीको छोड़ क्षण-भर भी वह नहीं रह सकती।

अेक दिन स्वामीजीने पूछा—"बेटी! मेरी परिचर्या क्यों करती हो?"

"अपने देवताकी परिचर्या करना क्या आश्चर्यकी बात है?"

"सब अपने लिअे आप ही देवता हैं। मेरा महत्व ही क्या?"

"अिस रहस्यको समझनेके अुपरान्त सब अपने लिअे आप ही देवता हो सकते हैं। तबतक गुरु ही देवता है।"

"लेकिन समस्त प्रकारकी अुत्कृष्टताओंसे पूर्ण व्यक्ति ही गुरु कहलाने योग्य है, न कि मेरे जैसे...."

"पापका शमन हो। अैसा न कहिअे। आप स्वयं भगवानके ही अवतार हैं।"

[४]

आनन्दस्वामीकी सारी तपस्या नष्ट हो गअी।

किसी अेक मुहूर्तमें आनन्दजी अपने कामको रोक नहीं सके। निरुपमा अुनके आलिंगन की बलि पड़ गअी।

वह संधान मुहूर्त पवित्र था, या पाप-पूर्ण-था? अुसी रात्रिको अुन्होंने लज्जासे सिर झुकाकर, भयकंपित हो हृदयमें पश्चात्तापने दावानलका रूप धारण किया और वे घर छोड़कर भाग खड़े हुअे।

निरुपमाने अपने जन्मको धन्य माना। वह अैसी तेजस्विनी बनी, मानों अुसे भगवानके दर्शन हुअे हों। अुसके तेजको कोअी नहीं पा सकता था।

प्रातःकालके होते ही पिताने पूछा—"बेटी, स्वामीजी कहाँ?"

निरुपमा—"तपस्या करने गअे हैं।"

माता—"कब गअे हैं?"

निरुपमा—"बहुत ही सबेरे"

पिता—"बेटी तेरा मुख-मण्डल प्रज्वलित हो रहा है! क्या स्वामीजीने तुझे अुपदेश दिया है? बड़े-बड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋषि-मुनियोंकी तपश्चर्यासे भी प्राप्त न होनेवाला महाभाग्य तुझे अपने पूर्वजन्म-सुकृतके कारण प्राप्त हुआ है।"

तेज़ीके साथ पीछा करनेवाले भयंकर शेरकी पकड़मेंसे छूटकर भागनेवाले हिरणकी तरह आनन्दजी हिमालय-पहाड़ोंमें भाग गअे। सारा संसार अुन्हें अन्धकारमय प्रतीत हुआ और अैसा मालूम होता था, मानों हिमालयका शिखर टूटकर अुसके अूपर आ गिरा हो।

शुभ्र हिमालय पर्वत-पंक्तिको देख मलिन अेवं सड़े-गले अपने जीवनका स्मरण किया! अुन्होंने सन्यास ही धारण क्यों किया? तीव्रताके साथ धड़कनेवाले हृदयके आवेगको रोक नहीं सके। तेजीसे अुन महान पर्वत-पंक्तियोंमें दौड़ गअे। अुस पर्वतकी घाटीमें वे कितनी दूरीपर जा गिरे हैं, पता नहीं!

वहाँ बहनेवाले झरनोंकी ध्वनी सुनाअी दे रही थी। वृक्ष और पत्थर भी अुनके साथ बहते आ रहे थे। और अैसा लगता था, अेक मिनटमें सिर फूटकर टुकड़े-टुकड़े हो जाअेगा फिर अुनका स्वरूप ही कहीं दिखाअी नहीं देगा।

शिवोहम्! शिवोहम्!!

आनन्दस्वामीजी अुस पतनमें बेहोश हो गअे।

निरुपमा दिन प्रतिदिन महातेजस्विनी होती जा रही है। अुसके मुख-मण्डलकी कान्तिको कोअी भी देख नहीं पा रहा है।

वह शीघ्र ही विश्वको अेक शिशुको प्रदान करने जा रही है। घरके लोगोंको मालूम हुआ। अुसकी माता सर पीटने लगी—"मेरी बेटी; तुमने घरको ही डुबाया! कअी पीढ़ियोंतक हमारे परिवारोंको मुक्तिसे दूर कर दिया। मुसकुराती क्यों हो? क्या वह दुष्ट सन्यासी ही है न?"

माताका दुख अुसकी समझमें नहीं आया। अुसने अपराध ही क्या किया है? केवल स्वामी द्वारा अुपदेशित मंत्रका मठन मात्र किया है। अुस दिन वह अपनी बेटीको देख नहीं सकी।

अेक सप्ताहमें यह समाचार पंडित दीनानाथको भी मालूम हुआ। अुनके क्रोधकी सीमा न रही। वह सन्यासी कैसा दुष्ट था। अुसके सिरको फोड़कर हजारों टुकड़े करना होगा। हे राम!! अश्रुधारा बहाते हुअे पंडित दीनानाथ रोने लगे। भगवान! कैसी विपत्ति मेरे सामने ला खडी कर दी? पवित्र परिवारपर अैसा कलंक?

पुनः क्रोधसे पागल हो अुठे। दुष्ट भ्रष्ट लड़की! अुस सन्यासीके जालमें फँस गअी। स्त्री यदि सच्चरित्रा हो तो पुरुष कर ही क्या सकता है! अुसी दिन अिसका शिरोमुँडन करा दिया होता तो अच्छा था। अुस दुष्ट सन्यासीने वेदान्तका व्याख्यान देकर रोक दिया। अिस विश्वमें कैसा पाप भरा है?

अब अुनका कर्तव्य क्या है? अिस दुष्टाको झेलममें डाला जाअे या विष दिया जाअे तो...? अकेली सन्तान है!! बड़ी प्रतीक्षाके बाद पैदा हुअी है। अपने हाथोंसे अुसका गला कैसे घोंटा जाअे?... भगवान!

बेटीके पास पहुँचे। अुसके प्रफुल्ल वदनको देख काँप गअे। अिस बालाके मुख-मण्डलमें अुन्हें काशीकी अन्नपूर्णाके दर्शन हुअे। बेटी, तुमने यह कर्म किया? अुनकी पत्नीने शायद गलत समझा हो?

"बेटी क्या कर रही हो?"

"स्वामी द्वारा अुपदेशित मंत्रका पारायण कर रही हूँ।"

अुस दुष्टने कैसा व्यर्थ मंत्र दिया होगा!

"स्वामीजी तो स्वयं भगवानके अवतार हैं।"

"नहीं, हमारे परिवारको ही अुसने नरक-कूपमें ढकेल दिया है। तुम समझती ही नहीं।"

आपने अिसके पूर्व जो कहानियाँ सुनाअीं, अुनमें व्यास महर्षिने धृतराष्ट्र और पांडुको कैसे प्रदान किया था, पिताजी?

"म! म म...प!"

"जन्म मन है! आत्मा! परम तेज सर्वस्व व्याप्त रहता है। पाप और पुण्यका आरोपण मन ही करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"..... ." सिर झुका खड़े रहते हैं।

दूसरे दिन सारा काश्मीरी ब्राह्मण परिवार काशी-यात्राके लिअे निकल पड़ा। वहाँसे रामेश्वरम् जाते रास्तेमें मदुरा, श्रीरंगम, काँचीपुरम्, तिरुपति, कालहस्ती अित्यादि तीर्थोंका सेवन कर कालीघाट (कलकत्ता) पहुँचे।

अेक दिन शुभ मुहूर्तमें निरुपमाने अेक पुत्र-रत्न-को जन्म दिया। वंश-प्रतिष्ठाको दूषित करनेके लिअे पैदा हुअे अुस मलिन अेवं रक्त पिण्डको हुगली नदीमें फेंक देनेका पंडितजीने निश्चय किया। दूसरे दिन पण्डितजीने कमरेमें प्रवेशकर देखा—बालकको बगलमें लिअे निरुपमा सो रही है। वह बालक महान तेजसे प्रकाशमान है।

किसी अशरीरवाणीने गम्भीर स्वरसे अुनके कानों-में शब्द गुँजा दिअे—"पागल ब्राह्मण", तुम्हारे कोअी सन्तान नहीं है। भगवानने अिस बालकको तुम्हें प्रदान किया है।" पंडितजी चौंक पड़े।

लोग क्या कहेंगे? समाजमें बदनामी होगी। लोगोंको अपना मुँह कैसे दिखाया जाअे? तो कोमल फल जैसे अिस शिशुका अन्त करना है? यह तो अुनसे न होगा! वह कसाअी नहीं।

किसीको पालनेके वास्ते दिया जाअे तो?

कौन लेगा? अुन्हें ही पालना होगा? कैसे? किसीके बच्चेको पालने लाअे हैं, कहें, तो लोग क्या कहेंगे? अुन्हें समझाया जा सकता है, यह तो अनाथ बालक है!!

* * *

स्वामीजीको जब होश आया तो अपनेको अुस घाटीकी झाड़ियोंमें लटकते पाया। अुस झाड़ीने अुनके प्राण बचाअे। सारा शरीर दर्द कर रहा है। सिर फटा जा रहा है। वह हिल-डुल नहीं सकते हैं। झाड़ियोंकी शाखाओंने अुन्हें झुलाया। नीचे गहराअीमें बहनेवाली नदी संगीतका गान करते अुनकी पीड़ाको हर रही है।

बड़े प्रयत्नके अुपरान्त झाड़ीसे बाहर आअे। परन्तु अूपर भी नहीं चढ़ सकते और नीचे भी नहीं जा सकते। कारण? क्या भगवानने अुनको कैदमें तो नहीं डाल दिया है? कुछ भी हो, अुन्हें डर ही क्या है? अन्त हो जाअे तो और भी अुत्तम है। पद्मासन लगाकर घोर तपस्या की।

[६]

श्रीनगरमें काश्मीरी पंडित दीनानाथका पालित शिशु अुनके महलमें बालकृष्णकी भाँति बढ़ रहा है। निरुपमादेवी विगतकेश योगिनी हो गअी है। बन्धु-बान्धव दीनानाथजीको कलकत्तेमें प्राप्त ब्राह्मण बालक-को देख आश्चर्य चकित हो रहे हैं। कुछ लोगोंको बालकके रूपको देख, संदेह हुआ, परन्तु दिव्य स्वरूप तपस्विनीकी भाँति दिखाअी देनेवाली निरुपमादेवीको देख अुन्हें डर हुआ और दीनानाथ पंडितके कथनपर सबने विश्वास किया।

निरुपमादेवी तपस्यामें लीन हो गअी हैं। स्वामीजीका अुपदेशित वह मंत्र ही अुसका परममार्ग है। अुसे अपने पुत्रपर ममता नहीं। दुपहरके समय पास-पड़ोसकी औरतें पालकीसे, नावसे और कुछ पैदल आती और निरुपमादेवी द्वारा भगवद्गीताके रहस्योंको सुनकर फूल अुठतीं।

कुछ समयके अुपरान्त आनन्दस्वामीजी हिमालयसे अुतर आअे और काशीमें रहने लगे। सिरमें जटाजूट लम्बी भव्य दाढ़ी और मूँछें बढ़ी हुअी हैं। वस्त्र फटे हुअे हैं। सीधे जाकर आनन्दजी अपने गुरु यतीश्वरा-नन्दजीके पैरोंपर पड़े। वह महानुभाव मुस्कुराअे और आशीर्वाद दिया—"वत्स! तुम्हें जो अनुभव प्राप्त हुआ वह परा शक्तिका चिद्विलास है। गिरकर अुठे हो। पापी जगत्को आँखें भरकर देख लिया। प्रारब्ध विच्छिन्न हो गया है। हिमालयका गौरीशंकर शिखर तुम्हारा साधना-पीठ होगा।"

दो मासके अुपरान्त अेक दिन प्रातःकाल पं० दीनानाथ जप कर रहे थे। अुस समय आनन्दजी आअे और अुनके सामने खड़े हो गअे। पण्डितजीने आँखें खोलकर देखा। पहले पहचान नहीं पाअे। कैलास पर्वतपर विहार करनेवाले देवताओंमेंसे कोअी अेक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवता समझा। आँखें मलकर देखा और कंपित कंठसे मत्रोच्चारण प्रारम्भ किया।

आनन्दजीने पूछा--"पण्डितजी, कुशल हैं ?"

दीनानाथजीने अुस स्वरको पलभरमें ही पहचान लिया। "स्वा.....स्वा.....मी.....जी....."

"हाँ, हिमालयसे निकल काशीमें गुरुजीके दर्शन किअे और पुनः हिमालयमें जानेके पूर्व आपके दर्शन करने यहाँ चला आया हूँ।"

पहले पंडितजीको आश्चर्य हुआ, अब क्रोधने अुस स्थानको लिया। गरज कर पूछा--"मेरी पुत्रीके लिअे तो नहीं आअे ?"

"पंडितजी ! अीश्वर हम सबकी रक्षा करें। मैंने महान पाप किया और अुसका फल भी भोगा।"

"महा पाप किया ? भोगा ? तुमने अुसका फल ही कहाँ भोगा ? तुम सन्यासी हो ? छीः दुष्ट, तुम आदमी हो ? मेरे सामनेसे हट जाओ, वरना तुम्हारा सर फोड़ दूँगा।"

स्वामीजी मुस्कराते रहे। फिर कहा--"पंडितजी, मैंने तुम्हारे प्रति जो घोर अपराध किया है, अुसके लिअे किसी भी प्रकारकी सजा तुम दे सकते हो ! तुम अपना वांछित दण्ड देकर मुझे पापसे मुक्त करो।"

"छीः, दुष्ट, मेरे घरसे चले जाओ। तुम्हारे सरको टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा।" महा रौद्र रूप धारण कर बगलमें पड़ी लाठीको लिया और स्वामीजीपर कूद पड़े।

स्वामीजीने सर झुकाया।

पंडित दीनानाथके पैरोंको मानों किसीने पकड़ लिया। सर झुकाकर देखा कि अुनका दौहित्र, पालित पुत्र, ठुमक-ठुमक आया और "दादा" कहते हाथ फैलाया।

पतिके क्रोधपूर्ण वचनोंको सुन रसोअीसे अुनकी पत्नी वहाँ आअी और निरुपमादेवी अपनी तपस्या समाप्तकर पिताजीके पास अुपस्थित हुअी।

स्वामीजी आँखें बन्दकर सर झुकाअे वहींपर खड़े रहे। वहीं समाधिमें तन्मय हो गअे। अुनके मुखमण्डलसे सहस्र ज्योतियाँ फूट रही थीं। वहाँपर खड़े समस्त लोगोंको कोअी दिव्य संगीतकी श्रुति सुनाअी दी।

अपने गुरुदेव, अपने स्वामीको देख निरुपमाका शरीर पुलकित हो अुठा और अपनेको भूलकर वह सीधे जाकर स्वामीजीके पैरोंपर पड़ी। निरुपमाकी माताने घूंघट सँवारे सर झुकाकर स्वामीजीको नमस्कार किया।

स्वामीजीके शरीरसे कोअी ज्योति निकलकर चतुर्दिक फैल गअी।

पं. दीनानाथके हाथोंसे लाठी छूटकर नीचे गिर पड़ी। अुनके पैर लड़खड़ाने लगे। "प्रभु, क्षमा कीजिअे" कहते वह जमीनपर गिर पड़े और मूर्च्छित हो गअे। आनन्द स्वामीजी अुस महान् आनन्द समाधिमें खड़े ही रह गअे।

हिमाच्छादित शृंग, अुन्नत पर्वत-पंक्तियाँ, नन्दन-वनकी समता करनेवाली घाटियाँ, सुगन्धिको फैलानेवाली चित्र-विचित्र पुष्प-लताअें, वृक्ष-समूह, निर्मल नीलाकाश, विभिन्न प्रकारके रंग.....

आनन्दस्वामी अुस देव-पर्वतमें घुसते जा रहे हैं। हेमन्तका वह पवित्र दिन परम निर्मल होकर प्रज्वलित हो रहा है।

"परमेश्वर स्वरूपको प्राप्त यह महा" पर्वत-पंक्ति जगतकी तपोभूमि है। समस्त धर्मावलम्बियोंको यहाँपर मुमुक्षु (मुक्ति पानेके अिच्छुक) होना पड़ेगा। हे पर्वतेश्वर ! तेरी किरण विश्वके हृदयको अपनी अनुपम कान्तिसे पूर्ण कर पुलकित कर रही है। "शिवोहम्, शिवोहम्" कहते आनन्दस्वामीजी अुन अगम्य पर्वत-पंक्तियोंमें घुसते जा रहे हैं।

शिवोहम् ! शिवोहम् !! शिवोहम् !!! की ध्वनि अुन पर्वत-मालाओंको प्रतिध्वनित करने लगीं !

(अनुवादकः—श्री बालशौरि रेड्डी, सा. र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमिळ

भारती वणक्कम्

वेल्ह भारती, वेल्ह अन्नै
पोन्नुम् कनियुम् पुवुम् अणिन्दोम् !
अिलंगैयाम् तामरै तिरूवडि वरुडुम्,
ओलित्तिडुम नुरैक् कडलिन नीर,
पोरु अेळ् निरैन्द तुदि पल पाडि
तूय निन् अडि अिणै कळुवुम् ॥
मरम्, पुल, वनम् कोडि अुडैयाम्,
मेहलैयिल नीर गंगै तरुम्
वेळिळ् धारै कळुत्तिल आरम् ॥
वेण् पनिये मणि मकुटम्;
ओंकारम् अुयिरनादम्;
ओलि निरै विरि पल् दिशैमुखम्;
पल-पल ओलि मिळ्रिडुवोय् ॥

(श्री निरालाजीकी 'भारती-वन्दना' का तमिळ रूपान्तरकार श्री सोमसुन्दरम्)

हिन्दी

श्री 'निराला' की भारती-वन्दना

भारति, जय विजय करे !
कनक-शस्य-कमल धरे !
लंका पदतल-शतदल
गर्जितोर्मि सागर-जल,
धोता शुचि चरण-युगल
स्तव कर बहु-अर्थ-भरे !
तरु तृण वन लता वसन
अंचलमें खचित सुमन,
गंगा ज्योतिर्जल—कण
धवल-धार हार गले ।
मुकुट शुभ्र हिम-तुषार,
प्राण प्रणव ओंकार,
ध्वनित दिशाअें अुदार,
शतमुख-शतरव-मुखरे !

गुजराती

[श्री सुन्दरम्जी आजकल महायोगी स्व० अरविन्दके आश्रममें पांडिचेरीमें हैं जो आधुनिक गुजराती कविताके प्रतिनिधि कवियोंमें लोकप्रिय प्रौढ़ कवि हैं। अिनकी कविताओंने गुजरातके गौरवको बढ़ाया है। गुजरातका लोक-हृदय सुन्दरम्का सम्मान करता है। हमसे अेक भारी भूल हुअी गत अक्टूबरके अंकमें। 'देवनागर' स्तंभके लिअे सुन्दरम्जीकी अेक सुन्दर कविता हमारे पास बन्धुवर श्री गौरीशंकर जोशीने अनुवाद सहित भेजी थी जो अिन स्तंभोंमें (देवनागरमें) मूल सहित प्रकाशित होनी चाहिअे थी। किन्तु ?

क्षमा प्रार्थना सहित हम अुस मूल गुजराती कविताको नीचे दे रहे हैं। -सं०]

हे चकवा !

हे चकवा, मत रोय, तुंथी हुं दुखियो घणो,
पण आंसु आंख न जोय, मर फाटे आखुं हृदय.

रात प्रहरनी चार, केवल आडी ताहरे,
जुग-जुगनी लंघार हुंने पियं बिच, बेंधवा !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुवे न व्हाणाँ वाय, चकवा, सादी वात अे,
सूर अुगे निश जाय, अे कळ हाथ कशे बने ?
अेकळ आवे हाथ, ते तट आ तट जो मटे,
के जो आवे बाथ सूरज, रेण नहीं पडे.
सूरज सहे न रेण, होय न तट आकाशने,
चकवा, अुरनां व्हेण, मळतां दधि, व्हेवुँ मटे.
व्हेण नहीं, नहीं पूर, ओसरवुं वधवुं नहीं,
जल सागर चकचूर, केवळ ल्हेर छळी रही।

—श्री सुन्दरम्

संत तुकारामके अभंग

सिद्धवाणी

मराठी

[१]

निन्दी कोणी मारी। वन्दी कोणी पूजा करी ॥
मज हेंही तेंही नाहीं। वेगळा दोहोंपासूनी ॥
देहभोग भोगें घडे। जें जें जोडे तें तें बरे ॥
अवघें पावे नारायणीं। जनार्दनीं तुकयाचें ॥

[२]

मुंगी आणि राव। आम्हां सारखाची जीव ॥
गेला मोह आणि आशा। कळिकाळाचा हा फांसा ॥
सोनें आणि माती। आम्हां समान हें चित्तीं ॥
तुका म्हणे आलें। घरा वैकुंठ सगळें ॥

[३]

कें वाहावें जीवन। कें पलंगीं शयन ॥
जैसी जैसी वेळ पडे। तैसें तैसें होणें घडे ॥
कें भोज्य नानापरी। कें कोरड्या भाकरी ॥
कें बसावें वाहनीं। कें पायीं अन्हवाणी ॥
कें अुत्तम प्रावणें। कें वसनें तीं जीर्णें ॥
कें सकळ संपत्ती। कें भोगणें विपत्ती ॥
कें सज्जनाशीं संग। कें दुर्जनाशीं योग ॥
तुका म्हणे जाण। सुखदुःख तें समान ॥

हिन्दी

[१]

कोअी मेरी निन्दा करते हैं, कोअी मुझे मारते हैं, कोअी मुझे नमस्कार करते हैं, और कोअी मेरी पूजा करते हैं। किन्तु मेरा अिनमेंसे दोनों ही बातोंकी ओर ध्यान नहीं। मैं अिन दोनोंसे ही अलग हूँ। अपने पूर्व कर्मोंके अनुसार ही देहको भोग प्राप्त होते हैं। अिसलिअे प्राप्त भोगोंको अच्छा कहना चाहिअे। अिन सभी बातोंको तुकाराम भगवानके चरणोंमें समर्पित कर देता है।

[२]

मेरे विचारमें चींटी और राजा दोनोंके ही प्राण समान योग्यताके हैं। मुझे अब न तो किसी वस्तुसे मोह है, और न किसी बातकी वासना। मोह और वासना, ये कलि और कालके पाश हैं। मेरी दृष्टिमें सोना और मिट्टी दोनोंका ही मूल्य समान है; क्योंकि मेरे घर सारा वैकुण्ठ (स्वर्ग-सुख) अवतीर्ण हो चुका है।

[३]

किसी समय हम अपने जीवनोपयोगी सामानका बोझ स्वयं ढोते हैं, तो किसी समय पर्यंक-शय्यापर सोते हैं। हमारा आचरण प्रसंगानुरूप हुआ करता है। हम कभी पंच पक्वान्नोंका भोजन करते हैं, तो कभी सूखी रोटियाँ खाते हैं। कभी पालकीमें बैठकर जाते हैं, तो कभी नंगे पैरों पैदल। कभी हम अुत्तमोत्तम वस्त्र धारण करते हैं, तो कभी फटे चीथड़े; कभी सम्पन्न स्थितिमें रहते हैं, तो कभी विपत्तियोंका सामना करते हैं। अुसी प्रकार कभी हम सज्जनोंकी संगतमें होते हैं, तो कभी हमें दुर्जनोंसे भी सम्बन्ध रखना पड़ता है। हमारी दृष्टिमें भौतिक सुख और दुख समान ही हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४]

रिद्धिसिद्धि दासी कामधेनु घरीं ।
परि नाहीं भाकरी भक्षावया ॥
लोडें बालिस्ते पलंग सुपत्ती ।
परि नाहीं लंगोटी नेसावया ।
पुसाल तरी आम्हां वैकुंठींचा वास ।
परि नाहीं राह्यास ठाव कोठें ॥
तुका म्हणे आम्ही राजे त्रैलोक्याचे ।
परि नाहीं कोणाचे अुणें पुरें ॥

[४]

ऋद्धि-सिद्धि हमारी दासियाँ हैं और कामधेनु हमारे घरमें खड़ी है—अैसा मानकर चलनेकी हमारी मनःस्थिति रहती है; किन्तु वास्तवमें हमें खानेको सूखी रोटी तक नहीं मिल पाती । हम मानते तो यह हैं कि हमें गद्दी, तकिअे, पलंग आदिका अुपभोग प्राप्त हो रहा है; किन्तु वास्तवमें पहननेको लंगोटी तक नहीं मिल पाती । यदि कोअी हमसे हमारे निवास-स्थानका पता पूछे, तो हम अुसे वैकुण्ठ बतलाअेंगे; किन्तु सच पूछा जाअे, तो हमें रहनेके लिअे कोअी ठिकाना तक नहीं ! हम चाहे किसीको कुछ भी न दे सकें, किन्तु फिर भी हमें त्रैलोक्याधिपति होनेके सुखका अनुभव होता है ।

[५]

वृक्ष वल्ली आम्हां सोयरी वनचरें ।
पक्षी ही सुस्वरें आळविती ॥
येणें सुखें रूचे अेकांताचा वास ।
नाहीं गुण दोष अंगा येत ।
आकाश मंडप पृथिवी आसन ।
रमे तेथें मन क्रीडा करी ॥
कथा कमंडलू देह अुपचारा ।
जाणवितो वारा अवसरु ॥
हरिकथा भोजन परवडी विस्तार ।
करोनि प्रकार सेवूं रुची ॥
तुका म्हणे होय मनासी संवाद ।
आपुलाचि वाद आपणांसि ॥

[५]

वृक्ष-वल्लरियाँ अेवं वनचर पशु, हमें सर्वोत्तम मित्र प्रतीत होते हैं । विहग-वृन्द सुमधुर स्वरसे हमारा मनोरंजन करते हैं । निर्जनके अिसी सुखके कारण हमें अेकान्त-वास रुचिकर प्रतीत होता है; साथ ही वहाँपर जन-समुदाय अेवं विषय-वासनाओंका जमघट न होनेसे, हम सभी प्रकारके दोषोंसे अलिप्त बने रह पाते हैं । निर्जन वनमें आकाशका चंदोवा होता है और पृथ्वीका बिछौना; जहाँ मन रम जाअे वहींपर आनन्द-लाभ प्राप्त करते बनता है । वहाँपर शरीरकी रक्षाके हेतु कथा-कमण्डलु रहते हैं और वायुदेव समयकी सूचना दिया करते हैं । हरि-कथा ही हमारा भोजन है और अपने चातुर्यसे अुस विस्तारपूर्ण कथाके विविध प्रकारोंका आयोजन कर, हम अुसका आस्वाद ग्रहण करते हैं । वहाँपर अपने ही मनसे संवाद हुआ करता है, और वादका विषय भी हम स्वयं ही होते हैं ।

[अनुवादिका :– सौ. शारदा वझे, बी. अे. विशारद]

भूल-सुधार

गत नवम्बर मासके अंकमें 'राष्ट्रभारती'के अिन स्तम्भोंके सम्पादकसे कुछ असावधानी हो गअी । श्री 'गिरिराज'जी का प्रसिद्ध संस्कृत आर्याका हिन्दी रूपान्तर पृष्ठ ६९८ वें पर छपा था । शीर्षक है— 'नीर-क्षीर विवेक' संस्कृत है—

नीर क्षीर विवेके हंसालस्यंत्मेव कुरुषेचेत् ।
विश्वमिन्तधुनाऽन्यः कुलव्रतं पालयिष्यतिकः ॥

हिन्दीमें

पय जल बिलगानेमें यदि आलस तू मराल कर डालेगा ।
तो कह अिस जगमें तब कुलव्रत और कौन पालेगा ?

और अिसको अब संस्कृतके अनुसार यों ठीक पढ़ें– अिसमें अब वही दृढ़ता आ गअी है :—

पय जल बिलगानेमें, तू ही आलस मराल कर डालेगा ।
तब कठिन कुलव्रतको, अिस जगमें और कौन पालेगा ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

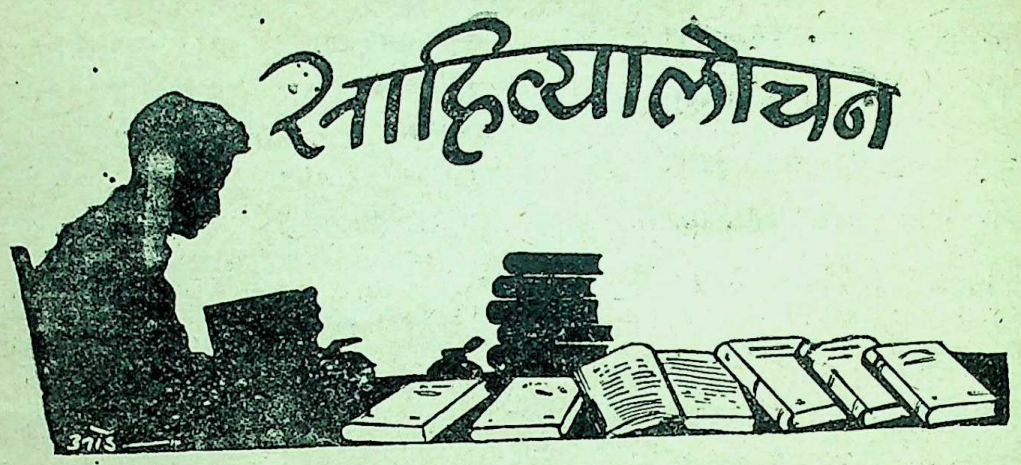

(सूचना–'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअे।)

"नया समाज" हिन्दीके प्रसिद्ध नाटककार अुदयशंकर भट्टका नया नाटक है। लेखकने "नया समाज" की भूमिकामें आधुनिक नाटकोंकी दो प्रमुख आवश्यकताओंकी ओर संकेत कर दिया है। वे आवश्यकताअें हैं नअे विचारोंकी वैज्ञानिक दृष्टिसे अुपस्थिति और रंगमंचका पुनर्निर्माण। हमारा आजका युग कअी दृष्टियोंसे कलके युगसे भिन्न है। जीवनके मूल्य बदल गअे हैं, पुरानी मान्यताअें ध्वस्त हो गअी हैं, और नअी मान्यताओंने अुनका स्थान ले लिया है, संस्कृति और समाज सम्बन्धी दृष्टिकोणोंमें परिवर्तन हो गया है, प्राचीन रूढ़ियाँ टूट रही हैं। यह परिवर्तन अनायास ही नहीं हुआ और न केवल भारतमें ही हुआ। यूरोपमें औद्योगिक क्रान्ति और वैज्ञानिक प्रगतिके साथ ये परिवर्तन क्रमिक रूपसे होते रहे हैं। परन्तु हमें अिन भौतिक सांस्कृतिक और वैचारिक परिवर्तनोंको अेकाअेक ही अपने अनुकूल बनाना पड़ा है। कला और जीवनका निकटका सम्बन्ध है। मानव जीवनमें अुठनेवाली आँधी हमारे वैचारिक धरातलमें छा जाती है। अिसलिअे आजका साहित्य पुराने मूल्योंको छोड़ नअे मूल्य स्वीकार कर लेना चाहता है। नाटकोंके सम्बन्धमें भी आजके नाटककारने अिस महान् सत्यको स्वीकार कर लिया है कि रंगमंचके बिना नाटकोंकी चर्चा अुतनी ही व्यर्थ है जितनी बिना धरातलके हवेलीकी। अिसलिअे वह "प्रसाद" की तरह अहम्मन्यता भरा आग्रह नहीं करना चाहता कि रंगमंचको नाटकोंके अुपयुक्त बनाया जाअे क्योंकि अिस तरह तो अिस "चक्र दोष" से मुक्ति कभी नहीं होगी। आज नाटककार रंगमंचके अुपयुक्त नाटक लिखनेमें अपने ही गौरव और श्रीकी वृद्धि समझता है। यही अुचित और संगत दृष्टिकोण है। प्रसिद्ध अुपन्यासकार और नाटककार सोमर सेट मा' मने कहा है- A play is the collaberation between the author; the actor, the audience and I suppose one must add now, the director.

प्रस्तुत नाटक "नया समाज" अिन दोनों दृष्टियोंसे सफल है। नाटक समस्याप्रधान है। ये समस्याअें वैयक्तिक भी हैं और सामाजिक भी। समाजवादी लेखक अपनी सामाजिक अीमानदारीकी रक्षामें जो चरित्र गढ़ते हैं वे व्यक्ति नहीं वरन् साँचेमें ढाले गअे पुतले जान पड़ते हैं...परन्तु सफलता तो अिसमें है कि व्यक्तिकी अपनी विशेषताअें भी अुभरें और समाजके परिपार्श्वमें रखकर अुसे देखा भी जाअे। "नया समाज" अेक ह्रासोन्मुखी जमींदार परिवारको लेकर चलता है। मनोहरसिंह बूढ़ा जमींदार है जो जमींदारीकी प्रथा समाप्त हो जानेपर भी अुसके अवशिष्ट मोहको कलेजेसे चिपकाअे जी रहा है...लगता है, यह मोह ही अुसे जीवित रखे है, यदि यह भ्रम अुसका अनायास टूट जाअे तो स्वप्न-छिन्न बूढ़ा शायद दो दिन भी जी न सके। अिसीलिअे अुसकी पुत्री कामना अुसके भ्रमको कायम रखनेका प्रयत्न करती रहती है। अेक सुन्दर मनोवैज्ञानिक और सजीव पात्र है यह मनोहरसिंह। अुसकी पुत्री कामना अध्ययनशीला,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तर्मुख, प्रतिभाशाली और न्यूअेसिस है। वह अेलेक्ट्रा काम्प्लेक्सकी शिकार है। फ्रायडके अेडीपस और अलेक्ट्रा काम्प्लेक्सेजपर आज लोगोंने अविश्वास प्रकट करना प्रारंभ कर दिया है परन्तु फिर भी अधिकांश लोग अिस बातको मानते हैं कि अुसकी अिस थ्योरीमें सत्यता है अवश्य। अिन काम्प्लेक्सेजका पता हमें अिसलिअे नहीं रहता क्योंकि हम नार्मल रहते हैं, न्यूअेसिस नहीं। ये दो पात्र ही हमारे विशेष आकर्षणके केन्द्र हैं। कामना अपने काम्प्लेक्सके कारण अेक विशेष आकृतिके मनुष्यको ही प्यार कर सकती है और अुसका मन जाकर अपने नौकर 'रूप' पर टिकता है। अुसका अुच्छृंखल भाअी चन्दू चंचल अीसाअीवाला रीटाके प्रति किंचित् अनुरक्त होकर और पाठ सीखकर यह जानता है कि अुसका नौकर रूप पुरुषके वेशमें सुन्दर नारी है और वह अुससे ब्याह करना चाहता है। मनोहरसिंह अपने विगत वैभवकी अफीम पीकर काल्पनिक दुनियामें रहनेकी बजाय कठोर सत्यको स्वीकार कर लेता है कि 'जीवन बदल रहा है, समाज बदल रहा है, अिन्कलाब आ रहा है, नअे युगमें न जमींदार रहेंगे और न सरमाअेदार, सबोंको जीवनके समान अधिकार हैं और सभी बराबर हैं।' अन्तिम अंक थोड़ा मेलोड्रामेटिक हो गया है. . . . रूपका रूपा बनना, अिस रहस्यका अुद्घाटन कि रूपा मनोहरसिंहकी ही अवैध सन्तान है जिसे मृत समझकर अुसने दफना दिया था, चन्दू और रूपाकी शादीका स्थगित होना, आदर्शवादी धीरू बाबूका समाजके कलंक रूपाको गलेका हार बनानेको तैयार हो जाना तथा मनोरमा और चन्दूका ब्याह अित्यादि प्रसंग अेकके बाद दूसरे तेजीसे आते हैं। गड़रिअेकी पालक पुत्री होकर भी रूपा विदुषियोंके समान बोलती और विचार करती है जो यथार्थवादी नाटकमें अस्वाभाविक-सा लगता है। परन्तु अितना अवश्य कहना पड़ेगा कि बावजूद अिस मेलोड्रामा और रूपाके किंचित अस्वाभाविक चित्रणके लेखकने "सत्यकी प्रतीति" हमें कराअी है। नाटक जीवन नहीं होता, जीवनकी अनुकृति ही होता है। अुसमें सत्यके स्थानपर अुसकी प्रतीतिकी महत्ता है। अिस प्रकार हम देखते हैं कि पुराने समाजकी ध्वस्त रूढ़ियोंकी लाशपर पैर रखकर नया समाज चैतन्य होता है।

नाटकमें पात्र गिने-चुने हैं, संकलनत्रयका निर्वाह सुन्दरतासे हुआ है और रंगमंच भी साधारणतया सुविधाजनक है। कथोपकथनकी भाषा सरल, प्रवाहयुक्त और सुबोध है। पात्रोंके द्वन्द्वोंको अुभारकर लेखकने अभिनेताओंके प्रतिभा प्रदर्शनके लिअे खुला मैदान छोड़ दिया है। हमारा विचार है कि अिस नाटकके द्वारा हिन्दीके अभिनयप्रिय व्यक्तियोंको सुन्दर समस्यामूलक कृति मिल गअी जिसके द्वारा दर्शकोंका मनोरंजन भी होगा और वे अपनी समस्याओंको भी अुसमें स्थित पाअेंगे। 'नया समाज' (नाटक), लेखक अुदयशंकर भट्ट, प्रकाशक राजकमल प्रकाशन फैज बाजार, दिल्ली। मूल्य १ रु. ८ आना।

— प्रमोद वर्मा अेम. अे.

आठ सेर चावल—लेखक, श्री के. संतानम्, प्रकाशक—रामनारायणलाल प्रकाशक तथा पुस्तक विक्रेता, अिलाहाबाद। पृष्ठ संख्या—१३९, मूल्य दो रुपया।

"आठ सेर चावल" तमिळकी बारह कहानियोंका हिन्दी रूपान्तर है। मूल लेखक हैं विन्ध्य प्रदेशके अुपराज्यपाल सन्तानम् और हिन्दीमें अनुवादक हैं महावीरप्रसाद अग्रवाल।

अिस कहानी-संग्रहके बारेमें संतानमजीने अपने प्राक्कथनमें कहा है—"सन् १९४० में जब मैं व्यक्तिगत सत्याग्रह-आन्दोलनके सिलसिलेमें जेलमें था मैंने अवकाशके क्षेत्रमें तमिलमें कहानियाँ लिखना आरम्भ किया।.....अुसके बाद कुछका अनुवाद बंगला और कन्नड़में निकला। अंग्रेजीमें अिनका रूपान्तर स्वतः मैंने किया .... मुझे हर्ष है कि मेरी कुछ कहानियोंका हिन्दी रूपान्तर अब पुस्तकाकार प्रकाशित हो रहा है।" संतानमजी आगे अपने प्राक्कथनमें लिखते हैं—'मैंने अपनी रचनाओंमें जानबूझकर प्रेमके कथानकोंको बचाया है। वास्तवमें कहानियाँ लिखनेमें मेरा अुद्देश्य यही दिखलाना रहा है कि प्रेमके अतिरिक्त अन्य विषयोंपर भी साहित्यिक कहानियाँ लिखी जा सकती हैं।' यह कथन श्री संतानमजीने सत्य कर दिखाया है। श्री संतानमजी भारतीय सभ्यता और संस्कृतिके अनन्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तम अुपासक हैं अतः वे नहीं चाहते कि कहानियोंमें युवक-युवतियोंका पाश्चात्य ढंगका स्वच्छंद प्रेम दिखलाकर अंतमें अुन्हें विवाह-सूत्रमें आबद्ध कर दिया जाअे। अुनको यह सब अस्वाभाविक दिखता है क्योंकि भारतीय सभ्यताके अनुसार प्रेमका विकास पाणिग्रहणके अुपरान्त आरम्भ होता है। अिस कहानी-संग्रहकी पहली कहानी "आठ सेर चावल" और "मातृभूमिकी सेवा" बड़ी आकर्षक हैं और हमारे बीते हुअे सामाजिक अेवं राजनीतिक जीवनके पतनका साफ चित्र अुपस्थित करती हैं। 'अग्निपरीक्षा' नामक कहानीमें त्यागमयी वनजात्रीका, अत्यन्त मनोवैज्ञानिक विश्लेषण है। 'चन्द्रमती' नामक कहानी अुद्भ्रान्त प्रेमका परिचय देती है। "सावित्री" नामक कहानी जहाँ अन्धविश्वासका विरोध करती है वहीं पुरानी रूढ़ियोंको मानकर आगे भी चलती है। अिस कहानीमें तमिल प्रथाओंका परिचय भी है। जब वह पहली बार पतिके यहाँ गअी तो अुसके साथ अुसके माता-पिता भी गअे अैसी प्रथा संभवतः देशके अन्य भागोंमें नहीं है। "भुतहा बरगद" नामक कहानी मनोरंजक है। "अिकलौता बेटा" की पृष्ठभूमिमें परतन्त्र भारतकी कहानी है। 'सन्यासी' कहानी भारतीय नारीको गौरवान्वित करती है। "कुमारीका स्वप्न", "जेल जीवन", "अपराधी वार्डर" और "वह तार" भी अच्छी आकर्षक कहानियाँ हैं।

श्री सन्तानम्को चरित्र चित्रणमें पूर्ण सफलता मिली है। स्थान-स्थानपर सुन्दर सूक्तियोंका परिचय दिया है। कहानियोंकी पृष्ठभूमि मद्रास प्रान्तकी है। अतः पात्रोंके नाम, स्थानोंके नाम आदि अुसी प्रान्तके लिअे गअे हैं। अिन तमिल कहानियोंका हिन्दी अनुवाद सुन्दर बन पड़ा है। अिस पुस्तकने हिन्दीके कहानी साहित्यकी अेक कमीको पूरा किया है।

धरतीपर अुतरो:— (काव्य-संग्रह),—पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'; प्रकाशक—विनोद पुस्तक मन्दिर हास्पिटल रोड, आगरा; पृष्ठ-संख्या—६०; मूल्य ढाअी रुपअे।

भूमिका स्वरूप 'अेक बात' में कविने पाँच बातों की ओर अिंगित किया है—

(१) अधिकांश रचनाअें स्वतन्त्रता प्राप्तिके पश्चात् देशकी जनताकी दयनीय अवस्थासे सम्बन्ध रखती हैं।

(२) मेरी मान्यता है कि आज कविताका अिससे बड़ा कोअी अुपयोग नहीं कि वह सार्वभौम क्रान्तिके लिअे वातावरण तैयार करे और जनताको अुसके वर्तमानकी परिस्थितियों तथा भविष्यकी संभावनाओंसे अवगत कराअे।

(३) अिन कविताओंमें कहीं-कहीं अैसा तीखापन आ गया है जो कटुताकी सीमाको स्पर्श करनेवाला जान पड़ता है। अपनोंके प्रति अैसी भावना कुछको खटक सकती है।

(४) मेरी सम्मतिमें आज सत्यकी अभिव्यक्ति जितने खुले रूपमें आवश्यक है अुतनी पहले कभी नहीं थी।

(५) अिन कविताओंके मूलमें सद्भावनाका अभाव नहीं मिलेगा, अिसका मैं पूरा-पूरा विश्वास दिलाता हूँ।

गुलाम भारतके स्मृति-चित्रोंपर स्वाधीन भारतके अनुभवोंका आलेखन सच्चा है। अीमानदारीसे कविने जो भोगा, अुसे लिखा है। अुसकी वाणीकी ओजस्विता प्रभावशाली है। राजनैतिक पूर्वाग्रहोंका प्रचार करनेकी वृत्ति अुसकी आड़में नहीं है।

रंगीन आवरण चित्र आकर्षक है। पुस्तकके नामके साथ आवरण चित्रकी संगति लगानेकी अपेक्षा वह आधार प्रथम कविताकी **"झोंपड़ियोंकी लपट नोगिनें बन डसतीं महलोंको"** पंक्तिमें खोजा जा सकता है।

कुल अिक्कीस फुटकर कविताओंमें 'धरतीपर अुतरो, पथभ्रष्ट, प्रेमचन्दके प्रति, नअे चीनके प्रतिनिधियोंसे, जब गुलाम था और त्रिशंकु' संग्रहकी प्रमुख रचनाअें हैं।

६० पृष्ठकी कीमत ढाअी रुपये जरूरतसे ज्यादा है। प्रूफकी भूलोंमें कहीं-कहीं कविकर्मकी भूल भी छिप बैठी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविकी व्यंजना श्लाघ्य है। हमें विश्वास है, पाठक अिसका स्वागत करेंगे।

—अनिलकुमार सा. र.

कहानीकी सराहना

गत सितम्बर-५५ की 'सप्तभारती' में हमने श्री नन्दकुमार पाठककी अेक कहानी "आदमीका टुकड़ा" प्रकाशित की थी। पाठकजीकी 'अवन्तिका, पाटल, कल्पना, धर्मयुग' आदि अुच्च पत्र-पत्रिकाओंमें भी आधुनिकतम कहानियाँ निकलती रहती हैं। पढ़नेवाले प्रशंसकोंकी कमी नहीं है। समय-समयपर अच्छे कद्रदाँ हिन्दी-सेवी साहित्यकारोंसे नाजुक-कलाम पाठकजीको अुनकी कहानियोंकी मुलामियतके लिअे खासी प्रशंसा मिलती है। 'आदमीका टुकड़ा' कहानीकी मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति अच्छी बन पड़ी है और अुसकी जिन मनीषियोंने जैसी श्लाघा की है, अुन्हींके शब्दोंमें पढ़ लीजिअे।

अिससे अुत्साह बढ़ता है, जिससे अूपर अुठते हुअे कहानीकारोंसे और भी सुन्दर कहानियाँ बन पड़ेंगी। अुनकी अभिव्यक्तिकी क्षमता बढ़ेगी।

(१) "आपके पास न शब्दोंकी कमी है और न अुन्हें कहनेके सलीकेकी। अब जब भी कहीं कुछ छपे, ध्यान आकर्षित कर दिया कीजिअेगा।"

—भदन्त आनन्द कौसल्यायन

(२) "कहानी ठीक है। अुसका ध्येय अुसके कलेवरमें और हल होता, अूपरसे दीखनेको बचता ही नहीं तो और अच्छा लगता।"

—जैनेन्द्रकुमार

(३) "व्यस्तताके बावजूद कहानी में पढ़ गया। कहानी मुझे बड़ी पसन्द आअी। बहुत अच्छी है।"

—अुपेन्द्रनाथ 'अश्क'

(४) "आपकी कहानी सचमुच मुझे पसन्द आअी। आपमें कहानी कलाकी प्रतिभा है और कहनेका ढंग भी। आगे भी आपकी जो कहानियाँ छपें मुझे सूचित करते रहिअेगा, मैं अुत्सुकतापूर्वक आपकी कहानियोंकी प्रतीक्षा करूँगा।"

—प्रो. रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'

(५) "सामाजिक अन्यायके प्रति अुत्कट असन्तोष आपकी रचनामें है। युवकोचित अुत्साह व न्यायके प्रति आग्रह यह आपके सद्गुण हैं। आजकी समाज-व्यवस्थामें किस प्रकार न केवल सबल दुर्बलको चूसते हैं, बल्कि दुर्बल भी दुर्बलसे स्वार्थकी सिद्धि करते हैं, यह आपने अच्छी तरह दिखाया है। पाठकके मनमें अन्यायके विरुद्ध रोष अुत्पन्न करनेमें अवश्य ही आपकी कहानी सहायक होगी।"

—अनन्तकुमार 'पाषाण'

(६) "मुझे सचमुच आपकी कहानियोंने आकृष्ट किया है। आपकी 'तूफान और खिड़की' को पढ़कर मैं सचमुच स्तब्ध सोचता रहा किसी भी नअे लेखकके लिअे कलमपर अितना संयम सम्भव है! सचमुच क्या गजबकी कहानी है वह! कैसी सुथरी शैली, कैसी कटी-छँटी कहानी!

'आदमीका टुकड़ा' कहानी मुझे बहुत ही पसन्द आअी, कम-से-कम 'आअिडिया' की दृष्टिसे वह बहुत 'ब्रिलिअेन्ट' है। आपकी कहानियाँ पढ़कर जो चीज मुझे सबसे अधिक 'स्ट्राअिक' हुअी है, वह है वार्तालापों और अनुभवोंका सजीव स्वाभाविक चित्रण और अपनी विषय-वस्तुकी सीधी पकड़। आपकी कहानीमें हर जगह लगता है कि लेखक बहक और भटक नहीं रहा है—वह आश्वस्त है कि अुसे क्या कहना है और अुसी ओर वह स्थिर गतिसे चला जा रहा है।

मेरा तो विश्वास है, भाअी, अगर आप अपने लिखनेकी ओर अीमानदार रहें, अर्थात् अध्ययन और अनुभवोंका सन्तुलन रखते चले जाअें तो हम लोगोंके बीचमें अेक बहुत ही सशक्त और समर्थ हिन्दी-कहानीकार आ रहा है।"

—राजेन्द्र यादव

मालवी और अुसका साहित्य—ले. श्याम परमार, प्रकाशक—राजकमल प्रकाशन, दिल्ली। पृष्ठ-संख्या १२८, मूल्य २)

'सरस्वती सहकार' संस्था द्वारा 'भारतीय साहित्य परिचय' पुस्तकमालाके प्रकाशनकी जो योजना बनाअी गअी थी, अुसीके अन्तर्गत मालवी भाषाके माने हुअे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्वान श्री श्याम परमारने 'मालवी और अुसका साहित्य' पुस्तककी रचना करके अेक स्तुत्य कार्य किया है।

बोलियोंके सम्बन्धमें अेक विद्वानका कथन है कि "बोलियोंमें जहाँ भाषाको विभूषित करनेकी सामर्थ्य है, वहाँ अुनके प्रदेशके संस्कारोंकी परम्पराका बीज भी निहित है, जो हमारे अितिहास और संस्कृतिके स्रोत हैं। अिन स्रोतोंको सजीव रखना हमारे लिअे अुतना ही आवश्यक है जितना जीवन।"

अिसी पवित्र भावनासे जनपदीय बोलियोंके लिखित अलिखित साहित्यके संग्रह और अध्ययनकी ओर हमारे विद्वानोंका ध्यान गया है और अलभ्य सामग्री अेकत्रित हुअी और हो रही है।

प्रस्तुत पुस्तकमें मालवीके सीमा और क्षेत्र, मालवीके विकास, माच (मंच) साहित्य, मालवी सन्त साहित्य, आधुनिक मालवी-गद्य-पद्य आदि विषयोंपर व्यापक प्रकाश डाला गया है। परिशिष्टमें मालवी गद्य-पद्यके अुदाहरण भी प्रस्तुत किअे गअे हैं। मालवी और अुसके साहित्यकी अेक संक्षिप्त झाँकी अिस पुस्तक द्वारा पाठकको मिल जाती है— यही सम्भवतः लेखक और प्रकाशकका अुद्देश्य भी है।

पुस्तक पठनीय है और अुसके लेखक तथा सम्पादक दोनों ही बधाअीके पात्र हैं।

विनोबाके साथ—ले. निर्मला देशपांडे, प्रकाशक— अखिल भारतीय सर्व सेवा संघ। पृष्ठसंख्या २०८, मूल्य १)

हिन्दीमें 'डायरी साहित्य' की अबतक कुछ पुस्तकें ही प्रकाशित हुअी हैं। डायरी साहित्यका महत्व व्यक्तिके व्यक्तित्वपर विशेष निर्भर करता है। प्रस्तुत पुस्तकको असाधारण महत्व अिसलिअे मिलना चाहिअे क्योंकि अुसमें विनोबाजी जैसे अेक असाधारण व्यक्तिकी साधारण बातें और अुनके सहज अुपदेश संग्रहीत हैं। प्रस्तावनामें श्री जयप्रकाश नारायणजीने लिखा है— "विनोबा अेक विलक्षण व्यक्ति हैं। आध्यात्मिक विभूतियोंके साथ-साथ प्रकाण्ड पाण्डित्य और अतुल अनुभूतियाँ भी अुनमें संग्रहीत हैं। वे प्रतिदिन बोलते हैं, फिर भी कुछ-न-कुछ बराबर नया कहते हैं। केवल भाषणोंमें ही नहीं, चलते-फिरते अुठते-बैठते, मुस्कराते विनोबा अक्सर अनमोल बातें कह जाते हैं। अगर अन्हें नोट कर लेनेवाला कोअी पास न हो तो अुन बोधमय सुभाषितोंसे हम वंचित रह जाते हैं।"

प्रसन्नताका विषय है कि मध्यप्रदेशके प्रसिद्ध नेता पी. वाअी. देशपांडेकी विदुषी पुत्री निर्मला देशपांडेने श्री विनोबाके अैसे ही बोधमय सुभाषितोंको अिस पुस्तकमें संग्रहीत किया है।

अिस डायरीमें विनोबाकी अुत्तरप्रदेश और बिहारकी चार महीनेकी यात्राका वर्णन है। चूंकि यह भूमिदान यात्रा थी, अिसलिअे भूमिदानके सम्बन्धमें ही विनोबाके विचार अधिक मात्रामें मिलेंगे। यों अन्य विषयोंपर भी अुनके विचार यत्र तत्र मिल सकेंगे।

पुस्तककी वर्णनशैली अितनी सुन्दर और स्वाभाविक है कि पाठक अिस पुस्तकको पढ़ते समय अपनेको विनोबाका अेक सहयात्री-जैसा अनुभव करने लगता है। लेखिकाकी टिप्पणियाँ कहीं भूमिका तैयार कर देती हैं तो कहीं अधिक प्रकाश डालकर साधारण-सी लगनेवाली बातोंकी महत्ताको प्रकट कर देती हैं।

पुस्तकका गेट-अप सुन्दर और मूल्य कम है। अिस पुस्तकका अधिक-से-अधिक प्रचार हो— यह वांछनीय है। सुनते हैं, अिसका दूसरा संस्करण भी अभी प्रकाशित हुआ है।

—रामेश्वरदयाल दुबे, अेम. अे., सा. र.

विचार वीथिका—ले.-श्री दुर्गाशंकर मिश्र, प्रकाशक—नवयुग ग्रन्थागार, छितवापुर रोड़, लखनअू। पृष्ठ २३५, मूल्य ३।) क्राअून साअीज, सजिल्द, छपाअी सुन्दर और आकर्षक।

प्रस्तुत पुस्तक श्री मिश्र समीक्षात्मक निबंधोंका संग्रह है। ये निबंध विचारोंकी वीथिकामें अुच्चस्तरीय साहित्यिक अध्ययन और अनुभूतिकी सुरभिको बिखेरते हुअे चलते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकमें साहित्यिक निबंधोंकी अधिकता है, गीति काव्य और अुसकी परम्परा, जायसीकी रस व्यंजना भारतेन्दुकी काव्य साधना, महाकवि पद्माकरकी भाषा आदि निबंध-मंजूषाके हीरक खण्ड हैं। जिनकी सांगोपांग विवेचना बड़ी सुन्दर हुअी है। निबन्धोंका कलात्मक विश्लेषण कहीं-कहीं प्राचीनतासे प्रभावित है। किन्तु नवीन माप-दंडोंका भी अभाव अनुभव नहीं होता। कदाचित् प्राचीनताका मोह संवरण करनेमें लेखक असमर्थ है। प्राचीन कवियोंकी यत्र-तत्र तुलनात्मक समीक्षा भी प्रस्तुत की गअी है। पुस्तकमें प्रस्तुत की गअी सामग्रीको लेखकके व्यापक अध्ययनका परिणाम बाबू गुलाबरायके शब्दोंमें कहा जा सकता है कि 'अिस संग्रहके प्रायः सभी निबंध साहित्यिक हैं और लेखकके व्यापक अध्ययन विचार और मन्थनके परिचायक हैं।' पुस्तक पठनीय है।

—विजयशंकर त्रिवेदी, सा. र.

हिन्दी साहित्यमें स्पृहणीय वृद्धि

प्रतिभा

का

कहानी विशेषांक

आगामी मार्च १९५६ को प्रकाशित हो रहा है।

हिन्दीकी प्रतिनिधि कहानियों अेवं अन्य भाषाओंकी महान कहानियोंका अमूल्य संग्रह।

मूल्य १ रुपया

प्रकाशक

प्रतिभा प्रकाशन लिमिटेड

वर्धा रोड, नागपूर १

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वाभिमानी साहित्य-स्रष्टाका आवाहन !

पाँच वर्ष पूर्ण हुअे। जनवरीका यह नवीन अंक लेकर 'राष्ट्रभारती' अिस अगहन-पूसमें, अपने छठे वर्षमें प्रवेश करती है। प्रेमी पाठक अनुमान कर सकते हैं कि किस रीति और भावनासे हम भारतकी, भारत-भारती और भारतीय साहित्यकी सेवा किया चाहते हैं। अिन पाँच वर्षोंमें जो प्रेरणा मिली, अुत्साह और अुल्लास मिला, मीठे कडुवे अनुभव हुअे, अुसीके बलपर हमने अपने अूपर बड़ी जिम्मेवारी ली। अपने प्रादुर्भावके दिनसे ही हिन्दी-प्रेमी देशबन्धु पाठकोंने राष्ट्रभारतीको अपनाया, अुसे अुत्तरोत्तर लोकप्रियता मिली। भारतीय साहित्यकी नअी दिशाअें, नअी आकांक्षाअें और नअे स्वरोंका राष्ट्रभारतीने संकेत किया। तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम, बंगला, मराठी, गुजराती, अुड़िया, असमिया, राजस्थानी, सिन्धी, पंजाबी, काश्मीरी, नेपाली, अुर्दू, संथाली, मैथिली और अंग्रेजी, रशियन, आदि-आदि विश्वजनीन भाषाओंका सत्य-शिव-सुन्दर साहित्य हम 'राष्ट्रभारती' के माध्यमसे यथाशक्ति अभिव्यक्त कर सके। राष्ट्रभारतीपर हमारे अनुग्रहशील लेखकों, कवियों, कलाकारों और समालोचकोंकी स्नेह-सौजन्यपूर्ण हार्दिक कृपा रही। राष्ट्रभारतीमें लिखनेवाले स्वाभिमानी साहित्यस्रष्टाओंका अितना बड़ा विशाल परिवार भारतमें फैला हुआ है कि आप कल्पना नहीं कर सकते। अुत्तरमें अम्बरचुम्बित, शुभ्र हिम-किरीटी काश्मीरके श्रीनगरसे लेकर दक्षिणमें नील अुच्छल जलधि तरंगोंसे प्रक्षालित चरण कन्या-कुमारी तक और पूर्वमें कामरूप असमकी राजधानी गौहाटीसे लेकर पश्चिममें सोमनाथ-सौराष्ट्र तक 'राष्ट्रभारती' का अपना व्यापक विस्तृत लेखक-परिवार है। हिन्दीकी किसी पत्रिकाको यह सौभाग्य प्राप्त नहीं। हम अपनी और अपने सहयोगी कलाकार-साहित्यकारोंकी कठिनाअीको गहराअीके साथ अिस संघर्ष-युगमें महसूस करते हैं। जहाँ अेक ओर हिन्दीके प्रति अुनका दायित्व बढ़ गया है, और अुत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है, वहाँ हिन्दीको संविधान-सम्मत स्वतंत्र गणतंत्र भारतकी राष्ट्रभाषा, राजभाषा घोषित होकर सात साल भी पूरे हो चुके हैं। वह हिन्दी कबीर, तुलसी, सूर, नानक, रहीम, रसखान और प्रेमचन्द, मैथिलीशरण आदिका बल पाकर और गान्धीकी राष्ट्रीय चेतनासे पुष्ट होकर अपनी ताकतसे आगे बढ़ रही है। हिन्दीका स्वाभिमानी साहित्यस्रष्टा भी कहानी, अुपन्यास, कविता, नाटक, अनुसन्धान, समालोचना, अिन सभी अंगोंकी समृद्ध-सम्पदाको बढ़ानेमें साधनालीन है, और अुसकी साधना कसौटीपर चढ़ रही है। दूसरी ओर आर्थिक कठिनाअियाँ बेहद बढ़ रही हैं; वह लिखकर अपनी आर्थिक समस्याको अच्छी तरह हल नहीं कर सकता, सचेष्ट क्रियाशील लेखक जनताको साथ लेकर चलना चाहता है; अपनी रोजी-रोटीका सवाल हल करना चाहता है और रोटीसे अूपर अुठकर अुसके आगेका भी हल वह सोचता है। हम नम्र निवेदन करेंगे कि लेखक अपने आत्मविश्वासको कभी न खोअे, आत्मविश्वास ही अुसके लिअे सबसे बड़ी बात है। अक्षर-अक्षर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर लक्ष-लक्ष चाँदीके टुकड़ोंकी कोअी कल्पना करना आत्मविश्वास नहीं है। लेखक सभी युगोंमें निर्धन और अभावग्रस्त रहा है। आज भी अुसके चारों ओर चलती घूमती संघर्षमय दुनिया है जिससे वह भाग नहीं सकता। मूक, दुखी, कसौटीपर कसे अभावग्रस्त साहित्यकार ही 'अिदं कविभ्यः पूर्वेभ्यः नभोवाकं प्रशास्महे' की वन्दनाके जीते-जागते अधिकारी होते हैं। आप अितना जरूर सोचिअे कि कहीं आपके साहित्यका स्तर और विस्तार अुसकी गहराअीको तो कम नहीं कर रहा है। आअिअे! माँ भारतीके भव्य मन्दिरमें हम अेक हृदय होनेके लिअे आपका आवाहन करते हैं। सहिष्णुता और स्नेह-सहयोगसे आप हमारा हाथ बँटाने आगे बढ़ें।

—ह० श०

विधान, अनुशासन और परम्परा

नागपुर विश्वविद्यालयके ३५ वें पदवीदान समारंभमें दीक्षान्त भाषण करते हुअे भारतके प्रधान वकील—अटरनी जनरल श्री मोतीलाल सेतलवाडने कअी महत्वके विचारणीय विषयोंपर प्रकाश डाला है। सर्वप्रथम अुन्होंने भारतके विधानके अनुसार जनतंत्र अथवा प्रजातंत्रकी व्याख्या करते हुअे कहा—अुसके द्वारा भारतके सर्व नागरिकोंको सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक क्षेत्रोंमें न्याय, सब प्रकारकी स्वतंत्रता, पद तथा अवसरप्राप्तिके समानाधिकार, और जनतामें व्यक्तिका गौरव और राष्ट्रीय अैक्यका विश्वास दृढ़ करनेवाला भ्रातृभाव पैदा करना है। सद्भाव तथा शान्तिके हमारे राष्ट्रीय ध्येयका अुल्लेख करते हुअे अुन्होंने कहा कि हमारी पुरानी परम्पराके अनुसार हम अुन धर्म और सिद्धांतोंका प्रचार कर रहे हैं जिनका ज्ञान हमें अपने पूर्वजोंसे प्राप्त हुआ है और जिनकी शक्ति और सामर्थ्यको हमारे राष्ट्रपिताने प्रत्यक्ष कर दिखाया है। यह शान्ति और सद्भावका सिद्धान्त है। अिस दिशामें हमारा कार्य अितना परिणामकारी सिद्ध हुआ है कि विदेशी राष्ट्र तथा राजनीतिज्ञोंने भी अिस सिद्धान्तके प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त की है और आज शान्ति तथा सद्भावके संदेशवाहक राष्ट्रोंकी प्रथम पंक्तिमें भारतका स्थान है।

जनतान्त्रिक शासन शासनका अेक प्रकार है जिसकी सफलता और असफलताका आधार अुन व्यक्तियोंके कार्यपर ही रहेगा जो अुस शासनको चला रहे हैं। संस्थाओंका संगठन तथा अुनकी योजनाअें कितनी भी अुदात्त और कुशलतापूर्वक आयोजित क्यों न हों, वे तभी सफल होंगी जब अुसके लिअे सही दिशामें सतत कार्य किया जाअेगा। अिसलिअे आज भारतके नागरिकोंका अुत्तरदायित्व बहुत बढ़ गया है। सब जन-तान्त्रिक संस्थाओंको सुचारुरूपसे चलाना हो तो अनुशासनकी अत्यन्त आवश्यकता होगी। विद्यालय-महाविद्यालयोंके अनुशासनकी बात मैं नहीं कर रहा हूँ। शिक्षाके सच्चे ध्येयको प्राप्त करना हो तो निस्सन्देह किसी भी प्रकारकी शिक्षा पद्धतिमें अनुशासनकी आवश्यकता होगी ही। परन्तु मैं सोच रहा हूँ हमारा राष्ट्र अनुशासनबद्ध होना चाहिअे। यदि हमारा राष्ट्र अनुशासनके ढाँचेमें अपनेको न ढालेगा तो भारतका जनतान्त्रिक शासनका महान् प्रयोग असफल ही रहेगा।

राष्ट्रभाषा और शिक्षाका माध्यम

राष्ट्रभाषाके सम्बन्धमें "यह स्पष्ट है कि राष्ट्रभाषाके बिना कोअी भी राष्ट्र सच्ची राष्ट्रीयताका निर्माण नहीं कर सकता।"—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुनके विचारमें अँग्रेजीको राष्ट्रभाषाके लिअे स्थान खाली करना होगा। परन्तु अिसका अर्थ यह नहीं कि अँग्रेजीका अध्ययन ही हम बन्द कर दें। भाषाके सम्बन्धमें हमें बहुत सन्तुलन रखना होगा और हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिअे कि हमारा मुख्य अुद्देश्य राष्ट्रकी प्रगति है। हमारी प्रादेशिक भाषाओंके लिअे हमें अभिमान है। परन्तु हमें यह ध्यान रखना होगा कि प्रादेशिक भाषाओंके प्रति हमारे प्रेमके कारण हम अधिक महत्वके और आवश्यक कार्यको भुला न दें। भारतकी अेकतापर जितना भी बल दिया जाअे वह कभी पर्याप्त न होगा। आजतक अँग्रेजी अैसी अेकताका साधन रही, विशेषकर शिक्षित और बुद्धिप्रधान लोगोंमें। अब परिस्थिति बदल गअी है अिसलिअे अुसका अुपयोग धीरे-धीरे कम करना होगा और साथ ही हमारा यह भी कर्तव्य होगा कि हम अिस देशके सबसे अधिक संख्याके लोगोंकी भाषा हिन्दीको अुस स्थानपर प्रतिष्ठित करें। भविष्यकी हमारी हिन्दी जिन-जिन भाषाओंके सम्बन्धमें आअेगी अुन सब भाषाओंके सहयोगसे समृद्ध होगी और देशके विभिन्न भागोंमें थोड़ी बहुत विभिन्न शैलियोंमें लिखी या बोली जाअेगी।

संकुचित प्रादेशिकताके कारण हिन्दीके अुपयोगसे प्रादेशिक भाषाओंको हानि पहुँचेगी, यह भाव कुछ लोगोंके मनमें है। क्या यह स्पष्ट नहीं कि प्रादेशिक विश्वविद्यालयोंमें शिक्षा पाअे हुअे विद्यार्थियोंका दृष्टिकोण विशाल हो और भारतके किसी भी प्रदेशमें अुनका अुपयोग हो सके, अिसलिअे अुनको हिन्दीका अच्छा ज्ञान होना चाहिअे? संघ तथा राज्य सरकारोंमें हिन्दीके द्वारा ही व्यवहार होगा और अुसके तमाम कागजात तथा रेकार्ड हिन्दीमें ही होंगे। अन्तर-प्रदेशीय सम्मेलन तथा संस्थाओंमें हिन्दीका ही व्यवहार होगा। विज्ञान तथा कलाकौशलके (टेकनिकल) ग्रन्थोंका अनुवाद भी हिन्दीमें होगा कि जिससे सारे देशके अुपयोगमें वे आ सकें। अिसलिअे विश्वविद्यालयोंकी शिक्षाका माध्यम हिन्दी रखा जाअे, यह क्या अधिक अुपयोगी न होगा? विश्वविद्यालयोंकी शिक्षाका माध्यम केवल प्रादेशिक भाषाको ही बनाया जाअे, यह संकुचित भावना मेरी दृष्टिमें स्वयं प्रादेशिक राज्यों तथा अुसके नागरिकोंके लिअे आत्मघातक होगी।

श्री सेतलवाडने और भी कअी विषयोंपर अपने विचार प्रकट किअे हैं। अूपर हमने अुनके भाषणसे कुछ विचारोंको लेकर अुन्हें अपनी भाषामें संक्षेपमें यहाँ अपने पाठकोंके विचारार्थ दिया है। विश्वविद्यालयकी शिक्षाके माध्यमका प्रश्न अति महत्वका प्रश्न है। अिस सम्बन्धमें बहुत मतभेद दिखाअी देता है और कुछ हदतक अुसमें अुग्रता भी दिखाअी जा रही है। परन्तु अिस प्रश्नपर दीर्घदृष्टि तथा शान्त चित्तसे विचार करनेकी ही अधिक आवश्यकता है। निस्सन्देह अपने प्रदेशके विश्वविद्यालयका माध्यम क्या हो, अिसका निर्णय अुस विश्वविद्यालयके संचालक, अुस प्रदेशके साहित्यिक तथा शिक्षाशास्त्री ही करेंगे परन्तु हम चाहते हैं कि अिसपर अखिल भारतीय दृष्टिकोणसे भी पूरा विचार कर लिया जाअे और अुसके सब पहलुओंकी परीक्षा की जाअे, क्योंकि दोनों पक्षके मन्तव्य विचारणीय हैं और अुनके तर्कोंमें पर्याप्त बल है।

मध्यम मार्ग ही श्रेष्ठ होगा

विश्वविद्यालयकी शिक्षामें प्रादेशिक संकुचितता देशके लिअे हानिकर होगी। अुससे देशकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेकता और राष्ट्रीयता हम जैसी चाहते हैं वैसी दृढ़ न हो सकेगी और यह भय सदा बना रहेगा कि हमारा राष्ट्र प्रादेशिक खण्डोंमें कहीं विभक्त न हो जाअे। जिन लोगोंको अैसे भीषण परिणामकी आशंका है अुनका यह भय निराधार है, यह कहना भी कठिन है। राज्य पुनर्गठन आयोगका निवेदन प्रकाशित होनेपर प्रादेशिक अभिमानकी बुराअियाँ हमारे सामने थोड़ी बहुत प्रत्यक्ष हुअी हैं, यह स्वीकार करना ही होगा। राष्ट्रीय दृष्टिसे हमें अैसी संकुचित भावनाओंसे बहुत अूपर अुठना है और अैसे भयसे देशकी रक्षा भी करनी है।

परन्तु दूसरी और प्रादेशिक भाषाओंको यदि प्रोत्साहन न दिया गया, अुनको अुनका अुचित स्थान नहीं दिया गया तो अुससे प्रदेशोंकी जनतासे प्राण-सम्पर्क छूट जाअेगा। जन-तान्त्रिक युगसे जनताका सम्पर्क टूट जानेसे बढ़कर दूसरी कोअी भयंकर विपत्ति हो ही नहीं सकती। अिस प्रकार दो महान् विपत्तियोंकी आशंका की जा रही है। आजतक अँग्रेजीको अन्तर-प्रदेशीय व्यवहारकी भाषा बनाकर हमने देख लिया है कि अँग्रेजी शिक्षित लोगोंका जो अेक वर्ग बना वह जनतासे सदा दूर रहा है। हिन्दीके राष्ट्र-भाषा बननेपर अहिन्दी-भाषी प्रदेशोंमें यह परिस्थिति पुनः अुपस्थित न हो, यह भी हमें देखना होगा और साथ ही हमारी राष्ट्रीयताको हानि पहुँचानेवाली प्रादेशिक भावनाओंको भी प्रबल होनेसे रोकना होगा। अिन दोनोंके मध्यमें हमें कोअी अैसा मार्ग निकालना होगा जो राष्ट्रके लिअे अुन्नतिकर और जनताके हितकी रक्षा करनेवाला हो।

साधारणतया माध्यमिक शिक्षाके साथ विद्यार्थीकी शिक्षाकी भूमिका समाप्त हो जाती है। अिसके बाद विश्वविद्यालयमें जो शिक्षा दी जाती है वह विशेष योग्यता प्राप्त करनेकी शिक्षा है। माध्यमिक शिक्षा तक सारी शिक्षा विद्यार्थीकी मातृभाषा अथवा प्रादेशिक भाषामें होनी चाहिअे और अिसके संबंधमें कहीं मतभेद नहीं। परन्तु महाविद्यालयमें जानेपर विद्यार्थीकी अखिल भारतीय दृष्टिका विकास होना चाहिअे और राष्ट्रके लिअे अुसे अुपयोगी बनानेकी शिक्षा मिलनी चाहिअे। अिस कारण हिन्दीके माध्यमकी बात अुपस्थित की जाती है। यहीं विद्वानोंमें मतभेद हैं। हमारे विचारमें तो विश्वविद्यालयोंकी शिक्षाका माध्यम हिन्दी तथा प्रादेशिक भाषा दोनों होना चाहिअे। अिसमें भी हमें थोड़ा विवेकसे काम लेना होगा। साहित्य, अर्थशास्त्र, राजनीति आदि विषयोंकी शिक्षाका माध्यम प्रादेशिक भाषामें हो तो अिसमें हमें कोअी हानि नहीं दिखाअी देती। परन्तु कानून, आरोग्य, अेन्जीनियरिंग आदि विषय जिनका अध्ययन अखिल भारतीय दृष्टि तथा राष्ट्रीय अुपयोगिताको ध्यानमें रखकर होना चाहिअे अुनके लिअे शिक्षाका माध्यम हिन्दी रखा जाअे तो वह अधिक अुपयोगी और राष्ट्रीय भावनाओंको दृढ़ करनेवाली बात होगी। हम आशा करें कि सब प्रादेशिक राज्योंके विद्वान् शिक्षाके माध्यमके सम्बन्धमें अुग्रता छोड़कर शान्तचित्तसे जनता तथा राष्ट्र दोनोंके हितकी दृष्टिसे ही अुसपर विचार करेंगे।

केन्द्रीय शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत टंक-मुद्रण-अक्षर योजना

टंकमुद्रण अक्षरयोजनाका अेक ढाँचा जो भारतके केन्द्रीय शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत किया गया है, समाचार पत्रोंमें प्रकाशित हुआ है। लखनअू परिषद्में स्वीकृत लिपिको अिसमें स्थान दिया गया है। केवल ह्रस्व "इ" तथा दीर्घ "ई" के सम्बन्धमें कुछ नया सुझाव अुसमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिखाअी दे रहा है। हमारी दृष्टिमें वह सुझाव बुरा नहीं। "अ" की स्वराखड़ी लखनअू परिषद्ने स्वीकार नहीं की थी अिसलिअे अुसका अिसमें भी स्वीकार नहीं किया गया है। पत्रोंमें प्रकाशित सूचनाके अनुसार केन्द्रीय शिक्षा विभाग अब अिस सम्बन्धमें सुझाअे गअे सुधारोंपर विचार करनेको भी तैयार नहीं। हमारी दृष्टिमें यह बहुत बड़ी त्रुटि है और टंकमुद्रण और दूरमुद्रण यंत्रोंके अुपयोगमें अिससे बड़ी असुविधा होगी। परन्तु हम अिसपर यहाँ अधिक चर्चा करना नहीं चाहते। हमें जो अक्षर-योजना प्रकाशित हुअी है अुसके अक्षरोंके सम्बन्धमें मात्र यही कहना है कि वे बहुत सुन्दर नहीं, कुछ भोंड़ेसे दिखाअी देते हैं। अंग्रेजी अंकोंको अुसमें स्थान दिया गया है और नागरी अंकोंको नहीं। यह भी अुसकी अेक बड़ी त्रुटि है। विधानमें अन्तर-राष्ट्रीय अंकोंको स्वीकार किया गया है अिसको हम स्वीकार करते हैं। दक्षिणके भाअियोंकी सुविधाके लिअे यह आवश्यक भी है। परन्तु राष्ट्रपतिकी अनुमतिसे नागरी अंकोंके अुपयोगकी जो सुविधा दी गअी है अुसका भी बहुत बड़ा महत्व है। नागरी लिखावटके साथ अंग्रेजी अंकोंका मेल नहीं बैठता है। अिसलिअे अच्छा तो यह होगा कि अधिक संख्यामें जो टंकमुद्रण यंत्र बनें वे नागरी अंकोंवाले हों। कुछ थोड़े अंग्रेजी अंकोंवाले रखे जा सकते हैं जिनका अुपयोग अैसे ही स्थानोंपर किया जाअे जहाँ अुनकी पूरी आवश्यकता समझी जाअे। केन्द्रीय शिक्षा विभाग अिस सम्बन्धमें भी कुछ विचार करनेको तैयार है या नहीं, हम नहीं जानते, परन्तु जनताको तो अिस सम्बन्धमें अपने विचार स्पष्ट रूपसे और आग्रहपूर्वक प्रगट करने चाहिअे।

सरकारी कार्योंमें हिन्दीका अुपयोग

यह बड़ी प्रसन्नताकी बात है कि राष्ट्रपतिने संविधानकी धारा ३४३ (२) के अनुसार आज्ञा निकालकर भारत सरकारके महत्वपूर्ण कार्योंमें अंग्रेजीके साथ हिन्दीका भी प्रयोग करनेकी सूचना की है।

अिस आदेशके अनुसार सर्वसाधारण जनताके साथ पत्र-व्यवहार, प्रशासन रिपोर्टें, सरकारी मुखपत्र व संसदकी रिपोर्टें, सरकारी संकल्प व विधान (विधेयक अधिनियमादि), अुन राज्योंके साथ पत्र-व्यवहार जिन्होंने हिन्दीको अपनी सरकारी भाषा बना लिया है, संधियाँ, समझौते व विदेशी सरकारोंके साथ पत्रव्यवहार तथा राजदूतों और अन्तर-राष्ट्रीय संगठनोंके साथ पत्रव्यवहार और देशी राजदूतों, वाणिज्य दूतों तथा अन्तर-राष्ट्रीय संगठनोंमें, औपचारिक पत्रव्यवहार आदिमें हिन्दीका अुपयोग हो सकेगा।

राजकाजमें क्रमशः हिन्दी अंग्रेजी स्थान ले रही है यह हमारे लिअे सन्तोषकी बात है। हम चाहते तो यह है कि यह कार्य अधिक वेगसे किया जाअे। परन्तु अिस दिशामें कुछ प्रगति हो रही है और हिन्दीका आज कअी स्थानोंपर विरोध हो रहा है अुसे देखते हुअे जो कुछ भी प्रगति हो, वह हिन्दी और राष्ट्रके हितकी बात है, यह हमें मानना ही होगा।

—मो० भ०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत सरकारके व्यापार और अुद्योग मन्त्रालय द्वारा प्रकाशित

'अुद्योग व्यापार पत्रिका'

* अुद्योग और व्यापार सम्बन्धी प्रामाणिक जानकारी युक्त विशेष लेख, भारत सरकारकी आवश्यक सूचनाअें, अुपयोगी आँकड़े आदि पत्रिकामें प्रति मास दिये जाते हैं।
* डिमाअी चौपेजी आकारके ६०-७० पृष्ठ : मूल्य केवल ६ रुपया वार्षिक।
* अेजेंटोंको अच्छा कमीशन दिया जाअेगा। पत्रिका विज्ञापन देनेका सुन्दर साधन है। ग्राहक बनने, अेजेन्सी लेने अथवा विज्ञापन छपानेके लिअे नीचे लिखे पतेपर पत्र भेजिअे:-

सम्पादक,
अुद्योग व्यापार पत्रिका,
व्यापार और अुद्योग मन्त्रालय, भारत सरकार,
नअी दिल्ली।

'आर्थिक समीक्षा'

(अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटीके आर्थिक-राजनीतिक-अनुसंधान-विभागका पाक्षिक पत्र)

प्रधान सम्पादक : आचार्य श्रीमन्नारायण अग्रवाल
सम्पादक : श्री हर्षदेव मालवीय

हिन्दीमें अनूठा प्रयास, आर्थिक विषयोंपर विचारपूर्ण लेख, आर्थिक सुझावोंसे ओतप्रोत भारतके विकासमें रुचि रखनेवाले प्रत्येक व्यक्तिके लिअे अत्यावश्यक, पुस्तकालयोंके लिअे अनिवार्य रूपसे आवश्यक।

वार्षिक चन्दा ५ रु. अेक प्रतिका साढ़े तीन आना

व्यवस्थापक, प्रकाशन-विभाग,
अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी,
७, जंतर-मंतर रोड, नअी दिल्ली

राजनीति, साहित्य और संस्कृतिका विचार-प्रधान साप्ताहिक

"सारथी"

पंडित द्वारकाप्रसाद मिश्र
(भूतपूर्व गृहमंत्री, मध्यप्रदेश) के संपादकत्वमें
२६ जनवरी, १९५४ से प्रति सप्ताह नियमित प्रकाशित हो रहा है।

मूल्य अेक अंक ।) वार्षिक १२)

आप भारतके किसी भी प्रदेशमें रहते हों "सारथी" का अेक अंक भी हाथ लग जानेपर आप अुसे प्रति सप्ताह पढ़ना चाहेंगे। आज ही निम्नलिखित पतेपर पत्र-व्यवहार कीजिअे।

भारतके हरेक शहरमें 'सारथी' की अेजेंसी हम देना चाहते हैं। आजही अपना आर्डर भेजिअे।

पत्र-व्यवहारका पता:—व्यवस्थापक 'सारथी'
धरमपेठ, (अेक्सटेन्शन) नागपुर [म. प्र.]

मध्यप्रदेशका श्रेष्ठ हिन्दी दैनिक

"युगधर्म"

जिसमें साहित्यिक, धार्मिक, आर्थिक व राजनीतिक अेवं अन्यान्य विषयोंपर प्रख्यात विद्वानोंके लेख, कहानियाँ, बच्चोंके लिअे "बाल भारत", रजतपटपर, आदि अुत्कृष्ट स्तंभोंके अतिरिक्त स्त्रियोंके लिअे "नारी जगत" का विशेष स्तंभ भी है।

"दैनिक युगधर्म" का वार्षिक शुल्क २६ रु. अर्धवार्षिक १३॥, तथा तिमाही ७ रु.।

रविवासरीय युगधर्म

वार्षिक रु. ६॥ अर्धवार्षिक रु. ३॥

पता:— व्यवस्थापक,
दैनिक युगधर्म, रामदासपेठ, नागपुर-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य, समाज और संस्कृति तथा राजनीतिक, अर्थनीतिक और नैतिक विषयोंपर यदि आप स्वतंत्र विश्लेषणात्मक रचनाअें पढ़ना चाहें, तो—

हिन्दीका स्वतंत्र-मासिक

"नया समाज"

मँगाअिअे।

संचालक : नया समाज-ट्रस्ट,

संपादक : मोहनसिंह सेंगर।

वार्षिक चन्दा ८) : अेक प्रतिका ।।।)

व्यवस्थापक—'नया समाज'

अिन्डिया अेक्सचेंज, तीसरा मजला

कलकत्ता–१

साहित्य, संस्कृति, ग्राम-सुधार तथा कलाकी प्रमुख हिन्दी मासिक पत्रिका

'भारती'

प्रबन्ध संपादक :

श्री हरिहरनिवास द्विवेदी

विशेषताअें : हिन्दी जगत्के श्रेष्ठतम् साहित्यिकों की सुरुचिपूर्ण रचनाअें।

आकर्षक गेटअप, सुन्दर छपाअी

पृष्ठ सं० १००

— आजही अपनी माँग लिखें —

वार्षिक मूल्य ८) अेक प्रति १) रु०

'भारती' सराफा : ग्वालियर

जैन जगत

(भारत जैन महामण्डलका मासिक पत्र)

जैन जगतमें आध्यात्मिक, सांस्कृतिक लेखोंके अतिरिक्त जनजागरणके लेख, कविताअें, कहानियाँ, तथा सामाजिक समस्याओंपर विविध दृष्टिकोणोंको व्यक्त करते हुअे अधिकारी विद्वानोंके विद्वत्तापूर्ण विचार प्रतिमाह दिअे जाते हैं।

आज ही 'जैन जगत' के ग्राहक बनकर, तथा दूसरोंको ग्राहक बनाकर पत्रकी अुन्नतिमें सहायता कीजिअे।

विज्ञापन देकर लाभ अुठाअिअे।

वार्षिक शुल्क—मात्र चार रुपये

व्यवस्थापक—"जैन जगत"

जैन जगत कार्यालय, वर्धा (म. प्र.)

'वासन्ती'

सचित्र मासिक पत्रिका

वार्षिक शुल्क १० रु० : अेक अंकका १ रु०

अिसके प्रत्येक अंकमें :—

१. मनोहर सरस नाटिका, कहानियाँ, पत्र, सांस्कृतिक प्रवचन, ज्ञानवर्द्धक निबन्ध, साहित्य-समीक्षा और ज्ञानवर्धक सामग्री प्राप्त होगी।

२. यह सामग्री गंभीर, चिन्तनात्मक, भावात्मक, विनोदात्मक तथा व्यंग्यात्मक भाव-शैलियोंमें मिलेगी।

३. अितिहास, काव्य, धर्म, दर्शन, कला, आचार, व्यवहार, नीति, भूगोल, खगोल, मानव-जीवन, विज्ञान आदि साहित्यिक और सांस्कृतिक विषय।

सम्पादक —

आचार्य सीताराम चतुर्वेदी

६३/४३, अुत्तर बेनिया बाग

काशी (बनारस)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती' के नियम और अुद्देश्य

(सम्पादकीय)

१. 'राष्ट्रभारती' प्रतिमास १ ता० को प्रकाशित होती है ।

२. 'राष्ट्रभारती' भारतकी विशुद्ध अन्तर-प्रान्तीय भाषा, साहित्य और संस्कृतिकी प्रतिनिधि पत्रिका है ।

३. 'राष्ट्रभारती' का अुद्देश्य समस्त अुच्च भारतीय भाषाओंके प्राचीन अर्वाचीन साहित्यका भारतकी राष्ट्रभाषा हिन्दी द्वारा रसास्वाद कराना है, जिससे वह सब भारतीयोंकी अपनी वस्तु बन सके ।

४. 'राष्ट्रभारती' का दृष्टिकोण प्रगतिशील, रचनात्मक, सर्व समन्वय--सर्वोदयकारी है। अिसमें विवादग्रस्त, राजनीतिक, साम्प्रदायिक, या दल-गत नीतिके लेख आदि प्रकाशित न होंगे ।

५. 'राष्ट्रभारती' में हिन्दीके साथ साथ--

(१) असमिया (२) मणिपुरी (३) बंगला (४) अुड़िया (५) नेपाली (६) काश्मीरी (७) सिन्धी (८) पंजाबी (९) गुजराती (१०) मराठी (११) तमिल (१२) तेलुगु (१३) कन्नड़ (१४) मलयालम (१५) संस्कृत (१६) अुर्दू और अन्तर-राष्ट्रीय विदेशी साहित्यिक भाषाओंकी सुन्दर ज्ञानपोषक, मनोरंजक, सुरुचिपूर्ण श्रेष्ठ रचनाअें भी प्रकाशित होंगी ।

लेखक महानुभावोंसे

६. 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ, हमारे पास अपनी पूर्व प्रकाशित रचना सामग्री मत भेजिअे । जिस रचनाको आप 'राष्ट्रभारती' में भेजें अुसे अन्य हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओंमें न भेजें । अस्वीकृत रचनाको वापस पानेके लिअे दो आनेका पोस्टेज भेजनेकी कृपा करें ।

७. जो कुछ मैटर प्रकाशनार्थ भेजें, साफ नागरी टाअिप कापीमें भेजें अथवा हाथकी लिखावटमें कागजके अेक ही ओर साफ सुथरी, सुवाच्य नागरी लिपिमें लिखकर भेजें । कविताओंके अुद्धरण, अवतरण आदि बहुत ही साफ लिखे होने चाहिअे । लेखक अपना पूरा-पूरा नाम और पता अवश्य लिखें ।

निवेदक--

सम्पादक "राष्ट्रभारती"

हिन्दीनगर, वर्धा, Wardha (M. P.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती' को स्वावलम्बी बना दें

सविनय सूचना--यह कि प्रत्येक हिन्दी-प्रेमीका कर्तव्य है कि वह कम-से-कम 'राष्ट्रभारती' का अेक-दो ग्राहक अवश्य बना दें।

अिसलिअे कि राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रति कुछ आपका भी तो कर्तव्य है। भारतके काश्मीरसे लेकर कन्याकुमारी तक और आसामसे लेकर सोमनाथ-सौराष्ट्र तक लगभग सभी प्रतिष्ठित विद्वान् साहित्यकारोंका कहना है कि '**राष्ट्रभारती**', राष्ट्रभाषा हिन्दीमें भारतीय साहित्यकी अपने ढंगकी बहुत सुन्दर और अनूठी मासिक पत्रिका है। हाथके कंगनको आरसी क्या ? अिसी जनवरीके नअे अंकको देखिअे न ?

साधारण वार्षिक मूल्य ६) रु. और स्कूल-कालेजों तथा लाअिब्रेरियोंके लिअे रियायत ५) रु. वार्षिक मनीआर्डरसे।

निवेदक--

व्यवस्थापक, **'राष्ट्रभारती'**

हिन्दीनगर, वर्धा (म. प्र.)

मुद्रक तथा प्रकाशक:--मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस--राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

76080

फरवरी, १९५६

राष्ट्र भाषा प्रचार समिति, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ६] राष्ट्रभारती, फरवरी—१९५६ [अंक २

[बिहार, मध्यप्रदेश, भोपाल, सौराष्ट्र आदि राज्योंके शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत]

❀ अिस अंकमें पढिअे ❀

('राष्ट्रभारती' के प्रत्येक अंकका हर अेक पृष्ठ पठन-मनन योग्य ठोस सामग्रीसे पूर्ण रहता है)

	लेखक	पृ०-सं०
१. लेख :		
१. प्रेम-पात्रता और अहिंसकता	(वेदवाणी)	७५
२. छन्दका अुद्देश्य (बंगला)	डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी	७६
३. ब्रह्माके आँसू (गुजराती)	श्री मंजुलाल देसाअी	७७
४. रोमेंटिक साहित्यकी गरिमा (गुजराती)	राज्यपाल श्री क. मा. मुन्शी अनुवादक—श्री शंकरदेव विद्यालंकार	८१
५. हिन्दी साहित्यपर बंगलाका प्रभाव	श्री मन्मथनाथ गुप्त	८४
६. साहित्यकारका दायित्व—(नाटक)	श्री अुदयशंकर भट्ट	८८
७. 'बेढब' बनारसी, अेक व्यक्तित्व और कृतित्व	श्री लक्ष्मीशंकर व्यास अेम. अे. (आगर्त)	९१
८. संस्कृत साहित्यकी आलोचना पद्धति	श्री श्रीधर शास्त्री साहित्याचार्य, सा. र.	१०७
९. विश्वके प्रति मेरा दृष्टिकोण (अंग्रेजी)	श्री अलबर्ट आयंशटाअिन अनु०—श्री राजेन्द्रप्रसाद भट्ट	११७
१०. श्री रामवृक्ष बेनीपुरीके साथ तीन दिन	श्री विजयशंकर त्रिवेदी सा० र०	१२३
२. कविता :		
१. अुनकी अमर याद	श्री 'बिस्मिल'	८३
२. धूलका रुख	श्री श्रीकान्त वर्मा	९४
३. कौन हो तुम	प्राध्यापक श्री रामखिलावन तिवारी अेम. अे.	९५
४. मंगल-भारती	श्री देवप्रकाश गुप्त	९६
३. कहानी, अेकांकी :		
१. पूर्व देशकी लजीली लड़की (चीनी कहानी)	डॉ. जगदीशचन्द्र जैन	९७
२. सत्याग्रहका फल (तमिळ कहानी)	श्री पी. अेम. रामैय्या अनुवादिका कु. लक्ष्मी कृष्णन रा. भा. रत्न	११९
३. प्रकाश और परछाअीं (अेकांकी)	श्री विष्णु प्रभाकर	१०९
४. देवनागर :	(बंगला, गुजराती, मराठी)	१२९
५. साहित्यालोचन :	(सर्वश्री—प्रोफेसर मोहनलाल 'जिज्ञासु' अेम. अे., लीला अवस्थी अेम अे., सौ. शीलादेवी दुबे 'सा. र.')	१३३
६. सम्पादकीय :	... ...	१३७

वार्षिक चन्दा ६) मनीऑर्डरसे : : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

रियायत— समितिके सभी प्रमाणित प्रचारकों, केन्द्र-व्यवस्थापकों और स्कूल-कालेजों तथा सार्वजनिक पुस्तकालय-वाचनालयोंको अेक वर्षतक केवल ५) रु. वार्षिक चन्देमें मिलेगी।

पता :— राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[समग्र भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

वर्ष ६] फरवरी—१९५६ [अंक २

प्रेम-पात्रता और अहिंसकता

प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु,
प्रियं सर्वस्य पश्यत अुत शूद्रे अुतार्ये ॥
रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचं राजसु नस्कृधि
रुचं विश्वेषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचस्त्वम् ॥

—यजुर्वेद

अर्थात् हे परमात्मन् ! मुझको ब्राह्मणोंमें प्रिय कीजिअे, क्षत्रियोंमें प्रिय कीजिअे, वैश्यों और शूद्रोंमें प्रिय कीजिअे । सबमें मुझे प्रिय कीजिअे । हे परमेश्वर ! हमारी ब्राह्मणोंमें रुचि हो, क्षत्रियोंमें रुचि हो, वैश्यों तथा शूद्रोंमें रुचि हो । सबमें रुचि हो ।

पशून् पाहि, गां मा हिंसीः, अजां मा हिंसीः,
अविं मा हिंसीः, अिमं मा हिंसीः द्विपादं पशुम्,
मा हिंसीः अेकशफं पशुं मा, हिंस्यात् सर्वभूतानि ।
अेतद् व अुस्वादीयो यदधिगवं क्षीरम्
वा मांसं वा तदेव नाश्नीयात् ॥

—अथर्ववेद

अर्थात् पशुओंकी रक्षा करो, गायको मत मारो, बकरीको मत मारो, भेड़को मत मारो, अिस मनुष्य—अिन्सानको मत मारो, पक्षियोंको मत मारो, अेक खुरवाले घोड़े, गधेको मत मोरो और किसी भी प्राणीको मत मारो ।

गायका यह क्षीर, दधि और घृत ही खाने योग्य है, मांस नहीं ।

मांसाहारी, शराब पीनेवाला, जुआरी, और माँ, बहू, बहन, बेटीका विवेक न रखकर व्यभिचार करनेवाला व्यक्ति समाजमें घोर दण्ड योग्य है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छन्दका अुद्देश्य

"हाय भाषा मनुजकी है बँधी केवल अर्थके दृढ़-बन्धसे, चक्कर लगाती है सदैव मनुष्यको ही घेरकर। अविराम बोझिल मानवीय प्रयोजनोंसे क्षीण हो आया गिराका प्राण है, अुसके परिस्फुट तत्त्व देते बाँध सीमामें चरणको भावके। अिस धूलि-तलको छोड़ बिलकुल ही न अुड़ सकती नवल संगीत सम अुन अर्थ बन्धन-हीन अपने सप्त स्वरके सप्त पंखोंको अबाध पसार विपुल व्योममें निर्द्वन्द्व अपराधीन!

"प्रातःकालकी यह शुभ्र भाषा वाक्य-बन्धन रहित जो प्रत्यक्ष किरणें हैं कि वे क्षण मात्रमें ही खोल देती अिस जगत्के मर्म-मन्दिर द्वारको, होता प्रकट त्रैलोक्यके नव-गीतका भाण्डार और विभावरी आच्छन्न कर देती पलक गिरते अपार अनन्त जगको शान्तिको निज ललित भाषासे; कि अुसका वाक्य हीन निषेध अपने मन्त्रबलसे शान्त कर देता जगत्के खेद, दारुण क्लान्ति, कठिन प्रयास, क्षणमें भेद जगके मर्म-कोलाहल जनित काठिन्यको, लाता विपुल आभास शामक मरणका नर-लोकमें। नक्षत्रकी निश्चल गिरा निर्धूम अग्नि समान देती है स्वयंकी सूचना ज्योतिष्क-सूची पत्रपर आकाशमें; दक्षिण समीरणकी गिरा केवल तनिक निःश्वासके बल-पर जगाती है नवल आशा निकुंज-निकुंजमें, है पैठ जाती भेद दुर्गम-दुर्ग पल्लव-राजिका दुस्तर अरण्यान्तः पुरीमें अनायास अवाध, यौवनकी विजय गाथा बहन करती सुदूर दिगन्त तक;—वैसा सहज आलोक दुर्लभ है मनुजके वाक्यमें, अिसमें कहाँ आभास सीमाहीन मिलता है, कहाँ वह अर्थभेदी, अभ्रभेदी गीतका अुल्लास, मिलता कहाँ आत्म-विदीर्णकारी तरलतर अुछ्वास?

मानव वाक्यकी अिस जीर्ण काया बीच मेरा छन्द भर दे अेक नूतन प्राण, अुसको अर्थ बन्धनसे छुड़ा ले जाय अूपर भावके स्वाधीन मोहक लोभमें दृढ़ पक्ष-धारी अश्वराज समान द्रुत अुद्दाम शोभन वेगसे,—यह है हृदयकी साध! मुनि, जिस तरह है यह अग्निकी अुद्दीप्त नौका नित्य अपनी गोदमें ले सूर्य-मंडलको अुतार रही नियतपर पारसे अुस पार विपुल व्योम-सागर बीच, मेरा छन्द भी अुस अनल नौका सदृश ढोअे विमल महिमा मनुजकी दिक् प्रान्तसे दिक् प्रान्त तक। मैं दान करना चाहता हूँ बद्ध मानव वाक्यको यह दीप्त गतिमय छन्द—अैसा हो कि यह अुन्मुक्त होकर संचरण कर सके जगकी क्षुद्र सीमा-राशि, लेवे खींच अिस गुरु भार पृथ्वीको गगनकी ओर, ले फिर खींच बन्धन-जड़ित भाषाको मनोहर भावरसकी ओर जो है देव पीठ-स्थली मानव जातिकी। जिस भाँति बाँधा है महाम्बुधिने धरित्रीको समावृत कर निरन्तर गान; अविरत नृत्यसे; यह छन्द मेरा भी अुसी ही भाँति आलिंगन जड़ित कर युग-युगान्तरको सहज गम्भीर कलरवसे प्रचारित करे मानवका अपार अतुल महिम्न-स्तोत्र, दे महनीय मर्यादा भुवनमें अिस क्षण-स्थाअी विरस नर-जन्मको।

"हे देवदूत मुने, पितामहके चरणमें यह निवेदन करो मेरी ओरसे यह स्वर्गसे जो आ गअी है परम-निधि नरलोकको अुसको न अब ले जायँ लौटा फिर वहाँ। है जो अपौरुष छन्द हमको मिला, अुसने देवताको है मनुज कर दिया, मैं चाहता देवत्व पदपर अुठा देना क्षुद्र मानवको; अुठाना चाहता हूँ अिस धरापर स्वर्गका प्रासाद!!"

(गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुरकी 'भाषा ओ छन्द' कविताके अेक अंशका अनुवाद)

[अनुवादक—डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्माके आँसू

—श्री मंजुलाल साकरलाल देसाअी

(अेक पुण्यस्मरण)

भारतमें ढाअी हजार सालके बाद पैदा हुअे पैगम्बरकी स्मशान-यात्रा ता. ३१ जनवरी १९४८ के दिन निकली ।

पृथ्वीके पाँचवें भागपर पूरा अधिकार रखनेवाली ब्रिटिश सरकारके नेता अिस यात्राके भी नेता थे । ये राज्याधिकारी तथा मंत्रीगण, आजादी पाकर अभी कल-परसों दुनियाके क्षितिजपर अूँचे अुठे हुअे अिस स्वतंत्र राष्ट्रके भाग्यविधाता, स्थापक तथा संरक्षकको अंतिम अंजलि देनेके लिअे अेकत्रित हुअे थे ।

जनता लाखोंकी संख्यामें अिस यात्रामें साथ जा रही थी । करोड़ों मानव अुसपर अश्रु-अंजलियाँ बरसा रहे थे । अरबों मनुष्योंने दुखका आघात सहन किया था ।

बड़ी ही शानदार स्मशान-यात्रा थी । सम्राटोंकी भी स्मशान-यात्रा अैसी नहीं होती । अविरल पुष्पवृष्टि, निरंतर रामधुन तथा सतत जयनादोंसे मरुतगण भी स्तब्ध हो गअे थे । अिस यात्राके करुण किन्तु दृप्त रेडियो-वर्णनके आन्दोलनोंसे दिग्दिगन्त आकाश व्याप्त था । अिस महामानवको दी गअी अंजलिको देखकर देवगण भी चकित हुअे होंगे ।

पता नहीं देवोंने जयनाद किया अथवा मानवकुलके हतभाग्यपर आक्रन्दन किया !

परन्तु अुनके नादसे विश्वसर्जनकी चिरंतन समाधि-में लीन ब्रह्माकी आँखें खुल गअीं । अुन्होंने अिस भव्य स्मशान-यात्रापर दृष्टि डाली और अुनकी आठ आँखोंसे अेक-अेक बूँद-आँसू टपक पड़े ।

यह आँसू किसलिअे ? पचास पीढ़ीकी प्रसूतिकी प्रसववेदनाका अनुभव करनेके बाद जिसकी सृष्टि वे कर सके थे अुस महामानवकी मृत्युके कारण ? अुसके मृत्युकी करुणतापर ? अुसके अवसानसे पीड़ित बनी मानवताके कारण ? नहीं ।

"जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः ।" जिसने जन्म लिया है वह तो किसी-न-किसी दिन मरनेवाला है ही । ब्रह्मा क्या यह नहीं जानते ? मानवके हत-भाग्यपर आँसू बहाना क्या कभी ब्रह्मा सीखे भी थे ?

ब्रह्माके आँसू टपके थे अुस स्मशानयात्राकी सजा-वटको देखकर ।

अहिंसाके अुस परम शिवका शव रखा गया था शस्त्रवाहिनी युद्ध-गाड़ीमें ! जगत्की तमाम सेनाओंका विसर्जन चाहनेवाले और अुसके लिअे सदा प्रयत्नशील रहनेवाले अुस महामानवकी शवगाड़ीको सैनिक खींच रहे थे । अुनकी स्मशानयात्राके आगे सैनिक थे—हयदल, नौदल, पैदल सैनिक थे । और जिस पुलिस दलने अुसके अनुयायियोंपर अविरत पशुबलका प्रयोग किया था, लगातार २९ बरसतक, जिसके असत्य, दंभ तथा अत्या-चारोंका अुसने आजीवन सतत विरोध किया था, वही पुलिसवाले अुसके शवको घेरकर चले जा रहे थे !

हिंसाके घोरतम वैज्ञानिक साधन—बोम्बर विमान अुसपर अुड़ रहे थे और पुष्पवृष्टि कर रहे थे !

सिकन्दर, सीझर, दारायुष या नेपोलियनके संहार-कांक्षी हृदयोंमें भी अीर्ष्या जागृत करनेवाली, हिटलर या मुसोलिनीको भी अपनी स्मशानयात्राके लिअे जिस प्रकारकी सजावटकी कभी कल्पना न आअी होगी वैसी सैनिक सजावट, सैन्यबलका प्रदर्शन और अुसके पीछे बख्तरबंदके रथ और युद्ध-गाड़ियाँ, अिस करुण किन्तु भव्य अेवं भावभरे वस्त्रावरणमें अपनी फौलादी संहारशक्तिका प्रदर्शन करती हुअी जा रही थीं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानववंश अपने अिस परम श्रद्धेय पुत्रको सुना-सुनाकर मानो यह कह रहा था, "तुम्हारा अवसान हुआ। मैं अभी जीवित हूँ। यह सच है कि तुमने बार-बार मेरी दुष्टतापर प्रकाश डाला है, लज्जासे मेरा सिर झुकाया है, फिर भी मैंने तुम्हारी बात अेक कानसे सुनी है और दूसरे कानसे बाहर निकाल दी है।"

मानवजातिकी अिस हीनताको देखकर देवगणोंके मुखपर जो अुपहास तथा तिरस्कार दिखाअी दिया; अुसीके कारण ब्रह्माने ये आँसू बहाअे!

शंभुका निःश्वास

२

अठारह घंटेसे श्वास रोककर अेकाग्र भावसे शंभु यह सब देख रहे थे। ब्रह्माके अिन आँसुओंको देखकर अुन्होंने अेक बहुत बड़ा निःश्वास छोड़ा।

अगले दिन पश्चिममें अस्त होनेवाले दक्षिणायनी सूर्यकी किरणें कैलासपर अीशान दिशामें गिरनेसे अुनके प्रकाश वर्तुलसे रचित अिन्द्रधनुषकी रचनाको जब वे देख रहे थे, अुन्हें दिशाओंको भेदकर आनेवाले अतिकरुण आक्रन्दके चीत्कार सुनाअी दिअे। अुग्र भूकम्पसे भी अविचलित रहनेवाला अुनका चित्त किन रहस्यमय आन्दोलनोंके कारण क्षुब्ध हुआ होगा? अक्षौहिणियोंके महासंहारके समय घोर करुण आक्रन्दोंको सुनकर भी निष्कंप रहनेवाला अिस शिव योगेश्वरका हृदय न मालूम क्यों अिस समय अेक क्षणके लिअे स्तंभित हो गया?

संहारमूर्ति माने गअे महाकाल तो सर्वांगसे शिव-कल्याणकारी हैं। सृष्टिके आरम्भसे जो संहारलीला चली आ रही है अुससे अुन्हें कोअी सुख नहीं मिलता। जीवित प्राणिमात्रका मरण निश्चित है, मरण अुत्क्रान्ति-प्रगतिके लिअे है। मृत्युके द्वारा ही मानवात्मा शिव-तत्वको जान सकता है। अिसलिअे प्राकृतिक क्रमसे आनेवाले मृत्युके कारण अुन्हें किसी प्रकारका क्षोभ होना संभव नहीं।

योगियोंमें भी जो महायोगी है, तपस्वियोंमें महा-तपस्वी है, त्यागियोंमें भी जो महात्यागी है, आजीवन जिसने यज्ञ, योग तथा तपश्चर्या की है वह जब स्थूलमेंसे सूक्ष्मके प्रति, सांतमेंसे अनंतके प्रति प्रयाण करता है, और जब मुक्तोंके संघमें महामुक्तका आगमन होता है, अैसे प्रसंगपर तो शिवस्वरूप अिस जोगीको आनन्द होना चाहिअे था।

यह मृत्यु तो अुनके हृदयको व्यथित नहीं कर सकता। करोड़ों मनुष्योंकी आर्तक्रंदना अुनकी प्रसन्नता-को मलीन नहीं बना सकती।

अुनकी आत्मा सदा करुणापूर्ण है। अिसलिअे वे लाखों हृदयोंमेंसे अुठी हुअी व्यथाकी अवगणना भी नहीं कर सकते थे। अीशान दिशाकी ओर दृष्टि किअे वे बैठे थे। अुन्होंने घूमकर नैऋत्यकी ओर देखा। युधिष्ठिर तथा जन्मेजयने जिस स्थानपर पहले यज्ञ किअे थे अुस स्थानपर अुनकी दृष्टि स्थिर हुअी।

अुनकी दृष्टिको स्थल तथा कालका कोअी अन्तराय नहीं। अुन्होंने अेक अैसा तप-जर्जर देह देखा जो मानों रुधिरप्यासी कालिकाके त्रिशूलके तीन फलोंसे विद्ध हुआ हो।

अुसके त्रिकालको देखकर अुनके नेत्र शोकमग्न हो गअे। यह देह कोअी साधारण देह नहीं थी। अनादि कालसे मानवको मानव बनानेके लिअे प्रयत्न करनेवाले पैगम्बरोंमें वह आखिरी महारथी पैगम्बर था।

मानव-कुलकी परपीड़न, परशोषण, परसंहारमें सुख माननेवाली दानवी वृत्तिका शमन करनेके लिअे युगयुगोंमें अिस धरापर पैगम्बर आअे हैं। अुन्होंने मानव-जातिको बोध दिया है। परन्तु अुन सबके बोधको जीवनमें प्रत्यक्ष कर, आध्यात्मिकको आधिभौतिक स्तरपर ले जाकर जगत्में विश्व-बन्धुत्वकी स्थापना करनेका प्रयत्न करने-वाला और अुसमें सफलताकी आशा जगानेवाला बीसवीं सदीमें यही अेक पैगम्बर था।

सृष्टिके आरम्भसे ही जो चली आ रही है अुस संहारलीलासे अूबे हुअे सदाशिवने सम्भवतः अैसी आशा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखी होगी कि अकारण होनेवाले अैसे रक्तपातोंका मूल ही अब नष्ट हो जाअेगा और परिणामतः अुन्हें सबसे अप्रिय लगनेवाला संहारकार्यका सदा अन्त हो जाअेगा।

शान्तिसृष्टाकी अैसी करुण मृत्युसे अेक क्षणके लिअे अुन्हें कदाचित् कुछ क्षोभ हुआ होगा।

अुसके थोड़े सच्चे भक्तोंकी तरह सम्भवतः सदाशिवको भी अेक क्षणके लिअे विचार आया होगा कि, अबतक जो लोग अुसके जीवनके मूल्यका सही मूल्यांकन नहीं कर सके हैं अुन्हें अब सत्यका ज्ञान होगा, अुसके करुण अन्तसे अहिंसा तथा प्रेमके सिद्धान्तोंके प्रचारको प्रोत्साहन मिलेगा और अिस प्रकार जीवन-कालमें वह जो सिद्धि प्राप्त न कर सका वह सिद्धि मृत्युके बाद अुस महायोगीको मिलेगी। सम्भवतः अुन्होंने यह आकांक्षा भी रखी होगी कि अिस प्रकार सारे जगत्में नहीं तो भारतमें प्रेमकी स्थापना होगी।

अिस घोर घटनाके प्रत्याघातमें, अभी जब अुनका स्थूलदेह अन्तिम संस्कारकी राह देख रहा था अुस समय अहिंसाके अिस परम अुपासकके अनुयायियों द्वारा हिंसात्मक रक्तपातका आरम्भ किया गया। देहकी मर्यादाओंसे मुक्त अुसकी आत्मा अपने अनुयायियोके अिन कृत्योंको देखकर कितनी दुखी हुअी होगी अुसकी कल्पना-मात्रसे भी करुणा मूर्ति भगवान शंकरका श्वास स्तम्भित हो गया होगा।

यही कारण है कि अहिंसाकी स्थापनाका आश्वासन लुप्त हो जानेपर, ब्रह्माकी आँखोंसे निकले आँसुओंको देखकर अुनके क्षुब्ध हृदयसे अेक गहरा निःश्वास निकल पड़ा।

अपने जीवनकालमें प्रत्येक क्षणपर दिअे गअे और मृत्युके समय सर्वोच्च सीमापर पहुँचाअे गअे अुसके बलिदानसे भी क्या मानवकी वैरभावना, दलबंदी, क्रोध, और असंयमका नाश न होगा? वही महासंहार, वही भीषण दानवता क्या चलती ही रहेगी और महारुद्रके खप्परको अप्राकृतिक रक्तधारासे भरती रहेगी। शंभुने करुण व्यंग्य-पूर्ण दृष्टिसे विष्णुकी ओर देखा।

विष्णुका स्मित

३

त्रिमूर्तिके दो देवोंकी आँखें विष्णुकी आँखोंसे मिलीं और विष्णुने परिम्लान मन्द स्मित किया।

ब्रह्माने अिस महामानवकी सृष्टि करके अपनी सर्जकताकी पराकाष्ठा दिखाअी थी। अुसकी मृत्युकी करुण भव्यतासें शिवके संहार कार्यको भी गौरव प्राप्त हुआ था। परन्तु विष्णुके अवतारोंसे प्रेरणा प्राप्त कर मानव-धर्म-महागाथाकी जिसने प्रतिष्ठा की, अुसके लुप्त होनेवाले अीश्वरत्वको जिसने मानव-हृदयमें पुनः स्थापित करनेके लिअे अविरत श्रम किया, अुसकी रक्षाके लिअे विष्णुने कोअी चिन्ता क्यों न की? ब्रह्मा तथा विष्णुके नेत्रोंमें यह प्रश्न था।

और चक्षुओं द्वारा ही विष्णुने अुत्तर दिया; "अेक सौ अिक्कीस दिन पहले अुसने पुकार-पुकारकर कहा था "मैं अकेला रह गया हूँ! मेरी बात कोअी सुनता नहीं। मेरा कोअी अनुयायी नहीं!"

सदियोंतक सतत प्रयत्न करनेपर भी दूसरे देशोंको क्वचित् ही जो सिद्धि प्राप्त होती है, वह सिद्धि जिस देशको अुसने अकेले ही अपने अविरत श्रमसे कर्मयोग द्वारा प्राप्त कराअी वह देश जब अुस सिद्धिकी प्राप्तिके समय अुसकी अवगणना कर रहा है तो अुसे अुसकी सजा क्यों न मिलेगी?

"अितिहासमें क्वचित् ही अैसी कृतघ्नता देखनेको मिलेगी। अैसी अधमता शायद ही कहीं देखी गअी होगी।"

जिनकी आत्मा ज्ञानलवदुर्विदग्ध है वे बौने लोग अपनी नाप-तौलसे अुस विराटकी नापतौल कर रहे थे। अपनी बुद्धिसे अुसकी महत्ताका नाप निकालकर वे अपनी दुर्बलता छिपा रहे थे।

"अिसलिअे मृत्युञ्जय होनेपर भी अुसने स्वयं मृत्युका आह्वान किया। अगले ही दिन अुसने कहा था कबतक मुझे यह खेल खेलना होगा।"

"आकांक्षाओंसे परे अुसने मृत्युकी वाञ्छना की। तपस्वियोंमें श्रेष्ठ अुसकी अिच्छाकी अवगणना कौन कर सकता है?"

"और मृत्यु आअी; रुद्र किन्तु भव्य रूपमें। स्वेच्छासे अुसने अुसका स्वागत किया।"

"और मानवजातिने तो अुसे आज ही पहचाना है। अुसकी मृत्युने ही भारतकी जनताको अुसकी सच्ची

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महत्ताका ज्ञान कराया है। अुसकी मृत्युके कारण ही अुसके बारेमें, अुसके जीवनके बारेमें ज्ञान प्राप्त करनेकी भूख अुनमें जगी है।"

"विदेशी लोग ही भारतकी विभूतियोंको सर्व प्रथम जानते पहचानते आअे हैं। अिस महाविभूतिका सच्चा मूल्यांकन भी संभवतः विदेशोंमें होगा।"

"विदेशोंके प्राणवान जनसमाजोंमेंसे कोअी अेक अुसके सत्योंको ग्रहण करेगा और संभव है कि अुसकी जीवनगाथा मानव जातिको मृत्युके मुखमें जानेसे रोक सके।"

ब्रह्मा मूक थे। शंभुके नेत्र अश्रद्धासे भरे थे। मानो वे कह रहे थे, "मानव तो यह भूल जाअेगा कि वह मानव था। वह अुसे देव मानने लगेगा, अुसके जीवनको दैवी जीवन समझेगा और अुसका अनुसरण न करनेके लिअे कअी बहाने भी बनाअेगा। पृथ्वीपर ही सत्य प्रकट होता है, पृथ्वी तत्त्वसे भरेपूरे मानवमें ही महत्ता होती है अिसे स्वीकार करनेमें अुसे लज्जा मालूम होती है।

अिस प्रकार अुसमें देवत्वका आरोपण कर वे अुसके बोधको भुला देंगे। अुसके जीवनके तत्त्वोंको दैवी मानकर अुससे सदा दूर ही रहेंगे। "हम अैसा कैसे कर सकते हैं।" अैसी पामर वाणी कहकर अुसके जीवन-कार्यकी अुपक्षा करेंगे। हम जो मानवसे देव बने हुअे हैं, क्या यह नहीं जानते?"

ब्रह्माकी भवें सिकुड़ने लगीं। अुनके चक्षु समक्ष अितिहासके दृश्य दिखाअी दिअे। पाँच हजार वर्ष पूर्व यमुनाके किनारे जन्म ग्रहण करके कृष्णने कर्मयोगका अुपदेश दिया था। जीवनमें अुसे प्रत्यक्ष कर दिखाया था। परन्तु परिणाम अुसका कुछ न निकला। अन्तमें सौराष्ट्रके समुद्रतीरपर पारधीके बाणसे हत होकर अुन्होंने अपनी अिहलीला संवरण की। और आज सौराष्ट्रके सागरतीरपर जन्म ग्रहण करके कर्मयोगका व्यवहार कर दिखानेपर भी अुसका अनुकरण होता न देखकर व्यथासे पीड़ित हृदयसे नव-पारधीके हाथसे मारे गअे मोहनदास यमुनाके तटपर अपनी लीला सँवरण कर रहे हैं। क्या अिस प्रकार यह वर्तुल पूरा हो रहा था?

अुनकी दृष्टिसे नीरव वाणी प्रकट हुअी, "जब अैसा होगा तब प्रलयके लिअे आपका तृतीय नयन तो है ही?" अुन्होंने शंकरसे कहा—"मानवने अब परमाणुका छेदन कर अुसकी भी सिद्धि प्राप्त कर ली है।"

वह म्लान स्मित विष्णुके मुखपर पुनः मँडराने लगा।

मानवकी तथा देवोंकी भी दुर्बलता देखकर जिनके हृदय कठोर हो गअे हैं और कभी क्षुब्ध नहीं होते अुन तीनों महादेवोंने क्या यही सोचा होगा कि आडम्बरके विरोधी अुस महासन्तकी स्मशानयात्रामें शस्त्र तथा अधिकारकी अैसी सजावट और सम्राटोंको भी आश्चर्य-चकित करनेवाला दबदबा अुस नादान बालक जैसे लोगोंकी स्वाभाविक अभिरुचिमात्र थी, जिनका कि दिमाग अिस क्रूर मृत्युके कारण सुन्न हो गया था; कार्य करनेमें असमर्थ बन गया था? अपने अत्यन्त प्रिय व्यक्तिकी मृत्यु होनेपर मानवमात्र अिसी प्रकारके प्रदर्शन करते हैं। और यहाँ अिस महा-यात्रामें तो पशुबल—हिंसाबलने अहिंसाके प्रति श्रद्धांजलि अर्पणकर अपनी लघुताको ही तो स्वीकार किया था?

अिसका अुत्तर दे रहा था श्मशान यात्रियोंकी भजनधुनकी गूँजका गगनभेदी शब्द, जो दिग्दिगन्तमें सुनाअी दे रहा था।

अीश्वर अल्लाह तेरे नाम,
सबको सन्मति दे भगवान।

और अेक ओर खड़े अेक मानव झुंडमेंसे आवाज आअी "बापूजीका स्मारक बनना चाहिअे। अिनके मन्दिर बनाअे जाअें, अुनकी मूर्तियाँ स्थापित की जाअें कि जिन्हें देखकर हमारी सन्तानोंको अुनका स्मरण बना रहे।"

मृत्युके समयके जिसके अन्तिम दिन अुसकी अव-गणनाके कारण अुसके लिअे अति दुखद बने थे अुसके बापूजीके स्मारक बनानेकी तथा तर्पण करनेकी आकांक्षा समुद्रमें आनेवाले ज्वारकी तरह अुद्वेलित होने लगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोमेन्टिक साहित्यकी गरिमा

—श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी

तीस वर्ष पहले मैंने रोमेन्टिक साहित्य और रूढ़िबद्ध (प्रणालिका बद्ध) साहित्यके पारस्परिक भेदका वर्णन किया था। प्रणालिका बद्ध साहित्यकी पहचान यह है कि वह आन्तरिक अूर्मियों (भावनाओं)से पृथक् किसी अेक लक्ष्यको स्वीकार करता है। बहुधा वह परलोक-प्रेमी अथवा नीतिसाधक होना चाहता है। कअी बार वह शिष्ट माने जानेवाले साहित्यके अनुकरणको भूल नहीं सकता, अतअेव वह बन्धनमुक्त नहीं हो सकता। आधुनिक युगमें प्रायः यह वृत्ति सर्वमान्य हो गअी है कि राजनीतिकी दृष्टिसे भी साहित्यकी अुपयोगिता होनी चाहिअे।

परन्तु रोमेन्टिक साहित्यका संबंध अैसी किसी पद्धतिके साथ नहीं है। हृदयकी गहरी अनुभूति व्यक्त करनेमें ही अुसकी सफलता निहित है। रोमेन्टिक साहित्यका स्रष्टा निस्संकोच आत्मनिवेदनमें ही अपनको कृतार्थ मानता है।

रोमेन्टिक साहित्य अर्वाचीन युगकी अेक विशेषता है। अुससे प्रभावित और प्रेरित होकर गत शतीमें गुजरातीमें बहुत-सा साहित्य रचा गया। कवि नर्मदाशंकर हमारे (गुजरातीके) प्रथम रोमेन्टिक थे। परन्तु अुनके स्वभावमें सूक्ष्मता और मृदुता नहीं थी; अिसके अतिरिक्त अुनकी दृष्टि सरस नहीं थी। अतिशयोक्ति पूर्ण कथन अुनके लिअे स्वाभाविक थे। वे साहसिक थे। अनजाने पथपर जानेका अुत्साह अुनमें विद्यमान था। ज्वालामुखीके मुखपर जाकर खड़ा रहनेकी धृष्टता अुनमें थी। अिसी कारण गुजरातके अर्वाचीन विधायकोंमें वे प्रथम थे। अर्वाचीन साहित्यका सच्चा क्षेत्र मानव हृदय ही है, अिस सत्यको हमारे साहित्यकारोंने स्वीकार किया और अपने (गुजरातीके) साहित्यमें वे नवीन दृष्टिको लाअे।

गुजराती साहित्यके भीष्म पितामह स्व. गोवर्धनराम त्रिपाठी (१८५५–१९०७)ने अपने हृदयके स्पंदनोंको "सरस्वतीचन्द्र" और "कुसुमसुन्दरी" के हृदयोंमें सुना और फिर हमको सुनाया। अपने हृदयके द्वार अुन्होंने खोल दिअे और हम सबको अपने हृदयमें विहार करनेका सामर्थ्य प्रदान किया। अिसी कारण अपनी सर्जक-शीलता द्वारा अुन्होंने अर्वाचीन भारतीय साहित्यमें नवीन सीमाचिह्न स्थापित किया।

नरसिंहराव भोलानाथ दिवेटिया, मणिशंकररत्नजी भट्ट (कान्त) और "कलापी" ने अपने हृदयके द्वार और भी अधिक अुन्मुक्त कर दिअे और अिस प्रकार अुन्होंने हमारे हृदयके साम्राज्यकी सीमाको विस्तृत किया। कविवर नानालालने हृदयके सुकुमार स्पंदनोंको शब्द सौन्दर्य द्वारा आह्लादजनक बनाया। गाँधीजीने अपनी आत्मकथामें आन्तरिक मंथनों और वृत्तियोंको खुले रूपमें वर्णित करके रूसोके आत्मकथनोंके साथ स्पर्धा की।

रोमेन्टिक साहित्यके आदि स्रष्टा रूसोने अपने "आत्म-कथनों" में अिस नवीन दृष्टिको स्पष्ट करनेवाला अेक गहन-सूत्र लिखा है—Moi seul—"केवल मैं" मैं जैसा हूँ वैसा ही! मेरे भाव और मेरी अूर्मियाँ जैसी हैं, मैं अुनका ही दर्शन कराअूँगा और अिसी प्रकारके दर्शनमें आपको अपना हृदय दिखाअी देगा।

मानव मात्रका हृदय सागरके समान है। अुसमें अुल्लासमय तरंगें अुठती हैं। भड़कीले रंगोंवाली मछलियाँ और प्रवाल-समूह भी सागरमें विद्यमान हैं। किसी देवकथाके सुमधुर संगीत-सा गीत अिस सागरका प्राण है। साथ ही अिस सागरमें विकराल शिशुमार, जहरीले जानवर और दम घोंटनेवाली कंदराअें भी विद्यमान हैं। सागर अपनी तरंगोंपर मनुष्यको अुछाल सकता है और अपने दम घोंटनेवाले गहन गह्वरोंमें डुबा भी सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस सागरके गहरे गह्वरोंको निहारना और अुनके सुन्दर और भयंकर रहस्योंको प्रतिबिम्बित करना ही रोमेन्टिक साहित्यका काम है। जिस समय रोमेन्टिक साहित्य अिस वृत्ति और दृष्टिको स्वीकार करता है अुसी समय प्रणालिका-बद्ध हृदयपर ढाँका हुआ आवरण खिसक पड़ता है। दोनों प्रकारके साहित्योंका भेद स्पष्ट हो जाता है और अर्वाचीन साहित्यकी मर्मभेदिनी मोहिनीके रहस्य साहित्यकारको अवगत हो जाते हैं।

यह दृष्टि केवल अर्वाचीन साहित्यमें ही है, अैसी बात नहीं। अर्वाचीन मानवने समस्त जीवनके विषयमें जिस नवीन दृष्टिका विकास साधा है, अिसीका यह अंग है। वह दृष्टि ही मानव अितिहासके पुराने युगसे हमारे अर्वाचीन युगको पृथक् करती है।

अिस दृष्टिका मन्तव्य है कि जीवन ही परम सत्य है! यदि मानव-हृदयमें रंगभरा, वैविध्यपूर्ण आंतरिक वैभव (Vivid richness of the life) प्रकट हो जाअे और सूक्ष्म स्वानुभव शक्ति प्रत्येक अनुभवके रसमें तल्लीन हो सके तो यह सत्य सिद्ध हो सकता है। अिस वैभवपर परदा डाल दिया जाता है या अुसे विकृत किया जाता है, तब जीवन असत्य बनता है।

यह अर्वाचीन दृष्टि अिस प्रकारकी समाजव्यवस्था बनाना चाहती है जिससे प्रत्येक मनुष्यके लिअे आंतरिक वैभव सुगम हो जाअे। यही सर्वोदय है! समाजसेवा, लोकशासन और कल्याणशासन (वेलफेयर स्टेट)—ये सब अुसके साधन मात्र हैं, जिनसे वह सर्वोदय शीघ्र अुदित हो सके। जब अिस सत्यके दर्शन होते हैं तब मानवको आत्मसिद्धि प्राप्त होती है। तब अुसे अपूर्वताके दर्शन होते हैं। परलोकमें नहीं, अिसी लोकमें। स्वभावके दमन द्वारा नहीं; अपितु अुसके भावनामय परिवर्तनसे।

कभी-कभी यह आंतरिक वैभव निर्मल और भव्य होकर अुल्लासकी पराकाष्ठा तक पहुँच जाता है। अुस समय जो नैसर्गिक होता है वह आध्यात्मिक बन जाता है और जो आध्यात्मिक होता है वह नैसर्गिक बन जाता है। अैसा होनेपर मानवमें अीश्वरका अवतरण होता है और अुसके सामर्थ्यसे समस्त मानव आंतरिक वैभवसे समृद्ध बन जाते हैं। अनादि कालसे योगी लोग, भक्त और चिंतक लोग अिसी वैभवको प्राप्त करके, अिसके विकासकी परिसीमापर पहुँचकर अपनेमें तथा जगत्में अीश्वरके आविर्भावका दर्शन करते आअे हैं।

आजके युगमें अिस प्रकारके वैभवका साहित्यमें दर्शन करना दुर्लभ होता जा रहा है, क्यों कि अुसके बीचमें महान् भय आकर खड़ा है और बहुधा वह साहित्यकारकी स्वानुभव शक्तिको रोक देता है।

सामान्यतया साहित्यके प्रकार और अुसकी सरसताका आधार तत्कालीन वाचक-वृन्दकी रुचि और ग्रहण शक्तिकी मर्यादापर निर्भर रहता है। अनेक बार शिक्षित और संस्कारवान् रसिक वर्गमें रुचि-विकार अुत्पन्न हो जानेसे साहित्यका विकास संकुचित बन जाता है। "कादम्बरी" लिखते समय बाणभट्टके लिअे, अपने समयके आडम्बरपूर्ण भाषाके रसिकोंको सन्तुष्ट करनेके लिअे, अटपटी भाषाका प्रयोग करना अनिवार्य हो गया था।

अिस युगसे दरबारी रसिक राजा लोग बिदा हो गअे हैं। अुसके साथ ही दरबारोंमें पालित-पोषित होनेवाले सिद्धहस्त साहित्यकार भी चले गअे हैं। विद्वान और अध्ययनशील रसिकोंकी सम्मतिपर अब पुरस्कारका आधार नहीं है। आज तो सामान्य पाठककी संख्या बड़े वेगसे बढ़ती जा रही है और पुरस्कार देनेकी शक्ति अुनके पास आ गअी है। यह समुदाय न तो रसिक है, न अुसके पास बुद्धि-चातुर्य है।

अिसके अतिरिक्त राजसत्ताके हाथमें अपनी नीतिके अनुकूल साहित्यको प्रसारित और पोषित करनेकी असीम शक्ति आ गअी है। अतः जाने-अनजाने साहित्यकार यह स्वीकार कर लेता है कि साहित्य सर्जन तो राजनीतिके प्रचारका साधन मात्र है। अिन सब बातोंका परिणाम यह हुआ है कि साहित्यके आदर्श और अुसकी प्रणालियाँ, दोनों ही अवनत होती जा रही हैं।

जिसे सरसताका साक्षात्कार करनेकी आकांक्षा है अुसे तो अिस आवरणको तोड़ना ही पड़ता है। वही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यकार अिस कार्यको कर सकता है, जो समस्त संसारकी अमर साहित्यिक कृतियोंका सेवन करके अनन्त-काल तक आदृत होनेवाले साहित्य-निर्माणकी अभिकांक्षा रखता है। कलाकारोंको अीश्वरने समृद्ध आन्तरिक वैभव प्रदान किया है। वही वैभव अुनकी जीवन-यात्रा सफल करनेका क्षेत्र है और साधन भी है।

अिसीलिअे मैं कलाकारोंसे कहता हूँ कि अुस वैभवके प्रति विश्वासघात मत कीजिअे। अुसपर किसीको जंजीरें मत बाँधने दीजिअे। अुसको कला-स्वामियोंकी अूष्मा प्रदान कीजिअे। अनुभवके अश्रुओंका अुसपर जल सिंचन कीजिअे। गरीबीसे घबराअिअे नहीं! तृप्तिसे विमुख रहिअे। जगत्के प्रलोभनों और भयोंकी कुछ परवाह मत कीजिअे!

अपनी सूक्ष्म अनुभूतिके सामर्थ्यसे समृद्ध बने हुअे आंतरिक वैभवको निस्संकोच भावसे खुले, अनावृत रूपमें साहित्यमें मूर्त बनाअिअे। आत्मश्रद्धासे विचलित मत होअिअे!

अिस प्रकार मूर्त बना हुआ आपका साहित्य हृदयोंको नवपल्लवित करेगा और मनुष्योंको अपूर्व बननेका सामर्थ्य प्रदान करेगा। जगत् भले ही आपकी अवगणना करता रहे या परिहास करता रहे। यह निश्चय जानिअे वह साहित्य ही साहित्यकारको अवश्य आत्म-सिद्धिके शिखरपर ले जाअेगा।

अिस प्रकारके साहित्यका निर्माण गुजरातमें हो, यही मेरी प्रार्थना है! अन्तिम क्षणमें भी जब मेरे निश्चेतन हाथोंसे मेरी लेखनी गिर पड़ेगी, अुस समय भी, यही प्रार्थना करूँगा। शिवास्ते पंथानः सन्तु! *

---

* गुजराती साहित्य परिषद् (नडियाद अधिवेशन) के सभापति-पदसे दिअे गअे भाषणका अेक अंश।

(हिन्दी रूपांतरकार : **श्री शंकरदेव विद्यालंकार**)

अुनकी अमर याद!

फिरता रहा दर-दर वह मुहब्बतका भिखारी,
दुनिया अुसे कहती थी अहिंसाका पुजारी,
अुपदेश अिसी बातका हर साँसमें जारी,
ले-देके अुसे देशकी चिन्ता थी यह भारी,
क्या अुसकी तरह कोअी भला काम करेगा?
दुनियामें, जमानेमें न ये नाम रहेगा॥

× × ×

अिलजाम किसीपर कभी धरते नहीं देखा,
सच बातपर अुसको कहीं डरते नहीं देखा,
नफ़रतसे भी नफ़रत कभी करते नहीं देखा,
यों हमने किसी औरको मरते नहीं देखा,
देता था मुहब्बतका वह पैगाम हमेशा।
दुनियाकी भलाअीसे रहा काम हमेशा॥

—'बिस्मिल' अिलाहाबादी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी साहित्यपर बंगलाका प्रभाव

—श्री मन्मथनाथ गुप्त

यद्यपि अिधर हिन्दीमें बंगला साहित्यसे अनुवादकी मात्रा पहलेकी तुलनामें घट गअी है, फिर भी अितना तो बिना किसी संकोचके कहा जा सकता है कि भारतीय भाषाओंमें बंगलाके साथ हिन्दीका सबसे अधिक सम्पर्क रहा है और है। जब हम अिसके कारणोंपर जाते हैं, तो हमें अुनके ढूँढ़नेमें कोअी दिक्कत नहीं होती।

बंगालमें अँग्रेजी शिक्षा सबसे पहले आअी। बंगला साहित्य अिसीके प्रभावमें नअी डग भरकर आगे बढ़ा। पर अँग्रेजी प्रभाव बंगलामें जसे सबसे पहले आया, वैसे ही अुसके विरुद्ध प्रतिक्रिया भी वहाँ सबसे पहले आअी। अिसी क्रिया-प्रतिक्रियाकी धूप-छाँहमें बंगला साहित्यकी जययात्राका सूत्रपात हुआ। बंकिम और रमेशचन्द्र जो हिन्दी साहित्यपर सबसे पहले छाअे, वे जहाँ अेक दृष्टिसे अँग्रेजी शिक्षाकी अुपज थे, वहाँ दूसरी दृष्टिसे वे अुसके विरुद्ध प्रतिक्रियाकी भी अुपज थे। नवीन बंगाल और अुसके बाद नवीन भारतमें अिन लेखकोंका स्वागत अिसी कारण किया गया। अँग्रेज अिनके गुरु थे, पर साथ ही अिन लोगोंने गुरुको मारनेका गुर भी सीख लिया था। ये लोग जहाँतक शैली आदिका सम्बन्ध है, अँग्रेज लेखकोंके अनुकरणकारी थे, पर अिनके साहित्यकी अन्तर्गत-वस्तुका झुकाव कअी अर्थोंमें बिल्कुल ही अँग्रेजोंके विरुद्ध जाता था।

बंगला भाषासे हिन्दीवालोंका सम्पर्क बढ़नेका अेक कारण यह भी रहा कि हिन्दीवालोंके लिअे बंगला बहुत ही आसान है। दो महीने परिश्रम करनेपर पढ़कर समझने लायक बंगला किसीको भी आ सकती है। अिसी कारण बंगला पुस्तकोंके अनुवादकी ओर बहुत अधिक लोग आकृष्ट हुअे।

अब हम कुछ अैतिहासिक ढंगसे चलें। बंगालके बौद्धिक नेताओंने प्रारम्भमें ही हिन्दीके महत्वको समझ लिया था। अँग्रेजी शिक्षाके प्रतीक साथ ही अँग्रेजियतके विरुद्ध प्रथम जबर्दस्त व्यक्तित्व राजा राममोहन रायका था। कअी अर्थोंमें अुन्हींसे हम आधुनिक भारतका प्रारम्भ मान सकते हैं। वे हिन्दीके महत्वको भली भाँति समझते थे, यह अिस बातसे ज्ञात है कि १८१५ अी० में अुन्होंने हिन्दीमें वेदान्त सूत्रका अनुवाद किया था। यह अनुवाद अभी प्राप्त नहीं हुआ है, पर १८१६ की लिखी अुनकी अेक हिन्दी पुस्तिका प्राप्त हुअी है। श्री हजारीप्रसाद द्विवेदीने लिखा है—"कलकत्तेसे निकलनेवाले हिन्दीके समाचारपत्रोंके आद्य अुद्योक्ताओंमें राजा राममोहन राय भी थे। परवर्ती कालके ब्राह्म नेता अिस बातको नहीं समझ सके, परन्तु बाबू नवीनचन्द्र राय अिस बातको समझ गअे थे। सन् १८६७ अी० के मार्च महीनेमें अुन्होंने बंगलाकी प्रसिद्ध 'तत्वबोधिनी'के आदर्शपर 'ज्ञान्-प्रदायिनी' पत्रिका निकाली।"

बंगला अुपन्यासोंका हिन्दीपर बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। हजारीप्रसादजी यह मानते हैं कि अुन्नीसवीं शताब्दीके अन्त्य भागमें बंगालके अुपन्यास लेखकोंका हिन्दीपर बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। डा० द्विवेदीका तो यहाँतक कथन है कि बंकिम बाबूका प्रभाव हिन्दीपर ही नहीं, तत्कालीन अन्य भारतीय भाषाओंपर भी पड़ा। आचार्य द्विवेदी यह स्पष्ट कर देते हैं कि हिन्दीमें तो अंग्रेजी साहित्यका प्रभाव शुरू-शुरूमें सीधे न आकर बंगाली लेखकोंके माध्यमसे ही आया। अैसा क्यों हुआ, यह मैं पहले ही बता चुका हूँ।

बहुतसे हिन्दी-लेखकोंने बंगलासे अनुवादके कार्यमें अपनेको लगा दिया। पंडित प्रतापनारायण मिश्र और पंडित राधाचरण गोस्वामीने बंगला अुपन्यासोंका अनुवाद आरम्भ किया। बाबू गदाधरसिंहने रमेशचन्द्रका 'बंग विजेता' और 'दुर्गेशनन्दिनी' का अनुवाद किया। राधाकृष्णदास, कार्तिकप्रसाद खत्री, रामकृष्ण वर्मा आदि लेखकोंने अनुवादका कार्य सहर्ष किया।

बंगला कविताकी ओर भी हिन्दीके लेखकोंका ध्यान गया। माअिकेल मधुसूदनदत्त बंगलाके अेक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत प्रमुख कवि हो गअे। माअिकेलने पाश्चात्य विशेषकर काव्य साहित्यमें जो कुछ भी अुत्तम था, अुसका बहुत अच्छी तरह अध्ययन किया था। वे सही अर्थोंमें पाश्चात्य साहित्यमें निष्णात थे। वे पहले अंग्रेजीमें ही पुस्तक लिखना चाहते थे, पर लोगोंने अुन्हें समझाया और अुन्होंने मातृभाषामें ही काव्य रचना की। श्री मैथिलीशरण गुप्तने अिनके 'मेघनाद वध' काव्यका अनुवाद किया।

डा० सुधीन्द्रने लिखा है कि माअिकेल मधुसूदनके अेक पौराणिक काव्य 'व्रजांगना' के सर्ग 'सरस्वती' में अनूदित होकर प्रकाशित हुअे। यह अनुवाद मधुप कविके नामसे प्रकाशित हुअे थे। बंगलाकी कृतिवासी रामायणकी ओर भी ध्यान गया और अुसके आधारपर कुछ कविताअें प्रस्तुत हुअीं जैसे द्वारकाप्रसाद गुप्तका 'वीर बालक'। श्री मैथिलीशरण गुप्तने 'मेघनाद वध' के अतिरिक्त 'वीरांगना' का भी अनुवाद किया और अुन्होंने कुछ नअे प्रयोग किअे।

बंगला छंदोंको अपनानेके प्रयत्न भी हुअे। डा० सुधीन्द्रके अनुसार प्रसादने बंगला त्रिपदी छन्दका हिन्दीमें प्रयोग किया, पर यह छन्द हिन्दीके अुच्चारणके अनुकूल नहीं पड़ा। अिसके पहले ही सर्वप्रथम भारतेन्दु ने बंगलाके पयार छन्दका प्रयोग व्रजभाषामें किया। अुसीके आकर्षणमें प्रसादजीने भी जब वे व्रजभाषा लिखते थे, पयार छन्दमें सन्ध्या तारा आदि कविताअें लिखी थीं। यह केवल अभिरुचिके रूपमें अुन्होंने किया था, प्रचार या प्रवर्तनके अुद्देश्यसे नहीं।' डा० सुधीन्द्र आगे चलकर और भी लिखते हैं—

"श्री मैथिलीशरण गुप्तने 'वीरांगना' और 'मेघनाद वध' में बंगला पयारसे अेक वर्ण अधिक अर्थात् पन्द्रह वर्णोंके छंदका प्रयोग किया, जो कवित्तका ही अुत्तरार्द्ध चरण है। वे कदाचित् चौदह वर्णोंका छन्द आविष्कृत कर लेते, परन्तु बंगलामें विभक्ति संज्ञादिके साथ संयुक्त रहती है, अतः हिन्दीकी कठिनाअीको दृष्टिगत रखते हुअे यह स्वतन्त्रता अनुवादकने ली है। + + + पयार छन्दके अवतरणके दो प्रयत्न हुअे— प्रसादका और गुप्तका। पहला प्रयत्न तुकान्त है और दूसरा अतुकान्त।"

यह तो प्राक् रवीन्द्र युगकी कविताकी बात हुअी। रवीन्द्रके समसामयिक बंगला साहित्यमें आनेके पहले हम फिर अेक बार बंगला अुपन्यासोंकी ओर लौटते हैं और यह देखनेकी चेष्टा करते हैं कि बंगला अुपन्यासोंका हिन्दीपर क्या प्रभाव पड़ा। जब बंगलामें नअे ढंगके अुपन्यास लिखे जा रहे थे, अुस समय हिन्दीमें तिलस्माती अुपन्यासोंका बोलबाला था। पर बंगला अुपन्यासोंके सामने अिनका रंग फीका पड़ गया। द्विवेदीजीके अनुसार बंगला अुपन्यासकारोंकी लचीली भावुकताके साथ पश्चिमसे आअी हुअी रोमांस परम्पराका अैसा सुन्दर योग हुआ कि अुस कालका समूचा भारतवर्ष अुसके सर्वग्रासी प्रभावकी लपेटमें आ गया। मैं पहले ही बता चुका हूँ कि बंगला अुपन्यासोंकी जनप्रियताका अेक कारण अुनमें अन्तर्निहित अंग्रेजियतका विरोध तथा राजनीतिक रूपसे सर्वत्र न सही, सांस्कृतिक रूपसे सिर अुठाकर खड़े होनेका अुपादान भी था।

अुस समयकी भाषापर भी बंगलाके शब्दों, मुहावरों और वाक्यगठनका प्रभाव पड़ा। श्री हजारीप्रसाद द्विवेदीने अिसके कुछ अुदाहरण दिअे हैं। वे कहते हैं— "अुस कालकी भाषापर बंगलाके शब्दों, मुहावरों और वाक्यगठन तकका प्रभाव पड़ा। शेष करना (समाप्त करना), जिज्ञासा करना (पूछना), सर्वनाश, किंकर्तव्यविमूढ़ आदि प्रयोग सीधे बंगला अुपन्यासोंकी वाक्यावलीसे आअे। बहुत दिनोंसे अिन प्रयोगोंसे भाषाका पीछा नहीं छूटा। सन् १९२० के बाद जब नया अुत्थान हुआ, और प्रेमचन्द आदि शक्तिशाली कथाकारोंका प्रभाव व्यापक हो अुठा, तब भाषा अिन प्रयोगोंसे बच गअी।"

द्विवेदीजीने यह तो बताया कि बंगलासे कौनकौनसे प्रयोग आअे और बादको वे प्रयोग लुप्त हो गअे। पर अुन्होंने यह नहीं बताया कि सैंकड़ों प्रयोग आअे और वे हिन्दीमें रह गअे। अिस विषयपर पूरी खोज करनेकी आवश्यकता है। हिन्दीकी खड़ी बोली जब बंगलाके संस्पर्शमें नहीं आअी थी, अुस समयकी हिन्दी और बादकी हिन्दीकी तुलना करनेपर अिस सम्बन्धमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वास्तविकताका ज्ञान हो सकता है। मेरा नम्र निवेदन है कि ब्रज और अुर्दू दोनोंसे अलग जो हिन्दी बनती गअी, अुसमें बंगला साहित्यसे परिचित बल्कि अुसमें पगे हुअे हिन्दी-लेखकोंका दान बहुत अधिक है। हजारीप्रसादजी भी अिस बातको दूसरे ढंगसे मानते हैं। वे कहते हैं—

"बंगला अुपन्यासोंके अनुवादोंने भाषाको संस्कृत पदावलीकी मधुरता और गम्भीरताकी ओर प्रवृत्त किया और कोमल भावनाओं तथा सुकुमार कल्पनाओंकी रुचि अुत्पन्न की। यद्यपि कुछ दिनोंतक अुसका अभिभूतकारी प्रभाव हिन्दीपर छाया रहा, पर सब मिलाकर अुसने हिन्दी कविता और गद्यकी भाषाको समृद्ध किया। अुर्दूके अतिरंजित कथानकों और किस्सागोअी परक साहित्यसे कुछ देरके लिअे छुटकारा मिलना हिन्दीके विकासके लिअे आवश्यक था। अुर्दू मुहावरोंकी भाषा बन गअी थी, अुस समय अुससे बँधे रहनेपर हिन्दीमें अुन्मुक्त कल्पनाका अवकाश न मिलता और हमारा कथानक साहित्य मुहावरेबाजी और लतीफेबाजीमें देरतक अटका रहता।"

अिस प्रकारसे हम देखते हैं कि प्रारम्भिक आधुनिक हिन्दी साहित्यपर बंगला साहित्यका कअी रूपमें प्रभाव पड़ा। बादको जब बंगला साहित्यमें रवीन्द्रनाथका अुदय हुआ, तो बंगलाका प्रभाव हिन्दीपर और भी अधिक पड़ा। रवीन्द्र साहित्यका हिन्दीमें अनुवाद हुआ और बहुतसे हिन्दी लेखकोंने तो अुसका स्वाद मूल बंगलामें ही लिया। श्री शान्तिप्रिय द्विवेदीने बंगलाके प्रभावके सम्बन्धमें जो लिखा है, वह द्रष्टव्य है। वे लिखते हैं—"पहले हम अलिफ-लैलाके देशमें थे, बंगलाके सम्पर्कसे हम अपनी माँ-बहनों, भाअी-बन्धुओंके समाजमें आअे। अुर्दू और बंगलाका प्रभाव केवल प्रारम्भिक प्रेरणा न रहकर हमारे कथा-साहित्यको कुछ प्रौढ विकास भी दे गया है। अिस प्रौढ़ विकासके दो यशस्वी कलाकार हुअे—प्रेमचन्द और प्रसाद। प्रेमचन्दकी टकसाली भाषा अुर्दूकी देन है, प्रसादकी भाव-प्रवण शैली बंगलाकी देन।"

डा० कृष्णलालने भी यह माना है कि बंगला साहित्यका ऋण बहुत भारी है, पर वे साथ ही यह भी कहते हैं कि "वास्तवमें यह ऋण अँग्रेजी साहित्यका ही है क्योंकि बंगला साहित्य ही अँग्रेजी साहित्यसे प्रभावित हुआ। अन्तर केवल अितना ही है कि यह ऋण अँग्रेजी सिक्कोंमें नहीं वरन भारतीय सिक्कोंमें था, जिसके कारण हमें विनिमयकी झंझटोंसे छुटकारा मिल गया। द्विजेन्द्रलालके नाटकोंमें हमें पाश्चात्य नाटकीय विधानोंका भारतीय वातावरणके अनुरूप रूपान्तर मिला, रवीन्द्रनाथ ठाकुरके गीति काव्योंमें पाश्चात्य काव्य कलाका समावेश था और बंकिमचन्द्रके अुपन्यासोंमें स्काटकी कला भारतीय भूषामें मिली। अिससे हिन्दीके लिअे अनुकरणका मार्ग बहुत ही सुगम हो गया और हमारे लेखक बंगलाका अनुकरण और अनुसरण करने लगे।"

हम पहले ही बता चुके हैं कि आधुनिक बँगला साहित्यकी जनप्रियताका कारण केवल यही नहीं था कि भारतीय सिक्कोंमें पाश्चात्य सोना सुलभ हो गया, बल्कि अुसमें पाश्चात्य प्रभावके विरुद्ध अेक स्पष्ट प्रवृत्ति भी थी।

जब बंगलामें रवीन्द्रनाथका अुदय हुआ, और अुन्हें विश्वव्यापी स्वीकृति प्राप्त हुअी, तो अुसके कारण बंगला और हिन्दीका पहला सम्पर्क और दृढ़ हुआ। अधिकाधिक लोग बंगलाकी ओर आकृष्ट हुअे। रवीन्द्रका प्रभाव अभी फैल ही रहा था कि शरत्का अुदय हुआ। अुनके अुपन्यासोंके अनुवाद भी धड़ल्लेके साथ हुअे, और यह कहना कठिन है कि शरत्का हिन्दीपर कितना अधिक प्रभाव पड़ा। साहित्यकारों या साहित्यपर जो प्रभाव पड़ा, वह तो पड़ा ही, पर आम हिन्दी पढ़नेवाली जनतापर अुसका बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। शरत्की भावुकता केवल शब्दजालपर आधारित नहीं थी, बल्कि भारतीय समाजमें अुनके द्वारा अुठाअी हुअी समस्याओंकी जड़ें बहुत गहरी थीं।

सच तो यह है कि रवीन्द्र और शरत् दोनोंका भारतीय साहित्योंपर कितना अधिक प्रभाव पड़ा, यह पूरी तरह कूतनेका समय अब भी नहीं आया। छायावादपर रवीन्द्रका प्रभाव कितना अधिक पड़ा, यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिसी बातसे ज्ञात होगा कि पन्त और निराला दोनों बंगला साहित्यसे विशेषकर रवीन्द्रसे बहुत प्रभावित थे। पन्त और निरालाकी कवितापर बंगला कविताका कितना प्रभाव है, अिसपर भी खोजकी आवश्यकता है।

यदि हम रवीन्द्र और शरत्के प्रभावपर कहने लगें, तो वह कठिनाअीसे समाप्त होगा। अिसलिअे हम अुसको यहींपर छोड़ देते हैं। अिन दोनों महारथियोंके अतिरिक्त बाकी बंगलाके बीसियों लेखकोंके अनुवाद हिन्दीमें प्रकाशित होते रहे हैं। ताराशंकर, परशुराम, बनफूल, सतीनाथ भादुड़ी आदि अपेक्षाकृत आधुनिक कितने ही लेखकोंकी पुस्तकें बराबर हिन्दीमें निकलती रही हैं। अिधर साधारण पाठकोंकी ओरसे तो नहीं, पर हिन्दीके साहित्यकारोंकी ओरसे बंगलासे अनुवादोंकी ओर कुछ विरोध बल्कि प्रतिरोधकी भावना दिखाअी पड़ी है, पर अिसके बावजूद बराबर अनुवाद प्रकाशित हो रहे हैं। जो बहुत बड़े लेखक हैं जैसे शरत् और रवीन्द्र अुनके तो कअी-कअी अनुवाद बाजारमें प्रचलित हैं। अिनमेंसे कअी तो बिल्कुल तृतीय श्रेणीके (थर्ड क्लास) अनुवाद हैं।

बंगलाके साथ हिन्दीके अिस सम्बन्धके कारण कअी बहुत अूँचे दर्जेके अनुवादक अुत्पन्न हुअे, जिनम सबसे प्रमुख नाम श्री रूपनारायण पाण्डेयका है। अिधर श्री धन्यकुमार जैन और डा० महादेव साहाने भी अच्छा नाम पैदा किया। यों तो निरालाजीने भी कुछ अनुवाद किअे, पर वे आध्यात्मिक साहित्यके अनुवाद थे। पत्र-पत्रिकाओंमें बराबर बंगला कहानियोंके अनुवाद आते रहते हैं, कअी बार ये अनुवाद अच्छे भी होते हैं। अनुवादकोंका काम धन्यवादहीन या दूसरी श्रेणीका समझा जाता है, पर मैं यह समझता हूँ कि तीसरी श्रेणीका मौलिक साहित्य अुत्पन्न करनेके बजाय प्रथम श्रेणीके साहित्यका अनुवाद करना कहीं अच्छा है। श्री रूपनारायण पाण्डेयजीने कुछ अच्छी मौलिक रचनाअें भी प्रस्तुत की हैं, पर अनुवादकके रूपमें अुन्होंने जो सेवा की है, वह चिरस्मरणीय रहेगी।

हमें यह बताते हुअे खुशी होती है कि बंगला साहित्यमें बराबर अुच्चकोटिकी नअी प्रतिभाअें अुत्पन्न होती जा रही हैं। कहानी, अुपन्यास, कविताके क्षेत्रमें निरन्तर अुन्नति हो रही है। अिसलिअे हमें आशा है कि भविष्यमें भी बराबर बंगलासे अनुवादका कार्य जारी रहेगा। अब तो हिन्दीके बाकायदा राष्ट्रभाषा बन जानेसे यह जरूरी हो गया है कि हिन्दीमें सभी साहित्योंका विशेषकर भारतीय साहित्योंका अनुवाद अुपलब्ध होना चाहिअे और अनुवाद करनेमें कोअी हेठी नहीं है। स्वयं रवीन्द्रनाथने कबीरके कुछ भजनोंका अनुवाद संसारके सामने रखा था। संसार अब अपनी भाषाके दायरे तक ही सीमित नहीं रह सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यकारका दायित्व---(नाटक)

—श्री अुदयशंकर भट्ट

साहित्यकारका दायित्व स्पष्ट ही साहित्य है, यानी साहित्यके प्रति अुसका दायित्व। यह भी हो सकता है कि वह साहित्य किसी औरके प्रति दायित्वशील हो। वैसे यह कहा जा सकता है कि साहित्यकार साहित्यके अलावा और कुछ नहीं है। साहित्य ही अुसका प्राण है। तब साहित्य स्वयं अपनेमें तन्मूलक है। न्यायशास्त्रकी सरल परिभाषामें कहें तो अुसके तत्व ही साहित्यके अुपादान कारण हैं और निमित्त कारण है स्वयं साहित्यकार। क्योंकि वही साहित्यका सृजन करता है। तो प्रश्न यह है कि साहित्यकारका दायित्व साहित्यके प्रति है या किसी औरके प्रति भी। यदि औरके प्रति है तो वह क्या है? स्पष्ट है कि साहित्यका सृजन पत्थर या बादलोंके लिअे नहीं होता। चंद्रमाकी स्निग्ध मधुर चाँदनी भी कविके काव्य-पाठसे प्रभावित नहीं होती। प्रभावित होता है चेतन। चाहे वह साँप या मनुष्य ही क्यों न हो। क्योंकि साहित्यका अुपादान प्रकृति होते हुअे भी चेतना स्फूर्ति है, व्यक्ति और समाज। अिसीलिअे "सहितस्य भावः साहित्यम्" यह लक्ष्य आज भी घटित होता है। किसी समय संपूर्ण वाङ्मयको साहित्य कहते थे। किन्तु लक्षण ग्रंथोंने संपूर्ण वाङ्मयको हटाकर साहित्यको केवल काव्य, नाटक, चम्पू, कहानी, अुपन्यास, निबन्ध, समालोचना आदिमें ही सीमित कर लिया। आजकी स्थितिमें वही पुराने वाङ्मयका रूप साहित्यके अर्थमें व्यापक हो गया है। अिस दृष्टिसे विचार प्रधान और कल्पना अनुभूति प्रधान साहित्यके दो भेद हो गअे हैं और मनुष्यका संपूर्ण वाङ्मय आज साहित्य बन गया है।

हाँ, तो अिसी साहित्यमें नाटककारका दायित्व भी आया है। नाटकका रूप साहित्यमें सबसे भिन्न है। क्योंकि नाटक स्वयं जीवंत अनुकृति है—समाज या व्यक्तिकी। समाजकी आस्था या अुसकी कमजोरीके प्रति विद्रोहका प्रतीक साधन नाटक है। नाटकमें साहित्यके संपूर्ण तत्व समाजसे प्रतिबिम्बित होते हैं। जब कि साहित्यके अन्य अंगोंमें वह मूर्त अनुकृति नहीं है। क्योंकि नाटक पाठकके लिअे नहीं, दर्शकके लिअे है। अुसका साक्षात् संबंध दर्शकसे है। अुस दर्शकसे भी जो न साहित्यकी सांगोपांगिता जानता है न अूर्ध्व चेतन है। अुसमें सभी आते हैं विद्वान् भी, मूर्ख भी। पठित भी, अपठित भी। अिसलिअे नाटक सभीमें—प्राणि मात्रमें, रागात्मक चेतना जगानेका सबल साधन है। जिस किसीने भी साहित्यके अिस अंगको प्राणि मात्रके कल्याणका साधन मानकर अिसका आविष्कार किया होगा वह सच्चा जन-प्रतिनिधि और सर्वापेक्षा दूरदर्शी मनुष्य रहा होगा। अिसलिअे भरत मुनि, जिन्होंने 'नाट्य शास्त्र' पर विस्तृत विवेचना की है, अुनके पात्रोंमें समाजके वे अंग हैं जिन्हें समाज हीन और नीच मानता था। जैसे नट, विट, शैलूष, किरात आदि। स्पष्ट है अपठित, मूर्ख, अनुकरण-प्रिय नटोंके द्वारा साहित्यके अिस अंगको पुष्ट किया गया है। आज तक नटों या नाटक करनेवालोंका समाजमें कभी मूर्धन्य स्थान नहीं रहा। क्या आप नहीं मानेंगे कि अूँच-नीचके भेद-भावसे रहित, समान धर्म स्वीकार करते हुअे भरतने मनुष्य मात्रको नाटक साहित्यका प्रणेता बना दिया। अिस दृष्टिसे कदाचित् शुनिचैवश्वपाकेच-का सिद्धान्त केवल नाटकको ही प्राप्त हुआ है। अिसीलिअे नाटक सबके लिअे है। मनुष्य मात्र नाटकके लिअे।

फिर मुझे कुछ भी कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि नाटकका क्षेत्र समाज है, विस्तृत समाज जिसमें "आचाण्डाल ब्राह्मण" सभी आ जाते हैं। यह हुअी नाटकके व्यापक क्षेत्रकी भूमिका। फिर जो नाटकका दायित्व है वही नाटककारका दायित्व है अर्थात् व्यक्ति मात्रके प्रति अुसके रागात्मक चेतनमें सभी हित दृष्टिका साधारणीकरण। क्योंकि नाटक साहित्यमें "सद्यः फल-प्रसूति" है। हाँ, नाटक और कुछ नहीं नाट्यानुकृति है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यानी मनुष्यमें जो राग-द्वेष, अिच्छा-अनुराग है अुन्हींका नाट्य है।

आजके युगका जीवन न तो केवल भावना मूलक है और न तर्क-सम्मत वैज्ञानिक। दोनोंमें अेक संघर्ष चल रहा है। अिसीलिअे अुसकी अंतर्विवेचना अधूरी और अपंग है। भूतके प्रति अुसे मोह है, पर अुससे अुसे पूर्ण प्रकाश नहीं मिलता, कोअी दिशा निर्देश अुसमें नहीं है। वर्तमान अितना अनिश्चित है कि अुसकी आधार शिलाअें प्रतिदिन हिलती जा रही हैं। विश्वास टूटते और गिरते जा रहे हैं। अणुबमके आविष्कारने भविष्यके प्रति दृष्टिको धुंधला कर दिया है। अेक तरहसे संपूर्ण त्रिकालत्व अुसकी सीमा दृष्टिसे परे अंधकार-ग्रस्त है। अैसी दशामें जन-जीवनसे प्रेरणा लेनेवाला साहित्य भी मार्गाविरुद्ध-सा हो रहा है। जैसे नदीका प्रवाह जब रुकने लगता है तब अुसका आवेग नअी-नअी धाराअें बनाकर आगे बढ़नेकी चेष्टा करता है और कहीं वह धारा छोटी बड़ी होकर भिन्न दिशाओंमें बहने लगती है। यही दशा हमारे साहित्यकी है। आज अलग-अलग वाद-प्रवाह अिस बातके प्रमाण हैं कि लेखककी दृष्टि स्पष्ट नहीं है। वह जैसे खोज रहा है पर मिलता अुसे कुछ भी नहीं है। या जो कुछ मिल रहा है वह स्वयं स्पष्ट नहीं है। मार्क्स या फ्रायडकी प्रतिपत्तियाँ अब स्वयं हीन हैं। फिर मार्क्स काव्य या नाटकका रूप ग्रहण करके अपने अन्तरंगके सौन्दर्य या काव्य सौन्दर्यको वह नहीं दे पा रहा है जिससे काव्य की शक्तियाँ स्थायी होती हैं। वर्ग संघर्ष कम करने या रोटी, डेरा-डंडा और धन-विभाजन जैसी स्थूल सांपत्तिक प्रक्रियाने न साहित्यके सौन्दर्यमें अभिवृद्धि की और न अुसमें प्रौढ़ता आअी। बल्कि अैसा हुआ कि कहीं-कहीं साहित्य निष्प्रभ हो गया। मेरे कहनेका तात्पर्य यह नहीं है कि मैं अिन मूल्योंको स्वीकार नहीं करता, किन्तु मैं अिनको केवल काल-कृत आवश्यकता मानता हूँ। वे सारी आवश्यकताअें साहित्यकी धारामें प्रवर्तित हो सकती हैं, स्वयं साहित्य नहीं हो सकतीं। काल, देश, वर्ग-संघर्ष तथा हमारी सांपत्तिक विषमताओं-की साहित्यमें अेकान्त अभिव्यक्तिने अुसे नीरस बना दिया है। क्या आप कह सकते हैं, आजके अिस प्रकारकी साहित्यिक कृतियाँ आगे पचास वर्ष भी जिन्दा रह सकेंगी? फ्रायड स्वयं अपूर्ण है या अुसके सम्बन्धके सिद्धान्तोंमें स्खलन शुरू हो गया है; फिर मनोविश्लेषणने मनुष्यके भीतर जो अनंत गुणों, अनन्त विकृतियोंका भण्डार खोज लिया है अुसे देखकर तो जीवनके प्रति रही-सही आस्था भी हिल अुठी है। जैसा कि मैंने कहा है, मनुष्य स्वयं मनुष्यके लिअे अज्ञेय हो गया है। वह क्या चाहता है यह स्वयं स्पष्ट नहीं है। हम समझते थे मनुष्यका विकास हो रहा है, अुसका पशुत्व कम हो रहा है, मनुष्यत्व आ रहा है किन्तु वस्तुस्थिति अिससे भिन्न है। निर्दयतापूर्ण हत्याअें, व्यभिचार, अनाचार, बड़े-बड़े मनुष्योंके दुमुँही रूप, अुनके दुहेरी जीवन—अन्तः शाक्ताः बहिः शैवाः—हमारी अुक्त मान्यताओंकी पुष्टि नहीं करते। कभी-कभी लगता है मनुष्य स्वयं अेक रहस्य है, अेक भूलभुलैया है। अुसकी कौन प्रवृत्ति कब क्या रूप धारण कर लेगी, अिसके प्रति अुसे स्वयं विश्वास नहीं रहा है। लगता है जैसे अन्तःश्चेतनावादी यथार्थ मनुष्यके भीतर झाँक रहा है जिसमें अनंत तृष्णाअें, अनंत वासनाअें, अनंत कामनाओंका सागर अुमड़ रहा है। निग्रह, संयम, विवेक जो अुसमें कभी-कभी अुठते हैं स्वयं अुसकी प्रवृत्तियोंको दबा नहीं पाते और वह दबी राखकी तरह रह-रहकर भड़क अुठता है।

आप कहेंगे मैं घोर निराशावादी हो गया हूँ और वस्तुस्थितिका सामना करनेसे भाग रहा हूँ। अैसी बात नहीं है, किन्तु जो स्थिति है अुसे छिपाकर मृगमरीचिका या साँपको रस्सी बताना भी मुझे अिष्ट नहीं है।

सबसे पहले तो साहित्यमें जो वाद प्रचलित हुअे या हो रहे हैं वह स्वयं साहित्यकी दिग्भ्रान्तिके सूचक हैं। मैं अिनमेंसे किसीको भी साहित्यके लिअे अुपयोगी नहीं मानता। मैं मानता हूँ साहित्यकारका ध्येय अेक-मात्र साहित्य अर्थात् सत्साहित्यका सृजन है। जो मनुष्यको अूपर अुठा सके, रसोद्वेलित कर सके, अुसकी चेतनामें विवेकके लिअे आलोड़न अुत्पन्न करके। अिस दृष्टिसे कोअी निरर्थक रचना नहीं होनी चाहिअे। फिर साहित्य कोअी वंशानुचरित या अेन्थोलोजी भी नहीं है। वह स्वयं सौन्दर्य अेवं महत्व सम्पन्न अेक शक्ति है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुसके स्वाभाविक सौन्दर्य अभिव्यक्ति. सौष्ठवकी अुसमें रक्षा होनी चाहिअे। ये दोनों चीजें साहित्यके सभी अंगोंके लिअे अपेक्षित हैं। अिसी दृष्टिसे मैंने अूपर कहा है, कि साहित्यकारका दायित्व साहित्यके प्रति ही है। अुसका सौन्दर्य, अुसका सौष्ठव, अुसका वैदग्ध्य साहित्यको प्राणवान बनाता है।

नाटक भी साहित्य अिसीलिअे है कि अुसके निर्माणमें हमें कुछ मौलिक तत्वोंको निरन्तर बनाअे रखकर चलना पड़ता है। युगोंकी घटनाको हम घड़ियोंमें या घंटोंमें बाँध देते हैं तब केवल सारकी रक्षा ही नाटकमें हमारा ध्येय होता है। अनिच्छितको छोड़कर अनिवार्यकी ओर हमारी दृष्टि रहती है, वह अनिवार्य ही नाटकका प्राण है। अनिवार्यका अर्थ है जिसके बिना नाटकमें गति न हो। वह गति ही नाटकमें अभीष्ट होती है। तो अिस तरह जहाँ नाटक स्वयं जीवनकी महत्वपूर्ण गतिका वस्तु विधान है वहाँ काव्यके अपेक्षित तत्वोंकी मर्यादित स्वीकृति भी है। सहज सौन्दर्य, स्वाभाविकता, मानव चरित्रका गहन विश्लेषण भी है। जीवनका अुदात्तीकरण भी है। ध्येयके प्रति अहेतुक निर्बन्ध भी है। यही साहित्यकारका साहित्यके प्रति दायित्व है। मुझे लगता है कि मनोरंजन प्रधान प्रहसनों, नाटकोंसे हमारी रुचि बिगड़ी है। नाटकमें नाटककार जो देना चाहता है अुसे भूलकर दर्शक केवल मनोरंजनको महत्व देता चला आता है। अिससे लेखकका ध्येय सिद्ध नहीं होता। अिसका परिणाम यह होता है कि गम्भीर नाटकोंके लिअे लोगोंमें अुत्सुकता नहीं रहती।

अुस दिन जब मैंने अपने कुछ अेकांकी प्रहसनोंसे दर्शकोंको मुग्ध और अुसके बाद गम्भीर नाटकोंके प्रति अुन्ही दर्शकोंकी अुपेक्षा देखी, तो मुझे लगा कि आजके युगमें हर गम्भीर चीज पाठक-दर्शकको भारी हो रही है। या तो वह अुसे पचा नहीं पाता अथवा संघर्ष-मय जीवनसे कुछ समय निकालकर जो वह चाहता है वह केवल मनोरंजन। समय मजेमें बितानेके लिअे चटपटी चीजें होनी चाहिअे। अेक तरहसे अिस राजनीतिक अुथल-पुथलके युगमें मनुष्य मात्रमें अेक प्रकारकी अनास्था—अनासक्तिका प्रवेश हो गया है। गोस्वामी तुलसीदासके युगमें भी अैसी ही निराशाका वातावरण था; किन्तु अुस समय अेक सहारा था आस्तिकताका। आज वह भी नहीं है। जैसे मनुष्यका मेरु-दण्ड टूट गया है। आज वह जो कुछ है अुसे किसी तरह सम्भाले चलना चाहता है। न जाने कल क्या हो।

अैसी दशामें नाटककारका भी अन्य साहित्यकारोंकी तरह कर्तव्य है कि वह अपनी कृतिके द्वारा निराश मनुष्यमें भविष्यके तथा अुसके महत्वके प्रति आस्था जागृत करे। महाबली रावणने काल, वरुण, सूर्य, चन्द्रको बाँध रखा था अुसका तात्पर्य और चाहे जो रहा हो, किन्तु अितना निश्चित है कि अपने मरणसे पूर्व अुसने समयकी गतिको बदल दिया था। हम भी अिस निराशाग्रस्त मानवको जीवनके परम रसकी ओर प्रेरित कर सकते हैं तथा भविष्यके प्रति आशावान्। वेदमें अेक जगह आया है कि विद्या ब्राह्मणके पास आकर बोली— मेरी रक्षा कर, मुझे झूठ बोलनेवालों, छली, कपटी, असंयमी व्यक्तियोंसे बचा। मैं तेरा कोश हूँ, तेरा खजाना हूँ। वेदज्ञ ब्राह्मणोंने स्वयं छल, कपट, असंयम और झूठसे अुसकी रक्षा की। अिस समय भी राजनीतिक निराशावादके राहुने संपूर्ण मनुष्य मात्रको ग्रस लिया है तब केवल साधनाको निराशाकी दुर्बल नींदसे जगा दे। मनुष्य मरनेके लिअे नहीं, जीनेके लिअे पैदा हुआ है। अुसमें जीवन सौन्दर्यके प्रति मोह हो, आशा हो, विश्वास हो और हो मानवके चिरकल्याणकी कामनाका भाव। यही साहित्यकारका दायित्व है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'बेढब' बनारसी, अेक व्यक्तित्व और कृतित्व

—श्री लक्ष्मीशंकर व्यास

गौरवर्ण, आँखोंपर मोटे काले फ्रेमका चश्मा, चौड़ा ललाट, श्वेत होती केशराशि, प्रभावशाली मुख-मण्डलपर प्रसन्नताकी मुद्रा, सहजमें ही हिन्दी-साहित्यके सुप्रसिद्ध हास्यरसके साहित्यकार श्रीकृष्णदेव प्रसाद गौड़, 'बेढब' बनारसीका चित्र हमारे समक्ष अुपस्थित कर देती है। गत नवम्बरमें देवोत्थान अेकादशीके दिन आपकी हीरकजयन्ती मनाअी गअी। यों तो आप साठ वर्षके हो चुके हैं, पर सजीवता, सरसता और हास्यरसकी धाराकी अनवरत सृष्टि कर हिन्दी-साहित्यके अभावकी पूर्ति कर रहे हैं। शिष्ट और मार्मिक व्यंग्य-विनोद तथा अुच्चकोटिके हास्यरसपूर्ण साहित्यकी हिन्दी-साहित्यमें बड़ी कमी है और जिन अिने-गिने साहित्यकारोंको अिस दिशामें अुल्लेखनीय सफलता मिली, अुनमें 'बेढब' बनारसी प्रमुख हैं। यही नहीं, साहित्यके अिस क्षेत्रमें आपकी विशिष्ट देन है, जिससे हमारा हास्यरसका साहित्य समृद्ध और शक्तिशाली बना है। अेक कथन व्यक्त करते हुअे अुसकी अुपमा तथा तुलनाका तत्कालीन जीवन अथवा घटना-प्रसंगसे चित्र अुपस्थित कर देना 'बेढब' जीकी अपनी विशेष कला है। जैसे अुनका व्यक्तित्व गम्भीर प्रतीत होता हुआ भी हास-परिहासका स्रोत है, अुसी प्रकार आपकी रचनाअें भी गम्भीर शब्दावलियोंसे युक्त सुन्दर मार्मिक व्यंग्य और विनोदकी सृष्टि करती हैं। कविता, कहानी, लघुनिबन्ध, संस्मरण, रेखाचित्र, यात्रावर्णन सम्बन्धी आपकी नौ रचानाअें अबतक प्रकाशित हो चुकी हैं। 'धन्यवाद' शीर्षक कहानी संग्रह आपकी नवीनतम रचना है, जो आपकी साठवीं वर्षगाँठपर प्रकाशित हुअी है। प्रस्तुत लेखमें 'बेढब' जीके व्यक्तित्व अेवं कृतित्वके दर्शन और परिचयका प्रयत्न किया जाअेगा।

व्यक्तित्वकी झाँकी

बनारसके प्रसिद्ध बेनियाबागके पास बड़ी पियरीका मुहल्ला है। यहीं रहते हैं प्रसिद्ध 'बेढब' जी बनारसी। अेक दिन अपराह्नमें कार्यवश जब मैं आपके नवनिर्मित निवासपर पहुँचा तो अुस समय 'बेढब' जी अपने अध्ययन कक्षमें बैठे थे। गरमीके दिन थे। 'बेढब' जी धोती और सफेद गंजी पहने बैठे थे। जाते ही प्रसन्न मुद्रासे स्वागत करते हुअे बोले—आअिअे। नमस्कार कर बैठते हुअे मेरी दृष्टि अुनके कमरेमें फैली पत्र-पत्रिकाओं और बिखरी पुस्तकोंकी ओर चली गअी। 'बेढब' जी मेरी विचारधाराको तत्काल समझकर झट बोले अुठे—'भाअी, मेरे पास कोअी असिस्टेण्ट नहीं, जो यह सब देखभाल करे और अिन्हें व्यवस्थित रूपमें रखे।' मैं आश्चर्यचकित था कि 'बेढब' जी कैसे मेरे मनकी बात तत्काल समझ गअ और मेरी शंकाका समाधान करनेके हेतु, अुक्त कथन व्यक्त करनेमें अेक क्षणका भी विलम्ब न किया। वस्तुस्थिति यह थी कि 'बेढब' जी पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं और पैकेटोंके मध्य घिरे बैठे थे। देशके अतिरिक्त विदेशकी विशेषतः हास्य-व्यंग्यकी प्रख्यात पत्रिकाअें भी पड़ी थीं। 'बेढब' जी अैसी ही स्थितिमें बैठे ताजी डाकसे आअी अेक पत्रिकाका अवलोकन कर रहे थे।

अिसके अतिरिक्त अनेक अवसरोंपर 'बेढब' जीके यहाँ जाना हुआ है। कभी 'प्रसाद' परिषदकी गोष्ठीमें या बाहरसे आअे किसी विशिष्ट साहित्यिकके स्वागत आयोजनमें। सभी अवसरोंपर देखा है—'बेढब' जीकी प्रसन्न मुद्राको हास्य और व्यंजनापूर्ण मार्मिक कथनोंकी अभिव्यक्ति करते हुए। अभिप्राय यह कि जिस आयोजनमें 'बेढब' जी सम्मिलित होते हैं, वहाँकी महफिल चमक अुठती है।

साहित्य साधकके रूपमें 'बेढब' जी सर्वत्र प्रसिद्ध हैं, पर आप सफल प्राध्यापक और शिक्षासंस्थाके आचार्य भी हैं, यह अपेक्षाकृत कम लोगोंको विदित है। साहित्य-साधक और शिक्षा-संचालकके आपके अुभय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वरूपोंमें, जैसा समन्वय और सन्तुलन है, वह बहुत कम देखनेको मिलता है। कुछ लोगोंका यह खयाल हो सकता है कि 'बेढब'जी जैसे हास्य-रसावतारके जीवन-क्रमका क्या कहना ! वह अपनी मौज-मस्ती और अल्हड़-पनमें रमे रहते होंगे ! पर स्थिति ठीक अिसके विपरीत है। दयानन्द अिण्टर कालेजके आचार्य रूपमें आप स्वयं तथा अपने सदस्यों, छात्रोंसे जैसा कठोर अनुशासन पालन करते और कराते हैं, वह अद्भुत् है।

अिस प्रसंगमें अेक घटना सहज ही स्मरण हो आती है। 'आज'के सम्पादकीय विभागमें सम्पादकके नाम अेक शिकायती पत्र मिला। मैंने जब अिसे खोलकर देखा तो पाया कि यह अेक अभिभावकका पत्र था। अिस पत्रमें अभिभावकने अपने पुत्रकी परीक्षामें असफलताकी स्थितिपर रोष प्रकट करते हुअे अुस कालेज-की कटु आलोचना की थी और यह भी लिखा था कि क्यों न अैसे स्कूलके अध्यापकोंका वेतन कम कर दिया जाअे ? मैंने अिस पत्रको 'आज'में प्रकाशित करनेकी अपेक्षा कालेजके आचार्यके पास ही भेजना अुचित समझा, जिससे वे अुक्त अभिभावक महोदयको सन्तोष दे सकें तथा परिस्थितिसे परिचित करा सकें। कहना न होगा, अिस पत्रका सम्बन्ध अुसी कालेजसे था, जिसके आचार्य श्री कृष्णदेवप्रसाद गौड़ 'बेढब' बनारसी हैं। अैसी घटनाअें प्रायः हुआ करती हैं। अैसे पत्रोंका अुत्तर साधारणतः जाँच तथा सन्तोष प्रदान करनेके लिअे देर-सबेर दे दिया जाता है। पर आपको आश्चर्य होगा, कम-से-कम मुझे तो अवश्य हुआ, जब कुछ घण्टोंके बाद ही दयानन्द कालेजका अेक पत्रवाहक अुक्त पत्रका अुत्तर लेकर मेरे सामने आ अुपस्थित हुआ। पत्र खुले लिफाफेमें था। अेक पत्र सम्पादकके नाम भी था। अिसमें लिखा गया था कि अभिभावकजीके पास यह अुत्तर भिजवानेकी कृपा करें। मैंने देखा कि छात्रके सभी विषयोंमें प्राप्तांकोंका ब्योरा देते हुअे बताया गया था कि वह नियमित रूपसे अपनी कक्षामें भी अुपस्थित न होता था। छात्रके अनुत्तीर्ण होनेके कारणोंपर तथ्या-त्मक प्रकाश डालनेके बाद 'बेढब' जीने अभिभावक महोदयके अुस कथनका भी गम्भीर किन्तु व्यंजनात्मक भाषामें अुत्तर दिया था। आपने लिखा कि जहाँ तक हमारे वेतन कम करनेकी बात है, हमें कोअी आपत्ति नहीं, बशर्ते अभिभावक महोदय अधिकारियोंसे अैसा करा सकनेमें सफल हों। अुसी समय मैंने वह पत्रोत्तर अभिभावक महोदयके पास भिजवा दिया। निश्चय ही अभिभावक महोदयकी आँखें अुत्तर पढ़कर खुल गअी होंगी। साथ ही मैं भी विस्मय विमुग्ध हुअे बिना न रहा। अितनी तत्परतासे छात्रका पूरा विवरण और गतिविधि भेज देना वह भी व्यस्त दैनिक कार्यक्रममें, कुछ साधारण बात नहीं। अिसपर भी कटुताका कहीं नाम नहीं। हाँ, व्यंग्य-विनोदकी भावना गम्भीर शब्दोंके अन्तर्गत अवश्य झलक रही थी। घटना साधारण-सी है, पर अिसके पीछे तत्परतासे युक्त कैसी कर्त्तव्य भावना संलग्न है, कहनेकी आवश्यकता नहीं। अिस घटनाके स्मरणसे 'बेढब'जीके व्यक्तित्वका अत्यन्त सहज और स्वाभाविक संस्मरण प्रस्तुत हो जाता है।

अपनी कहानी अपनी जुबानी

अपनी साठवीं वर्षगाँठपर आपने जो भाषण किया अुसमें स्वयं अपनी जीवन-कथाकी झाँकी कराअी है। अिस आत्म-परिचयके कुछ अंश अिस प्रकार हैं—'आजसे ठीक साठ साल पहले आजकी ही रात, घड़ीमें अुधर टनाटन दो बोल रहे थे और मैंने धरतीपर रोना आरम्भ किया। मैं अीसाकी अुन्नीसवीं शतीमें पैदा हुआ और बीसवींमें आ गया। भारतमें भी अुत्तर प्रदेशमें जन्मा जिसमें शिवकी जटासे अभिषिक्त गंगा, कृष्णके चरणोंसे पावन की हुअी यमुना और रामके करोंसे प्रक्षालित सरयू सेचन करती है। अुत्तर प्रदेशमें भी काशी, जहाँ कैलाश छोड़कर शिवजी आअे, राजापुर छोड़कर तुलसीदास आअे, अीरान छोड़कर अलीहजी आअे, प्रयाग छोड़कर महामना मालवीयजी आअे।' अपने जन्म और जन्मस्थानका परिचय देनेके बाद 'बेढब' जी अपनी प्रवृत्तियोंके विषयमें कहते हैं—'अनेक विरोध मेरे जीवनमें हैं। सभी जानते हैं। जो न जानते हों अुनके लिअे बता दूँ। अुर्दू-फारसीसे शिक्षा आरम्भ की हिन्दीपर समाप्त की। पढ़ाता-पढ़ता हूँ अँग्रेजी, लिखता हूँ हिन्दी। आँखोंमें गम्भीरता है, लेखनीमें हास्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हृदयमें टीस है अधरोंपर मुसकान है। लिखना कम आता है, लेखनीसे प्रेम अधिक है। अपना मालिक हूँ, कालेजका दास हूँ। पियरीमें रहता हूँ, हरियरी सूझती है। पत्रोंसे प्रेम है किन्तु अज नहीं हूँ। पुस्तकोंसे प्रेम है, दीमक नहीं हूँ। मलाअीसे प्रेम है, बिलाअी नहीं हूँ। लोग पहले लेखक बनते हैं तब सम्पादक। मैं पहले सम्पादक था अब लेखक हूँ। जिन पत्र रूपी गाड़ियोंपर सम्पादक बनकर मैं सवार हूँ वह क्रमानुसार हैं, भाँड़, भूत, भारत-जीवन, खुदाकी राहपर, तरंग, आँधी और 'प्रसाद'। 'आज'का प्राणी हूँ, संसार भी देखा है, बनारससे भाग नहीं सकता, सन्मार्गपर भी चलनेकी चेष्टा करता हूँ।'

बाल्यकालसे ही आपकी रुचि साहित्यकी ओर हो गअी थी। अपने प्रारम्भिक दिनोंमें आपने यह दोहा लिखा—

यत्न कीजिअे कठिन है तब भी पाना पार,
सावधान अिन तीनसे गोजर गणित गँवार।

अपनी वर्तमान अवस्थातक पहुँचनेके आप छह कारण मानते हैं—'पिताका प्रताप, माताका पुण्य, गुरुओंका आशीर्वाद, मित्रोंकी शुभकामनाअें, डाक्टरोंकी दवा और श्रीमतीजीका बनाया जलपान और भोजन। नहीं तो वनस्पति घी, जलसे पुनीत किया हुआ पराग, विद्यार्थियोंकी शेक्सपियरको मात कर देनेवाली अंगरेजीकी नोट-बुकें और सर्वव्यापी टी. बी. के कीटाणु पचीस सालतक आयु प्रदान करनेके लिअे ही पर्याप्त हैं।

कृतित्व और अुसकी विशेषताअें

यों तो 'बेढब'जी हास्यरसावतारके रूपमें प्रख्यात हैं, पर गम्भीर साहित्यकी भी आपने सर्जना की है और कर रहे हैं। कविता, कहानी, रेखाचित्र, निबन्ध और संस्मरणके क्षेत्रमें आपकी सेवाअें अुल्लेख्य हैं। आपकी प्रकाशित पुस्तकोंके नाम अिस प्रकार हैं—बनारसी अेक्का, मसूरीवाली, टनाटन, गान्धीजीका भूत, धन्यवाद, लफटंट पिगसनकी डायरी, बेढबकी बहक, अुपहार, महत्वके गुमनाम पत्र। अिधर आप विख्यात विद्वान डाक्टर कालीदास नागकी 'अेशियाकी कहानी'का पाँच खण्डोंमें अनुवाद प्रस्तुत कर रहे हैं जो अपने ढंग तथा विषयकी अेक-ही कृति है। अवश्य ही अिसके अनुवादसे राष्ट्रभाषा हिन्दीका भण्डार विभूषित होगा।

'हास्य-रसके छींटे' के, जिनमें सामयिक राजनीति और घटनाके प्रसंगोंको लेकर अत्यन्त व्यंग्यात्मक अुक्ति की जाती है, आप सिद्धहस्त लेखक रहे हैं। 'आज' में 'अरबी न फारसी' स्तम्भ तथा 'संसार' में 'घरहरेसे' आपने जैसे छींटे लिखे हैं, अुनका अपना महत्व है और हिन्दी साहित्यमें वे बेजोड़ रहे हैं, आपकी कविताओंमें भी हास्य-व्यंग्यकी बड़ी मनोरम झाँकी मिलती है। आपकी कविताओंमें कुछ तो विशुद्ध हास्यरसकी हैं, कुछ व्यंग्यपूर्ण हैं और कुछमें तर्ककी दृष्टिसे हास्यका अभाव है। कवि-सम्मेलनमें जब आप कविताअें सुनाने लगते हैं तो श्रोतावृन्द झूम अुठता है और हँसीका फौवारा छूटने लगता है। 'चाँदनी रात', 'गंजी खोपड़ी' आदि आपकी अत्यन्त लोकप्रिय रचनाअें हैं। चाँदनी रातमें आपने भातकी जैसी वर्षा कराअी है तथा दही फैलानेकी कल्पना की है, वह अद्भुत् है। अिसी प्रकार 'गंजी खोपड़ी' शीर्षक कवितामें आप कहते हैं—बाल अुनका क्या कोअी बाँका करे! आदि। आजकलके छात्रों तथा छात्रावासोंकी गतिविधिपर व्यंग्य करते हुअे आप लिखते हैं—

जब मैं गया होस्टलको लड़के मजनूके अब्बाजान मिले।
सब हाय-हायकर जलते थे, कमरे सब निरे मसान मिले॥

निबन्ध हो या कहानी अथवा कविता, 'बेढब'जीकी अद्भुत् अुपमाअें अुनमें व्यंग्य-विनोद तथा हास्यका असाधारण पुट देती हैं। कुछ अुदाहरण लीजिअे—× × × अुसका क्षीण प्रकाश वैसे ही लग रहा था जैसे अिस युगमें सत्य। 'दीपक' के सम्बन्धमें आपने कैसी मार्मिक व्यंजना की है; देखिअे— × × × 'दीपकका मनोरम रूप अब संसारसे बिदा हो रहा है। मन्दिरमें, शिवालयमें, देवालयमें बिजलीका ही साम्राज्य है। और ठीक भी है। दीया हो, फिर बत्ती बने, तेल या घी हो, सलाअी रगड़ी जाअे तब दीपक जलाया जाअे। बीच-बीचमें बत्तीको अुकसाना पड़े। अिन प्रस्तर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युगकी क्रियाओंके लिअे आज स्थान कहाँ। जीवन अितना अुपयोगी हो गया है कि अुसका अेक-अेक क्षण नष्ट किया जाना वर्वरता है। बैठे-बैठे लेटे-लेटे स्विच दबाअी और सारा घर जगमगा अुठा।' छोटे-छोटे वाक्य तथा अुनमें अर्थ भरे शब्दोंकी योजना द्वारा गम्भीरताके साथ ही परिहासकी सृष्टि, 'बेढब' जीकी रचनाशैलीकी विशेषता है। अँगरेजी साहित्यमें भी आपकी गति है और अँगरेजीमें आपकी कहानियाँ प्रायः निकलती रही हैं। दयानन्द कालेजमें आचार्य होनेके अतिरिक्त आप काशी नागरी प्रचारिणी सभाके प्रधान मंत्री पदपर, हिन्दी साहित्य सम्मेलनके साहित्य परिषदके अध्यक्ष पदपर रहकर साहित्य-सेवा करते चले आ रहे हैं। हिन्दी-साहित्यमें अुच्च कोटिके हास-परिहास अेवं व्यंग्य-विनोद पूर्ण साहित्यकी रचना आपकी विशिष्ट देन है और अिस निमित्त आपका स्मरण सदा आदर सहित होगा, अिसमें सन्देह नहीं।

धूलका रुख

—श्री कान्त वर्मा

धूल अुड़ती है हमारी ओर !
धूलमें
ये पेड़-पौधे कुनमुनाते;
कुनमुनाने दो।
धूलमें डैने
हवाके, फड़फड़ाते;
फड़फड़ाने दो।
धूलमें पथ
दृष्टिके, हैं डूब जाते;
डूब जाने दो।
धूलको आ-क्षितिज
अंतिम छोर तक
नक्शे बनाने दो।
धूल छूती है समयके छोर !

धूल है वह चित्र
जो रथने
पवन-पटपर बनाया है।
धूल है चिलमन
जिसे पथने
अुठाया है, गिराया है।
धूल है वह मोर,
रथका चक्र
जिसके लिअे बादल है।
धूलमें ही पथ
हमेशा जागनेको
सुगबुगाया है।
धूलका धनु
हमेशा बनता समयकी कोर।

धूलमें चेहरे
हमारे पूर्वजोंके
दीख पड़ते हैं।
धूलकी ऋतुमें
पुराने पातके
अुपवन अुजड़ते हैं।
हम डरें क्यों धूलसे
जब समयका
रथही हमारा है।
धूलके अंधड़ोंमें
कमजोर खम्भे ही
अुखड़ते हैं।
धूल अपने संग लाती है हमेशा भोर !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन हो तुम ?

--प्रो० रामखिलावन तिवारी

कौन हो तुम ?
मौन साधक-से–
तपस्यामें निरन्तर लीन होकर,
भूल बैठे हो स्वयंको,
अस्थि-पञ्जरमें छिपाये हो
सजग अस्तित्व अपना,
आग-सी प्रज्ज्वलित चेतनता
छिपी हो राखमें ज्यों ?

कौन हो तुम ?
खेतकी वेदी बनाकर,
कर रहे कृषि-यज्ञ बन होता स्वयं ही
और समिधा भी बनाकर स्वयंको ही,
देहकी चर्वी हविष लेकर करोंमें,
होम कबसे कर रहे हो,
कर्मरूपी आगमें नित ?
प्रकृति ही श्रुति है तुम्हारी,
नदी निर्झरिणी ऋचायें हैं,
जिन्हें सुनकर तुम्हारे प्राण पावन बन गये हैं।

कौन हो तुम ?
वीतरागी पुरुष जैसे,
मोह, सुख-दुख, मान-निंदासे परे हो,
विगत आडंबर, विगत अभिमान,
द्वन्द्वातीत, स्थितप्रज्ञ-सा जीवन बिताते ?
विश्वको पर्यंकपर सुखसे सुलाकर,
बन मनस्वी, तुम स्वयं सोते धरापर,
विश्वको करके अलंकृत,
नग्न-तन ! तुम
दूसरोंको राज देकर रंक बनते ?

कौन हो तुम ?
पौष-अगहनकी सिहरती रात्रियोंमें।
अस्थियाँ भी जब ठिठुरती हैं,
रुधिर जमता रगोंका,
जबकि गद्दोंकी तहोंपर तन छिपाकर,
सो रहे होते हैं धनके लाल,
किसके लाल ?
तुम तब,
जागकर खलिहानमें हो काम करते ?

कौन हो तुम ?
ग्रीष्मकी भीषण दुपहरीकी तपनमें,
जब कि,
भू-अंबर-दिशायें आगकी ज्वाला अगलतीं,
कण्ठ प्राणोंके सभीके सूख जाते,
तब जितेन्द्रिय योगिराज समान,
अपने।
खेत-तप-वनमें पड़े करते तुम्हीं पञ्चाग्नि सेवन ?

कौन हो तुम ?
जो निठुर बरसातमें बौछार सहकर,
आँधियोंके भी थपेड़ोंका निरन्तर सामनाकर,
कभी विचलित न होते ?

कौन हो तुम ?
जो स्वयं दुख सह, सुखी जगको बनाते,
स्वयं भूखों रह, जगतका पेट भरते हो,
वस्तुतः क्या यही जीवन-व्रत तुम्हारा
है—
'कि देकर प्राण भी परको जिलाना' ?
क्या यही है मूल्य प्राणोंका तुम्हारे—
स्वयं मिटकर भी बचाना दूसरोंको' ?
हाँ, समझ पाया तुम्हें मैंने कि—
'धरती-पुत्र हो तुम',

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तभी तो सर्वंसहाके* गुण विरासतमें मिले हैं
तुम्हें,
अिससे, जानते टलना न निज-व्रतसे कभी भी
और माँकी सदा सेवामें लगे हो।
हाँ समझ पाया तुम्हें मैंने कि—
'केवल कृषक हो तुम',
और कुछ हो नहीं, किन्तु, किसान हो तुम,
निरत परहितमें, धनी संतोष-धनके,
अिसलिअे, भूपाल होकर भी निपट कंगाल हो तुम।
आज समझा है तुम्हें मैंने सखे कि
'कौन हो तुम ?'
हो तपस्वी, कर्म-साधक,
अिसलिअे, ही मौन हो तुम।
कौन हो तुम ?

*पृथ्वीका नाम 'सर्वंसहा' है। बेचारी सबकुछ सहन करती है। कितनी सहिष्णु है !

मंगल-भारती

—श्री देवप्रकाश गुप्त

जय, जय-जीवन जय !
जन-जागरण अेशियातक हो–
भास्कर अरुणोदय !
जय, जन-जीवन जय !
अ मृ त–दे श
शत-शत अभिवादन
रूपमें श्री का–
कर संप्लावन
ज्योति-सृजनके महाकाव्य तुम
सं स्कृ ति ते जो मय !
जय, जन-जीवन जय !

ओ जनैक्यकी
स्व र्ण-व र्त्ति का
ल ह रे साँ सों की
अ ना मि का
नर-नरका नारायण जागे
करो नेह-संचय !
जय, जन-जीवन जय !

रामराज्यके फूल
म नो ह र
म नु के पु त्र
खिलाओ भू-पर
धरतीके नीरज नयन-सा
पुलकित प्राण-हृदय !
जय, जन-जीवन जय !

'स त्य मेव जयते'
अ भि नं दि त
रा ष्ट्र-भा र ती
कुंकुम चर्चित;
दिये कपूरी लो आत्माकी
रहे न लय भय !
जय, जन-जीवन जय !
जोति सृजनके महाकाव्य तुम
संस्कृति तेजो मय !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्व देशकी लजीली लड़की

—डॉ० जगदीशचन्द्र जैन

पीकिंगमें परीक्षाअें देनेके लिअे चीनके हजारों विद्यार्थी अेकत्रित हुआ करते थे। अिनमें चेकियांगके शाओ शिंग फू-का निवासी लिच्या नामका अेक विद्यार्थी भी था। अुसके पिता कांगसू प्रान्तमें जज थे। पीकिंगमें रहते हुअे लिच्या नाटकगृहों और संगीतालयोंमें आया-जाया करता था। यहाँ वह प्रसिद्ध गायिका तू मेअी-के सम्पर्कमें आया। नाट्य-जगत्में यह गायिका शिह निआंगके नामसे विख्यात थी। शिह निआंग अत्यन्त रूपवती थी। अुसकी आँखें शरदकालीन सरोवरके समान गहरी और चमकीली थीं, अुसका मुख कमलकी भाँति खिला हुआ और अुसके होठ जपा कुसुमकी भाँति रक्तके थे। मालूम नहीं विधाताने कौनसी भूल की कि अनमोल मणिका यह बहुमूल्य टुकड़ा पृथ्वीपर आ गिरा! शिह निआंग अुन्नीस वर्षकी थी। न जाने कितने सरदारों और राजकुमारोंके हृदयोंको अुसने अुन्मत्त बना दिया था, अुनके मनोभावोंको क्षुब्ध कर दिया था और अुनके बाप-दादाओंके खजानेको बिना किसी पश्चात्तापके खाली करा दिया था। लोगोंने अुसके बारेमें अेक छोटी-सी कविता लिखी थी—

> "जब तू शिह निआंग दावतमें आती है
> अतिथि हजारों बड़े-बड़े प्याले गटक जाते हैं
> अेक छोटे प्यालेकी जगह।
>
> जब तू मेअी रंगमंचपर अुपस्थित होती है
> बाकी सब अभिनेत्रियाँ पिशाचिनियोंके
> समान प्रतीत होती हैं।"

लिच्याने अपने जीवनमें कभी सौन्दर्यकी पीड़ाका अनुभव नहीं किया था। किन्तु जबसे अुसे शिह-निआंगका साक्षात्कार हुआ अुसका चित्त क्षुब्ध हो अुठा। लि-ने भी अनुपम सौदर्य पाया था और स्वभावसे वह मधुर और कोमल था। वह अपने धनको बेपरवाहीसे खर्च करता और बड़े अुन्मुक्त भावसे अपनी प्रेमिकाको अुपहार देता। अिससे अेक तो शिह-निआंग असत्यता और लालसाको सदाचारसे विपरीत मानने लगी और दूसरे अुसने सम्मानके साथ जीवन व्यतीत करनेकी ठान ली। वह लिच्याकी कोमलता और अुदारतासे प्रभावित होकर अुसकी ओर आकर्षित होती गअी। किन्तु शिह-निआंग अुसके पितासे घबराती थी, अिसलिअे, जैसा वह चाहती थी, अुसके साथ विवाह करनेका साहस न कर सकी।

लेकिन अिससे अुन दोनोंके प्रेममें कोअी बाधा अुपस्थित नहीं हुअी। अुषाके आनन्द और गोधूलिके हर्षसे विभोर हो वे पति-पत्नीकी भाँति जीवन व्यतीत करने लगे। अपने संकल्पोंमें अुन्होंने अपने प्रेमकी समुद्र और पर्वतसे तुलना की। वास्तवमें:

> **"अुनकी कोमलता समुद्रसे भी गहरी थी**
> **क्योंकि समुद्रकी गहराअीके मापको यह**
> **अुल्लंघन कर गअी थी,**
> **अुनका प्रेम पर्वतके समान था**
> **बल्कि अुससे भी अूंचा।"**

जबसे शिह-निआंग लिच्यासे प्रेम करने लगी, धनिक सरदारों तथा समर्थ मन्त्रियोंको अुसके सौन्दर्य रसपानसे वंचित ही रहना पड़ा। शुरूमें लि अपनी प्रेमिकाको प्रचुर धन दिया करता था जिससे शिह-निआंगकी मालकिन अुसे देखकर खिल अुठती। लेकिन समय गुजरता गया। लि-का खजाना खाली होता गया और अब वह अपनी अभिलाषाओंको पूरी न कर सका। फिर भी बुढ़िया मालकिनने धैर्य न छोड़ा।

अिस बीचमें जब लि-के पिताको पता चला कि अुसका लड़का नाटकगृहोंमें पड़ा रहता है, अुसने अुसे वापिस बुलानेके लिअे बार-बार आदेश भेजे। लेकिन लिका विवेक नष्ट हो चुका था। वह घर लौटनेमें विलंब करता रहा और जब अुसे मालूम हुआ कि पिताजी सचमुच रुष्ट हो गअे हैं तो अुसकी लौटनेकी हिम्मत न हुअी। बड़े लोगोंने कहा है—

> **"जबतक समभाव है तबतक अेकता है, जब समभाव नष्ट हो जाता है अेकता भी नहीं रहती।"**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिह निआंगका प्रेम सच्चा प्रेम था। जब अुसने देखा कि अुसके प्रेमीका कोष खाली हो गया है तो अुसके हृदयमें बड़ा क्षोभ हुआ। बुढ़िया मालकिन अक्सर शिह निआंगसे कहती कि वह अपने प्रेमीसे सम्बन्ध विच्छिन्न कर लें, तथा जब अुसने देखा कि शिह निआंग अुसके आदेशोंका पालन नहीं करती तो वह मर्मभेदी वाक्योंसे 'लि' को क्षुब्ध करती। लेकिन 'लि' का स्वभाव अितना कोमल था कि वह कभी अुत्तेजित न होता। बुढ़िया मालकिनके प्रति वह और अधिक सद्व्यवहार दिखाता जिससे निरुपाय होकर मालकिनने शिह निआंगपर व्यंग्य कसने शुरू किअे :—

"हम लोग जो अपने द्वार खुले रखती हैं, हमें चाहिअे कि अपने अतिथियों, अभ्यागतोंको हम खूब लूटें जिससे हमारे भोजन-वस्त्रकी व्यवस्था हो सके। हम लोग अेक अभ्यागतको अेक द्वारसे बाहर भेजकर दूसरे अभ्यागतको दूसरे द्वारसे अन्दर बुलाती हैं। तब हमारे यहाँ चाँदी और रेशमका ढेर लग जाता है। लेकिन लिच्याको तुम्हारे पास आते हुअे अेक वर्षसे अधिक बीत गया, और अब तो पुराने आश्रयदाता और नअे अभ्यागतोंने आना बिलकुल ही बन्द कर दिया है। अिसलिअे मैं क्षुब्ध और दीन-हीन बन गअी हूँ। अब हमारा क्या होगा जब कि अभ्यागतोंका आना ही बन्द हो गया है।"

शिह-निआंगने अपने आपको बड़ी मुश्किलसे सम्हालते हुअे अुत्तर दिया—

"तरुण लि यहाँ खाली हाथ नहीं आया था। अुसने काफी धन हम लोगोंको दिया है।"

"कभी अैसी बात थी, लेकिन अब अैसा नहीं है। अुससे कहो कि वह तुम दोनोंके लिअे चावल खरीदनेके वास्ते पैसेका अिन्तजाम करे।"

"मेरा भाग्य खोटा है! जिन अधिकांश लड़कियोंको मैं खरीदती हूँ वे अभ्यागतोंकी सारी चाँदीपर अधिकार कर लेती हैं और अिस बातका बिलकुल भी ख्याल नहीं करतीं कि अुनके ग्राहक जीवित हैं या मर गअे हैं। लेकिन अब मैंने अेक अैसा सफेद चीता पाला है जो धन देनेसे अिन्कार करता है, द्वार खोलकर अन्दर प्रवेश करता है और मेरे अूपर सारा बोझ डाल देता है। अय अभागी लड़की! तू अुस दरिद्रको निष्प्रयोजन ही अपने पास रखना चाहती है। तुझे खाने-पीने और पहनने-ओढ़नेको कहाँसे मिलेगा? अुस भिखमंगेसे कह कि वह कुछ तो हमें दे। यदि तू अुसे भगा नहीं देती तो मैं तुझे बेचकर दूसरी लड़की खरीद लूँगी। यह हम दोनोंके लिअे ठीक रहेगा।"

"क्या जो तुम कहती हो सचमुच ठीक है?" लड़कीने पूछा। "लेकिन तुम्हें मालूम है कि लि च्याके पास न धन है, न वस्त्र और न वह हम लोगोंके लिअे किसी चीजकी व्यवस्था ही कर सकता है।"

"मैं मजाक नहीं कर रही हूँ", बुढ़ियाने कहा। "तो फिर यदि वह मुझे खरीदना चाहे तो तुम क्या लोगी?"

"यदि और कोअी होता तो मैं अुससे हजारोंका सौदा करती। अफसोस! यह दरिद्र अितना धन नहीं दे सकता। अैसी हालतमें यदि वह मुझे तीन सौ चाँदीके सिक्के दे सके तो मैं अुससे कोअी दूसरी लड़की खरीद लूँगी। यदि तीन दिनके अन्दर वह अितना रुपया ला सके तो मैं अुसे अपने बाअें हाथसे स्वीकार कर दाअें हाथसे तुझे अुसे सौंप दूँगी। लेकिन यदि तीन दिनके अन्दर न ला सका तो फिर अुससे सात गुना धन लेनेको भी मैं तैयार नहीं हूँ। वह कितना ही बड़ा क्यों न हो, मैं अुसे झाड़ूसे मार कर भगाअूँगी और फिर तुम कुछ न कर सकोगी।"

"खैर, अुसे तीनसौ चाँदीके सिक्के कहींसे न-कहींसे अुधार मिल जाअेंगे, लेकिन तीन दिन बहुत थोड़े हैं, कम-से-कम दस दिन चाहिअे।"

"दस दिन!" बुढ़िया चिल्लाअी। "खैर, कोअी बात नहीं, मैं दस दिन तक प्रतीक्षा करूँगी।"

"यदि वह पैसा नहीं ला सका तो किस मुँहसे वह यहाँ आअेगा। मुझे डर है कि कहीं अुसके तीन सौ सिक्के ले आनेपर भी तुम अपना वादा न तोड़ दो।"

"मैं लगभग ५१ वर्षकी होने आअी," बुढ़ियाने अुत्तर दिया। "अिससे दस गुना अधिक मैंने त्याग किया है। फिर भला मैं अपना वादा क्यों पूरा न करूँगी? यदि तुम्हें मेरा विश्वास न हो तो लाओ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपना हाथ दो। नहीं, नहीं, यदि मैं अपना वादा भंग करूँ तो मैं मरनेपर सूअर या कुत्तेका जन्म धारण करूँ!"

अुसी रातको शिह निआंगने लिच्याको सब किस्सा सुनाया। लिच्याने कहा—

"अिससे मुझे प्रसन्नता होगी लेकिन अितना रुपया मैं कहाँसे लाअूँगा। मेरी जेब तो बिलकुल खाली हो गअी है।"

"मैंने बुढ़ियासे सब बातचीत कर ली है। अुसे दस दिनके अन्दर तीन सौ चाँदीके सिक्के चाहिअे। जो रुपया तुम्हें अपने घरसे मिला था, यदि वह सब तुमने खर्च कर दिया है, तो भी तुम अपने मित्रों और सम्बन्धियोंसे अुधार माँग सकते हो। तब मैं पूरी तौरसे तुम्हारी हो जाअूँगी और फिर मुझे अुस औरतका गुस्सा कभी सहन नहीं करना पड़ेगा।"

"जबसे मैं तुम्हारे प्रेमपाशमें बँधा हूँ, मेरे मित्रों और सम्बन्धियोंने मेरे साथ सम्बन्ध रखना छोड़ दिया है। फिर भी यदि मैं अुनसे घर जानेके लिअे कुछ रुपया माँगूँ तो शायद कुछ मिल जाअे।"

सुबह होनेपर वस्त्रभूषासे सज्जित होकर जब लिच्या जानेको तैयार हुआ तो शिह निआंगने टोका—

"देखो यथाशक्ति प्रयत्न करो और वापिस आकर मुझे खुशखबरी सुनाओ।"

लिच्या अपने सम्बन्धियों और मित्रोंके पास पहुँचा। अुसने बहाना बनाया कि अब वह अपने घर वापिस लौट रहा है। सबने अुसे बधाअी दी। लेकिन जब अुसने रास्तेके खर्चके लिअे रुपयेकी माँग की तो सभीने अँगूठा दिखा दिया। अुसके मित्रोंको अुसकी चारित्रिक कमजोरीका पता था और वे जानते थे कि वह किसी प्रेमिकाके पाशमें फँसा हुआ है, तथा अपने पिताके क्रोधको सहन न कर सकनेके ही कारण वह अभीतक पीकिंगमें पड़ा हुआ है। क्या सचमुच वह अपने घर लौटना चाहता है या वह बहानेबाजी कर रहा है? यदि वह कर्ज लिअे हुअे रुपअेको अपनी प्रेमिकाओंके अूपर खर्च कर दे तो क्या अुसका पिता अुन लोगोंपर नाराज न होगा जिन्होंने अुसे रुपया कर्ज दिया है? कुल मिलाकर अुसे अधिक-से-अधिक दस-बीस चाँदीके सिक्के मिल सकते हैं।

तीन दिनकी दौड़धूपके बाद जब वह सफल न हो सका तो शरमके मारे शिह निआंगके पास जानेकी अुसकी हिम्मत न हुअी। लेकिन अैसी कोअी जगह नहीं थी जहाँ वह रात बिता सकता। अैसी हालतमें अपने गाँवके मित्र 'लिअु'के पास पहुँचकर रात बितानेके लिअे अुसने जगह माँगी। बातोंके दौरानमें लिअुको पता लगा कि लिच्या शादी करनेकी फिराकमें है। लिअुने सिर हिलाते हुअे कहा—

"यह सम्भव नहीं है। शिह निआंग अेक प्रसिद्ध गायिका है। अितनी रूपराशिको तीन सौ चाँदीके सिक्कोंमें देनेके लिअे कौन तैयार हो जाअेगा? बुढ़िया मालकिनने तुम्हें भगानेके लिअे यह चाल चली है, और शिह निआंगने यह जानकर कि तुम्हारे पास पैसा नहीं है, तुम्हें पैसा लानेके लिअे कहा है क्योंकि वह तुम्हें चले जानेके लिअे साफ-साफ नहीं कह सकती। यदि तुम अुसे रुपया जाकर दोगे तो वह तुमपर हँसेगी। यह अेक मामूली-सी चालाकी है। तुम ज्यादा तकलीफ न करो, अुस लड़कीसे अपना सम्बन्ध तोड़ दो।"

यह सुनकर लिच्या बहुत देर तक चुपचाप खड़ा रहा। लिअुने कहना जारी रखा—

"अिस बारेमें कोअी गलती न करो। यदि तुम यह बता सको कि तुम सचमुच घर लौट रहे हो तो बहुतसे लोग तुम्हारी सहायता करेंगे। लेकिन जहाँतक रुपअेका सवाल है, तुम्हें तीन सौ चाँदीके सिक्के अिकट्ठे करनेके लिअे दस दिन नहीं दस महीने लग जाअेंगे।"

"बड़े भाअी, तुम्हारा कहना बिलकुल ठीक है", 'लि' ने अुत्तर दिया।

फिर भी लि तीन दिनतक रुपया अिकट्ठा करनेके लिअे निष्फल प्रयत्न करता रहा।

जब वह शिह निआंगके पास लौटकर नहीं गया तो शिह निआंग बड़ी चिन्तित हुअी। अुसने 'लि' को ढूंढ़नेके लिअे अेक लड़का भेजा। संयोगसे अुसे लि मिल गया। लड़केने कहा—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"चलिअे, हमारी हमशीरा आपको याद कर रही हैं।"

कुछ शरमिन्दा होते हुअे लि ने जवाब दिया—"आज मुझे समय नहीं है; मैं कल आऊँगा।" लेकिन लड़केको आदेश था वह अुसे साथ लेकर आअे। अुसने कहा—

"हमशीरा चाहती हैं कि आप मेरे साथ चलें।"

लि मना नहीं कर सका। वह लड़केके साथ चल दिया।

शिह निआंगके पास पहुँचकर लि चुपचाप खड़ा हो गया—सिसकियाँ भरता हुआ, बिना कुछ बोले।

"तुमने क्या सोचा?"

लि की आँखोंमें आँसू भर आअे। शिह निआंगने फिर पूछा—

"क्या लोग अितने कठोर हैं कि तुम्हें तीन सौ सिक्के भी नहीं दे सकते?"

सिसकियाँ भरते हुअे अुसने नीचे लिखी कविता पढ़ी—

"पहाड़ोंमें चीता पकड़ लेना आसान है
लेकिन दुनियाको केवल शब्दोंसे हिला देना आसान नहीं।"

"मैं छह दिनसे चक्कर काट रहा हूँ, फिर भी मेरे हाथ खाली हैं। अितने दिन लज्जाने मुझे अपनी प्रेमिकासे दूर रखा है, और अब मैं अुसका आदेश पाकर लौटा हूँ। मैंने बहुत प्रयत्न किया। लेकिन अफसोस! समयका दोष है।"

"हम लोग मालकिनसे कुछ नहीं कहेंगे। रातको तुम यहीं रहो। मैं अुसके सामने कोअी दूसरा प्रस्ताव रखूंगी।"

शिह निआंगने अुसे भोजन कराया। अुसने लिसे पूछा—

"यदि तुम मुझे छुड़ानेके लिअे तीन सौ सिक्के भी नहीं ला सकते, तो फिर हम लोग क्या करेंगे?"

लि बिना कोअी अुत्तर दिअे रोने लगा। शिह निआंगने अपने बिस्तरके नीचेसे १५० सिक्के निकालकर अुसके हाथमें रख दिअे—

"देखो, यह मेरा गुप्त धन है। तुम तीन सौ सिक्के नहीं ला सकते अिसलिअे मैं तुम्हें आधा रुपया देनेको तैयार हूँ। अिससे तुम्हें थोड़ी मदद मिलेगी। लेकिन अब सिर्फ चार दिन बाकी बचे हैं। याद रखो देर न होने पाअे।"

रुपया पाकर लिको बड़ी प्रसन्नता हुअी। रुपया लेकर वह अपने मित्र लिअुके पास पहुँचा। लिअुने कहा—

"निश्चय ही यह औरत दिलकी नेक है। अुसके अिस बर्तावको देखते हुअे तुम्हें अुसे कष्ट नहीं देना चाहिअे। तुम्हारे विवाहमें मैं मध्यस्थका काम करूँगा।"

लिको अपने घरमें छोड़कर लिअु अुसके लिअे अपने दोस्तोंसे कर्ज माँगने चल दिया। दो दिनके अन्दर अुसने १५० सिक्के अिकट्ठे कर लिअे। लिके हाथमें यह रुपया पकड़ाते हुअे वह कहने लगा—

"देखो मैं तुम्हारे लिअे जामिन बना हूँ, क्योंकि शिह निआँगकी सहृदयताने मुझे बहुत प्रभावित किया है।"

लिने रुपया ले लिया, मानो कहीं आकाशसे वृष्टि हुअी हो, और वह अपनी प्रेमिकाके पास दौड़ गया। नवाँ दिन था। अुसने पूछा—"क्या तुम्हें १५० सिक्के मिल गअे हैं?"

लिअुने जो कुछ अुसके लिअे किया था, लिने सब कह दिया। शिह निआंग सुनकर बड़ी प्रसन्न हुअी। अगले दिन वह कहने लगी—

"यह रुपया मालकिनको देनेके बाद मैं तुम्हारे साथ चलूंगी। लेकिन मार्गके लिअे हमने कोअी तैयारी नहीं की है। मैंने अपने मित्रोंसे २० सिक्के अुधार लिअे हैं। तुम अिन्हें अपने पास रखो। जरूरत होनेपर रास्तेमें काम आअेंगे।"

लिने प्रसन्न होकर रुपया अपने पास रख लिया।

अिसी समय दरवाजेपर किसीने दस्तक दी। बुढ़िया मालकिनने अन्दर प्रवेश करते हुअे कहा—

"आज दसवाँ दिन है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अिसकी याद दिलानेके लिअे मैं तुम्हें धन्यवाद देता हूँ", लिने कहा। "मैं तुम्हारे पास स्वयं आनेवाला था।"

और अपनी थैलीमेंसे अुसने तीन सौ रुपयोंका ढेर मेजपर लगा दिया। बुढ़िया नहीं जानती थी कि अुसे अितनी जल्दी सफलता मिल जाअेगी।

बुढ़ियाने रंग बदल दिया। वह अपने वादेको भंग करना ही चाहती थी कि शिह निआंग बोल अुठी—"मैं तुम्हारे घर अितने दिनोंसे रह रही हूँ, और हजारों रुपअे कमाकर मैंने तुम्हें दिअे हैं। आज मैं शादी कर रही हूँ। यदि तुम अपने वचनका पालन नहीं करती तो मैं तुम्हारे ही सामने आत्मघात कर लूँगी और फिर याद रखना तुम्हें रुपअे और लड़की दोनोंसे हाथ धोना पड़ेगा।"

बुढ़िया अिसका कोअी अुत्तर न दे सकी। अुसने चुपचाप रुपया लेकर रख लिया। वह कहने लगी—

"यदि तुम जाना चाहती हो तो तुम अभी चली जाओ, लेकिन तुम अपने साथ कोअी कपड़ा या जवाहरात नहीं ले जा सकती।"

यह कहकर बुढ़ियाने अुन दोनोंको घरसे बाहर निकालकर अन्दरसे दरवाजा बन्द कर दिया।

अुस दिन बड़ी सर्दी थी। शिह निआंग सोकर अुठी थी। अुसने कपड़े भी अच्छी तरह नहीं पहने थे। अुसने अपनी मालकिनको घुटने टेककर प्रणाम किया। लिने हाथ जोड़कर नमस्कार किया। और वे दोनों अुस खूसट मालकिनको छोड़कर चल दिअे जैसे मछली अपने पाशको छोड़कर चल देती है।

लि शिह निआंगके लिअे पालकी लेने चला। लेकिन शिह निआंगने रवाना होनेसे पहले अपने सगे-सम्बन्धियोंसे मिलनेकी अिच्छा प्रकट की। जब शिह निआंग लिको साथ लेकर अपने सगे-सम्बन्धियोंसे मिलने गअी तो अुन्होंने अुसे बहुतसे वस्त्र और कीमती आभूषण भेंट किअे।

रवाना होनेके पहले शिह निआंगने लिसे पूछा कि हम लोग कहाँ जा रहे हैं? लिने अुत्तर दिया—

"मेरे पिताजी अभी भी मुझसे नाराज हैं। अिसपर यदि अुन्हें मालूम हो जाअे कि मैंने तुमसे शादी कर कर ली है और तुम्हें साथ लेकर मैं घर लौट रहा हूँ तो निश्चय ही वे और गुस्से हो जाअेंगे। अैसी हालतमें मैं अभी किसी निर्णयपर नहीं पहुँच सका हूँ।"

"तुम्हारे पिताजी तुमसे अपना नाता तो नहीं तोड़ सकते। क्या ही अच्छा हो यदि हम अुनके पास जानेसे पहले किसी बजरेपर समय व्यतीत करें और अिस बीचमें तुम अपने मित्रोंको अुनके पास भेजकर अुन्हें समझा लो। अुसके बाद तुम मुझे अपने साथ लेकर शान्तिके साथ घरमें प्रवेश कर सकते हो।"

"तरकीब तो बहुत अच्छी है," लिने अुत्तर दिया।

तत्पश्चात् वे दोनों लिअुके घर पहुँचे। शिह निआंगने घुटने टेककर अुसके प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुअे कहा—"अीश्वरने चाहा तो हम दोनों किसी दिन आपकी कृपाका बदला चुकानेका प्रयत्न करेंगे।"

लिअुने नम्रतासे अुत्तर दिया—"मेरे साधारणसे कृत्योंकी अपेक्षा तुम्हारी सहृदयता कहीं बढ़ी-चढ़ी है। तुम स्त्रियोंमें वीराणी हो, फिर तुम अपनी जबानपर अैसे शब्द क्यों लाती हो?"

वे लोग दिनभर खाते-पीते और मौज करते रहे। तत्पश्चात् शुभ दिन देखकर दोनोंने यात्राके लिअे प्रस्थान किया। चलते समय शिह निआंगके सगे-सम्बन्धियोंने अुन्हें बहुत-सी भेंटें दीं।

कुछ दूर चलनेके बाद अेक नदी आअी। यहाँसे अेक जहाज क्वाचाअु जा रहा था। अिस जहाजपर लिने अेक कमरा किरायेपर ले लिया। लेकिन जहाजका किराया देकर लिके पास कुछ नहीं बचा। शिह निआंगने अुसे जो मार्गव्ययके लिअे बीस सिक्के दिअे थे सब खर्च हो गअे। लेकिन शिह निआंगने अुसे ढाढ़स बँधाया और अपने बटुअेंमेंसे ५० सिक्के और अुसके सामने निकाल कर रख दिअे। लिच्या बहुत लज्जित हुआ, लेकिन साथ ही अुसे प्रसन्नता भी हुअी। अुसने कहा—"यदि तुम अितनी अुदारता न दिखातीं तो मैं अिधर-अुधर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मारा-मारा फिरता और अन्तमें बिना मौत मर जाता। बूढ़ा होकर भी मैं तुम्हारे गुणोंको नहीं भूलूँगा।"

कुछ दिनोंके बाद जहाज क्वाचाअु पहुँच गया। यहाँ नदी पार करनेके लिअे अुन्होंने अेक छोटा-सा बजरा किराअेपर लिया।

रात्रिका सुहावना समय था। चन्द्रमा अपनी शुभ्र-किरणें चारों ओर फैला रहा था। लिने शिह निआंगको सम्बोधन करके कहा--

"प्रिये! जबसे हमने पीकिंग छोड़ा है हम लोग खुलकर बातचीत भी नहीं कर सके। अब अिस बजरे-पर हम दोनोंके सिवाय और कोअी नहीं है। हम अुत्तरकी सर्दीको छोड़कर दक्षिणकी ओर बढ़ रहे हैं। अिससे बढ़कर आमोद-प्रमोद करनेका और कौन-सा समय हो सकता है जिससे हम अपने भूतकालके दुखोंको भूल जाअें। तुम्हीं बताओ यह सब किसकी कृपाका फल है?"

"मैं भी बहुत दिनोंसे आनन्दसे वंचित हूँ और जो तुम सोचते हो वही मैं भी सोच रही हूँ। अिससे सिद्ध है कि हम दोनोंकी आत्मा अेक है।"

अुसके बाद दोनों बहुत देरतक मधुपान करते रहे। लिच्याने कहना शुरू किया—

"अै मेरी जीवनदात्री! तुम्हारी मनमोहक ध्वनि छह नाटकगृहोंके दर्शकोंको पीड़ा पहुँचाया करती थी। जितनी बार भी मैंने तुम्हारी कल कण्ठध्वनिका श्रवण किया, मेरी आत्मा मुझे छोड़कर किसी अदृश्य लोकमें चली जाती थी। तुम्हारी अुस कल कण्ठ-ध्वनिका पान किअे बहुत काल बीत गया है। चन्द्रमाकी किरणें नदीके अस्थिर जलमें प्रतिबिम्बित हो रही हैं। रात्रि गम्भीर और निर्जन है। प्रिये, क्या कोअी गीत न सुनाओगी?"

पहले तो शिह निआंगने गानेसे अिन्कार कर दिया। लेकिन जब अुसने चन्द्रमाकी ओर दृष्टिपात किया तो अेक गान सहज ही अुसके कण्ठसे निकल पड़ा।

पाम्रहीके बजरेमें 'सुन' नामका अेक तरुण यात्रा कर रहा था। वह 'हुअी चाओ'का सबसे बड़ा मालदार व्यक्ति था और अुसके बापदादा नर्मकके अेकमात्र व्यापारी थे। रात बितानेके लिअे अुसने क्वाचाअुमें लंगर डाल रखा था। अपने बजरेमें अकेला बैठा हुआ वह मधुपान कर रहा था।

किसीके कलकंठसे निकले संगीतकी आवाज सुन-कर वह मुग्ध हो गया और अुसने अपने मल्लाहको गायिकाका पता लगाने भेजा। लेकिन सिर्फ अितना ही मालूम हो सका लिच्या नामक किसी व्यक्तिने 'बजरा किराअेपर ले रखा है। 'सुन' सोचने लगा--

"अितनी सुरीली आवाज किसी कुलीन औरतकी नहीं हो सकती। मैं अुससे कैसे मिलूँ?"

सुन रातभर नहीं सो सका। सुबह होनेपर अुसने देखा कि जोरकी आँधी चल रही है, आकाशमें मेघ घिर आनेसे अँधेरा हो गया है और बर्फ गिरनी शुरू हो गअी है। अैसी हालतमें यात्रा करना संभव न था। 'सुन'ने अपने मल्लाहसे कहा कि वह बजरेको लिच्याके बजरेके पास लगा दे।

सुनने हिमपात देखनेके बहाने अपने कमरेकी खिड़की खोलकर बाहर झाँका। अुसी समय वेशभूषासे सज्जित हुअी शिह निआंग अपनी पतली-पतली अुँगलियोंसे परदा हटाकर अपने प्यालेमें बची हुअी चायकी पत्तियोंको बाहर फेंक रही थी। शिह निआंगकी अभूतपूर्व मधु-रिमाने सुनके अूपर जादूका-सा असर किया और क्षण-भरके लिअे वह अपने आपको भूल गया। बहुत देरतक वह अुस ओर अेकटक देखता रहा और अपने आपमें खो गया। जब अुसे होश आया, वह खिड़कीपर झुककर नीचे लिखी कविता जोरसे गाने लगा--

"बर्फ पहाड़को आच्छादित कर लेता है जहाँ कि
ऋषि निवास करते हैं,
चन्द्रमाके प्रकाशमें वृक्षोंकी छायामें
मधुरिमा अग्रसर हो रही है।"

लिच्या कविताको सुनकर अपने कमरेसे बाहर आ गया। अुसे यह जाननेकी अुत्सुकता हुअी कि कौन गा रहा है। लिच्या सुनके फैलाअे हुअे जालमें फँस गया। लिच्याको देखते ही सुनने अुसका अभिवादन किया। फिर दोनोंने अेक दूसरेका परिचय प्राप्त किया। सुन कहने लगा--

"अीश्वरके भेजे हुअे अिस हिमपातने हम लोगोंका परिचय कराया है, यह मेरा बड़ा सौभाग्य है। मैं अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमरेमें अकेला बैठा हुआ समय यापन कर रहा था। तुम्हें अेतराज न हो तो हम लोग नदीके किनारे किसी मंडपमें बैठकर आमोद-प्रमोदमें समय बिताअें।"

लिच्याने धन्यवादपूर्वक अपनी स्वीकृति प्रदान की।

अंगूरकी लताके मंडपमें बैठकर दोनों मधुपान करते हुअे वार्तालाप करने लगे। सुनने जरा आगेको झुककर धीमी आवाजमें पूछा--

"कल रातको तुम्हारे बजरेपर कोअी गा रहा था?"

लिच्याने सच-सच बता दिया कि वह पीकिंगकी प्रसिद्ध गायिका तू शिह निआंग थी।

"तुम्हारे पास वह गायिका कैसे आअी?" लिच्याने आदिसे लेकर अन्ततक सारी कहानी सुना दी।

"अैसी रूपराशिसे विवाह करना अत्यन्त सौभाग्यकी बात है। लेकिन क्या तुम्हारे पिता अिस सम्बन्धसे संतुष्ट होंगे?"

"बात तो ठीक है, मेरे पिताजी बहुत सख्त मिजाजके हैं, अुन्हें अिस बारेमें अभीतक कुछ भी मालूम नहीं है।"

"यदि अुन्होंने तुम्हें घरमें नहीं आने दिया तो तुम अिसे कहाँ रखोगे? अिस सम्बन्धमें तुमने कुछ विचार किया है?"

"हाँ, हम लोगोंने अिस सम्बन्धमें सोचा है। कुछ दिन वह गाँवमें रहेगी। अिस बीचमें अपने मित्रोंको अपने पिताके पास भेजकर मैं अुन्हें समझा लूंगा।"

"लेकिन तुम्हारे पिताजी तुम्हारे पीकिंगके व्यवहारसे अब भी जरूर नाराज होंगे। और फिर तुमने रीति-रिवाजोंको तोड़कर विवाह किया है। अैसी हालतमें तुम्हारे मित्रों और सग-सम्बन्धियोंकी भी वही राय होगी जो तुम्हारे पिताजीकी है। अिसलिअे तुम्हारे पिताजीके पास पहुँचकर वे तुम्हारे पक्षका समर्थन नहीं करेंगे। अैसी हालतमें जहाँ तुम अपनी पत्नीको थोड़े दिनोंके लिअे रखकर जाओगे, सम्भव है अुसे हमेशाके लिअे ही वहीं रहना पड़े।"

लिच्याके पास रुपया भी थोड़ा ही रह गया था। सुनकी यह दलील सुनकर वह अुदास हो गया। यह देखकर सुनने अपना कहना जारी रखा--

"तुम जानते हो आदिकालसे ही स्त्रियोंका हृदय समुद्रकी लहरोंके समान चंचल रहा है। और पीकिंगकी प्रसिद्ध गायिकाके विषयमें यह बात अधिक सत्य होनी चाहिअे। तुम शायद जानते हो कि यह गायिका सब स्थानोंसे परिचित है। सम्भव है दक्षिणके प्रदेशमें अुसका कोअी पूर्व परिचित दोस्त रहता हो, और यहाँ आनेके लिअे अुसने यह सब स्वांग रचा हो।"

"यह ठीक नहीं है।"

"यह ठीक न हो तो भी दक्षिणके लोग बड़े धूर्त होते हैं। तुम अेक सुन्दर स्त्रीको अकेली छोड़कर जाना चाहते हो, अैसी हालतमें क्या तुम समझते हो कि कोअी व्यक्ति अुसके घरकी दीवालपर चढ़कर अुसके पास पहुँचनेका प्रयत्न नहीं करेगा? आखिर पिता-पुत्रका सम्बन्ध अीश्वरप्रदत्त है, अुसे विच्छिन्न नहीं किया जा सकता। यदि तुम अेक गायिकाके लिअे अपने परिवारको तिलांजलि दे दोगे तो फिर तुम संसारमें भ्रमण करते ही फिरोगे। स्त्री अीश्वर नहीं है। अिस सम्बन्धमें तुम्हें गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिअे।"

यह सुनकर लिच्याको लगा कि मानों वह किसी जलके तीक्ष्ण प्रवाहमें बह गया है। अुसने पूछा--"तो फिर मुझे क्या करना चाहिअे?"

"देखो, अेक वर्षसे तुम अेक वेश्याके घरमें पड़े हुअे हो। तुमने अिस सम्बन्धमें जरा भी विचार नहीं किया कि जब तुम्हें सोने और खाने-पीनेके लिअे कुछ नहीं मिलेगा तो तुम क्या करोगे? तुम्हारे पिता तुमसे अिसीलिअे रुष्ट हैं कि तुम वेश्यालयोंमें अपना जीवन बरबाद करते रहे और अपने धनको बालूकी भाँति लुटाते रहे। वे कहते हैं कि सारा धन बरबाद करनेपर भी बिना सन्तानके रहोगे। खाली हाथ लौटनेसे अुनका क्रोध और बढ़ेगा। मेरे प्रिय भाअी! यदि तुम अपने प्रेमपाशके बन्धनोंको विच्छिन्न करनेके लिअे राजी हो तो मैं बड़ी खुशीसे तुम्हें अेक हजार सिक्के दे सकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हूँ। अिस रुपअेको अपने पिताजीके सामने रखकर तुम कह सकते हो कि पीकिंगमें रहते हुअे तुमने अपना अध्ययन बराबर जारी रखा है और तुम अिधर-अुधर कहीं नहीं भटके हो। अिससे वे तुम्हारा विश्वास कर लेंगे और तुम्हारे घरकी शान्ति सुरक्षित रह सकेगी। अिस प्रकार तुम अपने दुखको सुखमें परिवर्तित कर सकते हो। अिस सम्बन्धमें तुम खूब सोच लो। यह न समझो कि तुम्हारी पत्नीपर मेरी नजर है। मैं तो तुम्हें अपना अेक सहृदय मित्र समझकर सलाह दे रहा हूँ।"

लिच्या स्वभावसे कमजोर प्रकृतिका था। फिर वह अपने पितासे डरता था। सुनके शब्दोंने अुसके दिलपर असर किया। वह कहने लगा--

"भाअी! तुम्हारी नेक सलाहने मेरे मूर्खतापूर्ण भ्रमको दूर कर दिया है। लेकिन मेरी प्रेमिका जो सैकड़ों मीलसे मेरे साथ चलकर आअी है, अुसे मैं रास्तेमें कैसे छोड़ सकता हूँ? खैर, मैं अिस सम्बन्धमें अुसके साथ परामर्श करूँगा, और यदि तुम्हारी सलाह अुसे ठीक जँची तो मैं शीघ्र ही तुम्हें अिसकी सूचना दूँगा।"

"मेरा हृदय पिता और पुत्रका वियोग सहन नहीं कर सका, अिसलिअे मुझे ये कठोर बातें तुमसे कहनी पड़ीं, अिसका मुझे अफसोस है।"

तत्पश्चात् दोनोंने अेक साथ बैठकर मधु-पान किया। आँधी और बर्फका गिरना बन्द हो गया था। सन्ध्या हो चली थी। सुनन लिच्याको हाथसे पकड़कर अुसके बजरे तक पहुँचा दिया।

शिह निआंगने अन्दर आनेके लिअे अुसे लालटेन दिखाअी। लिच्याके चेहरेपर अुदासी छाअी हुअी थी। शिह निआंगने अुसके प्यालेमें चाय अुँडेली लेकिन लिच्याने बिना कुछ कहे अुसे पीनेसे अिन्कार कर दिया। वह बिस्तरपर जाकर पड़ गया। यह देखकर शिह निआंगको बड़ा दुख हुआ।

लिच्या बिना कुछ बोले सिसकियाँ भरता रहा। शिह निआंगने तीन-चार बार पूछा लेकिन वह बिना कुछ अुत्तर दिअे सो गया। शिह निआंग बहुत देर तक पलंगके अेक किनारेपर बैठी रही।

आधी रात बीत जानेपर लिच्या अुठकर फिर सिसकियाँ भरने लगा। शिह निआंगने कारण पूछा।

लिच्याने कंबल अुतारकर फेंक दिया और अैसा लगा कि वह कुछ कहेगा लेकिन अुसके मुँहसे अेक भी शब्द नहीं निकला। अुसके होठ पत्तियोंकी भाँति काँपने लगे और वह फिर सिसकियाँ भरने लगा। शिह निआंगने अेक हाथसे अुसका सिर पकड़ा और अुसे सान्त्वना देती हुअी धीरे-धीरे बोलने लगी--

"हमारे प्रेमने हम दोनोंको करीब दो वर्षोंसे साथ-साथ रखा है। हमने अनेक कष्टों और दुखदाअी क्षणोंका सामना किया है, लेकिन अब हम सब तकलीफोंको पार कर चुके हैं। फिर तुम क्यों दुखी मालूम होते हो, जब कि हम नदी पार करके शीघ्र ही आनन्दके दिनोंका अुपभोग करनेवाले हैं? तुम्हारी अुदासीका कोअी कारण अवश्य होना चाहिअे। पति-पत्नीको जीवित अवस्थामें और मृत्युके बाद भी अेक दूसरेके दुख-सुखमें सम्मिलित रहना चाहिअे। यदि कोअी अैसी बात हो गअी हो तो हम लोग अुसपर विचार कर सकते हैं। अपने दुखको तुम मुझसे क्यों छिपाते हो?"

यह सुनकर लिच्याने अपने आँसुओंको रोककर कहना आरम्भ किया—

"अीश्वरने जो दुख मुझे दिया है अुसके भारके नीचे मैं दबा जा रहा हूँ। अपनी अुदारताके कारण तुमने कभी मेरी अुपेक्षा नहीं की। तुमने मेरी खातिर हजारों तकलीफें अुठाअी हैं। अिसमें कुछ मेरी विशेषता नहीं। लेकिन अभी भी मैं अपने पिताजीके सम्बन्धमें सोचता हूँ जिनकी आज्ञाका अुल्लंघन मैंने किया है। वे चरितके अत्यन्त दृढ़ हैं, और मुझे भय है कि मुझे देखते ही अुनका क्रोध दुगुना हो जाअेगा। अैसी हालतमें अेक साथ तैरते हुअे हम दोनों कहाँ ठहर सकेंगे? यदि मेरे पिता मुझसे सम्बन्ध विच्छेद कर देंगे तो फिर हम कैसे सुखी रह सकेंगे? आज मेरे मित्र सुनने मुझे मधुपानके लिअे निमन्त्रित किया था। अुसने जो मेरे भविष्यका चित्र खींचा है अुससे मेरा हृदय विदीर्ण हो गया है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो आप क्या करना चाहते हैं", शिह निआंगने बड़े आश्चर्यसे पूछा।

"मेरी समझमें नहीं आ रहा था कि क्या किया जाअे। अैसे समय मेरे मित्र सुनने अेक युक्ति बताअी है। लेकिन मुझे डर है कि शायद तुम अुसे स्वीकार न करो।"

"यह तुम्हारा मित्र सुन कौन है? यदि यह यक्ति अच्छी है तो मैं अुसे क्यों न स्वीकार करूँगी?"

"सुन अेक मालदार घरानेमें पैदा हुआ है। अुसने जीवनमें बहुत अुतार-चढ़ाव देखे हैं। पिछली रातको तुम्हारा गाना सुनकर वह मुग्ध हो गया। मैंने अुसे अपनी सब कहानी सुनाअी और यह भी बताया कि हम लोगोंके घर वापिस जानेमें क्या कठिनाअियाँ हैं। यह सब सुनकर अपनी अुदारताके वश अुसने अेक हजार सिक्के देना मन्जूर किया है बशर्ते कि तुम अुससे शादी करनेको तैयार हो जाओ। अिस रुपअेको मैं अपने पिताजीको दे दूँगा। तुम्हें भी कोअी आश्रय मिल जाअेगा। लेकिन ये विचार मेरे हृदयमें समा नहीं रहे हैं, अिसलिअे मैं दुखी हूँ।"

लिच्याकी आँखोंसे टपाटप आँसू गिरने लगे। शिह निआंग ठण्डी हँसी हँसकर कहने लगी—

"वह आदमी बड़ा बहादुर, साहसी और गुणी होना चाहिअे जिसने मेरे पतिके हितसे प्रेरित होकर युक्ति बताअी है। अिससे केवल न आपको अेक हजार सिक्के मिल जाअेंगे और न केवल मुझे आश्रय मिल जाअेगा बल्कि आपका सामान भी हलका हो जाअेगा और अुसे अुठाने-रखनेमें आपको सहूलियत हो जाअेगी। लाअिअे कहाँ है रुपया?"

आँसुओंको रोकते हुअे लिच्याने अुत्तर दिया—

"मुझे तुम्हारी स्वीकृति नहीं मिली थी अिसलिअे मैंने रुपया अभी स्वीकार नहीं किया।"

"कल सुबह सबसे पहले अपने मित्रके पास पहुँचकर तुम रुपया माँगो। अेक हजार काफी होता है और अुसके कमरेमें प्रवेश करनेके पूर्व ही यह रुपया तुम्हें मिल जाना चाहिअे। क्योंकि मैं कोअी माल-मिलकियत तो हूँ नहीं जिसे अुधार खरीदा जा सके।"

रात्रिका अन्तिम पहर था। शिह निआंग वस्त्राभूषणोंसे सज्जित होने लगी। अुसने कहा—"आज मैं अपने पुराने संरक्षकको छोड़कर नअे संरक्षकके पास जा रही हूँ, अिसलिअे मुझे अच्छी तरह साज-शृंगार करना चाहिअे। यह कोअी साधारण घटना नहीं है। अिसलिअे आज मुझे सुन्दरसे सुन्दर वस्त्र, गंध और आभूषण धारण करने चाहिअे।"

साज-शृंगारकी तैयारी करते-करते सूर्योदय हो गया।

लिच्या क्षुब्ध था लेकिन वह प्रसन्न मालूम हो रहा था। शिह निआंगने सुनसे पैसा वसूल कर लेनेपर जोर दिया और लिच्या फौरन ही सुनके पास पहुँच गया। सुनने कह—

"रुपया देना मेरे लिअे आसान है। लेकिन अपनी स्वीकृतिके प्रमाणस्वरूप पहले अपनी पत्नीके गहने मेरे पास रख दो।"

लिच्याने यह बात शिह निआंगसे कही। शिह निआंगने सोनेका ताला लगी हुअी अपनी पेटीको सुनके पास भिजवा दिया। सुनने भी अेक हजार सिक्के लिच्याके पास भिजवा दिअे।

शिह निआंग सुनके पास पहुँचकर अपने लाल रंगके अधखुले होठोंके अन्दर शोभित अपनी शुभ्र दन्त-पंक्तिको दिखाते हुअे कहने लगी—

"अब तुम मुझे मेरी पेटी वापिस दे दो। अिसमें लिच्याका पासपोर्ट है, अुसे मुझे लौटाना है।"

शिह निआंगने पेटी खोली। अुसमें बहुतसे खाने थे। शिह निआंगने लिच्याको अुन्हें अेक-अेक करके खोलनेको कहा।

पहले खानेमें सैकड़ों रुपअेके हीरे-जवाहरातके बहुतसे आभूषण थे। शिह निआंगने अुन्हें अुठाकर नदीमें फेंक दिया। लि, सुन और मल्लाह अुद्विग्न होकर खड़े देखते रहे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरे खानेमें अनेक प्रकारकी कीमती बाँसुरियाँ थीं। तीसरेमें सोने-चाँदीके हजारों रुपअेके आभूषण थे। अन सबको अुठाकर अुसने दरियामें फेंक दिया। देखनेवाले संत्रस्त होकर देखते रहे।

आखिरमें अुसने मुक्ता, मणि, पन्ना, वैडूर्य आदिसे भरा हुआ अपना डिब्बा अुठाया। देखनेवाले आश्चर्यचकित होकर चिल्ला अुठे। अिसको वह नदीमें फेंक देना चाहती थी लेकिन लिच्याने अुसका हाथ पकड़ लिया। सुनने अुसे अुत्साहित किया।

लिको धक्का देकर वह सुनकी ओर बढ़ी और अुसे दुत्कारकर कहने लगी—

"कल यहाँ पहुँचनेसे पहले मेरे पतिने और मैंने अनेक कष्ट अुठाअे हैं। लेकिन अपनी घृणित और पापपूर्ण लालसाको पूरी करनेके लिअे तुमने हम लोगोंको बरबाद कर दिया है और जिस व्यक्तिको मैं प्रेम करती थी अुसे घृणा करनेके लिअे प्रेरित किया है। अपनी मृत्युके पश्चात् मैं प्रतिकारकी देवीसे मिलूँगी और तुम्हारा यह दुष्टतापूर्ण छल मैं कभी न भूल सकूँगी।"

फिर लिकी ओर अभिमुख होकर अुसने कहा—

"कितने ही वर्षोंमें जब मैं अपने जीवनके अव्यवस्थित दिन गुजार रही थी, गुप्तरूपसे मैंने अितना खजाना अिकट्ठा किया था जिससे कभी मेरे संरक्षणके लिअे यह काम आ सके। जब मैं तुमसे मिली तब हम लोगोंने प्रतिज्ञा की थी कि हमारा मिलन पहाड़से अूँचा और समुद्रसे भी गहरा होगा। हमने शपथ ली थी कि बाल सफेद होनेतक हम लोग अेक दूसरेसे प्रेम करते रहेंगे। पीकिंग छोड़नेसे पूर्व मैंने यह जाहिर किया था कि मानो यह पेटी मुझे मेरे मित्र द्वारा भेंटमें मिली है। अिसमें हजारोंके बहुमूल्य हीरे-जवाहरात थे। मेरा विचार था कि तुम्हारे माता-पितासे मिलनेके पश्चात् यह खजाना मैं तुम्हारे पास जमा कर देती। लेकिन यह कौन सोच सकता था कि तुम्हारा प्रेम अितना छिछला होगा और दूसरोंकी बातोंमें आकर तुम अपनी विश्वासपात्र प्रिय पत्नीको त्याग दोगे? आज अिन सब लोगोंके समक्ष, मैंने यह सिद्ध कर दिया है कि तुम्हारे अेक हजार सिक्के बहुत तुच्छ थे। ये लोग अिस बातके साक्षी हैं कि मेरा पति अपनी पत्नीको त्याग रहा है, और मैं अपने कर्तव्यसे च्युत नहीं हूँ।"

अिन दुखभरे शब्दोंको सुनकर वहाँ खड़े हुअे लोग रो पड़े और वे लिको कृतघ्न कहकर धिक्कारने लगे तथा लि लज्जित और असहाय बनकर पश्चात्तापके आँसू बहाने लगा। अुसने घुटने टेककर शिह निआंगसे अपने अपराधोंकी क्षमा माँगी। लेकिन शिह निआंग अपने दोनों हाथोंमें हीरे-जवाहरात लेकर नदीके पीत जलमें कूद पड़ी।

देखनेवाले जोरसे चिल्लाअे और अुन्होंने अुसे बचानेका प्रयत्न किया। लेकिन काले बादलोंके नीचे नदीकी अुठती हुअी लहरोंमें फेन अुठने लगे और फिर अुस साहसी औरतका कहीं पता न चला।

लोग गुस्सेसे दाँत पीसते हुअे लि और सुनको मार डालते, लेकिन वे दोनों भय और अुद्वेगसे अपनी-अपनी नावोंमें बैठकर वहाँसे भाग गअे।

लिच्या अपने कमरेमें अेक हजार सिक्के देखकर रोता रहा शिह निआंगको याद करके। अुसके दुखने अुसे पागल बना दिया और वह फिर कभी स्वस्थ नहीं हो सका।

सुन अपने बिस्तरपर लेटा रहता। अुसे अैसा लगता कि शिह निआंग अुसके सामने दिन-रात खड़ी रहती है। अुसके पापोंका प्रायश्चित्त अुसकी मृत्युसे ही हो सका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कृत साहित्यकी आलोचना पद्धति

—श्री श्रीधर शास्त्री

संस्कृत साहित्यमें आलोचना अथवा समालोचनाका नाम कहीं नहीं मिलता। आलोचनाका आज जो स्वरूप है, अुसी भाव और अर्थका बोधक संस्कृत साहित्यका अलङ्कार-शास्त्र है। अलंकृतिरलङ्कारः—अिस भाव व्युत्पत्तिसे दोषोंका परित्याग और गुण-अलङ्कार आदि ग्रहण करनेका बोधक है। समालोचना—अलङ्कार वही है, जो वस्तुके सौन्दर्य और असौन्दर्यका निराकरण करे।

अलङ्कारोंपर विचार करनेवाला सबसे पुराना ग्रन्थ अग्निपुराण है, अिसमें अलङ्कारों और रीतियोंका विवेचन किया गया है। आगे चलकर दण्डी, भामह आदि साहित्याचार्योंने अलङ्कारको शास्त्र मानकर अिसे समृद्ध बनाया। अिन्होंने तथा अिनके बादके आचार्योंने साहित्य (काव्य) को नियमन करनेवाली आलोचनाओंको पूर्ण रूपसे अलङ्कार शास्त्र कहा। निष्कर्ष यह निकला कि संस्कृत साहित्यमें आलोचनाका सूत्रपात अग्निपुराणसे होता है, और अिसका विकास दण्डी, भामहसे प्रारम्भ होता है।

आलोचना पद्धतिके तीन रूप

अग्निपुराणके बाद भामह और दण्डीके समयमें संस्कृत समालोचनाका जो पहला रूप स्थिर किया गया, अुसमें विच्छित्ति—विशेषवती पद-रचनाको ही काव्यकी आत्मा माना गया था। अुसी समय व्यंग्यार्थको भी वाच्यका पोषक मानकर व्यंग्यको भी समालोचनाका अंग माना गया।

अिसके बाद आलोचनाका दूसरा युग आया, अिस युगमें आनन्दवर्द्धनका कार्य अधिक स्थायी और अुल्लेखनीय रहा है, अिन्होंने अभिधा, लक्षणा वृत्तियोंके अलावा व्यञ्जना वृत्तिकी स्थापना की। अुन्होंने व्यंग्यार्थको अुत्तम संज्ञक ध्वनि काव्यका कारण बताया। अुनके स्वारस्यके अनुसार ही मम्मट आदि आचार्योंने वस्तु, अलङ्कार, रस अिन तीनों प्रकारकी ध्वनियोंको काव्यकी आत्मा स्वीकार किया।

आलोचनाका अेक अन्तिम तीसरा युग आया, जब तीनों प्रकारकी ध्वनियोंको निरस्त करके केवल रसको ही प्रधानता दी गअी। अिसका श्रेय साहित्यदर्पणकार विश्वनाथको है। अिस युगके अन्तिम आचार्य पण्डितराज जगन्नाथ हैं, जो संस्कृत समालोचना पद्धतिकी सीमा-रेखा बने हुअे हैं, अुनके बाद आजतक काव्यों और काव्यांगोंपर कोअी भी आलोचनात्मक निबन्ध नहीं लिखे गअे।

आलोचकका स्वरूप

संस्कृत साहित्यमें कविताका मूलस्रोत भावाभिव्यक्ति है, और अुसकी व्याख्या करनेवाला आलोचक कहलाता है। अिसी भावको लेकर कालिदासने (रघुवंश १४।७०) श्लोकत्वमापद्यत यस्य श्लोकः लिखकर तथा आनन्दवर्द्धन (ध्वन्यालोक १।१८) ने शोकः श्लोकत्वमागतः लिखकर शोक तथा श्लोकका समीकरण करनेवाले महाकवि वाल्मीकिको आदि कवि होनेके साथ आदि आलोचक माना है।

अैतिहासिक विकास

संस्कृत साहित्यकी आलोचनाका अितिहास भामह (६५० अी०) से लेकर पण्डितराज जगन्नाथ (१७५० अी०) तक फैला हुआ है। अिस दीर्घ कालमें आलोचकोंने काव्यके मौलिक तत्वोंकी अुद्भावनाअें कीं। आलोचना सम्बन्धी अनेक वाद प्रचलित हुअे, जिनका समीकरण करनेसे आलोचना शास्त्रके तीन युग—तीन पद्धतियाँ बनती हैं। आलोचना शास्त्रकी अिस लम्बी परम्परामें भामह, वामन, रुद्रट,—आनन्दवर्द्धन, अभिनवगुप्त, राजशेखर, मुकुलभट्ट, धनञ्जय, भट्टनायक, कुन्तक महिमभट्ट, क्षेमेन्द्र, मम्मट, विश्वनाथ कविराज और पण्डितराज जगन्नाथ प्रमुख-आलोचक हैं।

आलोचना शास्त्रका प्रभाव

संस्कृत साहित्यके आलोचना शास्त्रका प्रभाव केवल काव्यतक ही सीमित नहीं रहा, बल्कि साहित्यके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी अंगोंपर अुसका व्यापक प्रभाव मिलता है। पाणिनिकी अष्टाध्यायी (२।३।७२, २।१।५५, २।१।५६) आदिमें आलोचनाके पारिभाषिक शब्दोंके प्रयोग मिलते हैं। पाणिनिकी भाँति कात्यायनने भी वार्तिक सूत्रोंमें अलंकारोंको अपनाया है। फिट्सूत्रों (२।१६, ४।१८) में स्वर विधानपर सादृश्यका जो प्रभाव पड़ता है, अुसका वर्णन मिलता है। महाभाष्यमें पतञ्जलिने व्याकरण शास्त्रकी अिस आलोचना पद्धतिको बहुत स्पष्ट और व्यापक बनाया। महाभाष्यमें अुपमा-निरूपण अपना अैतिहासिक महत्व रखता है।

जाति-विशिष्ट व्यक्तिमें संकेत माननेवाले नैयायिकों तथा केवल जातिमें ही शब्दोंका संकेत माननेवाले मीमांसकोंका खण्डन करते हुअे पतञ्जलिने लिखा है कि शब्दका संकेत जातिगुण, क्रिया तथा यदृच्छा शब्दमें हुआ करता है। पतञ्जलिका यह सिद्धान्त साहित्यिक आलोचकोंने भी स्वीकार किया है।

व्याकरण शास्त्रके आलोचकोंके सिद्धान्त ध्वनि तथा व्यञ्जनाके मौलिक तथ्योंपर आश्रित हैं। वैयाकरण भूषण आदिसे अन्ततक अेक आलोचना ग्रन्थ है, अिसमें ध्वनिकी कल्पना स्फोटके अूपर पूर्णरूपसे आश्रित है। भूषणकारके मतके अनुयायी साहित्य-शास्त्रके आलोचक मम्मट भी हैं। (काव्य-प्रकाश-अुद्योत १)। यदि यह कहा जाअे कि वैयाकरण आलोचकों द्वारा अुद्भावित स्फोटकी सिद्धिके लिअे व्यञ्जनाकी जो कल्पना की गअी थी, अिसीको आधार मानकर साहित्यके समालोचकोंने व्यञ्जनाको अलंकृत किया। अिस तथ्यको ध्वन्यालोककारने "प्रथमेहि विद्वांसो वैयाकरणः। व्याकरण मूलत्वात् सर्वविद्यानाम"—कहकर स्पष्ट स्वीकार किया है। दर्शनशास्त्रके जितने विभिन्न वाद प्रचलित हैं, अुनका मूल आलोचना ही है। शङ्कर, रामानुज, वल्लभ आदि दार्शनिकोंने अपने भाष्य ग्रन्थोंमें केवल आलोचना ही की है।

राजशास्त्रमें कौटिल्य सबसे महान् आलोचक सिद्ध हुआ है। कौटिलीय अर्थशास्त्रके राज्यशासन प्रकरणमें अर्थक्रम, परिपूर्णता, माधुर्य, औदार्य तथा स्पष्टत्व नामक गुणोंका अुल्लेख किया है। अुसने जगह-जगह पूर्ववर्ती आचार्योंका मत अुद्धृतकर और फिर अपना मत व्यक्त करते हुअे अुनकी गंभीर आलोचना की है। राजाज्ञा कैसी लिखी जानी चाहिअे। अुसमें अुसने जिन गुण-दोषोंकी चर्चा की है, अुनका मिलान काव्य ग्रन्थोंके अलङ्कारोंसे किया जा सकता है। काव्यमें गुण-दोषका विवेचन अग्निपुराण और भरतके समयसे ही प्रचलित हो चुका था।

संस्कृत साहित्यकी आलोचना पद्धतिका जो समय है, वह साहित्यका रचनात्मक युग रहा है। आलोचनाओंकी कसौटीपर अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ कसे गअे और अनेक निर्मित हुअे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाश और परछाअीं

—श्री विष्णु प्रभाकर

(प्रारम्भिक संगीतके बाद पद-चाप अुठे और मिटे)

सुधा : अब कहिअे आपको क्या कहना है, आपने तो मुझे डरा ही दिया।

हरीश : वह बात ही कुछ अैसी है, सुनोगी तो....

सुधा : तो कहो न ? पहिले ही क्यों संकट पैदा कर लिया। तनिक शीशा लेकर तो देखो, अैसे लगते हो जैसे....

हरीश : जैसे,

सुधा : जैसे अभी-अभी जेलसे निकलकर आ रहे हो।

हरीश : (सहसा काँपकर) सुधा !!

सुधा : (चकित) यह क्या हुआ हरीश, यह तुम्हें क्या हुआ ? मैं तो मजाक कर रही थी, हरीश!!...

हरीश : (सँभलकर) कुछ नहीं, कुछ नहीं सुधा, अैसे ही....

सुधा : अैसे ही क्या ? हरीश, तुम तो मुझे डरा रहे हो। भला तुम्हारी अैसी कौनसी बात है जो मुझे नहीं मालूम।

हरीश : वही बताने तो आया हूँ।

सुधा : तो फिर बताते क्यों नहीं। बेचैन क्यों हो रहे हो ? शायद मुझे गैर समझते हो।

हरीश : गैर समझता तो कहता ही क्यों ?

सुधा : कह ही तो नहीं रहे हो, अुल्टे, शंका कर रहे हो।

हरीश : नहीं-नहीं सुधा, अैसा नहीं है। प्रेममें शंका कैसी ?

सुधा : फिर....?

हरीश : बात यह है सुधा, हम अब अेक होनेवाले हैं, लेकिन अुससे पहिले मैं तुम्हें अपने जीवनकी कुछ बातें बता देना चाहता हूँ। मैं अपना हृदय खोलकर तुम्हारे सामने रख देना चाहता हूँ। मैं नहीं चाहता कि विवाह-बन्धनमें बँधनेके बाद तुम्हें मेरे बारेमें कुछ गलत-फहमी हो....

सुधा : हरीश तुम कैसी बातें कर रहे हो। मुझे तुम्हारे बारेमें कोअी गलत-फहमी न है, न कभी हो सकती है।

हरीश : यही तो मैं भी चाहता हूँ, और अिसी लिअे तुम्हें बता देना चाहता हूँ, कि जिसे तुम हरीशके नामसे जानती हो अुसका असली नाम किशोर है।

सुधा : (सहसा हँस पड़ती है) हरीशका असली नाम किशोर है, बस यही बात थी। अिसलिअे अितना डर रहे थे। वैसे किशोर भी कुछ बुरा नाम नहीं है....

हरीश : नाम बुरा नहीं है, पर काम अुसके बहुत बुरे हैं।

सुधा : काम ? कौनसे काम ?

हरीश : जो किशोरने किअे।

सुधा : यानी जो तुमने किअे।

हरीश : हाँ, जो मैंने किअे। जब मैं कालेजमें पढ़ता था तो मैंने अेक बार प्रश्न-पत्र चुराअे थे।

सुधा : (खोअी-खोअी-सी) तुमने प्रश्न-पत्र चुराअे थे ?

हरीश : हाँ।

सुधा : तो अिसमें क्या है, बचपनमें...

हरीश : सुनो तो, मैं तब बच्चा नहीं था। मैंने जान-बूझकर अैसा किया था, और अिस अपराधमें मुझे छह महीने जेलमें रहना पड़ा।

सुधा : (काँपकर) जेल, जेलमें रहना पड़ा।

हरीश : हाँ, मैं छह महीने जेलमें रहा और जब बाहर आया तो मैंने निश्चय किया कि मैं अब फिर कभी अैसा काम न करूँगा। लेकिन तीन वर्ष बाद अेक फर्ममें नौकरी करते समय मैंने फिर जालसाजी की...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधा : (हठात्) जालसाजी ! नहीं, नहीं, तुम गलत कह रहे हो । तुम अैसा कैसे कर सकते हो ?

हरीश : अेक दिन मैं भी अैसा ही सोचता था, पर मैंने चैक भुनानेमें गड़बड़ी की, और अेक बार फिर छह महीनेके लिअे जेलकी हवा खाअी ।

सुधा : हैं !! तुम फिर अेक बार जेल गअे । तुमने सचमुच जालसाजी की . . .

हरीश : हाँ ।

सुधा : फिर ?

हरीश : फिर जेलसे छूटकर अिधर चला आया । तबसे नाम बदलकर नया जीवन बिता रहा हूँ . . .

सुधा : (विमूढ़-सी) तबसे नाम बदलकर नया जीवन बिता रहे हैं आप ?

हरीश : हाँ ।

सुधा : नहीं-नहीं, हरीश, तुम मुझसे मजाक कर रहे हो ।

हरीश : काश कि यह मजाक होता, सुधा; लेकिन . . .

सुधा : लेकिन . . . लेकिन क्या यह सब सच है ? वास्तवमें सच है ?

हरीश : हाँ ।

सुधा : ओह, हरीश, ओह . . . (काँपती है)

हरीश : सुधा, यह क्या, तुम्हारा रंग अुड़ गया, तुम काँप रही हो ? तुम . . .

सुधा : (अेकदम) नहीं नहीं मुझे कुछ नहीं हुआ, मैं बिल्कुल ठीक हूँ (हँसनेकी चेष्टा) ।

हरीश : अपनेको धोखा मत दो सुधा । अैसा होना स्वाभाविक है, लेकिन अभी अपनेको सँभालो, अेक बात और कहनी है ।

सुधा : अेक बात और कहनी है ?

हरीश : हाँ सुधा, अेक बात और कहनी है । वह यह है कि तीसरी बार मैंने तुम्हें छलना चाहा पर छल न सका ।

सुधा : हरीश ! हरीश !!!

हरीश : हाँ सुधा, मैं तुम्हें छल न सका । असलमें मैं छलना चाहता ही नहीं था । मैं अेक भले आदमीका जीवन बिताना चाहता था और चाहता हूँ । मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ, प्रियसे प्रिय वस्तुकी शपथ खाता हूँ, कि आजके बाद मेरे जीवनमें तुम्हें अैसी कोअी बात नहीं मिलेगी, जिसके लिअे तुम्हें पछताना पड़े ।

सुधा : (विह्वल) हरीश, हरीश !

हरीश : मैं यही कहने आया था सुधा, अब जाता हूँ ।

सुधा : नहीं, नहीं, जाते कहाँ हो ?

हरीश : जाना ही होगा, सुधा । तुम्हें निर्णय करनेके लिअे समय चाहिअे, फिर आअूँगा (जाता है) ।

सुधा : हरीश, हरीश !! सुनो तो . . हरीश ! चले गअे । चले गअे । (क्षणिक मौन) हरीश चले गअे, हरीशने प्रश्न-पत्रोंकी चोरी की । हरीशने चैक भुनानेमें जालसाजी की । हरीशका असली नाम किशोर है । हरीश, तुमने चोरी की, तुमने जालसाजी की, तुमने चोरी की, जालसाजी की । (आवेश अुद्वेग) नहीं, नहीं, यह सब गलत है । सब स्वप्न है । मेरे हरीशने कुछ नहीं किया । वह बिल्कुल निर्दोष है । वह अेक अुच्च चरित्रका व्यक्ति है । मेरे परिवारवाले अुस-पर मुग्ध हैं । बहुत शीघ्र मेरा अुसका विवाह होगा । हम अेक नया घर बसाअेंगे । अेक नया संसार, अेक आदर्श संसार, . . . आदर्श संसार . . . पर . . . पर अभी हरीश यहाँ आया था, वह कह रहा था . . . वह कह रहा था . . . कह रहा था . . . (फिर आवेश)

[कहती-कहती तेजीसे भागती हुअी दूर जाती है, अन्तराल संगीतके बाद सुधाकी माँ और चाचा गम्भीर-तासे बातें करते अुभरते हैं ।]

नन्दकिशोर : (चकित) क्या कहा ? हरीश चोरी और जालसाजीके अपराधमें दो बार जेल हो आया है ।

माँ : हाँ भैया, अुसने नाम तक बदल लिया है ।

नन्दकिशोर : नाम तक बदल लिया है तब तो पूरा ४२० है, ना भाअी ना, अैसे आदमीसे कोअी वास्ता नहीं रखना चाहिअे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माँ : यही तो मैं भी कहती हूँ पर जगदीशका कुछ पता ही नहीं लगता ।

नन्दकिशोर : पता नहीं लगता, तो क्या वह सुधाका विवाह अुस ढंगसे करनेको तैयार है, क्या शुक्लोंका खानदान अितना गिर गया है कि अुसकी बेटियाँ चोरों और ठगोंके घर जाअेंगी ? क्या अुसे लड़कोंकी कमी है । .....

माँ : कमी क्यों होती भैया, जगदीश भी तो यह नहीं कहता है ।

नन्दकिशोर : तो क्या कहता है ?

माँ : कुछ कहता ही तो नहीं । जबसे ये बातें खुली हैं, दोनों भाअी-बहन चुप हैं । सुधा तो जैसे बूढ़ी हो गअी है, अुसकी तरफ मुझसे देखा तक नहीं जाता ।

नन्दकिशोर : (क्रोध) देखा तक नहीं जाता । कसूर तो सब तुम्हारा है । तुमने अुसे अितनी छुट्टी दी क्यों कि वह सबसे मिलती फिरे ।

माँ : अब तुम्हें क्या बताअूँ । हमारी कौन सुने है, और फिर कालेजमें पढ़ेंगे तो मिलना-जुलना कैसे रुकेगा । मना करती भी तो क्या होता । अब तुम्हें अिस लिअे बुलाया है कि किसी तरह जगदीशको समझाओ । (जगदीशके आनेका आभास)

नन्दकिशोर : लो वह याद करते ही आ गया ।

माँ : (अेकदम) क्या खबर है जगदीश !

जगदीश : जो कुछ अुसने बताया वह सब ठीक है माँ !

माँ : सब ठीक है ?

नन्दकिशोर : सब ठीक है ?

जगदीश : जी हाँ ।

नन्दकिशोर : तब तो वह पक्का ठग है । बदमाश है—४२० है । अुसे अेकदम घरसे निकाल बाहर करो ।

जगदीश : निकालना अितना आसान नहीं है चाचाजी ।

नन्दकिशोर : निकालना आसान नहीं तो क्या, शादी करना आसान है ? क्या तू अुस ठगसे सुधाकी शादी कर देगा ? क्या तू . . . क्या तू . . . चोरोंसे सम्बन्ध करेगा ? क्या तू शुक्लोंके खानदानकी अिज्जत धूलमें मिलाअेगा ? तुझसे यही आशा थी ?

जगदीश : चाचाजी . . . चाचाजी । सुनिअे तो . .

नन्दकिशोर : सुननेको अब और क्या रहा है । चोर तो बन गअे ।

माँ : नहीं भैया, जगदीशने अभी, 'हाँ', नहीं की । वह क्या पागल है ?

जगदीश : नहीं चाचाजी, मैं पागल नहीं हूँ । मैं भला अपनी बहनकी शादी किसी चोरसे चार सौ बीससे कैसे कर सकता हूँ ।

नन्दकिशोर : यही तो मैं कहता हूँ, भाभी । फिर बात क्या है, सोचना क्या है ?

जगदीश : सोचना यही है कि सुधा बच्ची नहीं है ।

नन्दकिशोर : कैसे नहीं है, माँ-बापके सामने बेटा-बेटी हमेशा बच्चे बने रहते हैं ।

जगदीश : चाचाजी, यह बच्चे और बड़ेकी बात नहीं है; न आवेशमें आकर ही अिस समस्याको सुलझाया जा सकता है । आप सब कुछ कर सकते हैं पर सुधाके दिलकी कल्पना नहीं कर सकते ।

माँ : तबसे बुत बन गअी है, न खाती है न पीती है ।

नन्दकिशोर : अैसा ही होता है, अैसा ही होता है भाभी । मैं सब जानता हूँ । वह सब अुमरकी बात है । मुझसे क्या कुछ छिपा है, पर मेरी बात सुन लो, करना वही जो तुम्हारे मनमें हो ।

माँ : नहीं नहीं, तुझसे अधिक हमें कौन है ।

नन्दकिशोर : अिसीलिअे तो कहता हूँ कि जोशमें आकर तुमने सुधाकी शादी हरीशसे कर दी, और आज तुमने अुसके दोषोंको ढक लिया, पर वे हमेशा ढके रहेंगे अिसकी क्या गारन्टी । तब अगर किसी दिन अुनकी औलादने अिस बातको जान लिया तो सोचो अुनकी क्या हालत होगी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगदीश : यही तो बात है। यही तो मैं सोचता हूँ तब अुन्हें कितनी पीड़ा होगी।

माँ : फिर सोचता क्या है ? अुसे समझाता क्यों नहीं ? अुसपर कितना बुरा असर पड़ेगा।

जगदीश : मैं समझाअूँ, कअी बार चाहा माँ, पर अुसके सामने जाते ही सब कुछ भूल जाता हूँ। अुसकी दृष्टिमें न जाने क्या होता है ? मेरी छातीमें अैसी चुभती है कि मैं अवाक् रह जाता हूँ।

नन्दकिशोर : बेटा बुरा न मानना। तू अपने-आप दुविधामें फँसा है, अुसे क्या समझावेगा।

माँ : मैं आज अुसकी सहेली अुमासे बातें करूँगी। वह समझावेगी। नहीं तो मैं ही साफ-साफ कह दूँगी। तू तो कायर है....

जगदीश : (अेकदम) श श श सुधा आ रही है,

(सुधाका प्रवेश)

सुधा : नमस्ते चाचाजी !

नन्दकिशोर : नमस्ते, (नम्र स्वर) क्यों बेटी तबीयत कुछ खराब है !

सुधा : (बेबस हँसी) नहीं तो, मैं बिल्कुल ठीक हूँ चाचाजी।

नन्दकिशोर : मुझसे छिपाती है। पेटपर कुदा-कुदाकर तो तुम दोनोंको अितना बड़ा किया है। खुश रहा कर बेटी। अुधर आ जाया कर अपनी चाचीके पास ! हैं हैं आ जगदीश। मेरे साथ आ कुछ काम है। अच्छा भाभी....

माँ : हैं यह सहसा चल दिअे, चुपचाप....

नन्दकिशोर : (अलगसे) तू ठीक कहता है जगदीश। सुधाकी हालत ठीक नहीं है, पर अिससे डरना नहीं चाहिअे। दूसरा वर ढूँढ़ो, सब ठीक हो जाअेगा। दो-तीन लड़के हैं मेरी निगाहमें.... (अन्तराल संगीतके बाद सुधा व अुमाके स्वर अुठे)।

अुमा : सुधा, सुधा, तुम सुनती क्यों नहीं ? तुम्हें हो क्या गया है ?

सुधा : अैं....

अुमा : सुधा, (निश्वास) सुधा, तू पागल हो जाअेगी।

सुधा : (जागकर) क्या...क्या कहा।

अुमा : यही कि तू पागल हो जाअेगी।

सुधा : सच, तब तो बड़ा अच्छा होगा, अुमा। पागल हुअे बिना अब मेरी मुक्ति नहीं है।

अुमा : हट पगल, कैसी बातें करती है।

सुधा : अभी पगली कहाँ हुअी हूँ। अभी तो समझदारों जैसी ही बातें कर रही हूँ।

अुमा : भगवानके लिअे तर्क मत कर, मेरी बात सुन।

सुधा : सुन रही हूँ, तभी तो जवाब दे रही हूँ,।

अुमा : (तीव्र होकर) सुधा, मैं चली जाअूँगी।

सुधा : (अेकदम विनम्र) नाराज हो गअी। तेरा क्या अपराध है, मेरा भाग्य ही मुझसे रूठ गया है।

अुमा : जो कायर हैं वे ही भाग्यको दोष दिया करते हैं, सुधा। तू स्वयं अपनेसे रूठ रही है, अैसे क्या दुनियाके काम चले हैं। आज नहीं कल तुझे अिस बातका निर्णय करना है।

सुधा : (अेकदम कंठावरोध) अुमा, मैं कुछ निर्णय नहीं कर सकती। सोचना नहीं शुरू कर पाती कि भूलना शुरू कर देती हूँ....

अुमा : (स्नेहसे) तेरी व्यथा जानती हूँ, सुधा। पर अिस टूटनेसे तो....

सुधा : (अेकदम) मर जाना अच्छा है, काश कि मैं मर पाती।

अुमा : मरे तेरे दुश्मन, तुझे बस जी कड़ा करना है और अपने मनकी बात बता देनी है।

सुधा : लेकिन तभी तो जब मनमें कोअी बात हो, ओह, अुमा, अुन्होंने मुझे अितना प्यार क्यों किया ? क्यों किया ? और अितना प्यार करनेवाले अितने बुरे कैसे हो सकते हैं....?

अुमा : (क्षणिक सन्नाटा) मुझे विश्वास है कि वे तुझे सच्चे दिलसे प्यार करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधा : न करते तो सब कुछ बताते कैसे ?

अुमा : जब तुझे अितना विश्वास है तो फिर दुविधा किस बातकी है ?

सुधा : दुविधा,. . . . (क्षणिक मौनके बाद ही निश्वांस) अेक बार किसीसे गलती हो जाअे तो अुसे भूल समझा जा सकता है, अुमा । पर. . .पर वे दो-दो बार जेल जा चुके हैं । दो-दो बार अुन्होंने जान-बूझकर धोखा दिया है । जालसाजी की है । कौन कह सकता है कि किसी दिन वे. . . .ओह, मैं कैसे बताअूँ ?

अुमा : बतानेकी कुछ जरूरत नहीं, मैं सब समझती हूँ । मैं अुनसे साफ कह दूँगी कि यह शादी नहीं हो सकती ।

सुधा : अुमा !

अुमा : अब और कुछ नहीं सुनूँगी, सुधा । मैं जानती हूँ कभी भी हो, तुम्हारा वही निर्णय होगा । अभी प्रेमका आवेश है और आयु भी अल्हड़ है, किसीने दो बातें कीं और.....

सुधा : नहीं, अुमा नहीं, वह बात नहीं ।

अुमा : तो क्या बात है ?

सुधा : बात यह है कि अुन्होंने शपथ खाकर मेरे सामने प्रतिज्ञा की है कि भविष्यमें वे अपने चरित्रको कभी नहीं बिगड़ने देंगे ।

अुमा : कितनी बार तू अुस शपथकी बात कह चुकी । मैं पूछती हूँ क्या—तू अुस शपथपर विश्वास करती है ।

सुधा : शपथपर विश्वास करती हूँ या अविश्वास, यह तो मैं स्वयं विश्वाससे नहीं कह सकती पर अितना अवश्य सोचती हूँ कि यदि मैंने अुनसे विवाह करनेसे अिन्कार कर दिया तो वे और भी बिगड़ जाअेंगे ।.....

अुमा : (काँपकर) ओह सुधा, तेरे मस्तिष्कका कुछ पता नहीं लगता ।

सुधा : और यदि मैं अुनसे शादी कर लूँ, अुन्हें अपना लूँ तो शायद अुनका जीवन बनानेमें सहायक बन सकूँ । मैं अिसी दोराहेपर खड़ी हूँ, पर किसी अेक राहको चुननेकी शक्ति मुझमें नहीं है, मैं क्या करूँ, कोअी अितना प्यार कैसे कर सकता है.....

अुमा : सुधा, तुम अितना सोचती हो ।

सुधा : सोचती ही तो रहती हूँ, यही बुरा है । सोचना न जानती तो अबतक कोअी-सी अेक राह न पकड़ लेती !

अुमा : यह भी तू ठीक कहती है । मेरी बुद्धि भी काम नहीं देती । दुनियाको देखती हूँ तो विवाह न करनेकी बात जँचती है, पर जो कुछ अबतक होता आया है क्या वही आगे भी हो ? क्या नारीमें अपने प्रेमसे पुरुषकी प्रवृत्तियोंको बदल देनेकी शक्ति नहीं है ? क्या, प्रेम किसीके दोषोंको धो नहीं सकता । किसीको पवित्र नहीं कर सकता । अिन सब बातोंपर विचार करती हूँ तो मेरा मन कहता है कि तू हरीशसे शादी कर ले ।

सुधा : (काँपकर) क्या सच ? क्या तू सच कह रही है ? क्या तेरा यही निर्णय है ?

अुमा : विवाह तेरा होना है पगली, निर्णय तुझे करना होगा, निस्सन्देह हरीशने अपने अपराधोंको स्वीकार करके अपने चरित्रकी अुच्चताका प्रमाण दिया है । वह बड़ी सरलतासे बिना कुछ कहे तेरे साथ जीवन बिता सकता था ।

सुधा : यही तो. . .यही तो मैं भी सोचती हूँ ।

अुमा : पर फिर भी. . .मैं अिस मामलेमें 'हाँ' या 'ना' कुछ नहीं कह सकती । यह तेरी समस्या है तुझे ही अिसे सुलझाना होगा ।

सुधा : तू भी धोखा दे गअी ।

अुमा : श. . .श. . .श. . .शान्त । जगदीश आ रहा है, (जगदीशका प्रवेश) यह बड़ा अुद्विग्न दीखता है ।

सुधा : क्या बात है अुमा, क्या हुआ ? भअिया-ने हमें देखा तक नहीं । तेजीसे अन्दर चले गअे ।

अुमा : मैं अभी मालूम करती हूँ, (जाती है ।)

(संगीत)

सुधा : (निश्वास) वह क्या हो रहा है, यह क्या हो रहा है । आनेवाला स्वर्णिम प्रभातकाल रात्रिमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बदलता जा रहा है। और मैं देख रही हूँ...क्या सचमुच वह स्वर्णिम प्रभात था या कोरा छल। कहीं मैं अबतक स्वप्न तो नहीं देख रही थी। नहीं, नहीं, वह सब सत्य था। स्वप्न तो वह अब बनता जा रहा है। विधाता मेरे सुनहरे भविष्यको धूलमें मिला दे रहे हैं। पर क्यों? नहीं नहीं अैसा नहीं होगा...नहीं होगा। नहीं होगा।

(हरीशका प्रवेश)

हरीश : सुधा !

सुधा : (काँपकर) कौन, ओह आप,...तुम ...तुम आअे हो, (अेक टक अुसे देखती है)

हरीश : हाँ, मैं...अचरज होता है, तुम अैसे क्यों देखती हो,...सुधा...सुधा तुम्हें क्या हो गया ?

सुधा : मुझसे पूछते हो ? घरमें आग लगाकर पूछना चाहते हो, कि वह क्यों जल रहा है। नावमें छेद करके तुम अचरज कर रहे हो, कि वह डूब क्यों रही है। हरीश...हरीश, यह तुमने क्या कर डाला। क्या कर डाला...

हरीश : मैंने यही किया जो मुझे करना चाहिअे था।

सुधा : क्या तुम्हें अैसा करना अुचित था ? नहीं, नहीं, हरीश। यह अुचित नहीं था।

हरीश : सुधा, मैं तुम्हें प्यार करता हूँ। और जिसे कोअी प्यार करता है अुससे क्या अपनेको छिपा सकता है। मैं भी न छिपा सका। छिपाता तो वह प्रेम न होता, पाप होता। पर...पर...तुम अैसे क्यों देख रही हो,...नहीं, नहीं, तुम्हारी यह दृष्टि मुझसे नहीं सही जाती। मैंने अपराध किया है पर...

सुधा : (अेक बारगी गंभीर स्वर) अपराध, अिस बार तुमने अपराध ही तो नहीं किया; तुम चुप क्यों नहीं रहे ?

हरीश : सुधा।

सुधा : (पूर्वतः) जहाँ तुमने अितने अपराध किअे थे वहाँ अेक और अपराध कर लेते। जो पत्ते खोलकर खेलता है वह कभी नहीं जीत सकता। हरीश तुम बाजी हार गअे। जाओ लौट जाओ। लौट जाओ।

हरीश : लौट जाअूँ, यह तुम्हारा निर्णय है !

सुधा : (अेकदम) तुम मेरा निर्णय क्यों जानना चाहते हो। तुम स्वयं ही क्यों नहीं लौट जाते।

हरीश : (काँपकर) यह तुमने क्या कहा सुधा। मैं स्वयं ही क्यों नहीं लौट जाता, मैं तुम्हारा निर्णय क्यों जानना चाहता हूँ। (गंभीर) सोचूँगा सुधा, तुमने पूछा है, तो सोचना होगा...सोचना होगा (जाता है)

सुधा : (काँपकर) हरीश...हरीश, सुनो तो...

हरीश : (दूरसे) सुधा, मैं स्वयं निर्णय करूँगा, स्वयं...(स्वर मिटता है)

सुधा : (विह्वल स्वर) ओह, यह क्या हो रहा है ? यह क्या हो रहा है ? सब सोच रहे हैं, पर निर्णय कोअी नहीं कर पाता। काश कि...काश कि मैं सोच न सकती, बुद्धू होती। मैं पत्थर होती। मेरे सीनेमें दिल न होता। मेरे सिरमें दिमाग न होता...(अुमाके आनेका आभास)

अुमा : सुधा, सुधा, क्या हुआ ?

सुधा : (अेकदम) अुमा, मैं तुमसे अेक सीधी बात पूछती हूँ, ठीक-ठीक जवाब देना।

अुमा : अेकदम तुम्हें यह सवाल पूछनेकी क्या सूझी।

सुधा : कुछ सूझी हो बोलो, तुम जवाब दोगी ?

अुमा : पूछो क्या पूछती हो ?

सुधा : अगर मैं तुम्हारी सगी बहन होती तो क्या तुम मुझे हरीशसे विवाह करने देती ?

अुमा : (मौन)

सुधा : बोलो जवाब दो।

अुमा : (अेकदम) अिन हालतोंमें मैं कभी विवाह करनेकी आज्ञा नहीं देती।

सुधा : अुमा।

अुमा : (गंभीर स्वर) मैं ठीक कह रही हूँ, सुधा मैं कभी यह विवाह न होने देती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधा : तुम कभी यह विवाह न होने देती। भअिया भी यही कहते थे तो...तो...(अेकदम) तो मैं भी यह विवाह नहीं करूँगी।

अुमा : सुधा।

सुधा : मैं ठीक कहती हूँ अुमा, मेरा यही निर्णय है।

अुमा : तेरा निर्णय ठीक है (माँका तेजीसे प्रवेश)

माँ : सुधा, तूने सुना बेटी।

सुधा : क्या माँ।

माँ : तेरे चाचा गिरफ्तार होनेवाले हैं, झूठी शिकायत करके किसीने अुन्हें फँसा दिया है। कहते हैं अुसने लोहेमें ब्लैक मार्केट की है, (रोकर) हाथोंमें हथकड़ी पड़ जाअेगी। लोग शुक्लोंके खान्दानपर....

जगदीश : (दूरसे) माँ-माँ, तुम कहाँ रह गअी, जल्दी जाओ।

माँ : (जाती हुअी) आती हूँ (सुधासे) बेटी, कहीं जाअियो मत, मैं जल्दी जाअूँगी।

[अन्तरालके बाद सुधाका स्वर अुठता है।]

सुधा : (स्वगत) अुमा अभी तक नहीं आअी, क्या अुसने हरीशसे सब कुछ कह दिया होगा। क्या मेरा निर्णय ठीक है। क्या वह सचमुच शैतान है। क्या कभी शैतान ठीक नहीं हो सकते। भअिया कहते थे, हो तो सकते हैं पर देखती आँखों कौन कुअेंमें कूदता है। वे मेरे निर्णयसे बहुत खुश हुअे। सभी खुश हुअे। ठीक भी है। कलको वह मुझे भी धोखा देता, मुझे छोड़कर भाग जाता तो...तो....(निश्वास) हरीश मुझे छोड़कर भाग जाता....नहीं, नहीं, यह नहीं हो सकता था....यह कभी नहीं हो सकता था, अुससे दो बार अपराध हो गया तो अिसके यह माने नहीं है कि वह हमेशा अपराध करेगा। अुसने दो बार बुरा काम किया तो अुसका यह अर्थ नहीं कि वह पापी है। नहीं, नहीं, वह पापी नहीं है। वह अपराधी नहीं है। अपराधी वे हैं जो ब्लैक मार्केट करते हैं, जो टैक्सकी चोरी करते हैं, जो चौगुना मुनाफा खाकर अपनी तिजोरियाँ भरते हैं,....हरीश अपराधी नहीं है, (क्षणिक मौन) सभी यह सोचते हैं कि अुसने अपराध किया पर यह कोअी नहीं सोचता कि वह अुससे भी बड़ा अपराध कर सकता था, जो अुसने नहीं किया, बल्कि अुसने तो पहलेको भी स्वीकार कर लिया। स्वीकार करनेकी यह भावना क्या अिस बातका प्रमाण नहीं है कि अुसे पश्चात्ताप हो रहा है कि अुसके हृदयमें कम-से-कम प्रकाशकी अेक अैसी रेखा है जो अेक दिन अुसके सारे हृदयको आलोकसे भर सकती है।

अुमा : (सहसा) और मेरी रानी यह भी सम्भव है कि वह रेखा बिल्कुल ही मिट जाअे तब फिर वहाँ क्या रहेगा, घोर अन्धकार।

सुधा : ओह, तुम। तुम कब आअी?

अुमा : अधिक देर नहीं हुअी, बस आपका भाषण आरम्भ ही हुआ था,....

सुधा : ओह तो तू सब कुछ सुन चुकी है। बता, हरीशने क्या कहा।

अुमा : हरीश तेरी तरह अुलझा हुआ नहीं है। मेरे जानेसे पूर्व ही वह चला गया।

सुधा : (चकित) चला गया, कहाँ?

अुमा : कहाँ तो मैं नहीं जानती पर वह यहाँसे सदाके लिअे चला गया। अभी तो अुसने छुट्टी ली है, पर सुना है कि वह वहींसे अिस्तीफा भेज देगा।

सुधा : क्या सच?

अुमा : हाँ सुधा, यह सब सच है। और मुझे खुशी है, कि अुसने ठीक निर्णय किया।

सुधा : तू अिसे ठीक समझती है?

अुमा : मैं ही क्यों तुम भी अिसे ठीक समझती हो।

सुधा : मैं भी अिसे ठीक समझती हूँ। नहीं-नहीं यह गलत है....

अुमा : गलत यह नहीं है, गलत वह भाषण था जो तुम अपनी आत्माको दे रही थी। वह अेक पागलका प्रलाप था, आवेग था।

सुधा : अुमा तेरा अैसा विचार है।...तेरा अैसा विचार है।...वह पागलका प्रलाप था।...वे चले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गअे ।...मैं अुनका चला जाना ही ठीक समझती हूँ यही चाहती थी और वे चले गअे,...(धीमा पड़ता स्वर) वे चले गअे,....चले गअे,....मुझसे मिले बिना ही चले गअे ।.....

अुमा: सुधा, तुझे यह क्या हो रहा है । तू अेकाअेक पीली क्यों पड़ गअी है । सुधा.... सुधा.... अरे तू तो बेहोश हो रही है । (जोरसे) सुधा.... सुधा । ओह ! क्या यह सचमुच अुसके जानेसे दुखी है, सुधा...सुधा....

सुधा : (सहसा सँभलकर) क्या बात है अुमा ?

अुमा: तेरी तबीयत कैसी है, यह तुझे क्या हुआ ?

सुधा: मैं तो ठीक हूँ, (हँसकर) बिल्कुल ठीक ।

अुमा: तू ठीक नहीं है सुधा । क्या तुझे सचमुच हरीशके जानेका दुख है ? क्या तू सचमुच ?

सुधा: अुमा !...अुमा !! (रो पड़ती है) मैं कुछ नहीं जानती । मैं कुछ नहीं समझ पाती । हरीश चला गया, और मुझसे कहे बिना चला गया ।

अुमा: यह अुसने अुचित ही किया, सुधा ।

सुधा: (सहसा) अुसने जो कुछ किया अुचित किया । अुसने अपना अपराध स्वीकार किया, यह भी अुचित था । वह यहाँसे चला गया, यह भी अुचित है । यदि सब कुछ अुचित है तो अुसका अपराध क्या है ? अुसे सजा क्यों मिली है ?

अुमा: क्योंकि अुसने अपना अपराध स्वीकार कर लिया है ।

सुधा: अपराध स्वीकार करना भी अपराध होता है क्या ।

अुमा: अपराध स्वीकार करना अपराध होता है या नहीं, पर अुसे दंड अवश्य मिलता है ।

सुधा: अुसे दंड अवश्य मिलता है । क्या पश्चात्तापकी ग्लानि अुसका काफी दंड नहीं है ?

अुमा : सुधा तू जो कुछ कह रही है वह ठीक है । मैं अुसे समझती हूँ, पर अब देर हो चुकी है, तूने स्वयं.....

सुधा : देर हो चुकी है । मैंने स्वयं नहीं, नहीं, देर नहीं हुअी । अभी देर नहीं हुअी अुमा !

(सहसा माँ और जगदीशका प्रवेश)

माँ : काहेमें देर नहीं हुअी अुमा । क्या बात है ?

अुमा : ओह, माँ, भअिया, कोअी बात नहीं, अैसे ही...हाँ, क्या हुआ चाचाजीका ।

जगदीश : छूट गअे ।

माँ : हाँ, छूट गअे बेटा । पर पूरे पाँच हजार खर्च हुअे ।

अुमा : पाँच हजार ।

सुधा : माँ, अगर अुनके पास भी पाँच हजार होते, तो...तो (कंठावरोध)

माँ : सुधा !

जगदीश : सुधा !

अुमा : सुधा ! अपनेको सम्भालो, सुधा !

सुधा : (अेकदम आवेशमें) मैं सब कुछ समझती हूँ, मुझे अपना रास्ता दिखाअी दे गया है । मैं अब और अिस दोराहेपर नहीं खड़ी रहूँगी । मैं हरीशको ढूँढूँगी । मैं हरीशको ढूँढूँगी । (तेजीसे जाती है ।)

माँ :
जगदीश :
अुमा : } —(काँपकर) सुधा, सुधा,

(पीछे-पीछे जाते हैं । संगीत समाप्त ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वके प्रति मेरा दृष्टिकोण

—श्री अल्बर्ट आयंशटाअिन

मानव-जीवन अथवा समस्त प्राणि-जीवनका अर्थ क्या है? अिस प्रश्नका अुत्तर धर्मपर ही आधारित हो सकता है। फिर यह प्रश्न करनेका महत्व ही क्या है? मेरा अुत्तर है कि जो व्यक्ति अपने और अन्य व्यक्तियोंके जीवनको निष्प्रयोजन समझता है वह न केवल अभागा है अपितु जीवनके अयोग्य भी है।

हम मर्त्य-जीवोंकी स्थिति कितनी असाधारण है? हममेंसे प्रत्येक अिस विश्वमें कुछ ही समयके लिअे आया है। वह अपने जीवनका अुद्देश्य नहीं जानता। परन्तु यदि हम अिस प्रश्नपर अपने दैनिक जीवनकी दृष्टिसे विचार करें तो हम यही कहेंगे कि हमारा जीवन अपने बन्धुओंके लिअे है—पहले अुनके लिअे, जिनकी मुस्कान और भलाअीपर हमारा सुख निर्भर है और अिसके पश्चात् अुन सब मनुष्योंके लिअे, जिनसे हम व्यक्तिगत रूपसे अपरिचित हैं और जिनके भाग्यसे हम सहानुभूतिके सूत्र द्वारा बँधे हुअे हैं। मैं प्रति दिन सौ-सौ बार स्वयंको यह स्मरण दिलाता हूँ कि मेरा आन्तरिक तथा बाह्य जीवन अन्य जीवित या मृत मानवोंके परिश्रमपर अवलम्बित है और आज जो कुछ भी मैं प्राप्त कर चुका हूँ अथवा कर रहा हूँ अुसे अुसी मात्रामें वापिस करनेके लिअे मुझे प्रयत्न करना चाहिअे। मैं सीधेसादे सरल जीवनकी ओर आकर्षित हूँ और मुझे अिस विचारसे बहुधा पीड़ा होती है कि मैं अपने भाअियोंके श्रमके अनावश्यक भागपर अधिकार कर रहा हूँ। मेरी मान्यता है कि वर्ग-भेद न्यायके विरुद्ध है और वे अन्तमें शक्तिपर आधारित हैं। मेरा यह भी विचार है कि सादगीपूर्ण जीवन प्रत्येक व्यक्तिके लिअे शारीरिक तथा मानसिक दृष्टिसे हितकर है।

तात्विक अर्थमें मानवीय स्वातन्त्र्यका जहाँ तक सम्बन्ध है मैं अुसमें विश्वास नहीं करता। प्रत्येक व्यक्ति न केवल बाह्य प्रेरणासे बल्कि आन्तरिक आवश्यकतासे भी कार्य करता है। सोपेनहारका कथन है कि "मनुष्य अपनी अिच्छानुसार कार्य कर सकता है; परन्तु वह यह अिच्छा नहीं कर सकता कि वह अेक निश्चित अिच्छा करेगा।" अिस कथनसे मुझे युवावस्थासे अभी तक निरन्तर प्रेरणा मिली है। अुसने मुझे अपने तथा अन्य व्यक्तियोंके जीवनकी कठिनाअियोंमें सांत्वना दी है। अुससे हमें अेक नवीन जीवन-दृष्टि प्राप्त होती है जिसमें विनोदका अुचित स्थान है।

अपने जीवनके अर्थ या सृष्टिके प्रयोजनकी खोज करनेका प्रयत्न वस्तुनिष्ठ (आब्जेक्टिव) दृष्टिकोणसे मुझे हमेशा मूर्खतापूर्ण प्रतीत हुआ है। परन्तु फिर भी प्रत्येक व्यक्तिके कुछ आदर्श होते हैं जो अुसके प्रयत्नों और विचारोंकी दिशा निश्चित करते हैं। अिस दृष्टिसे मैंने आराम और सुखको कभी अन्तिम अुद्देश्य नहीं माना है। मेरे मतानुसार यह नैतिक आधार केवल सुअरोंके झुंडके लिअे अुचित हो सकता है। जिन आदर्शोंने मुझे प्रकाश दिखाया है और जीवनको आनन्दपूर्वक व्यतीत करनेका साहस दिया है वे हैं—सत्य, साधुत्व और सौंदर्य। यदि जीवनमें अपने सदृश्य विचारोंवाले व्यक्तियोंके प्रति बन्धुत्व-भावना न हो, यदि अुसमें हम कला तथा विज्ञान सम्बन्धी गवेषणाके क्षेत्रमें सदैव अप्राप्य लक्ष्यकी ओर निरन्तर अग्रसर न हों तो वह जीवन व्यर्थ है। मानव जिन अुद्देश्यों (सम्पत्ति, बाह्य सफलता, विलासिता) की पूर्तिके लिअे प्रयत्न करता है वे मुझे सदा घृणास्पद प्रतीत हुअे हैं।

मेरा राजनैतिक आदर्श लोकतन्त्र है। प्रत्येक मनुष्यका सम्मान होना चाहिअे और अुसे देवता बनाकर अुसकी पूजा नहीं की जानी चाहिअे। यह भाग्यकी विडम्बना ही है कि मुझे अपने साथियों और मित्रोंसे अत्यधिक प्रशंसा और सम्मान प्राप्त हुआ है। अिसका कारण मेरा कोअी अपराध नहीं है और न मेरी कोअी योग्यता ही है। अिसका कारण यह हो सकता है कि मैंने अपनी दुर्बल शक्तियोंसे निरन्तर प्रयत्न द्वारा जो अेक या दो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कल्पनाअें निश्चित की हैं अुन्हें समझनेकी वे अिच्छा करते हों। मुझे यह पूर्ण रूपसे ज्ञात है कि किसी कठिन योजनाकी सफलताके लिअे यह आवश्यक है कि अेक व्यक्ति अुसके सम्बन्धमें विचार करे, अुसका संचालन करे तथा अुसका सर्वसाधारण अुत्तरदायित्व स्वीकार करे। परन्तु अिस बातकी आवश्यकता है कि जिन व्यक्तियोंका नेतृत्व किया जाअे वे बाध्य न किअे जाअें, वे अपना नेता स्वयं चुन सकें। बलप्रयोगकी निरंकुश पद्धतिका, मेरे मतानुसार, शीघ्र पतन हो जाता है। शक्ति निम्न स्तरकी नैतिकताके व्यक्तियोंको ही आकर्षित करती है। मेरे विचारानुसार यह अेक अपरिवर्तनशील नियम है कि प्रतिभाशाली अत्याचारियोंके पश्चात् बदमाश व्यक्तियोंको ही सत्ता मिलती है। मुझे प्रतीत होता है कि मानव-जीवनके भव्य घटना-क्रममें बहुमूल्य तत्व राज्य (स्टेट) न होकर सृजनशील, सचेतन व्यक्ति और अुसका व्यक्तित्व है--केवल वही महान् और अुदात्त तत्वोंको जन्म देता है। बाकी जन-समुदायके विचार तथा भाव निर्बल रहते हैं।

अिस विषयकी चर्चाके कारण मेरा ध्यान स्वभावतः समुदाय-प्रवृत्ति (हार्ड नेचर) के सबसे दुखद परिणाम --सैनिक व्यवस्था-की ओर आकर्षित होता है। मुझे सैनिक व्यवस्थासे घृणा है। यदि कोअी व्यक्ति किसी बैण्डके संगीतसे प्रेरित हो समूहमें चल सकता है तो केवल अिसी बातसे मुझे अुससे घृणा हो जाती है। अुसे मस्तिष्क भूलसे ही दे दिया गया है; अुसे केवल रीढ़की ही आवश्यकता थी। हमारी सभ्यताका यह रोग शीघ्रसे शीघ्र नष्ट किया जाना चाहिअे। किसी आदेशके अनुसार वीरता, मूर्खतापूर्ण हिंसा, वे घातक निरर्थक विचार जिन्हें हम देशभक्तिका नाम देते हैं--मुझे अुनसे कितनी घृणा है। युद्ध तो मुझे बहुत ही तिरस्करणीय अेवं तुरन्त त्याज्य प्रतीत होता है; अिस निन्दनीय कार्यमें भाग लेनेकी अपेक्षा तो मैं यह पसन्द करूँगा कि मेरे शरीरके टुकड़े-टुकड़े कर दिअे जाअें। अितना होते हुअे भी मानव-जातिके सम्बन्धमें मेरा मत बहुत अच्छा है और मेरा विश्वास है कि यदि व्यापारिक तथा राजनैतिक स्वार्थोंने जो शालाओं और समाचारपत्रों द्वारा कार्य करते हैं, राष्ट्रोंकी सद्बुद्धि भ्रष्ट न कर दी होती तो अिस अभिशापका बहुत समय पूर्व ही अन्त हो गया होता।

हम विश्वके रहस्यमय तत्त्वका जो अनुभव प्राप्त करते हैं वही जीवनका सर्वोत्तम वरदान है। अिसी आधारभूत भावनाने वास्तविक कला और वास्तविक विज्ञानकी सृष्टि की है। जो व्यक्ति अिस तत्त्वको नहीं समझता और आश्चर्यचकित नहीं होता वह मृत है, बुझी हुअी मोमबत्तीके समान है। अिस रहस्यके अनुभव (यद्यपि अुसमें भय मिश्रित था) के फलस्वरूप ही धर्मका जन्म हुआ है। अिन तत्त्वोंका हमें आकलन नहीं होता, अुनका ज्ञान, तथा विश्वमें जो अगाध बुद्धि तथा दीप्तिमान सौन्दर्य व्याप्त है अुनके प्रकट होनेवाले विविध स्वरूप--अिसी ज्ञान और भावनासे धार्मिक दृष्टि निर्मित होती है। अिसी अर्थमें मैं अतिशय धार्मिक व्यक्ति हूँ। मैं अैसे अीश्वरकी कल्पना नहीं कर सकता जो अपने प्राणियोंको पुरस्कार अथवा दंड देता है या जिसमें हमारे ही समान अिच्छाअें हैं। शारीरिक मृत्युके पश्चात् किसी व्यक्तिके जीवनको मैं समझ नहीं सकता; मैं अैसा चाहता भी नहीं; ये कल्पनाअें दुर्बल व्यक्तियोंके भयोंकी शांति अथवा अुनके मूर्खतापूर्ण अहंभावके सन्तोषके लिअे हैं। मेरे लिअे तो जीवनकी अनन्तताका रहस्य और सत्यकी आश्चर्यजनक रचनाका ज्ञान ही पर्याप्त है।

(अंग्रेजीसे, अनुवादक :— श्री राजेन्द्रप्रसाद भट्ट)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्याग्रहका फल

—श्री पी. अेम. रामैया

पद्मनाभ अपने माता शंकरैय्यरको लेने स्टशन गया। शंकरैय्यर गाड़ीसे प्लेटफार्मपर अुतरते ही बोल अुठे--"पद्मनाभ! अगर मेरी बात मानो तो तुम्हें पढ़ी-लिखी लड़कीकी कोअी जरूरत नहीं है। आजकलकी पढ़ी-लिखी लड़कियाँ, विवाह करने लायक ही नहीं रहीं।

पद्मनाभ चौंककर मामाकी ओर देखने लगा। शंकरैय्यर कुलीके द्वारा अुतारे गअे सामानकी देखरेखमें लगे रहे। सामान "टेक्सी" में रख, जब वे घरकी तरफ चले तो रास्तेमें अुन्होंने फिर अपना विचार प्रकट किया--"लाज, शरम, डर, वगैरा अुनको नामके लिअे भी नहीं है? लड़कियोंका जनम और अिन गुणोंसे शून्य? छी!! पद्मनाभ, मेरा कहना मानो! किसी गाँवकी लड़कीसे तुम शादी करो, तब कहीं तुम्हारे बचनेकी आशा है।"

अपना सन्देह प्रकट करते हुअे पद्मनाभने कहा--"आजके जमानेमें अनपढ़ लड़कियोंका मिलना बहुत मुश्किल है मामा?" अुसका मतलब यह रहा--"अिस शर्तके अनुसार आप लड़की ढूँढेंगे, तो मुझे अविवाहित ही रहना पड़ेगा।"

अुसकी ध्वनिमें, शंकरैय्यरने भी, यह बात परख ली। "क्यों नहीं मिलेगी? मैं ही अेक अैसी लड़कीसे तुम्हारा विवाह करा दूँगा।"

"अेकाअेक, यह क्या हुआ, मामा?" पद्मनाभ पूछने ही वाला था कि मामाने प्रश्न किया--"हाँ, तो यह लड़की कहाँतक पढ़ी हुअी है?"

"अिण्टर फेल हो गअी, तो अुसकी पढ़ाअी भी बन्द कर दी गअी। आपको तो मैंने लिखा ही है।"

"तुम्हारी मामीने ही चिट्ठी पढ़कर सुनाअी, मुझे याद नहीं है। छी, छी! क्या वे भी लड़कियाँ हैं?"

"कौन मामा?"

"रातकी गाड़ीमें अेक झुण्ड डिब्बेमें घुस आया। क्या हँसना, क्या बोलना, क्या नाज-नखरे, क्या शान, क्या नटखटपन, क्या चुहलबाजी.!" मामीजीने 'क्या' की, अेक लंबी झड़ी लगा दी! और तब कहीं जाकर, रातका वह अनुभव कह सुनाया।

कल रात गाड़ीमें काफी भीड़ थी। पहली घण्टी हो गअी थी। झटपट सामान अेक डिब्बेमें चढ़ाकर वह भी घुस गअे। अुसीमें बीस-पचीस लड़कियाँ भी थीं। अुस डिब्बेकी अधिकांश जगहपर लड़कियोंने कब्जा कर रखा था। गाड़ी चल पड़ी। लड़कियोंके स्थानमें कम-से-कम आठ-दस व्यक्तियोंके लिअे और जगह थी। शंकरैय्यरको लगा कि ये लड़कियाँ विद्यार्थिनियाँ होंगी जो गाँवकी सैर करके लौट रही हैं। अुन्होंने अेक लड़कीसे कहा—"देखो बेटी! मेरे पास भी दूसरे दर्जेका टिकट है। मैं आगेके स्टेशनमें किसी दूसरे डिब्बेमें जगह ढूँढ़ लूँगा। बैठनेके लिअे जरा जगह तो दो।"

आगेकी बेंचपर बैठी अेक शोख लड़की, अपनी कड़ी आवजमें बोल अुठी--"सुशील! कह दो जगह नहीं है।"

शंकरैय्यरका खून खौल अुठा। लेकिन अिन दुध-मुँही लड़कियोंसे कौन बोलेगा? अुन्होंने कहा—बहुत सख्तीसे काम ले रही हो! बस आगेका स्टेशन ही तो है।"

वही लड़की फिर बोल अुठी—"नहीं है, कहती तो हैं। नहीं ही है, हाँ! अेक चींटीको अगर अन्दर आने दो, तो बस अुसके पीछे चीटियोंका ताँता बँध जाअेगा।"

यह सुनकर सब लड़कियाँ ठहाका मारकर हँस पड़ीं। शंकरैय्यर हैरान हो गअे और अेक तरफ जाकर गुमसुम खड़े हो गअे। लड़कियाँ आपसमें काना-फूँसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करती रहीं। अुनका अँग्रेजी-मिश्रित वार्तालाप तीरके समान चुभ रहा था। फिर भी अिन लड़कियोंसे बोलना, अपने लिअे अपमानजनक सिद्ध होगा, यह सोचकर, शंकरैय्यरने अपनेको रोक रखा।

गाड़ी, अगले स्टेशनमें आ पहुँची। शंकरैय्यर, "किसी रेल्वे अधिकारीसे अपना हाल कहकर किसी दूसरे डिब्बेमें जगह देनेके लिअे पूछूँगा" यह सोचकर, खिड़कीकी ओर बढ़ ही रहे थे कि, अेक लड़की बीचमें बोल अुठी, "वाह! अगले स्टेशनमें अुतरनेवाले आदमीको देखो, तो! यहीं बैठनेके लिअे जगह ढूँढ़ रहे हैं!" दूसरी लड़कीने कहा—"आप यहाँसे चले जाअिअे, वरना मैं पुलिसको बुलाअूँगी।"

"हाँ! हाँ! मैं भी अुसी प्रयत्नमें लगा हूँ" कहकर, खिड़कीसे बाहर, अपना सिर निकालकर, शंकरजी पुकारने लगे "मिस्टर! ओ मिस्टर अजी, स्टेशनमास्टर!"

अेक रेल्वे अधिकारी, वहाँ आ पहुँचे। अुनसे अपना हाल सुनाकर, "दूसरे डिब्बेमें बदलनेके लिअे अभी समय है?" शंकरैय्यरने पूछा।

अधिकारीने कहा—"अब समय नहीं है। गाड़ीके रुकते ही आपको अुतर जाना था। अगले स्टेशनपर अुतर जाअिअे।"

शंकरैय्यर, अपना-सा मुँह लेकर रह गअे। गाड़ी चल पड़ी और अुसके साथ ही साथ सब लड़कियाँ खिलखिला पड़ीं। आखिर हँसनेकी अैसी क्या बात हुअी?

फिरसे अपनी जगहपर बैठने जा रहे थे कि, अेक पेटी अुनके सामने 'धम्म' से आकर गिरी। यह तो किसी लड़कीकी ही करतूत होगी! शंकरैय्यर, अपने अुठाअे हुअे पैरको सम्हाल न सके और लड़खड़ाते आगेकी ओर झुक गअे। अेक हाथसे अुन्होंने बेंचका सहारा लिया, लेकिन अेक छोटी लड़कीको, अुनका सिर लगा। लड़की "हाय! हाय!" चिल्लाने लगी और पुनः लड़कियोंका शोर-गुल आरम्भ हो गया।

शंकरैय्यर आग बबूला हो गअे और चाहते थे कि कमरमें बँधे चमड़ेके "बेल्ट" से हर अेकको दो-चार जमाअे। लड़कियाँ अपनी विजयसे फूली न समा रही थीं। शंकरैय्यरने जैसे-तैसे आगेके स्टेशनपर अपना स्थान बदल लिया।

यह सब सुनाकर, अुन्होंने पद्मनाभसे कहा—"आजकल स्कूलों और कालेजोंमें यही सिखाया जाता है। अिसीलिअे मैं कहता हूँ, पढ़ी-लिखी लड़की हमें नहीं चाहिअे।"

पद्मनाभने लड़कियोंका पक्ष लिया—"मामा! पढ़ी-लिखी लड़कियाँ, सभी अैसी नहीं होतीं। गाड़ीमें जाने कौन-कौन आअेगा, अिस डरसे अुन्होंने किसीको स्थान नहीं दिया होगा। लड़कियाँ भी छोटी हैं, क्या जानती हैं?"

"वाह! मैं अपनी आँखोंसे देखकर कहता हूँ! तुम्हें क्या मालूम अुनका स्वभाव?" शंकरैय्यर अपना गुस्सा पद्मनाभपर अुतारने लगे।

घर पहुँचकर बहिन गोमतीसे भी शंकरैय्यरने अपने विचारोंको प्रकट किया। गाड़ीमें घटी घटनाको भी नमक मिर्च लगाते हुअे अुन्होंने कहा—"देखो! मैं कहे देता हूँ। अगर अैसी लड़की तुम्हारी बहू बनकर आअेगी, तो तुम्हें खाने तकके लिअे नहीं पूछेगी। पतिसे 'चलो दोनों होटलमें खाकर सिनेमा चलेंगे' कह देगी और तुम मुँह ताकती रह जाओगी।"

गोमतीने कहा—"हो सकता है, अुन्हें गृहस्थाश्रमके लायक स्कूलमें नहीं पढ़ाया जाता। माँ-बाप, पारिवारिक अनुशासन लगाकर, ठीक मार्गपर नहीं लाते, तो बेचारी लड़कियोंका क्या दोष है? तुम लड़की देखने आअे ही हो। अपने कुटुम्बके लिअे ठीक जँचेगी, तभी न शादी करेंगे।"

दोपहरको शंकरैय्यर गोमती और पद्मनाभ, "लड़की" देखने घरसे निकल पड़े। वकील लक्ष्मणैय्यरने अुन लोगोंका स्वागत किया, सभीने नाश्ता किया। अिस बीचमें कहींसे अेक आवाज आअी जिसे सुनकर, शंकरैय्यर चौंक अुठे और दाँत पीसते हुअे, पद्मनाभसे बोले "बस, यही आवाज है! यही है!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्ष्मणैय्यरने घबराते हुअे पूछा, "क्या ? कोअी बात है ?" पद्मनाभने बहाना बनाया "मामाका विचार है कि लड़कियोंको अितनी हँसोड़ न होनी चाहिअे।"

लक्ष्मणैय्यरने अपनी पुत्रीको बुलाया, वसन्ता ! अिधर आओ बेटी !" वसन्ता सकुचाते हुअे आअी और शंकरैय्यरको अुसने नमस्कार किया। शंकरैय्यरको अुसका यह व्यवहार अच्छा नहीं लगा। अुसका अपने होनेवाले पति, पद्मनाभको आँख अुठाकर देखना भी, अुन्हें बुरा लगा।

लक्ष्मणैय्यरने कहा—"वसन्ता ! सुधाको भी बुला लो। दोनों मिलकर गाना गाओ। सुधा ! जरा हार्मोनियम अुठा लाओ।" सुधा हार्मोनियमके साथ आ बैठी। अुसे देखते ही शंकरैय्यरका मुँह विवर्ण होने लगा। अुनके अिस परिवर्तनको देखकर, पद्मनाभ भयभीत हो अुठा। शंकरैय्यरने आवेशमें आकर पूछा..."ये...यह...लड़की...?

"मेरी बेटी है। वसन्तासे छोटी है। क्यों ? क्या बात है।"

शंकरैय्यर—"कल रातकी गाड़ीसे आअी न ?"

"हाँ ! अुनके स्कूलके बीस लड़कियोंके साथ, यह भी गअी हुअी थी। आज सबेरे ही लौटकर आअी है।"

शंकरैय्यर—"अच्छा तो आप व्यर्थ ही अपनी पुत्रियोंको कष्ट दे रहे हैं। लड़की हमने देख ली है। पद्मनाभसे मिलकर, आपको फिर खबर भेज दूँगा।"

लक्ष्मणैय्यरके हाथ-पैर ढीले होने लगे—"क्यों ? क्या हुआ ? वसन्ताकी आवाज अच्छी है। अुसको शास्त्रीय संगीतका अच्छा ज्ञान है। अेक ही गीत...."

शंकरैय्यर, बीचमें ही बोल अुठे—"कोअी बात नहीं है। विवाह सम्पन्न हो जाने दीजिअे, चाहे जितना सुन लेंगे।" अुन्होंने पद्मनाभसे कहा—"माँको बुला लो। अब चलेंगे।"

लक्ष्मणैय्यर हाथ मलते ही रह गअे। अुन्होंने सुधाकी ओर सन्देहके साथ देखा, तो वह काँप अुठी—"रातको, अैसकने ही पेटीको ढकेला। मैंने नहीं, पिताजी !"

लक्ष्मणैय्यरने शंकरैय्यरसे निवेदन किया—"सुनिअे ! क्या बात है ? विस्तारपूर्वक कहिअे।"

शंकरैय्यरने "अपनी पुत्रीसे ही पूछ लीजिअेगा" कहते हुअे, बाहरकी राह ली। अन्दरसे गोमती भी आ गअी। किन्तु पद्मनाभके पैर नहीं अुठ रहे थे, फिर भी अुसे जबर्दस्ती अुनके पीछे जाना पड़ा।

दूसरे दिन सुबह लक्ष्मणैय्यर, पद्मनाभके पास पहुँच गअे। अुसने कहा, "मामाजीका स्वभाव ही निराला है।" अगर तुम चाहो तो अुस लड़कीसे ब्याह कर लो "कहकर, कल रातकी गाड़ीसे रवाना हो गअे। माँको भी लड़की अच्छी लगी। लेकिन मामाके विरुद्ध, माँ कुछ भी न कर सकेगी।"

लक्ष्मणैय्यरने कहा—"रातको गाड़ीमें जो-जो हुआ, सुधाने मुझे सब बताया। लड़कियाँ, हँसी-मजाकमें कुछ बोल गअीं, तो अुसे तुम्हारे मामा क्यों गलत अर्थमें ले रहे हैं ?"

पद्मनाभ "अिसमें अेक और बात है। माँका कहना है कि लड़कियोंको स्कूलमें चाहे कुछ भी पढ़ाया जाअे, माँ-बापकी दी हुअी शिक्षा ही अुनमें चमकनी चाहिअे। छोटी बहन अैसी है, तो बड़ीको देखनेकी क्या आवश्यकता है ?"

लक्ष्मणैय्यरने यह कहना चाहा "तुम्हारा यही मतलब है कि, लड़कियोंको अुचित रीतिसे बड़ा करना, मैं नहीं जानता ?" परन्तु अुन्होंने सिर्फ अितना ही कहा—"अिस छोटी-सी बातके कारण, हम दोनोंका सम्बन्ध टूटना, न्याय-सम्मत है ? आपही सोचकर देखिअे।" और चल दिअे।

चार दिनोंके बाद, शंकरय्यरको कार्यवश फिर वहीं आना पड़ा और वह अपनी बहिन गोमतीके यहाँ ठहरे। अपना काम समाप्त कर, शामके छह बजे घर लौटे। रातकी गाड़ीसे घर लौटना चाहा, किन्तु पद्मनाभने, अुन्हें जाने नहीं दिया।

दूसरे दिन सुबह आठ बजे, बाहर किसीने पुकारा, "बाबूजी !" पद्मनाभने बाहर देखा तो दो छोटी लड़कियाँ खड़ी हैं। अुसने पूछा—"कौन चाहिअे, आपको ?"

अेक लड़कीने कहा—"शंकरैय्यर, यहीं रहते हैं, न ? अुन्हें देखना चाहती हूँ।" पद्मनाभ दोनों लड़कियोंको अन्दर ले गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शंकरैय्यर, शेविंग करके, कानके पास जो साबुन लगा रह गया, अुसे पोंछ रहे थे। "मामा! आपसे मिलने आअी हैं।" पद्मनाभकी आवाज सुनकर शंकरैय्यरने मुड़कर पीछे देखा। अुनका मुख लाल हो गया और वह डाटने लगे--"कौन हो तुम?"

अेक लड़की सामने आकर बोली--"मेरा नाम अैसक् है। अुस दिन गाड़ीमें, मैंने ही पेटीको ढकेला था। गलती जब मेरी है, तब आप, सुधाकी बहिनके विवाहको, कैसे रोक सकते हैं?"

शंकरैय्यर गुस्सेमें आकर बोले, "देखा पद्मनाभ? ये मुझसे न्याय पूछने आअी है, न्याय! सुनो, अैसक्! अपने भानजेके लिअे कैसी लड़की चाहिअे, यह मैं जानता हूँ। तुम निकल जाओ यहाँसे। पद्मनाम, अिन्हें बाहर कर दो।"

अैसक् "देखती हूँ, मुझे कौन हाथ लगाता है? आपको जो मुझपर गुस्सा है, अुसके कारण आपने, अिनको (पद्मनाभकी ओर सूचित करके), सुधाकी बहिनसे, विवाह करनेसे रोका है। मैं और मेरी सहेलियोंने जो मजाक किया, अुसके लिअे आप हमें दण्ड दें। वसंताकी शादीको रोकना अन्याय है।" अैसक्ने अपनी सहेलीसे कहा--"जाकर, देखो तो! सभी आ गअी हैं, क्या?"

अुसी समय बाहर कोलाहल मच गया। अैसक्ने कहा--"सुधा! सबके साथ अन्दर आओ।"

अुस दिन गाड़ीमें जितनी लड़कियाँ थीं, सभी आज यहाँ अुपस्थित हो गअीं! गोमती "यह क्या शोर-गुल हो रहा है।" पूछती हुअी बाहर आ गअी। अैसक्ने कहा--"सुधा! कहो, तुम्हारे पिताजीने क्या कहा?"

आँखोंमें आँसू भरकर, सुधा कहने लगी--"अच्छे लोगोंका सम्बन्ध मिलने जा रहा था। कुल-कलंकिनी! तू ही अिस विस्फोटका कारण है।" रोज पिताजी मुझे सौ बार कोसते हैं। वसंता भी रोज रोती है-- मुझे अच्छा वर मिलने जा रहा था। तू मुझसे जलती है, अिसीलिअे मुझे नहीं मिला।"

अैसक्ने कहा--"सुना, आपने? हम छोटी लड़कियाँ, माँ-बापकी गैर हाजिरीमें कुछ हँसें-बोलें, चुलबुलावें, अिसलिअे सुधाकी बहनको रुलाना और सुधाको डाँट खिलाना, कहाँका न्याय है?"

शंकरैय्यर, "अिसके लिअे मैं क्या कर सकता हूँ?" अैसक्ने पूछा--"आप सत्याग्रह जानते हैं न? बस, हम सब अुसीके लिअे तैयार होकर आअी हैं। आप वसन्ता और अिनकी शादीकी तैयारियाँ कीजिअे, नहीं तो...कहो! कहाँ और किसकी क्या "ड्यूटी" है?" अपनी सहेलियोंकी ओर मुड़कर पूछने लगी।

सुधा--"मैं यहाँ दिन-रात रोती रहूँगी।"

दूसरी लड़की--"मैं निर्जल-निराहार रहूँगी।"

चौथी--"मैं और यह दोनों बाहर सत्याग्रह करेंगी।"

चौथी--"अगर पुलिस अुनको पकड़ ले जाअेगी, तो हम दोनों तैयार हैं।"

अेक और लड़कीने कहा--"हम दोनों घर-घर जाकर, सबको तमाशा देखने बुला लाअेंगी।" दूसरी लड़कीने शुरू किया--"हम दोनों.....

शंकरैय्यर अब सहन न कर सके--"बन्द करो अपना बकवास! चलो, बाहर निकलो!"

अैसक्--"अच्छा! लड़कीके बलपर ही बन्दर नाचता है! सुधा, शुरू करो! सब अपना-अपना काम सम्हालो।"

शंकरैय्यर, यह सब देखकर, भीगी बिल्ली बन गअे और अपने भयको भूलनेके लिअे जोरसे हँस पड़े और बोले--"जरा ठहर जाओ! ठहरो जरा!"

लड़कियाँ फिर मिलकर खड़ी हो गअीं। शंकरैय्यरने कहा--"लड़कियोंके स्वाभाविक अस्त्र तो है ही। अुसके अूपर आपने यह नया रास्ता ढूँढ़ निकाला! सत्याग्रहके सूत्रधार महात्मा गांधी भी, अितने अच्छे तरीकेसे सत्याग्रहका अुपयोग न कर पाअे होंगे। सुधा! तुम जाकर अपने पिताजीको यहाँ भेज दो। सब जाओ, विजय तुम्हारी है!"

तब अुन लड़कियोंके हँसने और शोर मचानेसे, शंकरैय्यर बिल्कुल नाराज नहीं हुअे किन्तु अुन्होंने भी अुनके साथ स्वरमें स्वर मिलाया।

जाते हुअे सुधाने पद्मनाभसे कहा--"जीजाजी! शंकरैय्यर यहाँ आअे हुअे हैं, यह बताकर आपने बहुत अच्छा किया। अिसके लिअे बहुत बहुत धन्यवाद!"

(अनुवादिका--कु. लक्ष्मी कृष्णन्)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री रामवृक्ष बेनीपुरीके साथ तीन दिन

—श्री विजयशंकर त्रिवेदी

हिन्दी-दिवस (१४ सितम्बर) के अुपलक्षमें श्री बेनीपुरीजी नागपुर आअे थे। अैसे सुअवसर छोड़ना कदापि अुचित नहीं था। मेरी अिन्टरव्यूकी अिच्छा जाग्रत हो गअी। मैं अिस कार्यके लिअे सबसे पहले श्री हृषीकेशजी शर्मासे मिला। अुनके सत्प्रयत्नोंके फल-स्वरूप बेनीपुरीजीने अिन्टरव्यूके लिअे अपनी स्वीकृति दे दी। मध्याह्नके अुपरान्त लगभग तीन बजे अुन्होंने मुझे मिलनेका समय दिया।

लगभग तीन बजे मैं बेनीपुरीजीसे मिलने अुनके डेरेपर पहुँचा। कमरेका द्वार बंद था। अतः स-संकोच खटखटाया। अेक सज्जन बाहर आअे, मेरे आनेका कारण पूछा। मैंने अुन्हें सब समझाया, वे अन्दर गअे। बेनीपुरीजीने मुझे बुला भेजा। बेनीपुरीजी अुस समय अर्धनिद्रित अवस्थामें थे। पहुँचते ही स्वागतके स्वरमें कहा—"आओ प्यारे, आ गअे समयसे, सोनकी कोशिश कर रहा था, चलो तुम आ गअे तो अपना काम आरम्भ कर दिया जाअे।" अुन्होंने पूछा, "कितने प्रश्न हैं?" मैंने कहा, 'थोड़ेहीसे हैं।' अुन्होंने जरा हँसीके लहजेमें कहा, "तो पूछ डालो।" अुनकी बातचीतमें 'प्यारे' शब्द विशेष अुल्लेखनीय रहा। सम्भव है अुसके अुपयोगका वे कदापि मोह संवरण नहीं कर सकते। नीली तहमद और खादीकी बनियान, लगता था विश्रामकी पोशाक है बेनीपुरीजीकी। तकियाको अूँचा करते हुअे अुन्होंने अुसी लहजेमें कहा—"अरे हाँ, फिर काहेकी देर है, प्यारे भाअी।" मैंने प्रारम्भ किया, 'अपने जीवनकी अुन घटनाओं-का अुल्लेख कीजिअे जिनके कारण आप साहित्य-सृजनकी ओर अुन्मुख हुअे?' लेटे-ही-लेटे अुन्होंने आरम्भ किया—"अैसी कोअी घटना नहीं रही जो लिखनेकी ओर प्रवृत्त करती। जैसे कोअी बच्चा बीमारी लेकर नहीं पैदा होता, अुसी तरह यह लिखनेकी प्रवृत्ति शायद अेक बीमारी हो। बचपनमें तुलसीकृत रामायण पढ़नेका मौका मिला और सोचता था कि क्या अैसे ग्रंथको मानव लिख सकता है? मुझे अुस समय हर लेखक कुछ देवता ही-सा लगता था। लेकिन मिडल स्कूलमें पढ़ने गया, देखा हमारे अेक अध्यापक कविता कर लेते हैं, तब लगा जैसे यह मानवी काम है। और अेक दिन कुछ रचकर अुन्हें दिखलाया। अुन्होंने मेरी पीठ ठोकी, फिर तो कुछ-न-कुछ लिखता ही रहा।"

अितना कहनेके अुपरान्त दूसरी तकियाको अपनी पीठके पीछे लगाते हुअे प्रश्न करनेका संकेत किया। मैंने तत्काल ही दूसरा प्रश्न सामने रखा, 'विभिन्न राष्ट्रीय आन्दोलनोंमें भाग लेते हुअे भी आपको अिन बहुत-सी कृतियोंके सृजनका समय कैसे मिल गया?' चादरको घुटनोंपर डालते हुअे अुन्होंने प्रारम्भ किया, "पहले ही कह दिया कि यह बीमारी है जो लग जाती है। क्या जेलमें भी बीमारियाँ छोड़ती हैं! हर राष्ट्रीय आन्दोलन आदमीके मानस और मस्तिष्कको गहरे झकझोरता है। अिसलिअे अैसे अवसरोंपर प्रायः देखा गया है जिन्हें न बोलना आता था वे भी बोलने लगे। फिर जो बोलनेके लिअे पैदा हुआ हो वह अैसे अवसरों-पर चुप कैसे बैठ सकता है। नअे-नअे आन्दोलन नअी-नअी भावनाअें, नअी अुमंगोंसे अुन्हें शब्दका रूप देते जाना। और यदि जेल गअे तो लो, मुफ्तका अितना समय मिल जाता कि अुसे काटनेके लिअे कुछ-न-कुछ लिखते ही रहना पड़ता था।"

मैं बिना रुकें आगेका प्रश्न रख देना चाहता था अतः मैंने कहा, 'आपकी प्रगतिमें आनेवाले कटु और मधुर अनुभवोंका अुल्लेख कीजिअे।' अिधर-अुधर पड़े-ही-पड़े, हाथ चलाते रहनेके अुपरान्त अुठे और पेटीकी तरफ झुककर कैप्सटनके पैकिटको अुठा लिया। सिगरेटका कश छोड़ते हुअे अुन्होंने कहना प्रारम्भ किया—"मेरे जीवनमें कटु-ही-कटु अनुभव आअे हैं। लेकिन हर कटुको मैंने मधुर बनानेकी कोशिश की है। देखिअे न, चार वर्षकी अुम्रमें माँका बिछुड़ जाना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवें-दसवेंतक जाते-जाते सरपरसे पिताजीके वरदहस्तका हट जाना। तब पढ़ाअीका क्रम चलता ही है। या शुरू ही हो तब, गाँधीजीके आह्वानपर अचानक अुसे सदाके लिअे तोड़ देना। कअी मृत्युअें बर्दाश्त करना, क्या बताअूँ, आगे कहने लगे, अिस तरह मेरे शरीरपर नटखटपनके अनेक चिह्न मेरे हृदयमें, कटु अनुभवोंके भी कितने दाग होंगे। यदि आपको हनुमानकी तरह हृदय चीरकर दिखला सकता तो अुन्हें आप गिन नहीं पाते, लेकिन अिन सबके बावजूद जो मेरे सहवासमें आअे हैं अुन्हें सदा मेरा मुक्त अट्टहास ही याद रहता है।"

धुँअेंके बादलोंको हाथसे अुड़ाते हुअे आगेके प्रश्नके लिअे संकेत किया। बादल तितर-बितर हो चले थे किन्तु धूम्र रेखाओंमें धूमिलता अवशेष थी, मैंने पूछा– 'आपने साहित्यके विभिन्न अंगोंपर कलम अुठाअी है और अुसमें आपको आशातीत सफलता प्राप्त हुअी है। अतअेव अिन विविध कृतियोंको प्रस्तुत करनेमें आपका क्या लक्ष्य रहा है?' "गेहूँ और गुलाब, सीताकी माँ, कैदीकी पत्नी, माटीकी मूर्ति, अम्बपाली, पैरोंमें पंख बाँधकर!" सिगरेटको ओंठोसे हटाते हुअे अुन्होंने प्रारम्भ किया— "मेरा ख्याल है—मनुष्यकी तरह पुस्तकोंकी भी जीवनियाँ होती हैं। अेक बार अिच्छा हुअी थी। अपनी ग्रंथावलीके हर खंडके आरम्भमें मैं हर पुस्तककी जीवनी लिखूँ। सच कहता हूँ। अैसी जीवनियाँ मानव जीवनियोंसे कम दिलचस्प न होतीं, लेकिन अैसा नहीं कर पाया; अिन्हीं दो पुस्तकोंको लीजिअे अम्बपाली और माटीकी मूर्ति। जब अेक दिन जेलमें था। असाढ़ आया, बादल अुमड़े। मैंने कुछ फूल लगा रखे थे। अुन फूलोंके बीचमें अेक चबूतरा था। चबूतरेके अूपर विशाल पेड़की छाया थी। जिस जेलमें था, वहाँ गुलाब बहुत खिलते हैं। बे-मौसम खिलते हैं। मैं अुन गुलाबों और बेलों या मिटनेकी भाषामें कहिअे, मोतियासे घिरा था कि अचानक अिच्छा हुअी कुछ लिखूँ और यह कम्बख्त, अम्बपाली मेरे सामने नाचती आ गअी। और अुसने पद-पदपर अितना परेशान किया, कितना हँसाया, कितना रुलाया, मैं ही जानता हूँ।" सिगरेट खत्म हो चुकी थी, पानकी डिब्बी खुली, पान मुँहके अन्दर करते हुअे जरा रुककर "अम्बपाली क्या है—बेनीपुरीजीका नारीरूप है। और यह "माटीकी मूर्ति" जेलमें यों ही अचानक कुछ सोच रहा था कि कुछ नअी चीज लिखूँ, क्या लिखूँ। हमारे सहकर्मियोंने सब कुछ छूछाकर छोड़ दिया है। तो अचानक मनमें ख्याल आया, ये जो मेरे गाँवके लोग हैं न, वे तो अभी भी अछूत हैं। अिन्हें तो किन्हीं हाथोंने स्पर्श नहीं किया। अतः अिन्हें ही क्यों न ले लूँ। और तमाशा देखिअे 'बुधिया' मेरे सामने आअी, गाँवकी वह कभी फूहड़ लड़की, फिर अल्हड़ अलमस्त युवती और अन्तमें पति-अनुरक्ता, सन्तानलग्ना पत्नी। अुसके स्केचके अन्तमें मैंने लिखा है—हाँ बरसात बीत गअी, बाढ़ खतम हो गअी है। अब नदी अपनी धारामें है। शान्त गतिसे बहती है। न बाढ़ है, न हाहाकार। कीचड़ और बरसातका नामनिशान नहीं, शान्त-शान्त स्निग्ध गंगा, मेरे सामने महान मातृत्व है। बन्दनीय है, अर्चनीय है। मुझे याद है यह स्केच लिखकर मैंने जयप्रकाशजीको दिखाया, जो जेलमें मेरे साथ थे। अुन्होंने कहा यह कुछ अधिक कर दिया। लेकिन मैं क्या करूँ। क्या मैं अुसके अिस अन्तिम रूपको बिना नमस्कार किअे रह सकता था। यह तो दो किताबोंकी अूपरी बात हुअी। अम्बपालीके अेक-अेक दृश्य और माटीकी मूर्तिके अेक-अेक स्केचपर बहुत कुछ कहा जा सकता है। आपने यह प्रश्न पूछकर अच्छा किया। आपने मेरी अुस लालचको बढ़ा दिया है कि अपनी सभी रचनाओंकी कहानियाँ संक्षिप्तमें ही सही लिख देना चाहिअे। शायद मेरी ये मानसिक सन्तानें आज आपके मुँहसे बोल गअी हैं कि हमें क्यों भूलते हो।"

मैंने अनुभव किया, बेनीपुरीजी मूडमें आ रहे हैं। दूसरी गिलोरीको मुँहमें रख मेरी ओर देखने लगे। मैं आशय समझ गया। 'आपमें काव्योन्मुखी प्रतिभाकी अधिकता होते हुअे भी मेरा अभिप्राय आपके सरस गद्य-से है। आपने क्या कारण है अुस ओर अधिक रुचि नहीं दिखाअी है।' मैंने कहा। वे पूर्ववत् बोल रहे थे, "अिस सम्बन्धमें अेक बार और भी मुझसे प्रश्न किअे गअे हैं, मैंने अुन्हें यही अुत्तर दिया है, सच है मैंने कवितासे ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखना प्रारम्भ किया था। लेकिन पीछे अितनी बातें सामने आने लगीं और अुन्हें अिस आतुरतासे कहनेकी अुत्सुकता बढ़ी कि अपनेको मात्राओं और वर्णोंकी गणनामें, तुक और तालके बन्धनोंमें न रख सका और सच कहिअे, तो क्या कविता हमेशा छंदोंमें ही कही जा सकती है। तुलसीदासजीने रामचरित मानसके अपनी वन्दनामें "छंद सामपि" शब्दका प्रयोग किया है। यहाँ अपिका भी क्या अर्थ है यानी छंद भी है। अिस 'अपि' से ही छंदकी अनिवार्यता क्या कुछ नष्ट हुअी-सी नहीं दिखती। कविताको आप छंदमें कह सकते हैं; लेकिन वह गद्यमें भी कही जा सकती है। लेकिन वह कर्म बहुत कठिन है। अिसलिअे कहा गया है– 'गद्यं कवीनाम् निकशं वंदंति।' कहा जाता है कि गद्य कविताका सबसे बड़ा प्रयोक्ता बाणभट्ट हुआ और मैं बाणभट्टके ही प्रदेशका हूँ। यह न भूलिअे। अपने लिअे कादम्बरी ही अिस युगमें 'माटीकी मूर्ति' का रूप धारण करके आअी है। लेकिन यह दम्भकी वाणी नहीं, यों ही विनोदमें कह दिया है।"

पानकी पीक थूकने अुठे, अुनके बैठते ही मैंने कहा—"कला, कलाके लिअे है।" अिस सिद्धान्तसे आप कहाँ तक सहमत हैं। आपके रेखाचित्रोंमें स्वानुभूति किस सीमा तक है?" हँसते हुअे अुन्होंने कहना प्रारम्भ किया– "कला, कलाके लिअे अिसका जवाब सुप्रसिद्ध गोगिनके शब्दोंमें दूँगा। अुसने अपनी संक्षिप्त किन्तु नग्न आत्मकथामें कहा है—कला कलाके लिअे क्यों नहीं, कला आनन्दके लिअे क्यों नहीं, कला कल्याणके लिअे क्यों नहीं, अरे सबसे बड़ी बात यह है कि कला यथार्थमें कला हो। किसीने अेक मर्तबा बर्नार्डशासे कहा–अपनी आत्मकथा लिख डालो। अुसने कहा–अभी तक मेरी आत्मकथा नहीं पढ़ सके हो, वे सज्जन आश्चर्यचकित हो अुसका मुँह देखने लगे। बर्नार्डशाने मुँह बनाकर कहा–मेरा सारा पढ़ा-लिखा व्यर्थ ही गया, मेरी ये जो रचनाओंपर रचनाअें हैं, क्या अुनमें मेरी आत्मकथासे कोअी पृथक् चीज भी है। मैं कहता हूँ, मेरा हर रेखाचित्र मेरी अनुभूतिसे ओत-प्रोत है। अिसीलिअे वे मुझे प्रिय हैं, और शायद अिसीलिअे वे आप लोगोंको भी प्रिय लगते हैं। स्वानुभूतिसे परे काव्यकृति या कलाकृतिको काव्य-कृतियाँ या कला-कृति ही नहीं मानिअे।"

तदुपरान्त मैंने कहा—'साहित्यमें जो विविध वाद प्रचलित हैं अुनके सम्बन्धमें आपके क्या विचार हैं। 'नकेनवाद' का क्या भविष्य है।' सिगरेट सुलगाते हुअे वे कहने लगे—"मैं किसी वादका कोअी भविष्य नहीं मानता। हमारे साहित्यिक-बन्धु राजनीतिक शब्दावलीमें बोलना सीख रहे हैं। राजनीतिमें तरह-तरहके वाद हैं, अिसलिअे साहित्यपर भी तरह-तरहके वादोंकी मुहर लगाना चाहते हैं, किन्तु ये चपड़ेकी मुहर टूटकर ही रहेगी। राजनीति विवाद प्रधान है, अिसलिअे वहाँ वाद चल सकता है। जहाँ निर्विवाद सत्य है मैं अुसीको साहित्य मानता हूँ। और मैं जानता हूँ। और अेक बात भाअी, जो लोग साहित्यके वाद चला रहे हैं, अुन्हें वादोंसे पाला नहीं पड़ा है। मैं तो राजनीतिमें भी चुभकियाँ लगा चुका हूँ। और मैं जानता हूँ कि ये वाद कहाँतक आदमीको ले जाते हैं। मैं अपने नअे साथियों या नअी पीढ़ीके साथियोंसे कहूँगा, भाअियो वादोंसे सावधान, अिन वादियोंसे सावधान, (कुछ रुककर) साहित्यिक वाद कितने व्यर्थ और वाद कितने व्यर्थ और अुपहासास्पद होते हैं। अिसका सबसे बड़ा प्रमाण है यह नकेनवाद। पटनामें तीन साहित्यिक दोस्त हैं। वे लोग कभी-कभी अूटपटांग भी लिख लिया करते हैं। अेक दिन किसीने अिनका मजाक अुड़ानेके लिअे तीनोंके नामोंमेंसे पहलेके तीन अक्षर लेकर अिन लोगोंकी वैसी रचनाओंको नकेनवाद नाम दे दिया। देखता हूँ? पहलेका यह मजाक नागपुरमें गम्भीर रूप धारण कर चुका है। अिसीसे समझ जाअिअे कि अिन वादोंमें क्या धरा है?"

अिसी बीच रामेश्वरजी काजू, केले, नासपातियाँ सामने रख गअे। मैं मौन ही बना रहा। अिसी बीच बेनीपुरीजी बोले, "अरे भाअी देरी किस बातकी है, शुरू करो, कमबख्त संकोच भी जहाँ देखो वहीं खड़ा हो जाता है, और स्वयं ही अुन्होंने केले छीलना आरम्भ कर दिया। अल्पाहारके अुपरान्त चाय आअी। अिससे निवृत्त हो, बात-चीत फिर आगे बढ़ी। 'प्रगतिशीलताके नामपर जैनेन्द्र, अज्ञेय, यशपाल आदि जो कुत्सित यौन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुण्ठाओंको अपनी कृतियोंमें प्रकाशित कर रहे हैं, वह समाजके लिअे, कहाँतक स्वास्थ्यप्रद है', मैंने कहा। पानकी डिबिया खोलते हुअे, अुन्होंने प्रारम्भ किया, "मैं अपने अिन तीन-चार बंधुओंके बारेमें कुछ नहीं कहता, किन्तु अितना तो जानता ही हूँ कि आदमी किस अतृप्त आकांक्षासे प्रेरित होकर अश्लीलताकी ओर जाता है। मैं बाल-बच्चेवाला आदमी हूँ। और हमेशा पाया है कि मेरे बालबच्चे मेरे साहित्यके प्रथम पाठक होते हैं, तो भला मैं अपने साहित्य या किसीके भी साहित्यमें भला अिस तरहकी बातें रखा जाना कहाँतक पसन्द करूँगा।" पानका बीड़ा मुँहमें डालते हुअे, "जो लोग साहित्यमें अिस नग्न वादका अथवा नग्न वासनाओंका चित्रण आवश्यक समझते हैं, काश, अेक दिन कपड़े-लत्ते धरकर अँधेरी रातमें सड़कमें निकलें तो अुन्हें पता चले कि लोग अुनके बारेमें क्या सोचते हैं।"

लगभग साढ़े पाँच शामके हो चुके थे, कुछ आगन्तुक बेनीपुरीजीकी प्रतीक्षामें बहुत देरसे बैठे थे। अतः बेनीपुरीजीने कहा—"हाँ प्यारे, तुम्हें अेक बैठक और देनी पड़ेगी। प्यारे भाअी, लोग बहुत देरसे अिन्तजार कर रहे हैं।" दूसरे दिन यथासमय पहुँचा। दो-तीन सज्जन जमे ही हुअे थे। अुनसे छूटते हुअे वे मेरी ओर मुड़े और कहा—"आ गअे भाअी, अच्छा पूछो, नहीं तो फिर कोअी आ जाअेगा।" मैंने कहा—'आपकी सम्पादन सम्बन्धी कौन-कौनसी मान्यताअें हैं?' सिगरेट जलाते हुअे अुन्होंने कहना प्रारम्भ किया—"अपने पत्रकार जीवनका प्रारम्भ मैंने साप्ताहिक पत्रसे किया, फिर मासिक-पत्रोंपर पहुँचा, बीचमें अेक दैनिक-पत्रका भी सम्पादन किया। दैनिक, साप्ताहिक, मासिक अिन तीनों प्रकारकी पत्रकारिताके लिअे कोअी अेक मान्यता नहीं हो सकती! पत्रकारोंको अपने पाठकोंकी ओर ध्यान देना पड़ता है। जैसे पाठक हों वैसी सामग्रियाँ पहुँचाते जाअिअे तो धीरे-धीरे वे आपके स्थाअी पाठक बन जाअेंगे।

"जो सामग्री अेक दैनिकके लिअे परम अुपयोगी है। या हो सकती है, वही अेक दिन अेक मासिकके लिअे रद्दीकी टोकरीमें स्थान पा सकती है। (कश खींचते हुअे) अेक सनसनीपूर्ण समाचार दैनिकके लिअे परम आवश्यक हो सकता है किन्तु साप्ताहिकमें तो अुसका कुछ गहरा ब्यौरा चाहिअे। और अुसका विश्लेषण ही मासिकमें स्थान पा सकता है। यों मैं निष्पक्षता नामकी कोअी चीज नहीं मानता। किन्तु सम्पादककी कुर्सीपर बैठकर आदमी अपनेको थोड़ा निष्पक्ष नहीं कर ले तो अपने गम्भीर पाठकोंसे हाथ ही धो बैठेगा। निर्भीकता अुसका प्रधान गुण होना चाहिअे। जो सम्पादक पाठकोंकी रुचिपर ही नाचता रहेगा वह अपने अिस पेशेको अधिक दिन तक नहीं चला सकेगा। अुसमें हिम्मत होनी चाहिअे कि अैसी बात कह जाअे जो अुसके पाठकोंको अरुचिकर भी लगे; किन्तु अन्तमें अुनके हितकी सिद्ध हो। अिससे कुछ सम्पादक कुछ खोता नहीं है पाता ही है।"

अुत्तर समाप्त होते ही तत्काल मैंने कहा, 'आज तक आपकी रुचिको कौन-कौनसे पाश्चात्य और स्वदेशी कवि और लेखक अधिक आनन्द देते रहे हैं?' कुछ सोचनेके पहले ही खिलखिलाकर हँसने लगे और फिर कहने लगे—"अच्छी बात हुअी कि आपने आनन्दकी बात कही। क्योंकि साहित्य मुख्यतः आनन्दकी ही वस्तु है। बचपनहीसे मैं तुलसीकृत रामायणका प्रेमी पाठक रहा हूँ। अगर मेरे बसकी बात हो तो मैं अैसी व्यवस्था कर दूँ कि जिन्होंने राम-चरित्र-मानस अच्छी तरह नहीं पढ़ा है अुन्हें साहित्यिक कहा ही न जाअे। रवि बाबू और अिकबाल भी मेरे प्यारे कवि रहे हैं और आपको सुनकर यह आश्चर्य होगा कि रवि बाबूकी सुकुमार कलाकृतियोंकी अपेक्षा अिकबालकी पुरुषोचित वज्र-वाणीने मुझे अधिक प्रेरित किया है। शायद लोगोंको मालूम नहीं कि संसारके महान कवियोंमें सिर्फ अिकबाल ही अैसे हैं जिन्होंने नारीपर कविता ही नहीं लिखी, और पुरुषको परमेश्वरसे भी अूपर अुन्होंने हर जगह माना। अुन्होंने अेक जगह बड़े मजेमें कहा है "हिन्दके शायरों, सूरतगरों, अफसाना-नवीस, अिन बेचारोंके आसाब पे औरत सवार," और अुनका यह शेर (पुरुषोचित लहजेके साथ) "खुदाको कर बलन्द अितना, कि हर तकदीरके पहले खुदा बन्देसे पूछे, बता तेरी रजा क्या है।" पाश्चात्य लेखकोंमें बर्नार्डशाने मुझे कुछ अजब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ढंगसे पकड़ रखा है और दूसरे वह देखिअे, (पेटीपर रखी किताबकी ओर संकेत करते हुअे) दीनपाल, साद्रे मेरे सिरपर सवार हैं यह अुनके 'नौसिया' यानी 'मतली' कैसा नाम है। और जब पढ़ना शुरू कीजिअे तो बिना किसी घटनाके भी क्या आप अिसकी अेक पंक्ति भी छोड़ सकते हैं। काश, हमारे अुपन्यासकार यदि नकल ही करना है तो अैसी चीजोंकी नकल कर पाते। यों बहुतसे नाम हैं कहाँतक गिनाअूँ।"

पानी पीनेके लिअे अुठे और बैठते हुअे दूसरी सिगरेट जलाअी, और धुँअेके बादलोंको बनाने लगे। अिसी बीच मैंने कहा—'आपको किस कृतिके लिखनेके अुपरान्त अधिक सन्तोष हुआ?' कश छोड़ते हुअे अुन्होंने आरम्भ किया—"सन्तोषका मानी है क्रियाकी समाप्ति, अेक जगह मैंने कहा है, हृदयका कमल जिह्वापर आते-आते कनेर बन जाता है और कागजपर अुतरते-अुतरते न जाने वह क्या-से-क्या हो जाता है। जो कहना चाहता रहा वह भी न कह पाया और अभी तो अितना ही कहना रह गया है। सन्तोष तो मृत्यु है और असंतोष ही जीवन है। भगवानसे मनाअिअे कि कभी कोअी अैसी कृति न दे सकूँ। जिसपर सन्तुष्ट होकर अुसीको छातीसे लगाअे चल बसनेकी तैयारी करूँ। अितना ही कहूँगा कि जिन कृतियोंसे मुझे यश प्राप्त हुआ है अुनके अतिरिक्त भी बहुत-सी छोटी-छोटी कृतियाँ हैं जिन्हें लिखकर मैंने बहुत ही आनन्द प्राप्त किया है। यद्यपि अुनकी ओर लोगोंने तनिक भी ध्यान नहीं दिया।"

अभी दो-तीन प्रश्न ही पूछ पाया था कि अुन्हें ले जानेके लिअे मोटर आ गअी। अगली बैठक भविष्यके गर्भमें खो गअी। मैं भी निराश-सा हो गया था। बेनीपुरीजी कार्यक्रमोंकी व्यस्तताके कारण मुझे समय नहीं दे सके। रातको ९ बजे बुलाया। लगभग पौने बारह तक तपस्या की। अिसी बीच अंचलजी आ गअे। वे भी बेनीपुरीजीकी प्रतीक्षा कर रहे थे। हताश हो हम दोनों रिक्शेपर बैठ घरकी ओर चल पड़े। अैसा लगा, अिन्टरव्यू यहीं खतम होना चाहता है। क्योंकि आगेकी तनिक भी आशा नहीं थी।

तीसरे दिन बेनीपुरीजी वर्धासे लौटे, मुझे याद किया। मुझे श्री हृषीकेश शर्माजीने बुलावा भेजा। अिन्टरव्यू अपने अन्तिम दौरेमें रात्रिके ९बजे पुनः प्रारम्भ हुआ। 'हिन्दीके भविष्यके सम्बन्धमें आपके क्या विचार हैं?' मैंने कहा। सिगरेटका पाकिट खोजते हुअे, कपड़े अिधर अुधर किअे। तदुपरान्त अुन्होंने कहना प्रारम्भ किया—"मुझे दुख अिस बातका है कि हिन्दीभाषी अभी तक यह समझ नहीं सके हैं कि अुनकी भाषा किस गौरवमय स्थानपर आसीन हो चुकी है। ३६ करोड़ लोगोंकी राज्य-भाषा जो सर्व-सम्मत रूपसे स्वीकार की जा चुकी है और जिसे राष्ट्रभाषाकी मान्यता सारे देशने दे रखी है वह भाषा अितनी सौभाग्यशालिनी है, काश हम अुसका अनुभव कर पाते। अब हिन्दीको भारतकी अन्य भगिनी भाषाओंसे प्रतिस्पर्धा नहीं रही। अब तो अुसे अिस तरह सुसम्पन्न और समलंकृत करना है कि वह संसारकी किसी भाषासे समानताके स्तरपर मुकाबला कर सके। हमारा प्राचीन साहित्य गौरवमय है कि मैं यह नहीं मानता कि हमारा आजका साहित्य हेय है। साहित्यके प्रत्येक अंगने गत ५० वर्षोंसे हमें काफी ग्रन्थ-रत्न दिअे हैं। हमने नअे-नअे प्रयोग किअे हैं अुन प्रयोगोंमें हम सफल हुअे हैं। हमारा आधुनिक साहित्य किसी भी भारतीय भाषासे हीन है अैसा मैं नहीं मानता, किन्तु अुसे भारत अैसे महान् देशकी राष्ट्रभाषाके अनुरूप बनानेके लिअे हमें अभी कुछ करना रह गया है। दुर्भाग्यकी बात है कि हमारे साहित्यकार बन्धु आलोचना और टीकाओंमें अिस तरह अुलझ गअे हैं कि अुनका ध्यान सृजनात्मक साहित्यकी ओर बहुत कम जा रहा है। यह प्रकृति वांछनीय नहीं, लेकिन मैं समझता हूँ, यह प्रकृति अधिक दिन तक नहीं टिकेगी। हम सृजनात्मक साहित्यकी ओर अधिक आकृष्ट होंगे। भारतकी अन्य भाषाओंके लेखकोंका भी ध्यान हिन्दीमें लिखनेको प्रवृत्त होगा और अिस प्रकार कन्याकुमारीसे काश्मीर तक और द्वारका-पुरीसे मणिपुर तकको प्रतिभाका श्रेष्ठ अंश अुसे मिल पाअेगा, और हिन्दी विश्वकी किसी भी भाषाके समकक्ष सम्मानके साथ खड़ी हो सकेगी।"

रात्रि बढ़ती जा रही थी। विलम्ब अनुचित लग रहा था, अतः मैंने कहा—'आप कब और कैसे लिखते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं ?' चश्मेको अुतारते हुअे अुन्होंने कहा—"प्रारम्भ किया—अिस सम्बन्धमें बहुत ही पहले मैं कैसे लिखता हूँ, रेडियोमें अेक वार्ता दे चुका हूँ। जो कअी पत्र-पत्रिकाओं तथा साहित्य संग्रहोंमें प्रकाशित भी हो चुकी है। अतः अुसे दोहरानेकी आवश्यकता नहीं।"

अिसी बीच दुग्धपानके अुपरांत सिगरेट भी जली और पानकी डिबिया अेक साथ ही प्रयोगमें लाअी गअी। कश छोड़ते हुअे अुन्होंने कहा—"अरे भाअी—पूछो क्यों चुप हो।" 'भविष्यमें आप किन कृतियोंको राष्ट्रभारतीके चरणोंमें अर्पित करने जा रहे हैं ?' मैंने कहा। प्रश्न समाप्त होते ही मैंने देखा बेनीपुरीजी बोल रहे थे, "अिसपर भी मैंने हाल ही अेक वार्ता रेडियोपर दी है जो अुत्तर प्रदेश सरकार द्वारा संचालित त्रिपथगामें हाल ही प्रकाशित हुअी है। संक्षेपमें मैं शाश्वत भारत नामसे २५ खण्डोंमें अेक ग्रन्थ संकलित करना चाहता हूँ। जिसमें काकेशियासे अिन्डोनेशिया और मंगोलियासे फीजीट्रिनीटाड तक फैली हुअी भारतीय संस्कृतिके अवशेषोंका और आधुनिक रूपोंका समावेश होगा। १९०५ से १९४७ तकके राष्ट्रीय आन्दोलनोंपर छह अुपन्यास लिख देना चाहता हूँ। यों तो बाल साहित्य और नाटक और शब्दचित्र मेरे प्रिय विषय रहे हैं और बीच-बीचमें कुछ अिनकी भेंट भी माँ भारतीके चरणोंपर चढ़ाता ही रहूँगा।"

रात्रिके ग्यारह बज चुके थे। मैंने अपना अन्तिम प्रश्न प्रस्तुत किया। 'नअे साहित्यकारोंके प्रति आपका क्या सन्देश है ?' तनिक मौन रहते हुअे रुककर फिर कहना प्रारम्भ किया। "नअे साहित्यकार अपने अुत्तरदायित्वको समझें। अुन्हें यही नहीं देखना है कि अुनके पीछेकी पीढ़ियोंने क्या लिखा और कितना किया। हम सबसे जो पार लग सका, किया; हम अेक अैसे युगमें पैदा हुअे थे, जिसमें हमारे सामने पग-पगपर काँटे बिछे थे। अब तो रास्ता साफ है। जरूरत है अैसे मजबूत पैरोंकी, जो तेजीसे बढ़ते जाअें। हम अपनेको राष्ट्रीय साहित्य तक ही परिमित रख सके। नअे साहित्यकारोंको अब विश्व साहित्य और अपनेको बढ़ाना है। नवयुवकोंपर मेरा असीम विश्वास है। और मुझे आशा है कि वे कुछ अैसा कर दिखाअेंगे कि हमारी आत्माअें गौरवके साथ अुनकी ओर देख सकेंगी, और आशीर्वादोंकी वर्षा कर सकेंगी।"

हाथकी सिगरेटको पुनः जलाते हुअे अुन्होंने कहा, "अब तो 'न' ही है, भाअी। तुम्हारे अिन्टरव्यूकी मुझे बड़ी चिन्ता थी, कहीं वह अधूरा न रह जाअे।" मैंने कहा—'मुझे भी यही सन्देह था, किन्तु अुसकी पूर्णता देख मुझे प्रसन्नता हो रही है।' अिसी बीच वर्षा होने लगी, रुकना आवश्यक हो गया, शायद बेनीपुरीजी यही चाहते भी थे। स्वागतके ढंगपर अुन्होंने कहा, "अच्छा ही हुआ तुम रुक गअे। कुछ बातचीत ही होगी।" लगभग १२ बजे तक चर्चा होती रही। बाहर पानी भी बन्द हो गया था। अतः मैंने चलनेकी अनुमति माँगी। बेनीपुरीजीने घड़ी देखते हुअे "अच्छा भाअी, केलेन्डर बदल रहा है, अच्छा सो जाओ।" मैं नमस्कार कर सीढ़ियोंकी ओर बढ़ा, अुधर बेनीपुरीजीने अपनी डायरी और कलम सम्हाली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोष्ठलीला

बंगला

धेनुसंगे गोठे रंगे
खेलत कृष्ण सुन्दर श्याम
पाँचनि काँचनि वेत्र वेणु
मुरली आलापि गानरि
प्रियदाम, श्रीदाम, सुदाम मेलि
तरणितनया तीरे केलि
धवलि श्यांगलि आअुबि आअुबि
झुकरि चलन कानरि
वयस किशोर मोहन भाँति
वदन अिन्दु जलद कांति
चारु चन्द्रि गुँजाहार
वदने मदन भानरि
अगम निगम वेदसार
लीलाचे करन गोठ बिहार
नासीर ममुद करत आश
चरणे शरण दानरि ।

हिन्दी

गौओंके साथ आनन्दमें निमग्न, श्यामसुन्दर कृष्ण मैदानमें खेलते हैं। सुन्दर काछनी काछे, बाँसकी बाँसुरीमें आलाप कर रहे हैं। प्रियदाम, श्रीदाम, सुदाम, आदि सखाओंके साथ यमुना तीरपर खेल रहे हैं। "धौली आ आ ! साँरी आ आ !" कह-कहकर श्याम गौओंको पुकारते हुअे, ठुमुक-ठुमुक चलते हैं। सुन्दर मोहक, किशोर वय है। मेघश्याम शरीर है। मुखचन्द्र है। सुन्दर गुंजा मणियोंका हार पहने हुअे हैं। अुनके मुखमंडलपर मदन-सूर्यकी आभा है। अगम निगम वेदोंके सारके ही अनुकूल वे लीला करते हैं। नसीर ममुद अुनके चरणोंमें आश्रय पानेकी प्रार्थना करता है।

(अिन मुसलमान कृष्ण भक्तोंपर कोटिन हिन्दू बारिअे। —ह. श.)

शिशिर-वसंत

गुजराती

शिशिरतणे पगले वैरागी
वसन्त आ वरणागी !
अेक सरखां वस्त्र पुरातन
बीजो मखमल ओढे;
अेक अुभो अवधूत दिगम्बर,
अन्य पुष्पमां पोढे !

हिन्दी

वैरागी शिशिरके पीछे-पीछे देखो यह रसिया वसन्त आ पहुँचा !

अेकका काम जगत्के पुरातन वस्त्रोंको भी हटा देना है तो दूसरा मखमल ओढ़ता है।

अेक अवधूत दिगम्बर बनकर रहता है तो दूसरा पुष्प-शय्यामें सोता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शीतल अेक हिमालय-सेवी
अेक जगत अनुरागी !
अेक मुनिव्रत भजे, अवर तो
पंचम स्वर मां बोले;
अरपे अेक समाधि जगतने,
अन्य हृदयदल खोले !
स्पंदे पृथिवीहृदय वळी वळी
रागी ने वैरागी !

शिशिरतणे पगले वैरागी
वसंत आ वरणागी !!

—कवि श्री प्रजाराम रावळ

अेक शीतल हिमालयका निवासी है तो दूसरा संसारका अनुरागी है। अेक मुनिव्रत-मौन-धारण करता है तो दूसरा कोकिलके पंचम स्वरमें बोलता है।

अेक जगत्को समाधिमें लीन करता है तो दूसरा हृदयदलको खोलता है।

अिस प्रकार अेक ही पृथिवीके रागी और विरागी हृदयका भिन्न-भिन्न स्पंदन बारी-बारीसे होता है।

वैरागी शिशिरके पीछे-पीछे देखो यह रसिया वसन्त आ पहुँचा !

अनुवादक—श्री जयेन्द्र त्रिवेदी

संत तुकारामके मराठी अभंग

भक्तकी भगवानसे अनुनय

मराठी

तूं माझा मायबाप सकळ वित्त गोत।
तूंचि माझें हित करिता देवा॥
तूंचि माझा देव तूंचि माझा जीव।
तूंचि माझा भाव पांडुरंगा॥
तूंचि माझा आचार तूं माझा विचार।
तूंचि सर्व भार चालविसी॥
सर्व भावें मज तूं होसी प्रमाण।
अैशी तुझी आण वाहतसें॥
तुका म्हणे तुज विकला जीवभाव।
कळे तो अुपाव करीं आतां॥

प्रीतिचिया बोला नाहीं पेसपाड।
भलतैसें गोड करूनि घेअी॥
तैसें विठ्ठलराया तुज-मज आहे।
आवडीनें गाअें नाम तुझें॥
वेडे वांकडे बाळकाचे बोल।
करिती नवल मायबाप॥
तुका म्हणे तुज अेवो माझी दया।
जीवींच्या सखया जिवलगा॥

हिन्दी

हे पांडुरंग ! माँ-बाप, धन-संपत्ति, नाते-रिश्तेदार सब कुछ तुम ही हो। तुम ही मेरे हितचिंतक हो। तुम ही मेरे देवता हो और तुम ही मेरे प्राण; तुम ही भाव हो। तुम ही मेरे आचार-विचार हो। मेरा सारा भार तुम्हींपर है। मैं तेरी शपथ खाकर कहता हूँ, कि मैं सभी भावोंसे तुझे प्रमाण मानता हूँ। मैंने अपना प्राण और भाव तुझीको समर्पित कर दिया है। अतः अब तू ही अपनी आवश्यकतानुसार कोअी अुपाय कर।

बालककी बातचीत तो प्रीतिकी होती है। अुसमें वाक्चातुर्य नहीं होता। अतः अनुचित होकर भी हम अुस बातचीतसे आनन्दका अनुभव करते हैं। हे विट्ठल ! मेरा और आपका सम्बन्ध अुसी प्रकारका है। मैं तेरा नाम-गुण-गान बड़ी ही रुचिके साथ करता हूँ। बालकके बोल अटपटे-से होते हैं; किन्तु माता-पिता अुनका कौतुक तो करते ही हैं। अुसी प्रकार हे प्रभो ! मेरा सुहृद-मित्र होनेके नाते, तू मुझपर दया कर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुर्बुद्धि ते मना । कदा नुपजो नारायणा ॥
आताँ अैसें करी । तुझे पाय चित्तीं धरीं ॥
अुपजला भावो । तुझे कृपें सिद्धी जावो ॥
तुका म्हणे आतां । लाभ नाहीं या परता ॥

हे भगवन् ! मेरे मनमें बुरे विचार न आने दो। मेरी अैसी स्थिति कर दो कि मैं सदा आपके श्रीचरणोंका स्मरण करता रहूँ। बस यही भाव मेरे मनमें अुत्पन्न हुआ है और अुस भावको तुम अपनी कृपा-दृष्टिसे सफल करो। अिससे अधिक लाभकी बात मुझे और कोअी भी दिखाअी नहीं देती।

अतां होअीं माझे बुद्धीचा जनिता ।
आवरावें चित्ता पांडुरंगा ॥
येथूनियां कोठें न वजें बाहेरी ।
अैसें मज धरीं सत्ताबळें ॥
अनावर गुण बहूतां जातीचे ।
न बोलावें वाचें अैसें करीं ॥
तुका म्हणे हित कोणिअे जातींचें ।
तुज ठावें साचें मायबापा ॥

हे पांडुरंग ! अब आप ही मेरी बुद्धिके संचालक बन, मेरे मनको काबूमें रखिअे। आप मेरे हृदयमें अैसा स्थिर आसन जमा दीजिअे कि मेरे मनको आपसे फिर पृथक होते न बने। चित्तके गुण अनेक प्रकारके तथा अनियंत्रित हैं; अतः मेरे मनकी कुछ अैसी स्थिति कर दीजिअे, कि मैं अुनके विषयमें कुछ भी न बोलूँ। मेरे माता-पिता आप ही होनेसे, आप यह भलीभाँति जानते हैं कि मेरा हित कौनसे अुपायसे होनेवाला है।

बाल मातेपाशीं सांगे तानभूक ।
अुपायाचे दुःख काय जाणे ॥
तयापरी करीं पाळण हें माझें ।
घेअुनियां ओझें सकळ भार ॥
कासया गुणदोष आणिसील मना ।
सर्व नारायणा अपराधी ॥
सेवाहीन दीन पातकांची रासी ।
आतां विचारिसी काय अैसें ॥
जेणें काळें पायीं अनुसरलें चित्त ।
निर्धार हें हित जालें अैसें ॥
तुका म्हणे तुम्ही तारिलें बहुतां ।
माझी कांहीं चिंता असों द्यावी ॥

छोटे बालकको जब कभी भूख-प्यास लगती है, तो वह अपनी माँको बतलाता है। भूख अथवा प्यासको बुझानेके अुपायोंको अमलमें लानेके कष्टों अेवं दुःखदायक विचारोंसे अुस बालकका कोअी वास्ता नहीं रहता। अुसी प्रकार हे प्रभो ! आप मेरा सारा भार अपने कन्धोंपर लेकर, माताके समान मेरी रक्षा कीजिअे। हे नारायण ! अब आप मेरे गुण-दोषोंका विचार न कीजिअे। मैं सभी दृष्टियोंसे अपराधी हूँ। मेरे विषयमें अब आप यह न सोचें कि मैं सेवाहीन हूँ, गुणी नहीं हूँ, मैंने अनेक पाप किअे हैं आदि। क्योंकि मैंने अिसी विश्वाससे अपने मनको आपकी ओर मोड़ा है, कि आप ही अुसके हितकर्ता हैं। आपने अनेकोंको तार दिया; अब कुछ मेरी भी चिंता कीजिअे।

तुज पाहावें हें धरितों वासना ।
परि आचरणा नाहीं ठाव ॥
करिसी कैवार आपुलिया सत्ता ।
तरिच देखता होअिन पाय ॥
बाहिरल्या वेषें अुत्तम दंडले ।
भीतरी मुंडलें नाहीं तैसें ॥
तुका म्हणे वांयां गेलोंच मी आहे ।
जरी तुम्ही साहे न व्हा देवा ॥

आपके दर्शनोंकी अिच्छा तो मैं करता हूँ, किन्तु अुसके योग्य आचरण मुझसे नहीं हो पाता। अतः यदि आप स्वयं अपनी सामर्थ्यसे कोअी युक्ति करें, तभी आपके दर्शन मुझे हो सकेंगे। बाहरी भेस तो मुझे भली-भाँति सध गया है, किन्तु मेरा अन्तःकरण अुतना शुद्ध नहीं हो सका। अतअेव हे प्रभो ! यदि आप मेरी सहायता न करें, तो मेरा जीवन असफल ही बना रहेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काय फार जरी जालों मी शाहाणा ।
तरी नारायणा नातुडसी ।।
काय जालें जरी मानी मज जन ।
परि नातुडति चरण तुझें देवा ।।
काय जालें जरी जालों अुदासीन ।
तरी वर्म भिन्न तुझें देवा ।।
काय जालें जरी केले म्यां सायास ।
म्हणवितों दास भक्त तुझा ।।
तुका म्हणे तुज दाविल्यावांचून ।
तुझें वर्म कोण जाणे देवा ।।

हे भगवन् ! यदि मैं धर्म-ज्ञान प्राप्त कर ज्ञानी बन जाअूँ, तो भी अुसका क्या अुपयोग ? अुससे आपकी प्राप्ति तो मुझे हो न सकेगी ! यदि लोग मेरा सम्मान करने लगें; तो भी अुसका क्या अुपयोग ? अुससे तो आपके श्रीचरणोंकी प्राप्ति मुझे हो न सकेगी ! यदि मैं सांसारिक घटनाओंकी ओर अुदासीन वृत्तिसे देखने लगूँ, तो भी क्या लाभ ? क्योंकि आपकी प्राप्तिका मर्म कुछ और ही है । अुसी प्रकार आपका दास लहलाकर आपकी प्राप्तिका प्रयास करना भी व्यर्थ ही है; क्योंकि हे प्रभो ! बिना स्वयं आपके बतलाअे आपकी प्राप्तिका वास्तविक मर्म कौन जान सकता है ?

वर्म तरि आम्हां दावा । काय देवा जाणें मी ।।
बहुता रंगीं हीन जालों । तरी आलों शरण ।।
द्याल जरि तुम्ही धीर । होअील स्थिर मन ठाअीं ।।
तुका म्हणे सत्ताबळें । लडिवाळें राखावीं ।।

मैं बेचारा आपकी प्राप्तिका मर्म क्या जानूँ ? कृपया आप स्वयं ही वह मुझे बतलाअिअे । अनेकानेक आसक्तियोंके दोषोंसे हीन-दीन होनेके कारण ही अब मैं आपकी शरण आया हूँ । अतः यदि आप मेरा ढाढ़स बंधावें, तो मेरा मन आपके श्रीचरणोंमें स्थित हो सकेगा। हे भगवान् ! आप अपने ही सत्ता-बलसे हम जैसे लाड़लोंकी रक्षा कीजिअे ।

देव वसे चित्तीं । त्याची घडावी संगती ।।
अैसें आवडतें मना । देवा पुरवावी वासना ।।
हरिजनासी भेटी । न हो अंगसंगें तुटी ।।
तुका म्हणे जिणें । भलें संतसंघष्टणें ।।

जिनके हृदयमें आपका वास है, अैसे ही लोगोंकी संगत मेरे मनको भली लगती है । अतः मेरी अिस अिच्छाको आप पूर्ण कीजिअे । भगवद्भक्तोंसे भेंट होनेपर, अुनसे फिर कभी बिछोह न हो । तुकाराम कहता है कि संत-समागमसे मानव-जीवनका साफल्य होता है ।

देवा आतां अैसा करीं अुपकार ।
देहाचा विसर पाडीं मज ।।
तरीच हा जीव सुख पावे माझा ।
बरें केशीराजा कळों आलें ।।
ठाव देअीं चित्ता राखें पायांपाशीं ।
सकळ वृत्तींसी अखंडित ।।
आस भय चिंता लाज काम क्रोध ।
तोडावा संबंध यांचा माझा ।।
मागणें तें अेक हेंचि आहे आतां ।
नाम मुखीं संतसंग देअीं ।।
तुका म्हणे मज वरपंग देवा ।
घेअी माझी सेवा भावशुद्ध ।।

हे भगवन् ! मुझपर आप अैसा अुपकार कीजिअे, कि जिसके परिणामस्वरूप अिस देहकी समस्त अिच्छाअें लुप्त हो जाअें । मेरे मनको तभी सुख प्राप्त हो सकेगा । यह अच्छा हुआ कि मुझे यह अुपाय विदित हो सका । मेरा मन आपके श्रीचरणोंमें लगा रहे और मेरी समस्त वृत्तियाँ आपहीकी ओर केन्द्रित हों । आशा, भय, चिन्ता, लज्जा, काम और क्रोधसे मेरा सम्बन्ध विच्छेद कर दीजिअे । मेरी केवल यही अेक माँग है कि मेरे मुँहमें आपका नाम रहे और संत-समागमका लाभ मुझे होता रहे । मेरी सेवा आप दिखावे मात्रकी है; अुसे विशुद्ध भावकी बना दीजिअे ।

[अनुवादिकाः—सौ. शारदा वझे, बी.अे, विशारद]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सूचना—'राष्ट्रभारती'में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअें।)

'अंचल' का 'मरुप्रदीप'

'अंचल'की कविरूपमें जितनी ख्याति है, कथा-लेखकके रूपमें अुसमे कम नहीं है। अुनके तीन अुपन्यास निकल चुके हैं 'चढ़ती धूप', 'अुल्का' और 'मरुप्रदीप'। सभी अुपन्यास सामाजिक विषयवस्तुको लेकर चले हैं। 'मरुप्रदीप' भी अिस सामान्य भावभूमिसे अछूता नहीं है। मध्यवर्गीय सामाजिक समस्याओंको बड़ी कुशलताके साथ लेखक अिसमें चित्रित कर पाया है। मध्यमवर्ग आजकी परिस्थितियोंमें बड़ी विचित्र स्थितिमें है। आज-के युगकी माँगके जवाबमें खड़े होनेकी अुसकी क्षमता नहीं। सर्वहारा अथवा श्रमिक वर्गके साथ वह तादात्म्य स्थापित कर सकनेमें असमर्थ रहता है। दूसरी ओर वह अुच्च वर्गोंके सपने देखता है। वैभव और विलासमें अपनेको खो देनेको तत्पर रहता है। साथ ही बौद्धिक चेतनाके फलस्वरूप अनेक कुंठाओंसे पीड़ित रहता है। आर्थिक दृष्टिसे निष्प्राण-सा होते हुअे भी कृत्रिम व्यव-हारके आवरणसे अपनेको जीवन्त बताना चाहता है। यह वर्ग अनेक आंतरिक और बाह्य विरोधोंसे परिपूरित जीवन बिताता है। अैसी दशामें अिसीके आचार, विचार, व्यवहार और समाज-व्यवस्थाको अुपजीव्य बनाकर कुछ लिखना सरल काम नहीं है। यह भावभूमि अितनी अधिक ढालू है कि लेखकसे जरा-सी चूक हो गअी तो अुसकी कथा कहींकी भी नहीं रहेगी। अंचलने अपनी कथाको बड़ी सावधानीसे आगे बढ़ाया है। अुन्होंने निम्नमध्यवर्गीय विधवाकी स्थितिको अेक नीरस मरु-खंडके रूपमें लिया है—जिसमें लेशमात्र भी जीवनरस नहीं है। भारवाही पशुकी भाँति मध्यमवर्गीय विधवा बस जी भर रही है। अैसे मरुस्थलमें नूतन विचारोंका भव्य प्रदीप जलाना ही शायद लेखकको अभीष्ट है। अस्तु!

शांति अुर्फ लल्ली बड़ी विचक्षण और मेधावी बालविधवा है। अपने पिताके पास रहकर अपना जीवन बिता रही है। समाजने अुसके समूचे जीवनपर भयंकर घेरे थोप दिअे हैं। अुसे अुन सीमाओंका निर्वाह तो करना ही है। हिन्दू विधवा शायद समाजका सबसे अधिक निरीह प्राणी है। पड़ोसमें ही विमल रहता है। अेक कॉलेजमें प्रोफेसर है। शांतिके लिअे वह बहुत निकट है। बड़े भाअीके समान अुसे मानती है। बड़े भाअीसे भी अधिक अुसे चाहती है। विमलकी पत्नी अुषा अिस 'चाहने'को अनर्थके रूपमें ग्रहण नहीं करती, तथापि कभी व्यंग्य कस ही देती है। स्वाभिमानी विमल प्रिन्सीपलसे किसी बातपर अड़कर अिस्तीफा दे देता है। विमलको अपने परिजनोंको वहींपर छोड़ जीविका व पुस्तक लेखनके हेतु कलकत्ते जाना पड़ता है। अिधर शांति भी अेक बालिका विद्यालयमें अध्यापिकाका काम करना शुरू कर देती है और साथ ही में समाज-सेवाके कार्यमें लग जाती है। विमल भैयाके अेक विद्यार्थी और समाज-सेवाके क्षेत्रमें अुसके साथ काम करनेवाला कमलाकान्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शान्तिसे प्यार करने लगता है। शान्तिका विश्वास-वैधव्यकी आत्मनिष्ठा अेक बार काँप अुठती है, किन्तु पुराने संस्कार जोर मारते हैं और शांति अपने बूढ़े श्वसुरके साथ ससुराल रवाना हो जाती है।

आज अुपन्यास केवल कहानी ही नहीं कहता वह अुससे भी अधिक महत्वपूर्ण शाश्वत समस्याओंपर प्रकाश डालता है। 'जेम्स जॉयस' का प्रसिद्ध अुपन्यास 'युलिसिस' केवल २४ घंटेके क्रियाकलापोंकी प्रतिक्रियाको मात्र चित्रित करता है। आजका कलाकार आभ्यंतरिक प्रयाण कर रहा है–अपने मनके गहरे गर्त खोज रहा है। 'अंचल' के 'मरुप्रदीप' के २५३ पृष्ठोंमें अिसी अंतर्मनको व्यक्त करनेका प्रयत्न किया गया है। कहना न होगा कि अिसके फलस्वरूप अुपन्यासमें बौद्धिक तत्वने प्रधानता प्राप्त कर ली है। अंचलजीके कवित्वने अिस बौद्धिकताके सहयोगसे अनेक सूक्ति रूपी रत्न अुत्पन्न किअे हैं जो यत्रतत्र बिखरे पड़े हैं। यथा––

'सबसे बड़े पागल वे होते हैं लल्ली ! जो दूसरोंका पागलपन देखा करते हैं, अपना नहीं ! (पृ. २५)

पुरानापन––युगोंसे चले रहते आनेकी स्थिति ही किसी बातको सही नहीं बना सकती। (पृ. २९)

जो दर्शन कर्त्तव्याकर्त्तव्य, विवेक और सौन्दर्यानुभूतिपर आग्रह नहीं करता––जीवित कर्मयोगके आंशिक सत्योंका जो वैज्ञानिक समन्वय नहीं करता, अुसे दर्शन कहलानेका अधिकार नहीं। (पृ. ४३)

अिसी तरह तीव्र बौद्धिकता और कविहृदयके फलस्वरूप समूचे अुपन्यासमें अेक नयापन आ गया है और भाषा चुटीली बन गअी है। स्थान-स्थानपर पैने तर्क दीख पड़ते हैं जो पाठकको बरबस छू जाते हैं जो शरत्की याद दिला देते हैं। किन्तु मध्यमवर्गीय विषयवस्तुको आधार बनाकर शरत् जो कह गया है और जिस ढंगसे कह गया है, 'अंचल' से अुसकी अुम्मीद नहीं की जा सकती। कारण स्पष्ट है शरत्की भाँति 'अंचल' में वास्तविक अनुभूति नहीं है। जो अन्तर 'रामचरित मानस' और 'रामचन्द्रिका' में है वैसा ही अन्तर विषय, भाव और भाषामें साम्य होनेपर भी 'शरत्' और 'अंचल' में है।

फिर भी 'अंचल' को 'मरुप्रदीप' के लिखनेका श्रेय तो देना ही होगा। यहाँ 'अंचल' मार्क्सवादी दृष्टिकोणसे पूर्णतया प्रभावित जान पड़ता है। पृष्ठ ५१ पर रूस देशकी सामाजिक व आर्थिक व्यवस्थाके, विमलने खूब गुण गाअे हैं। अिसी प्रकार मार्क्सकी प्रसिद्ध अुक्ति 'Religion is opium of masses' भी अनजाने विमल बोल अुठता है––'आध्यात्मिकताके लिअे मैं नशेबाजीके अतिरिक्त कोअी शब्द नहीं कह पाता।' (पृष्ठ २९)। विमल प्रायः अैसी अुक्तियाँ ही बार-बार बोला करता है। लल्ली (शान्ति) के कथन भी बड़े मार्केके हैं। रूसी फिल्मकी अुसके द्वारा बड़ी प्रशंसा कराअी गअी है (पृष्ठ ४९)। यह सब होते हुअे भी शान्तिका कमलाकान्तसे प्रेम संभाषण सुनकर कानपुर छोड़कर अपने बूढ़े ससुरके साथ चले जाना बड़ा ही अटपटा लगता है। बौद्धिक तेजस्विताकी मूर्ति शान्ति 'पलायनवादी' बन जाती है जब कि समूचे अुपन्यासमें अुसे कर्मठ और विवेकमय चित्रित किया गया है। यहाँ आकर 'अंचल' अपने समाजशास्त्रीय परिवेशका निर्वाह नहीं करवा पाअे। हम अिस दृष्टिसे भले ही 'अंचल' को असफल मान लें। किन्तु अैसा करनेसे अुपन्यास यथार्थ बन गया है। जोलाका मत था––हमें चरित्र नहीं, मानवप्रकृतिका अध्ययन करना चाहिअे। लल्ली (शान्ति) विद्रोही न बन, पलायन कर गअी। अिससे चरित्रमें तेजस्विताकी कमी भले ही हो गअी हो, परन्तु स्वाभाविकताकी वृद्धि हो गअी है। मानव मन बड़ा जटिल है, अुसे समझना बहुत कठिन है। यदि शान्ति कानपुरसे दूर जाना चाहती है, तो यह सर्वथा स्वाभाविक ही है, प्राकृतिक ही है। अिस प्रकार बड़ी चतुराअीसे 'अंचल' 'मरुप्रदीप' को केवल प्रचारात्मक समाजशास्त्रीय अुपन्यास बननेसे बचा गअे हैं अतः अुनकी प्रशंसा ही करनी पड़ेगी। पाठक जहाँ 'मरुप्रदीप' पढ़कर रस पाअेगा, वहाँ अुसे विचार करनेको प्रेरणा भी मिलेगी। यही 'अंचल' के 'मरुप्रदीप' की सफलता है।

—प्रो. मोहनलाल 'जिज्ञासु'
अेम. अे., अेल. अेल. बी.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवनके अंचलमें':—[मूल लेखिका—लीलावती मुन्शी, अनुवादक—शिवचन्द्र नागर। प्रकाशक—राजकमल प्रकाशन, दिल्ली। पृष्ठसंख्या, ३०४, मूल्य साढ़े चार रुपअे].

"जीवनके अंचलमें" पन्द्रह कहानियोंका संग्रह है। नारीने अपना और समाजका जो रूप देखा, वही अिन कहानियोंमें चित्रित है। अिन छोटे-बड़े कथा-रत्नोंको लेखिकाने जीवनके अंचलमें पड़ा पाया और बीनकर पाठकोंके सामने रख दिया। सभी कहानियोंमें चित्रित दृश्यपटोंको नारीने अपनी ही आँखोंसे देखा है, समाजकी बलवती, अबला अर्धांगिनीने अपनी भावनाओंके कोमल कठोर रंग अिन चित्रोंमें भरे हैं। अिन कहानियोंमें नारीका अपना चित्र भी है, और नारी द्वारा समाजका अंकित चित्र भी।

"जीवन संध्या" कहानीमें श्रीकृष्णके वृद्धावस्थाका चित्रण किया है। अुनकी मनोवृत्ति परिस्थिति आदिका सुन्दर चित्रण है। पैसा है? कहानीमें मधुकी प्रेयसी चन्द्रा विधुकान्तसे शादी करनेके लिअे तैयार हो जाती है क्योंकि विधु पैसेवाला था। फिर विधुके असंयमित जीवनको देखकर चन्द्रा शादी नहीं करती। जबतक मधु साधु बनकर निकल पड़ता है। कुछ वर्ष बीत जाते हैं। साधुके रूपमें मधुकी भेंट माधवीसे हो जाती है, प्रेम हो जाता है। फिर चन्द्रा क्षमा माँगती है पर मधु क्षमा नहीं करता, वह तैयार होकर माधवीके पितासे मिलने जाता है तो देखता है कि विधु और माधवी वर-वधूके रूपमें खड़े हैं। "बुढ़ापेकी लकड़ी" कहानीमें अेक वृद्ध व्यक्तिका विवाह पन्द्रह वर्षकी गरीब कन्या प्रमदासे करवाकर अुसकी दुर्गतिका चित्र अुपस्थित किया है। निर्जनता कहानीमें अेक शिक्षित विधवाकी करुण कहानी है। "सत्ताकी आकांक्षा" नामक कहानीमें अेक गरीब घरकी लड़की अमीर घरमें पलनेके कारण अपनी सत्ताकी भी आकांक्षा रखती है। कहानी मनोरंजक है। "जसोदा" कहानीमें अेक गाँवकी भोली लड़कीका विवाह बम्बअीके अमीर घरमें हो जाता है। जीवनभर वह परिस्थितियोंसे लड़ती रहती है, हद हो जाती है, वह हारकर गाँव वापस लौट आती है। अुसके पतिकी आँखें खुल जाती हैं, वह गाँवसे अपनी पत्नीको वापस लानेके लिअे चल पड़ता है। "स्नेहका बन्धन" कहानीमें अेक साधारण मनुष्यकी कहानी है, जो दुनियासे अूबा हुआ, कुटुम्बियोंकी मृत्युसे अेकाकी बनता है। फिर अनजान लड़केका स्नेह अेवं घर पाकर अुसका जीवन रसमय हो जाता है परन्तु वह स्नेहके बन्धनको तोड़कर फिर अेकाकी फिरने लगता है। "अभागिन" अेक देवदासीकी कहानी है जिसे बिना अपराधके कारावासमें सड़ना पड़ता है। "अधःपतन" कहानी अेक परित्यक्ता विधवाकी कहानी है जो नटी बनकर पतित हो जाती है। "तीन चित्र" में अेक बालक बालिकाका बाल्य खेल, फिर यौवनमें पति पत्नी, और अन्तमें वृद्धावस्थामें बूढ़ा-बूढ़ीके रूपमें दिखाया है। "चिर कुमार" कहानीमें अेक अभागे युवककी कहानी है जो चार विवाह करके भी सुखी नहीं हुआ अतः पाँचवाँ विवाह करने जा रहा है। "जीर्ण मन्दिर और यात्री" कहानीमें अेक यात्री, और जीर्ण मन्दिर आपसमें बात करते हुअे अपनी-अपनी पूरी कहानी सुना जाते हैं। "दो बहनें" कहानीमें दो सुन्दर बहनोंमेंसे बड़ी लड़की राजाको चाहती थी अुसने राजाको पत्र लिखा। राजा लेने आया तो सामने छोटी बहनको पाकर अुठा ले गया। बड़ी बहन बहुत दुखी हुअी और अन्तमें विरक्त हो गअी। "अुपकार" में दो मित्रोंके त्यागपूर्ण जीवनका सुन्दर चित्र है। और अन्तमें "बुद्धिशालियोंका अखाड़ा" में अेक विधवा नारीके प्रति समाजके विभिन्न स्तरके व्यक्तियोंकी प्रतिक्रियाका विस्तार सुन्दरतासे निभाया गया है।

अिस संग्रहकी कअी कहानियोंको लघु अुपन्यास कहें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी, क्योंकि अुन कहानियोंमें जीवनका समग्र विस्तार है। जैसे "जसोदा", "सत्ताकी आकांक्षा", "स्नेहका बन्धन", "चिर कुमार", "दो बहनें" आदि। अिन कहानियोंमें घटनाओंका क्रम स्वाभाविक अेवं शृंखलाबद्ध है। चरित्रोंकी अन्तर्बाह्य मनोवृत्तियाँ स्वाभाविक रूपसे सजाअी गअी हैं। "जीवनके अंचलसे" की कहानियोंमें गुजरातके गृह-जीवनका अत्यन्त यथार्थ चित्रण है। अुनके सभी नारी पात्र गुर्जर गृहिणीकी स्वाभाविकता लिअे हैं। प्रत्येक समस्याको, वस्तु-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थितिको लेखिकाने अपनी परिमार्जित तथा सधी हुअी भाषामें संजोया है। गुजरातीसे हिन्दी अनुवाद मौलिकताका आनन्द देता है। कहीं भी अैसा नहीं लगता कि मूल वस्तुकी परछाअीं मात्र हो।

श्रीमती लीलावती मुंशीके अिस कथा-साहित्य सृजनसे हमारे साहित्यके अेक विशेष दृष्टिकोणके अभावकी पूर्ति होगी, अैसी आशा है।

—सुश्री लीला अवस्थी अेम. अे.

'आरसी' (गृहशास्त्र विशेषांक)—सम्पादिका—श्रीमती लीला प्रकाश। वार्षिक मूल्य ४)

आरसी महिलाओंके लिअे अेक अुपयोगी पत्रिका है। अुसके चौथे वर्षका प्रथम अंक गृहशास्त्र विशेषांकके नामसे प्रकाशित हुआ है। अिसमें दो विभाग हैं—साहित्यिक विभाग तथा गृह-विभाग। साहित्यिक विभागके अन्तर्गत कहानियाँ, अेकांकी, कविता तथा लेख हैं। जहाँ कहानियाँ और कविता हमारा मनोरंजन करती हैं, विभिन्न विषयोंपर लिखे गअे लेख हमारे ज्ञानको बढ़ाते हैं। विषयोंका चयन और अिस विभागके लिअे जुटाअी गअी सामग्री सुरुचिका परिचय देती है।

पत्रिकाका गृह-विभाग विशेष महत्वका है। अिसमें पाठशाला, कढ़ाअी, बुनाअी, सिलाअी आदि स्तम्भोंके अन्तर्गत विविध जानकारी दी गअी है जो गृहिणियोंके लिअे विशेष अुपयोगी सिद्ध होगी। कढ़ाअी, सिलाअी, बुनाअी आदिको समझानेके लिअे आवश्यक चित्र भी दिअे गअे हैं जिनकी सहायतासे कढ़ाअी, बुनाअी आदिका काम आसानीसे सीखा जा सकता है।

आरसीका यह विशेषांक गृह-शास्त्रकी दृष्टिसे परिपूर्ण है। साथ ही गृहिणियोंके लिअे विशेष अुपयोगी है।

सुसम्पादनके लिअे सम्पादिकाको बधाअी।

—सौ. शीलादेवी दुबे 'साहित्यरत्न'

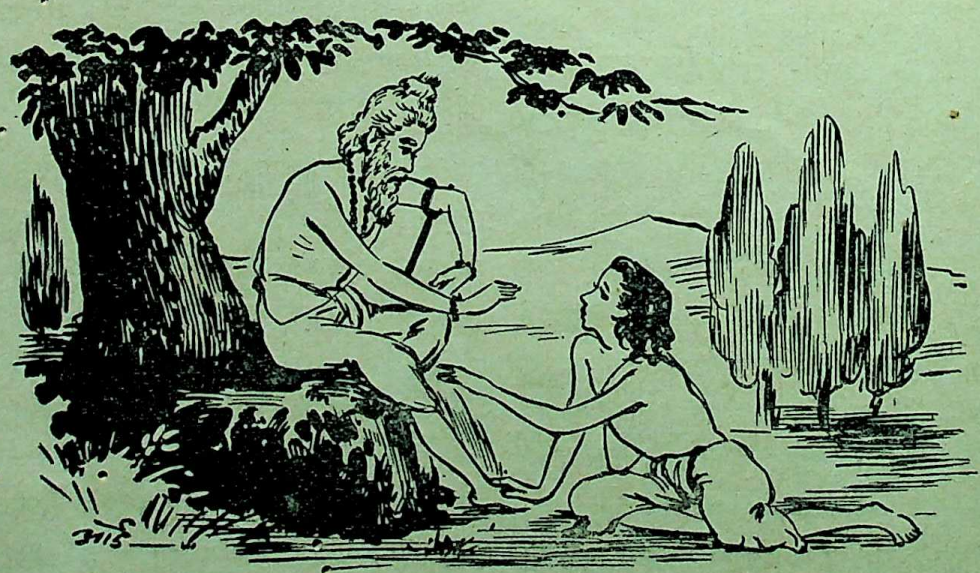

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्धाका हिन्दी-सम्मेलन

"राष्ट्रभारती" राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी पत्रिका है, और राष्ट्रभाषा प्रचार समितिने ही अ. भा. हिन्दी सम्मेलनकी बैठकका वर्धामें आयोजन किया था; अिसलिअे अुसके सम्पादकको अुस सम्मेलनके सम्बन्धमें अपना अभिप्राय व्यक्त करते हुअे थोड़ा बहुत संकोच हो तो वह अस्वाभाविक नहीं। परन्तु राष्ट्रभारतीकी सम्पादकीय टिप्पणियोंके नीचे सम्पादकोंके अपने हस्ताक्षर होते हैं अिसलिअे अुन्हें अिन टिप्पणियोंमें अपने व्यक्तिगत अभिप्रायोंको भी प्रकाशित करनेकी स्वतंत्रता रहती है। हम अुस स्वतंत्रतासे लाभ अुठाना चाहते हैं और अपने पाठकोंके सामने अपने हृदयकी बात स्पष्ट रूपसे रख देना चाहते हैं।

यहाँ हम सम्मेलनकी सफलता-असफलतापर कोअी विचार नहीं करेंगे। जिस अुद्देश्यसे यह सम्मेलन किया गया था वह अुद्देश्य सफल नहीं हो सका, यह दुखकी बात अवश्य है, परन्तु सम्मेलन अति अुपयोगी सिद्ध हुआ अिसमें किसीको भी सन्देह नहीं। श्रद्धेय राजर्षि टण्डनजीके नेतृत्वमें तथा श्री द्वारकाप्रसाद मिश्रजीकी अध्यक्षतामें सम्मेलनने कअी प्रस्ताव किअे, जिनमें दो प्रस्ताव अति महत्वके थे। अेक प्रस्ताव द्वारा सरकारसे प्रार्थना की गअी थी कि वह अेक विधि बनाकर हिन्दी साहित्य सम्मेलनके गतिरोधको दूर करे। अेक दूसरे प्रस्ताव द्वारा १५ व्यक्तियोंकी अेक समिति बनाअी गअी, जो सम्मेलनमें किअे गअे निर्णयोंको कार्यान्वित करेगी और आवश्यकता होनेपर अुसे दूसरा हिन्दी सम्मेलन बुलानेका अधिकार भी दिया गया। अिस समितिके संयोजक श्री सेठ गोविन्ददासजी हैं जो हिन्दी साहित्य सम्मेलनके पूर्व सभापतियोंमेंसे अेक हैं। और समितिके अन्य सदस्योंको भी हिन्दी-जगत्में अच्छा और महत्वका स्थान प्राप्त है। अिस प्रकार जो समिति बनी है, वह बड़ी दायित्वपूर्ण और अधिकार-सम्पन्न समिति है; स्वाभाविक है कि हिन्दी-जगत् अुससे बहुत बड़ी आशाअें रखेगा।

टण्डनजीकी प्रेरणा

युक्त प्रदेशकी सरकारसे अेक विधि बनाकर हिन्दी साहित्य सम्मेलनके गतिरोधको दूर करनेका जो अनुरोध किया गया है, अुसकी मूल प्रेरणा श्रद्धेय टण्डनजीसे मिली थी। अुन्होंने स्वभावतः अिस दिशामें कुछ कार्यारम्भ कर भी दिया है। सम्मेलनका यह प्रस्ताव अति महत्वका है फिर भी अिसके कारण हमें जो निराशा हुअी है, अुसको हम छिपाना नहीं चाहते। हम ही क्यों, सम्मेलनमें अुपस्थित कअी विद्वानोंको तथा हिन्दी-सेवकोंको अुससे बड़ी निराशा हुअी है। परन्तु साहित्य सम्मेलनके गतिरोधको दूर करनेका दूसरा कोअी अुपाय भी तो दिखाअी नहीं दे रहा था। अेक दलके लोग आनेका वायदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करके भी अुपस्थित नहीं हुअे। क्या अिसका यह अर्थ लिया जाय कि वे अिस गतिरोधको दूर करना नहीं चाहते अथवा केवल अपने आग्रहोंके पूर्ण होने तक, अुस गतिरोधको बनाअे रखना चाहते हैं! अैसी स्थितिमें वर्धाके हिन्दी सम्मेलनमें अुपस्थित अधिकांश प्रतिनिधियोंको अुत्तर प्रदेशकी सरकारसे प्रार्थना करनेके सिवा दूसरा कोअी अुपाय ही नहीं था! राजर्षि टण्डनजी, जो हिन्दी अेवं हिन्दी साहित्य सम्मेलनके प्राण हैं, स्वयं अिस प्रस्तावकी प्रेरणा दे रहे हैं, अिसलिअे अुसको स्वीकार करना चाहिअे--यह मनोवृत्ति भी अधिकांश प्रतिनिधियोंकी अुस समय थी।

संशय और सन्देह

अेक पुराना बोधसूत्र है: जब किसी निर्णयके सम्बन्धमें संदेह हो जाय तो अुसमें अपने अन्तःकरणकी प्रवृत्ति--आवाजको ही प्रमाण मानना चाहिअे। हम अिस प्रस्तावपर जितना भी विचार करते हैं, अपने अन्तःकरणमें अुसके लिअे हम किसी भी प्रकारका अुत्साह नहीं पाते। हिन्दी साहित्य सम्मेलनमें सरकारके हस्तक्षेप द्वारा जो परिस्थिति पैदा होगी अुससे हिन्दी साहित्य सम्मेलन तथा हिन्दी और अुसके कार्यका हित ही होगा--अिसका हमें विश्वास नहीं हो रहा है। सरकारी कार्योंका हमें अनुभव है। अुनकी अेक अपनी कार्यपद्धति होती है। अपनी लीकके बाहर वे जाते नहीं अथवा यों कहिअे कि जा नहीं सकते। सरकारकी सदिच्छाअें अेवं शुभेच्छाअें कितनी भी क्यों न हों, सरकारी कामोंमें लालफीतेका रंग आअे बिना नहीं रहता और अुस कार्यका ढर्रा भी कुछ दूसरा ही हो जाता है। भारत सेवक समाजका अुदाहरण हमारे सामने है। सरकार सम्मेलनके गतिरोधको दूर कर सके और अुसके द्वारा नियुक्त समितिके प्रयत्नोंसे यदि सम्मेलन पहलेकी तरह कार्य करने लगे तथा जिस प्रकारकी प्रेरणा अेवं मार्गदर्शनकी आशा आज हम कर रहे हैं वैसी प्रेरणा या मार्गदर्शन अुसके द्वारा मिलने लगे, तो अुससे हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। परन्तु अैसा होगा--यह विश्वासपूर्वक आज कोअी भी नहीं कह सकता। आजकी परम आवश्यकता यही है कि हिन्दीके कार्यके संबंधमें जो भी निर्णय हों, हिन्दीके विद्वान् अेवं सेवकों द्वारा हों, अुन्हींके मार्गदर्शनमें यह कार्य चलना चाहिअे। यद्यपि सरकार अपनी है फिर भी अिस प्रकारके कार्योंको अुससे स्वतन्त्र रखना और अुसे अुसके प्रभावसे दूर रखना ही सदा हितकर होगा--अिसमें हमें जरा भी सन्देह नहीं।

क्या दूसरा कोअी अुपाय नहीं?

हिन्दी साहित्य सम्मेलनके गतिरोधको दूर करनेके संबंधमें भी क्या यह मान लिया जाय कि सरकारके हस्तक्षेपके बिना दूसरा कोअी अुपाय है ही नहीं? हिन्दी-जगत्का यह दुर्भाग्य है कि हिन्दीकी अेक पुरानी और बड़ी संस्था हिन्दी साहित्य सम्मेलन दो दलोंके विवादके कारण आज अैसी विषम स्थितिमें है। अुन दलोंमें समाधान नहीं हो रहा है, यह हमारे लिअे बड़ी लज्जाकी भी बात है। और यह हमारे लिअे और भी अधिक लज्जाकी बात है कि अेक दल जब समाधान करनेके लिअे तैयार अेवं आतुर है अुस समय दूसरा दल समझौतेके लिअे आगे आनेके लिअे भी तैयार नहीं और अुसपर किसीका प्रभाव भी पड़ता दिखाअी नहीं दे रहा है। परन्तु अिससे हम निराश होकर सरकारको अिस गतिरोधको दूर करनेके लिअे निमन्त्रण दें यह हमारे सार्वजनिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवनके लिअे बहुत सराहनीय बात तो नहीं मानी जायगी। क्या दूसरा कोअी अुपाय ही नहीं है? गाँधीजीकी पुण्य तिथिके दिन यह टिप्पणी लिखी जा रही है अिसलिअे अैसे प्रसंगपर वे क्या करते यह स्वाभाविक प्रश्न हो रहा है। गाँधीजी अेक समय काँग्रेसके प्राण थे। १९२० के बाद काँग्रेसका जो महत्व अेवं शक्ति बढ़ी, वह गाँधीजीके कारण ही बढ़ी थी। फिर भी प्रसंग आनेपर अुन्होंने काँग्रेससे अलग होकर रचनात्मक कार्यमें ही ध्यान लगाया और फिर जब अवसर अुपस्थित हुआ काँग्रेसकी बागडोर अपने हाथमें थाम ली। अुसी प्रकार क्या जो दल शक्तिशाली है वह सम्मेलनको दूसरे दलके हाथोंमें सौंपकर हिन्दीके रचनात्मक कार्यमें ही अपनेको संलग्न नहीं कर सकता? हमारा विश्वास है कि यह शक्तिशाली दल जहाँ भी काम शुरू करेगा वहीं हिन्दीका वातावरण तैयार कर लेगा। और दूसरे दलके लोग भी जब देखेंगे कि अुनपर सम्मेलनकी सारी जवाबदारी छोड़ दी गअी है, तब वे भी अुसपर बड़ी गम्भीरतासे विचार करने लगेंगे। हमारा विश्वास है कि वे शीघ्र ही यह अनुभव करेंगे कि दूसरे शक्तिशाली दलके बिना वे सम्मेलनके कार्यको सम्भाल नहीं सकते। परिणामतः अुनके सहयोगके लिअे वे सदा प्रयत्नशील रहेंगे। यह अेक अुपाय है। सम्भवतः अिसके परिणामके सम्बन्धमें सन्देह किया जा सकता है। परन्तु हमारे विचारमें यह अुपाय सरकारके द्वारा सम्मेलनका गतिरोध दूर करानेके अुपायसे कहीं अधिक अच्छा और शोभास्पद है।

हिन्दी सम्मेलनको स्थाअी रूप दिया जाय

परन्तु हिन्दी सम्मेलनका तो निर्णय हो चुका है। अुस निर्णयके अनुसार अुत्तर प्रदेशकी सरकार कोअी कदम अुठाती है या नहीं यह भविष्यकी बात है। सम्भव है अिसमें काफी समय लग जाय और यह भी सम्भव है कि अुत्तर प्रदेशकी सरकार हिन्दी सम्मेलनकी प्रार्थनाको स्वीकार भी न करे। परन्तु क्या तब तक हिन्दीके सेवक तथा हितैषी निष्क्रिय ही बैठे रहेंगे? क्या पाँच सालकी निष्क्रियता पर्याप्त नहीं? श्री अंबिकाप्रसाद वाजपेयीजीने अेक सुझाव हिन्दी साहित्य वर्द्धिनी सभा बनानेका दिया है। अुनका निवेदन समाचारपत्रोंमें छपा है अिसलिअे अुसपर यहाँ अधिक कुछ लिखनेकी आवश्यकता नहीं। केवल अितना कहना भर हमें आवश्यक प्रतीत होता है कि हिन्दी सम्मेलन द्वारा निर्मित समिति अुसपर विचार करे। यह समिति यदि चाहे तो हिन्दी सम्मेलनको ही स्थाअी रूप देकर अुसके द्वारा भी वह हिन्दी-राष्ट्रभाषाके रचनात्मक कार्यका आयोजन-नियोजन कर सकती है। हम आशा करें कि वर्धाके हिन्दी सम्मेलनका हिन्दीके हितमें कोअी न कोअी ठोस, स्थाअी और निर्माणात्मक परिणाम अवश्य निकलेगा।

माध्यमिक शालाओंमें भाषाओंका अध्ययन

समाचारपत्रोंमें प्रकाशित समाचारोंसे प्रतीत होता है कि अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षा काअुन्सिलने निर्णय किया है कि माध्यमिक शालाओंमें निम्नलिखित क्रमसे भाषाओंका अध्ययन कराया जाय।

"१. (क) मातृभाषा या (ख) प्रादेशिक भाषा (ग) मातृभाषा और प्राचीन भाषाका मिलाजुला पाठ्यक्रम या (घ) मातृभाषा और प्रादेशिक भाषाका मिलाजुला पाठ्यक्रम। २.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी या अँग्रेजी। ३. विभाग १ या २ के अनुसार ली गअी भाषासे अन्य आधुनिक भाषा।"

अिस निर्णयमें दो त्रुटियाँ तो स्पष्ट दिखाअी दे रही हैं। अहिन्दी भाषी प्रदेशोंमें अिस निर्णयके अनुसार हिन्दीका अध्ययन छोड़ भी दिया जा सकता है और तीसरे विभागमें आधुनिक भाषाके नामसे आधुनिक भारतीय भाषाओंको ही ग्रहण किया जाय या अन्य कोअी विदेशी भाषाको भी यह संदिग्ध है। अुपरोक्त निर्णयमें अनिश्चितता भी है जो अखिल भारतीय शिक्षाके स्तरकी दृष्टिसे हितकर नहीं। हमारे विचारसे तो निश्चित रूपसे यह क्रम रखा जाना चाहिअे था।

१. मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा अथवा अिनका मिलाजुला पाठ्यक्रम, २. हिन्दी या अपनी प्रादेशिक भाषासे भिन्न अन्य भारतीय भाषा, ३. संस्कृत, ४. अँग्रेजी या अन्य विदेशी भाषा।

हिन्दी भाषी प्रदेशोंमें तो प्राथमिक शालाओं-में ही हिन्दीका अध्ययन कराया जायगा। अुसके बाद अन्य किसी भारतीय भाषाका अध्ययन विद्यार्थी कर सकता है और फिर वह संस्कृतका अध्ययन करे क्योंकि आधुनिक भारतीय भाषाओंके सुचारु अध्ययनके लिअे अुसकी प्रथम आवश्यकता है। अिसके बाद ही विद्यार्थी अँग्रेजी या अन्य विदेशी भाषाको ग्रहण करे।

अहिन्दी भाषी प्रदेशोंमें प्राथमिक शालाओंमें मातृभाषा या प्रादेशिक भाषाओंके अध्ययनके बाद हिन्दीको अनिवार्य बनाना चाहिअे, क्योंकि वह केन्द्रीय राजकाज तथा आन्तर्प्रान्तीय व्यवहारकी भाषा है अिसलिअे हरअेक छात्रके लिअे अुपयोगी है। अुसके बाद संस्कृत और संस्कृतके बाद ही अँग्रेजी आदि भाषाओंको स्थान दिया जाना चाहिअे। भारतके लिअे भाषाओंके अध्ययनका यही स्वाभाविक क्रम है और अिसी क्रमको स्वीकार करना चाहिअे। परन्तु दुखकी बात है कि अभी हमारा अँग्रेजीका मोह दूर नहीं हुआ है अिसलिअे अिस सम्बन्धमें हमारे जो भी निर्णय होते हैं वे अनिश्चितसे प्रतीत होते हैं। यह अनिश्चितता जितनी भी जल्दी हो सके, हमें दूर करनी होगी।

अँग्रेजीका मोह

हमें आश्चर्य तो अिस बातका है कि श्री राजाजी तथा श्री सुनीतिबाबू जैसे हिन्दीके पुरस्कर्ता भी आज अँग्रेजीका पक्ष ग्रहण कर रहे हैं। कुछ अँग्रेजी पढ़े-लिखे लोगोंका कहना है कि अँग्रेजी अब पराअी भाषा नहीं रही, अुसे भारती-योंने अपना लिया है! भारतीयोंने अुसे कितना क्या अपनाया है, अुसकी कल्पना तो, भारतकी जन-संख्याके परिमाणमें कितने लोगोंने अँग्रेजी पढ़ पाअी है, अुसके अंकोंसे ही की जा सकती है। हिन्दी आयोगके अध्यक्ष श्री खेरने मद्रासके अपने अेक भाषणमें कहा, "मैं चाहता हूँ कि आप अेक क्षणके लिअे अिस बातपर विचार करें कि १५० वर्षके राज्याश्रयके बावजूद १९५१ की जनगणना यह बताती है कि मेट्रिक या अुसके बराबरीकी शैक्षणिक योग्यता रखनेवाले यानी अंग्रेजी भाषाको कुछ हद तक समझनेवाले लोगोंकी संख्या केवल २१,५६,८५८ थी। यह संख्या कुल जनसंख्या का १/२ प्रतिशत ही हुआ जब कि अक्षर ज्ञान रखनेवालोंकी औसत संख्या १६.६ प्रतिशत है। अितने वर्षोंके राज्याश्रयके बाद, साथ ही लोगोंपर अूपरसे लादी जानेके बाद भी अँग्रेजी हमारे समाजके बहुत छोटे हिस्से अेवं सीमित वर्गोंमें ही फैल सकी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंगाल तथा मद्रासमें अँग्रेजीका अधिक समर्थन किया जा रहा है अुसका कारण वहाँके शिक्षितोंका अँग्रेजीके प्रति विशेष मोह है। अुसके साथ अुनका हिन्दीके प्रति कुछ विरोध भी है। बंगालके भाषा-विज्ञानके निष्णात डॉ. सुनीतिबाबू विद्यार्थियोंके लिअे भाषाओंके अध्ययनका क्रम अिस प्रकार रखनेका आग्रह रखते हैं; पहले मातृभाषा, दूसरे अँग्रेजी, तीसरे संस्कृत और अन्तमें हिन्दी पढ़ाअी जाय। अिस-पर किसे आश्चर्य न होगा? ध्यान रहे, संस्कृतको यहाँ अँग्रेजीके बाद तीसरा स्थान दिया गया है। अुनकी अेक यह भी दलील है कि चूँकि बंगला, मराठी, गुजराती आदि भाषाअें हिन्दीके निकट हैं, अिसलिअे अिन प्रादेशिक भाषाओंके पढ़नेवाले बालक जब हिन्दी पढ़ते हैं, तब दोनों भाषाओंके शब्दोंकी गलतियाँ करते हैं और अुनकी दशा धोबीके कुत्तेकी-सी हो जाती है। सी-अे-टी-केट बालकोंको रटानेमें अुन्हें कोअी आपत्ति नहीं। अँग्रेजी पढ़कर युवक अपनी भाषामें अँग्रेजीका बराबर व्यवहार करें और अुसे बिगाड़ें अुसमें भी अुन्हें आपत्ति नहीं, क्योंकि अिस प्रकार अुनकी दृष्टिमें वे सम्भवतः अँग्रेजीको अपना रहे हैं और यह तो कदाचित् हमारे लिअे गौरवकी बात होगी! परन्तु हिन्दीके कुछ शब्द बिगड़े हुअे रूपमें बंगलामें जाअें या, बंगलाके शब्द हिन्दीमें जाअें अिसपर अुन्हें आपत्ति है! हमारे विचारमें तो भाषाओंका अिस प्रकारका लेन-देन अेक स्वाभाविक क्रम है। और ज्यों-ज्यों प्रदेश-प्रदेशके बीच सम्पर्क बढ़ेगा, अिसे कोअी रोक भी न सकेगा। आज भी बंगला आदि भाषाओंका प्रभाव हिन्दीपर कम नहीं पड़ा है और हिन्दी भी प्रादेशिक भाषाओंपर अपना प्रभाव डाल रही है और डालेगी। यह तो हमारे लिअे स्वागत योग्य बात होगी। भारतीय संविधानमें भी अिसीका संकेत किया गया है।

जनताकी दृष्टि

अितनी स्पष्ट दिखाअी देनेवाली बातें हमारे तीक्ष्ण दृष्टि प्राप्त नेताओं अेवं विद्वानोंको क्यों नहीं दिखाअी देती? यह प्रश्न है। किन्तु अिसका कारण स्पष्ट है। हमारे नेता जनताकी दृष्टिसे अिन प्रश्नोंपर विचार नहीं करते। वे तो अपने जैसे विद्वान् तथा शिक्षित वर्गोंका ही विचार करते हैं और अुनकी सुविधा ही देखते हैं। सरकारमें, आंतर्राष्ट्रीय मामलोंमें और अैसे ही विद्वानोंके लिअे सुरक्षित दूसरे क्षेत्रोंमें वे अपनी प्रतिष्ठाको बनाअे रखनेका जितना विचार करते हैं अुतना विचार वे आम जनताकी सुविधा-असुविधाका नहीं करते। यदि वे अुनका विचार करते तो अुन्हें यह समझनेमें जरा भी प्रयत्न न करना पड़ता कि जनता द्वारा अँग्रेजी कभी अपनाअी नहीं जा सकती। मातृभाषा, प्रादेशिक भाषाअें तथा राष्ट्रभाषा हिन्दीकी शिक्षापर अिसीलिअे अधिक बल दिया जाता है क्योंकि अुससे जनतामें शिक्षाका अच्छी तरह प्रचार किया जा सकता है।

भाषानुसार प्रान्तरचनाके सिद्धान्तको काँग्रेसने स्वीकार किया और फिर भारत सर-कारने अुसे अपनाया। अिसका भी मुख्य कारण जनताकी सुविधाका विचार ही था। प्रदेशीय राज्योंके कार्यमें जिस भाषासे सुविधा होती है, जनता अुसमें अधिक दिलचस्पी लेती है। राज्यके साथ व्यवहार करनेमें भी अुसे बहुत बड़ी सुविधा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलती है। अितना ही नहीं, जनतन्त्रकी सफलताके लिअे जनताको अुसमें अधिक दिलचस्पी लेनेकी सुविधा भी होती है। परन्तु हमारे शिक्षित राजनैतिक दलोंने जनताकी सुविधाका विचार भुला दिया और प्रदेशोंके बँटवारेके लिअे झगड़ने लगे! परिणाम अुसका हमारे सामने है। यही बात अन्य क्षेत्रोंमें भी हो रही है और भारतके निर्माण कार्यमें अनेक प्रकारके रोड़े अटकाअे जा रहे हैं। किसी भी क्षेत्रमें जब हम अपनी बात चलाना चाहते हैं तब हम गाँधीजीका नाम अवश्य लेते हैं और अुनका कोअी न कोअी अुद्धरण अपने समर्थनमें ढूँढ़ निकालते हैं। परन्तु अुन्होंने हमें जो दृष्टि देखनेकी दी थी अुसपर हमने अपने आग्रह और अपनी राजनीतिका आवरण चढ़ा रखा है। गाँधीजी जब किसी भी कार्य या सिद्धांतका मूल्यांकन करते थे तब वे जनता-आम जनताके हितकी दृष्टिसे ही अुसका मूल्यांकन करते थे। क्या हमारा शिक्षित वर्ग पुनः अुस शुद्ध दृष्टिको प्राप्त करनेका प्रयत्न करेगा? अुस दृष्टिके प्राप्त होते ही अनेक प्रश्नोंका हल आप-ही-आप मिल जायगा।

—मो० भ०

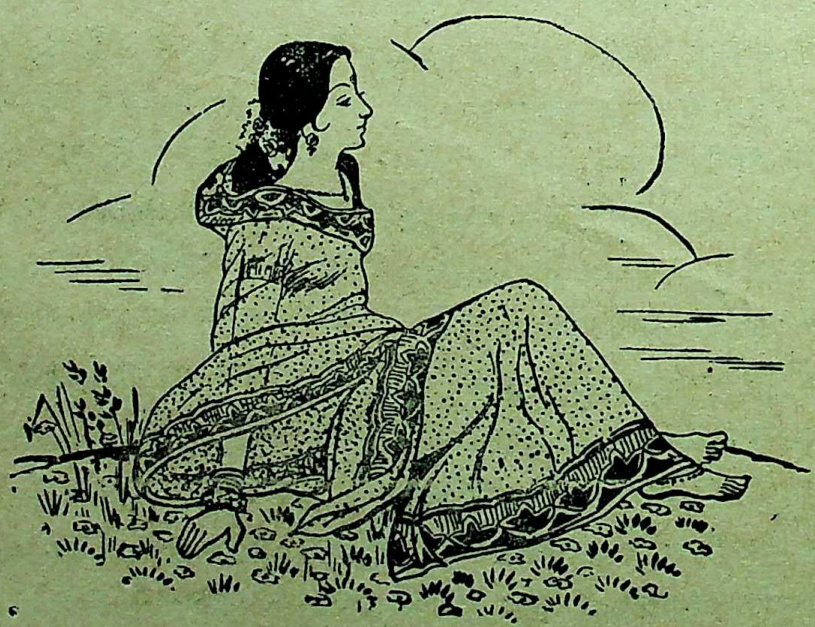

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती' के नियम और अुद्देश्य

(सम्पादकीय)

१. 'राष्ट्रभारती' प्रतिमास १ ता० को प्रकाशित होती है।

२. 'राष्ट्रभारती' भारतकी विशुद्ध अन्तर-प्रान्तीय भाषा, साहित्य और संस्कृतिकी प्रतिनिधि पत्रिका है।

३. 'राष्ट्रभारती' का अुद्देश्य समस्त अुच्च भारतीय भाषाओंके प्राचीन अर्वाचीन साहित्यका भारतकी राष्ट्रभाषा हिन्दी द्वारा रसास्वाद कराना है, जिससे वह सब भारतीयोंकी अपनी वस्तु बन सके।

४. 'राष्ट्रभारती' का दृष्टिकोण प्रगतिशील, रचनात्मक, सर्व समन्वय—सर्वोदयकारी है। अिसमें विवादग्रस्त, राजनीतिक, साम्प्रदायिक, या दल-गत नीतिके लेख आदि प्रकाशित न होंगे।

५. 'राष्ट्रभारती' में हिन्दीके साथ साथ—

(१) असमिया (२) मणिपुरी (३) बंगला (४) अुड़िया (५) नेपाली (६) काश्मीरी (७) सिन्धी (८) पंजाबी (९) गुजराती (१०) मराठी (११) तमिल (१२) तेलुगु (१३) कन्नड़ (१४) मलयालम (१५) संस्कृत (१६) अुर्दू और अन्तर-राष्ट्रीय विदेशी साहित्यिक भाषाओंकी सुन्दर ज्ञानपोषक, मनोरंजक, सुरुचिपूर्ण श्रेष्ठ रचनाअें भी प्रकाशित होंगी।

लेखक महानुभावोंसे

६. 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ, हमारे पास अपनी पूर्व प्रकाशित रचना सामग्री मत भेजिअे। जिस रचनाको आप 'राष्ट्रभारती' में भेजें अुसे अन्य हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओंमें न भेजें। अस्वीकृत रचनाको वापस पानेके लिअे दो आनेका पोस्टेज भेजनेकी कृपा करें।

७. जो कुछ मैटर प्रकाशनार्थ भेजें, साफ नागरी टाअिप कापीमें भेजें अथवा हाथकी लिखावटमें कागजके अेक ही ओर साफ सुथरी, सुवाच्य नागरी लिपिमें लिखकर भेजें। कविताओंके अुद्धरण, अवतरण आदि बहुत ही साफ लिखे होने चाहिअे। लेखक अपना पूरा-पूरा नाम और पता अवश्य लिखें।

निवेदक—

सम्पादक "राष्ट्रभारती"

हिन्दीनगर, वर्धा, Wardha (M. P.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती' को स्वावलम्बी बना दें

सविनय सूचना--यह कि प्रत्येक हिन्दी-प्रेमीका कर्तव्य है कि वह कम-से-कम 'राष्ट्रभारती' का अेक-दो ग्राहक अवश्य बना दें।

अिसलिअे कि राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रति कुछ आपका भी तो कर्तव्य है। भारतके काश्मीरसे लेकर कन्याकुमारी तक और आसामसे लेकर सोमनाथ-सौराष्ट्र तक लगभग सभी प्रतिष्ठित विद्वान् साहित्यकारोंका कहना है कि **'राष्ट्रभारती'** राष्ट्रभाषा हिन्दीमें भारतीय साहित्यकी अपने ढंगकी बहुत सुन्दर और अनूठी मासिक पत्रिका है। हाथके कंगनको आरसी क्या ? अिसी जनवरी और फरवरीके नअे अंक देखिअे न ?

साधारण वार्षिक मूल्य ६) रु. और स्कूल-कालेजों तथा लाअिब्रेरियोंके लिअे रियायत ५) रु. वार्षिक मनीआर्डरसे।

हार्दिक धन्यवाद:--हमारे अुन सभी प्रचारकों और केन्द्र-व्यवस्थापकोंको, जो ५) रु. भेजकर अिस वर्ष 'राष्ट्रभारती' के ग्राहक बन गअे हैं। और नागपुरके प्रमाणित प्रचारक श्री विजयशंकर त्रिवेदीने नअे ५ ग्राहक बनाअे हैं। धन्यवाद !

निवेदक--

व्यवस्थापक, **'राष्ट्रभारती'**

हिन्दीनगर, वर्धा (म. प्र.)

मुद्रक तथा प्रकाशक:—मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

मार्च
१९५६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ६] राष्ट्रभारती, विषय-सूची मार्च-१९५६ [अंक ३

[बिहार, मध्यप्रदेश, भोपाल, सौराष्ट्र आदि राज्योंके शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत पत्रिका]

❀ अिस अंकमें पढिअे ❀

('राष्ट्रभारती' के प्रत्येक अंकका हर अेक पृष्ठ पठन-मनन योग्य ठोस सामग्रीसे पूर्ण रहता है)

	लेखक	पृ० सं०
१. लेख :		
१. बापूकी अमर मुसकान ...	श्री शिवचन्द्र नागर	१४३
२. हमारी राष्ट्र-भाषा हिन्दी (मराठी) ...	श्री ग. त्र्यं. माडखोलकर अनुवादक–श्री रा. र. सर्वटे	१४४
३. जब माता जगन्माता बनीं (तमिल) ...	स्व. श्री 'कल्कि' अनुवादक–श्री रा. वीळिनाथन्	१४७
४. कवितापर कुछ विचार (गुजराती) ...	श्री रतिलाल त्रिवेदी अनुवादक–श्री जयेन्द्र त्रिवेदी	१५०
५. हिन्दी साहित्य और श्रीमद् वल्लभाचार्यका भक्तिमार्ग ...	गोस्वामी श्री व्रजभूषण महाराज	१५५
६. अेक हृदय हो भारत जननी ...	श्री कालिदास कपूर	१६४
७. तेरे द्वार अनन्त हैं ...	श्री अनन्तकुमार 'पाषाण'	१७५
८. खलील जिब्रानका जीवन दर्शन ...	श्री प्रेमकपूर कंचन	१८७
९. 'ट्रिलाजी' नाट्य-शैली और "क्रान्तिकारी" ...	श्री 'भृंग' तुपकरी	१९०
१०. मराठीका पहला सॉनेट ...	श्री अनिलकुमार	१९४
२. कविता :		
१. मैं जड़में जीवन भर दूँगा ! ...	श्री शेखर	१७२
२. तट, छोड़ो बाँह ! ...	श्री रामकृष्ण श्रीवास्तव	१७३
३. आदमी आदर्शपर ही जी रहा है ...	श्री सिद्धनाथकुमार	१७४
३. कहानी :		
१. पिताको देखनेपर (मलयालम) ...	श्री अेस. के. पोट्टक्कार अनुवादक–कु. अे. पद्मिनी,	१८१
२. बच्चोंकी सूझ (मराठी) ...	डॉ. अ. वा. वर्टी अनुवादक–श्री रा. र. सर्वटे	१९६
४. देवनागर : ...	(मराठी, बंगला, अुर्दू)	२०५
५. साहित्यालोचन : ...	प्रो. रामचरण महेन्द्र	२०८
६. सम्पादकीय : ...	...	२११

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

रियायत— समितिके सभी प्रमाणित प्रचारकों, केन्द्र-व्यवस्थापकों और स्कूल-कालेजों तथा सार्वजनिक पुस्तकालय-वाचनालयोंको अेक वर्षतक केवल ५) रु. वार्षिक चन्देमें मिलेगी।

पताः—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[समग्र भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

वर्ष ६] मार्च–१९५६ [अंक ३

बापूकी अमर मुसकान

श्री शिवचन्द्र नागर

मुझे बापूका अधिक निकटका सम्पर्क तो प्राप्त नहीं हुआ, पर दूरसे अुनके दर्शन करनेका सौभाग्य जब-जब मुझे मिला तो मेरे मनपर सबसे गहरी छाप अुनकी बच्चोंसे भी सरल अेवं दिव्य मुसकानकी पड़ी है। कहते हैं कि युवकोंके हृदयपर सुन्दर युवतियोंकी मुसकानका ही सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है, और कभी-कभी तो वह मुसकान अनेकोंके प्राणोंमें अुनके जीवनकी प्रथम और अंतिम मुसकान बनकर रह जाती है। बापूकी मुसकानमें असर तो वैसा ही था पर वह बच्चे, बूढ़े, युवक, युवतियाँ सभीको अेक-सा प्रभावित करती थी। अुसमें अेक अैसा शान्त सुधा-रस लहरें मारता था, कि अुसका पल भरका सम्पर्क ही व्यक्तिकी चेतना अुद्बुद्ध कर अुसे अुच्च मनोभूमिपर अवस्थित करनेके लिअे यथेष्ट था।

जब मैं अपने मनपर अमिट रूपसे अंकित कुछ स्मृति-रेखाओंपर दृष्टिपात करता हूँ तो प्रसादजीके आँसू की निम्न पंक्तियाँ सहज ही मेरी स्मृतिसे टकरा जाती हैं :—

है (थी) अेक रेखा प्राणोंमें
जो अलग रही लाखोंमें।

बापूकी अमर मुसकानकी रेखाअें अुन सब रेखाओंमें आज भी सबसे अलग हैं।

बापूकी मुसकान हिमाचलके अुत्तुंग शिखरोंसे अुतरनेवाली श्वेत शीतल मन्दाकिनीके समान थी, जिसके पुलिनोंपर खड़े होकर संसार शान्तिका अनुभव करता था, और जिसकी तेज धारामें बड़े-से-बड़े पत्थरोंकी कठोर चट्टानें भी चूर-चूर हो जाती थीं।

बापूकी मुसकान दुखीके लिअे आश्वासन थी। त्रस्तके लिअे संरक्षण थी, पीड़ितके लिअे रंजन थी, पतितके लिअे अुत्थान थी और दलितके लिअे अवलंबन थी।

बापूकी मुसकान आस्तिकके लिअे चन्दन थी, नास्तिकके लिअे श्रद्धाका स्पंदन थी।

बापूकी मुसकान राजनीतिके लिअे युग चेतना थी। साहित्यके लिअे वन्दना थी, कलाके लिअे प्रेरणा थी।

बापूकी मुसकान सचमुच मानवताका दर्पण थी, अहिंसाका महाकाव्य थी और शान्तिका सृजन करनेमें परम अुपयोगी अणुशक्तिका सदुपयोग थी। बापूकी अुस सरल और अुत्फुल्ल निश्चल निर्मल मुसकानकी रेखाअें मेरे प्राणोंमें आज भी कल जैसी ही अुजली और घुली हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी राष्ट्र-भाषा हिन्दी

—श्री गजानन त्र्यंबक माडखोलकर

अपनी राष्ट्रभाषाके विषयमें बातें करना सचमुच मैं अपनी माँके विषयमें ही बातें करनेके समान मानता हूँ।

भारतीय विधान द्वारा हिन्दीको राष्ट्र-भाषा और नागरी लिपिको राष्ट्र-लिपिका स्थान देकर अब छह वर्ष हो रहे हैं। परन्तु भारतीय विधान द्वारा हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपिको यह स्थान दिअे जानेसे पहले ही, जनता और जन-नायकोंने यह स्थान राष्ट्रभाषा और राष्ट्रलिपिको स्वयंस्फूर्तिसे बहुत वर्ष पहले ही दे दिया है। महामना मालवीयजी और लोकमान्य तिलकने पचास वर्ष पहले काशीके राष्ट्रीय महासभाके अधिवेशनमें गंगाजीके पावन तटपर यह घोषणा की थी और अुसके बाद पिछली आधी सदी तक करोड़ों कण्ठोंसे अिसी घोषणाकी प्रतिध्वनि गूँजती रही। भारतके स्वतन्त्र हो जानेपर, सिर्फ अितना ही हुआ कि अर्ध शताब्दी पहले जनता जो फैसला कर चुकी थी अुसपर विधानने अपनी कानूनी छाप लगा दी। जनता द्वारा किअे गअे निर्णयको जनता द्वारा निर्मित विधानने मान्यता दी और अुसे कार्य रूपमें परिणित करनेका प्रयत्न आरम्भ कर दिया। बस, अितना ही हुआ।

वास्तवमें, विधानने तो भारतकी तेरह भाषाओंको राज्य-भाषाके रूपमें स्वीकार किया है और यह भी कहा है कि हर प्रान्तमें वहाँकी प्रान्तीय भाषा ही, जो वहाँके लोगोंकी मातृ-भाषा है, राज्य-भाषा मानी जाअे और अुस प्रान्तका शासन और वहाँके सब व्यवहार प्रान्तकी मातृ-भाषाके द्वारा ही सम्पन्न हों। प्रान्तीय भाषाओंके विषयमें विधानकी अिस धारणाको स्वाभाविक और अुचित ही कहना होगा।

तब सवाल यह अुठता है कि फिर हिन्दीको राष्ट्र-भाषाकी हैसियतसे जो स्थान दिया गया है, वह क्यों? और जब कि विधानने देशकी तेरहों भाषाओंको मान्यता दे दी है, तो फिर अकेली अेक हिन्दीको ही अितना देश-व्यापी महत्पद क्यों दिया गया है?

मेरे विचारसे अिन दो प्रश्नोंमेंसे यदि हम पहले प्रश्नका अुत्तर दे दें, तो दूसरे प्रश्नका अुत्तर आप-ही-आप मिल जाता है।

भारत जिस प्रकार अन्य सब बातोंमें भिन्नताओंसे भरा हुआ है, अुसी प्रकार यहाँकी भाषाओं और बोलियोंमें भी बड़ी विविधता पाअी जाती है। यहाँ प्रत्येक प्रान्तकी ही केवल अलग भाषा हो, सो बात नहीं है। बल्कि हम देखते हैं कि यहाँ प्रत्येक जमातकी भी साधारणतः अपनी-अपनी अेक खास अलग बोली है। परन्तु भाषा और बोलीकी अेक प्रकारकी अिस अपरिमित भिन्नताको भी अेकताका आधार है। अुनमेंसे अेक ही सांस्कृतिक जीवन-रसका प्रवाह अखण्ड रूपसे बहता हुआ हमें दिखाअी देता है। अिस अेकताकी पहली बात यह है कि अिन सब भाषाओंका अुद्गम संस्कृत भाषासे हुआ है और दूसरी बात यह है कि अिन सब भाषाओंने संस्कृत भाषासे ही सब प्रकारकी स्फूर्ति प्राप्त की है। मुझे ज्ञात है कि दक्षिण भारतकी द्राविड़ भाषाअें संस्कृतोद्भव नहीं हैं। वे संस्कृत भाषासे भले ही अुत्पन्न न हुअी हों; फिर भी वे संस्कृत भाषासे संस्कारित और प्रभावित हैं यह हमें नहीं भूल जाना चाहिअे। और तो और, अुर्दू भाषा जो कभी-कभी और कहीं-कहीं हिन्दीकी प्रतिस्पर्धी मानी जाती है और जो हिन्दीकी ही अेक नअी शैली है, जिसकी पैदाअिश मुगल कालमें हुअी, अुसका भी हिन्दीसे रक्त-मांसका नाता जुड़ा हुआ है। अिसीलिअे मैं कहता हूँ कि भारतमें अनेक भाषाअें और बोलियाँ भले ही हों फिर भी अुनकी विविधताओंको अेकताका आधार है। अिन सबकी विविधताओंमेंसे अेक ही सांस्कृतिक जीवन-रसका प्रवाह अखंड रूपसे बहता चला आया है।

परन्तु अिन तेरह भाषाओंमें यदि कोअी अैसी अेक भाषा है जो आसेतु हिमाचल तक फैली हुअी है तो वह सिर्फ हिन्दी है। हिमालयसे लेकर नर्मदा नदी तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुसका प्रचार और प्रभुत्व दोनों अप्रतिहत हैं। परन्तु अुसके अिस प्रभुत्वमें भी जो अेक वैचित्र्यपूर्ण विविधता है, वह अुसके लचीले स्वरूपपर सुन्दर प्रकाश डालती है। राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डनने अेक बार अुसके अिस वैचित्र्यका वर्णन करते हुअे यह मार्मिक विधान किया था कि—"अैसा समझा जाता है कि अुत्तर भारत सम्पूर्णतया हिन्दी भाषा-भाषी है और यह बात सच भी है। परन्तु अिसके साथ ही अेक बात ध्यानमें रखनी चाहिअे और वह यह कि अुत्तर भारतके भिन्न-भिन्न प्रदेशोंके लोग अपनी-अपनी विशिष्ट हिन्दी बोलते हैं और अुस हिन्दीको अुस-अुस प्रदेशका अेक खास और भिन्न नाम भी है। मुझे यदि आप पूछें कि—"आपकी मातृ-भाषा क्या है?" तो मैं झटसे अुत्तर दूँगा—"मेरी मातृ-भाषा अवधी है।" परन्तु अवधी कोअी भिन्न भाषा या बोली नहीं है। वह हिन्दीका ही अेक अत्यन्त प्राचीन और पुराना रूप है। अिसलिअे मैथिली, बुन्देल-खंडी, भोजपुरी, राजस्थानी अित्यादि भिन्न-भिन्न प्रकारकी बोलियाँ बोलनेवाले हम सभी लोग अपने आपको हिन्दी भाषा-भाषी कहते हैं। क्योंकि ये सभी बोलियाँ हिन्दीके ही प्रदेश-विशिष्ट रूप हैं। राजर्षि टण्डनने हिन्दीके भिन्न-भिन्न गुटोंका जो यह वर्णन किया है वह वास्तवमें बिल्कुल यथार्थ है। यही नहीं, बल्कि भारतवर्षकी राष्ट्रभाषा होनेके लिअे हिन्दीके जो विशेष गुण कारणी-भूत हुअे हैं अुनमें अेक प्रमुख विशेष गुण, अिस भाषामें प्रदेश-विशिष्ट बोलियोंकी प्रचुरता है। क्योंकि अिन बोलियोंके कारण भारतके भिन्न-भिन्न भागोंके नाना प्रकारके प्रान्तीय शब्द अुसमें समाविष्ट हो गअे हैं जिससे अुसका शब्द भंडार अपरंपार बढ़ गया है और अुसमें विलक्षण लचीलापन आ गया है। मैं यह भी कहूँगा कि हिन्दी लोचलचकवाली भाषा होनेके कारण ही वास्तवमें वह भारतके किसी भी प्रान्तमें सरलतासे समझी जा सकती है, सरलतासे बोली भी जा सकती है और अिसलिअे अुसे भारतकी अन्य किसी भी भाषाकी अपेक्षा राष्ट्रभाषा बनाना सुलभतासे संभव हो गया है।

मैं यह जानता हूँ कि कृष्णा नदीके दक्षिणमें विशेषतः तमिलनाडमें हिन्दीके लिअे आज थोड़ा विरोध है और अिसके लिअे यह दलील पेश की जाती है कि हिन्दी संस्कृतोद्भव भाषा होनेके कारण द्राविड़ भाषाओंकी प्रकृतिसे मेल नहीं खाती। परन्तु यह दलील बिल्कुल लचर है। पहली बात तो यह है कि द्राविड़ भाषाअें संस्कृतसे भले ही न निकली हों, पर वे संस्कृत-प्रचुर हैं और अुनका सम्पूर्ण विकास संस्कृत भाषाके सम्पर्कसे हुआ है। अिसलिअे भरतखण्डके अन्य प्रान्तोंकी तरह दक्षिणके प्रदेशोंमें भी हिन्दी बिल्कुल सुलभतासे प्रचार पा जाअेगी, अिसमें मुझे सन्देह नहीं मालूम होता। सारांश यह कि भारतके सबसे अधिक लोगों द्वारा बोली जानेवाली और सबसे अधिक प्रदेशोंमें फैली हुअी हिन्दी भाषाका स्थान भारतवर्षमें अद्वितीय है और अिसीलिअे भारतीय भाषाओंमें, राष्ट्रभाषाके लिअे हिन्दीको ही अग्रपूजाका सम्मान देनेमें हमारे संविधानने केवल वस्तु-स्थितिको ही ध्यानमें रखा है।

परन्तु, आज हिन्दीको राष्ट्रभाषा होनेका जो गौरव और महत्व प्राप्त हुआ है वह सिर्फ अुसके प्रचारके कारण ही नहीं, बल्कि अुसकी सांस्कृतिक विरासत भी अुतनी ही बड़ी होनेके कारण है। यह विरासत अुसकी कौन-सी है? यदि हम भाषाओंके विकासका क्रम और अुनकी विशेषताओंको देखें तो हमें यह दिखाअी देता है कि किसी-न-किसी अेक महान लेखकके कारण वह भाषा चिर-सम्पन्न होकर जागतिक मान्यता प्राप्त करती है। यदि संस्कृतका अुदाहरण लें तो हम देखेंगे कि आर्य संस्कृतिको वाल्मीकि और व्यासके कारण और अभिजात संस्कृतको कालिदास और भवभूतिके कारण प्रतिष्ठा प्राप्त हुअी है। पाश्चात्य भाषाका अुदाहरण लें तो यही कहना होगा कि अंग्रेजीकी प्रतिष्ठा शेक्सपियर और मिल्टनपर अवलंबित है। हम जब मराठी भाषाके बारेमें विचार करते हैं तो अुस समय मराठीको स्थिरता और प्रतिष्ठा प्राप्त करा देनेवाला अेक ही कवि हमारी दृष्टिके सन्मुख अुपस्थित होता है और वह है ज्ञानेश्वर। यदि हिन्दीके बारेमें विचार करें तो यह कहना पड़ता है कि हिन्दीकी प्रतिष्ठाके मूलाधार श्री गोस्वामी तुलसीदासजी हैं। अुनके द्वारा लिखी रामायण भारतका राष्ट्रीय महाकाव्य है। केवल महाकाव्य ही नहीं, किन्तु लोक-काव्य भी है। क्योंकि अिस महाकाव्यमें अिस प्राचीन देशकी संस्कृति, श्रद्धा और तत्वज्ञान तीनोंका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुन्दर सम्मिलन होकर अुसमें भारतीय जनताकी आत्मा संपूर्ण रूपसे आविभूत हो गअी है। वाल्मीकिकी लिखी रामायण अत्यन्त प्राचीन अैतिहासिक आदि काव्य है, पर अुस महाकाव्यके प्रवाहको जनताके दैनिक जीवनके साथ मिलाकर अुसे राष्ट्रीय लोक-काव्यका विशाल स्वरूप यदि किसीने दिया है तो वह तुलसीदासजीने ही; और अुसकी यह विशालता हिमालयके समान और गंगा और ब्रह्मपुत्रा जैसी हमारी राष्ट्रीय नदियोंके समान है। तुलसीदासने अिस काव्यकी रचना यद्यपि हिन्दीमें की है फिर भी अुसकी भाषाके कारण भारतके अन्य प्रदेशोंमें अुसके प्रचारमें कोअी बाधा नहीं आअी। यही नहीं, किन्तु यद्यपि अुसका अनुवाद अन्य सभी भारतीय भाषाओंमें हो गया है फिर भी भारतने तुलसीकृत रामायणको ही अपना लोक-काव्य माना है। मुझे तो प्रायः अैसा लगता है कि यदि हम हिन्दीका प्रसार, अुसकी सुबोधता, अुसका लचीलापन, अुसके समावेशन आदि सब बातोंको छोड़ भी दें और सिर्फ तुलसीकृत रामायणको ही लें, तो अिस अेक महान लोक काव्यके कारण ही हमें हिन्दीको राष्ट्र-भाषाका स्थान देनेके लिअे तैयार हो जाना चाहिअे।

हिन्दीके अिस राष्ट्रीय महत्वको, यदि मैं कहूँ कि महाराष्ट्रने बहुत पहले पहचान लिया था तो अतिशयोक्ति न होगी। यही नहीं, बल्कि दक्षिण हिन्दुस्थानमें हिन्दीके राष्ट्रीय महत्वको पहचाननेवाला और अुस महत्वको महसूस कर पिछले आठ-सौ वर्षोंसे अुसकी सेवा करता आ रहा यदि कोअी प्रदेश है, तो वह महाराष्ट्र ही है। नामदेवसे लेकर मोरोपंत तक बहुधा सभी पुराने मराठी कवियोंने हिन्दी भाषामें काव्य रचना की है। नामदेवकी कविताओंको तो सिक्ख समाजके महान् धार्मिक ग्रन्थ "श्री गुरु ग्रन्थ साहब" में सम्मानीय स्थान प्राप्त हुआ है। आधुनिक कालमें स्वर्गीय पण्डित माधवराव सप्रेसे लेकर स्वर्गीय बाबूराव पराड़कर तक अनेक श्रेष्ठ महाराष्ट्रीयोंने अपनी लेखन कुशलतासे हिन्दीकी पत्र-कारिता और ग्रन्थ-रचना दोनोंको विकसित और परिपुष्ट किया है। पचास वर्ष पहले जब काशीजीमें गंगाके तटपर हिन्दीको राष्ट्र-भाषा और नागरीको राष्ट्र लिपि घोषित किया गया, तबसे तो महाराष्ट्रने हिन्दीका समर्थन और प्रसार अत्यन्त निष्ठासे किया। अनेक तरुण मराठी लेखकोंने हिन्दी साहित्यको समृद्ध करनेका बीड़ा अुठा लिया। जब महात्मा गांधीने राष्ट्र-भाषाके प्रचारका कार्य अपने हाथमें लिया तबसे आचार्य विनोबा भावे और आचार्य कालेलकरने गांधीजीके अिस कार्यमें बड़ी आत्मीयतासे हाथ बटाया और अपनी मातृभाषा मराठीकी तरह ही बड़ी लगनसे अुन्होंने हिन्दीकी भी आजतक सेवा की है। आचार्य विनोबाजीने कहा है— "हर-अेक भारतीय अपनी दो आँखोंसे देखेगा। अेक होगी मातृभाषा दूसरी होगी राष्ट्रभाषा हिन्दी।" अुनकी अिस आदेश बाणीको दृष्टिके सन्मुख रखकर ही महाराष्ट्रकी जनता और कार्यकर्ता अपनी आठ सौ वर्षोंकी परम्पराके अनुसार हिन्दी भाषाके प्रचार और अुत्कर्षके लिअे आज जी-जानसे कोशिश कर रहे हैं।

भारतीय लोकतत्रको यदि अडिग अेवं सुदृढ़ और सर्वव्यापी बनाना है तो विधानके आदेशानुसार आगामी दस वर्षोंमें आसेतु हिमाचल सर्वत्र हिन्दीका प्रचार हो जाना चाहिअे। और सब अन्तरप्रान्तीय व्यवहारोंके लिअे हिन्दी ही सर्वत्र माध्यम बन जाना चाहिअे। भरतखंड जैसे विशाल देशमें लोकतंत्रके ज्ञानको समाजके आखिरी तबके तक पहुँचानेके लिअे और देशके प्रत्येक व्यक्तिको राजकीय जिम्मेवारीकी जानकारी देनेके लिअे जनतामें देशी भाषाओंका ही अुपयोग किया जाना चाहिअे और अिसलिअे भारतके प्रत्येक प्रान्तको प्रान्तीय भाषाओंके साथ ही हिन्दीका भी पोषण अत्यन्त निष्ठासे करना चाहिअे। लोकतंत्रके तत्वज्ञान और कारोबारके प्रचारके लिअे हिन्दी भाषाको सार्वदेशीय साधन बनानेमें ही अिस देशका कल्याण है। अिस बातको ध्यानमें रखकर ही हम सब भारतीयोंको फिर हमारा प्रान्त या हमारी मातृभाषा कोअी भी क्यों न हो हिन्दीके अुत्कर्षके लिअे जी-जानसे कोशिश करनी चाहिअे।*

---

* गत स्वातंत्र्य दिवस महोत्सव १५ अगस्तके अुपलक्षमें नागपुर आकाशवाणीपर ता. १४-८-५५ को मराठीमें दिअे हुअे, यशस्वी मराठी साहित्यकार अेवं 'तरुण-भारत' मराठी दैनिकके सम्पादक श्री माडखोलकरजीके भाषणका अविकल अनुवाद।

(अनुवादक—श्री रामचन्द्र रघुनाथ सर्वटे)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब माता जगन्माता बनीं

—स्व. श्री 'कल्कि'

१९४३ की २२ फरवरी ! माता कस्तूरबा छूट गअीं ! आंगाखाँके महलसे ? नहीं—

भारतकी नौकरशाही ब्रिटिश सरकारके कारावास तथा अिस भौतिक देहके कारावास, दोनोंसे अेक साथ छूट गअीं !

पवित्र महाशिवरात्रीका दिन, बाके पावन प्राण अिस मृत्युलोकको तजकर स्वर्गलोक सिधार गअे !

माता कस्तूरबाकी पवित्र देह अग्निदेवकी आहुति बनी और जल-बलकर राखकी ढेरी हो गअी !

अुनकी अस्थियाँ मंगलमअी गंगा मैयाके पुनीत प्रवाहमें मिल गअीं !

अग्निदेवता और गंगा मैया मिलकर निष्कलंकित हुअे; पतितपावन हुअे !

माता बाके मंगलमय गमनसे अमरलोक भी नवीनतम पवित्रताकी पात्रताको प्राप्त हुआ !

❀ ❀ ❀

हिन्दू धर्मावलम्बी सती साध्वी स्त्रियाँ, जिस अमर मृत्युकी आकांक्षा करती हैं, अुसी परम पावन भाग्यको माता कस्तूरबाने पाया ।

माथेपर सुहागकी कुंकुम बिन्दी धारण किअे, पतिदेवके अंकमें सिर रखे, लेटे-ही-लेटे माता कस्तूरबाके प्राण महाप्रस्थानको चल पड़े !

सीता, सावित्री, शैब्या, कण्णकी जैसी भारतीय पतिव्रता सतीसाध्वी नारियोंकी तरह माता कस्तूरबा भी आज देवी माता होकर विराजमान हैं !

अिसमें जरा भी संदेह नहीं; कि जबतक हिमालय और गंगाके नाम अिस धरापर विराजमान रहेंगे, तबतक माता कस्तूरबाका नाम भी अिस देशमें चिर अमर रहेगा ।

❀ ❀ ❀

कन्या कस्तूरबाने छुटपनकी अज्ञान अवस्थामें श्री मोहनदास करमचन्द गांधीके गलेमें माला पहनाअी थी, और अुनका हाथ पकड़ा था । यह कहकर कि धर्मे कामे नाति चरामि । तबसे अबतक अपने जीवनकी अन्तिम यात्राके छोर तक बा बापूकी सच्ची जीवन संगिनी, सहधर्मचारिणी तथा पति-सेवा-निरत पत्नी रहीं !

कस्तूरबाकी स्कूली शिक्षा अधिक नहीं थी । लेकिन सहस्त्रों वर्षोंसे चली आ रही परंपरागत भारतीय संस्कृति तथा कर्तव्य परायणता अुनमें अच्छी तरहसे जड़ पकड़ गअी थी । फलस्वरूप वे शिक्षा-दीक्षासे संपन्न अपने जीवन साथी बैरिस्टर स्वामीके साथ समत्व भावनासे युक्त सुन्दर जीवन बिता सकीं !

महात्मा गांधीने कस्तूरबाको जो दुस्सह दुख दिअे थे, अुसकी तुलना सत्य हरिश्चन्द्र द्वारा सती शैब्याको दिअे हुअे कष्टोंसे ही की जा सकती है ।

हरिश्चन्द्रने सत्यकी रक्षा और परीक्षाके लिअे स्वयं दुस्सह दुख भोगे थे तथा अपनी अर्धांगिनी शैब्याको भी अकथनीय कष्ट दिअे थे ।

महात्मा गांधीने भी कठिन सत्य साधनामें लगकर अपने आपपर अनेकों संकटोंके पहाड़ अपने हाथों अूपर पटक लिअे थे ।

सत्यकी साधनाके प्रति अदम्य अुत्साह होनेके कारण, महात्माजी अपनेपर ढहनेवाले अुन असंख्य संकटोंको आसानीसे झेल सके !

पर कस्तूरबाने तो, अपनेमें वैसे अुत्साहोंका अभाव होनेपर भी, पतिदेवकी पदानुसारिणी होकर, पतिके कष्टोंकी भट्टीमें अपनेको भी झोंक दिया था !

माता कस्तूरबाकी रगोंमें, हिन्दू धर्मके प्रति अटल अविरल भक्ति-श्रद्धाकी भावना प्रवाहित होती थी । फिर अुन्होंने पति-भक्तिकी बलिवेदीपर अपनी भावनाओंकी सहर्ष बलि दे दी थी ।

बैरिस्टर गांधीने जब पाश्चात्य सभ्यताका अनुकरण किया, तब बाने भी अुनका पदानुसरण किया । सत्यशोधक गांधीने जब सरल जीवनको अपनाया तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कस्तूरबाने भी वही सादगी अपनाअी। खाद्य अन्न-सामग्री परिशोधक गांधीजीने जब चने और सब्जीपर अपना जीवन यापन करना शुरू किया तब बाने भी अुन्हीं खाद्य सामग्रियोंका सेवन किया !

बैरिस्टर गांधीने जब महलोंमें वास किया तब बाने भी महलोंको अपना निवास स्थान बनाया। महात्माजीने जब आश्रम जीवनमें कुटीर निवास लिया तब बाने भी आश्रमकी अध्यक्षा बनकर रसोअीका काम अपनाया।

श्री मोहनदास गांधीने जब जहाजपर चढ़कर विदेश प्रवास करनेकी ठानी, तब बाने भी अुस प्रवासमें पतिका साथ दिया। दीनबन्धु गांधीने जब अस्पृश्यताके असुरको मारकर हरिजनोंकी शुश्रूषा-परिचर्या सेवा आरम्भ की, तब कस्तूरबाने अपने दिलसे परम्पराकी संस्कारगत घृणाको निकालकर दूर फेंक दिया और हरिजन-सेवामें अपनेको लगा दिया। हरिजन बालिकाओंको पुत्रीवत् पाला-पोसा।

सत्याग्रह आन्दोलन आरम्भ कर जब महात्मा गांधी जेल गअे तो, बाने भी खुशी-खुशी जेल-जीवन अपनाया !

महात्मा गांधीने बाको अिससे भी कठिन कठोर परीक्षाओंमें कअी बार कसौटीपर कसा।

'अिक्कीस दिनका अुपवास', 'मृत्यु पर्यन्त अुपवास'—अिस तरहके महात्मा गांधीने कितने ही अुपवास किअे। अुन प्रसंगोंमें अुनकी देह अितनी दुर्बल, क्षीण हो गअी कि हमारे शब्द अुसे व्यक्त नहीं कर सकते। अस्थि चर्ममय अुनकी ठठरीको देखकर बाको अनेकों बार अपने कलेजेको पत्थरसे भी कठोर बनाना पड़ा है! सहनशक्तिकी चरम सीमा पार करनी पड़ी है।

महात्माकी आज्ञाओं तथा अुनकी सेवा-टहलका भार अपने अूपर आ पड़नेकी वजहसे, बा अनशनमें अपने पतिका साथ नहीं दे पाअीं।

लेकिन अुन अवसरोंपर जीवन धारणके लिअे जितने आहारकी आवश्यकता होती अुतना ही खातीं, —याने अेक जून आधा पेट खातीं और सदासर्वदा पति-सेवामें निरत रहतीं !

हिन्दू-धर्मके प्रति बाका अडिग-अमिट विश्वास था। अतः महात्माके अनशनने अुनके चित्तमें बड़ी भारी चिन्ता पैदा कर दी थी। वे मन-ही-मन भगवानसे प्रार्थना करतीं।

माता कस्तूरबाके सुहाग-बलने हर बार महात्माको अनशनकी विपत्तिसे बाल-बाल बचाया है।

सत्यवानके प्राण सावित्रीने जैसे बचाअे थे, वैसे ही बाके तपोबलने महात्माके जीवनकी रक्षा की।

'पतिके पहले, कुंकुम तिलकके साथ मैं मर जाअूँ !'—बाके दिलका यह मनोरथ आखिर पूरा ही होकर रहा।

माता कस्तूरबा जीवनमें जैसी भाग्यवती रहीं, वैसे ही मरण वेलामें भी भाग्यशालिनी हुअीं; अिसमें जरा भी सन्देह नहीं।

❀ ❀ ❀

लेकिन दुखकी बात यह है कि महात्माकी साठ सालकी सहचरी अेक सती साध्वी अुत्तम पत्नी कस्तूरबाने आगाखाँके कारागृहमें ही प्राण त्यागे। अिस दुष्परिणामके अुत्तरदाता कौन है ? और अुसके बारेमें क्या कहा जाअे ?

भारतके ब्रिटिश साम्राज्य शाही शासनके लिअे यह अेक भयंकर कलंक सिद्ध हुआ, असह्य राष्ट्रीय अपमान ! अकथनीय लज्जा, अेक अविस्मरणीय महान पातक !

लेकिन ये कलंक और अपमान, लज्जा और पातक क्या केवल ब्रिटिश सरकारके ही हैं ?

हम चालीस करोड़ भारतीय जो जीवित हैं, हमारे सिर कोअी कलंक नहीं लगेगा ?

लगेगा, जरूर लगेगा।

"सन् १९४३ में भारतमें चालीस करोड़ लोग जीवित थे जो अुन्हें 'माता कस्तूरबा' कहकर आदरसे संबोधित करते थे, अुन्हें जिन्होंने जेलमें मरने दिया!"—यह अपयश कभी हमारा पीछा न छोड़ेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माता कस्तूरबाको जेलमें मरवाकर हम अपने काले कृत्योंसे बाज आअे कहाँ हैं ?

"हाय ! माता कस्तूरबा हमें अनाथ छोड़कर चली गअी हैं । महात्मा गान्धी तो महान् आध्यात्मिक पुरुष हैं । वे अपने दिलको किसी तरहसे दिलासा दे लेंगे । लेकिन हमें सांत्वना देकर दुख भुलानेवाला कौन है ?"– अिस प्रकार झूठा रोना रोते हैं !

हमारा सामाजिक जीवन अितना मिथ्या-जीवन हो गया है !

नेताओंकी बलि देकर स्वयं नेता बनना चाहते हैं, स्वार्थ लाभ करना चाहते हैं ।

सोचते यह है कि नेताओंके जेलमें सड़ने या मरनेसे भारत स्वतंत्र हो जाअे तो कितना अच्छा हो ।

सत्यमूर्ति अेक, महादेव देसाअी दो, आर. अेस. पंडित तीन, कस्तूरबा चार,–अिस तरह हिसाब जोड़ते जाते हैं !

हममें अैसे भी कुछ पापी अधम जीव हैं । वे कामना करते हैं कि हमारे नेता लोग जेलमें ही सड़ते रहें ताकि अिस युद्धकालमें वे अपने घरोंमें धनके ढेर लगा दें ।

"अेकताका मार्ग ही राजमार्ग है !" महाकवि सुब्रम्हण्य भारतीके अिस कथनका स्मरण दिलाकर राजाजीने लोगोंको बुलाया, "आअिअे, अुसी रास्तेपर जाअेंगे !"

सांसारिक जीवनसे मुक्त होकर भगवानके पदारविन्दोंकी शीतल छत्र-छायामें रहनेवाली साध्वी माँ कस्तूरबा अुस दिन जगत् जननी बनी । अुनकी कृपा-दृष्टि पड़े तो असम्भव भी सम्भव हो सकता है ? माता कस्तूरबाकी जय हो !

[माता कस्तूरबाके निधनपर तमिलके प्रसिद्ध साप्ताहिक 'कल्कि' के १-३-४३ के अंकमें स्वर्गीय श्री रा. कृष्णमूर्ति 'कल्कि' द्वारा लिखित सम्पादकीय लेखका श्री रा. वीळिनाथन् द्वारा संक्षिप्त हिन्दी रूपान्तर]

हिन्दी साहित्यमें स्पृहणीय वृद्धि

प्रतिभा

का

कहानी विशेषांक

आगामी जुलाअी १९५६ को प्रकाशित हो रहा है ।

हिन्दीकी प्रतिनिधि कहानियों अेवं अन्य भाषाओंकी महान कहानियोंका अमूल्य संग्रह ।

मूल्य १ रुपया

प्रकाशक

प्रतिभा प्रकाशन लिमिटेड

वर्धा रोड, नागपूर १

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवितापर कुछ विचार

—श्री रतिलाल त्रिवेदी

कवि अपनी कल्पनाका ही गान करता है। कल्पना ही काव्यका प्राण है। मनुष्यको मिले हुअे सभी वरदानोंमें कल्पना श्रेष्ठ है। वह बुद्धिका सूक्ष्मतम स्वरूप है। विश्वके निगूढ़ सौन्दर्योंके आच्छादनोंको हटाकर वह यथार्थ और आदर्श दोनोंको दिखलाती है। परिचित वस्तुओंमें वह दिव्यताका दर्शन कराती है और प्रतिदिनकी सामान्य घटनाओंमें अलौकिक रस भर देती है। हमारी अिन्द्रियाँ वस्तुओंके बाह्य रूपको ही ग्रहण करती हैं परन्तु कल्पना द्वारा हम अुन्हीं वस्तुओंके अुच्चतर, सुन्दर और सनातन स्वरूपको पाते हैं।

कवि किसी अनिर्वचनीय पूर्णताके लिअे बेचैन है। सत्य और विशुद्धिके किसी अूँचे-से-अूँचे धवलगिरिपर पहुँचनेके अुसके अरमान हैं। कविकी प्रतिभाके प्रकाशसे अेक मामूली स्वल्पजीवी पुष्प भी सनातन कारुण्यका विषय बन जाता है, अेक अज्ञात मानव हृदयका दुख-संवेदन आँसूके सागरको छलकाता है; घनघोर मध्यरात्रिमें वह अुषःकालका दर्शन कराता है तो शून्य मरुभूमिमें यह वैतालिकोंके मंगलगान सुनाता है। कविकी शक्तिकी कोअी सीमा नहीं है। कार्य-कारणकी अिस दुनियासे वह सभी तरहसे स्वतंत्र होता है।

कल्पनाके नीले समुद्रोंका प्रवासी कवि बिहारके बाद अपने जलयानमें विविध समृद्धियाँ भर लाता है। अुसका प्रत्येक अभिमान जगत्को अमूल्य अनुभवकी, सरसताकी, रसकी भेंट देता है। संतप्त जगतको शान्ति और सुख देनेके लिअे वह सौन्दर्य, सत्य और साधुताकी जड़ीबूटी देता है।

बालसहज कल्पना और कुतूहलवृत्ति कविको जादू भरे महलोंका, दशमुखी रावणकी, भूतप्रेत राक्षसकी, महाबीहड़ जंगलकी और पारिजातके स्वर्गीय वृक्षकी दुनियामें ले जाती है। कविके मनको कुछ समीप नहीं है, कुछ दूर नहीं है। बहुत बड़ी दूरीको वह अेक क्षणमें पार कर लेता है, महान सरिताओंको वह चुटकी बजाते पार कर लेता है, पहाड़ोंके सर्वोच्च शिखरोंको वह पलक मारते परास्त करता है।

रुपहले पर्णों और सुनहले फलोंसे लदे हुअे दिव्य तरुओंके दर्शन वह अपने प्रतिभानयनोंसे करता है। अपार रिद्धि-सिद्धि और समृद्धिसे छलकते ग्रामों और नगर-नगरियोंको वह सहज भावसे अनुभवमें ले लेता है। सौंदर्य और संगीतके भव्य प्रासाद बाँधना अुसके लिअे बाअें हाथका खेल है। विविध रसोंका वह अुपभोग करता है; परन्तु कारुण्य अुसे सविशेष पसंद है।

कविता हमें जीवनसे बहिष्कृत नहीं करती है; प्रत्युत जीवनमें हमारा प्रवेश कराती है। मनुष्य जीवनको संपूर्ण और वास्तविक बनानेका काम भी कविताका है। कविकी वास्तविकताका मलिन वृत्तियोंके साथ, क्षुद्र अिच्छाओंके साथ कोअी संबंध नहीं है। कल्पना द्वारा वह अुन रसस्थानोंको देखता है जहाँ चर्मचक्षुकी गति नहीं है, अुन करुण स्वरोंको सुनता है जिन्हें हमारे स्थूल कर्ण सुन नहीं सकते। कल्पनाचक्षुकी अवहेलना करनेवाले तीसरे नेत्रके चमत्कारका तिरस्कार करते हैं। कविकल्पना प्रेमका ही रूपान्तर है। दृष्टिमें अगर प्रेमका तेज नहीं होगा तो व्यक्ति या वस्तुका परम सत्य कभी अुपलब्ध नहीं होगा। कविकल्पनाकी महिमाके कारण ही भूमिदानयज्ञ या ग्रामजीवनके सुधारकी प्रवृत्तियाँ विद्यमान हैं। जहाँ कल्पना नहीं है वहाँ क्रौर्य, स्वार्थ, असमानता और मृत्यु है। प्रजा-प्रजाके बीच संघर्ष चलते हैं, वर्ग-वर्गके बीच विग्रह होते ह, जाति जातिके विरुद्ध लड़ती है। यह सब कविकल्पनाके अभावके परिणाम हैं। गौतम बुद्धको मोक्ष मिल रहा था। परन्तु अुन्होंने कहा कि मुझे निर्वाण नहीं चाहिअे, मैं तो बार-बार जन्म लेकर संसारका कल्याण करना चाहता हूँ; अीसामसीहने जब कहा, जगतके सभी मनुष्य मेरे बंधु हैं तब अिन दोनों महामानवोंने कविकल्पनाके सहारे जगत्के मूल्योंका परिवर्तन किया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कल्पनारहित जीवन खंडित होता है। कल्पनामूलक प्रेमधर्मके अभावकी वजहसे हम जीवनमें यथार्थ दर्शन नहीं कर सकते हैं। धन, सत्ता, विलास और मिथ्या आडम्बरकी मृगतृष्णाके पीछे हम जीवनका दुरुपयोग करते हैं और सनातनको छोड़कर किसी क्षणिककी अुपासनामें भटक जाते हैं। मनुष्य जब 'भरिभरि अुदर' किसी 'सूकरग्राम' की तरह सुख-विलासमें जीवन व्यतीत करनेमें सन्तोष अनुभव करता है तब अुसे कोअी अूँचा असन्तोष, कोअी अुत्कट विरोध, कोअी सर्वथा कठिन समस्या सताती नहीं है और हृदयकी कोअी गहरी अनुभूति, कोअी महान् आंकाक्षा या अभिलाषा अुसके जीवनका ध्येय-बिन्दु नहीं बन सकती है। यह दुखद स्थिति है। जब कोअी तीव्र असन्तोष, विरोध या महान् प्रश्न हृदयको ही नहीं, बुद्धिको ही नहीं; परन्तु समस्त आत्माको हिला देता है, अुसके द्वारा अनुभूत होता है तब वह ताल और लयकी वाणीमें प्रकट होनेका प्रयास करता है। तब यह वाणी लौकिक वाणीसे भिन्न अैसी कोअी अनिर्वचनीय कवित्वकी अमर वाणी बन जाती है।

प्रत्येक अुच्चकोटिके कविके सामने अपनी कला-निष्ठ कल्पना होती है, आदर्शजीवनके लिअे पिपासा होती है। सभी कवियोंकी आदर्श-भावनाअें समान ही होनी चाहिअे अैसा नहीं है। कोअी शान्तिपूजक, कोअी समृद्धिका गायक, कोअी सत्यका अुपासक तो कोअी विशुद्धिका आग्रही होता है। कोअी अतीतके कण-कणको स्पर्श करके सौन्दर्य और समृद्धिकी स्मृतिमें हमें डुबो सकता है तो कोअी अुज्ज्वल भविष्यके सुस्पष्ट दर्शन हमें करा सकता है। कलाका आदर्श अेक होनेपर भी अुसकी भाषाअें भिन्न-भिन्न हुआ करती हैं। महाभारत, भागवत और विष्णुपुराणके कृष्ण अेक ही हैं परन्तु व्यास, शुकदेव और विष्णुपुराणके रचयिताकी वाणी अलग-अलग है। वाल्मीकि, भवभूति और तुलसीदासके रामका जीवनादर्श अेक होनेपर भी कलाका निरूपण भिन्न है। वर्ड्सवर्थ और शैलीके चंडूल (Sky-lark) पक्षीके लिअे जो काव्य-भावनाअें हैं वे परस्पर विरोधी हैं परन्तु आदर्श-दर्शनके लिअे दोनोंकी अुत्कण्ठा समान है। अिस प्रकार अिस क्षणिक संसारमें अिन सब कविवरोंमें आदर्श-जीवनके लिअे जो पिपासा है वह सर्वसामान्य है और वही अुनकी महान् काव्य-सृष्टिका अुद्भवस्थान व परम प्रयोजन है।

प्रत्येक कवि अिस ब्रह्मांडमें प्रतिक्षण बह रहे सौन्दर्य-प्रवाहकी ओर बारबार आकर्षित होता है। दुख, शोक, दारिद्र्य, नैराश्य और मृत्युसे भरे हुअे अिस जगतमें सौन्दर्य स्रोतको वह कल्पनादृष्टिसे निहारता है। यह सतत बहती सौन्दर्य-सरिता सत्य और शिवके तेजकण बिखेरती आगे-आगे बढ़ती ही जाती है। कवि अुन तरंग-लहरियोंमें नृत्य करने तेजकणोंपर अपनी दृष्टि स्थिर करता है और सौन्दर्यपान करता है। कालिदास अपने 'रघुवंश' में पंपा सरोवरके शान्तगंभीर नीरके अूपर चक्रवाकमिथुनको बेतके पेड़ोंके बीचमेंसे देखता है और नेत्रनिर्वाणका आनन्द लेता है। भवभूति 'अुत्तर राम-चरित' में रामके बाहुपर सिर रखकर सोअी हुअी सौन्दर्य-लक्ष्मी सीताके विशुद्ध सौन्दर्यको कल्पनाके सहारे देखता है और कृतार्थता अनुभव करता है। कवि केवल सौन्दर्य-सर्जन करके ही नहीं रुक जाता, वह विश्वकल्याणके हेतु सौन्दर्यके अुस पार रहे हुअे सत्यका भी साक्षात्कार करता है। अैसे परम जीवनके प्रति अपने औत्सुक्यके कारण ही कवि अिस संसारका सच्चा स्वामी और तारक बनता है।

आजके कवि अपने पुरोगामियोंसे जितने भिन्न हैं अुतने परस्पर भी भिन्न हैं। कोअी कवि राष्ट्रीय जीवनके निर्माणके लिअे, प्रजाजीवनके स्वातन्त्र्यके हेतु और सामाजिक पुनर्घटनाके लिअे युद्धका आवाहन करता है और भयंकर संहारको विश्वकी आवश्यक योजना मानकर अुसका स्वागत करता है। तो कोअी कवि अहिंसक युद्ध द्वारा प्रहलाद-युग स्थापित करनेके अुड़ते स्वप्नोंमें घूम रहा है। कोअी कवि मजदूर और धनिक वर्गके संघर्षोंका चित्रण करनेको कविता करता है तो कोअी वर्गरहित समाजरचनाको काव्यमें मूर्तिमन्त करनेका प्रयास करता है। कोअी जन-समाजकी विराट आत्माको काव्यमें अुतारता है तो कोअी व्यक्तिवादके अनिष्टोंपर शाप बरसाता है। जगत्के अगणित विसंवादोंसे जला हुआ कोअी कवि विप्लवके अुग्र और जलते हुअे गीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाता है तो कोअी समवेदना और शान्तिका मधुरगान करता है। कोअी प्रकृतिके कराल और कुत्सित रूपको, तो कोअी अुसके सर्वांगसुन्दर रूपको काव्यमें निरूपित करता है। किसीका लक्ष्य आर्थिक समष्टिवाद है तो किसीका राजकीय समष्टिवाद। वर्तमानयुगकी अिस भीड़-भम्भड़में अिन विरोधोंके परिहारकी अेकता साधक समन्वयकी श्रद्धामयी वाणी कविसमाजमें क्वचित् ही सुनाअी पड़ती है, भविष्यका कोअी अुज्ज्वल दर्शन शायद ही देखनेको मिलता है।

आजकल समाजकी विषमता कविको परेशान कर रही है। भयंकर आर्थिक युद्ध अुसके चित्ततन्त्रको बहुधा आच्छादित कर देता है। आजका कवि तटस्थ रह नहीं सकता, समन्वय कर नहीं सकता। आज वह प्राचीन संस्कृतिमेंसे प्रकाश प्राप्त नहीं कर सकता, और वर्तमान भौतिकवाद अुसकी क्रान्तिकारी आशाओंको सफल नहीं कर सकता। समाजमें व्याप्त विषमता और निर्घृणता अुसके मानसको भीतरसे अितना हिला देते हैं कि अुसने सौन्दर्यदर्शनके अपने कविकर्मका भी बहुधा त्याग कर दिया है और अिस प्रकार जगत्के कल्याणको खतरेमें डाला है।

आज हमारी जीवन-भावनाओंमें तथा जीवनकी वस्तुस्थितिमें स्पष्ट परिवर्तन होने लगे हैं। जगत्भरके राजकीय और सामाजिक क्षेत्रोंमें अनेक परिवर्तन होते जा रहे हैं। अेक व्यक्तिकी आज्ञाके अनुसार चलनेवाला राज्यतन्त्र आज अप्रिय हो गया है और चारों ओरसे अुसका नाश हो रहा है। आज सस्ती मजदूरी करनेवाले श्रमिक और किसान-वर्गको समाजके अुच्च स्तरपर रखकर धनिक वर्गके धनका विभाजन हो रहा है। जिनके पास समृद्धि है अुनसे वह छीनी जा रही है। परन्तु समानताके लिअे किअे गअे ये सब परिवर्तन अूपरी सतह मात्रके ही हैं या गहराअीसे सोचे हुअे हैं? मनुष्यके धार्मिक अेवं आध्यात्मिक जीवनके सत्यमें अुनकी जड़ें गअी हैं क्या? किसी अेकता-साधक धार्मिक भावनामें ये परिणित हुअे हैं या मात्र बाह्य पाखंडके रूपमें ही रहे हैं? ये सब परिवर्तन जबतक अैक्य विधायक शक्ति अुत्पन्न न करें, तबतक निर्जीव और अर्थहीन ही रहते हैं। अिस अेकताकी साधनामें कविका दर्शन महामूल्यवान है।

अर्वाचीन कवि पुरानी परम्परासे मुक्त होकर अपने व्यक्तिगत विचारोंको ले आते हैं अथवा स्वकीय दर्शनसे नवीन परम्पराका आरम्भ करते हैं। वर्तमान कवि अपना दर्शन प्रकट करनेके हेतु पद्य और गद्य दोनोंका कविताके वाहनके रूपमें अुपयोग करते हैं। स्टिफन स्पेन्डर कहते हैं, अिस प्रकार फिलहाल, पद्यात्मक अुपन्यास अथवा 'गद्यात्मक काव्य' गद्यके प्रदेशोंको हस्तगत करते हैं यह कविताका महान प्रयास है। 'विज्ञान' और 'सुधार' के आंदोलनोंके बाद सर्वत्र फैल रही अर्वाचीन संस्कृति और प्राचीन संस्कृतिके बीचमें प्रायः सभी कवियोंको यही तात्त्विक भेद दिखाअी पड़ता है। प्राचीन कृषि-प्रधान संस्कृतिके स्थानपर औद्योगिक संस्कृति जगत्के अनेक खण्डोंमें स्थिर होती जा रही है जिससे प्रत्येक जन-समाजमें महान परिवर्तन हो रहे हैं। फिर भी शुद्ध अैतिहासिक दृष्टिसे देखनेवाले कुछ चिन्तकोंको प्राचीन और अर्वाचीन संस्कृतिके बीचमें काफी अेकता दीख रही है। जो लोग अभेदकी अपेक्षा भेदको बार-बार आगे लाते हैं वे वर्तमान जगत्में 'सहयोग, मेलजोल और शान्ति' के स्थानपर 'स्पर्धा, कलह और अशान्ति' को चारों ओर जरूरतसे ज्यादा मात्रामें देखते हैं। परिणाम यह होता है कि कवि-जन अभेदके बदले भेदके गीत अधिक गाते हैं। अिन कवियोंको प्राचीन प्रतीक, प्राचीन अलंकार और प्राचीन किंवदन्तियाँ कालातीत और अर्थशून्य लगती हैं। आज जितनी ठोस निष्ठुर वास्तविकता हमारे सामने है अुतनी पहले कभी नहीं थी अैसा वे मानते हैं। और अिस घोर यथार्थकी अुपेक्षा करके भावनाओंके धुअेंमें खो जानेकी बात अुनके अर्वाचीन मानसको अनुकूल नहीं लगती। फिलहाल विज्ञानकी दुनिया, वैज्ञानिक यन्त्रवाद, सहसा राज्य परिवर्तन संकुल अंक-शास्त्र सर्वाधिपत्य प्राप्त करनेवाली पत्रकारिता, निरंकुश विज्ञापनबाजी यह सब वर्तमान जगत्में अग्रस्थान रखते हैं, और अर्वाचीन कवियोंके कविकल्पनाके वाहनको यह सब अनुकूल नहीं है, अिसलिअे कविताके प्राचीन घेरेमें ये समाते नहीं हैं। आजके कवि गद्यके युगमें जी रहे हैं अिसलिअे कवि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कल्पनाको भी माध्यमके रूपमें गद्य ही बहुधा अुचित लगता है। वर्तमान जीवनमें प्रकृतिके बहते रक्तवाले पंजोंने जो वर्ग विग्रह शुरू किअे हैं अुनकी ओर कवि फटी हुअी आँखोंसे देखा करता है; परन्तु हमें मेथ्यु आर्नोल्डका यह वचन याद रखना चाहिअे कि कवितामें वास्तविक तथ्य नहीं, परन्तु भावनाअें ही मुख्य हैं।

अर्वाचीन कवियोंमेंसे बहुतोंको आज बाह्य और आन्तर जगत्के बीच जो अुच्च संघर्ष हो रहा है अुससे परेशानी होती है। बाह्य जगत्में माधुर्य और प्रकाश; सत्य, शान्ति या सहानुभूति वे देख नहीं पाते हैं। और फिर भी बाह्य जगत्का आकर्षण अितना तो अुन्हें खींचता है अपनी तरफ कि आन्तर जगत् केवल भ्रान्ति है, मिथ्या है अैसा वे मानते हैं। अिस 'प्रकाश और प्रेमरहित जगत्' में नअे संसारका निर्माणकर सकें अैसी नअी मुक्त आत्माका शैलीका आन्तर दर्शन अिन्हें प्रतीतिकर नहीं जँचता। वर्तमान जगत्में अिन्हें आंतरमूल्य खोजनेपर भी नहीं मिलते। अितनाही अुनकी समझमें आता है कि "लोग अेक दूसरेके समान होनेकी माँग करते हैं!" किसी भी प्रकारका व्यक्ति-वैशिष्ट्य अुनको पसन्द नहीं है। मनुष्यकी विशिष्टताकी अपेक्षा अुसकी सामान्यता अिन्हें विशेष पसन्द है। जनसमष्टिके हितके खातिर अिन्हें विप्लव जितना रुचिकर लगता है अुतना विकासका नियम या अिसका अनुसरण नहीं। अैतिहासिक क्रमके अनुसार डार्विनके विकासवादकी नूतनदृष्टि मार्क्सको मालूम नहीं थी अिसलिअे बिना विप्लवके भी जन-समाजके जीवनमें मन्द गतिवाले परन्तु ठोस परिवर्तन लानेवाले, जगत्की सच्ची प्रगतिके मार्गको वह स्वीकार नहीं कर सका। जनसमाजका अपने जीवन विकासका नियम होता है। अुसीके अनुसार अुसका विकास होता है, बुद्धि या तर्कके नियमके अनुसार नहीं। अचानक परिवर्तन करनेकी रीति आदमीको चकाचौंध तो कर देती है परन्तु अिससे मनुष्यके रहन-सहन या आदतें अेकदम बदल नहीं जातीं। बर्ट्रान्ड रसेल ठीक ही कहते हैं—"राज्य परिवर्तन मनुष्यको अिसलिअे पसन्द है कि अुसे नाटक देखनेका शौक है। हम सबमें अेक प्रकारकी नाटक दिदृक्षा है। सिनेमाके पर्दोंपर जो दिखाअी पड़े वह अच्छा हो, अुसमें सब कुछ शीघ्र ही हो जाअे यह हमको ठीक लगता है परन्तु जगत्के सच्चे महान कार्य अिस तरह नहीं होते हैं। महान् कार्य नाटकीय ढंगसे नहीं होते। हम परिवर्तनके द्वारा नया नाम चला सकते हैं परन्तु वस्तु अुत्पन्न करनेके लिअे तो विकासका नियम ही चाहिअे।"

अिस संसारमें निरपेक्ष (absolute) कुछ नहीं है, सब कुछ सापेक्ष (Relative) है। हेगल जिसको Being और Non-being, या वेदान्त जिसे सत् और असत् कहता है, दोनों अेक साथ ही सत्य है। अेकान्तिक सत्यका साक्षात्कार हो नहीं सकता। सत्के साथ असत्; प्रवृत्तिके साथ निवृत्ति, प्रकाशके साथ अन्धकार और जीवनके साथ मृत्यु जुड़ी हुअी है। सत् तो केवल परमात्मा ही है। बाकी सर्व जगत् सत्-असत् अुभय है। अिसीलिअे दोनों द्वंद्वोंका स्वीकार करके अुनके शुभ अंशोंको ग्रहण करके दोनोंको पारकर जाना यह दार्शनिककी तरह कविका भी परम धर्म है।

मनुष्यकी तर्क बुद्धिमें वस्तुका तत्त्व देखनेकी शक्ति नहीं है परन्तु अुसके कवित्वमें यह कला है। धर्म और तत्त्वज्ञानके निगूढ़ सत्योंको पुर-असर शैलीमें प्रकट करनेमें कविताने भूतकालमें बहुत महत्त्वपूर्ण काम किया है। जगत्के कल्याणकी दृष्टिसे परिवर्तन करनेकी अुसकी शक्ति अपार है। प्राचीन प्रतीकोंके अर्थ आज म्लान हुअे हैं और कुहराच्छादित हुअे हैं; फिर भी अुन्हें स्वच्छ करके अुनमें छिपे हुअे सनातन सत्योंको समझना यह कविताके विकासके लिअे परम आवश्यक है। परम्परासे आअी हुअी मान्यताओं और तत्त्वदर्शनोंको अर्वाचीन कवियोंको देख जाना चाहिअे, स्वकीय प्रतिभासे देख जाना चाहिअे और नअे प्रतीकोंके साथ अुनकी तुलना करनी चाहिअे। प्रत्येक कलाकारको नअे प्रयोग करनेका अधिकार है और अैसे प्रयोग-वैविध्यमें ही कविताका अुज्ज्वल भविष्य है। परन्तु साथ-ही-साथ प्राचीन संस्कारोंका संरक्षण करना भी कविताके विकासमें आवश्यक है। कविता जिस आत्मसंस्कारका अनुसंधान करके अुसकी रक्षा करती है अुसीमें अुसका अनन्त भविष्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छिपा हुआ है। कविताका भूतकालसे विच्छेद करना हितावह नहीं है। भूतकालके शुभ-अंशोंको वर्तमानमें परिवर्तित करनेके लिअे कविताको अनवरत प्रयोगशील रहना चाहिअे। भूतकाल हमारे शारीरिक और आध्यात्मिक गठनमें रमा हुआ है। वह हमसे भिन्न नहीं है। यही हम हैं। परम्परा, संप्रदाय, स्वभाव, दंतकथा, धर्म, कला आदि जो बाह्य जगतमें प्रकट होते रहते हैं अुन सबको हम अेकाअेक बदल नहीं सकते हैं। बाह्य जगत्से भी आन्तर जगत्से अधिक विशाल अेवम् अधिक प्रतीतिपूर्ण है। दोनों जगत्में पारस्परिक संबंध है यह अनुभवसे जाना जा सकता है। वस्तुतः आन्तर जीवनके अनुभवके प्रकाशमें और अुसके साक्षात्कारके परिमाणमें कविको बाह्य जगत्का मिथ्यापन और आन्तरजगत्का सत्य अनुभवमें लाना है। अिसी तरह जगत्को नअे मार्गपर लानेका कार्य कविको करना है; अुसका मूल्य परिवर्तन करना है।

आजके नअे कवियोंको विप्लवकी शक्तिके प्रयोगोंके अुदाहरणोंसे गर्वोन्नत नहीं हो जाना चाहिअे और केवल अुसी भावनाका सतत सेवन नहीं करना चाहिअे। अुनको चाहिअे कि वे आत्म-संस्कारकी शिक्षा लेकर अपना जीवन व्यवस्थित करें और अभ्यास, अवलोकन और अनुभव द्वारा अुसे संपुष्ट बनावें। महान् काव्य ग्रन्थोंका और शास्त्रग्रन्थोंका अुन्हें परिशीलन करना चाहिअे। साहित्य विवेचनके ग्रंथोंपर विचार करना चाहिअे। संक्षेपमें कहें तो अुन्हें ज्ञानके प्रति सम्मान रखना चाहिअे। ज्ञानकी प्रगतिके बिना व्यक्तिकी या विश्वकी प्रगति कदापि हो नहीं सकती। कवि-कल्पना भी ज्ञानका सर्वोत्तम और सूक्ष्मतम स्वरूप है।

आज कविताके अूपर बड़ी जिम्मेवारी आ गअी है। मानवके आन्तर और बाह्य जीवनके पदार्थोंके टूटे हुअे संबंधोंको फिरसे जोड़ना है। परिस्थितिपरसे गँवाअे हुअे प्रभुत्व फिर प्राप्त करना है। विज्ञान और विकासके वर्तमान जगत्में प्राचीन धर्मकी किंवदन्तियाँ और प्रतीकोंमें अर्वाचीन जीवनके अनुभव बुन लेने हैं। दूर-दूरके अतीतका दूर-दूरके अनागतके साथ संपर्क स्थापित करना कविताका ही काम है। मनुष्यके आचरण, व्यवहारपर स्वामित्व भी प्राप्त करना है। संक्षेपमें, जन-समाजको सुन्दर बनाना, सुधारना और सन्मार्गपर ले जानेका काम भारतीय कविताको करना है।

आज चारों ओर चक्कर काटते कालके विकराल रूपको देखकर कविजनोंको डरना नहीं है। अैसा अुग्ररूप तो विश्वके अितिहासके विशाल पटपर हर समय प्रकट हुआ है और युद्ध तथा कलहके रूपमें कभी-कभी विशेष मात्रामें दिखाअी पड़ता है। आज जगत्में भीषण यंत्रवाद बढ़ रहा है और कराल कालकी अुग्रता भी बढ़ती जाती है। यह सर्वसंहारक कालमूर्ति परम दयाकी मूर्ति भी है। विश्वतन्त्रकी घटनामें अनंत संहार-लीलाके साथ अपरिमेय प्रेम भी रहता है। अितिहासके मूलमें रहे हुअे अिस कालस्वरूपका विकास विश्वमें दिन प्रति दिन बढ़ता जाता है और मनुष्यके चित्तको विशाल बनाकर अुसे परम नम्रतासे भर देता है। चाहे जैसा विनाशकारी विग्रह हो और अुसमें भयंकर हत्याकांड मच जाअे; फिर भी मनुष्यजातिका यह अेक परम आश्वासन है कि मनुष्य-आत्मा – Human spirit— यह किसीसे न दबनेवाली महान् शक्ति है। वह सब युद्धोंसे, कलहोंसे अुग्रतम संकटोंसे अवश्य पार अुतरेगी और समस्त सृष्टिका नवसर्जन करनेमें समर्थ होगी। कविको अपनी श्रद्धा और आशा नहीं खोनी चाहिअे।*

---

* गुजराती मासिक 'संस्कृति' से साभार हिन्दी रूपान्तर—अनुवाद।

(अनुवादकः — श्री जयेन्द्र त्रिवेदी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी साहित्य और श्रीमद् वल्लभाचार्यका भक्तिमार्ग

—गोस्वामी श्री व्रजभूषण महाराज, कांकरोली

राष्ट्रके अुत्थानमें जहाँ अुसकी संस्कृतिका अपना विशिष्ट स्थान होता है वहाँ अुसकी भाषाको भी नहीं छोड़ा जा सकता। चिरन्तन कालसे राष्ट्रके अुत्थानमें भाषा अेक महान् साधन रही है। लोक-जागृति अुस देशकी भाषाके द्वारा ही हो सकती है और जन-समाजके जागृत हुअे विना देशका स्वतंत्र और अभ्युत्थान होना कैसे सम्भव है? कहना पड़ेगा कि देशके अभ्युदयके लिअे अुसकी भाषाको जीवित रखना अुतना ही परम आवश्यक और अनिवार्य है जितना अुसकी संस्कृतिकी रक्षा करना। अिस पुण्यभूमि भारतके लिअे सुरभारती संस्कृतकी सुपुत्री हिन्दीके अतिरिक्त और कौनसी भाषा राष्ट्रभाषा—देशभाषा—बन सकती है? आधुनिक खड़ी बोली हिन्दीको व्रजभाषाका अुत्तराधिकार प्रदान किया गया। खड़ी बोलीको छोड़कर और कौनसी भाषा राष्ट्रभाषा बनाअी जा सकती है। यह प्रश्न अब शंका-समाधानोंकी भूमिकासे दूर होकर निश्चयके रंगमंचपर आसीन हो गया है। आज हिन्दी भारत राष्ट्रकी व्यापक भाषा होकर राष्ट्रभाषा बन गअी है। अुसके वे दिन फिर गअे हैं, जब अुसे पराये रूपमें देखा जाता था और परायी भाषा स्वकीयताके आवरणमें सजाकर हमारे सामने पेश की जाती थी। आधुनिक कालमें, हम, हमारा देश, हमारी संस्कृति और हमारी भाषामें अत्यन्त निकटतम सम्बन्ध स्थापित हो गया है। कोअी दुविधा अिनमें नहीं रह गअी है। भाषाका प्राण अुसका साहित्य है। साहित्यके विना कोअी भाषा न तो फल-फूल सकती है और न लोकप्रिय हो सकती है। किसी भाषाके हृष्ट-पुष्ट अेवं विकसित रहनेके लिअे अुसका साहित्य समृद्ध अेवं सजीव होना चाहिअे। हमारी हिन्दीको जीवित रखनेके लिअे साहित्यकी पुष्टिकारक मात्राकी जरूरत है। यदि हिन्दीके पास अुसका अपना साहित्य न होता तो अुसके लिअे अिस प्रकारकी अुच्च अभिलाषा कभी की जा सकती थी?

अब हमें यहाँ अिसकी विवेचना करना है कि हिन्दीके पास अुसका अपना कहलानेवाला अैसा कौनसा साहित्य है, जो अुसे यह अुच्च प्रतिष्ठा दिलानेमें समर्थ हो सका है। क्या विदेशी या प्रांतीय भाषाओंके कुछ ग्रन्थोंके अनुवाद यह गौरव पद दिलानेमें समर्थ हो सकते हैं? हम अिस प्रयासके विरोधी नहीं हैं। अुच्च कोटिके अनुवाद स्वागतार्ह होंगे।

हमारी दृष्टि व्रजभारतीपर पड़ती है, खड़ी बोली कहलानेवाली हिन्दीके कअी सौ वर्ष पूर्व ही व्रजभाषाने समस्त साहित्यपर अधिकार कर लिया था। संस्कृत-माताकी वह वात्सल्य-भाजन पुत्री थी। पुत्री यदि अपनी माताके गुणालंकारोंसे भूषित होती है और माता अुसे अपने आभूषणोंसे स्वयं अलंकृत करती है तो यह कोअी अुपहास अथवा लज्जाकी बात नहीं है। वह तो अिसकी अधिकारिणी ही है।

अैसी अवस्थामें हिन्दी साहित्यका समस्त भार व्रजभाषा साहित्यपर आकर आधारित हो जाता है। व्रजभाषा साहित्यका समग्र समुज्ज्वल परिचय देना हँसी-खेल नहीं है। मेरे लिअे छोटे मुँह बड़ी बात होगी। साहित्य-महारथियोंने व्रजभारती साहित्यका पर्याप्त विवेचन किया है। मुझे तो अपने दृष्टिकोणसे अिस साहित्यके सम्बन्धमें यही कहना है कि यदि व्रजभारतीके साहित्यसे अुसके अधिनायक श्रीकृष्णको अलग कर लिया जाअे तो वह सर्वथा सारहीन, निष्प्राण और निरर्थकसा हो जाअेगा। समस्त कला-प्रपूर्ण आनन्दके मूर्तस्वरूप, श्रृंगारके आदि देव भगवान कृष्णकी चरितावलीके गानके कारण ही तो वह चिरस्थाअी हो गया है। वह सदा-सर्वदा नवीन, सत्य-शिव-सुन्दर, परममनोहर तथा लोककल्याण-कारी बना रहा। व्रजभारतीके आदि कवियोंने अपनी काव्यमयी साधनाके परम विकसित अमर सुगन्धित पुष्प आराध्यदेव श्रीकृष्णके चरणकमलोंमें चढाअे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौकिक काव्य-रसको अुन्होंने अलौकिक आनन्दामृतमें परिणत कर स्वयं भी अमरता प्राप्त की है और दूसरोंके लिअे भी साधन प्रस्तुत कर दिअे हैं।

अिस प्रकार हमारा साहित्य, हमारे अिष्ट आराध्य और हमारा भक्ति सम्प्रदाय तीनों अेकरूप हो जाते हैं। और अिस सम्मिश्रित रूपकी अभिव्यक्ति अुन साहित्यकारों द्वारा होती है जो अुसके आधार-स्तंभ तथा प्रकाश-दीप माने जाते हैं।

श्रीमद्वल्लभाचार्यका वेदान्त सिद्धान्त शुद्धाद्वैत सिद्धान्त है। वेद-अुपनिषद्, श्रीकृष्णवाक्य (भगवद्गीता), ब्रह्मसूत्र और समाधिभाषा (श्रीमद्भागवत)—अिस चतुष्टयीके प्रमाणोंसे अिसका निरूपण हुआ है। जहाँ वेदान्त पक्षमें यह सिद्धान्त 'शुद्धाद्वैत' अर्थात् शुद्ध अद्वैत है; वहीं भक्ति पक्षमें वह पुष्टिमार्ग कहलाता है। पोषणं पुष्टि :, भगवान्के अनुग्रहको पुष्टि कहते हैं। और अिन श्रीमदाचार्य द्वारा निरूपित मार्गमें भगवद् अनुग्रह ही सबकुछ है। अिस शुद्धाद्वैत भक्ति सम्प्रदायमें हिन्दी-साहित्यको जो गौरवका स्थान प्राप्त है और प्रारम्भसे ही जो प्रश्रय हिन्दीको हमारे भक्तिमार्गमें दिया गया है, अुसकी भूरि-भूरि प्रशंसा हिन्दी साहित्यके कअी लब्ध-प्रतिष्ठ अितिहास-लेखकोंने की है। किन्तु दुख अिस बातका है कि अभीतक परिपूर्ण रूपमें अिस साहित्यका प्रकाशन नहीं हो पाया है। यह साहित्य अमूल्य निधि है, साथ ही राष्ट्रभाषा हिन्दीके लिअे अेक अमर देन है। आज जो भी हिन्दीके अुज्ज्वल रत्न अष्टछाप आदि ग्रन्थ प्रकाशमें आअे हैं वे या तो गुर्जर-भाषा-भाषियोंके द्वारा, जो अुसके मौलिक रूपसे सर्वथा अनभिज्ञ हैं अथवा अुन साहित्यिक विद्वानों या हिन्दी संस्थाओं द्वारा जो, जो हमारी भावनाओंसे शुष्क नहीं तो, अुदासीन अवश्य हैं। अैसी अवस्थामें अुस साहित्य-माधुरीसे हमें वंचित रह जाना पड़ता है जो साहित्य-संसारकी संजीवनी है।

साहित्यका प्राचीन कोअी भी ग्रन्थ किस आन्तरिक किम्वा परिस्थितिका प्रतिफल है, यह तबतक ध्यानमें नहीं आ सकता, जबतक कि अुस रसमें स्वयं भीजनेकी चेष्टा न की जाअे। अूपर ही अूपरसे किसी भावनाका काल्पनिक रेखा-चित्र खींचनेको भले ही सफलता मान ली जाअे, पर अन्तस्तलमें प्रविष्ट होकर वहाँसे अमूल्य-रत्न निकालकर साहित्यके पारखियोंके आगे रखना दूसरी बात है। अिस ओर किसी भी तरफसे प्रयत्न नहीं किअे गअे। जहाँ हमारे मार्गके लेखक अपने सत्य अितिहासके संकलनार्थ प्रवृत्त ही नहीं हुअे, वहाँ प्रकाशनकी बात तो कोसों दूर रही। अैसी अवस्थामें वही हुआ जो होना चाहिअे अथवा होता आया है।

भारतीय अितिहासमें पन्द्रहवीं, सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दीका समय अक सांस्कृतिक संघर्षका युग रहा है। विदेशियोंके अनुदिन बढ़ते वर्चस्वसे भारतीय संस्कृति आक्रांत होकर कराह रही थी। हिन्दुओंके राजनैतिक स्वत्वोंपर जहाँ डाका डाला जा रहा था, वहाँ अुनकी नैतिक पवित्रता, धार्मिक और सांस्कृतिक भावनाअें भी नित्य ही कुचली जा रही थीं। दैनिक सांप्रदायिक संघर्षोंसे अुनका अस्तित्व भी खतरेमें था। भारतीय प्रजा असन्तोष, नैराश्य और अत्याचारोंसे पीड़ित थी, अैसे समयमें लोक संग्रहकी शक्ति और विदग्ध जनताने अपेक्षित सान्त्वना सूर और तुलसीकी राम-कृष्ण-प्रधान सगुण अुपासनामें पाअी। अिनकी अुपासना जनताके भौतिक कल्याण अेवं अध्यात्मवादका अेक आदर्श सिद्ध हुअी। हिन्दी साहित्यके अितिहासकारोंने साहित्यके विकासका जिसे पूर्व मध्यकाल सन् १३६५ से १७०० माना है और जो अपने साहित्यकी शान्तरसप्रधानताके कारण भक्तियुग कहलाता है, अुसी भक्तियुगका विकास सूर और तुलसीकी भव्यवाणी द्वारा हुआ। सूर और तुलसी दोनों वैष्णव कवि थे। अेकने श्रीकृष्णकी सख्य-भावसे सेवाकर अुनके बाल्य-कालको, व्रजभाषाके माध्यमसे खंडकाव्यरूप पदों और गीतोंमें काव्यका विषय बनाया तो दूसरेने रामकी दास्य भावसे आराधना कर अुनके संपूर्ण जीवनको अवधकी बोली द्वारा दोहा चौपाअियोंसे संग्रथित महाकाव्यमें चित्रित किया—दोनोंका अभिन्न लक्ष्य था। हिन्दू समाजकी विश्रृंखल शक्तियोंको अेकसूत्रमें पिरोकर अुसकी रक्तहीन शिथिल स्नायुओंमें अेक संजीवनी शक्तिका संचार अुन्होंने किया। वे अपने ध्येयमें पूर्णतः सफल हुअे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों आदर्शोंका अपना-अपना महत्व था। तत्कालीन संत्रस्त हिन्दू जनतामें कुछ जनता सगुणोपासनामें अेक अैसे परमात्माकी आराधनाका आदर्श चाहती थी जिसमें शक्ति, शील और सौन्दर्यका अनुपम सामंजस्य हो, जो अपने सर्वांगीण आदर्श जीवनके साथ आततायियोंके दमन और अुत्पीड़ितोंके परित्राणमें समर्थ हो। वह अैसा ही युग-पुरुष चाहती थी जो सर्वस्वत्याग और बलिदानके द्वारा अपने राजनैतिक, सामाजिक और पारिवारिक स्वत्वोंके संरक्षणमें सक्षम हो। अैसे चरितनायक मर्यादा पुरुषोत्तम राम, तुलसीके 'राम चरितमानस' में अुपलब्ध होते हैं, किन्तु राम आखिर मर्यादापुरुषोत्तम ही तो थे। अुनके आदर्शमें दास्यकी मर्यादा शक्तिकी गुरुता, राजस-गौरवकी सीमाबद्धता थी। वे राजाधिराज थे। राज-वैभवसे परिवेष्टित राज-महलोंतक पहुँचना सामान्य जनताके लिअे सरल न था। अतअेव कुछ जनता अेक अैसे आदर्शकी भी अपेक्षा कर रही थी, जिसके साथ अुसका सीधा-सादा सरल हृदय घुलमिल सके, जिसे वह साधारण श्रेणीके परिवारमें पा सके और सखा, आत्मीय और प्रियकी तरह जिसके जीवनमें सर्वांशतः ओत-प्रोत होकर अुसे अेक सरल माधुरीसे आप्लावित कर सके। सूरके काव्यने जहाँ कर्मयोगी कृष्णका आदर्श जनताके समक्ष अुपस्थित किया, वहाँ अुनके बालसुलभ चापल्य और बालक्रीड़ाके माधुर्यके चित्रणसे भी सामान्य जनताको भाव-विभोर कर दिया। जनताने श्रीकृष्णको अपने बहुत अधिक निकट पाया। ग्वालोंके खिरकोंमें, गोपोंके गोष्ठोंमें, व्रजकी कुंज-निकुंजोंमें अुसकी सहज पहुँच थी।

किन्तु सूर काव्यकी अभूतपूर्व सफलताका सारा श्रेय श्रीवल्लभाचार्य–महाप्रभु–प्रवर्तित अेवं गोस्वामी श्री विठ्ठलनाथजी द्वारा संवर्धित शुद्धाद्वैत संप्रदाय पुष्टिमार्गको है। महाप्रभुका प्रादुर्भाव अैसे समयमें हुआ, जब कि भारतीय संस्कृति और वैदिक धर्म, विजातियोंकी राजनैतिक महत्वाकांक्षाओं अेवं मायावादियोंके अनभीप्सित प्रचारके लक्ष्य बन रहे थे। वैभव-विलास अेवं पाशविक वृत्तियोंके अुन्मादमें पागल जनता अपने आध्यात्मिक स्वरूपको भूलकर भौतिक विकासकी दौड़ लगा रही थी। जगद्गुरु शंकरके मायावादी अद्वैत-सिद्धान्तानुयायियोंके प्राबल्यसे वैष्णव-सिद्धान्त भक्तिमार्ग पराभूत और तिरोहित-सा हो रहा था। महाप्रभुने अपने आचार्यानुरूप अभिनव प्रकांड पांडित्य अेवं गहन शास्त्र तत्वज्ञानानुशीलनके बलपर अनगिनत शास्त्रार्थ-सभाओंमें अपने वैदिक-रहस्य-फलितार्थरूप शुद्धाद्वैत सिद्धान्तके प्रतिपादन पूर्वक भक्तिमार्गकी प्रतिष्ठा की। समस्त वैष्णव संप्रदायोंको महाप्रभुके अिस सार्वभौम धर्म विजयसे अेक संजीवनी शक्ति मिली और भारतीय जनता विदेशी विधर्मियोंके प्रतिरोधमें सक्षम हुअी।

भक्ति मार्गीय संप्रदायोंमें वल्लभाचार्यके द्वारा संस्थापित पुष्टिमार्ग अपना अेक विशेष स्थान रखता है। अुन्होंने अपने जीवनकालमें भक्तिमार्गकी विमल धारा बहाकर अनेक जीवोंके कल्मषोंका क्षालन किया, यह अितिहाससे तिरोहित नहीं है। अन्य आचार्योंके अनंतर आपके अिस समयके प्रादुर्भावसे जहाँ अुनको समस्त प्रचलित मतोंकी आलोचना कर अपने वेदानुकूल अिदमित्थ सिद्धान्तोंकी स्थापनाका अवसर मिला, वहाँ अिस समयमें प्रादुर्भूत होनेका हम अेक आधिदैविक कारण भी मानते हैं।

पुराणोंमें कलियुगको पुच्छ सहित यवकी अुपमा दी गअी है। और अुसके आदिम दस हजार वर्षोंको यव बतलाकर शेषको सारहीन पुच्छ बतलाया गया है। यवका आकार क्रमशः वर्द्धिष्णु, मध्यमें परिपूर्ण और अुसके अनन्तर क्रमशः क्षयिष्णु होता है और अुसकी समाप्तिपर केवल तुच्छ पुच्छ रह जाती है। अुसी प्रकार कलियुगके आदिके दस हजार वर्षोंकी स्थिति है। वह भी–"कलौ दशसहस्रेण विष्णुसत्यक्षयति भेदिनीम्!" के सिद्धान्तानुसार भक्तिके लिअे अुपयुक्त प्रतीत ही नहीं हुआ अपितु सिद्ध किया गया है और अुनमें जन्म लेनेवालोंकी अिसीलिअे सराहना की गअी है कि वे अिस समयमें भक्तिमार्गीय आचरणके द्वारा अपने जीवनको सार्थक कर सकते हैं। तात्पर्य यह कि जब हम अिस यवकी अुपमाका अिन दस हजार वर्षोंसे साम्य लगाते हैं, तो यह बात पूरी सत्य हो जाती है। अिसके साथ जब हम भक्तिमार्गके अितिहासपर अपनी दृष्टिका निक्षेप करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं और अब आगेकी धार्मिक परिस्थितिकी कल्पना करते हैं जब कि क्रमशः 'धर्म,कर्म, भक्ति' आदि सभीका लोप हो जाअेगा और कलियुगकी भीषणता अपना तांडव रूप दिखाअेगी, तो अिस बातके माननेसे विमत नहीं हो सकते कि कलियुगका सारसंयुत समय यही दस हजार वर्षका है, जब कि भक्तिकी लतिका विद्यमान रहकर हमारे लिअे अमर फल दे सकती है।

अिस अवधिमें भी मध्य भाग पर्यन्त वह समय जब कि अुसके सत्वरूपकी वृद्धि होती चली जाती है अुस क्षयिष्णु भागसे अतिशय सुन्दर मानव जीवनके लिअे परम अुपयोगी है। कलिके अिन दस हजार वर्षोंका मध्यभाग, जहाँ अुसका सत्व अपने परिपूर्ण रूपमें निहित हैं, गणना करनेपर साढ़े चार हजार वर्षसे साढ़े पाँच हजार वर्ष पर्यन्त ही निकलता है। भक्ति मार्गकी अैतिहासिक क्रमशः वृद्धिका काल भी तो साढ़े चार हजार वर्ष तक ही आता है जब अुसमें भक्ति मार्गके प्रवर्तक विष्णु स्वामी, अुनके अनुवर्ती अन्य आचार्य अुनके बाद रामानुजाचार्य निम्बार्क और मध्व आदि आचार्योंका क्रमशः भक्ति प्रचारका समावेश हो जाता है। अिसके अनन्तर अुस सत्वविशिष्ट कलियुगके मध्य-भागका समय आता है और श्री वल्लभाचार्यका भारतमें प्राकट्य होता है। आपके जन्म संवत् और अुस समय विगत कलिके गताब्दोंकी गिनती की जाती है तब यह निस्सन्देह हो जाता है और हमें माननेको विवश होना पड़ता है कि श्री आचार्यका प्रादुर्भाव कलियुगके अुस महत्वपूर्ण समयके ठीक बीचमें हुआ है, जिसमें यवके मध्य-भागके समान सत्वकी संपूर्णता है। भक्तिमार्गके अुत्कर्ष और अतिशय प्रचारका यही तो कलिमें अेक अुपयुक्त समय था, जब कि भक्ति लता अंकुरित पल्लवित पुष्पित कुसुमित अेवं सुरभित होकर फलित हुअी। अैसा अपूर्व समय भक्तिमार्गके आचार्योंमें केवल श्री वल्लभाचार्यको ही प्राप्त हुआ है और यही कारण है कि अुन्होंने सबकी समीक्षा कर वैदिक सिद्धान्तके फलस्वरूप भगवदनुग्रहा-त्मक पुष्टि मार्गकी स्थापना की। अथच अन्य आचार्यों द्वारा वेदके विकृत किअे हुअे अद्वैतवादको परिष्कृत कर शुद्धाद्वैतके रूपमें हमारे सामाने रखा। जिससे आज वेदका निष्पक्ष अध्ययन और आलोचन करनेवाले अुनके चरणोंमें भक्तिभावसे विनम्र हो जाते हैं। अिसी समयके लगभग श्रीमर्यादा पुरुषोत्तम भगवान रामचन्द्रकी लोक-कल्याणकारी भक्तिके प्रचारका समय आता है। जिसमें हिन्दी साहित्यके सूर्य और चन्द्रमा सूरदास और तुलसीदास अुभयविध पुरुषोत्तम भगवान्के गुणगान द्वारा जनताको आत्मानन्दमें विभोर कर त्रिविध सन्तापोंसे कोसों दूर हटा ले जाते हैं। अिस समय जितने भी भक्तिमार्गके प्रचारक, आचार्य अुपदेशक, सन्त साधु और सन्यासी हुअे अुन सभीको सफलता मिली और अुनके अुपदेशामृतसे जनताने लाभ अुठाया।

कहनेका तात्पर्य यह है कि अिस समयकी भक्तिमें जिस प्रकारकी पूर्णता अुसकी देशकाल-परिस्थितिके कारण आअी, अुसी प्रकार, अुस समयमें व्रजभाषा साहित्यको भी यही सौभाग्य प्राप्त हुआ। आचार्य चरणोंने पुष्टि-मार्गकी भूमिका अिन सूत्रोंमें बाँधी है—

अेकं शास्त्रं देवकी पुत्रगीतम्
अेको देवो देवकीपुत्र अेव।
मन्त्रोऽप्येकस्तस्य नामानि यानि
कर्माप्येकं तस्य देवस्य सेवा॥

भक्ति- ज्ञान और कर्मके अद्भुत सामंजस्यका यह अेक प्रतीक था। अुन्होंने प्रमाण चतुष्टयके आधारपर बताया कि श्री पुरुषोत्तमका अनुग्रह वा पोषण 'पुष्टि' है; जिसमें साधन वा फल हो और जिसके द्वारा अहन्ता ममता रूप संसारसे मुक्ति, भगवन्माहात्म्यका ज्ञान भगवत्साक्षात्कार और भगवल्लीलामें प्रवेश हो, वही 'पुष्टिमार्ग' है। अिसी लक्ष्यसे अभिप्रेरित होकर श्री मदाचार्यने भ्रान्त-चित्त दैवी जीवोंको अुनके अुद्धारका सरल मार्ग भगवदुपदिष्ट आत्मनिवेदन रूप ब्रह्मसंबन्ध दीक्षाका विधान किया। अिस प्रकार देहाध्यास-निवृत्तिके अनन्तर अिस पुष्टिमार्गके अुपदेशसे असंख्य मानव-समुदायने सेवाधिकार अेवं वैष्णवता प्राप्त की और प्रशस्त कल्याण-साधन रूप भागवतधर्म वा भक्तिमार्गका अनुसरण किया। आचार्यचरणोंने समस्त भारतवर्षकी अनेक बार स्वयं भू-परिक्रमा कर भक्तिधर्मका प्रचार किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाप्रभु अेवं गुंसाअीजीने अपने पुष्टिमार्गको पल्लवित फलित करनेके लिअे व्रज-सरीखा अनुकूल क्षेत्र चुना। व्रज स्वयं पुष्टिमार्गके सर्वस्व आराध्य श्रीकृष्णकी लीला-जन्मभूमि है। व्रज अुनके पुण्य गोलोकका आधिभौतिक स्वरूप है। वहाँके कण-कणमें लता-वल्लरी, वनवीथी, कुंज-निकुंज, गिरि-कंदराओंमें अेक सहज माधुर्य है। कालिन्दीके अविरल स्रोतमें अुसकी पुण्य समुज्ज्वल पुलिनोंमें मोहनकी अुसी भुवन मोहिनी वंशीकी स्वर-लहरी अभिगुँजित है। भला महाप्रभु अपनी साधनाके लिअे अितना दिव्य-भव्य क्षेत्र अन्यत्र कहाँ पाते? अतअेव अुन्होंने श्रीकृष्णके मधुर वात्सल्यपूर्ण यशोदोत्संग-लालित परब्रह्मरूप श्रीकृष्णके स्वरूपकी आराधना अुनकी क्रीड़ास्थली व्रजभूमिसे ही आरंभ की। अुन्होंने व्रजके देवाधिदेव गिरिराजकी मनोरम तलहटीमें अिस भगवत्ग्रह भक्ति मार्गकी स्थापना की। अुन्होंने भक्तोंकी भावनाको अनुष्ठित करनेके अुद्देश्यसे वैष्णवोंके परमाराध्य श्रीकृष्णको ही सर्वोपरि सर्वश्रेष्ठ माना। श्रीकृष्ण ही साक्षात् पूर्णपुरुषोत्तम है और यही साक्षात् स्वरूपात्मक पुष्टिमार्गकी समस्त भगवन्मूर्तियोंमें विराजमान हैं। अिस दृष्टिके अपने सेव्य स्वरूपोंमें अुन्होंने श्रीनाथजीको प्रधानता दी और अनन्तर गुंसाअीजीने अपने सात पुत्रोंमें सात स्वरूप विभाजित कर सात पीठ वा घरोंकी स्थापना करते हुअे अिस सेवामार्गैकप्राण साम्प्रदायिक-संस्थानको जन्म दिया।

यहाँ यह कह देना अनपेक्षित न होगा कि संप्रदायकी सेवा प्रणालीमें मानव-जीवनके समस्त सत्य-शिव-सुन्दर लोककल्याणकारी तत्वों अेवं ललित कलाओंका सुन्दर अभिनिवेश है। प्रभु सेवाके संबंधसे यहाँ सांप्रदायिक मधुर भावनाओंके अनुसार विविध ऋतुकालके अनुरूप त्यौहार, मनोरथ अुत्सवादि अेवं दैनिक सेवाप्रकार अितने प्रांजल कला-प्रपूर्ण रूपमें नियोजित किअे गअे हैं कि अिससे संगीत, साहित्य, काव्य, चित्र, वस्तु, सामग्री, निर्माण आदि समस्त अुत्कृष्ट लोकानुरंजनकारी कलाओंको प्रश्रय देकर अमरता प्रदान कर दी गअी है। पुष्टिमार्गके सम्पूर्ण सावयव संस्थानके पर्यालोचनसे यह विदित होगा कि यहाँ सभी बाल, युवा, वृद्ध, राजा, रंक, विभिन्न जाति धर्मके लोगोंको अपनी-अपनी रुचिके अनुकूल सभी रस अलंकारकी सामग्री समुलब्ध होगी। भक्तिमार्गके नाते प्रभुशरण गतिकी भावनासे आनेवाले जीवमात्रके लिअे पुष्टिमार्गका अुदात्त कल्याणकारी द्वार अुन्मुक्त है। यहाँ धर्म, राजनीति, अितिहास, दर्शन, विज्ञानके सभी वाद और तत्वोंका सार्वभौम सर्वोपादेय विश्वधर्मके रूपमें सुन्दर समन्वय है। संगीत, काव्य, कलाके विनियोगपूर्वक यदि पुष्टिमार्गकी सेवाप्रणालीमें नवधा भक्ति-विहित कीर्तन भक्तिको स्थान न दिया जाअे तो आज भक्ति काव्य साहित्यका अमूल्य रत्न सूर, नन्ददास, परमानन्द आदि रचित अष्टछाप-काव्य हमें कैसे समधिगत होता?

श्री नाथजीके पुण्य प्राकट्य अेवं सात पीठोंकी संस्थापनाके अनन्तर सेवा प्रणालीके साथ ही हिन्दी साहित्यके अभिनव-व्यापक अुत्कर्षका द्वार खुलता है। यह अेक दैवी लीलाका संयोग था कि वल्लभाचार्यके प्रादुर्भावके साथ ही सूरदास जैसी विमल साहित्यिक विभूतियाँ भी परिकर सहित भारत धरापर अवतीर्ण होती हैं। जिस समय यवनाक्रांत, भ्रांत मानव-जीवनको भक्ति-भागीरथीके निर्मल प्रवाह द्वारा शान्ति-सुधासे अभिसिंचित करनेका समय महाप्रभुके समक्ष अुपस्थित था, सूरदास जैसे अनेक महानुभावोंका सहयोग अुन्हें अुपलब्ध होता है। ये भक्तिसिन्धुके परम जाज्वल्यमान अनमोल रत्न थे। अैसी अुज्ज्वल मणियोंका भक्ति काव्य साहित्यकी मालामें अपने कोमल सुवासिक्त-परागरञ्जित करकमलोंसे गूँथना श्रीवल्लभाचार्य सरीखे कुशल कलाकारका ही काम था। अुस दुर्दम यवन-साम्राज्यकी क्रान्तिकारी लहरोंके थपेड़ोंके बीच व्रजभाषा द्वारा हिन्दी साहित्य अेवं संस्कृतिकी रक्षा और भक्ति-काव्य-साहित्य-निर्माणका सम्पूर्ण श्रेय श्री वल्लभाचार्य-चरणोंको ही समर्पित किया जा सकता है।

अिसी अुद्देश्यसे सूरदासादिको आपने अपने पुनीत चरणोंमें शरण देकर श्रीनाथजीकी दैनिक सेवामें नियुक्त किया। यथासमय ये ही सूरदासादि आठ परम अुत्कृष्ट भक्तकवि शिष्य श्री गुसाअीजी द्वारा "अष्टछाप" के रूपमें हमारे समग्र कृष्ण-भक्तिमार्ग अेवं साहित्यके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकमंचपर अनुष्ठित होते हैं। भावात्मक लीलाकी दृष्टिसे प्रभुके ये बालसखा माने जाते हैं। अतअेव 'अष्टसखा' के रूपसे भी विख्यात हैं। श्री नाथजीकी सेवाप्रणालीमें आठों दर्शनोंमें पृथक्-पृथक् आठ कवियोंको कीर्तनकारके रूपमें नियुक्त किया गया था।

अुक्त अष्टछापके कवियोंमें सूरदास, परमानन्ददास, कुम्भनदास और कृष्णदास ये चार भक्तकवि श्री वल्लभाचार्यके अेवं नन्ददास, चतुर्भुजदास, छीतस्वामी और गोविन्दस्वामी श्री विठ्ठलनाथजीके शिष्य थे। अिन आठों महानुभावोंने आत्मानन्दमें लीन होकर जो भक्ति-विधायिनी सरस रचना की, वह वास्तवमें हिन्दी साहित्यमें अनूठी देन है और हिन्दी साहित्य कभी अुससे अुऋण नहीं हो सकता। अिनमें अप्रतिम काव्य प्रतिभा, देहानुसन्धान रहित प्रेमोन्मत्तता, भाव-तल्लीनता, स्वाभाविक त्याग और निःस्पृहता अेवं श्री नाथजीके चरणोंमें पूर्ण भावानुरक्ति थी। काव्य और संगीतका अुन्हें पारङ्गत शास्त्रीय ज्ञान था। अुन्हें स्वानुभवता प्राप्त थी, अतअेव नित्य नवीन पदोंकी रचनाकर भगवद्भावमें विभोर रहना ही अुनका अेकमात्र ध्येय था। अुनकी भावपूर्ण रचना, सरस पदावली, गंभीर विवेचन, स्वाभाविक वर्णन, अनूठी अुक्तियाँ आदि काव्यके मनोरम गुणोंकी किसी साहित्यसे तुलना नहीं की जा सकती।

अष्टछापकी मौलिक भावधाराने सभी संप्रदाय और साहित्यके निर्माताओंको अेक प्रेरणा दी और पुष्टिमार्गकी अिस भक्त-कवि परिपाटीने अिसी पुनीत विचारधाराके साथ साहित्यमें अनेक वैष्णव, रीतिकालीन अेवं राष्ट्र-कवियोंको जन्म दिया। मीरा, विद्यापति, बिहारी, देवदास, कुमारमणि, मंडन, कृष्णकलानिधि, जयगोविन्द, पद्माकर, भारतेन्दु, श्रीधर पाठक, रत्नाकर, नवनीत, वियोगी हरि, हरिऔध, कविरत्न सत्यनारायण आदिको कौन भूल सकता है? आज भी अिन्हीं महानुभावोंके पद-चिन्होंपर व्रजभाषा काव्य अुपजीवित है।

तत्कालीन समस्त कवियोंने सूरसागरकी नव-नवोन्मेषशालिनी भावधाराके साथ अुन्मुक्त लेखनीसे व्रजभाषाको ही अपनी काव्य रचनाका माध्यम बनाकर अुसे नित्य नूतन बनाया। सूरदासजीने अपने साधन-क्षेत्र, साध्य विषय, अुपासना-प्रतीक और रस-निरूपणकी दृष्टिसे व्रजभाषाको हीं अनुकूल पाया। अुनके आराध्यकी बालकेलिका चित्रण· अुनके बालकुतूहलका निदर्शन, मातृहृदयके वात्सल्यका निर्वाचन अुन्हींकी तुतली मातृभाषा-व्रजभाषामें सफलतापूर्वक किया जा सकता था। भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे भी व्रजभाषामें सहज स्वाभाविक माधुर्य है और हृदयकी कोमलतम वृत्तियों, सूक्ष्मतम भावनाओं और सरलतम अुद्गारोंकी तरलतम अभिव्यंजनाके लिअे अन्य कोअी भी भाषा समर्थ नहीं हो सकती है। फिर वह थी अेक व्यापक लोक-भाषा पश्चिमी हिन्दी शौरसेनी, यों कहिअे कि श्रीकृष्णके मातृ-पक्षकी वंशज और विभिन्न दार्शनिकों, विविध सम्प्रदायोंके अधिष्ठाताओं-धर्माचार्योंके कार्यकलाक्षेत्र व्रजकी मधुर वाणी, जोकि सदासे राजसत्ताधीशोंके पार्श्वमें अुनके छायातले पनपी और तत्कालीन सर्वोत्कृष्ट प्रभावशाली भक्तिसम्प्रदाय पुष्टिमार्गने अपने संस्थान; अधिष्ठानके साथ अिस ब्रजबोलीको अपनाया था। यदि पुष्टिमार्गके अनन्यतम अनुयायी भावुक सूर, नन्द आदि ब्रजभाषाको अपने हृदयकी भावनाओंका माध्यम न बनाते, श्रीवल्लभाचार्यसे परम तेजस्वी धर्माचार्य अुसे अपनी भाषा, अपने वंशकी मातृभाषा और जातिभाषा स्वीकार न करते तथा परवर्ती पुष्टिमार्गीय आचार्य अेवं वैष्णव साम्प्रदायिक साहित्यका निर्माण गद्यपद्यमें स्वयं कर और दूसरेसे कराकर अपनी असंख्य वैष्णव मानव-मेदिनीमें अुसका प्रचार न करते तो आज ब्रजभाषा अपने अिस समृद्ध और व्यापक रूपमें हमें समधिगत न होती।

मन्दिरोंकी कीर्तनपद्धतिने ब्रजभाषा काव्यको और कथा-प्रवचनादि सत्संगोंने ब्रजभाषाके वार्ता रूपमें लिखे गद्य साहित्यको अनन्त कालके लिअे अेक दिव्य अमरता प्रदान कर दी। परम्पराओं और पीढ़ियोंकी वैष्णव भावनासे अनुबन्धित होकर ब्रजभाषा अखण्ड राष्ट्र-व्यापी वाणी और अेक विशाल सांस्कृतिक भाषाके रूपमें आज हमारे समक्ष अुपस्थित है। जन-जन व्यापी पुष्टि मार्गी गुर्जर, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र, मालव, सिन्ध, पंचनद, राज-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थान, अुत्कल, वंग सरीखे सुदूर-सुदूर प्रान्तों व अहिन्दी भाषी जनताको भी अपने व्रजभाषागत भक्ति काव्य-धाराके निर्मल शीतल सलिल-प्रवाहसे आप्लावित कर दिया। आजकी राष्ट्रभाषा हमारी हिन्दी अिस व्रज-भाषाके प्रति अुपकृत है, और अिससे भी अधिक हमारे पुष्टिमार्गके प्रति, जिसने साहित्यको ही नहीं, सम्पूर्ण देशको भी अेक अमर संजीवनी शक्ति प्रदान की।

यह पुष्टिमार्गके लिअे अेक गौरवकी बात है कि अुसका वार्ता साहित्य ही हिन्दीके गद्य साहित्यकी मूल चेतना और प्रेरणा है। गद्य साहित्यका प्रारम्भ ही व्रजभाषामें होता है। सबसे पहिले अुसका परिष्कृत रूप "चौरासी वैष्णव-वार्ता" रचयिता गोकुलनाथजीके गद्यमें ही हिन्दी साहित्य जगत्को प्राप्त होता है। विशिष्ट साहित्य महारथियोंने गोकुलनाथजीको ही गद्यके आदि प्रवर्तकोंमें माना है। वार्ता साहित्यकी परिष्कृत गद्य शैलीका अनुकरण ही परवर्ती विद्वानों अेवं वैष्णवोंने और "२५२ वैष्णव वार्ता", श्रीनाथजी, महाप्रभुजी, अष्टसखाओंकी घरू-निजी अेवं अनेक प्राकट्यवार्ता आदि गद्य ग्रंथोंका निर्माण हुआ। नाभादास, जटमल, गङ्ग-भाट, देव, ललितकिशोरी, आदिके गद्य क्रमिक परिमार्जित रूपमें हमें मिलते हैं। यों तो अनेक पुष्टिमार्गीय साहित्यिकोंने भी हिन्दीके निर्माण प्रचारादिमें अुसे प्रेरणा दी है, किन्तु साहित्यके आधुनिक कालमें प्रारम्भिक गद्य शैलीके निर्माता परिष्कर्ता और विविध विषयक-साहित्य-विधाता अेवं आधुनिक हिन्दीके पथ-प्रदर्शक भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रसे भी हिन्दी साहित्य कम अुपकृत नहीं है, जो कहना नहीं होगा कि साहित्यके साथ ही पुष्टि-मार्गके भी भारतेन्दुजी अेक अुज्वलतम विभूति हैं और जिनके नामसे साहित्यमें 'भारतेन्दुकाल' प्रसिद्ध हुआ है। अिस प्रकार व्रजभाषाका स्थान समयान्तरमें आजकी खड़ी बोलीने लिया है, जो आज स्वाधीन भारतकी जन-जनवंदनीय राष्ट्रभाषाके रूपमें अपने गौरवशाली पदपर आसीन है।

अिस सम्प्रदाय द्वारा जब हम हिन्दी साहित्यकी सेवाकी गति-विधिका परीक्षण करते हैं तो हम अुसे अिस रूपमें पाते हैं। अेक तो प्रत्यक्ष रूपसे की गअी सेवा, जिसमें अुसके आचार्यों द्वारा किया हुआ अुपदेश और सिद्धान्त प्रतिपादनकी शैलीसे किया हुआ ग्रन्थ-निर्माण है, जिसमें वार्ताओंसे लेकर शास्त्रीय आकर ग्रन्थोंका भी समावेश हो जाता है। हिन्दी या अुसके तात्कालिक रूप व्रजभाषामें किया हुआ यह साहित्यिक सदनुष्ठान आज हिन्दी जगत्के सम्मुख जिस रूपमें आना चाहिअे अुस रूपमें नहीं आया है। हिन्दी साहित्यके समालोचकों और अष्टछापका अध्ययन करनेवाले लेखकोंको आज अितना कहा जा सकता है कि जब तक वे हमारे अिस साहित्यिक ज्ञानसे रहित हैं जिसे वे भाव-भावना, आचार-विचार, सेवा-शृंगार अेवं अुपदेश सिद्धा-न्तकी बातें समझकर हेय दृष्टिसे छोड़ देते हैं तबतक वे अष्टछापके काव्य-साहित्यके वास्तविक पारखी नहीं हो सकते, और न अुसकी अन्तरात्माका रंचमात्र स्पर्श ही कर सकते हैं। अूपरी अुड़ानें भरकर वे चाहे जितना आत्म-परितोष प्राप्त कर लें। आज यदि वे साहित्य संसारके नियामक माने जा सकते हैं तो कल होनेवाले वास्तविक अध्ययनशील समालोचकके आगे निरे अबोध भी सिद्ध हो सकते हैं।

संप्रदायके प्रत्यक्ष रूपमें पहिले कही हुअी हिन्दी साहित्य सेवाका दूसरा रूप हमें अष्टछाप और अुनके प्रकारपर की गअी अगाध पद्य-रचनाके स्वरूपमें मिलता है, जो आज अधिकांश अप्रकाशित और तिरोहित अवस्थामें विद्यमान है। अेक ओर यदि साहित्य-जगत्के सूर्य महानुभाव सूर और अष्टछापके अन्य कवियोंका साहित्य रखकर तोला जाअे तो हिन्दीका आजतकका अन्य पद्य-साहित्य पासंगमें ही निकल जाअेगा। तब फिर जिन भक्त कवियोंकी रचनाओंका अभी अन्वेषण भी नहीं हुआ है, अुनकी बात तो दूरापास्त है।

पुष्टि संप्रदायके अिन दो प्रत्यक्ष रूपोंमें की गअी हिन्दीकी सेवाओंके निर्देशके बाद जब हम अुसके परोक्ष रूपमें की गअी सेवाका अन्वेषण करते हैं, तो यह भी हमारे लिअे कम महत्वकी वस्तु सिद्ध नहीं होती। अिसमें भी हमें दो रूप मिलते हैं। अेक तो अष्टछापकी अनुकरण-पद्धतिपर की गअी व्रजभारतीकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवा जिसमें सम्प्रदायसे अितर अुन अन्य कवियों, भक्तोंकी पद्य रचनाका समावेश होता है, जिनपर अष्टछापका प्रभाव पड़ा है। अिस श्रेणीमें रामानुज-मध्व-निम्बार्क, राधा वल्लभी हित संप्रदायके भक्त-कवियोंकी रचित साहित्य-सेवाका नाम लिया जा सकता है जो अष्टछापके बाद अुनकी शैलीसे प्रभावित होकर अपनी वाणीको पवित्र करनेके लिअे साहित्य जगत्के सम्मुख आअे। अिनकी रचना और गणना अुँगलियोंपर नहीं आँकी जा सकती। यह अपना अेक विशेष स्थान रखते हुअे भी पुष्टि मार्गकी विचार-धारासे प्रभावित हैं। यह कहनेमें कोअी संकोच होनेका कारण नहीं दीखता।

अिसी परोक्ष रूपमें की गअी हिन्दी साहित्य-सेवाका दूसरा रूप हमें आन्ध्र तेलंग जातिके कवियों-द्वारा की गअी अुस साहित्य रचनाके रूपमें मिलता है—जो श्रीवल्लभाचार्य और अुनके पुत्र श्री गुँसाअीजीके द्वारा दक्षिण भारतसे लाकर अुत्तर भारतमें बसाअी गअी थी, अथवा अुनके आश्रय किंवा संपर्कमें आअी थी। अिस जातिके नर-रत्न कवियों और विद्वानोंका परिचय कुछको छोड़कर हिन्दी जगतको नहीं है, वे अभी अिति-हासके पत्रोंपर नहीं चढ़े हैं। अिनके परिचय अेवं साहित्यके प्रकाशनसे हिन्दी साहित्यमें कुछ और भी प्रकाश पड़ेगा। अितिहासमें यह अेक नवीन रहस्य है कि अितर भाषा-भाषिणी किसी अेक ही जातिमें अिन गत पाँच सौ वर्षोंमें अितनी संख्यामें विद्वान कवि तथा ग्रंथ-कार हुअे हों।

अिन सब परिस्थितियोंका विचार करनेपर यह दावेके साथ कहा जा सकता है कि अिस संप्रदायने हिन्दी साहित्यकी चतुर्दिक् सेवा करनेका सौभाग्य समधिगत किया है। यदि अिन अूपर कहे हुअे चारों प्रकारके साहित्यकारोंका हिन्दी-साहित्यसे पृथक्करण कर लिया जाता है तो फिर हिन्दी-साहित्यके पास अैसी कौनसी वस्तु रह जाती है जिसपर वह गर्व कर सके? कहनेका तात्पर्य यह है कि हिन्दीके प्रचार, सृजन और अुद्धारमें यह किसीसे पीछे नहीं रहा है। हम आशा करते हैं कि आगे भी वह पीछे नहीं रहेगा। और अपनी कुछ अिन दिनोंकी शिथिलतासे संभूत न्यूनताकी शीघ्र ही पूर्ति कर लेगा। आज यह सुन्दर अवसर है जब हम और हमारा भक्तिपंथ हिन्दी साहित्यसे संपर्क बढ़ानेके लिअे प्रयत्न-शील हो रहा है।

साहित्य, संगीत और कला अिस लोककी वस्तुअें होते हुअे भी अलौकिक हैं और अिसीलिअे अिसमें नित्य, सतत, स्थाअी और अविकृत रूपमें होनेपर आनन्द-दाअिनी ही नहीं कहा जाता, प्रत्युत ये स्वयं आनन्द-रूप, रसके रूपमें अभिव्यक्त की जाती हैं। मानवीय जीवन अिसके विरुद्ध अनित्य, क्षणस्थाअी अेवं विकृत रूपमें रहनेवाला अेक संसारका प्रवाह है, जो सतत निम्नगामी है, पर अिन्हींका संयोग पाकर वह अपनी दिशाका परिवर्तनकर देता है और ये अुसे अूँचा ले जानेवाली होती हैं। अिसके अनेक अुदाहरण हमें मिल सकते हैं जहाँ साहित्य-संगीत-कला अपने शुद्ध रूपसे विकृत हो गअे हैं अथवा अिनका सहारा पाकर निम्नगामी मानव-जीवन धरातलसे बहुत अूँचा अुठ गया है। मैं जहाँ तक अनुभव करता हूँ, साहित्य-संगीत और कला जहाँ मानव-जीवनकी अंकशायिनी हो गअी है वहाँ वे विकृत होकर विनाशकारिणी सिद्ध हुअी हैं और जहाँ अिसके विपरीत मानव-जीवन अिनकी गोदमें विश्राम करने लगा है वहाँ वे शाश्वत सुखदाअिनी हो गअी हैं।

अिस आन्तरिक रहस्यकी विज्ञप्तिके कारण ही अिस संप्रदायके मूल आचार्योंने अिनके संयोगको मानव-जीवनके साथ अुसी रूपमें रखनेका प्रयत्न किया जिससे वे विकृत न होकर समाजको अूँचा अुठानेमें सहायक हो सकें। नित्य, सतत, विराजमान, आनन्द-स्वरूपकारी अविकारी भगवान् श्रीकृष्णके साथ संयोग हो जानेपर ये सब आज अपना यथास्थित रूप बनाअे रखनेमें समर्थ हैं और अुनके स्थान च्युत हो जानेकी कोअी संभावना नहीं है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, पुष्टिमार्गका विकास अुनके मन्दिर संस्थानादिका नियोजन अितना सुन्दर रूपमें हुआ है, कि यहाँ संगीत-साहित्य-कलाका अुसमें अेक विराट समन्वय है, वहाँ प्रत्येक सांप्रदायिक पीठ-घर मन्दिर अेवं बैठक आदिमें अितनी साहित्य-रसि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकलित और संरक्षित है, जितनी अेकत्रित की जानेपर समस्त भारतमें अन्यत्र कहीं अुपलब्ध न होगी। संस्थानाधिपतियोंकी जहाँ-तहाँ अुपेक्षा और असावधानीके कारण कितना ही साहित्य तो अस्तव्यस्त, विच्छिन्न अेवं लुप्त-प्राय हो गया है। कितना ही अभी बाह्य जगत्के लिअे अन्धकारमें छिपा पड़ा है। फिर भी जो कुछ साहित्यानुरागी अुन्नतमना आचार्यों अेवं अुनके आश्रित विद्वानों द्वारा सुव्यवस्थित और अन्वेषित किया गया है, वह भी हिन्दी साहित्यके लिअे अनुपम निधि है। सत्य तो यह है कि पुष्टिमार्गीय भक्ति-संप्रदायकी कुछ अैसी व्यावहारिक प्रवृत्ति रही है कि अुसमें जितनी अटूट द्रव्य-राशिका विनियोग प्रभुकी स्वरूप-सेवा वा गुरु सेवा, अुत्सव, राग-भोग-वैभव आदिमें किया है, अुतनी नाम-सेवा, अपने साहित्यके संरक्षण, गवेषणा और संवर्द्धनामें नहीं। फलस्वरूप अुसका आजके साहित्यमें अुतना मूल्यांकन न हो सका जितना अपेक्षित है। तथापि अब नवीन खोज और साहित्यिक अितिवृत्तके प्रेमी विद्वानोंने यहाँकी आलोक रेखाअें लेना प्रारंभ कर दिया है और अिस प्रयोगसे अनेक अज्ञात अैतिह्य तत्व-सूत्र साहित्य-जगत्के समक्ष आ रहे हैं। कुछ निश्चित रेखाओंमें हिन्दी और पुष्टि मार्गको परस्पर समन्वय रीतिसे कार्य करनेकी आवश्यकता है।

लखनअू विश्व विद्यालयके हिन्दी-विभागके आचार्य डॉ. दीनदयालु गुप्त लिखते हैं:—

श्रीकृष्ण भगवान्का निस्साधन जनोंपर अनुग्रह ही पुष्टि है। पोषणं तदनुग्रहः। कुछ लोगोंने अिस मार्गको 'खाओ, पिओ और पुष्ट रहो—मौज करो' सिद्धान्त माननेवाला भोग-विलासी मार्ग बताकर अुसपर अनेक लांछन और आक्षेपोंका आरोप किया है और कहा है कि अिस मार्गके अनुयाअी विषय-सुखकी ओर ध्यान देते हुअे, देह और अिन्द्रियोंके पोषणको ही अपना ध्येय मानते हैं। श्री वल्लभाचार्य तथा अुनके बादके महान् आचार्यों द्वारा लिखित ग्रन्थोंके देखनेसे पता चलता है कि वास्तवमें पुष्टि मार्गके सिद्धान्तोंमें विषय-सुखके पोषणका कहीं भी आदेश नहीं दिया गया है। आचार्यने तो अपने ग्रन्थोंमें कअी स्थलोंपर स्पष्ट शब्दोंमें कहा है कि सांसारिक विषयोंमें मनुष्यको कभी आसक्त नहीं होनी चाहिअे।.....श्री वल्लभाचार्यजीके बाद श्री विठ्ठल-नाथजीने भी सांसारिक विषयोंमें अनासक्ति और अन्तमें अुनके त्यागका ही अपने ग्रन्थोंमें अुपदेश दिया।.....अिस मार्गके व्रजभाषामें लिखनेवाले सूरदास, परमानन्ददास, नन्ददास आदि बड़े-बड़े भक्त कवियोंने भी संसारकी असारता दिखाते हुअे लौकिक विषयोंसे अलग रहनेका ही प्रबोधन किया है। और भगवत्कृपाको ही साधन बताया है।

—संपा. रा. भा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेक हृदय हो भारत जननी

—श्री कालिदास कपूर

देशके स्वतंत्र होनेपर जब स्वतंत्र गणतंत्र भारतके 'संविधान' ने हिन्दीको राष्ट्रभाषा माना और यह निश्चय किया कि पंद्रह वर्षके भीतर केन्द्रीय शासनके सब काम हिन्दीके माध्यमसे होने लगें, तब मैंने समझा कि मुझे शेष जीवनका सेवाक्षेत्र मिल गया। वैतनिक शिक्षाके ४० वर्ष पूरे हो रहे थे। तबतक मैंने हिन्दी-सेवाको अपने अवकाशका ही अधिकांश समय दिया था। अब निश्चय किया कि शीघ्रसे शीघ्र वैतनिक सेवासे मुक्त होकर अवैतनिक हिन्दी सेवाको अपना पूरा समय दूँ।

अिस निश्चयके पहले शिष्यवर प्रेमनारायण टण्डनने 'हिन्दी सेवी संसार' शीर्षक अेक संदर्भ ग्रन्थ प्रकाशित किया जिसमें हिन्दीकी पंचवर्षीय योजनाके प्रस्तावकी ब्यारेवार योजना सम्मिलित हुअी। अिसके पश्चात् जनवरी १९५१ की "सरस्वती" में "पंद्रह वर्षकी अवधिमें हिन्दी सेवियोंका दाअित्व" प्रकाशित हुआ। अिस लेखको पढ़कर राजर्षि टंडनका आदेश हुआ कि अिसी विषयपर अपेक्षाकृत छोटा लेख प्रकाशित हो जिसकी यथेष्ट प्रतिलिपियाँ छपकर समानशील हिन्दी सेवियोंमें वितरित हों। अतअेव फरवरी १९५२ की "सरस्वती" में "सक्रिय सेवाकी रूपरेखा" शीर्षक लेख प्रकाशित हुआ। प्रतिलिपियोंका यथेष्ट वितरण भी हुआ। परन्तु अिन लेखोंसे प्रस्तावित योजनाकी गाड़ी आगे नहीं बढ़ सकी। गाड़ी आगे न बढ़नेके सही कारण मेरी समझमें तब आअे जब पिछले वर्षके अंतिम दो दिनोंमें हिन्दी सम्मेलनके अधिवेशनके बहाने मुझे वर्धामें हिन्दीके प्रमुख सेवियोंसे मिलनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ।

काशीकी नागरी प्रचारिणी सभा हिन्दी सेवाकी पहली सार्वजनिक संस्था है। स्व० श्यामसुन्दरदास अिस सभाके जन्मदाता थे और प्राण भी। सभाके वयस्क होनेपर हिन्दी साहित्य सम्मेलनका जन्म हुआ। सभाके जन्मदाता और पोषक ही सम्मेलनके जन्मदाता थे। कालांतरमें गांधीजीके स्वातंत्र्य आंदोलनका नेतृत्व लेनेपर अुन्हें हिन्दीकी व्यापकतामें भारतीय अेकताका सर्वतोअधिक सुदृढ़ सूत्र दिखाअी दिया। गाँधीजीका आशीर्वाद पाकर दोनों संस्थाओंने राष्ट्रीय महत्व प्राप्त किया। नागरी प्रचारिणी सभा अपने पिछले पोषकोंकी ही आश्रित रही। परन्तु बहुत शीघ्र गांधीजीके सहयोगी राजर्षि टण्डन सम्मेलनके प्रधान पोषक और प्राण हुअे। सम्मेलनका जो भवन और संग्रहालय हम प्रयागमें देखते हैं वह सब टण्डनजीकी ही तपस्याका प्रसाद है।

जिस प्रकार सम्मेलनका जन्म सभाके अुद्योगसे हुआ था, अुसी प्रकार सम्मेलनके वयस्क होनेपर दोनोंका अेक दूसरेसे सम्बन्ध नहीं रह सका। नागरी प्रचारिणी सभाका अुद्देश्य अपने नामसे प्रचार ही हो सकता था। सो सभाने शोध और खोजकी सेवा अपनाअी। सम्मेलन द्वारा साहित्यका परिष्कार और निर्माण होना चाहिअे था। सो अिस संस्थाने मुख्यतः प्रचारकी ही सेवा अपनाअी। अिस प्रचारके लिअे हिन्दी विश्वविद्यालय नामक कागजी संस्था स्थापित हुअी। अिस विश्वविद्यालयकी प्रथमासे अुत्तमा तक परीक्षाअें चालू की गअीं। गांधीजीकी प्रेरणासे अहिन्दी भाषी प्रान्तोंमें हिन्दीका विशेष प्रचार करनेके लिअे दो संस्थाअें स्थापित हुअीं- १९१८ में मद्रासमें दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा और १९३७ में वर्धामें राष्ट्रभाषा प्रचार समिति। अिन दोनों संस्थाओंकी भी परीक्षाअें ही प्रचारका मुख्य साधन रहीं। काशीकी ना. प्र. सभा अलग रही, परन्तु वर्धाकी समिति और मद्रासकी प्रचार सभा प्रयागके सम्मेलनसे थोड़ी बहुत संबद्ध रही हैं। यही होना भी चाहिअे था, यद्यपि अिन सबकी जननी नागरी प्रचारिणी सभासे भी अिनका सम्बन्ध बना रहता तो और भी अच्छा होता।

यह जमाना वह था जब हिन्दीकी कहीं कोअी मान्यता न थी। अहिन्दी भाषी प्रान्तोंकी बात बहुत दूर, हिन्दी भाषी प्रान्तोंमें भी अुर्दू अुसकी प्रतिद्वंद्विनी थी। अुसे मुस्लिमोंका सहारा तो था ही, कांग्रेसका सहारा था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और शासनका भी। "बिन गुरु मिलहि न ज्ञान" और "बिनु सत्संग विवेक न होअी" का समर्थक मैं शिक्षण-क्षेत्रमें भी रहा हूँ। सम्मेलन और संबद्ध संस्थाओंकी जड़में न मान्य विद्यालय थे, न शिक्षक। परन्तु हिन्दीकी दैन्य स्थिति देखते हुअे किसी प्रकार भी हिन्दीका प्रचार करना हिन्दी सेवीका कर्तव्य था। अतअेव सैद्धांतिक मतभेदको पीछे करके मेरे जैसे हिन्दी सेवियोंने अुत्तर प्रदेशके माध्यमिक शिक्षा बोर्डमें हिन्दी विश्वविद्यालयकी परीक्षाओंकी मान्यताके पक्षमें जोर लगाया और थोड़ी बहुत सफलता भी प्राप्त की। अिन परीक्षाओंका प्रचार बढ़ा, सेवाके नाते बहुतसे हिन्दी शिक्षकोंने सम्मेलनको अपना अवैतनिक सहयोग दिया। सम्मेलनकी आय बढ़ी। अुसकी सदस्यताके प्रति सम्मेलनके चुनावोंसे लाभ अुठानेवालोंका आकर्षण भी बढ़ा।

सिद्धांतकी अवहेलना अुस अस्वाभाविक परिस्थितिमें ही वषम्य थी, जब हिन्दी सोलह करोड़ जनताकी भाषा होकर भी हिन्दी भाषी प्रान्तोंके विश्वविद्यालयोंमें ही अमान्य थी। जब देश विभाजित होकर स्वतंत्र हुआ और हिन्दीको राष्ट्रभाषाका पद मिला, तब जो महानुभाव हिन्दी सेवी संस्थाओं द्वारा हिन्दी साहित्यके निर्माण और प्रचारके अुद्योगमें लगे थे, अुन्हें परिवर्तित स्थितिकी भूमिकामें अपनी नीति बदलनी चाहिअे थी। नागरी प्रचारिणी सभा कअी वर्षोंसे अवनीतिशील रही थी। परन्तु सभाके सौभाग्यसे यह संस्था परीक्षाओं और पाठ्यपुस्तकोंसे सम्बन्धित खतरनाक विषाक्त वातावरणसे मुक्त थी और अिसे समुचित नेतृत्व भी मिल गया। अतअेव यह बहुत शीघ्र पुनर्जीवन प्राप्त कर सकी और जहाँतक मेरा अनुमान है वह शोध और खोजकी अुस महत्वपूर्ण सेवामें संलग्न है जो हिन्दीके राष्ट्रभाषा होनेपर नितांत आवश्यक है। देशके अहिन्दी भाषी प्रान्त ही राष्ट्रभाषा प्रचार समिति और दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाके प्रमुख सेवा क्षेत्र हैं। अिन प्रान्तोंमें दस पंद्रह वर्षतक जिस रूपमें हिन्दीकी सेवा करनी चाहिअे थी, वैसी ही सेवाअें संस्थाअें कर रही हैं। अतअेव ये जीवित ही नहीं हैं, बल्कि अिनकी अुत्तरोत्तर पुष्टि भी हो रही है।

पुत्रियाँ पुष्ट हो रही हैं, परन्तु जननी अपना रवैया नहीं बदल सकी। सम्मेलनका जनतन्त्रात्मक विधान अुसका विष हो गया। अुसका वार्षिक चुनाव परीक्षा शुल्क और पाठ्यपुस्तकसे प्राप्त आयके प्रतिद्वंद्वी लोलुपोंका अखाड़ा बन गया। जब हिन्दीको सम्मेलनके नेतृत्वकी विशेष आवश्यकता थी, तभी वह न्यायालयका बन्दी हुआ। पाँच वर्षतक यह संस्था पद-लोलुप निर्मित बंदीगृहसे मुक्त न हो सकी, तब सम्मेलनके कअी पिछले अध्यक्षोंके हस्ताक्षरसे और राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके तत्वावधानमें हिन्दी सम्मेलनका अधिवेशन गत दिसम्बर ता. ३०-३१ को वर्धामें हुआ। जो प्रस्ताव स्वीकृत हुअे हैं, वे जनसाधारण और शासनके सामने हैं। यदि सम्मेलनका अुद्धार हो सके तो हिन्दी भक्तोंको यह और अिससे सम्बन्धित नागरी प्रचारिणी सभा, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति और दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाके सेवा क्षेत्र और संचालन विधान निश्चित करने हैं।

आजकल डेमोक्रेसीकी धूम है। सम्मेलनका डेमोक्रेटिक विधान ही अुसके पतनका कारण हुआ है। राष्ट्रपिता गांधीजी अपने समयके सर्वोच्च जनवादी थे। परन्तु जो जो रचनात्मक सेवा करनेवाली संस्थाअें अुन्होंने स्थापित कीं, अुन्हें अुन्होंने चालू जनतन्त्रात्मक विधान नहीं दिया, अुन्हें चुनावचक्रसे मुक्त रखा। निवेदन है कि सम्मेलनका अुद्धार होनेपर अुसका जो विधान बने, वह चुनाव चक्रसे मुक्त रखा जाअे, अुसे अेक ट्रस्टका रूप देना ही श्रेयस्कर होगा। ब्योरेमें मुझे जाना नहीं। सम्मेलनके प्राण राजर्षि टण्डन प्रशिक्षण और अनुभवके नाते संविधानके प्रकांड पण्डित हैं। सम्मेलनका नया विधान अुनके नेतृत्वमें ही बने। अितना ही निवेदन है कि पुनर्जन्म प्राप्त सम्मेलनका विधान वह अिस प्रकार बनावें कि अुसका जन सम्पर्क बना रहे, जनप्रेरणा अुसे मिलती रहे, परन्तु जन बवन्डरके झोंकोंसे वह मुक्त रहे।

सेवा क्षेत्रकी भी बात करनी है।

हिन्दी सेवाके नाते हमें भारतके दो भाग मानने हैं—हिन्दी भाषी और अहिन्दी भाषी। दोनों भागोंमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवाका अुद्देश अेक ही रहना है, परन्तु कार्यक्रममें विभिन्नता होनी है।

राज्य पुनस्संगठन होनेपर हमें पाँच हिन्दी भाषी राज्य मिलते हैं--बिहार, मध्यप्रदेश, राजस्थान, पंजाब और अुत्तर प्रदेश। पंजाबमें अेक पक्ष गुरुमुखी लिपिमें पंजाबीका है। हमें अिस पक्षको साथ लेकर ही पंजाबमें अपनी सेवाका क्षेत्र बढ़ाना है, अुससे झगड़ा करके नहीं। दिल्लीसे काशीतक गंगा यमुनाके पेटेकी भूमि अुत्तर प्रदेशके अन्तर्गत है। यही आधुनिक हिन्दीकी जन्मभूमि है। यदि अिस पुण्य भूमिको यह गौरव प्राप्त है, तो अिसके निवासियोंपर हिन्दी सेवाका विशेष दायित्व भार आता है। यह भारवहन हमें अुस भावनासे नहीं करना है, जो अँग्रेजोंके व्हाअिट मैन्स बर्डन (White man's burden) में निहित है। हिन्दी शिक्षकों और प्रचारकोंको हिन्दीका पण्डित तो होना ही है, संस्कृतका ज्ञान प्राप्त करना है और अिसके साथ अेक भारतीय भाषा (गुजराती, मराठी, बंगला, तमिल, तेलुगु, मलयालम, कन्नड) तथा अेक विदेशी भाषा (अँग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन, रशन, स्पेनिश, चीनी, जापानी, पारसी, अरबी, लैटिन, ग्रीक) की भी जानकारी प्राप्त करनी है। अँग्रेजी साहित्य जो अितना समृद्ध हो सका है सो अिसी कारण कि जहाँ-जहाँ अँग्रेज व्यापार, शासन या सैरके बहाने गअे वहाँकी भाषाका अुन्होंने अध्ययन किया और अुसके साहित्यके रससे अँग्रेजी भाषा और साहित्यको सींचा। यही हिन्दी सेवियोंको भी करना है। काम पाँचों राज्योंके हिन्दी सेवियोंका है। परन्तु सेवामें --पद और सम्मानके लोभसे नहीं--अुत्तर प्रदेशको सबके आगे रहना है।

नागरी प्रचारिणी सभा जो सेवा अपनाअे हुअे है, अुसका क्षेत्र बहुत विस्तृत है। देवनागरी लिपिका आवश्यक सुधार, हिन्दीका व्याकरण, हिन्दीके पारिभाषिक कोष, जनपदीय साहित्यका संकलन, शोध और प्रकाशन, अप्रकाशित हिन्दी, संस्कृत, पाली, मागधी और प्राकृत ग्रन्थोंकी शोध और प्रकाशन--ये सब सेवाअें बड़े महत्वकी हैं। सभाको जनताका सहयोग मिले, शासनसे आर्थिक अनुदान मिलता रहे और धुनके पक्के स्वाध्यायी वयस्क सेवा क्षेत्रमें हाथ बटानेके लिअे मिलते रहें, तो संविधानमें हमें जो अवधि मिली है अुसके भीतर नागरी प्रचारिणी सभा हिन्दी साहित्यकी आवश्यक सेवा करनेमें सफल होगी, अैसी आशा है।

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति और दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाके सेवाक्रममें भी कोअी विशेष परिवर्तन आवश्यक नहीं। राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके जिम्मे महाराष्ट्र, गुजरात, बंगाल, अुड़ीसा और आसाम आदि प्रान्तोंकी सेवा रहे। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा विशाल आंध्र, तमिलनाड, केरल और कर्नाटककी सेवा करे। जिस प्रकार राज्योंका पुनस्संगठन हुआ है अुसके हिसाबसे वर्धा महाराष्ट्रके भीतर आता है और मद्रास तमिलनाडके भीतर। वर्धासे आर्य भाषा-भाषी राज्योंकी सेवा होती रहे और मद्राससे द्राविड़ भाषा-भाषी राज्योंकी सेवा हो। पुनस्संगठनके परिणाममें द्रविड़ भाषा-भाषी राज्योंका क्षेत्र बढ़ गया है। यह अच्छा ही है। अब दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाको पहलेसे अधिक विस्तृत और सुचारु सेवाका क्षेत्र मिलता है।

हिन्दी भाषा-भाषी राज्योंमें राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी परीक्षाअें चालू रहने देनेके सम्बन्धमें सिद्धांतका आदेश बिलकुल प्रत्यक्ष है। अिन राज्योंके शासनोंका, अिनके मान्य विश्वविद्यालय और अन्य शिक्षालयोंका कर्तव्य है कि वह राज्यकी भाषा और साहित्यकी यथाशक्ति सेवा करें। नागरी प्रचारिणी सभा, सम्मेलन या राष्ट्रभाषा प्रचार समितिसे शासन और शैक्षणिक संस्थाओंको ब्यौरेवार या सैद्धांतिक परामर्श मिलता रहे। परन्तु मान्यता अुन्हीं परीक्षाओंकी रहे जिनकी तैयारीके लिअे मान्य शैक्षणिक संस्थाअें चालू हों। जब अुच्च शिक्षाके माध्यमके लिअे हिन्दीको मान्यता नहीं मिली हुअी थी तब हिन्दीमें अूँचे स्तरके-पठन पाठनका प्रोत्साहन करनेके लिअे हिन्दी विश्वविद्यालय या राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी परीक्षाओंका प्रोत्साहन आवश्यक था। अब स्वाधीन भारतके हिन्दी भाषी राज्यों और अुनकी शैक्षणिक संस्थाओंका कर्तव्य है कि शीघ्र-से-शीघ्र वे माध्यमके लिअे अंग्रेजीकी जगह हिन्दीका प्रयोग चालू करें। अिस कर्तव्य पालनमें अुनके सामने जो कठिनाअियाँ आवें अुनका निराकरण ही अिन हिन्दी सेवी संस्थाओंका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्तव्य होना चाहिअे। यदि अिस कर्तव्यका पूरा अनुमान अिन संस्थाओंके संचालक लगा सकें और अुससे मुक्त होनेके अुद्योगमें लगें, तो अैसी परीक्षाओंका बखेड़ा बटोरनेका अिन्हें समय ही नहीं मिलना चाहिअे। सम्मेलनकी बात आगे कहनी है। राष्ट्रभाषा प्रचार समितिको अुत्तर भारतके अहिन्दी भाषी राज्योंमें अपनी परीक्षाअें चालू रखनी ही है। प्रश्न यह है कि हिन्दी भाषी राज्य भी अिन परीक्षाओंके क्षेत्रमें रहें कि नहीं। अभी ये परीक्षाअें हिन्दी भाषी राज्योंमें चालू हैं। सिद्धांतकी बात हो चुकी। परन्तु जब तक नारी शिक्षाकी यथेष्ट व्यवस्था अिन राज्योंमें न हो जाअे और नारी वर्गकी परतंत्रता यथेष्ट न घटे, तब तक अिन राज्योंके नारी वर्गको अिन परीक्षाओंके लिअे अपने घर ही में तैयारी करनेका अवसर मिलता रहना चाहिअे। अपने कारबारमें लगे युवकोंको यदि विद्यालयकी दैनिक पढ़ाअीमें सम्मिलित होनेका अवसर नहीं मिलता, तो अिनके लिअे विद्यालयके भवनमें रात्रि कक्षाअें लगें। अन्नकी भूख शांत न भी की जा सके, परन्तु ज्ञानकी भूख शांत करना राष्ट्रीय शासनका प्रमुख कर्तव्य है। शासनसे जो न करते बने, अुसकी पूर्ति सार्वजनिक संस्थाअें करें। जहाँतक हिन्दीकी बात है वहाँ यह सेवा सम्मेलन और अुससे संबद्ध संस्थाओंकी होनी चाहिअे।

चार हिन्दी सेवी संस्थाओंमें तीनकी बात हो चुकी। वर्धाके अधिवेशनमें सम्मेलनको पुनर्जीवित करनेकी जो योजना स्वीकृत हुअी है वह यदि समझौते द्वारा अथवा अुत्तर प्रदेशीय शासनके सहयोगसे कार्यान्वित हो सके और सम्मेलनको नवीन जीवन प्राप्त हो, तो अुसके विधानमें जो भी परिवर्तन हो, अुसकी सेवा प्रणालीमें आमूल परिवर्तन आवश्यक होगा।

नवजीवन प्राप्त सम्मेलनको हिन्दी विश्वविद्यालय और अुसकी परीक्षाओंके मोहसे सर्वप्रथम मुक्त होना है। हिन्दी विश्वविद्यालयको हम अुन सब हिन्दी भाषी राज्योंके विश्वविद्यालयोंका पिता मान लें जिन सबमें हिन्दीको सर्वोच्च शिक्षाका माध्यम बनना है। पिताके पंच तत्वमें मिलनेपर ही अुसकी आत्मा अपनी संततिमें व्याप्त होती है। सम्मेलनको अिस दायित्वका निर्वाह करना है। अिस सम्बन्धमें विश्वविद्यालयोंके सामने सबसे बड़ी कठिनाअी हिन्दीमें सर्वोच्च शिक्षाकी पाठ्यपुस्तकों और संदर्भ ग्रंथोंकी कमी है। संदर्भ ग्रंथोंकी बात कुछ दूर है। पाठ्यपुस्तकों बिना अेक पग आगे बढ़ना भी कठिन है। टंडनजीके सामने यह कठिनाअी आअी तो अुन्होंने सर्वोच्च कक्षाओंके लिअे पाठ्यपुस्तकें लिखनेका मुझे आदेश दिया। यह सेवा मेरे मनकी थी। मैंने अुसे अिस प्रकार करनेका ढंग सोच रखा था, जो प्रकाशकोंको आकर्षक हो और लेखकोंको भी। परन्तु मेरी कठिनाअी यह थी कि किस संस्थाकी ओरसे यह सेवाकी जाअे। सम्मेलन द्वारा ही यह सेवा हो सकती थी। परन्तु बन्दीसे बात करना असंभव था। सम्मेलनके अतिरिक्त नागरी प्रचारिणी सभा ही मेरे सामने थी। सभाके सौभाग्यसे विद्वद्वर अमरनाथ झा अुसके प्रधान थे। अतअेव जिस रूपमें मैंने अपनी योजना अुनके सामने प्रस्तुत की वह अक्षरशः यहाँ अुद्धृत है :—

कअी महीने हुअे मुझे राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडनने आदेश दिया था कि विश्वविद्यालयकी कक्षाओंके लिअे पाठ्यपुस्तकोंका प्रकाशन कराओ। मैंने अुन्हें लिखा कि सेवाके लिअे तैयार हूँ। परन्तु तैयारी और प्रकाशनके लिअे कोअी मान्य संस्था हो और वह आवश्यक व्ययका भार अुठाने योग्य हो, तब काम चालू हो। अिधर अिंडियन प्रेसवालोंने मुझे टटोला किताब-महलवालोंने भी। राजा रामकुमार भार्गव भी अिस ओर कुछ आकृष्ट होते दिखाअी दे रहे हैं। अतअेव काम अुठानेकी रूपरेखा मेरी दृष्टिमें अिस प्रकार है।

हिन्दी साहित्य सम्मेलनकी हालत ठीक नहीं। हिन्दी प्रचारिणी संस्थाओंमें काशीकी नागरी प्रचारिणी सभा सबसे अधिक पुरानी है, मान्य है और सक्रिय भी है। सभाका नेतृत्व हो। डाक्टर अमरनाथ झा अिस सभाके प्रधान हैं। विश्वविद्यालयोंमें अुनका व्यक्तित्व सर्वमान्य है। वे अिन पाठ्यपुस्तकोंके प्रधान संपादक हों।

मेरी समझमें जिन विषयोंपर पाठ्यपुस्तकें बहुत शीघ्र आवश्यक हैं वे हैं: भारतीय अितिहास, अर्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शास्त्र, राजनीति, भौतिक विज्ञान और अुसके विभिन्न अंग, रसायन और अुसके विभिन्न अंग, भूगर्भ शास्त्र, भूगोल, प्राणि शास्त्र, वनस्पति शास्त्र, गणित और अुसके विभिन्न अंग, ज्योतिष, दर्शन और मनोविज्ञान।

जिन विश्वविद्यालयोंका सहयोग प्राप्त करनेका अुद्योग किया जाय वे हैं: पंजाब, आगरा, दिल्ली, लखनअू, अिलाहाबाद, पटना, बिहार, नागपुर, सागर, राजस्थान, अलीगढ़ और अुस्मानिया।

जिन विषयोंपर पाठ्यपुस्तकें लिखनेका आयोजन हो अुनके पाठ्यक्रमोंका अेकीकरण अिन विश्वविद्यालयोंके मध्य हो जाअे। विषयके विशेषज्ञ आपसमें मिलकर पाठ्यक्रमका अेकीकरण करें, लेखकका नाम तजवीज करें और अुसकी टाअिप स्क्रिप्टका संशोधन करनेके लिअे पाँच-सात विशेषज्ञोंकी समिति नियुक्त कर दें। अपना काम पूरा करनेपर पांडुलिपिकी आठ-दस कापियाँ करा ली जाअें जिनका समितिके सदस्य संशोधन करें। फिर लेखक अिन संशोधनोंका समन्वय करके पांडुलिपि प्रकाशनके लिअे तैयार करें। प्रधान संपादकके अिस पांडुलिपिको स्वीकृत करनेपर नागरी प्रचारिणी सभा अुसका स्वयं प्रकाशन करे या किसी दूसरे प्रकाशकको प्रकाशनका दायित्व सुपुर्द करे जो अुत्साहसे प्रकाशनका भार अुठानेके लिअे तैयार हो। यदि प्रकाशनका काम प्रकाशकोंमें बाँटा जा सके, तो प्रकाशन शीघ्र हो सकेगा और अेकाधिकारकी शिकायत भी नहीं होगी। परन्तु नेतृत्वकी अेकता आवश्यक है, तभी अच्छे स्तरकी पाठ्यपुस्तकोंका प्रकाशन सम्भव होगा।

अपनी बात भी कह दूं। मैं नेतृत्व करने योग्य नहीं। बन्धुवर डाक्टर अमरनाथ झा का अनुयायी होनेके लिअे तैयार हूँ।

नागरी प्रचारिणी सभा और हिन्दीके दुर्भाग्यसे डॉ० अमरनाथजी स्वर्गवासी हो गअे हैं। नागरी प्रचारिणी सभाको यह दायित्व भार तब लेना था जब सम्मेलन बन्दी था। यदि सम्मेलन कारावाससे मुक्त हो सके तो पाठ्य-पुस्तकोंके निर्माण प्रकाशनका वही दायित्व सम्मेलनपर आता है।

पाठ्यपुस्तकोंसे ही निर्माण दायित्वकी अितिश्री नहीं होती। यदि सभाके जिम्मे साहित्य सम्बन्धी खोज और शोधका काम रहना है तो हिन्दी साहित्यके सर्वांगीण निर्माण और व्यापक प्रचारका दायित्व भार सम्मेलनको अुठाना है। अिस सम्बन्धमें 'सक्रिय सेवाकी रूपरेखा' में जो विचार व्यक्त किअे गअे थे, अुन्हें ही विशेष संक्षेपसे यहाँ दुहराना है।

पहले हमें निर्णय करना है कि देशी और विदेशी, प्राचीन और आधुनिक, भाषाओंमें किस साहित्यिक निधिको हम पहले पाँच वर्षके भीतर अनुवाद द्वारा अपनाअें और किसको दूसरे पाँच वर्षके भीतर। परन्तु अनुवाद ही से हमें सन्तोष न हो। विज्ञान और ललित साहित्यके क्षेत्रमें हमारा काम अनूदित ग्रन्थोंसे चल जाअेगा। परन्तु अितिहास, अर्थशास्त्र, दर्शन और कृषि तथा चिकित्सा जैसे विषयोंपर जो हमारे सामाजिक जीवन और जलवायुसे विशेष रूपमें संबद्ध हैं, मौलिक ग्रन्थोंकी ही आवश्यकता है। सो पहले तो हमें क्या प्राप्य है और अिस प्राप्यका कौन अंश हमें अपनाना है, यह निश्चय करना है; फिर किन विषयोंपर हमें मौलिक ग्रन्थ मिलें और अिनके लेखक किस प्रकार तैयार किअे जाअें यह सब हमें निश्चय करना है। कार्यक्रमकी रूपरेखा तैयार हो जानेपर शासनाधिकारियों और प्रमुख प्रकाशकोंका सम्मेलन होकर निर्माणका कालक्रम बने। तब निर्माणकी योजना निश्चित रूपमें चालू हो और निर्णयके अनुसार प्रकाशनके काम प्रकाशकोंमें बँटें।

पुस्तकाकार स्थाअी साहित्यके निर्माणके साथ सामयिक साहित्यके निर्माणका स्तर अूँचा होना है और अुसका विषय क्षेत्र भी विस्तृत होना है। अिस सेवाके लिअे पुरस्कार देकर विभिन्न सामयिक विषयोंपर अधिकारी लेखकोंसे सम्मेलन लेख प्राप्त करे और अुनका सम्पादन करके अुन्हें सामयिक पत्र-पत्रिकाओंको प्रकाशनार्थ वितरित करे। सरकारी अनुदानके बिना सम्मेलनके लिअे यह सेवा सम्भव हो सकती, यदि सामयिक पत्र, प्रकाशित लेखोंका पारिश्रमिक देने योग्य होते। परन्तु अधिकांश पत्र अिस योग्य नहीं हैं, और जन शिक्षणके नाते अिनमें प्रकाशित पाठ्य-सामग्रीका स्तर अुन्नत होना है। अतअेव सम्मेलनको अिस सेवाके लिअे सरकारी अनुदान प्राप्त करना आवश्यक होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहाँतक निर्माणकी बात हुअी। परन्तु निर्माणकी गाड़ी प्रचार बिना आगे बढती नहीं। अतअेव निर्माणके साथ प्रचारके लिअे भी सम्मेलनको अुद्योगशील होना है।

प्रचारके साधन हैं पत्र-पत्रिकाअें और पुस्तकें, चलचित्र और रेडियो।

पहले पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकोंकी ही चर्चा करनी है। हिन्दी भाषा-भाषियोंकी संख्या १६ करोड़के निकट है, अितनी ही जितनी संसार भरमें बिखरे अंग्रेजी भाषा-भाषियोंकी। परन्तु जो साहित्यिक निधि अंग्रेजी भाषाको प्राप्त है अुसका शतांश भी हिन्दीको प्राप्त नहीं। यह कहा जाता है कि हिन्दी भाषी जन-संख्यामें केवल १० प्रतिशत ही हिन्दी लिख-पढ़ लेते हैं। अिसके अर्थ यह होते हैं कि १६ करोड़में केवल डेढ़ करोड़ ही छपी पाठ्य-सामग्रीसे लाभान्वित हो सकते हैं। परन्तु खेदकी बात है अितनी संख्याके भीतर भी हिन्दी पत्र-पत्रिका और पुस्तक मोल लेकर या मुफ्तमें पढ़नेवालोंकी संख्या बहुत कम है। निरक्षरता और निर्धनताका जो अनुपात भारतके हिन्दी भाषा-भाषी राज्योंमें है अुससे मिलता-जुलता अनुपात अहिन्दी भाषी राज्योंमें है। परन्तु वहाँ पत्रों और पुस्तकोंके पाठकोंकी संख्या अपेक्षाकृत कहीं अधिक है। बंगलाके प्रमुख पत्रोंकी ग्राहक संख्या ७०-७५ हजार तक पहुँचती है। तमिलनाडकी जनसंख्या बंगालसे कम है। परन्तु वहाँ 'कल्कि' और 'आनन्द विकटन' जैसे पत्रोंकी ग्राहक संख्या ५० हजारके अूपर ही जाती है। यही कैफियत मराठीके प्रमुख पत्रोंकी है। पुस्तकोंके ग्राहकोंका विशेष पता नहीं, परन्तु मुझे विश्वास है कि प्रमुख बंगाली, मराठी, तेलुगु, तामिल और कन्नड लेखक हिन्दीके प्रमुख लेखकोंसे अधिक संपन्न हैं। फलतः हम शेखी कुछ भी हाँकें, हमारी अर्वाचीन साहित्यिक निधि कितनी भी बड़ी हो, आधुनिक साहित्यके क्षेत्रमें हम कअी भारतीय भाषाओंके पीछे हैं।

अिस स्थितिमें सम्मेलनका प्रकाशक वर्ग और हिन्दी राज्योंके सहयोगसे प्रचारका शक्तिशाली अुद्योग करना है। नअे विषयोंपर नअी पुस्तकें तभी प्रकाशित होंगी जब प्रकाशित साहित्यका यथेष्ट प्रचार हो। प्रकाशित पुस्तकोंकी बिक्रीसे पैसे आवें, अुनसे जगह खाली हो तो नअी पुस्तकें छपें और अुनकी बिक्रीका अुद्योग हो।

अिस सम्बन्धमें अेक ओर तो सम्मेलनको प्रकाशक वर्गका संगठित सहयोग प्राप्त करना है और दूसरी ओर हिन्दी भाषा-भाषी राज्यों और केन्द्रीय शासनका। यदि केन्द्रीय शासनका यथेष्ट सहयोग न भी मिले, तो राज्योंके सहयोगसे ही सम्मेलनका काम चल जाअेगा। हिन्दीके सौभाग्यसे प्रकाशक वर्गकी 'प्रकाशक-संघ' नामक संस्था स्थापित हो गअी है। यह संस्था यथेष्ट पुष्ट नहीं हो पाअी है। परन्तु यदि संघको सम्मेलनका सहयोग मिले और केन्द्रीय तथा प्रान्तीय शासनोंसे अिसे समुचित मान्यता प्राप्त हो जाअे, तो यह संघ प्रचार और निर्माणमें सम्मेलनका हाथ बँटा सकेगा।

निर्माणके सिलसिलेमें ठोस महत्वका अैसा बहुत-सा प्रकाशन आवश्यक होगा जिसकी यथेष्ट बिक्री खुले बाजारमें असंभव होगी। सरकारी सहायताकी आशाके बिना बिरला ही प्रकाशक अैसे प्रकाशन हाथमें लेगा। समस्याका हल "सत्साहित्यके प्रकारकी बात" शीर्षक लेखमें प्रकाशित हो चुकी है। हलका संशोधित रूप अिस प्रकार है कि सम्मेलनकी अेक समिति हो जिसमें प्रत्येक हिन्दी भाषी प्रान्तका कम-से-कम अेक विश्वस्त प्रतिनिधि हो और समिति छोटी होकर भी अिस प्रकार संगठित हो कि अुसमें विज्ञान, दर्शन, कला, व्यवसाय और अितिहास, अर्थ-शास्त्र तथा राजनीति जैसे सामाजिक विषयोंके पाण्डित्यका भी प्रतिनिधित्व हो। अिस समितिके सामने प्रकाशनकी योजनाअें या प्रकाशनार्थ पाण्डुलिपियाँ विचारार्थ आवें। जिन स्वीकृत प्रकाशनोंकी यथेष्ट बिक्री संभावित हो, अुन्हें तो प्रकाशक खुशीसे ले ही लेंगे, परन्तु जिनकी यथेष्ट बिक्रीकी आशा न हो अुनके प्रकाशित होनेपर समितिकी सिफारिशसे अुनकी ५०० प्रतियोंकी बिक्री प्रान्तीय शासनोंकी ओरसे सुरक्षित कर दी जाअे। यह कोअी बहुत बड़ी बात न होगी। किसी शासनको अिस सेवाके लिअे करदाताकी कोअी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रकम अलग रखनी आवश्यक न होगी। केवल विद्यालयों और पुस्तकालयोंको खरीदके लिअे समुचित आदेश ही देना होगा। यों अैसे साहित्यका प्रकाशन भी संभव होगा जो जनहित करते हुअे भी जनप्रिय नहीं होगा।

प्रचारका अेक रूप यह हुआ। दूसरा रूप होना चाहिअे भारतके केन्द्रीय नगरोंके केन्द्रीय स्थानोंमें प्रकाशित हिन्दी साहित्यका स्थायी प्रदर्शन और वितरण। अेक प्रकाशकके सहयोगका वचन पाकर लखनअूमें भारतीय ग्रन्थागारके नामसे अैसी ही संस्था स्थापित करनेकी विफल चेष्टा हो चुकी है। अतअेव प्रकाशनोंके बिक्रीके ये केन्द्र प्रकाशक संघके सहयोगसे सम्मेलनको ही स्थापित करने हैं। सम्मेलन अिनसे लाभ अुठानेकी चेष्टा न करे। जो कुछ लाभ हो वह प्रचारके ही अुद्योगमें लगे।

प्रदर्शन और वितरण केन्द्र जितने जनोंकी पहुँचके भीतर होंगे अुनसे कअी गुनी संख्याके जनोंतक प्रकाशित हिन्दी साहित्यका संदेश पहुँचते रहना चाहिअे। अिस सेवाके लिअे अिस समय प्रकाशन समाचार और हिन्दी प्रचारक जैसी पत्रिकाअें प्रकाशित हो रही हैं। सामयिक पत्र-पत्रिकाओंमें पुस्तक परिचय प्रकाशित होते रहते हैं। परन्तु अिनकी पहुँच बहुत सीमित है। सम्मेलनकी ओरसे प्रचार आवश्यक है। चालू सम्मेलन पत्रिकाका ध्येय निश्चित नहीं है। सम्मेलनका अुद्धार होनेपर सम्मेलन पत्रिका प्रमुख ध्येय प्रकाशन प्रचार ही होना चाहिअे। जिन वितरण केन्द्रोंका अुल्लेख हो चुका है अुनकी यह मुखपत्रिका होगी। पुस्तक प्रचार संबंधी विज्ञापन पाकर अिस पत्रिकाका वार्षिक चन्दा बहुत कम रखा जा सकेगा और अिसकी ग्राहक संख्या ५०,००० तक अवश्य पहुँचनी चाहिअे।

पत्रिकाके सामयिक प्रकाशनके अतिरिक्त प्रकाशित साहित्यकी विषयानुकूल विवरणयुक्त सूचियाँ प्रकाशित होनी चाहिअे और प्रतिवर्ष अिनके पूरक पत्र प्रकाशित होने चाहिअे, जिससे प्रकाशित हिन्दी साहित्यका पूरा चित्र हिन्दी पाठकोंके सामने रहे।

प्रत्येक राज्यके विभिन्न स्थानोंपर मेले लगा करते हैं और अिनके साथ प्रदर्शनियाँ भी होती हैं। अिन प्रदर्शनियोंमें चुने और अुपयोगी साहित्यका प्रदर्शन आवश्यक है। ये प्रदर्शन भी सम्मेलन और अुससे संबंधित संस्थाओंके अुद्योग तथा प्रान्तीय शासनके अनुदानसे अिन मेलोंमें हुआ करें।

चालू शिक्षा प्रणाली हमारे होनहारोंको पुस्तक प्रेम नहीं सिखाती। शिक्षाके पश्चात् जैसी कुछ परीक्षा होती है, अुससे हमारे विद्यार्थी पुस्तकसे घृणा करना ही सीखते हैं। सुधारकी बात कअी बार प्रकाशित होकर शासकोंके सामने रखी जा चुकी है। परन्तु राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करके भी अभी तक हम मानसिक स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं कर सके हैं। शिक्षा-क्षेत्रके मानसिक परतन्त्रतासे मुक्त होनेपर ही सुधार संभव होगा। परन्तु तबतक प्रचारकी गाड़ी तो नहीं रुकी रहनी चाहिअे। अतअेव सम्मेलनको पुस्तकालयों और वाचनालयोंकी संख्या बढ़ानेका अुद्योग भी करना होगा। नगरके प्रत्येक मोहल्लेमें, जिलेके प्रत्येक गाँवमें अेक छोटा बड़ा पुस्तकालय अथवा वाचनालय अवश्य हो। जो पुस्तकें मोल लेकर पढ़ने योग्य हों वे निजी पुस्तकालय बनानेके लिअे प्रोत्साहित किअे जाअें। अिस प्रकारमें किसी प्रकाशक विशेषके प्रकाशनोंकी सिफारिश न हो। यही प्रचार हो कि प्रत्येक गृहस्थ अेक हिन्दी दैनिक और अेक मासिकके ग्राहक होनेका प्रयत्न करे। यथाशक्ति प्रतिवर्ष अपनी रुचिके विषयपर पुस्तक संग्रह करता रहे, अपनी पुस्तकोंको पढ़ता भी रहे। जिस प्रकार हमारी देवियाँ आभूषणों और साड़ियोंपर गर्व करती हैं, अुसी प्रकार पढ़े-लिखे गृहस्थ अपने पुस्तक संग्रहपर भी गर्व करें। अिस प्रचारमें सम्मेलनको प्रान्तीय शासनों, स्थानीय संस्थाओं, चलचित्रों और रेडियोका समन्वित सहयोग प्राप्त करना है।

सत्यं, शिवम्, सुन्दरम्की ही पृष्ठभूमिमें प्रचारकी सेवा होनी है। पुस्तकें और पत्र-पत्रिकाके अतिरिक्त चलचित्र और रेडियो जैसे साधन हिन्दीको प्राप्त हैं। हिन्दीके चलचित्रोंसे जितना लाभ व्यावसायिकों और कलाकारोंको होता है अुतना दूसरी भाषाके चलचित्रोंसे नहीं होता, क्योंकि हिन्दीको जितने दर्शक मिलते हैं अुतने अन्य भाषाको नहीं। हिन्दीको चलचित्रोंमें सर्वोत्कृष्ट कलाकार मिल जाते हैं तो अिन चित्रोंका प्रचार बढ़ता है जिसके बहाने अधिकाधिक संख्यामें अहिन्दी भाषी भारतीय जन भी हिन्दी समझने लगें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। अिसी प्रकार रेडियोसे प्रचारित हिन्दी गीत भी हिन्दी प्रचारमें सहायक हो रहे हैं। अिसलिअे अिन बहुमूल्य साधनोंपर सम्मेलनकी अिस प्रकार निगरानी होनी है कि भाषाकी सरलता कम न हो, मनोरंजनके अिन साधनोंकी लोकप्रियता कम न हो, परन्तु साथ ही अिनके द्वारा नैतिकताकी पुष्टि भी होती रहे।

जब सम्मेलनका सेवा क्षेत्र अितना विस्तृत होना है और अिस सेवासे सम्मेलनको कोअी आय होती नहीं, परन्तु व्यय बढ़ते रहना है, तो कमीकी पूर्ति केन्द्रीय तथा प्रान्तीय शासनोंको अपने-अपने अनुदानों द्वारा करनी है।

वर्धाके अधिवेशनमें अेक प्रस्ताव द्वारा केन्द्रीय शासनमें हिन्दी मन्त्रालयकी माँग की गअी है। हिन्दी सेवा अिस समय केन्द्रीय शिक्षा विभागके जिम्मे है। शिक्षा प्रान्तीय विषय है। राष्ट्रभाषाके नाते हिन्दीका केन्द्रीय महत्व है। हिन्दीके विकासके लिअे हिन्दी सेवी केन्द्रीय विभागको केन्द्रीय शासनके सभी विभागोंसे सम्पर्क रखना है। प्रान्तीय शासनोंके सभी विभागोंका हिन्दीके सम्बन्धमें निश्चित नीतिके अनुसार पथ प्रदर्शन करते रहना है। विकासकी साधना कौन करे—व्यावसायिक या शासन—अिस विचारसे विकासकी योजनाअें सार्वजनिक (Public) और निजी (Private) क्षेत्रोंमें बाँटी गअी हैं। हिन्दीके विकासका केन्द्रीय महत्व है। राज्य पुनर्संगठन होनेपर जिस प्रकार विभिन्न प्रान्तोंमें आन्दोलन हुअे हैं और अिसके बवंडरमें काँग्रेससे अनुशासित नेता भी पथभ्रष्ट हुअे हैं, अुससे प्रत्यक्ष होता है कि हममें अभी भारतीयताकी भावना बहुत निर्बल है। अिस भावनाकी सांस्कृतिक पुष्टि करनेके लिअे हिन्दीका व्यापक प्रचार शीघ्र-से-शीघ्र होना चाहिअे। पाँच वर्ष तक आवश्यक अुद्योग न केन्द्रीय शासनसे हो सका है, न शासनके बाहर हिन्दीके प्रकाशकों और हिन्दी सेवी संस्थाओंसे। यदि केन्द्रीय शासनमें अेक अलग मन्त्रालय स्थापित होता है और अुसके हिस्से यथेष्ट रकम निर्माण तथा प्रचारपर व्यय करनेको आती है तो प्रचारकी अधिकांश सेवा अुसे अपनी निगरानीमें हिन्दी सेवी संस्थाओं और प्रकाशक संघसे ही लेनी है।

अेक ओर सम्मेलनको पुनर्जन्म प्राप्त करना है और सम्बन्धित हिन्दी सेवी संस्थाओंको अेक दूसरेसे सम्बद्ध होकर हिन्दीकी सर्वांगीण सेवाके लिअे प्रस्तुत होना है। दूसरी ओर केन्द्रीय शासन तथा हिन्दी भाषी राज्योंको हिन्दी सेवाके लिअे सचेत होना है। पन्द्रह वर्षकी अवधि हमें मिली थी। छह वर्ष हमने खो दिअे। ९ वर्ष हमारे सामने हैं, तो अिन्हें हम न खोअें। अभीसे अवधिकी तिथि बढ़ानेके प्रस्ताव हिन्दी आयोगके सामने आने लगे हैं। यदि हमारा रवैया वही रहे जो अबतक रहा है तो हम १९६५ तक हिन्दीका राष्ट्रीय पदके योग्य विकास नहीं कर सकेंगे, अवधिकी तिथि बढ़ानी पड़ेगी और हिन्दी भाषी जनतापर ही नहीं, समस्त भारतपर कलंकका यह गहरा टीका होगा। अीश्वरसे अुस सन्मतिकी प्रार्थना है जिससे हमारा देश अिस कलंकसे बच सके।

यह कलका युग है, जिस कारण प्रचार ही निर्माणका प्राण हो गया है। कलने हमें प्रचारके जो साधन दिअे हैं अुनका हम समुचित अुपयोग कर सकें, तो दस वर्षके भीतर हमें हिन्दी साहित्यको राष्ट्रीय पदके अनुकूल पुष्ट करना असंभव नहीं। यथेष्ट संगठन, सहयोग और लगनकी ही अपेक्षा है।

वर्धा सम्मेलनमें हिन्दीके भारतीय महत्वकी झलक मुझे "अेक हृदय हो भारत जननी" शीर्षकमें मिली। वही शीर्षक अिस लेखका भी है। सक्रिय विचार और आलोचनाकी प्रार्थना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं जड़में जीवन भर दूँगा !

—श्री शेखर

प्रिय; तुम मेरे गीत मुझे दो;
मैं जड़में जीवन भर दूंगा !

देख रहा हूँ सुरपुर-वासी मेरा अमृत पिअे जाते हैं,
फूली-फली सुधर फुलवारीको वीरान किअे जाते हैं,
देख रहा हूँ कबसे मेरी धरा गगनको देख रही है,
जहाँ देवता ठग-ठग अुसका चिरश्रृंगार लिअे जाते हैं।
मैं गीतोंकी आरोहीसे अुनके गढ़पर चढ़ जाअूँगा,
अवरोहीसे खींच-खींचकर धरतीपर अम्बर धर दूंगा।

अेकबार जब प्रलय हुआ था चारों ओर सिंधु लहराया,
मेरे अिन गीतोंकी लयमें अक्षर अनहद नाद समाया,
पर क्षणभरमें सृष्टि प्रलयके जलसे धुलकर निखर अुठी थी,
जब मैंने अेकान्त शून्यसे निर्माणोंका गीत सुनाया !
बरसा मधु, गा अुठा पपीहा, मानवने दुनिया रच डाली,
गानेवाले तो गाते हैं, मैं पाषाणोंको स्वर दूंगा।

यों तो मेरे गीत आदिसे जड़-चेतन दोनों गाते हैं,
पर चेतनकी ध्वनिमें जड़के मूक-विकलस्वर छिप जाते हैं,
अिसीलिअे तो अहंकारसे जग अगपर शासन करता है,
मेरे अधर तड़प जाते हैं, मेरे दृग भर-भर आते हैं।
अेक बार फिर मैं परिवर्तनकी वीणा लेकर गाअूंगा,
अब न दब सकेगा;अणु-अणुका मूक राग मुखरित कर दूंगा।

तुम मेरे गीतोंकी लय हो, मैं अनादि हूँ-तुम अक्षय हो,
तुमपर मेरी गति निर्भर है, तुम्ही पराजय और विजय हो,
मेरा सब संगीत तुम्हारे-अेक अश्रुमें डूब गया है,
मैं तुमसे बल माँग रहा हूँ, तुम चिंतनमें ही तन्मय हो !
देखो; आज लहूकी प्यासी काली आंधी गरज रही है,
तुम कर दो संकेत और मैं आकुल युगका भय हर दूंगा !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तट, छोड़ो बाँह !

—श्री रामकृष्ण श्रीवास्तव

तट, छोड़ो बाँह
मुझे अभी बहने दो ।
युग-सत्योंकी सहस्त्र जिह्वाओं-सी लपलप करती
धाराओंमें धँसने दो
लहरोंके नागपाश कसने-डसने दो–
अफनाती भूखी ज्वालाओंका जहर
अमृत मन्थनकी विषकन्या-सी लहर
मुझे पीने दो;
मोड़ लिया मुँह मैंने, अेक भी लहरको–
यह मत कहने दो !
तट छोड़ो बाँह मुझे अभी बहने दो ।
शोषित मरुभूमिपर
अुमड़ते सैलाबोंके पाँवोंमें
जंजीरों-सी जकड़ी
जहरीली लपटोंकी जड़ोंको,
रेतीले टीलोंसे अुठे हुअे
आँखोंमें धूल झोंकनेवाले
पाषाणी पीपलके तनोंको,
मिथ्या गतिरोधोंके तने हुअे फनोंको
कुचलने दो;
धाराओंकी दिशा बदलने दो !
घनकी चोटों जैसे गरजते थपेड़ोंको
खुली हुअी छातीपर सहने दो;
पीठ दिखा दी मैंने, अेक भी थपेड़ेको
यह मत कहने दो !
तट, छोड़ो बाँह मुझे अभी बहने दो ।
लपटोंमें जलकर
यह मन कंचन होने दो
धाराओंमें गलकर
तन चन्दन होने दो
जन-समुद्रके अथाह चरणों तक पहुँचकर
समर्पिता आत्माको
रजकण-सा रहने दो !
सिन्धुका आतुल्य भार डगमग जब
तब तटस्थ आँचलमें
शीश छुपाया मैंने, अेक भी तरल क्षणको
यह मत कहन दो !
तट, छोड़ो बाँह मुझे अभी बहने दो ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदमी आदर्शपर ही जा रहा है !

—श्री सिद्धनाथ कुमार

कह रहे तुम ?–
काव्य रचकर बुद्ध, गांधीपर,
फूल शब्दोंके चढ़ाकर चरणपर अुनके
पूजता हूँ आदमीको मैं ?
धन्य हो तुम !
धन्य है सचमुच तुम्हारी बुद्धि !
आदमी–आदर्शके भी भेदको
बिल्कुल नहीं पहचानते हो ।
आदमी वह,
जो भटकता-भूलता फिरता अन्धेरेमें,
किन्तु है आदर्श वह,
जो रोशनी ले रास्ता अुसको दिखाता है !
आदमी वह,
जो तनिक भी ठोकरें खाकर
लुढ़कता गर्तमें गिरता,
किन्तु है आदर्श,
जो अुंगली पकड़ अुसकी
अुसे अूपर अुठाता है !
आदमी वह,
जो समयके साथ ही है धूल बन जाता,
किन्तु है आदर्श वह,
जो कालकी चट्टानपर भी
चिह्न अपने छोड़ जाता है !

(देखते हो सामने तुम चरणके जो चिह्न;
बुद्ध, अीसा और गान्धीके नहीं,
पदचिह्न हैं आदर्शके वे !)
दोस्त, समझो,
आदमी-आदर्शमें कुछ फर्क होता है !
आदमीको पूजना होता अगर,
तो पूजता पहले तुम्हें ही,
किन्तु गान्धी और गौतमको
स्वरोंमें बान्धकर निज,
फूल-मालाअें पिन्हाकर
अुन्हें नव-नव छन्दके कुछ
पूजता हूँ सत्यको, विश्वासको, तप-त्यागको,
प्रेम, मैत्रीको, महत् आदर्शको मैं,
जो कि अिनके प्राणमें
साकार होकर बस रहे हैं !
आदमी हूँ,
और, वह भी आजकी विंशति शतीका !
गहन सागरमें विषैले धुअेंके डूबा हुआ हूँ !
घुट रही है साँस,
लेकिन हाथ निज अूपर अूठाअे
कह रहा हूँ–
'आदमी आदर्शपर ही जी रहा है !
बचा सकता है मुझे आदर्श ही कोअी !'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेरे द्वार अनन्त हैं

--श्री अनन्तकुमार 'पाषाण'

आगे फ़िर रेलकी लम्बी-लम्बी पटरियाँ हैं। पीछे स्टेशन मास्टरका क्वार्टर और अुसके दाअें-बाअें कुछ और क्वार्टर। बीचमें लम्बी रोअेंदार घासका व्यवधान है, जिसके बीच खट्टी कसैली गंधवाले जंगली जामुनी फूल कुछ अिधर-अुधर हैं। फिर प्लेटफार्मका अुतार है और घास ही घास है। पुराने शेविंग ब्रशों-से लम्बे ताड़ नुंचे-नुंचाअे खड़े हैं। कुछ अूटपटाँग कँटीले पत्ते आकाशको निहारते हैं, सूखे मुर्दे पत्ते लटके हैं धरतीकी ओर। बीचमें अरवीके पत्तोंकी शक्लके कुछ चौड़े पत्ते पसर गअे हैं, तो जरा ही आगे आकर बरसातका पानी पोखर है। फिर घास, सेंमलका अेक बदमजा दरख्त जिसे स्टेशनके आवारा छोकरे 'लाल फूलोंवाला दरखत' भी कहते हैं। वे कौनसे पेड़ हैं जिनपर कौवे ककहरा गाते हैं, कहना मुश्किल है।

आगे फिर सख्त लम्बा सिग्नल लाल-हरा कनटोपा पहने खड़ा है और लोहेके तारोंको लोहेके खंभोंने अपने भारीभरकम खोपड़ेपर लपेटा हुआ है। फिर लम्बी रोअेंदार घासका व्यवधान है, जिसके बीच खट्टी कसैली गंधवाले जामुनी फूलोंकी जमात है। फिर घास घसियाती चली गअी है और बीच-बीच ताड़के लम्बतडाँग दरख्त हैं।

आगे फिर रेलकी चमचम चरबाँक पटरियाँ हैं, जिनपर लोहेके पहिअे सनडसन-सनडसन फिसलते हैं और गाड़ी जन्नसे निकल जाती है।

मैं हवाओंमें अुड़ रहा हूँ। अम्बर सूर्य्य-किरणोंकी अनेक बाँसुरियाँ बजाता मुस्कुराता--श्याम तनपर स्वर्ण धूपका पीताम्बर पहने मुस्कुरा रहा है। गौओं-सी मेघ-बालाअें दूर-दूर हैं। नीचे गोपियों-से मोर नाचते हैं। मैं भी काला हूँ—

पके जामुन-सा काला हूँ
किन्तु मुझमें है रस-आवेश !...

मैं पटरी-पटरी चल रहा हूँ। यह पटरियाँ जिन्हें गिट्टीपर सीधा-सीधा जमाया गया है। रेल सन्नसे निकल जाती है तो गिट्टी-गिट्टी बोटी-बोटी काँपती है।

सातों तार भीतर-बाहर बज रहे हैं-- तूंबियोंमें गूंज है, अन्यथा तार अपने आपमें क्लीव निर्बीज हैं। तूंबियोंमें दमन है। दमनसे गूंज निखरती है।

आगे फिर रेलकी चमचम पटरियाँ हैं.....

हरियाली अुमड़ती क्षीण क्षितिजका आलिंगन करनेको दौड़ती है। प्रेमके आवेशमें लोट-लोट जाती--

पके जामुन-सा काला हूँ,
किन्तु मुझमें है रस आवेश !

रसका आवेश भी अुद्वेग है। अुसमें भोगका अहंकार है। जो भोग अपने वास्तविक जीवनमें मैं अस्वीकार करता हूँ, अुनको कल्पनासे सिद्ध करता रहूँ और कलाकार होनेका चमकीला बिल्ला टोपीपर टाँके रहूँ। अच्छा मसखरा हूँ ! योग और भोगके द्वैतसे विभाजित--कर्ताकी पृथक् सत्ता मानकर "मैं साक्षी हूँ ! मैं साक्षी हूँ !" अैसा चिल्लाता हूँ !

दर्पणके सामने खड़े होकर पूछा--"मैं कौन ?" दर्पण चिटखकर खील-खील हो गया ! 'मैं' की छाया गअी, माया गअी, मोह गया, प्रश्न गया ! राधा कृष्ण बन गअी और यशोदासे मुस्कुराकर बोलीं--"वर माँगो !"

यशोदा अभी भी मेरी बाट देखती होंगी। कहकर आया था अमुक-अमुक दिन आअूँगा। अुन्होंने अधीरतासे अेक-अेक दिनकी भारी सिलको प्राणोंकी समस्त शक्ति लगाकर अपने वक्षपरसे खिसकाया। वह दिन भी अब कल है। कल मेरा कृष्ण कन्हैया आअेगा। द्वारपर आम्र-पल्लवोंके बन्दनवार, बीच-बीच आम्र-बौरकी बहार-सौरभकी बाढ़ ग्राम जल-मग्न, मगर श्वासके आर-पार अेक ही पुकार ! यशोदा मैयाने पौ फटते ही कोरी मटुकियामें गुलाबजल डालकर माखन रखा--बीच-बीचमें मिश्रीके डले जमाअे बीचमबीच चिरोंजी पड़ा गोलमटोल रुपहला कूजा और मटुकियाकी ग्रीवामें कदम्ब-कुसुमोंकी मालिका पहिरा दी। पनघटपर जाकर स्त्री-स्त्री तरुणी-तरुणीको रोककर अुन्होंने कहा— "सुनती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो, आज अपना कान्हा आ रहा है !" अनेक अैसी स्त्रियाँ भी थीं, कि जिन्होंने टेर-टेर कर यशोदाको टोका और पूछा कि आज ही आ रहा है ना कन्हैया ! किन्तु राधा कहीं नहीं ! . और कान्हाके ध्यानके बीच सब खोअे—बहके-बहके, कि अमवाकी डगारपर पुकार अुठी कोयलिया—"राधा !

रा ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ धा !"

और दौड़ी चलीं सब राधाके पास कि सुन, कहाँ है तू ? आज ही तो आवेगा तेरा मधुसूदन ! मगर राधा निगोड़ीको देखो ! अँसुवा भरे नयना, फूले-फूले बयना—अँगुरी मटकाती चटसे बोली—"आ ऽ या ! अरे, बड़ा छलिया है ! अुसके बतियानेमें मत आना, हाँ ! मैं तो सब रत्ती-रत्ती जानती हूँ अुसे !" और फिर रुँधे गलेसे बोली—"मेरा मन कहता है, अब कान्हा कभी नहीं आअेगा !"

यशोदा मैयाने सुना तो जीभ काट ली—"अैसा भी कोअी कहता है ! मेरा भोलाभाला कान्हा ! मोरपंखके मुकुटवाला राजाबेटा, राधाने पहिले ही बहुत बदनाम करा दिया है बिचारेको ! अब छोड़ेगी भी कुछ ! क्यों नहीं आअेगा कान्हा ! सरत बद लूँ जो नहीं आअे !"

और राधा रोते-रोते भी हँस पड़ी। गाअें रँभाती हैं। यशोदा मैया द्वारपर बैठी, प्यासे नयनोंसे बाट जोह रही हैं। दूरसे कोअी भी रथ आता दीखा कि अुन्होंने आवाज लगाअी—"ये लो ! बुलाओ राधाको ! कहती थी ना कि कान्हा अब कभी नहीं आअेगा !" किन्तु धूल जब पवनमें मिल जाती और रथ निकट आता तो निकट ही आता चला जाता— यशोदा मैयाके देखते-देखते निकल जाता।

फिर वही। सुदूर किसी पथिकको देखती तो अधीर हो अुठती— "वह आ रहा है कान्हा ! अरे, अुसका रथ कहाँ गया ! बड़ा निहोरा करके ले गअे थे अक्रूरजी ! अब पैदल ही भेज दिया !" किन्तु वह पथिक भी पास आता, पास आता, पास आता और हाय, वह पास क्यों आता !

घासपरकी ओस सतरंगे झीने पंख खोलकर अुड़ने लगी थी। बिरिछोंके पत्रोंके दौनेमें माणिक मदिरा ढल-ढलकर निढाल हो चुकी थी। खेतोंमें कलेअू पठाया जाता था। डंगर अूँघने लगे थे। कोयलिया सिरिसके चँवर फूलोंके पीछे अूँघ रही थी। धूप सिरपर आ गअी थी। पथ विजन, सब निर्जन; ग्राम, वन, घर निस्वन ! किन्तु यशोदा बैठी रहीं। अुन्होंने पानी तक न पिया था, मुँहमें कुछ डालना तो दूरकी बात है !

धूप कड़कड़ाती भड़की—अनेक रथ आअे, चले गअे, अनेक पथिक दृश्य हुअे, अदृश्य हुअे—अनेक रथ-स्वर श्रव्य हुअे, अश्रव्य हुअे किन्तु कान्हा न आया। यशोदा मैया भी हठ ठानकर बैठी थीं, न कुछ खाअेंगी, न पिअेंगी—देखूँगी कबतक नहीं आता है यह कान्हा !

किन्तु, पिड़कुलिया बोलने लगी और तीसरा पहर झुक आया—तोते वृक्षोंके कोटरके बाहर झाँकने लगे। मगर कान्हा नहीं आया। पथोंपर चक्रवाक लड़ने लगे, जंगलोंमें गोह निकल पड़े, झील तलमला अुठीं—जल-कुक्कुटोंके शब्द पुनः अुठे, कमलोंकी रज अुड़-अुड़कर वीचियोंका पुनः तिलक कर अुठी, ग्रामकी स्त्रियाँ आटेकी गोलियाँ बनाकर मछलियोंको पुकार-पुकार फेंकने लगीं, ग्राम-वटकी छायामें किसी बैलगाड़ीके निकले हुअे चक्के सटे ग्रामके वयोवृद्ध चिलम पीने लगे . . दो पहर टले, तीसरा पहर आया, मगर कान्हा नहीं आया . . .

नन्द बाबा कह-कह हार गअे मगर यशोदा मैयाके मुँहमें अेक दाना भी न गया ! कान्हा अुन्हें नहीं बोल सकता ! आअेगा, अवश्य आअेगा . . . आअेगा आअेगा . . . आ . . .

नन्द बाबा मनाते रहे, यशोदा मैया रो पड़ीं—नन्द बाबा रो पड़े, यशोदा मैया मनाने लगीं . . .

अूपर मेघ घिरे आते थे। बूँदाबाँदी होने लगी, यशोदा मैया बाहर बैठी भीजती रहीं, भीजती रहीं जितना मेघोंका हठ, अुतना हठ भी नहीं करेंगी क्या घनश्यामकी मैया ! . . .

पक्षियोंका अेक झुंड अुड़ा जाता था, यशोदा मैयाको देखकर अुनके आसपास आकर बैठ गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेक पक्षी कन्धेपर बैठकर अुनके आँसू चुनने लगा। दूसरा पक्षी सामने आकर नाच-नाचकर गाने लगा, पर यशोदा मैया निश्चेष्ट बैठी रहीं...

सूरज ढला। सब लोग नन्दके द्वार जमे। "अरे, कहाँ छिपाकर रखा है कान्हाको!. बाहर आओ नन्द बाबा!" और यशोदा क्रोधमें पागल हो गअीं। रो पड़ीं।

"कोअी काम आ पड़ा होगा कान्हाको! रातको आअेगा!" और फिर रात आअी, गअी। सवेरा हुआ। फिर जमघट लगा। यशोदा मैयाने नअी कोरी मटकीमें ताजा माखन जमाया और बैठीं। रातभर सोअीं नहीं किन्तु स्नान-ध्यान करके फिर वहीं! और फिर सुबह बीती, तीसरा पहर बीता, शाम ढली और रात भी पिघल गअी। कान्हा नहीं आया। अनेक रथ आ-आकर निकल गअे पर अुनमें कान्हाका रथ नहीं था। अनेक पथिक पथपर आकर चले गअे पर कान्हा नहीं आया, तो नहीं आया!

सायं-प्रात ग्रामजन मिलते और आते और मुँह लटकाअे चले जाते! और दिन आया, दिनपर दिन आया, दिनपर दिनपर दिन और रात, रात, रात आअी और दिन-रात रात-दिन आ-आकर अेक दूसरेमें विलीन हो गअे—केवल अेक रात रह गअी—निर्धूम, प्रगाढ़, अनन्त और भयंकर! केवल अेक अन्धकार पसर गया। परतीत गअी। सब जान गअे, अिन सूनी गलियोंमें कान्हा फिर हँसता दिखाअी न देगा, पनघटोंपर मटुकियाँ नहीं टूटेंगी, झलझल झरती चाँदनीके झीने नीहारपटोंके पार वंशीवनमें सुरसुमन नहीं फूलेंगे! वेत्रवनोंमें लुका-छिपी न होगी, कदम्बतले रास नहीं रचेगा, नूपुरोंकी झंकार महीन-महीन होकर कान्तारमें नहीं भर जाया करेगी! अब अुपद्रव नहीं होंगे! कान्हा नहीं आअेगा!

यशोदा मैयाको लगा, यह सब अुस राधाके काम हैं। अुसने अपशब्द बोले, अपशकुन किया। तमक कर अुठीं। दौड़ी चली जाती थीं। अुनका वेग और क्रोध देखकर गाअें राहमेंसे भागकर अलगको हो गअीं। आँचल खिसका, नेत्र विस्फारित, अलकोंकी लटें मुखपर—राधाके घरमें वेगसे भीतर घुसीं—

भीतर पहुँचकर दंग रह गअीं। अुनका कान्हा! और राधा? राधाने ही अितने दिन छिपाकर रखा अुन्हें और बोलीतक नहीं निगोड़ीं! अुलटा यही कहती रही कि कान्हा नहीं आअेगा! कान्हा तो यहाँ छिपा बैठा था, फिर काहेको आने लगा... अभी खबर लेती हूँ...

आँगनमें राधाकी साससे पूछा—कान्हाको अन्दर छिपाकर राधा निगोड़ी कहाँ गअी है!

सास लड़ पड़ी है। अभीतक तो गाँववाले ही बदनाम करते थे, अब स्वयं कान्हाकी मैयाने भी राधापर लांछन लगाना शुरू कर दिया!

"कहाँ है कान्हा? होसमें तो हो?"

"अहा! होसमें तो हो! मिली भगत है राधासे!"

"मिली भगत!" राधाकी सास क्रोधसे अुबल पड़ी और थालीके चावल क्रोधमें धरतीपर फेंककर अुठ खड़ी हुअीं—"चलो, दिखाओ कहाँ छिपा रखा है तुम्हारे कुलदीपकको हमने?"

और यशोदा हाथ पकड़कर अुन्हें अन्दर ले गअीं। निष्प्रभ मलीन राधा बैठी थीं।

लड़ाअी हुअी। राधाकी सास गालियाँ देते-देते बाहर निकल आअीं। यशोदा मैयाने आँख मलकर देखा—अुन्हींका कान्हा बैठा मुस्कुरा रहा है। राधाका कहीं पता भी नहीं। वह फिर क्रोधमें बाहरकी ओर भागीं कि राधाने मुस्कुराकर पुकारा और खड़ी हो गअीं। मन्द स्वरमें बोलीं—"मैं ही हूँ तुम्हारा कान्हा! वर माँगो!!"

अेक ही धक्केसे अनन्त द्वार खुल गअे.....

आगे फिर रेलकी लम्बी-लम्बी चमचम पटरियाँ हैं—पटरियाँ जो दो होकर भी अेक हैं। भक्तिसे ही ज्ञान मिलता है, बिना ज्ञानके भक्ति निर्बल है...

धड़धड़ अेक रेल आअी, हवाको चीरती निकल गअी। राह लम्बी है। आगे-पीछे सब ठौर पटरियाँ हैं। मैं पटरीसे अुतर गया हूँ, फिर भी पटरीको पकड़े हूँ!

द्वार अनन्त हैं। यशोदा मैयाने प्रेमसे पथ पाया था। अर्जुन द्वारका जाते थे। अनेक दिनसे श्रीकृष्णका कोअी समाचार न मिला था। व्यग्र अर्जुनके लिअे द्वार रुद्ध थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्धारती गुफाओंमें फुकारती सर्प-सेनाके बीच खद्योतोंके मचकते मण्डल और फिर कान्तार--प्रगाढ़ अन्धकारमें डूबा--डबक-डबक डोलता। आगे-आगे पेड़ भागते, पीछे-पीछे मृत्युवर्णा कन्दराअें दौड़ी चली आतीं। पवन कछोटा कसा--किलसता-किलसता पृथ्वीको अुड़ा ले जानेको अुद्यत। मेघ आघूर्णित, राशि-राशि तारागण विनाशमें विलीन। सिंह गरजते और पथ काट जाते—गोह रथके पीछे दौड़ते हुअे, वाहनोंपर अुनके पंजोंसे किचर-किचर ध्वनि लोटती और हृदयमें मानों टूटे हुअे काँचके टुकड़े गड़े जाते.....

बिष-वलयित विजनमें रथके अग्रभागमें स्थित प्रदीप प्रशान्त हो चुके थे। फिर भी वल्गाअें (बागडोर) मुठ्ठीमें कसी थीं, कशा चमक अुठती थी। तुरंग हतप्रभ। गतिका लोप—निरुत्साह निर्गमन। होंठ दाबे, गुंफित भ्रूयुगलमें व्यक्त महाभारतका महावीर चला जाता था। स्वजनोंसे भेंटने और अपने सखा श्रीकृष्णसे मंत्रणाकरने गाण्डीवधारी अर्जुन द्वारका जा रहे थे। श्रृगालोंका चीसता रुदन क्षितिजके तटोंसे अुठकर पास-पास आता—अत्यन्त समीप, अतिशय निकट--लगता था कि अब हमारे शरीरको ही नोंच डालेगा और फिर सहसा ही दूर-दूर दूर-दूर होता जाता। होते-होते बहुत-बहुत दूर हो जाता। पुनः निकट आना प्रारम्भ होता। निकटसे सुदूर--सुदूरसे निकट--निकट व सुदूर, सुदूर व निकट-निकट-निकट सुदूर-सुदूर--सुकट-सुकट--निदूर-निदूर—भ्रम-भ्रम-भ्रम! रथ-चक्रोंका अविकल गुंजन भ्रमरता-भ्रमरता भ्रम-रता श्रवणेन्द्रियोंमें भ्रान्त हो जाता!

स्मृति-पर-स्मृति अुमड़ी चली आती थी। सतर्क प्राणोंमें तर्क निदान प्रसुप्त था। श्रीकृष्णकी स्नेह-सिंचित मूरत अनेक-अनेक रूपोंमें प्रकट हो रही थी।

जयद्रथके अुपालम्भोंसे अवमानित सांध्य प्रकाशकी ताम्रप्रभामें प्रज्ज्वलित चिताके तटपर खड़े जब वह लपटोंके महासमुद्रमें कूदनेको थे! गर्वसे वक्र जयद्रथ कहे जा रहा था--"कह दे अपने अहीर मित्रसे, बजाअें बँसुरिया! संगीतसे आप्लावित मृत्यु पश्चातापसे पराजित मृत्युसे कहीं श्रेष्ठ है!"

और फिर अर्जुन प्रतिज्ञा भंग करके भी जयद्रथका वध करनेको बढ़े थे। कृष्णने हतप्रभ-सा बनते हुअे निस्तेज स्वर बनाकर कहा था--"सहन करो अर्जुन! जयद्रथ ठीक ही कहता है। अब यदि तुमने जयद्रथका वध कर दिया तो लोक क्या कहेगा, जानते हो? लोक कहेगा--कृष्णके देखते-देखते अर्जुनने जयद्रथका वध कर दिया और कृष्ण कुछ न बोले!"

जयद्रथ हँस पड़ा। कटुता बढ़ी। अन्ततः कृष्णसे भी न रहा गया। कातर स्वरमें अर्जुनसे बोले--"अर्जुन! क्या अग्नि-अवगाहनसे भयभीत हो रहे हो? यदि सम्भाषणमें ही समय नष्ट करना है तो चिताको शान्त कर दो और घोषणा कर दो कि प्रतिज्ञा भंग हुअी। जयद्रथ मरेगा!"

जयद्रथका अट्टहास—"देख ले कायर! स्वयं तेरा मित्र भी तेरा तिरस्कार कर रहा है! यदि अभी भी खड़ा-खड़ा तू अनर्गल प्रलापमें समय नष्ट करे तो धिक्कार है तुझपर!"

और अश्रुधारासे मन्द लोचन अर्जुनके अेक बार श्रीकृष्णकी ओर अुठे, फिर मुँद गअे। अर्जुनने चिताकी तरंगोंमें अपना पद धँसाना चाहा।

कृष्ण अकस्मात ही आगे बढ़े--"ठहरो अर्जुन! भगवान भास्करने तुमपर दया की है।"

सूर्य्य चमक अुठा। अर्जुनने प्रत्यंचा खींची। जयद्रथकी शिरहीन देह धड़ामसे पृथ्वीपर गिर पड़ी।....

रथ जा रहा है.....जा रहा.....है।

सन्मुख ही भीमाकार पर्वत नरककी प्राचीर-सा प्रशस्त था। आकाशको भेदकर अुसका शिखर अूपर-अूपर अूपर-अूपर था--पृथ्वीको घेरकर अुसका शरीर विस्तृत-विस्तृत विस्तृत-विस्तृत था। अुसके अुदरमें अग्नि थी, जिसके चारों ओर मृत पशु नृत्य करते थे। पथका वहाँ अन्त था। वीर योद्धाने अपने गाण्डीवको पुचकारा। छायाछलका यह प्रपंच किसी असुरका अिन्द्र जाल है। अर्जुन मायाको छेकेगा अिसको भेदकर ही मुक्ति है। द्वारका दूर है।

अर्जुनने नयन मूंदे और भगवानका ध्यान करके अेक बाण छोड़ा। बाणको लपटोंने हाथोंहाथ अुठा लिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अेक निमिषमें भक्कसे आकाशमें विलीन हो गअीं। पर्वतने अपना हृदय खोलकर मार्ग दे दिया। औषधियोंके गुणदायक प्रसून बन्दनवारोंमें आन्दोलित हो अुठे। पाहन अेकत्रित हो कर द्वार बन गअे!

अनन्त द्वार थे!

अनन्त अनन्त द्वार थे!!

अनादि-अनन्त द्वार थे!!!

अेल विशाल सिंहद्वार था। अुसमेंसे होकर अेक और द्वार था। द्वारमें द्वार—अनन्त शृंखलाओंके बीच अग्निकी लोल लोलुप जिह्वा-सा पंथ पसरा पड़ा था। सातों तार बजते थे—सांध्य-रेखा गगन-मग्नपर धनुष नियामक-सा....सा-सा-सा-सा....

द्वारमें द्वार है। मायामें समस्त द्वार प्रवेशद्वार हैं। पथ दृश्य है और दृश्यके स्थित होते ही अदृश्य है। कूल कहाँ? जल जहाँ! तलातल! थल विलुप्त! भोगके अगन फूल, विषयोंकी विशेष वल्लरियाँ, और कृष्णके आसनपर आज कृष्णका मित्र है। शस्त्रका वह स्वामी है। जय अुसके पद पलोटती है। मायाको वह भेदता है। पर हाय, वह अपनेको अर्जुन जानता है! राधाकी भाँति कृष्ण नहीं जानता। अिसीसे तो शस्त्र थामे बढ़ रहा है! मायाको भेदता है! कौन भेदता है मायाको!

अनन्त द्वार हैं!

अनन्त द्वार हैं!

अनादि अनन्त द्वार हैं!

और आज अर्जुनके हाथमें गाण्डीव है तो द्वारोंको जितना होना हो हो लें! पर्वतको वह अुद्विग्न करेगा! बाणकी नोकसे पृथ्वीके अेक तटसे दूसरे तटतक मार्ग खोद देगा! अुसे जाना है और कृष्णके दर्शन करने हैं, स्वजनोंसे भेंटना है! पर हाय, द्वार अनन्त हैं और अर्जुन अपनेको अर्जुन जानता है। वह कृष्णसे पृथक है।

फिर रथारूढ़ योद्धा देखता है—द्वार आ रहे हैं, जा रहे हैं—आ रहे हैं, जा रहे हैं—पर्वतका अुदर सर्व-भक्षी है।—अुसकी काअीसे चिकनी भंकारती प्राचीरें अेक क्षण द्वार-खम्भकी ओट होतीं और फिर सामने—द्वारपर द्वार—द्वारपर द्वार—प्रवेश प्रवेश प्रवेश—रथ अुड़ा जा रहा है—गुहामें अश्वोंके टाप गूंज रहे हैं—तलट्-टप! तलट्-टप!

द्वार-प्राचीर—द्वार-प्राचीर—

द्वार!

द्वार!

द्वार!

अनन्त द्वार

हैं!

अनन्त अनन्त

हैं।

अनादि अनन्त द्वार

हैं!

तलट्-टप! तलट-टप!! तलट-टप!!! तलट-टप!!!!

गुहा-मार्ग अनन्त हैं। सहस्र-सहस्र लक्ष-लक्ष कोटि-कोटि वर्ष वर्ष—अनेक मन्वन्तर,—चले चलो अैसे ही—रथकी धुरियाँ घर्षणसे विलुप्त, चक्र-द्रष्ट्राअें खंडित, अश्वोंमेंसे अनेक मार्गमें ही लुण्ठित! केवल अेक अश्व धूरि-धूसरित विधुर रथकी कायाको घसीटता—तलट्! टप्प! तलट् टप्प!! द्वारपर द्वार—द्वारपर द्वार—पथ पसरता, पवन हहरता—गिरता-पड़ता अुखड़ता रथ—अश्वकी श्वास-श्वास कुण्ठित और खण्ड-खण्ड दृष्टि हीरेके भीतर प्रकाश-विकीर्णनसे विभाजित हुअी—प्रत्येक तलमें अेक विश्व—प्रत्येक विश्व अतल—अनेक तलोंमें अनेक विश्व और फिर भी हीरा मूलतः अेक ही! यहीं मन हारता है! मेरे पुत्र अभिमन्युने अिसी प्रकार हारकर अस्त्र-शस्त्र सब फेंक दिअे होंगे!

सो अर्जुन जो कृष्ण नहीं है, हार गया। अुसने पुनः गाण्डीव अुठाया। तीर चढ़ा, प्रत्यंचा खिंची और तीर वायुके पंख खोलकर सीधा अुड़ गया। पुनः वही—द्वार! द्वार! द्वार! तलट टप्प! तलट्! टप्प! तलट्! टप्प!

आरोह है! मनका आरोह है! सांध्य-रेखा गगन-मग्नपर धनुष नियामक-सा—सा-सा-सा-सा! अिसका अवरोह? अवरोह दो अिसका मुझे! प्रभु, मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थक गया हूँ, मेरी कायाका जोड़-जोड़ खुला जा रहा है ! नयन मुँद रहे हैं ! मैं, अर्जुन; अर्जुन, हार रहा हूँ ! गुहाकी विक्षिप्त प्राचीरोंमें प्रतिध्वनि हो रही है—"हार रहा हूँ !" रथ जा रहा है—द्वारपर द्वार, द्वारपर द्वार, द्वारपर द्वार. . . .प्रतिध्वनि केवल अन्तिम शब्दकी हूँक लिअे बैठी है—"हूँ !"

"हूँ !"

हाँ, मैं नहीं जानता मैं कौन हूँ ! हूँ अिसीसे तो हूँ ! तुम बताओ क्यों हूँ ?

तलट टप्प ! तलट टप्प ! तलट टप्प !

काँपते हारते विचारते हाथोंने पुनः प्रत्यंचा खींची। धनुषका वक्ष भीतर गया, बाहर अुठा—बाण अुस अनन्त द्वार-शृंखलाके बीच—भग्नावशेषकी गहरती गहराअियोंमें लीन हो जानेवाले भीत कानन-कपोतकी भाँति अुड़ गया। संगीतका क्रम अटूट रहा। आलाप अखण्ड रहा। कण्ठ खण्ड-खण्ड हुआ जाता था, शरीर टूक-टूक—शिराअें विशृंखल !

प्रभु, मैं थक रहा हूँ ! मैं अर्जुन ! मुझे 'सम' दो ! विश्राम दो ! मैं स्वरको अधिक आगे नहीं खींच सकता ! स्वर मुझे मदमत्त तुरंगकी भाँति खींच रहा है !

अर्जुन ध्यान-मग्न हो गअे। नासिकाके अग्रभागमें दृष्टि स्थित हुअी ! देखा, वायुकी पाँच पैड़ियाँ हैं। नीचे स्वच्छ स्वस्थ सरोवरमें सहस्त्र सरोरुह खिल रहे हैं। अुन्होंने जलमें डुबकी लगाअी। कालिया-मर्दन ! अर्जुन अब कृष्ण बन गअे !

नियामक धन्यपर मन गगन रे, साधक सब कुछ अुलट गया। अश्वत्थकी जड़ें चन्द्रमासे अमृत, सूर्य्यसे प्रकाश ग्रहणकर नीचे सुकृत-सुदलोंमें व्यक्त हुअीं। धाराका प्रवाह लौटकर अपने मूल अुत्सकी ओर भागा। प्रकाश व अंधकार दोनों ही अेक दूसरेका भक्षण करने लगे। नियामक धन्यपर मन गगन रे साधक ! नियामक धन्यपर, धन्यपर मन, पर मन गगन, मन गगन रे, गगन रे साधक ! पथ अपने ही केन्द्रमें लीन हो गया। सुर अनेक रूपोंमें प्रकट हुअे। ठाठ बँध गया। अश्व टाप देते थे तालमें। चक्र लयमें बँध गअे थे। रथ अपने ही रागमें प्रवाहित था ! आरोह-अवरोह ! अनुलोम-विलोम ! लास्य और ताण्डनका विवाह था !

यशोदा मअियाने विस्मय-विस्फारित लोचनोंसे देखा—राधा ही कान्हा हैं। खड़ी-खड़ी मुस्कुरा रही हैं—"मैं ही हूँ तुम्हारा कान्हा ! वर माँगो !"

अेक ही धक्केसे अनन्त द्वार खुल गअे ! वातायनोंसे कूदकर स्वर्ण-सुरभित समीर भीतर आ गया। देश-कालका भेद मिट गया। यशोदा भक्ति-विह्वल हो कह अुठीं—"वर ही देना है तो यह दो कि जनम-जनममें यह मन सदा . . . . .ही स्मृतिमें तल्लीन रहे।" राधा मुस्कुराअीं। संसारके समस्त सरोवर शंख-शंख शतदलोंसे भर अुठे। अुन्होंने स्नेह-सुरभित सुरमें मन्द-मन्द कहा – तथास्तु !"

और आज कृष्ण अम्बररूप हो स्वर्ण-धूपका पीताम्बर पहिरे, मलयका अुत्तरीय अुड़ाते, सूर्य्य-किरणोंकी अनेक बाँसुरियाँ बजा रहे हैं तो क्या अुन्हें पहिचाननेमें मैं भूल करूँगा ! पहिचान लिया है प्रभु, हम बतियानेमें आनेवाले नहीं हैं।

श्याम सिन्धु बने तटके स्वर्ण-शस्यका पीताम्बर पहिरे, फेनके अुत्तरीयमें सुशोभित तो अुठकर वह मुझीसे मिलने अुमड़े चले आ रहे हैं !

श्यामल भू बने सरसोंके सुवासित खेतोंका पीताम्बर पहिरे, अनेक बाँसोंमें फूँक भरते वह मुस्कुरा रहे हैं, तो क्या मैं नहीं जानता हूँ !

कृष्णने चारों ओरसे मुझे घेर लिया है ! अम्बर बनकर वह मुझपर छा गअे हैं। भू बनकर वह मेरे चारों ओर फैल गअे हैं। समुद्र बनकर तो वह मुझसे भेंटने ही भागे चले आते हैं।

मैं पटरी-पटरी चल रहा हूँ। ये पटरियाँ जिन्हें गिट्टियोंपर सीधा-सीधा जमाया गया है।

सातों तार भीतर-बाहर बज रहे हैं—तूँबिओंमें गूँज है, अन्यथा तार अपने आपमें क्लीव निर्बीज हैं।

रसका आवेश भी अुद्वेग है। अुसमें भोगका अहंकार है। जो भोग अपने वास्तविक जीवनमें मैं अस्वीकार करता हूँ, अुनको कल्पनामें सिद्ध करता रहूँ और कलाकार होनेका चमकीला बिल्ला टोपीपर टाँके रहूँ ! अच्छा मसखरा हूँ—योग और भोगके द्वैतसे पराजित—कर्ताकी पृथक् सत्ता मानकर—"मैं साक्षी हूँ !" "मैं साक्षी हूँ !"—अैसा चिल्लाता हूँ !

भीतर-बाहर सर्वत्र कृष्ण हैं। हे प्रभु, अर्जुन होनेका दंभ हर लो ! तुम्हारे परमधाम-गमनके पश्चात् तुम्हारी ही रानियोंको लिअे आते थे, गोपोंने मार-पीटकर रानियाँ छीन लीं और भाग गअे !

अर्जुनसे गाण्डीव न अुठा, न अुठा !

मेरी पराजय तुम्हारी ही पराजय होगी, यह याद रखना। मेरा क्या, संसार तुम्हींको हँसेगा !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिताको देखनेपर—

—श्री अेस. के. पोट्टक्कार

मम्मूको सब लोग सरदार कहते थे। वह था "जूठनके अफसरों" का सरदार। अुसके दलमें ७ से १६ तककी अुम्रके करीब अेक दर्जन अनाथ भिखमंगे बालक थे। वे भिन्न-भिन्न जातिके थे, पर अुनमें न सांप्रदायिक झगड़े होते थे न राजनैतिक स्पर्द्धा। वे सब अब अेक ही परिवारके थे। बाजार अुनका घर था और होटलोंकी जूठन अुनका भोजन।

रातके दस बज चुके थे। सरदार, दलके दो अफसरोंके साथ जूठन बटोरने गया था। बाकी सब अेक दूकानके खाली बरामदेमें अुसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। लेकिन वे अपना समय गँवाते न थे। जॉन, मुहम्मद, गोपाल और अम्बेदकर मिलकर ताश खेलने लगे। रामू मेकानिक अपनी टूटी हुअी जापानी घड़ी ठीक करने लगा। डा. शंकर जोर्जके पैरके घावमें मरहम लगा रहा था। जोसफ गवैया पासवाली दूकानका रेडियो सुनने गया। अिनसे अलग अेक कोनेमें करीब आठ सालका अेक सुन्दर बालक बैठा था। गोरा चेहरा, बड़ी-बड़ी सुरेख नीली आँखें, लाल ओंठ, भूरे घुँघराले बाल ये सब पुकारकर बता रहे थे कि अुस बालकको कठोर दैवने ही अिस दलमें शामिल कराया था। अुसका नाम राजू था। सरदार अुसको बहुत प्यार करता था और अुसको सड़कमें पडी हुअी बीड़ी और सिगरेटके टुकड़ोंको अिकट्ठा करनेका काम सौंपा गया था। सबके साथ रातको भोजनके बाद वह भी धुआँ अुड़ाता था। अुसने दिन भरकी कमाअी गिनकर ठीक ठाक रखी और दीवारका सहारा लेकर अूँघने लगा।

आधे घण्टेके बाद सरदार और साथी आअे। वे जूठनकी पत्तलोंको थामे हुअे थे और अुनके पीछे जीभ और पूँछ हिलाते हुअे दो कुत्ते भी थे। पत्तलें जमीनपर रखी गअीं और सब लड़के अुनको घेर कर बैठे। सरदारने राजूको अपने पास ही बिठाया। सब खाने लगे। जो चीज हाथ लगती तुरंत निगल ली जाती। सरदारको अेक मांसका टुकड़ा मिला। लेते ही अेक-बार चूसा, पर तुरंत राजूका ख्याल आया और अुसीको वह टुकड़ा दिया। राजू जल्दी खा न सकता था और सरदारकी मददसे ही अुसका पेट भर जाता था। माँसका टुकड़ा वह बड़े चावसे चबाने लगा। वह दरअसल हड्डी ही थी। फिर भी राजूको स्वाद लग गया और वह हड्डी ही चूसते रह गया। पाँच-छह मिनिटमें सब पत्तल साफ किअे गअे; सबने हाथ पोंछकर बीड़ी पीना शुरू किया। बेचारे राजूका आज पेट न भरा। अुसने पास बैठे हुअे कुत्तेको हड्डी दे दी और आज धुआँ भी अुड़ाअे बिना अेक ओर जमीनपर लेट गया। थोड़ी देर बाद बाकी अफसरोंने भी सोनेकी तैयारी की। किसीने अखबारकी पुरानी प्रति बिछाअी, तो किसीने कैनवासका टुकड़ा। जिनको कुछ न मिला वे अपने फटे कपड़े ही ओढ़कर लेट गअे।

ग्यारह बजते-बजते सन्नाटा छा गया। केवल जार्ज पैरके दर्दके कारण कभी २ 'हाँ-हूँ' कह अुठता। राजूको नींद नहीं आ रही थी। पड़ोसका 'नेशनल हॉटेल' अबतक बन्द न हुआ था और वह लेटे-लेटे सोच रहा था कि अिसका कारण क्या होगा। आज वहाँ ज्यादह रोशनी है और मालूम होता है कि किसी भोजकी तैयारी हो रही है। सहसा हवाका झोंका चला और राजूके नथने खुशबू पाकर विकसित हो अुठे। भूने हुअे मांसकी बू थी वह। अुसके मुँहमें पानी भर आया, पेटके चूहे और जोरसे दौड़ने लगे। मांसने ही अुसे आज भूखा रख छोड़ा था। अुससे रहा न गया। वह चुपकेसे अुठा और सड़कपर अुतरा। अेक टुकड़ा मिल जाय—! अुसने अपना भाग्य परखनेका निश्चय किया।

२

नेशनल होटल शहरका मुख्य मिलिटरी होटल है। शहरकी बड़ी-बड़ी पार्टियाँ वहाँ होती हैं। आज भी वहाँ अेक डिनर होनेवाला है। वकीलोंके क्लबका अेक सदस्य विलायत जानेवाला है। अुनकी बिदाअी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगी। अेस. पी. श्री. परमेश्वरको छोड़कर बाकी सभी निमंत्रित व्यक्ति वहाँ आ गअे थे। वे अिधर-अुधरकी गपशप करते हुअे परमेश्वरजीकी प्रतीक्षा कर रह थे। परसनेवाले 'बाय' भी दरवाजेपर तैयार खड़े हुअे थे। राजू धीरे-धीरे होटलके रसोअी घरकी खिड़कीके पास गया और झाँककर भीतर देखा। बटलर वहाँ अेक बेंचपर बैठकर अूंघ रहा था। मेजपर बड़े-बड़े थालोंमें तरह-तरहके व्यंजन रखे हुअे थे। राजूने कुछ सोचा, अुसकी आँखें चमकीं। वह होटलके पीछेकी तरफ गया और धीरेसे रसोअीघरका दरवाजा खोलकर अन्दर गया। भूने हुअे मांसका थाल आगे ही था। झट अेक टुकड़ा लेकर मुँहमें डाला। बटलर जरा हिला। राजूका साहस जाता रहा। पर अुसको अेक नअी बात सूझी। वह पूरा थाल ही अुठाकर बाहर निकल आया।

बाहर घोर अन्धकार और सन्नाटा छाया हुआ था। राजूने चारों तरफ देखा। पास ही अेक कूड़ेका डिब्बा था। अुसकी आड़में बैठ गया और मांसके टुकड़े ले लेकर निगलने लगा। लालच और भयका मारा वह दाँतोंको काममें ला न सका। मांसकी गंधने अेक कुत्तेको वहाँ आकर्षित किया। "खारे भाअी, तेरा भी आज भाग खुला है"—कहकर कुत्तेके सामने अेक बड़ा टुकड़ा फेंक दिया। सहसा वहाँ रोशनी फैल गअी। अुसने देखा कि अेक मोटरकार आ रही है। सोचा कि भाग निकलूं, पर कहाँ?—अेक ओर होटल और दूसरी तरफ मोटर। अेक दो मिनटमें प्रकाश अितना जबर्दस्त फैला कि राजूकी आँखें चौंधिया गअीं। कार राजूके सामने ही रुक गअी। कुत्ता अेक बार जोरसे भूंका और थालपर पूरा अधिकार कर लिया। अेस. पी. परमेश्वर कारसे अुतरे। बड़े डील डौलके आदमी थे। अधिक शराब पीनेसे आँखें लाल-लाल थीं। गम्भीर स्वरमें पूछा, "तू क्या कर रहा है?" राजू चौंका। अुसका मुँह मांससे भरा था और अिसलिअे कुछ जवाब न दे सका। वह भयभीत होकर ताकने लगा। परमेश्वरकी नजर अब कुत्ते और थालपर पड़ी। वे ताड़ गअे कि क्या मामला है। "रे छोकरे, तू चोरी भी करता है?" यह कहते हुअे अुन्होंने अपने भारी बूट पहने पैरसे राजूके भरे पेटपर अेक लात मारी। वह गिर पड़ा, पर अुठकर भागना चाहा। "अरे तुझे यों न छोड़ूँगा" परमेश्वरने अुसकी गर्दन पकड़कर कहा। फिर अुसको घसीटते हुअे होटलके दरवाजेतक गअे और बटलरको बुलाकर पूछा, "आज भोजके लिअे भूना हुआ मांस तैयार हुआ हो तो थाल अुठा लाओ।" थोड़ी देर बाद बटलर घबराते हुअे लौट आया और डरते हुअे कहा— "वह थाल गायब है सरकार।" अब श्री परमेश्वरको कोअी संदेह न रह गया। अुन्होंने राजूको मित्रोंके सामने करके कहा— "अिसी शैतानने अुसे चुराया है।" सबने अुस 'शैतान'की तरफ घूरकर देखा। किसी भोजका अेक मुख्य व्यंजन चुराना खेल नहीं। "अिसे अुस खंभेसे बाँध दो" परमेश्वरने अेक नौकरसे कहा।

हँसी मजाकके साथ भोज आरम्भ हुआ। शराबकी बोतलें और कटलेट्स, चोप्स आदिकी थालियाँ खाली होती जा रही थीं। राजू सामने ही कैद था। यह कहना मुशकिल है कि वह होशमें था या नहीं। पर अपने पेटपर बूटसे लात मारनेवाले यमदूतकी तरफ वह जरूर ताक रहा था। मि. नायरने कहा— "यह शैतान तो देखनेमें बड़ा सुंदर लड़का है!" परमेश्वरजीने कुछ सोचते हुअे कहा— "किसी अंगरेजका बच्चा होगा। देखो, अुसकी नीलीसी आँखें और भूरेसे बाल।" "परमेश्वरजी आपकी भी आँखें जरा नीली और बाल भूरे हैं!" खान साहबने कहा और राफेलकी तरफ कनखी मारी। राफेलने कहा, "अितना ही नहीं अुसकी शकल सूरत भी आपसे बराबर मिलती है। पता नहीं क्यों....?" "हाँ, हाँ, कितनी ही आकर मुलाकात करती हैं। अुनमेंसे किसीका होगा। है न, साहेब?" डेविडने परमेश्वरसे पूछा। सब ठहाका मारकर हँस पड़े परमेश्वरने कुछ न कहा। अेक ग्लास और शराब पी ली। थोड़ी देर सन्नाटा रहा। फिर किसीने राजूकी तरफ अिशारा करके कहा— "देखो, अुस लड़केकी छातीपर 'O' जैसा क्या दाग है?"

"वह तो जन्मका ही मालूम होता है"

"नहीं, अितना बड़ा नहीं हो सकता"

"तो किसीने दाग दिया होगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री परमेश्वर नीचा मुख करके बैठे थे। अब अुन्होंने सिर अुठाया और राजूकी छातीपरके दागको अेकबार गौरसे देखा। अुन्होंने अेक लम्बी साँस छोड़ी और अपना पीला मुख लेकर चले गअे। शराबके नशेके कारण अुनके मित्रोंमें यह देखनेकी शक्ति न रह गअी थी कि परमेश्वरजी अितने बेचैन क्यों हो गअे थे; पर सबको जरूर बड़ा गुस्सा आया कि अिन्होंने राजूको--भोजके अेक मुख्य व्यंजन चुरानेवाले शैतानको--अुचित दंड न दिया। पर अुन लोगोंने यह कसर पूरी की। छड़ी, चम्मच, काँटा--जो कुछ हाथ लगा अुससे राजूपर प्रहार करते हुअे वे सब होटलसे बाहर चले गअे। राजूको तत्काल अिन यातनाओंकी पीड़ा न हुअी। वह डरसे काँप रहा था। अुसने दीनतासे पुकारा "पानी, पानी"। अब बटलरकी बारी आअी। वह निर्दअी अेक बोतल रेंडीका तेल लाया और जबर्दस्ती राजूको पिलाया और कहा "रे शैतान, हमारी गरदन झुकाकर तूने जो खाया है अुसे पचने न दूँगा।" राजूका दम घुटने लगा, अुलटी होने लगी। वह जगह मैली न हो जाअे अिस डरसे बटलरने अुसका बन्धन खोल दिया और गरदनियाँ देकर सड़कपर ढ़केल दिया।

बाहर ठंढ़ी हवा चल रही थी। राजू धीरे अुठकर चलने लगा। दस-बीस कदम मुश्किलसे गया होगा कि वह गिर पड़ा। पेट और सारे बदनमें असह्य पीड़ा हो रही थी। शरीर जलने लगा, कान बन्द हो गअे थे, सिर चकरा रहा था, आँखोंके सामने अन्धेरा छाया हुवा था। वह जोरसे चिल्लाना चाहता था, पर जबान न खुलती थी, थोड़ी देर बाद बेहोशीने बेचारेकी बेचैनी दूर की।

३

दूसरे दिन रातको भोजन करके परमेश्वरने शयनागारमें प्रवेश किया। पीछे-पीछे अुनकी स्त्री भी आअी। अुसका भोलाभाला सुन्दर चेहरा भरा हुआ था। आखें डबडबा रही थीं। सिसकियाँ भरती हुअी बोली, "हाय, मेरे बच्चे! तुझे कब देखूँगी? हे, भगवन्! क्या मुझे अेक सन्तानका मुख देखकर मरनेका सौभाग्य न दोगे?" सांत्वना देते हुअे परमेश्वर बोले "रोओ मत। सब किस्मत है। पाँच साल पहले जो बच्चा नदीमें गिरकर मरा, अुसके लिअे अब भी रोओ तो मैं लाचार हूँ।"

"तुम बड़े निठुर हो" पार्वतीने कहा "अगर मेरा लाल नदीमें मरा होता तो शव क्यों लापता होता। मेरा अटल विश्वास है कि अुसको कोअी पहाड़ी ले गया होगा। हाय, तुमने और पता लगाया होता! पर तुम्हें फुरसत ही कहाँ मिलती है? पाप करो, पैसा कमाओ, और आधी राततक मौज अुड़ाओ। तुमने दो-तीन लाख कमाया; किस कामका? हे भगवान्, मुझे अपना खोया हुआ पुत्र मिल जाअे तो मैं यह सारी सम्पत्ति दान दे दूँगी। अेक साथ पापका जाना और सुखका पाना!...." बोलती-बोलती अुसने चुप्पी साधी। श्री परमेश्वर भी चुप थे। वे शायद पत्नीकी बातें सुन नहीं रहे थे। चिन्ताके मारे वे गम्भीर मुद्रा करके शून्यताकी ओर ताक रहे थे।

"टक, टक, टक"

किसीने दरवाजा खटखटाया। दोनों चौंके और अेक ही स्वरमें पूछा, "कौन है?"

"मैं हूँ अम्मा, बाबूजीसे कुछ जरूरी बातें करनेके लिअे नीचे कोअी खड़ा है।" नौकरने कहा। परमेश्वर नीचे गअे। सलाम करते हुअे किसी अपरिचित आदमीने कहा, "मेरे चाचाजी मृत्यु-शय्यापर पड़े हुअे हैं। संसार छोड़नेके पहले आपको अेक रहस्य बताना चाहते हैं। आप कृपया शीघ्र मेरे साथ चलें।" "अुनका क्या नाम है?"

"कुंजिकण्णन"

"कहाँ रहते हैं?"

"...गाँवमें, यहाँसे २६ मील दूरीपर"

"कार जाअेगा?"

"करीब-करीब जाअेगा। फिर पहाड़ी गलीमें तीन-चार फरलांग पैदल जाना होगा।"

"अच्छा, मैं अभी आया।"

४

छोटी-सी कुटी थी जिसमें अेक ही कमरा था। अेक तरफ दरवाजेकी जगह खुली थी। श्री परमेश्वरने झुककर अुसमें प्रवेश किया। अन्दरका दृश्य बीभत्स और दयनीय था। दाअीं ओर अेक मैली पुरानी चटाअी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिछी थी। अुसपर चमड़ेसे आवृत अेक अस्थि पिंड़ पड़ा हुआ कराह रहा था। सिरहाने अेक लालटेन जल रही थी जिससे कमरेमें कुछ मन्द प्रकाश था। सिरकी अेक तरफ रेतसे भरा अेक दोना थूकनेके लिअे, और दूसरी तरफ मिट्टीके बर्तनमें कुछ पानी। बदनपर अेक चिथड़ा पड़ा हुआ था। चटाअीपर और आस-पास जमीनपर अेक ओर थूक था और दूसरी ओर मल-मूत्र। आहट पाकर अुस मरीजने धीरेसे सिर अुठाकर देखा। परमेश्वरजीको देखकर अुसने मुस्करानेकी चेष्टा की। अुसकी आँखें जरा चमकीं। खाँसते हुअे पूछा, "क्यों, सुप्रैंट साहब, मुझे पहचान लिया?" परमेश्वरने अुसका मुख ध्यानसे देखा, कहा, "नहीं।"

कमरेमें जोरकी बदबू थी। परमेश्वरको अैसा मालूम हुआ कि अुनका दम घुट रहा है। रूमाल नाकपर रखते हुअे दरवाजेकी तरफ हटे।

रोगीने ओंठ चबाते हुअे कहा "मैं सोमनका पिता, आपका दुश्मन हूँ।"

परमेश्वरके दिलमें आज जीवनमें पहली बार भयका संचार हुआ। अपनेको संभालते हुअे पूछा-- "कौन सोमन?"

"कौन सोमन! हाँ, चूहा पर्वतको पहचानता है, पर पर्वत चूहेको कहाँ पहचानेगा! परमेश्वरजी मुझे आपको बहुत कुछ सुनाना है। खड़े रहकर थक जाअेंगे। अुस पेटीपर बैठ जाअिअे" "नहीं, मैं खड़ा ही रहूँगा। जो कुछ सुनाना है जल्दी सुनाओ" "हाँ, हाँ, जल्दी ही, मुझे जलदी ही संसार छोड़कर जाना है। पर अक्षर-अक्षर सुनाके जाअूँगा। याद है? दस साल पहले कैदमें पड़े हुअे अेक सोमनको तुमने अपनी पाशविक करतूतोंसे मार डाला था। फिर अुसको लटका दिया था और आत्महत्याकी सफल घोषणा की थी। लेकिन हाँ, मैंने तुमको आज अपने बेटेकी बात सुनाने नहीं बुलाया है। अभी तुम अपने बच्चेकी कथा सुनोगे। वह मरा नहीं है, ज़िंदा है।" परमेश्वरजी घृणा, भय, आशा आदि विकारोंसे अुद्विग्न हो गअे। दो मिनट चुप रहके अुन्होंने अेकदम आगे बढ़कर रोगीका हाथ पकड़ा और दीनता भरी आवाजमें कहा "सच? मेरा पुत्र जीवित है? वह नदीमें नहीं डूब मरा? कुंजिकण्णनजी मैं तुम्हें अपनी आधी संपत्ति दे दूँगा। बताओ, वह कहाँ है।"

न जाने रोगीमें अितनी ताकत कहाँसे आ गअी थी। वह अुठकर दीवारके सहारे बैठा और अट्टहास करते हुअे बोला। "संपत्ति! मेरा सर्वनाश करके तुम अभी मुझे अपनी संपत्ति दोगे? गरीब लोगोंपर अत्याचार करके, धोखा देकर, चुराकर कमाअे धनका अेक पैसा भी अपने शवके पास भी न रखने दूँगा। तुम अपनी आत्माको पहचानो। अपने दुष्ट जीवनको निहारो। कितने लोगोंसे अुनके बच्चे छीन लिअे? कितनी गरीब अबलाओंको बच्चोंका बोझ दिया? और अब तुम चाहते हो पुत्र-सुख! यह नहीं होगा। भगवान भले ही बेगुनाहोंको पीड़ा दे, पर पापियोंको जरूर दंड देगा। तुम्हें जरूर अपने भीषण अत्याचार, घोर अन्याय, और भयानक पापोंका फल भोगना पड़ेगा। यह नियतिका नियम, विधाताका विधान है।" अितना कहते-कहते बूढ़ेको जोरकी खाँसी आअी। अपने शरीरपर ही थूकते हुअे वह आगे बोला--"मेरे पुत्रका अपराध यह था कि अुसने अेक सुन्दरीसे विवाह किया था। अुस बेचारीपर तुम्हारी कुदृष्टि पड़ी। मेरे सोमनमें आत्माभिमान जगा। बस, तुमने मुझ बूढ़ेकी लाठीपर झूठा अिलजाम लगाया और आखिर अुसका काम तमाम किया।"

श्री परमेश्वर अब अपनेको रोक न सके। बोले, "कण्णनजी बस करो। मैं अब पछता रहा हूँ। मैं अपने पापोंका कोअी भी प्रायश्चित्त करनेको तैयार हूँ। तुम जरा बताओ कि मेरा पुत्र कहाँ है।"

"हा! हा! हा! शेर अब कुत्ता बनकर चाटने भी लगा।" हँसते और खाँसते हुअे कुंजिकण्णन बोला। "अब मैं सोमनका पिता नहीं हूँ, सोमनका प्रेत हूँ। बदला चुकानेके लिअे दस साल तक जीवित रहा। काफी बदला लिया है। अब लेनेकी ताकत मुझमें नहीं है। यह आखिरी करतूत है। मैंने, पाँच साल हुअे तुम्हारे बच्चेको चुरा लिया था। अुसे प्यार भी करता था और जब कभी अुसके पिताके अत्याचारकी याद आती थी बदला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी चुकाता था। कभी-कभी मैं तुम्हारा स्मरण करके क्रोधसे पागल हो जाता था। अुस समय तुम्हारे छोटेसे पुत्रको किसी पेड़से बाँध रखता और कोड़ेसे मारता। तब वह असहनीय पीड़ासे चिल्लाते हुअे कूदता और मैं बदलेकी खुशीमें नाचता। फिर कभी अुसको दो तीन दिन भूखा छोड़ता और मैं अुसके सामने मौज अुड़ाता।

अब परमेश्वर आपेसे बाहर हो गअे। अुन्होंने रोगीकी गरदन पकड़कर कहा "रे दुष्ट, बता, तूने मेरे बच्चेका क्या किया ?" बूढ़ा डरा नहीं। अुसने शान्तिसे कहा "तुम मेरा गला घोंटोगे ? अच्छा होगा। लेकिन मुझे यह कहानी पूरी करने दो। मैं अब अुस बच्चेका भला चाहता हूँ। मैंने पागल होकर, सोमनका प्रेत बनकर अुसको अनुचित दण्ड दिया। खैर, अेक दिन मैं अितना भयंकर हो अुठा कि अेक लोहेकी टाप, जो अुस वक्त हाथ लगी, आगमें लाल कर ली और अुस कोमल लड़केकी छाती दाग दी। घंटों वह बेचारा बेहोश रहा। दूसरे दिन सबेरे देखा तो वह गायब था। मैंने अुसकी खोज जरूर की, पर यहाँ लानेकी कोशिश न की। तब तक मेरी बीमारी ग्यारह सालकी बीमारी बढ़ गअी थी। मैंने सोचा कि पिता-पुत्र मिलेंगे। पर मालूम हुआ कि असा नहीं हुआ है। अिसीलिअे तुम्हें अब असमय यहाँतक बुला लिया कि मरनेके पहले तुम्हें यह रहस्य बताअूँ और अुस प्यारेके भविष्य सुखका प्रबंध करूँ। वह अब तुम्हारे ही शहरकी गलियोंमें मारा-मारा फिर रहा है। वह जूठनके अफसरोंमें सबसे छोटा है। तुम अुसको आसानीसे पहचान सकोगे। अुसकी छातीपर अुस दिनके दाग देनेका 'O' चिन्ह अब भी बना हुआ है। हाय ! मेरा सोमन। हाय ! मेरा राजू !" बूढ़ा रोगी दीवार-परसे सरककर चटाअीपर गिर पड़ा और फिर न बोला।

परमेश्वरकी छातीपर मानो तीर लगा। वे वहाँसे अुठे और पागलकी तरह भागे।

५

मोटर तेजीसे जा रही थी। श्री परमेश्वरको चक्कर-सा आ गया था। वे पैर पसारे बैठे थे। अुस भयानक कुटीको और रोगीकी कहानीको वे बड़ी कोशिश करनेपर भी भुला न सके। अुस कुटीने अुनके दिमागको और कहानीने अुनके दिलको चीर डाला था। बूढ़ेकी हँसी और आवाज अुनके कानोंमें गूँज रही थी। चारों तरफ अन्धेरा था। तब भी परमेश्वरको अैसा लगा मानो सड़कके दोनों तरफ मनुष्य-पंजर खड़े हुअे ताक रहे हैं। सहसा अुन्होंने चिल्लाकर कहा, "कार रोको।" कार रुकी। परमेश्वर कारसे बाहर कूद पड़े और ड्राअीवरसे कहा, "कारमें कोअी भूत है अुसको भगाओ।" ड्राअीवरने कहा, "कोअी नहीं है साहब, अभी हम घर पहुँच गअे हैं।" माथेपरका पसीना पोंछकर वे फिर बैठ गअे। थोड़ी देर बाद अुन्होंने फिर घबराते हुअे कहा, "ड्राअीवर जल्दी जाओ, कोअी पीछा कर रहा है।" ड्राअीवरने कहा "नहीं जी, कोअी नहीं है। हवा चल रही है।"

मोटर शहरकी सड़कोंपर आ गअी। रोगीके चित्रसे पिंड छूटा। पर अब परमेश्वरके सामने नअे चित्र खिंचने लगे। किसी सड़कके मोड़पर अेक कुत्ता बैठा हुआ था। पास ही अेक होटल भी था। परमेश्वरने अधीर होते हुअे ड्राअीवरसे कहा "ड्राअीवर, कार रोको। देखो, अुस होटलमें अेक सुन्दर अर्धनग्न बालक बँधा हुआ है न ? वही जूठनका छोटा अफसर। मेरी जैसी आँखें। मेरे जैसे बाल। अुसकी छातीपर नाल-'O' जैसा दागका चिह्न है—नहीं मेरे बूटकी लातका चिह्न है। ओफ !" तबतक गाड़ी अुनके घरके सामने रुक गअी। पौ फट रही थी। परमेश्वरजी लड़खड़ाते हुअे घरमें घुसे और शराबकी अेक बोतल खाली करके लेट गअे।

६

सरकारी अस्पतालके 'स्पेशल वार्ड' में राजू पड़ा हुआ था। पार्वतीदेवी घबराअी हुअी पास बैठी थी। दो नर्सें भी सावधान होकर चारपाअीके पास ही खड़ी थीं। राजू बकने लगा। "बीड़ी-२३ टुकडे-सिगरेट-आज केवल अेक टुकडा-वह मैं, नहीं, सरदार पिअेगा- और अेक बार गिनूँ। अेक-दो-तीन... यह कैसी बू है ? हा ! भूने हुअे मांसकी... ले, कुत्ते, तू भी खा ले-- तुझे भी और कहाँ मिलेगा ! - रोशनी-कार-अँग्रेज भूत-मुझे बचाओ-- बूटकी लात-ओफ !, पानी, पानी" नर्स दौड़कर व्हे वाटर (Whey.Water) लाअी। पार्वतीने पिलाना चाहा। पर राजू आँखें बंद करके लेटा था। अुसने मुँह न खोला। पार्वतीने आँसू रोकते हुअे और स्नेहपूर्वक राजूके माथेपर हाथ फेरते हुअे, नर्ससे कहा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"जरा डाक्टरको बुलाओ" बड़े सर्जन आअे। अुनसे बोली, "लड़का तो अेक बूंद भी नहीं पीता। दिनरात बकता रहता है और पेटका जिक्र करके बार-बार चौंकता है और रोता है।" डाक्टरने सांत्वना देते हुअे कहा, "बुखारका जोर है। कुछ डरनेकी बात नहीं। पेटका ओपरेशन करना है, पर चार-दिन बाद। अभी वह बड़ा कमजोर है। आप शांतिसे रहें।" "डाक्टर साहब, आपने अबतक बताया नहीं कि यह कैसा रोग है।" "अब कुछ पहचान गया हूँ। भयसे 'नरवस' Nervous ज्वर चढ़ा है। फिर पेटमें बड़ी चोट लगी है। शायद लात खाअी होगी। मैं अिसपर खास ध्यान दे रहा हूँ। आप चिंता न करें।"

परमेश्वरजी बुतकी तरह दरवाजेपर खड़े हुअे थे। डाक्टरने अुनकी तरफ मुँह करके कहा-- "सुपरिन्टेन्डट साहब, आप अिस तरह बचकर क्यों खड़े रहते हैं? अपनी पत्नीको समझाअिअे न?" परमेश्वरका गोरा चेहरा सफेद हो गया। अुनकी जबान हिलती न थी। बड़ी कोशिश करके बोले "मुझे बड़ी थकावट मालूम होती है, प्यास भी लगी है। आप जरा अुस कमरेमें आअें और मुझ पापीकी कहानी सुनें।"

× × ×

राजूने आँखें खोलीं। पार्वतीकी तरफ घूरकर देखा, मानो पूछ रहा था "यह कौन बैठी है?"

"बेटा मुझे 'अम्मा' कहकर पुकारो और अम्माके हाथसे कुछ पी लो" राजू सुनी अनसुनी करके चारों तरफ चकित होकर देखने लगा। अुसको अस्पताल आअे पाँच दिन हुअे थे। अुसके बाद यह पहला मौका था जब कि वह जरा होशमें आकर परिस्थितिका ख्याल करने लगा। अुसने अपना अूनी कुरता, मखमली सेज, लोहेकी चारपाअी, मेज कुर्सी सबकी तरफ गौरसे देखा। अुसके क्षीण मुखपर अविश्वास, भय और आश्चर्यकी रेखाअें स्पष्ट दिखाअी दे रही थीं। थोड़ी देरतक सड़ककी तरफ देखता रहा। फिर पार्वतीसे पूछा "सरदार है?" बेचारी पार्वतीदेवी क्या जानती कि सरदार कौन है।

"सरदार? पिताजीको देखोगे? वे अभी आअेंगे।" अेक घंटे बाद राजूने फिर सरदारके बारेमें पूछा। पार्वतीने पति महाशयको बुला भेजा। वे कमरेके दरवाजेपर आअे। डाक्टरने अुनसे कहा था कि राजूके पास जाना न चाहिअे। अुनको देखकर बीमारीके बढ़नेकी आशंका थी। सरदारका जिक्र सुनकर परमेश्वर ताड़ गअे कि राजू किसको बुला रहा है। डाक्टरकी सलाह ली। अुन्होंने कहा, "बात अैसी है तो तुरन्त अुस 'सरदार' को बुलवाअिअे। अिससे लड़केका व्याकुल मन जल्दी प्रसन्न हो जाअेगा।"

सरदार आया। जूठनके बाकी अफसर भी आअे। पर केवल सरदारको भीतर जानेकी अनुमति मिली। सरदारको देखकर राजू रोया; अुसका मन हल्का हो गया। राजूने सरदारके साथ जानेका हठ किया। समझौता हुआ कि सरदार वहीं रहकर राजूकी सेवा करेगा।

७

अेक सप्ताह बीत गया। पार्वतीको यह देखकर बड़ी निराशा हुअी कि रोग घटनेके बदले बढ़ता ही जा रहा था। "लो, वही अंग्रेज है, मुझे अभी लात मारेगा" यों चिल्लाता हुआ राजू बार-बार सरदारसे लिपट जाता। पार्वती यह देखकर छाती पीटकर रोती थी। गनीमत अितनी ही कि परमेश्वर यह कांड न देखते, न सुनते। वे अब सचमुच भूत बन गअे थे। न खाते, न सोते। बगलके कमरेमें अेक कुर्सीपर अपनेको कोसते हुअे बैठते। नर्स या डाक्टरसे कभी-कभी राजूका समाचार सुनते और अेक-अेक गिलास शराब पीते।

शाम हो गअी थी। राजूका जी मिचला रहा था। कमजोरीके कारण कै न होती थी। वह बड़ा बेचैन हो गया। पार्वतीका बाँध टूट गया। "हा, बेटा" कहकर वह चिल्ला अुठी। दूसरे कमरेमें बैठे हुअे परमेश्वर चौंके। अुठे और पागलकी तरह दौड़कर राजूके कमरेमें घुसे। दरवाजेपर नर्सने रोका। वह धड़ामसे जमीनपर गिर पड़ी। "मुझे अपने बेटेको देखना है। अेक बार जरूर देखूँगा। किसकी मजाल है कि मुझे रोके।" यों बकते हुअे चारपाअीके पास आअे और राजूका हाथ पकड़कर कहा "राजू, बेटा, अपने बापको देखो।"

"फिर वही अंग्रेज भूत, ओफ्!" राजूने जोरसे अपना हाथ छुड़ाया और भागनेकी कोशिशमें पलंगसे नीचे कूद पड़ा। वह वहीं ढेर हो गया।

(अनुवादिकाः— कुमारी अे. पद्मिनी, अेम. अे.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खलील जिब्रानका जीवन दर्शन

—श्री प्रेमकपूर कंचन

शिष्यने गुरूसे याचना की—"देव ! मुझे भी दीक्षा मिले।" गुरूने गम्भीर विचारसे पूछा, कभी किसीसे प्रेम किया है ?"

'प्रेम !' शिष्यके लिअे नया विषय था।

गुरूने दोहराया—कभी प्रेम नहीं किया ?

अबोध शिष्यने सिर हिला दिया। गुरू खिल-खिलाकर हँस पड़े और बोले—प्रेम नहीं किया तो दीक्षा कैसे होगी। जाओ पहले किसीसे प्रेम करो तब दीक्षा मिलेगी।

शिष्य प्रेमकी खोजमें निकल पड़ा।

नगर-वैश्यकी लावण्यमअी कन्या रती अपने घरसे निकलकर पालकीमें बैठ रही थी। अुसे अेक हल्की-सी आभा मिली। अुसने विचारा— मैं अिसीसे प्रेम करूँगा। और आप पालकीके पीछे-पीछे चल पड़े। पालकी लौटी, आप लौट आअे। फिर वहीं घरकी ओर अेक टक नजर बाँध खड़े हो गअे। किसीने पूछा— क्या चाहिअे ?

—कुछ नहीं !

—फिर खड़े क्यों हो ?

बोले, प्रेम करते हैं।

बात नगर-वैश्यके कानोंतक पहुँची। अुसने अिनको बुलाया, समझाया, कन्या किसीकी मंगेतर है। पर आप मानने क्यों लगे। लालच दिया गया। सब बेकार। सुना गया कि आपने अुसके द्वारपर आसन ही जमा दिया था। कहीं भी वह रूपवती जाय, आप अुसके पीछे। लोगोंने देखा, न तो यह खाना खाता है न कुछ और ही काम करता है। अिनके द्वारपर मर जायगा तो हत्या लगेगी। हारकर नगर-वैश्यने कन्यासे खाना भिजवाया तभी अुसने खाया। शादी बड़ी मुश्किलोंसे हो पाअी। कहीं अिस सिरफिरेकी खबर दूसरे पक्षवालोंको न लग जाय। रात-ही-रातको लड़कीका डोला बिदा किया गया। लेकिन कुछ दूर जानेपर देखा गया कि वह पीछे-पीछे आ रहा है। बड़ी कठिनाअीका सामना था। तय यह किया गया कि लड़की स्वयं अगर अिनसे ठहर जानेके लिअे कहेगी तभी आप रुक सकते हैं नहीं तो आप जाअेंगे ही। लड़कीको कहना पड़ा—मैं लौटकर आअूँगी। आप यहीं रुक जाअें।

वर्षों बाद अेक बार अुस लड़कीको याद आया, मैं तो भूल ही गअी थी। कअी बार पीहरसे मैंके गअी और आअी लेकिन अेक बार अुस व्यक्तिसे कहा था तुम यहीं बैठ जाओ। वह होगा या चला गया कहीं। रूपवतीके मनमें अुत्सुकता जागी। डोलेसे अुतरकर वह पासके झोपड़े तक गअी। आदमी पहचानमें आ गया। वह अभी-तक अुसके आसरेमें यहाँ ठहरा है। रूपवतीका कलेजा धकसे रह गया। लेकिन अुसने मुँह क्यों फेर लिया।

अिसलिअे कि वह देरसे आअी है। नहीं—वह कुछ और ही कह रहा था। मैं प्रेम करता हूँ। नगर-वैश्यकी कन्या यहाँ रोज आती है; अुसके हाथके बने हुअे खाद्य-पदार्थमें कितना स्वाद रहता है। तुम अपनेको रूपवती कहकर मुझे छलो मत।

रूपवती, नगर-वैश्यकी कन्या लौट गअी। अुस रास्तेसे जाते हुअे गुरूने शिष्यको पहिचान लिया। प्रेम अपनी चरम सीमापर आ रहा था; दीक्षाके लिअे स्थान रिक्त नहीं रह गया था।

शिष्य, गुरू, नगर-वैश्यकी कन्याकी कहानी हमारे दिमागकी तलहटीमें अभी-अभी परिपक्व हुअी है जब कि मैंने खलील जिब्रानकी अेक पुस्तक समाप्त की, तब मन अुसकी कहानियोंमें रम गया था और कल्पना अेक अुखड़ा-अुखड़ा चित्र खींच रही थी। अुसके दर्शनकी गहराअी खोज रही थी। वह दर्शन जिसकी नींव प्रेमकी आधार-शिला-पर रखी गअी थी। वह शिला जो धरती और चाँदके बीचका पक्का नाता है। खलीलने अपनी हम अुमरमें अिस शिलाको मजबूतीसे पकड़ रखा था। आअिअे देखें, अिस दर्शनका अितिहास क्या है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जार्ज रसेलके "अिंटर-प्रेटर्स", रवींद्रकी 'गीतांजलि' या खलील जिब्रानका "दि प्राफेट" अिन तीनोंमेंसे सब नहीं--तो कमसे-कम अेकका अध्ययन तो आपने किया ही होगा ? यह प्रश्न अिसलिअे पूछ रहा हूँ कि अिससे खलील जिब्रानको आप अधिक निकटसे समझ सकेंगे।

माअुन्ट लेब्नान सीरियाका अेक प्रान्त है। यहाँ अेक सम्पन्न अीसाअी घरानेमें आपका जन्म ६ जनवरी सन् १८८३ को हुआ था। बचपनसे ही आपको अपने घरवालोंके साथ दूर अमरीकातक भ्रमण करना पड़ा। अरबी, फ्रांसीसी और अँग्रेजीके आप पण्डित हो गअे। काका कालेलकरने लिखा है--..."अितनी साधना पूरी करनेके बाद अपनी परिपक्व कलासे विधाताने मनुष्य-शरीरका निर्माण किया। जब मनुष्य शरीरमें विकार रहित, पाप रहित प्रसन्नता प्रकट होती है तब मनुष्य शरीरके सौंदर्यका अुत्कर्ष चरम कोटि तक पहुँच जाता है। खलील जिब्रान अिस मनुष्य शरीरके सौन्दर्यका, सौष्ठवका और लावण्यका अेकनिष्ठ पुजारी है। जहाँ पवित्रता है, प्राकृतिक प्रसन्नता है, वहाँ कपड़ोंकी जरूरत नहीं है। जानवर कपड़े नहीं पहनते हैं, वह भद्दे नहीं दीख पड़ते हैं।... खलील जिब्रान बलिष्ठ कल्पना शक्तिका कवि है। अेकसे अधिक भाषाका शब्द स्वामी है। गद्य काव्यकी अेक नअी शैलीका निर्माता है। मनुष्य हृदयका कुशल परिचायक है।

अितना सब होनेपर भी हम अुसका सच्चा परिचय अुसके जीवन दर्शनमें ही पा सकते हैं। जीवनकी अुलझी गाँठोंको सुलझानेका, अुसको समझनेका देखनेका बूझनेका ही नाम तो दर्शन है। यही खलील जिब्रानने किया, अुन्होंने देखा, पाया, और लुटाया अपनी कविताके द्वारा, चित्रोंके द्वारा। देव और दानव, तूफान और संहार सबका मानों ताण्डव नृत्य बिश्वके रंगमंचपर हो रहा है। भगवान अुसका स्वाद ले रहे हैं। कवि अुसकी ताल पकड़ रहा है, निरख रहा है, बूझ रहा है। अुसकी सब चीजें चाहे सार्वभौम न हों, पर मनको पकड़ती हैं। वह व्यक्तिको अपने साथ खींचती हैं और ले चलती है अुस अनन्तकी ओर जहाँसे सूक्ष्म आधारपर शरीरका झीना वस्त्र भी अुतर जाता है, बच रहता है प्रेमका वह परिधान जिससे प्रकृति और पुरुष सुन्दर है, आनन्दमय है। अिस आनन्दकी प्राप्तिमें अुसकी साधना हमेशा कोमलतम प्रकाशकी तरह चमकती रही, जिसमें सन्ध्याकी परछाअी नहीं पड़ी। वहीं अुसने प्रखरता प्राप्त की, कि समझनेवालोंकी आँखें चकाचौंध हो जाअें। जगत और मृत्युके मध्यमें खड़े होकर अुसने लिखा--"कैसे मैं यहाँसे पूरी शान्तिसे बिना जरासी वेदना अनुभव किअे, जा सकूँगा ? नहीं, मैं अपनी भावनाओंपर घात सहे बिना, अिस शहरको नहीं छोड़ सकूँगा। दर्द भरे लम्बे-लम्बे दिन और सूनेपनसे भरी हुअी रातें अिस शहरकी दीवारोंके भीतर मैंने बिताअी हैं। कौन अपने दर्द और सूनेपनसे बिना व्यथित हुअे बिदा ले सकता है।"

अुसने आगे कहा--"तब मैं तुम्हारे पास आ पहुँचूँगा अेक असीम बिन्दु सीमाहीन सिन्धुकी गोदमें।" जीव चैतन्यका बिन्दु है। अीश्वर समुद्र है। दोनों ही चैतन्य-स्वरूप हैं अिसलिअे दोनों ही अनन्त हैं। वेदान्तकी गूढ़ बातें अेक पंक्तिमें कसकर रख दी गअी हैं। कितनी गहरी पहुँच थी कविकी। परन्तु जीवन दार्शनिक जीवनसे परेकी तो कुछ भी नहीं कह सकता। चिन्तन और मननसे क्या मिला, वह शब्दमें बाँधकर रखा नहीं जा सकता। फिर कोअी किस तरह अज्ञान अवस्थामें हुअे शोक और हर्षकी परिभाषा देकर, अुसके सम्बन्धमें अपना पांडित्य बघारेगा। किसीने पूछा--"जीवन और मरणके बीच जो कुछ है, अुसके सम्बन्धमें तुमने जो जान पाया है वह मुझे बताओ ? अुसने अुत्तर दिया--मैं तुमसे क्या कह सकता हूँ, सिवा अुन बातोंके, जो अिस समय भी तुम्हारे प्राणोंमें मचल रही हैं।"

प्राणोंमें क्या मचलता है ? अिसके अुत्तरके लिअे फिर वही पहली बातपर आअिअे। आप घर किसलिअे आते हैं। आप रोजी रोजगार क्यों करते हैं, केवल अपने पेटके लिअे नहीं। पेट भर लेनेवाला कुत्ता भी अपने मालिकको पहचानता है, प्रेम करता है, अुसकी रक्षामें जान दे देता है। फिर आप कमाते हैं, अन्नका दाना अिकठ्ठा करते हैं, अपने बच्चोंके लिअे अपनी पत्नीके लिअे, अपने बुजुर्गोंके लिअे। जिन्हें मिलाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप घर कहते हैं। जो स्नेहके कोमल रेशमी धागेसे पिरोया हुआ रहता है। किसीने पूछा--प्रेम यह लीला करता क्यों है? जिब्रानका अुत्तर है—"प्रेम तुम्हारे साथ यह लीला अिसलिअे करता है कि तुम अपने अन्तरतमके रहस्योंका ज्ञान पा सको, और अुसी ज्ञान द्वारा जगज्जीवनके हृदयका अेक अंश बन सको। प्रेम न किसीका स्वामी बनता है, न किसीको अपना स्वामी बनाता है।" आरम्भकी पहली कहानीपर ध्यान दें, वहाँ अिस प्रेमकी सीधी परिभाषा मिल जाती है। जब प्रेम हो जाता है तब वह परिधानको नहीं देखता। जिब्रानने प्रेमकी अुच्चतम अवस्थाको समझाते हुअे कहा है--"जब तुम प्रेम करो तब यह न कहो, अीश्वर मेरे हृदयमें है। बल्कि कहो--मैं अीश्वरके हृदयमें हूँ। प्रेम अपने आपको सम्पूर्ण कविके सिवा और कुछ नहीं चाहता।"

गीताके तेरहवें अध्यायमें अिसी विषयको भगवानने समझाया है, यह शरीर क्या है। अिसे ही सम्पूर्ण बना लेनेपर लोग मुझे पा जाते हैं। यानी श्रद्धासे अपनेको जानो, स्नेहसे अपनेको भर लो। हे भारत! सब क्षेत्रोंमें क्षेत्रज्ञ मुझे ही समझ। क्षेत्र और क्षेत्रज्ञका जो ज्ञान है, वही मेरा ज्ञान माना गया है। अिसलिअे जिब्रानकी दार्शनिक दृष्टिमें भी वेदना, दुख, वियोग सब कुछ अुसी परमात्मासे मिलनेके लिअे हैं, जिसका अंश स्वरूप अुसीमें विद्यमान है। क्योंकि अिन सबके बीचसे अुसके प्रेमका ही विकास होता रहता है।

अिस विकासमें परीक्षाओंका भी स्थान है। परीक्षाअें दूसरी कुछ नहीं, केवल लीलाअें हैं जिनसे विभिन्न स्थितियाँ अुत्पन्न होती हैं। स्थितियोंका क्रम ही जीवन है, जीवनका प्रेम जगत है। जगत् जागृत अवस्थामें किअे गअे प्रलापोंका नाम है। अिसलिअे अिस जगतमें केवल सुखकी कामना की जाअे तो, वह सम्भव नहीं। प्रेममें सुख-दुख दोनों ही हैं, लेकिन दुखका अंश अधिक है। अिसी दुखकी विजय ही, मोक्षकी प्राप्ति होती है। अेक वस्तु मेरे ही लिअे हो–यह प्रेमका संकुचित दृष्टिकोण है जो स्वार्थसे लिप्त है। हर जीवमें प्रेमका बीज जन्मके पूर्व ही पड़ जाता है, समय पाकर वह विकसित होता है। बुद्धि प्रकाशका काम देती है। मन बनियोंकी तरह नापता-तौलता चलता है। यदि मोह, मदका आवरण अुतर जाअे और जीवनका अभाव (अुसकी माँग, हम क्या चाहते हैं, किसलिअे जीवित हैं, और कहाँ जाना है, अुसका अुद्देश्य क्या है।) समझमें आ जाअे तब हम आसानीसे मानसिक सहवास जनित काल्पनिक सहवासको प्रत्यक्ष सहवासमें बदल सकते हैं। आरम्भकी कहानीमें गुरुने शिष्यके मनमें प्रेमका बीज बोया। यह अुसका मानसिक सहवास था--"तुम प्रेम करो या मैं प्रेम करूँगा।" नगर-वैश्यकी कन्या अुसके सामने आअी। अुसमें अुसने अपने मानसिक सहवासमें कल्पनाका सृजन किया--"मैं अिस कन्यासे प्रेम करूँगा।" यह सृजन काल्पनिक सहवास था, जब कन्या लौटी तब अुसने पाया बटोही कुछ और बन चुका है। क्या अिसकी बातें कन्याकी समझसे परे थीं? लेकिन शिष्यको प्रत्यक्ष सहवास प्राप्त हो चुका था। अिसलिअे खलील जिब्रानका दर्शन जीवनकी प्रत्यक्ष क्रिया है, जिसे समझनेके लिअे स्वतंत्र मनसे अध्ययन करनेकी आवश्यकता है। अुनका संदेश है, सब कुछ प्रेमके लिअे ही तो है। यह प्रेम पक्षीसे लेकर ज्ञानवान प्राणियोंतक पाया जाता है अिसलिअे हम कामना करें—

"अपनी प्रेमकी अनुभूतिसे मैं घायल हो सकूँ। अपनी अिच्छासे हँसते-हँसते मैं अपना रक्त दान करं सकूँ।"

पंख फैलाता हुआ हृदय लेकर प्रभात वेलामें जाग सकूँ और अेक ओर प्रेम-मय दिन पानेके लिअे धन्यवाद कर सकूँ।

दोपहरको विश्राम कर सकूँ और प्रेमके परम आनन्दमें तल्लीन हो सकूँ।

दिन ढलनेपर कृतज्ञता भरा हृदय लेकर घर लौट सकूँ।

और फिर रात्रिमें हृदयमें प्रियतमके लिअे प्रार्थना और ओठोंपर अुसकी प्रशंसाका गीत लेकर सो सकूँ।"

अिस प्रकार अुसका अपना अनोखा जीवन दर्शन अुन सभी दर्शनोंमें अपनी विशिष्टता रखता है जिस तरह संसारके महाकवियोंकी नामावलीमें अुसका स्वयंका नाम अेक ताजी वृद्धि है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'ट्रिलाजी' नाट्य-शैली और "क्रांतिकारी"

—श्री 'भृंग' तुपकरी

अबसे लगभग ढाअी हजार वर्ष पहले पाश्चात्य रंगमंचपर अेक अनोखी नाट्य-शैलीका अुदय हुआ था। यद्यपि यह शैली केवल पचास-साठ वर्षों तक ही प्रचलित रह सकी, तथापि विश्व-नाट्यशैलियोंके प्राथमिक विकासमें अिसका बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। अिस नाट्य-शैलीको 'टिट्रेलाजी' या 'ट्रिलाजी' के नामसे जाना जाता था। ग्रीक 'ट्रेजेडी' के अुपरान्त सबसे पुरानी शैलियाँ 'व्यंग्यात्मक' और 'ट्रिलाजी' ही हैं। पत्थरकी पक्की नाट्यशाला यूनानमें निर्मित होनेसे भी पहले अिस शैलीके नाटक खेले जाते रहे हैं। अीसापूर्व पाँचवीं सदीके पूर्वार्ध तक यूनानके 'डायोनिजायक अुत्सवों' में यह विशेष स्थान रखती थी।

नाटककार अेसचिळस: जन्मदाता

'ट्रिलाजी' के लेखकोंमें अब तक सबसे पुराना नाम अेक प्रख्यात यूनानी नाटककार अेसचिळसका ही मिला है। अिस कारण अुसे ही अिस शैलीका जन्मदाता माना जाता है। अिस बातको प्रामाणिक रूपसे सिद्ध नहीं किया जा सका है कि अिससे पहले ये नाटक खेले जाते थे अथवा नहीं। अेसचिळस ही अिसका पहला और अन्तिम तत्कालीन नाटककार था। अिस शैलीका अुदय और अस्त अेसचिळसके साथ ही हुआ। अेसचिळसके जीवनकालमें लगभग ५० वर्षों तक यूनानी अुत्सवोंमें हर साल 'टिट्रेलाजी' की प्रतियोगिताअें देखनेके लिअे दूर-दूरसे हजारों और लाखोंकी संख्यामें दर्शक अेकत्र हुआ करते थे। यह शैली जितनी लोकप्रिय थी, अुतनी ही कठिन और अनोखी भी थी।

विश्व रंगमंचके अितिहासमें अेसचिलसका नाम पहले महान ट्रेजिक नाटककारके रूपमें जाना जाता है। अिसका जन्म अेल्यूसिस नगरमें अीसासे ५२५ वर्ष पूर्व हुआ था और पचीस वर्षकी आयुमें ही यूनानी नाट्य प्रतियोगिताओंमें अिसने भाग लेना शुरू कर दिया था। अेथेंसमें 'ट्रेजेडी प्रतियोगिता' के आरम्भको केवल ३४ वर्ष ही व्यतीत हुअे थे, जब अिस महान प्रतिभाशाली नाटककारने अुनमें भाग लेना प्रारंभ किया। यह ट्रेजिक नाट्य परम्पराका नाटककार था और ट्रिलाजीसे पहले व्यंग्यात्मक शैलीके ट्रेजेडी नाटक लिखता था। अिसकी रचनाअें सत्तरसे नब्बेके बीच कही जाती हैं किन्तु केवल सात नाटकोंकी प्रतियाँ अुपलब्ध हैं। दि सप्लायंट्स, अिसके अुपलब्ध नाटकोंमें सबसे प्राचीन है। अिसमें केवल अेक ही पात्र (अन्य प्राचीन नाटकोंकी तरह) अभिनय करता है। दूसरा नाटक 'दि परसियन्स' है, जिसमें युद्धका विशद वर्णन मिलता है। यह पहला नाटक है जिसमें पहली बार दो पात्रों द्वारा अभिनय किया गया है। अिस द्वि-पात्री नाट्य शैलीने नाटकका 'क्लाअिमेक्स' और संवादोंकी चुस्तीको संगठित करनेमें नवीनताका सूत्रपात किया। अिसी शैलीके (व्यंग्यात्मक ट्रेजेडी) नाटकोंमें अिसके लिखे 'सेवन अगेन्स्ट थेब्स' और 'प्रोमेथ्यूस बाअून्ड' नाटक भी हैं।

पहला पूर्ण अुपलब्ध 'ट्रिलाजी' नाटक

अिसका अेक ही ट्रिलाजी नाटक अुपलब्ध हुआ है, 'ओरेस्टिया' (Orestiae)। यह पहला नाटक है जिसमें तत्कालीन प्रचलित व्यंग्यात्मक परम्पराकी शैली नहीं मिलती और तीन ट्रेजेडी नाटक अिसके अंतर्गत शामिल हैं—पहला 'अेगेमेमनॉन', दूसरा 'दि लाअिबेशन बियरर्स' और तीसरा 'यूमेनाअिड्स'। अुक्त तीनों नाटक अेक ही कथा सूत्रमें गुँथे हुअे तीन स्वतंत्र नाटक हैं और क्रमशः अेक साथ खेले जानेपर 'ओरेस्टिया' की रचना करते हैं। अेसचिलसने अिस 'ट्रिलाजी' में अपने समकालीन प्रतिद्वन्द्वी सोफोक्लीजकी ही तरह पात्रोंकी संख्या बढ़ाकर तीन कर दी है। सोफोक्लीजने जो महत्वपूर्ण तान्त्रिक सुधार युगका सूत्रपात किया, यह अुसका स्पष्ट प्रभाव माना जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैसे तो 'सेवन अगेन्स्ट थेब्स' भी अेक ट्रिलाजीका ही भाग माना जाता है और अीसासे ४६७ वर्ष पूर्व हुअी प्रतियोगितामें अिसे सर्वश्रेष्ठ भी घोषित किया गया था। किन्तु अिसके साथके दो अन्य नाटक अनुपलब्ध हैं।

तान्त्रिक विशेषता

'ट्रिलाजी' की तान्त्रिक विशेषता यह है कि वह तीन स्वतन्त्र ट्रेजेडीजको संयुक्त करके रचा जाता था। अेक ही सामग्रीको क्रमशः तीन नाटकोंमें अिस प्रकार विभाजित किया जाता था कि वे अलग-अलग अपने आपमें भी पूर्ण हों और संयुक्त कर देनेपर अेक दूसरे ही पूरे नाटकको रचना करते हों। अेगेमेमनान, दी लाअिबेशन बियरर्स और यूमेनाअिड्स अिन तीन स्वतन्त्र ट्रेजेडी नाटकोंको संयुक्त करके 'ओरेस्टिया' ट्रिलाजीकी रचना हुअी। अिस प्रकार ट्रिलाजीके तीनों नाटकोंकी सामग्री और अुनका संगठन बड़ा ही संयत रखना पड़ता है। और अिस कारण नाटककारके अनोखे कौशलका परिचय ये देती हैं। कहा जाता है कि वर्तमान तीन अंकी नाटकोंकी रचना कालान्तरमें अिन्हीं ट्रिलाजीकी शैलीसे प्रेरित होकर की जाने लगी।

यह शैली अल्पजीवी क्यों रही ?

प्रश्न यह अुठता है कि अितनी अनूठी होते हुअे भी अिस शैलीका अल्पकालमें ही लोप क्यों हो गया ? तनिक ध्यान देनेपर अिसके अनेक कारण दृष्टिगोचर होते हैं। सबसे बड़ा कारण तो यही जान पड़ता है कि नाट्यतंत्रके प्रारम्भिक संगठन कालमें अिस शैलीका जन्म हुआ था। कोअी भी कला कभी भी किन्हीं निश्चित परिधियोंमें बन्दी नहीं रह सकी है, अुसका विकास होता ही रहता है और अुसमें अधिकाधिक व्यापकताके दर्शन होते ही जाते हैं। पाश्चात्य नाट्यतंत्रमें सोफोक्लीजका जो प्रख्यात सुधार युग आया वह ठीक अेसचिलसके बाद ही आया। सोफोक्लीजने 'ट्रिलाजी' की परम्पराके बन्धन ढीले किअे। वह अेसचिलसका समकालीन और युवक प्रतिद्वन्द्वी था; अिस कारण भी जानबूझकर अेसचिलसकी शैलीकी अुपेक्षा अुसके द्वारा होना संभव लगता है। अुसने पात्रोंकी संख्या बढ़ाअी और नाट्यतंत्रको नवीन सीमाअें प्रदान कीं। नअेपनकी ओर लोगोंका झुकाव स्वाभाविक था और जब ट्रिलाजी जैसे ही तीन अंकी नाटकोंकी रचना होने लगी तो लोगोंने पुनः तांत्रिक दृष्टिसे पीछे लौटकर जाना अुचित नहीं समझा होगा। तांत्रिक संगठनमें अनेकों नवीनताअें आती जा रही थीं, अिस कारण भी अिसकी ओर ध्यान देना संभव नहीं लगता। दूसरे, यह शैली अितनी संयत, और कठिन थी कि प्रत्येक नाटककारके लिअे अिसकी सफल रचना संभव नहीं थी। तीसरे, तत्कालीन नाटकोंके विषयोंका चुनाव अत्यन्त सीमित दायरेमें रहकर किया जाता था और अुस सीमाके भीतर रहकर हजारों 'ट्रिलाजीस' की रचना असंभवप्राय थी। अुनमें निश्चय ही पुनरुक्ति दोष आ सकता था। खैर, जो भी हो, अेक ही पीढ़ीमें यह शैली अस्त हो गअी, यह बात सत्य है।

वर्तमान संभावनाअें

यह तो हुअी तत्कालीन बात किन्तु अब तो सामग्री और शैली दोनों ही दृष्टियोंसे नाटकोंका क्षेत्र पर्याप्त व्यापक हो गया है। अैसी अवस्थामें 'ट्रिलाजी' शैलीके नाटक यदि लिखे जाअें तो निश्चय ही अुन्हें अत्यधिक लोकप्रियता प्राप्त हो सकती है। आजका पाठक अितना अवकाश अेक साथ नहीं निकाल पाता कि अेक ही बैठकमें अेक अुपन्यास अथवा नाटक पूरा पढ़ सके। 'ट्रिलाजी' अैसे पाठकका मनोरंजन करनेमें भी पर्याप्त सफल सिद्ध होगी। और फिर अब तो प्राचीनकालकी तरह सामग्री चयनपर कोअी बन्धन, कोअी अंकुश नहीं रखा जाता। कथानक और तंत्र दोनों ही दृष्टियोंसे क्षेत्र व्यापक हो गया है। अस्तु, मेरे विचारसे 'ट्रिलाजी' शैलीके नाटक आजकल बड़े अुपयुक्त सिद्ध होंगे। मासिक-पत्रों और रेडियो कार्यक्रमोंके 'सिरियल' के रूपमें भी ये अपनी विशेषताके कारण अत्यधिक लोकप्रियता प्राप्त कर सकते हैं।

आधुनिक युगमें 'ट्रिलाजी'

अूपर लिखी बातोंसे यह भ्रम हो सकता है कि 'ट्रिलाजी' शैलीके नाटक आजकल लिखे ही नहीं गअे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्तु यह बात नहीं। आधुनिक कालमें भी नाटककारोंने जाने या अनजाने अिनकी रचनाअें की हैं। अिस दिशामें अमेरिकाके प्रख्यात नाटककार यूजीन ओ' नीलका नाम अग्रगण्य समझा जाता है।

अुनका प्रख्यात नाटक "मोर्निंग बिकम्स अेलेक्ट्रा" अिसी शैलीका नाटक है। यूजीन ओ' नीलकी समर्थ और सयत लेखनीने अिसमें अमेरिकन गृह युद्धके जमानेमें नअे अिंग्लैंडका चित्र बड़ी खूबीके साथ चित्रित किया है। अिसके तीनों अंक अलग-अलग पूर्ण अेकांकियोंकी तरह भी पढ़े अथवा देखे जा सकते हैं, और सबको अेकसाथ पढ़ने या देखनेपर वे अिस तरह संयुक्त और अविभाज्य-से बन जाते हैं कि अेक पूर्ण नाटकका स्वस्थ स्वरूप प्रकट हो जाता है।

हिन्दीका पहला ट्रिलाजी नाटक--'क्रान्तिकारी'

हिन्दीमें 'ट्रिलाजी' को 'त्रित्व नाटच शैली' कहा जा सकता है। यद्यपि अिस शैलीमें लिखनेका प्रयास हिन्दीमें नहींके बराबर ही किया गया है; तथापि पं. अुदयशंकर भट्ट लिखित "क्रान्तिकारी" नाटक हिन्दीमें लिखित प्रथम 'ट्रिलाजी' या 'त्रित्व' नाटक कहा जाना चाहिअे जो अनायास ही अिस ढाँचेमें आ बैठा है।

सर्वप्रथम हिन्दीमें 'ट्रेजेडी' या 'दुःखान्त' शैलीके नाटक लिखनेका श्रेय भी पं. भट्टको ही है और सौभाग्यसे हिन्दीका अेकमात्र 'त्रित्व' नाटक भी अुन्हींका लिखा हुआ है। अुनका 'विक्रमादित्य' नाटक हिन्दीका पहला दुःखान्त नाटक है।

जब मैंने अिस सिलसिलेमें 'क्रान्तिकारी' की चर्चा करते हुअे अुनपर अपना मन्तव्य प्रकट किया तो अुन्होंने बताया कि 'ट्रिलाजी' लिखनेके अुद्देश्यसे अुन्होंने 'क्रान्तिकारी' की रचना नहीं की; अपितु भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलनकी विभिन्न स्थितियोंको चित्रित करनेका अवश्य प्रयास किया है। अिसी कारण मैं 'क्रान्तिकारी' को अनायास ही लिखित 'त्रित्व नाटक' कहता हूँ। और अनायास लिखित होनेके कारण यह अधिक सफल भी है और साथ ही दो-अेक हल्की-हल्की कमियाँ भी अिसमें स्वाभाविक रूपमें रह गअी हैं। त्रित्व नाटकोंमें प्रत्येक अंकका स्वतंत्र नामकरण होता है और तीनों अंकोंका अेक संयुक्त और चौथा नाम अलग। यदि अिसमें भी अैसा किया जाअे तो अच्छा हो। भट्टजीका कथन है कि अिसके प्रत्येक अंकको भी 'क्रान्तिकारी' ही नाम दिया जाअे और तीनोंका संयुक्त नाम भी 'क्रान्तिकारी' ही रहे, तो क्या हर्ज है। मैं अिससे सहमत होनेमें अपनेको असमर्थ पाता हूँ, क्योंकि तीनों अंकोंमें विभाजित सामग्री अिसी अेक नामके आसपास गठित होते हुअे भी स्वतंत्र करनेपर अपनी भिन्नताको भी स्पष्ट कर देती है।

संयोगवश अिसमें कथासूत्र 'त्रित्व' शैलीके अनुकूल ही संगठित हुआ है। लिखनेसे पूर्व भट्टजीने क्रान्तिकारी आन्दोलनके चित्र भिन्न कोणोंसे अुपस्थित करनेका प्रयास किया है और अिसी कारण अिसके तीनों अंक क्रान्तिकारी जीवनके तीन भिन्न चित्र या पहलू अुपस्थित करते हैं। पहले अंकमें अेक बड़े क्रान्तिकारी और अुसके अेक पुराने मित्र पुलिस अफसरका जो मनोवैज्ञानिक चित्र प्रकट होता है वह पहले अंकमें ही पूर्णता तक पहुँच जाता है और अुसका climax भी अिसी अंकमें आ जाता है। मित्रता और पदलोलुपताके बीच द्वन्द्वकी स्थितिमें पड़े पुलिस अफसरके अंतरंगका अेक बड़ा ही स्वाभाविक और स्पष्ट चित्र अिसमें अंकित हो जाता है। पुलिस अफसरका यह निर्णय कि वह क्रान्तिकारी मित्रको शूट कर देगा--अेक साथ ही अुसे 'अेकांकी' का खलनायक और क्रान्तिकारीको नायक घोषित कर देता है; तथा वहीं अुसका 'क्लाअिमेक्स' भी संगठित हो जाता है। अिस प्रकार पहला अंक अपने आपमें पूर्ण और स्वतन्त्र भी है।

दूसरे अंकमें क्रान्तिकारी नेताके परिवारकी दयनीय स्थितिकी अेक स्वतन्त्र झाँकी अुपस्थित की गअी है। अिसमें दारोगा खलनायक है और क्रान्तिकारीकी पत्नी नायिका। नायक अनुपस्थित है, तथापि अुसकी अनुपस्थितिके कारण ही सारी घटनाओंका विकास होता है। अिस प्रकार क्रान्तिकारी अिसका परोक्ष नायक है। अिस अंकके अन्त तक अेक क्रान्तिकारीके परिवारका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूरा चित्र अपने 'climax' सहित प्रस्तुत कर दिया जाता है जो अपने आपमें पूर्ण है।

तीसरे अंकमें क्रान्तिकारी दलके तरीके और अुसकी हलचलका अेक स्वयंपूर्ण चित्र सामने आता है और अन्त तक वह अपना अलग 'क्लाअिमेक्स' बनाता है।

पहला अंक विस्मयमें समाप्त होता है, तो दूसरा और तीसरा अंक दुःखान्त है। और तीनों अंकोंमें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपमें 'क्रान्तिकारी' ही नायक है। तथा संयुक्त रूपमें नाटक अविभाज्य-सा भी बन जाता है। मानो अेक ही मूर्तिके तीन पहलू दिखाअे जा रहे हों। अिस प्रकार अिसका कथासूत्र विभाजित भी है और आबद्ध भी।

अपने मूल रूपमें 'ट्रिलाजी' शैली 'ट्रेजेडी' का ही अेक रूप रही है और 'क्रान्तिकारी' भी 'ट्रेजेडी' के रूढ़ अर्थानुसार अेक दुःखान्त नाटक है। अिस दृष्टिसे "क्रान्तिकारी" अेक सफल "त्रित्व" या "ट्रिलाजी" नाटक है।

वैसे "दुःखान्त" ही नहीं व्यंग्य और प्रहसन भी यदि अिस शैलीमें संगठित किअे जा सके, तो अनुपयुक्त नहीं होगा।

क्या आप जानना चाहते हैं ?

- दूसरी पंचवर्षीय योजनाका विवेचनात्मक परिचय
- स्वतंत्र भारतमें कृषि, अुद्योग, यातायात, वाणिज्य व्यापार तथा बैंकिंग क्षेत्रोंकी अुन्नति
- भारतकी वर्तमान औद्योगिक व आर्थिक समस्याअें

तो

अेकमात्र अुत्कृष्ट आर्थिक हिन्दी पत्रिका सम्पदाका

मार्च १९५६ में प्रकाशित

पृष्ठ सं. १२०] **राष्ट्रीय विकास** [अंक मूल्य १।)

आज ही मंगाअिअे

भूमि सुधार अंक १), वस्त्र अुद्योग अंक १।), मजदूर अंक १।) और अुद्योग अंक १।); अेक साथ मनीआर्डरसे मंगवानेसे ५।।) रु. में डाक व्यय समेत।

—मैनेजर "सम्पदा"

अशोक प्रकाशन मन्दिर, रोशनारा रोड, दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मराठीका पहला सॉनेट

—श्री अनिलकुमार

मराठी काव्यका आधुनिक काल कविवर केशवसुतसे आरम्भ होता है। केशवसुत-पूर्व कालमें जिस प्रकारकी काव्य रचना मराठी साहित्यमें प्रचलित थी अुसका स्वरूप मुख्यतः मोरोपंती, दासोपंती अथवा चिपलूणकरी ढंगका था। अिस कालके मराठी कवि या तो पेशवाओंके पतनकालके लावणी, पोवाडा-रचयिता कवियोंका अनुकरण कर रहे थे अथवा मोरोपंत जैसे अुपदेश प्रधान, संश्लिष्ट पदावलि सम्पन्न कवियोंकी भाषा लिख रहे थे। अतः आधुनिकताका सेहरा केशवसुतके सिर बाँधा जाता है क्योंकि काव्य प्रदेशमें प्रचलित अनेक पूर्व परंपराओंका अुन्होंने त्याग किया। आधुनिक मराठी कविता पारंपरिक काव्य रचनासे, जिन कारणोंसे भिन्नता ग्रहण करने लगी अुसका रूप अिस प्रकार है—

आधुनिक मराठी काव्य मुख्यतः मुक्तक तथा भावगीतात्मक है, किन्तु पूर्वकालीन कविता दीर्घ-विस्तारसम्पन्न, कथनात्मक अेवं संस्कृत वृत्तोंसे सजी है। नवीन कविता मात्रा-वृत्तों अथवा मिश्र-वृत्तोंसे सजाअी गअी है। पुरानी कवितामें धार्मिक, पौराणिक, अैतिहासिक अितिवृत्तोंका आधार लिया गया है। आधुनिक कवितामें लौकिक सामाजिक विषयोंकी चर्चा हुअी है। पारंपरिक मतसे कविताको भक्ति अथवा श्रृंगार भावनाकी अभिव्यक्तिका साधन माना जाता था किन्तु नवीन कविताकी प्रमुख विशेषतः है आत्माभिव्यक्ति। और आजकी अतिआधुनिक कवितामें तो आत्म-लेखन-शैलीकी ही प्रमुखता है। अर्थात अिन पाँच कारणोंसे केशवसुत कालमें मराठी कविता नवीनता ग्रहण करने लगी—

१. मुक्तक अथवा भावगीतात्मक लेखन,
२. मात्रा-वृत्तों अथवा मिश्र छन्दोंका अुपयोग,
३. भक्ति और अुपदेशकी अपेक्षा लौकिक-सामाजिक पहलुओंपर काव्य रचना।
४. काव्यको साधन न मानकर साध्य मानना। और मुख्य बात है—
५. आत्मलेखन शैलीमें काव्य रचना।

केशवसुतके पूर्व या समकालीन कवियोंमें भी किसी अेक कविने अेक साथ अितने गुणोंको नहीं अपनाया, किन्तु केशवसुतके प्रभावसे आधुनिक मराठी कवितामें नवीनता-द्योतक अुपर्युक्त गुणोंका प्रभाव बढ़ने लगा। और देखते-देखते केशवसुतके जीवनकालमें ही अुनके अपनाअे हुअे मार्गपर नववयस्क कवि समुदाय चलने लगा।

केशवसुतने मराठी काव्यको जो आधुनिकता प्रदान की अुसका प्रमुख अुपहार है 'सॉनेट' नामक अंग्रेजी काव्य शैलीका प्रचलन। यही 'सॉनेट' शब्द अनेक विवाद चर्चाओंके बाद मराठीमें 'सुनीत' कहलाया।

अँग्रेजीमें सॉनेटकी दो शैलियाँ प्रचलित थीं। अेक मिल्टानिक (मूलतः पेट्रार्कन्), दूसरा शेक्सपिरिअन। सॉनेटको यथातथ्य रूपमें मराठीमें लानेके लिअे केशवसुतको सन् १८८६ से १८९२ तक लगातार ६ वर्ष यत्न करना पड़ा। अिस बीच अुन्होंने कुछ अँग्रेजी सॉनेटके अनुवाद किअे; साथ ही सॉनेट शैलीको बीसके आसपास मौलिक रचनाअें तैयार कीं। केशवसुतके पूर्ववर्ती कवियोंने भी अँग्रेजी 'सॉनेट' के मराठी अनुवाद किअे थे लेकिन सॉनेटका भावार्थ मात्र परिवर्तित करनेसे अधिक कार्य अुस युगमें नहीं हुआ। वास्तवमें सॉनेटके बाह्यांग-अन्तरंगकी रक्षा करना सहज नहीं था। अिस कष्ट-साध्य कार्यके लिअे केशवसुतको अँग्रेजी काव्यका अध्ययन, सॉनेटका मराठीमें अनुवाद अेवं मौलिक रूपमें अनेक प्रयोग करने पड़े। सॉनेट जैसी गम्भीर, विचार-प्रवण रचनाके लिअे अुपयुक्त छन्दका माध्यम चुनना आवश्यक था। किन्तु अिस बारेमें अुन्हें विशेष परेशान नहीं होना पड़ा। संस्कृतका, केशवसुतका परिचित और प्रिय गण-वृत्त शार्दूल विक्रीडित गम्भीरता अेवं विचार प्रधानताका आवेश व्यक्त करनेके लिअे अुपयुक्त छन्द था। अनुवादों और प्रयोगकालीन सॉनेटोंमें केशवसुतने अिसी छन्दका प्रयोग किया। अुनके सामने दुविधा थी वह अन्तिम दो चरणों की। शार्दूल विक्रीडितमें केवल दो पंक्तियाँ अधूरी और भौंड़ी प्रतीत होती थीं। और दोके स्थानपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तमें चार चरण रखनेसे सॉनेटका मूल चतुर्दश चरण रूप बदलकर षोडश चरणकी कविता बन जाती थी। अिस अुधेड़बुनमें केशवसुत लम्बे अर्सेतक रहे। अुनकी सोलह चरणवाली सॉनेट-सदृश कविताअें अिसका अुदाहरण हैं। अन्तिम दो पंक्तियोंके लिअे कभी अिन्द्रवंशा और कभी अनुष्टुभ छन्दोंका भी प्रयोग किया; किन्तु प्रथम बारह पंक्तियोंमें शार्दूल विक्रीडित और अन्तकी दो पंक्तियोंके लिअे अन्य छंन्द, अिस प्रकारका सॉनेट बाह्य दृष्टिसे विद्रूप प्रतीत होता था। साथ ही अेक रचनामें अन्तिम दो पंक्तियोंके लिअे छन्द भिन्नता ध्वनि अेवं अर्थ प्रवाहमें बाधक होती थी। बारह पंक्तियोंके बाद अेक दीवार-सी प्रतीत होती थी जो अन्तिम दो पंक्तियोंका मंतव्य बाहर ही रोक लेती। छन्द भिन्नतासे अुत्पन्न यह विलगता सॉनेटकी प्रकृतिके विपरीत थी। शार्दूल विक्रीडितके अलावा संस्कृतके 'स्रग्धरा' वृत्तकी योजना भी केशवसुतके अेक सॉनेटमें मिलती है। किन्तु स्रग्धरा संभवतः आवश्यकतासे अधिक विस्तृत छन्द प्रतीत हुआ अतः अुसका प्रयोग दुबारा नहीं किया गया। कविको पुनः शार्दूलविक्रीडितकी ओर झुकना पड़ा।

शार्दूलविक्रीडित वृत्तमें अन्तिम दो पंक्तियोंके लिअे जो दुविधा थी वह वास्तवमें शेक्सपिरिअन सॉनेटके कारण। केशवसुतने सॉनेटका मिल्टानिक रूप देखा तो दुविधा मिट गअी। मिल्टनकी दृष्टिसे सॉनेट वह चतुर्दशपदी रचना है जिसके मुख्यतः दो भाग किअे जा सकते हैं। प्रथम आठ पंक्तियोंमें विषय वस्तुकी रचना कर, अन्तिम छह पंक्तियोंमें वस्तुका अुपसंहारात्मक संनिवेश करते हुअे अेक मजेदार घुमाव दिया जाता है। साथ ही छह पंक्तियोंमेंसे अन्तिम दोमें सॉनेटका तात्पर्यार्थ सूक्ति रूपमें व्यंजित किया जाता है। अन्त्यानुप्रासके सम्बन्धमें अेक विशिष्ट नियम है। १, ३, और ५ अिन पंक्तियोंके तथा २, ४ और ६ अिन पंक्तियोंके तुकान्त मिलते हैं। मिल्टानिक सॉनेटमें शेक्सपिरिअन सॉनेटकी तरह १२ और २ पंक्तियोंका विभाजन नहीं होता। मिल्टानिक सॉनेटमें अन्तिम दो पंक्तियाँ विलग नहीं होतीं। अर्थ अेवं प्रास दोनों दृष्टियोंसे अन्तिम छह पंक्तियाँ संलग्न होती हैं। यह देखते ही अुनकी दुविधा मिट गअी क्योंकि शार्दूलविक्रीडितको संलग्न छह पंक्तियाँ लिखना तुकान्तों अेवं अर्थ निर्वाहकी दृष्टिसे अधिक सुविधाजनक था। और अन्तमें छह साल लगातार यत्न करनेके पश्चात् १३ नवम्बर १८९२ को मराठीका पूर्णतया मौलिक, सर्वप्रथम सॉनेट 'मयूरासन आणि ताजमहाल' केशवसुतने लिखा। चौदह पंक्तियाँ, अँगरेजी ढंगका तुकान्त आठ और छै पंक्तियोंके दो विभाजनोंमें संयोजित अर्थ रचना अिन दृष्टियोंसे केशवसुतका अुक्त प्रथम सॉनेट परिपूर्ण मिल्टानिक सॉनेट माना जाता है।

मराठी कविताने सॉनेट रूपी पराअे बच्चेको मराठी संस्कारों द्वारा संस्कृत कर बादमें गोद लिया। यह दत्तक विधान आधुनिक मराठी कविताके जनक केशवसुतके हाथों सम्पन्न हुआ। पेट्रार्कन सॉनेटका अर्थ अेवं वाक्य-रचना-सौष्ठव मराठी 'सुनीत' में (सॉनेटके लिअे मराठी प्रतिशब्द) नहीं दिखाअी देता। विराम योजना पंक्ति अथवा पंक्ति-युग्मके अन्तमें हुअी है। मराठी भाषाकी स्वाभाविक प्रकृतिके अनुसार विराम चिन्ह पंक्तिके अन्तमें न रखकर अगली पंक्तिके बीच रखना अस्वाभाविक प्रतीत होता है। अतः केशवसुतके सुनीतोंमें पेट्रॉर्ककी अपेक्षा 'शेक्सपिरिअन टच्' अधिक है। केशवसुतका मराठीका प्रथम निर्दोष मौलिक सॉनेट **"मयूरासन आणि ताजमहाल"** मिल्टानिक (मूलतः पेट्रॉर्कन) शैलीके निकट है। देखिअे :—

"कामें दोन सुरेख त्या नृपवरें केलीं : मयूरासनीं,
ज्या तो बैसुनि शोभला; प्रथम ते सा कोटि ज्या लागले,
राजे ज्या पुढते जुळूनि अपुल्या हस्तद्वया वाकले,
झाले कंपित, तत्करीं शिर असे, येअूनिया हे मनीं;
प्रेमें मन्दिरही तसें निज सखीसाठीं तयें लावुनी,
कोटी तीनच त्या गभीर यमुना-तीरावरी बांधिले!
चोरें आसन ते दुरी पळविलें! स्मर्तव्य कीं जाहलें!
आहे अद्भुत तो महाल अजुनी तेथें अुभा राहुनी!
विल्हेवाट अशीच रे तव कृती त्या सर्वदा पावती;
मत्त भ्रान्त नरा! सदैव कितिही तू धूप रे जाळिला
स्वार्थाच्या प्रकृतिपुढें– निजमनीं ही याद तूं जागती
राहूं दे– तरि धूर होअिल जगीं केव्हांच तो लोपला!
काडी अेकच गंधयुक्त, नमुनी प्रीतीस तू लाव ती,
तीचा वास सदा जगीं पसरुनी देअील तो पुष्टिला!"

—'केशवसुत'

मराठी कवितामें अब सॉनेटका चलन नहीं रहा। अेक जमानेमें सभी प्रतिष्ठित कवि सॉनेट लिखकर अपने आपको समयके साथ चलनेवाला मानते थे। और बड़े कवियोंकी देखादेखी दूसरी पीढ़ीके साधारण कवि भी नमूनेके लिअे अपने काव्य-कोषमें दो चार सॉनेट तैयार रखने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बच्चोंकी सूझ

—डॉ० अ. वा. वर्टी

[अिस कहानीके मूल-लेखक डाक्टर अनन्त वामन वर्टी अेम. बी. बी. अेस. मराठीके अेक ख्यातनामा विनोदी लेखक हैं। पूर्व खानदेशके सावदे नामक ग्राममें २ दिसम्बर सन् १९११ में आपका जन्म हुआ। सन् १९३६ में आपने बम्बअी मेडिकल कालेजसे डाक्टरीमें अेम. बी. बी. अेस. की डिग्री प्राप्त की और गत १९ वर्षोंसे आप नासिकमें प्राअीव्हेट प्रेक्टिस कर रहे हैं।

लिखनेका शौक आपको स्कूली जीवनसे रहा है। आपके प्रकाशित ग्रंथ—"अभिनय" अुपन्यास, 'मुमताज', 'रूपहले स्वप्न', 'दंत-कथा' नामक तीन कहानी संग्रह और "बिसारा" नामक विनोदी लेखोंका संग्रह आदि हैं। आपका लेखन अब भी जारी है और आजकल आप मराठीमें प्रसिद्ध रीडर्स डाअीजेस्टके ढंगपर निकलनेवाले "अमृत" नामक अेक सुन्दर मासिक-पत्रका सम्पादन कर रहे हैं। आपकी हास्यरसकी कहानियां मराठी भाषामें बड़ी लोकप्रिय हैं। —अनु०]

हमारी चालमें हमारे घरसे चार घर छोड़कर कृष्णरावका घर था। आज पौने नौ बजेके करीब नित्यकी भाँति जब डाकिया आकर चला गया तो अुसके बाद अुनके घरमें बड़ा आनन्द मच गया। शीघ्र ही यह आनन्द आसपासके घरोंमें भी फैला और चालका वातावरण अेकदम बदल गया।

हमेशा अिस समय सब लोग अपने-अपने काममें व्यस्त रहा करते। पुरुषोंको आफिस और लड़के-लड़कियोंको शाला और कालेज ठीक समयपर पहुँच जाना चाहिअे अिसी अेक बातको नजरोंके सामने रखकर अिस समय चालके सारे व्यवहार चालू रहा करते। परन्तु आज कृष्णरावके घर डाकिया आनेके बाद अुनके आसपासके घरोंके नित्यके कार्य-क्रममें अेकदम रुकावट पड़ गअी। कृष्णरावके पड़ोसी अुनके घर जाते। थोड़ी देरके बाद अुनके घरसे हास्यके ठहाके सुनाअी पड़ते। बीचहीमें कोअी कृष्णरावके अनन्ताको गोदमें अुठा लेता और प्यारभरे शब्दोंमें अुसकी सराहना करने लगता। कृष्णरावके घरमें सर्वत्र आनन्द लहरा रहा था।

अिसलिअे मुझे और मेरी पत्नी सुलूको भी अिस सारे कोलाहलके बारेमें बड़ा ताज्जुब होने लगा। मैं आफिस जानेकी, मेरा नन्हा लड़का जयन्ता शाला जानेकी और सुलू रसोअी बनानेकी तैयारीमें लगे थे। परन्तु हमारा सारा ध्यान कृष्णरावके घरकी तरफ लगा हुआ था। यह क्या बात होगी अिसके बारेमें हम तर्क-वितर्क करने लगे।

"सुगम वर्ग पहेलीमें कृष्णरावको कहीं अिनाम तो नहीं मिल गया!"—मैंने अेकदम भर्राअी हुअी आवाजमें पूछा,—"लगता है पच्चीस-तीस हजारपर हाथ मारा है पट्ठेने?"

"अगर अिनाम मिला है तो अनन्ताका दुलार क्यों हो रहा है?"—सुलूने शंका व्यक्त की।

"अनन्ताके नामपर ही पहेलीके वर्ग भरकर भेजे होंगे और अुसके नामवाले वर्गपर ही अिनाम मिला होगा?"—मैंने कहा।

"परन्तु कृष्णरावमें पहला अिनाम प्राप्त करने लायक अक्ल भी है?"—सुलूने कहा,—"वे तो मैट्रिक भी पास नहीं हैं।"

"वर्ग पहेलीमें अिनाम पानेके लिअे अक्ल थोड़ी ही लगती है।"—मैंने कहा।

वैसे पूछा जाअे तो कृष्णरावसे हमारा कोअी ताल्लुक न था। अुनके पच्चीस हजार रुपअे चले जाते तो क्या अथवा अुन्हें वर्ग पहेलीमें पच्चीस हजार रुपअे मिल जाते तो क्या, अुसके लिअे हमें कोअी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और आनंद न था। परन्तु दूसरेको अिस तरह जरा भी पसीना न बहाअे घर बैठे रुपया मिल गया तो वह मनुष्यको अच्छा नहीं लगता। यह मनुष्यका स्वभाव ही है।

हम अपने नित्यके कार्य-क्रमोंसे निपट रहे थे, परन्तु हमारा सारा ध्यान कृष्णरावके घरकी ओर, और अुसमेंसे बाहर आ रही आनन्द भरी विविध प्रकारकी ध्वनियोंकी ओर ही था। क्या बात हो गअी है और कृष्णराव अितना आनन्दोत्सव क्यों मना रहे हैं, यह जाननेके लिअे हम अत्यन्त अुत्सुक थे।

और हमें अधिक देरतक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। क्योंकि अेक हाथमें "रीडर्स डाअिजेस्ट" के टाअिपकी मराठीमें निकलनेवाली "पाचक" नामक मासिक-पत्रिकाको लेकर और दूसरे हाथसे अनंताकी अंगुली पकड़कर कृष्णराव आसपासके घरोंके लोगोंसे मिलकर आखिर हमारे घर आअे।

कृष्णरावके मुख-मण्डलपर विजयोन्माद अुमड़ रहा था। अिस चालमें रहनेवाले अिन भुरुखड़ लोगोंकी अपेक्षा हम कोअी विशेष चीज हैं, यह भाव अुनके मुँहपर और अुनके हरअेक कदममें दिख रहा था। किसी रेसमें विजअी हुअे घोड़ेकी लगामको हाथमें पकड़कर अुसका मालिक जिस शानसे रेस-कोर्सपर घूमता है, वही शान अनन्ताका हाथ पकड़कर चलनेवाले अिस कृष्णरावमें भी थी। अनन्ताने कोअी बड़ा मैदान मार दिया था, यह स्पष्ट दिख रहा था।

"आअिअे-आअिअे।"–मैंने अुनका स्वागत किया।

"कुछ नहीं। जरा बाहर जा रहा था। सहज सोचा, देखूं जरा झाँककर।"—कृष्णरावने कहा।

"तो आअिअे, आअिअे न?" मैंने कहा।

कृष्णराव कुर्सीपर बैठे। अुन्होंने अपने हाथकी "पाचक" पत्रिकाको जानबूझकर अिस अन्दाजसे पकड़ रखा था जिससे वह अेकदम मेरी आँखोंमें भर जाअे। अुनकी यह अिच्छा दिख रही थी कि अुसके बारेमें मैं अुनसे कुछ पूछूं।

"क्या है यह?"—मैंने पूछा।

"क्यों, आपने नहीं देखी यह पत्रिका अभीतक। बड़ी अच्छी पत्रिका है यह।"—कृष्णरावने कहा।

सुलू भीतरके कमरेसे मुझे लगातार अिशारा कर रही थी कि मैं कृष्णरावसे पूछूं कि अुनके घरमें आज अितनी खुशियाँ क्यों मनाअी जा रही हैं? अिसलिअे मैंने कृष्णरावसे अेकदम पूछा,—"आज आपके घर बड़ी खुशियाँ मनाअी जा रही हैं, क्या बात है?"

"कुछ नहीं, अिस मासिक-पत्रिकामें हमारे अनन्ताकी अेक सूझ छपकर आअी है।"—कृष्णरावने यह बात सहज भावसे ही कही थी। परन्तु अुनकी यह अिच्छा स्पष्ट दिख रही थी कि अिस समाचारसे हमें आश्चर्य चकित हो जाना चाहिअे।

"सूझ?"—मैंने पूछा।

"हाँ, सूझ यानी छोटे बच्चोंकी कोअी मजेदार कल्पना। छोटे बच्चे कअी बार बड़ी मजेदार बातें कह डालते हैं। यदि अुनकी ये बातें हम अिस पत्रिकाके सम्पादकके पास भेज दें तो वह अुनमेंसे कुछ चुने हुअे वाक्योंको अिस पत्रिकामें "बच्चोंकी सूझ" शीर्षक स्तम्भमें छाप देते हैं। भेजनेवालेको अेक रुपया अिनाम देते हैं और जिस अंकमें वह प्रकाशित होती है अुसकी अेक प्रति मुफ्त भेजते हैं।"—कृष्णरावने स्पष्टीकरण किया।

"तो अिसमें अनन्ताकी कोअी सूझ छपी है क्या?" —मैंने पूछा।

"हाँ, छपी है न?"—कृष्णरावने सीना फुलाकर कहा। हमारा अनन्ता हमेशा बड़े मजेकी बातें करता है जिन्हें सुनकर हँसते-हँसते हमारे पेटमें बल पड़ जाते हैं। अेक दिन मैंने अुसकी अेक मजेदार बात अिस पत्रिकाके सम्पादकके पास भेज दी और आज देखता हूँ कि वह अिसमें छपकर आ गअी।"

यह जानकर कि कृष्णरावकी खुशीका कारण वर्ग पहेलीमें पुरस्कार प्राप्त करना नहीं है, बल्कि अुनके बच्चेकी सूझ, पत्रिकामें छपने जैसी मामूली बातका है, मुझे कुछ अच्छा लगा। सुलूके द्वारा छोड़ी गअी सन्तोषकी साँस भी मुझे अपने कमरेमें स्पष्ट सुनाअी दी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"देखूं कैसी सूझ है आपके अनन्ताकी ?"—मैंने कहा।

कृष्णरावने बड़ी खुशीसे वह "पाचक" मेरे हाथमें दे दिया। मैंने अुसे सहज खोला, तो ठीक सूझवाला पृष्ठ ही खुल पड़ा। अितनी बार अुस पृष्ठको खोलकर कृष्णरावने लोगोंको दिखाया था कि कोअी और पृष्ठ खुल ही नहीं सकता था। पत्रिकाके शेष सब पृष्ठ कोरे दिख रहे थे। सूझवाले पृष्ठपर जरूर बार-बार हाथ लगनेसे दाग पड़ गअे थे।

कृष्णरावके अनन्ताकी सूझ क्या होगी, यह मैं देखने लगा। अितनेमें कृष्णराव बोले,—"वह '**भगवानके घरका ट्यूब लाअीट**' शीर्षक सूझ देखिअे न। सूझ नम्बर ३।"

"भगवानके घरका ट्यूब लाअीट" शीर्षक सूझ मैं मन-ही-मन पढ़ने लगा, तो कृष्णराव बोले,—"जरा जोरसे पढ़िअे जिससे सुलू भाभी भी सुन सकें।"

फिर मैं गला साफ कर जोरसे पढ़ने लगा—

"भगवानके घरका ट्यूब लाअीट"

"हमारा अनंता चार सालका है। वह हमेशा बड़ी मजेदार बातें किया करता है। अुसकी अेक-अेक सूझपर मन चकित हो जाता है। अेक बार मैं अनंताको साथ लेकर अपने अेक मित्रके घर गया था। बरसातके दिन थे। शामका वक्त था। करीब सात-साढ़े सात बजे थे। मित्रने अपने घरमें नया ट्यूब लाअीट लगाया था। अुसने अुसे जलाया। अेक दो बार चमककर वह जला। थोड़ी देरके बाद हम अपने घर लौटने लगे। मेरा मित्र हमें आँगनतक पहुँचाने आया था। अिसी समय आकाशमें बिजली चमकी और अुसे देखकर अनंता अेकदम बोल अुठा — "बापू, देखो वह भगवानके घरका ट्यूब लाअीट।" अुसकी यह सूझ सुनकर हम लोग खूब हँसे।"

"वाह वाह ! बहुत सुन्दर !!" —मैंने कहा।

"कितनी मजेदार बात करता है अनंता !"—भीतरसे सुलूने तारीफ की।

"अजी बड़ा होशियार है वह !" कृष्णरावने कहा—"हमारा बड़ा लड़का रामू कहता है कि आगे चलकर अुसे मिलिटरीमें भरती करेंगे। क्योंकि मिलिटरीमें ही अैसे बुद्धिमानोंकी आवश्यकता होती है। परन्तु अनंताकी माँ कहती है कि मिलिटरीमें नहीं, हम अुसे कलेक्टर ही बनाअेंगे। परन्तु मैं कहता हूँ कि ये दोनों ठीक नहीं हैं। अब आप बताअिअे कि अितनी चपल कल्पना शक्तिवाले लड़केको क्या बनना चाहिअे ?"

कृष्णराव अिस प्रश्नके ठीक किस अुत्तरकी अपेक्षा करते हैं यह मेरी समझमें न आनेके कारण मैं जरा असमंजसमें पड़ गया। फिर मैंने थोड़ा सोचा और कहा,—

"वह बहुत करके कवि बनेगा। कालिदास, वर्डस्वर्थ, शैली—अिनकी जोड़का....."

अिस समय कृष्णराव अितने जोरसे हँसे कि अितना तब भी न हँसते यदि मेरी कोअी विचित्र सूझ छपी होती। और हँस चुकनेपर बोले,—

"क्या कहा ? कवि ? कवि होकर क्या मिलेगा अुसे-सिवा अिसके कि न बिकनेवाले अेक-दो कविता-संग्रहोंके ढेर ? छि छि ! अैसी सूझ रखनेवाले लड़केको आगे चलकर मंत्री ही बनना चाहिअे। अब सवाल सिर्फ यही है कि बम्बअीका या दिल्लीका ?"

अिसके बाद अनंताकी हमने और भी तारीफ कर दी और फिर जिस तरह कोअी नादिया बैलवाला अेक घरके सामनेसे अपना कार्यक्रम समाप्त करके अपने नादिअेको दूसरे घरके सामने ले जाता है अुसी तरह कृष्णराव अनंताको लेकर हमारे पड़ोसीके घर गअे।

"बड़े मजेकी थी न अनंताकी सूझ ?"— कृष्णरावके जानेपर मैंने सुलूसे कहा।

"और अनंताकी अुम्र चुराअी है अुन्होंने ?" सुलूने कहा,—"अपने जयंतासे वह डेढ़ साल बड़ा है पूरे सात सालका है।"

"अुसकी अूँचाअी ठीकसे नहीं बढ़ी है अिसलिअे छोटा दिखता है।" मैंने कहा।

"और सूरत भी क्या है अुसकी ? नाक नदारद अुससे तो चीनी बच्चे अच्छे दिखते हैं ?"

"कालिदासके बापको भी अैसी कल्पना सूझी कभी ?" मैंने कहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कृष्णरावने ही अपने मनसे गढ़कर छपने भेज दी होगी ? मास्टरनी तो कहती थी कि अनंता बिल्कुल गधा है।" सुलूने कहा।

"और कृष्णराव क्या कम गधे हैं ? अुनके दिमागमें भी अैसी कल्पना कहाँसे आअेगी ?..." मैंने कहा।

"और कहते हैं कि मंत्री बनेगा वह...." सुलूने कहा।

थोड़ी देर कृष्णरावकी और अुनके घरके लोगोंकी आलोचना करके मैं आफिस चला गया। और हमारा जयंता भी अपनी शाला चल दिया।

"मैंने कहा,— सुनते हो ?" चार पाँच दिनके बाद रसोअी बनाती हुअी सुलूने भीतरसे कहा।

"क्या है ?"– मैंने पूछा।

"अपने जयंतकी भी अेकाध सूझ भेजनी चाहिअे अुस मासिक पत्रिकामें छपनेके लिअे। कृष्णराव ही क्यों अितनी शान बधारें ? अुनकी शान किरकिरी करनी चाहिअे।"

"भेज तू" –मैंने कहा।

सच पूछा जाय तो जिस दिनसे कृष्णराव मेरे यहाँ आअे थे अुसी दिनसे यह विचार मेरे दिमागमें भी चक्कर काट रहा था। हमारा जयंत कृष्णरावके अनंतासे निश्चित ही अधिक होशियार था। माँटेसरीकी मास्टरनी अिंदिरादेवी हमसे हमेशा कहा करती थीं कि जयंताकी ग्रहण शक्ति बहुत अच्छी है और वह समझता भी बहुत है। मेरा यह ख्याल था कि अनंताकी अपेक्षा कअी गुना होशियार हमारे जयंताकी अेकाध सूझ बहुत आसानीसे भेजी जा सकती है।

पिछले चार-पाँच दिनोंसे हमारी चालमें सर्वत्र अेक ही विषयकी चर्चा होती थी। कृष्णरावके अनंताको प्रान्तीय मन्त्री बनाअें या केन्द्रीय ? अिस प्रश्नको लेकर दो दल हो गअे थे। परन्तु अेक बातमें जरूर सब अेकमत थे और वह यह कि कृष्णरावका अनंता विलक्षण बुद्धि रखता है, अुसकी कल्पना शक्ति बड़ी तीव्र है और वह अेक असाधारण लड़का है, जिसका भविष्य अत्यन्त अुज्ज्वल है। यह बात चालके सब लोगोंने अेकदम स्वीकार कर ली थी।

हमारे जयन्तकी तरह अनंताकी बराबरीके और भी जो दूसरे दो-चार लड़के चालमें थे, अुनकी ओर अब कोअी नजर अुठाकर भी नहीं देखता था। जिसें देखो वही अनंताकी सूझकी ही तारीफ करता था। यह देखकर मेरे मस्तिष्कमें रह-रहकर यह विचार झाँक जाता था कि अपने जयन्ताकी भी अेक सूझ भेजकर मासिक पत्रिकामें छपवा देनी चाहिअे और अब जब सुलूने भी वही बात कही, तो मैं अुस विषयपर गम्भीरतापूर्वक विचार करने लगा।

थोड़ी देर तक मैंने सिर खुजाकर देखा, परन्तु जयन्तकी अेक भी सूझ मुझे याद नहीं आअी। अिसलिअे मैंने सुलूसे पूछा—"तुम्हीं बताओ न अुसकी अेकाध सूझ ?"

"अुसके दादाके श्राद्धके समय अुसने जो मजेदार बात कही थी, वह भेज दो।"—सुलूने कहा।

"क्या कहा था अुसने ?"—मैंने पूछा।

"अजी अुसने नहीं कहा था?"—सुलू बीचहीमें ठहर गअी, और फिर बोली,—"मेरा श्राद्ध—"

"तुम्हारा श्राद्ध ?"—मैंने चकराकर पूछा।

"अजी यह तो अुस सूझका शीर्षक होगा। अितना भी नहीं समझ सके आप ? सुनिअे—"मेरा श्राद्ध"

"हमारे घर जयन्तके दादाका श्राद्ध था। हमारा जयन्त चार सालका है। वह हमेशा बड़ी मजेदार बातें करता है। श्राद्धके दिन लड्डू बने थे। दो तीन दिनके बाद जयन्ताने मुझसे कहा—"माँ, मेरा श्राद्ध करो न ?" अुसकी बात समझमें न आनेके कारण मैंने पूछा,— "क्यों करें तेरा श्राद्ध ?" तब वह अेकदम बोला,— "जिससे मुझे लड्डू खानेको मिलेंगे।" अुसके अिस अुत्तरको सुनकर हम लोग हँसते-हँसते लोट पोट हो गअे।"

"क्यों है न अच्छी सूझ ?"—सुलूने पूछा।

लगता था कि सुलूने अपने मनसे ही गढ़कर यह सूझ तैयार कर ली थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"क्या अपने जयन्तने अैसा कहा था ?"—— मैंने पूछा ।

"क्यों, क्या भूल गअे ? हम अुसकी अिस सूझपर कितने दिनोंतक हँसते रहे थे ? आपको यह तो कुछ भी याद नहीं रहता ।

"मुझे तो याद नहीं आता कि अुसने कभी अैसा कहा था और फिर यह सूझ भी कोअी अुतनी अच्छी नहीं लगती ।"

"क्यों, क्या यह सूझ अनंताकी अुस सूझसे बुरी है ?" रोटियाँ बेलती-बेलती रुककर सुलूने किंचित क्रोधसे ही पूछा ।

"नहीं, बुरी तो नहीं है, अुससे अच्छी ही है । परन्तु जरा अभद्र-सी लगती है । अैसी कोअी बात जयन्तने कही थी यह कम-से-कम मुझे तो स्मरण नहीं आता भअी ?"

"आप तो बिल्कुल, ये हैं ।" सुलूने कहा——"आप कैसे कह सकते हैं कि जो सूझ छपकर आअी है वह अनंताकी ही है ? परन्तु आखिर वह छप गअी न ? और अुसके कारण अनंताका भाव बढ़ ही गया न ?"

"मैं अिस बातको नहीं मानता ।" मैंने कहा,—— "और फिर हमारा जयंत अुस गधेसे कअी गुना होशियार है । दरजेमें वह हमेशा पहले नम्बरपर रहता है । वह अच्छी-अच्छी कल्पनाअें निश्चय ही करेगा ।" "तो फिर देखिअे और अुसकी कोअी मजेदार बात भेज़ दीजिअे अुस मासिक पत्रिकामें । अनंताकी माँ ही अितनी शान क्यों बघारे ?" सुलू बोली ।

"कल ही भेज देता हूँ । आज ही जयंतने कोअी मजेदार बात कही तो कल ही डाकमें छोड़ दूँगा अुसे ।" मैंने कहा ।

जयन्तकी सूझ भेज देना मुझे बहुत आसान मालूम होता था । अनन्ताकी तरह गधा लड़का जब अैसी मजेदार बात कह सकता है तो हमारा जयन्ता निश्चित ही अेक दिनमें कम-से-कम दो तीन कल्पनाअें जरूर ही करता होगा, यह मेरा हिसाब था । तब मैं अुस दृष्टिसे जयन्तपर छुपी नजर रखने लगा ।

परन्तु बड़े खेदसे कहना पड़ता है कि जयन्तने मेरी आशाओंपर पानी फेर दिया । आठ दिन बीत गअे, फिर भी अेक भी सूझ अुसके मुँहसे न निकली । वह हमेशा बुद्धूकी तरह ही बातें करता और अूपरसे "जयन्ताकी सूझ भेज दी आपने ?" कहकर सुलू रोज मेरे पीछे पड़ी रहती ।

अन्तमें दो तीन दिन जयन्तकी सूझकी राह देखकर जब थक गया, तब मैंने अपने मनमें अेक योजना निश्चित की । मैंने निश्चय किया कि जयन्तके मुँहसे अेकाध सूझ कहलवा लेनी चाहिअे । अुसके सामने अैसे दृश्योंको अुपस्थित करना चाहिअे कि जिससे अुसके मुँहसे कोअी मजेदार बात टपक ही पड़े । और फिर मैंने अुस दृष्टिसे अपनी हलचलें शुरू कर दीं ।

आज अनायास रविवार था । आफिसकी छुट्टी थी और जयन्तका भी स्कूल बन्द था । जयन्तके मुँहसे कोअी बढ़िया सूझ निकलवानेके लिअे आजका दिन मुझे योग्य मालूम होता था ।

हमारे देवघर (पूजाघर) में पंढरपुरके विठोबा भगवानकी मूर्ति थी । विठोबा कमरपर हाथ रखकर खड़े थे । जब मैं अुस मूर्तिको देखता तब मुझे कमरपर हाथ रखकर कवायद करनेवाले लड़कोंकी हमेशा याद हो आती और अिस कल्पनाके मनमें आते ही मुझे हँसी भी आ जाती । जयंता बाहर गैलरीमें खेल रहा था । अुसे मैंने बुला लिया और कहा——"जया, यह देखो विठोबा भगवान ।"

जयंतने जरा आश्चर्यसे ही विठोबा भगवानकी मूर्तिकी ओर देखा । यह देखकर कि अुसके मुँहसे कोअी मजेदार बात नहीं निकल रही है, मैंने अुसे सुझाते हुअे कहा——"देखो, भगवान कमरपर हाथ रखे हैं ।"

फिर भी जयंत चुप रहा । तब मैंने कहा—— "भगवान कवायद कर रहे हैं, क्यों ठीक है न ? तुम स्कूलमें कवायद करते समय कमरपर हाथ रखकर खड़े होते हो न ? अुसी तरह विठोबा भी कवायद कर रहे हैं । बोलो, ठीक कह रहा हूँ न ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अं हं ! भगवान क्या कभी कवायद करते हैं ? वे तो हमेशा ही कमरपर हाथ रखकर खड़े रहते हैं ।" जयंताने कहा और पुनः खेलनेके लिअे गैलिरीमें भाग गया ।

मेरा पहला प्रयत्न असफल हो गया था । मैंने बहुत देरतक सिर खुजाया और फिर जयंतको बुलाया । अुसके आते ही मैंने चित्र रंगनेका अेक छोटा ब्रश अुसे दिखाया और कहा—"देखो यह पेंसिल कैसी है ?"

"पेंसिल ?" अुसने आश्चर्यसे पूछा ।

"हाँ, यह मूँछोंवाली पेंसिल है ।" मैंने सुझाते हुअे कहा ।

"नहीं, वह क्या पेंसिल है ? वह तो ब्रश है ।" यह कहते हुअे जयंतने मेरी ओर अिस संशय भरी दृष्टिसे देखा कि मेरा दिमाग ठीक है या नहीं और वह पुनः भाग गया ।

जयंतके मुँहसे सुन्दर सूझें निकलवानेके लिअे मैंने अुसे दो मौके दिअे थे, परन्तु अुसने मुझे जैसा चाहिअे वैसा सहयोग न दिया था । दो बार मैं फेल हो गया था, फिर भी हिम्मत न हारकर मैं फिर सिर खुजाता हुआ गैलरीमें जाकर खड़ा रहा । सामनेकी चालकी गैलरीमें अेक गर्भवती औरत खड़ी थी । मैंने जयंतको जल्दी-जल्दी बुलाया और अुसे वह औरत दिखाअी ।

"वह कुसुमकी माँ है ।" अुसने कहा ।

"अुसका पेट तो देख कितना बड़ा है ?" मैंने कहा । जयन्तके मुँहसे अेक शब्द भी न निकला । अुसका बड़ा पेट देखकर अुसको अेक भी मजेदार कल्पना न सूझी । वह बोला—"कहते हैं अुसके बच्चा होनेवाला है ।"

"अरे नहीं, खूब खा लिया है अुसने जिससे अुसका पेट फूलकर गुब्बारा हो गया है ।" मैंने सुझाते हुअे कहा—"वह बड़ी पेटू है ।"

"हट, खानेसे क्या पेट फूल जाता है ?" अफलातूनका रोब लाकर जयंत बोला—"वह गर्भवती है ।"

जयंतके संबंधमें अिस निराशाका धक्का मुझे पूरा लगनेसे पहले ही मेरे सौभाग्यसे हमारी चालकी गैलरीसे अेक तोंदियल सेठ आता हुआ मुझे दिखा । मैंने अेकदम जयंतका ध्यान अुसकी ओर आकर्षित किया और कहा—"अुस सेठका पेट देख कैसा है ?"

"अुसके तोंद निकल आअी है ।" जयंतने कहा ।

"नहीं, वह गर्भवती है । है न ?" मैंने पूछा ।

"न, मर्द कहीं गर्भवती होते हैं ?" हमारे छोटे अफलातूनजीने मुझे ही बेवकूफ बना दिया । हमारा जयंत बड़ा होशियार और समझदार है अिसका मुझे अितने दिनोंतक बड़ा अभिमान लगता था । मेरे मनमें अैसा पक्का विश्वास था कि हमारी चालमें यदि कोअी लड़का मन्त्री बननेके योग्य है तो वह हमारा जयंता ही है । परन्तु आज मुझे अुसके अिस गुणपर क्रोध ही आया । मैंने निराशाकी अेक साँस छोड़ी और भीतर चल दिया ।

"जयंतकी कोअी सूझ अुस पत्रिकामें छपने भेज दी आपने ?" मेरे भीतर पहुँचते ही सुलूने प्रश्न किया । आजकल तो अिस संबंधमें वह मेरे बिल्कुल पीछे ही पड़ गअी थी । सोते-जागते अुसे जयंतकी सूझके सिवा और कुछ दिखता ही न था । जयंतकी सूझको अुस पत्रिकामें भेजनेकी अुसने रट लगा दी थी । मैंने जरा क्रोधमें ही अुत्तर दिया—

"अभीतक अेक भी मजेदार बात अुसने नहीं कही है ।"

"तो फिर कम-से-कम अुस दिनकी श्राद्धवाली सूझ ही भेज दो ।" सुलूने कहा ।

"तो क्या अिस तरह झूठी सूझ ही भेज दूं ?"

"तो फिर क्या आप यह समझते हैं कि जितनी सूझें छपती हैं वे सब सच ही होती हैं ?" सुलूने कहा ।

"नहीं, झूठी सूझ क्यों भेजें ? मेरा अनुमान है कि जयंत आज अेकाध मजेदार बात जरूर कहेगा ।" मैंने कहा । मैंने जयंतके मुँहसे कोअी मनोरंजक सूझ निकलवानेकी जो योजना बनाअी थी वह अभीतक पूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपसे कार्यान्वित नहीं हुअी थी। अुसके मुखसे कोअी सूझ भरी बात निकलवानेकी मुझे अब भी आशा थी।

सोचा, जयंतको घरसे बाहर ले जाना चाहिअे। बाहर अैसे दृश्य दिखेंगे जिनसे सूझके लिअे स्फूर्ति प्राप्त होगी और दूसरी बात यह होगी कि अुसका सारा ध्यान खेलसे हटाकर सूझ निकलवानेके लिअे अेकाग्र किया जा सकता है। मैंने कपड़े पहिने और जयंतको भी कपड़े पहनवाकर तैयार किया। फिर हम लोग बाहर निकले।

जीनेके पासही हमारी चालका नल था। अुसमें पानी छाननेके लिअे अेक कपड़ा बंधा था जो मैला हो जानेसे कुछ भगवे रंगका हो गया था। अुस कपड़ेको जब मैं देखता तो मेरे मनमें हमेशा अेक बड़ी मजेदार कल्पना आया करती थी। परंतु वह लड़कपनकी होनेके कारण मैं अुसे मन-ही-मन दबा रखता था। परंतु अिस समय जब मुझे वह याद आअी तो मेरे मनमें अेकदम यह विचार अुठा कि जयंतकी सूझके लिअे वह बहुत "फिट" बैठेगी। मैंने अुस नलकी ओर अँगुली दिखाते हुअे जयंतसे कहा-- "जया! अुस नलको तो देखो।" और फिर मैं अुसकी तरफ बड़ी आशासे देखता रहा।

वह कुछ भी न बोला। यह देखकर मैंने पूछा-- "परसों हम लोग कहाँ गअे थे?"

अुसे याद न आया। तब मैंने ही कहा--"हम आठवलेके मुकुन्दाके जनेअूमें गअे थे न?"

जयंतने हाँ कहनेके लिअे सिर्फ गर्दन हिला दी। मैंने अुसकी सूझकी बड़ी आशासे राह देखी; पर वह कुछ भी न बोला।

अन्तमें तंग आकर मैंने ही कहा-- "अिस नलका भी जनेअू हुआ है। वह देख अुसकी लंगोटी और डंडा?"

"नलका भी क्या कहीं जनेअू होता है?"-- जयंताने कहा और जीनेकी सीढ़ियोंको दनादन पार करते हुअे वह नीचे गया। भारी कदमोंसे मैं भी जीना अुतरा।

सड़कसे जाते हुअे जयंत अिधर अुधर तमाशा देख रहा था और मैं सूझके योग्य किसी विषयकी तलाशमें खो गया था। अेक जगह मुझे अेक भैंस दिखी। अुसके गलेमें गुरियोंकी माला थी। मैंने अेकदम जयंतसे कहा--"अरे वह देख सुहागिन खड़ी है। अुसने गलेमें क्या पहना है?"

मैंने यह सवाल अिस ढंगसे पूछा था कि किसी भी लड़केके मुँहसे अिस समय आपही आप अेक मजेदार सूझ बाहर टपक पड़ती। परंतु हमारा जयंत परले सिरेका बेवकूफ! वह बोला--"वह कोअी माँके गलेकी तरह मंगलसूत्र नहीं है; वह तो सिर्फ गुरियोंकी माला है!"

मतलब यह कि मेरे सुझानेवाले प्रश्नने अपना काम कर दिया था जो सूझ मैं चाहता था वह अुसके दिमागमें आ गअी थी। परन्तु वह तो अफलातून था न! वह अुसे कैसे कहता?

मैं फिर अुसे विक्टोरिया गार्डन ले गया। मुझे आशा थी कि कम-से-कम वहाँके विचित्र प्राणियोंको देखकर जयन्ताको कोअी-न-कोअी मनोरंजक बात जरूर सूझ जायगी। बिल्कुल अन्तिम आशा ही थी वह।

हमें बागमें प्राणी दिखनेसे पहले ही कुछ फेशनेबुल मेमें दिख पड़ीं। अुनके बदनमें बिल्कुल अधूरे "फ्राक" थे। यह विषय भी मुझे सूझके लिअे योग्य लगा। अिसलिअे अुनकी ओर अँगुली दिखाकर मैंने जयन्तसे कहा--"अरे! अुन औरतोंको तो देख!"

जयन्ताने अुन्हें देखा। पर वह कुछ भी न बोला। अपने मनमें यह सोचता हुआ कि अिस सूझके लिअे "गरीबी" यह शीर्षक अच्छा रहेगा, मैंने जयन्तसे कहा--"देख, अुनके पास कपड़े खरीदनेको भी पैसे नही हैं। क्यों, यही बात है न? कितने गरीब हैं बिचारे?"

अिसपर हमारे बाल बृहस्पतिजी बोले--"वे तो मेमें हैं। अुनके कपड़े अिसी तरह होते हैं--अधूरे।"

जयन्ताके गालसे मिलनेके लिअे मेरा हाथ फड़कने लगा। परन्तु अिस मुलाकातके लिअे स्थान और समय मेरे लिअे अनुकूल न था। अतअेव मैंने अिस मोहको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संवरण किया। दूसरी बात यह भी थी कि अुसे रुलानेमें कोअी फायदा न था। घेरघारकर अुसके मुँहसे अेकाध मजेदार कल्पना निकलवाना निहायत जरूरी था।

अुस दिन कृष्णराव हमारे घर जब तक नहीं आअे थे तब तक जयन्ता जैसे मेरा प्राण था। परन्तु अिन पिछले आठ दिनोंमें जरूर वह मेरे मनसे साफ अुतर गया था। अिस समय यदि पीछेसे कोअी मोटर आअी होती और अुसके जयन्तासे टकरा जानेकी संभावना होती, तो सच पूछा जाय तो मैं अुसे अपनी ओर न खींचता-अितना मुझे अुसपर क्रोध आ गया था। नहीं, परन्तु फिर भी मैं अुसे अपनी ओर जरूर खींच लेता। क्योंकि अब भी अुसके मुँहसे अेकाध मजेदार कल्पना सुननेकी मुझे रंच मात्र ही क्यों न हो पर आशा थी। वह आशा न होती तो जरूर मैं अुसको मोटरके नीचे चले जाने देता।

हम भिन्न-भिन्न प्रकारके विचित्र प्राणियोंको देखते हुअे घूम रहे थे। परन्तु जयन्त कोअी भी मजेदार बात नहीं कह रहा था और न मुझे ही कोअी सुन्दर कल्पना सूझ रही थी। अिसी समय खोनचा सिरपर रखकर "खाजा" बेचनेवाला अेक आदमी "खाजा-खाजा" कहता हुआ बागमें घूम रहा था। तब मैंने जयन्तसे कहा—"जया, अुसके पास जा और खाजा।"

"वाह, बिना पैसे दिअे कैसे खाअेंगे? वह तो चोरी होगी। और चोरी कभी नहीं करनी चाहिअे।"—जयन्ताने कहा।

"अरे, पर वह तो खुद कह रहा है कि "खाजा।"—मैंने कहा।

जयंताने मेरी ओर अेक अजीब नजरसे देखा। "यह कहनेवाले क्या आप ही हैं, पिताजी?"– यही प्रश्न जैसे वह मुझसे अपनी दृष्टिके द्वारा पूछ रहा था। मैं ही जरा शरमाया। यूँ ही हँस दिया और फिर हम आगे बढ़े।

चलते-चलते हम अैसे स्थानपर आअे जहाँ हाथी थे। हाथीके बारेमें किसी नाटकमें मैंने अेक कल्पना सुनी थी और वह मुझे अच्छी भी लगी थी। नाटकमें जब वह कल्पना कही जाती, तब सारे दर्शक भी हँस पड़ते। अिसलिअे वह आम लोगोंको भी पसंद हो सकती थी। मैंने सोचा अिसी कल्पनाको अब बच्चोंकी सूझके नामपर भेज दिया जाय। मैंने जयंतसे कहा,-- "अिस हाथीकी कितनी सूँडें हैं?"

"अेक"— अुसने कहा,-- "और वह दूसरी सूँड है।"

मैं ठंडा हो गया। जयंताने हाथीको दो दुमवाली भैंस कहकर मजेदार बात नहीं कही थी। "अजीब जानवर" शीर्षक देकर "पाचक" में अपना और मेरा नाम छप जानेका अेक अवसर अुसने व्यर्थ खो दिया था। अिसके अलावा अेक प्रति और अेक रुपअेका नुकसान हो गया था, सो अलग ही।

मैं निराश और हताश होकर अेक बेंचपर विचारोंमें डूबा हुआ बैठ गया। जयंतने मुझे पूरी तरह पराभूत कर दिया था। छोटे बच्चोंको मजेदार बात कहनी चाहिअे यह जैसे अुसके सपनेमें भी न आया। वह आप ही आप कोअी मनोरंजक बात नहीं कहता था। अिसलिअे मैं अुसे सुझानेवाले प्रश्न पूछता था, परन्तु अुन्हें भी वह हजम कर गया था? बेंचपर बैठे-बैठे विचार करनेके बाद अंतमें मैंने यह निर्णय किया कि अब मैं स्वयं ही अेक मजेदार बात कहूँगा और अुस कल्पनापर जयंता सिर्फ "हाँ" कहकर अपनी मान्यता दिखा दे कि काफी होगा। फिर वही सूझ जयंताके नामपर "पाचक" में छपनेके लिअे भेज दूँगा।

और अैसा मौका भी मुझे तुरन्त हाथ लग गया। बेंचपर विचारोंमें डूबे हुअे बैठे रहनेसे मेरे पैरोंमें झनझनी आ गअी थी। मैंने अेक ओर खेल रहे जयंतको अपने पास बुलाया और कहा,— "जया, मेरे पैरोंपर चिअूँटियाँ आ गअी हैं (पैरोंमें झनझनीके लिअे मराठीमें चिअूँटियाँ आ गअी हैं कहनेका मुहावरा है।) अिसलिअे अुनपर अब हमें डी० डी० टी० डालना चाहिअे जिससे वे चली जाअेंगी। क्यों ठीक है न?"

अब मेरे अिस प्रश्नके अुत्तरमें जयंता सिर्फ हाँ भर कह देता कि मैं अिस मनोरंजक सूझको अुसीकी सूझ माननेके लिअे तैयार था। बस, सिर्फ वह 'हाँ' कह दे कि अुसकी सूझ हो गअी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परन्तु हमारे जयंतजी थे जरा अधिक होशियार। वे बोले—

"ये सच्ची चिअूँटियाँ नहीं हैं। पैर झटक दो तो निकल जाअेंगी। क्यों पिताजी, आप आजकल पागल जैसी बातें क्यों करते हैं?"

अिस छोटी अुम्रमें अुसे अितना ज्ञान देनेवाली अुनकी मास्टरनी, अिन्दिरादेवीपर मुझे बड़ा क्रोध आया। अिसी समय क्रोधके साथ मेरे हाथकी अुसकी पीठसे कसकर भेट हो गअी। जयन्त अेकाअेक जोरसे रो पड़ा। मैं अुठा। अुसका हाथ पकड़कर अुसे भी खड़ा किया और अुसी तरह अुसे खींचता हुआ बाहर लाया।

घर आनेपर सुलूने सूझकी बात निकाली ही। मैंने संक्षेपमें अितना ही कहा—"अपना जयन्त कोअी सूझकी बात नहीं कहता।" और मैं अपने काममें लग गया।

करीब पन्द्रह दिन अिसी तरह बीत गअे। जयन्ताकी कम-से-कम अेक ही मजेदार बात सुनने मिल जाय, अिसलिअे मेरे कान अुत्सुक थे। पर वे अितने भाग्यशाली न थे। चालमें अब भी कृष्णरावके अनंताकी सराहना थोड़े बहुत परिमाणमें हो ही रही थी। अिस विचारसे कि कृष्णरावका अनंता मन्त्री बनेगा और अुसका चपरासी बननेकी भी अपने जयन्तमें अक्ल नहीं। मेरा मन अुद्विग्न हो जाता। तो भी सन्तोषकी बात सिर्फ यही थी कि मासिक पत्रिकामें जयन्तकी सूझ भेजनेकी जो रट सुलूने मेरे पीछे लगा रखी थी, वह अब ठंढ़ी पड़ गअी थी।

और फिर, पुनः पहली तारीख आअी। अुस दिन डाकिया "पाचक" का अेक अंक हमारे घर डाल गया। मुझे शक हुआ कि अिसमें अनंताकी फिर अेकाध सूझ छपकर आअी होगी और कृष्णरावका यह अंक डाकिया मेरे घर गलतीसे डाल गया है, परन्तु जब अुसके कवरके अूपरका पता देखा तो सुलूका नाम था।

अिसी समय सुलू भागती हुअी आअी। मेरे हाथमें "पाचक" को देखकर वह बोली—"आ गअी शायद जयन्तकी सूझ छपकर?" और अुसने झपटकर वह अंक मेरे हाथसे छीन लिया और सूझका पृष्ठ खोला।

हमारे जयन्ताकी सूझ छपकर आ गअी थी। पहले मुझे अिस बातपर विश्वास नहीं होता था। परन्तु अुस सूझका शीर्षक और कुछ वाक्य साफ दिखाअी दे रहे थे—"मेरा श्राद्ध"

"हमारा जयन्ता चार सालका है। वह हमेशा बड़े मजेकी बातें करता है।...."

अन्तमें प्रेषिकाके नीचे सुलूका नाम था। यानी हमारे जयन्ताकी ही सूझ है यह। सुलूने किसी समय अिसे लिखकर पाचकके सम्पादकको चुपचाप भेज दी होगी।

और फिर क्या पूछते हो? हमारी चालमें फिर कोलाहल मच गया। कृष्णराव और अुनकी पत्नीके चेहरे गिरे-से हो गअे। अुनके अनन्ताकी अपेक्षा हमारे जयन्ताका दुलार अधिक होने लगा—अुसकी सराहना भी अधिक होने लगी। वह आगे चलकर क्या बनेगा अिस विषयकी चर्चा शुरू हुअी। सुलू बड़ी शानसे चालभरमें घूमने लगी।

अिसके बाद हमारे जयन्ताकी सूझें अुस मासिक पत्रिकामें नियमित रूपसे छपने लगीं। आजतक अुसकी "सुहागिन", "खाजा", "गरीबी", "अजीब जानवर", "डी. डी. टी.", "नलका जनेअू", "भगवानकी कवायद" आदि अनेक सुन्दर-सुन्दर सूझें अुस मासिक पत्रमें निकल चुकी हैं।

अिसलिअे कृष्णरावका अनन्ता अुसके आगे अब बिल्कुल हतप्रभ हो गया है।

दिल्लीके मन्त्री पदके लिअे हमारी चालके सब लोगोंने हमारे जयन्ताको ही अेकमतसे चुन लिया है और अब सर्वत्र यही कहा जाता है कि कृष्णरावका अनन्ता यदि कुछ हुआ तो जयन्ताका चपरासी हो जायगा।*

---

*मराठी "दीपलक्ष्मी" से साभार

(अनुवादक—श्री रा. र. सर्वटे)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संत तुकारामके अभंग

भक्त द्वारा भगवानका अनुनय

[गतांकसे आगे]

मराठी

पापाची वासना नको दावूं डोळां ।
त्याहूनि आंधळा बराच मी ॥
निंदेचें श्रवण नको माझे कानीं ।
बधिर करोनी ठेवी देवा ॥
अपवित्र वाणी नको माझ्या मुखा ।
त्याजहुनि मुका बराच मी ॥
नको मज कधीं परस्त्री संगती ।
जनांतुन माती अुठतां भली ॥
तुका म्हणे मज अवघ्याचा कंटाळा ।
तूं अेक गोपाळा आवडसी ॥

नररतुति आणि कथेचा विकरा ।
हें नको दातारा घडों देअूं ॥
अैसये कृपेची भाकितों करुणा ।
आहेसि तूं राणा अुदारांचा ॥
पराचिया नारी आणि परधना ।
नको देअूं मनावरी येअूं ॥
भूतांचा मत्सर आणि संतनिंदा ।
हें नको गोविंदा घडों देअूं ॥
तुका म्हणे तुझ्या पायांचा विसर ।
नको वारंवार पडो देअूं ॥

हिन्दी

हे भगवन् ! मेरी दृष्टिके सन्मुख पापकी वासनाको न आने दीजिअे । अुसके बदलेमें मुझे अन्धा बना देना कहीं अधिक अच्छा होगा । अुसी प्रकार मुझे बहरा चाहे बना दीजिअे, किन्तु मेरे कानोंसे निंदाकी बातें न सुनने दें । अपवित्र वाणीके बदले, मुझे गूँगा होना भी स्वीकार है । वैसे ही मुझे पर-नारीकी संगतिसे सुरक्षित रखिअे; क्योंकि अुसकी अपेक्षा मेरी आयु-मर्यादाका समाप्त हो जाना ही अच्छा है । हे प्रभो ! अिन सारी बुरी बातोंसे मैं अूब गया हूँ । अब तो बस मैं तुम्हींको चाहता हूँ ।

हे प्रभु ! मेरे द्वारा प्राकृत जनोंका गुण-गान और कथा-कीर्तनका व्यवसाय न होने दो । आप अुदार-शिरोमणि हैं; अिसीलिअे आपसे अुक्त कृपाकी भीख माँगता हूँ । अुसी प्रकार मेरे मनको परस्त्री अेवं पर-धनकी ओर आकर्षित न होने दीजिअे; और न मेरे द्वारा प्राणिमात्रका मत्सर तथा सज्जनोंकी निन्दा होने दें । तुकाराम कहते हैं कि हे प्रभो, मैं आपके पद-कमलोंको बार-बार भुला देता हूँ; किन्तु अब भविष्यमें अैसा कदापि न होने दें ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नव्हे सुख मज न लगे हा मान।
न राहे हें जन काय करूं ॥
देहउपचारें पोळतसे अंग।
विषतुल्य चांग मिष्टान्न तें ॥
नाइकवे स्तुति वाणितां थोरीव।
होतो माझा जीव कासावीस ॥
तुज पावें ऐसी सांग कांहीं कळा।
नको मृगजळा गोवूं मज ॥
तुका म्हणे आतां करीं माझें हित।
काढावे जळत आगींतूनि ॥

नरनारी बाळें अवघा नारायण।
ऐसें माझें मन करीं देवा ॥
न यो काम क्रोध द्वेष निंदा द्वंद्व।
अवघा गोविंद निःसंदेह ॥
असावें म्यां सदा विषयीं विरक्त।
काया वाचा चित्त तुझे पायीं ॥
करोनियां साह्य पुरवीं मनोरथ।
व्हावें कृपावंत तुका म्हणे ॥

अंसें सत्य माझ्या येअील अंतरा।
तरिच मज करा कृपा देवा ॥
वचनांसारिखें तळमळी चित्त।
बाहेरि तो आंत होअील भाव ॥
तरि मज ठाव द्यावा पायांपाशीं।
सत्यत्वें जाणसी दास खरा ॥
तुका म्हणे सत्य निकट सेवकें।
तरिच भातुकें प्रेम द्यावें ॥

अेकविध आम्हीं न धरूं पालट।
न संडूं ते वाट सांपडली ॥
म्हणवूनि केला पाहिजे सांभाळ।
माझें बुद्धीबळ पाय तुझे ॥
बहुत न कळे बोलतां प्रकार।
अंतरा अंतर साक्ष असे ॥
तुका म्हणे अगा जीवींच्या जीवना।
तूंचि नारायणा साक्षी माझा ॥

भावुक जनों द्वारा मेरे शरीरको प्रदान किया जानेवाला सुख और सम्मान मुझे नहीं चाहिअे; किन्तु क्या करूँ, वे लोग मानते ही नहीं ! जब वे मेरी देहका सुखोपचार करते हैं, तो वास्तवमें देखा जाय तो मेरा शरीर जलता है और अुनके मिष्टान्न मुझे विषके समान प्रतीत होते हैं। अुसी प्रकार मुझे महान् मानकर जब वे लोग मेरी स्तुति करते हैं, तो वह मुझसे सुनते नहीं बनती और अैसी स्थितिमें मेरे प्राण छटपटाने लगते हैं। अतः हे भगवन् ! अिस सुख अेवं स्तुतिके मृगजलमें न फँसाते हुअे, मुझे कोअी अैसा अुपाय बतलाअिअे, कि मैं आपको पा सकूँ। हे प्रभो ! अिन दहकते अंगारोंमेंसे बाहर निकालकर आप मेरा हित कीजिअे।

भगवन् ! मेरे मनको अैसा बना दीजिअे कि मैं पुरुष-स्त्री-बालक सभीको नारायण मानने लगूँ। अुसी प्रकार काम, क्रोध, द्वेष, निन्दा और द्वन्दोंका प्रादुर्भाव भी मेरे मनमें न हो; क्योंकि समस्त प्राणिजात और वस्तुजात निःसन्देह गोविन्द ही हैं। मैं सदैव विषय-वासनाओंसे विरक्त रहूँ और मेरा शरीर, वाणी अेवं मन तेरे पद-कमलोंमें लीन रहे। हे प्रभो ! अपने सहयोगसे मेरी अिस अिच्छाको पूर्ण करनेका अनुग्रह कीजिअे।

हे प्रभो ! यदि मेरे कथनानुसार आपके प्रति मेरे अन्तःकरणमें सच्चा प्रेम-भाव हो, तभी आप मुझपर कृपा करें। यदि आपको प्रतीत हो कि मैं वास्तवमें आपका सच्चा सेवक हूँ, तभी अपने श्रीचरणोंमें मुझे आप आश्रय दीजिअेगा। यदि अिस दासमें सत्य भिद गया हो, तभी अुसे अपनी प्रेम रूपी मिठाअी दीजिअे।

हमारा निश्चय अेकमार्गी है; हम अुसमें परिवर्तन नहीं किया करते। अतः जो मार्ग हमें अवगत हो चुका है, अुसे अब हम नहीं छोड़ेंगे। किन्तु आपके श्रीचरणोंसे ही मेरी बुद्धिको प्रेरणा प्राप्त होती है; अतः मेरी रक्षाका भार आप ही को वहन करना पड़ेगा। यह स्थिति वाणीके द्वारा नहीं समझाअी जा सकती; अंतःकरणका गवाह अंतःकरण ही हुआ करता है। आप मेरे जीवन-दाता हैं, और मेरे प्राणोंमें भी समाअे हुअे हैं। अतः हे नारायण ! मेरे अन्तःकरणके आप ही साक्षी हैं।

[अनुवादिका :—सौ. शारदा वझे, बी. अे. विशारद]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंगला

रवीन्द्रनाथकी कविता

तोमार कविता गुलि पड़े आछे शय्यार दुपाशे
पड़ितेछि नाक ।
भावितेछि स्निग्ध मने अेगुलिके कोन वर्ण दिये
केन तुमि आँक !
तोमार पृथिवी बन्धु, रात्रि तव भय नाहि जाने
रौद्र नाहि ताप ।
झटिकाय पेले शुधु शक्तिर महिमा; वज्रे तप
नाअि अभिशाप !
साँग करि फिरे आसि दिवसेर निर्लज्ज संग्राम,
पड़ि तव लेखा ।
सुमधुर स्वप्न गुलि शुभ्र वक्षे नामे चारि धारे
मेघे अश्रु लेखा ।
तोमार कविता बन्धु, जीवनेर आतप्त ललाटे
बुलाय अंगुलि ।
आकाश ये नील बन्धु, धरणीर मन्थनेर विषे
से कथाओ भूलि ।
पृथिवीर यत अश्रु, तुमि तार लयेछ ये स्वाद,
जान ग्लानि तार ।
विधातार कार्पण्येर, ताअि बुझि दिते चाहे शोध
ममता तोमार ।
मोहेर अंजन ताअि पराअिते चाव, हे व्याकुल
अमृत सन्धानी !
नमस्कार के करिबे; हृदयेर अेत काछे आछ
लव हातखानि ।

बंगलाका अर्थ

तुम्हारी कविताअें शैय्याके-अिधर अुधर बिखरी पड़ी हुअी हैं। मैं अुन्हें पढ़ नहीं रहा हूँ। स्निग्ध मनसे केवल सोच रहा—किस विचित्र वर्णमें और क्यों तुम अिन सब कविताओंको लिखते हो ? पृथ्वी तुम्हारी सखी है। तुम्हारी रात्रिमें भय नहीं और न तुम्हारी धूपमें गरमी। अंझावातसे तुमने केवल शक्ति पाअी है; तुम्हारे वज्रमें अभिशाप नहीं है। दिनके काम शेष करके जब लौटता हूँ तो तुम्हारी रचनाअें पढ़ता हूँ। फिर तो चारों ओर स्वप्न अुछल पड़ते हैं और आँसूकी रेखाअें मिटा देते हैं। मित्रवर्य, तुम्हारी कविता, जीवनके तापसे तप्त मेरे ललाटको अपनी शीतल अँगुलियोंसे स्पर्श करती है। तुम्हारी कविता पढ़नेसे भूल जाता हूँ कि धराके मन्थनसे निकले हुअे विषसे ही आकाश नीला हो गया है—भूल जाता हूँ कि आकाश सुन्दर नहीं, असुन्दर है। पृथ्वीकी सभी पीड़ाओंका तुमने स्वाद चखा है। तुम अिन पीड़ाओंकी ग्लानिको जानते हो। मुझे तो यह प्रतीत होता है कि तुम्हारी ममतापूर्ण कविता विधाताकी कृपणताका जवाब और बदला है! हे अमृतके ढूँढनेवाले, हे व्याकुल कवि, तभी तो तुम सबोंको मोहका काजल पहना देना चाहते हो। अितने निकट हो तुम हृदयके कि कौन तुम्हें नमस्कार करेगा। लो हाथ पकड़ो मेरा।

—श्री प्रेमेन्द्र मित्र

अुर्दू-ग़ज़ल

(अेक शायर)

लाअूँ वह तिनके कहाँसे आशियानेके लिअे।
बिजलियाँ बेताब हों जिनके जलानेके लिअे ॥
दिलमें कोअी अिस तरहकी आरजू पैदा करूँ।
लोट जाअे आस्माँ मेरे मिटानेके लिअे ॥
जमा कर खिर्मन तो पहले दाना-दाना चुनके तू।
आह निकलेगी कोअी बिजली जलानेके लिअे ॥
अिस चमनके मुर्गे दिल गाअें न आज़ादीके गीत।
आह! यह गुलशन नहीं अैसे तरानेके लिअे ॥

[आशियाना—पक्षीका घोंसला। खिर्मन—काटी हुअी फ़सलका ढेर। मुर्गेदिल—दिलके परिन्दे]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सूचना–'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअे।)

सिद्धनाथ कुमारके काव्य-नाटक–

रेडियोके विकासने लेखकोंको काव्य-नाटक लिखनेकी नअी प्रेरणा दी है। फलतः अनेक कुशल कलाकार अिस क्षेत्रमें काम कर रहे हैं। सर्वश्री सुमित्रानंदन पंत, भगवतीचरण वर्मा, अुदयशंकर भट्ट, केदारनाथ मिश्र 'प्रभात', हंसकुमार तिवारी, गिरिजाकुमार माथुर, प्रेमनारायण टंडन, चिरंजीत आदिने अनेक सुन्दर काव्य-नाटक लिखे हैं। पर जहाँ अुनके काव्य-नाटकोंकी अपनी विशेषताअें हैं, वहीं अुनकी कुछ दुर्बलताअें भी हैं। सामूहिक रूपसे अुनके नाटकोंके संबंधमें यह कहा जा सकता है कि अुनमें काव्यत्व ही अधिक है, नाटकत्व कम; अुनमें अन्तर्जीवनका चित्रण भले ही कुशलतासे हुआ है, युग-जीवनकी झलक कम ही मिलती है। कुछ नाटकोंमें युग-जीवनका प्रतिबिंब मिलता भी है, तो बहुत ही सूक्ष्म और प्रतीकात्मक रूपमें। साथ ही अुनकी कलात्मकता अेवं साहित्यिकताका धरातल अितना अूंचा है कि सर्वसाधारण अुन्हें समझकर आनन्द नहीं ले सकते। कुछ कवियों जैसे पंत, माथुर, भट्ट आदिकी भाषा संस्कृतनिष्ठ है और सर्वसाधारणके लिअे बोधगम्य नहीं है। अिनके कथनोपकथन भी बड़े लम्बे-लम्बे और मनको अुबानेवाले होते हैं। श्री सिद्धनाथ कुमारने अपने रेडियो-काव्य-नाटकोंको अिन दुर्बलताओंसे मुक्त रखकर हिन्दी-काव्य-नाटकोंको अेक नअी दिशा दी है।

श्री सिद्धनाथ कुमारके काव्य-नाटकोंमें जहाँ काव्यत्व अेवं नाटकत्वका मणि-कांचन संयोग है, वहाँ अुनमें कलात्मकता अेवं शिल्प-सौष्ठव भी प्रचुरतासे है। किन्तु अिस क्षेत्रमें हम अुनकी सबसे बड़ी विशेषता यह मानते हैं कि अुन्होंने अपने काव्य-नाटकोंमें अपने युगको वाणी दी है। अुनके नाटकोंसे यह स्पष्ट होता है कि वे अपने युगके जागरूक कलाकार हैं। वे अन्यान्य काव्य-नाटकोंकी तरह अपने कथानकोंके लिअे न अितिहास-पुराणके पन्ने अुलटते हैं, न कल्पनाके स्वप्निल लोकमें विचरण ही करते हैं, बल्कि वे जिस युग और समाजमें हैं, अुसीकी समस्याओं अेवं अुसीके चित्रोंको अपने काव्य-नाटकोंमें अुपस्थित करते हैं। अपने प्रथम प्रकाशित काव्य-नाटक 'कवि' में अुन्होंने कविके अुत्तरदायित्वका यही प्रश्न अुठाया है। स्वयं अुनके शब्दोंमें—'कविकी यह समस्या कि वह जनजीवनसे निरपेक्ष स्वप्निल नील गगनमें ही आनन्दसे विचरण करे अथवा युगकी अस्त-व्यस्त परिस्थितियोंके प्रति जागरुक होकर अुनके पुनर्निर्माणका प्रयत्न करे, बहुत महत्वपूर्ण है।' लेखकने अिस महत्वपूर्ण समस्याका समाधान कविके जागरूक व्यक्तित्वमें ही ढूंढ़ा है। अिस प्रकार 'कवि' में काल्पनिकतापर वास्तविकताकी विजय प्रदर्शित की गअी है।

'सृष्टिकी साँझ और अन्य काव्य-नाटक' में संग्रहित पाँचों काव्य-नाटकोंमें कविने अपने युगकी समस्याओंको ही चित्रित किया है। 'सृष्टिकी साँझ' में अुसने युद्ध-समस्याको अपना विषय बनाया है। हम शांतिका नाम लेकर युद्धमें प्रवृत्त होते हैं, लेकिन हाथ लगती है सदा अशांति ही। नाटककारने बतलाया है कि युद्ध होते हैं–नेताओंकी अनुदार नीति अेवं अहम्-भावनाके कारण। नाटकके पात्र अजयके शब्दोंमें—

था मेरा अहम् सदा
मुझसे कहता रहता,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केवल मैं ही हूँ सत्य,
और सब मिथ्या है।
औरोंके कर्म, विचार
मात्र भ्रम हैं, मिथ्या हैं निराधार !
मैं यही चाहता था,
सब मेरी राह चलें,
मेरे विचार ही अपनाअें,
मेरे पद चिन्होंपर आअें !

युद्ध-समस्याके संबंधमें लेखकका निष्कर्ष है कि 'जबतक मानवके अन्तरमें रहनेवाला दानवत्व नहीं मरता, जबतक अेकाधिकार अेवं स्वार्थ-भावनाका नाश नहीं होता, तबतक संसार युद्ध-मुक्त नहीं हो सकता, क्यों कि--

मानवताकी आशा है केवल सत्य प्रेम !
मानवताके संबल हैं केवल न्याय, क्षमा !

'**लौहदेवता**' में यंत्रकी समस्या है। मनुष्योंने सुख-सुविधाओंकी आशामें अिस यंत्र-युगको जन्म दिया था, किन्तु आज चारों ओर भूख, प्यास, बेकारी, महामारी आदिके दृश्य देखनेको मिलते हैं। अिस नाटकमें यंत्र-युगके विकासका चित्र अुपस्थित करते हुअे कविने यह स्पष्ट करनेका प्रयत्न किया है कि समाजके दुःखोंका अुत्तरदायित्व यंत्रोंपर नहीं, स्वयं मानव-समाजपर है। लौहदेवताने कहा है--

देखो, ढूंढ़ो,
क्षुधा-तृषा, अगणित क्लेशोंका
मूल कहाँ है ?
वह यंत्रोंमें नहीं,
तुम्हारे ही समाजमें !
मत आघात करो तुम मेरे वरदानोंपर।
अुनका कोअी पाप नहीं है।
शक्ति-साधना करो युक्तिसे,
युग-युगतक तुम सुखी रहोगे !

'**संघर्ष**' अेक बहुत ही प्रभावशाली नाटक है। यह आजके अेक कलाकारके अन्तः-संघर्षपर आधारित है। कलाकारके मनमें अेक द्वन्द्व है—वह अपने पारिवारिक जीवनको सुखी बनानेके लिअे धनोपार्जनकी चिन्ता करे या अुससे विरक्त होकर अपनी कला-साधनामें लगा रहे ? अिस काव्य-नाटकमें कलाकार पंकजका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण बड़ा सुन्दर बन पड़ा है। '**विकलांगोंका देश**' में हमारे समाजकी कटु आलोचना है। नाटककारका कहना है कि हमारा समाज अन्धों, लँगड़ों, लूलों, बौनों आदिका ही देश है, जिसमें मनुष्यको अपनी शक्तियोंको पूर्णरूपेण विकसित करनेका अवसर नहीं मिल पाता। '**बादलोंका शाप**' अेक प्रतीकात्मक नाटक है, जिसमें यह पूछा गया है कि आजके जनसमुदायके कष्टोंका कारण क्या है--भाग्यका लेख ? या प्रकृतिका शाप ? या व्यक्ति या वर्ग विशेषके कर्मोंका फल ? अन्तमें अुत्तर दिया गया है कि वास्तविक कारण 'मानव-निर्मित वैषम्य' ही है।

तात्पर्य यह कि सिद्धनाथ कुमारके काव्य-नाटकोंमें हमारे युग अेवं समाजकी अनेक समस्याओंका विवेचन है। अिन्हें देखकर यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि सामाजिकता अितने प्रखर रूपमें पहली बार अिन्हींके काव्य-नाटकोंमें अुभरकर आअी है। अिन नाटकोंमें अनेक समस्याअें आअी हैं, और यह प्रश्न अुठ सकता है कि काव्य-नाटकके माध्यमसे अुनका अंकन कहाँतक सफल ढंगसे हो सका है। ध्यानसे देखनेपर सिद्धनाथ कुमारके काव्य-नाटकोंकी यह विशेषता ही कही जाअेगी कि अुनमें अंकित समस्याअें काव्य-नाटकके स्वरूप-विधानपर अूपरसे आरोपित नहीं मालूम पड़तीं। लेखक जानता है कि जीवनके किन प्रसंगोंको गद्यमें व्यक्त करना चाहिअे। अिसीलिअे '**संघर्ष**' के कुछ प्रसंगोंको अुसने गद्यमें ही लिखा है।

काव्य-नाटकोंमें यदि समस्याओंका केवल बौद्धिक विवेचन ही रहे, वे पूर्णतः असफल कहे जाअेंगे। काव्य-नाटकोंमें रागात्मकता और मनुष्यके अन्तर्जीवनका विशेष स्थान होना चाहिअे। सिद्धनाथ कुमारने अपने काव्य-नाटकोंमें मानव-हृदयके राग-विरागों, आशा-आकांक्षाओंकी अभिव्यक्ति भी बड़ी मार्मिकताके साथ की है। अुदाहरणके लिअे, युद्ध-विषयक समस्यामूलक नाटक 'सृष्टिकी साँझ' में भी अजय, महामात्य, सेनानायक, और रेखाकी आन्तरिक हलचल देखी जा सकती है अुनकी बुद्धिकी ही नहीं, हृदयकी भी वाणी सुनी जा सकती है। अिनके काव्य-नाटक जीवनके समीप हैं,—जीवनके निकट, यानी बुद्धि और हृदय दोनोंके समीप। जहाँ अेक ओर ये हमें अपने युगकी दाहक समस्याओंपर सोचनेको बाध्य करते हैं, वहीं दूसरी ओर हृदयको स्पर्श करनेकी पर्याप्त शक्ति भी अिनमें है। हाँ यह विशेषता सभी नाटकोंमें समान रूपसे है, अैसा नहीं कहा जा सकता।

सिद्धनाथ कुमारके काव्य-नाटकोंमें प्रभावोत्पादकता भी पर्याप्त मात्रामें है। अिसका कारण यह है कि अिनके कथानक-प्रधान नाटकों, जैसे '**सृष्टिकी साँझ**',

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'संघर्ष' के कथानक बड़े हीं सुसंगठित और सुसम्बद्ध हैं। हिन्दीके अन्यान्य काव्य-नाटककारोंकी रचनाओंमें यह विशेषता कम ही मिलती है। सिद्धनाथजीके कुछ नाटक, जैसे **'लोहदेवता'**, **'विकलांगोंका देश'** विचार-प्रधान कहे जाअेंगे, पर अिनकी भी विशेषता अिस बातमें है कि अिनमें विचारोंकी सुसम्बद्धता है, अेक निश्चित बिन्दुसे अिनका प्रारम्भ होता है, अेक निश्चित बिन्दुपर अिनका अन्त। अिसीलिअे पाठकोंपर अेक निश्चित प्रभाव छोड़नेकी अिनमें अद्भुत क्षमता है।

सिद्धनाथकुमारने अपने नाटकोंमें नअे प्रयोग भी किअे हैं। 'लोहदेवता', 'विकलांगोंका देश' आदिमें अिन्होंने व्यक्तियोंको पात्र न बनाकर जनसमुदायको ही पात्र-रूपमें अुपस्थित किया है। 'विकलांगोंका देश' में जब पात्र कहते हैं—

पुरुष-स्वर १—मैं लंगड़ा हूँ!
स्त्री—स्वर —मैं अन्धी हूँ!
पुरुष-स्वर २—मैं लूला हूँ!
पुरुष-स्वर ३—मैं बौना हूँ!
पुरुष-स्वर ४—मैं हूँ कुरूप!
सब — हम सब कुरूप!

तो ज्ञात होता है, जैसे अुनकी वाणीमें आजकी अुत्पीड़ित मानवता ही बोल अुठती है। हिन्दी काव्य-नाटकोंके क्षेत्रमें सचमुच यह अेक नया और सफल प्रयोग है। दूसरा प्रयोग पात्रोंके मानसिक द्वन्द्वके चित्रणमें देख सकते हैं। **'सृष्टिकी साँझ'** में लेखकने सेनानायक और अुसके मनके बीच कथनोपकथन करा कर सेनानायककी मानसिक हलचलको बड़ी कुशलतासे अंकित किया है। **'संघर्ष'** में तो प्रारम्भसे लेकर अन्त तक पंकज और अुसके मनका ही संघर्ष अंकित है। 'सृष्टिकी साँझ' में आया स्वप्न-दृश्य भी अेक सुन्दर प्रयोग ही कहा जायगा।

कथनोपकथन भी अिनके सभी नाटकोंमें बड़े सशक्त अेवं भावानुरूप हैं। वे अुत्तर-प्रत्युत्तरके रूपमें आअे हैं। अुनमें गति है, प्रवाह है, जिससे कहीं भी अेकरसता नहीं आने पाती।

सिद्धनाथकुमारके काव्य-नाटकोंकी बहुत बड़ी विशेषता है, अुनकी सहज बोधगम्यता। जनसामान्यकी बोलचालकी भाषाको ही अुनमें व्यवहृत किया गया है। यह निश्चित रूपसे कहा जा सकता है कि ये नाटक केवल साहित्यिकोंके लिअे नहीं, सर्वसाधारणके लिअे लिखे गअे हैं। अिनकी प्रसाद-गुण-सम्पन्न भाषामें लय है, प्रवाह है, भावाभिव्यंजनाकी शक्ति है, सामाजिक कटुताओंपर व्यंग्य करनेकी क्षमता है। व्यंग्यका अेक अुदाहरण 'विकलांगोंका देश' से दिया जा सकता है। कुछ बेकार लोग अिंटरव्यूके लिअे अेक स्थानपर आअे हुअे हैं, वहीं वे बातचीत करते हैं—

माधव—जाकर पूछो,
बज गअे चारसे भी ज्यादे,
कब अिंटरव्यू शुरू होगा?
अब्दुल—भाअी गिरधर,
माचिस तो मुझे जरा देना।
सब—माचिस?
अब्दुल—देखते नहीं?
बहुमूल्य समय
हाथोंसे निकला जाता है!
अपनी-अपनी सिगरेट जला
दो कश खींचो,
कुछ धुआँ अुड़े,
जिसकी लहरोंपर
मूल्यवान यह समय तिरे!
माधव—तुम हँसते हो!
मैं कहता हूँ,
बहुमूल्य यह समय
नहीं तुम्हारा ही केवल।
यह तो समाजका भी धन है!
अब्दुल—हम सब समाजके ही धन हैं!
सब—[हँसी]

सिद्धनाथकुमारको रेडियो-टेकनीककी अुत्तम जानकारी है। वे अुसकी सीमाओं और संभावनाओंसे भली-भाँति परिचित हैं। अिस विषयपर 'रेडियो-नाट्य शिल्प' नामसे अुनकी अेक पुस्तक भी प्रकाशित हो चुकी है। यही कारण है कि रेडियो द्वारा प्रदत्त सुविधाओंका वे कुशलतापूर्वक अधिकाधिक अुपयोग करनेमें सफल हो सके हैं।

हिन्दीके काव्य-नाटक-साहित्यको समृद्ध करनेवाले कलाकारोंमें श्री सिद्धनाथकुमारका स्थान सचमुच बहुत ही महत्वपूर्ण है। अिनके काव्य-नाटक 'काव्य-नाटक' के स्वरूप-विधानकी सार्थकता सिद्ध करनेमें पूर्णतः सफल हैं। जन-जीवनकी समस्याओं, भावनाओं अेवं अनुभूतियोंको जन-जीवनकी ही भाषामें प्रभावोत्पादक ढंगसे अभिव्यक्त करनेवाले अिनके काव्य-नाटकोंका हिन्दी-काव्य-नाटकोंके क्षेत्रमें विशिष्ट स्थान रहेगा।

—प्रो० रामचरण महेन्द्र, अेम. अे.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

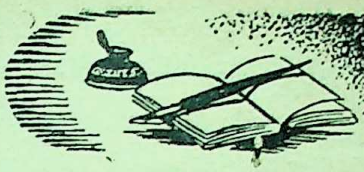

संपादकीय

श्रद्धांजलियाँ !

* भारतके चार महान् सुपुत्र विद्वद्रत्न अिन चन्द दिनोंके दरमियान अचानक हमारे बीचसे अुठ गअे। तीनों आधुनिक युगके महारथी थे। विज्ञानके क्षेत्रमें अेक अनुभवी विज्ञान महारथी डॉ० मेघनाद साहा। आप विश्वविख्यात विज्ञानाचार्य थे। संसारके महान् वैज्ञानिकोंने आपके 'थर्मल आयोनाअीजेशन' नामक सिद्धांत का लोहा माना और जिसके द्वारा सूर्य और नक्षत्र लोकके अनेक चमत्कारोंका रहस्य मालूम हुआ--अेक महान् आविष्कार है। भारत, यूरोप, अमेरिका तथा अेशियाकी अनेक वैज्ञानिक अुच्च संस्थाओंके साथ आपका सम्बन्ध था। भारतके हजारों वैज्ञानिक छात्रोंने अपने अिस श्रद्धास्पद, शिष्यवत्सल गुरुसे अनेक वैज्ञानिक अनुसन्धानों और शोधोंमें ज्ञान-विज्ञानकी किरणें प्राप्त कीं। अपने जीवनके अनेक संघर्षों और आघातोंके बीच ६३ की अुम्र तक की हुअी प्रखर साधनाने डॉ० मेघनाद साहाको विश्वके विज्ञान-चक्र-चूड़ामणियोंमें अेक महान् पदपर आसीन कराया। आपके असामयिक निधनसे वैज्ञानिक जगत्की बहुत बड़ी क्षति हुअी।

* भारत प्रतिभाओंका देश है। अिस देशमें प्रतिभा सम्पन्न महान् पुरुष सदैव जनताके श्रद्धास्पद रहे और जनताके मार्गदर्शक। आचार्य नरेन्द्रदेवजी अैसे ही सच्चे अर्थोंमें प्रतिभा सम्पन्न आचार्य थे। अति दुःखका विषय है, भारतके आधुनिक गाँधीयुगके सबसे बड़े समाजवादी पंडित, शिक्षा-शास्त्री आचार्य नरेन्द्रदेवजी, अिस समय जब कि देशको अुनकी आवश्यकता थी, असमयमें ही, दक्षिण भारतके कोयम्बत्तूरमें, १९ फरवरीको, केवल ६७ वर्षकी अुम्रमें परलोकके लिअे प्रस्थान कर गअे। तबियत आपकी बहुत दिनोंसे बिगड़ी हुअी थी। दमेसे पीड़ित थे। अपना अिलाज करानेके हेतु और कुछ समय तक पूर्ण आराम करनेके लिअे कोयम्बत्तूरसे ५५ मील दूर ओरोड़के विश्रान्तिगृह (रेस्ट-हाअूस) में वे निवास कर रहे थे। आचार्य नरेन्द्रदेवजीका सारा जीवन देशकी आजादीके लिअे आराम हराम है, अिस प्रकारकी कठोर कर्मठ साधनामें, आजादीकी लड़ाअीमें, अेक महान् अूँची हिम्मतवाले वीर योद्धाकी तरह बीता। भारतके स्वातन्त्र्य-संग्रामके महान् अहिंसक सेनानी राष्ट्रपिता गांधीने अंगरेजी राज्यके निरंकुश रौलट अेक्ट और अमृतसरके जलियाँवाला बागके राक्षसी हत्याकाण्डके बाद असहयोग-आन्दोलनका शंखनाद किया तो १९२१ और १९३०-३१ में, देशके हजारों लाखों आजादीके दीवाने भारतपुत्र जेल गअे। नरेन्द्रदेवजी भी दो-तीन बार जेल गअे। अेम. अे., अेल. अेल. बी. पास अच्छी औसतके वकील नरेन्द्रने बढ़िया कमाअीकी वकालतको ठोकर मार दी थी। गांधीजीने आचार्य नरेन्द्रदेवजीमें त्याग, तपस्या, लगन, कर्मठता, संगठन करनेकी असाधारण क्षमता और प्रतिभा देखी। देशभक्त स्व.बाबू शिवप्रसाद गुप्त द्वारा स्थापित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी विद्यापीठ–अुन दिनों राष्ट्रका बहुत अूंचा राष्ट्रीय विद्यापीठ–बनारसमें स्थापित हुआ, जिसका आचार्यपद स्व. नरेन्द्रदेवजीने ग्रहण किया और तब भारतकी स्वतन्त्रताके संग्राममें सरफरोशीकी सच्ची तमन्ना दिलमें लेकर अगणित युवक भारतके कोने-कोनोंसे आकर आचार्यजीके अन्तेवासी बने और आजादीकी लड़ाअीकी शिक्षा पाअी, समाजवादका दर्शन पाया और स्वातंत्र्य-संग्रामके मैदानमें कूद पड़े। देशके जिस किसी महान् कार्यको आपने अपने हाथमें लिया अुसमें आपने अपनी खरी निष्ठा, श्रद्धा, योग्यता, अीमानदारी तथा देशभक्तिका परिचय पद-पदपर दिया। ज्ञान-विज्ञानके वे आचार्य थे और अँग्रेजी, संस्कृत, पाली-प्राकृत, फारसी, अुर्दू, बंगला, गुजराती आदि अनेक भाषाओंके शास्त्री थे। हिन्दी साहित्यको आपकी कुछ अनमोल देन है––बौद्ध वाङ्मयके 'अभिधर्म कोश' का अनुवाद, समाजवादका सर्वांगीण शास्त्रीय विवेचन करनेवाला ग्रन्थ 'समाजवाद' तथा आचार्यके अनेक लेख, भाषण, प्रवचन और चर्चाअें हिन्दीकी निधि हैं। अितना महान् विद्वान् और समाजवादी नेता; किन्तु निरहंकार, नम्र, निर्मल बुद्धि, निर्मल हृदय और निर्मल चरित्रका व्यक्तित्व था आचार्य नरेन्द्रदेवजीमें। भारतके प्रधान-मन्त्री बननेकी क्षमता रखते हुअे भी किसी पद और पदाधिकारके प्रलोभनसे वे जीवनभर कोसों दूर रहे। स्व० आचार्यकी गुणावलीका वर्णन कहाँ तक किया जाय। आपकी असामयिक मृत्युसे स्वतन्त्र भारतकी जो हानि हुअी है अुसकी पूर्ति होना बहुत मुश्किल है।

* अभी-अभी आचार्य नरेन्द्र देवजीके निधनकी शोक छाया दूर भी नहीं हुअी थी कि दादासाहब श्री मावलनकरजीके देह-त्यागका समाचार सुनकर बड़ी व्यथा हुअी। अुस व्यथाको राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसादसे लेकर लक्ष-लक्ष भारतीय जनताने अवसन्न, साश्रु और गद्गद् होकर गहराअीके साथ महसूस किया। सत्ताअीस फरवरीके सबेरे सात बजकर पचपन मिनटपर, भारतीय लोकसभाके अध्यक्ष गणेश वासुदेव मावलनकरजी अिस लोकको छोड़कर महारथी पार्थके सारथी गीता-गायक श्रीकृष्णके अुस धामको चले गअे, जहाँसे यद्गत्वा न निवर्तन्ते! समस्त भारत शोक संविग्न मानस हो गया और सारे भारतके नेताओंने श्रद्धांजलियाँ अर्पित कीं। गत ९ फरवरीसे श्री मावलनकर हृदयरोगसे पीड़ित थे। चिकित्सा शुश्रूषा हो ही रही थी, समाचारपत्रोंमें नितप्रति सुबह-सबेरे स्वास्थ्यमें सुधारके आशाप्रद कुछ समाचार भी आते। पर मामूली सुधारके पश्चात् २७ फरवरीको, आपका ६८ वर्षकी आयुमें, निधन हो गया। सारे देशमें शोक, समवेदना और सहानुभूति सूचक वातावरण छा गया। विद्वत्ता, वाग्मिता, अुदारता, सौम्यवृत्ति, और शील-चारित्र्यकी दादासाहब मावलनकर प्रत्यक्ष मूर्ति थे। आज अुनके लिअे सारा भारत शोकाकुल है। भारतके प्रधान-मंत्री पंडितजीने श्री मावलनकरको भारतीय लोकसभाका पिता कहा है, समाजवादी नेता श्री अशोक मेहताने अुन्हें गुजरातके गौरव "आधुनिक अहमदाबादका शिल्पकार" कहकर सम्मानित किया है। अहमदाबादके ३०–४० सहस्र जिनमें २ हजार महिलाअें भी थीं, नागरिकोंने अिस दिन सायंकालकी वेलामें पवित्र साबरमतीके तटपर सप्तर्षि-आश्रमके समीप साश्रु गद्गद् गिराकर साबरमती जलकी निवापांजलि समर्पित की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराष्ट्रीय होकर भी सारे भारतमें अुन्होंने गुजरातका गौरव बढ़ाया और सारे भारतकी अन्तर-प्रान्तीय अेकताको मजबूत बनानेमें अपना जीवन अर्पित किया। महात्मा गाँधीने १९१४ में, दक्षिण आफ्रिकासे आकर अहमदाबादके समीप साबरमती-आश्रमकी स्थापना की और सारे भारतको अपने सत्य-अहिंसा, और शान्तिके रचनात्मक प्रयोगोंका अहमदाबादको शक्ति-केन्द्र बनाया। और तबसे श्री मावलनकरजी भारत देशके महान नेता गाँधीके मार्गदर्शनमें अुनके निर्दिष्ट पथपर आस्था-निष्ठापूर्वक चल पड़े और १९५६ की फरवरीकी २७ वीं ता० तक अुसी सर्वोदय पथपर चलते रहे। यह भारत देश अुन्हें कोंकणस्थ या महाराष्ट्रीय, बड़ोदावाला, अहमदावाला, रत्नागिरीकी आबहवामें पालित-पुष्ट होनेवाला नहीं मानता, भाषा और भौगोलिक क्षुद्र-क्षुद्र सीमाओंसे अति दूर मानवताके पुजारी और मानवताके झरने प्रवाहित करनेवाले महामानवके रूपमें पूजता रहा और भविष्यमें अुन्हें पूजेगा।

* नागपुरके ७५ वर्षके विद्वद्रत्न भाअूजी दफ्तरीका निधन भी देशकी अेक भारी क्षति है। वेद, वेदांग शास्त्रोंके प्रगाढ़ विद्वान दफ्तरीजीकी महिमा असाधारण थी। अुनका शास्त्रोंका गहन पाण्डित्य बालकी खाल निकालनेमें अेक क्षणके लिअे व्यर्थ नहीं गया। गान्धीजीने, १९३०-३१ में यरवडा जेलमें हरिजनोंके लिअे जो प्रसिद्ध अैतिहासिक 'आमरण अुपवास' किया था तब दो धुरन्धर संस्कृत शास्त्रोंके दिग्गज पण्डित क्रान्तिकारी तर्कतीर्थ लक्ष्मण शास्त्री जोशी और नागपुरके डॉ. भाअूजी दफ्तरी, दोनोंने शास्त्रोंके बड़े-बड़े प्रमाण सिद्धान्त रूपमें पेशकर कट्टरपंथी दुराग्रही शास्त्रियोंको ललकारा था जिससे गान्धीजी और महामना मालवीयजी महाराज बड़े प्रभावित हुअे थे। वयोवृद्ध डॉ. दफ्तरीकी अेक सबसे बड़ी विशेषता थी और अुस विशेषताकी अेक गहरी महिमा सर्वत्र थी कि वे अेक बहुत बड़े पहुँचे हुअे, अुच्च कोटिके प्राकृतिक चिकित्साशास्त्री भी थे। सैकड़ों-हजारों निराश रोगियोंको आपने अपनी विशिष्ट प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणालीसे अच्छा किया और अुन निराशोंके दिलोंमें जीवनकी आशाको पुष्ट किया, रोगी रोगमुक्त हुअे-स्वस्थ हुअे। अिस वर्तमान १९-२० वीं सदीकी सभ्यता और चिकित्सा प्रणालीको डॉ. दफ्तरी सदैव मानवजातिकी आब-हवा और अुसकी तन्दुरुस्तीके लिअे घातक मानते थे। दुख, दारिद्र्य, दोष, रोगकी जननी माना है अिसे अुन्होंने। सतत परिश्रम, चिन्तन, मनन और अपने गहरे पानी पैठके अनुभवोंसे संयमशील सात्विक प्राकृतिक चिकित्साको डॉ. दफ्तरीजीने अूपर अुठाया। हम जब अुनके चरण सान्निध्यमें बैठे तो कहने लगे, शर्माजी, सादगी ही हम-भारतीयोंके लिअे आवश्यक है। विलासिताकी चीजोंने और साज-सामानने ही हमारे राष्ट्रीय स्वास्थको जोरका धक्का मारा है और भारतीयोंको नाना रोग, दोष और दुःख-दारिद्र्यने चारों ओरसे घेर लिया है। हम भारतीयोंमें मानसिक विकार– स्वार्थ, खुदगरजी, अभिमान, अीर्ष्या, द्वेष, अनुदारता, असहिष्णुता, क्रोध, आत्मश्लाघा, परनिन्दा आदि दोष बढ़ गअे हैं। निराडम्बर डॉ. दफ्तरीने अैलोपैथी–पाश्चात्य चिकित्सा प्रणालीको दूषित अेवं हानिकारक बताया। कम्बख्त आधुनिक फैशनने अपनी फिजूलखर्चीसे भरी गुलामीकी श्रृंखलामें हम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीयोंको जकड़ लिया है। वे सरल, सात्विक, संयमी जीवनके प्रवर्तक थे। गान्धी, टालस्टाय और लुअी कूनेकी कोटिके महान् पुरुष थे। डॉ. दफ्तरीकी कद्र नहीं की स्वतंत्र भारतके भाग्य विधाताओंने। हमारे यहाँ किसीकी मौतके बाद अुसकी कद्र होती है और हम अुसकी गुणावलियाँ गाते हैं।

आर्यभाषा-पुस्तकालयकी सहायता :

जो भाषा भारतकी राष्ट्रभाषा, राजभाषा कहलाने योग्य बन रही हो अथवा बनाअी जा रही हो, अिसके लिअे जिस संस्थाने लगातार ५० वर्षतक भगीरथ प्रयत्न किअे हैं, वह संस्था हमारी श्रद्धास्पदा काशी नागरी प्रचारिणी सभा है। अुसने कितना महान् पुष्ट अेवं अुच्च साहित्य हिन्दीमें प्रकाशित किया है, अपने महान् आदर्शकी रक्षाके लिअे अनेक घात-प्रतिघातों, और संकट-संघर्षोंका सभाने सामना किया है और अुसके सेवकोंने अपना जीवन-रक्त अुसकी नींवमें सिंचन किया; अिस बातको भारतका प्रत्येक हिन्दी-प्रेमी जानता है।

नागरी प्रचारिणी सभा काशीका अपना अेक बहुत बड़ा पुस्तकालय है। बहुत बड़ा पुस्तकालय आर्यभाषा-पुस्तकालय ! अिसने हिन्दीके प्रचार और प्रसारमें अत्यन्त प्रशंसनीय काम किया है। हिन्दी साहित्यके सब अंगोंकी पुष्टि की है। अुसने हजारों-लाखोंको राष्ट्रभाषाका प्रेमी बनाकर छोड़ा है। आज अिस विशाल पुस्तकालयको आर्थिक सहायताकी अत्यन्त आवश्यकता है कि वह स्वतंत्र महान् भारत देशका अेक महान् आदर्श पुस्तकालय शीघ्र ही बने। जनता तो अुसे सब प्रकारकी सहायता देगी ही; किन्तु अिस काममें सहायताका हाथ बटानेके लिअे आगे बढ़ना और तुरन्त बढ़ना चाहिअे हमारी अुत्साहशीला केन्द्रीय सरकारको और राज्य सरकारोंको जो भाषा, साहित्य, कला और संस्कृतिके विकास और पोषणके नामपर करोड़ोंके खर्चका बजट बनाती हैं और पानीकी तरह धनको बहाती हैं। भारत सरकार और विभिन्न राज्य सरकारें नागरी प्रचारिणी सभाकी दिल खोलकर मुक्त-हस्त होकर तुरन्त आर्थिक सहायता करें। वे अिस अवसरपर अपनी गुणग्राहकताका परिचय दें। हमारा दृढ़ विश्वास है, अगर काशी नागरी प्रचारिणी सभाके कर्मठ निष्कामव्रती सेवकगण जिन्होंने निस्वार्थ सेवाभावसे ही सभाको अितना अूँचा अुठाया है, वे भारतकी बड़ी सरकार और विभिन्न राज्य सरकारोंसे, अिसी वित्तीय वर्ष १९५६-५७ में आर्थिक सहायता प्राप्त कर लें और अुनकी योजनाकी पूर्तिके लिअे १० लाख रु. मिल जाअें, तो बहुत अधिक सफलताके साथ आर्यभाषा-पुस्तकालय समुन्नत हो सकेगा। हम चाहते हैं कि वह वैसा समुन्नत हो जैसा सभा चाहती है। हम अिस ओर भारत सरकार और राज्य सरकारोंका ध्यान आकर्षित करते हैं कि वे बहती गंगामें हाथ पखार लें। भारतके अैतिहासिक स्मरणीय अेवं दर्शनीय स्थलोंमें राजभाषा-राष्ट्रभाषाका यह प्राचीनतम पुस्तकालय भी अेक अुच्च श्रेणीका आदर्श पुस्तकालय गिना जाने लगे यह हमारी हार्दिक बलवती अिच्छा है।

—ह० प्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत सरकारके व्यापार और अुद्योग मन्त्रालय
द्वारा प्रकाशित

'अुद्योग व्यापार पत्रिका'

* अुद्योग और व्यापार सम्बन्धी प्रामाणिक जानकारी युक्त विशेष लेख, भारत सरकारकी आवश्यक सूचनाअें, अुपयोगी आँकड़े आदि पत्रिकामें प्रति मास दिये जाते हैं।
* डिमाअी चौपेजी आकारके ६०-७० पृष्ठ: मूल्य केवल ६ रुपया वार्षिक।
* अेजेंटोंको अच्छा कमीशन दिया जाअेगा। पत्रिका विज्ञापन देनेका सुन्दर साधन है। ग्राहक बनने, अेजेन्सी लेने अथवा विज्ञापन छपानेके लिअे नीचे लिखे पतेपर पत्र भेजिअे:-

सम्पादक,
अुद्योग व्यापार पत्रिका,
व्यापार और अुद्योग मन्त्रालय, भारत सरकार,
नअी दिल्ली।

'आर्थिक समीक्षा'

(अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटीके आर्थिक-राजनीतिक-अनुसंधान-विभागका पाक्षिक पत्र)

प्रधान सम्पादक : आचार्य श्रीमन्नारायण अग्रवाल
सम्पादक : श्री हर्षदेव मालवीय

हिन्दीमें अनूठा प्रयास, आर्थिक विषयोंपर विचारपूर्ण लेख, आर्थिक सुझावोंसे ओतप्रोत भारतके विकासमें रुचि रखनेवाले प्रत्येक व्यक्तिके लिअे अत्यावश्यक, पुस्तकालयोंके लिअे अनिवार्य रूपसे आवश्यक।

वार्षिक चन्दा ५ रु. अेक प्रतिका साढ़े तीन आना

व्यवस्थापक, प्रकाशन-विभाग,
अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी,
७, जंतर-मंतर रोड, नअी दिल्ली

राजनीति, साहित्य और संस्कृतिका
विचार-प्रधान साप्ताहिक

"सारथी"

पंडित द्वारकाप्रसाद मिश्र
(भूतपूर्व गृहमंत्री, मध्यप्रदेश) के संपादकत्वमें
२६ जनवरी, १९५४ से प्रति सप्ताह
नियमित प्रकाशित हो रहा है।

मूल्य अेक अंक ।) वार्षिक १२)

आप भारतके किसी भी प्रदेशमें रहते हों "सारथी" का अेक अंक भी हाथ लग जानेपर आप अुसे प्रति सप्ताह पढ़ना चाहेंगे। आज ही निम्नलिखित पतेपर पत्र-व्यवहार कीजिअे।

भारतके हरेक शहरमें 'सारथी' की अेजेंसी हम देना चाहते हैं। आजही अपना आर्डर भेजिअे।

पत्र-व्यवहारका पता:--व्यवस्थापक 'सारथी'
धरमपेठ, (अेक्सटेन्शन) नागपुर [म. प्र.]

मध्यप्रदेशका श्रेष्ठ हिन्दी दैनिक

"युगधर्म"

जिसमें साहित्यिक, धार्मिक, आर्थिक व राजनीतिक अेवं अन्यान्य विषयोंपर विद्वानोंके लेख, कहानियाँ, बच्चोंके लिअे "बाल भारत", रजतपटपर, आदि अुत्कृष्ट स्तंभोंके अतिरिक्त स्त्रियोंके लिअे "नारी जगत्" का विशेष स्तंभ भी है।

"दैनिक युगधर्म" का वार्षिक शुल्क २६ रु. अर्धवार्षिक १३॥, तथा तिमाही ७ रु.।

रविवासरीय युगधर्म

वार्षिक रु. ६॥ अर्धवार्षिक रु. ३॥

पता:— व्यवस्थापक,
दैनिक युगधर्म, रामदासपेठ, नागपुर-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य, समाज और संस्कृति तथा राजनीतिक, अर्थनीतिक और नैतिक विषयोंपर यदि आप स्वतंत्र विश्लेषणात्मक रचनाअें पढ़ना चाहें, तो--

हिन्दीका स्वतंत्र-मासिक

"नया समाज"

मँगाअिअे।

संचालक : नया समाज-ट्रस्ट,

संपादक : मोहनसिंह सेंगर।

वार्षिक चन्दा ८) : अेक प्रतिका ।।।)

व्यवस्थापक--'नया समाज'

अिन्डिया अेक्सचेंज, तीसरा मजला

कलकत्ता-१

साहित्य, संस्कृति, ग्राम-सुधार तथा कलाकी प्रमुख हिन्दी मासिक पत्रिका

'भारती'

प्रबन्ध संपादक :

श्री हरिहरनिवास द्विवेदी

विशेषताअें : हिन्दी जगत्के श्रेष्ठतम् साहित्यिकों की सुरुचिपूर्ण रचनाअें।

आकर्षक गेटअप, सुन्दर छपाअी

पृष्ठ सं० १००

— आजही अपनी माँग लिखें —

वार्षिक मूल्य ८) अेक प्रति १) रु०

'भारती' सराफा : ग्वालियर

जैन जगत

(भारत जैन महामण्डलका मासिक पत्र)

जैन जगतमें आध्यात्मिक, सांस्कृतिक लेखोंके अतिरिक्त जनजागरणके लेख, कविताअें, कहानियाँ, तथा सामाजिक समस्याओंपर विविध दृष्टि-कोणोंको व्यक्त करते हुअे अधिकारी विद्वानोंके विद्वत्तापूर्ण विचार प्रतिमाह दिअे जाते हैं।

आज ही 'जैन जगत' के ग्राहक बनकर, तथा दूसरोंको ग्राहक बनाकर पत्रकी अुन्नतिमें सहायता कीजिअे।

विज्ञापन देकर लाभ अुठाअिअे।

वार्षिक शुल्क—मात्र चार रुपये

व्यवस्थापक—"जैन जगत"

जैन जगत कार्यालय, वर्धा (म. प्र.)

'वासन्ती'

सचित्र मासिक पत्रिका

वार्षिक शुल्क १० रु० : अेक अंकका १ रु०

अिसके प्रत्येक अंकमें :—

१. मनोहर सरस नाटिका, कहानियाँ, पत्र, सांस्कृतिक प्रवचन, ज्ञानवर्द्धक निबन्ध, साहित्य-समीक्षा और ज्ञानवर्धक सामग्री प्राप्त होगी।

२. यह सामग्री गंभीर, चिन्तनात्मक, भावात्मक, विनोदात्मक तथा व्यंग्यात्मक भाव-शैलियोंमें मिलेगी।

३. अितिहास, काव्य, धर्म, दर्शन, कला, आचार, व्यवहार, नीति, भूगोल, खगोल, मानव-जीवन, विज्ञान आदि साहित्यिक और सांस्कृतिक विषय।

सम्पादक —

आचार्य सीताराम चतुर्वेदी

६३/४३, अुत्तर बेनिया बाग

काशी (बनारस)।

...ri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती' के नियम और अुद्देश्य

(सम्पादकीय)

१. 'राष्ट्रभारती' प्रतिमास १ ता० को प्रकाशित होती है।

२. 'राष्ट्रभारती' भारतकी विशुद्ध अन्तर-प्रान्तीय भाषा, साहित्य और संस्कृतिकी प्रतिनिधि पत्रिका है।

३. 'राष्ट्रभारती' का अुद्देश्य समस्त अुच्च भारतीय भाषाओंके प्राचीन अर्वाचीन साहित्यका भारतकी राष्ट्रभाषा हिन्दी द्वारा रसास्वाद कराना है, जिससे वह सब भारतीयोंकी अपनी वस्तु बन सके।

४. 'राष्ट्रभारती' का दृष्टिकोण प्रगतिशील, रचनात्मक, सर्व समन्वय—सर्वोदयकारी है। अिसमें विवादग्रस्त, राजनीतिक, साम्प्रदायिक, या दल-गत नीतिके लेख आदि प्रकाशित न होंगे।

५. 'राष्ट्रभारती' में हिन्दीके साथ साथ—

(१) असमिया (२) मणिपुरी (३) बंगला (४) अुड़िया (५) नेपाली (६) काश्मीरी (७) सिन्धी (८) पंजाबी (९) गुजराती (१०) मराठी (११) तमिल (१२) तेलुगु (१३) कन्नड़ (१४) मलयालम (१५) संस्कृत (१६) अुर्दू और अन्तर-राष्ट्रीय विदेशी साहित्यिक भाषाओंकी सुन्दर ज्ञानपोषक, मनोरंजक, सुरुचिपूर्ण श्रेष्ठ रचनाअें भी प्रकाशित होंगी।

लेखक महानुभावोंसे

६. 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ, हमारे पास अपनी पूर्व प्रकाशित रचना सामग्री मत भेजिअे। जिस रचनाको आप 'राष्ट्रभारती' में भेजें अुसे अन्य हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओंमें न भेजें। अस्वीकृत रचनाको वापस पानेके लिअे दो आनेका पोस्टेज भेजनेकी कृपा करें।

७. जो कुछ मैटर प्रकाशनार्थ भेजें, साफ नागरी टाअिप कापीमें भेजें अथवा हाथकी लिखावटमें कागजके अेक ही ओर साफ सुथरी, सुवाच्य नागरी लिपिमें लिखकर भेजें। कविताओंके अुद्धरण, अवतरण आदि बहुत ही साफ लिखे होने चाहिअे। लेखक अपना पूरा-पूरा नाम और पता अवश्य लिखें।

निवेदक—

सम्पादक, "राष्ट्रभारती"

हिन्दीनगर, वर्धा, Wardha (M. P.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती' को स्वावलम्बी बना दें

सविनय सूचना--यह कि प्रत्येक हिन्दी-प्रेमीका कर्तव्य है कि वह कम-से-कम 'राष्ट्रभारती' का अेक-दो ग्राहक अवश्य बना दें।

अिसलिअे कि राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रति कुछ आपका भी तो कर्तव्य है। भारतके काश्मीरसे लेकर कन्याकुमारी तक और आसामसे लेकर सोमनाथ-सौराष्ट्र तक लगभग सभी प्रतिष्ठित विद्वान् साहित्यकारोंका कहना है कि '**राष्ट्रभारती**' राष्ट्रभाषा हिन्दीमें भारतीय साहित्यकी अपने ढंगकी बहुत सुन्दर और अनूठी मासिक पत्रिका है। हाथके कंगनको आरसी क्या ? अिसी मार्चके नअे अंक देखिअे न ?

साधारण वार्षिक मूल्य ६) रु. और स्कूल-कालेजों तथा लाअिब्रेरियोंके लिअे रियायत ५) रु. वार्षिक मनीआर्डरसे।

हार्दिक धन्यवाद:--हमारे अुन सभी प्रचारकों और केन्द्र-व्यवस्थापकोंको, जो ५) रु. भेजकर अिस वर्ष 'राष्ट्रभारती' के ग्राहक बन गअे हैं। और नागपुरके प्रमाणित प्रचारक श्री विजयशंकर त्रिवेदीने नअे ५ ग्राहक बनाअे हैं। धन्यवाद !

निवेदक--

व्यवस्थापक, **'राष्ट्रभारती'**

हिन्दीनगर, वर्धा (म. प्र.)

मुद्रक तथा प्रकाशक:—मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस--राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

अप्रिल
१९२६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ६] राष्ट्रभारती, विषय-सूची अप्रैल-१९५६ [अंक ४

[बिहार, मध्यप्रदेश, भोपाल, सौराष्ट्र आदि राज्योंके शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत पत्रिका]

* अिस अंकमें पढ़िअे *

('राष्ट्रभारती' के प्रत्येक अंकका प्रत्येक पृष्ठ पठन-मनन योग्य सामग्रीसे पूर्ण रहता है।)

		लेखक	पृ० सं०
१. लेख :			
१. मानवता : रूप और दिशा	...	श्री परदेशी	२१६
२. कुछ समस्याअें (अेक पत्र)	...	श्री नरेन्द्र शिरोमणि	२२१
३. साहित्यमें प्रभाव तत्व	...	श्री घनश्याम सेठी	२२६
४. युग-युगके शाश्वत प्रणाम !	...	श्री रामनारायण अुपाध्याय	२३७
५. नमस्कार !	...	श्री जगमोहननाथ अवस्थी	२३८
६. अेस. के. पोट्टक्काट्ट (मलयालम)	...	प्राध्यापक वी. गोविन्द शेनाय, अेम. अे., अेल. अेल. बी.	२४१
७. अिन्दुमती	....	श्री गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश'	२४३
८. सेठ गोविन्ददासके समस्या-नाटक	...	प्रो. राजेश्वर गुरु, अेम. अे.	२४७
९. 'ह्रिस्टो बोटेव', जिसका कि नाम अमर हो गया है	...	श्री अेन. टोडोरोव अनु०:-श्रीमती कमल आर्य, बी. अे.	२६१
१०. 'कहिअे, आपकी तबीयत अब कैसी है ?'	...	श्री 'कुमार'	२६५
२. कविता :			
१. अेक तुम हो !	...	श्री माखनलाल चतुर्वेदी	२१५
२. गीत !	...	श्री ललित गोस्वामी	२२०
३. कनेरकी मसली कली !	...	श्री रंगनाथ 'राकेश'	२३२
४. नन्हा-सा दिल, कोमल-सा दिल !	...	श्री रघुराजसिंह, अेम. अे.	२३३
५. मेरा गीत !	...	श्री शिवकुमार श्रीवास्तव	२३४
६. जिसका है जो भाग अुसे पाने दो !	...	प्रो. गणेशदत्त त्रिपाठी, अेम. अे.	२३५
७. बिछुड़ते समय	...	श्री ह्रिस्टो बोटेव अनु०:-श्रीमती कमल आर्य, बी. अे.	२६२
३. कहानी :			
१. 'चाँदिनी' और 'यामिनी'	....	प्राध्यापक राजनाथ पाण्डेय अेम. अे.	२५१
२. लहर और किनारा	...	श्री नन्दकुमार पाठक	२५८
३. प्रेमकी गम्भीरता (बंगला)	...	स्व. शरत्चन्द्र चटर्जी अनु०:-श्री शिवनारायण शर्मा	२६४
४. देवनागर :	...	(बंगला, गुजराती, मराठी)	२७३
५. साहित्यालोचन :	...	श्री लक्ष्मीनारायण भारतीय	२७६
६. सम्पादकीय :	...	...	२७४

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

रियायत— समितिके सभी प्रमाणित प्रचारकों, केन्द्र-व्यवस्थापकों और स्कूल-कालेजों तथा सार्वजनिक पुस्तकालय-वाचनालयोंको अेक वर्षतक केवल ५) रु० वार्षिक चन्देमें मिलेगी।

प्रकाशक—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[समग्र भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

वर्ष ६] अप्रैल-१९५६ [अंक ४

अेक तुम हो !

श्री माखनलाल चतुर्वेदी

गगनपर दो सितारे : अेक तुम हो,
धरापर दो चरण हैं : अेक तुम हो,
'त्रिवेणी' दो नदी हैं ! अेक तुम हो,
हिमालय दो शिखर हैं : अेक तुम हो,

रहे साक्षी लहरता सिन्धु मेरा
कि भारत हो धराका विन्दु मेरा ।

कलाके जोड़-सी जग-गुत्थियाँ ये,
हृदयके होड़-सी दृढ-वृत्तियाँ ये,
तिरंगेकी तरंगोंपर चढ़ाते,
कि शत-शत ज्वार तेरे पास आते ।

तुझे सौगन्द है घनश्यामकी आ,
तुझे सौगन्द भारत धामकी आ,
तुझे सौगन्द सेवा-ग्रामकी आ,
कि आ, आकर अजड़तोंको बचा आ !

तुम्हारी यातनाअें और अणिमा,
तुम्हारी कल्पनाअें और लघिमा,
तुम्हारी गगन भेदी गूंज, गरिमा,
तुम्हारे बोल ! भूकी दिव्य महिमा,

तुम्हारी जीभके पैरों महावर,
तुम्हारी अस्तिपर दो युग निछावर ।।

रहे मत भेद तेरा और मेरा,
अमर हो देशका कलका सबेरा,
कि वह काश्मीर, वह नेपाल, वह गोवा
कि साक्षी वह जवाहर, यह विनोबा ।

प्रलयकी आह युग है, वाह तुम हो,
जरासे किन्तु लापरवाह तुम हो ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानवता : रूप और दिशा

—श्री परदेशी

रस्किनने मनुष्य-स्वभावके विकासमें विश्वास प्रदर्शित किया है। अुसने बताया—प्रेम, ज्ञान और अनुशासनके बिना मनुष्य मानवताहीन है। अब जरा अपने अन्तरको टटोलकर देखिअे; आपमें मनुष्य मात्रके प्रति कितना प्रेम है, कितना ज्ञान है, अपने आपको ही जान लेनेके लिअे जो पर्याप्त हो और कितना अनुशासन है मनपर; आपके मनका कायापर। और समाजके अनुशासनका आप किस सीमातक पालन करते हैं? अिन प्रश्नोंको लेकर जब आप आत्मावलोकन करेंगे, तो आपको आअिनेमें अपनी तस्वीर साफ नजर आ जाअेगी। मनुष्यमें मानवता न होगी तो स्थान रिक्त रह जाअेगा। आप जानते हैं जिस स्थानपर कुछ नहीं है वहाँ हवा है। यदि मनुष्यमें मानवताका स्थान रिक्त है, तो वहाँ अवश्य ही दानवता प्रतिष्ठित है। अैसी ही दुखी मानवताके लिअे तो कवि वर्ड्सवर्थका मन क्रन्दनकर अुठा था—

"बट हियरिंग आफन टाअिम्स
द स्टिल् सेड म्युजिक आफ
ह्युमेनिटी."

मनुष्य प्रकृतिकी प्रतिमूर्ति है; अुसकी परछाअी और अुसका प्रतिबिम्ब है।

आप यह जानते हैं कि मनुष्यमें शक्ति है। यह शक्ति दो प्रकारकी है—मानवीय और दानवीय। दानवीय शक्ति लोक-जीवनके मध्य विध्वंस, अुत्पीड़न और शोषणकी स्थापना करती है। अिसके विपरीत मानवता, प्रेम, ज्ञान, समता और आत्मानुशासनका आसन स्थापित करती है।

मानवता संकल्पशील है। सृजन अुसका संकल्प है। दानवता विकल्पशील है। हनन और असत्य अुसका कार्यक्रम है। मनुष्यमें यदि अिस दानवीय भावनाकी वृद्धि होती रहे तो भला दुनियाका क्या हो? रावण, कंस, हिटलर, तोजो आदि : दुनियाका जिन्दा रहना मुश्किल कर दें, और मनुष्यता त्राहि-त्राहि पुकारने लगे। अैसे ही दानवोंसे जब धरती, धर्म और धर्मात्मा पीड़ित होते हैं, तब तीर्थङ्कर आते हैं, अवतार आते हैं—

'यदा-यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत--।'

लेकिन आप यह न मान लें कि अवतारों और तीर्थङ्करोंके आगमन और प्रस्थानके बाद संसारसे दानवता तिरोहित हो जाती है। दानवता तो मात्र मनुष्यके स्वभावका पक्ष है, तो वह सदैव रहेगा जबतक मनुष्य है। हाँ, हमें सद्गुणोंसे अुसे सुलाअे रखना है। दानवताकी अिस सार्वकालिक अुपस्थितिपर अँग्रेज कवि मेथ्यूप्रायरका यह अुद्धरण देखिअे—

"फोर्थ विथ द
डेविल् डिड अपीयर,
फॉर नेम हिम्
हि'ज आल्वेज नीयर."

मानवताकी दो पंखुड़ियाँ हैं—सत्य और अहिंसा। सत्य अीश्वरका स्वरूप है। है न? वह अपरिवर्तनशील है, अजर है, अमर है। अीश्वर भी अजर अमर है। सूर्यकी किरणोंको, प्रकाशको किसी बाहरी बिगाड़का भय नहीं, न अुसे बिगाड़ देना या बदल देना सम्भव है—यही हाल सत्यका है। सत्य और अहिंसा, जिसके अन्तर्गत प्रेम भी आता है, दुनियामें सबसे शक्तिशाली हैं।

अब जरा सोचें कि मनुष्यमें मानवताकी वृद्धिके लिअे सत्यका सम्मान कैसे हो? "सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्" आदि अनेकों व्यावहारिक सिद्धान्त बतलाअे गअे हैं—किन्तु वे साधारणतया सत्यके विपरीत हो जाते हैं। सत्य सदैव सत्य है, प्रिय अप्रियका लबादा अुसपर नहीं लगना चाहिअे। अिसलिअे सत्यका सम्मान अिस प्रकार किया जा सकेगा कि सब प्राणी सत्य-पथ-गामी हों, सत्यका पालन करें। अब जहाँ सत्य है, वहाँ अहिंसा अवश्य होगी। क्योंकि गांधीजीके शब्दोंमें सत्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छिपाव-दुरावसे दूर रहता है। जो अहिंसक चीज है अुसे छिपानेकी जरूरत नहीं। असत्यको ही ओट चाहिअे? सत्यको नहीं। सत्यको 'मेकअप' की जरूरत नहीं है, क्योंकि सौन्दर्य और आकर्षण स्वाभाविकतामें है, और सत्य सदैव स्वाभाविक है, अुसका स्वरूप अितना आकर्षक है कि वह दिखते ही दर्शकका मन मोह लेता है।

अब जरा दानवताके दर्शन भी कीजिअे। विनाश यानी हिंसा और कपट यानी असत्य। मानवताके ठीक विपरीत दानवता-रूपी गिद्धके भी दो पंख हैं, ये हिंसा और असत्य!

हिंसासे पापका अुदय होता है। रामायण कहती है—"जिनको हिंसा करना अिष्ट है अुनके पापोंकी सीमा नहीं।" प्रहार-घात, विनाश और दुष्टतामें ही हिंसकोंको मजा आता है, क्योंकि मैं कह चुका हूँ 'हिंसा' दानवीय स्वभाव है।

फिर भी दानवों और हिंसकोंमें अितनी समझ है कि वे अपने पापपर पर्दा डालते हैं। पुण्यसे मन-ही-मन डरते हैं, और ज्यों-ज्यों पुण्यके विपरीत जाते हैं, पापके पथपर प्रस्थान करते हैं। हिंसा बढ़ती है, पाप बढ़ते हैं, और अुनका क्रोध बढ़ता है। लेकिन दुनियाके दर्शक तो कहीं नहीं जाते अुन्हें सन्तुष्ट करनेके लिअे, अपने मनको समझानेके लिअे दानवता अिधर-अुधरके सिद्धान्त प्रचारित करती है और विविध प्रकारके बहाने बनाती है। अिसमें अुसको अधिक लाभ होता है। बड़े-बड़े अवसर हिंसाके लिअे मिलते हैं। सिद्धान्तकी बातें दानव भी करता है। शेक्सपीयरके कथनानुसार—**"डेविल् केन् साअिट स्क्रीप्चर्स फॉर हिज़ औन परपज़"**

—मर्चेंट ऑफ वेनिस

हमारे पूर्व पुरुषोंने सदैव दानवतासे युद्ध किया। भूल न जाअिअे—दानवता, मानवका दूसरा स्वभाव है। अेक स्वभाव श्वेत और दूसरा श्याम है। यह श्याम नाम स्वभाव और अुसकी शक्ति बढ़नी न चाहिअे।

किसी गरीबका घर है। बच्चा मृत्यु-शैय्यापर है। पत्नी कहती है पतिसे "दौड़कर पावभर दूध ले आओ; मरते बच्चेके प्राण लौट आअेंगे। पतिके पास कुछ नहीं है। बड़े सोच-विचार और लज्जाके बाद वह पड़ौसके लखपतिके पास जाता है—'महाराज चार आने दे दो। मेरा बच्चा मर रहा है, दूध चाहिअे। अुसकी आँखोंमें आँसू भर आते हैं। वह आशामें बड़ी देर खड़ा रहता है। अन्तमें नौकरके हाथों धक्के खाकर लौट आता है। बच्चा मर जाता है। यह भी हो सकता है, कि गरीबी और बेकारीसे अूबकर पति-पत्नी ट्रेनसे कट जाते हैं या कुअेंमें डूब मरते हैं।

कहनेका तात्पर्य यह है कि अुस गरीब व्यक्तिकी धनी व्यक्तिने तनिक भी परवाह नहीं की। अुसके बच्चेको अपना बच्चा नहीं समझा। अुसके दुख-सुखको अपना दुख-सुख नहीं माना। दौलत अुसके पास थी। न भी हो तो क्या आदमी अपनी रोटीमेंसे आधी रोटी देकर अेकके प्राण नहीं अुबार सकता? अुसके प्राण बचते हैं और यह देनेवाला अेक दिन आधा पेट रहकर मर नहीं जाता। परन्तु अुस धनिकने या यों कहें अेक व्यक्तिने अैसा न करके अपने ही जैसे प्राणीको अपनी किस्मतपर छोड़ दिया। अिस प्रकार, आदमी मरनेके लिअे आदमीकी ओरसे छुट्टी पा गया है। सड़कपर अेक आदमी पड़ा है। हड्डियोंका ढाँचा मात्र रह गया है। सैकड़ों व्यक्ति अुसके पाससे गुजर रहे हैं पर कोअी देखता नहीं; देखनेवाला नाक भौं सिकोड़कर निकल जाता है। लेकिन अुस बीमार व्यक्तिकी जगह यदि पैसा पड़ा होता तो राहगीर अुठा लेता। रोगीकी सेवा करना मानवता थी, पैसा अुठा लेना दानवता है।

बालकोंको आप नहीं सिखाते कि बेटा धूलमें पड़े पैसेको अुठाकर भीतरी जेबमें रख लेना। लेकिन बिना सिखाअे भी बच्चा यही करता है। आजके आदमीने पैसेमें अपना हित और सुरक्षा देखी है। हम कह सकते हैं मानवके 'मानस' है, मस्तिष्क है, फिर भी वह ताम्बेके टुकड़ेसे गया-बीता है। आपने पैसेके अेक टुकड़ेको, मनुष्यके समस्त शरीरसे अधिक महत्व दे दिया है। आप बेखबर हैं, आप नहीं जानते यही मनुष्यताकी हत्या हो रही है। आपके वैज्ञानिक मरे हुअे मानवके मुर्देमें फास-फोरस् देखते हैं और अुसपर ललचाअी नजर डालते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। आप जीवित मानवको नहीं देखते। देखते हैं तो अिस अुद्देश्यसे कि यह हमारे किस काम आ सकता है? अिससे क्या लाभ अुठाया जा सकता है? जैसे आप, वैसे आपके वैज्ञानिक। मनुष्य कहीं नहीं।

जरा यह सोचें कि यह हमारे सामने अभावों और कसालोंमें पीड़ा और दुखमें मरनेवाला हमारे प्रति किन भावनाओंको लेकर मर रहा है? यह दुनियाको अभिशाप दे रहा है, अथवा आशीर्वाद?

आज मूल्य बदल गअे हैं। कीमत असलियतको छोड़कर चली गअी है। और 'नकल' को आपने असल समझकर मूल्यवान मान लिया है। आँखें बन्दकर अुस नकली चीज यानी भौतिकताकी ओर दौड़े जा रहे हैं। अुस दौड़में आप अपना 'हृदय' और 'आत्मा' पीछे भूल गअे हैं। जरा ध्यान रहे। आज आपका विज्ञान-वैज्ञानिक युग बनकर निस्सीम प्रगतिपर पहुँच गया है। अेवरेस्टकी कन्दराअें मानवके कोलाहलसे मुखरित हो काँप रही हैं। अैसा लगता है--प्रकृतिके समस्त तत्व मानवीय संकेतोंका पालन कर रहे हैं। धरती, नभ और सागर सभी अुसे मार्ग दे रहे हैं। तो क्या सचमुच मानव सफल हो गया? अुसमें दानव नहीं रहा? वह मानवताका पुजारी बन गया? नहीं, क्योंकि मैं कह चुका हूँ, आपके मस्तिष्ककी अिस दौड़में, आपका अन्तरात्मा पीछे रह गया है। श्रेय और प्रेमके बीचका अन्तर ओझल हो गया है। कोरे वैज्ञानिक अथवा शुष्क भौतिक ज्ञानकी मरुभूमिने मानव-मनका अमृत सोख लिया है। आज अिस बालूपर हमें फिरसे चमन लहलहाना है। मानवताका गुलशन यही गन्ध अुड़ाअेगा। काम्य कठिन अवश्य है, किन्तु असम्भव बिल्कुल नहीं। नैपोलियनने कहा था "असम्भव" शब्द मूर्खोंके कोषमें होता है। अूषाके अलसित नयनोंकी मधु मुस्कानको जेठ-प्रभातके प्रखर तापने तिरोहित कर दिया है, अुसे फिरसे चमकाना होगा।

मानव जिसके यान हवामें, जिसके यान जलमें, जिसके यान धरतीपर हैं; शक्तिका स्रोत प्रतीत हो रहा है। बड़ी अच्छी बात है। अिसकी मुट्ठीमें परमाणुओंके प्राण प्रकम्पित हैं। भूमण्डल हस्तामलक बना है। भूगर्भको भी पुस्तकके पृष्ठोंके समान खोलकर आपके विद्वानोंने पढ़ लिया है।

लेकिन मुझे अत्यन्त खेद है! मैं अेकदम निराश हूँ, कि मानवने सबकुछ जानकर भी कुछ न जाना। वरना वह गरीब लड़का, जिसका जिक्र मैंने किया, चार आनेके लिअे प्राण न खोता। दूधकी गंगा जहाँ बहती थी वहाँ नंगा-भूखा आदमी बूँद-बूँदके लिअे न तरसता। नौकर धक्के देकर अेक मानवको निकालता नहीं। सेठ अनजान है और नौकरकी आत्मा मर गअी है, वरना दोनों मिलकर अपने आपको और परमेश्वरको अिस प्रकार धक्का नहीं देते। अिसलिअे यह वैज्ञानिक अुन्नति सार्थक प्रतीत होते हुअे भी अकारथ निरर्थक है। आपकी बुद्धि और आपका ज्ञान दम्भ और पाखण्डकी कारामें सड़ रहे हैं। मानवकी बुद्धि दानवताकी ओर बढ़ रही है। यही मनुष्य अपने हाथों मानवताका घोर अपमान कर रहा है। मानव-मानसमें प्रतिहिंसाकी घोर ज्वाला धधक रही है। मानव अपना 'लाभ' दूसरोंकी 'हानि' में देख रहा है, यह कबतक चलता रहेगा?

आज मनुष्य अपना 'नाम' भूल गया है। अपना अंश परिवार और अपने कर्तव्य भूल गया है। मनुकी सन्तानने 'मनन' करना छोड़ दिया है। साधनाको छोड़ वह साधनके पीछे बावला बन गया है। विचार-रंकताके कारण अुसे यह ज्ञान नहीं हो सकता कि किधर जाना चाहिअे और वह कहाँ जा रहा है? डायोजिनस नामक पंडित कहता है--"दिन दहाड़े हाथमें लालटेन लेकर मैं मनुष्यको ढूँढ़ रहा हूँ।" बाअिबलमें लिखा है :--

"सो गॉड क्रिअेटेड मेन हिज़ औन अिमेज, अिन् द अिमेज आफ गॉड क्रिअेटेड ही हिम."

जो साक्षात् परमेश्वरका प्रतिरूप मनुष्य है, वह आज पापका प्रतिनिधि बन गया है, क्यों? अपनेको भूलकर!

अेक दूसरा विद्वान् मनुष्यको 'शानदार पशु' बतलाता है। वास्तवमें दुष्ट मनुष्यको पशु बतलाना, पशु जातिका अपमान करना है। पशुमें मनुष्य जैसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असमता, हिंसा, अस्वाभाविकता और परिग्रह नहीं पाया जाता। विश्वके प्रसिद्ध वक्ता बर्कने कहा था--"मनुष्य भोजन पकानेवाला पशु है।" अिस अुक्तिमें आदमीकी सारी बुराअियाँ प्रतिबिम्बित हैं। अपनी अिन्हीं बुराअियोंके कारण 'वह रोता हुआ जन्मता है, शिकायतोंमें जीता है, और निराशामें मरता है।'

अपनी अिन बुराअियोंको, असद्वृत्तियोंको यदि आदमी नहीं निकालता तो वह पशुत्वको प्राप्त होता है। पशुमें विचार-क्षमता नहीं, अिसलिअे वह पशु है। मनुष्यको निर्णयात्मक विचार-शक्ति मिली है, अिसलिअे कि वह सत्यताका, तथ्यातथ्यका निर्णय करे, और अन्धकारको छोड़कर प्रकाशके पथपर विचरण करे। अन्यायका साथ छोड़कर, न्यायका संगी बने। दानव नहीं, मानव बने। अेक ज्ञानीने कहा "ज्यों-ज्यों मैं मनुष्यको पहचानता जाता हूँ, त्यों-त्यों मैं कुत्तोंकी प्रशंसा करता हूँ।" अब भला मनुष्यने अपनी कमजोरियाँ और बुराअियाँ दूर न की तो वह कुत्तोंकी श्रेणीमें गिना जाअेगा।

जो मनुष्य अपनी छोटी-से-छोटी बुराअीको बड़ी-से-बड़ी बुराअी समझकर अुसे दूर करनेका प्रयत्न करता है, अन्ततोगत्वा वही महापुरुष महात्मा बनता है।

स्वामी रामतीर्थने कहा था अेक बार-- "हमें सुधारक चाहिअे" दूसरोंके लिअे नहीं, अपने आपका सुधार करनेके लिअे। क्यों कि संसारको सुधारना चाहते हो तो सुधार पहले अपनेसे शुरू करो। 'पर अुपदेश कुशल बहुतेरे' दूसरोंको अुपदेश और शिक्षा देना बहुत सरल है— लेकिन स्वयं अुसपर चलना कठिन है। भला सामनेवालेके जिस दुर्गुणको दूर करनेका आप प्रयास कर रहे हैं, अुसे अपने आपमें रखकर कैसे चल सकते हैं?

आपका असर अुसी व्यक्तिपर होगा जो आपके समान हो, अिसलिअे बातों और अुपदेशोंसे नहीं, अपने जीवनकी सारी बुराअियाँ दूर कर, अच्छाअीका अुदाहरण पेश करो, तभी दूसरे सुधरेंगे।

अितिहासमें परोपकार और त्यागके जो अुदाहरण मिलते हैं, अुन्हें अपना आदर्श हमें बनाना है। शेष अितिहासमें हिंसा और युद्धके जो दृश्य दिखाअी देते हैं, अुनसे हम कितने दूर हैं— यह हमें सोचकर देखना चाहिअे।

यदि पिछले अितिहासकी समस्त त्रुटियाँ आज भी हममें विद्यमान हैं, तो हमारा मनुष्य होना अकारथ जाअेगा। दूसरे मनुष्यकी भस्मसे अपना चोला रंगना, और दूसरेकी हड्डियोंपर अपना आसन लगाना मनुष्यको छोड़ देना चाहिअे। मानव मानवके लिअे अपने प्राणोंको अुत्सर्ग कर दे, यह कठिन नहीं है।

अीश्वरने मनुष्यको दो आँखें दीं, कि अेकसे भलाअी और अेकसे बुराअीका भेद जाने। अुसे नासिकाके दो छिद्र दिअे कि खुशबू और बदबूमें फर्क समझे। अुसे दो हाथ दिअे कि सिर्फ 'लेना' ही नहीं 'देना' भी सीखे, आदि? लेकिन आदमीने अैसा नहीं किया! अुसने शैतानकी ताकतसे चकित होकर कब्रस्तानका रास्ता अपनाया।

'मनुष्य', 'राक्षस' और 'देवता' तीन प्रकार हैं, जिनमेंसे मनुष्य अपने लिअे कोअी अेक स्थिति सहज ही चुन सकता है। भलाअीका बदला बुराअीसे देनेवाला मनुष्य 'राक्षस' है। अैसा मनुष्य, मनुष्यके चोलेमें भी शैतान है। भले अुसके पास चाहे जितनी सम्पदा या कीर्ति क्यों न हो। देखना तो यह है कि वह करता क्या है। अुसका हृदय कैसा है? बुरा तो देखना भी नहीं चाहिअे। फिर, बुराअीका व्यापार करनेवाला कितना भयंकर हो सकता है? बुराअी बुरा करनेमें है। राक्षस जातिका मनुष्य अैसा ही दुष्कर्म करता है। वह नहीं जानता कि बुराअीसे बुराअी पैदा होती है, और अुसके काँटे अुसीकी राहके बाधक बनते हैं।

भलाअीका अुत्तर भलाअीसे देनेवाला 'मनुष्य' है। यह तो साधारण अवस्था है। आदमीको कृतघ्न तो कभी न होना चाहिअे। 'कृतघ्न आदमीसे तो कृतज्ञ कुत्ता भला है' महात्मा शेख सादीका यह कथन है। अिसलिअे भलाअीको तो कभी न भूलना चाहिअे। हाँ, अपने प्रति की गअी बुराअीको तत्काल भूल जाना चाहिअे, और अुस बुराअीके बदलेमें भलाअी करना चाहिअे। जो बुराअीके बदलेमें भलाअी करता है वही देवता है। यदि किसीने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपकी बुराअी की है, और मार्गमें काँटे बोअे हैं, तो आप क्यों बुराअी अपनाकर अपने दिलको श्मशान बनाते हैं, क्यों न अपने दिलमें भलाअीके फूल लगाकर अुसे गंध-भरा गुलशन बना देते ? देवताका काम क्यों नहीं करते ? दानवका दुष्कर्म क्यों अपनाते हैं ? दानवता तुम्हारा ध्येय नहीं है, मानवताके मार्गपर चलकर देवत्वकी प्राप्ति तुम्हारा ध्येय होना चाहिअे। क्योंकि प्राणीको परमात्मासे जोड़नेवाली अेक मात्र कड़ी मनुष्य है। मनुष्य ही परमात्मा तत्वको प्राप्त हो सकता है, वही परमात्मा बन सकता है, और अिस प्रकार अपना सर्वोच्च स्वरूप प्रतिष्ठित कर सकता है।

गीताने बतलाया है कि जिस मनुष्यने अपने 'अहं' को जीत लिया है, जो अेकदम प्रशान्त है– सागरके समान है, अपनी मर्यादा नहीं छोड़ता सदा समभाव धारण किअे रहता है, वही 'परमात्मा' है।

अब बतलाअिअे, परमात्मा आपसे कितनी दूर है ? परमात्मा बनना जरा भी मुश्किल नहीं। मनुष्य-जीवनके लिअे देवता भी तरसते हैं। ताकि, मनुष्य बनकर अपने गुणोंको चमकानेका अवसर पाअें। और अपनी अच्छा-अियाँ दिखाकर आत्म-सन्तोषका आत्म-कल्याणका मार्ग अपनाअें।

अब यदि आप मनुष्य बनकर परमेश्वर बनना चाहते हैं, तो सेवाका, प्रेमका, अहिंसाका मार्ग अप-नाअिअे। अपने स्वार्थको सेवामय बना दें। सेवामें अपना 'स्वार्थ' देखें। व्यक्तिगत भोग, लालसाओंको तजकर मानव-समुदाय और प्राणी-मात्रके लिअे प्राणोत्सर्ग कर दें। मस्तिष्क और हृदयमें सामञ्जस्य प्राप्त करें। श्रद्धा और बुद्धि अेक दूसरेके पूरक बनें। प्रेमके साम्राज्यमें पधारें। याद रखिअे घृणा राक्षसोंकी सम्पत्ति है, दानवोंकी दौलत है। क्षमा मानवोंका धन है। अिसे न देवता ले सकते हैं, न दानव चुरा सकते हैं। सब प्राणियोंके प्रति क्षमा भाव बरतें। सबसे क्षमा माँगें और सबको क्षमा करें। 'सेवा'का जीवनमें वही स्थान है, जो श्वासका शरीरमें। प्रेम 'हृदयका धन' है, हृदयका आभूषण है। प्रेमका व्रत लीजिअे और मानवताको सुखी कीजिअे। स्वेच्छासे अपना बोझ अुठानेवाला स्वतन्त्र है, और बिना अिच्छाके बोझ ढोनेवाला गुलाम है। दास न बनिअे। प्रेमका भार, भार नहीं है। सेवाका भार, भार नहीं है।

सत्य, सेवा, प्रेम, और अहिंसामें ही मानवता निवास करती है।

गीत !

: श्री ललित गोस्वामी :

सपनेसे है प्यार अभीतक।

खिल-खिल झड़ीं हजारों कलियाँ,
छकीं न लेकिन भ्रमरावलियाँ,
शूलोंकी शूलीपर चढ़-चढ़
'मधु-मधु' रहीं पुकार अभीतक ।। सपने..

भर-भर टूटे लाखों प्याले,
छके न फिर भी पीनेवाले
चाह तृप्तिकी बता रही है,
प्यासा है संसार अभीतक ।। सपने...

जल-जल बुझे करोड़ों दीपक
पहुँचा पर, न पतंग ज्योति तक,
रचा रही है जड़ता अुसकी—
ज्वालासे अभिसार अभीतक ।। सपने...

अमर लोककी अनुपम वीणा,
पड़ी हुअी है राग-विहीना,
बीत गअे जाने युग कितने ?
जुड़ा न टूटा तार अभीतक ।। सपने...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ समस्याअें

—श्री नरेन्द्र शिरोमणि

पिछलें वर्षकी राष्ट्रभारतीमें मैंने अिसी पाठिकाका अेक पत्र "आखिर अिन हिन्दी अुपन्यासकारोंको हो क्या गया है ?" छपाया था, और वह हिन्दी-जगतमें पर्याप्त क्षोभ और चर्चाका विषय भी बना। कुछने अुसकी साफगोअीकी प्रशंसा की तो कुछने अुसे लेखकोंके सम्मानके विरुद्ध माना। "जहाजका पंछी" अिलाचन्द्र जोशीका नया अुपन्यास है। यों तो जोशीजी भारतके प्रसिद्ध अुपन्यासकारोंमेंसे हैं; अतः अुनके अिस अुपन्यासकी चर्चा होगी ही, किन्तु वे आलोचकों और लेखकोंके बीचकी बातें होंगी। अेक साधारण पाठक अुसे पढ़कर कैसी प्रतिक्रिया अनुभव करता है, अिसी दृष्टिसे यह पत्र बिना अेक शब्द भी परिवर्तित किअे छपा रहा हूँ। अिसका अेक अुद्देश्य यह भी है कि साधारण सजग और प्रबुद्ध पाठक, जो रचनाओंके असली पाठक होते हैं, अपनी पसन्द और नापसन्दको लेखक तक पहुँचाना सीखें, आपसमें चर्चा करना सीखें। अिसका अुत्तर अेक साधारण और सामान्य स्तरपर प्रश्नोंको देखनेका प्रयत्न है। —नरेन्द्र शिरोमणि।

३-१-५६

प्रिय दा,

आपका "न्यू अियर" कार्ड मिला, धन्यवाद। मोल लेकर बधाअियाँ भेज देनेमें मेरा कोअी विश्वास नहीं है, अिसलिअे देरसे ही सही, मेरी भी बधाअी लो। हालाँकि मेरे दो पत्र आपकी ओर हैं फिर भी अेक विशेष अुद्देश्यसे यह पत्र लिख रही हूँ।

आपके सन् ५६ में करनेवाले कामोंमें अेकाध महत्व-पूर्ण कार्य हमने कर डाले हैं। मतलब 'जहाजका पंछी' पढ़ डाला और पढ़कर बहुत गुस्सा आया तुमपर, कि हमारी परीक्षाके दिनोंमें तुमने व्यर्थमें हमारा समय खराब करवाया, और अिसीलिअे आज अितनी देर होनेपर भी आपको पत्र लिखे डाल रही हूँ कि कहीं कल सुबह तक गुस्सा ठंडा न पड़ जाअे। रातके ११ बज रहे हैं जनाब, और अभी काम पड़ा है, खाना है और तब जाकर कहीं सोना है। हाँ, तो आपका "जहाजका पंछी" जहाँ तक श्री जोशीजी अपनी राम-कहानीमें अपराधी वर्ग और अपने वर्गकी बातें कर रहे हैं कुछ ठीक हैं। हो सकता है वे बातें मेरी अपनी निगाहोंसे नहीं गुजरी हैं, अिसलिअे मैं अुनकी वास्तविकतासे अनभिज्ञ हूँ और अुनका वह हिस्सा ठीक ही माने ले रही हूँ। भादुड़ी महाशयके घर अेकदमसे साहित्यिक गोष्ठीमें लेक्चर झाड़नेवाली बात बिल्कुल नहीं जमती, क्योंकि हमारे यहाँ (अर्थात् जहाँ मैं काम करती हूँ) भी अेक अेम. अे. पास, खानेके कमरेमें काम करने आअे थे। और अेक दिन अुसका भेद भी खुला जब कि वे लोग अंग्रेजीमें अुसीकी बात कर रहे थे और अुसने बीचमें अुनकी बातका जवाब अंग्रेजीमें ही दे डाला था। और तब (अुन्होंने) अुसे क्लर्ककी सर्विसमें भेज दिया था। यों अेम. अे. नहीं चाहे जो भी पास हों, अपनेसे अूँचे लोगोंकी गोष्ठीमें यकायक भाषण देने लगनेका साहस कुछ अस्वाभाविक लगता है। संवाद भी बादमें केवल लम्बे-लम्बे अुपदेश और भाषण ही रह गअे हैं। और अुपदेशोंमें किसीको मजा आअेगा अैसा मैं सोच भी नहीं सकती। लेखक जहाँसे श्री लीला बहनसे मिलता है वहाँसे अुपन्यास अेकदम घटिया किस्मका हो गया है। बस, लेखककी गोपियोंके बीचमें कृष्ण-कन्हैया बने रहनेकी प्रवृत्ति ही काफी अुभरी है। लीलाके वर्गकी कोअी लड़की यों ही मैले कपड़े पहने रसोअिअेकी नौकरी चाहनेवाले व्यक्तिको अेकदमसे पसन्द करने लगे और दो दिनकी मुलाकातमें अितने नजदीक पहुँच जाअे, क्या तुम्हें अिसमें वास्तविकता लगती है ? —और वह आदमी भी कैसा है जो हर समाजमें अपनेको बिल्कुल फिट कर लेता है। फिर ४० लाख रुपअे जिसके पास हों अुसका घर अिस किस्मका तो नहीं होगा कि दरवाजा खटखटाते ही मालकिन सामने मिल जाअे और यों मुस्कुरा-मुस्कुरा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर बातें करने लगे। अुस जगह भाषा भी टुट-पुँजियों जैसी है। जगह-जगह 'दुष्ट', 'दुष्टतापूर्ण हँसना', 'दुष्टता-पूर्ण देखना' प्रयोग किया गया है। जैसे लेखकको अपनी भावाभिव्यक्तिके लिअे शब्द खोजे नहीं मिल रहे हों। दा, पता नहीं क्यों मुझे भाषाका टुट-पुँजियापन जरा भी नहीं भाता। भले व्यक्तियोंमें बोलने-जैसी निखरी सजी-सुथरी भाषा बड़ी अच्छी लगती है। बहुत लोग साधारण कनवर्सेशनमें भी अिसी तरह बेतरतीब और मूर्खता-पूर्ण भाषा बोलते हैं। और मुझे अुनसे नफरत है। मैं अुन लोगोंसे बात करना तक पसन्द नहीं करती। रांचीका पागल-खाना खींचकर नहीं लाया गया लगता? शुरूसे आखिरतक पढ़नेपर हम तो यह निष्कर्ष ही नहीं निकाल पाअे कि लेखककी महत्वाकांक्षा क्या थी जिसके लिअे अितना बड़ा पोथा लिखा गया है। अगर केवल वेश्याओंके जीवन सुधारनेकी बात थी तो अुसे ही वह किसी और मार्मिक और अपीलिंग ढंगसे कहता, तब हम मानते भी कि हाँ, समस्याको अीमान-दारीसे अुठाया गया है। केवल कपड़े सिलनेकी मशीनें खरीदनेपर ही तो समस्याका समाधान नहीं हो पाता। समाधान होता है अुनकी मानसिक विकृतियोंको सुधारनेसे। लेखकने अेक दिनमें अुन लड़कियोंको सिलाअीकी मशीनोंमें लगा दिया। वास्तविकता यह है कि अुनकी द्विमागी विकृतियाँ अुनका साथ काफी समय-तक नहीं छोड़तीं। अेक अजीब बेहयापन और सस्तापन अुनकी नस-नसमें पैठ जाता है। अन्तमें जब लेखककी हीरोवर्शिपकी भावना खुलकर सामने आती है तो मेरे मुँहसे अचानक निकलनेको होता है--"बोल, लाड़ली लालकी जय!"--हमें अुपन्यासोंके अैसे सर्व गुण-सम्पन्न नायकोंसे सख्त नफरत है, क्योंकि यह यथार्थको पास नहीं फटकने देते। आशा है आगे तुम अैसी चीजोंसे मेरा समय नष्ट नहीं करवाओगे। अिम्तहान है भाअी, कुछ तो सोचो! अब हमारे खतोंका जवाब दो।

सस्नेह,

प्रतिभा

प्रिय बीदी, ७-१-५६

तुम्हारा झल्लाहटसे भरा पत्र पढ़कर अति आनन्द हुआ। अैसी ही तो अिम्तहानकी चिन्ता है न तुम्हें। मैं कहता हूँ कि तुम लोग अगर अितना न बनो तो क्या बिगड़ जाअे। कभी तो अिन्सानियत नामकी चीजका पड़ौस किया होता। खैर। "जहाजका पंछी" पर तुम्हारे बिचार जाने। अुसपर विस्तृत रूपसे तो अलगसे लिखा है, यहाँ केवल तुम्हारी बातोंका जवाब देनेकी कोशिश करूँगा; क्योंकि, मुझे माफ करना वह आपत्ति तुम्हारी नहीं, बल्कि अेक वर्गकी दूसरेके प्रति अुठाअी गअी आपत्ति है। जिन लोगोंके साथ तुम काम करती हो, रहती हो, जाने या अनजाने तुमने अुनका पक्ष लिया है।

भादुड़ी महाशयके यहाँ रसोअिअेकी तरह नौकरी करनेवाले नायकके अचानक भाषण दे अुठनेपर तुम्हें भी आपत्ति है और मुझे भी। मुझे अिसलिअे कि साहित्य-गोष्ठीमें दिया गया वह भाषण अितना 'बोर' और अप्रत्याशित है कि अुसके लिअे कोअी पृष्ठभूमि नहीं है। लेकिन तुम्हारी आपत्ति दूसरी तरहकी है--"यों अेम. अे. नहीं, चाहे जो भी पास हों, अपनेसे अूँचे लोगोंकी गोष्ठीमें यकायक भाषण देने लगनेका साहस कुछ अस्वाभाविक लगता है।" मुझे आपत्ति अिस 'अूँचे लोग' और 'साहस' शब्दसे है। क्योंकि अिसी प्रकारके आरोप तुमने लीलाके पक्षको लेकर अुठाअे हैं कि अैसी लड़की न तो रसोअिअेसे बोल सकती है, न ही वह पहली ही बार मिल सकती है।--तब मुझे अैसा लगता है जैसे तुम अुपन्याससे हटकर लीलाका पक्षपात तो कर ही रही हो, अपने वर्गको भी डिफेण्ड कर रही हो। खुद मुझे भी लीलावाला हिस्सा अच्छा नहीं लगा है। लेकिन अुपन्यासकारसे कोअी बात कहनेमें नहीं आअी है, तुम्हारे कहनेसे ध्वनि यह नहीं, यह निकलती, अुससे लगता है कि अुसने जो कुछ किया वह अुसकी अनधिकार चेष्टा है और अुसे अुस वर्गको, अर्थात् जो तुम्हारा है, अिस तरह नहीं दिखाना चाहिअे था। मैं वर्गकी बात कहकर व्यक्तिको, या तुम्हें वर्गका विवश गुलाम नहीं कह रहा हूँ, बल्कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हारे अेक सामान्य प्रश्नको अेक सामान्य-स्तरपर ही रखनेके लिअे बार-बार 'वर्ग' का प्रयोग कर रहा हूँ। यों हो सकता है लीला भी तुम्हारी ही तरह अपनेको वर्गके प्रभावसे अलग रखकर व्यक्तिके रूपको अधिक महत्व देती हो।

हाँ, तो जब मैं वर्गकी बात कहता हूँ तो हो सकता है तुम मुझे बोस्ताँकी वह कहानी सुना दो, कि अेक बार अेक शेर और अेक आदमी साथ-साथ जा रहे थे। रास्तेमें दीवारपर अेक अैसी तसवीर बनी थी जिसमें अेक आदमी अेक शेरपर सवारी कर रहा था। आदमी अुस तस्वीरके शेरको दिखाता हुआ बोला--"देखा, शेरपर आदमी सवारी कर रहा है।" तब शेर हँसा। बोला--"भाअी, चित्रकार आदमी था, अुसने शेरको नीचे दिखा दिया, अगर चित्रकार शेर होता तो अुसे शेरके मुँहमें नहीं दिखाता?"--सो अुपन्यासकार चूँकि अुसी वर्गका है। अुसने जाने या अनजाने हर जगह अपनेको अूँचा किसी हद तक मसीहा दिखानेकी कोशिश की है। लेकिन जब तुम रसोअिअेको 'अूँचे लोगों' के सामने न बोलने देनेकी बात करती हो तो अेक बात क्यों भूल जाती हो कि अेम. अे. पास लोग रसोअिया बनें, सिरपर बोझ ढोअें या रिक्शा चलाअें और बर्तन मांजें, अिस स्थितिको कौन पैदा करता है? अेक कमरेमें सौ आदमी रहते हों और अुसमें दस आदमी कुर्सी डालकर बैठ जाअें तो शेषको खड़ा ही तो रहना पड़ेगा। अभीतक यह 'विशेषाधिकार प्राप्त' आदमी पहले आकर कुर्सियाँ घेर लेनेका हक या तकदीरका खेल बताकर शेषको भुलाअे रहते थे और शेष खड़े हुअे लोग कहीं जबर्दस्ती न कर डालें अिसलिअे पालतू लोगोंसे तरह-तरहकी धर्म और आध्यात्मकी बातें कहलवा कर अुनका ध्यान अुस ओरसे हटाअे रखते थे। लेकिन जब अधिक दिन यह चाल नहीं चली तो धन और बलसे वे अुन कुर्सियोंपर अपना अधिकार जताने लगे। मैं कुर्सियोंसे आदमियोंके बदल दिअे जानेका पक्षपाती नहीं हूँ। मैं या हम तो कहते हैं कि या तो कुर्सियाँ सबके लिअे हों या किसीके लिअे भी न हों। अब मैं तुम्हारे 'अूँचे लोगों' और 'साहस' की बात कहता हूँ। जैसा नायक जहाजके पंछीका है, अुसके पक्षमें दो सफाअियाँ हैं, अेक तो यह कि अुसे भाषण देनेकी आदत है। अुसने अिसी प्रकारके भाषण पुलिसवालों और डाक्टरोंको भी दिअे थे। दूसरे अुसकी अितनी बातोंसे तो तुम जान गअी होगी कि समाजमें अूँचे और नीचे लोग क्यों होते हैं, अिस बातको वह जानता है। मुझे स्पष्टवादिताके लिअे क्षमा करना, बौद्धिक लोग अर्थात् जो मानसिक रूपसे विकसित हैं और जो समाज और व्यक्तिके अितिहास और आज तकके सम्बन्धोंको समझते हैं, अपनी स्थिति और अिन 'अूँचे लोगों' की वास्तविक स्थिति दोनोंको समझते हैं। अुन्हें अपने आपको जीवित रखनेके लिअे भले ही अिन लोगोंकी 'शरण' में जाना पड़े, और जी-हुजूरी करते हुअे वे सब अदब-कायदे बरतने पड़ें जो साधारण आदमी करते हैं लेकिन अुनके मनको तो तुम भी पढ़ती ही होगी। क्या अुनकी हर चेष्टासे यह व्यक्त नहीं होता कि यह सब अेक मजबूरी है जो अुन्हें अैसा व्यवहार करनेपर विवश कर रही है--कोअी बेबसी है जो अुनके असन्तोषको बाँधे हुअे है और अपनेसे मानसिक और बौद्धिक रूपसे नीचे व्यक्तिको 'अूँचा' स्वीकार करनेको वह बाध्य है। कुछ कमजोर होते हैं जो अिस स्थितिको अपनी-अपनी तकदीर कहकर मन समझा लेते हैं, और कुछ 'समय' कहकर अुचित अवसरकी प्रतीक्षा करते हैं--जब अिस द्वन्द्वसे अपने आपको मुक्त कर सकेंगे। अैसे लोगोंके लिअे मेरे दिमागमें अेक अुपमा आ रही है कि ये लोग अज्ञात-वास करते हुअे पाण्डवोंकी तरह हैं जो कहीं किसी रूपमें अपना मुसीबतका वक्त काट रहे हैं और प्रतीक्षा कर रहे हैं कि समय बीते तो वे अपनेको प्रगट करें। बृहन्नलाके रूपमें अर्जुन और रसोअिअेके वेषमें भीमने भी तो यह समय बिताया ही था। लेकिन कहीं-कहीं वह स्थिति जब असह्य हो अुठती है तो अपनेपर वश नहीं रहता, वे लोग खुल जाते हैं। अिसे अनुचित नहीं बल्कि जल्दबाजी कहा जा सकता है। तो तुम्हारी अिस बातसे सख्तीसे असहमत होते हुअे भी मैं मानता हूँ कि वह नायक वहाँ सफल नहीं है। असलमें बात तुमसे कहते नहीं बन पड़ी। अेक अँग्रेजी फिल्मके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलोचकने किसी अैतिहासिक फिल्मकी यह गलती पकड़ ली कि युद्धके दृश्यमें अेक 'मृत-सिपाही' आँख खोलकर देख रहा था। अिसे लेकर डायरेक्टरपर हल्का-सा व्यंग्य करते हुअे अन्तमें अपनी राय लिखी थी कि "आओ हेट टु सी कार्पेज सो अैक्टिव" अिसी प्रकार तुम भी कह सकती हो कि "आओ हेट टु सी सर्वेण्ट्स सो बोल्ड और अिन्सोलेण्ट।" अिस प्रकार तुम्हारी "अूँचे लोगों" और "साहस" दोनोंकी बातें कट जाती हैं।

अेक रअीस लड़की किसी रसोअिअेकी नौकरी चाहनेवालेको पसन्द करे या न करे, अिसे भी तुमने मानवीय स्तरपर न लेकर वर्ग-गत-स्तरपर ही लिया है, अिसलिअे मेरा यहाँ भी विरोध है। अगर यही बात सच होती तो हमारी सारी लोक-कथाअें जिनमें राजकुमारियाँ अक्सर साधारण वेशमें रहनेवालोंके प्रेममें पड़ जाया करती थीं-(यह बात दूसरी है कि वे लोग भी मुसीबतके मारे राजकुमार ही हुआ करते थे-) ही झूठी नहीं पड़ जातीं बल्कि व्यक्तिकी सच्ची मानवीय भावनाअें भी झूठी पड़ जाती हैं। अिसका अर्थ तो यह है कि व्यक्ति वर्गका अैसा विवश गुलाम हो गया कि कभी अुससे छुटकारा ही नहीं पा सकता।--और प्रेम या घृणा जो भी कुछ करे वह केवल अपने ही वर्गमें करे। अगर यह बात सच है तो मैं पूछता हूँ कि अिसके विरुद्ध जो अुदाहरण मिलते हैं, अुनके क्या कारण हैं। हमारे यहाँ तो वर्ग-विभाजन अुतनी सख्ती और स्पष्टतासे है भी नहीं जितना अिंगलैण्डमें और वहाँके राज्य-परिवारकी सख्तीका तो तुम खुद ही अन्दाजा लगा सकती; फिर अुस परिवारमें प्रिंसेस मार्गरेट और जॉर्ज अष्टम कैसे "सड़क-चलते" साधारण लोगोंके प्रेममें अिस बुरी तरह अुलझ गअे कि अपने राज-पाट तकको अिसके लिअे दाँवपर लगा दिया! सो दीदी, जोशीजीकी विवशता भी मैं समझता हूँ कि जहाँ मानवीय भावनाअें अैसे अप्रतिरोध्य और अुदात्त रूपमें हों कि कोअी साँसारिक शर्म-लिहाज़ अुन्हें न रोक सके--अैसे क्षणको तो शायद ही कोअी कलाकार छोड़ सके। मीराके प्रेमकी तीव्रताने किस कलाकार या मानव-हृदय व्यक्तिको प्रभावित नहीं किया? और अपने वर्ग और समाजके लोगोंमें अुसका यह व्यवहार किस रूपमें अुस समय देखा जाता रहा होगा यह तो तुम आज भी सोच सकती हो। चाहे वह मेरा वर्ग हो या तुम्हारा; वर्गकी सीमाओं और नैतिकताओंको तोड़ने या अुनके विरुद्ध चलनेवाला तत्कालीन लोगोंके द्वारा कभी भी अच्छी निगाहोंसे नहीं देखा जा सकता। लेकिन यह भी सच है कि मानवीय भावनाअें और भौतिक आवश्यकताअें ही व्यक्तिको वर्गके चंगुलसे छुड़ाकर घुटने-मरनेसे बचा सकती हैं-बस हिम्मत आगे बढ़कर 'बदनामी' सहनेकी होनी चाहिअे जो कबीरकी तरह ललकारकर कह सके--"कबिरा खड़ा बजारमें लिअे लुकाठी हाथ, जो घर फूँके आपना चले हमारे साथ।"

फिर भी, सैद्धान्तिक-स्तरपर ये सब बातें मानते हुअे भी मैं यह स्वीकार करता हूँ कि जोशीजीसे वह सब अुसी तरह नहीं हुआ जिसके लिअे अितनी बड़ी वकालत की जा सके। अुन्होंने लीलाको मानसिक रूपसे अपने समाजसे अलग बताकर अिस बातके लिअे कारण तो पर्याप्त दे दिअे हैं कि लीलाका व्यवहार अैसा अघटनीय या अकल्पनीय नहीं है। फिर भी अुस सबको रखनेका तरीका कन्विंसिंग नहीं है। और अुपन्यासका वह हिस्सा निश्चय ही अुखड़ा-अुखड़ा-सा है।

अब आओ अपनी तीसरी बातपर कि वेश्याओंकी मानसिक प्रवृत्तियों और विकृतियोंको बदलनेकी पहले जरूरत है। भौतिक रूपसे ही मशीनें पकड़ा देनेसे समस्यासे छुटकारा नहीं हो सकता। यहाँ भी हम यह मानकर चलते हैं कि वेश्या बननेके सामाजिक या आर्थिक कारण नहीं होते; बल्कि वे ही औरतें वेश्या बन जाती हैं जो मानसिक रूपसे विकृत या जिनकी प्रवृतियाँ ही अैसी होती हैं। सचाअीको झुठलानेवाले लोगों और अैसे लोगोंको बल देनेवाले देशोंकी बात छोड़ दो--(क्योंकि अभी दो-तीन महीने पहले ही मैंने स्टेट्समैनमें अिंगलैण्डके किसी डाक्टरका मत पढ़ा था कि वेश्या होनेका प्रमुख कारण औरतमें काम-वासनाका प्राबल्य है,) तुम क्या सचमुच ही यह मानती हो कि वेश्या होनेका कारण आर्थिक न होकर कुछ और है? अगर तुम अुनसे मिलो तो सचमुच यह देखकर काँप अुठोगी कि अुनमेंसे ह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औरत अेक माँ, अेक बहिन, अेक बेटी, अेक पत्नी, अेक सुगृहिणी बननेके लिअे मन-ही-मन कितनी बेचैनीसे तड़पती हैं--लेकिन सिर्फ अेक औरत बनी रहनेके लिअे मजबूर है--औरत, जो किसीकी माँ, बहन, पत्नी, बेटी कुछ नहीं है। अिसलिअे जब तक औरत है अर्थात् अुस औरत बने रहनेकी अुम्रमें है, जीवित है। क्या अिस स्थितिको वे लोग खुशीसे ही अपनाती हैं ?--और जब अुस वर्गमें आ जाती हैं तो अुनकी मानसिक प्रवृतियाँ भी अुसी रूपमें ढल जाती हैं क्योंकि वहाँ वे मशीनकी ढली-ढलाअी पुतलियाँ ही तो होती हैं। अुसका अिलाज तो यही है कि जिस मजबूरीने अुन्हें अिस कीचड़में आनेको मजबूर किया अुसीसे अुनका पीछा छुड़ाया अर्थात् सम्मान-जनक साधन देकर अुन्हें आत्म-निर्भर किया जाअे। साथ ही अुनके दिमागी मैलको साफ करनेके लिअे अुचित शिक्षा देकर समझाया जाअे कि श्रम-पूर्वक जीवित रहने और शरीर बेचकर आत्म-हत्या करनेमें क्या अन्तर है। जोशीजीने श्रमकी बातको तो ठीक लिया, और अिसके द्वारा वे वेश्या-वृत्तिके मूल कारण तक पहुँचे हैं लेकिन समस्याका हल देते हुअे अुन्होंने श्रमकी महत्ता और पहले जीवनसे अुसका अन्तर समझानेका कोअी विधान नहीं रखा है। यही अुस अुपन्यासकी कमजोरी है।

ये सब बातें मैंने अुस अुपन्यासकी वकालतके लिअे नहीं लिखीं। सच बात तो यह है कि वह अुपन्यास मुझे भी तुम्हारी तरह ही बहुत पसन्द नहीं है, किन्तु अुसे नापसन्द करनेके मेरे तुम्हारे आधार दूसरे हैं। अिस पत्रको अितने विस्तारसे लिखनेका अर्थ भी यही है कि हर चीजको तुम वर्ग-हित या वर्ग प्रभाव और संस्कारोंसे हटकर जरा तटस्थ और वैज्ञानिक दृष्टिसे देखना प्रारम्भ कर दो।

अच्छी बात है, जीवनके व्यावहारिक प्रश्नोंके यों ही गलत-सलत अुत्तर देकर कोर्सके अिम्तहानोंके सही और पास होने लायक अुत्तर दे सको--अिसके लिअे मेरी शुभ कामनाअें लो।

तुम्हारा सस्नेह,

नरेन्द्र शिरोमणि

हिन्दी साहित्यमें स्पृहणीय वृद्धि

प्रतिभा

का

कहानी विशेषांक

आगामी जुलाअी १९५६ को प्रकाशित हो रहा है।
हिन्दीकी प्रतिनिधि कहानियों अेवं अन्य भाषाओंकी महान
कहानियोंका अमूल्य संग्रह।
मूल्य १ रुपया
प्रकाशक
प्रतिभा प्रकाशन लिमिटेड
वर्धा रोड, नागपूर १

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यमें प्रभाव तत्व

—श्री घनश्याम सेठी

अपने दैनिक अध्ययनमें साहित्य-रचनाके बीसियों माध्यम हमारी दृष्टिसे गुजरते हैं। अुपन्यास, कहानी, नाटक, कविता, रिपोर्टाज़ अित्यादि ये सब साहित्य-रचनाके ही विभिन्न रूप (forms) हैं। किन्तु अिनमें कौनसी रचनाअें सफल और कौनसी रचनाअें असफल हैं, और अिनकी सफलता और असफलताके पीछे क्या भेद हैं; अिस तथ्यपर बहुत कम लोग विचार करते हैं। अिसके दो कारण हैं, अेक तो यह कि अिस प्रकारके विषयोंपर हममेंसे अधिकांश विचार करना जानते ही नहीं, और दूसरा यह कि अितनी माथा-पच्ची कौन करे! यद्यपि यदि हम कुछ मोटे-मोटे सिद्धान्तोंके प्रकाशमें साहित्यिक-कृतियोंपर विचार करनेके अभ्यस्त हो जाअें, तो यह विषय माथा-पच्चीका नहीं, वरन् मन और मस्तिष्कके स्वस्थ विकासका कारण भी हो सकता है।

सफल साहित्यिक-रचना कौनसी है? अिसका अुत्तर देनेसे पूर्व जरा "सफलता" से अभिप्राय क्या है यह देख लें। सफलता वास्तवमें है कौनसा पक्ष? अुद्देश्यकी प्राप्तिको सफलता कहते हैं, यानी यदि कोअी वस्तु अपने अुद्देश्यको पूरा करती है तो वह सफल है। यहींसे साहित्यके अुद्देश्यकी बात छिड़ जाती है। साहित्य भी अेक ललित कला है और कलाके अुद्देश्यसे सम्बन्धित आज-कल तीन दृष्टि-कोण मान्य हैं।

१. कला कलाके लिअे।
२. कला मनोरंजनके लिअे।
३. कला जीवनके लिअे।

प्रथम दृष्टि-कोण मेरे निकट थोथा और छिछला है। शायद यह मेरी ही नजरका अैब हो। अब रहे शेष दो दृष्टि-कोण: अिनमेंसे कौनसा दृष्टिकोण सही है, यहाँ अुससे बहस नहीं। कलाका अुद्देश्य कुछ भी हो, अुसकी सबसे बड़ी शर्त यही है कि अुसका अध्ययन अथवा निरूपण या तो स्वस्थ मनोरंजन कर सकनेकी क्षमता रखता हो अथवा जीवनके प्रति कोअी नया रचनात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता हो। दोनों सूरतोंमें जो पक्ष सम्मत है, वह है कलात्मक अथवा साहित्यिक कृतिकी मर्मस्पर्शिता, प्रेषणीयता और अुसकी तासीर! कोअी भी साहित्यिक अथवा कलात्मक रचना अिन दो कसौटियोंपर तबतक पूरी नहीं अुतर सकती जबतक कि अुसमें अभिभूत कर लेनेकी तीव्र शक्ति न हो। यही वह अेक माध्यम है जिसके द्वारा अेक कलाकार अपनी अनुभूतियों अेवं भावनाओंको दूसरोंतक पहुँचानेमें सफल हो सकता है। यदि कोअी रचना अिससे खाली है तो पाठक अथवा दर्शक तक वह भावनाअें और अनुभूतियाँ नहीं पहुँच सकतीं, जिस रचयिताने अुसकी रचनासे पूर्व, स्वयम् अनुभव किया था, और जब अैसा है तो वह रचना क्योंकर सफल कही जा सकती है?

यहाँतक तो बात सीधी और स्पष्ट है परन्तु जब प्रश्न यह हो कि प्रभाव या मर्म-स्पर्शताकी तासीरका रूप क्या हो? प्रभाव तत्व किन्हें कहते हैं और वह क्यों और कैसे जन्म लेते हैं तो बात जरा टेढ़ी पड़ती है। अिसे यूँ सुलझाया जा सकता है; दो व्यक्ति हैं, समान मानसिक अेवं भावनात्मक स्तरके हैं, किसी अेक घटनासे प्रभावित होते हैं और फिर अिस अनुभूतिकी अभिव्यक्ति अेक महफिलमें करते हैं। अेक व्यक्तिके वर्णनपर महफिल फड़क अुठती है और दूसरेके वर्णनका कोअी असर नहीं लेती। रामायणसे कौन अपरिचित है। किन्तु यह तो अेक साधारण निरूपणकी बात है कि कुछ लोग अिसका पाठ करते हैं तो अैसा समाँ बाँध देते हैं कि श्रोतागण अपने अस्तित्व, युग और काल तक भूल जाते हैं और कुछ अन्य लोग गला फाड़-फाड़कर थक जाते हैं और लोग अिससे मस्त नहीं होते। यह प्रभेद क्यों है? बात यह है कि कुछ कलाकारोंमें श्रोताओं, पाठकों या दर्शकोंके मनमें Sympathetic

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Vibrations पैदा करनेका कौशल अधिक होता है। 'फिजिक्स'से जानकारी रखनेवाले जानते हैं कि प्रत्येक गतिवान वस्तु अपने समूचे वातावरणमें अुसी प्रकारका कम्पन अुत्पन्न कर देती है, जिससे स्वयंभू प्रभावित होती है। अिसके अतिरिक्त यदि प्रभावित करनेवाले और प्रभावित होनेवाले दोनों पक्षोंका निर्माण अेक ही वस्तुसे हुआ है, अुनका निरूपण, निरीक्षण, अनुभव, मन, मस्तिष्क अित्यादि अेक स्तरके हैं तो यह प्रभाव और भी स्पष्ट और पैना होता है। बिल्कुल यही हाल साहित्यके प्रभाव तत्वोंका है। साहित्यकारकी अनुभूतियाँ और चिन्तन, पाठकोंके हृदयमें Sympatheti Vibrations अुत्पन्न करते हैं। और जितनी साहित्यकारकी अनुभूति और अभिव्यक्ति स्पष्ट, कोमल और मर्मस्पर्शी होती है, अुतनी ही पाठकोंकी अभिभूति भी स्पष्ट होती है। और यदि अेक ओर साहित्यकार और दूसरी ओर पाठक, समान मानसिक स्तर रखते हों तो अभिभूतिकी यह जकड़ और भी स्पष्ट और दृढ़ हो जाती है।

अिस दृष्टान्तसे यह परिणाम निकला कि प्रभावका सम्बन्ध अेक ओर तो साहित्यकारकी पैनी अनुभूतियों और शक्ति-शाली अभिव्यक्तिसे है और दूसरी ओर पाठकोंमें जन्म लेनेवाली प्रतिक्रियासे। पाठकोंके भी कअी वर्ग हैं, परन्तु अुनके ब्यौरेकी अिस लेखमें गुंजाअिश नहीं, अिसलिअे यहाँ यह फर्ज कर लें कि अुनमें प्रभाव लेनेकी योग्यता विद्यमान है और अिस कल्पनाके पश्चात शेष प्रश्न यह रह जाता है कि साहित्यकारकी पैनी अनुभूति क्या वस्तु है और अिसका प्रभाव-तत्वोंसे क्या सम्बन्ध है, और यह कि अिन तत्त्वोंका सम्बन्ध किसी अन्य वस्तुसे भी है अथवा नहीं; और है तो किस वस्तुसे और कहाँतक।

पैनी अनुभूतिसे मेरा अभिप्राय यह है कि साहित्यकार जिस वस्तुका वर्णन कर रहा है अुससे अिस हदतक प्रभावित हुआ हो कि अभिव्यक्तिके लिअे विवश हो जाअे। जो लोग सूक्ष्म-ग्राही और तनिक भावुक हृदयके स्वामी हैं, वह अिस बातको बहुत अच्छी तरह समझ सकते हैं कि कोअी किसी बातकी अभिव्यक्तिपर क्यों विवश हो जाता है।

अब हमें यह देखना है कि अैसी अनुभूति प्रभाव-तत्वोंसे क्या सम्बन्ध रखती है। दूसरे शब्दोंमें यदि कोअी बात किसी घटनामें सचमुच दो-चार होकर कही जाती है तो वह अधिक प्रभावशाली क्यों होती है? अिसका अुत्तर स्पष्ट है, जब कोअी व्यक्ति किसी घटनासे प्रभावित होता है, तो अुससे सम्बन्धित अुसकी निरूपण-शक्ति बढ़ जाती है और अुसके अनुभवकी आँखें अिस योग्य हो जाती हैं कि मनकी आत्माके तारोंको छेड़ सकें और अिनकी परस्पर क्रिया अेवं प्रतिक्रियाका निरीक्षण कर सकें। अिस निरूपणके कारण, अुसकी रचनामें, अेक ओर तो परिपक्वता अेवं वास्तविकता आ जाती है और दूसरी ओर शक्ति और गति। मानव मनमें भीतर-ही-भीतर हिलकोरें लेनेवाली भावनाओं और तिरंगोंकी सफल अेवं सूक्ष्म अभिव्यक्ति, पाठकको झकझोर कर रख देती है और अुसके मुँहसे अनायास ही 'आह' या 'वाह' निकल जाती है।

परन्तु अिसका यह अर्थ नहीं कि प्रभाव-तत्त्वोंका सम्बन्ध केवल पैनी अनुभूतिसे ही है। यदि अैसा होता तो प्रत्येक मजदूर कवि और प्रत्येक क्लर्क साहित्यकार होता, क्योंकि अिन अभागोंका तो संसार ही केवल दुखों और अभावोंकी अनुभूतियोंसे बना है। अिसलिअे लगता है कि अनुभूतिके अतिरिक्त प्रभाव-तत्त्वोंका सम्बल कोअी अन्य वस्तु भी है।

जब हम किसी रचनाको आलोचनात्मक अेवं विवेचनात्मक दृष्टिसे आँकते हैं तो सबसे पहला प्रश्न हमारे मस्तिष्कमें यह अुठता है कि कवि या साहित्यकार कहना क्या चाहता है। कौनसी बात है जिसके अभिव्यक्तिकरणके लिअे अुसकी साधना विवश हुअी है। यानी अुसका विषय क्या है? प्रभाव-तत्त्वोंका सम्बन्ध विषयसे है तो जरूर, लेकिन बहुत नहीं। विषय कितना ही पुराना घिसा-पिटा और रूखा-फीका ही क्यों न हो; अेक अच्छा कलाकार अुसमें भी कलाकी अुत्कृष्ट कृतियाँ घड़ सकता है। किसको गुमान हो सकता है कि 'कुत्ता' और 'ड्राम' भी कोअी अैसे विषय हैं, जिनपर कोअी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यकार अपना समय नष्ट करेगा, परन्तु अिन्हीं दो विषयोंपर 'कोस्लर' और "अिज" के लेख पढ़िअे और देखिअे कि अच्छे कलाकारके निकट विषय कितनी अदना-सी चीज है। अिसके विपरीत अेक बे-ढंग लेखक श्रेष्ठसे श्रेष्ठ विषयकी भी हत्या कर सकता है। अुदाहरण देनेकी आवश्यकता नहीं। आपने असंख्य अैसी कविताअें देखी होंगी, जिनमें 'पनघट' और 'पतंगे' जैसे विषयोंका मुँह चिढ़ाया गया होगा। परन्तु अिन सब बातोंके बावजूद विषय बिलकुल भुला देनेवाली वस्तु भी नहीं है। किसी रचनाकी सफलताके लिअे विषयका अुचित चयन बड़ा आवश्यक है। अब रहा यह प्रश्न कि अिस चयनकी क्या कसौटी हो तो अुत्तर स्पष्ट है कि श्रेष्ठ विषय वही है जो कुछ नवीनता लिअे हुअे हो और कुछ अपना निजी आकर्षण भी रखता हो। पुराने और घिसे-पिटे विषयपर कोअी प्रभाव-पूर्ण बात कहना जरा टेढ़ी खीर है। अेक अच्छा अुदाहरण छाया-वादी काव्यकी रचनाओंमें मिलता है। अेक जमाना था जब पाठक अैसी रचनाओंको पढ़कर सिर धुनते थे और रसमग्न हो जाते थे परन्तु अब अुन्हीं रचनाओंसे वह बेजार हो चुके हैं।

कहा जाअेगा कि संसारकी प्रत्येक वस्तुके समान विषयोंकी संख्या भी सीमित है। अब कलाकार हर नअी कलाकृतिके लिअे नया विषय कहाँसे लाअे? परन्तु प्रकृतिने प्रत्येक वस्तुमें असंख्य बारीकियाँ सँजो रखी हैं और यदि कलाकारकी दृष्टि या कल्पना वहाँ तक पहुँच सके तो अुसे विषयोंकी कोअी कमी नहीं हो सकती। कठिनाअी यह है कि हमारा ज्ञान सीमित और हमारी दृष्टि छिछली है। हम पर्वतों अेवं नदियोंके दृश्यों और सौंदर्य तथा प्रणयके विषयोंपर तो लेखनी गरम रखते हैं और कोअी नअी बात न कह सकनेपर भी हिम्मत नहीं हारते—किन्तु अन्य असंख्य वस्तुअें हमारा ध्यान खींचनेमें असफल रहती हैं! जब हमारे चिन्तन, मनन और अध्ययनका यह स्तर हो तो फिर विषयोंकी कमीकी शिकायत होनी ही चाहिअे।

दूसरी वस्तु जो प्रभाव-तत्त्वोंका सम्बल है वह है सौन्दर्य-युक्त-कल्पना। किसी विषयसे प्रभावित होने और अुसके अभिव्यक्तीकरणके बीच अेक व्यवधान होता है, जिसमें कलाकारका मस्तिष्क अपनी अनुभूतिको अपनी कलाके ताने-बानेमें बाँधता है। अनुभूति, अनुभूतिका कलाके सांचेमें ढलना; और फिर व्यक्त होना ये तीनों अेक ही श्रृंखलाकी तीन कड़ियाँ हैं। किसी तीव्रतम अनुभूतिका शिकार होते ही कलाकारका मस्तिष्क अुसे अपने ताने-बानेमें बांधना आरम्भ कर देता है। जितनी अनुभूति तीखी और स्पष्ट होती है अुतनी ही काल्पनिक क्रिया परिमार्जित होती है, ठीक अुसी प्रकार जैसे दबाव अधिक होनेसे पानीका बहाव तेज होता है और कम होनेसे धीरे। यही कारण है कि अुन साहित्यकारों अथवा कवियोंकी रचनाओंका रंग ही दूसरा होता है, जो खुद चोट खाया हुआ दिल रखते हैं। और जो लोग केवल अिसलिअे काव्य-रचना करते हैं कि अुनके बाप-दादा अिस मैदानके बड़े खिलाड़ी थे, और अिसलिअे साहित्यिक तत्व तो अुनकी मुट्ठीमें हैं, अुनके यहाँ हमें निष्प्राण और अुस प्रकारकी चीजें मिलती हैं। जब जल ही नहीं है तो बहाव क्योंकर होगा?

अब यह भी देख लें कि अनूभूतिके तीव्रतम और सूक्ष्म होनेसे काल्पनिक-क्रिया सशक्त और स्वच्छन्द क्यों होती है। अनुभूति मन और मस्तिष्ककी अेक मनोवैज्ञानिक क्रिया है। अनुभूतिका मूल-स्वरूप आत्मामें ही निहित है और अिसकी सम्पूर्ण अभिव्यक्ति लगभग असम्भव ही है। अुदाहरणार्थ गुलाबका फूल लीजिअे, जो प्रत्येक सुलझे हुअे मिजाजके व्यक्तिको अच्छा लगता है परन्तु क्या कोअी अिस अच्छा लगनेकी कैफियत बता सकता है? गुलाबका फूल देखते ही अेक अपरिचित भावना हमारे रोम-रोमको झंकृत कर देती है और अिस झंकारको अनुभव किया जा सकता है, व्यक्त नहीं किया जा सकता। हाँ, अुपमाअें अवश्य सहायता देंगी। गुलाबके फूलको अुपवनका यौवन कहकर अथवा प्रणय-द्वीपकी भटकी हुअी आत्मा कहकर हम अपनी भावनाको शब्दोंमें ढालना चाहेंगे, यही काल्पनिक क्रिया है। हर वह व्यक्ति जो साहित्यसे कुछ लगाव रखता है, जानता है कि किसी अैसी घटना या वस्तुको देखकर जिसने मनपर अच्छा या बुरा (किन्तु गहरा) प्रभाव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छोड़ा हो, तबीयतमें अेक स्वच्छन्द शक्ति अुत्पन्न हो जाती है, मन जो अनुभूतियोंका पूँजीभूत है, अनायास यह चाहता है कि जो कुछ अुसे अनुभव हो रहा है वही दूसरोंको भी हो। यानी अनुभूति कलाके स्वरूपमें परिवर्तित होना चाहती है, दूसरे शब्दोंमें कला अनुभूतिका ही व्यक्त रूप है। कलाकारकी बारीक बीन आँखें और गहराअीतक अुतरनेवाला दिल, अुपाधियोंका विच्छेद करके मूल अनुभूतिको ही पकड़ता है और अुसे अेक संस्कृत साँचेमें ढालकर साकार कर देता है। कवि जैसी अनुभूति हमें भी हो सकती है, परन्तु क्योंकि काल्पनिक क्रियाके अभावमें हम अुसे अेक साकार और संस्कृत रूप नहीं दे सकते, अिसलिअे अुसमें हमें रस नहीं मिलता, और काव्यमें हमें रस भी मिलता है और आनन्द भी "रसो वै सः"।

प्रारम्भिक अनुभूति और अभिव्यक्तिकरणके मध्य काल्पनिक क्रिया अेक आवश्यक कड़ी है। किन्तु यह आवश्यक नहीं कि यह क्रिया किसी लम्बे व्यवधानकी मुँहताज हो। प्रायः अैसा होता है कि कोअी घटना अनुभवकर्ताको झकझोर कर रख देती है और वह तुरन्त अुसे अेक साकार रूप दे देता है और अुसे अधिक माथा-पच्ची करनेकी आवश्यकता नहीं पड़ती। शायद अिसीलिअे कअी लोगोंको यह भ्रम है कि अच्छे कलाकार, साहित्यकारके लिअे काल्पनिक क्रिया आवश्यक नहीं। अैसा नहीं है, अनुभूतिको संस्कृत, और सोपाधिकसे रसात्मक बनानेमें चाहे कितना थोड़ा समय ही क्यों न लगे, पर अिसके अभावमें अभिव्यक्ति साकार, सशक्त और कलात्मक नहीं हो पाती।

स्वस्थ और सौन्दर्य-युक्त काल्पनिक क्रिया प्रभाव तत्वोंका सम्बल क्यों और कैसे है? यह तो हम देख चुके हैं कि अनुभूति और अभिव्यक्तिके बीच, अनुभव-कर्ताके मस्तिष्कमें अेक अन्य क्रिया भी होती है। यानी यदि कलाकार सचमुच अभिभूत है तो अुसके मस्तिष्कमें अुस अनुभूतिका रूप सूक्ष्म, विस्तृत और सुन्दर होगा। दूसरे शब्दोंमें यदि कलाकारके हृदयमें किसी घटना अथवा वस्तु अथवा व्यक्तिका रूप सुन्दर और संस्कृत है तो अभिव्यक्ति निस्सन्देह सुन्दर ही होगी। और लौकिक सुख और आनन्द जो पाठक अुस कलाकृतिसे प्राप्त करेंगे वह अिसी अभिव्यक्तिके कारण ही। अिसलिअे यदि अभिव्यक्ति सुन्दर और प्रभावशाली है तो निस्सन्देह काल्पनिक क्रिया जो अिस अभिव्यक्तिका ताना-बाना है, अनिवार्यतः सुन्दर ही होगी।

निम्नांकित पंक्तियोंके अुद्धरणोंसे स्पष्ट हो जाअेगा कि सौन्दर्ययुक्त काल्पनिक क्रिया कैसे कलात्मक अेवं प्रभावशाली अभिव्यक्तिका कारण बनती है:—

१. मुझे बता दो, स्नेह जता दो
क्या मैं क्षण भर भी अपनेमें
तुमको वैसा झेल सकूँगा
जैसा तुमने घनी व्यथामें
आत्मदानमें, रक्तदानमें,
कसे गर्भमें अपने भीतर
तिल-तिल खुद मिट कर, भ्रूण जिन्दाकर
अनावरण मेरा माखन तन,
दो सौ अड़सठ दिन झेला था

—प्रयागनारायण त्रिपाठी

२. मेरी किस्मतमें गम अगर अितना था
दिल भी या रब कअी दिअे होते

—गालिब

३. दुनियाँकी बलाओंको जब जमा किया मैंने
धुन्धली-सी मुझे दिलकी तस्वीर नजर आअी

—फानी

४. तैरते तिनके झुलाती धार है,
डूबता कंकर बहुत लाचार है,
कौन भारी और हल्का कौन है,
तोलना ही लहरका व्यापार है।

—रमा शर्मा

तीसरी वस्तु जिसका सम्बन्ध प्रभावसे है, वह है कलात्मक अभिव्यक्तिकरण। यानी प्रारम्भिक अनुभूतिका, काल्पनिक क्रियाके पश्चात्, कलाके साँचेमें ढल कर अभिव्यक्तिकरण! यह सबसे महत्वपूर्ण तत्व है, क्योंकि अभिव्यक्तिकी कला हो अैसी वस्तु है जो पाठकों अथवा दर्शकों अथवा श्रोताओंको प्रथम दृष्टिगोचर और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुभव होती है। साधारण पाठक अिससे आगे नहीं बढ़ते। अिनके निकट कुछ सुन्दर शब्दोंको सुरुचिपूर्ण अेकत्रित कर देना, या किसी बातको अनोखेपनसे या चटपटी भाषा-शैलीमें अभिव्यक्त कर देना ही कला है। अिसीलिअे साधारण पाठकपर शब्दोंके तिलस्मवाली पुस्तकोंका अधिक प्रभाव रहा है और है। परन्तु जिन पाठकोंका अध्ययन जरा तगड़ा और दृष्टि तनिक दूरबीन होती है वह जरा आगे बढ़कर विषय और कल्पनाकी बात भी सोचते हैं। फिर भी, पाठक चाहे साधारण हो अथवा अध्ययनशील, जोरदार अभिव्यक्ति सबके लिअे आकर्षणकी वस्तु तो है ही! अभिव्यक्तिकरणकी कला और प्रभाव-तत्वोंमें अितना बारीक और गहरा सम्बन्ध है कि यदि किसी कलाकृतिमें यह विशेषता नहीं तो अुसकी अन्य विशेषताओंपर भी पानी फिर जाता है। और अिसलिअे प्रभाव-तत्त्व जो कलाकी आत्मा हैं, शून्य रह जाते हैं; बावजूद अिसके कि विषय भी अच्छा हो, साहित्यकार अथवा कवि अुससे प्रभावित भी हुआ हो और काल्पनिक क्रिया भी संस्कृत और स्वस्थ ढंगसे हुअी हो—लेकिन बात ही जब भौंड़े ढंगसे कही जाअे तो अिसमें प्रभावके स्थानपर मसखरापन अुत्पन्न हो जाता है और पाठकों या श्रोताओं या दर्शकोंके मुँहसे 'आह' या 'वाह' निकलनेकी बजाय "हाअें" और "धत् तेरेकी" के शब्द सुनाअी पड़ते हैं।

अिसमें सन्देह नहीं कि विषयकी खूबी, प्रारम्भिक अनुभूतिकी तीव्रता और काल्पनिक-क्रिया जब साकार हो अुठती है तो अपनी अभिव्यक्तिके लिअे स्वयम् ही कोअी-न-कोअी रास्ता ढूंढ़ लेती है। यानी यदि कवि या साहित्यकार सचमुच ही अभिभूत हुआ है तो अभिव्यक्ति स्वेच्छापूर्ण ही समझमें आ जाती है। और वह किसी-न-किसी प्रकार अपने विचार पहुँचा ही देती है। परन्तु दूसरों तक अपने विचार पहुँचा देना और बात है और दूसरोंपर सिर धुननेकी कैफियत जारी कर देना अलग बात है। और यह दूसरी बात समर्थ और सशक्त अभिव्यक्तिके अभावमें सम्भव नहीं।

अिस गुणसे युक्त, सर्वथा नअी बात पैदा कर देनेवाले कवि और साहित्यकार अुँगलियोंपर गिने जा सकते हैं। अिन्हींकी गणना साहित्यिक महारथियोंमें होनी चाहिअे। क्योंकि यह प्रकृति और मानव-मनकी अुन सूक्ष्म और सुकोमल भावनाओंको व्यक्त करते हैं, जिन्हें सम्भव है अेक साधारण व्यक्ति अनुभव तो करता है पर अभिव्यक्त नहीं कर सकता। अभिव्यक्तिकी यही विशेषता साहित्यकारको साधारण व्यक्तिसे विशिष्टता प्रदान करती है। वास्तवमें साहित्यकारका कमाल ही यह है कि वह अपनी अनुभूतिका साक्षात्कार, अपनी अभिव्यक्तिके सहारे पाठकोंको कराता है, और अपनी अनुभूतिको जीवित और साकार रूप दे देता है कि पाठक भी अुसे महसूस कर सकें। कुछ अुदाहरणोंसे यह बात और भी स्पष्ट हो जाअेगी :—

१. सन्तप्तानां त्वमसि शरणं तत् पयोद प्रियायाः
सन्देशं मे हर धनपतिक्रोधविश्लेषतस्य।
—कालिदास

२. हमारे आगे तेरा जब किसीने नाम लिया
दिल-सितम-ज़दाको हमने थाम लिया।
—मीर

३. फिर भी प्यास अरमान
वह ठण्ढी मीठी आग मिली
जीवन पाकर जो जलती है
वह रेगिस्तानी प्यास मिली
मधु पाकर और मचलती है।
सब कुछ तो मिला, पर मिल न सके
प्यालेमें डूबे प्राण फिर भी प्यासे अरमान।
—नीरज

४. पर कवि हूँ स्रष्टा, द्रष्टा, दाता : जो पाता
हूँ, अपनेको मिट्टी कर अुसे गलाता चमकाता हूँ
अपनेको मिट्टी कर अुसका अंकुर पनपाता हूँ।

अुपर्युक्त सभी अुद्धरण मानवकी अुन कोमल और लतीफ पक्षोंकी भावनाओंकी अभिव्यक्ति करते हैं जिन्हें अनुभव तो हम सब करते हैं, किन्तु व्यक्त नहीं कर पाते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रत्येक कवि अथवा लेखक अिस स्तरको नहीं पहुँचता, अधिकांश अैसे होते हैं जिनके पास न तो स्वस्थ विषय ही होता है और न स्वस्थ चिन्तन; होती है तो केवल अेक वस्तु: सशक्त अभिव्यक्ति, और वही अुन्हें लोक-प्रिय बनानेके लिअ पर्याप्त होती है। परन्तु बारीक-बीन निगाहोंको अुनकी रचनाओंमें सजावट और व्यर्थके श्रृंगारके अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलता।

आकर्षक विषय, स्वस्थ तथा सुसंस्कृत चिन्तन (काल्पनिक क्रिया) और कलात्मक अभिव्यक्तिका सम्बन्ध निम्नांकित दृष्टान्तसे समझा जा सकता है: बे-तरशा हुआ हीरा भी अेक बहुमूल्य वस्तु है पर जो हीरा नपी-तुली, जँची और कलात्मक जुम्बिशोंकी कटाअीके बाद निकलता है, वह निस्सन्देह बे-तरशे हुअे हीरेसे कहीं अधिक सुन्दर और कलात्मक होता है। हीरेके अिस नअे रूपकी रूप-रेखा तो पहलेसे ही तराशके मस्तिष्कमें रहती है, यही रूप-रेखा काल्पनिक क्रियाका परिणाम है और तराशनेकी कला है--अभिव्यक्ति। बिन तरशा हुआ हीरा भी हीरा ही है और तराशा हुआ हीरा भी; परन्तु अेक भद्दा और बे-डौल पत्थर है और दूसरा राजाओं-महाराजाओंके मुकुटोंकी शोभा! अिसी प्रकार विषय कितना ही सुरुचिपूर्ण और आकर्षक क्यों न हो, यदि सलीकेके साथ निभाया नहीं जाता तो अुसमें कोअी असर नहीं रह पाता। अिसके विपरित, विषय कितना ही पुराना और घटिया ही क्यों न हो, यदि कला-पूर्ण ढंगसे प्रस्तुत किया गया है तो प्रभावशाली भी हो सकता है।

संक्षेपमें यह कि साहित्य अथवा किसी भी अन्य ललित-कलाके प्रभाव-तत्त्व अिन्हीं तीन पक्षोंपर अवलम्बित हैं: अनुभूति, अभिव्यक्ति और चिन्तन (अथवा काल्पनिक क्रिया)। अिन तीनोंमें अभिव्यक्तिका महत्व सर्वाधिक है। यहाँतक कि यदि शेष दो पक्ष कुछ त्रुटि-पूर्ण भी हों तो भी रचना गवारा की जा सकती है और कअी स्थितियोंमें तो अुत्कृष्ट और प्रभावपूर्ण भी हो सकती है! परन्तु वह तीव्रतम और चिरस्थाअी प्रभाव तो अिन तीनों पक्षोंके स्वस्थ अेकीकरणसे ही अुत्पन्न हो सकता है जो पाठकोंको सिर धुननेपर विवश कर देती है। साहित्यिक रचनाओं अथवा कलाकृतियोंमें जितना अिन पक्षोंका सन्तुलित और जचा हुआ मिश्रण हो जाअे, अुतनी ही रचनाकी जकड़ बढ़ेगी, रचाव बढ़ेगा और जिस अनुपातसे कोअी पक्ष कमजोर होगा, अुसी अनुपातसे रचनाके प्रभाव-तत्व शिथिल होते जाअेंगे।

राष्ट्रभारतीका प्रत्येक पाठक अेक नया ग्राहक बनाकर राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रति अपने राष्ट्रीय कर्तव्यका पालन करे!.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कनेरकी मसली कली !

--श्री रंगनाथ 'राकेश'

(१)

छलछलाया दर्द !
पैरोंके तले
मसली पखुरियाँ
सुबककर होंठ भींचे;
छटपटाकर अुड़ गअे
फागुनी-वातासमें
मरालीके मनोजी-पंख,
शामकी परछाअियाँ सरकीं
जमने लगी सहसा
अँधेरी गर्द !
पथ हुआ सुनसान
औ' खामोशियाँ लटकीं
कि सहसा अेक स्वर
पिघला हुआ
बिछला हृदयमें
सकपकाकर दूरियाँ गिन
पग बढ़े ज्यों ही
कि सहसा यह लगा
कअी योजन दूर कोअी
कर रहा सन्धान मुझपर
शब्दबेधी बान खींचे ! .....

(२)

आवाज तेरी शून्यमें :
"....सुरभिका स्वर अेक होता है !
कनेरी औ' गुलाबी गंध
कहनेको अगर दो हैं
तो वस्तुतः, अुनकी पखुरियोंका—
कुनमुनाता लाल-पानी अेक होता है।"
कँप अुठा अन्तस, और
स्वर बढ़ता गया—
'आदमीकी धड़कनें भी अेक होती हैं !
पालनेके तोतले, मासूम स्वर
राजरानी औ' चमाअिनके लिअे
मातृत्व बनकर अेक हैं ! .....
निष्ठुर मनुज ! तू पूछ
अिन परछाअियोंसे
अिनके हृदयमें कौंधता क्या ?
स्वयँ तू सोच निर्मोही
कि पुवालोंमें सिमटती रात, औ'
सोकेकी चहकती चाँदनी
रंगीनियोंमें दो अगर
तो अुरका समर्पन अेक है ! .....
बोलो, क्यों खड़े हो आँख मींचे !

(३)

अक्षांस औ' देशांतरोंकी दूरियाँ
क्या रोक पाअीं स्नेहको,
हिचकियोंकी बिचकियाँ
क्या सभी आँखें देख सकती हैं ?
केशपाशीमें टँके ये फूल
माना कि बहुत सुन्दर
मगर ये कनेरी पखुरियाँ भी
फूलकी ही बेटियाँ सुकुमार हैं,
द्रौपदीसे कम नहीं हैं
पीतवर्ण-वसन अिनका,
अिन्हें मत मसलो ! .....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नन्हा-सा दिल, कोमल-सा दिल

--श्री रघुराजसिंह

नन्हासा दिल
कोमलसा दिल
ठेस लगी भर आता है दिल
नयन मार्गसे--
बह जाता जल
जाने क्या--क्या--
सह जाता दिल ?
धक-धक करता--
प्रतिपल, प्रतिक्षण
जाने क्यों यह--
छोटासा दिल
नन्हासा दिल !
अुरकी पीड़ाको बहलाने
लोरी गा-गा अुसे सुलाने
थपकी देता रहता है दिल
नन्हासा दिल
कोमलसा दिल !!
जाने क्यों अन्तरकी पीड़ा
अुरमें करती रहती क्रीड़ा
झंकृत होते—
मूक स्वरोंमें--
बज अुठते क्यों--
मेरे अुरके--
—अिन प्राणोंके—
मूक, अचानक—
सब ही कोमल तार।
जिससे आता--
हृदय-जलधिमें—
अेक बड़ासा ज्वार
और भावनामें बह जाता--
नन्हासा दिल
छोटासा दिल।

मूक वेदना
मिटी चेतना
अलसाअी-सी
कुम्हलाअी-सी
आँखोंके पथ,
जल धारामें--
अुफन-अुफनकर,
बह जाता दिल
छोटासा दिल।
डाँड चलाता--
अल्हड़पनमें,
जीवन नौका
डगमग करती
आगे बढ़ती
छप छप छप छप—धीरे धीरे।
मूक स्वरोंमें,
गाता रहता—
मेरा छोटा,
नन्हासा दिल
कोमलसा दिल।
नयन कटोरोंसे--
पी-पीकर—
मधुर रूपकी हाला
खिल जाता है
अितराता है
मुसकाता है
मस्तीमें कुछ--
अिठलाता है
झूम-झूमकर—
नन्हासा दिल
कोमलसा दिल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाणोंके सब व्याघातोंको
क्रूर जनोंके आघातोंको
दण्ड प्रहारोंको सब ही तो—
बड़े शूरमा-सा सह लेता—
नन्हासा दिल
कोमलसा दिल ।
आँधी, सब ही तूफानोंको
शीत, ताप, हिमकी वर्षाको
मेघोंके गर्जन, तर्जनको
सागरकी सब हुँकारोंको--
अुद्गारोंको
विस्फोटोंको
और न जाने क्या-क्या
कब-कब ?
सह लेता है—
नन्हासा दिल ।

कोमलसा दिल ।
मूक स्वरोंकी करुण व्यथाको—
किन्तु न सह पाता है यह दिल
छोटासा दिल
नन्हासा दिल ।
आँखोंकी सीपीको--
तब-तब
मुक्तासे भर देता है दिल
और ढुलककर--
दो नयनोंसे—
बह जाता है
मिट जाता है--
नन्हासा दिल
कोमलसा दिल ।

मेरा गीत—

—श्री शिवकुमार श्रीवास्तव

मैं गाता हूँ—
यह जग सुनता ।
मैं स्वरके धागोंसे बुनता--
अेक कफन ;--
जीवनमें जो कुछ जितना है--मर चुका--
अुसे करना है हमको दोस्त, दफन !
बेशक रूढ़ियाँ
पुराने रीति-रिवाज--
बहुत प्यारे,
जैसे, अपने दादा-दादी, नाना-नानी !
लेकिन हम अुनकी लाश अगर रक्खें घरमें--
सचमुच यह होगी नादानी !
कितना ही प्यारा हो कोअी--
हम अुसकी लाश नहीं रख सकते हैं घरमें,
अिसलिअे रूढ़ियोंको दफनानेका अुपक्रम मेरे स्वरमें
स्वरके धागोंसे
मैं हूँ अेक कफन बुनता ।
मैं गाता हूँ यह जग सुनता !

* * *

मैं गाता हूँ
हो जाती है साकार प्यारकी निर्गुणता !
मैं गाता हूँ--
मेरे गीतोंके तार--
अिन्द्रधनुषी,
करते रहते तैयार
चुनरिया रेशमकी !
मुझको करना है शादी
जीवनके नूतन सिद्धान्तोंकी
और नियमकी ।
अपनी बिटिया रानी
यदि हो जाअे सयानी,
अुसके हाथ न पीले करना
सचमुच यह बेहद नादानी ।
मेरी प्रतिमा है बिटियाकी
शादीकी पुलकित तैयारी ।
मेरी कविता नवजीवन-दर्शन-आंगनमें--
शादी ब्याह अुछाह प्रहरमें
गाअी जानेवाली गारी !
मेरे बोल मन्त्र वेदीपर
मेरा गीत पुरोहित आनेवाले युगका ।
मेरा छन्द प्यारका बन्धन !
मेरा शब्द ब्याहका कंगन !
स्वरके धागोंसे रेशमका
अेक चुनरिया हूँ मैं बुनता !
मैं गाता हूँ यह जग सुनता !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसका है जो भाग अुसे पाने दो !

—प्रो. गणेशदत्त त्रिपाठी

हो सावधान !
ओ धरतीकी छातीपर बैठे
मार गिंडौरी नागों अैसे
श्वासोंमें फुसकार छोड़ते
और कहाते मनुज-पुत्र तुम ?
अभिलाषाको कुचल-कुचलकर
तुमने युगकी
श्वास रुद्ध कर डाली
मानव-जीवनकी,
है सिसक रही मानवता बेबस होकर
शोषणकी जंजीरोंमें जिसको कसकर
कितने मासूम विवश प्राणोंसे
लिप्साका खिलवाड़ किया है अपनी ?
देख भयावह दर्दनाक अिस महादृश्यको
रो अुठा गगन छातीको अपनी फाड़-फाड़
हिल अुठा हृदय धरतीका चीखें पुकार सुन
कँप अुठी दिशाअें दशों क्षितिजसे अम्बर तक
लेकिन पहुँची न कराह किसीकी तुमतक
तुम रहे मग्न ही सदा हविसमें पागल होकर
तुम भूल गअे दिग्देश-ज्ञानकी सीमा मदमें
तुम रहे स्वप्न-सी मादक दुनियामें जीवन भर
पर जीवनका नक्शा ही बदल गया है,
लो ! देखो !!
कंकालोंकी भीड़ लगी है दूर-दूरतक
धरतीके अिस कोनेसे अुस कोनेतक
केवल ठठरीमें धड़कन बजती है ।
कहते हो जिसको 'नंदन-वन है धरतीका यह !'
देखा है तुमने कभी अिसे तहमें जाकर ?
जिस तरह कि कीचड़में लिपटी—
अुलझी टेढ़ी बाँकी भौंड़ी भद्दी-सी जड़के सिंचनसे
सुन्दर-सुन्दर सुमन विकसते डालोंपर
अुसी तरह जीवनको तिल-तिल
जला-जलाकर
शहरोंको आबाद बनाते कृषकोंको देखा ?
तुम जो कहते—
'धरतीकी मिट्टी अुगला करती सोना !'
पर देखा है केवल अिसे अुगलते सोना तुमने,
लेकिन मंथन करके अिसका हल-बक्खरसे
कृषकोंकी टोलीकी टोली
खून-पसीना अेक किअे
धरतीका दोहन करके
मिट्टीका कंचन करती
अमृतका सर्जन करती
जीवनका वर्धन करती ।
अमृत-सर्जक !
जीवन-वर्धक !!
अिसी कृषकके
दुध-मुँहे बच्चे
बिना दूधके घूमा करते
बिना वस्त्रके शीत काटते
पेटोंपर पट्टी बाँधे
ये दलित किसान
अपनी धरती माताको
बच्चो, अैसी पाला करते,
रात-रातभर जाग-जागकर
खेतोंकी रखवाली करते
अिसी तरह जीवनकी सारी धड़कन ये
मिट्टीके मंथनमें ही न्योछावर करते !
लेकिन फिर भी
जीवनभर ये नंगे-भूखे
भयभीत त्रसित !
दूर रहा करते जीवनकी मधुराअीसे
सारे जीवनको परमेश्वरकी कैद समझ
ठंढ़ी निःश्वासें छोड़ कभी आँखें गीलीकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेबस निरीह-से
प्राणोंके ये दीप जलाअे
जगके जीवनमें अुजियाला करते !
अिसीलिअे हो सावधान !
ओ धरतीके मालिक कहलानेवालो
मिट्टीके सोनेपर अधिकार अुसीका
जो अुसको पैदा करता,
जीवन-रसकी बूँद-बूँदसे
जो अुसका सिंचन करता
वह असली है भू-स्वामी बेबस किसान
मिट्टीका सोना करनेवाला महान
वाणीको अपनी मौन रखा करता है यद्यपि
पर धड़कनकी आवाजें सुन लो अुसकी
बहुत सहा है अुसने
लेकिन शोषणकी सीमा भी तो क्षितिज बन गअी
अिसीलिअे अब केंचुल बदलो भूपतियों !
जहरीले फनकी छायासे
तुम मुक्त करो अिस धरतीको ! !
लेकिन ठहरो !
और सुनो तुम,
पूरबकी दिशिमें देखो
जीवनके प्रकाशकी किरणें बिखर रही हैं दूर-दूर तक
ऋषि-मुनियोंके महादेशमें
तेज पुनः साकार हो गया
समय-समयपर आदिकालसे
अुतरा जीवनका प्रकाश अिसी धरतीपर,
कभी मिला बाल्मीकि-व्यासमें
कभी जितेन्द्रिय गौतममें, जिनवरमें
वही दिखा था गाँधीके भी महाप्राणमें
और अभी जगमग होता है
ठठरीके प्रतिरूप विनोबाके कण-कणमें
अिसीलिअे वह महाप्राण धरतीका बेटा
माँको अपनी मुक्त कराने निकल पड़ा है
अुसी तरह जैसे जीवनको मुक्त किया था गौतमने
और अशोकने जिन पद-चिन्होंपर चल-चलकर
जगत जीतनेका सपना बोया था।
भारतकी संस्कृतिके दो महा अस्त्र
धारण करके बढ़ा जा रहा संत विनोबा
बढ़ा जा रहा युगकी अभिलाषाओं जैसा
गाँधी गौतम जिनवरकी अुसी मशालको
किअे प्रज्वलित !
दृढ़ कदमोंसे
आँखोंमें विश्वास भरे
जीवनका संगीत सुनाता हुआ बढ़ रहा
दया-प्रेमका मूलमंत्र सर्वोदय समझो
अिसीलिअे धरतीके अँगोंको मुक्त करो
करो दान !
जिसका है जो भाग अुसे पाने दो !

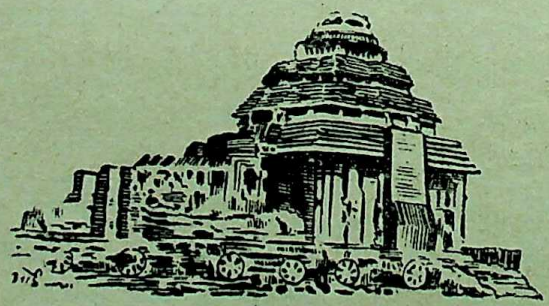

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युग-युगके शाश्वत प्रणाम !

—श्री रामनारायण अुपाध्याय

हम जब सूर्यको नमस्कार करते हैं, तब सूर्य स्वयम्, पृथिवीको नमस्कार कर उसकी परिक्रमापर चल देता है ।

पृथिवी जब कड़ी धूपमें तपते हुअे आकाशकी अुपासना करती है, आकाश तब भावनाओंके बादल बनकर धरतीके चरण पखारता आता है ।

कृष्ण और अुद्धवकी मैत्री प्रसिद्ध रही है । कहते हैं, अेक बार श्रीकृष्णसे मिलने जब अुद्धव पहुँचे, तो अुन्हें मालूम हुआ कि वे अिस समय पूजामें संलग्न हैं और किसीसे नहीं मिल सकेंगे । लाचार अुन्हें प्रतीक्षा करनी पड़ी । कृष्ण जब पूजासे निवृत्त होकर बाहर आअे, तो अुद्धवने पूछा—"महाराज, यह क्या लीला है ? जिसकी पूजा, अुपासना सारा जगत करता है, वह आखिर और किसकी पूजा करता है ?" कृष्णने मुस्कराते हुअे कहा—"मैं भी अपने गुरुकी पूजा करता हूँ । आओ, क्या तुम अुन्हें—देखना चाहते हो ?" और अुद्धवने देखा, अभी-अभी भगवान कृष्ण जिसकी पूजामें संलग्न थे, वह और कोअी नहीं, स्वयम् अुद्धवकी तसवीर थी !

बापू और गुरुदेव परस्पर अेक दूसरेको पूज्य मानते थे । अेक बार बापूसे मिलने जब गुरुदेव आअे, तो अुनके हाथों बापू तक पहुँचानेके लिअे अेक सन्देश पहुँचा । अुन्होंने अुसे बापूको पढ़कर सुनाया, और अुनके पैर छू लिअे । बापूने कहा—"अरे, अरे, आप यह क्या कर रहे हैं !" गुरुदेवने विनोदसे मुस्कराते हुअे कहा—"अिसमें आपतक अपना प्रणाम पहुँचानेकी बात लिखी है ! सो मुझसे "बड़ा" कौन जो आपके पैर छुअे ।"

वैसे हमारा सम्पूर्ण जीवन प्रभुके चरणोंमें अेक विनम्र श्रद्धांजलिका प्रतीक है, और यह चराचर जगत अुसकी अुपासनाका केन्द्र ।

यह जो समुद्र है न, अिसकी अुपासनाके लिअे भी हमारे यहाँ अेक-समूचा अुपनिषद् है जिसका नाम ही "समुद्रोपनिषद्" है । और पृथिवीको प्रणाम करनेके लिअे "पृथिवी-सूक्त" से बढ़कर और कौनसा मंत्र—मिलेगा !

जिस तरह "स्नान" से मनुष्यका शरीर निर्मल होता है अुसी तरह "प्रणाम" से मनुष्यका मनःप्राण निर्मल होता आया है ।

प्रणाम चाहे माता-पिताके चरणोंमें किया जावे, या या धरती-प्रकृतिके चरणोंमें, आदमी जब भी किसीके चरणोंमें श्रद्धा, भक्तिसे विनत होता है, तो वह सब अिस जगत्के नियंता—प्रभुके चरणोंमें ही पहुँचता आया है ।

विनोबाने तो कहा है कि यह "सृष्टि क्या है ? परमात्माकी आरती । पूजा, यथासांग हो चुकी । अब हमें सिर्फ प्रणाम करना बाकी है । नर-देह मिली, यानी पूजा यथाविधि सम्पन्न हो चुकी । यह जीवन अुसकी आरती है । अब हमें सिर्फ प्रणाम करना है ।" क्या अितना भी नहीं करेंगे ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नमस्कार !

--श्री जगमोहननाथ अवस्थी

मानवताके सच्चे पुजारी, राष्ट्रके कर्मठ कर्णधार, पावन पत्रकारिताके सजग प्रहरी और भारत-गगनमें अहिंसाके दिनमणिकी भाँति न रहकर भी प्रकाशित रहनेवाले अमर बलिदानी वीर श्री गणेश-शंकरजी विद्यार्थी मानवताकी रक्षाके अुसी वातावरणमें जिअे; अुन्होंने अुसीमें अन्तिम साँसें तोड़ीं, जिसमें बड़े-बड़े महारथी घबड़ाअे और दूर भागे। सुखोंका बलिदान करके अेकताकी पूर्णाहुतिमें स्वयंको अग्निकी लपटोंमें समर्पित करनेवाले ऋषिने आगकी जलती हुअी लपटोंमें जो त्याग, साहस और परोपकारका अमिट अितिहास लिख दिया है, अुसे आगे आनेवाली पीढ़ियाँ अपनी थाती समझकर सँजोअेंगी और आदर्श मानकर राष्ट्रके पवित्र गौरवका सम्मान और रक्षा करेंगी।

मुझे भली भाँति स्मरण है कि अेक बार मैं यों ही कानपुर गया था। श्री विद्यार्थीजीसे मिलनेके लिअे अुन्हींके स्थानपर चला गया। देखते ही बड़े स्नेह और चावसे मिले। बातचीतके सिलसिलेमें पत्रकारिताके सम्बन्धमें 'प्रताप' की बात आ गअी। मैंने कहा, भाअी! आप तो जिन्दगीके तूफानोंके साथ-साथ ही चलते हैं। अेक पत्रकारको तो जीवनमें धरतीपर कुछ शान्तिकी भी आवश्यकता होती है! अुन्होंने सँभलते हुअे झट कहा, भाअी मोहनजी! मैं तो केवल अेक बात जानता हूँ और अुसीको मानता हूँ। 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः'। अर्थात् यह भूमि माता है, मैं पृथ्वीका पुत्र हूँ। (—अथर्ववेद)।

मैंने कहा, भाअी! आपने तो वेद-शास्त्रमय जीवन बताया है और जिन्दगीको शास्त्र अेवं पथकी धूलिसे अैसा मिला दिया है कि अिस समन्वयमें कुछ सोचा और कहा ही नहीं जा सकता। आपका यह सार्वभौमताका सिद्धान्त तो नगपति हिमालयसे अूँचा और महासागरसे भी अधिक गम्भीर है। आप ही अैसे कुशल, व्यस्त और साहसी आदमीका काम अंगारोंसे खेलते हुअे काँटोंपर हँसते-हँसते चलना है।

अुस दिन विदेशी शासकोंका दमनचक्र अबाध गतिसे क्रूरताके साथ चल रहा था। निहत्थे भारतीयोंके पवित्र रक्तसे गोरे शासकोंका होली खेलना, अिन्सानियतकी खुले-आम हत्या करना, अपमानित करके जेलोंमें निरपराधोंको ठूँस देना, देश-भक्तोंको फँसानेका जाल बिछाना, माताओं-बहिनोंकी अिज्जत लूटना और गुलामीको बनाअे रखनेके सारे अुचित-अनुचित साधन जुटाना ही काम था। अैसे दमनकालमें भारतीय भी अपने जीवनकी बाजी लगा चुके थे। अुन्हींमेंसे सर्वोपरि हमारे मित्र भाअी विद्यार्थीजी थे। विदेशी शासक हिन्दू-मुसलमानोंमें फूट डालकर अपना स्वार्थ साधन करना चाहते थे। यही कारण था कि अुनकी कूटनीतिके फलस्वरूप अनेक स्थानोंमें कटुताका भ्रमपूर्ण वातावरण बन चुका था। अैसे अवसरपर श्री विद्यार्थी तन-मन-धनसे समस्त शक्तियोंके साथ बापूके सिद्धान्तोंको अपनाअे हुअे अुनसे मार्चा लेनेको तैयार थे। 'प्रताप' में तथा अन्यान्य पत्रिकाओंमें वह अपने अनेक कल्पित नामोंसे तरह-तरहकी रचनाअें भेजकर बराबर जनताको सजग करते रहे और आजादीकी लड़ाअीके लिअे अप्रत्यक्ष रूपसे सच्चे बलिदानी सैनिक तैयार करते रहे। अुनके अुस समयके कुछ कल्पित नाम 'दिवाकर', 'हरि', 'भारतीय', 'गजेन्द्र', 'युवक', 'कलाधर', अेवं 'वन्देमातरम्' आदि थे। वह हमेशा ही अिस पक्षका समर्थन करते थे कि :—

राहका हर मोड़ ही, अितिहासका निर्माण है,
जिन्दगीकी हर मुसीबत, भूमिका है, गान है।

पद-लोलुपता, स्वार्थ-साधना और संकुचित भावनाके वह कट्टर विरोधी थे। वह समस्त मानव-कल्याणकी भावनाके साथ ही राष्ट्रकी अुन्नतिकी कामना रखते थे। अपने पथके अुस अडिग राहीको कोअी प्रलोभन, प्रशंसा या आकर्षण अन्त समय तक आकर्षित न कर सके। वह अितने निर्भीक थे कि मृत्यु भी अुन्हें डरा नहीं सकी। विपत्तियोंको सामने देखकर भी वह जिस साहस, गम्भीरता, विश्वास और संयमसे काम लेते थे, वह न केवल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपत्तियोंके लिअे चुनौती थी; अपितु, युगके लिअे पथ-प्रदर्शन था ।

श्री विद्यार्थीजीका प्रत्येक निर्णय बड़ा ही गम्भीर और अटल होता था । वह राष्ट्रसेवा और मुल्ककी आजादीके चौपड़के खेलको हँसते हुअे जिन्दगीकी बाजी लगाकर खेलते थे । मानव-कल्याणकी भावना और देश-की आजादीके लिअे अुन्हें जो कुछ भी रुचिकर लगा अुसे, सत्य, शिव और सुन्दरकी भावनासे प्राण-दान देकर भी पूरा किया । अपने सुखोंका बलिदान करके, जिन्दगी-की परेशानियाँ मोल लेकर भी वह फूलोंको त्यागकर काँटोंको अपनाते रहे । अुनकी अपूर्व निष्ठा और लगन अनेक मानवोंमें श्रद्धा, देशभक्ति और बलिदानकी भावना भर सकनेमें सर्वदा समर्थ रही है ।

अगर वह पूज्य बापूके साथ देशकी आजादीके लिअे लड़ते थे, देशके चोटीके नेताओंके साथ कन्धेसे कन्धा मिलाकर काम करते थे तो देशके निर्धन, दुखी, पीड़ित और असहाय किसानोंको भी नहीं भूलते थे। वह अुनकी पुकार सुनते ही अुनके बीच पहुँचकर अुनके साथ अपने प्राणोंकी बाजी लगानेमें कभी पीछे नहीं रहते थे। अिसका जीवित प्रमाण है रायबरेली जिलेके हजारों निहत्थे किसानोंके अूपर अेक अंग्रेज डिप्टी कमिश्नरका गोली बरसाना और श्री विद्यार्थीजीका अुस समरांगणमें अपना सब कुछ बलिदान करके कूद पड़ना । भले ही अिति-हास अिस घटनाको भूल जाअे । परंतु, रायबरेली जिले-की सअी नदीकी वह रेतीली भूमि आज भी अेक अमर स्मारक है जो अनेक किसानोंके बलिदानी खूनकी याद छिपाअे हुअे है, जिसमें अनेक सुहाग छिपकर भी मुसका रहे हैं और अनेक जवानियाँ अपने गणेशको अुत्सुक आँखोंसे देख रही हैं । वहाँ तो अेक अैसा विशाल स्मारक बनना चाहिअे जिसका श्रीगणेश वीर श्री गणेशशंकरसे ही हो । क्योंकि अिसीसे कुपित होकर अंग्रेजी सरकारने श्री विद्यार्थीजीके अूपर 'प्रताप' के लेखके सम्बन्धमें अेक तत्कालीन जयचन्द ताल्लुकेदार द्वारा मुकदमा चलवाया था । जिसमें श्री विद्यार्थीजीकी सारी अर्जित कमाअी स्वाहा हो गअी थी और अुन्हें बरबस कारावासका दंड दिया गया था । अुस समय जब-जब मैं अुनसे मिलता था, वह सदा यही कहा करते थे कि अभी जिन्दगीकी बहुत श्वासें बाकी हैं । हर श्वासके साथ अड़चन और धड़कन होगी । मगर श्वास तो चलती ही रहेगी । मुझे चिंता 'प्रताप' की है । लेकिन संतोष है कि आप सब स्नेही तो हैं ही ।

मैंने अुनसे कअी बार कहा कि अब आंदोलनोंको अेक नया मोड़ देना चाहिअे; परन्तु, वह हमेशा यही कहते रहे, "भाअी ! यही संघर्ष नअे मोड़ बन जाअेंगे और हम सब अपने लक्ष्यपर पहुँच जाअेंगे ।" सचमुच अुस तपीकी वाणी और अुसका विश्वास सत्य होकर ही रहा और आज हम अुसीके बलिदानके बलपर आजाद होकर संसारके सामने गौरवान्वित होकर अपना मस्तक अुठाकर अिंसान कहलाने योग्य बन सके हैं ।

कहा तो यह जाता है कि मनुष्य परिस्थितियोंका दास होता है, परंतु, विद्यार्थीजी अिसके अपवाद थे । वह सदा परिस्थितियोंसे लड़ते हुअे अुनपर विजय प्राप्त करते थे । परिस्थितियोंपर विजय प्राप्त करके ही अुन्होंने ९ नवम्बर सन् १९२३ अी० को अपनी विजयके प्रतीक के रूपमें 'प्रताप' की स्थापना की थी । यही था वह दिन जब हमें शक्ति मिली, साधन मिला और मिला वह सम्बल जिसके द्वारा हम निर्भीक होकर अपनी बात कह सकनेमें समर्थ हो सके ।

यहाँ यह बताना असंगत न होगा कि जिसने हमें श्री मैथिलीशरण गुप्त जैसे महाकवि प्रदान किअे, अुसीने श्री गणेशशंकर विद्यार्थी जैसे महान राष्ट्रसेवी पत्रकार अेवं लेखक भी दिअे हैं । अिस आजादीकी लड़ाअीमें साहित्यके भीष्मपितामह और द्रोणाचार्य आचार्य महावीर-प्रसाद द्विवेदीका कम योग नहीं है । अुन्हींके परमप्रिय शिष्य गुप्तजी अेवं श्री गणेशशंकरजी हैं । जो राजनीति अेवं साहित्यके आकाशमें देदीप्यमान हैं । आचार्य द्विवेदीकी कृपा मुझपर सदा ही रही है और मेरा यह सौभाग्य है कि मैं अुनके आशीर्वादोंका अधिकारी सदैव ही बना रहा । जिस समय वह जुही (कानपुर) में रहकर 'सरस्वती' का सम्पादन करते थे अुस समय मैं कभी-कभी अुनके दर्शनार्थ वहाँ जाया करता था । वहीं मैंने यह अनुभव किया था कि वह श्री विद्यार्थीजीके परिश्रम अेवं अुनकी लगनसे प्रभावित थे और अुनकी प्रशंसा किया करते थे । मैं अुस समय अपरिपक्व बुद्धिका अेक नव-युवक था । परन्तु, साहित्यिक अभिरुचिके कारण मेरे मनमें श्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्यार्थीजीके प्रति श्रद्धा अुत्पन्न हो गअी थी । वहींसे मैं अुन्हें अपना गुरुभाअी मानने लगा था । जिस नातेको अुन्होंने अपनी आखिरी साँसतक निभानेमें कभी कोअी कमी नहीं आने दी ।

भाअी विद्यार्थीजीने अपने पवित्र खूनसे आजादीके कल्प-तरुको सींचा था । वेदनाओंको गले लगानेवाले, भयंकर परिस्थितियोंमें भी अडिग रहकर जिन्दगीका सौदा करनेवाले वीर तुम अपनी आन-बान-शानके सचमुच अकेले व्यक्ति थे । ठीक है :—

प्रलये भिन्न मर्यादा भवन्ति किल सागराः ।
सागरा भेदमिच्छन्ति प्रलयेऽपि न साधवः ।।

(चाणक्य नीति–६)

अर्थात्:—समुद्र प्रलयके समय अपनी मर्यादा छोड़ देते हैं; परन्तु, साधु लोग प्रलय होनेपर भी (अपनी मर्यादाको) नहीं छोड़ते ।

श्री विद्यार्थीजीका सारा जीवन अिसी कसौटीपर कसा हुआ था । भय और चिन्ता तो अुनके पास फटकते भी न थे । अुन्होंने आखिरी दम तक वही किया जो अेक सच्चे अिन्सानको अीमानदारीकी रक्षाके लिअे जिन्दगीमें करना चाहिअे । अुनका धर्म और अीमान दोनों ही अिन्सानकी पूजा और अिन्सानियत थे । अुसकी रक्षा सदा प्राणोंकी कीमत चुकाकर अुन्होंने की और हम सबके अज्ञानके आँगनमें अपने बलिदानकी अखण्ड ज्योति जगाकर अमर हो गअे :—

जीवन्तं मृतवन्मन्ये देहिनं धर्मवर्जितम् ।
यतो धर्मेण संयुक्तो दीर्घजीवी न संशयः ।।

अर्थात्:—धर्मरहित प्राणोंको मृतकके समान समझना चाहिअे; धर्मयुक्त प्राणी मरकर भी, चिरंजीव हैं; अिसमें सन्देह नहीं ।

विद्यार्थीजी अमर हैं, अुनका आदर्श युगके लिअे अेक प्रेरणा और अुनकी जिन्दगीके अुतार-चढ़ाव हमारे लिअे शिक्षा अेवं शक्ति प्रदान करनेवाले हैं ! अैसे अमरको नमस्कार है ।

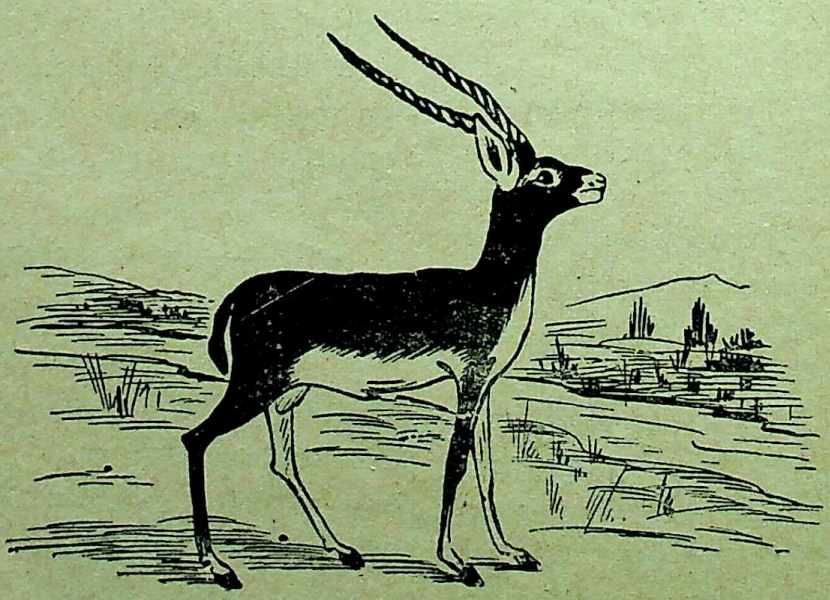

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेस. के. पोट्टक्काट्ट

—प्राध्यापक वी. गोविन्द शेनाय

[श्री पोट्टक्काट्टकी अेक मर्मस्पर्शी यथार्थवादी मलयालम कहानीका हिन्दी रूपान्तर राष्ट्रभारतीके गत मार्चके अंकमें प्रकाशित हुआ है "पिताको देखनेपर" और अिस अप्रैलके अंकमें पढ़िअे मलयालम कथा-साहित्यके कलमके धनी श्री पोट्टक्काट्टका परिचय ।]

श्री. अेस. के. पोट्टक्काट्ट मलयालमके प्रमुख कथाकारोंमें अेक लब्धकीर्ति कथाकार हैं । 'विषकन्या', 'ग्रामीण प्रेम', 'प्रेमकी सजा' और 'पर्दा' अुनके अुपन्यास हैं । 'रजनी गंधा', 'वैजयन्ती', 'मेघमाला', 'राजमल्ली', 'चन्द्रकान्त' आदि अुनकी कहानियोंके संग्रह हैं । अुनकी रचनाओंकी सबसे बड़ी विशेषता अुनका मानववाद है । किसी असहाय व्यक्तिको यातनाअें सहते हुअे देखकर किसी भावुक व्यक्तिके मनमें अुठनेवाली सस्ती भावुकता, अिस मानववादकी तहमें नहीं है । बल्कि जीवनकी कठिनाअियोंसे संघर्ष करते-करते अुसी संघर्षमें अपनेको मिटा देनेवाले मानवके प्रति स्वभावतः ही अुत्पन्न होनेवाली सहानुभूति ही अिस मानववादकी तहमें विद्यमान है । श्री पोट्टक्काट्टने जीवनका अध्ययन अपने अनुभवोंसे अधिक किया है; पुस्तकोंसे कम । अुन्होंने अनेक देशोंमें भ्रमण किया है । हिन्दुस्तानके तो प्रायः सभी शहरोंमें वे रह चुके हैं । अुन्होंने अपनी अिन यात्राओंके बारेमें अनेक संस्मरण भी लिखे हैं । देश और प्रान्तकी संकुचित सीमाओंके परे मानव मात्रको अुसके वास्तविक रूपमें समझनेमें अिन यात्राओंने अुन्हें सहायता पहुँचाअी है । यद्यपि मूलतः वे साहित्यिक हैं तो भी वे अपनेको पहले दर्जेका घुमक्कड़ मानते हैं । अगर हम अुनकी कुछ कहानियाँ पढ़ें तो हमें अैसा लगेगा मानों हम कअी देशोंकी यात्राअें करके लौटे हों । अगर कोअी कहानी कलकत्तेसे संबंधित है तो कोअी नीलगिरीके जंगलोंसे । किसीमें जमनाके तटका वर्णन है तो किसीमें कश्मीरके हिमावृत पहाड़ोंका । कोअी आफ्रीकाके जंगलोंमें घटती है तो कोअी पैरिसके विख्यात होटलमें । अुन्होंने अपनी रचनाओंमें अनेक देशों और अनेक वर्गोंके लोगोंके जीवनका वर्णन किया है । विभिन्न संस्कारों और परिस्थितियोंमें पले हुअे होनेके कारण, अुनके सामाजिक जीवन, आचार, वेश-भूषा आदिमें बहुत बड़ा अन्तर है । लेकिन अुनके आन्तरिक जीवन और भावनाओंमें अेक विचित्र प्रकारकी समानता है, जिसका प्रमुख कारण यह है कि लेखकके लिअे ये सभी कथापात्र पहले मानव हैं, बादमें और कुछ । आफ्रीकाके विक्टोरिया जल-प्रपातमें कूदकर जान दे देनेवाला नीग्रो युवक ('काला कामदेव' नामक कहानी), नीलगिरीके जंगलोंमें विचरण करनेवाली टोडा (Toda) जातिकी लड़की सिनसिन (समागम) नासिकके स्नानघाटके निकट अंगूर बेचनेवाली लड़की कुसुम और अुसका प्रेमी रघुनाथ ('प्रेत') अेक बच्चेकी प्रतिमाको सामने रखकर पागलकी भाँति प्रलाप करनेवाला डा. फास्ट ('बम्बअीके मेरे साथी') रोडेशियामें दो पुर्तगालियोंको धोखा देकर तथा अुनकी चीजें चुराकर चंपत हो जानेवाला भारतीय सिद्दिक्की (सिद्दिक्की) ये सभी कथापात्र हमें आकर्षक लगते हैं; अिसलिअे नहीं कि ये विभिन्न देशोंके रहनेवाले हैं या विभिन्न संस्कृतियोंमें पले हुअे हैं, बल्कि अिसलिअे कि अिनमें हम अपनी अनुभूतियोंको पाते हैं; ये हम जैसे हैं ।

श्री पोट्टक्काट्ट मूलतः स्वच्छन्दतावादी लेखक हैं । अुनकी अधिकांश कहानियों तथा 'विषकन्या' को छोड़ बाकी तीनों अुपन्यासोंके विषय प्रेम और विवाहसे सम्बन्धित हैं । वर्तमान समयकी सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक कठिनाअियोंके कारण किस प्रकार नारी और पुरुषका प्रेम कुंठित हो जाता है, यह अुन्होंने अिन रचनाओंमें दिखाया है और यह सिद्ध किया है कि जबतक ये कठिनाअियाँ दूर नहीं होतीं तबतक नारी और पुरुषमें सच्चा प्रेम संभव नहीं हो सकता । 'प्रेरणा',

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्रेमत्तिन्डे मरु पुरम', 'काहेरी', 'कालाकामदेव' आदि कहानियोंमें अुन्होंने सद्वृत्तियोंको जगानेवाले त्यागमय प्रेमका वर्णन किया है तथा 'हरा कोट', 'रोमांसके पीछे', 'अविवाहितोंकी मंडली', 'हिन्दी मास्टर' आदिमें छिछले प्रेम और रोमांसकी हँसी अुड़ाअी है। कुछ मार्क्सवादी समालोचकोंका कहना है कि श्री पोट्टक्काट्टने किसानों, श्रमजीवियों तथा समाजकी निम्न श्रेणियोंकी जनताके जीवनके वर्णनकी ओर बहुत कम ध्यान दिया है। वे अुनकी तीव्र आलोचना करते हुअे लिखते हैं कि अिसका कारण अुनमें निहित पूँजीवादी मनोवृत्ति है। यदि हम श्री पोट्टक्काट्टकी रचनाओंका ध्यानपूर्वक अध्ययन करें तो हमें मालूम होगा कि अिन समालोचकोंके अिस कथनमें कोअी मौलिक तथ्य नहीं है। यह बात सच है कि पोट्टक्काट्टने अमीरों और पूँजीपतियोंके जीवनसे सम्बन्धित अनेक कहानियाँ लिखी हैं। लेकिन अिनमेंसे किसीमें भी अुन्होंने अुनकी बुराअियोंका समर्थन नहीं किया है; बल्कि अुन्होंने अुनकी विलासिता, ढोंग, पाखंड, धन-लिप्सा आदिकी कठोर शब्दोंमें निन्दा की है। साथ ही यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि अुनकी कअी कहानियाँ अैसी भी हैं जिनमें अुन्होंने किसान, मजदूर, भिखमंगे आदिके जीवनका भी वर्णन किया है। (अुदा०—गानेवाली, बम्बअीके मेरे साथी, व्यभिचार आदि, 'पर्दा' नामक अुपन्यासमें हमें मध्य-वर्गके यातनामय जीवनका चित्र देखनेको मिलता है। 'विषकन्या' में अुन्होंने किसानों और श्रमजीवियोंके जीवनका सहानुभूतिपूर्ण वर्णन किया है। यह अुनका सर्वश्रेष्ठ अुपन्यास है। दरिद्रता और तज्जन्य कठिनाअियोंसे पीड़ित ट्रावनकोरके किसान मलाबारके जंगलोंमें खेती करने जाते हैं। वहाँके जंगलोंको साफ करके खेतीके लिअे अुपयुक्त जमीन तैयार करनेके प्रयत्नमें अनेकोंको अपने जीवनका अुत्सर्ग करना पड़ता है। अिन किसानोंकी अिन्हीं कठिनाअियोंका वर्णन अिस अुपन्यासका विषय है। अिसमें व्यक्तियोंकी अपेक्षा वर्ग अधिक अुभर आअे हैं। अिसमें लेखककी रोमैन्टिसिज्मकी प्रवृत्ति दब गअी है और यथार्थवादकी प्रवृत्ति अुभर आअी है।

परिस्थितियोंसे संघर्ष करनेवाले किसानोंके प्रति श्रद्धा और श्रमके प्रति आदर अिसमें प्रकट किया गया है। अिस अुपन्यासका अेक बहुत बड़ा दोष यह है कि अिसमें शुरूसे लेकर आखिरतक अेक घनीभूत निराशा विद्यमान है।

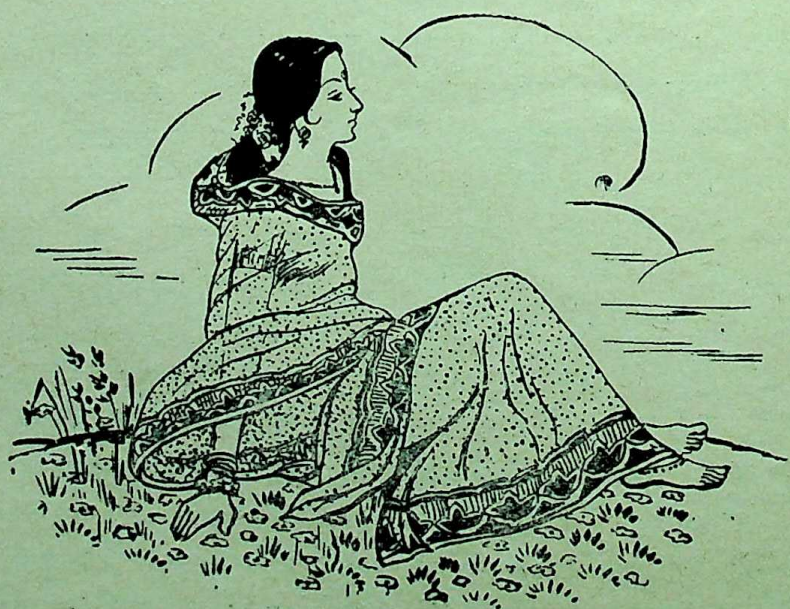

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिन्दुमती

—श्री गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश'

[राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रमुख नाटककार, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयागके भूतपूर्व सभापति और केन्द्रीय लोकसभाके सदस्य बाबू गोविन्ददासजीकी हीरक-जयन्ती हिन्दी-संसार निकट भविष्यमें मनाने जा रहा है। सेठजीका हिन्दी-जगत्में जो महत्वपूर्ण स्थान है अुसे, और अुनकी राष्ट्रभाषा तथा राष्ट्रकी सेवाको पूज्य राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसादसे लेकर राष्ट्रकवि श्रद्धेय मैथिलीशरण गुप्त, लोकसभाके अध्यक्ष श्री अनन्तशयनम् अय्यंगार, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', डॉ. नगेन्द्र, डॉ. रघुवीर, चन्द्रगुप्त विद्यालंकार आदि-आदि सभी समर्थ साहित्यकार भली-भाँति जानते हैं। सेठजीकी हीरक-जयन्तीका भव्य समारोह सारे भारतमें आयोजित होगा। अधिकांश स्थानोंमें सेठजीका लिखा कोअी-न-कोअी नाटक रंगमंचपर खेला जाअेगा। अुनके १३-१४ अेकांकी-संग्रहमेंसे कुछ अेकांकी भी खेले जाअेंगे। गोविन्ददासजी अपने ६० वसंतोंका सुख-दुःखेसमेकृत्वा अुतार-चढ़ाव देख चुके हैं। और वे हमारे श्रद्धांजलिपूर्ण अभिनन्दनके भाजन हैं। राष्ट्रभारती-परिवारकी ओरसे और राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी ओरसे हिन्दीके व्यापक विशाल क्षेत्रमें सेठजीका अभिनन्दन हम करते हैं! --'मुहब्बत सारी दुनियाँकी अिसी काँटेपै तुलती है।' राष्ट्रभारतीके अिस अंकमें हम अुनके समस्यामूलक नाटकों और प्रसिद्ध भारीभरकम गम्भीर अुपन्यास "अिन्दुमती" पर हिन्दीके दो समर्थ साहित्यकारों द्वारा अर्पित स्पष्ट सुन्दर विवेचन अपने पाठकोंको भेंट करते हैं।--सम्पादक]

'अिन्दुमती' हिन्दीके प्रसिद्ध नाटककार सेठ गोविन्ददासका अेक अुपन्यास है। विचारधारा और औपन्यासिक-कला दोनोंकी दृष्टिसे यह अुपन्यास हिन्दीके अुपन्यास-साहित्यमें अद्वितीय है। दोनोंहीका सामंजस्य करनेवाली जिस नवीन लेखन-शैलीको अुन्होंने ग्रहण किया है, अुसके सम्बन्धमें यह सहज ही कहा जा सकता है कि वह अुन्हींकी चीज है; हिन्दीमें अुसके वे ही आविष्कारक हैं और वे ही अनुयायी भी। हिन्दीमें अुक्त शैलीका अनुकरण और प्रचार होगा अथवा नहीं, अिसके सम्बन्धमें कोअी निश्चित बात नहीं कही जा सकती, किन्तु यदि वह सम्भव हो तो औपन्यासिक-कलाके अुससे अधिक सुन्दर, स्वस्थ और समाजोपयोगी नियोजनकी कल्पना नहीं की जा सकती। निस्सन्देह अुसके लिअे अधिक अध्ययन, अधिक संयम, अधिक समाज-हित-कामनाकी आवश्यकता है।

'अिन्दुमती' में आरम्भहीमें हम देखते हैं कि हमारे सामने दो प्रश्न अुपस्थित हैं--(१) भारतकी बाह्य स्वाधीनताका प्रश्न; (२) भारतीय व्यक्तिकी मानसिक स्वाधीनताका प्रश्न। यह अुपन्यास अिन्हीं दोनों प्रश्नोंको लेकर चला है। अुसने अिन दोनोंको अेक दूसरेसे पृथक्-पृथक् करके नहीं, अन्योन्य-सम्बन्धित रूपमें दिखाया है। अिस अुपन्यासकी नायिका 'अिन्दुमती' के जीवनको हम समझ ही नहीं सकेंगे, यदि भारतीय स्वतंत्रताके लिअे किअे जानेवाले राजनैतिक आन्दोलनोंकी पृष्ठभूमिमें रखकर वह न देखा जाअे। राजनैतिक कारणोंहीसे कारावास-सेवनके लिअे विवश होनेवाले अुसके पति ललितमोहनका स्वास्थ्य बिगड़ा, जिसके परिणाम-स्वरूप अिन्दुमतीको वैधव्य भोगना पड़ा और अुन परिस्थितियोंसे आक्रान्त हो जाना आवश्यक हो हो गया, जिन्होंने अुसके वैयक्तिक चरित्रको अेक विशेष साँचेमें ढाल दिया। राष्ट्रीय महासभाके अधिवेशन, अुसके मनोरंजनके साधन बने, कहीं श्री अम्बिकाचरण मजूमदारकी लम्बी दाढ़ी, कहीं लोकमान्य तिलकका छोटा-सा 'तिलक', कहीं महात्मा गान्धीकी काठियावाड़ी पगड़ी, जिसे वह मोटे रस्से जैसी समझती थी, ये सब अुसकी कल्पनाको गुदगुदाते रहे। हँसनेके बाद रोना और चिंतित होना प्रकृति-सिद्ध है; वह अिस नियमके लिअे कोअी अपवाद-स्वरूप न हो सकी। अपमान, अपयश, लांछना सभी कुछ सहन करती हुअी वह निजी अेवं सार्वजनिक जीवनमें प्रगतिशील हुअी और जब अुसका घरमें रहना असम्भव हो गया तब भारत-भ्रमण और विश्व-दर्शनके लिअे भी वह चल पड़ी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे भारतीय स्वतंत्रता-संग्रामसे असंबद्ध करके हम अिंदुमतीकी जीवन-धाराको समझ नहीं सकते, वैसे ही भारतीय व्यक्तिकी मानसिक स्वाधीनता-सम्बन्धी हल-चलसे भी अलग करके हम अुसे हृदयंगम नहीं कर पाअेंगे। जैसे भारतीय स्वतंत्रताकी सिद्धी काँग्रेसके सन् १९१६ वाले लखनअू अधिवेशनमें, काँग्रेस और मुस्लिम लीगके मध्य सम्पन्न समझौते द्वारा झलकी थी, वैसे ही बहुत दिनोंके मति-भ्रमके अनंतर अिन्दुमतीने अपने जीवनके अपराह्नमें डाक्टर त्रिलोकीनाथसे मानसिक मुक्तिका जो सन्देश प्राप्त किया, वह बीज रूपमें अुसके पिता अवध-बिहारीलाल द्वारा अुसकी माता सुलक्षणाके सामने सन् १९१५ में प्रस्तुत किया गया था, जब अुसकी अुम्र सोलह वर्षसे अधिक नहीं थी। अवधबिहारीलालने कहा था--

"विश्वमें निजका व्यक्तित्व ही सबकुछ है। जो अपनेको ही केन्द्र मान सबकुछ अपने लिअे करता है, संसारकी समस्त वस्तुओंको अपने आनन्दके लिअे साधन मानता है, अुसीका जीवन सुखी और सफल होता है।"

अपने अिसी मतके अनुसार अवधबिहारीलालने अपनी कन्याका लालन-पालन किया, जिससे अुसकी अुच्छृङ्खलता, स्वेच्छाचारिता अंकुरित होकर अुत्तरोत्तर वृद्धिशील होती चली। निरंकुश आचरण करनेवाली यह लड़की प्रत्येक व्यक्तिको 'भुनगेके समान' समझती थी; कालेजके सोशल गैदरिंगमें वह पुरुष-सहचरके साथ तीन पैरकी दौड़में सम्मिलित हुअी; अुसने नाटकमें अभिनय किया, जाति-पाँतिका बंधन तोड़कर विवाह किया और सन्तानोत्पादनके लिअे वैज्ञानिक पिचकारी द्वारा गर्भ स्थापन करानेमें भी किसी प्रकारके संकोचको हृदयमें स्थान नहीं दिया। अपनी वासनाके वशीभूत होकर अुसने अेक काले, कुरूप, निरक्षर व्यक्तिके साथ असफल प्रेम किया और अुद्दण्ड मनोवृत्तिके अधीन होकर अेक हिज-हाअीनेसको चाँटा मारा तथा अेक गोस्वामीको लात। अवधविहारीलालके सिद्धान्तके मूलमें जो कुछ भ्रम छिपा हुआ था वह अिन्दुमतीके आचरणमें अपने सम्पूर्ण प्रसारके साथ मूर्तिमान दिखाअी पड़ा। अिन्दुमती अपने मित्र डाक्टर त्रिलोकीनाथसे स्पष्ट रूपसे स्वीकार करती है कि अपनी अिच्छाओंकी पूर्तिमें अितनी दत्तचित्त होनेपर भी अुसे शान्ति नहीं मिली, वह सुखी नहीं हो सकी। अिस प्रकार अवधबिहारीलालकी लड़की ही अपने समस्त जीवनके अनुभवको लेकर अुनके सिद्धान्तका खण्डन करती है।

सन् १९१६ और सन् १९४७ के बीच भारतीय स्वाधीनता-संग्रामके अनेक मार्मिक संकट-स्थल आअे, किन्तु वह कभी गम्भीरतापूर्वक अग्निके अितने निकट नहीं गअी कि अुसे आँच लगे। वह तितलियोंकी तरह अेक फूलसे दूसरे फूलपर अुड़ती ही रही, कहीं स्थिर नहीं हुअी। अपने मनके विश्रामके लिअे वह कभी अेक केन्द्रपर गअी, कभी दूसरे केन्द्रपर, किन्तु अुसे कहीं विश्राम नहीं मिला। अपनी जिस मानसिक स्वाधीनताको अुसने परमप्रिय समझा, अुसकी किसी भी अभिव्यक्तिको, अुसके किसी भी स्वरूपको अुसने अन्तिम नहीं माना, किसी भी संतोषजनक निश्चयपर वह पहुँच नहीं सकी। अिससे स्पष्ट है कि अुपन्यासके भीतर अिंदुमतीने किसी भी प्रसंगमें जो कुछ भी कहा है, वह विश्वसनीय नहीं है, अुसका अनुगमन करनेसे कोअी बात स्थाअी रूपसे हल नहीं हो सकती। वह स्वयं भी अपने ही अेक विश्वासको त्यागती तथा दूसरे विश्वासको ग्रहण करती चली है। अुसीके शब्दोंमें सुनिअे:--

"मैं पत्नीत्वमें विश्वास न करती थी, अितनेपर भी मैंने विवाह किया; मुझे मातृत्वमें भी विश्वास न था, पर मैं देखती हूँ कि बिना बच्चेके मेरा सारा जीवन नीरस है।"

अपनी माँ सुलक्षणाको फटकारती हुअी वह जब आत्मप्रशंसा करने लगती है, तब भी अुसपर विश्वास नहीं होता, अुलटे अुसके विरुद्ध अश्रद्धाकी भावना अुत्पन्न होती है। अुसके निम्नलिखित अुद्गार द्रष्टव्य हैं:--

"मोटरपर जाती हूँ, मोटरपर आती हूँ, ड्राअिवर और वजीर अली मेरे साथ रहते हैं, यद्यपि रातको बारह और दो बजे अकेले श्मशानमें जानेकी भी मैं हिम्मत रखती हूँ। मैं सभ्य हूँ, सुसंस्कृत हूँ। खेलके बीचमेंसे अुठकर नहीं आ सकती। जो अीश्वर कहीं नहीं, अुसपर तुम्हारा विश्वास हो सकता है। फिजूलका यह पूजा-पाठ तुम कर सकती हो।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिन्दुमतीके प्रति अिस अश्रद्धाका विकास लेखककी लेखनीका चमत्कार है। अुपन्यासका मूल सन्देश अुसके पास नहीं है, अुसका अधिकारी कोअी अन्य व्यक्ति है--अिसका परिचय हमें क्रमशः मिलने लगता है। यहाँ हमारे लिअे यह ज्ञातव्य हो जाता है कि वह कौन पात्र है जो अुपन्यास-गत सत्यका नायकत्व करता है, जिसमें अुपन्यासकी कला अपनी सिद्धि प्राप्त करती है। अिस सम्बन्धमें चार व्यक्तियोंका नाम लिया जा सकता है--(१) ललित मोहन; (२) वजीर अली; (३) वीरभद्र; (४) डाक्टर त्रिलोकीनाथ। ललित मोहन अिन्दुमतीका पति था, वजीर अली अेक विश्वस्त साथी और धर्मबन्धु था, वीरभद्र प्रेमपात्र था जिसके प्रति प्रणय-मग्न होकर अिंदुमती सर्वथा निर्लज्ज हो गअी और डाक्टर त्रिलोकीनाथ वह व्यक्ति था, जिसके सहयोगसे वैज्ञानिक पिचकारीके द्वारा अिन्दुमतीने गर्भाधान कराया।

यह अुपन्यास जिन दो अुपर्युक्त प्रश्नोंको लेकर चला है, अुनमेंसे केवल अेक--अर्थात् भारतीय स्वाधीनता-संघर्षको लेकर ही ललित मोहन कुछ दूर तक चल सका है। द्वितीय प्रश्न, अर्थात् भारतीय व्यक्तिकी मानसिक स्वाधीनताकी समस्याको वह अछूता छोड़ गया है; यही नहीं, यह कहना अधिक सही होगा कि अुसने अपनी मृत्यु द्वारा अिंदुमतीको अिस समस्याके सिंधु-प्रवाहमें धक्का देकर गिरा दिया है और वह संकल्पशक्ति-शून्य होकर लहरोंके थपेड़े खाती हुअी बही है। अैसी अवस्थामें यह कहना कि अुपन्यासका सत्य ललित मोहनके पास है, अुचित नहीं होगा। वजीर अली अेक साम्यवादी कार्यकर्त्ता है और अुसकी अितनी ही सफलता है कि वह अिन्दुमतीको कुछ परिस्थितियोंके यथार्थ वातावरणमें पहुँचा सका है; अधिकसे अधिक यही कहा जा सकता है कि वह प्रथम प्रश्नकी परिधिके भीतर अिंदुमतीको कुछ अधिक क्रियाशील बना पाया है। वीरभद्र कुलियोंका अेक निरक्षर 'मेट' है, वह असंयमशील होनेपर भी अिन्दुमतीकी दुर्बल प्रवृत्तियोंके प्रहारसे अपनी रक्षा कर सका, अिस सामर्थ्यके लिअे ही वह बहुत प्रशंसनीय है, अिससे अधिककी क्षमता अुसे प्राप्त नहीं है। अिन तीनोंके विपरीत डाक्टर त्रिलोकीनाथका व्यक्तित्व अैसे तत्वोंसे निर्मित है, जिनमें अिंदुमतीके प्रबल रोगका अुपचार करनकी शक्ति है। वह अेक गम्भीर और स्पष्टवादी व्यक्ति है, अिसका पता हमें आरम्भहीमें लग जाता है जब अिन्दुमतीके चाहनेपर भी अुसने अुससे अपने हाथमें राखी नहीं बँधवाअी।

डाक्टर त्रिलोकीनाथने अिन्दुमतीसे राखी नहीं बँधवाअी तो अिसके लिअे अुसके सामने अुचित कारण थे। वह मन-ही-मन अिंदुमतीके रूपसे आकर्षित होकर अुसे चाहने लगा था। किन्तु अुसका प्रेम मुखर नहीं था। किसी वस्तुकी अिच्छा होनेपर अिन्दुमतीमें जैसी व्याकुलता आ जाती थी, वह अुसे प्राप्त करनेके लिअे जिस तरह हाथ धोकर पीछे पड़ जाती थी वह व्याकुलता और वह आतुरता अुसमें नहीं थी। अिन्दुमतीके विवाह कर लेनेपर भी और अुसके विधवा होनेपर भी नहीं, अुसके गर्भधारणके अनंतर भी नहीं। अपने अिस मानसिक रोगसे परेशान होकर अुसने अेक विचित्र साधना-पद्धतिको अपनाया; अुसने अिन्दुमतीको सम्पूर्ण विश्वमें तथा सम्पूर्ण विश्वको अिन्दुमतीमें देखनेका अभ्यास बढ़ाया, जिससे वह स्वयंको भी अुसमें प्राप्त करके अभेद-भावनाका अनुभव कर सका। अिसी अभेद-भावनाका अुपदेश डाक्टर त्रिलोकीनाथने अिन्दुमतीको दिया जब वह शशिबालाका नाम धारण करके अमरीकाकी सैर समाप्त करनेके अनंतर डा. त्रिलोकीनाथसे मिली और फिर भी प्यासी ही बनी रह गअी, अनन्त वासनाओंके प्रहारसे आहत ही होती रही।

मनुष्य जीवनको सुखी और सफल बनानेके संबंधमें अिन्दुमतीके पिता वकील अवधबिहारीलालके मतका अुल्लेख किया जा चुका है; डा. त्रिलोकीनाथका कहना है कि अुक्त कथनमें अुस अवस्थामें कोअी अनौचित्य नहीं है जब कि व्यक्ति अपनेको केन्द्र मानकर संसारकी समस्त वस्तुओंको अपने आनन्दका साधन समझनेके साथ-ही-साथ अभेद-भावनाको हृदयसे दूर न जाने दे। अवधबिहारीलालकी अुक्तिमें सब कुछ है किन्तु अभेद-भावनाकी कोअी चर्चा नहीं है। अिस अुपन्यासके पूर्ववर्त्ती छोरपर अवधबिहारीलाल हैं और अन्तिम छोरपर डा. त्रिलोकीनाथ; अभेद भावनापर आग्रह व्यक्त न करके अवधबिहारीलालने अुपन्यासको जीवन प्रदान किया और अभेद भावनापर विशेष बल देकर त्रिलोकीनाथने अुन घावोंके लिअे मरहम प्रस्तुत कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया जो मृगजल द्वारा प्यास बुझानेके लिअे प्रयत्न करनेवाली, अभेद भावनासे सर्वथा शून्य अिन्दुमतीके हृदयमें हो गअे थे।

जिस औषधि द्वारा अिन्दुमतीका मानसिक अुपचार-विधान डाक्टर त्रिलोकीनाथने किया अुससे भारतीय व्यक्तिकी मानसिक स्वाधीनताकी सिद्धि क्यों मानी जाअे, यह भी पूछा जा सकता है। अिस सम्बन्धमें यह स्मरण रखने योग्य है कि अिन्दुमतीमें केवल अुतनी ही वासनाअें और दुर्बलताअें नहीं थीं, जितनी प्रायः प्रत्येक मानवमें संभव हैं, अुनमेंसे कुछ अैसी भी थीं जो आधुनिककालीन वातावरणकी अुपज थीं। वह वातावरण जिसमें शिक्षित भारतीय पाश्चात्य वैज्ञानिकोंके अनुसंधानोंका अन्धदास हो गया है और अुच्चतर भारतीय दर्शनको भुलानेकी चेष्टा कर रहा है। अिस प्रकार अिन्दुमती अुस भारतीय व्यक्तिका प्रतिनिधित्व करती है जो योरपीय ज्ञान-विज्ञानसे आक्रान्त होकर हीनताकी भावना धारण करनेके लिअे विवश हुआ है। डा. त्रिलोकीनाथकी व्याख्यासे अिस विजित व्यक्तिकी मुक्ति अिन्दुमतीकी मानसिक मुक्तिकी अनुगामिनी हो जाअेगी, क्योंकि अुक्त व्याख्यामें, अभेद-भावनाके निर्देशमें, वेदान्तको समझानेके लिअे पश्चिमीय विज्ञानकी भाषाका प्रयोग किया गया है।

अब रही यह बात कि डाक्टर त्रिलोकीनाथके अुपचारमें केवल द्वितीय प्रश्नका समाधान है या प्रथम प्रश्नका अुत्तर देनेका भी अुसमें प्रयत्न किया गया है। अिस सम्बन्धमें विचार करते समय यह ध्यानमें रखना आवश्यक है कि भारतीय स्वाधीनताका प्रश्न विकृत वासनाओंसे आक्रान्त युवकों-युवतियों द्वारा न हल किया जा सका है और न किया सकेगा। जब सम्पूर्ण भारत अेक यज्ञ-कुंड-सा हो गया था, जिसमें मूल्यवान्-से-मूल्यवान् जीवनोंकी आहुति पड़ रही थी, अुस समय भी क्या अेक विशाल संख्या अुन लोगोंकी नहीं थी जो केवल अपनी विलासिताकी प्रवृत्तिको पुष्ट कर रहे थे? अभेद भावनाका अुपदेश क्या अुनके लिअे भी अुतना ही अुचित और अुपयोगी न सिद्ध होगा जितना अुचित और अुपयोगी वह मानसिक रोगमें ग्रस्त अिंदुमतीके लिअे हो सकता है। सच बात यह है कि मानसिक व्याधि-शमनका अर्थ ही यह है कि व्यक्ति अपने व्यक्तिगत और सार्वजनिक दोनों ही प्रकारके कर्मके लिअे अुपयुक्त हो सके। अिस प्रकार, हम देखेंगे कि अुपन्यास-निर्मित समस्त बाधाके निवारणमें सक्षम समर्थ प्रकाश हमें डा. त्रिलोकीनाथसे मिला है। अतः वही अिस अुपन्यासका नायक है।

जो कुछ यहाँ कहा गया है, अुसे ध्यानमें रखकर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि लेखकने अिन्दुमतीके रूपमें अुस समस्त सामग्रीको साकार रूप दिया है, जिसकी अुसे आलोचना करनी है और जो अुसे प्रचुर परिमाणमें भारतीय समाजमें दिखाअी पड़ रही है तथा अुस आलोच्य सामग्रीके संशोधनके लिअे अुसने अभेद-भावनाका निर्देश किया है। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि वैयक्तिक और सामाजिक दोनों ही दृष्टियोंसे अुपयोगी अिस सिद्धान्तपर जितना भी बल दिया जाअे, आवश्यकताको देखते हुअे वह न्यून ही प्रमाणित होगा।

अपनी ओजस्विनी विचारधाराको लेखकने जिस कलात्मक ढंगसे सजाया है, चंचल, अतृप्ति-पीड़ित नायिकाको प्रबुद्ध नायकके अधीन करके अुसे प्रगतिके लिअे जिस प्रकार प्रेरित किया है, वह अुसकी चित्रात्मक-शैलीके कारण अधिकाधिक सूक्ष्म अेवं सौंदर्य-सम्पन्न हुआ है। अेक-अेक पात्रके अत्यंन्त निकट और विस्तृत चित्रणमें अिस समन्वित शैलीका दर्शन किया जा सकता है। अुदाहरणके लिअे निम्न लिखित पंक्तियाँ देखिअे :—

"नाचनेकी वजहसे बाअीजीको पेशवाज तो पहनना ही पड़ा था, पर गरमीके कारण बड़ा हलका-सा था पेशबाज; और अुसपर काम था लखनअूकी प्रसिद्ध कामदानीका। आभूषण भी वह धारण किअे हुअे थी, सिरपर दाहिनी ओर लड़ियोंवाला झूमर, कानोंमें कर्णफूल और लम्बे-लम्बे झुमके, गलेमें वक्षस्थल तक फैला हुआ हार, भुजाओंपर भुजबंद, हाथोंमें घनी चूड़ियाँ, अंगुलियोंमें अँगूठियाँ और अँगूठेमें आरक्षी, लेकिन जेवरात भी मोतीके हल्के-हल्के थे। तबलची, दोनों सारंगीवाले और मँजीरेवाला सभी पूरे-पूरे छैले दीखते थे। चिकनके कपड़े, दुपलिया टोपियाँ और तबले तथा सारंगी बाँधनेके रेशमी दुपट्टे। गालोंमें सबके पान भरे हुअे थे और आँखोंमें सुरमा लगा था।"

अन्तमें मैं फिर कहना चाहता हूँ कि 'अिंदुमती' हिंदीमें अपने ढंगका पहला अुपन्यास है और यदि अुसकी परिश्रम साध्य शैली हिंदीमें स्वीकार कर ली जाअे तो अुससे साहित्य और समाज दोनोंका अपरिमित कल्याण हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाबू गोविन्ददासके समस्या-नाटक

—प्रो. राजेश्वर गुरु

हिन्दीके नाटककारोंमें बाबू गोविन्ददासका अपना निश्चित स्थान है। अुन्होंने अबतक विभिन्न विषयों और शैलियोंके द्वारा नाट्य-रचनाके क्षेत्रमें अपनी बहुमुखी प्रतिभाका परिचय दिया है। अुनके ५० से भी अूपर नाटकोंमें पौराणिक, अैतिहासिक, सामाजिक, समस्या-मूलक, दार्शनिक सभी प्रकारकी कृतियाँ हैं। अेकांकी और अनेकांकी, अेक-पात्री और बहु-पात्री नाटक अुनके अिस क्षेत्रमें किअे गअे प्रयोगोंके परिचायक हैं।

यहाँ अुनके समस्या-नाटकोंका अध्ययन ही अभीष्ट है।

मध्य-प्रदेशकी हिन्दी साहित्यको देन--शीर्षकसे प्रसारित अपनी अेक रेडियो-वार्तामें मैंने गोविन्ददासजीके सम्बन्धमें लिखा था :

"सेठ गोविन्ददासके नाटकोंने हिन्दीमें नाट्य-रचनाकी अपनी विशेष शैलीका प्रचलन किया है। मोनोड्रामा जैसे कुछ प्रयोग सेठ गोविन्ददासके बिलकुल अपने हैं। सेठजीने "नाट्य-कला मीमांसा" में अपनेको अिब्सन और बर्नार्डशासे प्रभावित बताया है। यदि अिब्सन जैसा सूक्ष्म समाज-विश्लेषण और 'शा' जैसी तीखी व्यंगात्मक शैली सेठ गोविन्ददासकी हो पाती, तो अुनके नाटक और भी अधिक चमकते अेवं अभिनन्दित होते।"

अिस अुद्धरणको देनेका अुद्देश्य यह है कि अिस स्वीकारोक्तिके आधारपर सेठजीके साहित्यका विश्लेषण करनेसे संभव है कि अुनके प्रति अधिक न्याय किया जा सके। कमसे-कम अुनके समस्या-मूलक नाटकोंको समझनेमें यह स्वीकारोक्ति निस्सन्देह बड़ी सहायक होगी।

अपने समस्या-मूलक नाटकोंमें बाबू गोविन्ददासने निम्नलिखित कृतियोंका अुल्लेख किया है :

१–गरीबी या अमीरी, २–हिंसा या अहिंसा, ३–त्याग या ग्रहण, ४–प्रेम या पाप, ५–सुख किसमें, ६–संतोष कहाँ, ७–दुख क्यों, ८–महत्व किसे, ९–बड़ा पापी कौन।

'स्नेह या स्वर्ग' को अुन्होंने पौराणिक नाटकोंकी श्रेणीमें रखा है। यथार्थतः अिस नाटकका अध्ययन भी समस्या नाटकोंके अन्तर्गत करना अधिक अुपयुक्त होगा।

'स्नेह या स्वर्ग' को साथ मिलाकर यहाँ नाटककारके कुछ समस्यामूलक नाटकोंपर विचार किया जा रहा है।

बाबू साहबके साहित्यिक व्यक्तित्वको समझनेके लिअे हमें अुनके जीवन-क्रमकी जानकारी आवश्यक है।

बाबू साहबका व्यक्तित्व अनेक विरोधी तत्वोंसे निर्मित है। वे अैसे वातावरणमें जन्मे और बढ़े हैं, जहाँ लक्ष्मी वायुकी तरह अर्चित और पानीकी तरह व्यय होती थीं, किन्तु लक्ष्मीके साथ कोमल वृत्तियोंका जो संकोच निरपवाद जुड़ा हुआ रहता है, वह अिनमें कभी नहीं रहा। महलके वातायनमेंसे जब भी बाबू साहबकी दृष्टि बाहर गअी अुन्होंने जीवन और समाजको गम्भीरतापूर्वक देखा है, और अुनकी समस्याओंको समझनेका आग्रह दिखाया है। अगर यह बात न होती तो सन् १९२० के आसपास जिस समय बाबू गोविन्ददासके कारोबारको चार चाँद लग रहे थे, वे अपने परिवारकी लक्ष्मी-आराधन-परम्परासे अपने आपको पृथक करके जन-लक्ष्मीकी पूजाका व्रत न लेते। जन-सेवा-पथके अवलम्बनसे शासनकी कुदृष्टिका खतरा झेलकर चलनेवाले बाबूजीकी मनोरचनाका अन्दाज लगाया जा सकता है। राष्ट्रपिता बापूके आदेशपर छुरेकी धारापर चलनेवालेके संकल्प तब और श्रद्धास्पद जान पड़ते हैं, जब हम अुन परिस्थितियोंपर विचार करते हैं, जिन्हें तिलांजलि देकर बाबू गोविन्ददासजीने शासन और निज परिवारका कोप-भाजन बननेका संकल्प स्वीकारा। छिद्रान्वेषी अिस कृत्यमें भले ही कहीं वैणिग्वृत्ति छिपी हुअी देखें, किन्तु अिससे क्या अिनकी सदाशयताका महत्व कम हो सकेगा। पैंतीस वर्ष-व्यापिनी साधनाके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रममें जिसने कभी प्राप्तिकी वासनासे अुसे कलुषित नहीं होने दिया, और जो आज भी निष्काम भावसे अुसमें संलग्न हैं, अुनके अन्तर्मनमें लोभका कलुष देखना सोचनेके संकीर्ण ढंगका परिणाम है। तो अुनके साहित्यको समझनेके लिअे यह बात जान लेना आवश्यक है कि नितान्त समाजापेक्षी दृष्टि लेकर यह कलाकार अपने साहित्य-कर्ममें अवतरित हुआ है, और गांधीजीके सोचनेका प्रभाव अिसके सोचनेके ढंगपर भी पड़ा है। फिर सेठजी केवल चिन्तनके क्षेत्रके ही व्यक्ति नहीं हैं। अुनका चिन्तन अुनके जीवन-रसमें घुलकर अेक-रस हो गया है। तभी जन-मंचपर खड़े होकर अुच्छासपूर्ण शब्दोंमें जनताको अुद्बोधन दे सकना अुनके लिअे अुतना ही स्वाभाविक है, जितना जेलकी अेकान्त कोठरीमें बैठकर साहित्य-सर्जना करना। अेक और बात है। बाबू गोविन्ददास जनताके आदमी हैं। साहित्यको अुन्होंने जन-मन-पथसे ही ग्रहण किया है। अिसीलिअे वे समस्याओंको मनोविज्ञान और मनोविश्लेषणके आधारपर नहीं तौलते, अुनकी समाजोपयोगिताके आधार-पर अुनका मूल्यांकन करते हैं।

बाबूजीकी नाट्य-रचनाका अजस्र क्रम लगभग १९३४–३५ से प्रारम्भ होता है। हर्ष, कर्तृत्व और प्रकाश अुनकी प्रारम्भिक कृतियाँ हैं। दृष्टि-निक्षेपकी मौलिकता और शैलीकी नवीनतासे सहज ही हिन्दी पाठकोंका ध्यान अिस कलाकारकी ओर आकर्षित हो गया था। समस्या-रूपकोंकी रचना लगभग दस वर्ष बाद प्रारम्भ हुअी।

समस्या-रूपकोंकी रचना अिस बातकी द्योतक है कि कलाकार अब अतीतसे प्रेरणा हासिल करनेकी बजाय वर्तमानको जाननेकी जागरूकता पैदा करना चाहता है जैसा कुछ अुनका जीवन था, अुसमें वर्तमानसे अुनका परिचय प्रतिदिनका था, किन्तु वर्तमानको देखनेकी वह दृष्टि अभीतक अुनमें नहीं आ पाअी थी, जो मर्म तक पहुँचकर तथ्य संग्रह कर सके। समस्याओंमें पैठनेकी अिस दृष्टिका अुदय अिस बातका सुबूत है कि कलाकारके मनमें अेक प्रकारका संघर्ष प्रारम्भ हो गया है। वह कलके विभिन्न पक्षों-प्रसंगोंको मर्मज्ञकी सतर्क जागरूकताके साथ देखता है और अपने पूर्व-निर्धारित माप-दण्डपर अुनको कसता है।

बाबू गोविन्ददासके समस्या-रूपकोंको यदि ध्यानसे देखें, तो दो बातें, स्पष्ट मिलेंगी। अेक तो यह कि अुन्होंने युगपर दृष्टि डालते समय भी युगकी नहीं, युग-युगकी समस्याओंको छूना चाहा है, अुनकी दृष्टि युगकी विशिष्ट समस्याओंपर न रुककर युग-युगकी, मानव-जीवन मात्रकी चिरंतन समस्याओंपर गअी है। दूसरी बात यह कि अिन समस्याओंको अुन्होंने गाँधीवादी दृष्टिसे देखा है और अुसी दृष्टिसे अुनका हल निर्दिष्ट किया है। यही अेक और बात साफ दीख पड़ती है। बाबू गोविन्ददास चिन्तनके क्षेत्रके नहीं, भावनाके क्षेत्रके व्यक्ति हैं। अिसलिअे वे समस्या तक दिमागके रास्ते नहीं, दिलके रास्ते पहुँचते हैं। अिसीलिअे अुनके स्पष्ट दावेके बावजूद अुनका नाट्य-साहित्य अिब्सन और शाकी बाह्य सज्जा तो अपना सका है, अिन महान चिन्तकोंकी तार्किकता और अभिव्यंजकता ग्रहण नहीं कर पाया है। शायद अिसीलिअे रामचन्द्र शुक्लने अपने हिन्दी साहित्यके अितिहासमें लिखा है :

अिन तीन नाटकों : कर्तव्य, हर्ष और प्रकाश : के वस्तु-विन्यास और कथोपकथनमें विशेष रूपसे आकर्षित करनेवाला अनूठापन नहीं है, लेकिन अितनी बात वे स्वीकार करते हैं कि अिनकी रचना बहुत ठिकानेकी है। गोविन्ददासजीके सम्बन्धमें लिखा गया अुनका पहला ही वाक्य बड़ा सार्थक मालूम होता है : वर्तमान राजनीतिके अभिनयोंका परिचय प्राप्त कर सेठ गोविन्ददासजीने अिधर साहित्यके अभिनय क्षेत्रमें भी प्रवेश किया है।

अुपरोक्त ९ समस्या-नाटकोंमें यथार्थतः मानव-मनके चिरंतन द्वन्द्वोंको वर्तमान युगकी परिस्थितियोंके पृष्ठभूमिपर चित्रित किया गया है। अिस नाते वे बाबू साहब अिब्सन और शाकी परम्परासे दूर जा पड़े हैं। अिन दोनों पश्चिमी कलाकारोंने दार्शनिक और नीतिवादी बनकर जीवनके चिरंतन प्रश्नोंको सुलझानेका अुतना आग्रह नहीं दिखाया है, जितना अपने समकालीन समाजके पाखंड और कलुषको अुघारकर तीखे व्यंग्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ रख देनेका संकल्प साधा है। अिसीलिअे सेठजीके अिन नाटकोंको ठीक समस्या-नाटक कहते नहीं बनता।

कहा जाता है कि कलाकार अपने साहित्यमें अपनी आत्म-कथा कहता चलता है। साहित्य संस्मरणात्मक होता है। गोविन्ददासके नाटकोंके प्रसंगमें यह कथन सोलहों आने सत्य अुतरता है। अुनके जीवनको अत्यत निकटतासे जाननेके कारण अुनके साहित्यकी यह आत्म-कथात्मकता मुझे अेकदम स्पष्ट दीख पड़ी है। प्रायः अिन सभी समस्या-नाटकोंका नायक किसी-न-किसी रूपमें स्वयं नाटककारकी प्रतिच्छवि है। जहाँ अैसा नहीं है, वहाँ नाटककारके जीवनकी घटनाअें प्रधान पात्रोंपर आरोपित होकर प्रकट हुअी हैं। गरीबी और अमीरीमें विद्या-भूषणका मनोद्वन्द्व मानों स्वयं बाबू साहबकी अनुभूत भाव-भूमि है। सरस्वतीचन्द्र अुस मनोविकासका द्योतक है जो बाबूसाहबने समाज-सेवाके प्रसंगमें अधिकृत किया है। अिसी प्रकार "महत्व किसे" में समाजके जिस रूपका दर्शन मिलता है, वह भी नाटककारने स्वयं अपने राजनीतिक जीवनके प्रसगमें देखा होगा। यही बात "दुख क्यों" के सम्बन्धमें कही जा सकती है। 'त्याग या ग्रहण' और 'हिंसा या अहिंसा' पर स्पष्ट रूपसे गांधीवादी विचार-धाराका प्रभाव मिलता है। "स्नेह या स्वर्ग" और "प्रेम या पाप"--प्रेमके चिरन्तन प्रश्नके दो पक्षोंको प्रगट करता है। कहें, तो कह सकते हैं कि प्रेमके प्रश्नपर दैहिक और आत्मिक दोनों आधारोंपर अिनमें चर्चा मिलती है।

समस्या-रूपकोंके रचयिता बाबू गोविन्ददासके सम्बन्धमें रामचन्द्र शुक्लका यह कथन स्मरण रखना होगा कि वे वर्तमान राजनीतिके अभिनयोंका अभिनय प्राप्त किअे हुअे हैं। आजसे अनेक वर्षों पूर्व हर्षकी विस्तृत आलोचना करते समय मैंने लिखा था कि सक्रिय राजनीतिके क्षेत्रके व्यक्तिकी यह विवशता होती है कि वह कार्यको महत्व देता है, कारणको नहीं। अुसके लिअे कार्यका प्रेरणा-स्रोतमनोभावोंका देश अुतना महत्वपूर्ण नहीं होता, जितना समाजकी लीला-भूमिमें व्यक्त कार्य। अिसीलिअे सक्रिय राजनीतिका व्यक्ति जब साहित्य-कर्ममें अवतरित होता है, तो वह मनो-विश्लेषणकी बजाय सम्पादित कर्मोंकी व्याख्या करता चलता है। बाबू साहबके नाटक भी अिसी विशेषताको लिअे हुअे हैं। अिनमें कृतिके आधारपर कर्ताको समझनेका आग्रह मिलता है। कृतिके पीछे मनका जो स्वरूप है, मनोभावनाओंका जो आन्दोलन है, वह सूक्ष्मतासे प्रगट नहीं हो पाया है।

गोविन्ददासजीके नाटकोंने हिन्दी साहित्यको क्या दिया है, अिस बातपर विचार करते समय अुनकी कुछ विशेषताअें स्पष्ट नजर आती हैं। बाबू साहबने आधुनिक हिन्दी नाटकोंमें मिलनेवाली सबसे बड़ी कमजोरीकी पूर्तिका सजग प्रयत्न किया है। यह हिन्दीका बड़ा दुर्भाग्य है कि जिस समय बंगला और मराठीके पास अुनका अपना रंगमंच आ चुका था, अुस समय हिन्दीके प्रेमी नौटंकियों-रामलीलाओंसे सन्तोष करके रह जाते थे। बाबू गोविन्ददासजीने रंगमंचो-पयोगिताकी दृष्टिसे नाट्य-रचना करके अिस कमीको पूरा करना चाहा है। विस्तृत नाट्य-निर्देश देनेमें बाबू साहब शा और अिब्सनके समान सम्यक् वातावरणकी रचना तो करते ही हैं; संभवतः अिसके द्वारा वे अभिनयेच्छुकोंको समुचित पथ-प्रदर्शन करना चाहते हैं।

बाबू साहबके नाटकोंके बारेमें चर्चा करते समय अक्सर कहा जाता है कि अिनके नाटकोंमें कथा-वस्तुका निर्वाह प्रभावकताके साथ नहीं हो पाता है। यह बात अेक सीमातक सही है। अिसका कारण है कि वे अपनी कथा-वस्तुको अितना अधिक यथातथ्य बना देते हैं कि अुसमें कल्पनाके लिअे अवकाश ही नहीं रह जाता और साहित्य-रचनाका कार्य न तो संवाददाताका कार्य हुआ करता है, और न जन-मंचके जोशीले भाषण देनेवाले राजनीतिक नेताका।

नाट्य-कलाके सम्बन्धमें बाबू गोविंददासने विस्तार से अपनी 'नाट्य-कला मीमांसा" में लिखा भी है। यहाँ गरीबी और अमीरीमें अुन्होंने हिन्दीके आदर्श रंगमंचकी कल्पना की है। आदर्श रंगमंच सम्बन्धी बाबू साहबके विचार व्यावहारिक अुद्देश्यसे ध्यान देने योग्य हैं। लेकिन अिनके बहुतसे हिस्सेको अुनके साहित्यालोचनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिअे अनावश्यक समझकर छोड़ा जा सकता है। मेरा अपना मत है कि रंगमंचीय आवश्यकताओंका जरूरतसे ज्यादह ध्यान रखनेके कारण बाबू साहब अपनी कथा-वस्तुके प्रति समुचित जागरूकता नहीं दिखा पाअे हैं। ओब्सन और शा और हिन्दीमें भुवनेश्वरके नाटच-निर्देश अपने-आपमें साहित्यिक महत्व भी लिअे हुअे रहते हैं। बाबू साहबके नाटच-निर्देश अभिनयके समय अुपयोगी भले ही हों, पाठच-सामग्रीके दृष्टिकोणसे अुनकी सरसता संदिग्ध ही रहती है।

अिन समस्या-रूपकोंको नितान्त साहित्यिक दृष्टि-कोणसे देखें, तो शायद थोड़ा-सा निराश होना पड़े, किन्तु पिछली दो दशाब्दियोंमें हिन्दी साहित्य, और सम्भवतः समस्त भारतीय साहित्यमें गान्धीवादके प्रभावमें लिखनेवालोंका बड़ा दल तैयार हो गया है। अिस प्रकार सोहनलाल द्विवेदीको गांधीवादी कवि और जैनेन्द्र कुमारको गांधीवादी विचारक माना जाता है, अुसी प्रकार कह सकते हैं कि बाबू गोविन्ददास गांधीवादी नाटककार हैं। बाबू साहब हिन्दीके नाटककारोंमें अिस-लिअे मान्य हैं कि सामाजिक कथा-वस्तुओंको लेकर समाजके प्रश्नोंको गान्धीवादी ढंगसे समझने और सुलझानेका आग्रह दिखानेवालोंमें शायद वे सर्वोपरि हैं।

नाटककार, चाहे वह अेकांकी लिखे, चाहे अनेकांकी, तब तक सफल नहीं हो सकता, और न तब तक अपने पाठकोंका ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर सकता है, जब तक अुसके पास कथावस्तुको पेश करनेका मौलिक ढंग न हो, और जब तक अुसके पास जीवनको व्यक्त करनेका अपना मौलिक दृष्टिकोण न हो। बाबू गोविंददासजीने जीवनको गाँधीवादी ढंगसे देखा है, और समाजको गांधीजीके आन्दोलनोंके माध्यमसे। अिसलिअे यद्यपि अुनके मौलिक ढंग और दृष्टिकोणको अुनके नाटकोंमें खोजनेपर निराश होना पड़ता है, युगके सर्व-प्रिय विचारोंको व्यक्त करके बाबू साहबने अपनेको युगकी भावनाओंका कुशल चितेरा सिद्ध कर दिया है।

नाटककार गोविंददासको अिसी आधारपर सम-झनेसे अुनके साहित्यमें रस ले सकना सम्भव है।

चीनके महान् सन्त कन्फ्यूशियसकी दिव्य वाणी

"यदि आप अीमानदारीसे लोगोंका सुधार करना चाहते हैं तो कौन अैसा है जो अपना सुधार नहीं चाहेगा। अथवा अपनी गलती नहीं सुधारेगा?"

"यदि आप स्पष्ट रूपसे भलाअीकी कामना करेंगे तो निस्सन्देह लोग भले होंगे।"

"शासन वही अुत्तम है जो अपने अधीनस्थोंको सुखी रखे और जो अपनेसे दूर हैं, अुन्हें आकर्षित करे।"

"जो स्वयं अपना ही सुधार नहीं कर सकता, अुसे दूसरोंके सुधारकी बात करनेका भला अधिकार ही क्या है?"

"जो व्यवहार तुम दूसरोंसे अपने प्रति नहीं चाहते, वैसा व्यवहार तुम भी दूसरोंके प्रति कभी मत करो।"

"दूसरोंका सम्मान करो, लोग तुम्हारा भी सम्मान करेंगे।"

"बिना आत्म-संयमके कोरी बुद्धिमानी कायरतामें और स्पष्टवादिता अशिष्टतामें बदल जाती है।"

"किसी विशाल सेनाके नायकको छीना जा सकाता है; किन्तु किसी गरीब आदमीसे अुसकी दृढ़ताको नहीं छीना जा सकता।"

"खानेको रूखा-सूखा भोजन, पहननेको मोटा कपड़ा, पीनेको शुद्ध जल और सहारेको अपनी मुड़ी हुअी बाँह हो--अैसी स्थितिमें भी मनुष्य सदा सुखी रह सकता है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"चाँदिनी" और "यामिनी"

—प्राध्यापक राजनाथ पाण्डेय

१

"चाँदिनी"

गिर्जाघरके महंत मृगनान धर्मकी सेनाके सच्चे सिपाही थे। लम्बे कद और अिकहरे बदनवाले वे महंत धर्मके मामलोंमें बड़े कट्टर थे। हँस-मुख स्वभावके होते हुअे भी वे गम्भीर और अविचलित मनवाले प्राणी थे। अपने निश्चित विचारोंमें वे क्षण मात्रके लिअे भी शिथिलता न आने देते। अुनका विश्वास था कि परमात्माके रहस्योंको वे जानते हैं और पूर्णतया जानते न भी हों तो अिससे क्या? अुसके विधानों, अुसकी प्रेरणाओं और अुसके अुद्देश्योंको सोचने, परखने और जान लेनेका वे अपना पूर्ण अधिकार मानते थे।

अपने बंगलेके बगीचेमें लम्बे-लम्बे डग भरते हुअे जब वे टहलते होते तो अुनके मनमें प्रश्न अुठता : अमुक वस्तुकी रचना परमात्माने किस अुद्देश्यसे की है? अैसे क्षण प्रायः अपनी कल्पना द्वारा वे स्वयं भगवानकी तरफसे अपने प्रश्नका अुत्तर ले लेनेकी जिद पकड़ लेते थे, और अुत्तर लेकर ही शान्त होते थे। वे अुन लोगोंमें नहीं थे जो यह कहते हैं कि "हे प्रभो! तेरे रहस्योंका भेद जानना मानवकी बुद्धिके परे है।"

अुन्हें प्रकृतिकी प्रत्येक क्रियामें अेक अपूर्व सुव्यवस्थित योजनाके दर्शन मिलते थे। अुनकी दृष्टिमें अुषाका आविर्भाव जागरणकी प्रसन्नताके लिअे, दिनका सृजन फसलोंको परिपक्व करनेके लिअे, वर्षाका विधान वनस्पतियोंके सिंचनके लिअे, सन्ध्याकी अवतारणा विश्रामकी सूचनाके लिअे और रात्रिका आगमन निद्रा-सुखके अर्जनके लिअे ही होता है।

सृष्टिकी प्रत्येक वस्तुके निर्माणमें अीश्वरकी किसी-न-किसी प्रेरणाको स्वीकार करके सबकी सार्थकता अंगीकार करते हुअे भी वे न जाने क्यों नारी-जातिके प्रति आदरका कोअी भाव न रखते थे। सच तो यह है कि स्त्रियोंसे अुन्हें अपार घृणा थी; पर अचरजकी बात कि अिस बातका अुन्हें कुछ ज्ञान नहीं था। नारीके लिअे प्रभु अीशु मसीहके कहे हुअे ये वचन कि "हे नारी! आपसे मेरा क्या सरोकार है?" महन्त महोदय अकसर दुहराया करते थे। बल्कि अुस प्रसिद्ध अुल्लेखमें अकसर अितना अपनी ओरसे और मिला देते थे कि "कहें तो कह सकते हैं कि स्वयं भगवान भी अपनी अिस रचना (नारीकी सृष्टि) से बहुत प्रसन्न न हुअे होंगे!" संक्षेपमें आदि पुरुष (आदम) को बरबाद करनेवाली नारी अिनके मतमें अबतक बराबर पुरुषको भ्रष्ट करनेका अपना काम करती ही जा रही है। नारीकी कायासे कहीं अधिक नफरत अिन्हें नारीकी प्रेम करनेकी क्षमतासे थी।

अिनका कहना था कि परमात्माने नारीकी सृष्टि केवल अिसलिअे की है कि वह पुरुषको प्रलोभित करनेका अपना काम करे और अुसके प्रलोभनोंके बावजूद भी अुससे बेदाग बच निकलनेकी साधनामें भरपूर अुतरनेका अपना काम पुरुष करे। अिसलिअे पुरुषको सदैव नारीके समीप होनेमें वैसी ही सतर्कता बरतनी चाहिअे जैसी कि किसी फन्देके निकट जानेमें बरती जाती है। हाँ आजीवन प्रभु अीसा मसीहके प्रेमकी जिन्होंने शपथ ली है अुन ब्रह्मचारिणी तपस्विनियोंके प्रति अुनके विचार कुछ अुदार अवश्य थे। किन्तु यह सोचकर कि मसीहके लिअे ही सही, है तो अुनका प्रेम आखिर नारीका ही प्रेम न, अुन विचारियोंकी अचंचल, सदा नीची रहनेवाली आँखोंमें, आनन्दकी अनुभूतिमें ढुलकते अुनके आँसुओंमें और स्वाभाविक अुनकी वाणीकी मृदुलतामें भी ज्यों ही अुन्हें नारीका आकर्षण दिख ही जाता था; फिर वे झुंझला अुठते और अुनसे बात करते-करते अचानक अशिष्ट और कठोर पड़ जाते थे, और तुरन्त अुन तपस्विनियोंके मुँहसे अैसी तेजीसे लम्बे-लम्बे डग भरते हुअे भाग खड़े होते थे मानो किसी भारी खतरेसे सही-सलामत बच निकलनेके लिअे अेकदम बेतहाशा भागे जा रहे हों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिन महन्तजीके अपनी अेक भतीजी थी जो अपनी विधवा माँके साथ अिनके बँगलेसे सटे अेक छोटे-से मकानमें रहती थी। महन्तजी अुसे अेक आदर्श मठवासिनी (तपस्विनी) बनाना चाहते थे। किन्तु वह बड़ी चंचल लड़की थी। वह बड़ी सुघर भी थी। महन्तजी धार्मिक चर्चाओंमें अुसका मन रमानेके लिअे जब बहुत गम्भीर होकर कोअी धार्मिक प्रसंग अुठाते तो अकसर अुसे हँसी आ जाती, और अिस बातपर जब महन्तजी अुसपर अुबल पड़ते तो वह अुनकी पीठमें लिपटकर अुन्हें प्यार करने लगती थी। अैसे अवसरपर यद्यपि महन्तजी अपने शरीरसे अुसे तत्क्षण विलग करनेकी कोशिश करते थे तथापि अुस कोमल अपत्य संस्पर्शसे अुन्हें अुस अेक क्षण जो सात्विक सुख प्राप्त होता था अुससे पल भरके लिअे पितृत्वकी वह वेदना अुनके अन्तस्तलमें लहरा अुठती थी जो बीज रूपमें प्रत्येक पुरुषके हृदयमें सतत निवास करती है।

कभी-कभी बाजारसे अेकसाथ घर लौटते समय जब पादरी महाशय (महन्तजी) अपनी भतीजीसे हरि-चर्चा छेड़ देते और भावोंके आवेशमें लम्बे-लम्बे डग भरने लगते तो अुस बिचारीको अुनके साथ चलना क्या, दौड़ना पड़ जाता था। कभी-कभी वह काफी पिछड़ जाती थी और तब रह-रहकर कभी आकाशको देखती तो कभी हरी-हरी घासको। अुस समय अुसके गालोंकी अरुणिमा और गहरी हो जाती और आनन्दकी अेक लहर अुसके रोम-रोममें समा जाती। अिस आह्लादके छलक पड़नेसे अुसकी आँखें भी चमकने लगती थीं। अिसी आनन्दातिरेकमें वह रंगीन परोंवाली पासमें अुड़ती कोअी तितली देखती तो अुसे पकड़कर दौड़ती हुअी अपने काकाके पास आकर कहती, "काकाजी! देखिअे न, यह कैसी सुन्दर है। मैं तो अिसे जरूर प्यार करूँगी!" और फिर वह अुसे चूमने भी लगती थी। अपनी प्यारी भतीजीके अिस तरह तितहली, गुलाब, सेब, अनार आदिको प्यार करनेमें महंतजीको नारीकी सारी सृष्टिको अपनेमें बाँध लेनेवाली कोमलताका ही आभास मिलता था और अैसा विचार मनमें अुठते ही वे अुस बिचारीको घुड़कने लगते थे।

और अेक दिनकी बात है कि अुनके घर काम करनेवाली बुढ़िया महरीने महंत मुगनानको बताया कि अुनकी भतीजीका अेक युवकसे प्रेम हो गया है।

यह सुनते ही महन्तको अैसा लगा कि अुनके अंग-प्रत्यंगमें फाँसी लगा दी गअी हो। अुस समय वे क्षौर-कर्ममें रत थे। सारा चेहरा साबुनकी झागके भीतर छिपा हुआ था। खैर। किसी तरह अपनेको सँभालकर गरज अुठे। बोले, "अैसा कैसे रे? मुलिया! तू झूठ बोल रही है। अैसा हो नहीं सकता।"

"भगवानका बज्जर गिरे हमारे अूपर महन्तजी जो मैं झूठ कह रही हूँ। अपने घरकी बात है अिससे कह दिया, नहीं तो हमको क्या? अपनी माँके खाटपर पड़ते ही वह रोज रातमें घरसे बाहर हो जाती है। किसी रात दस बजेके बाद नदीके किनारे अुन दोनोंको अेक साथ टहलते हुअे आप खुद भी देख सकते हैं।"

मुलियाकी अैसी दो टूक बात सुनकर महन्तजी झकझोर अुठे। लगे लम्बे-लम्बे डग भरकर कमरेमें टहलने; जैसी कि हर गम्भीर बातपर टहलनेकी अुनकी आदत थी। कुछ देर बाद वे फिर आअीनेके सामने आकर खड़े हो गअे और ज्यों त्यों करके डाढ़ीकी अपनी हजामत पूरी की। नाकसे कान तक तीन जगह अूस्तरेसे अपनेको काट भी लिया।

सारा दिन वे किसीसे कुछ न बोले। क्रोध और अुद्वेगसे वे भीतर-ही-भीतर सुलग रहे थे। पिता, गुरु और धर्मके अेक बड़े नेताके साथ अुसकी सगी भतीजीकी अैसी धोखाधड़ी! बापकी न मदद, न अनुमति यहाँ तक कि जानकारीके बिना ही लड़की अपना पति ढूँढ़ ले और फिर विवाहके अुत्सवमें शरीक होनेके लिअे बापको नेवता भेजे तो पिताकी जो दशा होती होगी वही दशा अिस समय महंतजीकी थी।

भोजनोपरान्त रातमें अुन्होंने बाअिबिल अुठाकर पढ़ना चाहा किन्तु अेक पद्य भी न पढ़ सके। ज्यों-ज्यों समय बीतता था अुनका रोष बढ़ता जाता था। जब घड़ीने दस बजाअे तो वे पलंगसे अुतर पड़े। हाथमें अपना मोटा डंडा ले लिया। डंडेको अूपर अुठाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुसे हवामें दो-तीन बार घुमाया और फिर अेकबार अुसे बहुत अूपर ले जाकर दाँत पीसते हुअे कुर्सीपर खटाकसे पटक दिया। कुर्सीका पिछला भाग दो समान हिस्सोंमें टूट गया और दोनों टुकड़े छटककर दूर जा पड़े। फिर महंतने धीरे-धीरे किवाड़के पल्ले सरकाअे और बाहर आकर सहनमें खड़े हुअे। सामने समस्त वसुधामें पसरी हुअी स्निग्ध चाँदिनीका अवलोकनकर वे अेक बारगी चिहुँक गअे। रातमें दस बजेके बाद शायद ही कभी वे बेकार बाहर निकले थे।

तमाम कठोरताओंके बावजूद भी महन्तकी आत्मामें अेक अीमानदारी और अेक अूँचा परिष्कार अवश्य था। अिसलिअे रजनीकी अुस भव्य और निर्लिप्त सुषमाके समक्ष होते ही वे स्थगित हो गअे। मुलायम चाँदिनीमें अभिषिक्त अुनके अुद्यानके फलाअू पेड़ोंकी पातें पगडंडीपर परछाअीं फेंक रही थीं। मकानपर चढ़ी हुअी चमेलीकी घनी बेल अपनी खुशबूदार मीठी अुच्छ्वासोंसे अुस मधुर निशामें वहीं विरम रहनेके लिअे सुगन्धिके देवताको मजबूर कर रही थी। महन्तजी अुस मन्द सुगन्ध समीरको अिस तरह पीने लगे, जैसे, कोअी मदभरी अपनी कीमती मदिराको स्वाद ले-लेकर पीता है। और फिर वे मन्थर-मन्थर विचरण करने लगे। भतीजीकी अुन्हें सुधि ही न रही।

बागसे निकलकर वे मैदानमें आअे। साराका सारा मैदान जहाँतक आँखें जा पाती थीं, रातकी अिस धवल नीरवतामें पोर-पोर डूबी हुअी थी, महन्तसे अब आगे बढ़ा नहीं जाता था। निदान अुस भव्यताको निरखनेके लिअे वे रुक ही गअे। रह-रहकर मेंढ़कोंकी हलकी-हलकी टुरटुर मैदानमें सुनाअी दे जाती थी और कुछ दूरपर बुलबुलकी मनोहारिणी धुन रातमें चाँदिनीमें घुलकर वह संगीत निर्मित कर रही थी जिसे सुनकर मानव प्राणी विचार-जगत्से अुठाकर स्वप्न-जगत्में पहुँचा दिया जाता है।

अब महन्तने फिर चलना शुरू किया किन्तु अुन्हें अैसा लगा, जैसे, वे थककर अेकदम चूर हो गअे हों। आगे बढ़नेकी अुनकी हिम्मत टूटने लगी। अुनकी अिच्छा हुअी कि किसी जगह बैठ जाअें और विधाताको अुसकी सृष्टिके लिअे धन्यवाद करें। सामने नदीके किनारे अूँचे-अूँचे वृक्षोंकी अेक कतार दूर तक चली गअी थी। नदी तटपर चारों ओर सफेद कुहासेकी अेक चादर-सी तनी थी। चाँदकी किरनें अुस चादरको जगह-जगह चीरती हुअी झलमला रही थीं। अब महंतके पैर और आगे न बढ़ सके। अेक अनहोनी भावना रोम-रोममें समाकर अुसके अन्तरतमको झकझोरने लगी। अेक विचित्र प्रकारके संशय और परेशानीने अुसे विचलित कर दिया। अुसने महसूस किया कि अेक प्रश्न जो अुसके मनमें प्रायः अुठ-अुठकर भी आज तक अुठ नहीं पाया था, आज अकस्मात् साकार होकर अुसके सामने खड़ा है। वह सोच रहा था—

परमात्माने अैसा किया क्यों? जो रात अुसने आरामके लिअे, शयनके लिअे, दिनकी परेशानियोंको बिसारनेके लिअे और आँखें मूँदकर बिता देनेके लिअे बनाअी है, अुसे क्यों अुसने दिनसे हजार गुना अधिक आकर्षक, प्रभातसे अधिक ललित और सूर्यास्तसे कहीं बढ़कर लावण्यमय बना रखा है? जिन कोमलताओंके मृदुलनयन सूर्यके तीव्र प्रकाशसे दिनमें चकाचौंधसे मुँद जाते हैं अुन मृदुल अँगड़ाअियोंको अिस प्रकार रात्रिमें प्रतिभासित करनेमें अुसका अुद्देश्य क्या है? अिस बुलबुलहीको देखो, अन्य पक्षियोंकी तरह रैन-बसेरा न लेकर क्यों यह अिस तरह रातमें गा रही है? हृदयमें यह जागृतिकी विशेष धड़कन, आत्मामें भावनाओंकी यह बाढ़ और शरीरमें यह अवसाद क्यों अिस रातमें बढ़ जाया करता है? जो रात मानवताकी सुषुप्तिमें अन-देखेही बीत जाया करती है अुसे परमात्माने अितना अपार वैभव क्यों दे रखा है? और किसके लिअे आकाशसे पृथ्वीपर सुषमाकी अैसी अजस्र कविता-धारा वह बहाया करता है?

किन्तु महन्तको आज अपने अिन प्रश्नोंका कोअी अुत्तर नहीं मिल रहा था।

अुसी समय अचानक अुसे मैदानके छोरपर कुहासेमें ढँके अेक पेड़की झिलमिली छायाकी तरफ साथ-साथ बढ़ती हुअी दो परछाअियाँ दिखाअी पड़ीं। लम्बी परछाअीं पुरुषकी थी जिसकी बाहें प्रेयसीकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गरदनमें पड़ी थीं। रह-रहकर वह अुसके मस्तकका चुम्बन लेता था। अुनके अुस बनावके बीच अुपस्थित होते ही वह सब शृंगार क्षण भरमें सजीव हो अुठा; मानो वह सारा पहिनावा खास अुनके ही लिअे तैयार किया गया हो। वे दोनों केवल अेक ही तन और अेक ही मन जान पड़ते थे।

थोड़ी ही देर बाद वे अुसी ओर आने लगे जिस ओर महन्त बैठा हुआ था। अुनके रूपमें मानों महन्तके सारे सन्देहों और प्रश्नोंका अेक अुत्तर मूर्तिमान होकर पास चला आ रहा हो।

सूथ और बोअजकी बाअिबिलकी अमर दिव्य प्रेम-कहानी महन्तको नअे रूपमें साकार दिखाअी दे रही थी। बाअिबिलके "महासंगीत" की दिव्य ध्वनियोंकी गूँज अुसके कानोंमें अुठ रही थी। अुसने मन-ही-मन कहा, "ये रातें अैसे ही पावन प्रेमके अनुरूप आदर्श आवरण होनेके लिअे ही भगवानने बनाअी हैं!" और वह अुन प्रेमियोंके मार्गसे काफी दूर हटकर छिप गया। थोड़ी ही देरमें वे दोनों गलबाँही डाले अुसके सामनेसे निकले। अपनी भतीजीको पहिचाननेमें महन्तको देर न हुअी। भतीजीकी चेतना होते ही वह शरमा गया। अुसे विश्वास हो गया कि प्रेमियोंके मिलनमें अैसी मनोहर रातोंका विधान करके स्वयं परमात्मा प्रेमका अनुमोदन करता है। मनमें यह भाव जमते ही अुसे जान पड़ा कि अुसने परमात्माकी आज्ञाके विरुद्ध आचरण किया है। फिर तो अेक दम लज्जित और भयभीत वहाँसे वह अैसे भागा जैसे वह अुस मन्दिरमें घुस रहा था जिसमें पैर रखनेका अुसे कोअी अधिकार न था।

२

"यामिनी"

यामिनीके माजरेका भेद कुछ खुल नहीं रहा था। जूरी, जज और सरकारी वकील सभी सर मार रहे थे, परन्तु असलियतका पता लग नहीं रहा था। पैरिसके समीप अेक बड़े कस्बेके प्रसिद्ध जमींदार बरमूद साहेबके परिवारमें यामिनी मजदूरिनका काम करती थी। अुसके पाँव भारी हुअे और मालिकोंको अिस बातका पता न था। अन्तमें दिन पूरा होनेपर अेकरात अुसने घुड़सालकी छतपरके कमरेमें बच्चेको जन्म दिया। अुसके मालिकोंको अिस बातका भी पता न हुआ। फिर यामिनीने बच्चेको खपा डाला और बरमूद साहेबके बागमें ही कहीं गाड़ दिया। पुलीसको अिस घटनाकी खबर मिली। अुसने बच्चेकी लाश बरामद कर ली। भ्रूणहत्याके अपराधमें यामिनी अदालतके सामने पेश की गअी।

अैसे तो नौकरानियोंके हाथों होनेवाली सामान्य भ्रूणहत्या जैसी ही यह घटना भी थी, परन्तु जब यामिनीके कमरेकी तलाशी ली गअी तो वहाँ नवजातके लिअे गदिया, कलोट, झबला, कंटोप आदि सारे सिले कपड़े मिले और पता चला कि पिछले तीन महीनोंसे रात-रातभर जगकर खुद यामिनीने ही वे कपड़े काटे और सिअे थे। अुसने रातमें जलानेके लिअे जिसकी दूकानसे मोमबत्तियाँ खरीदी थीं अुस आदमीका बयान हो जानेपर किसीको यह सन्देह न रहा कि बच्चेके वे कपड़े यामिनीके ही सिअे हुअे थे। अुसके बाद अुस दाअीका बयान भी हुआ जिसको यामिनीने अपने गर्भकी सूचना दी थी। कहीं पीड़ा रातमें आरम्भ हुअी और वह दाअी मददके लिअे अुस समय न पहुँच सकी तो अैसी हालतमें यामिनीको खुद क्या-क्या करना होगा यह सब भी अुस दाअीने यामिनीको समझा रखा था। दाअीने अपने बयानमें ये सारी बातें कहीं। बच्चा पैदा हो जानेपर यामिनीको बरमूद साहेब नौकरीसे अलग कर देंगे। अुस दशामें अुसके लिअे दूसरी नौकरी ढूँढ़ देनेका आश्वासन भी दाअीने अुसे दिया था।

जब दाअीका बयान समाप्त हो रहा था अुसी समय बरमूद साहब भी अपनी पत्नीके साथ अपनी जोड़ीपर सवार कचहरीमें आअे। अपने अूँचे खानदानका गरूर रखनेवाले कसबेके सबसे बड़े जमींदार अपनी नौकरानीकी करतूतसे बेहद खफा थे क्योंकि वे समझते थे कि अुसने अुनके खानदानके नाममें धब्बा लगाया है। वे दोनों अैसे झुँझलाअे हुअे थे कि चाहते थे मामलेकी पूरी सुनवाअी हुअे बिना ही यामिनीको फाँसीकी सजा दे दी जाअे! अदालतके कमरेमें पहुँचते ही अुन दोनोंने यामिनीपर गालियोंकी बौछार शुरू कर दी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और मुजरिम जो लम्बे कदकी अेक काफी सुघर लड़की थी और अच्छे घरकी मजदूरिनोंसे कहीं ज्यादा पढ़ी-लिखी थी, अुनके कोसनके जवाबमें केवल रुदन कर रही थी। किसीके कुछ भी पूछनेपर रोनेके सिवाय वह कोअी और जवाब नहीं देती थी। अन्तमें अदालत अिस नतीजेपर पहुँची कि अभियुक्तने यह भीषण काण्ड बेबसी और अुन्मादकी अवस्थामें किया है। बच्चेको जीवित रखने और अुसको पालने-पोसनेकी अिसकी नीयत साबित होती है। यद्यपि जजने अिस तरहका कोअी फैसला अब-तक नहीं सुनाया था फिर भी जज और जूरी अिस नतीजेपर पहुँच चुके थे और अिस तरहका विचार होते ही जज-साहबके रंग-ढंगमें कठोरताकी मात्रा कुछ घट गअी थी।

अेक अन्तिम बार और जजने यामिनीसे कुछ बोलवानेका प्रयत्न किया। वे चाहते थे कि यामिनी अपना अपराध समझे और अुसे स्वीकार कर ले। अिस बार जज-साहबके शब्दोंके अुच्चारणकी ध्वनिसे यामिनीको अैसा लगा कि वे अुसे फाँसीकी सजा नहीं देना चाहते हैं। मनमें अैसा विचार अुठते ही अुसकी चेष्टामें कुछ परिवर्तन दिखाअी पड़ा और जजने यह भाँप लिया। बोले--"मेरी बच्ची! तुम अितना बता दो कि अिस बच्चेका पिता कौन है?"

पहिले भी यह प्रश्न यामिनीसे कअी बार पूछा जा चुका था किन्तु हर बार मौनके सिवा अुसने कोअी अुत्तर नहीं दिया था। अिस बार यामिनीने गरदन अूपर अुठा-कर अपनी आँखें सीधी मालिक और मालकिनपर गड़ाअीं। अेक क्षण बाद ही बिना अटक वह बोल अुठी--"श्रीमान्! बरमूद साहेबके भतीजे बरहेम साहेब ही अिस अभागेके पिता हैं!"

यामिनीके मुँहसे यह वाक्य पूर्णतया निकल भी न पाया था कि बरमूद और अुनकी पत्नी दोनोंके दोनों अेक साथ ही तमतमा अुठे और बोले,--"झूठ, सरासर झूठ! यह छोकरी डाअिन है, डाअिन!"

जजने तुरन्त डाँटकर अुन दोनोंको चुप कराया और फिर यामिनीसे कहा,--"अब तुम सब कुछ साफ-साफ खोलकर कह डालो। किसीसे डरनेकी कोअी जरूरत नहीं!"

यामिनीकी हिम्मत बढ़ गअी। अबतक जज और जूरीको अुसने अेकदम कठोर और वज्र-हृदय समझ रखा था परन्तु अब अुनकी बातें अुसे मरहमकी तरह लग रही थीं। अुसके घायल हृदयको अुनसे कुछ सान्त्वना मिली। अुसने कहना शुरू किया--

"श्रीमान्! मिस्टर बरहेम ही अिस अभागेके पिता हैं। पिछले साल वसन्तकी छुट्टीमें जब वे यहाँ आअे हुअे थे अुसी समयकी यह बात है।"

"मिस्टर बरहेमका पेशा क्या है?" जजने पूछा।

"वे कहते थे कि शाही तोपखानेमें वे अेक बड़े फौजी अफसर हैं। वे दो महीने यहाँ मिस्टर बरमूदकी कोठीमें टिके थे। यहाँ आनेके दूसरे ही दिनसे अुन्होंने जब मुझे रह-रहकर निहारना शुरू किया तो पहिले तो मैंने कअी दिनतक कुछ भी न समझा। फिर मुझे जरा अकेली पाते ही वे कहते, मैं बड़ी खूबसूरत हूँ और अुन्हें बहुत अच्छी लगती हूँ। दुनियामें मेरा अपना कोअी नहीं है। कोअी जो अपना होता तो अुससे कुछ सलाह कर लेती। मुझे अुनकी बातें अच्छी लगने लगीं। अकेले प्राणीको अैसी बातोंका सुनना बड़ा अच्छा लगता है। सो मैं अुनका विरोध न कर पाती थी; निदान वे मुझसे प्रतिदिन प्रेमका अिजहार करने लगे।

"श्रीमान्! मेरे न पिता हैं न माता। न भाअी है न बहिन। मेरा कोअी अपना नहीं है हुजूर! मिस्टर बरहेमकी प्यारभरी कोमल-कोमल बातें जब मैं सुनती थी तो मुझे अैसा लगता था जैसे किसी बड़े दूर अज्ञात देशमें रहनेवाला मेरा बड़ा भाअी मेरी दीनताका समाचार पाकर मुझे देखने चला आया हो। अेक दिनकी बात है मिस्टर बरहेमने कहा, 'आज शाम नदीकी तरफ चलेंगे जिससे हम लोग बिना किसीको कोअी असुविधा पहुँचाअे अपने मनकी सब बातें कर सकें।" मैंने साथ जाना मंजूर कर लिया। मुझे क्या पता था कि क्या होनहार है? मन करता था कि जोरसे रो पड़ूँ। मैं कुछ भी न कर सकी। बड़ी मन्द-मन्द और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोंधी-सोंधी हवा बह रही थी । रात भीनी-भीनी चाँदनीसे डहडह बिछली हुअी थी । मैं शपथपूर्वक कहती हूँ श्रीमान् ! मैं कुछ न कर सकी और मिस्टर बरहेमने बड़ी मनमानी और बेरहमी की । मैं अुनके साथ दुनियाके आखिरी छोरतक जानेके लिअे तैयार थी पर वे शीघ्र आनेका वादा करके अकेले ही चले गअे । मुझे पता न था कि मेरे पाँव भारी हो गअे हैं । यह तो अुनके चले जानेके अेक महीने बाद मुझे मालूम हुआ ।"

अितनी बात कहते-कहते यामिनी फूट-फूटकर रोने लगी । जज-साहबको मजबूर होकर कुछ देरके लिअे अदालतकी कार्यवाही स्थगित करनी पड़ी । यामिनी जब कुछ स्वस्थ हुअी तो जजने पितापनके भावमें भरकर कहा, "मेरी बच्ची ! फिर क्या हुआ ? अपना बयान पूरा कर डालो !"

"मुझे जब यह मालूम हुआ कि मुझे अवधान है तो मैंने मिडवाअिफ (दाअी) बुददानीसे सब हाल कह सुनाया । अुन्होंने मेरी हर तरहसे मदद करनेका वचन दिया । मैंने अुनसे पूछा कि अगर अधिक रात गअे प्रसव वेदना शुरू हो और दाअी न आ सकें तो मैं क्या करूँगी ? अुन्होंने मुझे सब कुछ समझा दिया और अुनकी बताअी हुअी बातें बादमें मेरे बड़े काम आअीं । मैंने बच्चेके लिअे कपड़े तैयार करने शुरू किअे । अेक-अेक बजे राततक जाग-जागकर मैंने ये सब कपड़े सिअे थे । मैंने अपने लिअे दूसरी नौकरी भी ढूँढनी शुरू कर दी क्यों कि यह मैं जानती थी कि बच्चा होनेकी खबर पाते ही हमारे मालिक-मालकिन मुझे अपने घरमें अेक क्षण भी न रहने देंगे । अिस झमेलेसे छुटकारा पानेके पहिले मैं अिस घरको छोड़ भी नहीं सकती थी क्यों कि मेरे पास अेकदम अलग होकर अपनी अलग गिरस्ती जमा लेनेभरको पैसे नहीं थे । बल्कि अुस समय तो यह फिक्र थी कि अपने अूपर तकलीफ अुठाकर बच्चेके खर्चके लिअे जितना अधिक बचाया जा सके बचाया जाअे ।"

"तब तो तुम अुसे मार डालना नहीं चाहती थीं ?"

"नहीं नहीं, कभी नहीं ।"

"फिर मारा ही क्यों"

"कहाँ मारा मैंने ! वह तो बात ही बिगड़ गअी । जैसा सोचा था वैसा हुआ कहाँ ? वह तो अुसके पहले ही सब हो गया । अुस समय मैं रसोअी-घरमें बरतन मल रही थी । मालिक और मालकिन सोने चले गअे थे । मैं जीना पकड़कर छतपर चढ़ गअी । वहाँ पहुँचते-पहुँचते फर्शपर गिर पड़ी । खाटको मैं गंदी नहीं होने देना चाहती थी अिसलिअे जमीनपर ही पड़ी रही । अेक घंटे तक मैं दर्दमें तड़पती रही । कौन जाने शायद दो या तीन घंटे हो गअे हों । अितनी पीड़ा मुझे हुअी कि क्या कहूँ ? बस तभी रोम-रोमसे पसीना छूटने लगा । व्यथा जाती रही और अपने नन्हे-मुन्नेको मैंने गोदमें अुठा लिया ।

"अुसे देखकर बहुत खुशी हुअी । श्रीमती बुददानीने जैसे-जैसे समझाया था मैंने वैसे-ही-वैसे किया । बच्चेको मैंने बिस्तरेपर लिटा दिया । तुरन्त ही मुझे फिरसे पीड़ा होने लगी । ओह, अिस बारका दर्द तो प्राण ही हर ले रहा था । मैं मुँहके बल गिर पड़ी । फिर पीठके बल फर्शपर लेट गअी । फिर सारे बदनमें पीर फैल गअी और अेक घंटे या शायद दो घंटेतक वैसी ही बिथा होती रही । अन्तमें वैसा ही अेक दूसरा नन्हा-मुन्ना और आया ! ओह, अेक और ? अब अेक नहीं दो-दो थे । अिस दूसरेको भी मैंने पहिलेके ही पास लिटा दिया । मैं भी बिस्तरेपर अुनके पास जा बैठी । अुस समय मैं अेक अथाहमें जा गिरी थी जिसमें-से पार पाना अपने बसके बाहर समझने लगी । मैं बार-बार अपने मनसे सवाल करती, अेक नहीं दो-दो ! क्या यह सच है ? क्या यह संभव ? मैं किस तरह अिन्हें पाल सकूँगी ? मेरी तो महीने भरकी आमदनी कुल तेअीस ही रुपअे हैं । अेकका पालन तो अितनी आमदनीसे किसी तरह मैं कर ले जाती । पर दो को कैसे पालूँगी ?

"मेरी अिस चिन्ताने मेरा माथा घुमा दिया । मैंने सोचा अिन दोनोंमेंसे अेक ही रहना चाहिअे । कौनसा अेक ? यह प्रश्न आ खड़ा हुआ ! मैं कैसे बताती कि कौनसा अेक ? मुझे जान पड़ा कि छत चकरा रही है, मकान काँप रहा है और और मेरा सिर फटकर टुकड़ा-टुकड़ा अुड़ा जा रहा है । मैंने न जाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किस समय अपनी तकियासे अुन लालोंको ढँप दिया था। तकिअेपर अपना सिर पटक-पटककर मैं सारी रात रोती रही। जब सवेरा होनेको आया तो मैं बिस्तरे-परसे नीचे अुतर आअी। तकिया हटाकर अुन्हें देखना चाहा तो देखा कि वे दोनों मर चके थे। मैंने अुन्हें अेकसाथ ही गोदमें भर लिया। सीढ़ीसे अुतरकर बगीचेमें आअी। मालीका फावड़ा अुठाकर जितना गहरा खोद सकती थी, दो गढ़े अेक दूसरेसे काफी दूर खोदकर अुन्हें जमीनदोश किया। मैंने सुन रखा था कि मरे हुअे बच्चे पास-पास रहनेसे आपसमें बातें करते हैं। अिसी-लिअे कुन्हें दूर-दूर गाड़ा ताकि वे अपने माता-पिताके बारेमें आपसमें कुछ बातें न कर सकें!

"अिसके बाद मैं अपनी कोठरीमें आअी। मैं अितना टूट चुकी थी कि अेक बार जो बिस्तरेपर पड़ी तो फिर अुठ न सकी। कामपर न जा सकी तो मालिकोंने डाक्टरको देखनेके लिअे भेजा। मेरी अिच्छाके विरुद्ध डाक्टरोंने मेरी जाँच की। फिर डाक्टरने पुलिसको खबर दी। जो-जो मैंने किया था अुनसे भी सच-सच कह दिया। और जो-जो छिपा रखा था अुसे भी साराका सारा सच-सच आपके सामने बयान कर दिया। अब आपको जो भी आवे मेरे साथ कीजिअे। मेरे अूपर जो भी बीते सब सहनेको तैयार हूँ!"

यामिनीका बयान समाप्त होते-होते जूरी-जनोंमेंसे कअी रूमालसे अपनी आँखें पोछ रहे थे और अदालतके कमरेमें जो औरतें जमा थीं अुनमेंसे कितनी ही हिचकियाँ ले रही थीं।

जजने प्रश्न किया:

"बागमें किस तरफ दूसरा बच्चा गाड़ा तुमने?"

"आपको कौनसा मिला है?"

"वह जिसकी छाती भीतर धँस गअी थी।"

"हाय! तो दूसरा कुअेंके सामनेवाले कचनारके पेड़के नीचे है!"

अितना कहते-कहते वह अनाथ लड़की वेदनासे अैसा करुण विलाप करने लगी जिससे सुननेवालोंका कलेजा फटने लगा!

न्यायाधीशने अुठते-अुठते कहा:

"तुम बेगुनाह हो! हम तुम्हें छोड़ते हैं। तुम जहाँ जाना चाहो, जा सकती हो!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लहर और किनारा

—श्री नन्दकुमार पाठक

अिस बार जो 'माता' आअीं तो बड़े समारोहके साथ आअीं। चुन-चुनकर बच्चोंको साथ लेती, अपने आँचलमें लपेटती चली गअीं। और चलते-चलाते जो छूट गअे अुनपर अपने आगमनके समारोहके चिह्न छोड़ती गअीं। अनगिनत बच्चोंकी ज्योति झपट ली। अनगिनतको विकलांग बना दिया। अनगिनतके शरीरकी त्वचापर अपनी अपराजेय महिमाके अंकगणितके प्रश्न लिख दिअे; तब गअीं। अिस समारोहमें जिन्दगीकी धड़कनें कहींपर तेज हो गअीं थीं, और कहींपर अेकदम स्थिर; स्थगित!

'अेक नम्बर'की खोलियोंके कबूतरखानोंके बच्चोंकी किलकारियोंको खामोश करती हुअी 'माता' मैदान पारकर 'नअी खोली' के 'क्वार्टरों' की भूलभुलैयामें जा बिराजीं, और सुबह,—दुपहरिया,—शाम,—अधरतिया, अपने आँचल भरने लगीं। लगता था, दो-चार दिनके अन्दर ही अिन गलियोंमें किलकारियाँ और लोरियाँ सुननेको न मिलेंगी। क्वार्टरोंकी कतारोंमें सन्नाटेकी अेक गहरी-भारी गूँज काँपने लगी थी।

सातवीं खोलीमें रहनेवाला लोहारखानेमें काम करता था। अुसने आँखें फाड़कर कहा—"जानते हो क्या आर्डर निकला है? जिसके घरमें 'माता' निकली हैं, वह अगर अस्पतालको खबर नहीं करेगा तो अुसका 'नम्बर' बन्द हो जायगा। बोलो, अब क्या करोगे?" और अुसने अपने ओठोंको बड़ी सख्तीसे बन्द कर लिया, मानो वह अपने भीतरसे किसी तरह निकल आते हुअे प्राणोंको रोक लेना चाहता हो। अुसके चेहरेपर मेह बरसने लगा। आँधी अबतक नहीं आअी थी। अपनी जिन्दगीसे कुछ माँगकर सँजो लेनेकी व्याकुलता अुसके चेहरेपर घनीभूत हो गअी थी।

दसवें नम्बरकी खोलीमें रहनेवाला जो ढलाअीखानेमें काम करता था, बोला—"नहीं, यह तो नहीं होगा। बच्चे जब मरेंगे ही तो अपनी नजरके सामने मरें। हम सेवा तो कर सकेंगे। डाक्टरको खबर करेंगे तो जालिम अिन्हें 'सेग्रिगेसन कैम्प' में ले जाकर पटक देंगे। वहाँ हमारे बच्चे बिलबिलाकर मर जाअेंगे।"

"सोलह नम्बरका लड़का वहीं जाकर मरा। यहाँ कुछ अच्छा था, वहाँ पहुँचा कि मरा।"

"और बाअीसवेंकी भी तो वही हालत हुअी।"

"पैंतीस नम्बरवालेके तो दोनों ही लड़के चले गअे, भाअी। हाय! हाय! कौन है पैंतीसमें?"

"अरे, वही बिजली-शापका छबीलदास।"

नालीको खुरेचना छोड़कर मेहतरने कहा—"मातादीनका क्या हाल हुआ जानते हो?"

"क्या?"

"अपने मरे बच्चेको लिअे मिट्टी देने जा रहा था, डाक्टरने देख लिया; रिपोर्ट कर दिया। अुसका 'नम्बर' बन्द हो गया। अुसने डाक्टरको बताया नहीं था कि अुसके घरमें माता निकली है।"

* * *

खोलियोंमें सन्नाटा छाया हुआ था। आज लोगोंको मालूम हुआ, डाक्टर नर्सोंके साथ खोलियोंमें घूम रहे हैं; जिस-जिस घरमें 'केस' होता है, अुसके अूपर रिपोर्ट हो रहा है। 'नम्बर' बन्द हो रहा है, और 'केस' को 'सेग्रिगेसन कैम्प' में लादकर भेजा जा रहा है।"

'बैलट शाप' के मिस्त्रीने कहा—"यह कैसी बात है? डाक्टरको क्या हक है घर-घरमें घुस-घुसकर देखनेका?"

'पेंट शाप' के 'चार्जमैन' मनसुखने कहा—"भाअी, सरकार भी क्या करे? चुप कैसे बैठे? जानते हो? अेक बार मसानघाटकी तरफ जाकर देखो, क्या हाल है?"

"क्या हाल है?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"डरके मारे औरतें जाती हैं बच्चोंकी लाश लेकर। मिट्टी ठीकसे दे सकती नहीं। और रातको सियार आदि जंगली जानवर आकर 'मिट्टी'को निकाल लेते हैं। वहाँ दिनमें भी सियार और कुत्तोंमें लड़ाअी होती रहती है। गीध और कौवे मँडराते रहते हैं।"

"अुफ्!"

"तो, बताओ क्या हो?"

बेंकट नरसैयाके तीन लड़के थे। आठ, पाँच और तीनके। बुढ़ापेकी तीन लाठियाँ—गोली, अधकचरी—जिनके सहारे बुढ़ापेको ढोनेकी योजना थी। अुसके घरमें 'माता' ने जब पदार्पण किया तो लोगोंने लम्बी-सी साँस खींचकर कहा—"जब सूखी लकड़ीमें कोपलें अुगीं और तूफानका अिसी समय आना हुआ। हाय! अिसके घरमें न मालूम क्या होता है?"

नाली साफ करनेवाले बाँसको कन्धेसे अड़ाकर मेहतर बोला—"बाबू, तुम्हारे घरके सामने नीमकी पत्तियाँ गिरी हैं। तुम्हारे घरमें 'माता' है। मैं डाक्टरको रिपोर्ट करूँगा।"

बेंकट गिड़गिड़ाया,—"भाअी आफतका मारा हूँ। अैसा न करो। तुम्हारे घरमें भी बच्चे हैं।"

"हाँ, हैं तो, लेकिन हमारे दुख-दर्दमें कोअी नहीं दौड़ता बाबू, तुम्हारे दुखमें सभी दौड़ पड़ेंगे क्योंकि तुम लोगोंके पास पैसे हैं। कुछ दो भी।"—बेंकटने चुपचाप अेक रुपया जेबसे निकाल कर दे दिया और अुसकी पत्नी निकली तो कुछ चावल भी डाल दिअे।

दोपहरी ढलते-ढलते लड़का समाप्त हो गया, तो बेंकटने अपनी पत्नीसे कहा—"चुप-चुप, चीखो मत, धीरेसे रोओ। आवाज सुनकर लोग रिपोर्ट कर देंगे। अभी दूसरे लड़केकी हालत देखो। अुसको अुठाकर डाक्टर 'सेग्रिगेशन' में डाल देंगे।"—माँ चीखको पी गअी। सिसकियाँ बेसम्हाल हो गअीं।

सन्ध्याका झुटपुटा होते ही पड़ोसवालोंने सलाह दी—"संभलके काम करना, भैया, नहीं तो हम सब भी जाअेंगे। हमारे घरोंका भी वही हाल है। कोअी देख लेगा तो कह देगा। डाक्टर आअेगा और सभी घरोंका हाल जान लेगा। मर्द कोअी मत जाओ, सिर्फ औरतें ले जाअें। वहाँपर और लोग रहते हैं। कुछ दे देनेसे 'मिट्टी' दे देंगे।"

करुणा, दर्द, चीख, आह, और अिन सबोंसे बड़ा जीवनका मोह और अुससे भी बड़ा भविष्यका विश्वास। करुणा, मोह, विश्वास! कौन सबल? कितना सबल? किससे सबल?

अुधरसे अेक चीख आअी। यह बेंकट नरसैयाका दूसरा लड़का बुझ गया! अरे, रे,.....मना करो अुसे, अितना जोरसे रोती है! अिधर कहीं कोअी डाक्टर आ रहा हो तो क्या होगा? अभी अेक और लड़का है। अुसका मुँह देखेगी कि नहीं? हमारे भी बाल-बच्चे हैं। वह तो हम सबोंको ले डूबेगी।

"भाअी, रोने भी तो दो अुसे। अुसका लड़का मर गया है, वह रोअे भी नहीं!"

"कैसी बात करते हो यार? और किसीके बच्चे मरे हैं कि नहीं? सभी घर तो वीरान हो गअे हैं। जाकर मसान-घाटमें देख आओ। लेकिन कहीं किसीके घरसे रोनेकी आवाज सुनते हो? यह दूसरी मौतकी बला कौन बुलाअे?"

मरे हुअे बच्चेकी माँको चुप करा दिया गया। चीखका तूफान थम गया। थाम लिया गया, क्योंकि अभी अेक लड़का और था। वह भी चारपाअीपर पड़ा था। हाय री दुख-सुखसे परेकी स्थितिमें जीवित रहनेकी परवश वास्तविकता! करुणाके सामने मोहकी यह परवशता! मोहके सीनेपर भी तो विश्वास खड़ा रहता है!

हाँफते हुअे स्वरमें अेक व्यक्ति बोला—"अुधर चौदहवीं लाअिनमें डाक्टर पहुँच गअे। साथमें नर्स हैं। हर खोलीकी तलाशी ले रहे हैं।"

बेंकट नरसैयाने अपनी पत्नीसे कहा—"अिसको कपड़ेमें लपेटो।"

पत्नीने कहा—"क्यों?"

"जल्दी करो, डाक्टर आ रहा है। लपेटो और मैं अूपर चढ़ता हूँ। मुझे दो, मैं अभी अिसको अूपर छतपर रख देता हूँ। शामको देखा जाअेगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"और अूपर गीध आ जाअे तो ?"

"तो क्या ? वह मुर्देको खाअेगा। लेकिन डाक्टर तो जिन्दाको खा जाअेगा। जल्दी करो।" माताने अपने मृत लड़केकी मिट्टीको लपेटा और सीनेमें सटाकर हिचकी। आँखें सूखी ही थीं। जीवनके मानचित्रपरकी यह मिटी हुअी रेखा है। दूसरी रेखाको सँभालो, तीसरीको सँभालो। जिन्दगीका मानचित्र मिटने मत दो। मृत्युका जीवनमें सामंजस्य! जीवनका मृत्युमें सामंजस्य! और जिन्दगीका मानचित्र--रेखा, रेखाअें...। लेकिन यह तीसरा बच्चा ? अिसका क्या होगा ?

बेंकट नरसैयाकी पत्नीने कहा--"पीछेकी लाअिनकी सोलहवीं खोलीवालेको जानते हो ?"

"क्यों ? जानता हूँ। रामाधीन होगा। वही न ?"

"अुसने घरके सामनेके दरवाजेमें ताला डाल दिया है। पीछेसे आता-जाता है। अुसके घरमें भी 'माता' निकली है। घरकी नालीको भी वह सूखा रखता है। बालटीमें पानी जमा कर चोरीसे बाहर आकर फेंका करता है जिसमें कोअी जान न ले। डाक्टर समझेगा, अिसमें कोअी रहता ही नहीं है। अिसलिअे मैं तो कहती हूँ, जल्दीसे अिस बच्चेको अुसके घरमें रख आओ।"

"ठीक कहती हो। अच्छा, तो, तुम जाकर कह आओ। मैं अभी अिसे लेकर आती हूँ।" बेंकट नरसैया अिस बच्चेको भी लेकर चला। हारी-थकी, घावोंसे भरी जिन्दगी अेक पलके लिअे भी ठहर नहीं सकी। वह ठहर नहीं सकती। दर्दकी चीखें अुस तनावपर पहुँच गअी थीं जहाँ अुसका स्वर नहीं होता। वह प्राणोंकी अन्तर्धारामें बहने लगती है।

डाक्टर नर्सोंके साथ आ पहुँचा। 'खट! खट! खट!'--दरवाजा खोलो।' अिस आवाजके साथ ही बेंकट और अुसकी पत्नीकी जिन्दगी जोर-जोरसे चलने लगी। लाशोंपर पाँव रखती हुअी, अपने कलेजेके टुकड़ोंपर पाँव रखती हुअी, क्योंकि अुसे आगे जाना है। कैसे रुके ? किसके लिअे रुके ? मोहने दर्दको पकड़कर निचोड़ दिया। विश्वास पहरा दे रहा था।

दरवाजा खुला। डाक्टर भीतर पहुँच गया।

"तुम्हारे घरमें कोअी 'केस' है ?"

"नहीं, डाक्टर साहब।"--आवाज जरा भी नहीं डगमगाअी।--"देखिअे, देख लीजिअे। अभीतक तो 'माता' की कृपा है हमपर।"

"सिस्टर, अिन्हें 'टीका' दे दो।"--और सभी चले गअे।

... ...

शाम होते ही भयभीत सन्नाटा हल्की-सी काली चादर तान खोलियोंको सिरहाने रख सो गया। मैदानके अुस पारतक पाँव फैला दिअे, जहाँ बच्चोंकी 'मिट्टियाँ' पहुँचाअी जाती थीं और दो-चार फावड़े भरकी मिट्टीके नीचे अुन्हें सुला दिया जाता था। बेंकट नरसैया और अुसकी पत्नी अपने मृत लड़केकी मिट्टी लेकर चल पड़े। जिन्दगीको मौत लेकर चली। मोहकी बाढ़में जिन्दगीके भारी पाँव दुखोंके दलदलमें भी नहीं अटकते। घाव देखनेका समय भी नहीं। चीखने-चिल्लानेका अवसर नहीं। स्थिरको गति समेट लेती है। अभी भी तो अुसका अेक बच्चा है जिसे मौतकी पहचान नहीं हुअी।

मैदान पार करते ही बेंकटने कहा--"मैं तो कहता हूँ, यहीं रख दो। कोअी दयावान होगा तो मिट्टी दे देगा। नहीं तो कोअी देख लेगा तब ?"

माँने बच्चेके अकड़े हुअे शवको सीनेसे सटाकर रख दिया। अँधेरेमें मुँह नहीं देख सकी। रो नहीं सकी--चीख भी नहीं सकी। कोअी सुन ले सकता था। आकर पकड़ लेता--कौन हो तुम ? क्यों यहाँ मुर्देको रख रही हो ? दुखमें जरा सुख मिलनेको हो तो वह भी नहीं मिलता !

तीसरा लड़का मौतसे लड़कर बच रहा है। अिसके शरीरपर मौतके चंगुलोंके निशान अभीतक मौजूद हैं।

यह जब खेलते-खेलते मिट्टी खाने लगता है तो माँ अिसके मुँहसे मिट्टी निकालती हुअी चीख पड़ती है। आह! वह अपने बच्चोंकी 'मिट्टियों' को अेक चुटकी मिट्टी भी नहीं दे सकी।

मिट्टी मिले या न मिले, जिन्दगीको तो जिन्दगी मिट्टीपर चलना ही है। मौतपर मिट्टी और मिट्टीपर जिन्दगी। वह मौतके आगे बढ़कर चलेगी। मृत्युकी लहरोंके बाद जीवनका किनारा !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"ह्रिस्टो बोटेव", जिसका कि नाम अमर हो गया है --श्री अेन. टोडोरोव

बलगेरियाके प्रमुख अुन लोगोंमेंसे जिन्होंने अपना तन, मन और सारा जीवन देशकी सेवामें लगा दिया अेक ह्रिस्टो बोटेव थे। ये बहुत विचारशील थे। अपने राष्ट्रीय गीतों द्वारा अिन्होंने ५०० सालसे तुर्क साम्राज्यमें जकड़े हुअे बलगेरियनोंको स्वाधीनताकी लड़ाअीके लिअे अुकसाया था। बलगेरिया जैसे छोटे-से राज्यमें बहुतसे प्रतिभाशाली लोग हुअे किन्तु अुनमेंसे कुछ ही कवि अैसे हुअे हैं जिन्होंने अिसके सौन्दर्य और लोगोंके दुख-दर्दका वर्णन किया है। मगर कोअी भी साधारण व्यक्ति और पत्रकार, कवि और क्रान्तिकारी बोटेवकी तरह न हो सका। विचार और क्रिया, कलम और तलवारके साथ बिना किसी प्रकारकी झिझक और स्वार्थके वे पूरी तरहसे लोगोंकी सेवामें लगे हुअे थे।

बोटेवके कामोंको भली प्रकार समझनेके लिअे बलगेरियाका वही नक्शा सामने रखना चाहिअे जिसमें बलगेरियन जनता अपने राजनैतिक, आध्यात्मिक और सामाजिक सभी अधिकारोंसे वंचित ग्रीक और तुर्क पादरियोंकी दास थी। बलगेरियन चारवादी अेक तरहके जमींदारों और बनियोंको समाप्तकर देना ही तुर्क साम्राज्यका ध्येय था। वह बलगेरियन साम्राज्यका अंधयुग था। अुन्हीं दिनों बालकनकी पहाड़ियोंके पास कैलोफर गाँवमें अेक स्कूल मास्टर बोटोजके यहाँ ह्रिस्टो बोटेवका जन्म हुआ था। अिनका लड़कपन तुर्की सत्ताके नीचे बहुत दुखमें बीता। दिनोंदिन बढ़ते तुर्की अत्याचारोंसे त्रस्त बलगेरियन जनताके दुख-दर्द देखकर अिनमें राष्ट्रीयताकी भावना जागृत हुअी। फिर तो बोटेव भूख और ठंडकी परवाह न करके अपने भाअियोंको जगानेमें रत हो गअे। तुर्कोंसे यह न देखा गया। अुन्होंने बोटेवको निर्दयतासे कष्ट देकर देशसे खदेड़ दिया। कअी सालों तक ये गरीबीके कारण बुखारेस्ट और ब्राअिलाकी अतिथिशालोंओंमें चक्कर काटते रहे। धीरे-धीरे अिन्होंने लोगोंको तुर्कोंके विरुद्ध भड़काकर अेक गुरिल्ला दलका संगठन किया। अुसी समय कअी समाचारपत्र निकाले और बहुत-सी राष्ट्रीय रचनाअें प्रकाशित कीं। स्वाधीनतामें साँस लेनेकी प्रबल अिच्छाने अिन्हें तुर्की सत्तासे लोहा लेनेपर मजबूर कर दिया।

बोटेव अपने साथियोंसे कहीं अधिक दूरदर्शी थे। अिन्होंने अनुभवसे जाना कि बलगेरियाके भीतर आपसी भ्रातृभावसे ही सब दुख-दर्द दूर किअे जा सकते हैं। अिन्होंने अैसे लोगोंका संगठन किया जो मानवजातिकी भलाअीमें लगकर समानता और भ्रातृभाव फैलाअें। बलगेरियाकी समृद्धिके लिअे अिन्होंने क्रान्तिका पहला कदम रखना ही अुचित समझा। अिससे न केवल तुर्कोंका विनाश हुआ वरन् बलगेरियाकी स्वाधीनतामें जरासी भी बाधा पहुँचानेवाले सभी दुश्मनोंका सफाया हो गया।

आजका बलगेरिया वही बलगेरिया है जिसके लिअे कवि बोटेवने सुन्दर-सुन्दर रचनाअें की थीं। अिन्होंने यह दिखा दिया कि सीधे-सादे और पूर्ण रूपसे लोकगीतोंमें लिखी गअी रचनाअें भी कितनी हृदयस्पर्शी हो सकती हैं। अिनकी रचनाओंसे पता लगता है कि सच्ची कविता भी गँवारू चरागाहों और किसानोंकी भाषामें साधारण संगीत, अुच्च कल्पना, वीर रसके साथ लिखी जा सकती है, अिनकी रचनाअें बलगेरियाकी स्थाअी सम्पत्ति हैं। ये तब तक जीवित रहेंगी, जब तक बलगेरियन भाषा जीवित रहेगी।

अपनी कुशल-दक्षतासे कवि बोटेवने क्रान्तिपर और क्रान्तिकारियोंके भविष्यपर बहुत-सी रचनाअें की हैं। अिन्होंने सदैव निस्वार्थ भावसे देशकी सेवा की है। अपने लिअे तो अिनका सबसे बड़ा अिनाम था कि अिनके देशवासी अपने शहीदको पहचानें और याद रखें। अपने प्रति सच्चे होनेके नाते अपने लिअे तो अिन्होंने अैसा रास्ता चुना जो ख्यातिपूर्ण होनेके साथ ही साथ बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खतरनाक था। अपने कुछ चुने हुअे साथियोंके साथ वे बालकनकी पहाड़ियोंपर आजादी और मौतका फैसला करनेके लिअे निकल गअे थे। वहींपर २ जून, १८७६ ओ. में जब कि वे मुश्किलसे २८ सालके थे, तुर्की गोलीसे घायल होकर वहीं धराशायी हो गअे। अेक शहीदकी मृत्यु नामक अपनी अेक रचनामें अिन्होंने अुसकी मृत्युका अैसा ही वर्णन किया है और अुसे अपने अुदाहरणसे दिखा भी दिया। अिनके विचारोंमें कोअी भी शक्ति सिरके सिवाय नहीं है जो कि स्वाधीनता और मानवजातिकी भलाअीके लिअे निछावर की जा सके।

—अनुवादिका-श्रीमती कमल आर्य

"बिछुड़ते समय" (कविता)

(कवि ह्रिस्टो बोटेव)

नोट—मूल कविता बलगेरिया भाषामें छन्द बद्ध है। यहाँपर मैं अुसके अँग्रेजी अनुवादसे हिन्दीमें अनूदित कर रही हूँ। —अनु०।

मेरी माँ रो मत, दुखी न हो क्योंकि मैं अेक हैडुक हो गया हूँ,
हाँ हैडुक माँ। अेक लड़का. . . और तुझे छोड़कर मैं जा रहा हूँ।
पर माँ दुखी न हो। अपने शापोंसे तू अिस काले तुर्की दमनको विध्वंस कर
जिसके कारण हम जवान लोग जिलावतनी पाते हैं, और दूर देशोंमें जाकर
बिना प्यारके, बिना सुखके, बिना मनुहारके, रहते हैं।
मैं जानती हूँ माँ कि तुम मुझे प्यार करती हो,
और हो सकता है कि भरी जवानीमें मैं कल डैन्यूब नदीका पुल पार करते हुअे,
मार डाला जाअूँ और शान्त चमकती हुअी डैन्यूबका आनन्द भी न ले सकूँ।
पर तुम मुझसे क्या करवाना चाहती हो?
यह मैं अिसलिअे पूछता हूँ माँ क्योंकि तुमने मुझे पैदा किया और
सदा सिखाया है कि मैं अेक वीर सेनानी बनूँ।
मैंने तुमसे लोहेका दिल पाया है और बताओ कि वह अब मोमका बन जावे क्या?
मैं देखता हूँ कि मेरे पुरखाओंकी सर जमीनपर तुर्की लोग पागल कुत्तोंकी तरह टूटे हैं
अुस सर जमीनपर जिसमें मैं पैदा हुआ, बड़ा, जवान हुआ,
जिसमें मैंने पहली दफे दूधका स्वाद चखा,
जिसमें मेरी प्रियतमाने अपनी काली-काली आँखें अुठाके मुझे देखा,
और मुस्कानमें कितनी मोहकता थी,
जिससे मेरी हृत्तन्त्रीके तार झनझना अुठे।
मेरी बहादुर माँ मुझे माफ करो।
मुझे अिन सबका मोह भी रोक नहीं पा रहा है।
मैंने अपनी राअिफल कन्धेपर रख ली है।
और दुश्मनके साथ मुकाबिलेको तैयार हूँ मैं,
अुन सबके नामपर जिनको मैं प्यार करता हूँ।
तुमको, पिताजीको, भाअियोंको, अपनी प्रियतमाको,
अिन सबके लिअे मैं युद्धमें जा रहा हूँ।
अुस दुश्मनके साथ मुझे लड़ना ही चाहिअे माँ,
और तब तलवार निर्णय करेगी...वह तलवार और बहादुरोंका सन्मान।
पर मेरी प्यारी माँ अगर तुम सुनो कि गाँवमें गोलियाँ गूँज रही हैं
और मेरे साथी दौड़कर जा रहे हैं तो अुनके पास जाना और पूछ लेना
कि तुम्हारे बेटेको अुन्होंने आखिरमें कहाँ देखा था...
और अगर वे कहें कि अेक तुर्की गोलीने मुझे खत्म कर दिया है
तो रोना नहीं मेरी प्यारी माँ?
लोगोंकी बातें नहीं सुनना, वे कहेंगे "अुसकी जिन्दगी यों ही खत्म हुअी।"
अुसको नजर अन्दाज कर देना। और घर जाकर मेरे छोटे भाअियोंके अपने सच्चे दिलसे कह देना
कि असलमें क्या हुआ है, ताकि जानें और याद रखें कि अुनका भी अेक अैसा भाअी था
कि जो मर गया, पिस गया, खत्म हो गया पर जो तुर्की दमनके आगे चुप न रह सका,
खामोशीसे जनताका मर्दन न देख सका, जिसके दिलमें आजादीकी लौ लगी थी।
और अुनसे कहना कि वे तबतक दम न लें जबतक मुझे खोज न लें,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहे मेरी लाश चट्टानोंपर सफेद क्यों न हो गअी हो,
चाहे अुसे गिद्ध खा क्यों न गअे हों, चाहे अुसके खूनसे धरती काली क्यों न हो गअी हो।
अुनसे कहना कि मेरी राअिफल और तलवार खोजकर रखें और जब दुश्मन फिरसे हमला करे
तब अुससे काम लें।
पर अगर अितना सब तुमसे न हो सके माँ, क्योंकि तुम भोले और कच्चे दिलकी हो तो
लड़कियोंको अिकट्ठा करके नाचनेके लिअे कहना।
और जब मेरे साथी और मेरी प्रियतमा अिकट्ठे हो जावें और गाने लगें
तब घरसे बाहर आकर सुनना, और मेरे छोटे भाअियोंको भी सुनवाना, वह गीत जो वे मेरे
बारेमें गाते हों।
वे बतलावेंगे कि मैं क्यों और कैसे काम आया, मेरे आखिरी शब्द क्या थे, मैंने मरनेसे पहले
अपने भाअियों और साथियोंके लिअे क्या सन्देश छोड़े।
अुस खुश-नसीब और खुशीकी नाच-कूदमें, जब तुम और मेरी प्रियतमा देखोगी,
तो माँ तुम दोनोंके गालोंपर दो-दो आसूँ गिर जावेंगे और तुम आहें भरोगी,
मेरे भाअी यह सब देखेंगे और जब वे बड़े होंगे तो वे अपने भाअीकी तरह ही निकलेंगे।
अुनके दिलमें मजबूत प्यार होगा, अपनी माँका, अपनी प्रियतमाका,
अुनके दिलमें मजबूत घृणा होगी, तुर्कोंके खिलाफ, अुनके जुरमोंके खिलाफ।
और अगर मैं सही-सलामत वापस आया, तो प्यारी माँ,
मेरे हाथमें आजादीका झण्डा होगा अुसके नीचे सब वीर अपने कन्धेपर अपनी बन्दूकें रखे खड़े होंगे,
और क्रुद्ध साँपोंकी तरह अुनकी तलवारें अुनकी कमरोंसे लगी होंगी।
और तब मेरी प्यारी माँ . . और तब मेरी प्यारी रानी।
तुम चीजें लेकर हमारे माथे और हमारी राअिफलें सजाने आओगी।
और तुम्हारे हाथमें अेक माला होगी जिसपर लिखा होगा
"आजादी या वीरकी मृत्यु"
अिन दो सुन्दर शब्दोंको ओंठोंपर सँवारे, मैं अपनी प्रियतमाका आलिंगन करूँगा,
और अपना खूनसे लथपथ हाथ अुसकी पीठपर रख दूँगा,
अपने चुम्बनोंसे अुसके आँसू पोछूँगा, और अपने होंठोंसे अुन्हें पी लूँगा।
और फिर माँ मैं कहूँगा अलविदा माँ। अलविदा प्रियतमे।
हमें भुलाना नहीं मेरी जान।
मेरे फौजी साथी चल पड़ेंगे, हमारी राह मुश्किलपर गौरवमय होगी,
फिर शायद म अपनी जवानीमें ही मर जाअूँ,
पर मेरे लिअे अितना ही बहुत है कि लोग कहेंगे,
"वह बेचारा न्यायके लिअे मर गया और मर गया देशकी आजादीके लिअे"
मेरे लिअे अितना ही बहुत होगा।

(अनुवादिकाः—श्रीमती कमल आर्य)

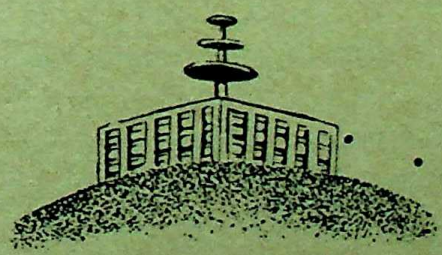

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंगला कथाकार स्व. शरदचन्द्र चटर्जीकी अेक मजलिसी कहानी

प्रेमकी गम्भीरता

अनु०—श्री शिवनारायण शर्मा

बालीगंजमें कवि-दम्पति नरेन्द्रदेव और राधारानी देवीके मकानमें शरतचन्द्र अक्सर आया-जाया करते थे।

अेक दिन अेक स्त्री-भक्त सज्जनके गम्भीर प्रेमकी बात चलनेपर शरतचन्द्रने कहा—अरे, रहने दो, रहने दोजी अपनी गम्भीर प्रेमकी बातें। यह सब कहनेकी जरूरत नहीं है। बहुतोंको देखा है। अुस जलकी गहराअीका मुझे पता है। सुनो, सुनाता हूँ अेक लुगमेहरेकी बात।

रंगूनमें मेरा अेक खास मित्र मेरे मकानके पास ही रहता था। मित्र विवाहित था और अुसकी पत्नी बहुत ही सुन्दर थी। अुसके सिवा दोनोंकी अुम्र भी कम ही थी। अतअेव यौवनका अभाव नहीं था। बड़े सुखसे अुनके दिन गुजर रहे थे। कोअी किसीसे देर तक अलग नहीं रह सकता था। वे बड़े अभिन्न हृदय थे।

अिस तरह अुनके कुछ दिन बड़े मजेके बीते। अुसके बाद अेक दिन अचानक अुस मित्रकी पत्नी बीमार पड़ी। भयंकर बीमारी थी। पत्नीकी सेवाशुश्रूषाके लिअे अुस मित्रको ऑफिसकी छुट्टी लेनी पड़ी। पास-पडौसमें किसी आत्मीय स्वजनके न रहनेके कारण सेवाका भार मुझपर भी आ पड़ा। कअी रातें मुझे अुन्हींके घर बितानी पड़ीं।

बड़े डाक्टरको बुलाया गया। बड़े वैद्य भी आअे लेकिन बीमारी न गअी। मर्ज धीरे-धीरे बढ़ता ही गया ज्यों-ज्यों दवा की।

मेरा मित्र अिसके लिअे मेरे सामने रोज रोता-कलपता। मेरे दोनों हाथ पकड़कर कहता, भअी, अुसे तुम जैसे भी हो बचाओ। अुसके विना मैं अेक पल भी जीवित नहीं रह सकूँगा। अुसकी आँखें मुँद जानेसे मेरा सब कुछ अन्धकारमय हो जायगा। वह अगर गअी तो मुझे भी जाना पड़ेगा, यह समझ लो।

अिस तरह खेदपूर्ण बातें मुझे रोज ही सुननेको मिलती थीं। मैं भी यथासाध्य समझानेकी कोशिश करता था लेकिन कुछ भी नहीं हुआ। अेक दिन रातके ग्यारह बजे मित्रकी पत्नी प्राणनाथको छोड़कर परलोककी यात्रा कर गअी।

मुझपर भी मुसीबतोंका पहाड़ टूटा। मित्रको सम्हालना मुश्किल हो गया। मृता पत्नीसे चिपटकर बड़ा रोया, बिलखा, शोकसे पागल-सा होने लगा।

यह देखकर मैंने सोचा, कितनी अँधेरी रात क्यों न हो आज ही शव यहाँसे ले जाना पड़ेगा। अैसा न करनेपर अिसे अुससे अलग करना मुश्किल है और रोना भी बन्द नहीं किया जा सकता है।

मित्रको बुलाकर मैंने कहा, देखो मैं जरा घूमकर आ रहा हूँ। कअी आदमियोंकी जरूरत होगी; जानते तो हो ही, लिहाजा अुनको बुला लाअूँ।

यह सुनकर मित्र मौन हो गया। अुसका चेहरा अजीब-सा होने लगा। जिस चेहरेपर कुछ पहले सिवा शोकके कुछ भी नहीं था वह अब भयसे विवर्ण होने लगा।

आगे बढ़कर अुसने मेरे दोनों हाथ पकड़कर कहा—भाअी दुहाअी है तुम्हारी। अिस अन्धेरी रातमें मुर्देके पास मुझे अकेले छोड़कर न जाओ। वर्ना मैं हार्टफेलसे निश्चय ही मर जाअूँगा।

मेरे लिअे बेचैनीको दवाना संभव नहीं रहा। मैंने कहा—कुछ पहले तो तुम अुसे बिलकुल नहीं छोड़ना चाह रहे थे। कहते थे कि अुसके बिना मैं अेक पल भी नहीं बचूँगा। अुसे तुम बहुत ही प्यार करते हो न? अिसी बीच सब कुछ गायब? मेरे न रहनेपर थोड़ी देरके लिअे भी अुसके पास बैठनेसे तुमको अितना भय!

कौन किसकी बात सुनता है! मित्र केवल व्याकुलतासे कहता रहा—यह नहीं होगा भाअी तुम किसी तरह भी मुझे अकेले छोड़कर नहीं जा पाओगे। जाओ तो लौटकर देखोगे कि तुम्हारा मित्र जीवित नहीं है मैं बेहोश पड़ा मिलूँगा आदि आदि।

तनिक ठहर शरतचन्द्रने कहा, यहीं अिस कहानीका अन्त नहीं है। मुझे याद है दो महीने बाद ही अेक रंगीन पत्र मिला था—अुस मित्रके ब्याहका निमंत्रण-पत्र।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'कहिअे, आपकी तबीयत अब कैसी है ?'

—श्री 'कुमार'

यों तो बीमार पड़ना भी अेक मुसीबत है और क्या कहा जाय, अच्छी खासी मुसीबत है। बस जानके लिअे अेक आफत ही समझिअे। परन्तु किया भी क्या जा सकता है। बीमार पड़ना भी मानों आधुनिक जीवनका अेक आवश्यक अंग हो गया है। बड़े आदमी, बड़े-बड़े नेता, अभिनेता आदि जितने भी तथाकथित बड़े आदमी हैं, सभी बीमार पड़ते हैं और अक्सर बीमार पड़ते हैं। यदि वे दो-तीन महीनेके बाद कमसे कम पाँच सात दिनके लिअे बीमार न पड़ें, तो सच मानिअे अुनके बड़प्पनको गहरा आघात पहुँचे और वे भी बड़े आदमी न रहकर, साधारण यानी बिल्कुल मामूली आदमी बन जाअें। जो जितना अधिक बड़ा आदमी होता है वह अुतना ही अधिक और अधिक बार बीमार पड़ता है।

परन्तु असल बात तो यह है कि बीमार पड़नेके सिवा और चारा भी क्या है! लुकमान हकीमसे लेकर टोटके बतानेवाले वैद्य नानूराम तक और अिसके अतिरिक्त जितने भी पश्चिमके बड़े-बड़े डाक्टर हैं, सब अिस या अुस बीमारीका अिलाज बताते हैं। सबके पास खाँसी, हैजा, निमोनिया, प्लेग आदि बीमारियोंकी अलग-अलग औषधियाँ हैं। आपको जुकाम हो जाय, या जरकान, आपके लिअे कोअी-न-कोअी टिकिया या पुड़िया या और कुछ नहीं तो कोअी-न-कोअी टीका ही अुनके पास तैयार रखा है। हमारी समझमें अिसका तात्पर्य तो केवल यही हुआ कि आप बड़े शौकसे बीमार पड़ सकते हैं, अेक बार छोड़ हजार बार बीमार पड़ सकते हैं, आपको तनिक भी घबरानेकी आवश्यकता नहीं क्योंकि हर बीमारीका अिलाज अुनके पास मौजूद है। परन्तु बीमारीसे कैसे पीछा छूट सकता है, अिस बारेमें प्रायः सभी मौन हैं; मानों ये अुनका कोअी ट्रेड सीक्रेट या गोपनीय विषय हो।

और हो भी क्यों न, आखिर दाल-रोटीका सवाल है। अिस पापी पेटके लिअे कोअी-न-कोअी धंधा तो करना ही होता है। और यदि लोग बीमार न पड़ें तो ये डाक्टर, वैद्य, हकीम आदि कहाँ जाअें। भारतमें तो बेकारीकी समस्या पहले ही भयानक हो रही है। आगे ही अितने अधिक लोग बेकार हैं, यदि ये डाक्टर लोग भी बेकार हो गअे तो आप सोच सकते हैं कि भारतका क्या बनेगा। संक्षेपमें कहें तो बात यह है कि हर अेकको बीमार तो पड़ना ही है। परन्तु यदि आशावादी दृष्टिकोणसे देखें तो अिसके भी कअी लाभ ज्ञात होंगे। अब आप स्वयं ही सोचिअे कि साधारण आदमीको जीवनमें आराम ही कब मिलता है। नून, तेल, लकड़ीके धन्धोंमें आदमी अितना व्यस्त हो जाता है कि बस सदा अस्त-व्यस्त ही दिखाअी देता है। पल भरको भी अुसे चैन नहीं मिलता तो अुसके पास बीमार होनेके सिवाय और चारा भी क्या रह जाता है। बीमार होकर कम-से-कम कुछ समयके लिअे वह आराम तो कर सकता है, नहीं तो स्वस्थ होनेपर अुसे कोल्हूके बैलकी तरह पिसना ही है।

और फिर दफ्तरोंसे छुट्टी लेना कौनसा आसान काम होता है। सिवाय बीमारीका बहाना करनेके, और कोअी बहाना काम ही नहीं करता। राजनीतिक नेता भी बीमारीका बहाना करके पहाड़ोंपर चले जाते हैं और जनताके कान फाड़नेवाले नारों और गाँवोंकी धूलसे बचते हैं। अमीरों, राजाओं और महाराजाओंको अपना पैसा खर्च करने और देश-विदेश घूमनेका अिससे सरल और क्या बहाना मिल सकता है। और कअी डाक्टरोंका पेशा ही केवल मात्र डाक्टरी सर्टिफिकेट देना और फीस जेबमें डालना है। अुनका अुपचार यहीं तक समाप्त हो जाता है। अतः देशकी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक अवस्थाको ध्यानमें रखकर विचार करें, तो हम अिस निर्णयपर पहुँचेंगे कि अिन परिस्थितियोंमें हर-अेकका बीमार पड़ना लगभग आवश्यक हो जाता है।

हमारी बात पूछिअे, तो हम किसी भी बीमारीसे बिल्कुल नहीं घबराते। हम तो यथासम्भव हर बीमारीका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वागत करनेको तैयार रहते हैं। और बीमारियाँ हैं कि अुन्होंने भी संकोच त्याग दिया है और बेखटके हमारे यहाँ चली आती हैं। न हम बीमारीसे घबराते हैं और न बीमारी हमसे। तो बस मियाँ-बीबी राजी तो क्या करेगा काजी। यानी हम दोनों--बीमारी और हम--अेक दूसरेमें मस्त रहते हैं परन्तु हमें अेक बातका भय अवश्य रहता है। और वह यह कि कहीं कोअी हमारा हाल-चाल पूछने, लखनवी जबानमें कहें तो तीमारदारी या मिजाजपुर्सी करने न आ जाय। सच मानिअे, हम अैसे वाक्योंसे कि "कहिअे, आपकी तबीयत अब कैसी है," या "दुश्मनोंकी तबीयत नासाज क्यों है," अेकदम घबराते हैं। यह वाक्य तीरकी तरह हमारे दिलमें चुभ जाते हैं। हम तोपसे, बन्दूकसे, अेटमबमसे और न अपने पड़ोसीके कुत्तेसे ही अितना घबराते हैं, जितना अैसे वाक्योंसे या अैसा कहनेवाले भद्र पुरुषोंसे।

आप सोचेंगे कि यह भी अजब बात है कि हम बीमारीसे तो डरते नहीं परन्तु हालचाल पूछनेके लिअे जो मित्रगण या सम्बन्धी आदि आते हैं, अुनसे डरते हैं। अिसमें सन्देह नहीं कि बात लगती तो कुछ अजीब-सी है, परन्तु है सोलह आने सच। हमने बीमारीके कारण अितनी कठिनाअियाँ नहीं अुठाअीं, या दुख नहीं झेले, जितनी कि अिन महानुभावोंके कारण हमें सहन करनी पड़ी।

आप पूछेंगे कैसे? तो सबसे पहली बात तो यही है कि अिन महानुभावोंका समय-असमय आना। ये लोग तनिक भी समयका ध्यान नहीं रखते कि किस समय रोगीके पास जाना चाहिअे और किस समय नहीं। बस, जब अपने काम-धामसे निपटे और देखा कि और कोअी काम नहीं तो मुँह अुठाअे रोगीका हाल-चाल पूछने चल दिअे। और फिर अेककी बात थोड़े ही है, हर सम्बन्धी, हर मित्रका यह कर्तव्य हो जाता है कि वह कम-से-कम अेक बार अवश्य ही जाकर रोगीको तंग करे। जो सम्बन्धी साल भरमें कभी आपके मुँह न लगे होंगे, जिन मित्रोंने अिस दशाब्दीमें दो-तीन बार ही दर्शन दिअे होंगे, आपके बीमार पड़नेपर लपकते चले आअेंगे। हालचाल, कुशल-मंगल तो दूसरोंसे भी पता चल सकता है परन्तु नहीं; जबतक स्वयं अुपस्थित होकर रोगीको अेक-दो घण्टा बेचैन न कर लें तबतक अुन्हें चैन थोड़े ही आता है।

जी हाँ, घंटे दो घंटेसे कम नहीं। शायद ही कोअी हो, जो घंटे-डेढ़ घंटेमें हालचाल पूछकर चलता बने। नहीं तो कम-से-कम अेक घंटा तो अलिखित नियम ही समझिअे। अब जब श्रीमानजी पधारे हों और हो सकता है अपनी दर्जन, आधी दर्जन बच्चोंकी पलटनका अेकआध प्रतिनिधि भी साथ लेते आअे हों, तो अुनका सत्कार करना ही पड़ता है। अतिथि-सत्कार करनेकी परम्परा तो भारतमें प्राचीन कालसे चली आ रही है। और है भी ठीक, आखिर जब वे बेचारे केवल आपका हाल जाननेके लिअे ही अितने दूरसे चलकर आअे हों तो अुन्हें पानी-वानी पूछना ही चाहिअे--पानी तो हमने मुहावरेके अनुसार यों ही कह दिया; वरना असल मतलब तो चाय, बिस्कुट आदिसे है। आप तो बीमार हैं, चारपाअीसे अुठ नहीं सकते। अतः मुसीबत घरवालोंके लिअे आती है। अुन्हें रोगीकी दवाअी, या अन्य आवश्यक बातें तो भूल जाती हैं और वे अतिथि-सत्कारमें संलग्न हो जाते हैं।

फिर अतिथि महोदय चाय पीकर और भी डटकर बैठ जाते हैं। पहले तो बीमारीका सारा अितिहास पूछेंगे, अुपचार पूछेंगे, डाक्टरका नाम पूछेंगे और सम्भव है नुसखेपर भी अेक नजर मारनेकी फरमायश करें; क्योंकि हो सकता है, अुसमेंसे अेकआध दवाअीकी जान-पहचान अिन्हें पहलेसे हो और अुस दवाअीके प्रभाव या गुण-दोष सम्बन्धी अेकआध टिप्पणी टीप दें। रोगीका न तो बात करनेको मन करता है और न अधिक बातें सुननेको ही। परन्तु श्रीमानजीने तो अभी आपकी बातें सुनी ही हैं, अभी अपनी तो अुन्हें कहनी हैं। और यदि अेक बार वह दवाअियोंपर टीका-टिप्पणी करना आरम्भ कर दें तो आसानीसे बन्द नहीं होनेके। कअी पेटेन्ट दवाअियों, आयुर्वेदिक दवाअियोंके नाम अुनके गुण-दोष सहित गिनाअेंगे। कअी तो अन्य रोगियोंका देखा या दूसरोंके मुँहसे सुना हाल बताने लगते हैं। और अुसका अैसा भयानक वर्णन करते हैं कि बेचारे रोगीका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिल बैठने लगता है और वह मन-ही-मन यमदूतोंकी आकृतिकी कल्पना करने लगता है। परन्तु रोगीपर क्या बीत रही है; अतिथि महोदयको, जो हालचाल पूछने आअे थे, तनिक भी परवाह नहीं है।

अेक और प्रकारके भद्र पुरुष भी हैं जो अधिक बात तो नहीं करते परन्तु हर बीमारीका अिलाज बतानेसे नहीं चूकते। चाहे वे चमड़ेका व्यापार करते हों या किसी दफ्तरमें बाबूगीरी, परन्तु कोअी-न-कोअी अिलाज अवश्य बतलाकर जाअेंगे। यह दवाअी या तो अुन्होंने स्वयं बरतके देखी होगी या अुनके किसी मित्रने अथवा किसी मित्रके निकटके सम्बन्धीने, नहीं तो अुन्होंने किसी साधु-सन्त या महात्माके मुँहसे अवश्य सुनी होगी। दवाअी बतलानेसे वे नहीं चूकेंगे, नाम चाहे वे किसी डाक्टर, हकीम, वैद्य, या फिर किसी बहुत ही बुद्धिमती पड़ोसन बुढ़ियाका ही क्यों न ले दें। अुनको लाख कहो कि हम अमुक डाक्टरका अिलाज करवा रहे हैं, यदि अुससे आराम न आया तो जैसा आप कहते हैं वैसा ही कर देखेंगे। परन्तु नहीं वे महाशय तो आपको अभी अुनके सुने-सुनाअे नुसखेपर अमल करनेको बाध्य करेंगे। अब आप ही कहिअे अुनसे किस प्रकार जान छुड़ाअें। और यह अुपचार अथवा कोअी नुसखा या कोअी विशेष दवाअी बतानेका रोग आजकल बहुत पाया जाता है। अैसा जान पड़ता है भारतका हर दूसरा आदमी पूरा नहीं तो आधा डाक्टर अवश्य है। अिसपर बड़ी मुसीबत यह है कि हर महानुभाव अलग-अलग अुपचार बताते हैं। अेक ही बीमारीके लिअे कोअी तो हरड़-मेड़ेको कूटकर अुसे गोमूत्रके साथ खानेको कहेंगे। दूसरा बकरीकी मेंगनोंको सुखाकर अुन्हें गुलकन्दके साथ खानेको बताअेगा। तो तीसरे महाशयजी सोंठको तवेपर तलकर मूलीका पानी निकालकर और अुनको हींगके साथ घीमें भूनकर खानेकी राय देंगे। यह सब अुपचार सुनकर यदि रोगीका जहर खा लेनेको जी चाहे तो अचम्भेकी बात नहीं होगी।

परन्तु यदि अैसे व्यक्ति ही आपका हालचाल पूछने आ जाअें तो भी गनीमत ही समझिअे। अीश्वरका लाख धन्यवाद कीजिअे कि वे अपनी श्रीमतीजीको अपने साथ नहीं लाअे। क्योंकि स्त्रियोंका हालचाल पूछनेका तो ढंग ही निराला है। चुप बैठनेकी तो मानों वे कसम खाकर आती हैं। आते ही पहले तो आश्चर्य, अफसोस, सहानुभूति आदि सभी अेकदम प्रगट कर देंगी। फिर प्रश्नोंकी झड़ी लगा देंगी। फिर कुछ रोनी सूरत बनाकर च च च करनेकी बारी आती है। अितना हो चुकनेपर वे समझती हैं कि अिस सम्बन्धमें अुनका कर्तव्य पूरा हो गया। बस, फिर क्या है, वे आपकी श्रीमतीजी या घरकी अन्य स्त्रियोंसे गल्ली, मुहल्ले, बाजार, कपड़े, रिश्ते, सिलाअी, गहने और न जाने किन-किन विषयोंपर लम्बी और कभी न समाप्त होनेवाली चर्चा छेड़ देंगी। सुनते-सुनते आपके चाहे कान पक जाअें पर वे कैंचीकी तरह अपनी जबान चलाती रहेंगी। आखिर वे आपका हाल-चाल ही तो पूछने आअी हैं। अतः अुनको बात करनेका, और जबतक अुनके जीमें आअे बात करनेका, और जिस विषयपर अुनका मन आअे अुसपर बात करनेका, अधिकार तो होना ही चाहिअे।

रोगी बेचारा अिधरसे अुधर करवट लेता है। संकोचवश चीख भी नहीं सकता। अतिथियोंके सामने कुछ क्रोध भी नहीं दिखा सकता। दवाअी पीने या खानेका समय हो तो माँग भी नहीं सकता; क्यों कि आपके घरवाले तो अतिथि-सत्कारमें संलग्न होंगे, अुन्हें आपको दवाअी देने या कुछ और करनेका अवकाश ही कहाँ होगा। रोगी सोचता है डाक्टरने कहा है पूरा आराम करो। फिर अुसे प्रधान मन्त्री नेहरूजीके शब्द याद आ जाते हैं "आराम हराम है।" वह मन-ही-मन कहता है कि ठीक ही कहा है, निस्सन्देह आराम हराम है।

और यदि रोगीके यहाँ अैसे दो-चार शुभचिन्तक, हितैषी परम मित्र अथवा सम्बन्धी आ जाअें तो अुसकी क्या दशा होगी, अुसकी बस कल्पना ही की जा सकती है। अुसपर अिन शब्दोंका-- 'कहिअे, आपकी तबीयत अब कैसी है ?-- का क्या प्रभाव पड़ता है, यह हमारी तो कल्पनाके भी बाहर है। हो सकता है कोअी मनो-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक अिसका अनुमान लगा सकें। पर हमें अितना अवश्य पता है कि रोगीका टेम्परेचर दो-तीन डिग्री अवश्य बढ़ जाता है।

अब आप ही कहिअे कि हमारा भय निराधार तो नहीं था। सीधेसे लगनेवाले अिन शब्दों-- 'कहिअे, आपकी तबीयत अब कैसी है' – में कितनी कटुता कितना विष, काँटेकी तरह चुभनेवाला कितना व्यंग्य भरा हुआ है। क्या अिन्हीं शब्दोंसे तंग आकर तो किसी अुर्दू कविने यह नहीं लिखा था--

रहिअे अब अैसी जगह चलकर जहाँ कोअी न हो।
हमसफर कोअी न हो, हमजुबाँ कोअी न हो॥
पड़िअे गर बीमार तो कोअी न हो तीमारदार॥
और अगर मर जाअिअे तो रूहेख्वाँ कोअी न हो॥

अिससे आप अनुमान लगा सकते हैं कि ये शब्द कितनी भारी चोट पहुँचानेवाले हैं। ये शब्द हालचाल पूछनेके लिअे जो व्यक्ति आते हैं, अुन्हीं द्वारा कहे जाते हैं। बीमारोंका हालचाल पूछनेके लिअे जानेकी प्रथा भी भारतकी सती-प्रथा, बहु-विवाह आदि बुरी प्रथाओंकी श्रेणीमें आती है। और आजकलके भारतीय युवकोंके स्वास्थ्यपर दृष्टि डालें तो अिस प्रथाको समाप्त करना और भी अधिक आवश्यक जान पड़ता है। क्या हम आशा करें कि संसद और विधान सभाओंमें हमारे प्रतिनिधि अिस प्रथाको रोकनेके लिअे आवश्यक वैधानिक कार्यवाही करेंगे। और आगामी विधान सभाके या लोक सभाके अधिवेशनमें अिसके लिअे अवश्य कोअी बिल पेश करेंगे।

"गुड् फ्राअिडे"

"हजरत अीसा मसीहने जिस समय जेरुसलममें जन्म लिया अुस समय वहाँकी क्या दशा थी, यह अितिहास-प्रेमियोंको अविदित नहीं। चारों ओर अधर्म फैल रहा था, चारों ओर अनर्थ और अविद्याका प्राबल्य था, सज्जन कष्टमें पड़े हुअे थे, दुर्जनोंकी अुन्नति हो रही थी। अिस अन्धेरको देखकर अुस महात्माका जी जल अुठा। अुसे यह सब असह्य होने लगा। बस फिर क्या था? अुस धीरने अिस अधर्म-चक्रकी गतिको अुलटनेकी ठान ली। अिस गतिको फेरना शुरू कर दिया। दुरात्माओंको मालूम हो गया कि कोअी अलौकिक शक्ति काम कर रही है। अनेक विरोधी खड़े हो गअे। अुन लोगोंने चाहा कि पापचक्रकी गति न रुकने पावे, वह ज्यों-की-त्यों बनी रहे। लाख-लाख अुद्योग किअे गअे, पर अुन सबसे क्या हो सकता था? जो स्वयं अधीर हैं, जो खुद ही चंचल हैं, जिनका मन सदा ही सरपट दौड़ा करता है, भला अुनकी क्या मजाल जो संसार-चक्रकी गतिके बदलनेको रोक सकें। पहले वे अपने मनचक्रका तो निग्रह कर लें, फिर संसार-चक्रका निग्रह करेंगे। अस्तु, अैसे ही दुर्जनोंने अीसाके आन्दोलनको रोकना चाहा। धैर्यको अधीरतासे जीतना चाहा। अिसका नतीजा क्या हुआ? अधर्मसे धर्मकी जीत न हो सकी। हाँ, थोड़े दिनके लिअे अधर्म बल्कि यह कहिअे कि पापचक्रकी चाल और भी बढ़ गअी। अत्याचार दिनोंदिन बढ़ने लगे। पापियोंने सोचा, अब हमारी जीत हुअी मगर यह बात अुन्हें न सूझी कि मरनेके समय चींटोंके पंख निकल आया करते हैं। जब दीपक बुझनेको होता है, तब अुसका प्रकाश बढ़ जाता है। निदान, अत्याचारोंकी बढ़ती यहाँ तक हुअी कि हजरत धर्म-विद्रोही सिद्ध किअे गअे और अुन्हें सूली चढ़ानेका शाही हुक्म हुआ। हरअेक आदमी अपने मनसे संसारको तौलता है। अिस बादशाहने भी अीसाको अपने मनोरूपी काँटेसे तौला, अिसलिअे, वह अपने ही समान अीसाको भी अधीर समझ बैठा। अुसे निश्चय था कि अीसा अब राहपर आ जायगा। मृत्युका नाम सुनकर वह डर जायगा और अूलजलूल बकवाद छोड़कर चुप हो बैठेगा। पर भला धीर भी कहीं मृत्युसे डरते हैं! मृत्युको तो वे फूलके हारकी तरह ग्रहण करते हैं। आत्मबलि हीसे तो अुनके कार्यकी सिद्धि होती है। अैसे ही समयमें तो अुन्हें अपने सच्चे या झूठे होनेका पता चलता है। अैसे ही समयमें दृढ़ रहनेसे तो अुनकी अुपाधि (धीर) सार्थक होती है। खैर, हजरत सूलीपर चढ़ गअे। अुनके हाथ-पाँवमें कीलें ठोंक दी गअी। बस, पापचक्रका यहीं खातमा हो गया। हजरतके हाथ-पाँवमें कीलें नहीं ठोंकी गअीं, बल्कि पापचक्रमें कीलें ठोंक दी गअीं! अेक धीरके आत्मोत्सर्गसे दुनियाके अेक तिमिराच्छन्न हिस्सेमें सत्यका प्रकाश हुआ; सत्यसूर्यका अुदय हुआ। अुसकी मृत्युसे अेक मृत जाति जीवित हो अुठी।"

--रायकृष्णदासके अेक निबन्धसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोक-गीतोंमें—

बसंतके अवसरपर प्रियके न लौटनेकी शिकायत

—श्रीमती निर्मला प्रीति

वसन्तमें प्रकृति-श्रीका रंग देखते ही बनता है। चारों ओर सौन्दर्य-ही-सौन्दर्य नजर आता है। आज हम शहरी जीवनमें रहते हुअे भले ही अिस सौन्दर्यको न देख, पहिचान सकें पर आप जरा गाँवकी ओर भी मुँह फेरिअे। पेड़-पौधे फूलोंके भारसे दब-से रहे हैं, भिन्न-भिन्न रंगके पुष्प प्रकृतिकी शोभा द्विगुणित कर रहे हैं, शाल्मलि पुष्प (सेमर फूल) का सौन्दर्य तो देखते ही बनता है। वस्तुतः वनदेवीके दर्शन हमें ग्राममें ही हो सकते हैं। वसन्तके आगमनसे जब सारा वातावरण प्रसन्न हो अुठता है, वन-अुपवनमें पक्षीगण सुरीले कण्ठोंसे वसन्तके आगमनकी सूचना देते हैं, अुस समय प्रकृति भी अपने-आपको वशमें नहीं रख सकती। अुसका सौन्दर्य शत-शत रूपोंमें फूट पड़ता है। वसन्तका आगमन होते ही वनस्पतियोंमें रस बसने लगता है। वसन्तसे ही पेड़ पौधोंमें नवरसका संचार होना शुरू होता है और वृक्षमें नअी पत्तियाँ लहलहाने लगती हैं।

और अुस समय जब कि तरुणियाँ अपनी मस्तीमें होकर गाती हैं "तध पिछियाँमें होअी बदनाप लोका" तो लम्बी तान, अूँचे स्वरसे गाया जानेवाला गीत, रमणीका कलित कण्ठ और झूलेमें झूलते समयकी मस्ती, ये सभी अपने-अपने क्षेत्रमें अलग-अलग महत्व लिअे होते हैं। भले ही आपको गीतकी भाषा कुछ समझमें न आअे, जितना भी जो कुछ भी आप समझ सकेंगे वह आपके हृदयमें टीस पैदा कर देनेके लिअे काफीसे ज्यादा है। शायद लोकगीतोंकी यह प्राकृतिक खूबी है कि अुनके सुनने मात्रसे ही दिलमें हिलोर अुत्पन्न हो जाती है। जिस दिन युवतीने गाया होगा..... "बरजोरी बसे हो नयनवामें" अुस दिन अुसकी टीस किसने नहीं जानी होगी। जब नहीं सहच हुआ तो अुमड़ ही तो पड़ी "अुमरियाकी नागन डसेला.....।" वे चुराना नहीं जानती, रोकना नहीं समझती, छिपाती भी नहीं.... "मनकी बतियाँ तू नयनामें पढ़ि ले"....शायद अुस सरलाके पास शब्द नहीं थे। जब दरिद्रता साकार हो अुठी, तब अुनकी करुणा भी फूटी।

ग्रामीण तरुणियोंके अिन गीतोंमें अेक हृदय होता है और होते हैं हृदयके कोमल अुद्गार। अपने सीधे-सादे सरल शब्दोंमें ये गीत वह सब कुछ वर्णन कर देते हैं जो शास्त्रीय कवि लाख माथा-पच्ची करके लिखी गअी कवितामें भी नहीं कर सकता। श्री अटकके शब्दोंमें "अिन गीतोंमें प्रेम वायुकी नाअी बहता है। अिनमें युवतियाँ छिपकर प्रेमके गीत नहीं गातीं, बल्कि दूधके बर्तन अुठाअे हुअे चलते-चलते गाती हैं। गायोंको चराती हुअी युवतियाँ अूँचे पहाड़ोंकी चोटियोंपर चढ़कर मर्मे प्रेमने हुअे गीतोंको प्रकृतिकी निस्तब्धतामें गूँजा देती हैं।"

वसन्त कामका प्रतीक माना जाता है। अिस ऋतुमें नवयुवकों और युवतियोंके दिलोंमें अेक प्रकारकी मस्ती छाअी रहती है। प्रियका वियोग दोनों ही अनुभव करते हैं। वसन्तके अवसरपर गाअे जानेवाले गीतोंमें यह बात अच्छी तरह व्यक्त की गअी है। प्रत्येक प्रान्तके गीतोंमें अैसे गीत मिलते हैं जिनमें विरहिणियोंकी ओरसे वसन्त ऋतुमें प्रियके न लौटनेकी शिकायत की गअी है। प्रिय वसन्त ऋतुमें लौटनेको कह गया है, पर वसन्त ऋतु बीती जा रही है, प्रिय अभीतक नहीं आया। अुसके आनेकी अब कोअी आशा नहीं रही, विरह दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। अेक मैथिली गीत देखिअे, जिसमें प्रियके न आनेकी शिकायतका यों अुल्लेख है—

माघ हे सखि ऋतु बसन्त आयल,
गेलो जाड़ाके दिन हे
पिया जं रहितन कोरवा लगअितन,
तब कटअित जाड़ा हमार हे
फागुन हे सखि सब रंग बनायल
खेलत पियाके संग हे
ताहि देखि मोर जियरा जं तरसय,
काहिपर डारू हम रंग हे
चेत हे सखि सब बन फूले,
फुलवा जं फुलअे गुलाब हे
सखि सब फूले रामा पियाक संगमें,
हमरो फूल मलीन हे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे सखी, माघ आया। बसन्त ऋतु भी आओ। जाड़ा दबे पाँव धीरे-धीरे खिसक चला। यदि आज मेरे प्रियतम होते तो मुझको अपने कलेजेसे लगा लेते और यह जाड़ा आसानीसे कट जाता। हे सखी, फागुनमें हमारी हमजोलियाँ रंग घोलकर अपने-अपने प्रियतमके साथ रंगरेलियाँ करती हैं, जिसे देख-देखकर मेरा मन तरस रहा है। बताओ, मैं किससे रंग खेलूँ? हे सखी, चैतमें वन-अुपवन खिल अुठे। नसोंमें बिजली-सी दौड़ गओ। देखो, गुलाबके फूल भी चिटख रहे हैं। हमारी हमजोली सखियाँ भी अपने-अपने प्रियतमके साथ प्रसन्न हो रही हैं। लेकिन मेरा फूल-शरीर गमगीन है।

मिथलाका ही अेक 'चैतावर' गीत भी हमारे अिस कथनकी पुष्टि करता है--

चैत बीति जयतअि हो रामा, तब पियाकी करे अयतअि
आ रे अमुआ मोजर गेल, फरि गल टिकोरवा
डारे-डारे भेल मतवलवा हो रामा
चैत बीती जयतअि हो रामा, तब पियाकी करे अयतअि

अरे राम, जब चैत बीत जायगा, तो प्रियतम क्या करने आअेगा? आममें बौर लग गअे। बौरमें टिकोरे निकल आअे और टहनी-टहनी रसमें मतवाली होकर झूमने लगी। अरे राम, जब चैत बीत जाअेगा, तो प्रियतम क्या करने आअेंगे?

लम्बी तानें और दर्दभरे गीतोंका आनन्द सुनकर ही अुठाया जा सकता है। ये आपको मन्त्रमुग्ध किअे बिना न रहेंगे। आप भले ही अिनकी भाषासे अपरिचित हों, आपको खाक भी समझमें न आ रहा हो, किन्तु तानें कुछ अैसी हृदयस्पर्शी होती हैं, स्वर कुछ अैसा मादक होता है और अुनके गानेकी विधि कुछ अैसी निराली होती है कि आप गुम-सुम खड़े सुनते रहते हैं, आपका हृदय गीतकी तानके साथ अुड़ता रहता है। अिन सीधे-सादे गीतोंमें कितना दर्द, कितना प्रेम, कितनी टीस, कितनी हसरत है, यह वही लोग जान सकते हैं, जो दिल रखते हैं और जिन्होंने वियोगी दिलोंमें कभी पैठकर देखा है। अुनके स्वरका अुतार-चढ़ाव कभी जैसे नदीकी लहरोंपर तैर रहा हो और कभी अैसे, जैसे पहाड़की चोटीपर अुड़ा जा रहा हो। अिनमें रोमांस वायुके साथ अुड़ता है। अिनमें न तो व्यर्थका विस्तार मिलता है, न शब्दाडम्बर। दृश्यके बाद दृश्य बदलते हैं और यही कारण है कि अिनमें हृदयको छूनेकी आश्चर्यजनक शक्ति होती है। अिनमें हम नारियोंके मानस-सरोवरोंमें अुठनेवाली तरंगों, अुनकी प्रवृत्तियों अेवं मनोविकारोंकी रेखा स्पष्ट देख सकते हैं।

मिथलाकी अेक सुन्दरीको अुसके प्रेमी पतिने वसन्तमें आनेका वचन दिया था। नायिका विरहके दारुण क्षणोंको बसन्तागमनकी आसमें बिता रही थी। अब बसन्त आ गया है, परन्तु अुसके प्रेमीकी कोअी खबर नहीं--

अवधि मास छल माधव सजनि ग
निजकर गेलाह बुझाय
से दिन अब नियरायल सजनि गे
धैरज धैलो नहिं जाय

अेक दूसरी रमणी भी अिसी प्रकार अपनी सखीसे कहती है--बसन्त ऋतु आ गओ है, आज अुसकी पंचमी तिथि है। वनमें फूल खिल गअे हैं। कोयल अलमस्त हो कूक रही है। परन्तु अुसका प्रियतम अुससे दूर-बहुत दूर है। वह निराश हो चुकी है। बसन्त जाअेगा, फिर आअेगा, पर अुसकी जवानी नहीं लौटेगी--

ऋतु बसन्त तिथि पंचम सजनि गे
फुलि शेल सब वन फूल
कोकिल करथि कूक रव सजनि गे
आनन्द वनमें झूल
जैता वसन्त अओता पुनि सजनि गे
गत यौवन नहि आय
कर्म अभाग्य लिखल अछि सजनि गे
के दुख हमर मिटाय

ठीक अिन्हीं भावोंसे युक्त कश्मीरके पड़ोसी खैबरका अेक गीत भी मिलता है--

च स्परले तीरशी व्या बराशी
जवानअी च तीरशी व्या न राजी मअिना

बसन्त ऋतु चली जाती है और फिर लौट आती है; पर हे सखी, गओ हुओ जवानी फिर कभी लौटकर नहीं आती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक साहित्यिक कविता अेवं गीतोंकी अपेक्षा लोक-गीतोंमें अेक अन्य विशेषता और भी है। आजके वैज्ञानिक युगमें टेलीफोन, तार, रेडियो आदि 'यन्त्रदूत' तो बने ही, पर पोस्टमैनको भी यह मर्यादा मिलना चाहिअे। पशु-पक्षियोंसे भी साहित्यिक गीतोंमें प्रश्न पूछे गअे हैं, अुनके द्वारा सन्देश भेजा गया है, पर अधिकांशतः वे मौन ही रहे हैं। पक्षियोंके द्वारा सन्देश भेजनेके मूलमें केवल अेक बात मानी जा सकती है—प्रेम या विरहमें समस्त प्रकृतिके साथ जीवनकी समरूपता। विरहाकुल पुरुष या स्त्री, पशु-पक्षी, लता-द्रुम आदिसे जब अपनी बिछुड़ी हुअी प्रिया या बिछुड़े हुअे प्रेमीका पता पूछ सकता है; पर क्रुद्ध मनुष्य शत्रुका पता प्रकृतिसे पूछना नहीं पाया जाता। ग्राम-गीतोंमें अैसे वर्णन बहुत हैं जहाँ नायिका अपने प्रेमीकी खोजमें बाघ, भालू आदिसे अुसका पता पूछती चलती है। आदि कवि वाल्मीकिने विरह विह्वल रामके मुखसे सीताकी खोजके लिअे जो अनेक पशु-पक्षी, लता-द्रुमों आदिसे पता पुछवाया है; जान पड़ता है, अिसकी प्रेरणा अुन्हें लोकगीतोंसे ही मिली होगी और बादमें तो साहित्यमें अिस प्रकारके वर्णनकी परम्परा-सी चल पड़ी। मेघदूत, पवनदूत, हंसदूत, भ्रमरदूत आदि न जाने कितने दूतोंका साहित्यमें प्रवेश हो गया। पर ये सब दूत प्रायः मौन ही रहे हैं। विरही यक्षका मेघदूत भी मौन ही रहा है किन्तु लोकगीतका दूत मौन नहीं है। अेक निम्न लोकगीत देखिअे जिसमें स्त्री भौंरेको दूत बनाकर भेजती है क्योंकि बसन्तका मस्त महीना फागुन आ गया है, पर अभी तक अुसका प्रिय नहीं आया है—

तोको देबों भौंरा दूध-भात खोरवाँ।
अरे हरी आगे खबर जनाअू, त फागुण आअी॥
अुड़ल अुड़ल भौंरा गहले अुहे देसवाँ।
अरे जाअी बैठे हरीजीके पाग, त फागुण आअी॥
पाग ते अुरले हरी जाँघे बहसवलें।
अरे पूछे लागे धन कुसलात, त फागुण आअी॥
तोरी धना ये हरी वेदने बेआकुल।
अरे ओही गुनो मेरा भेजअी, त फागुण आअी॥

स्त्री कहती है, "हे भौंरे, मैं तुमको कटोरेमें दूध-भात दूँगी, तुम जाकर मेरे प्राणनाथको खबर कर दो कि फागुन आ गया है।" भौंरा अुड़ते-अुड़ते अुस देशमें पहुँचा जहाँ अुस स्त्रीका प्रियतम था और अुसकी पगड़ीपर बैठ गया। प्रियतमने पगड़ीसे अुतारकर अुसे जाँघपर बिठा लिया और अुससे अपनी प्रियाका समाचार पूछा। भौंरेने कहा—हे हरि, तुम्हारी प्यारी बहुत आकुल है, फागुन आ गया, अुसने यह कहनेके लिअे ही मुझे तुम्हारे पास भेजा है।

अूपर हम देख चुके हैं कि बसन्तमें गाअे जानेवाले गीतोंमें रमणियाँ पति-वियोग-जनित क्लेशका वर्णन करती हैं। अिनमें हमें स्त्रियोंका विरह वर्णन, विरहिणी स्त्रियों द्वारा प्रकृतिकी भयंकरताका वर्णन, प्रकृतिकी मनोहरताका काम-वेदनाके विकासमें सहयोग आदि बातें प्रमुख रूपसे मिलती हैं। शृंगारसे ये ओतप्रोत रहते हैं। अेक पंजाबी गीतमें हमें अुपरोक्त सब बातें मिल जाती हैं—

माघ महीने रुत बसन्ती खिल पअि फुल्ल हजारां
साड़ी हुण तक सार न लीती, साढ़े वेलीया यारां।
फगन दुखांने फड़िया माहिया, होली किंवे मनावां
दिल दां खून अखां दे रस्ते, अपने तन ते पावां।
चेतर चा अिशक दा चड़िया, भुल्ल गअीया सुब कारां
ओस प्यारे यार दे बाघो काहदिया मौज चट्टारा।
चड़े बसाख, बसाखी आअी लोकी मेले जावन
मेलियां वाझो मेला कान्दा, हझूं नेण बगावन।

—माघमें बसन्त आया, हजारों फूल खिल गअे
मेरे प्रियतमने मेरी अबतक खबर न ली।
फागुनमें प्रिय मुझे बहुत दुख होता है, होली कैसे मनाअूँ
दिलका खून आँखोंके रास्ते अपने शरीरपर डाल रही हूँ।
चैतमें अिश्कका रंग चढ़ा, सब काम भूल गअी हूँ
अुस प्रियतमके बिना यह मौज बहार किस कामकी।
बैसाख मासमें बैसाखीका त्योहार आया, लोग मेले जाते हैं
मिलनेवालोंके बिना मेला किस कामका, आँखें आँसू बहा रही हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिरह वेदनाका जैसा सीधा और मर्मभेदी वर्णन अिन गीतोंमें मिलता है, अन्यत्र कठिनतासे मिलेगा। अिन गीतोंको पढ़कर हृदय अनायास ही करुणासे द्रवित हो अुठता है। अेक राजस्थानी गीतमें बिरहकी तीव्र चीत्कार सुनिअे—

थे तो जा बैठया, पनामारू चाकरी धणरो कांथी रे हवाल
सुध-बुध सारी भुलाय दी, दीनी मोय बिसार
बारा बरस तो वीतग्या, जोवत थारी बाट
नित अुठ काग अुड़ावती, परदेसी री नार
बाबो छोड़यो जनमको, छोड़ी सुगुणी माय
भाअी छोड़यो खेलता, सात सख्यां रो साथ
सुरंगो पीवरो छोड़यो आअी थारे लार
थे मोय अिण विघ विसार दी, अब मेरो कूण हवाल

अर्थात—प्यारे तुम तो परदेशमें नौकरी करने जा बैठे, तुम्हारी प्यारीका पीछे क्या हाल है, यह भी सोचा? सुध-बुध भुलाकर तूमने मुझे बिसार दिया। तुम्हारी बाट जोहते बारह वर्ष बीत गअे। अब मैं नित अुठकर कौअे अुड़ाती हूँ। हे प्यारे, तुम्हारे लिअे मैंने जन्मदाता पिताको छोड़ा, गुणवती माताको छोड़ा, और छोड़ा सखियोंके समूहको। भरा-पूरा पीहर छोड़कर मैं तुम्हारे साथ आअी। पर तुमने मुझे अिस प्रकार भुला दिया, अब मेरी क्या दशा होगी?

बसन्तके अवसरपर दरभंगाकी तरफ भी चैतावर गीत गाअे जाते हैं। ये बसन्तकी रंगीनी और मस्तीसे चूर रहते हैं। वैसे ये गीत अधिक लम्बे नहीं होते, पर अिनके लघुत्व—गिने चुने शब्दोंमें ही असे भाव गुँथे रहते हैं जो सीधे हृदयपर जाकर आघात करते हैं। ये गीत बड़े ही रसीले होते हैं जो किसी भी भावुक हृदयको मंत्र-मुग्ध कर देते हैं। अेक अत्यन्त ही लोकप्रिय गीत देखिअे जिसमें नायिकाके प्रियतमके न आनेकी तो बात ही दूर, अुसकी 'पाती' तक नहीं आती—

नअि भेजे पतिया
आयल चैत अुतपतिया हे रामा, नअी भेजे पतिया
बिरही कोयलिया शब्द सुनावे, कल न पड़य अब रतिया
हे रामा

नअि भेजे पतिया
बेला चमेली फुले बगियामें
जोबना फूलल मोर अंगिया हे रामा, नअि भेजे पतिया

—प्रियतमने पत्र नहीं भेजा
अुत्पाती चैत आ गया, हे राम, मेरे प्रियतमने पत्र नहीं भेजा
बिरही कोयल कूक रही है, मुझे रातको नींद नहीं आती
हे राम!
प्रियतमने पत्र नहीं भेजा
बागमें बेला और चमेली फूल गअी है
मेरे हृदयमें यौवन भी खिल गया, हे राम
प्रियतमने पत्र नहीं भेजा।

अिसी प्रकार और भी भाषाओंके गीतोंमें हमें नायिकाकी ओरसे अिस प्रकारकी शिकायत मिलती है। बादमें ज्यों-ज्यों शिष्ट-साहित्यकी रचना होने लगी, कवियोंने भी अिन्हीं गीतोंके आधारपर अपनी रचनाओंमें अिन्हीं भावोंका समावेश किया। जायसीसे लेकर आज मैथिलीशरणजी गुप्त तककी रचनाओंमें हमें यह प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे वंग भूमि !

बंगला

पुण्य पापे, दुःखे सुखे, पतने अुत्थाने
मानुष हअिते दाओ तोमार सन्ताने
हे स्नेहार्त बंगभूमि, तब गृहक्रोड़े
चिर शिशु करि आर राखियो ना ध'रे।
देश-देशांतर माझे यार येथा स्थान
खुंजिया लअिते दाओ करिया सन्धान।
पदे-पदे छोटो-छोटे निषेधेर डोरे
बेंधे-बेंधे राखियो ना भालो देखे करे।
प्राण दिअे, दुःख सअे आपनार हाते
संग्राम करिते दाओ भालो मन्दे साथे।
शीर्ण शान्त साधु तव पुत्र देर धरे
दाओ सबे गृहछाड़ा लक्ष्मी छाड़ा करे।
सात कोटि सन्तानेरे हे मुग्ध जननी,
रेखे छो बांगाली करे, मानुष करो नि॥

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

हिन्दी

हे स्नेहमयी बंगभूमि, पाप-पुण्य, सुख-दुख तथा अुत्थान-पतनमें अपनी सन्तानको तुम मनुष्य होने दो, अपने घर रूपी गोदमें अुन्हें सर्वदाके लिअे नन्हा-सा बच्चा बनाकर न रखो। देश-देशान्तरमें जहाँ जिसका स्थान हो अनुसन्धान कर खोज लेने दो। पग-पगपर छोटी-छोटी रुकावटोंके धागेमें बाँधकर अुन्हें भोला बालक बनाकर न रखो। प्राण गँवाकर दुख झेलकर अपने हाथोंसे अुन्हें भले-बुरेके साथ घमासान संघर्ष करने दो। अपने शीर्ण शान्त भोले बच्चोंको पकड़कर गृहहीन, श्रीहीन बनाकर न छोड़ो। हे मुग्ध जननी, सात करोड़ सन्तानोंको तुमने बंगाली बनाकर रखा है। मनुष्य नहीं बनाया।

भूतदया

गुजराती

सांभळजो व्हालांओ ! वचनो दीननां !
दीनपणुं छे परम दयानुं पात्र जो
मोटो अे अधिकार तमारो मानवी।
अधिकारी छो जेनां मानव मात्र जो॥
अेक पिता परमेश्वर जाणो आपणो,
निकट सगांओ समजो भाअी बहेन जो;
नीको न्हानी मोटी जे जीवो :तणी,
वहंतु तेमां अेक अखंडित वहेण जो॥

हिन्दी

हे स्वजनो ! सुनो। दीनके वचन सुनो। दीनता परम दयाका पात्र है। मानव अिस पात्रका अधिकारी है और वह अेक बड़ा गौरवपूर्ण अधिकार है। अेक परमेश्वर हमारे पिता समान है। अन्य भाअी बहन हमारे समीपके सम्बन्धी हैं। प्राणीमात्रकी जो छोटा मोटा बहाव है अिसमें यह अेक स्रोत अखंड रूपसे बह रहा है। हमारे स्वजनोंमें जो हँसते हैं अुनके साथ हँसना चाहिअे,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हसनारांनी साथे हसवानुं घटे,
रडनारांनी साथे रडवुं तेम जो;
अेक बीजानां आंसुडांओ लूछतां,
अूंचे चडशो स्त्री पुरुषो सो अेम जो ॥
भूतदया छे धर्म बधाना मूलमां
सघळाये संतोनो अे अुपदेश जो;
दिव्य दयासागर ! याचंतां आप जो,
दीन जनोने अमने अेनो लेश जो ॥

जो रोते हैं अुनके साथ रोना चाहिअे । अिस प्रकार अेक दूसरेके साथ भ्रातृभाव रखनेसे हम सब स्त्री-पुरुष अुन्नत होंगे । भूतदया सब धर्मोंका मूल है । यही अपने सब साधु सन्तोंका अुपदेश है । अिसलिअे हे दिव्य दया-सागर ! हम आपसे याचना करते हैं कि हमें थोड़ीसी भी भूतदयाकी भावना देनेकी कृपा कीजिअे ।

--(अनु० — सुमंत देसाअी)

संत तुकारामके अभंग

भक्त द्वारा भगवानका अनुनय

(गतांकसे आगे)

मराठी

१७. जाणोनि नेणतें करीं माझें मन ।
तुझी प्रेमखूण देअूनियां ॥
मग मी व्यवहारीं असेन वर्तत ।
जेवीं जळाआंत पद्मपत्र ॥
अैकोनि नाअिके निंदास्तुति कानीं ।
जैसा का अुन्मनी योगिराज ॥
देखोनि न दखें प्रपंच हा दृष्टी ।
स्वप्नींचिया सृष्टि चेबिल्याजेवी ॥
तुका म्हणे अैसें जालिया वांचून ।
करणें तें तें शीण वाटतसे ॥

१८. न कळतां काय करावा अुपाय ।
जेणें राहे भाव तुझ्या पायीं ॥
येअूनियां वास करिसी हृदयीं ।
अैसें घडे कअीं कासयानें ॥
साच भावें तुझें चिंतन मानसीं ।
राहे हें करिसी कें गा देवा ॥
लटिकें हें माझें करूनियां दुरी ।
साच तूं अन्तरीं येअुनी राहें ॥
तुका म्हणे मज राखावें पतिता ।
आपुलिया सत्ता पांडुरंगा ॥

हिन्दी

१७. हे भगवन् ! अपने स्नेह, संकेतके द्वारा मुझे सभी प्रकारका ज्ञान प्रदान कीजिअे ; किन्तु अिसके साथही मेरे मनको विनम्र भी बनाअे रखिअे । तभी मैं कमल-पत्रके समान, व्यवहार-क्षेत्र रूपी जलमें रहकर भी, अुसके दोषोंसे अछूता रह सकूँगा--'पद्मपत्र मिवांभसा'। अुस स्थितिमें योगियोंकी अुन्मनी अवस्थाको प्राप्त कर, मैं अपनी निन्दा-स्तुतिको सुनकर भी अनसुना कर सकूँगा और संसारकी विभिन्न हलचलोंको देखकर भी अुन्हें स्वप्नवत् (असत्य) समझ सकूँगा । तुकाराम कहता है कि जबतक मुझे अुक्त प्रकारकी अुन्मनी अवस्था प्राप्त नहीं हो जाती, तबतक मेरे प्रयत्न और परिश्रम व्यर्थ हैं ।

१८. मैं समझ नहीं पाता कि किस अुपायके करनेसे मेरा मन आपके श्रीचरणोंमें लीन हो सकेगा ? न जाने कब और किस युक्तिका आश्रय लेनेके पश्चात् आप मेरे अन्तःकरणमें आ बसेंगे ? हे प्रभु ! आपका सच्चे भावसे चिन्तन करनेकी स्थिति, मुझे कब प्राप्त करवाअेंगे ? हे भगवन् ! सर्वप्रथम मेरे मनकी दिखावटी भक्तिको दूर कीजिअे, और फिर अिस प्रकार मेरे निर्मल हुअे अन्तः-करणमें आकर निवास किजिअे । मैं पतित हूँ ; अिसलिअे आप ही अपने प्रभुत्वके द्वारा मेरी रक्षा कीजिअे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९. तुजवीण तीळभरी रिता ठाव ।
नाहीं अैसें विश्व बोलतसे ॥
बोलिअेले योगी मुनी साधु संत ।
आहेसी या आंत सर्वांठाअीं ॥
मी तया विश्वासें आलों शरणागत ।
पूर्वींचें अपत्य आहे तुझें ॥
अनन्त ब्रह्मांडें भरोनि अुरलासि ।
मजला जालासि कोठें नाहीं ॥
अन्तपार नाहीं माझिया रूपासि ।
काय सेवकासि भेट देअूं ॥
अैसें विचारिलें म्हणोनि न येशी ।
सांग हृषीकेशी मायबापा ॥
तुका म्हणे काय करावा अुपाय ।
जेणें तुझे पाय आतुडति ॥

२०. अनन्त जीवांचीं तोडिलीं बन्धनें ।
मज येणें काळे कृपा कीजे ॥
अनन्त पवाडे तुझे विश्वंभरा ।
भक्तकरुणाकरा नारायणा ।
अंतरींचें कळों देअीं गुह्य गुज ।
अन्तरीं तें बीज राखअीन ॥
समदृष्टी तुझीं पाहेन पाअुलें ।
धरीन संचले हृदयांत ॥
तेणें या चित्ताची राहील तळमळ ।
होतील शीतळ सकळ गात्रें ॥
तुका म्हणे शांति करील प्रवेश ।
मग नव्हे नाश अखंड तो ॥

२१. जीवनावांचूनि तळमळी मासा ।
प्रकार हा तैसा होतो जीवा ॥
न संपडे जालें भूमिगत धन ।
जरफडी मन तयापरी ॥
मातेचा वियोग जालिया हो बाळा ।
हा तो कळवळा जाणा देवा ॥
सांगावे ते किती तुम्हांसी प्रकार ।
सकळांचें सार पाय दावीं ॥
येचि चिंते माझा करपला भीतर ।
कां नेणों विसर पडिला माझा ॥
तुका म्हणे तूं हें जाणसी सकळ ।
यावरी कृपाळ होअीं देवा ॥

१९. अिस विश्वकी रचनासे यह स्पष्ट दिखाअी देता है, कि अैसा कोअी छोटेसे भी छोटा स्थान नहीं कि जहाँपर आपका वास न हो। योगी, मुनि और साधु-संत भी यही बतलाते हैं, कि आप अिस विश्वके कण-कणमें समाअे हुअे हैं। बस, अिसी विश्वाससे मैं आपकी शरण आया हूँ; आपहीका बालक हूँ मैं। अनंत ब्रह्माण्डोंमें समाकर भी आप शेष बचे रहते हैं; किन्तु फिर भी आप मुझे क्यों नहीं मिल पाते ? हे माँ-बाप ! मुझे बतलाअिअे कि कहीं अिस विचारसे तो आप आना नहीं चाहते हैं कि आपके स्वरूपका आदि-अन्त न होनेसे, सेवकको भेंट किस प्रकार दी जाय ? जो कुछ भी हो, आप मुझे वह अुपाय बतलाअिअे कि जिसके द्वारा मैं आपके पद-कमल प्राप्त कर सकूँ।

२०. हे नारायण ! आपने अगणित जीवोंको सांसारिक बन्धनोंसे मुक्त किया है; अब आज मुझपर अनुग्रह कीजिअे। आप विश्वके रक्षक अेवं भक्तोंपर दया करनेवाले हैं। गुण-गानकी दृष्टिसे आपके अनंत कार्य हैं। आपकी प्राप्तिका रहस्य आप मुझे बतलाअिअे; अुस रहस्य रूपी बीजको, मैं अपने अन्तःकरणमें आरोपित करूँगा। तब मैं जान सकूँगा कि आपके श्रीचरण सभीको समदृष्टिसे देखनेवाले हैं; और अुसके फलस्वरूप मेरे अन्तःकरणमें जो स्फूर्ति निर्माण होगी, वह स्थिर रह सकेगी। अुसी प्रकार मेरे हृदयकी व्याकुलता भी अुस स्फूर्तिके कारण दूर होगी और मेरी समस्त अिन्द्रियाँ वासनारहित हो जानेसे मेरा जीवन अनश्वर बन जावेगा।

२१. पानीके बिना मछलीकी जो अवस्था होती है, भूमिमें गाड़कर रखे धनके न मिलनेपर जैसी हैरानीका अनुभव होता है और माताके बिछोहमें बालककी जो दयनीय स्थिति होती है, अुसकी हे प्रभु कल्पना कीजिअे। अपनी अवस्थाको स्पष्ट करनेके हेतु और कितने अुदाहरण दूँ ? अिन सबका सारांश यही, कि आप मुझे अपने श्रीचरणोंका दर्शन कराअिअे। 'कहीं आप मुझे भूल तो नहीं गअे'—अिस आशंकासे मेरा अन्तःकरण झुलस गया है। हे प्रभो ! आप यह सब जानते हैं; अिसलिअे अब मुझपर कृपा कीजिअे।

(अनुवादिका— सौ. शारदादेवी वझे, बी. अे., विशारद)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सूचना–'राष्ट्रभारती'में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअे।)

भारतका चित्रमय अितिहास : प्रथम भाग : [लेखक : महावीर अधिकारी। भूमिका : डॉ. रघुवीरसिंह महाराज कुमार। प्रकाशक : आत्माराम अैंड सन्स, दिल्ली। पृष्ठ ३४२, मूल्य छह रुपया। डिमाअी साअीज]

प्रस्तुत पुस्तकमें ३०१ रेखा-चित्रोंके द्वारा प्राग्-अैतिहासिक कालका चित्रण किया गया है। कुल ३२ अध्याय हैं, जिनमें भारतका भूगोल, अितिहास, प्रारंभ-काल, सभ्यता, आर्य-प्रवेश, वैदिकयुग, मौर्यवंश, मौर्य-साम्राज्य, कुषाण-गुप्त-वर्धन साम्राज्य, सिकन्दर-अरब-गजनी-गोरी-गुलाम-खिलजी-तुगलक-लोदी वंशके हमले और राज्य, धार्मिक, सांस्कृतिक, नैतिक आन्दोलनोंका विकास व परिणाम आदिका संक्षेपमें रोचक, सच्चा अेवं चित्रमय विवरण है।

भारतके प्राचीन अेवं अर्वाचीन अितिहासपर बड़े महत्वपूर्ण ग्रन्थ हिन्दीमें प्रकाशित हो चुके हैं। लेकिन प्रत्येक काल अेवं प्रत्येक घटनाको तूलिका द्वारा बहुत कम चित्रित किया गया है। प्रस्तुत पुस्तककी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि किसीको अितिहास-पठनका संकट नहीं महसूस हो सकता, यदि वह अेक बार भी अिसको देख जाय। पुस्तकके चित्र ही पाठकको मजबूर करते हैं कि चित्रसे सम्बन्धित घटनाअें भी वह पढ़ डाले। अिस प्रकार संपूर्ण चित्रमय बनाकर अिस अितिहासको अत्यन्त रोचक, आकर्षक अेवं अुपयोगी कर दिया गया है। निस्संदेह प्रारम्भ-कालके चित्रोंमें कल्पनाका सहारा काफी लिया गया है, लेकिन जहाँ भी अुसके लिअे वास्तविक आधार मिला है, अुसके अनुरूप चित्र बनाअे गअे हैं। अिस प्रकार प्रस्तुत पुस्तक अैतिहासिक घटनाओं, व्यक्तियों, हथियारों, औजारों, बर्तनों, मूर्तियों, युद्धों, आभूषणों, भिन्न-भिन्न युगके कार्यों व विशेषताओं आदिके वास्तविक चित्रोंके द्वारा अितिहासको ही सजीव बनाकर छोड़ते हैं। अेक चल-चित्रकी भाँति भारतका गौरवशाली अितिहास हमारे सामने प्रत्यक्ष हो अुठता है। तत्कालीन कला, संस्कृति, साहित्य, धर्म, नीति, व्यवसाय, शौक आदिका सर्वांगीण चित्र खड़ा हो जाता है। अिस प्रकार यह वास्तवमें अेक सवाक् चित्रपट जैसा बनकर महत्त्वपूर्ण संग्रहालय ही अुपस्थित कर देता है।

अगले संस्करणमें प्रारम्भिक कल्पना-चित्रोंको भी प्रामाणिक आधारोंका जामा पहनाया जाय, तो यह पुस्तक अप्रतिम बन सकती है। चित्र जितने आकर्षक हैं, अुतनी आकर्षक सब घटनाअें नहीं लिखी गअी हैं, जिसका कारण अितिवृत्तात्मकता है। अर्थात् यह बहुत थोड़ी जगह हुआ है। चित्रोंके समान ही घटनाओंके विवरणोंको भी रोचक ढंगसे लिखनेका प्रयत्न किया जाअेगा, अैसी हमें अुम्मीद है।

तथापि यह सारा प्रयास बहुत ही प्रयत्न व श्रमका रहा है अेवं वस्तुको अधिकृत बनानेकी पूरी कोशिश की गअी है। केवल छात्रोंकी दृष्टिसे न लिखी होनेके कारण यह 'कोर्स-बुक' जैसी नहीं बनी है, यह आनन्दकी बात है।

लेखक-प्रकाशकको हम अिस महत्वपूर्ण प्रयासके लिअे बधाअी देते हुअे आशा करते हैं कि अिसके अगले भाग भी अधिकाधिक सुन्दर रोचक अेवं महत्वपूर्ण निकल सकेंगे। **--लक्ष्मीनारायण भारतीय**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य-साधनाके पथपर :

हमें यहाँ हिन्दीसे ही मतलब है। कौन अैसा हिन्दी-सेवी है जो कहे कि वह हिन्दीका अनन्य भक्त नहीं; निःस्वार्थ सेवी नहीं। साहित्य-गगनमें दमकनेवाले जाज्वल्यमान नक्षत्र महा-पण्डित राहुल, मैथिलीशरण, स्व० प्रेमचन्द, स्व० प्रसाद, पन्त, निराला, माखन, महादेवी, रामनरेश, बच्चन, दिनकर, 'नवीन', बेनीपुरी, अुदयशंकर, नरेन्द्र और अज्ञेय, और भी दर्जनों नाम अुन साधकोंके जोड़े जा सकते हैं अिस नामावलिमें, जिन्होंने अपनी साधना तब आरम्भ की थी जब हिन्दी हेय समझी जाती थी, अुसे गँवारू बोली कहा जाता था और अिनका मार्ग बड़ा बीहड़ तथा घोर कण्टकाकीर्ण था। हिन्दीको जनताकी भाषा बनानेमें, अुसके प्रति राष्ट्रीय श्रद्धा, भक्ति और प्रेम अुत्पन्न करनेमें अिन्होंने अपना सारा जीवन अर्पण किया। अपने शरीरके स्वस्थ रक्तको प्रस्वेद बनाकर हिन्दीके बीजको सींचा और अुसे सघन छायादार विशाल वटवृक्ष बनाया। वे सामने आअे हुअे संघर्षों और तूफानोंसे भागे नहीं। अुनके जीवनके क्षितिजपर अनगिनती मुस्कुराते आशाभरे प्रभात आअे, दिन-दोपहर ढले, निराशाकी तिमिरावृत काली रातें आअीं, दुख-दर्द-पीड़ा, अभाव, अपमान, आफतें वर्षोंतक अिन्होंने सहे; किन्तु साँझ-सकारे वे साधनाके पथपर बढ़ते ही चले गअे। चल पड़े थे ये साधनाके पथपर मनचले मचल-पड़े स्वभावके। कुछ लोगोंने जाने-अनजाने अिनको भूला भटका बताया, गुमराह, भ्रान्त कहा, किसीने पलायनवादी और किसीने कुछ। किन्तु ये मौनव्रती साधक हिन्दी-जनताके लोक-जीवन और लोक-संस्कृतिको समर्थ अेवं समृद्ध बनाते ही चले गअे। भारतकी राष्ट्रीय भावनाओंको अिन्होंने वाणी दी। अिनमेंसे अधिकांशकी साधनाने जन-जागरणमें महत्वपूर्ण सहयोग दिया। आखिर ये भी हमारी ही तरह हाड़-माँस-चामके बने हुअे बेचारे मानव ही तो रहे। अिनकी भी अपनी अिच्छाअें, अुमंगें रहीं--ख्वाहिशें रहीं। सत्य-शिव-सुन्दरकी अपनी साधनामें ये बिड़ला, दाल-मिया या सिंघानिया नहीं बन गअे। अिनकी कलमकी निबकी नोकने अिन्हें शिवकी तरह फक्कड़ बनाया, सत्य हरिश्चन्द्रकी तरह अपने स्वाभिमानपर अटल और अितने कठिन कठोर परिश्रमके बाद भी, अिनकी साधना प्रसन्न होकर सुन्दर सम्पदाके रूपमें अिनके घर नहीं आअी। नौन-तेल-लकड़ी और कपड़ेकी चिन्ता-चिताने अिनको खूब झुलसाया। कुछ साधकोंके हमने अत्यन्त निकटसे दर्शन किअे हैं, सुख-दुखको न गिननेवाले ये मनस्वी साधक हैं। कभी-कभी सुदामाके चावलोंकी टूटी कनी और मूँगकी दालके दो दल भी अिनकी हाँडीमें हमने नहीं देखे। चटनी-अचार-मुरब्बों, मसालों और मेवाकी और साक-सब्जीकी बात तो बहुत दूरकी! अिनके कमरेमें घुसे तो धूलि-धूसरित अस्तव्यस्त पुस्तकें और जिधर तिधर बिखरे पत्र-पत्रिकाओं और चिट्ठी-पत्रियोंके ढेर देखे। प्रगतिशीलता अिनकी देहरीपर दुहाअी देती है। बहुत कम धुला धोती-कुर्ता या कमीज ही अिनका साज शृंगार है। देशकी आजादीके लिअे अपनी निर्भय वाणीके पुरस्कारमें अिन सरफरोशीकी तमन्ना-वालोंने स्वच्छन्द निरंकुश शासनके पाशविक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अत्याचार सहे किन्तु ये सहमे नहीं, झिझके नहीं। अिनकी दीपशिखा बुझी नहीं। बढ़ते ही चले गअे! अिन्होंने पराधीनताके युगकी कहानीका और दुनियाकी घातभरी बातोंका भण्डाफोड़ किया। अिनके पास प्यार और दुलार था जिसे अिन्होंने खूब लुटाया। हमने अिनकी कृतियोंमें प्रकृतिके रहस्यों और मानव-मनकी सूक्ष्मतम आकांक्षाओंको पढ़ा। अुनके गीतों और संगीतोंकी साधनाने भारतीय साहित्यको, अुसकी आत्माको वसन्तका सौन्दर्य और सौरभ दिया, जिससे हिन्दीका मस्तक विश्वमें हिमालयकी तरह सर्वोच्च होगा। अिस महती साधनाका स्वागत शत!

—ह० श०

दोनों ओर भय है

विश्व-विद्यालयोंमें शिक्षाके माध्यमपर गुजरातमें फिरसे विचार तथा चर्चा हो रही है। अिसे हम बड़ा ही शुभ चिह्न मानते हैं। अिस प्रश्नपर जितना भी विचार किया जाय थोड़ा है। हमारे भावी नागरिकोंका तथा राष्ट्र-निर्माणका यह प्रश्न है। नागरिकोंकी दृष्टिसे तथा अुनकी योग्यता, ज्ञान, अधिकार तथा जनतान्त्रिक राजकार्यमें अुनका सहयोग प्राप्त हो अिसका विचार किया जाय तो मातृभाषाका माध्यम ही अधिक हितकर प्रतीत होगा। परन्तु राष्ट्र-निर्माणकी विशाल दृष्टिसे देखा जाय तो सब विश्वविद्यालयोंमें समान रूपसे शिक्षाका माध्यम राष्ट्रभाषा हिन्दीको रखना ही आवश्यक प्रतीत होगा। जनतांत्रिक राज्योंके लिअे अति आवश्यक जनसंपर्क बनाअे रखनेके लिअे जनभाषा अर्थात् प्रादेशिक भाषाओंको अुचित महत्व देना ही होगा। परन्तु हमारी अेक राष्ट्रीयताकी भावना बनाअे रखनेका अति प्रबल साधन हमारी राष्ट्र-भाषा है अिसको हम कभी भुला नहीं सकते। यह अवश्य भय है कि यदि हम प्रादेशिक भाषाओंको अधिक महत्व देंगे तो हमारी प्रान्तीयता अुभरेगी और हमारी राष्ट्रीय भावना खण्ड-खण्ड हो जायगी। और यह भय अब केवल काल्पनिक ही नहीं, यह तो हम गत कुछ महीनोंमें बम्बअी, अुत्कल आदि प्रदेशोंमें जो करुण अेवं दुखद घटनाअें घटीं अुनपरसे समझ ही गअे हैं। केवल राष्ट्रभाषा हिन्दीको विश्व-विद्यालयोंकी शिक्षाका माध्यम बनानेसे जनसम्पर्क छूट जानेका भय भी केवल कल्पनाका विषय नहीं। हो सकता है कि अुससे अँग्रेजी जाननेवाले अेक वर्गकी तरह हिन्दी जाननेवालोंका भी अेक वर्ग तैयार हो जाय और वह अपनेको सामान्य जनतासे अलग मानने लगे। अिस प्रकार दोनों ओरसे कुछ-न-कुछ भय बना रहता है, अिस कारण हम सदासे अिस बातका ही प्रतिपादन करते आअे हैं कि विश्व-विद्यालयोंमें शिक्षाका माध्यम प्रादेशिक भाषा अेवं राष्ट्रभाषा हिन्दी दोनों ही होने चाहिअे।

मध्यम मार्ग ग्रहण करना होगा

कुछ लोगोंका कहना है कि माध्यमिक शिक्षा सारीकी सारी यदि मातृभाषा अथवा प्रादेशिक भाषा द्वारा दी जायगी तो विश्व-विद्यालयोंमें राष्ट्रभाषा हिन्दीको शिक्षाका माध्यम बनानेसे जनताके साथ सम्पर्क बना रहेगा और राष्ट्रीय दृष्टिसे भी विद्यार्थियोंको शिक्षाका लाभ प्राप्त हो सकेगा। अुसी प्रकार दूसरी ओरसे यह तर्क दिया जाता है कि शिक्षाका माध्यम तो अुच्चसे अुच्च शिक्षाके लिअे भी प्रादेशिक भाषा ही रहे परन्तु स्नातक होनेके अन्तिम वर्षतक विद्यार्थीके लिअे हिन्दीकी शिक्षा अनिवार्य बना दी जाय तो अुससे दोनों प्रकारके लाभ होंगे। विद्यार्थीको अपनी भाषाके माध्यमसे शिक्षा और ज्ञान प्राप्त करनेकी सुविधा होगी और राष्ट्रभाषा हिन्दीका पर्याप्त ज्ञान भी अुसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्त होगा। दूसरा भी अेक तर्क है। हिन्दी तथा प्रादेशिक भाषाओंमें अधिक साम्य है और हमारी सांस्कृतिक भावनाअें भी, जिनका भाषाके रूपपर पूरा प्रभाव पड़ता है, अेक समान होती हैं। अिसलिअे अेक पक्षके अनुसार राष्ट्रभाषाका माध्यम होनेपर भी जनसंपर्क छूटनेका भय नहीं और दूसरे पक्षके विचारसे प्रादेशिक भाषाका माध्यम होते हुअे भी राष्ट्रभाषाका प्रेम अेवं हमारी अेकराष्ट्रीयताकी भावना अक्षुण्ण बनी रहेगी। हम यह भी मानते हैं कि दोनों ओरकी दलीलें सारगर्भित हैं और दोनोंके तर्कोंकी सचाअीका पर्याप्त आधार प्राप्त है। यहाँ हम तो केवल अितना ही कहते हैं कि हमें मध्यम मार्गका अनुसरण करना होगा। दोनों प्रकारके भयोंसे बचना होगा और जनतांत्रिक दृष्टिसे जनताकी सेवा करने तथा राष्ट्रीय भावनाओंको पुष्ट करनेका प्रयत्न करना होगा।

प्रत्येक प्रादेशिक राज्यके विद्वान्, साहित्यिक अेवं शिक्षा-शास्त्रियोंको मिलकर अिस बातका निर्णय करना चाहिअे कि अुनके अपने प्रदेशके लिअे विश्वविद्यालयकी शिक्षाका माध्यम क्या होगा। यह अुनके अपने अधिकारकी बात है। परन्तु सैद्धांतिक अेवं व्यावहारिक दृष्टिसे हम स्वयं तो अिस निर्णयपर पहुँचे हैं कि विश्वविद्यालयोंमें शिक्षाके माध्यमके रूपमें प्रादेशिक भाषा तथा राष्ट्रभाषा दोनोंको स्वीकार करना चाहिअे और मेडिकल, अिन्जीनियरिंग, फोरेस्टरी आदि जो भी अखिल भारतीय स्तरके विषय हों अुनकी शिक्षा राष्ट्रभाषा हिन्दीके माध्यमसे हो और बाकी दूसरे विषयोंकी शिक्षाका माध्यम अपने-अपने प्रदेशमें वहाँकी प्रादेशिक भाषाअें रहें। गुजरातमें अिस विषयपर बहुत चर्चा तथा विचार हो रहा है यह प्रसन्नताकी बात है। हम आशा करें कि अिस चर्चा अेवं विचारके परिणामस्वरूप गुजरात जो निर्णय करेगा वह सैद्धांतिक अेवं व्यावहारिक दृष्टिसे अुपयुक्त निर्णय होगा और अुसके द्वारा दूसरे प्रदेशोंका मार्ग-दर्शन भी हो सकेगा।

अेक दुखद समाचार

पत्रोंमें प्रकाशित समाचारोंसे ज्ञात हुआ है कि स्कूलों तथा कालेजोंमें शिक्षा-सम्बन्धी अपनी नीतिको स्पष्ट करते हुअे मद्रास सरकारने अेक श्वेतपत्रमें यह कहा है कि 'जहाँ तक मद्रास राज्यका सम्बन्ध है स्कूलों और कालेजोंमें मातृभाषा तमिल प्रथम अनिवार्य भाषा, अंग्रेजी द्वितीय अनिवार्य भाषा और हिन्दी तृतीय वैकल्पिक भाषा रहेगी और अिसी आधारपर १९६५ तककी योजना बनाअी जाअेगी।'

श्वेतपत्रमें अपने अिस निर्णयके पक्षमें सरकारकी ओरसे कुछ तर्क भी दिअे गअे हैं। प्रतीत होता है कि राष्ट्रभाषा हिन्दीके सम्बन्धमें प्रतिक्रियाअें दक्षिणमें हो रही हैं अुनसे मद्रास राज्यके मन्त्रीगण प्रभावित हुअे हैं और अुन्होंने अिस प्रकारका निर्णय किया है। हम नहीं चाहते कि हिन्दी किसी भी प्रदेशपर लादी या थोपी जाय परन्तु जब मद्रास राज्य सरकार अपने श्वेतपत्रमें अिसी दलीलका आश्रय ले प्रदेशकी शिक्षा-नीतिमें हिन्दीको तीसरा स्थान देती है और अुसे अनिवार्य नहीं परन्तु वैकल्पिक शिक्षाका विषय बनाती है तब आश्चर्य होता है। अुसमें जो दो-अेक तर्क दिअे गअे हैं वे भी थोथे प्रतीत होते हैं। श्वेतपत्रमें कहा गया है कि (१) हिन्दी कालेजोंमें वैज्ञानिक अेवं व्यव-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सायात्मक शिक्षाका माध्यम नहीं हो सकती किन्तु अंग्रेजी ही रह सकती है (२) अंग्रेजी आधुनिक विचारधाराका ज्ञान करा सकती है, हिन्दी नहीं। स्पष्ट है कि ये दोनों दलीलें हिन्दीपर अन्याय करनेवाली हैं। हिन्दीकी क्षमताके बारेमें जो सन्देह प्रकट किया जाता है वह निराधार है परन्तु दक्षिण भारतमें, संभवतः सारे अहिन्दीभाषी प्रदेशोंमें यह सन्देह फैलता जा रहा है। अिसमें हिन्दीका दोष नहीं है परन्तु हिन्दीके विद्वानोंका दोष अवश्य है क्योंकि विज्ञान अेवं शास्त्रीय विषयोंकी पुस्तकें समयपर तैयार कर वे राष्ट्रके सन्मुख अुपस्थित नहीं कर सके हैं। जो लोग अंग्रेजीमें ही अपने विचार प्रकट करनेके आदी हो गअे हैं अुन्हें हिन्दीमें अपने विचार प्रकट करनेमें कुछ कठिनाअी हो भी तो अुसे हिन्दीका दोष नहीं माना जाअेगा।

अंग्रेजीका मोह

हिन्दीका जो विरोध आज हो रहा है अुसका मुख्य कारण तो हमारे शिक्षितोंका अंग्रेजीके प्रति मोह है। अिसमें सन्देह नहीं कि अुन्होंने अंग्रेजी बड़े परिश्रमसे पढ़ी है और अुसपर प्रभुत्व भी प्राप्त किया है। अुन्हें अंग्रेजी बोलने-लिखनेमें बड़ी सुविधा प्राप्त है अिसलिअे वे अंग्रेजीको बनाअे रखना चाहते हैं और ९९ प्रतिशत जनतापर अुसे लादना चाहते हैं। वे कहते हैं कि अंग्रेजी अब विदेशी भाषा नहीं, भारतकी भाषा बन गअी है, अुसे हमने अपना लिया है। परन्तु वे अितना भूल जाते हैं कि कितने लोगोंने अुसे अपनाया है। अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगोंकी संख्या भारतकी जनसंख्याकी तुलनामें १/२ प्रतिशत भी नहीं होगी। और अैसी थोथी दलील करनेवालोंमें हम राजाजी जैसोंको भी पाते हैं तो बड़ा आश्चर्य होता है। हिन्दी लादने या थोपनेकी बात करते हुअे अिन लोगोंको जरा भी संकोच नहीं होता, परन्तु आम जनतापर वे अंग्रेजीको लादना अवश्य चाहते हैं! अंग्रेजी विदेशी भाषा है अिसका प्रमाण तो स्पष्ट है। दो सौ सालके प्रयत्नोंके बावजूद कुछ अिनेगिने लोग ही अच्छी अंग्रेजी सीख पाअे हैं। हमारे पुराने संस्कार तथा परम्पराका अुसमें कभी प्रतिबिम्ब नहीं पड़ा, जिससे भारतकी आत्मा अुसके प्रति आकर्षित हो। अैसी दशामें भावी प्रजापर अंग्रेजीको अनिवार्य रूपसे लादना और भारतकी ही भाषा जो अन्तर-प्रान्तीय व्यवहारके लिअे अधिक अुपयोगी हो सकती है अुसका अनादर कर लड़कोंको अुसे सीखनेमें अुत्साहित न करना अुन बच्चोंके प्रति सरासर अन्याय है——हम अुसे सन्तान-द्रोह ही कहेंगे जो हमारी भावी अुन्नतिके लिअे बहुत हानिकर सिद्ध होगा।

अपने-अपने प्रदेशकी प्रादेशिक भाषाओंको महत्व देना अति आवश्यक है अिसलिअे तमिलको प्रथम अनिवार्य स्थान देना तो समझमें आता है परन्तु अँग्रेजीको दूसरा अनिवार्य स्थान देकर अुसे जो महत्व दिया गया है, अुससे केवल राष्ट्रभाषाकी शिक्षाको ही हानि नहीं पहुँचेगी वरन् तमिलकी शिक्षाको भी हानि पहुँचेगी और अुसका महत्व भी घट जाअेगा। बिहार प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलनकी रजत-जयन्तीके प्रसंगपर अपने अध्यक्षीय भाषणमें श्री दिनकरजीने ठीक ही कहा है कि हमें यह "नारा लगाना चाहिअे कि अँग्रेजीके शिलासनके नीचेसे भारतकी सभी भाषाओंको मुक्त करो"। आज अँग्रेजीको जो अस्वाभाविक पद प्राप्त हो गया है अुससे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुसे अपदस्थ करना ही हमारा मुख्य कर्तव्य होना चाहिअे।

पृथक् हिन्दी मंत्रणालयकी माँग क्यों ?

हिन्दी साहित्य सम्मेलनकी रजत-जयन्ती गत फरवरीके अन्तिम सप्ताहमें सफलतापूर्वक मनाअी गअी। अिसके लिअे हम अुसके संचालकोंकी प्रशंसा करते हुअे अुनका अभिनन्दन करते हैं। अुसके अध्यक्ष स्थानसे हिन्दीके ख्यातनाम कवि तथा विचारक श्री दिनकरजीने बड़ा ही मार्मिक और विचारपूर्ण भाषण दिया। अुन्होंने हिन्दीकी महत्वपूर्ण समस्याओंपर प्रकाश डाला और राष्ट्रप्रेमी साहित्यिकोंके समक्ष बहुत अूंचा आदर्श अुपस्थित किया। संसार भारतसे आज किस प्रकारकी आशा रखता है और अुसे पूरा करनेके लिअे हमें कितना अूंचा अुठना होगा, कितना त्याग करना होगा और कैसा कर्मयोग सिद्ध करना होगा अिसका भी अुन्होंने अपनी सुन्दर भाववाही वाणीमें अेक चित्र-सा खींच दिया। हम आशा करें कि श्री दिनकरजीके अिस मननीय भाषणपर हमारे साहित्यिक अेवं विद्वान् पूरा ध्यान देंगे।

हिन्दी मंत्रणालयकी माँगके सम्बन्धमें श्री दिनकरजीने अपने अिस भाषणमें अेक बहुत ही महत्वकी बात कही है: "केवल हिन्दी मंत्रणालयकी माँग अपेक्षाकृत छोटी माँग है। सरकारसे माँग सर्व भाषा मंत्रणालय अथवा केवल भाषा मंत्रणालयकी की जानी चाहिअे, जो अेक ओर जहाँ राजभाषाके विकास और प्रचारकी व्यवस्थाको, वहाँ दूसरी ओर अिस बातपर भी निगरानी रखे कि भारतकी प्रत्येक राष्ट्रभाषाका सम्यक् विकास हो रहा है या नहीं, और वे प्रत्येक क्षेत्रमें अँग्रेजीका स्थान लेनेकी ओर बढ़ रही हैं या नहीं। हिन्दीका आन्दोलन भारतकी सभी भाषाओंके आन्दोलनका रूप ले यह अुचित बात है।"

दिनकरजी जिस विशाल दृष्टिको अपनानेकी बात करते हैं अुसकी हम सराहना करते हैं। अुन्होंने सुष्ठु भाषामें बहुत सुन्दर भाव प्रकट किअे हैं। परन्तु जिन्होंने केन्द्रीय सरकारसे हिन्दी मंत्रालयकी माँग की है अुनकी भावना भी अिससे भिन्न नहीं। संविधानमें राजभाषा हिन्दीके संबंधमें अेक विशेष प्रकरण है और केन्द्रीय अेवं राज्य सरकारोंपर अुसके प्रचारका विशेष रूपसे भार डाला गया है अिसलिअे हिन्दी मंत्रणालयकी माँग की गअी है। परन्तु प्रादेशिक भाषाओंका पूरा विकास हो और प्रदेशोंके कार्य प्रादेशिक भाषा ही में किअे जाअें अिसके लिअे भी वे सदा प्रयत्नशील रहे हैं और रहेंगे।

विश्व आध्यात्मिकताकी ओर जा रहा है

श्री दिनकरजीने अपने चिन्तनसे जो नवनीत निकाला है अुसके प्रति भी हम पाठकोंका ध्यान खींचना चाहते हैं। हम सब आज अेक चौराहेपर—चौराहा नहीं तो दोराहेपर तो अवश्य आ खड़े हैं। देखना है हम किस राहको पसन्द करते हैं और हमारी दुविधा कब समाप्त होती है। श्री दिनकरजीके भाषणसे लिअे गअे निम्नलिखित अवतरणपर सबको शान्तिपूर्वक चिन्तन अेवं विचार करनेकी आवश्यकता है—

"अन्तर-राष्ट्रीय विश्वका अेक युग समाप्तिपर है और अुसीके साथ बुद्धिवादी बौद्धिकता भी समाप्त हो रही है। बुद्धिवादके आविर्भावके पूर्व मनुष्यकी सभी महान् अुप-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लब्धियाँ संबुद्धि (अिनटयुशन) से आअी थीं। किन्तु, विज्ञान और बुद्धिवाद जब जोरसे चमकने लगे तब संबुद्धिकी ज्योति मन्द पड़ गअी और मनुष्यने अुसे संदिग्ध ज्ञानका साधन मानकर छोड़ दिया। परन्तु, शताब्दियों तक बुद्धिवादका सेवन कर लेनेके बाद वह फिर किसी अैसी दिशाकी ओर देखने लगा है जो लगभग संबुद्धिकी दिशा है, जो लगभग रहस्यवादका देश है। संसार अुस बिन्दुपर पहुँच रहा है जहाँ जड़से चेतनकी अुत्पत्ति होगी, जहाँ भौतिकतासे अध्यात्मकी किरणें फूटेंगी और जिस युगके नेता आँकड़े अेकत्र करनेवाले वैज्ञानिक नहीं, प्रत्युत, गांधी या अरविन्द अथवा गांधी और अरविन्द होंगे।

"अध्यात्म और रहस्यवाद फिरसे वापस आ रहे हैं, अिस संवादसे किसीको भी घबड़ानेकी आवश्यकता नहीं है। आध्यात्मिकता असत्य कल्पनाओंमें आस्था रखनेको नहीं कहते, न रहस्यवाद रंगीन कुहासेका नाम है। महात्मा बुद्ध निरीश्वरवादी थे अेवं मरणोत्तर जीवन-विषयक सभी प्रश्नोंको अुन्होंने अव्याकृत कोटिमें डाल रखा था, किन्तु आध्यात्मिक और किसी हदतक, रहस्यवादी गौतम बुद्ध भी थे। अध्यात्म असत्य कल्पनाओंको नहीं कहते हैं। यह तो वस्तुओंकी गहराअीका नाम है, यह तो पदार्थोंके अुस अदृश्य पक्षकी संज्ञा है जिसे विज्ञान नापनेमें असमर्थ है। विद्याकी कोअी भी शाखा, यहाँ तक कि पत्थर और खनिजका अध्ययन करनेवाला शास्त्री भी, जब विश्लेषण करते-करते वस्तुकी गहराअीमें पहुँच जाता है, तभी वह आध्यात्मिक हो अुठता है। विज्ञान जैसे-जैसे आगे बढ़ता है अभिनव चिंतनका भी गहराअीकी दिशामें अुत्तरोत्तर विकास होता जा रहा है और अैसा लगता है कि हम सचमुच ही अुस बिन्दुके पास पहुँचते जा रहे हैं जहाँ द्रव्यको समझनेके लिअे हमें आत्माकी आवश्यकता पड़ेगी, जहाँ यांत्रिक और आध्यात्मिक तत्वके बीच हमें सामंजस्य लाना पड़ेगा।"

—मो० भ०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती' के नियम और अुद्देश्य

(सम्पादकीय)

१. 'राष्ट्रभारती' प्रतिमास १ ता० को प्रकाशित होती है।

२. 'राष्ट्रभारती' भारतकी विशुद्ध अन्तर-प्रान्तीय भाषा, साहित्य और संस्कृतिकी प्रतिनिधि पत्रिका है।

३. 'राष्ट्रभारती' का अुद्देश्य समस्त अुच्च भारतीय भाषाओंके प्राचीन अर्वाचीन साहित्यका भारतकी राष्ट्रभाषा हिन्दी द्वारा रसास्वाद कराना है, जिससे वह सब भारतीयोंकी अपनी वस्तु बन सके।

४. 'राष्ट्रभारती' का दृष्टिकोण प्रगतिशील, रचनात्मक, सर्व समन्वय—सर्वोदयकारी है। अिसमें विवादग्रस्त, राजनीतिक, साम्प्रदायिक, या दल-गत नीतिके लेख आदि प्रकाशित न होंगे।

५. 'राष्ट्रभारती' में हिन्दीके साथ साथ--

(१) असमिया (२) मणिपुरी (३) बंगला (४) अुड़िया (५) नेपाली (६) काश्मीरी (७) सिन्धी (८) पंजाबी (९) गुजराती (१०) मराठी (११) तमिल (१२) तेलुगु (१३) कन्नड़ (१४) मलयालम (१५) संस्कृत (१६) अुर्दू और अन्तर-राष्ट्रीय विदेशी साहित्यिक भाषाओंकी सुन्दर ज्ञानपोषक, मनोरंजक, सुरुचिपूर्ण श्रेष्ठ रचनाअें भी प्रकाशित होंगी।

लेखक महानुभावोंसे

६. 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ, हमारे पास अपनी पूर्व प्रकाशित रचना सामग्री मत भेजिये। जिस रचनाको आप 'राष्ट्रभारती' में भेजें अुसे अन्य हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओंमें न भेजें। अस्वीकृत रचनाको वापस पानेके लिअे दो आनेका पोस्टेज भेजनेकी कृपा करें।

७. जो कुछ मैटर प्रकाशनार्थ भेजें, साफ नागरी टाअिप कापीमें भेजें अथवा हाथकी लिखावटमें कागजके अेक ही ओर साफ सुथरी, सुवाच्य नागरी लिपिमें लिखकर भेजें। कविताओंके अुद्धरण, अवतरण आदि बहुत ही साफ लिखे होने चाहिअे। लेखक अपना पूरा-पूरा नाम और पता अवश्य लिखें।

निवेदक--

सम्पादक, "राष्ट्रभारती"

हिन्दीनगर, वर्धा, Wardha (M. P.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती' को स्वावलम्बी बना दें

सविनय सूचना--यह कि प्रत्येक हिन्दी-प्रेमीका कर्तव्य है कि वह कम-से-कम 'राष्ट्रभारती' का अेक-दो ग्राहक अवश्य बना दें।

अिसलिअे कि राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रति कुछ आपका भी तो कर्तव्य है। भारतके काश्मीरसे लेकर कन्याकुमारी तक और आसामसे लेकर सोमनाथ-सौराष्ट्र तक लगभग सभी प्रतिष्ठित विद्वान् साहित्यकारोंका कहना है कि '**राष्ट्रभारती**' राष्ट्रभाषा हिन्दीमें भारतीय साहित्यकी अपन ढंगकी बहुत सुन्दर और अनूठी मासिक पत्रिका है। हाथके कंगनको आरसी क्या ? अिस वर्षके चारों अंक देखिअे न !

साधारण वार्षिक मूल्य ६) रु. और स्कूल-कालेजों तथा लाअिब्रेरियोंके लिअ रियायत ५) रु. वार्षिक मनीआर्डरसे।

निवेदक--

व्यवस्थापक, 'राष्ट्रभारती'

हिन्दीनगर, वर्धा (म. प्र.)

मुद्रक तथा प्रकाशक:--मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस--राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरद्वार भारती

मई
१९५६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ६] राष्ट्रभारती, विषय-सूची मई-१९५६ [अंक ५

[बिहार, मध्यप्रदेश, भोपाल, सौराष्ट्र आदि राज्योंके शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत पत्रिका]

* अिस अंकमें पढ़िअे *

('राष्ट्रभारती' के प्रत्येक अंकका प्रत्येक पृष्ठ पठन-मनन योग्य सामग्रीसे पूर्ण रहता है।)

		लेखक	पृ० सं०
१. लेख :			
१. जिसने तप किया	...	सर्वपल्ली डॉ० राधाकृष्णन्	२८३
२. भारतीय संस्कृति	...	स्व० साने गुरुजी	२८४
३. तुलसीदासका व्यापक प्रभाव	....	प्राध्यापक विनयमोहन शर्मा अेम. अे.	२८५
४. वैदिक वाङ्मय और लोक साहित्य	...	श्री श्याम परमार	२८७
५. नाटककार अश्क	...	डॉ० द्वारकाप्रसाद अेम. अे.	२९१
६. मजाज़ लखनवी	...	श्री हँसराज रहबर	३०२
७. 'सत' संज्ञक रचनाओंकी परम्परा	...	श्री अगरचन्द नाहटा	३०७
८. भाषा-भूमिके परमाणु अक्षर	...	विदुषी सावित्री देवी अेम. अे.	३१५
२. कविता :			
१. गीत	...	श्री 'नीरज' अेम. अे.	३०१
२. गीत	...	श्री वीरेन्द्र मिश्र	३१४
३. प्रार्थना	....	श्री जगदीशचन्द्र	३१८
४. मोह	....	श्री नन्द किशोरराय	३३८
३. अेकांकी :			
१. महा-निबन्ध (गुजराती)	....	श्री गुलाबदास ब्रोकर अनु०--श्री गौरीशंकर जोशी	३१९
४. कहानी :			
१. घण्टोंकी आवाज	....	श्री डिमितर तालेव अनु०--श्रीमती कमल आर्य, लन्दन	३११
२. वापसी (रुसी)	....	श्री अिलेक्जे टालस्टाओी अनु०--श्री अेम. अहमद 'फिरदौसी'	३३१
५. देवनागर :	...	(तेलुगु, मराठी)	३३९
६. साहित्यालोचन :	...	श्री विजयशंकर त्रिवेदी श्रीमती शशि तिवारी	३४५
७. सम्पादकीय :	...	...	३४७

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

रियायत— समितिके सभी प्रमाणित प्रचारकों, केन्द्र-व्यवस्थापकों और स्कूल-कालेजों तथा सार्वजनिक पुस्तकालय-वाचनालयोंको अेक वर्षतक केवल ५) रु वार्षिक चन्देमें मिलेगी।

पता:—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[समग्र भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

सम्पादक

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

वर्ष ६] मअी-१९५६ [अंक ५

जिसने तप किया

मैथ्यू अरनाल्डका कथन है कि स्वभाव माधुर्य तथा ज्ञान सभ्यताके लक्षण हैं। स्वभाव माधुर्य, अुदार दृष्टि, आत्मबल, धैर्य, ज्ञान अेवं साहस संस्कृत मस्तिष्कके चिह्न हैं। अेक किम्वदन्ती है कि भूत-प्रेत विना रक्त-पान किअे नहीं बोलते। ठीक अुसी प्रकार हमारे महान् स्वप्न विना हृदय-रक्तका पान किअे कभी साकार नहीं होते। कोअी महान् कार्य बिना तप, बिना आत्माके क्लेशपूर्ण प्रयासके, सफल नहीं हो सकता। 'अुपनिषद' का वचन है कि ब्रह्म तपकी शक्तिके द्वारा ही अनन्त रूप सृष्टिकी रचना करता है— 'स तपो तप्यत, स तपस्तप्त्वा अिदम् सर्वम् असृजत' (तैत्तरीय अुप० २, ६) अुसने तप किया, तप करके अुसने अिस सबकी सृष्टि की। संसारमें श्रेष्ठ महान् कार्य वही करते हैं जो सांसारिक सुखोंको लात मारकर अनेक कष्ट अुठाकर नैराश्य पूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं। प्राचीन भारतके ऋषि निर्भय थे। अुन्हें मृत्युका भय नहीं था। तथागत बुद्धने अपना महल छोड़ा, तकलीफें बर्दाश्त कीं, पर अुन्होंने अेक नअी सृष्टि की। महात्मा अीसाका सारा जीवन तो व्यथा की ही कथा है। जिसने महान् कष्ट नहीं अुठाया वह अपने अुद्देश्यकी सिद्धि—मंजिल तक नहीं पहुँचा। कष्ट सहन करनेमें हम लोग अभी कच्चे हैं।

—सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मराठीसे

भारतीय संस्कृति

—स्व० साने गुरुजी

[संस्कृति शब्दका अर्थ जानते हो ? करोड़पति सेठ पैसा देकर काम करा सकता है, किन्तु संस्कृति नहीं खरीद सकता । यह पाश्चात्य विचारक स्माअिल्स कहता है । महात्मा टालस्टाय कहते हैं संस्कृति ही सुखकी दुश्मन है । सुखी सबसे ज्यादा वही है जो कुछ भी पढ़ा-लिखा नहीं है । आंशिक संस्कृति बन-ठन, बनाव-चुनाव, छीना-झपटी और हड़प-झड़पकी तरफ दौड़ती है; सम्पूर्ण संस्कृति सादगीकी ओर बढ़ती है । और अेमर्सनका कथन है; बड़ी-से-बड़ी बातको सरल-से-सरल ढंगसे कहना अुच्च संस्कृतिका प्रमाण है । जहाँ संस्कृति है वहाँ सम्यक् चारित्र्य है, सम्यक् ज्ञान है, सम्यक् आजीविका है, स्वभावमें सरलता, सरसता, सर्वप्रियता, सर्वार्थसिद्धि, सहनशीलता, सहानुभूति, समवेदना, सहायता, सत्संकल्प, संगठन, संचय, सन्यास, साधना, साधुजीवन साहित्य, संगीत, कलाकी अुपासना, संयम और सुसंभाषण, साफदिल, सामंजस्य, सुख-दुःखे समेकृत्वा--अिन सबका संस्कृतिके अन्दर समावेश होता है । नीचे स्वर्गीय साने गुरुजीके विचार पढ़िअे । —सम्पादक]

भारतीय संस्कृतिका नाम हम बार-बार सुनते हैं--'यह बात भारतीय संस्कृतिको शोभा नहीं देती,' 'यह भारतीय संस्कृतिके खिलाफ है ।' 'यह भारतीय संस्कृतिके लिअे हानिकारक है ।'--अित्यादि वाक्य हम आये दिन लेखों और भाषणोंमें पढ़ते और सुनते हैं । अैसे अवसरपर भारतीय संस्कृतिका क्या अर्थ होता है ? यह समझ लें । यहाँ तो भारतीय संस्कृतिकी जो अेक विशेष दृष्टि है, अुसीसे हमारा मतलब है । यह दृष्टि कौनसी है ?'.....

भारतीय संस्कृति हृदय और बुद्धिकी पूजा करनेवाली अुदार भावना और निर्मल ज्ञानके योगसे जीवनमें सुन्दरता लानेवाली है । भारतीय संस्कृतिका अर्थ है कर्म, ज्ञान, भक्तिकी जीती जागती महिमा--शरीर, बुद्धि और हृदयको सतत सेवामें लीन करनेकी महिमा ।

भारतीय संस्कृतिका अर्थ है सहानुभूति, हमदर्दी । भारतीय संस्कृतिका अर्थ है विशालता । भारतीय संस्कृतिका अर्थ है बिना स्थिर रहे ज्ञानका मार्ग ढूँढ़ते-ढूँढ़ते आगे बढ़ते जाना । संसारमें जो कुछ सुन्दर व सत्य दिखाअी दे अुसे प्राप्त करके बढ़ती जानेवाली ही यह संस्कृति है । वह संसारके सभी ऋषि-महर्षियोंकी पूजा करेगी । वह संसारकी सारी सन्तानकी वन्दना करेगी । संसारके समस्त धर्म-संस्थापकोंका यह आदर करेगी । चाहे जहाँ कभी भी महानता दिखाअी दे, भारतीय संस्कृति अुसकी पूजा ही करेगी । वह आनन्द और आदरके साथ सर्व धर्म संग्रह करेगी ।

भारतीय संस्कृति संग्राहिका--संग्रह करनेवाली है । 'सर्वेषामविरोधेन ब्रह्मकर्म समारभे'- वह कहनेवाली है । यह संस्कृति संकुचितितासे परहेज करनेवाली है । अुससे त्याग, संयम, वैराग्य, सेवा, प्रेम, ज्ञान, विवेक आदि बातें हमें याद आ जाती हैं । भारतीय संस्कृतिका अर्थ है सान्तसे अनन्तकी ओर जाना, अन्धकारसे प्रकाशकी ओर जाना, विरोधसे विवेककी ओर जाना, अव्यवस्थासे व्यवस्थाकी ओर जाना, कीचड़से कमलकी ओर जाना, भेदसे अभेदकी ओर जाना, भिन्नतासे अभिन्नताकी ओर जाना, भारतीय संस्कृतिका अर्थ है मेल, सारे धर्मोंका मेल, सारी जातियोंका-मेल, सारे ज्ञान-विज्ञानका मेल, सारे कालोंका मेल । अिस प्रकारके महान् मेल पैदा करनेकी अिच्छा रखनेवाली, सारी मानव जातिके बेड़ेको मंगलकी ओर ले जानेकी अिच्छा रखनेवाली यह भारतीय संस्कृति है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसीदासका व्यापक प्रभाव

—प्राध्यापक विनयमोहन शर्मा

आधुनिक भारतीय भाषा-कालमें देश और विदेशोंके साहित्य-जगतपर छा जानेवाला तुलसीदासके समान दूसरा कवि ख्यातिलब्ध नहीं हुआ। वे अपने युगमें ही सन्त समाजमें समादृत थे। अुनकी वाणीको जनता भावविभोर हो सुनती थी। मुसलमानोंके आर्तकसे निराश हृदयोंमें अुनके 'रामचरित' ने आशाकी ज्योति आलोकित कर दी थी। वे रामराज्यका सुनहला स्वप्न देखने लगे थे। अुन्हें अैसा प्रतीत होने लगा था मानो भक्तकी वाणीसे भगवान ही बोल रहे हों। अुनके समसामयिक मित्र कवि रहीमने "मानस" की प्रतिष्ठाको अनुभव कर यह दोहा कहा था—

"रामचरित मानस विमल, सन्तन जीवन प्राण।
हिन्दुवानको वेद सम, मनहिं प्रगट पुरान॥"

काशी-वासके समय दक्षिणके सन्त भी अुनका सान्निध्य प्राप्त करनेको अुत्सुक रहते थे। महाराष्ट्रके सन्त अेकनाथने जो रामायण लिखी है अुसपर भी तुलसीका प्रभाव परिलक्षित होता है। अैसा भी अनुमान है कि दोनों सन्तोंका काशीमें कभी मिलन हुआ है। अेक दूसरे महाराष्ट्र सन्त जसवंतने तो अुनकी शिष्यता ही स्वीकार की थी और महीनों अुनके साथ रहकर अनुग्रह प्राप्त किया था। तेलुगुमें त्यागराजके अनेक विनयके पद प्रचलित हैं। अुनकी शैली और भावगरिमा तुलसीकी अनुकृति जान पड़ती है। त्यागराजने तुलसीके ऋणको स्वीकारा भी है। सुदूर दक्षिण केरलमें रामचरितमानसके बालकांड और अयोध्याकांडका मलयालममें पद्यबद्ध अनुवाद हो चुका है। अिसके अनुवादक हैं मलयालम शब्द-कोश-विभागके निरीक्षक श्री वेणीकुलम् गोपालकुरुप। बीस वर्ष पूर्व अुन्होंने यह अनुवाद किया था जिसकी मुद्रित प्रतियाँ अप्राप्य हैं। लेखक द्वितीय संस्करण छपानेकी चिन्तामें हैं। मराठीमें भी बालकांडका पद्यमय अनुवाद प्रकाशित हो चुका है। गद्य अनुवाद तो बहुत पहले प्रकाशमें आ चुका है। अनुवाद-कर्ता नागपुरके ही अेक वृद्ध विद्वान् महाराष्ट्र-सज्जन स्वर्गीय श्री जामदार थे।

तुलसीकी ओर आकर्षित होनेवाले विदेशी विद्वानोंकी भी कमी नहीं है। डा. ग्रियर्सनने रामचरित-मानसको हिन्दुओंकी 'बाअिबल' कहा है। अुन्होंने लिखा है "यदि हम प्रभावकी दृष्टिसे तुलसीदासका महत्त्व निर्धारित करें तो वे अेशियाके तीन चार महान लेखकोंमें परिगणित होंगे।" अंग्रेजीमें हिन्दीके अितिहास-लेखक अेडविन ग्रीकने भी मुक्त कंठसे कहा है "रामचरितमानसके समान समस्त हिन्दी-साहित्यमें कोअी भी पुस्तक नहीं जिसका महलसे लेकर झोपड़ी तक अितना प्रचार हो।" अिसी प्रकार दूसरे अंग्रेजी अितिहास-लेखक लिखते हैं "तुलसीदासका स्थान सर्वोच्च है। अुनका मानस भारतमें ही नहीं, समस्त संसारमें प्रसिद्ध है।" विगत वर्ष रूसमें प्राच्य-विद्याविशारद स्व. वरान्निकोवने रामचरित-मानसका रूसी भाषामें अनुवाद बड़ी तड़क-भड़कके साथ प्रकाशित किया था। अुसकी भूमिकामें अुन्होंने तुलसीका अच्छा मूल्यांकन किया है, जिसका अनुवाद डा. महादेव साहाने 'नया समाज' में प्रकाशित कराया है। अुसकी कुछ पंक्तियाँ अिस प्रकार हैं :—

"अुत्तर भारतमें मानससे अधिक लोकप्रिय और कोअी ग्रन्थ नहीं। अिसके धार्मिक, दार्शनिक, नैतिक और सामाजिक विचारोंने सदियोंसे भारतीयोंके भव्य-निर्माणमें गहरा असर डाला है और आज भी डाल रहे हैं। अेक अमर साहित्यिक कृतिके रूपमें रामायण भारतीय काव्यका अेक अनुपम रत्न है। अिसकी रचना भारतीय काव्य परम्पराकी मौलिक और गंभीर प्रणालीके अनुरूप ही हुअी है, जो यूरोपीय प्रणालीसे सर्वथा भिन्न है।"

संसारके प्रसिद्ध साहित्यकारोंने ही तुलसीके महत्वको स्वीकार नहीं किया है, ख्यातिप्राप्त अितिहास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखकोंने भी अुनके व्यापक प्रभावका अुज्ज्वल शब्दोंमें स्मरण किया है। तुलसी अकबरके सम-सामयिक कवि थे। अतअेव प्रसिद्ध अितिहास-लेखक विन्सेंट स्मिथने अपने प्रामाणिक ग्रंथ 'अकबर दि ग्रेट मोगल' में लिखा है-- "तुलसीदास अपने युगके सबसे महान कवि थे। वे अकबरसे भी महान थे क्योंकि लाख़ों स्त्री-पुरुषोंके हृदयोंपर विजय प्राप्त करना सम्राटके द्वारा युद्धोंमें प्राप्त अनेक सफलताओंसे अधिक स्थायी और महत्वशाली होती है।" स्मिथ आगे और भी लिखते हैं- "यद्यपि राजा मानसिंह और खानखाना अब्दुल रहीम कविके निकट सम्पर्कमें रहे हैं तो भी वे अकबरका ध्यान अुनकी ओर नहीं खींच सके। अैसा प्रतीत होता है कि अिन दो प्रमुख व्यक्तियोंका सम्बन्ध अकबरकी मृत्युके पश्चात् अुनसे हुआ हो। यदि अब्दुलफजल या अकबर तक तुलसीकी ख्याति पहुँचती तो वे अवश्य अुनके महत्वको स्वीकार करते।" रहीमने जो अपने दोहे और बरवेमें अुनका अुल्लेख किया है अिसका पता सम्भवतः विन्सेंट स्मिथको न रहा हो।

हाल ही में प्रसिद्ध अितिहासज्ञ 'अरनॉल्ड' टायन बी. ने कअी जिल्दोंमें 'A Study of History' (अितिहासका अध्ययन) शीर्षकके अन्तर्गत विश्व सभ्यता और संस्कृतिको लिपिबद्ध किया है। अुसकी नवी जिल्दमें अुन्होंने भारतकी भाषाओंका भी अुल्लेख किया है और अुनमें हिन्दीकी चर्चा करते समय तुलसीदासका गौरवपूर्ण शब्दोंमें स्मरण किया है। वे लिखते हैं कि यह वाल्मीकि रचित संस्कृत रामायणकी विजय ही है कि हजारों वर्षके बीत जानेपर भी वह हिन्दीके महाकाव्यको प्रेरणा दे सकी। तुलसीकी महाकाव्य-कृति अपने आदर्श और पावित्र्यके कारण अुत्तर भारतके करोड़ों जन-समूहकी बाअिबिल बनी हुअी है। अुन्होंने सर चॉल्स अीलियटका यह हवाला दिया है-- 'तुलसीकी रामायण मौलिक रचना है। वाल्मीकिका अनुवाद नहीं है। वह संसारकी सबसे महान धार्मिक काव्य-कृति है।' टॉयन बी.ने भारतकी सांस्कृतिक भाषा संस्कृतकी भी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। अुन्हें यह जानकर तनिक विस्मय-सा हुआ कि जहाँ सुदूर पूर्वमें, अुदाहरणार्थ चीनमें, आधुनिक भाषाओंने प्राचीन भाषाओंको समाप्त कर दिया है वहाँ आधुनिक भारतीय भाषाअें अपने प्राचीन स्रोतको अक्षुण्ण बनाअे हुअे हैं। संस्कृत यद्यपि वर्षोंसे जन-सामान्यकी भाषा नहीं रह गअी है तो भी अुसका धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व है और वह बराबर आधुनिक भाषाओंको प्रेरणा देती रहती है। तुलसीदास हिन्दू प्रतिभाके प्रतीक हैं। अुनमें हिन्दू आत्माकी प्राचीन संस्कारिता सच्चे रूपमें विद्यमान है।

अिस प्रकार हम देखते हैं कि साहित्य क्षेत्रमें अनेक युग आअे, अनेक प्रतिभाओंका प्रादुर्भाव हुआ। परन्तु तुलसीदासकी कीर्ति प्रत्येक युगमें सबको आच्छादित कर नित नूतन रूप धारण कर, देश-विदेशोंमें विकीर्ण होती गअी और होती जा रही है। अिसका श्रेय अुनकी सर्व संग्राहक भारतीय संस्कृतिकी परिचायक 'रामचरित-मानस' रचनाको ही है।

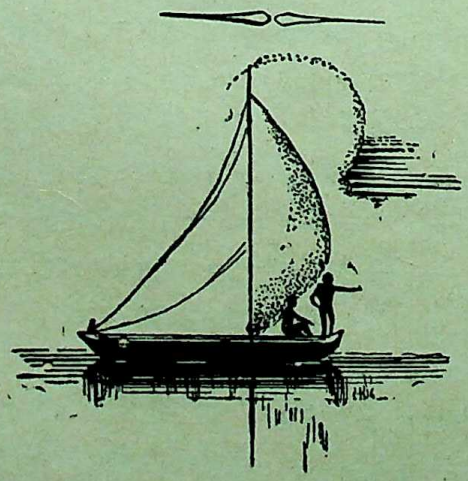

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैदिक वाङ्मय और लोक-साहित्य

—श्री श्याम परमार

लोक-भाषा और साहित्यकी भाषा में सदैव ही अन्तर रहा है। वेदोंकी भाषा तत्कालीन साहित्य-भाषा है—काव्यभाषा है। तत्कालीन साहित्य-भाषासे तात्पर्य अुस कालकी भाषासे है जिस समय वेद लिपिबद्ध किअे गअे। अतअेव अुसका अुपलब्ध स्वरूप साहित्यिक अेवं ग्रांथिक है। जिस समय वेदोंकी रचना हो रही होगी और वे श्रुति सम्मत रहे होंगे अुस कालकी लोकभाषा अथवा लोक-काव्यकी भाषा वेदोंकी अुपलब्ध भाषासे (जिसमें वे लिपिबद्ध हैं) कुछ शिथिल अवश्य होगी। आर्योंकी तत्कालीन सामाजिक अेवं यायावरी व्यवस्थाके परिणाम स्वरूप सूत्र-बद्धताका अभाव प्रत्यक्षतः अुस कालकी भाषापर निश्चित रूपसे लक्षित होता है। अिसलिअे अुस युगकी भाषामें अेक ही शब्दके भिन्न-भिन्न रूपोंका अुपलब्ध होना आश्चर्यका विषय नहीं है। ऋग्वेदमें शब्दोंका यह रूप-बाहुल्य पर्याप्त मात्रामें प्राप्त है। प्राकृतमें तो यह बहुलता अधिक स्पष्ट रूपेण अुपलब्ध है। अिसका कारण यही है कि भिन्न-भिन्न प्रकारके जन-समूह अेक दूसरेके निकट बसते रहे। [1]वर्तमान युगमें भी भिन्न-भिन्न भाषा-भाषियोंके पड़ोसके कारण अिस प्रकारकी रूप-बहुलता विकसित होती है यह प्रत्यक्ष है।

अतः वेदोंकी भाषा तत्कालीन अथवा वेद-पूर्वीय सामान्य लोक-भाषाका सुसंस्कृत रूप है। आधुनिक लोकगीतोंमें जिस प्रकार अेक ही शब्दके अनेक रूप मिलते हैं, अुसी प्रकार अुस युगकी भाषामें लोक-परक होनेके कारण रूप-भेद दृष्टव्य है। अुच्चारण-भिन्नता भी ध्यान देने योग्य है। संहित स्वरोंका असंहित अुच्चारण करनेकी प्रवृत्ति वर्तमान युगमें पर्याप्त मात्रामें अनुभव की जाती है। वैदिक भाषामें स्वरोंके जो असंहित अुचारण शेष हैं, अुनमें 'तितअु', 'प्रअुग' जैसे कुछ बोल-चालके शब्द अुस स्वरूपके मध्यमें आ जाते हैं। अिसके पूर्वकी अवेस्ता भाषामें भी असंहित स्वर अधिक अंशोंमें अुपलब्ध हैं। अुदारणार्थ—अवेस्ता० अअेओव्यो=सं० अेभ्यः; अवे० दअेव=सं० देव; अवे० पअिरि ददअिति; अवे० पओअूर्वीम्=सं० पीर्व्वीम्; यही पद्धति हमें प्राकृतमें भी मिलती है।[2]

वैदिक वाङ्मयमें प्राकृतके कतिपय रूप दृष्टिगत होते हैं जिनसे प्रगट है कि अुस युगकी ग्रांथिक भाषापर तत्कालीन लोकभाषाका प्रभाव पड़ता रहा है। ऋग्वेदकी गाथाओंको यद्यपि मूल लोकगीत नहीं कहा जा सकता तथापि यह सम्भव है कि तत्कालीन प्रचलित लोकगीतोंका परिष्कृत रूप अुनमें आ गया हो। अतअेव यह निश्चित है कि अिस प्रभावके कारण वेदोंमें हमारे पूर्वेतिहासिक अेवं सामाजिक गतिविधियोंके साथ जनके स्पन्दन संचित हैं।

ऋग्वेदकी ऋचाअें सामूहिक हर्ष और विषादकी व्यञ्जना करती हैं। अुनमें प्रकृतिके साथ लोकजीवनके अैसे चिर-परिचित चित्र मिलते हैं जिनकी अनुरूपता लोकगीतोंमें प्रायः देखनेमें आती है। लोकगीतोंके अनेक तत्वोंसे युक्त ये ऋचाअें अथवा गाथाअें लोक-भावनाकी सतत परम्परासे अपनी कड़ी मिलाती हैं। श्रम करते समय कुछ ऋचाअें गाअी गअी हैं। सपत्नी पीड़ित नारीके औषधि खोदते हुअे गानेका अुल्लेख श्रमसे सम्बन्धित है—

अिमां खनाम्योषधिं वीरुधं बलवत्तमाम्।
यया सपत्नीं बाधते यया संविन्दते पतिम्॥ ३
अुत्तानपर्णे सुभगे देवजूते सहस्वति।
सपत्नी मे पराधम पतिं मे केवलं कुरु॥ ४

१ महाराष्ट्र शब्द-कोष (चौथा भाग), प्रस्तावना, पृष्ठ ७, सन् १९३५, पूना।

२ महाराष्ट्र शब्द कोष, पृष्ठ ८।

३ ऋ० ८।१०।१४५।१

४ ऋ० ८।१०।१४५।२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परवर्ती गीतों अथवा पदोंमें जो टेककी परिपाटी मिलती है, वह ऋग्वेदमें भी पाअी जाती है। जहाँ गायनके साथ अिस प्रकारकी टेकोंकी पुनरावृत्ति मिलती है वहाँ पंक्ति छन्दका प्रयोग किया गया है। ऋग्वेदके १० वें मंडलके ८६ वें सूक्तमें अिन्द्र, वृषाकपि तथा अिन्द्राणीके कथोपकथनमें टेक है 'विश्वस्मादिन्द्र अुत्तरः' अर्थात् अिन्द्र सबसे श्रेष्ठ है। अिन्द्र जब स्वयं कथन करते हैं तो अुत्तरमें वह भी यही कहते हैं। दूसरा स्वरूप है जिसमें कवि प्रत्येक ऋचाके अन्तमें टेक दुहराता है।

वैदिक साहित्यमें पुत्रजन्म, यज्ञोपवीत, विवाह आदि अुत्सवोंपर मनोहारिणी गाथाओंके गानेके अुल्लेख मिलते हैं। मैत्रायणी संहिता[1] में विवाहके गीत गानेकी विधिका निर्देश है। पारस्कर गृह्यसूत्र[2] में वीणापर गाथाओंके गानेके प्रमाण मिलते हैं। आश्वलायन गृह्यसूत्र[3] में भी सीमन्तोन्नयन* के समय गाथाअें गानेकी पद्धतिका अुल्लेख किया गया है। अवश्य ही ये गाथाअें लोकगीतोंके परिष्कृत रूपमें रही होंगी। आर्योंकी लोकभाषा ऋषियोंके संस्कारसे अिन गाथाओंमें परिमार्जित होकर रूपबद्ध हो सकी हैं। क्या अिस कालकी भाषापर अनार्योंकी भाषाका प्रभाव नहीं पड़ा होगा? अिस प्रश्नके साथ ही युगोंसे चले आते हुअे सांस्कृतिक और संस्कारगत आदान-प्रदानके क्रमका चित्र सामने आ जाता है जिससे यह विश्वास दृढ़ होता है कि अवश्य ही अनार्योंके लोकसाहित्यने वैदिक साहित्यमें अपना प्रभाव छोड़ा होगा जिसका अध्ययन किया जा सकता है।

वाल्मीकि रामायण अेवं श्रीमद्भागवत् (दशम स्कन्ध) में जन्मके प्रसंगपर स्त्रियों द्वारा सामयिक गीतोंके गानेके वर्णन आअे हैं। श्रमके साथ गीतोंके गानेकी प्रवृत्ति मानवमात्रमें स्वाभाविक रही है। १२ वीं शताब्दीकी कवयित्री विज्जिकाने धान कूटनेवाली स्त्रियों द्वारा गीत गानेका अुल्लेख अिस प्रकार किया है :—

विलासमसृणोल्लसन्मुसल-लोलदो : कन्दली—
परस्परपरिस्खलद्वलयनि : स्वनोद्बन्धुराः॥
लसन्ति कलहुंकृति प्रसभकम्पितोर : स्थल—
त्रुटद्गमकसंकुला : कलमकण्डनीगीतयः॥

'धान कूटनेवालियोंका गाना बड़ा ही मनोहर है। वे बड़े अच्छे ढंगके साथ मूसल हाथमें लिअे हुअे हैं। मूसलके अुठाने तथा गिरानेके कारण चूड़ियाँ बज रही हैं। अुन चूड़ियोंके शब्दसे वह गान और भी मनोहर हो गया है। जब वे मूसल गिराती हैं अुस समय अुनके मुँहसे हुंकार निकलता है और हृदय कम्पित हो जाता है। वह गानका गमक बनता है।'[1]

वैदिक साहित्यमें अुपलब्ध गाथाअें भारतीय लोकगीतोंकी प्राचीन (पूर्वेतिहासिक) परम्पराकी अेक सीमातक संवाहक हैं। गाथाअें वस्तुतः गेयपद हैं। **'कण्वअिन्द्रस्य गाथया'** (८।३२।१) अथवा ऋग्वेदकी कुछ अन्य गाथाअें (८।७१।१४, ८।९८।९ अेवं ९।९९।४) अिस अर्थकी द्योतक हैं। गानेवालेके लिअे गाथिन् शब्दका व्यवहार प्राप्त है (ऋ. १।७।१, अिन्द्रमिद गाथिन् वृहत्)। अैतरेय ब्राह्मणमें (७।१८) गाथाकी अुत्पत्ति मानुषी बताअी है जो ऋक्से भिन्न है। अिसीलिअे गाथाअें मन्त्रवत् व्यवहृत नहीं होती थीं, क्योंकि वे मनुष्यों द्वारा रची गअीं थीं। निरुक्तमें (४।६) गाथाओंको ऋचाओंके साथ अितिहासका पोषक बताया गया है; ठीक अुसी प्रकार जैसे हम आजकल लोकगीतोंमें लुप्त अितिहासके निबद्ध होनेका अनुमान करते हैं।

महाभारत (आदि-पर्व ७४ अ०, ११०-११३) अैतरेय ब्राह्मण (८।४) अेवं शतपथ ब्राह्मण (१३।५।४) में गाथाओंका निर्देश है। अतअेव गाथाअें किसी सुकृतको लक्ष्यकर कहे जानेवाले प्रचलित गीत ही थीं, सम्भवतः

---

१ ३।७।३

२ १।५

३ १-अ०, १२ खण्ड

* द्विजोंके १६ संस्कारोंमेंसे तीसरा संस्कार जो प्रथमे गर्भाधानसे चौथे, छठे या ८ वें मासमें होता है।

अनु० कविता कौमुदी संस्कृत संस्करण (५ वाँ भाग), पृष्ठ १३-१४।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिन्हें परिष्कृत कर ऋषियोंने अपना लिया हो। यही कारण है कि अुन्हें लौकिक ही बना रहने दिया गया। मंत्रकी प्रतिष्ठा नहीं दी। यजुः और सामसे पृथक् अेवं रैभी और नाराशंसीसे अलग अुन्हें स्वीकार किया गया।

हाल्की गाथा सप्तशती (३ री शताब्दी) असंख्य अुत्तम गाथाओंमेंसे चुनी हुअी अुत्तम गाथाओंका संग्रह है। 'अेक गाथाके अनुसार कवि वत्सल हालने अेक करोड़ गाथाओंमेंसे चुनकर अिन सात सौ पद्योंका संग्रह किया था। अेक मजेदार कहानीमें तो यहाँ तक कहा गया है कि सरस्वतीके वरदानसे हालके राज्यका प्रत्येक स्त्री-पुरुष अेक दिनके लिअे कवि बन जाता था और सबने अपनी कविताअें हालको दी थीं।'[1] सम्भवतः लोगोंकी ये कविताअें लोक प्रचलित मुक्तक ही होंगी जिन्हें हम लोकगीतोंसे भिन्न नहीं मानेंगे। आजके दूहा, दोवळ या दोहाकी पूर्वजा ये ही गाथाअें हैं। गाथा सप्तशतीमें जो तत्कालीन लोकजीवनका सजीव वर्णन मिलता है अुसमें लोक-साहित्यके अपरिमित तत्वोंका समावेश है। जो प्रसंग और अवसर गाथाकारने चुने हैं वे प्रायः सभी लोकगीतके सृष्टाओंकी दृष्टिमें आते हैं। सुसंस्कृत अेवं बौद्धिक व्यक्तिकी दृष्टिसे भिन्न होकर गाथाकारकी दृष्टि लोक-गायकोंके मानसके अधिक निकट है।

हिन्दी साहित्यके आदि कालमें लोक-साहित्यके प्रश्रयकी परम्परा बराबर बनी रही। अेक ओर संस्कृतके कवियोंने सुसंस्कृत काव्य-परम्पराका निर्वाह किया तो दूसरी ओर अनपढ़ सिद्धों और संतोंने लोक-भाषाका आश्रय लेकर लोक-साहित्यकी प्रवृत्तियोंके अनुरूप लोक-काव्यकी सृष्टि की। हेमचन्द्रके व्याकरणमें संग्रहीत दोहे अिस बातका आभास दिलाते हैं। वररुचि और गुणाढ्यको अनेक अंशोंमें लोक-साहित्यकार माना जा सकता है। गुणाढ्यको विंध्याचल पर्वतके क्षेत्रका लोककथा-संग्राहक और वररुचिको स्त्रियोंके परम्परागत गीतोंको अेकत्र कर अुनके आधारपर परिष्कृत रचनाअें अथवा अुनका काव्य संस्कार करनेवाला कवि कहा जा सकता है। कथा-सरित्सागरने वररुचिके गौरवकी रक्षा की है। अुनकी अेक आख्यायिकाके अनुसार वररुचिको गुणाढ्यके गुरुपदका सम्मान प्राप्त है। हेमचन्द्रके ग्रन्थके आठवें सर्गमें अेक अैसी कथाका अुल्लेख आया है जो न केवल कथा सरित्सागर और जैन परम्पराकी कथामें निहित परस्पर भिन्न स्वरोंकी द्योतक है, अपितु नअे निष्कर्षोंकी ओर भी जो अिंगित करती है।[2]

कथा अिस प्रकार है:—मगधके नंदवंशी अन्तिम राजाका मंत्री शकट जैन-धर्मावलम्बी था। अेक समय वररुचि नामक ब्राह्मण नन्दके दरबारमें आया और अुसने स्व-रचित अेक सौ आठ छन्द राजाको सुनाअे। शकटने अुसे असत्य बोलनेवाला घोषित कर प्रशंसा नहीं की। अतअेव राजाने वररुचिको पारितोषिक प्रदान नहीं किया। वररुचि शकटकी पत्नीके पास गया और अपनी रचनाअें सुनाकर अुसे प्रसन्न किया तथा यह निवेदन किया कि वह अपने पतिसे कहकर अुसे किसी तरह राजाके द्वारा सन्मानित होनेका अवसर दिलादे। पत्नीने वररुचिके हेतु शकटके सन्मुख हठ धारण किया। शकटने किसी तरह यह स्वीकार कर लिया। जब वररुचि पुनः राजाके दरबारमें पहुँचा तो काव्यपाठकी प्रशंसा करते हुअे शकटने अितना भर कहा 'अहो सुभाषितमिति' (अुत्तम कहा)। राजाने वररुचिको पुरस्कृत किया। पुरस्कारका यह क्रम जब नित्य चलने लगा तो शकटने आपत्ति की। राजाने कारण पूछा। शकटने कहा कि यह आपके सन्मुख दूसरेकी रचनाओंको अपनी बताकर पाठ करता है— 'अेतत्पठित काव्यानि पठन्ति बालिका आपि। अतः महाराज मैंने तो 'काव्यानि परकीयाणि प्राशंसिष मंहं तदा' (मैंने दूसरेके काव्यकी प्रशंसा की है) और फिर ये गीत तो मेरी पुत्रियाँ भी गाती हैं।

शकटका प्रयोग सफल हुआ। वररुचिका नियमित पुरस्कार बंद हो गया।

---

१ हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्यका आदि काल, पृष्ठ ५५।

२ देखिअे कु-दुर्गा भागवतका लेख 'लोकगीतांचा प्राचीन प्रचारक वररुचि,' सह्याद्रि मासिक, खंड ३७, अंक १।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथाका अुत्तरार्द्ध भी वररुचिकी लोककाव्य-संग्राहक वृत्तिपर प्रकाश डालता है। कु. दुर्गा भागवतने अिस सम्पूर्ण कथाको अुद्धृत करते हुअे कतिपय निष्कर्ष प्रकाशित किअे हैं।[1] हेमचन्द्रने जिस शब्दका भाषानुवाद परकीय काव्य किया है वह शब्द वस्तुतः 'लोककाव्यानि' है। अुक्त कथासे जो निष्कर्ष निकलते हैं संक्षेपमें वे अिस प्रकार हैं--

१ शकटने अपनी कथाओं द्वारा वररुचिके काव्यको असत्य प्रमाणित करनेकी जो योजना बनाअी थी वह सफल अिसीलिअे हो सकी कि वह काव्य लोकप्रचलित काव्यका परिष्कृत स्वरूप था। अतः अुनका स्मरण रखना अुन कन्याओंके लिअे कठिन न था।

२ जैनधर्मावलम्बी शकटकी चेष्टाओंमें वैदिक प्रथाओंके विरोधका स्वर था। यह विरोध वररुचिके अिस प्रसंग द्वारा प्रगट होता है। पूर्व यद्यपि वैदिक वाङ्मयका आधार लोकव्यापी था। तभी पंडितों द्वारा वररुचिका यह प्रयोग अप्रशंसित हुआ।

१ वही

३ वररुचिके प्रयत्नोंसे ही कदाचित् कवि संप्रदायमें लोक प्रचलित छंदोंका प्रवेश हुआ।

यह निर्विवाद है कि लोकभाषाका साहित्य प्रत्येक युगमें रहा है। राजशेखरकी 'काव्य-मीमांसा' से अिस बातपर प्रकाश पड़ता है कि राजदरबारमें लोक-भाषाके कवियोंका आदर होता था।[2] क्या वे कवि लोकगीतोंके ढंगपर रचना करनेवाले नहीं हो सकते? संस्कृतकी रूढ़ प्रवृत्तियोंसे सभी परिचित थे। कदाचित् अिस सत्यका साक्षात्कार कबीरने 'संस्कृत कूपजल कबीरा भाषा बहता नीर' और विद्यापतिने 'देसल बअना सब जन मिट्ठा' कहकर किया है। सूर, विद्यापति, चंडीदास आदि कवियोंकी रचनाअें लोक भाषामें हैं पर अुनके परिस्कृत रूपका आधार लोक-गीत-ही प्रतीत होते हैं "अिसके पूर्व निश्चय ही लोक-मुखमें अैसी अनेक गीतियाँ काफी प्रचलित रही होंगी।"[3]

२ काव्य मीमांसा,

३ हिन्दी साहित्यकी भूमिका, पृष्ठ १२१।

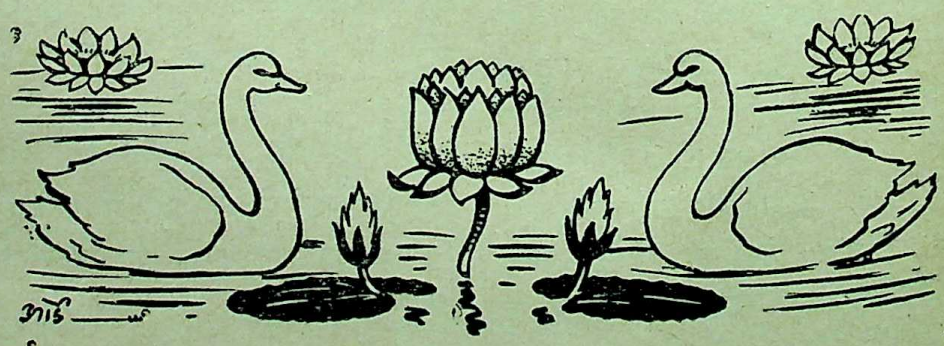

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाटककार अश्क

—डॉ० द्वारकाप्रसाद, अेम. अे.

व्यक्तित्व, कला और कृतित्व

१९५३ की मअीमें, जब अश्कजी मसूरीमें अुसी कोठीमें ठहरे हुअे थे जिसमें हम थे, अपने कुछ पड़ोसियोंके साथ मालकी सैरको गअे—पूरी बाँहोंवाला बन्द गलेका पुलंआवर, मेच करता हुआ मफलर, पैंट, स्पॉर्ट्स कैप पहने और हाथमें छड़ी लिअे—लाअिब्रेरीके पास पहुँचकर मित्रोंने निकटके अेक बंगलेमें जानेकी अिच्छा प्रकट की, जहाँ अुनके डाक्टर मामा जगाधारीसे आअे हुअे थे। अुन डाक्टर साहबसे अश्कजीका न तो कोअी परिचय था और न हमारा, पर जैसा कि फक्कड़-पनकी अुनकी आदत है, वे किसी तरहके परस्पर परिचयके बिना चले गअे, और साथ ही गअे हम भी। हम लोगोंका स्वागत डाक्टर दम्पतिने किया। पारस्परिक परिचयादिके बाद शीघ्र ही डाक्टर साहब और अुनकी धर्मपत्नी अपने भानजे-भानजियोंके साथ जगाधारीका मुहल्ला—राजनीतिमें लवलीन हो गअे।

चूँकि हमारा परिचय अिन पड़ोसियोंसे अश्कजीसे पहलेका था, हम तो किसी-न-किसी तरह अुनकी बातोंमें दिलचस्पी लेनेकी चेष्टा करते रहे, किन्तु देखा, अश्कजी बैठे-बैठे अूब गअे। चंचल अुनकी प्रकृति, निश्चल बैठे रहना अुनके लिअे कठिन, वे बाअें ओठोंमें हवा भरकर सीटी बजाने लगे—बाअीं ओर अेक दाँत टूटा होनेके कारण अुसमें हवा भरनेसे लालों (चिड़ियों) जैसी आवाज वे निकाल लेते हैं और जाने-अनजाने अैसी सीटी बजाते रहते हैं। फिर शायद अुठकर अुन्होंने कमरेमें अेकाध चक्कर लगाया, शायद कुछ अजीब तरहसे खाँसे भी और शायद अुनके अिस तरह खाँसनेपर मंडलीमें कोअी-कोअी थोड़ा हँसे भी। वहाँ अेक गूँगा-बहरा पण्डित भी बैठा था जो शायद डाक्टर साहबके तुफैलियोंमें था। बड़ी देरसे वह अश्कजीकी ओर देख रहा था। आखिर अुसने स्लेट निकालकर अुसपर लिखा—"नाटक"—और अश्कजीकी ओर अिशारा किया। अिसपर डाक्टर साहबने बड़े गर्वसे बताया कि वे पण्डितजी ज्योतिषी हैं, और अुनके ज्योतिष ज्ञानकी बड़ी प्रशंसा की। जब हम सब चलने लगे तो ज्योतिषीने अश्कजीको स्लेटपर लिखकर दिया—"फिल्ममें जाओ।"

अश्कजीने चलते हुअे मुस्कुराकर लिखा—"मैं फिल्ममें हो आया हूँ,—और वैसे ही बाअें दाँतमें हवा भरकर सीटी बजाते हुअे बाहर आ गअे।

अुस रात लक्समाअुन्टमें—जहाँ अश्कजी समेत हम लोग ठहरे हुअे थे—अुस गूँगे बहरे ज्योतिषीके ज्ञानकी चर्चा होती रही।

× × ×

लेकिन अश्कजी नाटककार हैं, यह जाननेके लिअे किसी तरहके ज्योतिषकी अब आवश्यकता नहीं। नाटकीयता अुनके व्यक्तित्वमें कूट-कूटकर भरी है और कअी बार, जब वे मूडमें होते हैं, तो पहली ही भेंटमें अिसका पता चल जाता है।

× × ×

नाटकका शौक अश्कजीका बचपनमें अपने पितासे मिला। अुनका जन्म जालन्धर (पंजाब) के अेक मध्य-वर्गीय परिवारमें हुआ, पिता अुनके स्टेशन मास्टर थे और यद्यपि शिक्षा अश्कजीने जालंन्धर ही में प्राप्त की, लेकिन बचपनके वर्ष अुन्होंने अपने पिताके साथ पंजाबके दूरस्थ स्टेशनोंपर गुजारे। बीचमें भी कअी बार वे अपने पिताके पास पंजाबके देहाती स्टेशनोंपर जाकर रहते रहे और अिस तरह किशोरावस्थासे जवानीतक अुन्होंने पंजाबके ग्रामीण और शहरी जीवनको बड़े नजदीकसे देखा। स्मरण शक्ति अुनकी अितनी प्रखर और अनुभूति-प्रवणता अितनी तीव्र है कि वे सभी अनुभव, अपने नन्हे-से-नन्हे ब्योरोंके साथ, अुनके मानस-पटपर सदाके लिअे अंकित हो गअे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अश्कजीके पिता रास, नौटंकी और थिअेटरमें विशेष रुचि रखते थे। कंठमें अुनके मधु था। जब कभी गाते थे तो अुनकी साज भरी आवाज साँझके सन्नाटोंमें अुन देहाती स्टेशनोंपर मीलोंतक गूँज अुठती थी। किसी पक्के गानेकी अेकआध पंक्ति अथवा अुस जमानेके प्रचलित किसी गीतकी धुन वे गाया करते थे। अश्कजी अुस संगीतको सुनते तो अुनकी कल्पना अुन गीतोंके साथ अनजानी वाटिकाओंमें जा रमती--वे गानेकी तानमें खोकर सुधबुध भूल जाते।

पिता कभी जालंधर आते तो अवश्य नौटंकी अथवा रास लीलाका आयोजन करते और यद्यपि अश्कजी तथा अुनके भाअियोंको वहाँ जानेकी मनाही थी और माँ अुन्हें सदा अुपदेश दिया करती कि वहाँ जाना अच्छा नहीं तो भी अश्कजी चोरी छिपे अुनकी अेकआध झलक ले लेते और जब रातको लेटते तो सोनेसे पहले शेष रासलीला कल्पनामें देखा करते।

पिता द्वारा आयोजित नौटंकियों अथवा रास-लीलाओंके अतिरिक्त जालन्धरमें हर वर्ष जन्माष्टमीके अवसरपर रास लीलाअें होतीं। महीना-महीना अुनका प्रोग्राम रहता। अश्कजी अपने बड़े भाअीकी सहायतासे अुन्हें भी देखते और अुनकी कल्पना, रात-रातभर अुनके मानस पटपर कृष्णकी रास लीलाओंको अंकित किया करती।

जहाँतक नागरिक अेमेचोर रंगमंचका अनुभव है, अश्कजीको सबसे पहले आठवीं कक्षामें अुसे देखनेका अवसर मिला। जैसा कि अुन्होंने अपने अेक संस्मरणमें लिखा है। आठवींमें वे बहुत बीमार हो गये। कअी महीने मलेरियासे पीड़ित रहे। नाजुक-निर्बल तो वे पहले ही थे, अिस ज्वरने अुन्हें और भी कमजोर कर दिया। तब, जब अिस बातका डर होने लगा कि अुन्हें कहीं यक्ष्मा(टी बी.)तो नहीं, डाक्टरने जलवायु बदलनेका परामर्श दिया ओर वे पढ़ना-वढ़ना छोड़कर अपने पिताके पास मंकेरियाँ लाअिनके अेक गुम-नामसे कस्बे (जो अब मकेरियाँ जम्मू लाअिन बननेसे गुमनाम नहीं रहा) दुसूआमें चले गअे। दुसूआमें अेक कलाल-परिवार रहता था जिसे खाने-पीनेकी कुछ वैसी चिन्ता न थी और जिसमें दो अेक बिगड़े अभिनेता भी थे। अश्कजीके पिता स्वयं खाने-पीनेवाले रंगीले आदमी थे। अैसे कलाकारोंसे वे कबतक अनभिज्ञ रहते। वहाँ जानेपर कुछ ही दिनोंमें अुन्होंने अुन्हें खोज निकाला। अुन्हींके प्रोत्साहन और आर्थिक सहायतासे होली अथवा वसन्तके त्यौहारपर अुन कलाकारोंने "बिल्व मंगल अुर्फ सूरदास" खेलनेका आयोजन किया। अश्कजी अुन दिनों पंजाबीमें तुक-से-तुक मिला लेते थे। कलामें अपने बेटेकी रुचिसे अश्कजीके पिता परिचित थे, अिसलिअे अुन्होंने अश्कजीको भी साथ चलनेका आदेश दिया। अश्कजीकी प्रसन्नताका वारपार न रहा। तबीयत अुनकी वैसी ठीक न थी। सिरमें हलकासा दर्द भी था। पर नाटक देखनेके चावमें अुन्होंने किसीसे अिसका जिक्र तक न किया था और अुसी अस्वस्थ-अवस्थामें दो मील पैदल चलकर सभामण्डपमें जा पहुँचे।

नाटक अुसी कलाल परिवारकी बड़ी हवेलीमें हो रहा था। सामने बड़े चौड़े बरामदेमें पर्दे लगाकर स्टेज बनाया गया था। पर्दे साधारण और मांगे-तांगेके थे। गैसकी रोशनी थी। कुछ अेक प्रतिष्ठित दर्शकोंको छोड़कर, जो पीछे कुर्सियोंपर विराजमान थे, बाकी दर्शक नीचे दरीपर बैठे थे। अश्कजी भी क्लबके सरपरस्तके पुत्र होनेके कारण प्रतिष्ठित दर्शकोंमें बैठे थे। गैसकी रोशनी अथवा रतजगेके कारण अुनके सिरमें बेपनाह दर्द होने लगा, लेकिन वे दांत पीसे, दम साधे, कनपटी दबाये रातके अढ़ाअी बजेतक बैठे रहे और नाटक खतम होनेपर ही अुठे। रंगमंच सम्बन्धी अपने अुस पहले अनुभवके बारेमें अुन्होंने लिखा है--

> "·····अिसके बाद अेलफ्रेड और विक्टोरिया कम्पनियोंके शानदार पर्दे भी देखे और पृथ्वी थिअेटर्सकी भव्य सेटिंग भी, पर जो पुलक अुस पहले नाटकके, कदाचित् मांगे-तांगेके, पुराने-धुराने पर्दोंको देखकर दुसूआकी अुस शाम हुआ, वह फिर कभी नहीं हुआ।"

× × ×

अुस पहिले दिनके बाद अश्कजीने, अपनी कठिन परिस्थितियोंमें, जहाँतक भी संभव हो सका, नाटक और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रंगमंचसे सम्बन्ध बनाअे रखा चूंकि वे अुस समयकी व्यावसायिक कंपनियोंके सभी नाटक नहीं देख सकते थे, अिसलिअे जब कोअी कंपनी जलन्धर आती तो वे अुसका अन्तिम नाटक "चूँ चूँ का मुरब्बा" देखते, जिसमें कंपनीके सभी नाटकोंका अेक-अेक अच्छा दृश्य होता। बाकी नाटक वे खरीदकर या किरायेपर लेकर पढ़ लेते और "चूँ चूँ का मुरब्बा" में देखे हुअे दृश्योंकी मददसे अुनकी कल्पना कर लेते। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि अुस समयके सभी प्रसिद्ध नाटककारोंकी रचनाअें अुन्होंने अुसी जमानेमें पढ़ ली थीं।

जलन्धरमें अुन दिनों अेमेचोर रंगमंच भी खूब जाग्रत था। महावीर दल और सेवा-समिति हमेशा त्यौहारोंपर धार्मिक नाटक किया करती थी। अश्कजी दोनोंके सदस्य होकर नाटकोंकी रिहर्सलें तथा अुनका अभिनय देखनेका अवसर पा लिया करते।

कालिजमें जाकर अश्कजीने स्वयं भी नाटक खेलनेका आयोजन किया और अुसमें भाग लिया। वे बी० अे० में थे तब अुन्होंने "श्रीमती मंजरी" में रायबहादुर जानकीनाथ और "बिल्व मंगल अुर्फ सूरदास" में रामभरोसेका हास्य-रस-भरा पार्ट किया। अन्तिम भूमिकामें अुनका वह रूप और अभिनय अितना सफल हुआ कि अुनके पिता भी अुन्हें नहीं पहचान पाअे।

आठवीं कक्षा ही से अश्कजीकी रचनाअें (कविताअें और कहानियाँ) पंजाबके दैनिक तथा साप्ताहिक पत्रोंमें छपने लगी थीं। कालेजमें पहुँचकर अुन्होंने पहला नाटक लिखनेका प्रयास किया। वह छपा भी, लेकिन बादमें तीन-चार बार काट-छाँट करने और लिखनेके बावजूद वह अिस काबिल न हो सका कि किसी नाटक संग्रहका अंग बनता।

× × ×

श्रीमती कौसल्या अश्कने अपने संस्मरणमें लिखा है कि अश्कजीको पराकाष्टाअें पसन्द हैं—कभी पहाड़के शिखर और कभी शहरी घाटियाँ; कभी जन-संकुल नगर और कभी निर्जन बीरान—वे कभी जी खोलकर हँसते हैं और कभी घंटों अुदास बैठे रहते हैं।

लेकिन अश्कजीकी अुदासी अुनके मित्र बहुत कम जानते हैं। अिस बातका प्रथम अनुभव हमें अपने मसूरी प्रवासके समय हुआ। अश्कजी हमारी बगलवाले फ्लैटमें रहते थे। हमने अनुरोध करके अपनी कोअी कविता और अेकांकी सुनानेको अुन्हें तैयार कर लिया। समय आदि तय हो गअे और मित्रोंको निमंत्रण दे दिया गया। निमंत्रित व्यक्तिओंमें सुप्रसिद्ध अितिहासकार डा. सत्यकेतु विद्यालंकार, अुनकी धर्मपत्नी श्रीमती सुशीला केतु (जिनका आन्द्रे जीदके सुप्रसिद्ध अुपन्यास "ला पार्त अेत्रांआत्" का अनुवाद "सँकरा द्वार" हिन्दी संसारमें काफी प्रसिद्धि पा चुका है), कहानी लेखिका श्रीमती मालती ढिंढा और श्रीमान ढिंढा, भारतमें प्रसिद्धि-प्राप्त त्रिजके श्री विज्ञानभूषण गुप्त आदि थे।

प्रोग्रामके दिन सुबहसे ही हमने पाया कि अश्कजीकी बातें कुछ अुखड़ी-अुखड़ी-सी हो रही हैं। फिर भी अुनके हँसने-हँसानेमें कुछ खास फर्क नहीं आया था। मैंने सोचा, शायद मेरा ख्याल गलत हो। फिर भी सन्देह दूर करनेको मैंने शामके कुछ पहले अुनसे पूछ ही दिया, "आपकी तबीयत ठीक तो है?" अुन्होंने जवाब दिया, "पता नहीं, आज क्या हो गया है, तबीअत बेहद अुदास है।" मुझे अेक साथ दो चिन्ताअें हुअीं, अेक तो अुनकी अुदासीके सम्बन्धमें, दूसरी यह कि अैसी हालतमें क्या प्रोग्रामको चलाना अुचित है। लेकिन अश्कजी, शायद हमारे मनकी बात समझ गअे अिसलिअे, हँस दिअे और बोले, "हमारी अुदासीकी फिक्र मत करो। जब मैं भीतरसे अुदास होता हूँ तो बाहरी दुनियामें अधिक खुश दीखता हूँ मैं सफलता पूर्वक ड्रामा सुनाअूँगा और हँसा अितना दूँगा कि लोगोंके पेटमें बल न पड़ जाय तो मेरा नाम नहीं।"

और हुआ भी वही। दर्शकोंमें कोअी कल्पना भी नहीं कर सकता था कि जो व्यक्ति औरोंको अितना हँसा रहा है अुसके अन्दर अेक घोर अुदासीका आलम छाया है। सच पूछिअे तो मैं भी भूल गया था।

अुनके अिस गुणसे मैं कुछ अैसा प्रभावित हुआ कि अपने अुपन्यास "सुनील—अेक असफल आदमी"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अश्कजीको समर्पित करते हुअे यह लिखनेको मजबूर हुआ :

"भाअी अुपेन्द्रनाथ अश्कको—
मसूरी प्रवासकी यादमें
जो, बगलके फ्लेटमें रहते हुअे, जब
अुनकी तबीअत नहीं लगती थी तो
हमारी बहला जाते थे।"

और अश्कजीके पड़ौसी और मित्र जानते हैं कि वे बच्चोंसे लेकर बूढ़ों तक, सबको समान-रूपसे घंटों हँसा सकते हैं। अश्कजीके अधिकांश मित्रोंने अुनका यही रूप देखा है। पर कौशल्याजी अुनके दूसरे रूपको भी जानती हैं और अपने संस्मरणमें अुन्होंने अिस ओर संकेत भी किया है। यह और बात है कि जब वे स्वयं अुदास होते हैं तो मित्रोंको खूब हँसाते हैं। अुनके व्यक्तित्वकी यह दोरुखी भी, जिसने हिन्दी साहित्यको अेक ओर गहर गम्भीर नाटक और दूसरी ओर बेहद हल्के फुल्के प्रहसन दिअे हैं, अुनके बचपनमें खोजी जा सकती है।

× × ×

अश्कजी बचपनमें वैसे फक्कड़ नहीं थे जैसा कि अेक बार अुन्होंने स्वयं कहा, "मैं बचपनमें बेहद रोना, चिड़चिड़ा और धुन्ना था। जरा-सी बातपर रो देता था और लड़ पड़ता था। भाअी मुझे बड़ा परेशान करते थे और पिता सख्त असन्तुष्ट रहते थे। अुनका कोअी पुत्र मेरे जैसा पतला-दुबला, चिड़चिड़ा और रोना हो, यह अुनके अहंको स्वीकार न था। लेकिन दोष अुनका ही था। वे खाने-पीने वाले मनमौजी आदमी थे। कअी बार सारा-का-सारा वेतन अुड़ा देते थे। अश्कजी दो भाअी थे। अुस स्थितिमें किसी कमजोर और अस्वस्थ बच्चेकी कितनी देखभाल, या अिलाज अुपचार हो सकता होगा अिसकी कल्पना की जा सकती है।

फिर किस तरह यह रोना, चिड़चिड़ा और अुदास रहनेवाला बालक अैसा फक्कड़ और गगनभेदी ठहाके लगानेवाला हो गया, यह भी कम दिलचस्प नहीं।

अिस परिवर्तनका आरंभ भी आठवीं कक्षाकी अुस लम्बी बीमारी ही से होता है। तब वे दस महीने बीमार रहे। पहिले जूड़ी देकर अन्तरा बुखार आता रहा फिर रोज ज्वर रहने लगा। अश्कजी बेहद कमजोर हो गअे। नया-नया अुनका मकान बना था। अूपरकी बैठकको बाहरकी ओर बढ़ाकर बनानेकी बात थी, लेकिन खर्च अितना अुठ गया था कि शहतीर बाहरको बढ़े रह गअे और बैठक दोनों ओरसे खुली रह गअी। अपनी बीमारीके अुन दिनोंमें अश्कजी टाँगें नीचेको लटकाअे निश्चेष्ट बैठे रहते थे और नीचे मोहल्लेमें होनेवाले हर कार्य-व्यापारको चुपचाप देखा करते। मन तो अुनका भावप्रवण था ही। हर बातका नक्शा अुनके दिमागमें अंकित होता रहता। तभी अुन्होंने बैठे-बैठे खोंचेवालोंकी आवाजें, औरतों, बच्चों और बूढ़ोंके हंसी रुदन, चाल-ढालको अपने दिमागमें अुतार लिया—अैसे कि जब वे चाहते अपनी माँ और भाअियोंको अुनकी नकल करके दिखाते। भाअी खूब हँसते और अश्कजीका भी मनोरंजन होता। माँ भी हँसती, पर अुन्हें अैसा करनेसे सदा रोकती क्योंकि किसीकी नकल करना अुसके ख्यालसे अच्छा नहीं था। लेकिन अश्कजी सदा अैसा करते रहे, अपने अुदास और बीमार क्षणोंमें हंसने हंसानेकी सामग्री जुटाते रहे—यहाँ तक कि यह अुनके स्वभावका अेक अंग बन गया।

रहा साहित्य क्षेत्र, तो अश्कजीकी अिस आदतका किसीको पता भी न चलता, यदि १९३९ में वे हिन्दी-अुर्दू "प्रीतलड़ी" के सम्पादक होकर मध्य पंजाबके (अब विभाजनी प्रांत सीमाके) आधुनिक गाँव प्रीत-नगरमें जा पहुँचते। अश्कजी, जैसा कि कौशल्याजीने लिखा है, मानसिक शांतिकी खोजमें वहाँ गये थे। पहली पत्नीके देहान्त और लाहौरके जुगुप्सा-मय जीवनने अुन्हें खासा परेशान कर दिया था। प्रीतनगरमें वे चुपचाप अपनी कोठीमें बने रहते थे। प्रीतनगर प्रगतिशील विचारोंके अुदार सिक्खोंकी अेक कालोनी थी जो जाति-पाँतिसे दूर प्रीतिके तारमें बँधे हुअे लोगोंका अेक नगर बसाना चाहते थे। अुस समय वहाँ केवल अठारह-बीस कोठियाँ बनी थीं और लोग मिल-जुलकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहते थे। कुछ अपनी मानसिक स्थितिके कारण और कुछ अिसीलिअे कि वे नअे-नअे वहाँ गअे थे, अश्कजी अुनके साथ घुलमिल न पाअे। वे गअी रात तक काम करते और चाँदनी रातोंमें अकेले घूमते। जब दो-तीन महीने अिसी तरह गुजर गअे तो अुनके बारेमें तरह-तरहकी बातें फैलने लगीं। तब अेक दिन प्रीतनगरके संचालक, सरदार गुरुबख्शसिंहने अुन्हें समझाया कि लोग आपके बारेमें तरह-तरहकी बातें मुझसे आकर कहते हैं, गिने-चुने लोग यहाँ रहते हैं और आपको अुनसे मिल-जुलकर रहना चाहिअे, नहीं तो आपके लिअे यहाँ रहना मुश्किल होगा।

अश्कजीके कविको प्रीतनगरका वह आजाद खुला स्वच्छ और स्वच्छन्द वातावरण बड़ा पसन्द था, दूसरे वे वापस लाहौर न जाना चाहते थे अिसलिअे अुन्होंने सरदारजीकी बात माननेका फैसला कर लिया। किसीको बहिन बनाया, किसीको भाभी, किसीसे दियासलाअीकी डिबिया माँगी और किसीसे चाकू और अिस बहाने वे शाम होते-होते सब घरोंमें घूम आअे और प्रीतनगरके सभी कार्यकर्ताओंसे अुन्होंने परिचय पा लिया।

घूम आये और परिचय भी पा लिया, लेकिन वे अुनसे घुल-मिल न सके। अुनकी मानसिक अवस्था तब अुदासीकी पराकाष्ठापर थी और अुन्हें अकेले पढ़ना-लिखना अच्छा लगता था। दूसरे अपने और प्रीतनगरवासियोंके मध्य अुन्हें मेल-जोलका कोअी साझा-क्षेत्र न दिखाअी देता था और अिसी कारण अश्कजी खासे परेशान थे।

अुन्हीं दिनों लोढी[1] का त्यौहार आया। प्रीतनगरवासी त्यौहारोंको कुछ अतिरिक्त अुत्साहसे मनाते थे। अश्कजीका मन त्योहारमें जानेका न था, लेकिन प्रीतनगरके सेक्रेटरी अुन्हें खींच ले गअे। वहाँ लकड़ीका अेक बहुत बड़ा अम्बार जल रहा था और प्रीतनगरवासी अुसके अिर्द-गिर्द नाच गा रहे थे। तभी किसीने अश्कजीसे कुछ सुनानेको कहा। वे हैरान कि क्या सुनाअें। कविताअें वे बड़ी अुदास लिखते थे। "प्रातःदीप" और "अुम्मियाँ" की आरम्भिक कविताअें अुसी समयकी हैं। कोअी अुदास कविता सुनाकर अुनका मूड खराब करना अुन्हें पसन्द न आया और यों भी हिन्दी कविता वे लोग कम ही समझते थे। जब अनुरोध बढ़ने लगा और अुसके साथ ही अुनकी परेशानी बढ़ी तो अचानक बिजलीकी कौंध सदृश अश्कजीके दिमागमें, आठवीं कक्षामें अपनी वह नकलें करना घूम गया और सहसा अुलटा हाथ अपने बाअें ओठोंपर रखकर अुन्होंने कुतियाके नवजात पिल्लोंके रुदनकी नकल सुनाअी। जिसे सुनकर लोग अनायास ठहाके मार अुठे। तभी जब वे नकल कर रहे थे, जाने कैसे और क्यों, प्रीतनगरके अेक कर्मचारीकी बड़े-बड़े बालोंवाली पालतू कुतिया भीड़मेंसे आकर अश्कजीके पास खड़ी हो गअी। अिसपर प्रीतनगरवासियोंमें कितने ठहाके पड़े, अिसे वही लोग जानते हैं जो वहाँ अुपस्थित थे।

पहली ही नकलकी सफलताके बाद अश्कजीने आठवीं क्लासका अेक गीत किया। अपना सारा खजाना वहाँ खत्म कर दिया। अुसी शाम अुन्हें अपने और प्रीतनगरवासियोंके मध्य मेल-जोलका साझा संग मिल गया और वे अकस्मात् लोकप्रिय हो गअे। दूसरे ही दिनसे अुन्हें चायके निमन्त्रण मिलने लगे। लोग चाय-वाय-पीकर अुनकी कविता या कहानी सुननेकी अपेक्षा अुनसे अनुरोध करते—"अश्कजी जरा ओ कुत्ते दी बोली तों सुनाओ" अथवा "जरा ओ कनारीवाले दी आवाज तों लगाओ!" और मन बुझा होनेके बावजूद अश्कजी अुनका अनुरोध पूरा कर देते।

वह दिन सो आजका दिन अश्कजी निरन्तर अैसा कर रहे हैं। अुनमें विनोद-वृत्ति Sense of Humour का अभाव नहीं और वे अेकदम अपने साहित्यकारकी महानताको भूलकर आप लोगोंके स्तरपर अुतर, अुनका मनोरंजन करने लगते हैं।

आम जनताकी रुचिके अिस हास्यास्पद पक्षने जहाँ अश्कजीके साहित्यकारको मन दुखाया होगा, वहाँ अुसे लाभ भी कम नहीं पहुँचाया। अपने अिसी गुणकी बदौलत अुन्हें बिलकुल अजनबियोंसे घुल मिल जानेका अवसर मिला है, जिसने न केवल अुनकी अनुभूतियोंमें

[1] लोढीका त्यौहार दिसम्बरमें होता है और अुस रात पंजाबी होली जैसी आजकल है अुसके अिर्द-गिर्द।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृद्धि की है, बल्कि अुनके व्यंग्यकी धारको भी तेज किया है।

× × ×

अपनी अुदासीके क्षणोंमें अश्कजी अपनी बातों, चुटकलों अथवा अभिनय हीसे लोगोंका मन नहीं बहलाते वरन् हास्य रसके नाटक भी अुन्हीं क्षणोंमें लिखते हैं। यह अजीब बात है कि जब वे चिंतित और परेशान होते हैं अुन्हें सदा हास्यरसकी चीजें लिखनेकी सूझती हैं। अपनी हास्यरसकी कहानियोंके संग्रह "छींटे" में अुन्होंने यह बात लिखी भी है। "पर्दा अुठाओ पर्दा गिराओ" के हास्यरस भरे नाटक भी प्रायः वैसी ही अवस्थामें लिखे गअे हैं। हो सकता है अुनका चिन्तित मन हास्यकी सामग्री जुटाकर कुछ बहल जाता है। यह भी हो सकता है कि अुस चिन्तित अुदास मानसिक स्थितिमें अुनकी दृष्टि बड़ी तीव्र हो जाती है और वे अपनी ओर अपने अिर्द-गिर्द रहनेवाले लोगोंकी कमजोरियोंको और भी स्पष्टतासे देखने लगते हैं, जो भी हो हिन्दी साहित्यको अुनके अुदास क्षणोंकी देन बड़ी महत्वपूर्ण है क्योंकि हिन्दीमें हास्य रस--वह भी शिष्ट हास्यका नितान्त अभाव है।

गम्भीर नाटक अश्कजीने सबके सब अुन दिनोंमें लिखे जब वे स्वस्थ रहे, कहीं-न-कहीं नौकर रहे और घरके खर्चकी अुन्हें चिन्ता नहीं रही। अपना नाटक "तूफानसे पहले" चरवाहेके सभी अेकांकी और आदि मार्गके अधिकांश नाटक अुन्होंने प्रीतनगर और रेडियोकी नौकरीमें लिखे। अपना वृहद अुपन्यास "गिरती दीवारें" अुन्होंने प्रीतनगरसे बम्बअीकी फिल्मी दुनिया तक अपनी आठ वर्षकी नौकरीके दौरानमें लिखा। अिधर जबसे कौसल्याजीने अुनकी पुस्तकोंका प्रकाशन करके अुन्हें अपेक्षाकृत निश्चिन्त कर दिया है, अश्कजी फिर गम्भीर कृतियोंकी ओर मुड़े हैं। अभी अुनकी लेखनीसे दूसरा वृहद अुपन्यास "गर्म राख" और अेक खण्ड काव्य "चाँदनी रात और अजगर" आअे हैं। और अिधर वे गम्भीर नाटक और अुपन्यास लिखनेका प्रोग्राम बना रहे हैं।

× × ×

अश्कजी जबतक अेमेचोर अथवा व्यावसायिक थिअेटरके सान्निध्यमें रहे, वे कोअी नाटक नहीं लिख सके, जब वे नाटक लिखने लगे तो न केवल व्यावसायिक बल्कि अेमेचोर रंगमंच भी अुसके साथ बैठ गया। लाहौरमें अुन दिनों अेमेचोर रंगमंच जीवित था, गवर्नमेन्ट कालेजके मंचपर नाटक होते थे और प्रसिद्ध हास्य-रस लेखक पतरस (यू० अेन० ओ० में पाकिस्तानके प्रतिनिधि प्रो० अे० अेस० बुखारी) तथा प्रसिद्ध नाटककार श्री अिम्तियाज अली ताज अभिनय करते थे, पर वे मौलिक नाटक लिखनेके बदले किसी पश्चिमी नाटकका अर्दू अनुवाद किया करते थे। अिसके अतिरिक्त लाहौरका अेमेचोर रंगमंच पुराने और नअेमें चुनाव न कर सका था। पुरानेका मोह अभीतक बाकी था और नअेसे अुनका अुतना परिचय नहीं था। अश्कने अुन्हीं दिनों अपना अैतिहासिक नाटक "जय-पराजय" लिखा। पर जय-पराजय लिखते समय भी अुन्हें अिस बातका अेहसास था कि वह ढर्रा नहीं चलेगा और अुन्हें अपनी प्रतिभा वैसे नाटक लिखनेमें न लगानी चाहिअे। जय-पराजयके पहले संस्करणकी भूमिकामें वे लिखते हैं :—

"नाटक मुख्यतः खेलनेकी चीज है, अिसे लिखते समय नाटककारके लिअे रंगमंचकी आवश्यकताओंका ध्यान रखना बड़ा जरूरी है। मुझे रंगमंचका यथेष्ट अनुभव है, स्टेजका भी मैंने काफी ध्यान रखा है और यह नाटक (यदि कोअी खेलना चाहे तो) सफलतापूर्वक, कुछ परिवर्तनोंके साथ, खेला भी जा सकता है। तब प्रश्न अुठता है कि मैंने अिसमें कुछ परिवर्तनोंकी गुँजाअिश ही क्यों रखी? अिसे पूर्ण रूपसे रंगमंचके अुपयुक्त क्यों न बनाया?"

और यह प्रश्न करके अश्कजी स्वयं अिसका अुत्तर देते हैं जो अुस समयकी स्थितिको स्पष्ट करता है। अश्कजी लिखते हैं :

"दुर्भाग्यवश हमारे देशमें स्टेज नामकी चीज अब नहीं रही। सिनेमाने पूर्ण रूपसे स्टेजको पीछे धकेल दिया है। दूसरे देशोंमें भी सिनेमाका आधिपत्य है, पर वहाँ रंगमंचको भी अुपयुक्त स्थान मिला हुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। वहाँ नाटक कम्पनियाँ छोटे-छोटे नाटक खेलती हैं, जो सिनेमाकी भाँति अधिक-से-अधिक दो घंटोंमें समाप्त हो जाते हैं। व्यावसायिक रंगमंचपर भी वैसे ही नाटक खेले जाते हैं। अुनमें तीन या चार बड़े-बड़े दृश्य होते हैं। अुन्हें ही अंक कहा जाता है। वहाँ अेकांकियोंका भी रिवाज है। हमारे देशमें अैसा करना असम्भव-सा ही है। हमारे यहाँ आजकल नाटक सिर्फ पढ़े जाते हैं। नाटककार नाटक लिख देता है और यदि कोअी खेलना चाहे तो अपनी आवश्यकतानुसार अुसमें परिवर्तन कर लेता है।

अिसी कारण मैंने भी नाटकमें पाठकोंकी सुविधाका अधिक ध्यान रखा है। नाटककी आरम्भिक घटना दूसरे अंकके पहले दृश्यसे शुरू होती है, किन्तु पहला अंक पाठकों हीकी सुविधाको ध्यानमें रखकर लिखा गया है...."

अश्कजी यदि रंगमंचके लिअे नाटक लिखते-- विशेषकर आधुनिक रंगमंचके लिअे तो निश्चय ही 'जय पराजय' का पहला अंक अुड़ा देते और शेष चार अंकोंके २७ दृश्योंकी कहानी केवल तीन या चार बड़े-बड़े दृश्यों अथवा अंकोंमें रख देते हैं।

'जय पराजय' लिखते समय ही वैसा नाटक लिखना अुन्हें व्यर्थ-सा लगा था और अुन्होंने मनमें फैसला कर लिया था कि वे अब वैसा नाटक न लिखेंगे। दूसरा बड़ा नाटक अुन्होंने "स्वर्गकी झलक" लिखा। न केवल अुसका कलेवर अुन्होंने जय पराजयसे आधा कर दिया, बल्कि अुसके अंक घटाकर चार कर दिअे। चार अंकोंमेंसे पहले तीनमें केवल अेक-अेक दृश्य रखा और चौथेमें चार!

स्वर्गकी झलककी भूमिकामें अुन्होंने लिखा :

"दो वर्ष पहले (१९३७ में) जय पराजय लिखते समय ही मैंने सोचा था कि शायद यह मेरा पहला और अन्तिम नाटक होगा और यद्यपि आज अुसकी दूसरी आवृत्ति चार हजारकी हो रही है और अिस बीचमें देशकी सभी मुख्य-मुख्य पत्र-पत्रिकाओंने विस्तृत समालोचनाअें करते हुअे अुसका स्वागत किया है तो भी आज वैसा नाटक लिखनेका मेरा मन नहीं हुआ।"

"स्वर्गकी झलक" के बाद अश्कने "छठा बेटा", "कैद", "अुड़ान", "भंवर", "पैंतरे", "अलग-अलग रास्ते" और "अंजो दीदी" बड़े नाटक लिखे। अिनमें "छठा बेटा" और "पैंतरे" को छोड़कर अश्कने अंकों और दृश्योंमें कोअी अन्तर नहीं किया। "कैद" में और "अुड़ान" में चार-चार अंक हैं, "भंवर" और "अलग-अलग रास्ते" में तीन-तीन और "अंजो दीदी" में दो। अिनमें सेट भी अेक है और "अंजो दीदी" के अतिरिक्त सबमें संकलन-त्रय अपूर्व है।

"अंजो दीदी" में पहले और दूसरे अंकमें बीस वर्षका व्यवधान है, पर अश्कने अपने कथानक और पात्रोंको अैसे रखा है कि न दृश्य (सेटिंग) बदलता है न कथानकका क्रम टूटता है! "छठा बेटा" और "पैंतरे" में अश्कने और भी नअी कला अपनाअी, छठा बेटा स्वप्न नाटक है और अुतने ही समयमें दरअसल खत्म होता है, जितनेमें कि रंगमंचपर अभिनीत होता है। "पैंतरे" में तीन सेटिंग और छह दृश्य हैं, अर्थात् प्रत्येक अंकमें दो-दो, लेकिन अश्कने कुछ अिस तरह अुन्हें लिखा कि प्रत्येक अंकके दो दृश्य मिलकर अेक बन गअे हैं, पर्दा केवल क्षण भरके लिअे समयके व्यवधानका निर्देश करनेके लिअे गिरता है, फिर अुसी दृश्यपर अुठ जाता है।

अिस तरह "जय पराजय" के बाद, अुसकी सफलता और स्वागतके बावजूद (आज तो अुसका पाँचवाँ संस्करण हो चुका है और वह पुस्तक ४०,००० से अूपर बिक चुकी है) अश्कने वैसा नाटक नहीं लिखा, पाठ्यक्रममें लगनेवाले अैतिहासिक नाटक लिखनेके लोभसे अपने आपको बचाये रखा और हिन्दी-नाटकको पुरानी लीकसे निकालकर नअे डरेपर चलानेकी कोशिश की। अुसका कलेवर ही नहीं बदला, अुसकी आत्मा भी बदली। काल्पनिक और अयथार्थ अैतिहासिक नाटक लिखनेके बदले, अुन्होंने यथार्थवादी सामाजिक नाटक लिखे और देशकी चेतना ही को नहीं, रंगमंचको जगानेमें भी अपना योग दिया।

** ** **

अिसी बीचमें (जब अश्क "जय पराजय" लिख चुके थे और नअे माध्यमकी सोचमें थे) अेक घटना घटी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसका हिन्दी नाटकके अितिहासमें महत्वपूर्ण स्थान है। १९३८ में हंसने अपना "अेकांकी-नाटक-अंक" निकालनेकी घोषणा की। क्योंकि प्रेमचन्दके समयसे ही हंसके साथ अश्कका गहरा नाता रहा है, अुन्होंने हंसके लिअे अेकांकी लिखना शुरू किया। अिससे पहले अश्क दो अेकांकी लिख चुके थे। "पापी" और "वेश्या"। शुरू अुन्होंने वेश्या पहले किया था, पर खतम पापी पहले हुआ। ये दोनों अुर्दूमें थे। हंसके लिअे अश्कजीने हिंदी में ही बिल्कुल नया नाटक लिखना आरम्भ किया और सात दिनमें "अधिकारका रक्षक" लिखा और हंसको भेज दिया। हंस-सम्पादकने जो अश्कजीके परम मित्रोंमेंसे हैं, अिस अुलाहनेके साथ नाटक लौटा दिया कि अुन्हें थर्ड रेट चीज भेज दी गअी है।

अश्कजी अुन दिनों "सरस्वती" में भी लिखा करते थे। "अधिकारका रक्षक" अुन्होंने सरस्वतीको भेज दिया और हंसके लिअे "लक्ष्मीका स्वागत" लिखा। "लक्ष्मीका स्वागत" अेक ही दिनमें लिखा गया। अश्कजीकी परिचिता अेक अध्यापिकाने अुसे अपनी अेक छात्रासे कापी कराया और वह दूसरे दिन हंसको भेज दिया गया। दोनों नाटक अेक ही महीनेमें दोनों पत्रिकाओंमें छपे और चाहे हंस-सम्पादकने "अधिकारका रक्षक" को थर्ड रेट घोषित कर ठुकराया था, पर लोकप्रियताकी दृष्टिसे वह "लक्ष्मीका स्वागत" से जरा भी कम सिद्ध नहीं हुआ। "लक्ष्मीका स्वागत" ही की भाँति यह विभिन्न संकलनोंका अंग बना, अुसीकी तरह अश्कजीको अिससे भी डेढ़-दो हजार रुपया अब तक मिल चुका है और यद्यपि अिसके बाद अश्कजीने बड़े सफल अेकांकी लिखे हैं, पर अेमेचोर रंगमंचपर आज भी यह अुतना ही लोकप्रिय है। गत अेक वर्षके अन्दर-अन्दर डिफेंस डिपार्टमेण्ट, नअी दिल्लीकी नाटक क्लब अिसे दो बार खेल चुकी है।

अिस बातके अतिरिक्त कि अश्कने अुसके लिअे दो सफल अेकांकी लिखे, हंसके अेकांकी-नाटक-अंकमें अेक और बात हुअी जिसका अश्कके नाटक-साहित्यपर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। अुस अंकमें श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकारने अेक लेख लिखा जिसका मतलब यह था कि अेकांकीकी कोअी कला नहीं और साहित्यमें अुसका कोअी स्थान नहीं। अिस लेखका अुत्तर अश्कजीने दिया कि अेकांकीकी अपनी विकसित कला है और साहित्यमें अिसका महत्वपूर्ण स्थान है। अश्कजीके अिस अुत्तरके बाद हंसमें खासी गर्मा-गर्म बहस चली, जिसमें जैनेन्द्रजीने भी भाग लिया और अुन्होंने प्रश्न अुठाया कि जब हिन्दीका अपना रंगमंच ही नहीं तो अेकांकी लिखनेसे लाभ? अुनका विचार था कि अेकांकी केवल पढ़नेके लिअे लिखे जाने चाहिअे और स्वयं अुन्होंने हंसमें "टकराहट" नामसे अेक अेसा अेकांकी लिखा भी था।

अश्कजीका मत था कि यदि आज देशका रंगमंच सोया हुआ है तो अिससे यह सिद्ध नहीं होता कि वह हमेशा सोया रहेगा। हमें न केवल अच्छे नाटक लिख कर अुसे जगानेमें सहायता देनी चाहिअे, वरन् अुस समयके लिअे भी तैयार रहना चाहिअे जब वह पूरी तरहसे जग जाअेगा और खेलनेके लिअे नअे नाटकोंकी आवश्यकता होगी। कुछ तो अिसीलिअे कि अश्कजीको अपनी बातका पूरा विश्वास था और कुछ अिसलिअे कि वे बड़े हठी आदमी हैं, पिछले १५ वर्षोंमें, जब "हंस" के अुस विशेषांकके अधिकांश नाटककार मौन हो गअे, अश्क समाजकी वर्तमान समस्याओंपर सुन्दर अेकांकी लिखते रहे। अिस बीचमें धीरे-धीरे अेमेचोर रंगमंचपर अुनकी माँग बढ़ती गअी और आज मद्राससे लेकर काश्मीर तक कॉलेजों और स्कूलोंके रंगमंचोंपर अश्कके नाटक खेले जा रहे हैं। देशका व्यावसायिक रंगमंच अभी नहीं जगा। पृथ्वी थिअेटर्सके रूपमें अुसने अेक हलकी-सी करवट भर ली है, जब वह पूरी तरह जग जाअेगा तो अश्कके बड़े नाटक अुसपर अपना अुचित स्थान पाअेंगे अिसमें कोअी सन्देह नहीं।

१९४१ के जूनमें अश्कजी प्रीतनगर छोड़कर आल अिण्डिया रेडियो दिल्लीमें चले गअे। जहाँतक अुनके नाटक साहित्यका सम्बन्ध है रेडियोके ये तीन वर्ष बड़े अुर्वर रहे। "चरवाहे" और "पक्का गाना" के अधिकांश अेकांकी तथा अपने बड़े नाटक "कैद", "अुड़ान" और "भँवर" अुन्होंने अिसी कालमें लिखे। न केवल यह, बल्कि "अलग अलग रास्ते" और "अंजो दीदी" के संक्षिप्त संस्करण भी अुन्हीं दिनों लिखे गअे और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'आदिमार्ग' और 'अंजो दीदी' के नामसे, अपने अुसी संक्षिप्त रूपमें अुनके संग्रह "आदिमार्ग" का अंग बने।

जहाँतक रेडियो नाटकका सम्बन्ध है अुसकी अपनी कला है। अश्कजी अुस कलासे भली भाँति परिचित ह, क्योंकि अपनी नौकरीके दिनोंमें अुन्होंने—"तुलसीदास," "कबीर," "मर्यादा पुरुषोत्तम राम," "अुर्मिला," "भगवान बुद्ध" और "निर्मला" नामसे रेडियो रूपक लिखे (अन्तिम नाटक प्रेमचन्दके अुपन्यासका रेडियो संस्करण था) अिनमें "मर्यादा पुरुषोत्तम राम" का रेकार्ड बी. बी., सी. से भी ब्राडकास्ट हुआ। लेकिन अश्कजीने अिनमेंसे अेक नाटक भी किसी संग्रहमें प्रकाशित नहीं कराया। अिधर कअी नाटककारोंने अपने अैसे संग्रह प्रकाशित कराअे हैं। अश्कजी भी चाहते तो अिन नाटकोंको अेक संग्रहमें संकलित करके हजार दो हजार रुपया कमा लेते, लेकिन अुनको रेडियो-रूपक लिखना या छपवाना रुचिकर नहीं। यह ठीक है कि अुनके लगभग तमाम नाटक रेडियोसे ब्राडकास्ट हुअे हैं, लेकिन अश्कजीने अुन्हें रेडियोके लिअे न लिखकर स्टेजके लिअे लिखा और रेडियोके लिअे अुन्हींको काँट-छाँटकर तैयार कर दिया। अपने नाटक संग्रह "पर्दा अुठाओ, पर्दा गिराओ" के परिशिष्टमें अिसका कारण देते हुअे वे लिखते हैं.....

"अिसका यह कारण नहीं कि मैं रेडियो-नाटकको कम महत्वकी चीज समझता हूँ अथवा अुसकी कलाको निम्नकोटिका ख्याल करता हूँ या फिर मेरे ख्यालमें रेडियो नाटककी अपील कम है। रेडियो नाटककी अपनी अुन्नत कला है और यदि अुस कलाको ध्यानमें रखकर नाटक लिखा जाय तो वह किसी खेले जानेवाले नाटकसे कम सुन्दर न होगा। रही अुसकी अपील, तो रेडियोकी पहुँच कहाँ-कहाँतक है? अिसे सभी जानते हैं। कम-से-कम आज दिन तो वह रंगमंचकी अपेक्षा कहीं व्यापक है। यह माननेमें भी मुझे कोअी संकोच नहीं कि जो थोड़ी बहुत ख्याति नाटककारके रूपमें मुझे मिली है अुसमें रेडियोका बड़ा हाथ है। किन्तु अिन सब बातोंके होते हुअे भी, केवल पाठकों अथवा श्रोताओंको ध्यानमें रखकर मेरे नाटक न लिखने और रंगमंचके अभावमें भी रंगमंचके ही लिअे लिखनेका सबसे बड़ा कारण मेरी व्यक्तिगत रुचि है।.....

क्या समाअेगी वहाँ सूरत कोअी?
जिसकी आँखोंमें तेरी छब बस गअी।
नाटकसे अश्कके अिश्कका भी यही हाल रहा।"

× × ×

१९४५ में अश्कजी फिल्मिस्तान बम्बअीमें चले गअे। जिस प्रकार रेडियोमें रहकर अुसके लिअे निरन्तर काम करते हुअे भी वे अुससे अगल बने रहे, अुसी तरह दो वर्षतक फिल्मी दुनियामें रहकर वे अुसकी दलदलमें नहीं फँसे। दो साल बाद अुन्होंने नौकरीसे त्यागपत्र दे दिया। फिल्मी दुनियाको छोड़नेका कारण अंगूरोंका खट्टा होना न था। अश्कजीका संक्षिप्त फिल्मी जीवन बड़ा सफल रहा—अुन्होंने दो वर्षके अल्प कालमें दो कहानिओंके डायलाग लिखे। मजदूरके डायलाग १९४५ के सर्व श्रेष्ठ डायलाग समझे गअे और अश्कजीको अिस अभिप्रायका अेक सर्टीफीकेट भी मिला। "सफर" बड़ी सफल हुअी। अिसके साथ-साथ अश्कने डाअिरेक्टर नीतिन बोसके "मजदूर" और अशोक कुमारके "आठ दिन" में हास्य रस भरी भूमिकाओंमें अभिनय किया; डाअिरेक्टर वीरेन्द्र देसाअीके लिअे अेक कहानी और कुछ गाने लिखे और अिस तरह दो वर्षके अर्सेमें नौ-दस सौ रुपया महीना खर्च करके चौदह-पन्द्रह हजार रुपया जोड़ लिया। अश्क चाहते तो अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभाके कारण फिल्ममें दोनों हाथोंसे रुपया पैदा करते। लेकिन जैसा कि वे स्वयं कहते हैं—अेक दिन भी अुस संसारमें अुनका मन नहीं लगा और न ही अुन्हें वास्तविक खुशी नसीब हुअी। दिन-रात फिल्ममें काम करनेके बावजूद वे साहित्य-सृजनमें लगे रहे। अुन्होंने अुन दो वर्षोंमें "गिरती दीवारें" का अुर्दू संस्करण तैयार किया। "कैद" और "अुड़ान" का परिमार्जन किया। "तूफानसे पहले" और "कअिसा साव कअिसी आया" नाटक लिखे और "कैप्टन रशीद" कहानी लिखी। अिनमें सबकी सब कृतियाँ अश्कके साहित्यमें विशिष्ट स्थान रखती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस दोहरे-तेहरे कामका वही नतीजा हुआ जो अिस स्थितिमें होता, १९४६ के अन्ततक अुनका स्वास्थ्य चौपट हो गया। अुन्हें हल्का-हल्का ज्वर आने लगा और डाक्टरोंने यक्ष्माकी घोषणा कर दी।

× × ×

लेकिन बम्बअीके अिन दो वर्षोंने अश्कके नाटककारको बहुत कुछ दिया। जैसा कि अुनके संस्मरण "नौटंकीसे पृथ्वी थिअेटर्सतक" से पता चलता है, बम्बअीमें अुन्होंने न केवल "अिपटा" के कुशल निर्देशक बलराज साहनी द्वारा निर्देशित नाटक देखे, बल्कि अिपटाके बेले (रहस) पृथ्वीराजके नाटक तथा हिम केसर कोडी द्वारा निर्देशित प्रीस्टलका नाटक "They Came to a City" भी देखा। अितना ही नहीं अश्कजीने वहाँ "अिपटा" के लिअे अपना प्रसिद्ध नाटक "तूफानसे पहले" लिखा और स्वयं अुसका निर्देशन किया।

लिखे हुअे बेजान शब्द रंगमंचपर जाकर कैसे रूप बदल लेते हैं? वही शब्द जिन्हें पढ़ मनमें सिहरन भी नहीं अुठती किस प्रकार कुशल अभिनेताके ओठोंसे निकलते समय रोंगटे खड़े कर देते हैं, अिसका अेक अुदाहरण "तूफानसे पहले" भी है। जिन दिनों अश्कजी "तूफानसे पहले" का निर्देशन कर रहे थे, अुन्हीं दिनों हैदराबाद दक्खिनका अेक लड़का "सअीद रजी" अुनके पास कुछ दिन रहने और कुछ सीखनेको आया। अेश्कजीने अुन्हीं दिनों "तूफानसे पहले" लिखा था। वह अुसे सुनाया तो अुसे कुछ वैसा पसन्द न आया, पर जब वह देवघर हाल गया, जहाँ "अिपटा" की रिहर्सलें होती थीं और अुसने अश्कजीको निर्देशन करते और अुन्हीं शब्दोंको भाव भंगियों और अभिनयके सग्र कहते सुना तो--अुसने लिखा है--कि अुसके रोंगटे खड़े हो गअे और नाटककी बारीकियाँ और ओज अुसपर सुस्पष्ट हो गया। यही नहीं, वही नाटक जिसको "अिपटा" की मुख्य मण्डली करनेको तैयार न हुअी थी और जिसे अश्क नौसिखिअे गुजराती लड़कोंको लेकर स्टेज करने जा रहे थे, जब अेक महीने बाद फुल रिहर्सल की शाम "अिपटा" की मुख्य मण्डलीने देखा तो अुन्हें अितना अच्छा लगा कि अपना नाटक छोड़ सभीके सभी अुसमें अुतर पड़े।

नाटक देखने और नाटक करने, फिल्मोंके लिअे गीत, डायलाग, कहानी सीनारियाँ लिखने, अुनमें अेक्ट करने और निर्देशनमें सहायता देनेके साथ अश्कजी बम्बअीकी फिल्मी दुनियासे अमूल्य अनुभव लाये। फिल्मी-जीवनकी अनुभूतियोंपर आधारित अभी अुन्होंने दो ही नाटक लिखे हैं -- "मस्के बाजोंका स्वर्ग" (अेकांकी) और "पैंतरे" (पूरा नाटक) और फिल्मी जीवनकी जो यथार्थ, हास्यास्पद, लेकिन अुस हास्यके रहते भी दारुण और अपरूप झाँकी हमें अुन नाटकोंमें मिलती है, वह अिस बातका द्योतक है कि अश्कने बड़ी गहरी दृष्टिसे फिल्मी-जीवनको देखा है और हमें अुस जीवनपर आधारित और भी कृतियों की आशा करनी चाहिअे।

बम्बअीसे न केवल अश्कजी नाटककी भूख लेकर आअे, बल्कि नाटकके प्रचारका भी साधन ढूँढ़ लाअे। पृथ्वीराज कपूरने अपने अतुल स्वास्थ्य और धन दोनोंके जोरसे अेक थिअेटर कम्पनी खोली और देशका दौरा करके व्यावसायिक रंगमंचकी प्रतिष्ठा की। अश्कजीका स्वास्थ्य यक्ष्माके बाद कभी अच्छा नहीं रहा, हर साल तीन-चार महीनोंके लिअे वे पड़ जाते हैं, पर अिसपर भी अुन्होंने गत दो वर्षोंमें देशभरमें लम्बे-लम्बे दौरे किअे हैं और अकेले दम सभी पात्रोंकी भूमिकाओंमें स्वयं पार्ट कर अपने अेकांकियोंका प्रदर्शन किया है और अिस तरह न केवल सहस्रों लोगोंको हँसाया है, बल्कि अेमेचोर रंगमंचको जगाया है। अभी दो महीने पहले अुन्होंने अेक ही दौरेमें मद्रास, विजयवाड़ा, वर्धा, नागपुर, अिन्दौर, अुज्जैन, भूपाल, बड़ौदा और ग्वालियरमें अपने अेकांकियोंका प्रदर्शन कर, हिन्दी अेमेचोर रंगमंचमें नअी रूह फूँकी है। अुज्जैनमें तो अश्कजीके प्रवासमें ही वहाँके छात्रोंने अुनका नाटक खेल कर दिखाया।

अश्कजीके व्यक्तित्वका परिचय देते हुअे श्रीमती कौशल्या अश्कने लिखा है :

> "अश्कजीका स्वभाव अैसे शान्तिप्रिय व्यक्तिका-सा नहीं जो पहाड़की चोटीपर पहुँचकर अुसपर डेरा डाल ले, बल्कि अैसा चञ्चल राही है, जिसको कभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहाड़के शिखर पसन्द है, कभी गहरी घाटियाँ, जो कभी जन-संकुल नगरोंको पसन्द करता है और कभी निर्जन वीरानों-में जा रमता है। पराकाष्ठाअें अुसे पसन्द हैं, कोअी अेक सीमा-रेखा और मध्यका मार्ग जिसे रुचिकर नहीं।"

लेकिन आम मिलनेवालेको अश्ककी पहली झलक अेक सख्त फक्कड़ आदमीकी लगती है। अैसे युवक जो अुनके बेटेके बराबर हैं अुनसे अनायास खुल जाते हैं। अश्क अपने हृदयके अन्तःपुरको कृत्रिम शिष्टताकी चहार दीवारीमें कैद नहीं रखते। गोपनीयता अुनके लिअे गुनाह है और अुनकी स्पष्टता अितनी मुखर है कि लोगोंको अुनकी सरलता और निष्कपटतापर भी सन्देह होने लगता है। अुनका मन पर्दानशीन नहीं है, अिसलिअे वे मध्य वर्गके तंग रास्तेपर नहीं चलते। या तो अुन्हें खुले मैदानमें रेंगनेवाली पगडंडी भली लगती है या राजमार्ग। और शायद दोनोंको छोड़कर जब मजबूरन अुन्हें मध्य वर्गके तंग रास्तेपर चलना पड़ता है तभी अुनका आत्म-संघर्ष तीव्र हो जाता है, अुनके व्यंग्यकी धार तेज हो जाती है और हास्यका कल-कल निनाद गूँजने लगता है।

अश्क अस्वस्थ रहते हैं, पर सेहतमन्दोंसे ज्यादा काम करते हैं। ख्वाजा अहमद अब्बासने अपनी अुर्दू कहानी संग्रह "मैं कोन हूँ" अुनके नाम समर्पित करते हुअे दो ही पंक्तियोंमें अुनके व्यक्तित्वको अुजागर कर दिया है।

अुपेन्द्रनाथ अश्क—अेक सेहतमन्द मरीजके नाम जिसका फेफड़ा कमजोर और दिल मजबूत है।

गीत

—श्री नीरज

तब तुम आअे!

निरख निरखकर राह रात-दिन
काल पवनके पल-छिन गिन-गिन,
युग-युगसे दर्शनके प्यासे जब नयना पथराअे।
तब तुम आअे!

कैसे पूजा करें तुम्हारी
मेरा व्याकुल विरह-पुजारी,
मन्दिरके पट खुले फूल जब थालीके मुरझाअे।
तब तुम आअे!

बहुत हुअी अर्चना तुम्हारी
अब तुम पूजा करो हमारी
जिससे मेरी मूर्ति तुम्हारी ही मूरत बन जाअे।
तब तुम आअे!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मजाज़ लखनवी

—श्री हंसराज 'रहबर'

अिक लपकता हुआ शोला हूँ मैं।
अेक चलती हुओ तलवार हूँ मैं॥

अिन दो पंक्तिओंमें शायरका परिचय अुसीके शब्दोंमें आ गया है।

मुहम्मद अिकबालके बाद नअी पौधके जो शायर आअे अुनमें अिसरारुलहक 'मजाज' लखनवीका दर्जा बहुत अूँचा है। अुसने सन् ३० के आस-पास लिखना शुरू किया। अुस समय हमारी राजनीति अेक नअी करवट ले रही थी। देशमें बेकारी और मन्दी फैली हुअी थी। नौजवानोंके दिलमें समाजवादी विचार घर कर रहे थे और वे आजादी और अिन्कलाबके सपने देख रहे थे। नअे वलवले और नअे अरमान अुन्हें गुदगुदा रहे थे। मजाज़ अिन्हीं वलवलों और अिन्हीं अरमानोंका शायर था। "आहंग" अुसकी गजलों और नजमोंका अेक मात्र संग्रह है। मजाज चूँकि लोकप्रिय कवि थे; अिसलिअे यह संग्रह कअी बार प्रकाशित हो चुका है। हर नअे संग्रह-संस्करणमें वे अपनी नअी रचनाअें भी जोड़ देते थे। अिस समय मेरे सामने 'आहंग' का अन्तिम संस्करण है जो मार्च सन् १९५२ में प्रकाशित हुआ था। अिसमें मजाजकी गजलें और नजमें रचना-कालके क्रमसे प्रकाशित हुअी हैं और प्रत्येक रचनाके नीचे सन् भी छपा है। अिसमें पहली गजल सन् १९३० की लिखी हुअी है और अिस सालकी यह अेक मात्र रचना है। दो तीन शेर देखिअे और फिर खुद ही अन्दाज़ लगाअे कि नौजवानीके वलवलों और अरमानोंकी अभिव्यक्ति किस सुन्दर ढंगसे हुअी है:—

हुस्नको बे-हिजाब[1] होना था,
शौकको कामयाब होना था।
हिज्रमें[2] कैफे अिजतराब[3] न पूछ,
खूने दिल भी शराब होना था।
तेरे जलवोंमें घिर गयी आखिर,
जर्रेको आफताब होना था।

१. बेहिजाब—बे-परदा २. हिज्र—वियोग, जुदाअी ३. विकलताका आनन्द

कुछ तुम्हारी निगाह काफिर थी,
कुछ मुझे भी खराब होना था।

पदोंमें कैसी मस्ती और रवानी है और यह मजाजकी शाअरीकी शुरूआत है। क्रान्तिकारी विचारोंका प्रभाव सिर्फ राजनीति और समाज ही पर नहीं, सब प्रकारकी भावनाओंपर पड़ता है। क्रान्तिके युगमें सौंदर्य और प्रेमके बारेमें भी शाअरका दृष्टिकोण बदल जाता है। वह प्रेम सम्बन्धी भावनाओंको व्यक्त करते हुअे भी रूढ़िगत परम्पराका परित्याग करता है। अपनी राह आप बनाता है। सन् ३१ में लिखी गअी अेक गजलका अेक शेअर है:—

बतानेवाले वहींपर बताते हैं मन्जिल,
हजार बार जहाँसे गुजर चुका हूँ मैं।

नौजवान शाअर किसीसे पूछने पोतानेका मुहताज नहीं था। अुसमें साहस और स्वाभिमान था और विचार-शक्ति थी; अिसलिअे वह अपनी मंजिल आप निश्चित करके आगे बढ़ना चाहता था। मजाज़ने सन् १९३५ में आत्म-परिचय (तुआरफ़) के नामसे अेक कविता लिखी थी। कविता लम्बी है; लेकिन कुछ शेअर प्रस्तुत हैं।

खूब पहचान लो अिसरार[1] हूँ मैं
जिनसे अुलफतका तलबगार हूँ मैं।
अिश्क ही अिश्क है दुनिया मेरी,
फितना-अे अक्लसे बेज़ार हूँ मैं।
अैब जो हाफिजों खय्याममें था,
हाँ कुछ अुसका भी गुनहगार हूँ मैं।
कुफ्रो अलहादसे नफरत है मुझे,
और मज़हबसे भी बेजार हूँ मैं।
महफिले[2] दहरपे तारी है जमूद[3],
और बारफ्ता-अे[4] रफ्तार हूँ मैं।
अिक लपकता हुआ शोला हूँ मैं,
अेक चलती हुअी तलवार हूँ मैं।

१. अिसरारुलहक मजाज़ २. दुनिया ३. जड़ता ४. गतिका प्रेमी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस आत्म-परिचयको पढ़ते समय सन् ३५-३६ में देशकी राजनैतिक और सामाजिक स्थितिको भी सामने रखनेकी जरूरत है। पण्डित जवाहरलाल नेहरू काँग्रेसके प्रधान थे। वे नौजवानोंके प्रिय नेता थे, जो राजनीतिमें अधिकाधिक भाग ले रहे थे और किसी-न-किसी रूपमें संगठित हो रहे थे। अेक ओर तो यह नौजवान वर्ग आजादीके मार्गपर बड़ी तेजीसे बढ़ना चाहता था और दूसरी ओर मजहबके नामपर साम्प्रदायिकताको हवा दी जा रही थी और विदेशी साम्राज्यवादी और देशी प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ गुलामी और पुरानी व्यवस्थाको बनाये रखनेके लिअे प्रयत्नशील थीं। अिसरारुल हक मजाज़ निश्चय ही प्रगतिशील शक्तियोंकी अगली पंक्तिमें खड़ा था और क्रांतिकी पताका लहराते हुअे देशके "नौजवानसे" कह रहा था:—❀

जलाले आतिशो बरको सहाब पैदा कर
अजल[1] भी काँप अुठे वह शबाब[2] पैदा कर।
तरे खराममें है जलजलोंका राज निहाँ[3]
हर अेक गाम पर अिक अिंकलाब पैदा कर।
तेरा शबाब अमानत है सारी दुनियाकी
तू खारजारे[4] जहाँ में गुलाब पैदा कर।

कविता काफी लम्बी है; लेकिन शाअर नौजवानों से क्या चाहता है, वह अितने ही से मालूम हो जाता है। अुन्हीं दिनों वह नौजवान औरतसे भी सम्बोधित होता है और अुससे तकाजा करता है कि वह बेकारकी लज्जा छोड़कर क्रांतिकी पताका अुठाअे और नौजवानोंके साथ कन्धेसे कन्धा मिलाकर आगे बढ़े। चन्द शेअर सुनिअे। सिर्फ तुकबन्दी नहीं सच्ची और अुत्कृष्ट भावनाओंसे ओतप्रोत हैं और शाअरके दिलसे निकले हैं :—

हिजाबे फितना[1] परवरको अुठा लेती तो अच्छा था,
खुद अपने हुस्नको पर्दा बना लेती तो अच्छा था।
तेरी नीची नजरखुद तेरी अिस्मतकी मुहाफिज है,
तू अिस निश्तरकी तेजी आजमा लेती तो अच्छा था।
तेरे माथेका टीका मर्दकी किस्मतका तारा है,
अगर तू साजे[2]-बेदारी अुठा लेती तो अच्छा था।
तेरे माथेपै यह आंचल बहुत ही खुला है, लेकिन
तू अिस आंचलसे अिक परचम[3] बना लेती तो अच्छा था।

अब मजाज़की शाअरी निखर आअी थी। अुसमें देशभक्तिकी अुत्कृष्ट भावनाअें थीं और शब्दोंका माधुर्य था। नौजवान कविताके अिस नअे स्वरपर मुग्ध हो अुठे और मजाज़ अुनका प्रिय कवि बन गया और वह अुनकी हृदयगत भावनाओंको सुन्दर और सरस भाषामें व्यक्त करता रहा। चूंकि वह अेक व्यक्तिका स्वर नहीं, सम्पूर्ण जातिका, पूरे राष्ट्रका सम्मिलित स्वर था; अिसलिअे वह स्वर बहुत ही अूँचा और ओजपूर्ण था। "हमारा झण्डा" नामी कविताके दो तीन बंद सुनिअे और साम्राज्यवादी सत्ताको चुनौती देनेवाले अुस अैतिहासिक स्वरको मुखरित देखिअे :—

शेर चलते हैं दर्राते हुअे,
बादलोंकी तरह मण्डलाते हुअे,
जिन्दगीकी रागनी गाते हुअे,
आज झण्डा है हमारे हाथमें।

हाँ यह सच है भूकसे हैरान हैं,
पर यह मत समझो कि हम बे जान हैं,
अिस बुरी हालमें भी तुफान हैं,
आज झण्डा है हमारे हाथमें।

जानते हैं अेक लश्कर आअेगा,
तोप दिखलाकर हमें धमकाअेगा,
पर यह झण्डा भी योंही लहराअेगा,
आज झण्डा है हमारे हाथमें।

कब भला धमकीसे घबराते हैं हम,
दिलमें जो होता है कह जाते हैं हम,
आस्माँ हिलता है जब गाते हैं हम,
आज झण्डा है हमारे हाथमें।

---

१. मृत्यु २. जवानी ३. रहस्य छिपा है ४. कांटों भर जंगल

❀ अपने भीतर आग, बिजली और बादलकी-सी प्रतिभा अुत्पन्न कर।

१. फितना-पालनेवाला पर्दा २. जागृतिका वाद्य ३. पताका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाख लश्कर आअें कब हिलते हैं हम,
आँधियोंमें जंगकी खिलते हैं हम,
मौतसे हँसकर गले मिलते हैं हम,
आज झण्डा है हमारे हाथमें।

जो राष्ट्र स्वतंत्रताके मूल्यको पहचान चुका हो और अुसकी प्राप्तिके लिअे संगठित हो चुका है, अुस समय अुसमें जो अदम्य साहस अुत्पन्न हो जाता है, अिन पँक्तियोंमें अुसीकी अभिव्यक्ति हुअी है, कवि राष्ट्रीय गौरव और अभिमानमें भरकर बार-बार दोहराता है– "आज झण्डा है हमारे हाथमें" अर्थात् हम संगठित हैं, तुम्हारी मानवता विरोधी शक्तिको चुनौती देने निकले हैं, तू लश्करसे हमें क्या डराअेगा––

मौतसे हँसकर गले मिलते हैं हम,
आज झण्डा है हमारे हाथमें।

अुन दिनों समाजवादी और साम्यवादी विचारोंका बोलबाला था। किसान सभाओं और मजदूर यूनियनोंका संगठन हो रहा था। देशकी सजग मेहनतकश जनता क्रान्तिको अेक नया बल और अेक नअी दिशा प्रदान कर रही थी। मजाज़ने क्रान्तिकी अिस नअी शक्तिको भी पहचान लिया था "मजदूरका गीत" कविताके जो सन् १९३८ में लिखी गअी थी, दो चार वन्द सुनिअे––

मेहनतसे यह माना चूर हैं हम,
आरामसे कोसों दूर हैं हम।
पर लड़नेपर मजबूर हैं हम,
मजदूर हैं हम, मजदूर हैं हम।

गो आफतो गमके मारे हैं,
हम खाक नहीं हैं तारे हैं।
अिस जुगके राजदुलारे हैं,
मजदूर हैं हम मजदूर हैं हम।

बननेकी तमन्ना रखते हैं,
मिटनेका कलेजा रखते हैं,
सरकश[1] हैं सर कूंचा रखते हैं।
मजदूर हैं हम, मजदूर हैं हम।

जिस सम्त[2] बढ़ा देते हैं कदम,
झुक जाते हैं शाहोंके परचम[3]
सावंत हैं हम, बलवंत हैं हम,
मजदूर हैं हम, मजदूर हैं हम।

गो जान पै लाखों बार बनी,
कर गुजरे मगर जो जीमें ठनी,
हम दिलके खरे बातोंके धनी,
मजदूर हैं हम, मजदूर हैं हम!

जिस रोज बगावत कर देंगे,
दुनियामें कयामत कर देंगे।
ख्वाबोंको हकीकत कर देंगे,
मजदूर हैं हम, मजदूर हैं हम।

मजाज़ लखनअूके अेक समृद्ध घरानेमें अुत्पन्न हुअे और अुन्होंने अलीगढ़ यूनिवर्सिटीमें शिक्षा पाअी। मैंने (सन् १९४८ में) यह कविता पढ़ी, तो मैं हैरान था कि कविके मनमें मजदूरके प्रति यह श्रद्धा और अुसकी क्रांतिकारी शक्तिमें यह विश्वास कैसे अुत्पन्न हुआ। समृद्ध परिवारके और मध्य वर्गके बुद्धिजीवी लोग प्रायः अपने आपको ही क्रान्तिका नेता समझते हैं और मजदूरके अैतिहासिक रोलपर अुनकी नज़र नहीं जाती या बहुत कम जाती है। संयोगवश कुछ दिनों बाद मजाज़ दिल्ली आअे और साहिर लुधियानवीके साथ कअी महीने वहीं रहे। सीधे और सरल स्वभावके व्यक्ति थे। आम तौरपर बात कम करते थे; लेकिन जब मूडमें होते, तो पतेकी बातें कहते थे। अेक दिन जब वे सचमुच मूडमें थे, तो मैंने अुनसे अिस श्रद्धा और विश्वासका रहस्य पूछा तो अुन्होंने बताया:––

"अुन दिनों मैं स्टूडेंट फैड्रेशनमें खूब काम करता था। स्वामी सहजानंद मुझे किसान सभाओंके जलसोंमें बुलाते थे, जहाँ मैं हजारों किसानोंके सामने नजमें पढ़ता था और फिर कानपुर ट्रेडयूनियनोंके बड़े-बड़े जलसे होते थे, अुनमें भी मुझे बुलाया जाता था। अिन जलसोंका जोश और नजारा कभी नहीं भूलता।".....

अुनके अिस कथनसे "अिस जुगके राज दुलारे हैं" और "हैं सबसे बड़े संसारमें हम" की पंक्तियोंका भेद खुला तबसे अिस बातमें मेरा विश्वास और भी दृढ़ हो गया कि मेहनतकश जनता शक्तिका स्रोत है, कवि और लेखकको अुसीसे प्रेरणा मिलती है।

बात-से-बात निकल आअी थी। और अिससे भी अिसी बातका स्पष्टीकरण होता है कि देशकी क्रांतिकारी शक्तियोंमें मजाज़का विश्वास अडिग था और अिसीसे

१. विद्रोही २. ओर ३. झंडे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुनकी कविताओंमें चेतनाका स्वर तीखा और स्पष्ट है। प्रसिद्ध कवि और प्रगतिशील आलोचक फैज अहमद फैजने "आहंग" की भूमिकामें मजाज़की शाअरीका मूल्यांकन करते हुअे लिखा है:—"मजाज़के शेअरमें थकन नहीं, मस्ती है; अुदासी नहीं सरखुशी है, मजाज़की अिनकलाबीयत, आम अिनकलाबी शाअरोंसे मुख्तलिफ है। आम अिनकलाबी शाअर अिनकलाबके मुताल्लक गरजते हैं, ललकारते हैं, सीना कूटते हैं, अिनकलाबके मुताल्लक गा नहीं सकते.....वे सिर्फ अिनकलाबकी हौलनाकी (भयानकता) को देखते हैं, अुसके हुस्नको नहीं पहचानते"

अिसमें सन्देह नहीं कि कुछ दिनों मजाज़ने भी सीना कूटा और अिनकलाबके भयंकर रूपको ही देखा। लेकिन बादमें अुसके हुस्नको भी देखा और अुसके गीत भी गाअे।

तेरे माथे पै यह आंचल बहुत ही खूब है लेकिन,
तू अिस आंचलसे अिक परचम बना लेती तो अछा था।

तकदीर कुछ है, कावशे[1] तदबीर भी तो है,
तखरीब[2] के लिबासमें तामीर[3] भी तो है।

फिर मजाज़की शाअरीकी खूबी यह है कि अुनकी कुछ कविताअें कलाकी दृष्टिसे बहुत ही अुत्तम और अुत्कृष्ट बन पाअी हैं। अुन्हें जैसे भाव व्यक्त करने होते हैं, अुनके अनुरूप ही वे बहर अर्थात् छंद चुनते हैं। नजमके मिसरे (पंक्तियाँ) अेक दूसरेमें गुत्थे रहते हैं। जैसे-जैसे विचारका विकास होता है, कविताका सौन्दर्य खिलता जाता है और अन्तमें कहानी जैसे क्लाअीमैक्स पर पहुँचकर सहसा खत्म हो जाती है, अुनकी कवितामें भी क्लाअीमैक्स रहता है, जहाँ विचार अपनी पराकाष्टापर होता है और पढ़नेवालेको झंझोड़ देता है। "ख्वाबे सेहर", "मेहमान" और "बोल अरी ओ धरती बोल" अिस प्रकारकी सर्वोत्तम कविताअें हैं। हम यहाँ नमूनेके तौरपर "बोल अरी ओ धरती बोल" अुद्धृत करते हैं, जो जनताका गीत है और जिसे हिन्दीके पाठक भी भलीभाँति समझ सकते हैं :—

बोल ! अरी ओ धरती बोल !
राजसिंहासन डाँवाडोल
बादल बिजली रैन अंधियारी,
दुखकी मारी प्रजा सारी।
बूढ़े-बच्चे सब दुखिया हैं,
दुखिया नर हैं, दुखिया नारी।
बस्ती-बस्ती लूट मची है,
सब बनिअे हैं, सब व्यापारी।
बोल ! अरी ओ धरती बोल !
राजसिंहासन डाँवाडोल
कलिजुगमें जगके रखवाले,
चांदीवाले सोनेवाले,
देसी हों या परदेसी हों,
नीले पीले, गोरे काले।
मक्खी भगे भिन-भिन करते,
ढंड़े हैं मकड़ीके जाले।
बोल ! अरी ओ धरती बोल !
राजसिंहासन डाँवाडोल !
क्या अफरंगी क्या तातारी,
आँख बची और बरछी मारी।
कबतक जनताकी बेचैनी,
कबतक जनताकी बेजारी,
कबतक सरमायाके धन्धे,
कबतक यह सरमाया दारी।
बोल ! अरी ओ धरती बोल !
राज सिंहासन डांवा डोल।
नामी और मशहूर नहीं हम,
लेकिन क्या मजदूर नहीं हम ?
धोका और मजदूरोंको दें,
अैसे तो मजबूर नहीं हम।
मंजिल अपनी पाँवके नीचे,
मंजिलसे अब दूर नहीं हम।
बोल ! अरी ओ धरती बोल !
राज सिंहासन डांवा डोल।
बोल कि तेरी खिदमत की है
बोल कि तेरा काम किया है,

---

१ प्रयत्न २ तोड़-फोड़ ३ निर्माण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोल कि तेरे फल खाये हैं,
बोल कि तेरा दूध पिया है,
बोल कि हमने हश्र अुठाया,
बोल कि हमसे हश्र अुठा है।

बोल कि हमसे जागी दुनिया,
बोल कि हमसे जागी धरती,
बोल! अरी ओ धरती बोल!
राज सिंहासन डांवा डोल।

यह नज़्म सन् १९४५ में लिखी गअी थी। अुस समयकी स्थितिको सम्मुख रखिअे, फिर पढ़िअे और सोचिअे कि क्या राज सिंहासन डांवा डोल नहीं था? शाअरने कितना ठीक कहा था कि "मंजिलसे अब दूर नहीं हम।" जैसे-जैसे नज़्म आगे बढ़ती है, यह विचार तीव्रसे-तीव्रतर होता जाता है।

मजाज़की शाअरीका असल रचनाकाल सन् ३५–३६ से ४५–४३ तक है। अिसके बाद अुन्होंने बहुत कम लिखा है और जो लिखा है, अुसमें वह अरमान और अुमंग नहीं, जो अुनकी विशेषता थी। जैसे अुन्हें जो कुछ कहना था, वह पहले ही कह चुके हों और अुनकी जवानी के बलबले बुझ चुके हों। सन १९४७ में जब देश आजाद हुआ तो मजाज़ने 'पहला जश्ने आजादी' के नामसे कविता लिखी थी, जिसमें अुन्होंने "जमाना रक्स में है जिंदगी गजलखाँ है" के साथ "यह अिन्कलाबका मजदा है, अिन्कलाब नहीं।" का स्वर भी शामिल किया था। ('आहंग' का मतलब ही विरोधी स्वरोंको आपसमें मिलाना है।) विभाजनके कारण निरपराधोंकी जो हत्या हुअी, जो बीभत्स दृश्य देखनेमें आअे, अुनसे कविको बहुत सदमा पहुँचा :—

कोअी बताये अजमते खाके वतन कहाँ है अब?
कोअी बताये गैरते अहले वतन कहाँ है अब?

और अिस भयंकर साम्प्रदायिकताके हाथों जब गांधीजी-की हत्या हुअी, तो शायरने लिखा :—

दर्दो गमे हयातका दरमाँ[1] चला गया,
*वह खिज्रे असरो अीसा-अे दौराँ चला गया।
हिंदु चला गया न मुसलमाँ चला गया,
अिंसाँ की जुस्तजू में अिंसाँ चला गया।

कविताका अन्तिम शेअर है :—

खुश है वदी जो दाम[2] यहनेकी पैं डालकर
रख देंगे हम बदीका कलेजा निकालकर।

मजाज़ सारी अुम्र गुलामी और बदीके विरुद्ध लड़ते रहे, मगर अुनकी देहमें प्राण थोड़े थे। फिर अुन्होंने अिस देहको शराब पी-पीकर घुला दिया था। ५ दिसम्बर सन १९५५ को रहस्यपूर्ण घटनाओंमें अुनकी मृत्यु हो गअी। अुनके प्रेमी अुनकी कोअी यादगार बनानेकी सोच रहे हैं। अन्तमें गजलका अेक शेअर सुनिअे :—

जमानेसे आगे तो बढ़िअे मजाज
जमानेको आगे बढ़ाना भी है।

जमानेने अुन्हें आगे बढ़नेकी मोहलत ही नहीं दी।

---

१. अुपचार
* अपने युगका खिज्र और अीसा
२. जाल

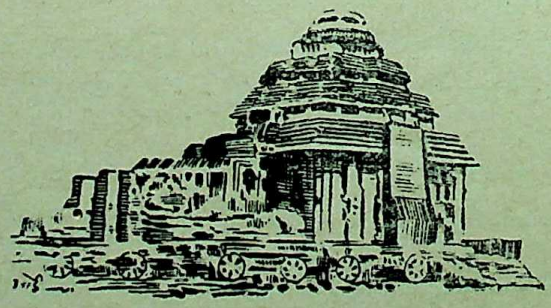

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सत' संज्ञक रचनाओंकी परम्परा

—श्री अगरचन्द नाहटा

विश्वमें प्रकृति और प्राणियोंकी निर्मित वस्तुओंकी संख्या अनन्त है। व्यावहारिक सुविधाके लिअे अुन वस्तुओंका पृथक्करण भिन्न-भिन्न नामों द्वारा किया जाता है। अिस तरह नामोंकी संख्या भी असंख्य हो जाती है। साहित्यकी रचनाओंमें भी शैलियों व विषय आदिकी विभिन्नताके कारण अुसके अनेक प्रकार हो जाते हैं। अुनकी पृथक्-पृथक् संज्ञाअें देना आवश्यक हो जाता है। अुनमेंसे बहुतसे नाम तो परंपरागत (सैंकड़ों वर्षोंतक रचयिताओं द्वारा) समादृत पाअे जाते हैं तो कुछ नअे नामोंकी भी सृष्टि होती रहती है और पुरानी संज्ञाअें भुला दी जाती हैं। हमारी प्रान्तीय लोक-भाषाओंमें रचित रचनाओंकी संज्ञाअें भी सैंकड़ोंकी संख्यामें हैं जिनमेंसे कुछ संज्ञाअें प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश आदिकी प्राचीन रचनाओंके अनुकरणमें रखी गअी हैं और कुछ लोकसाहित्यसे ले ली गअीं हैं, नागरी प्रचारिणी पत्रिकाके गत वर्ष ५८ अंक ४ में प्रकाशित "प्राचीन भाषा-काव्योंकी विविध संज्ञाअें" शीर्षक अपने निबन्धमें जैन कवियों द्वारा रचित राजस्थानी और गुजराती भाषाकी प्राचीन काव्य रचनाओंकी ११५ संज्ञाओंका अुल्लेख करते हुअे करीब ८० रचनाओंके सम्बन्धमें संक्षेपमें प्रकाश डाला गया है, अिन संज्ञाओंके अतिरिक्त और भी अनेक संज्ञाओं वाली रचनाअें मिलती हैं जो राजस्थानी और गुजराती भाषाके काव्योंके नामान्त पदके रूपमें विशेष प्रयुक्त न होकर हिन्दी भाषाके काव्योंके नामान्त पदके रूपमें विशेष व्यवहृत हुअी हैं। "सत" संज्ञा भी अैसी ही है। अिस नामान्तवाली प्राप्त रचनाओंका परिचय कराना ही प्रस्तुत लेखका विषय है।

बारह मासा, रास, चरचरी, मातृका कक्का (अखरावट) आदि संज्ञाअें जिस प्रकार अपभ्रंश कालसे हिन्दी, राजस्थानी, गुजरातीमें परंपरागत चलती आ रही हैं, "सत, संज्ञक" रचनाओंका स्रोत भी अपभ्रंश कालसे ही चलता आया है। अतः सर्व प्रथम अिस संज्ञावाली अपभ्रंश रचनाका परिचय देकर फिर हिन्दी काव्योंमें अिसकी जो परम्परा रही है अुसे बतलाया जाअेगा।

पाटणके संघवी पाड़ेके जैनज्ञान-भंडारमें ताड़पत्रीय संग्रह-प्रतियाँ हैं अुनमेंसे नं० ५६ में सतरहवीं रचना "सीतासत" नामक है। जिसका विवरण 'गायकवाड़ ओरीअेंटल सिरीज' से प्रकाशित 'पत्तनस्थप्राच्य जैन भंडागारीय ग्रंथ सूची' भाग १ के पृष्ठ ४५ में अिस प्रकार मिलता है—(१७) सीतासत अपभ्रंश पत्रांक ४७ से ४९ गाथा २०

प्रारम्भ—

पूरवि दसरथु जाणिय अे, वरु मागेअि।
रज्जु भरह दियाविय अे, राव (म!) लक्खण संजुत ॥

अन्त—

पागि लागी मनाविय अे, खमि महु अेकु अवराहु।
र [ा] मु राहक अेक भणअे अे, लअिले संजम भाअु।
दिवि दुंदुहि वाणियअे, चलअि स सीतासत ॥२०॥

प्रस्तुत अितिसीता सत रचना तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दिकी प्रतीत होती है अिसलिअे 'सत' संज्ञक' रचनाओंकी परम्परा करीब सात सौ आठ सौ वर्ष जितनी प्राचीन सिद्ध होती है। अिस रचनामें सीताके सत-सत्व-शील गुणकी चर्चा होनेसे अिस रचनाका नामान्त पद 'सत' रखा गया है। परवर्ती रचनाओंमें भी अिसी अर्थमें यह संज्ञा जैन, जैनेतर, हिन्दू, मुसलमान सभी कवियोंने अपनाअी है जिसका पता आगे दिअे जानेवाले काव्योंके विवरण द्वारा पाठकोंको भली भाँति मिल जाअेगा।

सीता सतके परवर्ती, हिन्दी साहित्यकी 'सत' संज्ञक रचनाओंमें सबसे पहली रचना कवि साधन-रचित 'मैना सत' है अिसमें मैना नामक अेक सती स्त्रीने अनेक प्रलोभनोंसे बचकर किस प्रकार अपने शीलकी रक्षा की, अुसका विवरण दिया गया है। अिस रचनाकी तीन हस्त-लिखित प्रतियोंकी चर्चा डा. माताप्रसाद गुप्तने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अवन्तिका' के गत जुलाअी-अंकमें की है। सर्वप्रथम अिस रचनाका पता (१) जोधपुरके राजकीय लाअिब्रेरीकी प्रतिके सन् १९०२ की खोज रिपोर्टमें प्रकाशित विवरणसे हिन्दी जगतको मिला। (२) चतुरभुजदासके मधुमालतीके संस्करणमें 'मैना-सत' की कथा अेक साक्षी-कथाके रूपमें पाअी जाती है और अभी-अभी प्रो० अेच. अेस. अस्करीने अेक (३) प्राचीन प्रतिका विवरण बिहार-रिसर्च सोसायटीके जर्नलके मार्च-जूनके अंकमें प्रकाशित किया है। अिन तीनों पाठ समस्यापर डॉ. माताप्रसाद गुप्तने अपना विचार व्यक्त करते हुअे लिखा है कि "अेक दो प्रतिके आधारसे भाषाके सम्बन्धमें निर्णय करना ठीक न होगा।" अतः अिस ग्रंथकी अन्य तीन प्रतियोंकी जानकारी यहाँ दे देना आवश्यक समझता हूँ। नवीन जानकारीके रूपमें प्राप्त प्रतियोंमेंसे प्रथम प्रतिका विवरण अबसे सात वर्ष पूर्व मैंने अपने 'राजस्थानमें हिन्दीके हस्तलिखित ग्रन्थोंकी खोज' के द्वितीय भागके पृष्ठ ८१ में प्रकाशित किया था पर वह डॉ. गुप्तजीके अवलोकनमें आया नहीं प्रतीत होता। मेरा दिया गया विवरण अिस प्रकार है--

(११) मैनाका सत--

प्रथमहिं विनअुँ सिरजनहारु,
अलख अगोचर मया भंडारु।
आस तोरि मोहि बहुत गुसाअीं,
तोरे डर काँपौं बररेकी नाअीं।
शत्रु मित्र सब काहु संभाहै,
भुगत देहि काहू न बिसारै।
फूलिज रही जगत फुलवारी,
जो राता सो चला संभारी।
अपने रंग आप रंगराता,
बूझे कोनु तुम्हारी बाता।

दोहा--बन्धन आखिर मारियाँ अेको चरित न सूझि
सोवत सपनो देखियौ, काअु करे कछु बूझि।

अन्त--

मैना मालिन नियर बुलाअी, धरि झोंटा कुटनी निहुराअी
मुंडमुंडाअी कैसे दुरदीने, कारे पीरे मुखटीका लीने
गदह पलानीके आन चढ़ाअी, हाट-हाट सब नगरी फिराअी
जो जैसा करै सु तैसा पावै, अिनि बातनिका अनखु न आवे
अगे दिअे जो-जो रहवाना, कोदों बोयें कि लूनियें धाना।।
दोहा--सतु मैनाका साधन, थिर राखा करतार।
कुटनी देस निकारी, कीनीं गंगाके पार।।

अिति मैनाका सत समाप्त।

लेखन काल १८ वीं शताब्दी।

प्रति गुटकाकार। पत्र ५०।। से ६७। पंक्ति १३। अक्षर १३। (अभय जैन ग्रन्थालय वि. गुटका)

विशेष—मालिनने मैनाको सत (शील) च्युत करनेका प्रयत्न किया पर वह अटल रही। बीचमें १२ मासका वर्णन है।

दूसरी और तीसरी दो प्रतिमें अनूप-संस्कृत-लाअिब्रेरी, बीकानेर; में है जिनका विवरण अिस प्रकार है--

गुटका नं. ७९ (च.) :—मैना सत-रचयिता:-- **मियाँ साधन**, पत्र. १० से १७ क तक लिखित--

यह प्रति सं. १७२४ से २७ तककी लिखित है। अिसका विवरण राजस्थानी-ग्रन्थोंके अन्तर्गत राजस्थानी-ग्रन्थ सूचीमें छपा है। दूसरी प्रतिका विवरण हिन्दी-ग्रन्थोंकी सूचीमें छपा है। अिस प्रतिका नं. ११७ है। प्रति अभी मेरे सामने नहीं है पर अिसके विवरणसे मालूम होता है कि अिसका पाठ अशुद्ध-सा है। प्रतिके विशेष विवरणमें लिखा गया है :--पुस्तक जीर्णावस्थामें है, बहुतसे पत्र खंडित हैं, आदि और अन्त अप्राप्त हैं, लिपि सुवाच्य नहीं है।

अिस प्रतिके पत्र ५६ से ७१ में 'मैना-सत' लिखा हुआ है। विवरणमें प्रतिके अशुद्ध पाठके अनुसार अिसे "**मिनासतमी** रचयिता--**आस धान**" लिखा है।

खोज करनेपर अेक-दो प्रतियाँ और भी मिल सकती हैं, प्राप्य प्रतियोंके आधारसे अिस छोटेसे ग्रन्थका सुसंपादित-संस्करण शीघ्र ही प्रकाशित होना आवश्यक है। ग्रन्थके मंगलाचरण और अनूप-संस्कृत-लाअिब्रेरीके सूचीपत्रमें कर्ता--"मियाँ साधन" नाम छपा है अिससे अिसके रचयिता मुसलमान कवि हैं। डा. असकरीको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्त प्रतिसे भी अिसकी पुष्टि होती है व साथ ही यह रचना १६ वीं शताब्दीकी ज्ञात होती है। अवधी भाषाकी अेक प्राचीन रचना होनेके नाते भी यह शीघ्र प्रकाशन योग्य है।

सत संज्ञक तीसरी रचना--सुप्रसिद्ध प्रेमाख्यानी कविवर 'जान' रचित **'सतवन्ती-सत'** है। अिसका सर्वप्रथम विवरण सुन्दर ग्रन्थावली हमारे संपादित 'राजस्थानी' भाग ३, अंक ४ के पृष्ठ १९ में सन् १९४० में प्रकाशित हुआ था। अिसकी अनूपसंस्कृत लाअिब्रेरी आदिमें हस्तलिखित प्रतियाँ मिलती हैं। संवत १६७८ में अिसकी रचना हुअी। अिसकी कथा अिस प्रकार है--

मनसूर अेक व्यापारी है। अिसकी स्त्रीका नाम सतवन्ती है। वह रूपवती और पतिव्रता थी। मनसूर अपने मित्रोंके साथ व्यापारके लिअे विदेश जाता है। अुसकी स्त्री विरहमें दुखी होती है। कुछ दिन बीतनेपर अेक धूर्तने अुसके सौन्दर्यकी प्रशंसा सुनकर अुसे अपने वशमें करना चाहा. अुसने पनवाड़िन, कलालिन, मालिन और छलनी योगिन अिन चार दूतियोंको अुसे अपनी-ओर आकर्षित करनेके लिअे (सतवन्तीके यहाँ) भेजा पर वे हार व मार खाकर लौटीं। सतवन्ती अपने शीलमें अविचल रही। धूर्त लम्पट किसी मंत्रवादीकी सेवाकर अुससे रूप परिवर्तिनी-विद्या सीख लेता है और मनसूरका रूप बनाकर सतवन्तीके यहाँ आता है। सतवन्तीको संदेह होता है अिसलिअे कुछ दिन तक वह अुसे टालती रहती है। अितनेमें ही अुसका वास्तविक पति मनसूर आ जाता है। दोनों अेक दूसरेको नकली बताते हैं। समान रूपवाले होनेसे लोग निर्णय नहीं कर पाते, न्यायके लिअे वे राजसभामें राजाके पास पहुंचते हैं। राजा अुन दोनोंसे और सतवन्तीसे अुनके विवाहकी तिथि लिखवा लेता है। सतवन्ती और मनसूरकी तिथि अेक मिलनेपर धूर्त-लम्पटको प्राण दण्ड मिलता है।

'हिन्दुस्तानी' (राजस्थानमें हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थोंकी खोज भाग ३) भाग १५, अंक १ में कविजानकी रचनाओंका विवरण प्रकाशित हुआ है। अुसके अनुसार अिस कथाका विस्तार ५२ दोहे और चौपाअी है। कवि जानने अिसी तरहकी अन्य तीन सती-स्त्रियोंके सतीत्व-रक्षाके वर्णनवाली रचनाअें-शीलवन्ती, कुलवन्ती और तमीम-अंसारी क्रमशः संवत १६८४, १६९३ और १७०२ में बनाअी है। जिस प्रतिमें यह रचनाअें प्राप्त हुअी हैं। अुसमें अिनका नामांत पद "सत" नहीं लिखा गया प्रतीत होता है पर रचनाओंके विषय और शैलीको देखते हुअे अिनकी गणना भी सत संज्ञक काव्योंमें ही होनी चाहिअे। अिन रचनाओंकी अन्य प्रतिमें प्राप्त होनेपर संभव है यह संज्ञा लिखी हुअी भी मिले।

४ थी और ५ वीं 'सत संज्ञक रचना'—जैन कवि भगवतीदास रचित **'बृहद् सीता सतु'** और **'लघु-सीता सतु'** है। दोनों महासती सीताके सत्यका विवरण देनेवाली हैं। पहली रचना सं० १६८४ में रची गअी। अुसीको संक्षिप्त करके संवत् १६८७ के चैत्र शुक्ला ४ थी, सोमवारके दिन भरणी नक्षत्रमें सीहरदि शहादरा-दिल्ली, नगरमें बनाअी गअी। अिस ग्रन्थमें बारह मासाके मंदोदरी-सीता प्रश्नोत्तरके रूपमें कविने रावण और मंदोदरीकी चित्त-वृत्तिका परिचय देते हुअे सीताके दृढ़तम सतीत्वका अच्छा चित्रण किया है। रचना सरल, हृदयग्राही व रुचिकर है। अिसका विवरण 'अनेकान्त' वर्ष ५ किरण १-२ के पृष्ठ १५ में प्रकाशित है। पंचायती-मंदिर दिल्लीके सरस्वती भंडारके गुटकेमें यह लिखित रूपमें मिली है।

अुपर्युक्त दोनों "सीता-सत" के रचयिता कवि भगवतीदास बूढ़िया (जिला अम्बाला) के निवासी थे। ये अग्रवाल कुलके बंसल गोत्रीय थे। देहलीके भट्टारक महेन्द्रसेनके शिष्य थे। ये बूढ़ियासे दिल्ली आकर रहने लगे थे। कुछ समय हिसारमें भी रहे थे। अिनके रचित 'अनेकार्थ-नाममाला' (संवत् १६८७ देहलीमें रचित) और 'मृगांक-लेखा-चरित्र' प्राप्त है। अंतिम ग्रंथकी रचना संवत् १७०० में हिसारमें हुअी है। विशेष जानकारीके लिअे 'अनेकान्त' वर्ष ५ अंक १-२ और वर्ष ७ किरण ५-६ देखना चाहिअे।

सत-संज्ञक छठी रचना 'हरिचंद-सत' है। जो संत ध्यानदास द्वारा संवत् १८०० के लगभगमें रची

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गअी है। अिसका विवरण 'राजस्थानमें हिन्दीके हस्तलिखित ग्रन्थोंकी खोज' के तृतीय भागके पृष्ठ २१६ में अिस प्रकार मिलता है--

(७८) **हरिचंद-सत** रचयिता ध्यानदास। यह तीन अध्यायोंमें विभाजित है। प्रथम अध्यायमें १९९ पद्य हैं। द्वितीयमें १२१ और तृतीयमें १००। दोहे १४, सोरठे २, छंद ४ और चौपाअियाँ ३२० हैं। कुल पद्य संख्या ३४० होती है। ग्रन्थका विषय सत्य हरिश्चन्द्रकी पौराणिक कथा है। अिसका रचनाकाल कविने अिस प्रकार दिया है--"अुदधि दोतकर लीजिअे, लेखन भार अठार" अिसके अनुसार सं. १८२४ या १८४२ रचनाकाल ठहरता है। ग्रंथके प्रथम अध्यायमें राजाका राज्य-त्याग और काशीमें आगमन, द्वितीय अध्यायमें पुत्र-रानी व राजाका वियोग, पुत्र और रानीका अग्नि शर्माके यहाँ और राजाका डोमके यहाँ निवास। तृतीय अध्यायमें रोहितकी मृत्यु और शेष घटनाअें हैं।

सत्य हरिश्चन्द्रके सत्यके महात्म्यको प्रगट करनेवाली होनेसे ही अिसका नाम हरिचन्द-सत ग्रंथकारने रखा है। कअी प्रतियोंमें अुसका नाम हरिचन्द-चरित भी लिखा मिलता है। अिसी प्रकार सतवन्ती सतकी भी कअी प्रतियोंमें 'सतवन्तीकी वार्ता' भी लिखा मिला है। पर वास्तवमें ये सब रचनाअें अेक ही परम्परा अेवं विषय की हैं अिसलिअे अिनका नामांत पद 'सत' ही अुचित है व सही है।

अिस प्रकार "सत" संज्ञक रचनाओंकी परम्परा करीब ५०० वर्षसे चलती प्रतीत होती है।

सत संज्ञा-शब्दका व्यवहार अनेक जगह शत् अर्थात् शतक=(सौ पद्योंवाली रचनाके) सूचक अर्थमें भी पाया जाता है। वृन्दावन-सत, 'श्रृंगार-सत', 'बिरह-सत', आदि अैसी ही रचनाअें हैं।

हिन्दी साहित्यमें स्पृहणीय वृद्धि

प्रतिभा

का

कहानी विशेषांक

आगामी जुलाअी १९५६ को प्रकाशित हो रहा है।

हिन्दीकी प्रतिनिधि कहानियों अेवं अन्य भाषाओंकी महान कहानियोंका अमूल्य संग्रह।

मूल्य १ रुपया

प्रकाशक

प्रतिभा प्रकाशन लिमिटेड

वर्धा रोड, नागपूर १

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घन्टोंकी आवाज

—श्री डिमितर तालेव

सालोनिकासे आअे दो भाअियोंके महात्मा दिवसके प्रातःकाल अेक स्कूल मास्टर अेक नअे गिरजाघरके आंगनमें घुसा, गिरजाघर अुस समय खाली था, गिरजाघरकी अूँची दिवालोंसे सटे हुअे पेड़ प्रातःकालकी धुंधली रोशनीमें निर्जीवसे जान पड़ रहे थे। अुनकी पतली-पतली टहनियां नअी-नअी कोपलोंके भारसे झुकीं जा रही थीं। अिस घोर निस्तब्धतामें केवल गिरजाघरके पश्चिमी दरवाजेके पास चलते हुअे फव्वारेकी आवाज आ रही थी जो अुस समय बहुत मधुर लग रही थी। सामने ही लकड़ियोंका बना घन्टा-टावर था। वहां तक पहुँचनेके लिअे बहुत सकरी सीढ़ियाँ लगी हुअी थीं। अिसके अूपर दो बहुत मजबूत मंच बने हुअे थे जो धुंधले आकाशके नीचे बड़ी-बड़ी सेमोंके समान लग रहे थे। लकड़ीके टावरके नीचे दो बड़े-बड़े घंटे मौन लटके हुअे थे। रायको वारदास्की ताला लगे अेक गिरजाघरके दरवाजेपर रुक गया। अुसने अपने चारों ओर दृष्टि डाली और फिर गिरजाघरके सामने बड़ी बेचैनीसे अूपर नीचे टहलने लगा।

थोड़ी देर बाद अुसे गिरजाघरके पश्चिमी दरवाजेसे आता हुआ वरजर दिखाअी पड़ा। रायको वारदास्कीको अितने सवेरे गिरजाघरमें देखकर बहुत अचम्भित हुआ मगर अुससे बिना बोले ही अुसके पाससे गुजरा। वारदास्कीने अपनी तेज आवाजमें कहा:

"क्या तुम ही वरजर हो? गुड मौर्निंग। जरा अेक मिनिट तो रुको।"

वरजरने अुसकी ओर मुखातिब होकर अुसे गुड मौर्निंग किया।

वारदास्कीने अुसके पास जाकर अुसे अूपरसे नीचे तक कअी बार बहुत गौरसे देखा। वरजरने भी डरते-डरते कनखियोंसे अुसे देखा।

वारदास्कीने अुसके कंधोंपर हाथ रखकर कहा:

"गिरजाघर खोलकर घंटे बजाओ।"

"क्यों अभी तो घंटोंके लिअे बहुत सवेरा है" वरजरने धीमी आवाजमें कहा।

"अभी बहुत सवेरा नहीं है। आज सबसे बड़ा महात्मा दिवस है।"

"आज महात्मा-दिवस है....महात्मा किरिलका।"

"नहीं मेरे भाअी," वारदास्कीने अुसके कन्धोंको झकझोरकर कहा। आज हमारा सबसे श्रेष्ठ शुभ दिन है। महात्मा किरिल और मैथोडी हमारे महात्मा पुरुष थे। जाओ और घंटे बजाकर सब लोगोंको अिकट्ठा कर लो।

"मैं घंटे बजा दूंगा। तुम थोड़ी देर रुको। मैं अपना काम जानता हूँ।"

वरजरने स्कूल मास्टरका हाथ अपने कन्धेसे हटा दिया। वारदास्कीकी आँखें अंगारकी तरह चमक रही थीं, अैसा लगता था मानो वे जल जाअेंगी। वरजर आँखें नीची किये दरवाजेकी ओर जानेको तत्पर हुआ वैसे ही वारदास्कीने अुसे हल्का-सा धक्का देकर कहा:

"अच्छा सुनो, तुम जाकर गिरजाघर खोलो मैं अूपर जाकर घन्टे बजाता हूँ।" वरजरने अपने होंठ भींचकर चारों ओर देखा मगर वारदास्की जल्दीसे बढ़ा और हल्की रोशनीमें मुस्कराकर कहने लगा "अच्छा आज तो कम-से-कम अिसे मुझे ही रहने दो...आखिर तो मैं अेक स्कूल मास्टर हूँ।"

"मैं जानता हूँ...अच्छा तुम चाहते हो तो करो, मगर क्या तुम घंटे बजा सकते हो?"

"हाँ...मैं बजा सकता हूँ।"

"स्कूल मास्टर यह रही चाभी। घंटोंको कअी बार बजाना और फिर अुन्हें मैं बजा दूंगा।"

वारदास्की चाबी लेकर जल्दीसे घंटा-टावरकी ओर दौड़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तुम्हें अितनी जल्दी करनेकी जरूरत नहीं है, अभी बहुत समय है।" वरजरने चिल्लाकर कहा। मगर वारदास्कीने तब तक घंटाघरका ताला खोल लिया था।

वारदास्कीने अन्दर घुसकर भीतरसे दरवाजा बन्द कर लिया। अुसकी तेजीके कारण दो कमजोर तख्ते चरमराकर टूट गअे। दूसरे मंचपर पहुँचते ही घंटोंसे अुसका सिर टकराने लगा। घंटोंमें रस्सी बँधी हुअी थीं। वहाँपर काफी रोशनी थी। लकड़ीके टावरकी दरारोंसे ठंडी-ठंडी हवा आ रही थी। पूर्व दिशामें अिनकी लालिमा लिअे दिन अुगना ही चाहता था। मअी मासके भोरमें सारा शहर सुख निद्रामें लीन था। बगीचोंमें चिड़ियोंनें चहचहाना शुरू कर दिया था। रायको वारदास्कीने सब दिशाओंकी ओर अपनी नजर डाली और अुसे शहरको अितना शान्त देखकर बहुत आश्चर्य हुआ। भोरकी स्वच्छ वायुसे वह आनन्दित हो अुठा। अुसके मनकी बेचैनी, प्रातःकालकी लालिमा और शहरमें छाअी हुअी निस्तब्धताने अुसके मनमें चंचलता भर दी।

अुसने घंटोंकी रस्सियोंको अपने हाथमें लेकर अुन्हें कअी बार लपेटकर अेकदम घंटोंके पास ले आया जिससे घंटोंकी आवाज तेज निकल सके।

विंग...विग...और फिर वांग...की आवाज निकलने लगी। वारदास्की अपनी पूरी ताकतसे तीनों घंटोंको बजाता ही गया।

अुठो शहर ..अुठो सब लोग...अुठो। वारदास्की चिल्लाया। अुसकी तेज आवाज घंटोंकी मधुर आवाजसे मिलकर गूंजने लगी। अुठो सब लोग विंग... विग...वाँग देखो शुभ प्रभात हो गया है...आज बहुत पवित्र दिन है। विंग...विग.. वाँग ..

वह अपने हाथ हिला-हिलाकर घंटे बजाता जाता था। पसीना अुसके माथेसे निकलकर मुँहपर चूने लगा। वह कुछ न कुछ कहता ही जाता था। वह घंटोंकी आवाजसे प्रेस्पाके लोगोंको महात्मा दिनके लिअे बुला रहा था।

हैं ..बस करो...बस करो। किसीने चिल्लाकर कहा। मगर घंटोंकी तेज आवाजके सामने अुसकी बात सुनाअी नहीं दे रही थी। अब बस करो बहुत हो गया स्कूल मास्टर, वरजरने पास आकर कहा। मगर वारदास्कीने न कुछ सुना और न अुसकी ओर देखा। वह तो पूरी तन्मयतासे घंटे बजा रहा था। जब वरजरने अपना हाथ अुसकी आँखोंके सामने रख दिया तब कहीं अुसका ध्यान अिधर गया। अुसने घंटोंको बजाना बन्द करनेके बजाय और जोर-जोरसे बजाना शुरू कर दिया। घंटोंके साथ-साथ वह भी झूमने लगा।

वरजरने अुसके दोनों हाथ पकड़ लिअे। घंटे तो शान्त हो गअे मगर वरजरकी गुस्सेसे भरी आवाज कपकपा अुठी। अुसने कहा :

"तुम पागल आदमी हो? यह सब अिसीलिअे कि मैंने तुमसे घंटे बजानेको कह दिया? यह सब क्या? यह ना तो अीस्टरका दिन है और ना सैन्ट पिटर या सैन्ट पौलका। तुम मुझे ले डूबे। चलो...मालूम नहीं लोग क्या सोचेंगे?"

वारदास्कीने हाथमें बँधी घंटेकी रस्सियोंको खोल दिया। थकी और कपकपी आवाजमें गहरी साँस लेकर अुसने कहा :

"हाँ वरजर...आज बहुत बड़ा दिन है...हम सबके लिअे आज बहुत बड़ा दिन है।"

"सब लोग सोचेंगे कि मैं पिअे हुअे था, वरजरने कहा—मैं फादर प्रिस्ट कोस्टाटीनसे क्या कहूँगा?"

वारदास्कीने मानो कुछ न सुना। वह तो नीचेकी ओर देख रहा था। अुसे नीचे देखते वरजर भी नीचे देखने लगा। शान्त शहरमें परिवर्तन नजर आया। सब घरोंके दरवाजे और खिड़कियाँ खुल गअीं। सड़कोंसे, घरोंसे, बगीचोंसे लोग आ आकर घंटा-टावरके नीचे अिकट्ठा होने लगे। रायको वारदास्की भी नीचे अुतर आया।

स्कूलमास्टर गिरजाघरकी ओर गया। बहुतसे लोग अुसके पीछे हो गअे। अभी सबरेकी प्रार्थना नहीं हुअी थी। भीतरसे पादरियोंकी आपसमें लोगोंको जल्दी अुठा देनेपर फुसफुसाहट आ रही थी। अेकाअेक दूसरा शोर बाहरसे आया जो कि तीन स्कूलमास्टरों द्वारा लाअे गअे लड़कोंका था। गिरजाघरके आँगनमें बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भीड़ थी फिर भी अुन लोगोंको बहुत आसानीसे सबको अेक लाअिनमें खड़ाकर दिया। लोग अितना ठसमठस हो गअे थे कि हिलना, डुलना और झुकना असम्भव हो गया था। भीड़का हल्ला धीरे-धीरे शान्त हो गया। अब केवल पादरियोंके अुपदेश सुनाअी पड़ रहे थे।

समय बहुत जल्दी बीत गया। अब वारदास्कीकी बारी आअी कि वह लोगोंसे कुछ कहे। वह विशपकी गद्दीके पास जाकर खड़ा हो गया।

गिरजाघरमें अेकदम शान्ति हो गअी थी अैसा लगता था मानो वह खाली है। सब लोगोंकी आँखें वारदास्कीकी ओर लगी हुअी थीं। वारदास्कीने प्रार्थना या अुपदेशसे शुरू न करके अपनी बुलन्द आवाजमें कहना शुरू किया :

"बलगेरियाके लोग...मैं तुम्हारे पास अेक अजनबी जगहसे आया हूँ मगर हम लोग सब बलगेरियन जन्म और सैल्वससे भाअी-भाअी हैं।"

"हमारे साथी अपने अधिकार चाहते हैं," वारदास्कीने कहा। अुसकी आवाज और तेज हो गअी। जलती हुअी आगकी तेजीके समान लोगोंके दिलमें घुसती गअी। हमारे साथी अधिकार पानेके लिअे लड़ रहे हैं। ये लोग सदियोंसे दुःख और दर्द सह रहे हैं। अधिकारोंके लिअे लड़ना वाजिब है...सही है। अब हमारे साथी न डरेंगे और न किसीके आगे झुकेंगे। अब वे तलवारें निकालकर अपने अधिकारोंके लिअे लड़ेंगे और दुश्मनोंको मार भगाअेंगे। जाओ मेरे भाअियों, तुम लोग जाओ, रुको नहीं। हमारे साथियोंने रास्ता चुन लिया है और वह तुम लोगोंके सामने है। अिस गिरजाघरसे अीश्वर भी तुम लोगोंकी सराहना करेंगे और स्कूलोंमें बच्चे बलगेरियनोंकी बहादुरीके कारनामें पढ़ेंगे और लिखेंगे। बलगेरियनोंकी प्रशंसा घर-घरमें होगी.....

"और तुम प्रेस्पाके लोग, आज क्या विचार कर अठे? आज तुम लोगोंका क्या करनेका विचार था? तुम लोगोंने अपनी दुकानकी, अपने जीवनकी, मेहनतकी और लाभकी तैयारीकी होगी मगर सबेरे ही सबेरे घंटोंकी आवाजने तुम्हें अीश्वरके दरवाजेपर बुला लिया। मेरे बलगेरियन भाअियो, आज हम सब लोगोंके लिअे बहुत पावन दिन है। सालोनिकासे आअे महान भाअियों, किरिल और मेथेडीका महात्मा दिन चिरस्मरणीय हो जिन्होंने बलगेरियन और सैल्व जातिको जगाया था। जब तुम अुन लोगोंका नाम भूल जाते हो तब तुम अन्धकारमें रहते हो क्योंकि वे तुम लोगोंको सूर्यके समान प्रकाश देनेवाले हैं। अुनके बिना तुम अन्धे और बहरेके समान हो। अुन लोगोंने समाचारपत्र दिअे, किताबें दीं, साहित्य दिया और जीवन दिया है। कोअी भी देश जिसमें अुसका अपना साहित्य नहीं है...मृतप्राय है। है वह मुर्दा देश जहाँ साहित्य नहीं है। आजके दिन सारे संसारके गोरखधंधोंको भूलकर मेरे प्यारे भाअियो,... आनन्द मनाओ, नाचो और किरिल और मेथेडी जैसे महान व्यक्तियोंकी प्रशंसाके गीत गाओ।

अिसी तरहकी और भी बहुत-सी बातें रायके वारदास्कीने कहीं। अैसा लगता था कि वह अपना कलेजा निकालकर रख देना चाहता है। अुसकी आवाज कभी भी धीमी न हुअी। आँख भी अंगारेकी तरह जलती रहीं। अुसने सब कुछ अितने जोशके साथ कहा कि गिरजाघरमें अिकट्ठे सभी व्यक्तियोंका ध्यान केवल अुसीकी ओर रहा। धीरे-धीरे वह मंचसे अुतर आया। गिरजाघरमें अिकट्ठी हुअी सारी भीड़ अुसके पीछे हो गअी मानो वे अुससे कुछ और सुनना चाहती हो। वह अुन लोगोंके लिअे अुपदेशक था।

अुसी दिन प्रेस्पामें बड़े लोगोंकी बैठक हुअी जिसमें भाग लेनेवाले औरडान और चिंगलोवने अपनी नोटबुकमें अैसा लिखा है।

"प्रेस्पाकी बलगेरियन कम्युनिटीने ११ मअी, १८८६ अी. को यह निश्चय किया है कि आजका दिन बलगेरियन और सैल्व जनताको ज्ञान और अुपदेश देनेवाले सालनिकासे आअे दो महान भाअियोंकी याद-गारमें आम अवकाशका दिन मनाया जाअेगा।" *

* प्रेस्पाके घंटे नामक अुपन्याससे।

(अनु०—श्रीमती कमल आर्य, लन्दन)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीत

—श्री वीरेन्द्र मिश्र

सत्यको अेक बार देखा
अश्रुका सागर तुम्हें लगा
किन्तु जब बार-बार देखा
स्वप्नसे सुन्दर तुम्हें लगा।

रातकी पूनमसे कर बैर
चाँदसे तुम्हें बुराअी मिली
तृप्तिको जब-जब भी तुम खले
प्याससे तुम्हें बधाअी मिली

नखतकी सभा गगनमें हुअी
सपनकी सभा नयनमें हुअी
अधरने नहीं अधरको छुआ
चूमकर अलक-पलक ही हुआ।

मेघको अेक बार देखा
दर्दका बादल तुम्हें लगा
किन्तु जब बार-बार देखा
चाँद-सा कोमल तुम्हें लगा।

राह चलते थे तुम चुपचाप
किसी वीरान चमनके पास
फूल पत्तोंसे सूनी डाल
शीश धुनती थी सूखी घास

चुभा मेरे पैरोंमें शूल
याद तब आया कोअी फूल
सुरभिसे बँधी गुलाबी देह
नयनमें मधुर ओसका मेह

शूलको अेक बार देखा
राहका कण्टक तुम्हें लगा

किन्तु जब बार-बार देखा
फूलसे मोहक तुम्हें लगा।

देखकर दुख-दर्दोंकी भीड़
बचाअे सुख तुम भागे कहीं
पीरपर तुम्हें मिली दूर ओर
सदा ही तुमसे आगे रही

जिन्दगीके बन बीहड़ बीच
नेहका कमल घृणाका कीच
समयका भ्रमर, प्रगतिका गीत
कोटि नारी-नर-स्वर-संगीत

नर्कको अेक बार देखा
रक्तका सावन तुम्हें लगा
किन्तु जब बार-बार देखा
स्वर्गसे पावन तुम्हें लगा।

शब्दकी थी सादी पोशाक
भावमें चमत्कार था नहीं
झोपड़ीमें था मनका दीप
स्वर्ण जैसा सिंगार था नहीं

जा रहा था कोअी कवि मौन
व्यंग्यसे तुमने पूछा 'कौन'
छिड़ गया गीतकारका तार
तुम्हारा हृदय गया झंकार

गीतको अेक बार देखा
व्यर्थका सपना तुम्हें लगा
किन्तु जब बार-बार देखा
बहुत कुछ अपना तुम्हें लगा॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषा-भूमिके परमाणु—अक्षर

--विदुषी सावित्रीदेवी अेम. अे.

भारतके प्राचीन शब्द-तत्ववेत्ताओंकी मान्यता है, कि जैसे कण-कण, परमाणु-परमाणुके मिलनेसे पृथिवी बनी है, अिसी प्रकार अक्षर रूप परमाणुओंसे भाषा रूप पृथिवीका भी निर्माण हुआ है। कणादके मतसे जैसे पृथिवी गन्ध गुण रखती है, अुसी प्रकार भाषा अर्थ रूप गुणसे सम्पन्न है। प्रत्येक अक्षर अपना अर्थ रखता है। अक्षर वही है, जिसके टुकड़े न हो सकें—जो अखण्ड हो। जैसे किसी वाक्यका अर्थ अुस वाक्यमें आअे हुअे शब्दोंके अर्थसे जाना जाता है, अुसी प्रकार शब्दोंके भी यथार्थ अर्थ समझनेका सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त हमें वैदिक साहित्यसे लेकर समस्त परवर्ती व्याकरणों, भाष्यों और न्याय ग्रन्थोंमें मिलता है। ऋग्वेद (१।१६४।३९) का कहना है कि ऋचाअें परम अविनाशी शब्दमय अक्षर पर ठहरी हैं जिनमें देवता (शब्दोंके विषय और अर्थ) ठहरे हैं। जो अक्षरार्थको नहीं जानता, वह ऋचाओंसे क्या प्राप्त कर सकता है? महाभाष्यकार पतञ्जलिने भी लिखा है कि—सभी वर्ण अर्थवान होते हैं।

ऋग्वेदके अुपर्युक्त अक्षरार्थका अनुगमन गोपथ ब्राह्मण, अुपनिषदों अेवं निरुक्तमें स्पष्ट मिलता है। "भर्ग" शब्दका अक्षरार्थ करते हुअे गोपथ ब्राह्मणमें बताया गया है, कि "भ" से भासित होना, "र" से रंजित होना, और "ग" से गमन करना समझना चाहिअे तथा "मख" शब्द यज्ञका पर्यायी है। अुसमें कोअी छिद्र न हो, अिसलिअे अुसका नाम "मख" रखा गया है। 'ख' अक्षरका अर्थ छिद्र है, और अुसका निषेधक अर्थका वाची "म" है। यज्ञमें कोअी छिद्र (त्रुटि) न हो अिसलिअे अुसे "मख" कहा जाता है। अिसी प्रकार यहींपर 'नाक' (स्वर्ग) का भी अक्षरार्थ किया गया है।

वेदोंके अक्षरार्थ सिद्धान्तको निरुक्तकार यास्कने बहुत ही वैज्ञानिक ढंगसे विकसित किया है। 'क' अक्षरका अर्थ करते हुअे अुन्होंने लिखा है कि "क" कमनीय सुख क्रमणीय आदि अर्थ रखता है तथा 'ग' दहन आदि अर्थका बोधक है। अक्षरार्थकी यह शैली अुपनिषदोंमें भी पल्लवित हुअी है। छान्दोग्य अुपनिषदमें "सत्य" शब्दके स, त और य अक्षरोंका अर्थ करते हुअे बताया गया है, कि "स" का अर्थ अमृत 'त' का अर्थ मर्त्य और 'य' का अर्थ दोनोको नियममें रखनेवाला है।

अिस प्रकारके अक्षरार्थ करनेकी वंशपरम्परागत परिपाटी प्रचलित थी। अिस अक्षर-विज्ञानकी परिपाटीको शब्द-संयम कहा जाता था। अिस शब्द-संयमके द्वारा प्राचीन ऋषि अक्षरोंके मौलिक अर्थोंकी खोज करके शब्दोंके अर्थ निर्धारित किया करते थे। वे धातुओंमें आअे हुअे शब्दोंका संयम करके प्रत्येक वर्णका अर्थ स्थिर करते थे। अिस प्रकारके शब्द-संयमकी चर्चा करते हुअे पतंजलिने योग शास्त्रमें लिखा है, कि 'शब्द' अर्थ और प्रत्ययोंके संयोग विभागोंमें संयम करनेसे समस्त प्राणियोंकी भाषाओंका ज्ञान हो जाता है। जिस प्रकार धातु प्रत्ययोंमें संयम करनेसे समस्त मनुष्योंकी भाषाके प्रत्येक वर्णके अर्थका बोधक हो जाता है, अुसी प्रकार प्रत्येक प्राणीकी भाषामें संयम करनेसे हर प्राणीकी भाषाका ज्ञान हो जाता है।

शब्द-संयम तथा शब्दको सर्वोपरि स्वीकार करते हुअे 'वाक्यपदीय'कारने ('नसोऽस्ति...विदुः') लिखा है, अर्थात्—लोकमें कोअी भी प्रत्यय (ज्ञान) अैसा नहीं है, जो शब्दके बिना प्राप्य हो। प्रत्येक ज्ञान शब्दसे अनुविद्ध होता है। शब्द अिस लोक और पर लोकका आधार है। वाक्से समस्त भुवन अुत्पन्न हुअे हैं। वाक्से अमृत अेवं मर्त्य संसारका प्रादुर्भाव हुआ। अनादिपरम्परा जाननेवाले ऋषियोंका कहना है, कि संसार शब्दका परिणाम है।

कोअी भी जीव अपने विचार प्रकट करनेके लिअे दो भिन्न प्रकारसे शब्दका प्रयोग करता है। अुनमेंसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेक तो वर्ण रूप शब्द और दूसरा गीतरूप शब्द। ये दोनों प्रकार भिन्न होते हुअे भी अेक ही आधारपर टिके हैं, क्यों कि अिन दोनों प्रकारोंमें विचार और भाव प्रकट करनेके लिअे ध्वनिका प्रयोग होता है। ध्वनिरूप स्पन्दनकी भिन्न विशेषताअें प्रयोग करनेसे आधारकी अेकताके बावजूद दोनों शब्दके मार्ग भिन्न मानें जाते हैं। प्राचीन आचार्योंके मतसे भाषा और संगीत अेक ही वस्तु या विद्याके दो भाग थे, और दोनों प्रकारके शास्त्रोंके रचयिता भी अेक ही थे। लेकिन आजकल शब्द, नाद और ध्वनिके सम्बन्धमें तात्विक विवेचन किअे बिना ही अेवं शब्दके रहस्यको जाने बिना ही लोग प्राचीन आचार्योंके मतको भ्रममूलक मान बैठे हैं। शब्दका रहस्य समझनेके लिअे प्राचीन आचार्य स्वर और वर्ण आदिके देवता जन्मभूमि और रंग आदि पर विचार किया करते थे। अिस प्रकारकी विचार पद्धतिका अब लोप ही हो गया है, अिसीलिअे शब्द-तत्व, शब्द-संयम और शब्द-रहस्य आजके भाषा-विज्ञानियोंके लिअे अेक पहेली-सी जान पड़ती है।

प्राचीन आचार्योंके मतसे स्पन्दनरूप वस्तु अेवं स्पन्दनरूप शब्दके बीच अभिन्न सम्बन्ध होता है। अिसीलिअे हर शब्दके लिअे अेक अर्थ होना, अुन्होंने निश्चित किया। जैसे हर शब्दका अेक अर्थ होता है, वैसे ही हर अर्थके लिअे अेक शब्द होना अनिवार्य है। शब्दमें अर्थ अुत्पन्न करनेकी प्राकृतिक शक्ति रहती है। यदि अिस सारभूत सिद्धान्तको हम हृदयंगम कर शब्द-संयमकी प्रवृत्तिको प्रश्रय दें तो वैदिक मन्त्रोंके रहस्य समझनेमें हमें कोअी कठिनाअी नहीं पड़ सकती। वेद-मन्त्रके हर शब्दमें रहस्य निहित रहता है। अुस रहस्यको जाननेकी चेष्टा किअे बिना ही हम अुन मन्त्रोंको चरवाहोंके गीत समझ बैठते हैं। शब्द-संयमका यह नियम है, कि यदि शब्दके अुच्चारणमें कहीं भी भूल हो जाअे तो वह निरर्थक और सांकेतिक बन जाता है। भाषा और व्याकरणके क्षेत्रका यही सिद्धान्त संगीतमें भी प्रभावित रहता है। संगीतकी स्वर-श्रुति आदिका अेक प्राकृतिक अर्थ होता है, जिससे रस अुत्पन्न होता है। यदि स्वरोंकी अशुद्धि हो जाय तो वही गान नीरस हो जाता है। भारतीय शास्त्रोंने शब्द और स्वरोंकी अुच्चारण-शुद्धिको सर्वोपरि माना है। याज्ञवल्क्यस्मृतिका कहना है--कि जो वीणा बजानेके तत्त्वज्ञ हैं तथा श्रुतियोंकी जाति पहचाननेमें निपुण हैं और तालके ज्ञाता हैं, वे बिना परिश्रमके ही मोक्ष प्राप्त करते हैं। अिसीलिअे शास्त्रकारोंने शब्दको सगुण ब्रह्म माना है। सगुण और निर्गुणका मार्ग होनेसे शब्दको मोक्षका साधन कहा गया है। भारतीय दार्शनिकोंने शब्दको प्रपंचका कारण माना है। माहेश्वरसूत्रों (अअिअुण आदि) के रहस्यको भलीभाँति समझ लेनेसे शब्द-प्रपंचका रहस्य आसानीसे खुल आता है। जैसे महेश्वरके दिअे हुअे चौदह सूत्रोंमें प्रथम 'अ, इ, उ, ण' को ही हम लें तो अिसका पहला अक्षर 'अ' सामने आता है। 'अ' का प्रथम स्वर कण्ठमें स्थित है, जो बिना प्रयत्नके अुच्चरित होता है। काशिकाकारने 'अ' वर्णको सभी स्वरोंका आधार और कारण माना है, तथा बताया है, कि अ निर्गुण ब्रह्मका द्योतक है। काशिकाकार नन्दिकेश्वरकी मान्यताका अनुमोदन गीताने भी "**अक्षराणाम कारोऽस्मि**" कहकर किया है।

भाषा व्याकरणके क्षेत्रकी भाँति संगीत-शास्त्रमें भी 'अ' का रूप आधारभूत स्वर षड्ज है। अिसके बिना किसी भी स्वरका अस्तित्व नहीं है (देखें--रुद्रऽमरुद्रमवसूत्र विवरण) अिसी प्रकार दूसरा अक्षर "इ" है, जो तालु स्थानीय है। 'इ' शब्दका कारण है--प्राणसे बाहर निकलनेकी प्रवृत्ति। 'इ' शब्द शक्ति या प्रवृत्तिका द्योतक है। तन्त्र-शास्त्रमें अिसे 'कामबीज' कहा गया है। काशिकाकारका कहना है, कि अकार ज्ञानस्वरूप मात्र है और अिकार सभी वर्णोंका कारण है। शक्ति-संगम तन्त्र रचयिताका मत है कि शक्तिरूप अिकारके बिना "शिव" "शव" बन जाता है। शक्तिके संयोग मात्रसे 'सदाशिव' कर्म कर सकता है।

अिसी भाँति संगीत-शास्त्रमें भी 'इ' शिवका वाहन, वीर्य अेवं शक्तिरूप ऋषभ माना गया है। अिसे सुननेसे वीर-रस अुत्पन्न होता है। अिसका भाव बलवान्, स्फूर्तिदायक और शक्तिशाली होता है।

अिसके बाद 'उ' शब्द आता है। 'इ' से परिच्छिन्न 'अ' का रूप ही अुकार है। अिसका अर्थ शक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिच्छिन्न ब्रह्म है। काशिकाकार अुकारको विष्णु नामक सर्वव्यापक अीश्वरका स्वरूप मानते हैं।

संगीत-शास्त्रमें अुकारका गान्धार स्वर माना गया है। अिससे शृंगार और करुणरस अुत्पन्न होता है। संगीतके आचार्योंका मत है, कि विष्णुके दर्शनकी सुन्दरताका अनुभव गान्धार स्वरसे कहा गया है। क्बीर स्वामीने गान्धारका अर्थ वाक्का वाहन और दिव्यगन्धसे भरा हुआ किया है। तात्पर्य यह कि अ, इ, उ ये तीन स्वर संगीतके आधार हैं। अिसीलिअे यही तीन ग्रामोंके आधारभूत स्वर भी माने गअे हैं।

वर्णरूप और गीतरूप शब्दके दो प्रकारोंके अुपर्युक्त विवेचनसे शब्दकी व्यापकता, महत्ता और अुसका रहस्य स्पष्ट हो जाता है। शब्द संयमके लिअे अक्षरोंके अर्थ निश्चित करने अथवा 'अ' का अर्थ ब्रह्म अभाव या शून्य है, तथा 'इ' का गति या शक्ति ही है—प्रश्नको हल करनेके लिअे हमें शब्द-शास्त्र (व्याकरण) और बचे-खुचे गान्धर्व-शास्त्रके जो कुछ अंश मिलते हैं, अुनमें पूर्णतया प्रमाण मिल जाता है। शब्द-शास्त्रमें निरुक्त, पाणिनिकी अष्टाध्यायी, पतंजलिका महाभाष्य तथा भर्तृहरि और नन्दिकेश्वर प्रधान हैं। गान्धर्व-शास्त्रके दार्शनिक-ग्रन्थ तो अब मिलते नहीं, किन्तु नारद, नन्दिकेश्वर, मतंग, कोहल आदिके ग्रन्थोंसे बहुत कुछ समाधान प्राप्त हो जाता है।

अिन ग्रन्थोंके अतिरिक्त परम्परागत प्राप्त वह पद्धति भी सबसे अधिक सहायिका है, जो आजके युगमें वैज्ञानिक, व्यवस्थित और बुद्धि प्रधान कही जा सकती है। वैदिक ऋषियोंने ऋचाओंके अर्थ करनेकी अेक पद्धति बनाअी थी। जिसका सिद्धान्त है, कि अक्षरार्थ करनेसे पहले अुस अक्षरकी बनावटसे अर्थबोध किया जाअे। अक्षरोंकी बनावट भी दो प्रकारकी बताअी गअी है। अेक तो वह जो मुँहमें शब्दोच्चारणके समय बनती है और दूसरी वह जो लिपिके सहारे कागज आदिपर लिखनेसे रेखाओंके रूपमें प्रकट होती है। शब्दोच्चारण करते समय मुँहमें बनी हुअी शब्दकी शकल प्रधान है, और कागज आदिपर जो लिपिबद्ध की जाती है, वह मुँहकी बनावटकी साक्षी है। मुँहसे निकलते समय जो अक्षर अपना जो भाव, शकल, ध्वनि, प्रभाव और क्रिया प्रकट करता है, अुसीसे अुस अक्षरका अर्थ निश्चित किया जाता है, और अिस शकल तथा अिसके अर्थका निश्चितीकरण अुस अक्षरको लिपिबद्ध किअे जानेपर पूरी तरहसे हो जाता है। जैसे—जब हम 'अकार' का अुच्चारण करते हैं, तो हमारा मुँह गोलाकार (०) बन जाता है। अिस गोलेके आधारपर ही 'अ' का अर्थ अभाव और शून्य अथवा ब्रह्म रख दिया गया, जिसे लिपिने भी निश्चित किया। 'अ' का आज जो वर्तमान-रूप है, वह शून्यका विकसित-रूप है। अिसी प्रकार मूर्द्धाछिद्रसे बोले जानेवाले सानुनासिक अक्षरोंके अुच्चारणमें छिद्रका प्रतीक हल्का-सा गोला चिन्ह बन जाता है, जो शून्य या अभाव अर्थवाचक माने गअे। अिसी पद्धतिसे सम्पूर्ण वर्णमालाके अक्षरोंका अर्थ आसानीसे किया जाता है।

अुपर्युक्त शब्द संयम और अक्षरार्थके आधारपर ही ब्राह्मी लिपिका अुद्भव हुआ है। ब्रह्म नाम वेदका है। जिस लिपिमें सर्वप्रथम वेद लिखे गअे हैं, अुस लिपिका नाम ब्राह्मी पड़ा। यदि हम ब्राह्मी लिपिसे लेकर अब-तककी भारतीय लिपियोंका चार्ट तैयार करें, तो यह स्पष्ट हो जाता है, कि सभी लिपियाँ ब्राह्मीके विकासका परिणाम हैं। यजुर्वेद (९।३१।३४) के अनुसार जाना जाता है, कि मूलवैदिक वर्णमालामें १७ अक्षर रहे हैं। अुनमें प्रयत्नवर्ण स्वर कहलाअे और स्थान तथा प्रयत्नसे बोले जानेवाले वर्ण व्यंजन कहलाअे। यही १७ अक्षर परस्पर मिश्रण और संयोगसे ६४ प्रकारके बन गअे—जिनमें अर्धचन्द्र भी शामिल है। यदि ध्यानपूर्वक विचार किया जाय तो अिन १७ या ६४ अक्षरोंका मूल केवल 'अ' ही है। जैसा कि अूपर बताया जा चुका है, कि अकार आधारभूत स्वर है। अिसीपर सभी वर्ण आधारित हैं। तात्पर्य यह कि समस्त अक्षरसमूह, शब्द-समूह और ध्वनिसमूह स्थान प्रयत्न भेदसे अकारका ही रूपान्तर है। अकार अपने प्रबल अस्तित्वके कारण ही अभाव अर्थ रखता हुआ दूसरे अक्षरोंका अभाव सूचित करता है। पाणिनि शिक्षा पढ़नेसे सभी अक्षरोंके स्थान, अुच्चारण, गति, संवेग और संघातका परिचय मिल जाता है। जिस समय हम 'अ' का अुच्चारण करते हैं, अुस समय सारा मुँह समान रूपसे खुल जाता है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिह्वा सम रहती है। आ···आ करती हुअी अकारकी ध्वनि जब कण्ठसे फूटकर मुँहसे बाहर निकलती है, अुस समय स्वतः यह बोध होने लगता है मानों ध्वनि मुँहपर मोटा लम्बा या फुलस्टापका-सा चिह्न बनाकर निकल रही है। यह मानी हुअी बात है, कि बिना अकारके किसी अक्षरका अुच्चारण नहीं हुआ करता है। जब हम कोअी अक्षर मुँहसे निकालते हैं, तो अकार मुँहपर लम्बा चिह्न अवश्य अंकित करके अपना अस्तित्व प्रकट कर देता है। यही चिह्न जब किसी शब्दको हलन्त लिखना होता है, तो लिपिके सहारे प्रकट होकर वह अुस अक्षरको लँगड़ा बना देता है। अकारकी भाँति ही यदि हम अनेक पहलुओंसे शब्दों, अक्षरोंपर विचार करनेकी आदत डालें तो शब्द ही अपना रहस्य स्वयं हमसे कहनेके लिअे आतुर हो अुठें। आजकल अनेक देशी जनपदीय नामोंकी व्युत्पत्तिके सम्बन्धमें भाषा विज्ञानियोंको अँधेरेमें टटोलना पड़ रहा है, कुछ हाथ न लगनेपर ठुमरी, दादरा, डाँडर, घोंघा, मअू, फाफामअू, अुँजेहनी आदि शब्दोंकी व्युत्पत्ति, निरुक्त और अर्थ-विज्ञानसे अपने पाठकोंको वंचित रखते हैं। यदि धैर्यपूर्वक शब्द-संयमसे काम लिया जाय तो ठुमरी, दादराकी कौन कहे, पशु-पक्षियोंकी भाषा भी पूर्वकालकी भाँति आसानीसे समझी जा सकती है। जब अेक-अेक अक्षरके जुड़नेसे शब्द, वाक्य और भाषा बनती है, तो अेक-अेक अक्षरका अर्थज्ञान करनेसे अुन अक्षरोंसे बने हुअे शब्द, वाक्य और भाषा-साहित्यका अर्थ सुगमतासे प्राप्त हो सकता है—आवश्यकता है अध्ययन और अनुशीलनकी।

प्रार्थना

: श्री जगदीशचन्द्र :

मन्दिरोंमें
शामको
प्रार्थनाके स्वर विनत
काँपते हैं अिस तरह
रातको सुनसान सड़कोंपर बिखर जाते हैं
जिस तरह मद्धिम चिराग
पा कभी बागेश्वरीकी तान
गूँज जाती हो हवाओंमें विकल
और मैं जिसको नहीं विश्वास
प्रार्थनाओंमें तनिक भी—
मृत्यु हिंसाकी परिधियों
घोर नफ़रतसे घिरे वातावरणमें
जब कि हम अपने लिअे ही निम्न
कितने क्षुद्र
और पाषाण
आत्मासे दूर
जीते और मरते हैं
काँप-सा जाता हूँ।
मैं अकेला,
मौन, सम्बलहीन, व्याकुल
प्रार्थनाके क्षीण अिन भीगे स्वरोंके साथ
आज मन होता है प्रार्थना करनेको
घृणा,
हिंसा,
परिधियोंसे,
बन्धनोंसे मुक्त सबकी आत्मा हो!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महानिबन्ध

—श्री गुलाबदास ब्रोकर

: पात्र :

रूपा : (१८ वर्षकी सुन्दर सुडौल ग्रामबाला)

पद्मकान्त : (अेम. अे. पास और पी. अेच. डी. डिग्रीके लिअे देहातमें कुछ समय रहकर अपनी थीसिस तैयार करनेवाला अेक सम्पन्न घरानेका तरुण), **गाँवके लोग :**

समय : प्रातःकाल

स्थान : पद्मकान्तका गाँवका मकान

[बड़ा कमरा थोड़ी-बहुत सम्पन्नताका सूचक होनेपर भी गाँवके कमरे जैसा ही है। दाअीं तरफका दरवाजा बरामदेमें खुलता है और बाअीं ओरका दूसरे कमरेमें।

कमरेमें बहुत ही थोड़ा फर्नीचर है। अेक कोनेमें अेक कामचलाअू लिखनेका मेज है और वैसी ही अेक कुर्सी है। टेबलके अेक ओर अुसी किस्मकी अेक अलमारीमें कुछ जरूरी पुस्तकें रखी हुअी हैं। दूसरी ओर चमड़ेका अेक बढ़िया बेग रखा है। बेग और टेबलपर कुछ पुस्तकें और कागज अस्तव्यस्त हालतमें पड़े हैं।

परदा अुठता है तब सत्रह-अठारह वर्षकी कमसिन रूपा कमरेमें झाड़ू लगाती दीखती है। सौराष्ट्रके बरडेके पर्वतीय प्रदेशके गाँवोंकी सामान्य स्थितिवाली स्त्रियों जैसा पोषाक पहनती हैं, वैसे सादे वस्त्र अुसने पहने हैं। लेकिन वे सामान्य वस्त्र भी रूपाके असामान्य सौन्दर्यको छिपा नहीं सकते। अुसके अंग-प्रत्यंगसे मानो देहाती स्वास्थ्य और सौन्दर्य फूटा पड़ता है।

'आये तो अमर होकर रहो, आये तो.....'

गुनगुनाती, झाड़ू लगाती रूपा काम पूरा होनेपर कचरा अिकट्ठा करके अुसे बाहर फेंकने जाती है और क्षणभरमें वापस आ जाती है। लौटते हुअे वह मुग्ध भावसे पलभर दरवाजेके सामने खड़ी रहती है और कमरेमें प्रवेश करते हुअे प्रसन्न अुद्गार निकालती है।]

रूपा : भाअी वाह, सूरज दादा भी कैसे सुन्दर लगते हैं!

[ठीक अुसी वक्त सामनेके कमरेसे दाखिल हुआ तेअीस-चौबीस वर्षका आकर्षक युवक पद्मकान्त (रूपा और गाँवका पदम शेठ) रूपाको देखकर बोल अुठता है]

पद्मकान्त : तेरे जैसा तो हरगिज नहीं, रूपा!

रूपा : (थोड़ी चौंककर, शरमाते हुअे) आप भी क्या हम गरीब लोगोंका मजाक करते हैं, पदम शेठ!

पद्मकान्त : नहीं, बिलकुल सच कह रहा हूँ। तेरे जैसा सुन्दर तो यह सूरज दादा भी नहीं है और न कोअी बम्बअी शहरकी स्त्री ही। (अुसके पास जाकर सौगन्ध लेनेका अभिनय करते) सचमुच तेरी कसम!

रूपा : (हाथसे सटककर) आप तो रोज-रोज अिसी तरह झाड़पर चढ़ाते रहिये। जैसे हम बच्चे न हों.....और आपकी बात, अितने बड़े बम्बअी शहरमें जैसे कोअी पद्मनी ही न हो!

पद्मकान्त : दर असल नहीं है, रूपा! और नहीं तो क्या—न हो तब भी कहूँ कि है? (पलभर रुककर, टकटकी लगाये) कैसा अूंचा कद, कपोत जैसा मुंह और अैसा तेजस्वी रूप तो मैंने कहीं नहीं देखा। सचमुच कहीं भी नहीं।

रूपा : बस-बस, अब रहने दीजिये, पदम शेठ। बहुत हुआ। (भागकर तेजीसे पासके कमरेमें जाती है और तुरन्त वहाँसे अेक शतरंजी लेकर वापस आती है। अुसे दीवारके पास बिछाती है)

पद्मकान्त : (रूपाकी ओर देखते हुअे मगर स्वगत) सचमुच, अैसा सौन्दर्य और अैसी देह-लक्ष्मी... अद्भुत है, अद्भुत!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपा : (हँसते-हँसते) पदम शेठ, अिस तरह अकेले-अकेले अैसी क्या बड़बड़ करते हैं जो किसीकी समझमें भी न आये ?

पद्मकान्त : तेरे रूपकी तारीफ कर रहा हूँ, रूपा !

रूपा : अब रहने दीजिये, नहीं तो अिस प्रकार कहीं पागल हो जाअेंगे, पागल ।

पद्मकान्त : अिसमें अब और बाकी ही क्या रहा है ? (अेकाअेक अुमंगमें आकर अुसका हाथ पकड़ते हुअे) जरा अिधर आ रूपा, मुझे जी भरकर देख लेने दे ।

रूपा : मानों कोअी नअी दुलहनको देख रहे हों ! आप तो बिलकुल पागल हैं ! (शरमाकर नीचे देखती है ।)

पद्मकान्त : देख रूपा, तू जब शरमाकर नीचे देखने लगती है, और तब तेरे गालोंपर जो लाली दौड़ जाती है, अुसके सौवें हिस्सेकी लाली पानेके लिअे हमारी शहरकी लड़कियोंको डाक्टरोंके हाथ कम-से-कम पाँच दर्जन अिंजेक्शन लेने पड़ें, लेकिन तब भी.....

रूपा : (हँसते हुअे) क्या तब भी ?.....

पद्मकान्त : तब भी जैसीकी वैसी फीकीफस !

रूपा : आपको किसीकी तारीफके पुल बाँधना तो खूब आता है, हाँ, पदम शेठ (मजाकमें) अिसी-अिसीमें मुझे फाँस लिया !

पद्मकान्त : अैसी बात क्या है, रूपा ? मैंने तुझे फँसाया है ?

रूपा : और नहीं तो क्या किया है ? कुछ बाकी रखा है आपने ?

पद्मकान्त : (अटकते हुअे) लेकिन यह तो..... यह तो.....

रूपा : (नकल बनाती) क्या यह तो..... यह तो..... ?

पद्मकान्त : क्या मैंने तुझे कअी बार नहीं कहा है कि यह तो...(हँसकर) जब 'रुदियों' और 'मांयलो' बरसना शुरू करता है, तब सब तरफ पानी-ही-पानी कर देता है, कोअी कोना बाकी नहीं रहता ।

रूपा : अच्छा, अच्छा अब रहने दीजिअे, पदम शेठ ! अिस प्रकार 'रुदियो' और 'मांयलो' * कहने भरसे कोअी हमारी भाषा नहीं आ जाती...क्षणभर बाद गंभीर होकर) मगर हाँ, बात तो यह सही है। नहीं तो कहाँ आप और कहाँ मैं और कहाँ यह सब ! योगानुयोगकी बात है ।

पद्मकांत : (शब्दोंको चबा चबाकर) और क्या? बात तो यही है !

रूपा : (हँसती) अब बहुत हुआ । आप थोड़े ठीक ढंगसे बात कीजिअे ।

पद्मकांत : हाँ हाँ, मैं भी तो यही कहता हूँ ! नहीं तो कहाँ हम शहरके रहनेवाले, रातदिन समुद्र देखनेवाले और कहाँ तुम अिन पहाड़ोंमें विचरनेवाले लोग ? अिन पहाड़ोंकी हवा तो हमने कभी देखी भी न होती ।

रूपा : (विचारमग्न) लेकिन यह तो बड़ी अजीब बात है ! पढ़नेके लिअे आदमी गाँवसे शहरमें जाता है या शहरसे गाँवमें आता है ? यह भी कोअी पढ़ाअी है?

पद्मकांत : तुम लोगोंमें गजबका कुतुहल होता है, रूपा (जैसे खुदको ही कह रहा हो) यह पाअीन्ट भी मेरी थिसिसके लिअे नोट करने जैसा है ।

रूपा : आपको जो कुछ लिखना हो, बादमें फुरसतसे लिखते रहना । लेकिन मैंने जो बात पूछी है पहले अुसका जवाब दीजिअे । यह कैसी शिक्षा है कि मनुष्य शहरसे गाँवमें आअे ?

पद्मकांत : अितनी बार अितने महीने समझाता रहा फिर भी तेरा कुतूहल शांत नहीं हुआ, रूपा ? क्या गजब है !

रूपा : गजब नहीं तो और क्या ? मनुष्य अितना अधिक, बालिस्टरसे भी ज्यादा पढ़े और अंग्रेजीकी ढेरसी

---

* सौराष्ट्रकी विशेष लोक-बोलीमें हृदय और आत्मा=परमेश्वरके लिअे कहा जाता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकें पढ़नेके बाद भी वह और आगे पढ़नेके लिअे गाँवमें आअे, यह क्या हो सकता है ?...सच सच कहना पदम शेठ, यह पढ़ने-बढ़नेका आपने ढोंग तो नहीं किया है ?

पद्मकांत : पागल हुअी हो क्या ? अैसा करनेसे मुझे क्या लाभ ?

रूपा : अिस बहाने...

पद्मकांत : क्या अिस बहाने ? अिस बहाने तुझे फँसाया जा सकता है ?

रूपा : हाँ....

पद्मकांत : जैसे मैं बड़ा ज्योतिषी ही था न, जो यह सब जानता....

रूपा (बीचमें) : आप तो ज्योतिषीसे भी बढ़कर हैं। जोशी तो ग्रह-नक्षत्र और करमकी रेखा और केवल भाग्य ही देखना जानता है, मगर आप तो.... (रुक जाती है)

पद्मकांत : क्या आप तो ?

रूपा : भाग्य पलटना भी जानते हैं। (हँसती है)

पद्मकांत : किस प्रकार ?

रूपा : अिसके बिना क्या आपने मुझ जैसी बिना माँ-बापकी निरक्षर और निराधार गँवार लड़कीका हाथ पकड़ा होता और बम्बअी जैसे नगरमें मुझे घुमानेकी अिच्छा की होती ?

पद्मकांत : (बेचैन होकर) : हो जाअेगा, यह तो सब कुछ हो जाअेगा, रूपा।

रूपा : (चिंतित होकर) लेकिन कब ?

पद्मकांत : आज बम्बअी जाकर मैं अपना बाकीका काम निपटा लूँ कि तुरन्त ही।

रूपा : मगर आप यहाँ अितने महीने रहे तब भी आपका काम अभी पूरा नहीं हुआ ?

पद्मकांत : अिस तरह पूरा हो जाता तो फिर क्या चाहिअे था ?

रूपा : तब आपने यहाँ अितने महीनें किया क्या ?

पद्मकांत : (हँसकर) तेरे साथ प्रेमालाप !

रूपा : यह क्या कोअी काम कहा जाअेगा !

पद्मकांत : नहीं तो।

रूपा : तब तो आप अिसी-अिसीमें पढ़ना भी भूल गअे होंगे अिसीलिअे कुछ पूरा नहीं हुआ होगा।

पद्मकांत : अैसी बात नहीं, रूपा। मगर यह सच है कि तुझे देखकर शुरू-शुरूमें तो मैं पढ़ना क्या, सभी कुछ भूल गया था। (मजाकमें) सचमुच सभी कुछ। तेरी कसम...अितना ज्यादा रूप और अितना अुमंग-अुल्लास। मैंने तो कभी कल्पना भी नहीं की थी, फिर देखनेकी बात ही कहाँ ! अपने सामने तो देखते ही पढ़नेका विचार ताक पर रख दिया था। लेकिन अितनेमें तो....

रूपा : मैंने कहा तो सही...

पद्मकांत : लेकिन जरा पूरी बात तो सुन ले।

रूपा : (सयानी होकर) अच्छा, लीजिअे सुनती हूँ। कहिअे, "लेकिन अितनेमें तो...."

पद्मकांत : तू ही मेरी गुरु बन गअी।

रूपा : और सब भूला हुआ फिर पढ़ा दिया, क्यों ?

पद्मकांत : नहीं तो और क्या ? तुझे खबर है, मैं तेरे पाससे क्या-क्या सीखा हूँ।

रूपा : अब मजाक रहने दीजिअे। मैं अनपढ़ भला आप जैसे बालिस्टरको क्या सिखा सकती थी !

पद्मकांत : तूने, बताअूँ क्या सिखाया है ? (टेबल परसे अेक मोटी नोटबुक खोलता है) देख, तेरी कही हुअी बातोंपरसे तो मेरी अितनी बड़ी यह थीसिसकी किताब भर गअी है।

रूपा : लेकिन अिसमें क्या लिखा है, यह कौन मेरा काका जानता है ?

पद्मकांत : तेरा काका तो बेचारा कहाँसे जानेगा, लेकिन मैं तो जानता हूँ न ! देख सुन (सुनाता है) मेरे जातिके बारेमें महानिबन्ध—थीसिस अुसकी रूप रेखा, थोड़ी सिनौप्सिस लेखक : पद्मकांत पटेल, अेम. अे. बम्बअी यूनिवर्सिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपा : अिसमें मैं क्या समझूँ, मेरा सिर ?

पद्मकांत : तू समझे या न समझे, लेकिन अिस सारी पुस्तकमें तेरी बातोंके आधारपर मुझे तुम लोगोंके विषयमें जो जानकारी मिली है, अुसको मैंने नोट कर लिया है। बम्बअी जाकर अिन सब बातोंको पुस्तकके रूपमें लिख दूँ कि बस परीक्षा पास हो जाअूँगा। सब कुछ मिट करके मैं पी. अेच. डी. बन जाअूँगा।

रूपा : पास होकर फिर क्या बन जाअेंगे, पदम शेठ ? बड़े साहब हो जाअेंगे ?

पद्मकान्त : साहब-वाहबकी अैसी तैसी। मैं तो डॉक्टर बनूँगा, डॉक्टर।

रूपा : सच ?

पद्मकान्त : तब फिर !

रूपा : लेकिन हमारी मेर जातिके रहन-सहन, बातचीत और रीति-रिवाजके जाननेसे क्या कोअी डॉक्टर बन सकता है ?

पद्मकान्त : जरूर बन सकता है। मैं बनूँगा न ?

रूपा : (हँसकर) तब तो हम सभी डॉक्टर ही कहलाअेंगे ?

पद्मकान्त : कैसे ?

रूपा : हम तो ये सब बातें अपने जन्मसे ही जानते हैं।

पद्मकान्त : लेकिन जानने-जाननेमें भी फर्क होता है।

रूपा ! .....अरे समय तो भागा चला जा रहा है। और शामको तो जाना है। मुझे अपना सामान आदि ठीक करना चाहिअे। (टेबलके पास जाता है)

रूपा : (अचकचाते हुअे) लेकिन पदम शेठ....

पद्मकान्त : (अुसकी ओर घूमकर) हाँ हाँ.... बोल...?

रूपा : अेक बात कहूँ ?

पद्मकान्त : जरूर।

रूपा : आप वापस कब आअेंगे ?

पद्मकान्त : क्यों ?

रूपा : (रोषसे) क्यों क्या ? सब बातें भूल गअे ?

पद्मकान्त : तुझे बम्बअी ले जाना, यही न ? जैसे ही मेरा थीसिस लिखनेका काम पूरा हुआ कि बस आया ही समझ।

रूपा : लेकिन अिसे कितना समय लगेगा ?

पद्मकान्त : मुश्किलसे महीन-दो महीने।

रूपा : दो महीनेमें तो क्या पूरा होता है ? देखा नहीं यहाँ छः महीने कैसे सहज निकल गअे ?

पद्मकान्त : अरे पागल, मैं तो बिलकुल नया-नया आदमी था अिससे पहले मैंने मेर जातिका भूत भी नहीं देखा था। फिर यहाँ आना, रहना, देखना, सोचना, लिखना अिन सबमें समय तो लगेगा न ? अब मुझे क्या करना है ? (पुस्तकें दिखाते हुअे) यह सारा मसाला तैयार पड़ा है। सिर्फ लिखने भरकी देर है।

रूपा : (जैसे कुछ विचारमें हो) तो महीनेमें सब निपट जाअेगा न ?

पद्मकान्त : हाँ, जरूर।

रूपा : (चिन्तित स्वरमें) लेकिन अगर देर हुअी तो ?

पद्मकान्त : तो अेक महीना और सही। अुसमें कहाँ लंका लुट जानेवाली है ?

रूपा : यह तो आपके लिअे न ?

पद्मकान्त : और तुम्हारे लिअे नहीं ?.....क्या बहुत याद रुलायगी ?

रूपा : आपको मुझसे अलग रहना अच्छा लगेगा, पदम ?

पद्मकान्त : अेक क्षणके लिअे भी नहीं। लेकिन अिसमें हो भी क्या सकता है ?

रूपा : आपको तो क्या होनेवाला है ? मगर मेरा भी कुछ विचार किया है ?

पद्मकान्त : अिसमें विचार क्या करना है, रूपा ? मुझे कुछ नहीं होगा तो तुझे क्या हो जानेवाला है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिसीके लिअे क्या यह हाथमें लिया हुआ काम पूरा किअे बिना छोड़ा जा सकता है या अिसमें ढिलाअी की जा सकती है ?

रूपा : (शिथिल होकर) मैं कहाँ अैसा कह रही हूँ ? लेकिन मुझे तो.....क्या कहूँ ? .....(रुक जाती है)

पद्मकान्त : तब फिर ?.....तुझे खबर है कितनी आशाअें लेकर माता-पिता मुझे पढ़ा रहे हैं और वे मेरी कितनी अुत्सुकतासे राह देख रहे होंगे ?

रूपा : देखेंगे क्यों नहीं ?

पद्मकान्त : (विचारकी तरंगमें) और मुझ मूर्खने यहाँ तीनके बदले छः महीने गँवा दिअे।

रूपा : क्या अिसका अफसोस हो रहा है, पदम शेठ ?

पद्मकान्त : (सजग होकर) अफसोस कैसा, रूपा! तेरे साथ बिताये हुअे अिन छः महीनोंका आनन्द तो मैं कभी भी नहीं भूल सकूँगा।

रूपा : (घबराकर) अैसा क्यों कहते हैं ?

पद्मकान्त : (साश्चर्य) क्यों ?

रूपा : क्या मेरे साथ यही छः महीने बिताने थे! बादमें कुछ नहीं ?

पद्मकान्त : अैसा कहाँ कहता हूँ, पगली ? यह तो तूने मुझे जो सुख दिया क्या अुन दिनोंको याद भी न करूँ ?

रूपा : सचमुच, क्या मैंने अितना सुख दिया है, पदम। सचमुच.....

पद्मकान्त : क्या अब भी तुझे सन्देह है, रूपा ?

रूपा : लेकिन कहाँ मैं और कहाँ आप ?

पद्मकान्त : (स्नेह करते हुअे) अिसमें किसी दिन क्या ये सब रुकावटें आती हैं ?

रूपा : आपको कहाँसे आअेंगी, आपकी नजरमें तो मैं समा गअी हूँ न, अिसलिअे.....

पद्मकान्त : केवल नजरमें ही नहीं, रूपा, तू तो मेरे रोम-रोममें समा गअी है।

रूपा : (हँसकर) आप भले कुछ भी कहें, लेकिन (अेकाअेक चिन्तातुर होकर) आपके माँ-बापके गले यह बात कैसे अुतरेगी ?

पद्मकान्त : कौनसी ?

रूपा : मेरे साथ शादी करनेकी। अुनके मनमें तो कोअी अप्सरा लानेकी बात होगी....

पद्मकान्त : (हँसते हुअे) न केवल अुनकी बल्कि अुस अप्सराकी भी तो यही अिच्छा है न ?

रूपा : (शीघ्रता पूर्वक) वह कौन है, पदम शेठ ? आप किसकी बात कर रहे हैं ?

पद्मकान्त : कुछ नहीं। यह तो यों ही।

रूपा : लेकिन फिर भी कहिअे तो सही।

पद्मकान्त : बम्बअी में अेक लड़की है।

रूपा : तो अुसके बारेमें क्या है ?

पद्मकान्त : और क्या होगा ? वह मुझसे शादी करना चाहती है।

रूपा : और आप ?

पद्मकान्त : मैंने तुझे नहीं बताया ? मुझे तो अब तेरे सिवाय और कोअी नहीं चाहिअे। यों तो चार-पाँचको रास्ता दिखा दिया है।

रूपा : हाय-हाय (विचारमें) अिस प्रकार अगर आप मुझे भी रास्ता दिखा दें तो !

पद्मकान्त : तुम कैसी बहमी हो ? अितना भी मुझपर विश्वास नहीं है ?

रूपा : (पूर्ववत् सोचमें ही) विश्वास तो बहुत कुछ है, मगर मनुष्यके मनका कुछ भरोसा है ? आप बम्बअी गअे और माँ-बापने आपकी बात न मानी और आँखोंसे दो-चार बूंद आँसू गिराते ही भाअी साहब पिघल गअे, तो मेरा यहाँ क्या होगा ?

पद्मकान्त : और क्या होगा, रूपा ? (हँसते हुअे) मेरा भाअी कोअी और मिल जायगा--मुझसे सवाया।

रूपा : (रोषसे) क्या कहा, पदम शेठ ? जरा जबान सँभालकर बोलिये। आपने मुझे क्या समझा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है ? और सब लोग मेरे लिअे भाअी और पिताकी जगह हैं। किसीके बारेमें अैसा विचार भी करूँ तो मुझे पाप लगे।

पद्मकान्त : अरे, मैं तो मजाक कर रहा हूँ, रूपा !

रूपा : मजाकका भी ढंग होता है, चाहे जैसा नहीं कहा जा सकता।

पद्मकान्त : अच्छा, अब नहीं कहूँगा, बस ?

रूपा : तो ठीक है....मगर आपके माँ-बाप न मानें तो ?

पद्मकान्त : मानेंगे क्यों नहीं ? अुन्हें तो मना लिया जायगा।

रूपा : लेकिन अिसमें समय तो लगेगा न ?

पद्मकान्त : माँ-बाप हैं। अुनका मन रखकर ही काम करना होगा। अिस प्रकार जल्दबाजी नहीं हो सकती, रूपा। भले देर लगे।

रूपा : (अेकदम निकट जाकर, धीमी आवाजसे) लेकिन अब देर करने से काम नहीं चलेगा।

पद्मकान्त : (निस्तेज होकर) क्यों ?

रूपा : (गंभीर होकर) अैसी ही बात है।

पद्मकान्त : यानी ?

रूपा : मैंने कितनी ही बार मना किया, मगर आपने नहीं माना तो अब...

पद्मकान्त : पर हुआ क्या यह कहो न ?

रूपा : जो होना था वही हुआ। मैं दूर नहीं बैठी हूँ।

पद्मकान्त : (घबराकर) अब ?

रूपा : अब क्या ? अिस तरह डरनेसे कोअी काम चलता है ? और जब हमें शादी ही करनी है तो फिर क्या अिसकी चोरी है।

पद्मकान्त : (हिचकते हुअे) लेकिन यह कैसे हो सकती है ?

रूपा : क्या, शादी ?

पद्मकान्त : हाँ, अभी यह कैसे हो सकती है ? मेरी थीसिस अधूरी रह जाअेगी। कितनी मेहनत की है मैंने ? और मेरे माँ-बाप भी....

रूपा : अिसीलिअे तो कह रही हूँ कि यह सब पूरा करके आप महीने दो महीनेमें चले आना। तबतक मैं यहाँ किसीको भी पता नहीं चलने दूँगी।

पद्मकान्त : (विचारमें) लेकिन.....मगर..... रुपा.....देर हुअी तो ?

रूपा : यह अब नहीं चल सकता, पदम शेठ। अिसीलिअे तो मैं मना करती थी कि शादीके पहले यह सब शादीका व्यवहार नहीं हो सकता। लेकिन आप तो ठहरे रँगराती बम्बअीके, और दुनियाके और दूसरोंके अुदाहरण दे देकर मेरी बात नहीं मानी। और मैंने भी यह सोचकर अपने मनको मना लिया कि जब शादी होने ही वाली है तो कोअी हर्ज नहीं। अब यह अगर मगर कैसे चल सकता है ? और मैं कहाँ आजके आज ही कह रही हूँ। दो महीने मैं किसी प्रकार और काट लूँगी।

पद्मकान्त : (किसी प्रकार हिम्मत करके) सिर्फ दो ही महीनेमें काम न भी निपटे, रूपा।

रूपा : तब ?

पद्मकान्त : ज्यादा भी लग सकते हैं।

रूपा : लेकिन कितने ज्यादा लगेंगे !

पद्मकान्त : अिसका कोअी ठीक थोड़े ही है ? अिसके बजाय.....अिसके बजाय.....(अटकते हुअे) अिसका कोअी और अुपाय नहीं है, रूपा ?

रूपा : और तो क्या अुपाय हो सकता है जब हमने अपने ही हाथसे जहाँ.. ...(विचार करते हुअे) हाँ, हाँ, अेक बात मुझे सूझती है, पदम शेठ।

पद्मकान्त : (आशापूर्ण) क्या ?

रूपा : यह बात तो सच है कि दो महीनेके बजाय अगर चार महीने हो गअे तो यहाँ तो मेरे मरनेकी ही नौबत आ जाअे। अिसके बजाय तो.....(विचारमें रुक जाती है)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पद्मकान्त : रुक क्यों गअी ? जल्दी बोलो न ?

रूपा : (सोचकर बोलते हुअे) अिसके बजाय आप अेक काम कीजिअे। यहाँ सब लोग आपको जानते हैं। अिन सबको आप कह दीजिअे कि बम्बअीसे आकर आप मुझसे शादी करनेवाले हैं, ताकि मेरे सामने कोअी अंगुली न अुठाअे.....हाँ भाअी, मुझे तो यहाँ रहना है अिसलिअे अितना आप करते जाअिअे। फिर मुझे किसी बातका डर नहीं है।

पद्मकान्त : कैसी बात करती हो ? और आगे तुम्हारी हालत जाहिर होती जायगी तब.....

रूपा : अिस बातकी चिन्ता आप न करें। सबको यह मालूम हो जाय कि मेरा स्वामी बैठा है तो मुझे किसीकी परवाह नहीं है। अितने वर्ष मुझे कोअी रोटी देने नहीं आया था। अिन दो हाथोंसे कमाती आअी हूँ वैसे ही मैं अब भी कमाती रहूँगी.....आपके आनेसे पहले मुझे मुश्किलसे अेक जून खानेको मिलता था, तब कोअी मुझे खिलाने नहीं आता था।

पद्मकान्त : तब फिर अिसी प्रकार चला लेनेमें क्या हर्ज है, रूपा ?

रूपा : अैसे ही ? किसीको बिना कुछ कहे-सुने ?

पद्मकान्त : हाँ।

रूपा : लाज नहीं आती कहते ? मैं कोअी बाजारू औरत थोड़े ही हूँ, जो किसीका बच्चा पेटमें लेकर नकटीके जैसे गाँवमें घूमती फिरूँ ? अिसके बजाय क्या कहीं कुआँ-बावड़ी नही मिलते ? आपको पता है पदम शेठ, अकेली हूँ, बिना माँ-बापकी लड़की हूँ, किसीका आधार भी नहीं है, मगर अिस गाँवमें किसीकी ताकत नहीं कि मेरी ओर आँख अुठाकर देख सके। मेर जातिकी लड़की हूँ, कोअी अैसी वैसी नहीं हूँ।

पद्मकान्त : मगर यह बात कुछ ठीक नहीं लगती, रूपा। मान लो कि मुझे देर हो गअी.....माता-पिता आखिर नहीं मानें.....

रूपा : न मानें तो चले आअिये। आप बच्चे तो थे नहीं, जो अुस वक्त नहीं जानते थे कि माँ-बाप अिनकार करेंगे तो क्या होगा.....लेकिन हाँ, अिसमें देर लग सकती है। माँ-बापको समझाने जैसा लगे तो मुझे कोअी हर्ज नहीं। आपका लड़का हुआ तो अुसे मैं आँच नहीं आने दूँगी। मैं खुद भूखी रहूँगी, पर अुसे तो.....

पद्मकान्त : क्या अजीब बातें करती हो ? अैसा कभी हो सकता है ? यह चीज मैं कहने जाअूँ तो तुम्हारे यहाँके लोग मेरे बारेमें क्या सोचेंगे ?

रूपा : और क्या सोचेंगे ? कहेंगे कि मर्दका बच्चा था। करते कर बैठा, मगर अपनी बातपर पक्का कायम रहनेवाला था।

पद्मकान्त : लेकिन यह कुछ जँचता नहीं। (डरते-डरते) अिसके बजाय तो.....(रुकता है)

रूपा : अिसके बजाय क्या ? दूसरा कुछ अिलाज सूझता है आपको ?

पद्मकान्त : (हिम्मत करके तेजीसे) हाँ सूझ रहा है, सूझ रहा है, रूपा। अेकदम आसान। किसीको चिन्ता न हो अैसा।

रूपा : (आतुरतासे) कौनसा ?

पद्मकान्त : यह भी क्या मुझे तुझे समझाना पड़ेगा ? यहाँ देहातमें क्या यह नअी चीज है ?

रूपा : मैं नहीं समझी।

पद्मकान्त : अिसमें समझाने जैसी क्या बात है ? ज्यादा क्या होगा ? पचीस-पचासका खर्च ही होगा न ? हर्ज नहीं। मगर हम चिन्तासे तो बरी हो जाअेंगे न !

रूपा : गिरानेकी बात कहते हैं ? निर्दोष जीवकी हत्या करनेकी ? यह मुझसे नहीं हो सकता।

पद्मकान्त : तो और क्या हो सकता है, रूपा ?

रूपा : अीमान सच्चा हो तो सब कुछ हो सकता है। लेकिन आपके दिलमें अैसा पापका खयाल आया ही कैसे, पदम शेठ ? मैंने कहाँ अैसी छिनाली की है, जो अपने बच्चेका अिस तरह गला घोंट दूँ ?

पद्मकान्त : तो मेरे पास फिर अिसका कोअी अुपाय नहीं है।

रूपा : (मुश्किलसे अपनेको सँभालते हुअे) तब यह शादीका वचन आदि सब बातें खतम ही समझूँ न ?

पद्मकान्त : वह सब समयपर देखा जाअेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपा : (प्रयत्नपूर्वक शान्तिसे) अब और कौन-सा समय आनेवाला है ? ये राओके पर्वत तो रातको बह गअे·····(क्षणभर बाद) तू अपने रास्ते जा, सेठ । मैं अपना देख लूँगी ।

पद्मकान्त : (बोल अुठता है) कितनी हिम्मत है अिन लोगोंमें ! (फिर सजग होकर) मुझे माफ करना, रूपा, लेकिन·····

रूपा : (बीचमें ही) तुझे माफ करूँ या न करूँ, अिसमें तो क्या फर्क होनेवाला है । मगर मैं अपने आपको किस तरह माफ कर सकूँगी ? (सोचमें) कुँवारी होनेपर भी भान न रखा । मैंने अपनी कंचन जैसी काया भ्रष्ट कर दी । (रोना आता है मगर बड़े प्रयत्नपूर्वक अुसे रोकती है)

पद्मकान्त : यह सब भूल जाना, रूपा । तू तो बहादुर है·····और देख मैं भी कोअी अेहसान फरामोश नहीं हूँ (बेग खोलकर अन्दरसे कुछ निकालकर) ले रूपा, ये दो सौ रुपये तू अपने पास रख । तुझे काम आअेंगे । और भी जरूरत हुअी तो मैं भेज दूँगा । तू अिस बारेमें जरा भी चिन्ता न करना । (रुपये देने निकट जाता है)

रूपा : (क्रोधसे भभक कर) चल, दूर हट दूर, कलमुँहे धोखेबाज, शर्म नहीं आती यह कागजका कचरा देते हुअे ? मुझे क्या तूने पैसेके लिअे अपनी देह बेचनेवाली वेश्या समझ रखा है ? (रुदन करती) अितना किया क्या वह भी तुझे कम मालूम हुआ, जो अिसमें और अिसे बढ़ाने आया ? (आँखें मूँदकर) ठाकर, ठाकर मुझे तूने किसके पल्ले डाल दिया ?

पद्मकान्त : (स्तब्ध होकर देखते हुअे, बड़ी कठिनाअीसे) रू...पा...

रूपा : (तिरस्कारपूर्वक) अब मेरे नामको कलुषित करनेकी जरूरत नहीं, नीच पापी कहींके । ले मैं तो यह चली । अब मुझे तेरी परछाअीं भी नहीं चाहिअे । न केवल अिसी जन्ममें, बल्कि किसी भी जन्ममें नहीं । (चल देती है)

पद्मकान्त : लेकिन तू जरा देख तो सही, मेरी बात तो सुन...अे रूपा... (पीछे लपकता है) पर थोड़ी देर बाद अकेला ही वापस आ जाता है । (गुस्सा, अपमान, आहत अहंका भान आदि भाव अुसके चेहरेपर अंकित हैं ।)

पद्मकान्त : (गुस्सेमें) न वापस आअे तो जाअे जहन्नुममें । प्रेमकी भी हद होती है । (अिधरसे अुधर चक्कर लगाता है । थोड़ा शान्त होकर) अेक तरहसे जो हुआ सो अच्छा ही हुआ । बला टली । (हँसते हुअे) दरअसल क्या अुसे यह विश्वास था कि मैं अुससे शादी करूँगा ?.....यह तो बुद्धिके साथ थोड़ा मजाक है ! (अेक क्षणके बाद) पर चलो भाअी यह सामान पैक् करना तो शुरू करें । अब तो अुसकी भी मदद नहीं मिलनेवाली है ।

[बेग खोलकर निकट खींचता है । अलमारी खोलकर अंदरसे पुस्तकें निकालकर टेबलपर रखता है । टेबलपरकी चीजें अुलटी-सीधी करते हुअे अेक मोटी नोटबुक हाथमें आती है । अुसे देखते हुअे.....]

थीसिस तो बड़ी बढ़िया बनेगी कितनी अधिक सामग्री अिसमें भरी पड़ी है ! (पुस्तक वापस करते हुअे) लेकिन पेक करनेसे पहले दो-तीन पाअिन्ट्स तो लिख ही डालूँ । अिस आध घण्टेके भीतर भी रूपा दो-तीन मुद्दे तो दे ही गअी । (कुर्सीपर बैठकर पेनसे लिखने बैठता है) अिन लोगोंके स्वाभिमानकी भावना, अत्यन्त तीव्र जलाकर भस्म कर दे अैसा गुस्सा, गजबकी, हिम्मत और सहन-शक्ति, नीति-मत्ता अद्भुत्.....

[पुस्तक बन्द करके अलमारीमेंसे दूसरी पुस्तकें निकालकर ढेर लगाता है । अिसी बीच बरामदेकी ओरके दरवाजेसे गाँवके चार-पाँच परिचित लोग आते हैं । पोशाक, अुस प्रदेशके लोगोंका-सा वृद्धसे लगाकर नौजवान तक ।]

सब : राम राम, पदम शेठ, राम राम !

पद्मकान्त : (अुन्हें देखते हुअे) ओ हो, आअिये आअिये रामदे भाअी, करसन पटेल । (हँसकर) मालदे भी है न ? आओ आओ, बैठो । (जाजमपर सबको बैठाता है ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामदे : आप तो जानेकी तैयारी कर रहे हैं, अिसलिअे सोचा कि चलो पदम भाअीसे मिल आअें यदि कोअी कामकाज हो तो।

पद्मकान्त : रामदे काका आप सबकी मेहरबानी है। यही क्या कम बड़ा काम है!

करसन : लेकिन पदम शेठ, आप यह सब अपने हाथों क्यों कर रहे हैं? रूपा क्या आज नहीं आअी?

पद्मकान्त : आअी तो जरूर थी, मगर कहीं पास-पड़ोसमें गअी हुअी मालूम होती है। (हँसकर) बड़ी मनमौजी है!

रामदे : यह छोकरी है ही अैसी। लेकिन आज कहीं अिस तरह जाया जा सकता है? फिर तो अभागिनको भटकना ही है न!

पद्मकान्त : अैसी कोअी बात नहीं, रामदे भाअी। अपने हाथसे थोड़ा काम कर लेनेमें कोअी घिस थोड़े ही जाते हैं?

रामदे : यह तो ठीक बात है, मगर अैन वक्त-पर जो काम न आये वह भी क्या कोअी मनुष्य है?

मालदे : और सेठने तो अुसकी शान ही बदल दी थी। नहीं तो कैसे फटे हाल घूमती थी? सिरपर ओढ़नेको अेक ओढ़नी भी थी क्या अुसके पास?

करसन : पदम शेठ तो बस पदम शेठ ही हैं! अगर ये अिस गांवमें न आते तो बेचारी गरीब लड़की यों ही रखड़ जाती।

पद्मकान्त : बस-बस, अब बहुत हुआ, पटेल। सबका रक्षक अीश्वर बैठा है। अिस तरह कोअी किसीके बिना मर थोड़े ही जाता है?

करसन : वैसे तो बिना मौत आअे कौन मरता है, पर अितना सही है कि रूपा बेचारी कहीं की न रहती। आपकी सौगन्ध, पदम सेठ अुसका और कोअी भी नहीं है। पिछले साल अुसका काका भी मर गया, अिसलिअे बेचारीका कहीं ठौर-ठिकाना नहीं रहा। पर है खानदानी-अिसलिअे...

रामदे : हाँ भाअी, सचमुच। खानदानी तो सही। अिस बारेमें तो अुसका दुश्मन भी अिन्कार नहीं कर सकता। नहीं तो अैसा चढ़ता खून और अितना रूप होते हुअे भी वह क्या अैसी अनाथ रह सकती है मगर क्या किसीकी हिम्मत, जो अुसकी ओर आँख अुठाकर भी देख ले?

पद्मकान्त : आपकी यह बात सही है, रामदे पटेल। यहाँ वह अितने दिनसे काम कर रही है, पर वह भली और अुसका काम भला। किसी दिन आँख अुठाकर बात करनेकी तो बात ही कहाँ? बेचारी लड़की बड़ी भली और भोली है!

मालदे : भली? अजी अंगारा रखा है अंगारा। अेक बार किसी जवानने कुछ छेड़खानी की होगी। बस, फिर क्या था! देखनेमें चंड़ी रूप हो गया था।

पद्मकान्त : अैसा?

मालदे : अरे आप तो अुसकी बात ही न करें।

रामदे : अब हम अूलजलूल बातोंमें पड़ जाअेंगे और सेठका काम अेक ओर धरा रह जायगा....तो क्यों पदम सेठ, आप दरअसल आज ही चले जाअेंगे?

पद्मकान्त : और क्या अुपाय है, पटेल?

रामदे : आपकी माया-ममता बड़ी याद रहेगी।

करसन : आपने तो अैसी माया लगा दी है कि बस!

दूसरे : पदम सेठकी किसीसे तुलना नहीं हो सकती।

पद्मकान्त : यह सब परस्परका सम्बन्ध है। अिस गाँवकी और आप सब लोगोंकी मुझे भी अैसी माया लग गअी है कि यहाँसे जानेको जी नहीं चाहता। लेकिन अब गअे बिना चारा नहीं है। दो महीनेका कहकर आया था, पर बातकी-बातमें छः महीने गुजर गअे।

करसन : मगर आपकी पढ़ाअी पूरी हो गअी, पदम सेठ?

पद्मकान्त : वह तो अब पूरी होगी, मगर यहाँका काम मेरा जरूर पूरा हो गया है।

मालदे : यह भी बड़ी अजीब बात है न! हमारी बातें लिखें और आप अुसीमें पीचड्डी डॉक्टर हो जाअें!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामदे : तब तो आपको दवाअियाँ देना भी आ जायगा, पदम शेठ ! यह तो बड़ी बात कही जायगी ।

मालदे : (हँसकर) बापू, आप भी कैसी बात करते हैं ? भाअीने खुद ही क्या हमें नहीं कहा था कि यह तो विद्याके डॉक्टर कहे जाअेंगे, दवा-दारूके नहीं ।

पद्मकान्त : हाँ, हाँ, ठीक है । आपका यह मालदे बड़ा होशियार है । मैं अपनी पुस्तकमें अिसके बारेमें खास तौरपर लिखनेवाला हूँ ।

करसन : लेकिन देखना, भाअी, हम गरीब लोगोंके विषयमें अच्छा ही लिखिअेगा, नहीं तो हमारा कोअी मजाक न अुड़ाअे !

पद्मकान्त : अरे काका, आप जानते हैं, आप सबके बारेमें कैसा लिखूँगा ? सारी दुनिया वाह-वाह कर अुठेगी । अिस दुनियामें मेर जैसी जाति और कहीं देखनेको न मिलेगी ।

रामदे : जीते रहो भाअी, जीते रहो । बहुत जीयो...लीजिअे, कहिअे सेठजी, कुछ हमारे लायक काम-काज है क्या ? बिस्तर आदि बाँध-बूँध करनेका....

दूसरा : जो भी काम हो आप निस्संकोच कह दीजिअे, सेठजी ! हमें आपका काम करनेमें शर्म नहीं आअेगी ।

पद्मकान्त : क्या कहते हो ? आपको नहीं कहूँगा तो और किसे कहूँगा ? पर मुझे काम ही क्या है ? ये थोड़े कपड़े अुस पेटीमें रख दिअे और अिन पुस्तकोंको बाँध दिया कि बस तैयार समझो ।

मालदे : फिर कभी अिस तरफ मुँह दिखाअेंगे या नहीं, पदम शेठ ?

पद्मकान्त : अरे भाअी, आप लोगोंका अितना स्नेह पानेके बाद भी अब क्या कोअी अिधर आअे बिना रह सकता है ?

रामदे : (हँसकर) और सेठ, अब आप आअें तो अकेले न आअिअे !

पद्मकान्त : (हँसते हुअे) तब ?

रामदे : हमारी सेठानीको भी साथ लेते आअिअे । जरा यहाँकी भैंसोंका दूध तो चखें !

पद्मकान्त : लेकिन अुसे अेक बार घर आ तो जाने दो, रामदे पटेल ।

रामदे : आ क्या जाने दें, अब आअी ही समझिअे ! बम्बअी जाते ही आपके माता-पिता सगाअी न करें तो मेरा नाम रामदे नहीं ।

करसन : हाँ, भाअी ! बात तो सही है !

मालदे : और अब पदम सेठकी अुमर भी कुछ कम नहीं कही जाअेगी ।

दूसरे : यह तो अब हुअी ही समझो !

(सब हँसते हैं)

पद्मकान्त : (हँसकर) तब तो आप सबके मुँहमें शक्कर ।

रामदे : तो अब हम चलें, पदम सेठ । जैसी दया-माया है वैसी ही रखना और हमारे लायक कुछ काम हो तो बताना ।

पद्मकान्त : और तो क्या कामकाज है ? हाँ... कहीं रूपा दिख जाअे तो.....

रामदे : दिख क्या जाअे, अभी आपके पास पकड़कर लाता हूँ । कामकाजके वक्त कहाँ चल दी ? रुपअे तो झट महीना पूरा होते ही चाहिअे ?

पद्मकान्त : अैसी कोअी बात नहीं । यह तो मैंने कहा, यदि कहीं वह दिख जाय तो ।

करसन : मिलेगी क्यों नहीं ? जाअेगी कहाँ ? यहीं कहीं होगी । लो, मैं आवाज लगाता हूँ ।

[बरामदेकी ओर वाले दरवाजेसे बाहर जाकर आवाज लगाता है]

रूपा....ओ....रूपा....अरे रूपली...ई...ई....

[बाहर शोर सुनाअी देता है । करसन पुकारता है वैसे-वैसे वह आवाज बढ़ता हुआ निकट आता जाता है ।]

रामदे : (खड़े होकर) ठहरो, करसन पटेल, यह शोर कैसा हो रहा है ? [वह दरवाजेकी ओर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दौड़ता है। सब लोग खड़े होकर दरवाजेके पास जाते हैं।]

कुछ गड़बड़ हुअी मालूम होती है, न ?

[दरवाजेके सामने खड़े हुअे अिन सबको अन्दर धकेलते बाहरसे दो-तीन आदमी अन्दर घुस आते हैं। ये घबरायेसे लसते हैं। 'जगह करो', जगह करो जल्दी' की अस्पष्ट आवाज अुनके मुँहसे निकल रही है।]

रामदे : (घबराते और गुस्सा करते) लेकिन बात क्या है, यह तो मुँहसे बोलो।

अेक आदमी : रूपली कुअेंमें गिर गअी।

सब : कहाँ ? कब ?

पद्मकान्त : (निष्प्रभ होकर) क्या हुआ ? कुछ हुआ तो नहीं न ?

दूसरा आदमी : कौन जाने, प्राण बचे हों तो नसीब !

करसन : पर वह है कहाँ ?

दूसरा आदमी : अभी ला रहे हैं। अिसलिअे तो जगह करवा रहा हूँ ! .....जरा दरवाजेसे दूर हटो.... देखिअे, वह आअी।

[रूपाको जैसे तैसे अुठाकर चार-पाँच आदमी अन्दर आते हैं। रूपाके कपड़ोंसे पानी चू रहा है। बाल बिखरे हैं। अेक-दो अुठानेवालोंके भी कपड़े गीले हो गअे हैं। रूपाको जमीनपर बिछाअी हुअी जाजमपर सुलाते हैं। सब लोग क्षणभर स्तब्ध होकर देखते रहते हैं। फिर, बातचीतके साथ-साथ रूपाके शरीरको जाँचने और हरेक अुपाय आजमानेकी कोशिश की जा रही है।]

रामदे : अरे, यह क्या हुआ ? कब हुआ ? जीव तो है न ?

पहला आदमी : गिरनेकी आवाज सुनते ही हम दौड़ गअे और निकाली तो सही, मगर अुलटी-सीधी चोट लगी है, अिसलिअे कह नहीं सकते।

करसन : लेकिन पड़ी कैसे ? पैर तो नहीं फिसल गया ?

दूसरा आदमी : किसे पता, पटेल। लेकिन अिसके हाथमें बालटी या रस्सा तो नहीं था।

मालदे : लेकिन वह अपने-आप क्यों पड़ने लगी ? अुसे अैसा क्या दुःख था ?

रामदे : दूर हटो, सब दूर हटो। अिस तरह तो आदमी न मरता हो तो मर जायगा.....अरे, पर यह कौनसे कुअेंमें गिरी ?

तीसरा मनुष्य : अिधर बाजूकी वाड़ीके कुअेंमें।

करसन : बराबर देखने दो, कहीं जीव है या नहीं। (सबको दूर हटाता है। हाथ-पैर अूँचे नीचे करता है। फिर रामदेको अिशारा करके पास बुलाता है) अिसमें तो अब कुछ नहीं रहा लगता (धीरेसे, रामदेका ध्यान रूपाके पेटकी ओर खींचकर) रामदे, अिसमें कुछ मालूम होता है ?

रामदे : (पास जाकर बारीकीसे देखते हुअे) कुछ दीखता तो नहीं, मगर..... (क्षण भर विचार करके) और हो भी क्या सकता है ? अिसके बिना क्या कभी किसीने कुवाँ बावड़ी देखी है ?

करसन : भले दिखाअी न दे पर बात तो यही है। अिसमें फर्क नहीं हो सकता.....आखिर स्त्री ही तो है न, रामदे ? हम तो अिसे बड़ी सती समझते थे।

रामदे : कलजुग किसे कहते हैं तब ? (मानो यह सब कोअी आफत आ खड़ी हो अिस प्रकार देखते हुअे पद्मकांतको लक्ष्य करके) देखा न पदम शेठ, हम तो राँडको सती जैसा मानते थे।

पद्मकांत : (अनजान-सा) पर बात क्या है ? क्या हुआ ?

रामदे : अिसके पेटका पाप और क्या ? (दूसरोंसे) खड़े खड़े क्या ताकते हो ? अिसमें अब कुछ नहीं रहा। जाओ और तैयारी करो। जाओ, मेरे भाअियो !

मालदे : लेकिन यहाँ.....

रामदे : यहाँ-वहाँ कुछ नहीं। तुम सब जाओ। यहाँ मैं और करसन काका सम्भाल लेंगे। तबतक तुम जल्दीसे सब चीजें लेकर आ पहुँचो।

[अेकके बाद अेक सब चले जाते हैं सिवा करसन, रामदे और पद्मकांतके]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पद्मकांत : लेकिन वह रूपा कभी किसी दिन अैसी लगती तो नहीं थी, क्यों रामदे काका ?

रामदे : यह सब स्त्री-चरित्र आप नहीं समझते, सेठजी, अिस बारेमें आप अभी बच्चे ही कहे जाअेंगे ।

करसन : बेटीने कमाल कर दी ! पर कहीं पुलिसको शक हो गया तो चैनसे नहीं रहने देगी ।

रामदे : आप एक काम करें, करसन पटेल । अुसे मिलकर सब ठीक ठाक कर दो । तबतक सब आ भी जाअेंगे ।

करसन : हाँ, यह ठीक है । (जाता है)

रामदे : और पदम शेठ, आप अेक दो मिनट अिधर ध्यान रखेंगे ? मैं अभी आया । गाँवके मुखिअेके रखवालोंका भी मुँह बन्द करना होगा न ? और कुछ स्त्रियोंको भी बुलाना होगा ! (जाना चाहता है)

पद्मकांत : मगर कितनी देर लगेगी, रामदे ?

रामदे : देर कैसी ! यह अभी आया ।

(जाता है)

[अकेला होनेपर पद्मकांत रूपाके शवके पास जाता है । अेक टक अुसे देखता है ।]

पद्मकान्त : अितनी-सी बातके लिअे रूपा तुझे यह क्या सूझा ? (घुटने टेककर अुसकी ओर देखता है) अभी भी पहले जैसी ही लगती है, मानो गहरी नींदमें सो रही हो ! मगर अब कभी अुठनेकी नहीं ! (खड़े होकर) और क्षणभर पहले तो कैसी रक्त-माँससे चमक रही थी ! (घूमता है) लेकिन अैसा करना क्या ठीक है ? अिससे क्या लाभ ? किसलिअे अपने प्राण गँवाना ?... अजीब लड़की । कैसी प्रेमल और तेजस्वी ?.... और अिस प्रकार मर गअी ? अुन्माद, अुन्माद । नहीं, अुन्माद नहीं, भावुकता । Too emotional (अचानक कोअी बात सूझी हो अिस प्रकार खड़ा हो जाता है और रूपाकी ओर देखता है) हाँ, हाँ, भावुकता ही । अुसका यही स्वभाव था । सारी प्रजा ही अैसी है । भावुक--emotional....

(विचारमें) अितनी बातें नोट कीं, पर महा निबन्धमें यह मुख्य बात तो रह ही गअी थी ? चल प्यारे ।

[टेबलके पास जाता है । मोटी नोट-बुक अुठाता है और लिखने लगता है--बोलता जाता है ।]

अिन मेर जातिके लोगोंको अपनी जान देते अेक क्षणकी भी देर नहीं लगती । अितने अधिक ये लोग भावुक होते हैं--Terrifically emotional ।

[अपनी थीसिसकी नोट-बुक बन्द करता है और कुछ लोग कफन, हाँडी, बाँस आदि लेकर और कुछ स्त्रियाँ मुँह ढाँककर प्रवेश करती हैं कि परदा गिरता है !]

(अनुवादक :— श्री गौरीशंकर जोशी)

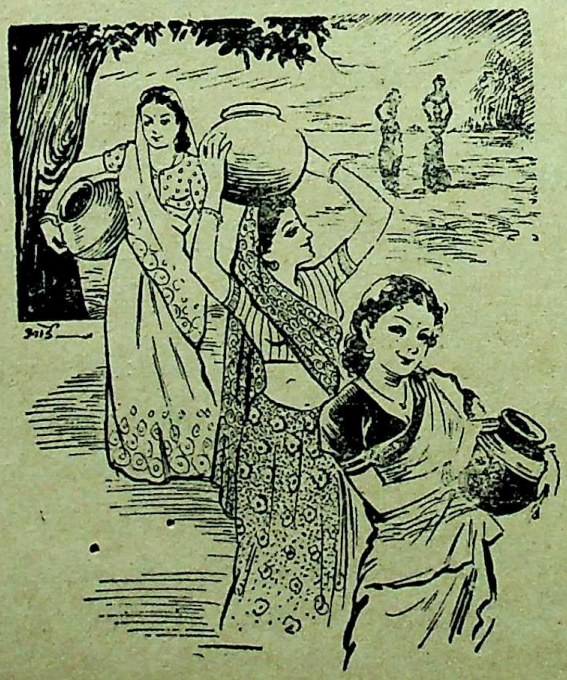

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वापसी

--श्री अिलेक्ज़े टालस्टाअी

यों जिस व्यक्तिके सिलसिलेमें मैं आपको बताने जा रहा हूँ वह जर्मनोंसे लड़ चुका है और वीरताका 'सुवर्णचक्र' अुसकी छातीपर दमक रहा है। अुसकी पूरी छाती ही वीरताके चक्रोंसे भरी हुअी है। मगर मैं अुसकी वीरताकी कथा नहीं सुनाअूँगा। आप पूछेंगे कि फिर क्या? सुनते जाअिये क्या क्या बताता हूँ! युद्धके पहले दर्यमूफ अेक सहकारी फार्ममें काम करता था। अुसे अपनी माता मारियासे बड़ा ही प्रेम था वह अपने वर्गमें अपने पिता योगोरोविचके स्वाभिमानका अकसर वर्णन किया करता था, वालगावाले गाँवमें ही कात्या नामक अुसकी अेक प्रेमिका थी।

हम लोग बहुधा पत्नियों और प्रेमिकाओंके सम्बन्धमें चर्चाअें किया करते हैं। खासकर अुस समय जब लड़ाअी जरा मन्द पड़ जाती है और सैनिक किसी खन्दकमें कुछ शान्तिके साथ बैठते हैं। बीचमें अेक दिया टिमटिमाता रहता है अुस वक्त विचारोंके कैसे कैसे ताने-बाने बुने जाते हैं और साथ ही तरह तरहकी रायें कलियोंकी तरह कैसी चटकने लगती हैं!

अेक कहता है, "आखिर प्रेम क्या है?"

दूसरा जवाब देता है "प्रेमका आधार पारस्परिक सम्मान है। जब तक दो प्रेमी अेक दूसरेका सम्मान नहीं करते अुनका प्रेम.....।"

तीसरा बीचमें बोल पड़ता है। "—प्रेम अेक तरहकी आदत है! अच्छा तुम बताओ मनुष्य अपनी प्रेमिका या पत्नीके अलावा माता-पितासे भी तो प्रेम करता है! अपने घोड़ेसे भी तो अुसे प्यार होता है।"

"बड़े बुद्धू हो" चौथा झूमकर अपनी राय देता है: "प्रेम अेक आगकी तरह अुसकी छातीमें सुलगा करता है, प्रेम करनेवालेको अैसा मालूम होता है जैसे अुसने मादकमधु पिया हो, जैसे वह नशेमें हो, जैसे अेक चिंगारी अुसके पूरे अस्तित्वको.....।" और अिस तरह विवाद चलता रहता है यहाँ तक कि सार्जेन्ट अपनी राय देता है, सब हँस पड़ते हैं और अपनी अपनी बन्दूकें संभालकर कल्पनालोकसे यथार्थके क्षेत्रमें आ जाते हैं।

लेकिन दर्यमूफ कभी अैसे विवादोंमें शामिल न होता सिर्फ अेक बार बहुत धीरेसे अुसने अपनी प्रेमिकाका जिक्र किया जिससे मुझे सिर्फ यह पता चल सका कि वह अेक बहुत सभ्य लड़की है और अुसने दर्यमूफसे वादा किया है कि मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी। अिसी तरह वह अपने युद्ध सम्बन्धी कार्योंका भी कभी जिक्र नहीं करता था और लोग बहुत कुछ अुसके बारेमें बयान किया करते "अमुक गाँवपर अुसने यों आक्रमण कर दिया, अिस तरह हमने जर्मनोंको घेरा; यों अुनके बारूदखानेमें आग लगा दी--अिस तरह दर्यमूफने दो टैंकोंको अेक साथ स्वाहा कर दिया वगैरह।"--लेकिन दर्यमूफ खुद मौन रहता। अुसके चेहरेपर अेक हलकी-सी मुस्कुराहट रहती जैसे कहता हो "मुझे अपनी माँसे प्रेम है, मेरा पिता बड़ा स्वाभिमानी है, मेरी प्रेमिकाने मुझसे कहा था कि मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी; और मैं अब अिन जर्मनोंको अपने देशसे भगाकर फिर अपने पंचायती खेतको लौट जाअूँगा--।" और वह अिसी तरह लड़ता रहा, यहाँ तक कि करसुककी रक्तरंजित लड़ाअी शुरू हो गअी। जर्मनोंके पाँव अुखड़ चुके थे, मगर वह भागते भागते बराबर हाथ-बम फेंकते जा रहे थे, अेक बम दर्यमूफके टैंकपर आके फटा। दो सैनिक तुरन्त मर गअे! और टैंकमें आग लग गअी! अुमड़ते हुअे धुअेंकी कालिमासे ड्राअीवर चोयोलोफने किसी न किसी तरह दर्यमूफको खींचकर बाहर निकाल लिया। अुसके शरीरसे अंगारे निकल रहे थे, चोयोलोफने बहुत-सी मिट्टी अुसके कपड़ोंपर फेंकी जब अंगारे बुझ गअे तो अुसे कन्धेपर डालकर घसीटता हुआ तुरन्त सहायताके स्टेशन तक ले आया। क्योंकि जैसा चोयोलोफने बादमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहा "अिसलिअे घसीटा कि अुसका हृदय जरा-जरा धड़क रहा था। सोचा शायद बच जाअे।"

और दर्यमूफ बच गया! यहाँ तक कि अुसकी आँखोंकी ज्योति भी बनी रह गअी, मगर अुसका चेहरा बिलकुल बदल चुका था—जो बहुत झुलस गया था। कहीं-कहीं तो आगने अुसके माँसको हड्डियों तक खा डाला था। वह पूरे आठ महीने तक अस्पतालमें पड़ा रहा और अेकके बाद अेक प्लास्टिक आपरेशन अुसपर होते रहे। जब पट्टियाँ खोली गअीं और अुसने आअिनेमें अपनी सूरत देखी—वह सूरत जिसे वह अपनी सूरत शायद ही कह सकता था! नर्स, जिसने अुसे आअिना देखनेके लिअे दिया था, मुँह फेरकर रोने लगी! दर्यमूफने फौरन अुसे आअिना वापस दे दिया और धीरेसे बोला: "खैर! अिससे भी बढ़कर दुर्घटना हो सकती थी। अिस तरह कम-से-कम जीवित तो रहा जा सकता है।"—मगर अिसके बाद फिर कभी नर्ससे अुसने आअिना देखनेकी अिच्छा प्रकट न की, बस लेटे-लेटे वह अपने चेहरेपर अुँगलियाँ फेरा करता मानो अपनी अुँगलियोंको अिन नअी रूपरेखाओंसे वह परिचित कराना चाहता हो! अन्तमें अुसके सम्बन्धमें मेडिकल कमीशनने निर्णय दिया कि अब वह सेनामें क्रियात्मक रूपसे भाग नहीं ले सकता। कमीशनके अिस निर्णयको सुनकर दर्यमूफ कमान्डिंग जनरलके पास पहुँचा।

"लेकिन तुम तो असमर्थ हो चुके हो—तुम किस तरह.....।"

"—कदापि नहीं। कौन कहता है मैं असमर्थ हूँ। हाँ—यह ठीक है कि अब मेरा रूप मनुष्योंका-सा नहीं, भूतोंका-सा है; लेकिन मेरा शरीर अब भी सैनिकोंकी वर्दी पहननेके लिअे सुदृढ़ है, मेरे मनमें अब भी अपनी मातृ-भूमिके शत्रुओंसे लड़नेकी लगन है।" —बातें करते दर्यमूफने यह अनुभव किया कि जनरलने पहली बार तो अुसकी तरफ देखा था, फिर घबराके नजरें नीची कर लीं थीं और फिर जमीनकी ही तरफ देखता हुआ वह बातें करता रहा, जैसे वह स्वयं ही बहुत लज्जित हो! वैसे अुसने बहुत प्रेमपूर्ण व्यवहार किया अुसके अेक-अेक शब्द और सारे रंग-ढंगसे समवेदना और सहानुभूति छलकी पड़ती थी। मगर अुसकी आँखोंमें क्षणभरके लिअे जो अेक विचित्र परेशानी, घबराहट और फिर यकायक दयाका भाव अुभर आया था, वह दर्यमूफकी निगाहोंसे छिप न सका।

अन्तमें यह निर्णय हुआ कि अुसे बीस दिनोंकी छुट्टी दे दी जाय जिससे अुसका स्वास्थ्य और सुधर जाय और अपने माता-पितासे भी मिल आय, वापस आकर अपनी रेजमेन्टमें सम्मिलित हो जाय! जाते समय अुसे "हीरो ऑफ दि सोवियट यूनियन" की अुपाधि देकर वीरताका चक्र अुसके सीनेपर लगा दिया गया।

दर्यमूफको आशा थी कि स्टेशनसे घर तक जानेके लिअे कोअी सवारी मिल जाअेगी लेकिन स्टेशनपर कोअी सवारी न मिली, अतः वह पैदल ही घर रवाना हो गया। —बरफ अभी चारों तरफ जमी थी, तेज और ठंढी हवा साँय् साँय् करती हुअी अुसके कानोंके पाससे जातीं और बार-बार अुसके लम्बे कोटके दामनोंको अुड़ा अुड़ा देतीं,—गाँव पहुँचते पहुँचते झुटपुटा हो गया। सबसे पहिले अुसे वह कुवाँ नजर आया जिसमें लगी हुअी गराड़ी हवासे हिल-हिलकर चरचरा रही थी—यहाँसे पाँच मकानोंके बाद अुसका अपना घर था।

अेकाअेक वह रुक गया, कसकर जेबोंमें हाथ डाल लिअे और खड़ा होकर सोचने लगा, फिर खुद ही सर हिलाया और घरकी तरफ चल पड़ा। अहातेकी दीवा-रोंके नीचे घुटनों-घुटनों बरफ थी, वह दीवारसे टिक कर खड़ा हो गया, चुपकेसे खिड़कीके अन्दर झाँकनेकी कोशिश करने लगा, क्षण भरके बाद अुसे अुसकी माँ दिखाअी दी जो मेजपर खाना लगा रही थी, छतसे लटका हुआ मिट्टीके तेलका दिया धीमे-धीमे जल रहा था कमरेमें धुंधला प्रकाश था। अुसकी माँके कन्धोंपर वही काली शाल थी वह अुसे बिलकुल वैसी ही लग रही थी जैसी वह अुसे छोड़कर गया था, गम्भीर, और शान्त —हाँ शालके नीचेसे अुसके कन्धोंकी हड्डियाँ और अुभरी हुअी मालूम होती थीं जैसे वह और बूढ़ी हो गअी हो—तीन बरस भी तो बीत गअे थे, पूरे तीन बरस!

दर्यमूफको सहसा अेक दुःख भरी लज्जाका अनुभव हुआ। वह अुसे कितने कम खत लिखता था! मालूम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं अुसपर क्या-क्या बीत गअी होगी, कहीं अुसे मालूम होता कि माँ और वृद्ध हो गअी है तो वह अुसे और ज्यादा खत लिखता खैर ! — वह बराबर खिड़कीसे झाँकता रहा--अुसकी माँने खाना लाकर मेजपर रखा-- बहुत-ही साधारण खाना था, अेक जवारकी डबल रोटी और अेक प्याला दूध, दो चमचे और नमकदानी,-- आखिर दर्यमूफने साहस करके फाटक खोला । फाटक खोलते-खोलते सोचता जाता था कि माँ अुसे देखकर कहीं डर तो न जायगी-अगर अुस स्नेहपूर्ण और दयावान चेहरेपर भयके भाव दिखायी दिअे तो वह क्या करेगा । फाटक खोलकर वह सहनमें पहुँचा और धड़कते हुअे दिलसे कुन्डी खटखटाअी ।

"कौन है ?" अन्दरसे अुसकी माँकी आवाज आयी ।

"हीरो ऑफ दि सोवियट यूनियन-- सीनियर लेफ्टिनेन्ट—ग्रोमोफ ।" अुसका दिल अितनी जोरसे धड़क रहा था कि अुसने अपना सर दरवाजेकी चौखटपर टेक दिया और हाथ दिलपर रखकर अुसे दबानेकी कोशिश करने लगा--।

हाँ अुसकी माँने अुसकी आवाज नहीं पहचानी थी । वह दौड़ी हुअी आअी ! अनेक प्लास्टिक ऑप्रेशनोंने अुसकी आवाजको भी बदल दिया था--अुसे अैसा महसूस हुआ जैसे वह भी आज ही अपनी नअी आवाजको पहली बार सुन रहा है । कमरेके अन्दर कुछ हड़बड़ाहट हो रही थी, शायद अुसकी माँ हीरो ऑफ दि सोवियट-यूनियनसे आतंकित होकर अपनी जूतियाँ पहन रही हो । अन्दर ही से अुसने कुण्डी खोलते-खोलते घबराहटसे पूछा:-

" मेरे प्यारे आप कैसे पधारे ? "

" मैं श्रीमती मारियाके लिअे अुसके बेटे सीनियर लेफ्टिनेन्ट दर्यमूफका सलाम लेकर आया हूँ । "

अेक दमसे दरवाजेके दोनों पट खुलकर जोरसे दीवारोंसे टकराअे ।

"अरे मेरा दर्यमूफ जीवित है ! कुशलसे तो है वह ! अरे मेरे अीश्वर ! अरे मेरे दयालू भगवान्-- आओ बेटा आओ--आओ मेरे बच्चे--अन्दर आजाओ ।"

दर्यमूफ अन्दर आ गया । टेबलके नजदीक बेंचपर बैठ गया । यहाँ वह अुस समयसे बैठा करता था जब अुसके पाँव बेंचपर बैठकर जमीन तक न पहुँचते थे और अुसकी माँ हमेशा झुककर अुसके घुँघराले बालोंमें अुँगलियाँ फेरती हुअी कहा करती थी " खाओ बेटा ! आखिर दलिया नहीं खाओगे तो तुम्हारे नन्हे-मुन्ने हाथ-पैर कैसे बढ़ेंगे ! तुम कैसे बहादुर हो कि जरा-सी दलिया भी नहीं खा सकते ! खाओ मेरे सिपाही बेटे ! खाओ ना "—और वह नखरे करते करते खाता था !

अिस वक्त भी वह दर्यमूफसे अपने लड़केके सम्बन्धमें बातें सुननेके लिअे बेचैन थी और दर्यमूफ धीरे-धीरे अुसे विस्तारके साथ बताता रहा कि अुसके लड़केकी क्या दशा रही वह क्या खाता पीता रहा । अुसे किसी चीजकी कमी न थी, अपने साथियों और अधिकारियोंमें वह बड़ा ही प्रिय था, सदैव हंसता-हंसाता रहता था फिर अुन लड़ाअियोंका भी जिक्र किया जिनमें अुसने भाग लिया था, किस तरह अुसने अपने टैंकसे जर्मनोंपर आक्रमण किया था, टैंकमें आग लग गअी थी, वह खुद भी बहुत बुरी तरह जल गया था, बड़ी कुशल हुअी कि वह जिन्दा बच गया !

मारिया सुनते-सुनते यकायक बोली "अच्छा बेटा --यह तो बताओ लड़ाअी तो बहुत भयंकर होती होगी ? "

"हाँ माँजी--होती तो जरूर है लेकिन बस-- बस—यही है कि आदमी विजयी हो जाता है । "

दरवाजा खुला और अुसका बाप अन्दर आया, बीते हुअे पिछले दिनोंने अुसपर भी असर डाला था । दाढ़ीमें बहुतसे बाल पक गअे थे और थोड़ा झुककर चलने लगा था । मेहमानको देखकर अुसने जरा ढंगसे अपने जूते अुतारे और पायदानपर पाँव पोंछा, धीरेसे मफलर खोला । अपना भेड़की खालका लम्बा कोट अुतारकर खूंटीपर लटका दिया और फिर मेजके पास आकर मेहमानसे हाथ मिलाया । वह अुसका सुदृढ़, स्वाभिमानी परिश्रमी कपाल ?--और प्यारा हाथ !

परिचय या अश्नोंकी तो कोअी जरूरत थी ही नहीं क्योंकि 'हीरो ऑफ दि सोवियट यूनियन', का चक्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगाअे आजानेका अर्थ सभीको मालूम था। हाथ मिलाकर वह भी चुपचाप बैठ गया और आँखें नीची करके दर्यमूफकी बातें सुनने लगा !

दर्यमूफ अुसी तरह बैठा बातें करता रहा। जैसे-जैसे समय गुजरता जाता था, अुसकी कठिनाअी और परेशानी बढ़ती जाती थी कि अुसे अब तक किसीने पहचाना ही नहीं--अब किस तरह अपने आपको वह प्रकट करे, कैसे अेकदम खड़ा हो जाय और जोरसे चिल्लाअे कि प्यारे अब्बा क्या तुम मुझे नहीं पहचानते। माँ क्या तुमने भी मुझे नहीं पहचाना--ध्यानसे देखो, मैं कौन हूँ ? क्यों मुझसे पूछती हो कि लड़ाअी कितनी भयानक होती है--मेरी सूरत देखो और तुम्हें मालूम हो जायगा कि लड़ाअीकी भयंकर भट्टीमें मनुष्य अिस जलता है कि अुसके माँ-बाप भी अुसे नहीं पहचान सकते !

वह सोचता रहा, बोलता रहा, अपने माता-पिताके पास अपरिचित बनकर बैठा हुआ--वह प्रसन्न भी था और दुखी भी !

"अच्छा क्या अब मेहमानको कुछ खिलाओ-पिलाओगी नहीं।" अुसके पिताने कहा और खुद अुठकर अलमारी खोलने लगा, खुली हुअी अलमारीमें रखी हुअी अेक-अेक चीजको दर्यमूफने अिस तरहसे पहचाना जैसे बिछड़े हुअे साथी हों,--अेक कोनेमें वह डिब्बा रखा था जिसमें मछली पकड़नेके काँटे रखे रहते थे और बड़ी-सी काली केतली जिसका हत्था टूटा हुआ था, नीली प्लेटें जो कभी-कभी भोजके अवसरपर निकाली जातीं थीं और अुस दिन भी निकाली गअी थीं जब दर्यमूफ युद्धके मोरचेपर जानेवाला था अुसकी माँने सगे सम्बन्धियोंको निमन्त्रित किया था--सब चीजें बिलकुल अुसी तरह रखी थीं, और अुस अलमारीसे वही जायकेदार खुशबू आ रही थी, अचार मुरब्बेकी वही जानी पहचानी खुशबू !

दर्यमूफने अेक ठण्डी साँस भरी !

अुसके पिताने अलमारीसे शराबकी अेक बोतल निकाली, बोतलमें बस अितनी शराब थी कि दो गिलास भर सकते थे। अुसने बड़े ही आदरके साथ अेक गिलास मेहमानको दिया और दूसरा खुद लेते हुअे ठंडी साँस भरकर कहा-- "आज कल तो वाटका* अितनी ही मिल सकती है !"

खाना शुरू हुआ।

खाते-खाते सहसा दर्यमूफको अैसा अनुभव हुआ कि अुसकी माँ अुसके हाथोंपर दृष्टि जमाये हुअे है और जिस ढंगसे वह चम्मच पकड़े है अुसे बड़े ध्यानसे वह देख रही है ! अुसने घबराकर चम्मच दूसरी तरहसे पकड़ लिया और कटुताके साथ जरा-सा मुस्कुरा दिया, अुसकी माँ की दृष्टि अुसकी दृष्टिसे मिली, फिर दोनों सर झुक गअे और खाना चलता रहा।

खानेके बीच अिधर-अुधरकी बातें होती रहीं दर्यमूफने अनेकों प्रश्न किअे, अुसका बाप जवाब देता रहा। अबकी फसल बहुत अच्छी हुअी है, शहरसे औरतें कटाअीमें सहायता देनेके लिअे आअी थीं, अुम्मीद है कि गाँवमें शीघ्र ही बिजली आ जायगी क्योंकि सम्भवतः गरमियों तक लड़ाअी खतम हो जाअेगी।

"आपको यह कैसे मालूम हुआ कि गरमियों तक लड़ाअी समाप्त हो जायगी ?" दर्यमूफने पूछा। अुसके बापने अुसे ध्यान पूर्वक देखा और बड़े ही विश्वासके साथ बोला।" अिसलिअे कि अब जनताका खून खौल गया है ! मौतका मजा चख लेनेके बाद अब कौनसी चीज अुन्हें रोक सकती है ? जर्मनोंका बेड़ा गर्क समझिये !"

"हूँ।" दर्यमूफने कहा-- "आप ठीक कहते हैं।"

अुसकी माँ सहसा बोल अुठी "किन्तु--किन्तु--आपने यह तो बताया ही नहीं कि हमारा बेटा हमसे मिलने कब तक आअेगा--मैंने अुसे पूरे तीन सालसे नहीं देखा"--अुसकी आँखोंमें आँसू भर आअे, होंठ काँपने लगे लेकिन अुसके पतिने अुसकी तरफ अिस तरह देखा कि वह संभल गअी--फिर अेक क्षणके बाद आँसू पीकर बोली "शायद तीन बरसमें वह और बड़ा हो गया हो--शायद अुसने मूछें रख ली हों--रोज ही अुसे मृत्युसे सामना करना पड़ता होगा--कौन जाने--शायद अुसकी आवाज भी बदल गअी हो--मेरा बहादुर दर्यमूफ, मेरा निडर बेटा।"

---

* अेक रुसी शराब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्यमूफका हृदय बड़े जोरसे धड़क रहा था। अुसने अपना सीना मेजके किनारेसे टिका दिया और धीरेसे बोला। "आपसे मिलने तो वह आअेंगे ही। कभी न कभी जरूर आअेंगे--हाँ--आपका यह कहना सही है। कुछ न कुछ तो जरूर बदले होंगे--हो सकता है कि आप आसानीसे अुनको पहचान भी न सकें--।" यह कहके वह जलदीसे खड़ा हो गया और पानीके नलपर जाकर हाथ धोने लगा।

आतिशदानके पास अुसके अपने ही पलंगपर अुसके लिअे बिसतर लगा था। वह शान्तिपूर्वक अुसपर लेट गया, दीवारपर अुखड़े हुअे प्लास्टरके सारे चिन्ह अब भी मौजूद थे जो सोते समय अुसे नजर आया करते थे, जिन्हें देखते देखते वह रोज रातको सो जाया करता था। फिर अुसकी दृष्टि छतपर पड़ी, लकड़ीकी शहतीरोंमें अेक अेक गाँठ अुसकी जानी पहचानी थी, अुसने अपना अेक हाथ बढ़ाया और लेटे लेटे दीवारके अेक अुखड़े प्लास्टरके किनोरोंपर फेरने लगा--सहसा अुसे अैसा महसूस हुआ कि दरवाजेमें कोअी खड़ा है, अुसने करवट ली--कोअी नहीं--ठंडी साँस भरके फिर अुसने अुसी तरफ करवट ले ली और दीवारपर अुँगली फेरते फेरते अुसकी आँखोंसे आँसू गिरने लगे और गिर-गिरकर तकिअेमें सूखने लगे। अुसके मनमें अेक प्रकारका बवन्डर अुठ रहा था, अैसा भी हो सकता है--क्या अैसा भी हो सकता है माँ, कि तुम मुझे न पहचानो--मेरी प्यारी माँ, मेरी अच्छी माँ--क्या सचमुच तुमने मुझे नहीं पहचाना?"

बाहर तेज हवा दरवाजोंसे टकरा रही थी, दूसरे कमरेसे अुसके बापके खर्राटे सुनाअी दे रहे थे, मगर अुसकी माँके करवट बदलने और दबी-दबी आहें भरनेकी आहट बराबर मिल रही थी! अुसे नींद नहीं आ रही थी--।

सुबह दर्यमूफकी आँख खुली तो चूल्हेमें लकड़ियाँ जल रही थीं और अुसकी माँ आग जलानेके बाद नाश्तेकी तैयारीमें लगी हुअी थी,--दर्यमूफके धुले हुअे मोजे चूल्हेके पास ही अलगनीपर सूख रहे थे और जूता पालिश किया हुआ दरवाजेकी आड़में रखा हुआ था। अुसे अुठता देखकर अुसकी माँ पास आअी और धीरेसे बोली "आप.....आपको नाश्तेके लिअे गेहूँके पराठे पसन्द हैं?"

वह चौंक पड़ा, गेहूँके पराठे अुसे बहुत पसन्द थे। रुक-रुकके बोला "जी हाँ पसन्द है--वैसे जो कुछ भी होगा मैं खा लूँगा--मेरे लिअे कोअी खास चीज पकानेका कष्ट न कीजिअे"--फिर वह बिसतरसे अुठ खड़ा हुआ, कमीज पहनी, पेटी बाँधी, नंगे पाँव खानेकी मेजके पास आ बैठा और बोला "देखिअे वह--वह--आपके गाँवमें कात्या नामकी कोअी लड़की है?"

"कौन कात्या? वह अन्देरे मानशूकी बेटी?"

"जी हाँ" अुसने नजरें झुकाके जवाब दिया।

"अुसने तो पिछले साल परीक्षा पास कर ली है। अब तो वह स्कूलमें पढ़ाती है। आपको अुससे भी कुछ काम है?"

"जी हाँ--आपके बेटेने अुनसे भी सलाम कहनेको कहा था।"

अुसकी माँने पड़ोसनकी नन्हीं बच्चीको कात्याको बुलानेके लिअे दौड़ाया, दर्यमूफने अभी जूते भी न पहने थे कि कात्या दौड़ती हुअी आ पहुँची। अुसकी बड़ी बड़ी भूरी आँखें मारे खुशीके अुबली पड़ती थीं और चेहरा प्रसन्नताके मारे लालिमा-मंडित हो रहा था! जब अुसकी अूनी शाल सरसे ढलककर काँधोंपर आ गअी, तो दर्यमूफका हृदय डूबने लगा। अुसने कात्याकी कल्पना सदैव अिसी रूपमें की थी। अुसके घरकी रानीकी तरह खड़ी हुअी--अुसकी प्रियतमा सुन्दर पत्नी--सहसा अुसका जी चाहा कि अिस सुन्दर रूपसे अपनी गोदको भर ले, सूर्यकी किरणोंकी तरह खिले हुअे बालोंको अपने सीनेपर बिखेर ले, अुसे अिस तरह अपने अस्तित्वके साथ अेक आकार कर ले कि फिर कभी अलग न होना पड़े!--मगर यह सब करनेके बजाय अुसने अुसकी ओरसे अपना मुँह फेर लिया और कुछ अिस तरह बैठा कि प्रकाश अुसके चेहरेपर न पड़ सके! कात्याने पास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आते ही प्रश्नोंका ताँता बाँध दिया, "तो आपसे दर्यमूफने कहा था कि मुझसे सलाम कहिअेगा ? आप दर्यमूफसे मिले थे, अच्छा तो है वह ? मेरी चर्चा करता था वह ? मुझे याद करता था ? अुससे कहिअेगा मैं अपने वचनोंपर कायम हूँ, मैं अुसकी प्रतीक्षा कर रही हूँ वह कब आअेगा--बिना अुसके.....।" और कात्याकी आवाज भारी हो गअी ।

दर्यमूफ मौन बैठा रहा मानो कात्या किसी मनुष्यसे नहीं पत्थरकी मूर्तिसे बात कर रही थी । कात्या और पास आ गअी, सहसा अुसकी दृष्टि दर्यमूफके चेहरेपर गअी वह घबराकर पीछे हट गअी, फिर तुरन्त अुसने बड़ी ही श्रद्धासे अपनी दृष्टि झुका ली और धीरेसे बोली—"हीरो ऑफ दि सोवियट यूनियन—" मगर बिजलीकी तरह जो प्रभाव अेक क्षणके लिअे अुस दृष्टिमें आया था, अुसे दर्यमूफसे ज्यादा कौन समझ सकता था । अुन प्यारी आँखोंमें भय और घबराहटकी वह झलक देखते ही दर्यमूफने निर्णय कर लिया कि अब अुसे यहाँ नहीं रहना चाहिअे !

अितनेमें अुसकी माँ नाश्ता लेकर आ गअी,—गरम पराठोंमेंसे अेक अच्छा-सा पराठा निकालकर अुसने मेहमानके प्लेटमें रखा और अूपरका मलाअीवाला दूध अुसके गिलासमें भर दिया । नाश्तेपर वह फिर दर्यमूफकी बातें करने लगा । अेक-अेक बात वह कात्याको विस्तारके साथ बता देना चाहता था, अुसने किन-किन लड़ाअियोंमें भाग लिया, क्या-क्या दुःख सहे, अपने साथियोंमें वह कितना प्रिय था । अफसर अुसका कितना सम्मान करते थे, मगर बात चीत करते समय अुसने कात्याकी ओर अेक बार भी न देखा । अपने भयंकर चेहरेकी परछाअीं अुन सुन्दर आँखोंमें अुसे देखना सहन न हुआ, नाश्तेके बाद वह सबसे बिदा हुआ, अुसके बापने कहा भी कि पंचायती खेतकी कोअी गाड़ी अुसे घरसे स्टेशन तक पहुँचानेके लिअे मंगवा दी जाय, लेकिन दर्यमूफने किसी तरह स्वीकार न किया, और जिस तरह आया था अुसी तरह पैदल स्टेशनकी तरफ चल पड़ा । हर कदमपर अुसके मनका बोझ और बढ़ता जाता था । कभी वह सहसा रूक जाता, अपना सर दोनों हाथोंसे पकड़ लेता और अपने आपसे पूँछता "क्यों दर्यमूफ । अब क्या होगा—?"

जब वह अपनी रेजमेन्टमें पहुँचा तो अुसके साथियोंने अुसका बड़ा जोरका स्वागत किया और अब तक मनके जिस दुःखके कारण खाना और सोना कठिन हो गया था, अुसपर जैसे किसीने मरहम रख दिया । अुसने निश्चय किया कि माँको कुछ दिन और न बताया जाय फिर देखा जाअेगा--और जहाँ तक कात्याका प्रश्न है अुसकी मूर्ति तो हृदयसे हटानी पड़ेगी । अुस सुन्दर चित्रको बिगाड़ना ही होगा !

दूसरे सप्ताहमें अुसे अपनी माँका पत्र मिला "मेरे लाल--तुम कैसे हो ? मुझे अफसोस है कि मैं तुम्हें अेक जरा वैसी बातके बारेमें लिख रही हूँ--लेकिन क्या करूँ अब मुझसे कहे बिना नहीं रहा जाता । समझमें नहीं आता कि क्या करूँ--क्या न करूँ । पिछले दिनों हमारे यहाँ अेक मेहमान आया । वह आदमी तो बड़ा अच्छा लगता था मगर अुसके चेहरेकी बहुत ही बुरी दशा थी । अुसने कहा कि वह तुम्हारा सलाम लेकर आया है । मेरा तो ख्याल था शायद दो-चार दिन ठहरे लेकिन न जाने क्यों वह अेकदमसे चला गया । मेरे बच्चे ! अुस वक्तसे मैं यह सोच-सोचकर परेशान हूँ कि वह तुम खुद थे । मैं न खा सकती हूँ न सो सकती हूँ । तुम्हारे पिता भी मुझको डाँटते रहते हैं । कहते हैं तुम सठया गअी हो, बुढ़ापेसे तुम्हारी अकल मारी गअी है, बेटेकी जुदाअीने तुमसे समझ भी छीन ली ! अगर वह तुम्हारा बेटा होता तो हमें बताता क्यों नहीं ? आखिर वह छिपाता क्यों ? अरे अुस जैसे चेहरेपर तो किसी भी आदमीको अभिमान होना चाहिअे लज्जा कैसी वह मुझसे वाद विवाद करते हैं । वाद विवादमें तो मैं नहीं जीत पाती परन्तु मेरा दिल नहीं मानता ! मेरी ममता कहती है कि वह तुम ही थे ! वह जरूर तुम ही थे और कोअी नहीं था ! जब मैंने तुम्हारा कोट झाड़ा और तुम्हारे मोजे धोअे तो मुझे अुसमें तुम्हारी ही गन्ध आअी--मैं अुस गन्धको पहचाननेमें गलती नहीं कर सकती दर्यमूफ ! तुम जिसे चाहो धोखा दे सकते हो लेकिन ममताको तुम धोका नहीं दे सकते, खुदाके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिअे लिखो कि वह तुम ही थे और मुझे अिस सूलीसे बचाओ जिसपर मैं अिस वक्त लटक रही हूँ !—नहीं तो—फिर यही लिख दो कि मैं पागल हो गअी हूँ, यही कह दो कि तुम्हारी जुदाअीसे मेरा दिमाग बिगड़ गया है—दर्यमूफ अीश्वरके वास्ते..... ।"

दर्यमूफने अुस पत्रसे अपना डरावना चेहरा छुपा लिया और फूट-फूटकर रोने लगा । अुसके साथी अुसके चारों तरफ जमा हो गअे और अुसे समझाने लगे कि अब भी कुछ नहीं गया है । अिसे चाहिअे कि जलदी अिस पत्रका जवाब लिखे और अपनी माँको सब कुछ बता दे !

अुसी समय अुसने जवाब लिखा और चौथे या पाँचवें दिन वह अपनी यूनिटके कुछ सैनिकोंको कुछ समझा रहा था कि गार्ड भागता हुआ आया "कामरेड-कैप्टन—आपसे मिलने दो औरतें आअी हैं ।" दर्यमूफ चौंक पड़ा "मुझसे कौन औरतें मिलने आअेंगी—तुमसे गलती हुअी होगी—किसी औरसे मिलने आअी होंगी"—फिर सहसा घबराकर बोला "अच्छा—अच्छा—हाँ—हाँ ठीक है । मैं आता हूँ"—वह अुठा ! शत्रुके सामने चट्टानकी तरह मजबूतीसे जमनेवाले पाँव लड़खड़ा रहे थे, हाथ-काँप रहे थे । मुट्ठियाँ दबाके वह अेक-अेक कदम बढ़ाता बाहर निकला—दो स्त्रियाँ खैमे (Tent) की रस्सियाँ पकड़े खड़ी थीं । अेक बूढ़ी और अेक जवान !

दर्यमूफ अुनके सामने जाकर रुक गया फिर अुसने दृष्टि झुकाकर अपने सीनेपर लगे हुअे सुनहले चक्रको देखा और धीरेसे बोला । "माँ—मुझे माफ कर दो—वह मैं ही था"—फिर अुसने जरा अभिमानसे गर्दन अुठाअी और कात्याकी ओर देखा—"कात्या—तुम यहाँ क्यों आअी ? तुमने अैसी शकलकी प्रतीक्षा करनेका वादा तो नहीं किया था ।"

कात्याके होंठ काँपने लगे, अुसे आँसुओंका नमक होंठोंपर महसूस होने लगा "दर्यमूफ मैंने जिसको वचन दिया था वह मेरा हीरो था और तुम.....अुसकी दृष्टि सुनहले चक्रपर जाके रुक गअी ।" "मैं अपनेको अिस अभिमानके योग्य नहीं समझती लेकिन सोवियट यूनियन मेरा भी है....." और तब बड़ी-बड़ी भूरी आँखोंसे गिरते हुअे आँसुओंके आअिनेमें दर्यमूफका भयंकर चेहरा कितना सुन्दर लग रहा था !

(—अनुवादक, **श्री अेम. अहमद 'फिरदौसी'**)

अुच्च कोटिकी, स्फूर्तिदायी जीवनको अूंचा अुठानेवाली, स्वस्थ मनोरंजनका आनन्द प्रदान करनेवाली, मानवी गुणोंकी प्राण-प्रतिष्ठा करनेवाली, जीवनकी कुरूपता दैन्य और कुण्ठाके विरुद्ध अुनके संघर्षोंमें अेक सफल अस्त्रकी भाँति प्रयुक्त की जा सकनेवाली कहानियोंकी माँग अब निरन्तर बढ़ती जाती है ।

कहानीकी लोकप्रियताका श्रेय २० वीं सदीके मासिक पत्र-साहित्यके विकासको ही मिलना चाहिअे ।

कहानी किसी अेक घटनाका अथवा परिस्थितिका वर्णन करती है; मानव-स्वभावके किसी अेक ही पक्षकी ओर वह ध्यान आकर्षित करती है । जीवनके अेक लघु अंशका ही वह निरूपण करती है । ....कहानीमें कुछ क्षणोंके लिअे हम पात्रोंसे मिलते हैं । और अुन्हें हम कुछ ही सम्बन्धों और परिस्थितियोंमें देखते हैं ।"

कहानीमें जो विभिन्न तत्व होते हैं अुनमेंसे अेकपर ही विशेष जोर दिया जा सकता है । वह कोअी घटना अथवा परिस्थिति हो सकती है । चरित्रका कोअी पहलू अथवा वातावरण विशेष हो सकता है । ...अिनमेंसे कहानी किसी अेक को ही चुन सकती है और अुसीका निरूपण कर सकती है ।"

अिस अंकमें प्रकाशित "घंटोंकी आवाज" और "वापसी" कहानी पढ़कर अूपरकी कसौटीपर दोनों कहानियोंको परखिअे ।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोह

— श्री नन्दकिशोर राय

थक चुकी थी साँसकी वीणा मगर
जिन्दगीके गीत मन गाता रहा

हो चुकी थी मूक पथकी बाँसुरी
नप चुकी थीं मंजिलोंकी दूरियाँ
बुझ गओ पथ-दीपकी थी वर्तिका
घेर कर बैठी चरण मजबूरियाँ

मिट चुकी थी राहकी रेखा मगर
पाँवका गतिसे लगा नाता रहा

ढल गया यौवन सुहागिन रातका
बज अुठे पायल अुषाके राहमें
रातभर तारे विकल जगते रहे
सो गअे अब बादलोंकी छाहमें

गल चुका था चाँद गीली ओसमें
भोरका सपना मगर भाता रहा !

चूमती थी धूलिको शेफालिका
तिर गओ थी दर्दकी परछाअियाँ
हो चुकी वीरान बनकी वीथियाँ
लुट चुकी थी प्यारकी अमराअियाँ

अुड़ गया मधुमास था पर फूलमें
छलकनेको रूप ललचाता रहा

स्वातिकी काजल भरी पलकें सजल
धुल गओ थी आँसुओंकी धारमें
बुझ चुकी थी स्नेहकी विद्युत्-छटा
कौंध कर अुरके तरल संसारमें

झर गअे थे बूँदमें घन, पर पपीहा
प्यासको सौ बार दुहराता रहा

थक चुकी थी साँसकी वीणा मगर
जिन्दगीके गीत मन गाता रहा !

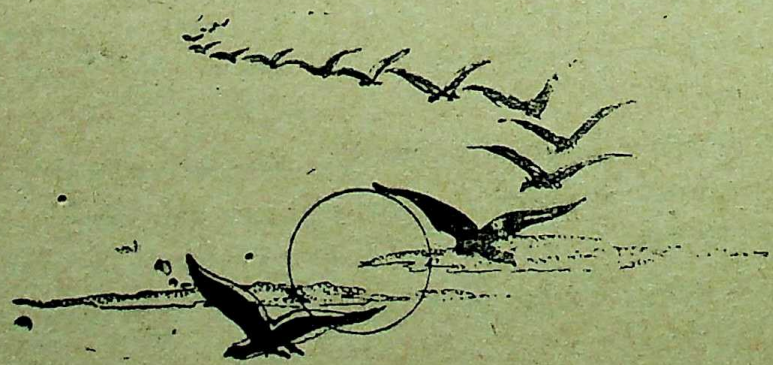

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेलुगु

पुष्प विलापमु

: श्री जंध्याल पापय्य शास्त्री :

चेतुलारंग निन्नु पूजिंचु कोरकु
कोडिकूयंगने मेलुकोंटिनेनु
गंगलो मुन्गि धौत वल्कलमु गट्टि
पूलु गोनितेर नरिगिति पुष्पवनिकि ।
नेनोक पूल मोक्क कड निल्चि चिवालुन कोम्मवंचि
गोरानेडु नंतलोने विरुललियु जालिग नोल्लुविप्पि
"मा प्राणमु तीतुवा" यनुचु बाअुरु मन्नवि, कृंगिपोति
ना मानसमंदेदो तळुकुमन्नदि पुष्प विलाप काव्यमं
तल्लियोडिलोन तलिराकु तल्पमंदु
आडुकोनु मम्मुलनु बुग्गलंदु चिदिमि
अम्मुकोंदुवे मोक्ष वित्तम्मु कोरकु ।।
हृदयमेलेनि नी पूज लेंदुकोयि ।।
जडमतुलमेमु ज्ञानवंतुडवीवु
बुद्धियुन्नदि भाव समृद्धि गलदु
बंडवारेनटोयि नी गुंडेकाय ?
शिवुनिकै पूयवे नालगु चिन्नपूलु ।।
आयुड गल्गु नाल्गु गडियलु
कनिपेंचिन तीवतल्लि जातीयत
दिद्दितीर्तुमु तदीय करम्मुलो स्वेच्छमं
नूयललूगुचुन् मुरियुचुंदुमु
आयुड दीरिनंतनें हायिग कलु
मूसेदमु आयम चल्लनिकालि व्रेक्कपै
गालिनि गौरवितुमु सुगंधमु पूसि,
समाश्रयिंचु भृंगालकुविदु
सेसेदयु कम्मनि तेतेलु
गिम्मुबोंइव नेत्रालकुहायि गूर्तुमु
स्वतंत्रुल मम्पु स्वार्थ बुद्धि तो—
ताळुमु तृंपबोकुमु तल्लिकि बिड्डकु वेरुसेतुवे !
आत्मसुखम्मु कोसमयि अन्युल गोंतुलु कोसितेच्यु
पुण्यात्मुड नीकु मोक्षमेट्टुलब्बुनु ? नेत्तुरु चेति पूज
विखात्मुडु स्वीकरिंचुने ? चराचर मूर्ति प्रभुडु मा
पवित्रात्मल नंदुकोडे ? नडिमंत्रपु नीतगुलाटमेटिकिन्"
अलु दारालतो गोंतु कुरि बिगिंचि
गुंडेलोनुंडि सूट्टलु गुच्चि कूचि
मुडुचुकोंदुरु मुच्चट मुडुलयंदु
अकट ! दयलेनिवारु मी याडुपारु ।
गुंडे तडिलेक नूनेलो वंडि पिंडि
अत्तरुलु चेसि मा पेद नेत्तुरुलनु
कंपुदेहालपै गुमायिपु कोरकु
पुलुमु कोंदुरु हंत मी कुलमुवारु ।।
अक्कट हायि मेनु महिषासुरु लेंदरो नाल्गु प्रक्कलन्
प्रक्कलमीद जल्लुकोनि मा पसि मेनुलु पाडुकाल्लतो
द्रोक्कुचु दोलि दोलि मरुरोजुदयानने वाडिवत्तेलं
रेक्कलु जारिपो परिहरितुरु मम्मुल पेंटदिब्ब पै ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मा वेललेनि मुग्ध सुकुमार मरंद माधुरी
जीवित मेल्ल मीकयि त्यजिचि कृशिचि नशिचि पोये
मा यौवन मेल्ल कोल्लगोनि आपयि चीपुरु तोड़चिम्मि
मम्मावल पारवेतुरु गदा ! नरजातिकि नीति युन्नदा ?

बुद्ध देवुनि भूमिलो पुट्टिनावु
सहजमगु प्रेम नीलोन चच्चेनेमो
अंदमुनु हत्यचेसेडि हंतकुंड
मैलपडिपोयेंनोयि ! नी मनुज जन्म
पूजलेकुन्न बाबु नी पुन्नेमाये
कोयबोकुमु मा पेद कुत्तुकलनु
अकट ! चेचेत मम्मुल हत्य चेसि
बापुकोनबोवु आ महा भाग्य मेमि ?
अिटुलु पुष्पाल्लु नन्नु चीवाट्लु-पेट्टि
नट्लुगाग पूलु गोय चेयाडलेदु
अेमि तोचक देवरकेरूक सेय
वट्टि चेतुलतो निटुवच्चिनानु ।।

हिन्दी अनुवाद

पुष्पका विलाप

: अनुवादक-श्री रामेश्वर दयाल दुबे, अेम. अे. :

ध्वनि अरुणशिखाकी पड़ी कान
मैं जाग अुठा
कर नित्य-कर्म
जा सरितामें स्नान किया
फिर राम नाम जपता-जपता
प्रभुकी पूजाके लिअे फूल
चुननेको मैं
पहुँचा पुष्पोंके अुपवनमें ।
हो खड़ा पुष्प-पौधे समीप
मैंने मृदु डाल झुकाअी जब
पाते ही मेरा नख स्पर्श
गुंजरित हो अुठा आर्द्र बना
कोमल कुसुमोंका करुणा-स्वर—
"तुम प्राण हमारे लोगे ?"
हो शिथिल, थकित, मैं रुका वहीं,
मेरे मानसमें
गूंज गया
कुसुमोंका क्रन्दन कविता बन—
"हम खेल रहे माँ-गोदीमें
कोमल किशलयकी शय्यापर
तुम हमें तोड़कर बेचोगे ?
मिल सके
कि जिससे तुम्हें यहाँ
वह मोक्ष, मोक्षका सम्बल
हरे ! हरे !
यह हृदय हीन पूजा-अर्चा !
"हम जड़ हैं,
तुम हो ज्ञानवान
तुम बुद्धि युक्त,
तुम भाव युक्त,
फिर हुआ अरे क्यों—
बोलो तो
यह सरस हृदय
अितना नीरस, अितना निर्मम ?
क्या अेक मात्र "शिव" के ही हित
ये फूल फूलते अुपवनमें ?
यह चार घड़ीका है जीवन,
नन्हा जीवन
है जहाँ जन्म पाया हमने
पाया ममता मय निज पोषण
अुस अपनी माँके अंचलको
शोभाके रंगोंसे भरते
अुसकी गोदीमें झूल-झूल
रहकर स्वतन्त्र प्रमुदित होते ।
जीवनकी संध्या जब आती
निश्चल नयनोंको मूंद तभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चू पड़ते चुपकेसे अपनी
माँके अुन शीतल चरणोंपर ।
पाकर सौरभका मुक्त दान
हमसे गौरवमय बने पवन ।
मेरा मधु
पी-पीकर, छँककर
सन्तुष्ट गूँजते हैं मिलिन्द ।
मानवके नयनोंको भी हम करते,
आनन्दित, आकर्षित
तब अरे,
स्वार्थ वश
यह न करो
ठहरो
तोड़ो मत
माँसे अुसकी सन्तानोंको
पृथक करो मत ।
"अपने सुखके लिअे
अन्यके कण्ठ कतरनेवाले !
अरे पुजारी पुण्यवान !
क्या मोक्ष मिलेगा तुझे भला ?
कह तो कैसे—
अिन रक्त रंगे हाथों द्वारा
की गअी अर्चना, यह पूजा
वह विश्वात्मा स्वीकार करेगा ?
विश्व चराचर व्यापी प्रभुसे
स्वयं हमारी पावन आत्मा
मिल न सकेगी ?
अुसके-मेरे बीच
तुम्हारे
ये निर्दय, ये क्रूर हाथ क्यों ?
"हाय, अूनके अुन धागोंसे
फूल-फूलका कण्ठ जकड़कर
तीक्ष्ण सुअीसे
हृदय बेधकर
गूँथ—पिरोकर
जूड़ोंपर हैं हमें बाँधती
दयाहीन सुकुमार नारियाँ ।
"स्नेह रहित हो हाय ! कभी तुम
हमें डुबोकर तेलमें
चढ़ा अग्निपर
फिर निचोड़ते
रक्त हमारा
जिसे 'अित्र' की संज्ञा देते
निज शरीरपर लगा अुसे तुम
आच्छादित करते सुवाससे
अपने तनकी बुरी गन्धको,
"हन्तक भी है
महा क्रूर भी
जाति तुम्हारी मानव !
हम हैं सुमन
मृदुल कोमल तन
किन्तु
क्रूर महिषासुर-मानव
बिछा सेज शय्यापर मुझको
निर्ममतासे
लोट-लोटकर
हमें कुचलते, हमें मसलते
निर्दयतासे ।
हन्त, दूसरे दिन
मुरझाअे,
सूखे,
बल खाअे बत्ती-से
दिअे फेंक जाते हैं हम नित
कहीं किसी घूरेपर ।
मानवका अुपहास
भाग्य मेरा बनता है ।
मूल्य नहीं है जिसका-
—अैसी
मधु सुगन्धसे भरी मधुर
निज जीवनका सार सलोना
अेक मात्र तुमको ही देकर
कृश हो-होकर
नष्ट हुआ करते हम नित ही ।
और अदय तुम
लूट-लूटकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप मधुर रस,
सौरभ, शुषमा,
मादक यौवन,
दूर फेंक देते हो हमको
निज झाड़ूसे सदा झाड़कर ।
सोचो तो
क्या यही
तुम्हारी पुण्य नीति है ?
मानव,
तुमने जन्म लिया है
अुस धरतीपर
जहाँ—
तथागतकी करुणा प्लावन बन फैली,
क्या सचमुच ही
शेष हुआ अुर सहज प्रेम है ?
हत्याकर सौन्दर्य सृष्टिकी
स्वयं बन गया
अरे अपावन
मानव तेरा
जन्म और जीवन भी ।

"रे भोले नर
न भी करे यदि तू यों पूजा
पुण्य लाभ होगा ही तुझको
मुझ गरीबके गले न काटो,
खेल-खेलमें मेरी हत्या यों न करो
तुम ।
कहो—
कौन वह भाग्य-लाभ है
प्राप्त जिसे करनेके हित तुम
यह निर्मम व्यवहार कर रहे ?"
पुष्प मौन थे
किन्तु मुझे तो
लगा कि जैसे
वे नीरव वाणीमें मेरी
निन्दा, हाँ निन्दा करते हैं ।
सुधबुध भूला
सुमन चयनके लिअे
हाथ भी अुठे नहीं फिर
रिक्त हाथ ही
अपने प्रभुके निकट गया मैं ।

संत तुकारामके अभंग

लोक-व्यवहार-बोध

मराठी

१. जोडोनिया धन अुत्तम वेव्हारें ।
अुदास विचारें वेंच करी ॥
अुत्तमचि गति तो अेक पावेल ।
अुत्तम भोगील जीव खाणी ॥
परअुपकारी नेणे परनिंदा ।
परस्त्रिया सदा बहिणी माया ॥
भूतदया गाअीपशूंचे पालन ।
तान्हेल्या जीवन वनामाजी ॥
शान्तिरूपें नव्हे कोणाचा वाअोट ।
वाढवी महत्त्व वडिलांचे ॥
तुका म्हणे हेंचि आश्रमाचें फळ ।
परमपद बळ वैराग्याचें ॥

हिन्दी

१. जो गृहस्थ सन्मार्ग द्वारा धन कमाकर अुसका विनियोग खेद-रहित भावसे करता है, अुसे सद्गति अेवं अच्छी योनिमें जन्म मिलेगा । जो व्यक्ति परोपकारी है, परनिंदा नहीं करता, पराअी स्त्रियोंको माँ-बहनके समान मानता है, प्राणिमात्र पर दया करता है, गअुओं अेवं पशुओंका पालन करता है, वनमें प्यासोंको पानी मिल सकनेका प्रबंध करता है, शान्त भावसे रहकर किसीका भी अहित नहीं करता और अपने पूर्वजोंकी कीर्तिको बढ़ाता है, वह व्यक्ति अपने गृहस्थाश्रमको सफल बनाकर वैराग्यकी वास्तविक क्षमताको प्राप्त करता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. पराविया नारी माअुलीसमान ।
मानिलीया धन काय वेंचे ॥
न करीतां परनिंदा परद्रव्य अभिलाष ।
काय तुमचे यास वेंचे सांगा ॥
बैसलीअे ठाअीं म्हणता राम राम ।
काय होय श्रम अैसें सांगा ॥
संतांच्या वचनीं मानितां विश्वास ।
काय तुमचे यास वेंचे सांगा ॥
खरें बोलतां कोण लागती सायास ।
काय वेंचे यास तुमचें सांगा ॥
तुका म्हणे देव जोडे याच साठी ।
आणीक ते आटी न लगे कांहीं ॥

३. अितुलें करीं भलत्या परी ।
परद्रव्य परनारी ॥
सांडुनि अभिलाष अंतरी ।
वर्ते वेव्हारी सुखरूप ॥
न करी दंभाचा सायास ।
शांती राहे बहुवस ॥
जिव्हे सेवीं सुगंधरस ।
न करी आळस रामनामीं ॥
जनमित्र होअीं सकळांचा ।
अशुभ न बोलावी वाचा ॥
संग न धरीं दुर्जनांचा ।
करीं संतांचा सायास ॥
करिसी देवाविण आस ।
अवधी होअील निरास ॥
तृष्णा वाढविसी बहुवस ।
कधीं सुखास न पावसी ॥
धरुनि विश्वास करीं धीर ।
करितां देव हाचि निर्धार ॥
तयाचा वाहे योगक्षेम भार ।
नाहीं अंतर तुका म्हणे ॥

४. शरीर दुःखाचें कोठार ।
शरीर रोगाचें भांडार ॥
शरीर दुर्गंधीची थार ।
नाहीं अपवित्र शरीर अैसें ॥
शरीर अुत्तम चांगलें ।
शरीर सुखाचें घोसुलें ॥

२. दूसरेकी स्त्रीको माताके समान माननेमें क्या कोअी धन खर्च होता है ? अुसी प्रकार यदि दूसरोंकी निंदा न की और पराअे धनकी अिच्छा न रखी, तो अुसमें भी तुम्हारा क्या कुछ खर्च होता है ? और मुझे यह बतलाओ कि बैठे-ठाले 'राम' 'राम' कहनेमें कितने परिश्रम अुठाने पड़ते हैं, संत-वचनोंपर विश्वास रखनेसे तुम्हारी क्या हानि होती है, तथा सहज-स्वाभाविक रूपमें सच बोलनेसे तुम्हारा क्या नुकसान होता है ? तुकाराम कहता है कि अुक्त बातें करनेवाले व्यक्तिको, अुनके बदलेमें भगवद्प्राप्ति होती है--फिर भगवद्प्राप्तिकी दृष्टिसे, अुसे अतिरिक्त प्रयत्न नहीं करने पड़ते ।

३. बस, केवल पराअे धन और पराअी स्त्रीको त्याज्य मान लेनेके पश्चात्, फिर तू मनमाने जैसा निःशंक होकर लोक-व्यवहार कर सकेगा। बाह्याडम्बरके मार्गको त्यागकर, मनःशान्तिको हस्तगत करके रह। अपनी जिह्वासे राम-नामका अुत्तम रस चख, और नाम-संकीर्तनके कार्यमें आलस्यकी बाधा न होने दे। सभीका मित्र बन; बुरी वाणी न बोल। दुर्जनोंसे दूर रहकर, संत-सज्जनोंके सहवासमें रह। यदि भगवानके अतिरिक्त अन्य कुछ प्राप्त करनेकी कामना करेगा, तो वह सफल न हो सकेगी। अुसी प्रकार यदि तू विविध प्रकारकी तृष्णाको बढ़ने देगा, तो तुझे सुखकी अुपलब्धि कदापि न होगी। अतः तुकाराम कहता है कि भगवानपर भरोसा रखकर धैर्यपूर्वक रह, क्योंकि भगवान पर दृढ़ विश्वास रखनेवाले व्यक्तिके योग-क्षेमका भार, भगवान स्वयं वहन किया करते हैं।–'तेषांनित्याभियुक्तानां योग-क्षेम वहाम्यहम्' कृष्ण भगवान गीतामें कहते हैं।

४. अेक दृष्टिसे देखा जाय, तो हमारा यह मानव शरीर अनेक दुःखों और रोगोंका भण्डार है। यह शरीर दुर्गंधियोंका आश्रय-स्थल होनेके कारण, अिसके समान अपवित्र अन्य कुछ भी नहीं। किंतु यदि दूसरी दृष्टिसे देखें, तो हमारा शरीर पवित्र तथा सुखोंका समुच्चय है; क्योंकि अिसके द्वारा अनेक बातें साध्य करते बनतीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीरें साध्य होय केलें ।
शरीरें साधले परब्रह्म ।।
शरीर विटाळाचें आळें ।
माया, मोह, पाशजाळें ।।
पतन शरीराच्या मुळें ।
शरीर काळें व्यापिलें ।।
शरीर सकळही शुद्ध ।
शरीर निधींचाही निध ।।
शरीरें तुटें भवबंध ।
वसे मध्यें भोगी देव शरीरा ।।
शरीर अविधेचा बांधा ।
शरीर अवगुणांचा रांधा ।।
शरीरीं वसे बहुत बाधा ।
नाहीं गुण सुधा अेक शरीरीं ।।
शरीरा सुख न द्यावा भोग ।
न द्यावे दुःख न करी त्याग ।।
नव्हे वोखटें ना चांग ।
तुका म्हणे वेग करीं हरिभजनीं ।।

५. नको सांडूं अन्न नको सेवूं वन ।
चिंती नारायण सर्व भोगीं ।।
मातेचिअे खांदीं बाल नेणे सीण ।
भावना त्या भिन्न मुंडाविया ।।
नको गुंपों भोगीं नको पडों त्यागीं ।
लावुनि सरे अंगीं देवाचिया ।।
तुका म्हणे नको पुसों वेळोवेळां ।
अुपदेश वेगळा अुरला नाहीं ।।

हैं—यहाँ तक कि परब्रह्मको प्राप्त करनेमें भी हमें अुसकी सहायता मिलती है । अुसी प्रकार अेक दृष्टिसे यह भी कहा जा सकता है, कि यह शरीर अनेकानेक अस्पृष्य वस्तुओंका संग्रह अेवं माया, मोह व पाशमें मानवको फँसानेवाला जाल है; वह हमें अधोगतिकी ओर ले जानेवाला तथा कराल कालका ग्रास है । परन्तु दूसरी दृष्टिसे हमें मानना पड़ेगा, कि मानव-शरीर सर्वथा शुद्ध अेवं अेक अमूल्य धरोहरके समान है; क्योंकि अिसकी ही सहायतासे भवबंधनमुक्त होते बनता है और अिसीमें भगवानका वास होता है । किंतु यदि अिस प्रकारसे शरीरका सदुपयोग न किया गया, तो वह अज्ञान-संग्रहका साधन व अवगुणोंको वृद्धिगत करनेवाला ही सिद्ध होगा। नाना प्रकारके कष्ट-त्रास प्रदान करनेवाला होनेके कारण, अुसमें अेक भी सद्गुण नहीं। (अिसका निष्कर्ष यह कि) अिस मानव-शरीरको न तो भोगों द्वारा सुखी बनानेका प्रयत्न किया जाय, और न अुसे कष्ट पहुँचाकर अुसकी अुपेक्षा ही की जानी चाहिअे । यह शरीर स्वभावतः न अच्छा है और न बुरा; क्योंकि अुसकी अच्छाअी और बुराअी, मानव द्वारा किअे जानेवाले अुपयोगपर ही निर्भर करती है । अतः शरीरके सदुपयोगकी दृष्टिसे, तुकाराम कहता है कि अविलंब हरि-भजन करो ।

५. भगवद्प्राप्तिके लिअे न तो अन्न-त्यागकी आवश्यकता है, और न जंगलमें जाकर वास करनेकी ही; अपने दैनिक व्यवहार-अुद्योग करते हुअे, अुसके लिअे केवल भगवानका चिंतन ही पर्याप्त है । जब कोअी बालक अपनी माँकी गोदमें होता है, तो अुसे चलनेका कष्ट नहीं अुठाना पड़ता बस, अिस अेकत्वके विचारको छोड़, अन्य सभी भिन्नत्वके विचारोंको विनष्ट कर देना चाहिअे । 'किस भोगका स्वीकार किया जाय, और किसका त्याग'—अिस बातकी चिन्ता न करो; सब कुछ भगवानपर सौंपकर निश्चिन्त हो जाओ । तुकाराम कहता है कि अब बार-बार पूछनेकी आवश्यकता नहीं; क्योंकि अिस बारेमें, अिसके अतिरिक्त अन्य कोअी अुपदेश है ही नहीं ।

अनुवादिका—सौ. शारदा वझे, बी. अे., विशारद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सूचना–'राष्ट्रभारती'में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअे।)

अहिंसक समाजवादकी ओर— लेखक—श्री गांधीजी, सम्पादक—भारतन कुमारप्पा, प्रकाशक–नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद। क्राअून आकार, पृष्ठ २०२, मूल्य २) छपाअी, सुन्दर और आकर्षक !

प्रस्तुत पुस्तक गांधीवादी साहित्यकी अमूल्य निधि है। अिस पुस्तकमें लेखक अहिंसक समाजकी स्थापनापर अधिक बल देता है। परिग्रहका अुत्तम विवेचन किया गया है। सामाजिक सुव्यवस्था सत्य, प्रेम, और अहिंसासे सम्भव मानी गअी है। पूँजी और श्रमके समुचित अुपयोगपर गम्भीरतापूर्वक विचार किया गया है।

पुस्तकमें गांधीजीके लेखों, भाषणों प्रश्नोत्तर आदिको संकलित कर कुशलतापूर्वक सम्पादित किया गया है। भाषाका सरल प्रवाह अुसे सामान्य पाठकोंके लिअे भी अुपादेय बना देता है।

कलकत्तासे पीकिंग—लेखक–श्री भगवतशरण अुपाध्याय, प्रकाशक—राजपाल अेंड संस, काश्मीरी गेट दिल्ली। क्राअून आकार, पृष्ठ १७३, मूल्य ३।।) सजिल्द, छपाअी सुन्दर और आकर्षक।

अुपाध्यायजीकी यह पुस्तक हिन्दी साहित्यमें यात्रा-संस्मरण साहित्यकी अेक सुन्दर रचना है। यों तो हिन्दी साहित्यमें तदविषयक साहित्यका अभाव सा ही है। प्रस्तुत पुस्तक अुस दिशामें अेक सफल अुपक्रम है।

श्री अुपाध्यायजी सन् १९५२ में शान्ति-सम्मेलनमें भारतीय प्रतिनिधि बनकर चीन गअे थे। नअे चीनकी तत्कालीनतासे प्रभावित हो लेखकने अुसकी चहुँमुखी प्रगतिका सजीव वर्णन पत्रात्मक प्रणालीसे प्रस्तुत किया है। जो चीन विषयक यथार्थ और सरल परिचय देते हैं।

पत्रात्मक प्रणालीका रोचक प्रवाह हमारी अुत्सुकताको सदा बनाअे रखता है। प्रूफकी त्रुटियोंकी नगण्यता प्रकाशकीय वैशिष्ट्यका परिचायक है।

सचित्र गृह विनोद—लेखक—श्री अरुण अेम. अे., प्रकाशक—आत्माराम अेंडसंस, काश्मीरी गेट दिल्ली। डिमाअी आकार, पृष्ठ-संख्या ४११, मूल्य ८)। सजिल्द, छपाअी, सुन्दर और आकर्षक।

यह पुस्तक मनोरंजनकी दिशामें हिन्दी साहित्यकी अभिवृद्धि करती है। हिन्दी साहित्यमें मनोविनोद प्रधान स्वस्थ कृतियोंका आभाव ही रहा है। अिस अभावकी पूर्तिमें यह पुस्तक अच्छा योगदान देती है।

प्रस्तुत पुस्तकमें ताश, शतरंज, जादू आदि रोचक खेलोंपर अच्छा प्रकाश डाला गया है। गोष्ठियों और पार्टियोंको अधिक सफल बनानेके लिअे विभिन्न प्रकार प्रस्तुत किअे गअे हैं। पारिवारिक मनोविनोदकी सर्वांगतापर अधिक ध्यान दिया गया है, कहीं-कहीं अस्वाभाविकता झलक अुठती है। हँसी-मजाकके अन्तर्गत कतिपय अश्लील चुटकुलोंका अुल्लेख कर दिया गया है। संकलित खेलोंमें अतिशय परिहासात्मकता लानेका प्रयास किया गया है, कदाचित् वह लेखकके अीप्सित दृष्टिकोणका परिणाम कहा जाय तो असंगत न होगा।

मनोरंजन केवल बच्चोंके लिअे ही नहीं; अपितु प्रौढ़ोंके लिअे भी समय-समयपर आवश्यक हो जाता है;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतः अुपयुक्तताकी दृष्टिसे बच्चोंसे लेकर प्रौढ़ोंतकके लिअे पुस्तक सुन्दर और अुपादेय है। विषयोंको स्पष्ट करनेमें चित्रोंका अच्छा सहयोग है। प्रूफ विषयक त्रुटियोंकी लघुतामें प्रकाशकीय वैशिष्ट्य परिलक्षित हो अुठता है।

—विजयशंकर त्रिवेदी

डूबते मस्तूल–अुपन्यास : [लेखक–नरेश मेहता प्रकाशक–आत्माराम अैंड सन्स, दिल्ली; मूल्य–साढ़े चार रुपअे]।

डूबते मस्तूलने हिन्दीके सुपरिचित कवि और नाटककारको सर्वप्रथम अुपन्यासकारके रूपमें प्रतिष्ठित किया है; यह नरेश मेहताका मौलिक और प्रयोगवादी अुपन्यास है। डूबते मस्तूलमें लेखकने भाषा तथा शैली दोनोंके प्रयोग किअे हैं।

डूबते मस्तूलकी कथाका केन्द्र अभिजात्य वर्गकी नारी रंजना है, जिसका मन और चाहें मध्यवर्गीय हैं। रंजनामें आत्माभिव्यक्तिकी अुद्दाम वेगवती धारा है जो समयके रुकनेपर भी रुकना नहीं चाहती। यह धारा टकराती है स्वामीनाथन जैसे निरीह पुरुष पात्रमें अपने तृतीय प्रेमी अकलंककी स्थापना करके; अुसे अपनी ओर आकर्षित करनेमें। अिस ढंगसे किसीको आकर्षित करनेमें नरेश मेहताकी नाटकीय वृत्ति क्षणभरको चाहे आश्चर्यमें भले ही डाल दे; किन्तु वह हमें विश्वास कहीं दे नहीं पाती। लेखकने रंजनाके चित्रणमें वास्तविकताकी अपेक्षा कल्पनाका ही अधिक सहारा लिया है, विभाजित रंजनाको हम अनेक रूपोंमें अनेक स्थानोंमें देख सकते हैं किन्तु सम्पूर्ण रंजना अपवाद है। रंजना हर वर्गके पुरुषके हाथों सौंपकर अन्य हाथोंमें सौंपनेके लिअे ही खींच ली गअी है जिससे घटना-क्रम कृत्रिम व अेक प्रकारसे भाग्यवादी हो अुठा है। रंजना सेक्स व चाहोंकी गुड़िया है जो सहती सब है कहती-करती कुछ नहीं; और जब कहने बैठी है तब शेष कहीं कुछ नहीं छोड़ा है; जो कलमसे संभव है, नारी-मुखसे नहीं। संस्कृतियोंकी टूटती श्रृंखलाओं और ढलती मान्यताओंमें पतनोन्मुख सामाजिकताको बौद्धिकताके ढाँचेमें ढालकर रिपोर्ताजकी शैलीका यह अुपन्यास अात्मपरक शैलीमें कहीं अधिक सफलता प्राप्त करता। लक्ष्यहीनता व अुद्देश्य रहितताके पश्चात् भी लेखकने जिस श्रमसे शब्द-शिल्पको सज्जित करनेमें ख्याति पाअी है वह अपूर्व होनेके साथ ही लेखकको अभिनन्दनीय बनाती है। गद्यपर अिसके पूर्व अितना श्रम कहीं किया गया हो, देखनेमें नहीं आया। अेक-अेक शब्द सजाया संवारा गया है। अिस सजावट और संवारमें कहीं-कहीं तो भाषा सौन्दर्यकी गंध और बोझसे अितनी बोझिल हो गअी है कि पाठक अुस भारसे दबता प्रतीत होता है।

डूबते मस्तूलको पूरा करनेपर हम यही कह सकते हैं कि कथा-साहित्यके विशाल वटका यह होनहार 'बिरवा' है। कारण कि पात्रोंमें प्रमुख पात्र रंजना, न हमारी सहानुभूति, और न ही घृणा, किसीको भी नहीं अपना पाती। आलोचक जो कुछ भी रंजनाके प्रति कहता, वह स्वयं रंजनाने अपने आपको कह लिया है। वान रंजनाके शरीरकी अपेक्षा सौंदर्यका अुपासक रहा है। वानके चित्रणमें लेखकने अद्भुत सफलता पाअी है और वानके कारण 'डूबते मस्तूल' प्राणवान हुआ है। वानके प्रति रंजनाका व्यंग्य—अपने अेक मात्र पुत्र असितको छोड़ना अुसे पहिले वन्दनीय बनाता है, किन्तु जहाँ अुसे स्त्रियोंकी अुँचाअीवाले अुस पुरुषसे घृणा होती है वहाँ अेक समस्या बना देता है।

डूबते मस्तूल पिछले वर्षका चौंका देनेवाला अुपन्यास कहा गया है जो अुत्तर-प्रदेश सरकारकी ओरसे पुरस्कृत भी हुआ है। किन्तु डूबते मस्तूलने हमें मात्र चौंकाया ही नहीं, कुछ सुझाया भी है और मनोविज्ञानकी अनेक अुलझी गुत्थियोंपर प्रकाश भी डाला है। डूबते मस्तूलके आकर्षणका बहुत कुछ श्रेय अुसकी छपाअी, सफाअी और गेटअपको भी है।

कलाका पुरस्कार : [लेखक–पाण्डेय बेचन शर्मा अुग्र, मूल्य–तीन रुपअे]

कलाका पुरस्कार हिन्दीके माने जाने अुग्र लेखक श्री अुग्रजीकी यत्र-तत्र प्रकाशित विचित्र-भाषा-शैली और कथानककी रोचक व अुग्र कहानियोंका संग्रह है।

अुग्रजीके पाठक अुनकी स्पष्टवादिता अटपटेपन व अुग्रतासे पूर्ण परिचित हैं और निश्चय ही अिस संग्रहकी कहानियाँ भी अुनके पाठकोंको निराश नहीं ही करेंगी।

भाषाको यदि छोड़ दिया जाय तो निश्चय ही कुछ रचनाअें बहुत सुन्दर बन पड़ी हैं—यद्यपि समयसे पीछे छूट चुकी हैं फिर भी अुनमें पाठकोंके मनको छूनेकी सामर्थ्य है।

—श्रीमती शशि तिवारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब भाषा-विवाद खत्म हो जाना चाहिअे :

भारतकी राजधानी दिल्लीके आकाशवाणी केन्द्रने अेक अभिनन्दनीय विशिष्ट कार्यक्रम २९ अप्रैल रविवारको प्रसारित किया--'आधुनिक भारतीय काव्यकी विभिन्न प्रवृत्तियाँ।' पूछा जाय तो अिस वर्षके सभी अखिल भारतीय रेडियो कार्यक्रमोंमें यह सचमुच अपनी विशेषता रखता है। आनन्दका विषय है कि भारतके प्रियदर्शी प्रधान मंत्री पंडितजीने अिस समारोहका अुद्घाटन किया। लगभग १०० प्रतिनिधि-१३ भारतीय भाषाओंके साहित्यकारोंने अिस आयोजनमें भाग लिया। भारतीय साहित्यके संस्कारोंके विकास और पोषणके लिअे जो विचार अपने अुद्घाटन भाषणमें पंडितजीने हमारे सामने रखे अुनकी गहराअी और महत्वको हम समझें। अैसे भाषणकी आवश्यकता तथा अुपयोगिता सम्प्रति कालमें बहुत अधिक है जब कि राष्ट्रभाषा हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओं-- बंगला, मराठी, गुजराती, तमिल, आदिको लेकर जो विवाद खड़े किये जाते हैं, और तू-तू, मैं-मैं होती है और अपनी-अपनी श्रेष्ठता बतलानेके लिअे प्रान्तीयता और साम्प्रदायिकताका विषाक्त वातावरण हमारे दिल व दिमागको दूषित करता है, और हमारे राष्ट्रीय विश्वासको गहरा धक्का लगता है।

जहाँतक भाषाओंकी श्रेष्ठताका प्रश्न है, हिन्दीके हितचिन्तक राजर्षि, डॉ. हजारी प्रसादजी, डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, सेठ गोविन्ददास, कवि दिनकर और बालकृष्ण शर्मा आदि-आदि मनीषियोंने कहीं कभी नहीं कहा कि हिन्दी तमिलसे या मराठीसे श्रेष्ठ है। हमारे समझदार साहित्यकार भली भाँति जानते हैं, वे फिर आचार्य क्षितिमोहन हों, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा हों, चाहे मामा बरेरकर हों अथवा अनन्तशयनमय्यंगार हों, कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी हों, अपनी भाषाओंकी श्रेष्ठताके सम्बन्धमें किसी विवादसे कोअी लाभ न निकलेगा। और अंग्रेजीके सामने तो हमारे महामहिम पंडितजीसे लेकर साधारण अे., बी., सी., डी., सीखे हुअे अँग्रेजीदाँ चपरासीतक सिर झुकाते हैं, सिजदा करते हैं। भारतकी तथा दुनियाके दूसरे देशोंकी, परिस्थितियाँ बड़ी ही गतिशील हैं। पंडितजी सच कहते हैं संसार बड़ी तेजीके साथ बदल रहा है। आजका जो ज्ञान है वह कल पुराना पड़ जाअेगा। विवादग्रस्त आजकी भाषा कल-परसों पुरानी पड़ जायगी। अिस तेजीसे बदल रहे जमानेमें संसारकी सभी भाषाओंके साहित्यसे हमारा सम्पर्क बना रहना अत्यन्त आवश्यक है। यदि हम अपनी भाषा, अपनी संस्कृति, अपने अुत्तर भारत और अपने दक्षिण भारतकी ही श्रेष्ठताके विवादमें पड़े रहे तो पंडितजीके शब्दोंमें यह स्पष्ट है कि हम बहुत पिछड़ जाअेंगे। हम सबोंकी मनोवृत्ति और प्रवृत्ति अब तो अिस ओर ज्यादा बढ़े कि भारतकी जो विभिन्न भाषाअें हैं अुनका आपसमें घनिष्ठ सम्पर्क बढे, आदान-प्रदान हो। यही भारतकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेकताका सूत्र है जो हमारे दिलों और दिमागोंको मजबूत बाँधकर रखेगा। भारतीय भाषाओंके कर्णधारोंको मिल-जुलकर चलना है। हिन्दी मराठी या हिन्दी अुर्दू, अेक दूसरेसे जुदा रहकर अुन्नति नहीं कर सकती। आपसमें मिल-जुलकर ही देशकी सांस्कृतिक व साहित्यिक अेकताको मजबूत बनाअेंगी। यहाँ नम्रता और राष्टीय विश्वास अर्थात् भारतका राष्ट्रगीत, भारतका राष्ट्रीय झण्डा और भारतकी राष्ट्रभाषा अिस विश्वासके अनुसार हम कहेंगे कि हिन्दीको, अुसके राष्ट्रभाषाका पद ग्रहण करनेसे कोअी भी शक्ति अब नहीं रोक सकती। हम चाहते हैं कि हमारी महामान्या प्रादेशिक भाषाअें या क्षेत्रीय भाषाअें हिन्दीके अधिक समकक्ष रहें। हमारे विश्व-विद्यालयोंमें जल्दी-से-जल्दी शिक्षाका माध्यम प्रादेशिक भाषाअें बना दी जाअें; किन्तु वे लोग जो 'अिण्टरनेशनल' या अन्तर्राष्ट्रीय अँग्रेजी साम्राज्य-वादी लोगोंके हाथोंकी कठपुतली बनना चाहते हैं और हिन्दीके तथा प्रादेशिक भाषाओंके विकासमें, सर्वोदयमें, समन्वयमें योग नहीं देते और जो अँग्रेजीको सारे देशपर लादना चाहते हैं; अुनको हमें सही रास्तेपर लाना होगा। राष्ट्रभाषा हिन्दीका विकास, खूब विकास कीजिअे जितना करना हो, अपनी प्रादेशिक भाषाओंके अुन सभी शब्दों, मुहावरों और कहावतोंको हिन्दीमें ले आअिअे जिनकी आव-श्यकता हो, अुपयोगिता हो। हिन्दीके विकासमें योग देनेका अवसर मत ढूँढ़िअे, योग देने लग जाअिअे। अुसके विकासमें हाथ बँटाने आगे बढ़िअे। कौन रोकता है आपको कि आपके भारतका सांस्कृतिक, राजनीतिक या कूटनीतिक सम्बन्ध दूसरे देशोंके साथ न बना रहे, हम सम्पर्क न स्थापित करें। हमारा तो विश्वास है कि दक्षिण भारतीय हिन्दीको खूब समृद्ध बनाअेंगे। अेक युग आया जब संस्कृत भाषाको अुन्होंने समृद्ध बनाया और भारतकी राष्ट्रभाषा हिन्दीको भी दक्षिण भारतीय समृद्ध बनाअेंगे, जमाना बदल रहा है। हिन्दीको निकट भविष्यमें बड़ी संख्यामें दक्षिणके प्रतिभाशाली तरुण लेखक और पत्रकार, साहित्यकार बहुत ही समृद्ध बनाअेंगे। अब भाषा-विवाद खत्म कीजिअे। राष्ट्रभाषा हिन्दी संक्रान्ति कालसे गुजर रही है। अिस संक्रान्ति कालको लम्बा मत बनाअिअे, छोटा बनानेका प्रयत्न कीजिअे जिससे वह १५ वर्षकी अवधिमें अपने राष्ट्रीय पदपर सम्मानपूर्वक बैठे!

'आधुनिक भारतीय काव्यकी प्रवृत्तियाँ':

हम अपने हृदयकी पूरी शक्ति और अपनी पूर्ण अीमानदारीके साथ अूपर अभी अनुरोध कर चुके हैं कि भाषा-विवादकी प्रवृत्ति बिलकुल बन्द कर देनी चाहिअे। दलबन्दीके दलदलमें फँसे हुअे और प्रान्तीयताके कट्टर पुजारियोंसे हमें कुछ नहीं कहना है। जिनको बात-बातपर झगड़नेकी और सन्देह करनेकी आदत-सी पड़ गअी है अुनके प्रति किसी प्रकारकी हीन भावना (अिन्-फीरियारिटी कम्प्लेक्स) भी हम नहीं बताअेंगे और न अँग्रेजी भाषासे हमें नफरत है। जरूरत है अिस समय, हम अेक दूसरेको अच्छी तरह समझें और अेक दूसरेके अति निकट आवें अपने साहित्य अपने अनुभव, और अपनी प्रतिभा अेवं कल्पना व आकांक्षा द्वारा सारे भारतको अेक बनावें, 'वुअी शेल् नो अीच् अदर।'

अुन्नीसवीं शताब्दीका आगमन सर्वतोमुखी विकासका युग होकर आया। आशातीत विकास हुआ सर्व प्रथम बंगलामें; और अंग्रेजी साहित्यके सम्पर्कसे बंगलाके बाद भारतकी सभी प्रमुख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषाओंके नवीन अंगोंका विकास हुआ। काव्य, अुपन्यास, कथा-साहित्य, अेकांकी, आदि साहित्यके नवीन अंगोंका विकास दिन दूना रात चौगुना हुआ। पत्र-पत्रिकाअें, प्रेस, वातावरण, देशानुराग, कलात्मक अभिव्यक्ति, आअे दिन मेल-मिलाप अिन सबने मिलकर आधुनिक भारतीय काव्यको निखारा। मलयालमके महाकवि वल्लत्तोल, और शंकर कुरुपको हमने कुछ समझनेकी कोशिश की। हिन्दी, तेलुगु, कन्नड़, मराठी, गुजराती आदि सभीके आधुनिक साहित्यमें अूँची विद्रोही प्रतिभाअें अवतीर्ण हुअीं। जिन्होंने भाषा, साहित्य, समाज और धर्म, जीवनके क्षेत्रोंमें विद्रोहके स्वरकी शहनाअी बजाअी। राष्ट्रके विराट पुरुष महात्मा गांधीने प्रेरणाअें दीं और स्वाधीनता स्वतंत्रताके मूल्योंको हमने पहचाना। अिन आधुनिक भारतीय कवियोंने अपनी चेतनाकी अेक साँससे तूफान और बवंडर खड़े किअे। अिन सबका काव्य-सौन्दर्य बोध विलक्षण है। हिन्दी, तेलुगु, गुजराती, मराठी, बंगला, कन्नड़ आदि किसी आधुनिक भारतीय भाषाको आप लीजिअे, काव्यके क्षेत्रमें प्रान्तीय सीमाअें टूट गअी हैं--भाषा और लिपिका फर्क भले ही हो, कल्पना, संस्कार, भाव, शैली और वस्तु-व्यंजना, यह सब अेक रूपमें मिलते-जुलते व्यक्त हुअे। भिक्षुकके अस्थिपंजर, कृषि निराने-वाली ग्राम्यवाला, फूलोंके झूमने, नदी कूलकी शान्त धारा, कोकिलके कूजन, नीलाकाशमें घुम-ड़ती घूमती बादलघटा, लजीली पूनमकी चाँदनी, निःस्वप्न आमंत्रण, आँखोंके आँसू, रोगीकी क्षीण कराह विविध जीवनके अुत्थान और अभाव-ग्रस्त पतन, सांस्कृतिक पुनरुत्थान, गुरुदेव रवीन्द्रनाथका आविर्भाव और अुनका प्रभाव, अिन सबने मिलकर आधुनिक भारतीय काव्यकी अभिव्यक्तिको समवेदनाकी भावना तथा करुणाको आधुनिक भारतीय कवियोंने, हिन्दीमें विशेषकर मैथिलीशरण, माखन, पंत, महादेवी, निराला, सुमन शिवमंगल, नरेन्द्र, दिनकर, बालकृष्ण नवीन, बच्चन, और सुभद्राने अपनी अभि-व्यक्तिको सत्य, शिव और सुन्दरकी लीला-भूमि बनाया। आप मराठीके आत्माराम देशपांडे 'अनिल' को और यशवंतको या मर्ढेकरको लीजिअे, तेलुगुके, मलयालम या कन्नड़के किसी आधुनिक कविको लें, अथवा गुजरातीके अुमा-शंकर जोषी या 'सुन्दरम' को लीजिअे, बंगलाके वसु बुद्धदेवको ले लें, सबके गूँजते स्वरोंका समन्वय अेकमेव है। नेह नानाऽस्ति किंचन है! भारतीय आधुनिक काव्यके हृदयकी धड़कन अेक है। समाजकी भयंकर विषमता, अुसके प्रति भीषण क्षोभ-विक्षोभ, शोषणके प्रति विद्रोह, धरतीपर मानवको मानव बनकर रहने देना, छन्द बन्धनसे विमुक्ति, हृदयकी शान्तिके विश्राम स्थानकी खोज, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय भाव, अपने प्राणोंको होम करनेकी प्रवृत्ति, यह सब अेक रूप, अविभक्त आत्मा बनकर आधुनिक भारतीय काव्यके अन्तरसे सम्मिलित स्वर अुठा रहे हैं। अेक राष्ट्रभाषा, अेक लिपि, अपनी पड़ोसी भाषाके प्रति स्नेहादर भावना, और अेक भारतीय साहित्य, अिन सबके नव निर्माणकी बलवती आकांक्षा जाग अुठी है। सभी सहृदय चाहते हैं कि भारतीय भाषाओं और अुनके भारतीय साहित्यके समन्वयका अद्भुत् आनन्द-वर्धक दिव्य दर्शन हम सबको जल्दी मिले। शुद्ध और शान्तिमय मार्गसे हम चलें हृदय-से-हृदय मिलाकर। महात्मा गांधीके मेरु समान अचल संकल्पको और विश्ववन्द्य कवि रविकी लोक-मंगलकारी काव्यधाराको अिस दारुण विप्लव माझे हम न भूलें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महामहिम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसादसे यहाँ हमारा अेक छोटा-सा निवेदन है। अुनपर सबका विश्वास है, वे अपने भवनमें चुने हुअे २०० सन्मान्य भारतीय साहित्यकारोंकी अेक परिषद बुलावें, चर्चा हो, आदान-प्रदान हो, और फिर अेक सम्मिलित अेलान हो। राष्ट्रपति देशके समाचार पत्रोंको आदेश दें कि वे भाषावाद और भाषा-विवादको प्रश्रय न दें, खत्म करें, साथ ही राष्ट्रभाषा और प्रादेशिक भाषाओंके सर्वोदय तथा समन्वयके लिअे अेक सुन्दर सुदृढ़ भारतीय साहित्य परिषदकी स्थापना करें। अिस परिषदको दल-बन्दीके दल-दलसे और गुट-बन्दीकी गठरीसे दूर रखें। अिसके लिअे महानुभाव राष्ट्रपति और प्रियदर्शी प्रधानमन्त्री पण्डितजी सम्मिलित प्रयत्न करें। राष्ट्रभाषाके प्रसारके क्षेत्रमें जो संस्थाअें अहिन्दी प्रान्तोंमें १९१८ और १९३६ से काम कर रही हैं अुनपर राष्ट्रभाषा प्रसारका दायित्व रखें राष्ट्रपति, और आधुनिक भारतीय साहित्यके सर्वोदयके लिअे भारतकी १३-१४ भाषाओंके प्रतिनिधि साहित्यकारोंका अेक निष्पक्ष, राजनीति तथा धर्म निरपेक्ष साहित्य-पीठ स्थापित करें। हमारे वे लोग, जो संशयापन्न, मानस हैं, अैब-गोअी--दूसरोंकी निन्दा या नुक्त-चीनी ही करते हैं, अिस दूधसे मक्खीकी तरह अलग रखे जाअें, जो आस्तीनके सांप हैं--मित्र होकर शत्रुता करते हैं। मौलाना आजाद साहब हमारे अजीज हैं, बुजुर्ग, वृद्ध और पूज्य हैं, अुनकी वृद्धावस्था अुन्हें कुछ करने-धरनेको लाचार कर चुकी है। मान्दगीं अुनकी, रुग्णता, थकावट और शिथिलता, बीमारी ही अैसी है जो ला-दवा जिसकी कोअी दवा या अिलाज नहीं है। अुनकी मेहरबानीका ही ख्याल हमें करना चाहिअे और ब-लिहाज या मुलाहजेके साथ राष्ट्रको, राष्ट्रलिपि और राष्ट्रभाषाको तथा आधुनिक समग्र भारतीय साहित्यको हमें आगे बढ़ाना चाहिअे।

--ह० श०

- वसुधा -

साहित्यिक मासिक पत्रिका

सम्पादक

रामेश्वर गुरु • हरिशंकर परसाई

'वसुधा' को सर्वांग सुन्दर बनानेमें हमें अनेक लब्धप्रतिष्ठ साहित्यिकों, कवियों, लेखकों, आलोचकोंके सहयोगका आश्वासन मिल चुका है।

अनेक स्थाअी स्तम्भोंके साथ, 'वसुधा' में नियमितरूपसे प्रगतिशील पाश्चात-साहित्यपर, पं० मोहनलाल बाजपेयी (प्रो० रोम वि० वि०) की साहित्यिक डायरी प्रकाशित होगी। अिसके अतिरिक्त, अमर-साहित्यिकोंकी जीवन-रेखाअें तथा लेख, नअे प्रश्न, मूल्यांकन, अेकांकी, समीक्षा--के विशेष पृष्ठ रहेंगे।

पता :--'वसुधा'
दीक्षितपुरा, जबलपुर (म. प्र.)

अेक प्रति १० आना

वार्षिक--७८०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्रभारती' के नियम और उद्देश्य

१. 'राष्ट्रभारती' प्रतिमास १ ता० को प्रकाशित होती है।

२. 'राष्ट्रभारती' भारतकी विशुद्ध अन्तर-प्रान्तीय भाषा, साहित्य और संस्कृतिकी प्रतिनिधि पत्रिका है।

३. 'राष्ट्रभारती' का उद्देश्य समस्त उच्च भारतीय भाषाओंके प्राचीन अर्वाचीन साहित्यका भारतकी राष्ट्रभाषा हिन्दी द्वारा रसास्वाद कराना है, जिससे वह सब भारतीयोंकी अपनी वस्तु बन सके।

४. 'राष्ट्रभारती' का दृष्टिकोण प्रगतिशील, रचनात्मक, सर्व समन्वय—सर्वोदयकारी है। अिसमें विवादग्रस्त, राजनीतिक, साम्प्रदायिक, या दल-गत नीतिके लेख आदि प्रकाशित न होंगे।

५. 'राष्ट्रभारती' में हिन्दीके साथ साथ—

(१) असमिया (२) मणिपुरी (३) बंगला (४) अुड़िया (५) नेपाली (६) काश्मीरी (७) सिन्धी (८) पंजाबी (९) गुजराती (१०) मराठी (११) तमिल (१२) तेलुगु (१३) कन्नड़ (१४) मलयालम (१५) संस्कृत (१६) अुर्दू और अन्तर-राष्ट्रीय विदेशी साहित्यिक भाषाओंकी सुन्दर ज्ञानपोषक, मनोरंजक, सुरुचिपूर्ण श्रेष्ठ रचनाअें भी प्रकाशित होंगी।

लेखक महानुभावोंसे

६. 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ, हमारे पास अपनी पूर्व प्रकाशित रचना सामग्री मत भेजिअे। जिस रचनाको आप 'राष्ट्रभारती' में भेजें अुसे अन्य हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओंमें न भेजें। अस्वीकृत रचनाको वापस पानेके लिअे दो आनेका पोस्टेज भेजनेकी कृपा करें।

७. जो कुछ मैटर प्रकाशनार्थ भेजें, साफ नागरी टाअिप कापीमें भेजें अथवा हाथकी लिखावटमें कागजके अेक ही ओर साफ सुथरी, सुवाच्य नागरी लिपिमें लिखकर भेजें। कविताओंके अुद्धरण, अवतरण आदि बहुत ही साफ लिखे होने चाहिअे। लेखक अपना पूरा-पूरा नाम और पता अवश्य लिखें।

निवेदक—

सम्पादक, "राष्ट्रभारती"

हिन्दीनगर, वर्धा, Wardha (M. P.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभारतीके प्रेमी पाठकोंसे—

जो सज्जन ग्राहक हैं और 'राष्ट्रभारती' को नियमित पढ़ते हैं अुनसे हमारा यह निवेदन है :—

गत जनवरी–१९५६ से राष्ट्रभारतीने छठे वर्षमें प्रवेश किया है। भारतके और देश-विदेशके राष्ट्रभाषा-प्रेमी विद्वान् साहित्यकारोंने मुक्त-कंठसे 'राष्ट्रभारती' की प्रशंसा की और अुसमें लिखना शुरू किया।

'राष्ट्रभारती' को अबतक जो कुछ सफलता और लोकप्रियता मिली है, यह अुसके कृपालु प्रेमी पाठकों और लेखकोंके स्नेह तथा सहयोग–दानका परिणाम है। अिसके लिअे हम आपके बहुत आभारी हैं। यदि आप चाहते हैं कि 'राष्ट्रभारती' राष्ट्रकी, राष्ट्रभाषाकी और विविध समृद्ध भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी अच्छी तरह सतत सेवा करती रहे तो आप सबका हार्दिक सक्रिय सहयोग चाहिअे। वह अितना ही कि—

आप तो अिसके स्थाअी ग्राहक, पाठक, बने ही रहें साथ ही आप अपने अिष्ट-मित्रों, परिचितोंमेंसे भी कम-से-कम दो नअे ग्राहक राष्ट्र-भारतीके लिअे बना दें मनीआर्डरसे प्रतिग्राहक ६) रु. चन्दा भेजें।

रियायत:—सार्वजनिक पुस्तकालयों, वाचनालयोंके लिअे केवल ५) चन्दा रखा गया है। अतः वे ५) रु. मात्र भेजें।

पता:—**व्यवस्थापक,**

'राष्ट्रभारती', हिन्दीनगर, वर्धा

मुद्रक तथा प्रकाशक:—मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

जुलाई
१९२६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[बिहार, मध्यप्रदेश, भोपाल, सौराष्ट्र आदि राज्योंके शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत पत्रिका]

* अिस अंकमें कहाँ क्या पढ़ेंगे *

('राष्ट्रभारती' के प्रत्येक अंकका प्रत्येक पृष्ठ पठन-मनन योग्य सामग्रीसे पूर्ण रहता है।)

क्रम		पृष्ठ सं०
१.	गीत ! श्री माखनलाल चतुर्वेदी	४२३
२.	हमारा भारत !	४२४
३.	राजस्थानी साहित्यमें कहावतें (लेख) डा. कन्हैयालाल सहल, अेम. अे. पी. अेच. डी.	४२५
४.	केरल प्रान्तमें प्रचलित कुछ ग्राम-गीत (मलयालम) डा. के. भास्करन नायर	४३४
५.	संस्कृतके अमर कथाकार : बाणभट्ट (लेख) श्री मंगलकिशोर पाण्डेय, अेम. अे.	४३८
६.	पावस-गीत ! डा. नन्दकिशोर राय, अेम. अे. डी. लिट.	४४२
७.	अत्तेबक्काल (लेख) श्री शंकर कृष्ण तीर्थ	४४३
८.	कस्मैदेवाय...(कविता) श्री रांगेय राघव	४४५
९.	नअे काव्यका जन्म (कविता) श्री शिवकुमार श्रीवास्तव	४४७
१०.	गीतों भरा मन है (कविता) श्री देवप्रकाश गुप्त	४४८
११.	गीत ! श्री पुरुषोत्तम खरे	४४८
१२.	सन्त अिन्द्रसिंह चक्रवर्ती (लेख) श्री बनारसीदास चतुर्वेदी	४४९
१३.	वात्सल्य और पारिवारिक जीवनके कवि : पण्डित माखनलाल चतुर्वेदी (लेख) प्रो. श्रीकान्त जोशी	४५१
१४.	आषाढ़स्य प्रथम दिवसे : अंटसंट (बंगला लघुनिबन्ध) { गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर / डा० महादेव साहा }	४५५
१५.	बापूके सच्चे अुत्तराधिकारी (अेक रेखाचित्र) श्रीमती सुनीता अग्रवाल	४५७
१६.	बादलसे (कविता) श्री काशीप्रसादसिंह 'प्रभाकर'	४६०
१७.	नदी किनारे (मराठी रेखाचित्र) { श्रीमती प्रो. कुसुमावती देशपांडे / अनु०—श्री मोरेश्वर तपस्वी 'अथक' }	४६१
१८.	कुछ मनपसन्द शेर-सुखन	४६४
१९.	पागलपनका अिलाज (अेक मनोवैज्ञानिक कहानी) श्री लाडली मोहन	४६५
२०.	राजी भंगिन (गुजराती कहानी) { श्री चुन्नीलाल मड़िया / अनु०—श्री गौरीशंकर जोशी }	४६८
२१.	श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी और शब्द-माधुर्य (लेख) श्री किशोरीदास वाजपेयी	४७४
२२.	सड़क (कविता) श्री अनन्तकुमार 'पाषाण'	४७७
२३.	सम्मानकी भीड़में (कहानी) श्री नन्दकुमार पाठक	४८१
२४.	साहित्यालोचन	४८४
२५.	सम्पादकीय	४८७

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

रियायत— समितिके सभी प्रमाणित प्रचारकों, केन्द्र-व्यवस्थापकों और स्कूल-कालेजों तथा सार्वजनिक पुस्तकालय-वाचनालयोंको अेक वर्षतक केवल ५) रु. वार्षिक चन्देमें मिलेगी।

पताः—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[समग्र भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

सम्पादक

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

वर्ष ६] जुलाई-१९५६ [अंक ७

गीत

—श्री माखनलाल चतुर्वेदी

तुतलाते वैभवकी बानी

छविकी आखोंपर बरसातें,
मैंने देखीं, मैंने जानीं,
अपनेसे रूठ न कल्याणी ॥
तुतलाते... ... ...॥

द्युतिने जब धो दी दन्त-पांत
साँवली घटापर चन्द्र-स्नात
खिल अुठी खिलखिलाहट-रानी ॥
तुतलाते वैभवकी बानी ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारा भारत

सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य है हमारा भारत ! यह कअी राज्योंका समवेत संघ है। अिस गणराज्यके समस्त आदर्श, भारतीय संविधानके वैदेशिक सिद्धान्तोंमें अन्तर्निहित हैं। हमारे संविधानने देशके सामने प्रगतिशील ध्येय रखा है। अिस संविधानके अनुसार सम्पत्तिका समान वितरण, स्त्रियों और बच्चोंके अनुचित शोषणका प्रतिबन्ध, ग्राम-पंचायतोंकी स्थापना, जनताके दुर्बलतर विभागोंके मुख्यतः अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियोंके शैक्षणिक तथा आर्थिक हितोंकी अुन्नति करना, मद्य-निषेध और सुखी तथा समृद्ध जीवनके अनुकूल वातावरण निर्माण करना आदि कार्योंका आदेश राज्यको दिया गया है। अिसके साथ ही, अन्तर-राष्ट्रीय झगड़ोंको प्रस्थापित करना, राष्ट्रोंमें मित्रतापूर्ण सम्बन्ध स्थापित करना और अन्तर-राष्ट्रीय झगड़ोंके मध्यस्थों द्वारा निपटानेको प्रोत्साहन देना आदि कार्योंका आदेश भी संविधानने राज्यको दिया है।

हमारे राष्ट्रपति (सम्प्रति डॉ. राजेन्द्रप्रसादजी) भारतीय संघके अध्यक्ष हैं। संसदके दोनों सदनों और राज्योंकी विधान-सभाओं द्वारा चुने गअे सदस्य पाँच वर्षकी अवधिके लिअे राष्ट्रपतिका निर्वाचन करते हैं। प्रशासनीय कार्योंमें राष्ट्रपतिको मंत्रणा देनेके लिअे अेक मन्त्री-परिषद होती है, जिसका अध्यक्ष प्रधान-मंत्री होता है। प्रधान-मंत्री तभी तक पदासीन रह सकता है जब तक अुसे संसदमें बहुमत प्राप्त है।

भारतीय संसदमें दो सदन हैं, जो क्रमशः लोक-सभा और राज्य-सभा कहलाते हैं। लोक-सभामें ५०० सदस्य हैं, जो वयस्क-मताधिकारके आधारपर पाँच वर्षकी अवधिके लिअे निर्वाचित होते हैं। राज्य-सभामें २६० से अधिक सदस्य हैं, जिनमेंसे अेक तिहाअी सदस्य प्रत्येक दो वर्ष पश्चात् निवृत्त होते हैं। कायदे-कानून बनानेके अतिरिक्त, कर लगाने और सरकारी व्ययको स्वीकृति देनेके लिअे संसदकी अनुमति आवश्यक है। अिस प्रकार निर्वाचित सदस्योंकी अनुमतिसे ही सरकार सारे महत्वपूर्ण निर्णय लेती है। पक्षपात या संकोचके बिना कानूनकी व्याख्या करनेके लिअे हमारी स्वतन्त्र न्यायपालिका है जिसका शिरोमणि अुच्चतम न्यायालय (सुप्रीम कोर्ट) है। कानूनकी दृष्टिमें सभी नागरिक समान हैं। "जनगणमन अधिनायक...." भारतका राष्ट्रीय गीत है। तिरंगा झंडा राष्ट्रीय झंडा है। देवनागरीमें हिन्दी भारतकी राष्ट्रभाषा है।

राष्ट्रगीत, राष्ट्रीय झंडा, और राष्ट्रभाषा ये तीन भारतकी राष्ट्रीय अेकताके प्रतीक हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजस्थानी साहित्यमें कहावतें

—डॉ० कन्हैयालाल सहल

काल-क्रमकी दृष्टिसे राजस्थानी साहित्य निम्नलिखित तीन युगोंमें विभाजित किया जा सकता है :—

क. प्राचीन राजस्थानी, संवत् १२००–१६००

ख. माध्यमिक राजस्थानी, संवत् १६००–१९५०

ग. आधुनिक राजस्थानी, संवत् १९५० से अबतक

क. प्राचीन राजस्थानी

डॉ. ग्रियर्सनके शब्दोंमें "गुजरात मध्य-युगमें राजपूतानेका अेक अंश मात्र था। यही कारण है कि गुजरातीका राजस्थानीसे अितना अधिक साम्य है।"‡ स्व. श्रीनरसिंहराव दीवटियाके मतानुसार भाषाके रूपमें "गुजराती" शब्दका सबसे पहला अुल्लेख सन् १७३१ ओसवीमें मिलता है, किन्तु अिससे भी पहले महाकवि प्रेमानन्दने "नागदमण"में "गुजराती" शब्दका प्रयोग किया है। अुदाहरणार्थ :

"रुदे अुपनी माहारे अभिलाषा,
बांधुं नागदमण गुजराती भाषा।"

अिससे पूर्व भाषाके रूपमें "गुजराती" शब्द नहीं मिलता।*

सन् १४५५-५६ (वि० सं० १५१२) में जालोर मारवाड़के कवि पद्मनाभने "कान्हड़दे प्रबन्ध" की रचना की थी। सन् १९१२ में अेक सजीव वादविवाद गुजरातमें अिस विषयको लेकर चला था कि अुक्त प्रबन्ध गुजरातीमें लिखा गया था अथवा प्राचीन राजस्थानीमें। वस्तुतः देखा जाय तो यह ग्रन्थ अुस युगमें लिखा गया जब राजस्थानी और गुजरातीका परस्पर विभेद नहीं हो पाया था, अिसलिये अिस कृतिकी भाषा वही रही होगी जो अुस जमानेमें जालोरमें बोली जाती होगी।[1] डा० दशरथ शर्माने कुछ समय पूर्व प्रकाशित अपने अेक लेखमें "कान्हड़दे प्रबन्ध" को प्राचीन राजस्थानीका ग्रन्थ माना है।[2] कविने स्वयं "प्राकृतबंध कवि मति करी" कहकर प्रबन्धकी भाषाको सामान्यतः प्राकृत नामसे अभिहित किया है, किन्तु यह प्राकृत वैयाकरणोंकी प्राकृत नहीं है, अुस जमानेकी लोक-भाषाको ही कविने प्राकृतका नाम दिया होगा।

अूपरके विवेचनसे स्पष्ट है कि वि० सं० १५१२ में भाषाके रूपमें "गुजराती" अथवा "राजस्थानी" शब्दका प्रयोग नहीं होता था। गुजरातके विद्वान् जिसे जूनी गुजराती तथा राजस्थानके विद्वान् जिसे प्राचीन राजस्थानी कहते हैं, अुस भाषाको अिटलीके प्रसिद्ध भाषाविद् स्व० डा० टैसीटोरीने "प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी" का नाम दिया था तथा ओसवी सन् १३ वीं शतीसे लेकर १६ वीं शतीके अन्त तकके युगको अुन्होंने "प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी काल" की संज्ञा दी थी।[3] अिस प्राचीन राजस्थानीसे ही जो गुजरातसे लेकर प्रयाग मंडल तक फैली हुअी थी, आधुनिक गुजराती तथा आधुनिक राजस्थानीका विकास हुआ और विकसित होते-होते वे दो स्वतन्त्र भाषाओंके रूपमें परिवर्तित हो गअीं जिनमें परस्पर समानताअें होते हुअे भी व्यावर्तक विशेषताअें स्पष्ट परिलक्षित होने लगीं।

प्राचीन राजस्थानी साहित्यसे कहावतों सम्बन्धी जो अुदाहरण नीचे दिअे जा रहे हैं अुनमेंसे प्रायः सभी समान रूपसे "जूनी गुजराती" के भी अुदाहरण माने

---

‡ Linguistic Survey of India. Vol. IX. part. II. p. 328.

* "आपणा कवियो: केशवराम का. शास्त्री, पृष्ठ ४.

१. Linguistic Survey of India Vol. I. part I. p. 176.

२. 'शोध पत्रिका' भाग ३, अंक १, पृष्ठ ५१

३. वचनिका राठौड़ रतनसिंघजी री अंग्रेजी भूमिका, पृष्ठ ४.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जा सकते हैं । किन्तु अिस विषयमें किसी भी प्रकारकी भ्रान्त धारणा न हो, अिसलिअे अूपर का स्पष्टीकरण आवश्यक समझा गया ।

कविवर शालिभद्रसूरि-कृत "भरत बाहुबलि रास" रचना काल सं० १२४१—

१. विण बंधव सवि सम्पअि अूणी ।
जिम विण लवण रसोअी अलूणी ।।८३।।
२. अेक सींह अनअि पाखरीअु ।।८४।।
३. जं विहि लिहीअुँ भालयलि ।
तं जि लोअि अिह लोअि पामह ।।९३।।
४. हीअुँ अनअि हाथ हथियार ।
अेह जि वीर तणअु परिवार ।। १०४ ।। [1]

प्रबोध चिन्तामणि जयशेखर सूरि सं० १४६२ के लगभग :

१. वानरडअु नअिह बीछीह साधु ।
दाह जरिअु दावानलि दाधु ।।
चडिअु सीचाणअु चरडह हाथि ।
जूठअु मिलिअु जुआरी साथि ।।
२. घेवर मांहि अे घृत ढलिअूँ ।
थाहर जोतां सगपण मिलिअूँ ।।
३. चोर माअि जिम छानअु रुअअि ।
४. केतूं कुसल विमासीअि वसतां नअी नअि कूलि ।

पृथ्वीचन्द्र चरित्र श्री माणिक्य चन्द्र सूरि वि० सं० १४७८.

१. छासिअि केरअु आफरु, दासिअि केरु नेह ।
कंबल केरु मोलीअुँ, षिसत न लागह षेव ।। [2]
२. तीणअि सोनअि किसिअुँ कीजअि जीणअि त्रूटअि कान । [3]

आधुनिक राजस्थानीमें यही कहावत "बाल सोनो, कान तोड़ै" के रूपमें प्रचलित है ।

श्री वीर कथा, लखमसेन पद्मावती कवि दाम कृत वि० सं० १५१६.

१. बालस्य माय मरणं, भार्या मरणं च यौवनकाले ।
वृद्धस्य पुत्र मरणं, तिन दुखाअि गिरुआअि ।। [4]
२. प्रमदा वियोग समये, कशलं संहार फुटि हीयांअी ।
पांहण समान घडियं, आजाडियं गच लोहाअि ।।
३. रे हीया पापी पिषुण, किम करि दुख अे हन्त ।
त्रीय वियोग पुत्रह मरण, फाटे दह दिसि जन्त ।।
४. पर दुखअि जे दुखीयाँ, पर सुख हरख करन्त ।
पर कज्जअि सूरा सुहड़, ते बिरला नर हुन्त ।।
५. पर दुखअि सुख अूपजअि, पर सुख दुक्ख धरन्त ।
पर कज्जअि कायर पुरुष, घरि घरि वार फिरंत ।।
६. सीह सिचाणौ सापुरिस, पड़ि पड़ि फुनि अूठन्ति ।
गय गड्डर कुच कापुरिस, पड़े न वलि अूठन्ति ।। [5]

सीताहरण कर्मण रचित. वि० सं० १५२६.

१. दैव घातक दूबलानअि मेहलिअु निश्वास.
२. गअी तिथि नवि वांचअि ब्राह्मण, अेह बोल वीसारु.
३. कीधाँ कर्म न छूटीअि, बोलअि वेद पुराण.

ढोला मारूरा दूहा. कल्लोल वि० सं० १५३०

डा० मोतीलालजी मेनारियाके अनुसार "ढोला मारूरा दूहा" का निर्माणकाल वि० सं० १५३० है । [6] अिस काव्यका मालवणी-मारवणी संवाद अत्यन्त लोकप्रिय हुआ है । अिसमें स्थान-स्थानपर सूक्तियाँ भी मिलती हैं। अुदाहरणके लिअे अेक सूक्ति लीजिअे :

डुंगर केरा वाहला, ओछाँ केरा नेह ।
वहता वहे अुतावला, झटक दिखावै छेह ।।

---

१. मिलाअिअे :
कंता फिरज्यो अेकला, किसा बिराणां साथ ।
थारा साथी तीन जण, हियो कटारी हाथ ।।
राजस्थानके सांस्कृतिक अुपाख्यान, पृष्ठ १७.
२. प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ सं० श्री जिनविजयजी, पृष्ठ १४१.
३. वही पृष्ठ १५८.
४. मिलाअिअे :
"मत मारियो बालक की माय, मत मारियो बूढ़ै की जोय ।"
५. श्री अगरचन्दजी नाहटाके सौजन्यसे प्राप्त हस्तलिखित प्रतिसे अुद्धृत ।
६. देखिअे : राजस्थानी भाषा और साहित्य पृष्ठ १०१ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहाड़ी नाले और ओछे पुरुषोंका प्रेम बहते समय तो बड़ी तेजीसे बहते हैं, पर तुरन्त ही अन्त दिखा देते हैं।

अिस काव्यमें कहीं-कहीं अैसी पंक्तियाँ भी मिल जाती हैं जिनको पढ़कर किसी सूक्तिका अथवा कहावतका स्मरण हो आता है। अुदाहरणके लिअे अेक अैसी ही पंक्ति लीजिअे :

"अुत्तर आज स अुत्तरअु सही पड़ेसी सीह।"

अर्थात् आज अुत्तर दिशाका पवन अुतर आया है, अवश्य ही शीत पड़ेगी।

यह पंक्ति "अुत्तरस्यां यदा वायुः तदा शीतं प्रवर्तते" का स्मरण दिलाअे बिना नहीं रहती।

अिस काव्यकी साहित्यिक विशेषताओंके कारण मैंने अिसे शिष्ट-साहित्यके अन्तर्गत ही रखा है। लोक-प्रचलित कहावतोंका अिस ग्रन्थमें अभाव है, भले ही अिसकी अनेक पंक्तियोंको कहावतोंकी-सी प्रसिद्धि मिल गअी हो।

विमल प्रबन्ध (लावण्य समय) वि० सं० १५६८ (गुजराती प्रधान)

१. घर घरणिअि बलणिअि नवि होअि।
अेह बात जांणअि सहु कोअि ॥ +
२. पण घर सूनूं विण सन्तान।
३. वरस सोलमअि वंधिअि रहिअु।
बैटअु मित्र समाणअु कहिअु ॥ *

प्राचीन राजस्थानीके जिन ग्रन्थोंके अूपर अुद्धरण दिअे गअे हैं, अुनमें कहावतोंका प्रयोग विरल है, ढूंढनेसे ही कहावतें अुपलब्ध होती हैं।

ख. माध्यमिक राजस्थानी

कवि समयसुन्दर और राजस्थानी कहावतें

अपने ग्रन्थोंमें कहावतोंके प्रचुर प्रयोगकी दृष्टिसे अिस युगके कवियोंमें कविवर समयसुन्दरका नाम सबसे पहले लिया जाना चाहिअे। कविकी मातृभूमि होनेका गौरव मारवाड़ प्रान्तके सांचौर स्थानको प्राप्त है। पोरवाड़ वंशमें अिनका जन्म हुआ। पिताका नाम रूपसी और माताका लीलादे या धर्मश्री था। जन्म-काल वि० सं० १६२० होनेकी सम्भावना की जाती है। वि०सं० १६४७ में सम्राट् अकबरके आमन्त्रणपर लाहौर-यात्रा भी आपने की थी। अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ "सीताराम चौपाअी" की ढाल अिन्होंने अपनी जन्मभूमि सांचौरमें ही बनाअी। सं० १७०२ में अिनका अहमदाबादमें स्वर्गवास हुआ। साठ वर्ष तक निरन्तर साहित्य-रचना करते हुअे अुन्होंने भारतीय वाङ्मयको समृद्ध बनाया। स्तवन गीत आदि अिनकी लघु कृतियाँ सैकड़ोंकी संख्यामें हैं जो जहाँ कहीं भी खोज की जाय, मिलती ही रहती हैं। अिसीसे लोकोक्ति है कि "समयसुन्दर रा गीतड़ा, कुम्भे राणे रा भीतड़ा" अथवा भीतोंका चीतड़ा। अर्थात् कविवरकी रचनाअें अपरिमित हैं। अिनके प्रसिद्ध ग्रन्थ "सीताराम चौपाअी" की रचना संवत् १६७७ के आसपास हुअी।× यह ग्रन्थ सरल सुबोध भाषामें लिखा गया है जिसमें लोक प्रचलित ढालोंका प्रयोग हुआ है। सम्पूर्ण ग्रन्थ ९ खण्डोंमें समाप्त हुआ है और प्रत्येक खंडमें सात-सात ढाल हैं। लोकोक्तियोंके प्रयोगकी दृष्टिसे अिस ग्रन्थका विशेष महत्व है। अिसमें प्रयुक्त बहुत-सी कहावतें यहाँ अुद्धृत की जा रही हैं :—

१. अुंघतणअि बिछाणअु लाघअु, आहीणअु दू काण अुबे।
मुंगनअि चाअुल मांहि घी घणअु प्रीसाणो अुबे।
प्रथम खंड, ढाल ६, छन्द ५।

२. छट्ठी रात लिख्यअु ते न मिटअि।
प्रथम खंड, छन्द ११।

३. करम तणी गति कहिय न जाय।
दूसरा खंड, छन्द २४।

४. तिमिरहरण सूरिज थकां, कुंण दीवानअु लाग।
दूसरा खंड, ढाल ३, छन्द १२।

+ मिलाअिअे : "न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृह-मुच्यते।"

* मिलाअिअे : "प्राप्ते तु षोडषे वर्षे पुत्रे मित्र-वदाचरेत्।"

× कविवर समयसुन्दर : श्री अगरचन्द नाहटा नागरी प्रचारिणी पत्रिका वर्ष ५७, अंक १, सं० २००९।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. रतन चिन्तामणि लाभतां, कुंण ग्रहअि कहअु काच।
दूध थकां कुण छासिनअि पीयअि सहु कहअि सांच ।।
खंड २, ढाल ३, छन्द १३।

६. भरतनअि तात किसी अे करणी,
आपणी करणी पार अुतरणी।
खंड ३, ढाल ४, छन्द ६।

७. बालक वृद्ध नअि रोगियअु, साध बामण नअि गाअि।
अबला अेह न मारिवा, मान्यां महापाप थाअि ।।
खंड ३, ढाल ७, छन्द १३।

८. महिधर राय सुखी थयो, मुँग मांहि ढल्यो घीव।
बिछावण लह्यो अूंघतां, धान पछअु त्रे सीय ।।
खंड ४, ढाल ४, छन्द ४।

९. पांचां मांअि महीजियअि, परमेसर परसाद।
खंड ५, ढाल १, छन्द १।

१०. साधु विचारयो रे सूत्र कहेअि, समरथ सज्जा देअि।
खंड ५, पृष्ठ ७३।

११. लिख्या मिटअि नहिं लेख।
खंड ५, ढाल ३, छन्द १।

१२. मूर्छागत थअि मावड़ी, दोहिलो पुत्र वियोगि।
खंड ५, ढाल ३, छन्द ११।

१३. पाछा नावअि जे मुआ !
खंड ५, ढाल ६, छन्द २०।

१४. मअि मतिहीण न जाण्यो, त्रूटअि अति घणो ताण्यो।
खंड ५, ढाल ७, छन्द ४५।

१५. कीड़ी अूपरके ही कटकी।
खंड ६, ढाल २, छन्द ४९।

१६. अे तत्व परमारथ कह्यो मअि,
त्रूटिस्यअि अति ताणियो।
खंड ६, ढाल १२, छन्द १२।

१७. अूषाणअु कहअु लोक, पेटअिको घालअि
नहीं अति बाल्ही छुरी रे लो।
खंड ७, ढाल १, छन्द १७

१८. षंत अूपरि जिम पार, दुख माहै दुख
लागो राम नअि अति घणो रे लो।
खंड ८, ढाल १, छन्द २२, पृष्ठ १६२

१९. छट्ठी राति लिख्या जे अक्षर,
कूण मिटावअि सोअि।

२०. आभअि बीजिलि अुपमा हो। पृष्ठ १७९

२१. थूकि गिलअि नहिं कोअि।
खंड ९, ढाल ३, छन्द ११

अूपर दी हुअी कहावतोंका क्रमशः अर्थ है— अूँघती हुअीको बिछौना मिल गया। छठीकी रात जो लिख दिया गया, वह अमिट है। कर्मकी गति कही नहीं जा सकती। सूर्यके होते दीपकको कौन पूछे? चिन्तामणि मिलते, काँच कौन ग्रहण करे? दूध मिलते छाछ कौन पिअे? अपनी करनीसे सब पार अुतरते हैं। बालक, वृद्ध, रोगी, साधु, ब्राह्मण, गाय और अबला अिन्हें नहीं मारना चाहिअे क्योंकि अिन्हें मारनेसे महा पातक होता है। घी बिखरा तो मूँगोंमें। अूँघतेको बिछौना मिल गया। पंचोंमें परमेश्वरका प्रसाद कहा जाता है। समर्थ सजा देता है। लिखे लेख नहीं मिटते। पुत्र वियोग दुःसह है। मरे हुअे वापिस नहीं आते। अधिक तानेसे टूट जाता है। कीड़ी (चींटी) पर कैसी फौज? ताना हुआ टूट जाता है। प्यारी सोनेकी छुरीको भी कोअी पेटमें नहीं रखता। घावपर नमक, अिसी प्रकार रामको दुःखमें दुख अधिक लगा। छठी रातको जो अक्षर लिख दिअे गअे, अुनको कौन मिटा सकता है? बादलकी बिजली। थूककर कर कोअी नहीं चाटता।

अूपर दी हुअी कहावतोंके राजस्थानी रूपान्तर आज भी अुपलब्ध हैं। अिससे कम-से-कम अितना स्पष्ट है कि कवि समयसुन्दरके जमानेमें अुक्त कहावतें प्रचलित थीं। कविने कहावतोंके साथ-साथ सूक्तियों और मुहावरोंका भी प्रयोग किया है। कहीं-कहीं संस्कृत सूक्तियोंका अनुवाद भी कर दिया है। अुदाहरणार्थ:

"जीवतो जीव कल्याण देखअि" पृष्ठ १०४, वाल्मीकि रामायणके "जीवन्भद्राणि पश्यति" का यह अनुवाद मात्र है। "सीतराम चौपाअी" में यह अुक्ति रामकी हनूमानके प्रति है। राम हनूमानसे कहते हैं कि अैसा प्रयत्न करना जिससे सीता जीवित रहे। वाल्मीकि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामायणमें आत्महत्या न करनेका निश्चय करते हुअे स्वयं हनूमान कहते हैं कि यदि मनुष्य जीता है तो कभी-न-कभी अवश्य कल्याणके दर्शन करता है। अिसी प्रकार "बीसार्‌यो अंगीकार नहि अुन्नमनअि आचार" "अंगीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति" का स्मरण दिलाता है। कहावतके लिअे कविने "आहींण" और "अूपाणअु" का प्रयोग किया है। अेक स्थानपर सूत्र शब्दका प्रयोग हुआ है। कहावत भी वस्तुतः अेक प्रकारका वाक् सूत्र ही है।

"सीताराम चौपाअी" के अतिरिक्त कविकी अन्य कृतियोंमें यत्र-तत्र कहावतें बिखरी मिलती हैं। अुदाहरणार्थ :

आप मुयां बिन सरगन जाअियअि।
बाते पापड़ किम ही न थाअि॥
आपणी करणी पार अुतरणी॥ सवैया छत्तीसी।
सूता तेह विगूता सही जागंता काअु डर भय नहीं।
सूता जगावण गीत।
आप डूबे सूतां री पाडा जिणै
अेह बात जग जाणें रे।
आप डूबे सारी डूब गअी दुनिया।
दाहिनी आँख सखि मोरी फरुकी
रंगमें भंग जगावअिहो। मेमिकाग।

माल कवि कृत पुरन्दर चअुपअी और कहावतें–

माल कविकी यद्यपि निश्चित तिथि ज्ञात नहीं है तथापि कहावतोंके सिलसिलेमें अुनका नाम विशेष रूपसे अुल्लेखनीय है। कवि द्वारा रचित "पुरंदर चअुपअी" में से कुछ कहावतें यहाँ दी जा रही हैं :

१. जां संपअि तां पाहुणा, जां सांवण तां मेह।
जां सासू तां सासरअु, जां योवन तां नेह॥
२. पर भव कहि किण दीठ।
३. अणमिलतअि जे संयमी।

आज भी कहा जाता है "अण मिलेका सै जती है" अर्थात् विषय भोग सुलभ न होनेपर सभी अपनेको संन्यासी कह सकते हैं।

४. छांनअु कस्तूरी गुण न रहअि।

अर्थात् कस्तूरीका गुण छिपा नहीं रहता। "न हि कस्तूरिकामोदः शपथेन विभाव्यते।" अिसी आशयको व्यक्त करनेवाली संस्कृत कहावत है।

५. मन मांहि भावअि मूंड हलावअि।
६. बिल्गी भागअि छीकअु त्रूटअु,
घीय ढुल्यो तअु मूंगा मांहे।
७. कअि कडि बअिसअि अूंट!

अर्थात् न जाने अूंट किस करवट बैठे? यह अेक बड़ी व्यापक कहावत है जो भारतवर्षकी अनेक प्रान्तीय भाषाओंमें भी पाअी जाती है।

८. मूआँका क्या मारिये। "मृतस्य मरणं नास्ति" अैसी ही अेक संस्कृत लोकोक्ति है।

९. दूज बूठ अलखामणअु मरअि न मांचअु छंडअि रे।

"पुरन्दर चअुपअी" कोअी कहावतोंका संग्रह ग्रन्थ नहीं है। अिसमें जम्बू द्वीपके विलासपुर नामक नगरमें राज्य करनेवाले सिंह रघुरायके पुत्र पुरन्दरकी कथा कही गअी है और बीच-बीचमें अनेक लोकोक्तियों और सूक्तियोंका प्रयोग हुआ है।

अिस युगके अन्य कवियों और लेखकोंमें अीसरदास, पृथ्वीराज, कुशललाभ, जगाजी, कृपाराम, बांकीदास तथा महाकवि सूरजमल आदिके नाम प्रसिद्ध हैं। अीसरदासकी "हालाँ झालाँरी कुंडलियाँ" के निम्नलिखित पद्य कहावतोंकी ही भाँति प्रचलित हैं :—

१. मरदाँ मरणो हक्क है अूबरसी गल्लाँह।
सापुरसाँ रा जीवणा थोड़ा ही भल्लाँह॥
२. केहर केस भमंग मण, सरणाअी मुहड़ाँह।
सती पयोहर कपण धन, पड़सी हाथ मुहाँव॥

दूसरा दोहा अपभ्रंशके ग्रन्थोंमें भी मिलता है। अिससे स्पष्ट है कि कविने अिसे परम्परा प्राप्त साहित्यसे ही ग्रहण किया है।

राठौड़ राज पृथ्वीराजकी प्रसिद्ध कृति "वेलि क्रिसन रुकमणी री" में कहावतोंका प्रायः अभाव है। राजस्थानीमें "भलाभली प्रिथमी छै" अेक कहावत है जिसका अर्थ यह है कि अिस पृथ्वीपर अेक-से-अेक बढ़कर महापुरुष हैं। केवल अिस अेक कहावतका संकेत "वेलि" के निम्नलिखित दोहड़ेमें मिलता है :—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरिखाँ सूँ बलभद्र लोह साहियै,
वड़करि अुछजतै विरुधि ।
भलाभली सति तोओीज भंजिया,
जरासेन सिसुपाल जुधि ।।

कुशललाभकी "ढोला मारू री चौपअी" और "माधवानल कामकन्दला" बहुत लोकप्रिय रचनाअें हैं। अिन दोनोंमेंसे कहावती पद्योंके कुछ अुदाहरण लीजिअे।

ढोला मारूरी चौपअी।

१. असत्री पीहर नर सासरै, संजमींयाँ सहवास।
अेता ओ होअे अलखामण, जो माँडे घरवास।।

माधवानल कामकन्दला।

२. पाणी पाखिअि माछिली झटकअि तिजअि शरीर ।।
३. दुर्बल नअि बल राय नूँ, मूरख नअि बल मौन्य।
बालक बल रोवा तणुँ, तस्कर नअि बल शौन्य ।। [१]
४. रुदया भींतरि रही रडअुँ, त चोर तणी जिम माय ।।

कहीं-कहीं अैसी अुक्तियाँ भी मिलती हैं जिन्हें संस्कृत सूक्तियोंकी छाया कहा जा सकता है। जैसे,

जू कअिरअि नहू पानडुँ, फूल नहीं वट वृक्ष।
तु सिअु दोस वसन्तनअु, सरयु तेह समक्ष ।।
आदित्य आँखि जु विश्वनी, अूघाडण अे आँक।
थासिअि अन्ध अुलूक तु, सूरिजनु स्यु वाँक ।। [२]

जगाजी द्वारा रचित वचनिका तथा अुनके कवित्तोंमें कहावतोंका प्रयोग नहीं मिलता। कवित्तोंमें कहीं-कहीं "मिटै न लेख करम्मरो" जैसी पंक्तियाँ मिल जाती हैं।

राजियाके सोरठे और कहावतें--

कहावतोंके प्रयोगकी दृष्टिसे कृपारामका नाम सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। अिनका रचना काल सं. १८६५ के आस-पास है। ये जोधपुर राज्यके गाँव खराड़ीके निवासी खिड़िया शाखा के चारण थे। बड़े होनेपर ये सीकरके रावराजा लक्ष्मणसिंहके पास चले गअे और अन्त समय तक वहीं रहे। राजियाके नामसे जो सोरठे राजस्थानमें प्रचलित हैं वे कृपारामके बनाअे हुअे हैं। राजिया अिनका नौकर था। अुसीको सम्बोधित करके ये सोरठे कहे गअे हैं।[3] अिन सोरठोंके कारण कविकी अपेक्षा भी राजियाका नाम अधिक विख्यात हो गया।

अिन सोरठोंकी भाषा सरल, रोचक और अुपदेश-प्रद होनेके कारण राजपूतानेके निवासी प्रायः अिन सोरठोंको बोलते देखे जाते हैं। शायद ही कोअी अैसा मनुष्य हो जिसे राजियाके दो चार सोरठे याद न हों। राजाओं और सरदारोंकी सभामें राजियाके सोरठे मौके-ब-मौके सुने जाते हैं। साधारण लोग तो अिन्हें सांसारिक व्यवहारमें अच्छी तरह नित्य प्रयोग करते हैं। वेस्टर्न राजपूताना स्टेट्सके भूतपूर्व ब्रिटिश रेजिडेण्ट कर्नल पाअुलेट साहब अिन सोरठोंपर अितने मुग्ध थे कि अुन्होंने बड़ी मेहनतसे जितने भी सोरठे मिल सके अुनका संग्रह कर अँग्रेजी भाषामें अनुवाद किया था। अुक्त रेजिडेंट साहब अिन सोरठोंकी तारीफमें कहा करते थे कि "मारवाड़ी भाषाके साहित्यमें राजियाके सोरठे अमूल्य वस्तु हैं।"*

राजियाके सोरठोंमें अनेक सोरठे तो अैसे हैं जिनमें लोक प्रचलित कहावतोंके प्रयोगके कारण सोरठोंमें चमत्कार आ गया है। अनेक सोरठे अैसे भी हैं जो अपने चमत्कारके कारण राजस्थानमें कहावतोंकी भाँति प्रयुक्त होने लगे हैं। पहले प्रकारके सोरठोंके कुछ अुदाहरण लीजिअे :

कहणी जाय निकाम, आछोणी आँणी अुक्त।
दांमा लोभी दांम, रंजै न वातां राजिया ।।५७।।

अर्थात् हे राजिया ! पैसेके लोभीके सामने अच्छी-अच्छी अुक्तियाँ पेश करके भी कहा हुआ व्यर्थ होता है,

---

१. मिलाअिअे :
क. विभूषणं मौनमपण्डितानाम्।
ख. बालानां रोदनं बलम् ।।

२. मिलाअिअे :
पत्रं नैव यदा करीरविटपे दोषो वसन्तस्य किं
नोलूको प्यवलोक्यते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम्।
धारा नैव पतन्ति चातकमुखे मेघस्य किं दूषणम्
यत्पूर्वं विधिना ललाटलिखितं तन्मार्जितुं कः क्षमः।

३. राजस्थानी भाषा और साहित्य डा० मोतीलाल मेनारिया। पृष्ठ १९५

* राजियाके सोरठे, श्री जगदीशसिंह गहलोत, भूमिका–पृष्ठ १.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि वह बातोंसे प्रसन्न नहीं होता, पैसेसे खुश होता है। "दमड़ीको लोभी वातों सूं कोनी रीझै" राजस्थानकी अेक प्रसिद्ध कहावत है जिसका अुक्त पद्यके अुत्तरार्द्धमें प्रयोग हुआ है :

डूंगर जलती लाय, जोवै सारो ही जगत।
प्राजलती निजपाय, रती न सूझे राजिया ।।९९।।

"डूंगर बलती दीखै, पगां बलती कोनी दीखै" अिस कहावतने ही अुक्त सोरठेका रूप धारण कर लिया है। अिसी प्रकार निम्नलिखित सोरठेका पूर्वार्द्ध राजस्थानकी अेक कहावत ही है :

अेक जणैको भार, सात पाँचकी लाकड़ी।
तैसे ही अुपकार, राम मिलणने राजिया ।।१२६।।

निम्नलिखित सोरठे अपनी सरल अेवं चमत्कारपूर्ण अभिव्यक्तिके कारण राजस्थानमें लोकोक्तियोंकी भाँति ही व्यवहृत होते हैं :

नहचै रहो निसंक, मत कीजे चल विचल मन।
अै विधना रा अंक, राओ घटे न राजिया ।।८२।।

अिस सोरठेका अुत्तरार्द्ध अेक कहावत ही समझिअे। नीचे लिखे सोरठे भी लोगों द्वारा बहुधा सुने जाते हैं :

मतलब सूं मनवार, नौत जिमावै चूरमा।
बिन मतलब मनवार, राव न पावै राजिया ।।९०।।
समझणहार सुजाण, नर औसर चूके नहीं।
औसर रो अवसाण, रहे घणा दिन राजिया ।।१।।

राजियाके सोरठोंकी भाँति नाथिया आदिके सोरठोंमें भी स्थान-स्थानपर कहावतोंका प्रयोग हुआ है। अुदाहरणार्थ :

१. बिकतां लगै न बार, बोलै जिण रा बूबला।
अणबोलां री ज्वार, निरखै कोय न नाथिया ।।
२. अदघट करै अवाज, नहिं कर भरियाँ नाथिया।
३. तातो लीजै तोड़, बांण्यो अर बीजो बड़ो।

संवत् १८५८ की संबोध अष्टोत्तरीसे यहाँ जैन कवि ज्ञानसार (सं. १८००-१८९८) के भी कुछ कहावती सोरठे अुद्धृत किअे जा रहे हैं :

१. पहरीजें पर प्रीत, खाओजें अपनी खुसी।
२. अब फाटो आकाश, कह कारी कैसी करैं।
३. करिवर केरो कान, तरल पूँछ तुरियाँ तणी।
पीपल केरो पान, निचला रहै न नारणा ।।
४. ताता चढ़ण तुरंग, भाँत भाँत भोजन भला।
सुथरा चीर सुरंग, नहीं पुण्य बिन नारणा ।।*

नारणाके अुक्त सोरठोंमें वैण सगाओके रक्षार्थ ही "अब फाटो आकाश, कह कारी कैसी लगै" के स्थानमें "अब फाटो आकाश, कह कारी कैसी करैं" का प्रयोग हुआ है।

राजस्थानी-साहित्यमें कविराज बाँकीदासका नाम बड़े आदर और सम्मानके साथ लिया जाता है। आपकी लिखी हुअी "बाँकीदास री बात" राजस्थानमें अत्यन्त प्रसिद्ध है, जिसमें स्थान-स्थानपर "अोखाणों" और कहावती पद्योंका प्रयोग हुआ है। यह ग्रन्थ अभी तक अप्रकाशित है। बिड़ला सेन्ट्रल लाअिब्रेरीकी हस्तलिखित प्रतिसे कुछ अुदाहरण यहाँ दिअे जा रहे हैं :

१. रायमल वेद मुहतो सोजत हुवो वीरमदेवजी रै
कांम आयो सिर पड़ियाँ जूझियो कबन्ध हुय बेटा
नूँ मारियो अुण दिण रो अुखाणो
मुहतां भाटी भार कां। घर रा गिणे न पारका।
बात संख्या २२४८.

२. बारै बेटा राम रा, काज रा न कांम रा।
जो नहीं होतो रणछोड़, सारा बाजता हांड़ी फोड़ ।।
बात संख्या २२८४.

३. आधी धरती भीम, आधी लोदरवे धणी।
काक नदी छै सीम, राठोड़ांने भाटियाँ ।।
बात संख्या ७८४.

४. पाँच वकार सूं पंडित पूज्य होय वपु करि,
वित्त करि, वाणी करि, विद्या करि, विनय करि।
बात संख्या २०१९.

५. बीरबलकी मृत्युपर अकबरकी अुक्ति :
"हूँ बीरबल री लोथ कांधे ले बालतो तो अुणरी चाकरी सूं अुऋण होतो हूँ।"
बात संख्या २४४६.

* बिड़ला सेन्ट्रल लाअिब्रेरी, पिलानीकी अेक हस्तलिखित प्रतिसे साभार अुद्धृत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"खुदा तालारी कृपा सूँ बीरबल मोनूँ मिलियो हो म्हांरा दिल मांहली बात बाहर आणतो दारू ज्यूं।"

वात संख्या २४४७.

६. ऋषि कपाट जड़ि गुफामें बैठो हुतो। राजा जाय कह्यो–किवाड़ खोलो। जद ऋषि कह्यो–कुण है? राजा कह्यो–हूँ राजा छूं। जद ऋषि कह्यो–राजा तो अिन्द्र है। जद भोज कह्यो–किवाड़ खोलो, हूँ दाता छूँ। जद ऋषि कह्यो–दाता तो करण हुवो। जद भोज कह्यो–किवाड़ खोलो, हूँ क्षत्रिय छूं। जद ऋषि कह्यो–क्षत्रिय तो अर्जुन हुवो। जद भोज कह्यो–खोलो किवाड़। ऋषि कह्यो–कुण छै? भोज कह्यो–मनुष्य छै। ऋषि कह्यो मनुष्य तो धारापति भोज है।* तो हाथ लगा बिनां खोलियौ किवाड़ खुल जासी। यूं हिज हुवो।

महाकवि सूर्यमल्लकी भी अनेक पंक्तियाँ लोकोक्तियोंकी भाँति प्रचलित हुअी हैं। यहाँ "वीर सतसअी" से केवल दो अुदाहरण दिअे जा रहे हैं :

१. अिला न देणी आपणी। दोहा २३४.
अपनी जमीन किसीको न देनी चाहिअे!

२. रण खेती रजपूत री। दोहा ११८.
युद्ध ही राजपूतकी खेती है।

राजस्थानकी ख्यातों और वातोंमें जो कहावती दोहे मिलते हैं अुनका विवेचन मैंने "राजस्थानके अैतिहासिक प्रवाद" तथा "राजस्थानके सांस्कृतिक अुपाख्यान" में विस्तारपूर्वक किया है।

ग. आधुनिक राजस्थानी

आधुनिक राजस्थानी साहित्यमें कहावतोंके विशेष प्रयोगकी दृष्टिसे दो पुस्तकोंके नाम अुल्लेखनीय हैं—अेक है श्री भौमराज द्वारा रचित "मूंघा मोती" और दूसरी है पंडित मांगीलालजी चतुर्वेदी द्वारा लिखित "मरु भारती।" दोनोंमेंसे कहावतोंके अुदाहरण यहाँ दिअे जा रहे हैं :

अ. मूंघा मोती

१. पाड़ोसी रो पूत, भलो तपाणो तावड़ै।
सोरठा १०३.

२. भली राड़ स्यूं बाड़, मंगल नाकै रैवणो।
सो० १०७.

३. मिलतारू रो काम, बातां मांअीं नीसरै।
सो० ११८.

४. मंगल बीनैं जाय, जीनैं झुकतो पालड़ो।
सो० १३२.

५. होय कमाअू पूत घर बारै लागै भलो।
सो० १४४.

६. जलमैं जद जा दीख, पूतां रा पग पालणै।
सो० १४६.

७. मंगल मिटै न भूख, मनरा लाडू खाण स्यूं।
सो० १६०.

८. होय अन्धेरी रात, न घी घाल्यो छानो रवै।
सो० १६२.

९. तपै तावड़ो लोक, मंगल बरखा भी जदी।[1]
सो० २०२.

१०. मंगल बालक जात, खेलणमें राजी रवै।
सो० २०८.

११. दुबलै नै दो साढ, जाट बिचारै खेतमें।
सो० २१२.

१२. गधो न घोड़ो होय, ठम-ठमकर भाअूं चलो।
सो० २३. हास्य व्यंग्य.

१३. छाज निजी बन्धेज, बोल्यो सो तो बोलियो।
मंगल सौअूं वेज, बोलण लागी छालणी॥
सो० २४. हास्य व्यंग्य.

अिस पुस्तकमें स्थान-स्थानपर कहावती लोकविश्वासोंका भी अुल्लेख हुआ है। अुदाहरणार्थ :

---

* मि. नैव देवा अतिक्रामन्ति, न पितरो न पशवो, मनुष्या अेवैते अतिक्रामन्ति। शतपथ ब्राह्मण २।४।२।६

१. मिलाअिअे : "आडंगकर गरमी करै, जद बरसण री आस।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. तड़कै-तड़कै आय काँव-काँव कागो करै ।
मंगल यूं कै ज्याय, पत्तर भिनखर आयसी ।।

सो० ९. फुटकर.

२. पगमें चालै खाज, जूतीपर जूती पड़ै ।
मंगल कैंओ काज, करणी पड़ै मुसाफरी ।।

३. हाथ हथेली खाज, मंगल चालै मिनख रे ।
कठे स्यूं ही र भाज, रिपिया आसी तावला ।।

४. हिचकी बारूँबार, आय र हलकारै जियाँ ।
दे ज्यावै समचार, मंगल कैरी याद रो ।।

ऊपर दिअे हुअे सोरठे राजिया, भैंरिया, किसनिया आदिकी परम्पराको आगे बढ़ाते हैं ।

आ. मरु भारती

१. दी सिंहनी ललकार, ठ्यावस ल्यो धीरज धरो ।
लीन्हीं आज अुधार, तड़कै ओटी चूकसी ।।

पृ० ११.

२. "दाँत ! न दीज्यो काट थे, बसी बीचमें आय ।"
"निचली रीजे जीभड़ी, देगी तूँ तुड़वाय ।।"

पृ० २२.

३. पानी तो बहतो भलो, नदी हो कि हो नहर ।
भोजन मा कै हाथको, होय भलाँ ही जहर ।।

पृ० ४३.

४. "करसी छोरी काणती ! कुण तेरैसैं ब्याह ?"
"घरां खिलास्यूं वीर नैं, दे दूल्हैकै डाह ।।"

पृ० ४८.

५. नीचो नर किंचित पढ्यो, कह "मैं कीं सैं घाट ।"
हुयो पसारी अूनरो, ले हलदीकी गाँठ ।।

पृ० ५१.

६. तुलसी सूर सुकाव्यकी, दोय अूजली आँख ।
"मूंग मोठमें कुण बड़ो ?" करै कौन यह आँक ।।

पृ० ५३.

७. फाड़ै सो मण दूध नैं काचरको अेक बीज ।

पृ० ५५.

८. जासीं करणी आपकी, के बेटोंके बाप ।

पृ० ७१.

"मूँघा मोती" तथा "मरु भारती" दोनोंमें राजस्थानी लोकोक्तियोंकी भरमार है । कहींसे भी पृष्ठ खोलिअे, कोअी-न-कोअी चमत्कारी अर्थ-गर्भित कहावत हाथ लग ही जाती है । "मूँघा मोती" की रचना जहाँ ठेठ राजस्थानीमें हुअी है, वहाँ "मरु भारती" की भाषा हिन्दीके अधिक निकट है जैसा कि "करै कौन यह आँक" जैसे प्रयोगों द्वारा स्पष्ट है ।

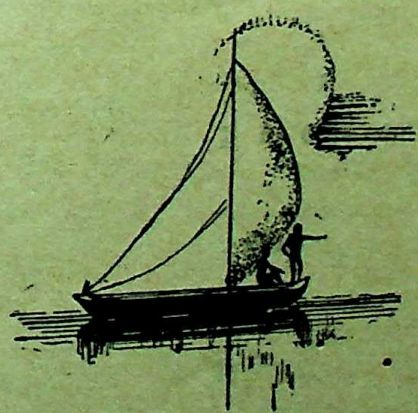

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केरल प्रान्तमें प्रचलित कुछ ग्राम-गीत

--डॉ. के. भास्करन नायर

केरल प्रांतमें कअी ग्राम-गीत प्रचलित हैं। नमूनेके लिअे कुछ गीत नीचे दिअे जाते हैं।

अिस प्रान्तमें "पाण" नामक अेक विशेष जाति रहती है, वे लोग हिन्दू हैं, बहुत ही गरीब और अशिक्षित। कुलीन लोगोंके घर-घर जाकर ये गीत गाते घूमते हैं। कुलीन लोग जो कुछ देते हैं अुससे ये अपने दिन काटते हैं। ताड़के पत्तों और बाँससे अेक तरहकी छतरी बनानेमें ये लोग बड़े प्रवीण हैं। कुलदेवताके सबन्धमें सुन्दर गीत सुरीले कंठसे ये गाते हैं। अुन गीतोंमें अेक सरस गीत बालस्वरूप गोपाल कृष्णके बारेमें गाया जाता है। यह गीत अितना लोकप्रिय हो गया है कि कन्या-कुमारीसे लेकर गोकर्ण-क्षेत्र तकके गावोंके आबाल-वृद्ध लोग अिसे बड़े भावावेशसे गाते हैं।

प्रसंग है कृष्णकी बाललीलाके नटखटपनका। गोपियाँ आकर यशोदासे शिकायत करती हैं कि "हे यशुमति! हम तेरे बेटेसे तंग आ गअी हैं। वह बड़ा शरारती है और माखन चुरा-चुराकर खाता है"। तुरन्त यशोदा कृष्णको पकड़ लाती है और लकुटी दिखाकर पूछती है कि 'अरे! तूने माखन कहाँ खाया?' तब कृष्ण कहते हैं "हे मेरी अच्छी माँ! मैंने नहीं खाया। मैया मेरी मैं नहिं माखन खायो। तुझे विश्वास न हो, तो मेरे मुँहको देख ले--आ!!!"

यशोदाने मुँहमें देखा तो वहाँ सारा विश्व-ब्रह्माण्ड-लोक देखकर चकित हो गअी और तब वह कृष्णसे मुँह बन्द करनेकी प्रार्थना करती है —

१. आनत्तलयोलम् वेण्ण तराम् अुण्णी।
अंप्राटि श्रीकृष्णा वा मुरुक्क॥

हे वृन्दावन-निवासी श्रीकृष्ण! हाथीके सिरके परिमाणमें मैं तुझे मक्खन दूंगी। तू मुँह बन्द कर।

२. किंकिणि मोतिरम् तंकत्ताल
चार्तिटाम्।
पंकज लोचना! वा मुरुक्क॥

अरे कमल नयन! सोनेकी किंकिणी और अँगूठी तुझे पहनाअूँगी। तू मुँह बन्द कर।

३. पैक्कले मेय्क्कुवान् पाटत्तयय्क्काम्
ञान्।
मैक्कण्णा! पोन्नुण्णी! वा मुरुक्क॥

गायोंको चरानेके लिअे अुनके साथ मैं मैदानमें तुझे भेज दूंगी। अरे! मेरे प्यारे! तू मुँह बन्द कर।

४. अण्ड चराचरम् कण्टु मयङ्ङिनेन।
कोण्डल नेरवर्णा! नी वा मुरुक्क॥

सारा ब्रह्माण्ड देखकर मेरा सिर चक्कर खा रहा है। मेरे श्याम! तू मुँह बन्द कर।

५. आट्टि क्कुलियानाय
कोण्डुपोकाम् पोन्नु।
पोट्टि मुरान्तका! वा मुरुक्क॥

नदीमें नहानेके लिअे तुझे ले चलूंगी। हे मुरारी! अपना मुँह बन्द कर।

६. अच्छन्टे तेवारक्कच्च तराम् कुञ्ञे।
अच्युतप्पैतले! वा मुरुक्क॥

बापूका अंगोछा तुझे दूंगी। मुँह बन्द कर।

७. अच्छन्टेयाणय नामत्ते
क्केट्टप्पोल।
तिगुवा मुरुक्किनान्
कृष्णनप्पोल॥

पिताजीकी शपथ लेते ही कान्हने मुँह बन्द कर लिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह गीत भी श्रीकृष्णके सम्बन्धमें है :

१. ओमनक्कुट्टन गोविन्दन-बलरामने
क्कूटे क्कूटाते ।
कामिनिमणियम्मत-न्तंक
सीमिनि चेन्नु मेविनान् ॥

प्यारा दुलारा कृष्ण बलरामको बिना साथ लिअे तरुणी-रत्न यशोदाकी गोदमें जा बैठा।

२. अम्मयुमप्पोल मारणच्चिट्ट
ऊऊम्मवेच्चु किटाविने ।
अम्मिञ्ञ नलकियानंदिप्पिच्चु
चिन्मयनप्पोलोतिनान् ॥

माँने बच्चेको चूमकर छातीसे लगाया । पय पान कराकर अुसे बहलाया । चिन्मय (भगवान) कृष्णने माँसे कहा :

३. ओप्पत्तिलुल्ल बालकरायि
मुप्पत्तिरण्डु पेरुण्ड ।
अप्पिल्लराय्वनत्तिल कलिप्पान्
अिप्पोल ञानम्मे : पोकट्टे ॥

माँ ! मेरे समान बत्तीस साथी मेरे साथ हैं। अुनके साथ खेलनेके लिअे मुझे जाने दो माँ !

४. अय्यो येन्नुण्णियिप्पोल पोकल्ले ।
तीयुपोलुल्ल वेयिलल्ले ॥

अरे ! रे । मत जा । मत जा । आगके समान बड़ी कड़ी धूप है ।

५. वेरुते येन्नम्मे तटच्चोल्ले केट्टो ।
परिचोटुण्णिकल वकुण्णुवान् ॥

सुनो माँ ! व्यर्थ मत मुझे रोको ।

६. नरुनेय कूट्टि युरुट्टीट्टुम् ।
वरुत्तोरुप्पेरि पतिच्चिट्टु मीर--
ण्डुरुलयु मेन्टे मुरलियुम् ॥

बच्चोंको खानेके लिअे घृत, दधियुत चावल दो माँ ! भुनी हुअी कोअी चीज भी चाहिअे माँ ! दो कौर चावल दो माँ ! और मेरी मुरली भी ।

७. तरिकयेन्नम्म मटियिल चान्चाटि ।
त्तरसा कण्णन तान् पुरप्पट्टान् ॥

अितना कहकर कान्हा माताकी गोदसे अुठकर भाग गया ।

मनोरंजनके लिअे कअी खेल यहाँ होते हैं । अुनमें अेक खेलका नाम है "अेञ्जामत्र कलि" ।

दिया जलाया जाता है । अुसके चारों ओर खेलमें भाग लेनेवाले बैठते हैं और हास्य-रस प्रधान पद गाते हैं । खेलनेवालोंको विविध प्रकारके नाम दिअे जाते हैं । अुसके बाद ताल-लयके साथ गाना आरम्भ होता है । अेक व्यक्ति यों गाअेगा :—

१. ञान कुलिक्कुम् कुलमल्लो
'अेट्टुमानूर' तेवर कुलम्
नी कुलिक्कुम् कुलत्तिन्टे
पेर चोल मारा ! ॥

जिस तालाबमें मैं नहाता हूँ अुसका नाम है 'अेट्टुमानूर' देवका तालाब । अरे, मार ! तेरे तालाबका नाम क्या है ? ।

दूसरा व्यक्ति जो दूसरी तरफ बैठता है वह यों गाअेगा :—

२. ञान कुलिक्कुम् कुलमल्लो
श्री वैक्कत्तु तेवर कुलम् ।
नी कुलिक्कुम् कुलत्तिन्टे
पेर चोल मारा :

मेरे नहाअे हुअे तालाबका नाम "वैकम" देशमें प्रतिष्ठित देवका तालाब । अरे ! मार ! तू कहाँ नहाता है ? अुसका नाम बता दे ।

अिस प्रकार जब आपसमें प्रश्न करने लगेंगे तब कोअी-न-कोअी अुचित अुत्तर देनेमें असमर्थ होगा । अुस समय अुसकी हँसी अुड़ाते हुअे निम्न लिखित पद गाया जाअेगा :

३. कण्डवर्क्क पिरन्नोने :
काट्टमाक्कान कटिच्चोने !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कटविल कल्याणि निन्हे
अच्चि अलयोटा ?
चिप्पम् चीप्पुम् चिरट्टयुम्
चिरट्टय्क्कल-तरिप्पणम् ।
वट्टमोत्त कुरिच्चियुम पतञ्ञा
कल्लुम् अिष्टमोत्तजनमोत्तु ॥
वट्टमिट्टु कुटिच्चप्पोल वट्टप्पट्टि ।
क्कूट्टम् वन्नु कीरिटुम नक्कि ॥

अरे हरामजादा ! तू वन बिलावसे दंशित नहीं ? घाटपर रहनेवाली कल्याणी तेरी औरत नहीं ? जत्था बाँधकर मछलीके साथ नारियलके छिलकेमें ताड़ी पीते समय तेरे ओठोंको कुत्तोंने नहीं चाटा है ?

खेतमें काम करनेवाले लोग "पुलयर" नामसे यहाँ पुकारे जाते हैं । ये अस्पृश्य माने जाते हैं । अधिकतर लोग अशिक्षित हैं । मनोरंजनके लिअे काम करनेके बाद रातके समय ये तरह-तरहके गीत गाते हैं ।

अिस गीतका भाव है कि अेक आदमीको साँपने डस लिया । यथा समय अिलाज न करनेके कारण वह मर गया ।

गीत

ञानिन्नलयोरु चोप्पनम् कण्टे;
पालपयित्तु चणन्कोटे वियुन्ते ॥

कल मैंने अेक सपना देखा । सुपारीके पेड़से दस पके पत्ते गिरे ।

पेय्यान्टेनिक्कोरु
पोयत्तम् पच्चि;

भ्रममें पड़कर मैंने अेक बेवकूफी की ।

पाच्चोरेण्णुम् चोल्लि
पयतीट्टम् तिन्ते
ञानुमेन्टलियनुं कलि
काम्मान् पेय्ये;
अविटे वच्चलियने
वेय मूखन तोट्टे
अविटुन्नेन्ट लियने
क्केयक्कोट्टुत्ते
अविटुत्ते वेयवारि
यविटे यिल्लाञ्ञु
अविटुन्नेन्टलियने
त्तेक्कोट्टुत्ते
अविटुत्ते वेयवारि यविटे
यिल्लाञ्ञु
अविटुन्नेन्टलियने क्कुयि
क्कोट्टुत्ते

बासी भात समझकर विष्टा (मल) खाअी । मैं अपने सालेके साथ खेल देखने गया ।

वहाँ पहुँचते ही मेरे सालेको साँपने डस लिया । वहाँसे मेरे सालेको पूर्वकी तरफ ले गया । विष-वैद्य वहाँ नहीं था । वहाँसे मेरे सालेको दक्षिणकी तरफ लेकर गअे । वहाँका विष-वैद्य भी वहाँ नहीं था । वहाँसे भी अुसे गढ़ेकी तरफ ले गया ।

तेक्क वटक्कायि क्कुयियङ्ङु वेट्टि
अविटुन्नेन्टलियने क्कुयियिलुम्वच्चे

अेक गढ़ा खोदकर अुसमें मेरे सालेकी लाश रखी ।

अेक वीर रस-प्रधान गीत नीचे दिया जाता है जिसका बड़ा प्रचार केरलके अुत्तर भागमें हुआ है । "अुण्णियार्च्चा" नामक अेक वीर तरुणी "तानूर" नामक अेक बाजारसे अपने पतिदेवके साथ मेला देखने जा रही थी । बाजारमें पहुँचते ही कुछ गुण्डोंने अुन्हें घेर लिया । गुण्डोंकी जमातको देखकर पतिदेव थर-थर काँपने लगे तो "अुण्णियार्च्चा" अुनसे कहती है—

पेण्णाय ञान विरटक्कुन्निल्ला;
आणाय निङ्ङल विरटक्कुन्नेन्ते ?

मैं, नारी होकर काँपती नहीं, पर तुम मर्द होकर क्यों काँपते हो ?

अितना कहकर वह वीर तरुणी गुण्डोंसे लड़नेके लिअे आगे बढ़ती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अरयुम् तलयुम् अुरप्पिक्कुन्नु ।
अरयीन्नुरुमि यटुन्तवलुम् ॥
ननमुण्ड नन्नायरयिल केट्टि ।
नेरिट्टुनिन्नलो पेणकिटावुम् ॥
अरिशम् चोटिच्चुपरञ्ञु । पेण्णुम्
आणु पेण्णवल्लान्त कय्यन्मारे;
अेन्नोटाशा निङ्ङलक्कुण्ड ।
तेंकिलेन्नुटे कय्युम्
पिटिच्चु कोलविन् ॥

अुसने कमर कसकर तलवार हाथमें ले ली। ओढ़नीका कछोटा बान्धकर सामना करनेके लिअे तैयार हो गअी।

तमककर बोल अुठी। अरे नपुँसक! यदि तुमको मेरी ओर मोह हो तो जरा आगे बढ़ो।

अेरिय दूषणं चोल्लियार्च्चं;
आलिल पोलेविर तुटङ्ङि
अंक क्कलि कोण्ड निन्नवलुम्
अटियीन्नु मुटियोलम् विरच्चु पोय ॥

"अुण्णियार्च्चा" ने गुण्डोंकी कड़ी निन्दा की और रोषके मारे वट वृक्षके पत्तेके समान काँपने लगी। वह चंडी देवीके समान कुपित दिखाअी पड़ी और सिरसे पैर तक काँपने लगी।

अेन्नालो नोक्कित्तटुत्तु कोलक;
पकिरि तिरिञ्ञोन्नु निन्नु पेण्णुम्
कुतिरप्पाच्चिल ओन्नु परञ्ञवलुम्,
ननमुण्डु वीशीहु निन्नु पेण्णुम्
अञ्ञूरुम् मुन्नूरुम् वीणु पेण्णुम्;
रण्डामतोन्नुमरिञ्ञवलुम्
पतिनट्टाले करत्तिल वेटक्कुन्नुण्ड
तोटुवोर कलर्य्ये करम् वन्नु वल्लो ।

"तो देखले, मेरे वारको कौन रोकेगा" अैसा कहकर वह अेक ओर खड़ी हुअी।

घोड़ेकी चालमें वह अिधर दौड़ी और अँगोछा फैलाकर ठहर गअी।

फिर युद्ध किया। गुण्डे धड़ाधड़ गिरने लगे। तीन, पांच, सौ (गिरे)। वह आवेशमें कहती है:—"मेरी अस्त्रशाला जितनी अूँची है अुतनी अूँचाअीमें तुम गुण्डे लोगोंकी लाशोंका ढेर लगा दूँगी।"

कहा जाता है कि सम्राट् महाबली अिस प्रान्तमें राज करते थे। अुस समय लोग सुखी और संपन्न थे। अुसका स्मरण करके लोग प्रस्तुत गीत गाते हैं। महात्मा गांधीजीने जिस राम-राज्यकी कल्पना की थी अुसका अनुभव महाबलीके राजत्वकालमें केरलके लोग करते थे।

मावेलि नाटु वाणीटुं कालम्
मानुषरेल्लारुमोन्नु पोले
आमोदत्तोटं वसिक्कुं कालम्
आपत्तार्क्कमोट्टिल्लातानुम्
कल्लवुमिल्ला चतियुमिल्ला
अेल्लोलमिल्लपोलि वचनम्
वेल्लि क्कोलादिकल नाजि कलुम्
अेल्लाम् कणक्किनु तुल्यमायि
कल्लप्परयुम् चेरुनाजियुम्
कल्लन्तरङ्ङल मट्टोन्नु मिल्ला

महाबलीके राजत्व कालमें सब अूँच-नीच भावनाके बिना रहते थे।

सब सुखी और प्रसन्न थे। किसीको कोअी तकलीफ नहीं थी। झूठ-फरेब कुछ नहीं। झूठी बातें कोअी नहीं करता था।

तराजू आदि नाप-तोलके साधनमें जरा भी कपट नहीं दिखाया जाता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाणभट्ट

--श्री मंगलकिशोर पांडेय

संस्कृत भाषाके प्रथम अुपन्यास कादम्बरीके प्रणेता बाणभट्ट अेक रससिद्ध साहित्यकार थे। अुनकी वर्णन-शैली अपूर्व है। वह न थकना जानते थे और न रुकना। अुनकी लेखनी मोती अुगलती थी। अेक-से-अेक बढ़-चढ़कर और बेशकीमत! 'हर्षचरित' और 'कादम्बरी' अुनकी दो अनमोल कृतियाँ हमें आज भी अुपलब्ध हैं। बाण सच्चे अर्थोंमें कलमके जादूगर थे। कादम्बरी जैसी अलौकिक कृतिकी रचना करनेवाला क्या सामान्य मानव हो सकता है? माना कि संस्कृतमें अेक-से-अेक काव्यरत्न विद्यमान हैं; परन्तु कादम्बरी निस्सन्देह अप्रतिम है। तभी तो मनीषियोंका कहना है कि बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्। कादम्बरी जैसे अनमोल गद्य-काव्यका आस्वादन करनेके लिअे महान् धैर्यकी जरूरत है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदीके शब्दोंमें "कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुरने कादम्बरी जैसी कथाके सुननेकी अिच्छा रखनेवालोंको सलाह दी है कि अेक कालका मधुलोभी यदि अन्यकालसे मधु-संग्रह करनेकी चाह रखता हो, तो वह अुसे अपने युगके आँगनमें बैठकर नहीं पाअेगा, अुसे भी अुसी कालमें प्रवेश करना पड़ेगा।" यह अेक सचाअी है जिसे हम प्रायः भूल जाते हैं। किसी युगकी कला, शिल्प, चित्रकारी, साहित्य अेवं संगीतका रसास्वाद करनेके लिअे हमें अुसी युगके आँगनमें पैठना होगा और जमकर वहीं बैठना होगा। हमें वह मनोवैज्ञानिक वातावरण प्रस्तुत करना होगा जो अुस कलाके रसास्वादनके लिअे अपेक्षित है। सबसे पहिले हमें अपने अन्तरमें श्रद्धा और विश्वासकी ज्योति जगानी होगी। तभी हम वर्णों, अर्थके समूहों, रसों और छन्दोंका आनन्द ले सकेंगे। हमें अुस क्रान्तदर्शी चित्रकारके साथ अुस कल्प-कविके साथ तादात्म्य स्थापित करना होगा और अुसकी तूलिकाका अनुसरण करना होगा क्योंकि वह अेक अैसा जादूगर है जो अेक वर्णके भीतर अिन्द्रधनुष्यके समस्त वर्णोंकी सुषमा भर देता है, अर्थ और अर्थान्तरोंका घटाटोप खड़ा कर देता है, रसोंकी अविरल-धारा बहा देता है! अुसका चित्रपट अितना विशाल है कि अुसमें समस्त प्रकृति—बन-बीहड़, अरण्य-अटवी, नद-नदी, गिरि-प्रान्तर, भूगोल-खगोल प्रतिबिम्बित हैं। अुसके कैनवासपर दृष्टिपात करनेसे अपने अन्तरमें कुछ अैसा ही अनुभव होता है जैसा हिमालय पर्वतके सामने खड़े होनेसे, महासागरके बीचमें जहाजके डेकपर खड़े हो चारों ओर नजर दौड़ानेसे, अथवा असंख्य तारा-मण्डलोंसे सुशोभित अनन्त आकाशकी ओर देखनेसे होता है! समस्त भूगोल-खगोलके अणुपरमाणुतकके सौन्दर्यको अपनी लेखनीमें समेटनेवाले अुस महापुरुषकी आत्मा कितनी विशाल होगी, अुसकी पर्यवेक्षण शक्ति कैसी तीव्र और अुसका हृदय कितना रसमय होगा!

अितना ही नहीं, बाणकी कृतियोंमें गुप्तकालीन कला और स्थापत्य भी मूर्त हो अुठा है। डॉ. वासुदेव-शरण अग्रवालके शब्दोंमें "अजन्ताके अेकाश्मक लयन-मण्डपोंमें लिखे चित्र अपने समकालीन भारतका जो समृद्ध रूप प्रस्तुत करते हैं, अुससे कम रूप-सम्पत्ति, शब्द और अर्थके द्वारा बाणमें नहीं है। बाणके ग्रन्थ भारतीय जीवनके चलचित्र हैं।" हर कलाकार, साहित्य-कार, चित्रकार अथवा स्थापत्यकार अपने युगका दर्पण होता है। अुसपर "पद्मपत्रमिवअम्भसा" वाली अुक्ति लागू नहीं होती। अजन्ताके चित्रकारोंने जिस चीजको पत्थरोंके हृदयको चीरकर अंकित किया है, खजुराहो और कोणार्कके शिल्पियोंने जिस वस्तुको अपने हथौड़े और छेनीके सहारे अमरत्व प्रदान किया है, कालिदास, बाण और भवभूतिने अुसी वस्तुको अपनी लेखनीके सहारे साकार किया है। अतअेव श्री वासुदेवशरण अग्रवालके ये शब्द महत्वपूर्ण हैं: 'अिन चित्रोंके सम्पूर्ण अर्थको समझनेके लिअे हमें अपने मनको पुनः अुसी युगमें ले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाना होगा जहाँ बाणके अनेक शब्दोंका अर्थ जो आज धुँधला हो गया है निश्चित और सुस्पष्ट था। अुन चित्रोंकी प्रत्येक रेखा विशेष–विशेष भावकी अभिव्यक्तिके लिअे खींची गअी है। अिस दृष्टिकोणके प्राप्त हो जाने-पर कविके लम्बे वर्णनोंसे ठिठकनेके स्थानमें हम अुनका अर्थ लगाकर पूरा रस लेना चाहेंगे। यही बाणको समझनेका यथार्थ दृष्टिकोण है।"

'हर्षचरित' के प्रारम्भमें सरस्वतीके वेश-विन्यासके वर्णनमें गुप्तकालीन मूर्तिकला मूर्त व स्फूर्त्त हो अुठी है। 'विन्यस्त वामहस्त किसलया', 'अंसावलम्बिना ब्रह्मसूत्रेण पवित्रीकृतकाया', 'सूक्ष्मविमलेन अंशुकेन आच्छादित शरीरा' 'स्तनमध्यबद्ध गात्रिका ग्रन्थिः', आदि शब्दोंमें गुप्त-कालीन स्थापत्यकला सजीव हो अुठी है। (डॉ. वा. श. अग्र-वाल: **'हर्षचरित-अेक सांस्कृतिक अध्ययन'** पर आधारित)

अुपर्युक्त अुद्धरणपर दृष्टिपात करनेसे अैसा लगता है मानों कथाकारकी लेखनीने स्थापत्य कलाकारकी छेनीका स्थान ले लिया है। दोनोंका लक्ष्य अेक है—अर्थात् अपने युगको मूर्त्त करना, अुसे वाणीका प्रसाद देना, किन्तु साधन भिन्न हैं। कालिदास और बाणकी अेक-अेक पंक्ति मानों सुन्दर पच्चीकारीका नमूना है। कालके अनन्त प्रवाहमें भी अुनका रंग तनिक भी धूमिल नहीं पड़ सकता; वरन् और भी निखरता जाता है!

'कादम्बरी' और 'हर्षचरित' में अैसे अनेक स्थल हैं जिनमें गुप्तकालीन वेशभूषा और परिधान अपने समस्त रंगों और वैविध्यके साथ मूर्त्त हुअे हैं। जैसे "रंगोंकी दृष्टिसे नीलांशुककी जाली मुँहपर डाली जाती थी। नीलांशुककी चादर (प्रच्छदपट) पलंगपर ढकनेके काम आती थी, पट्टांशुक अनुमरण करनेवाली सतीका मंगल चिह्न माना जाता था, मन्दाकिनीके प्रवाहकी भाँति सितांशुक व्रत पालनेवाली स्त्रियोंका वेष था, अिन्द्रायुध-जालवर्णांशुक (सतरंगी अिन्द्रधनुषकी छटावाला वस्त्र) अुस समय श्रेष्ठ माना जाता था जो बहुधा अजन्ताके चित्रोंमें मिलता है, रक्तांशुक जिसका शिरोवगुंठन मालती और चाण्डाल-कन्याके वेशमें कहा गया है, वर्णांशुकके अुदाहरण हैं। और भी कुचांशुक, मुक्तांशुक (मोतियोंका बना हुआ अंशुक); विसतन्तुमय अंशुक, सूक्ष्मविमल-अंशुक, मग्नांशुक, चीनांशुक, तरंगितअुतरीयांशुक, आदि विभिन्न प्रकारके अंशुकोंका अध्ययन अुत्तर-गुप्तकालीन संस्कृतिका अुज्ज्वल चित्र प्रस्तुत करता है। .....यह अैसी सामग्री है जो किसी शिलालेख या ताम्रपत्रमें तो नहीं लिखी है पर शताब्दियोंसे हमारे सामने रही है। बाणने समकालीन जीवनसे अपने वर्णन लिअे हैं। शिल्पी और चित्रकारोंने अुसी जीवनको कलामें स्थायी कर दिया है।" (वही)

यह ठीक है कि साहित्यकार और चित्रकार दोनोंने अपने-अपने ढंगसे अपने युगको अभिव्यक्त किया है लेकिन श्री अग्रवालके शोधसे यह पता नहीं चलता कि किससे-किसने अनुप्रेरणा प्राप्त की? अथवा, अुनका प्रेरणा-स्रोत कुछ और ही था। यदि अिस अुक्तिमें कुछ सच्चाअी है कि साहित्यकार अपने युगका पथ-प्रदर्शक होता है तो यह मानना पड़ेगा कि कालिदास और बाणके युगके चित्रकारों और स्थापत्यकलाकारोंने सम्भवतः अुनकी कमनीय कल्पनाको ही साकार करनेका प्रयास किया है। अथवा दोनोंने अपने युग-सत्यको मूर्त्त किया है। किन्तु युग-सत्य कोअी हवाअी वस्तु तो है नहीं। किसी युगका समग्र कलाकौशल, अुसकी समस्त अुप-लब्धियाँ, अुसकी समस्त विचारधारा, अुसकी समस्त चेतना—ये ही तो समवाय रूपमें युग-सत्य कहलाते हैं। तो क्या साहित्य और शिल्प, काव्य और स्थापत्य, संगीत और चित्र युग-सत्यकी अभिव्यक्तिमें अेक दूसरेके पूरक हैं? श्री अग्रवालकी कृति अिस सम्बन्धमें मौन है। सच्ची बात तो यह है कि पुरातत्त्वके गर्दोगुब्बारमें अतीतकी आत्मा बहुधा पकड़में नहीं आती। अिस सम्बन्धमें संस्कृतके अुद्भट विद्वान्, तथा 'राजतरंगिणी' के अंग्रेजी अनुवादक स्वर्गीय रणजीत सीताराम पण्डितके निम्नलिखित कथनकी ओर अिस लेखके पाठकोंका ध्यान आकर्षित करना समीचीन होगा: "archeology has indeed laid bare to us the secrets of the dead past but the past eludes pursuit in the dust of antiquarianism" अर्थात् अिसमें सन्देह नहीं कि पुरातत्त्वने मृत अतीतके रहस्य हमारे सामने खोलकर रख दिअे हैं लेकिन गड़ेमुर्दे निकालनेकी धुनमें अतीत पकड़में नहीं आता।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्तु बाणके अमृत-झरनोंका आस्वाद करनेके लिअे पुरातत्त्वकी धूलमें लोटनेकी आवश्यकता नहीं है। यदि कोअी द्रविड़-प्राणायामका आदी हो तो दूसरी बात है। अमृतके ये झरने भिन्न-भिन्न रूपोंमें बाणने अपनी अमर कृतियोंमें बहाअे हैं। जैसे, किसी नगर, अटवीके वर्णनमें, प्राकृतिक दृश्योंके चित्रणमें, नायक-नायिकाके वेश-विन्यासके आलेखनमें, आदि। अुदाहरणार्थ, यदि अुन्हें यह कहना हो कि प्रभात हो रहा है तो वे अुसे अत्यन्त सुन्दर ढंगसे कहेंगे, अपनी कल्पनाकी तूलिकाके सहारे अत्यन्त मनमोहक चित्रोंकी कतार खड़ी कर देंगे।

"गगने च कमलिनी-मधुरक्त पक्षसम्पुटे वृद्ध हंस अिव मन्दाकिनी पुलिनादपर जलनिधि तटमवतरति चन्द्रमसि, परिणत-रङ्कुरोमपाण्डुनि व्रजति विशाल-तामाशा चक्रवाले.....अशिशिर किरण दीधितिभिः पद्मराग शलाका सम्मार्जनीभिरिव समुत्सार्यमाणे गगन-कुट्टिम कुसुमप्रकरे तारागणे, सन्ध्यामुपासितुमुत्तराशा-वलम्बिनि मानससरस्तीरमिवावितरति सप्तर्षि मण्डले, तटगत–विघटितशुक्ति–सम्पुटविप्रकीरामिरुणकर-प्रेरणा-धोगलितमुडुगणमिव मुक्ताफल निकरमुद्वहतिधवलित पुलिनमुदन्वति पूर्वोत्तरे, विबुध शिखिकुले विजृम्भमाण-केशरिणि करिणी-कदम्बक-प्रबोध्यमान-समद करिणि क्षपाजल जडकेसरं कुसुम निकरमुदयगिरि-शिखरस्थितं सवितारमिवोद्दिश्य पल्लवाञ्जलिभिः समुत्सृजति कानने..... (कादम्बरी)

अर्थात्, प्रभात क्या हुआ, पद्म-मधुसे रंगे हुअे वृद्ध कलहंसकी भाँति चन्द्रमा आकाश-गंगाके पुलिनसे अुदास होकर पश्चिम जलधिके तटपर अुतर आया, दिग् मण्डल चितकबरे हरिणके रोयेंके रंग जैसा पाण्डुवर्णका हो गया, प्रभातकालीन सूर्यकी किरणें मानों पद्मरागमणिके झाड़ूके समान आकाशतलसे तारे-रूपी फूलोंको बुहारने लगीं। अुत्तर ओर अवस्थित सप्तर्षि-मण्डल सन्ध्योपासनाके लिअे मान सरोवरके तटपर अुतर आया, पश्चिम समुद्रके तीरपर सीपियोंके अुन्मुक्त मुखसे बिखरे हुअे मुक्तापटल चमकने लगे, मोर जाग पड़े, सिंह जमुहाअी लेने लगे, करिबालाअें मदस्रावी प्रियतम गजोंको जगाने लगीं, वृक्षगण पल्लवाञ्जलिसे भगवान् सूर्यको शिशिरसिक्त कुसुमावलि समर्पण करने लगे....." अितना ही नहीं, चित्रोंकी कतार बढ़ती चली जा रही है, अेक-से-अेक सुन्दर, स्वच्छ, कमनीय चित्रोंकी अेक गैलरी सज जाती है। जैसा कि पहले अुल्लेख किया जा चुका है बाण थकना जानते ही नहीं। अजस्रजलप्रवाहिनी सरिताकी भाँति अुनकी काव्यधारा अुद्दाम अेवं निर्बाध हैं। अूपरके प्रभात-वर्णनके सिलसिलेमें आगे चलकर कहते हैं "शिशिर बिन्दुको वहन करती हुअी, पद्म-वनको प्रकम्पित करती हुअी, परिश्रान्त शबररमणियोंके कर्णबिन्दुको विलुप्त करती हुअी, वन्य महिषोंके फेन-बिन्दुसे सींची हुअी, कम्पित पल्लव-राशि और लता-समूहको नृत्यकी शिक्षा देती हुअी, प्रस्फुटित पद्मपुष्पोंका मधु झराती हुअी, पुष्प-सौरभसे भ्रमरोंको सन्तुष्ट करती हुअी, मन्द-मन्द संचारी प्रभातवायु बहने लगी। कमलवनमें मत्त-गजके गण्डस्थलीय मदके लोभसे स्तुति-पाठक भ्रमर रूपी वैतालिक गुंजार करने लगे। वनचर पशु अितस्ततः विचरण करने लगे। सरोवरमें कलहंसोंका श्रुतिमधुर कोलाहल सुनाअी देने लगा। और अिस प्रकार समूची वनस्थली अेक अपूर्व महिमासे अुद्भासित हो अुठी।" (अनुवाद : **हजारीप्रसाद द्विवेदी**)

प्रभात-वर्णनके पश्चात् अब सन्ध्या-वर्णनका भी आनन्द लेवें : **"अचिर प्रोषिते च सवितरि शोक-विधुरा कमल-मुकुल-कमण्डलु-धारिणी हंस-सितदुकूल-परिधाना मृणाल-धवल-यज्ञोपवीतिनी मधुकर-मण्डलाक्षवलयम् अुद्वहन्ती कमलिनी दिनपति समागम-व्रतमिवाचरत्।"**

अर्थात् "अपने पति सूर्यके वियोगमें विह्वल कमलिनी मुकुलित कमल-पुष्प रूपी कमण्डलु धारणकर, श्वेत हंस रूपी दुपट्टा पहनकर, श्वेत-कमलनाल रूपी यज्ञोपवीत धारणकर, काले भौंरोंकी रुद्राक्ष-माला लेकर पतिसे मिलनेके लिअे मानों व्रत करने लगी।"

(कादम्बरी : अनुवाद : लेखक।)

'हर्षचरित' के आरम्भमें सरस्वतीके मुखसे शोण-नदकी अुपकण्ठ भूमिका वर्णन बाण कैसे मनमोहक शब्दोंमें करते हैं। शोणनदकी अुपकण्ठ भूमि गंगाकी छटाको भी मात देनेवाली है। मयूरोंके मधुर रवसे वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थान गुंजायमान है, लताद्रुमोंके फूलोंके पराग झड़कर जमीनपर अैसे बिछे हैं मानों मोटी चादर हो, फूलोंके सौरभसे मदमत्त हो भौंरोंकी पंक्ति अैसे गुंजार कर रही है मानों वीणाका स्वर हो। बाणके शब्दोंमें :

"सखि, मधुर मयूर विरुतयः कुसुमपांशु पटल सिकतिलतरुतलाः परिमलमत्त मधुपवेणी वीणा रणित-रमणीया रमयन्ति मां मन्दीकृत मन्दाकीनी द्युतेरस्य महानदस्योपकंठभूमयः।"

अैसे सुन्दर स्थानमें यदि सरस्वतीका मन रम जाअे तो अिसमें आश्चर्य ही क्या।

बाणकी गद्यशैलीके विषयमें प्रायः लोगोंकी भ्रान्त-धारणा बनी हुअी है। अैसी धारणा प्रायः अुन लोगोंकी है जिन्हें संस्कृत साहित्यका सम्यक् ज्ञान नहीं। अैसे महानुभावोंकी दृष्टिमें बाणकी गद्यशैली लम्बे-चौड़े, बिना ओर-छोरके क्लिष्ट वाक्योंकी पर्याय है। स्पष्ट ही अिसमें सच्चाअी नहीं है। बाणकी गद्यशैली तीन प्रकारकी है, अेक दीर्घ समासवाली, दूसरी अल्प समासवाली और तीसरी समाससे रहित (अुत्कलिका, चूर्णक, आविद्ध)। बाणने **'हर्षचरित'** के आरम्भमें स्वयं ही कहा है :

चूर्णकमल्प समासं दीर्घसमासमुत्कलिकाप्रायम्।
समासरहितमाविद्धं वृत्तभागान्वितं वृत्तगन्धि॥

'कादम्बरी' और 'हर्षचरित' से जो अुद्धरण अूपर दिअे गअे हैं, वे प्रथम दो शैलियोंके नमूने हैं; नीचेकी पंक्तियोंमें तीसरी शैली (आविद्ध) के नमूने दिअे जा रहे हैं :

परम भट्टारक महाराज हर्षवर्द्धनके बन्धु कृष्णने बाणके पास अपने दूत द्वारा सन्देश भेजा कि आप शीघ्र यहाँ (राजसभामें) आ जाअिअे क्योंकि किसी अीर्ष्यालु व्यक्तिने आपके विषयमें महाराजके हृदयमें नितान्त भ्रान्तिपूर्ण धारणाअें बैठा दी हैं। कृष्णका भेजा हुआ पत्र पढ़नेके बाद बाण सोच रहे हैं कि क्या करना चाहिअे :

"**किं करोमि। अन्यथा सम्भावितोऽस्मि राज्ञा। निर्निमित्तबन्धुना च सन्दिष्टमेवं कृष्णेन। कष्टा च सेवा। विषमं च भृत्यत्वम्। अतिगम्भीरं महद्राजकुलम्। नच तत्र मे पूर्वज प्रवर्तिता प्रीतिः, न कुलप्रमागता गतिः, नोपकारस्मरणानुरोधः, न बालसेवास्नेहः, न गोत्रगौरवम्, न पूर्वदर्शनदाक्षिण्यम्, न प्रज्ञासंविभागोप-प्रलोभनम्, न विद्यातिशयकुतूहलम्, नाकारसौन्दर्यादरः, न सेवाकाकुकौशलम्, न विद्वद्गोष्ठीबन्धवैदग्ध्यम्, न वित्तव्ययवशीकरणम्, न राजवल्लभपरिचयः, अवश्यं गन्तव्यम्।**"

अर्थात् अब मुझे क्या करना चाहिअे? अवश्य ही सम्राट्को मेरे विषयमें भ्रान्ति हो गअी है। मेरे अकारण स्नेही बन्धु कृष्णने आनेका सन्देश भेजा है। पर-सेवा सदैव कष्टदायक है। हाजिरी बजाना और भी टेढ़ा काम है। राज-दरबारमें बड़े खतरे हैं। मेरे पुरखोंको कभी अुस तरफ रुचि नहीं हुअी और न दरबारसे मेरा पुश्तैनी सम्बन्ध रहा, न पहले राजकुलके द्वारा किअे हुअे अुपकारका स्मरण मुझे आता है, न बचपनमें राजकुलसे अैसी मदद मिली जिसका स्नेह मानकर चला जाअे, न अपने कुलका ही अैसा गौरवमान है कि राजसेवा आवश्यक हो। न पहली मेल-मुलाकातकी ही अनुकूलता है; न यह प्रलोभन है कि बौद्धिक विषयोंमें वहाँ कुछ आदान-प्रदानका अवसर मिलेगा। न यह चाह कि सम्राट्से जान-पहचान बढ़ाअें, न वहाँ मिलनेवाले चारुसम्मानकी अिच्छा ही है, न सेवकों जैसी चापलूसी मुझे आती, न मुझमें वैसी विलक्षण चतुराअी है कि विद्वानोंकी गोष्ठियोंमें भाग लूं, न पैसा खर्च करके दूसरोंको मुठ्ठीमें करनेकी आदत है, न दरबार जिन्हें चाहते हों, अुनके साथ ही साँठ-गाँठ है। पर चलना भी अवश्य चाहिअे।" **(हर्षचरित)**

अुपर्युक्त अुद्धरण भी बाणकी ही शैलीका नमूना है। वस्तुतः बात अैसी है कि बाणने परिस्थितिके अनुकूल तीनों गद्य-शैलियों (अुत्कलिका, चूर्णक आविद्ध) का प्रयोग किया है। लम्बे-चौड़े वर्णनोंमें (जैसे, विन्ध्याटवी वर्णन, राजसभा वर्णन, जावालि वर्णन, अच्छोद सरोवर वर्णन) में अुन्होंने आवश्यकता-नुसार प्रथम दो शैलियोंका प्रयोग किया है, और सामान्य वार्तालापमें तीसरी शैलीका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाणने अपनी कल्पनाकी मनोहर तूलिकासे अैसे सुन्दर, सजीव अेवं मनमोहक पात्रोंकी सृष्टि की है जो अमर हैं। महाश्वेता, कादम्बरी, चन्द्रापीड़, कपिंजल और पुंडलीक ये भारतीय साहित्यके सारभूत तत्व सत्यं शिवं सुन्दरंके जीवन्त प्रतीक हैं। अच्छोद सरोवर और गन्धर्वलोक कविके सुन्दर मानसलोककी झाँकी प्रस्तुत करते हैं। द्विवेदीजीके शब्दोंमें "यह वह रसलोक है जहाँ कज्जलभरे नयनोंके कटाक्षपातसे नीलकमलकी पाँति बिछ जाती है। जहाँ प्रियाके कपोल देशपर पत्राली अँकानेवाले हाथ काँपते रहते हैं, जहाँ आम्रमंजरीके स्वादसे कषायित कण्ठ-कोकिल हृदय कुरेद देती है। अैसा अद्भुत वह लोक बाणभट्टकी भाषामें ही कहें तो यह रसलोक मदको भी मत्त बना देता है, रागको रंग देता है, नृत्यको नचा देता है और अुत्सवको भी अुत्सुक बना देता है।"

* * *

किन्तु बाणके अच्छोद सरोवर और गन्धर्वलोकका आनन्द वही ले सकता है जो अुनके युगके आँगनमें पैठनेकी क्षमता रखता हो--

जाह्नवी-मज्जन-प्रीतिं न जानन्ति मरुस्थिताः

पावस-गीत

—श्री नन्दकिशोर राय

पिहक रहे प्यासे चातकके प्राण हठीले रे!
घिरे हैं बादल गीले रे!

कालिदासके छन्द गा रही
मन्द-मन्द पुरवाअी
अलकाकी नारी-सी धरती
प्रिय-सुधिमें बौराअी
गगन-सरोवरमें फूले हैं शतदल नीले रे!
घिरे हैं बादल गीले रे!

दिशा सुन्दरी अिन्द्रधनुषकी
चूनर पहन लसी है
जुगनूके जादू-टोनेमें
तमकी साँस हँसी है
घन-पलकोंमें बँधे चाँदके स्वप्न रँगीले रे!
घिरे हैं बादल गीले रे!

तैर चली परतीके भींगे
नयनोंमें आशाअें
नाच अुठी जीवन बाँसुरिया
पर शत-शत मीराअें
चूम रही बूँदें धरतीके अधर लजीले रे!
घिरे हैं बादल गीले रे!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अत्तेबक्काल

—श्री शंकर कृष्ण तीर्थ

हमारा भारत विविध विचित्र जाति, भाषा, वेश, रस्म-रिवाजोंका महादेश है। यहाँ अूपर जो शीर्षक 'अत्तेबक्काल' दिया गया है वह भारतकी अेक जाति विशेषका परिचायक है। राष्ट्रभारतीके पाठकोंके ज्ञान पोषणार्थ अेवं मनोरंजनार्थ हम अुक्त जातिका संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत करते हैं।

बम्बअी प्रदेश गुजराती, मराठी, कोंकणी और कन्नड़ भाषाके बोलनेवालोंसे बना है। अत्तेबक्काल कन्नड़ प्रान्तकी अेक जाति है—बहुत थोड़ी संख्या है अिनकी। अिस जातिके लोग अंकोले और येल्लापुरके जंगलोंकी घाटियोंमें पाअे जाते हैं। 'अत्ते' शब्दका अर्थ बेंतका बना अेक टोकरा है, जिसे बोझा ढोनेके काममें लाया जाता है। अिसपरसे ही अिन लोगोंका यह नाम पड़ा है। अिनकी भाषा कन्नड़ और कोंकणीके मेलसे बनी है जिसे हममेंसे कोअी भलीभाँति नहीं समझ सकता अैसी विचित्र है अुनकी बोली। अिनके कुलदेवता वेंकटरमण हैं जिनका मन्दिर तिरुपतिमें है, जिन लोगोंके कुलदेवता अेक हैं, वे अेक ही वंशके समझे जाते हैं और अुनमें आदान-प्रदान नहीं होता। ये लोग पास-पास बने हुअे पेड़ोंकी डालियों और घास-पातके झोंपड़ोंमें रहते हैं। किसी-किसी घरमें बरोठा रहता है और सामने अेक वृक्ष लगा दिया जाता है, जिससे मालूम होता है कि गृहस्वामी अपनी जातिका मुखिया है। अिनके झोंपड़े अितने पास — अेक दूसरेसे सटे हुअे रहते हैं कि अेकमें आग लगनेसे दूसरेका बचना असम्भव हो जाता है। अगर अेक झोंपड़ा जल गया तो वे दूसरेके बचानेकी अिसलिअे कोशिश नहीं करते कि जब अेक जला तब दूसरा क्यों बाकी बचे और अेक आदमी सुखी और दूसरा दुखी क्यों रहे। आग बुझ जानेपर सब लोग मिलकर नअे झोंपड़े बनानेमें लग जाते हैं। अुनके झोंपड़ेमें प्रायः यह सामान रहता है—चटाअी, मिट्टीके बरतन, बाँसकी टोकरी, लकड़ीका पीढ़ा, सूपा, खूँटी और चावल कूटनेका मूसल। ये लोग पाले हुअे पशुओंका माँस नहीं खाते और शराब पीना या दूसरे किस्मके नशेकी वस्तुओंका, मादक द्रव्योंका सेवन करना बहुत बुरा समझते हैं। ये स्वभावके नम्र और परिश्रमी, मेहनत-मजदूरी करनेवाले होते हैं। ये पहले बेंतका कामकर अपनी जीविका चलाते थे; अब पान और अिलायचीके बगीचोंमें मजदूरी करते हैं। अिन्हें खासी मजदूरी मिलती है। कुछ अत्तेबक्काल अपने मालिक सम्पन्न ब्राह्मणोंके पशुओंको चराते हैं। ये अपने लिअे खेत नहीं जोतते। ये कभी-कभी अूँचे ब्याजपर ब्याह-शादीका खर्च चलानेके लिअे रुपये कर्जमें लेते हैं और जबतक रुपये अदा नहीं हो जाते तबतक अपने ऋणदाता महाजनके घरमें केवल भोजन लेकर काम करते हैं। औरत, मर्द, लड़के अत्तेबक्काल सबेरे सातसे बारह बजेतक और तीसरे पहर दोसे छह बजेतक मजदूरीमें लगे रहते हैं। बहुत कम रुपयेमें पाँच आदमी मिलकर अपना गुजर-बसर करते हैं। बहुत कम खर्चमें ये अपनी दुनियादारी चलाते हैं। अिनके मकानमें १० रु. और असबाबमें ५ रुपये खर्च होता है। ये अपने कुल-देवता वेंकटरमणको काली तुलसीके वृक्षके नीचे पधराते हैं और तिरुपति देवस्थानकी तीर्थयात्रा करने जाते हैं। तीर्थयात्री 'दास' कहलाते हैं और अुनका बड़ा आदर होता है। बड़ोंके घरमें प्रतिवर्ष अेक बार वेंकटरमण भगवानकी पूजाके लिअे 'हरिदिन' अर्थात् विष्णुका अेक महोत्सव सम्पन्न किया जाता है। अिनके दूसरे आराध्य देवता मल्लिकार्जुनका मन्दिर गोवामें है। नवम्बरमें वहाँ मेला लगता है। ये लोग दर्शन करने जाते हैं। आज तो गोवा हम सबके लिअे दुर्लभ हो रहा है। ये लोग अपने पूर्वजोंकी भी पूजा करते हैं। अिनके पितर रसोअी-घरमें चूल्हेके पास वेदीके अूपर अेक नारियलमें रहते हैं अैसा बताया जाता है। जून मासमें अपने पूर्वजोंके सम्मानार्थ ये लोग श्राद्ध-भोज देते हैं, जब प्रत्येक परिवारका अेक-अेक व्यक्ति आध सेर चावल, अेक नारियल और दो-चार आने पैसे अिस कामके लिअे ले जाता है। भूत-प्रेतपर अिन लोगोंका अटल विश्वास है। ब्याह-शादीमें या दूसरे किसी काममें ब्राह्मण-पुरोहितकी अिनको आवश्यकता नहीं पड़ती। रोग, बीमारी होनेपर ये झाड़-फूंक करनेवाले, जादू-टोना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करनेवाले अपने खानदानके मंत्र-शास्त्रीसे सलाह लेते हैं। अुस रोगको भूत-प्रेतकी बाधा समझते हैं। मंत्र-शास्त्री अुन्हें बतलाते हैं कि किस भूतने रोग अुपजाया और अुसकी शान्ति-शमनके लिअे बकरे या मुर्गेकी बलि चढ़वाते हैं। महीनेमें चार दिन स्त्रियाँ अशुद्ध समझी जाती हैं। घरमें किसीका जन्म अथवा मृत्यु होनेसे घरके सब लोग अेक दिन अशुद्ध रहते हैं अर्थात् सूतक मनाते हैं। धोबी अिन्हें शुद्ध करते हैं। यह जन्मके १४ वें दिन नवजात शिशुका नामकरण करते हैं और बड़े लड़केका मुँडन कराते हैं।

अत्तेबक्कालोंमें बाल्य-विवाह प्रचलित है। जब कोअी अपने लड़केकी शादी करना चाहता है, तब वह अपने सम्बन्धियोंके साथ थोड़ेसे पुष्प लेकर किसी चुनी हुअी लड़कीके पिताके पास जाता है। वह अुससे लड़कीका मूल्य निर्धारित करता है और अुसे दो पान और अेक सुपारी देता है। अिसके बाद लड़कीवाला वर-पक्षके लोगोंको भोज देता है। जब लड़कीकी सगाअी हो जाती है तब लड़केका बाप पुरोहितके पास पहुँचकर चार आने पैसे, अेक नारियल और अेक सेर चावल देता है। और विवाहका शुभ-मुहूर्त पूछता है। मंडप बनाते हैं, विवाहसे दो दिन पूर्व जाति-बिरादरीके लोग बुलाअे जाते हैं। विवाहके दिन सबेरे मंडपमें तीन दिनका भोजन रखा जाता है। अुसमेंसे अष्टमांश कुलदेवता वेंकटरमणके लिअे केलेके पत्तेपर अलग रखा जाता है। फिर वर-पक्षके दो-तीन मनुष्य कन्याके घर पान-सुपारी लेकर पहुँचते हैं और अुसके माँ-बापसे कहते हैं, कि वरकी बरात तैयार है। दूसरे दिन शामके वक्त, भोजनोपरान्त, वरपक्षके दो आदमी कन्याके घर दो पैसे और पान-सुपारीसे भरे हुअे दो थाल लेकर जाते हैं और कन्याके पिताको देवताकी भेंटके लिअे दे देते हैं। अिन थालियोंमें आठ-आठ पैसे भी रखे जाते हैं। वह सामग्री कुलदेवता वेंकटरमणके आगे रख दी जाती है और तब वरपक्षके लोग लौट आते हैं। अिसके बाद वरपक्षके दूसरे दो मनुष्य लड़कीके माँ-बापको अंगा और चादर देने जाते हैं। वर-कन्याको हल्दीका अुबटन लगाकर शीतल जलसे स्नान कराते और गीत गाते हैं। स्नान होनेपर कन्याके घर पहुँचकर वरका बाप बारहसे पचीस रुपये तक देता है। अिसके बाद लड़कीका पिता अपने हाथसे वर-कन्याकी गाँठ जोड़ देता है। वरका बाप लड़की और अुसके लोगोंको साथ लेकर बरातियोंके साथ अपने ठिकानेपर लौट आता है। वरके घर पहुँचनेपर लड़का और लड़की दोनों अेक परदेकी आड़में खड़े किअे जाते हैं। अिसके बाद परदा हटा दिया जाता है और कन्याका भाअी वर और कन्याका दाहिना हाथ मिला देता है तथा अुन दोनोंके अूपर पानी छिड़कता है। मामा वर-कन्याकी गाँठ जोड़ता है। मेहमानोंको भोजन कराया जाता है। वर-कन्या भी दिनभर भूखे रहकर अिसी समय भोजन करते हैं। भोजनके बाद कन्या-पक्षके लोग अपने घर वापस जाते हैं, तथा कुछ लोग वरके घर रहते हैं। दूसरे दिन यह रहे हुअे लोग वर-कन्याको लेकर कन्याके घर लौटते और भोजनादिसे सन्तुष्ट हो तीसरे दिन वापस चले आते हैं। जब वर लड़कीके घर जाता है तब वह फतुही, अंगा, दुपट्टा, रुमाल और खड़ाअू पहनता है। अेक हाथमें वह रंगीन रुमाल और नारियल लिअे और दूसरेमें अेक कटार, दो पान और अेक सुपारी रखता है। अिसके बाद अपने कुलदेवताका अलग रखा हुआ नारियल फोड़ा जाता है और बाँटकर खाया जाता है। जब लड़की अपनी अुम्रपर आती है तो वह अेक मास और चार दिन अलग रहती है। अिसके बाद अुसके कुलकी स्त्रियाँ अुसके सम्बन्धी या वरकी दी हुअी पोशाक पहनाती हैं और अुसकी गोदमें चावल और पान-सुपारी भरी जाती है। तब सम्बन्धी जन भोजन करते हैं। पहले स्त्रीके गर्भवती होनेसे अुसके मायकेके और सासरके लोग अुसे फूलोंसे सजाते हैं। वह नअी पोशाक धारण करती है। सम्बन्धी और मेहमान अुसकी गोदमें मिठाअी डालते हैं। वह अुस मिठाअीको खा लेती है।

जब अत्तेबक्कालोंमें किसीकी मृत्यु हो जाती है, तो सब मिलकर रोने लग जाते हैं। किसीकी अकाल मृत्यु होनेसे ये लोग दूसरे गाँवके रक्षकको अेक मुर्गा बलि देते हैं, जिससे भूत-प्रेत पास न आवें। अिनका विश्वास है कि भूत-प्रेत ही लोगोंको युद्ध, सर्पदंश, और जलमें डूबनेसे मार डालते हैं। मरे हुअे लोगोंके सम्मानमें ये अपनी जाति-बिरादरीके लोगोंको भोज देते हैं और जब तक पुत्र या दूसरे सम्बन्धी जीवित रहते हैं तब तक बराबर लोगोंको खिलाते रहते हैं। गाँवका मुखिया सामाजिक रीति-पद्धति, आचार-विचार सिखानेके लिअे सभा करता है और जो अुनके सामाजिक नियमोंके विरुद्ध चलता है अुसे वह आर्थिक दण्ड देता है। मुखियाको अधिकार रहता है कि वह किसीको भी जातिसे बाहर कर दे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कस्मैदेवाय... ..

--श्री रांगेय राघव

मेरा आधार किसको सहेगा
मेरा विस्तार किसमें बसेगा
कस्मै देवाय हविषा विधेम।

प्राचीन बेला
मैं कब अकेला
ढूंढूं अरे दूरकी बात मैं भी
कैसा विपिन और छाया अनींदी
जलती कहीं अग्नि निर्धूम प्रोज्ज्वल,
वह पूछता है वहाँ अेक कवि जो--
कस्मै देवाय हविषा विधेम।
अुसको दिखा है महत् सूर्यशशिके
नयन द्वारसे अण्डका रूप भेदी
है गर्भ जिसका हिरण्मय वही है
अणोरणीयान आत्मा अतीन्द्रिय
विश्वेदेवार्चनो दे रहा बलि
जीवन मरण प्रेतसे बाँधता है
अुसको मिली प्राणकी तृप्ति युगकी !

प्राचीन बेला
मैं कब अकेला
यह बात है और कुछ बादकी ही
चारों दिगंतर प्रलय वारि गरजा
वही अेक बालक मनोहर सलोना
अुसीमें चराचर हुआ व्याप्त अुसको
वह पा गया अेक था और मंजिल
अुसको मिली बुद्धिकी तृप्ति युगकी !

प्राचीन बेला
मैं कब अकेला
बीते पुनः कालके कुछ क्षणोंमें
कोदण्ड टंकार बोला गगनमें
कल्याण जगका धरा स्वर्ग-सी हो
यही नाद गूंजा नअी मुक्ति भरकर,
वह पा गया पंचकी धूलिका स्तर
अुसको मिली आत्मकी तृप्ति युगकी !
वह भी कभी अेक विकास ही था
कोमल कलीका था फूल बनना।

मध्यान्ह बेला
मैं अब दुकेला
भय, चेतना और दुखका सहारा
संवेदना बन गअी क्लांतिहारा
बस प्रीतिकी माधुरी गुनगुनाअी
सीमा हुअी खण्डिता, रूप जागे
मानव जगा, सत्यने रूप धारा
पहंचानने लग गया प्राण कारा
वह पा गया धूलिमें रस निरंतर
अुसको मिली साधना तृप्ति युगकी।

मध्यान्ह बेला
मैं अब दुकेला
छाया हिंदोली, लावण्य जागा
फिर हो गया संकुचित प्राण-प्रहरी
व्यवधानने चांदनीको निचोड़ा
शेफालिका हो गअी रक्तस्नाता
फिर माँगने हासका क्रय जगतमें
वह बाल हँसिनि तारा अकेली
बोली बड़ी भ्रांत बनकर नयनमें
पाया न तब वेग संवेग कोअी
जबसे भरा श्येन अूपर गगनमें
टँगा रह गया पंख तोले ठगा-सा।

मध्यान्ह बेला
मैं अब दुकेला
यों द्वेखता और कब तक रहूँगा
दमतक लिअे चंद्रका रात आअी
तारे बिखेरे बहुत फूल अुसने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गगन मौलश्री वृक्षका बन गया तल,
अधीरा विकल वासना कसमसाओ
कसे तार ऋतुके बजा वर्ष हारा
अुजाला निरंतर बना अंधकारा
पाओ न तब साँत्वना अिस हृदयने
आधार खोकर मिली शक्ति किसको !

अरे साँझ आओ
न मुझमें समाओ
हुओ व्याप्ति तन्मय साकार सीमा
निर्गुण हुओ चेतना अिस मनुजकी
पर बन गओ बंधिनी शून्य बनकर
अवतारणा फिर हुओ यों दुरूहा
अवसाद मनका लगा आप खाने
मधुके कलश हो गअे आप विषके
सकल यातना हो गओ चेतनारत
अुसको न पाओ कहीं गैल कोओ ।

अरे साँझ आओ
न मुझमें समाओ,
वही जो कि दिखता वही पूर्ण कैसे ?
नहीं दीखता जो अुसे चाहता क्यों ?
सुरासुर लगे भीम मंथन मचाने
हलाहल अमृतमें स्वयं मिल गया यों
बड़ी अेक मूर्च्छा हुओ व्याप्त सबमें
बोला तभी कवि कहाँ मार्ग बोलो
बोली मनुजकी कसक ढूंढ मुझको
मैं मृत्तिकामें पड़ी रो रही हूँ ।

अरे साँझ आओ
न मुझमें समाओ,
सँजोअे हुअे मृत्तिकाको यहाँपर
बहुत स्नेह ढाला शिखा भी जलाओ
नहीं किंतु आलोक पथपर समाया
यहाँ तक कि पथ दीपमें जा समाया
हुआ क्या यही पूछता रह गया मन
बोली मनुजकी विकल वेदना तब
हिमालय अुघारो नयनमें छिपा है ।

यही पूछता हूँ,
बताओ बताओ,
अभी भी न है स्रोतका बंद जीवन,
अभी बीजका रोम जीवंतही है,
विकल कौनसी रागिणी मैं बजाअूँ
किसे मैं सुनाअूँ किसे मैं रिझाअूँ ?
सभी गत युगोंके सुनहले रुपहले
मधुर स्वप्नका अेक वारिस बना हूँ,
युगोंके अनेकों अगन रन्ध्रसे मैं
शनैः चेतना-ज्योति बनकर छना हूँ
मुझे चाहिअे देवता अेक नूतन
कि जिसकी करूँ नित्य आराधना मैं
समय बाँध जिसके सुघर नूपुरोंको
बजे सिंधुओं-सा गगनके विवरमें
हहरते विपिन बाँसुरीसे अुठें बज
अकह रास हो चाँदनी फिर न डूबे
नया ही मनुज नव्य अुर हो सचेतन
यहाँ मृत्युको बाँध ले आप जीवन,
द्रिमिक नृत्य अहरह जगे चक्र भरमें
धरा गंधवतिमें अुठे नाद ज्योतित
अिसीसे यही कह रहा आज तुमसे
नहीं पंथ है अन्य कोओ यहाँपर
अनल, सामसे, जो पथिक आज आया
वही चेतनाका नया देवता है--
वही पूछता ही रहेगा निरंतर
मेरा आधार किसको सहेगा
मेरा विस्तार किसमें बसेगा
कस्मै देवाय हविषा विधेमः !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नअे काव्यका जन्म

--श्री शिवकुमार श्रीवास्तव

अेक झटकेसे
किसीने तोड़ दी है--
रेशमी डोरी--
अुमरकी साँसकी
जो जुड़ न पाती--
आज घायल क्रौंच-सी
सुकुमार मेरी कल्पना है--
अुड़ न पाती !
हाय ! किस सैयादने
काटे सुनहले पंख अिसके ?
आज है आँसू बहाती आरती--
रोते भजन, जैसे स्वजन !
चुप झाँझ बीन मृदंग है
करतालकी आहें असंख्यों
शंख सिसके !
यह हुआ क्या जो कि कपड़े फागने पहने
डुबाकर आज स्याहीमें ।
सहमकर स्तब्ध है विरहा
तबाहीकी गवाहीमें ।
अजब भयभीत है गारी--
कि आल्हा मुँह छिपाता है;
कि जैसे काफले आने लगे
फसली बुखारोंके ।
सजीली कजलियोंके गालपर
चाँटे तुषारोंके ।
हुआ कुछ अिस तरह जैसे--
कि गिरूआ चाट जाअे
लहलहाती गीतकी फसलें ।
यह हुआ क्या
गति पुरानी गैलपर--
जो मुड़ न पाती !
आज घायल क्रौंच-सी
सुकुमार मेरी कल्पना है
अुड़ न पाती !
कल्पनाकी साँसके भी पाँवमें
अब सत्यकी
जंजीर डाली है समयने !
मृतिकाके बन्धनोंको
है किया स्वीकार खुद ही तो हृदयने !
और अब आकाशकी रंगीनियोंसे
टूटनेसा लग गया रिश्ता !
सच कहूँ--अब कल्पनाकी
टूटती है साँस--
आहिस्ता !
दृगोंको तारिकाओंका
भुलावा छल न पाता है !
नया अंकुर मुझे बेहद लुभाता है !
नया अंकुर धराकी तोड़कर पर्तें--
अुठा है यों--
पुरानी रूढ़ियोंकी तोड़कर शर्तें--
नअी पीढ़ी अुठे जैसे !
अँधेरेसे अुजालेकी तरफ जाअे !
धरा ज्यों कण्ठभर गाअे--गगन गूंजे !
गगनके गीतसे धरती न हो बोझिल--
धराके गीतसे आकाश भरने दो !
अुठा है जो नया अंकुर
अुसे अुठने अुभरने दो ।
बिना अिस कल्पनाके
गीतका जीवन सँवरने दो ।
अगर है टूटती अब कल्पनाकी साँस
अुसको टूट जाने दो !
अरे ! ओ आदि कवि मेरे--
तुम्हें यह कल्पनाकी
क्रौंच-सी गति
प्रेरणा देगी --
तुम्हारी वेदना लेगी--
नया आकार
अुस संभाव्य युगके काव्यका--
कि जिसकी रूप-रेखासे
अभी परिचित नहीं कोअी ।
घड़ी है यह न मातमकी
सजीले गीत सोहरके अुठाने दो ।
अगर है टूटती अब कल्पनाकी साँस
--अुसको टूट जाने दो ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीतों भरा मन है !

--श्री देवप्रकाश गुप्त

गीतों भरा मन है।
कुछ अजब बन्धन है।
मैं हूँ किसीकी साँस
रूपाभवाली प्यास
ये स्वप्न ज्यों सेन्दुर
हर धड़कनें, नूपुर।
पथपर बिछी आँखें
बह रहा पाहन है।
गीतों भरा मन है।
कुछ अजब बन्धन है।
वह रूप था शोला
सैकड़ों चाँद जला
नीराजना, सुधियाँ
नीलिमाकी निधियाँ
है चान्दनी घायल
अनमना चिन्तन है।
गीतों भरा मन है।
कुछ अजब बन्धन है।
घन अमड़कर कहता
क्यों दुख न तू सहता?
घुटती विषैली अम्र
मैंने किया क्या जुर्म
पा पीर सौतेली।
बिंध रहा सावन है।
गीतों भरा मन है।
कुछ अजब बन्धन है।

गीत

--श्री पुरुषोत्तम खरे

नाच रही हैं आज, सरगके आँगन मेघनियाँ
झम-झम झड़ी लगी; अमरितकी बुँदियाँ ढरक रहीं
यह ऋतुका त्यौहार फुहारें ये पहली-पहली
अिस दिनके ही लिअे पुकारें भू-नभमें मचलीं
यह झोंकोंकी तान; जिया भर-भरकर गा ले री
मीठे-मीठे गान पियरवाके स्वरवाले री
बुझे प्राणकी जलन कि तनकी अगन नहा ले री
झींगुर बौराअे, नदियोंकी छतियाँ छलक रहीं।
झम-झम झड़ी लगी अमरितकी बुँदियाँ ढरक रहीं।
अिन दानी बूदोंको री सब अेक बड़े-छोटे!
जो न बाँटकर खायँ, पड़ें अुनके घरमें टोटे
जड़को रूप मिलेगा-चेतन जीवन झूमेगा
फसलोंका सिर अुठ-अुठकर सूरजको चूमेगा।
मूक अुमंगोंकी ढोलक, गम-गम गमकाले री
धरती थिरक रही, दूबोंकी अखियाँ फरक रहीं
झम-झम झड़ी लगी अमरितकी बुँदियाँ ढरक रहीं
व्यर्थ जिअे रे! अगर न अिन बुँदियोंकी तरह जिअे
अूँची साधें और नेहकी बाहें-खुली किअे
क्षुद्र अहम्‌का गगन तानकर अूँचे बहे सदा!
स्वेद बहाकर, माटीका ऋण, किया न अगर अदा
कन-कन भरो प्यारसे जैसे फूलोंकी डलियाँ--
जीवन खुलकर हँसे: कि जिसकी साँसें कसक रहीं
नाच रही हैं आज सरगके आँगन मेघनियाँ
झम-झम झड़ी लगी अमरितकी बुँदियाँ ढरक रहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्त अिन्द्रसिंह चक्रवर्ती

--श्री बनारसीदास चतुर्वेदी

"तुम्हारे यहाँ मिशनरी भावनाकी कमी है। मैं चाहता हूँ कि सम्पूर्ण गुजरातमें हिन्दी प्रचारक भर दूँ। ३०) महीनेसे ज्यादा मैं अभी नहीं दे सकता। पर मुझे हिन्दी-प्रचारक मिलते कहाँ हैं? महाराष्ट्रके युवकोंमें 'मिशनरी स्प्रिट' है। पटवर्धनको जानते हो? बी. अे, अेल-अेल. बी. है। १५) महीनेपर मेरे साथ काम कर रहा है। हिन्दी क्षेत्रमें वैसे आदमी कहाँ हैं?"

सन् १९२१ की बात है। महात्माजीने ये शब्द बड़ी हार्दिक वेदनाके साथ अपनी साबरमती तटपर स्थित कुटीमें कहे थे और ३५ वर्षबाद भी वे हमारे कानोंमें ज्यों-के-त्यों गूँज रहे हैं।

दरअसल हिन्दी जगतको मिशनरी कार्यकर्ताओंकी जितनी आवश्यकता आज है, अुतनी पहले कभी नहीं थी। आज हमारे लिअे गम्भीर आत्म-निरीक्षणका युग आ गया है। पद-प्रतिष्ठाका मोह, पाठ्यक्रममें पुस्तक लगानेकी लालसा, कृत्रिम तौरपर विज्ञापन पानेकी अभिलाषा और अपने-अपने छोटे-छोटे ग्रुप या गुट बनानेकी प्रवृत्ति ये भयंकर बीमारियाँ हमारे कार्य-क्षेत्रोंमें प्रविष्ट हो गअी हैं और कुछ माननीय अपवादोंको छोड़कर हमारे प्रतिष्ठित-से-प्रतिष्ठित कवियों तथा लेखकोंको भी अुन्होंने ग्रस लिया है। लोगोंको शिकायत है कि भारतमें रेगिस्तान बढ़ रहा है और दरअसल यह बड़ी भारी दुर्घटना है, पर अिससे भी अधिक खतरनाक चीज है हमारे बुद्धिजीवी समाजमें 'मिशनरी स्प्रिट' निःस्वार्थ सेवा-भावनाका अभाव, आदर्शवादिताका लोप। अिस रेगिस्तानमें नखलिस्तान लगानेकी जरूरत है।

सन्त अिन्द्रसिंह चक्रवर्ती अुन अल्पसंख्यक साहित्य-सेवियोंमेंसे हैं, जो वस्तुतः ३५ वर्षसे अिसी प्रकारका नखलिस्तान लगा रहे हैं। अुनके साधन अत्यन्त सीमित हैं। शायद अुन्हें मामूली हिन्दी पत्रकारका आधा वेतन भी न मिलता होगा, पर अर्थके प्रति अुन्हें कभी भी मोह नहीं रहा। अिधर पिछले तीन वर्षोंमें सन्तजीके निकट सम्पर्कमें आनेका सौभाग्य हमें प्राप्त हुआ है और हम बिना किसी संकोचके कह सकते हैं कि अपने विस्तृत साहित्यिक जीवनमें हमें अिन्द्रसिंहजीकी तरहके बहुत ही कम व्यक्ति मिले हैं। हमें यह देखकर आश्चर्य होता है कि हिन्दीवालोंने अथवा पंजाबी समाजने अैसे सत्पुरुषका यथोचित सम्मान क्यों नहीं किया। हम लोग अन्य प्रान्तोंमें हिन्दी प्रचारका ढिंढोरा तो खूब पीटते हैं, पर जो महानुभाव अिस यज्ञके असली याज्ञिक हैं, अुनकी सर्वथा अुपेक्षा ही हमसे बन पड़ती है।

हिन्दी-पंजाबी कोश

सन्त अिन्द्रसिंहजीने कम-से-कम ३०० पंजाबियोंको हिन्दी पढ़ाअी है। जो लोग समझते हैं कि पंजाबी तथा हिन्दीमें किसी भी प्रकारकी प्रतिद्वन्द्विता अथवा विरोध है अुन्हें सन्तजीके जीवनसे कुछ शिक्षा लेनी चाहिअे। अेक महापुरुषने साहित्यिकोंको 'आत्माका अिंजीनियर' बतलाया था। सन्त अिन्द्रसिंह वैसे ही अिंजीनियर हैं, जो हिन्दुओं तथा सिखोंके बीचकी खाअीको पाटनेमें दिन-रात लगे हुअे हैं।

वैसे तो अिन्द्रसिंहजी सन् १९१८ से ही लिख रहे हैं पर अुनका सबसे अधिक महत्वपूर्ण कार्य है हिन्दी-पंजाबी कोश, जिसमें ६०,००० हिन्दी-शब्दोंके सरल-सुबोध अर्थ पंजाबी भाषामें दिअे गअे हैं। आश्चर्यकी बात यह है कि अिस महत्वपूर्ण कार्यके लिअे अुनको केवल अेक ही सहायक मिले थे--श्री अमरनाथ शास्त्री। नियमानुसार सात-सात घण्टे बैठकर अुन्होंने तीन-तीन सौ शब्द प्रतिदिन निबटाअे और कभी-कभी तो यह औसत चार सौ शब्दोंका पड़ा। अुनकी अिस साधनाके परिणामस्वरूप पंजाबी भाअियोंके लिअे हिन्दीका अध्ययन सुगम हो गया है। लेकिन साथ-ही-साथ अेक लाभ और भी हुआ है--अेक लाख पंजाबी शब्द अिकट्ठे हो गअे हैं। अिस प्रकार यह यज्ञ दोनों भाषाओंके लिअे कल्याणकारी सिद्ध हुआ है। घाटेमें रहे बेचारे अिन्द्रसिंहजी, जो अत्यधिक परिश्रमके कारण अपना स्वास्थ्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही खो बैठे ! डाक्टर गंडासिंह (डाअिरैक्टर, पंजाबी विभाग और पुरातत्व) ने भूमिकामें लिखा है—

अिस कोशकी तैयारीका सेहरा सन्त अिन्द्रसिंह चक्रवर्ती जनपदीय भाषा-विशेषज्ञ, महकमा पंजाबीके सिर है जिन्होंने अिस कामको महज सरकारी ड्यूटी ही नहीं समझा, बल्कि दिन-रातके परिश्रमसे अिसे शीघ्राति-शीघ्र सम्पूर्ण करनेका प्रयत्न किया। अिनकी यह लगन और मेहनत बहुत श्लाघनीय है और अिसी तरह पं० अमरनाथ भी, जिन्होंने अिनकी सहायता की है, प्रशंसाके पात्र हैं।

यदि सन्तजीने केवल यही कार्य किया होता तो वह भी अुनकी कीर्तिको चिरस्थायी बनानेके लिअे पर्याप्त था, पर अुन्होंने अनेक ग्रन्थोंकी रचना की है। कुछके नाम यहाँ दिअे जाते हैं—(१) पूर्व पश्चिम (नाटक), (२) प्रीत पैगम्बर (नाटक), (३) शूद्रका बलिदान, (४) राष्ट्रभाषा, (५) शाही कैदी,* (६) पटने शहर विरवे, (७) फुटकल नाटक, (८) नामधारी अितिहास भाग १, (९) बीतराग, (१०) सतनाजा (कहानियाँ, अेकांकी, निबन्ध) (११) भोन्दू प्रबोध, (१२) सुधारक, (१३) अम्मी, (१४) पंथकी जीत, (१५) जुआअी भाअी अित्यादि।

सन्तजीकी हालकी रचना 'गोविन्द रामायण' अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह सिखोंके दसवें गुरु श्री गोविन्द-सिंहजी महाराजकी गोविन्द रामायणकी टीका है और अुसका सम्पादन भी है।

सन्तजीने अेक अुल्लेख-योग्य कार्य और भी किया है—वह है अपने पुस्तकालयका निर्माण। अुनका निजी पुस्तकालय काफी बड़ा है। वह केवल प्रदर्शनीकी चीज नहीं, वह अुनके स्वाध्यायका स्थान भी है। पुस्तकोंसे अुन्हें अुतना ही प्रेम है जितना किसी माताको अपने पुत्रसे होता है और अिस संग्रहके लिअे सन्तजीको अपना पेट काटकर पैसा-पैसा बचाना पड़ा है। वैसे सन्तजी अत्यन्त गम्भीर व्यक्ति हैं, पर अुन्हें हास्य-रससे बहुत प्रेम है और पंजाबीमें अुन्होंने हास्यरसके अनेक नाटक भी लिखे हैं।

सन्तजी संघर्षोंके बीच पले और अुनका जन्म ही संघर्षोंके बीच हुआ था (नामधारी सिखोंके बलिदानकी कथा कौन नहीं जानता ?), लेकिन दुर्भाग्यकी बात यह है कि देशके स्वाधीन हो जानेपर भी सन्तजीके जीवनके संघर्षोंका अन्त नहीं हुआ ! कलमका यह मजदूर अब भी मामूली मजदूर ही बना हुआ है, जिसे विश्राम नामकी कोअी चीज मयस्सर ही नहीं।

नामधारी सम्प्रदायके लिअे सन्तजीने क्या नहीं किया ? अुसके अन्वेषक, प्रचारक और साहित्यिक पंडेके रूपमें अुनकी कीर्ति चिरस्थायी रहेगी पर सन्तजीमें साम्प्रदायिकताका नामोनिशान नहीं। जितना प्रेम अुनके हृदयमें अपनी पंजाबी भाषाके प्रति है अुतना ही हिन्दीके प्रति भी।

सन्तजी कोरमकोर साहित्यिक ही नहीं। अुन्होंने देशके स्वाधीनता-संग्राममें भी भाग लिया था और अुसमें अुन्हें काफी आर्थिक हानि भी अुठानी पड़ी थी। १९३५-३६ में अुन्होंने 'प्रजामित्र' नामक पत्र भी निकाला था और कुछ दिनोंतक पटियाला प्रजामंडलके प्रधानमन्त्री भी रहे थे। 'सतयुग', 'प्रीत सैनिक', 'विहार-सुधार' और 'जीवन-प्रीत' नामक पत्रोंका भी अुन्होंने सम्पादन किया था।

सन्तजी केवल नामसे ही नहीं गुणोंसे भी सन्त प्रकृतिके हैं—स्वभावसे सर्वथा सरल और बिलकुल निष्कपट। सबसे बड़ी खूबी अुनमें यह है कि वह दूसरों-पर विश्वास करते हैं और धोखा खूब खा सकते हैं ! सन्तजीको यशकी लालसा नहीं। रूखी-सूखी खानेको मिल जाअे, सद्ग्रन्थ अध्ययनके लिअे और कभी-कभी साहित्यसेवियोंका सत्संग भी—बस अिसीसे वह सन्तुष्ट रहते हैं।

राजनीतिक क्षेत्रोंमें कोअी भी पंजाबियोंका प्रतिनिधित्व करे, साहित्य अकादमियोंमें किसीको भी गौरव मिले, पर पंजाबी तथा हिन्दीकी आत्माको मिलानेका पुण्यकार्य करनेवालोंमें सन्त अिन्द्रसिंह चक्रवर्ती अग्रगण्य हैं। विज्ञापनकी दुनियासे कोसों दूर रहनेवाला यह तपस्वी साहित्यिक वन्दनीय है, अभिनन्दनीय है और अुसके सम्मुख हम नतमस्तक हैं।

---

* सन्तजीके 'शाही कैदी'को भदन्तजीके माध्यमसे राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धाके हजारों 'कोविद'के परीक्षार्थी और प्रचारक-शिक्षक जानते हैं।—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वात्सल्य और पारिवारिक जीवनके कवि : पंडित माखनलाल चतुर्वेदी

: प्रो० श्रीकान्त जोशी :

['भारतीय आत्मा' पंडित माखनलाल चतुर्वेदी महाश्रेष्ठ साहित्यदेवता हैं । श्रद्धेय चतुर्वेदीजीका समस्त जीवन "मुझे तोड़ लेना वनमाली अुस पथपर देना तुम फेंक । मातृभूमिपर शीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक"—'पुष्पकी अभिलाषा' शीर्षक कविताकी अिन पंक्तियोंमें निहित है । क्रान्तदर्शी कविने जीवनभर त्याग, बलिदान और अुत्सर्गके ही गीत गाअे हैं । अुन तमाम गीतोंमें मातृभूमि भारतके प्रति व्यक्तीकृत भक्ति-अनुरागमें सरस सर्वोत्कृष्ट सुगन्ध भरी हुअी है । पंडितजीकी कविता राष्ट्रदेवताकी पूजा है । वह युगके गायक हैं और अपने जीवित कालमें ही अुन्होंने अपनी स्वर्गादपि गरीयसी जननी जन्मभूमि भारतको सम्पूर्ण बन्धनमुक्त देखा और माताके अुच्च अुन्नत मस्तकपर शुभ्र शुचि श्वेत हिमकिरीटिनीका मुकुट ! यों वे छलिया साँवलिया वृन्दावन-विहारी श्रीगोपालके ही अनन्य अनुरागी हैं और अुन्हें माताका हृदय मिला है जिसमें ममता, श्रद्धा, करुणा, प्यार और परदुःखकातरता, वत्सलताका निर्मल स्रोत बहता है । कविने मातृ-हृदयकी सुन्दर लोरियाँ भी गाअी हैं । प्रो. श्री जोशीजीसे माखनलालजीकी लोरियाँ सुनिअे ।

—सम्पादक]

वात्सल्य या स्नेह वात्सल्य-रसका स्थायी भाव है । अिस रसके आलम्बन पुत्र-पुत्री आदि बालगोपाल ही हैं व अुनकी क्रीड़ाअें जैसे पलक मूँदना, ओठ फड़काना, नाचना, मुस्कुराना, ठुमुक-ठुमुक थिरकना, ताली बजाना आदि अुद्दीपन विभाव हैं । स्नेहसे देखना, लिपट जाना, चूम लेना अनुभाव हुअे और हर्ष, गर्व आदि संचारी भावोंका निर्माण करते हैं ।

वात्सल्यको रस माननेके सम्बन्धमें आचार्योंमें पर्याप्त मतभेद रहा है । कुछ तो अिसे भाव-मात्र मानते हैं और भावदशा रसदशाकी बहुत निम्न अवस्था है । फिर भी आजकल वात्सल्यको पृथक रस-व्यक्तित्व देनेवाले समीक्षकोंकी संख्या बढ़ती जा रही है । सूरके अमर काव्यको पढ़कर वात्सल्यको श्रृंगार रसके अन्तर्गत रखना और अिस प्रकार अिस रसके स्वतन्त्र व्यक्तित्वको अमान्यता देना बहुत ही मुश्किल समझना चाहिअे ।

हिन्दी काव्यमें सूरके बाद रीतिकालमें और अुसके भी पश्चात्के भारतेन्दु व द्विवेदी युग तथा छायावादी युगमें वात्सल्यका मुक्त-स्वरूप न कुछके बराबर दिखाअी देता है । मैथिलीशरणजी गुप्तके प्रबन्ध काव्यों (जैसे यशोधरा) आदिमें अवश्य अिस रसको प्रासंगिक स्थान प्राप्त हुआ है । पर यह तय है कि शुद्ध वात्सल्यकी अनुभूतिसे प्रेरणा लेकर कविता लिखनेवाले परिभू: अिस युगमें अुत्पन्न नहीं हुअे । पता नहीं यह देशके लिअे दुर्भाग्यकी बात है या सौभाग्यकी । कौन कवि है जिसने माँकी लोरियोंके राजदूत भेजकर नींदको निमन्त्रित नहीं किया होगा, कौन है जिसने बचपनमें माटीसे मुख नहीं भरा होगा और कौन है जिसने बड़े होकर अपने ही आँगनमें रुनझुन-रुनझुन करते हुअे, किलकारी मारते हुअे, लुकते-छुपते अपने ही बालकुमारोंको न देखा होगा ? अपवाद छोड़ो । कौन है जिसने वर्डस्वर्थकी भाषामें शिशुका अीश्वरत्व, सारल्य, चांचल्य, और नटखटपन न निहारा हो और अपने आपको अभिभूत होनेसे रोकनेमें सफलता प्राप्त की हो ? यह सब होते हुअे भी हमें आधुनिक युगमें जाने क्यों कोअी अैसा स्वयंभू दृष्टिगत नहीं होता जो वात्सल्यकी भागीरथीको पितृत्व या मातृत्वके विराट हृदयाकाशसे काव्यकी भूमिपर लानेका भगीरथ कार्य करता ?*

पं० माखनलाल चतुर्वेदी अुन अिने-गिने कवियोंमें शायद अेकमात्र अैसे गायक हैं जिन्होंने राष्ट्र अभ्यर्थना, अीशाराधना, स्वातन्त्र्य अुच्चारणाके सम्मिलत काव्य

---

*स्वर्गीया सुभद्राकुमारी चौहान व कविवर दिनकर आदिने अिस ओर अवश्य कुछ प्रयत्न किअे हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्गपर वात्सल्यको भी अपनी पगडंडी निर्माण करनेका दुर्लभ अवसर प्रदान किया है। पगडंडी सूक्ष्म होनेपर भी अनुभूतिकी गहराअी और सूझोंकी रंगीनियोंने अुसे चाँदीकी चमचमाती रौनकसे अभिषिक्त कर दिया है। अुनके काव्यके राजपथमें यह पगडंडी अपनी चमक अपनी रौनक और अपनी सत्ताकी मुक्त स्वच्छंद घोषणा करती हुअी प्रतीत होती है।

माखनलालजीकी अिन कविताओंमें भी अुनकी कविताओंका सर्वोत्कृष्ट गुण 'अनुभूति' ही बड़ी मार्मिकताके साथ प्रकट हुआ है। यह अनुभूति बड़ी जानदार है। यह बौद्धिक अनुभूति नहीं; अुनके हृदय-अुदधिको अुद्वेलित कर निकली हुअी अमृत धारा है। यह हृदयसे सरल बातचीत है। बच्चोंकी बात अटपटी भी सीधी होती है, तुतली भी मीठी होती है, अनसँवरी भी खूबसूरत होती है। चतुर्वेदीजीकी अिन अमूल्य रचनाओंमें यह सीधापन, यह मिठास, यह खूबसूरती, खूब जी भरकर है। माँके दिलकी अनुभूति, माँकी बेटेके प्रति रागात्मकता, माँकी शिशुके प्रति सदा अतृप्त रहनेवाली अुद्दाम आसक्तिका अिससे सुन्दर क्या चित्रण होगा कि :

रुनझुन करते दोनों आअें
यशुदा सुत, मम लाला
मैं तो प्रथम गोदमें लूँगी
अपना प्रसव-कसाला।

मैं अिन पंक्तियोंपर आसक्त हूँ। अिन पंक्तियोंमें माँका शुद्ध स्वार्थ है पर क्या स्वार्थकी यह शुद्धि ही मातृत्वकी सबसे बड़ी संपत्ति नहीं है? अेक तरफ कृष्ण स्वयं हैं, दूसरी तरफ माँका पुत्र है, माँका लाडला है। अेक तरफ भगवान हैं, वे भगवान जिनकी देहरीपर सिर पटक-पटककर अिसी छौनेकी प्राप्तिके लिअे न जाने कितनी मान-मनौतियाँ अिसी माँने की होंगी, वे प्रभु जो वर-दाता हैं और अिस पुत्रके समान न जाने कितने पुत्रोंकी सृष्टि कर सकते हैं; वे अीश्वर जिन्होंने अिस पुत्रको ही नहीं अिस पुत्रकी माँको भी जन्म दिया है, वे निराकार और साकार जो सारी समष्टिके सर्वेसर्वा नियामक, नाश और निर्माणकी दो अँगुलियोंपर सारा विश्व नचाने वाले हैं और दूसरी ओर है माँका अबोध, अज्ञानी, अशक्त, और अकिंचन बालक ये दोनों 'विराट और सूक्ष्म' यदि साथ-साथ आवें तो मां है कि निश्शंक कह अुठती है,

"मैं तो प्रथम गोदमें लूँगी अपना प्रसव-कसाला" कितनी सीधी पंक्ति है पर कितने बड़े सत्यकी कितनी गहरी चुभन है अिसमें?

अैसी पंक्तियोंका निर्माण सच पूछा जाय तो पं० माखनलाल चतुर्वेदी ही कर सकते हैं, अुनका जीवन ही कुछ अैसा रहा है कि अेक साथ अुन्होंने अपने तनके परिवारका ही नहीं अपितु अपने देशके परिवारका भी मातृत्व और पितृत्व भोगा है। सचमुच अुन्होंने अिस देशको अेक बड़ी जानदार पीढ़ी दी है, जिसने अेक नअी परम्पराको जन्म दिया है वह जिसका प्रकाश भविष्यके अंधकारको शायद आज ही से चीर रहा है। यह प्रकाश सूरजकी किरणोंके साथ गूँथ दिया गया है। शायद यही कारण है कि स्वर्गीया सुभद्राकुमारी चौहान अुन्हें 'मां' कहकर संबोधित करती थीं और 'माता' कविताको तो पढ़कर वे आँख मींच कर मंत्र मुग्ध-सी कह अुठी थीं 'यह अवश्य मांने लिखी होगी।''

शास्त्रीय दृष्टिसे देखा जाय तो वात्सल्य रसका पूर्ण परिपाक पं० माखनलाल चतुर्वेदीकी अिन कुछ थोड़ी-सी रचनाओंमें ही अनुभव किया जा सकता है। आलम्बनकी अुद्दीप्त और अनुभावमयी-व्यवस्थाका चित्रण अिन पंक्तियोंमें देखिअे—

धूल लिपटे हुअे हंस हंसके गजब ढाते हुअे,
नंदका गोद यशोदाका दिल बढ़ाते हुअे,
दोनोंको देखता, दोनोंकी सुध भुलाते हुअे,
बाल घुंघरालोंको मटकाके सर नचाते हुअे
नंद जसोदा, जो वहाँ बैठे थे बतलाते हुअे
सांवला दीख पड़ा हंसता हुआ, आते हुअे।

कितनी सुन्दर फोटोग्राफी है। प्रत्येक क्रीड़ा आँखोंके आगे करवट लेती है, प्रत्येक अनुभव मनकी भावुकताको अुभारता है। बालोंको—घुंघराले बालोंको मटकाना तो गजब है। अिसी सिलसिलेमें कुछ पंक्तियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और परखी जा सकती हैं। हुआ यह कि कृष्णको आता हुआ देखकर नंद और यशोदा दोनों ही अुन्हें चूमनेको बेचैन हो रहे थे। कृष्ण-कृष्ण ठहरे, पहले ही अिस बातको भाँप गअे, फिर क्या था। देखिअे :

पाया नजदीक, चूमनेको बढ़ पड़े दोनों,
प्यारका जोर था, अेसे अुमड़ पड़े दोनों,
कान्हने धोखा दिया, ताली बजा, पीछे खिचा,
जोरसे बढ़ते हुअे सरसे लड़ पड़े दोनों।

क्यों, आया न मजा ?

मां कहती है 'लल्ला, तू बाहर न जाना कहीं' लल्ला कहता है 'क्यों मां' ?

मां कहती है :

डायन लख पाअेगी
लाडले, नजर लग जाअेगी।

यह 'नजर लग जाअेगी' कविता का प्रारम्भ है। अिस रचनामें बच्चोंकी कौतूहल बुद्धि, जिज्ञासा और आत्माभिमानका बड़ा ही सरस चित्रण हुआ है। बच्चा पूछता है मां, तारे हैं, मालाके मोती हैं, बेलाके फूल हैं, अिन्हें नजर क्या नहीं लगती ? मां भी बड़े सुन्दर अुत्तर देती जाती है, पर बच्चा कुछ तेजस्वी प्रतीत होता है और शायद मांकी बात अुसे कुछ बहुत अनुकूल नहीं प्रतीत होती, सो अन्तमें वह कहता है :

ना ना मां मैं क्यों हारूंगा,
मां मैं किससे क्यों हारूंगा ?
मैं दृढ हूं तनमन वारूंगा
नजरोंकी नजर अुतारूंगा।

देशको पराधीनताकी नजर लगी थी सो तो अुतर गअी, मेरा अन्दाज है यह बच्चा देशकी भुखमरी, बेकारी और घूंसखोरीकी नजर अुतार कर ही दम लेगा।

वात्सल्यके आश्रय-पक्ष अर्थात् मां व पिताके हृदयका भी बड़ा ही मार्मिक चित्रण माखनलालजीकी कुछ रचनाओंमें किया गया है। मां-बापके मनमें अुठने वाले स्मृति, अवसाद, आकांक्षा तथा अुल्लास आदि भावोंकी हृदयस्पर्शी अभिव्यंजना मनको काफी समय तक भावमग्न रखती है।

बच्चा बिछुड़ गया है, मां अेकाकिनी है, संभव है बच्चा बड़ा होकर या तो किसी अन्य स्थानपर विद्या अध्ययनके लिअे गया है या जाने कहाँ गया है ? पर मांके जीकी अवस्था तो देखिअे। स्नेहीके बिछुड़नेपर अुसकी सारी क्रीड़ाअें सहज ही स्मृतिमें चकाचौंध मचाती हैं। मां भी सोचती है।

वे भी दिन थे, जब कुटियामें छवि छिटकाते आते थे,
छन मुस्काते, छन सकुचाते, छनमें शोर मचाते थे,
जिस पथसे जानेसे रोकूं अुसमें हठकर जाते थे,
बहुत मनानेपर हे जीवन, कुछ थोड़ा-सा खाते थे।
अिन्हीं भुजाओंमें ले ले
मुख चूम-चूम झांकी-झांकी
सुध-बुध भूली रही, देखकर वह चितवन बांकी-बांकी।

अुपर्युक्त पंक्तियोंमें स्मृतिजन्य अवसादकी बड़ी ही निष्कपट अभिव्यक्ति है। अभी अुनकी 'रे मुझको कहते हैं माता' कविताकी चर्चा मैं अूपर कर चुका हूं, अिस लेखको लिखते हुअे अुस रचनापर कुछ विशेष रूपसे कहना अत्यन्त आवश्यक प्रतीत होता है। वात्सल्यसे सम्बन्धित विश्व-काव्यके अितिहासमें बे-झिझक अिस कविताको स्थान मिले तो मुझे शायद आंशिक आश्चर्य भी नहीं होना चाहिअे। पूरी रचना माँका हृदय रामायणके पृष्ठोंका अुद्घाटन करती हुअी अेक वेगवती सरिताकी भाँति हृदयके कगारोंको सराबोर करती हुअी दूर तक चली गअी है। असलमें माँका मातृत्व तो शिशुके जन्मसे ही प्रारम्भ होता है। अतः वह कहती है—

मेरे जीवनका यह है
नव श्री गणेश प्यारा-सा

बच्चा माँके सम्मुख खेल रहा है। माँको लगता है यह शिशु क्या मैं ही नहीं हूं ? लोग कहते हैं गया समय लौटकर नहीं आता। कैसे झूठे लोग हैं ? सच तो यह है कि—

बच्चा बना बुढापा मेरा सम्मुख खेल रहा है
मेरा जीवन, मेरे चुम्बनकी झड़ झेल रहा है।
गया समय, आता न लौटकर मैंने झूठा पाया
रूठा भूत, भविष्य लाल बन गोद खेलने आया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन बीतते हैं और माँका लाड़ला बड़ा होता जाता है। प्रतिक्षण जो अुम्रके पैर बढते हैं तो माँको कुछ अिस प्रकारकी अनुभूति होती है :

माता हूँ, मैंने देखा वह पंजों तक बढ़ आया,
लेटा-लेटा वहीं गोद लेनेको था चिल्लाया,
फिर घुटने तक बढ़ा और फिर कमर लिपटते दीखा,
फिरे अुसके कारागृह, मेरे पेट तलक वह दीखा।
मैंने जाना, हरि आया है, जब कि हृदय तक आया,
कंधों तक आया, कंधोंका बोझ अुतरता पाया।

मेरी अिच्छा होती है यह सम्पूर्ण रचना अुद्धृत कर दूं। पर यह शायद ठीक नहीं होगा।

अभी-अभी मार्च १९५६ की 'नअी धारा' में प्रकाशित 'बेटीकी बिदा' शीर्षक अेक अत्यन्त महत्वपूर्ण रचनाका अुल्लेख अिस लेखको समाप्त करते हुअे और किया जा सकता है। यह कविता बेटीकी बिदापर भावुक पिताकी मर्म वेदना है। अुसे लगता है :

आज बेटी जा रही है,
मिलन और वियोगकी दुनियाँ नवीन बसा रही है।
अुभय-दिशि कादम्बिनी अपना अमृत बरसा रही है
आज बेटी.....

वह सोचता है :

यह क्या कि अिस घरमें बजे थे, वे तुम्हारे प्रथम पैंजन,
यह क्या, कि अिस आँगन सुने थे, वे सजीले मृदुल रुनझुन,
यह क्या कि अिसी वीथी तुम्हारे तोतलेसे बोल फूटे
यह क्या कि अिस वैभव बने थे चित्र हसते और रूठे
आज यादोंका खजाना याद भर रह जायगा क्या ?
यह मधुर प्रत्यक्ष, सपनोंके बहाने जायगा क्या ?

बेटीकी बिदा हिन्दू परिवारमें सबसे कारुणिक समय होता है। अपने खूनसे सींच-सींचकर स्नेहकी छाया देकर थपकियोंमें प्रोत्साहन देकर जिस बेलाको बड़ा किया वह अचानक स्नेहकी धरतीमेंसे दूरतक पहुँची हुअी जड़ों सहित अुखाड़ ली जाती है। शायद बेला टूट ही जाती है क्योंकि स्नेहकी जड़ें अलग कैसे हो पाती होंगी ? कवि कहता है.....नहीं नहीं पिता कहता है :

गोदीके बरसोंको धीरे-धीरे भूल चली हो रानी
बचपनकी मधुरीली कूकोंके प्रतिकूल चली हो रानी,
छोड़ जान्हवी कूल, नेहधाराके कूल चली हो रानी,
मैंने झूला बाँधा है, अपने घर झूल चली हो रानी।
मेरा गर्व समयके चरणोंपर कितना बेबस लौटा है,
मेरा वैभव, प्रभुकी आज्ञापर कितना, कितना छोटा है।

अन्तिम पंक्तियोंमें जो मजबूरी और तज्जन्य अवसाद है वह कितना तीव्र है। बहिनके चले जानेपर तो बहुत बुरा होगा। घर खानेको दौड़ेगा और :

सावन आवेगा, क्या बोलूंगा हरियालीसे कल्याणी
भाअी-बहिन मचल जाअेंगे लादो घरकी जीजी रानी,
मेंहदी और महावर मानों सिसक-सिसक मनुहार करेंगी
बूढ़ी सिसक रही सपनोंमें, यादें किसको प्यार करेंगी ?
दीवाली आवेगी, होली आवेगी, आवेंगे अुत्सव
"जीजी रानी साथ रहेंगी" बच्चोंके ? यह कैसे सम्भव
भाअीके जीमें अुठेगी कसक सखी सिसकार अुठेगी,
माँके जीमें ज्वार अुठेगी, बहिना कहीं पुकार अुठेगी।
तब क्या होगा झूम-झूम जब बादल बरस अुठेंगे रानी,
कौन कहेगा अुठो 'अरुण' तुम सुनो, और मैं कहूँ कहानी।

कैसी मार्मिक स्वाभावोक्ति है। अभिधामें कितनी व्यंजना है। क्या अनुभूतिके तिलकसे अिन पंक्तियोंका अभिवादन नहीं हो रहा है। कहनेको यह कविता है, पर असर तो जादूका है।

पं० माखनलाल चतुर्वेदीको 'दादा' कहकर सारे साहित्य-जगत्में सम्बोधित किया जाता है। 'दा' याने जो दान करे, जो देवे। दादाके दो 'दा' मातृत्व और पितृत्वके दो प्रतीक हैं। अिस देशको, अिस देशके साहित्यको अुनकी यह सम्मिलित देन क्या यूं ही नष्ट हो जानेवाली है ? शायद नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आषाढ़स्य प्रथम दिवसे : अंटसंट

—गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर
(डॉ. महादेव साहा)

दूसरे खर्चोंसे फिजूल खर्चोंमें ही मनुष्यको यथार्थमें पहचाना जा सकता है। क्योंकि मनुष्य व्यय करता है बँधे नियमके अनुसार, अपव्यय करता है अपनी मर्जीसे।

जैसे फिजूल खर्च है, फिजूल बात भी वैसी ही है। फिजूल बातोंमें ही मनुष्य पकड़में आता है। अुपदेशकी बातें जिस रास्तेसे चलती हैं, मनुके जमानेसे वह बन्धी हुअी है, कामकी बातें जिस रास्तेसे अपनी बैलगाड़ी खींच लाती हैं, वह रास्ता कामके लोगोंके वर्गोंसे तृण पुष्प शून्य चिह्नित हो गया है। फिजूलकी बातोंको अपने ही ढंगसे कहना होता है।

अिसलिअे चाणक्यने जो व्यक्ति-विशेषको अेकदम चुप मार जानेको कहा है, अुस कठोर नियममें कुछ परिवर्तन किया जा सकता है; हमारे विवेचनमें चाणक्य कथित अुक्त सज्जन "तावच्च शोभते" यावत् वे अुच्चांगकी बात नहीं करते हैं, यावत् वे आदमके जमानेकी परीक्षित सर्वजन विदित सत्यकी घोषणा करनेमें लगे रहते हैं लेकिन तभी अिसपर मुसीबत आती है, जब वे सहज बातें अपनी भाषामें कहनेकी चेष्टा करते हैं।

जिस आदमीके पास बोलनेकी कोअी खास बात नहीं होती है तो कुछ भी नहीं बोलता है, या तो वेद-वाक्य बोलता है, नहीं तो चुप मारे रहता है, हे चतुरानन, अुसकी आत्मीयता, अुसका साहचर्य, अुसका प्रतिवेश शिरसि मा लिख, मा लिख, मा लिख।

संसारकी वस्तु मात्र प्रकाशधर्मी नहीं है। आग न मिलनेसे कोयला नहीं जलता है, स्फटिक बिना कारण ही चमकता है। कोयलेसे दुनिया भरके काम चलते हैं, स्फटिक हार बनकर प्रियजनोंके गलेमें पहनानेके लिअे होता है। कोयला जरूरी है, स्फटिक मूल्यवान है।

कोअी-कोअी दुर्लभ आदमी अिसी तरह स्फटिककी भाँति बिना कारण ही चमक सकते हैं। वह सहज ही अपनेको प्रकाशमें लाता है—अुसे किसी विशेष अुपलक्ष्यकी आवश्यकता नहीं होती है। अुससे कोअी विशेष प्रयोजन सिद्धकर लेनेकी गरज किसीको नहीं होती। वह अनायास ही अपनेको आप ही देदीप्यमान करता है, दूसरेको अिसे देखते ही आनन्द आता है। मनुष्य प्रकाशको अितना चाहता है, आलोक अुसे अितना प्रिय है कि, आवश्यककी तिलांजलि देकर पेटके अन्तको फेंककर भी अुज्ज्वलताके लिअे लालायित हो अुठता है।

अिस गुणको देखनेपर, मनुष्य परवानोंसे श्रेष्ठ है, अिस बातमें सन्देह नहीं रह जाता। चमकीली आँखें देखकर जो जाति बिना कारण ही जान दे सकती है, अुसका परिचय विस्तार-पूर्वक देना अनावश्यक है।

लेकिन सभी परवाने डैनेके साथ पैदा नहीं होते हैं। ज्योतिका मोह सभीको नहीं है। बहुतेरे बुद्धिमान हैं, विवेचक हैं। गुण देखनेपर अुसकी गहराअीमें जानेकी चेष्टा करते हैं, लेकिन रोशनी देखनेपर अूपर अुड़नेका व्यर्थ अुद्यम भी नहीं करते हैं। काव्य देखने-पर ये लोग सवाल करते हैं कि अिसमें लाभका कौनसा विषय है, कहानी सुननेपर अष्टदश संहितासे मिलाकर ये लोग भूयसी गवेषणाके साथ विशुद्ध धर्म मतके अनुसार छिः छिः या वाह वाह करनेके लिअे तैयार होकर बैठते हैं। जो अकारण है, जो अनावश्यक है, अुसके प्रति अिनसे कोअी लाभ नहीं है।

जो लोग आलोक-अुपासक हैं अुन्होंने अिस सम्प्रदायके प्रति अनुराग प्रकट नहीं किया है। अुन्होंने अिन्हें जिन नामोंसे पुकारा है, हम अुसका अनुमोदन नहीं करते हैं। वररुचिने अिन्हें अरसिक कहा है, हमारे मतानुसार यह रुचिगर्हित है। हम अिन्हें जो कुछ समझते हैं, अुसे मनमें ही रख छोड़ते हैं। लेकिन प्राचीन कालके लोग मुँह सम्भालकर बातें नहीं करते थे—अिसका परिचय अेक संस्कृत श्लोकमें मिलता है। अिसमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहा गया है, सिंहके नखसे अुखाड़ा अेक गजमुक्ता जंगलसे पड़ा हुआ था, किसी भील रमणीने दूरसे दौड़कर अुसे अुठा लिया--जब दबाकर देखा कि वह पका बेर नहीं है, मोती है, तो अुसे दूर फेंक दिया। साफ दिखाअी पड़ रहा है कि प्रयोजनके विचारसे जो लोग सभी चीजोंका मूल्य आंकते हैं, केवल सौन्दर्य और अुज्ज्वलताका विकास अुन्हें रंचमात्र भी विचलित नहीं कर सकता है, कवि बर्बर नारीसे अुसकी तुलना कर रहा है। हमारे विचारमें कविका अिनके बारेमें मौन रहना ही अच्छा होता--क्योंकि ये शक्तिशाली लोग हैं, खासकर, विचार करना प्रायः अिन्हींके हाथोंमें है। ये लोग गुरुजीका काम करते हैं। जो लोग सरस्वतीके काव्य-कमलवनमें निवास करते हैं, वे तटवर्ती बेतके बनमें रहनेवालोंको अुद्वेलित न करें, यही मेरी प्रार्थना है।

साहित्यका यथार्थ फिजूलकी रचनाओंके बारेमें विशेष कुछ करनेकी हिमाकत नहीं करता है। संस्कृत साहित्यमें मेघदूत अिसका अुज्ज्वल दृष्टान्त है। वह धर्मकी बात नहीं है, कर्मकी बात नहीं है, पुराण नहीं है, अितिहास नहीं है, जिस दशामें मनुष्यका चेतन-अचेतनका विचार लोप हो जाता है, यह अुसी दशाका प्रलाप है, अिसे अगर कोअी फल समझकर पेट भरनेके लिअे अुठा लेता है तो, अुसी दम फेंक देगा। यह शुद्ध मोती है और अिसमें विरहीके विदीर्ण हृदयके खूनका चिन्ह कुछ लगा हुआ है, लेकिन अुन्हें पोंछ देनेसे भी मूल्य कम नहीं होगा।

अिसका कोअी अुद्देश्य नहीं है अिसीलिअे यह काव्य अैसा स्वच्छ है, अैसा अुज्ज्वल है। यह अेक माया तरी है। कल्पनाकी हवासे अिसका सजल बादलसे बना पाल फूल अुठा है और अेक विरहीके हृदयकी कामनाका वहनकर यह अबाधित वेगसे अेक अपरूप अनिर्दिष्टकी ओर दौड़ी जा रही है और दूसरा कोअी बोझ अिसमें नहीं लदा है।

टेनिसनने जिस "Idle Tears" अकारण आँसुओंकी बात कही है, मेघदूत अुस फिजूलके आँसूका वाक्य है। अिस बातको सुनकर बहुतेरे मुझसे बहस करनेको अुद्यत हो जायँगे। बहुतेरे कहेंगे, यक्ष जब प्रभुके शापसे अपनी प्रेयसीसे विलग हो गया है तो मेघदूतकी आँसुओंकी धाराको बेकार क्यों बता रहे हैं? मैं बहस नहीं करना चाहता। अिन बातोंका मैं कोअी जवाब नहीं दूँगा। मैं दावेके साथ कह सकता हूँ कि यह जो यक्षके निर्वासन आदिका मामला है, यह सब कालिदासका बनाया हुआ है। वाक्य रचनाका यह अेक अुपलक्ष्य मात्र है। यह मारेको बान्धकर अुन्होंने यह अिमारत खड़ी की है। अब हम अुसको तोड़ फेंके तो! असल बात है, "रम्याणि वीक्ष्य मधुरांश्च निशम्य शब्दान्" मन अकारण ही विरहसे विकल हो अुठता है। कालिदासने दूसरी जगह अिसे स्वीकार किया है। असाढ़के पहले दिन अकस्मात् घन बादलोंकी श्याम घटा देखकर हमारे मनमें अनहोनी विरह वेदना जाग अुठती है, मेघदूत अुस अकारण विरहका अमूलक प्रलाप है। अगर बात अैसी नहीं होती तो, विरही मेघकी जगह बिजलीको दूत बनाकर भेजा जाता।

तब पूर्वमेघ अितना जमकर अितना घूम-फिरकर, यूथीवनको अितना प्रफुल्ल करके, अितनी जनपद वधुओंकी अुत्क्षिप्त दृष्टिका कटाक्ष लूटता हुआ नहीं चलता।

काव्य पढ़ते वक्त अगर हिसाबकी बही खोलकर रखनी ही पड़े तो क्या लाभ हुआ? हाथों-हाथ अुसका हिसाब चुकता कर लेना हो तो स्वीकार करूँगा कि, मेघदूतसे अेक तथ्य प्राप्त करके हम पुलकित हुअे हैं। वह यह है कि, तब भी आदमी थे और अषाढ़का पहला दिन यथावत् आया करता था पहले भी।

लेकिन असहनशील वररुचिने जिनके प्रति अिस अशिष्ट विशेषणका प्रयोग किया है वे क्या अिस तरहके लाभको लाभ समझेंगे? क्या अिससे ज्ञानका विस्तार, देशकी अुन्नति, चरित्रका सुधार होगा? अतअेव जो अकारण है जो अनावश्यक है, वह अिसके काव्यमें रसिकोंके लिअे ही ढाँककर रखा रहे; जो आवश्यक है, जो हितकर है, अुसकी घोषणामें विरति और अुसके खरीददारोंकी कमी नहीं होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बापूके सच्चे अुत्तराधिकारी

—श्रीमती सुनीता अग्रवाल

जमीन दो कि शान्तिसे नया समाज ला सकें ।
जमीन दो कि राह विश्वको नअी दिखा सकें ।।
जमीन दो कि प्रेमसे समत्व सिद्धि पा सकें ।
जमीन दो कि दानसे कृपणको लजा सकें ।।
सुरम्य शान्तिके लिअे जमीन दो, जमीन दो ।
महान् क्रान्तिके लिअे जमीन दो, जमीन दो ।।

—श्री 'दिनकर'

प्रकृतिके प्रथम प्रभातसे ही जीवकी तीन प्राथमिक आवश्यकताअें रही हैं— काम, दाम, आराम । और अिन्हीं तीनोंकी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिअे अनेक युद्ध हुअे, अनेक खूनी क्रांतियाँ आअीं, किन्तु अेक युद्ध अथवा क्रान्तिके समाप्त होते ही दूसरी क्रान्तिके बीज पड़ गअे । धीरे-धीरे, फिर कुछ समयके पश्चात् अुस क्रान्तिने दूसरे रूपमें जन्म लिया । मनुष्य-मनुष्यका, भाअी-भाअीका शत्रु हो गया, और पहलेने दूसरेको अथवा दूसरेने पहलेको समाप्त कर दिया—यह स्थिति चक्रनेमि-क्रमेण अिसी प्रकार चलती ही रही और समस्या बढ़ती गअी, हल कोअी नहीं निकल सका अबतक ।

अुन्नीसवीं शताब्दीमें अिस बातको समझा कार्ल मार्क्सने और अुसने हल भी निकाला—भूमिका अुचित बँटवारा । धीरे-धीरे अिस बातको सभी समझ गअे अेवं बँटवारेके ढंग नियत करने लगे ।

बीसवीं शताब्दीके अन्दर अिसके तीन मार्ग निकले । पहला रूसका, सामन्तोंको मिटा दिया जाअे; दूसरा अमेरिकाका, सामन्त किसानको मर्ख बनाते रहें; अेवं तीसरा, सन्त विनोबाका सद्भावनाके दानका ।

श्री विनोबाजीका ११ सितम्बर, १८९५ अी० को बम्बअीके कोलाबा जिलेके गांगोदा नामक ग्राममें जन्म हुआ था । अुनके पूज्य पिता श्री नरहरि शम्भुराव भावे तथा वन्दनीया माता रुक्मिणीदेवी अत्यन्त संयम नियम-निष्ठ अेवं धर्मपरायण व्यक्ति थे । पिताजी बड़ोदा राज्यके टेक्सटाअिल अिन्जीनियर थे और अपना अधिकांश समय राज्य-सेवामें ही लगा देते थे, अतः बालक विनोबाका जन्म पितामह शम्भुरावके घर ही हुआ और वहीं पालन-पोषण भी ।

विनोबाका नाम विनायक नरहरि भावे रखा गया । पितामह भी अत्यधिक धर्मज्ञ थे, अुन्हींके प्रभावसे विनोबाजी आध्यात्मिकताकी ओर झुके । अुनके जीवनपर अुनकी माँका भी अतीव प्रभाव पड़ा है । वह प्रायः कहा करते हैं, 'सेवा तो मैंने माँसे सीखी है । माँ हमारे पड़ोसियोंकी रसोअी अुनकी आवश्यकता पड़नेपर बना आती थीं, अपने घरकी रसोअी वह सुबह ही बना लिया करती थीं । अेक दिन विनोद करते हुअे मैंने पूछा, 'माँ तू कितनी स्वार्थिनी है, अपने घरकी रसोअी पहले बना लेती है, और दूसरोंकी बादमें ।' अुत्तरमें अुन्होंने हँस कर प्यारसे कहा था : "विनायक, तू बहुत मूर्ख है, दूसरोंकी रसोअी देरसे अिस कारण बनाती हूँ, ताकि अुन्हें गरम व ताज़ा भोजन मिल सके ।"

सन्त विनोबाके पिता संगीतके भी मर्मज्ञ थे, अुनका भी विनोबापर विशेष प्रभाव पड़ा । अेक बार विनोबाने कहा : 'बचपनमें मुझे मुरली अत्यन्त मधुर लगती थी । मुरली हमारा राष्ट्रीय वाद्य है, गरीबसे अमीर तक सभीके लिये सुलभ है । रात्रिके मधुर मौनमें जब कहीं दूरसे मुरलीकी मधुर तान कानमें पड़ती है, तो भगवान श्रीकृष्णके दिव्य चरित्रका पुनीत स्मरण आअे बिना नहीं रहता ।'

विनोबाके चार भाअी अेवं अेक बहिन हैं । अुनमें बालकोबाजी निसर्गोपचार (प्राकृतिक चिकित्सा) आश्रममें कार्य कर रहे हैं । शिवाजी गीता और विनोबा साहित्यके प्रकाण्ड विद्वान हैं । विनोबाजी समस्त देशको साम्ययोगकी ओर बढ़ानेमें साधना-रत हैं । समाचार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्रोंका अध्ययन करनेकी रुचि विनोबाको बाल्यकालसे ही रही, बचपनमें वह श्री बालगंगाधर तिलक द्वारा सम्पादित "केसरी" को अपनी माँको भी पढ़कर सुनाया करते थे ।

विनोबा अेवं अन्य बन्धुओंकी प्राथमिक शिक्षा-दीक्षा घरपर ही हुअी थी । जब शम्भूजी १८९८ में बड़ोदा चले आअे और वहीं स्थाअी रूपसे रहने लगे तो १९०५ में अपने परिवारको भी वहीं ले आअे । शम्भूजी स्वयं अच्छे शिक्षाशास्त्री थे, अत : दो वर्ष तक अुन्होंने स्वयं ही अंग्रेजी, गणित आदिकी शिक्षा दी ।

१९१० में विनोबाको नियमित पाठशालामें भेजना प्रारम्भ कर दिया । पाठ्यपुस्तकोंके अतिरिक्त अुन्हें अन्य विषयोंकी पुस्तकें पढ़नेमें अधिक आनन्द आता था, जिससे अुनके ज्ञानकी श्री-वृद्धि निरन्तर तीव्रतासे होती रही । गणितमें वह, अन्य विषयोंकी अपेक्षा, अधिक प्रतिभाशाली रहे और अुसे जीवनमें भी आत्मसात् कर लिया ।

विनोबा जब हाअीस्कूल (पूर्व माध्यमिक) कक्षामें पढ़ रहे थे, तो अुनके पास घरसे अेक पत्र आया जिसमें अुनके विवाहको सम्पन्न करनेका प्रस्ताव था । अुन्होंने तुरन्त अुत्तरमें लिख दिया : "यदि तुम्हें मेरी आवश्यकता नहीं है, तो भले ही शादी कर दो ।" और साथ ही विवाहके अुस पत्रको फाड़कर अग्निकी भेंट कर दिया ।

१९१३ में जब अुन्होंने हाअीस्कूल परीक्षा अुत्तीर्ण कर ली और अुच्चतर माध्यमिक (अिन्टर) का अध्ययन प्रारम्भ कर दिया, तो १९१४ के आरम्भमें अुन्होंने बड़ोदामें अेक विद्यार्थी मण्डलकी स्थापना की और साथ ही अेक पुस्तकालय भी खोला ।

१९१६ में अेक दिन अेक विशेष घटना हुअी । माँने रसोअी बनाते समय देखा कि विनायक कागजोंका अेक पुलिन्दा जला रहा है, पूछा : "विन्या, क्या कर रहा है ?"

विनोबाने अत्यन्त साधारण ढंगसे कह दिया, "कुछ नहीं, माँ अपने प्रमाण-पत्र जला रहा हूँ ।"

माँ अत्यधिक आश्चर्यान्वित हुअी और बोली : 'मूर्ख मत बनरे । भविष्यमें ये सब काम आअेंगे ।'

किशोर विनायकने कहा, "माँ, जब मैंने कॉलिज छोड़नेका निश्चय ही कर लिया है, तब अिनकी आवश्यकता ही क्या है ?"

अुनका निश्चय दृढ़ हो चुका था, और १९१६ अी. में ही, जब अुन्हें मार्चमें परीक्षा देनेके लिअे बम्बअी जाना था, सूरतमें कुछ मित्रोंके साथ गाड़ीसे अुतर पड़े और बनारसकी गाड़ीमें सवार हो गअे ।

शेष मित्रोंने पूछा, 'कहाँको ?'

"ब्रह्म जिज्ञासामें", विनोबाने संक्षिप्त-सा अुत्तर दे दिया ।

पुण्यधाम काशी पहुँचकर विनोबा संस्कृतके आध्यात्मिक ग्रन्थोंका अध्ययन करने लगे । अध्ययन कार्य केवल दो ही घण्टे चला करता था, शेष समय साधनामें व्यतीत करते और भजन लिखकर पतित पावनी गंगामें प्रवाहित कर दिया करते थे ।

अुन दिनों गाँधीजीके भाषणकी, जो अुन्होंने हिन्दू विश्व-विद्यालयके अुद्घाटनके समय दिया था, बहुत चर्चा थी । वहाँ भी बापूजीने सत्य अेवं अहिंसाका सन्देश सुनाया था । विनायकजीको जब अिस बातका ज्ञान हुआ, तो अुन्होंने गाँधीजीसे साबरमती आश्रमके पतेपर पत्र-व्यवहार प्रारम्भ कर दिया । बापू विनायकके पत्रोंके विचारोंसे अत्यन्त प्रभावित हुअे और अुन्हें पन्द्रह दिनके लिअे अपने पास बुला लिया । ७ जून, १९१६ को विनायकने प्रथम बार बापूके दर्शन किअे और फिर तो अुन्हींमें लीन हो गअे—पन्द्रह दिन क्या, अब तो पन्द्रह जन्म पश्चात् भी सम्भवतः साथ नहीं छोड़ सकेंगे ।

विनोबाका विचार था कि हिमालयपर जाकर तपस्या की जाअे; अब हिमालयसे भी अूँचे शिखरपर चढ़ दरिद्रनारायणके साक्षात चरणोंमें ही तपस्या करनेका सौभाग्य मिल चुका था ।

विनोबा प्रारम्भसे ही शरीर श्रम और अस्वादके पक्षपाती रहे हैं–बिना शरीर श्रमके किअे भोजन तक करनेके पक्षमें नहीं हैं । साबरमतीके आश्रममें नित्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रति छह घंटे तक शरीर श्रम किया करते थे। लगभग चार मास तक साढ़े तीन घंटेके लिअे नित्य पौधोंको सींचा, छह मास तक रसोअी बनाअी, और फिर पाखाने आदिकी सफाअीका कार्यभार अपने कन्धोंपर ले लिया। कुछ दिन पश्चात् विनोबाको आश्रममें अध्यापन-कार्य दिया गया और वह गुजरात-विद्यापीठमें, जो आश्रमसे ही संलग्न था, अध्यापन करने लगे।

१९१७ के अन्तमें अेक वर्षका अवकाश ले महाराष्ट्रका भ्रमण करने निकल पड़े। अिस यात्राका अन्त अुन्होंने ठीक अेक वर्षमें किया। जब अेक वर्ष अपने अन्तिम क्षण गिन रहा था, तब विनोबाने पुनः आश्रममें प्रवेश किया। बापू समयकी अिस पाबन्दीसे अत्यन्त प्रभावित हुअे।

विनोबाकी संस्कृत भाषा और साहित्यके प्रति रुचि थी ही—प्राज्ञ पाठशाला वाअीमें अपना अधिक समय अिसीलिअे बिताया करते थे कि आश्रममें अुनका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता था, अेवं साथ ही वहाँ पण्डित श्री नारायण मराठेसे अुपनिषदोंका अध्ययन किया करते थे। जब वाअीकी दिन-चर्याको विनोबाने बापूको लिखा था, तब बापूने कहा था, "गोरखने मछन्दरको हराया—भीम है, पूरा भीम।"

अुसी समय बापूने अिनका नाम विनायकसे बदल कर आधुनिक प्रसिद्ध नाम विनोबा कर दिया।

१९१८ में विनोबाकी पूज्य माताजीने अिस नश्वर संसारसे मुख मोड़ लिया और अपने विनायकको बिलखता छोड़ गअीं।

६ अप्रैल, १९२१ अी. को विनोबाको आश्रमकी अुस शाखाका, जो वर्धामें स्थापित हुअी थी, मार्ग-दर्शक बना दिया गया। वहींसे अुन्होंने १९२४ में "महाराष्ट्र धर्म" नामक पत्रिका भी चलाअी।

१९२२ में, आश्रमको पर्याप्त अुन्नतिशील बनाकर, विनोबा वर्धासे लगभग २ मील दूर नालवाड़ी चले आअे और वहाँ कताअीका काम प्रारम्भ करा दिया। १९३५ में वहीं ग्राम-सेवा-मंडल नामकी अेक संस्थाकी स्थापना की, जो आज समस्त वर्धा तहसीलका प्रबन्ध स्वयं करती है।

१९२३ में सर्वप्रथम विनोबाने कारावासका मुख देखा था, और तीन मासका ब्रिटिश शासनका दण्ड भोगनेके पश्चात् लौट आअे थे। अुसके पश्चात् १९२४ में त्रावनकोरमें हरिजन मन्दिर प्रवेशका कार्य बड़ी दक्षतासे सम्पन्न किया था।

१९३२ में अेक भाषण देनेके अपराधमें विनोबाको पुनः कारावासमें बन्द कर दिया गया। यह जेलयात्रा विनोबाजीके लिअे अत्यन्त महत्वपूर्ण रही। अिसके पश्चात् १९४० में व्यक्तिगत असहयोग आन्दोलनमें जब विनोबाको ही सत्याग्रहका अुद्घाटन करनेके लिअे आगे बढ़ाया गया, तो देशने सर्वप्रथम अुनके दर्शन किअे। अिस सत्याग्रहको अुन्होंने कुल मिलाकर तीन बार किया अेवं पौने दो वर्षकी सजा भुगती थी।

१९४२ में अुन्हें पुनः गिरफ्तार कर वेलूर जेल भेज दिया गया, और ९ जून १९४४ को सिवनी केन्द्रीय कारागारसे रिहा कर दिया गया।

सन् १९४८ अी. की ३० जनवरीकी विश्व-व्यापी दुखद दुर्घटनाके पश्चात् अिस सन्तने अुस सन्तका स्थान ग्रहण कर लिया और अुसके अधूरे कार्योंको सम्पूर्ण करनेका व्रत लिया, जिसे वह आज भी पूरा कर रहे हैं।

१५ अप्रैल, १९५१ का अैतिहासिक दिवस विनोबाके अितिहासमें लाल अक्षरोंसे लिखा जाअेगा। अुसी दिन आचार्य विनोबा भावेने दण्डकारण्यमें प्रवेश किया था, और अुसके चार दिन पश्चात् ही १८ अप्रैलको अिस महासन्तका महायज्ञ प्रारम्भ हुआ।

अुस दिन विनोबाजी हैदराबाद प्रान्तके नलगुण्डा जिलेमें स्थित पोचमपल्ली ग्राममें प्रवचन कर रहे थे। अेक हरिजन मुखियाने अपनी आवश्यकता अुनके सामने रखी, "न पूरा काम है अिसलिअे ही और कोअी चीज भी पूरी नहीं है।"

पहले तो अिस विचारको सरकारके सम्मुख रखनेकी बात सोची गअी, जिससे सम्भवतः सरकारको कानूनन भूमि अपहरण करना पड़ता, किन्तु बादमें विनोबाने सोचा, क्यों न गाँववालोंसे ही अिस समस्याका हल कराया जाय? और अिस प्रकार विनोबाजीने वहाँ भूदान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करनेकी बात चलाअी। तब ही विनोबाकी भावनाओंसे प्रेरित होकर श्री रामचन्द्र रेड्डीने तुरन्त अेक सौ अेकड़ भूमिकी आहुति देकर भूदान यज्ञकी वेदीकी ज्वालाको प्रज्ज्वलित कर दिया। फिर क्या था? नगर-नगर, डगर-डगर पैदल चलकर सन्त विनोबाने भूदानका अलख जगानेका निश्चय किया, और आनेवाले पाँच वर्षोंमें पाँच करोड़ अेकड़ भूमि माँगनेकी योजना बनाअी। भारत कृषि प्रधान देश है—यहाँ तीस करोड़ अेकड़ भूमिमें कृषि होती है। बहुतसी भूमि बेकार अेवँ बंजर पड़ी है जिसका अुपयोग किया जा सकता है, अतः विनोबाजीने अपनी पैदल यात्रा प्रारम्भ कर दी। अब तक विनोबाजी अिक्कीस प्रदेशोंका दौरा कर चुके हैं। और लगभग पैंतीस लाख अेकड़ भूमिका दान पा चुके हैं।

आचार्य विनोबा केवल भूदान ही नहीं, जीवन-दान, खाद-दान, हल-दान, सम्पत्तिदान, समयदान आदि सभी प्रकारके दान माँग रहे हैं। अिन दानोंके प्रति अमेरिका अेवँ रूस जैसे समृद्धिशाली राष्ट्रोंको अधिक संशय है, किन्तु धीरे-धीरे यह सन्देह भी दूर हो जाअेगा और अुन्हें यह मानना पड़ेगा कि भारतकी संस्कृति जैसी प्राचीन समयमें थी, अर्वाचीन कालमें अुससे भी कहीं अधिक बढ़ी-चढ़ी है। यह तो विनोबाकी केवल पाँच वर्षकी योजना ही है, अिसके पश्चात् और भी योजनाअें बनेंगीं, और जब तक सम्पूर्ण राष्ट्रमें समताका सागर नहीं लहरा अुठेगा, यह कार्य अबाध गतिसे चलता रहेगा। सन्त विनोबा चिरायु हों और अुनका संकल्प शीघ्र सिद्ध हो!

बादलसे

श्री काशीप्रसादसिंह 'प्रभाकर'

किसकी दग्धावस्थापर,
किसकी दुखमय गाथापर;
किस टूटी अभिलाषापर,
किसकी आहत आशापर।
हो दुखित अतीव सरल बन।
तुम बरस रहे श्यामल घन।

किन भेद भरे भावोंको,
किन विश्व वेदनाओंको;
किस क्षणभंगुर जीवनको,
किस निर्बल जनके धनको।
अै सुन्दर शुचि श्यामल घन।
तुम दिखा रहे बादल बन।

किसके अुत्थान-पतनको,
किसकी चकोर चितवनको;
किसके सुखमय साधनको,
किसके नीरव-नर्तनको।
हो तन्मय तुम बादल बन।
लिख रहे सदा श्यामल घन।

किसके तुम जीवन रथपर,
किसके पुण्यस्मृति-पथपर;
किसके वियोग बिछुड़नपर,
किसके मन-मधुर मिलनपर।
सरिता-तटपर हिमधरपर।
क्यों बरस रहे निर्झर झर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नदी किनारे

—श्रीमती प्रो. कुसुमावती देशपांडे

क्या था अुस नदी किनारे ? न तो कोअी पानी भर रहा था...न पवनका संगीत था...न बगुलोंकी अुड़ानें थीं.....

पुलके अेक ओर घुटनाभर पानीमें, हाथभर अूँची चट्टानपर धोबी लोग धड़ा-धड़ कपड़े पछाड़ रहे थे और दूसरी ओर.....

अूँचे-अूँचे अिमलीके वृक्ष अुनकी बहुत घनी और फैली हुअी छाँह, अुन वृक्षोंके तले गोबर मिट्टीसे लीप-पोत कर चिकने बने हुअे छोटे-छोटे आँगन और कन्धों जितनी अूँची मोटी-मोटी दीवारोंकी बेढ़ंगी आकर्षक झोपड़ियाँ, कुछ वृक्षोंसे टिकाकर अूँची-अूँची बल्लियाँ तिरछी रखी हुअीं और कुछके तले बाँसोंके ढेर पड़े थे। दूसरी ओरके अेक कोनेमें बुनकर तैयार संतरोंकी डालियों व पिटारोंका ढेर लगा था। वह बस्ती बसोरोंकी थी।

अुनके सारे जीवन-व्यवहारोंमें कितना दिलखुला-पन था !

सर्दीके दिनों, शनिवारको प्रातः शाला-कालेज जानेके लिअे घरसे चलें तो रास्तेके अेक ओर जहाँ-तहाँ अंगीठियाँ सुलगी मिलतीं। कहीं चार, कहीं दो आदमी आगी तापते बैठे मिलते तो कहीं अुन्हींके पास कण्डेकी काली राखसे सनी अुँगली दाँतोंपरसे घुमाती खड़ी अेकाध औरत मिल जाती। अुसे अपनी सूखी चोटीके अुलझे बालोंकी चिन्ता हो न हो, वह गोंडोंकी पद्धतिसे दोहरी साड़ी पहनकर आधा बदन खुला छोड़कर खड़ी दिखाअी पड़ती। अुसकी आकृतिमें लालित्य और प्रकृतिमें कर्तृत्व तथा हिम्मत साफ निखर अुठती थी। जरा अुस ओर बस्तीके 'छोकरों' का गोलियाँ खेलनेका अड्डा भी दिखाअी देता। हाथोंसे ही भकाभक मिट्टी हटाकर साफ की हुअी बीताभर जगहमें पैरोंके पंजोंके बल बैठी अुनकी नंग-धडंग आकृतियोंका घेरा दिखाअी देता और बीचहीमें आवाज सुनाअी देती, ..."ये ले बदी...!"

क्या आपने अुस काले स्याह कोयलेवालेको देखा है ? वही, जो हाथोंमें तौलनेके लिअे अेक चिकनी छोटीसी डण्डी और स्प्रिंगका तराजू (काँटा) लेकर धनतोलीमें घूमा करता है--वह काली घनी मूछों और रूखे बालोंवाला ! अुसकी शकल व आवाजसे तो आप अुसके पासका कोयला खरीदना कभी न चाहेंगे, किन्तु वही कअी बार हँसमुख और मस्त चित्तसे अिन छोकरोंका खेल देखता हुआ पाया जाता और तब अुसकी रूक्ष शकल कितनी भिन्न दिखाअी देती थी .....!

कभी 'आर्डर' मिल जानेपर अुन्हींमेंसे कितने ही नरनारी पंक्ति-बद्ध टट्टे बनानेके लिअे बैठे हुअे दिखाअी देते। अेक छिला हुआ सीधा बाँस और अुसीके पाससे मोड़कर खुली छोड़ी छिली हुअी पट्टियाँ...अुनमेंसे अेक अूपर अेक नीचे अैसे क्रमसे आड़ी बुनाअी बनाती हुअी अुनकी लम्बी कतार बैठी हुअी पाअी जाती। बीचहीसे अुनमेंसे कोअी अुनकी अपनी बोलीका अेकाध लोकगीत शुरू कर देता और फिर हँसते खेलते अुनके हाथ और फुर्तीसे चलने लगते।.....

पासहीमें कहीं सिकुड़कर बैठे दो अेक कुत्ते अपनी दुम हिलाते हुअे पड़े होते तो बीचहीसे अेकाध मुर्गा गर्दन अूँची अुठाकर अपना तुर्रा थिरकाता फुदकता वहाँसे निकलता।

कभी दोपहरीमें वहाँ केवल स्त्रियाँ-ही-स्त्रियाँ दिखाअी देतीं, वे अुसी घुटनाभर पानीमें ही नहा-धोकर आअी प्रतीत होतीं और बस्तीके सामने खुले मैदानमें अिमलीकी छाँहसे बाहर बालोंको सुखाती हुअी गप्पें लड़ाती बैठतीं। कहीं शादी जमाअी जाती या जमानेकी बातचीत पक्की होती।...बाजारके भावोंपर चर्चा छिड़ती बीमारी और दवा-पानीकी पूछताछ भी चलती...! बीचहीमें अेकाध अुठती और दूसरीके सामने जा बैठती और वह फिर अपने नाखूनोंसे फटाफट अुसके बालोंका सुलझाना प्रारम्भ कर देती.....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अेकाध बार अुस अिमलीकी छाँहमें झोपड़ीके चहुँ ओर मिट्टीके चबूतरेपर आपकी ओर पीठ किअे झोपडीकी दीवारोंपर चावसे चित्र अुतारनेवाली अेकाध स्त्री भी आपको दिख जाती । सफेद मिट्टीके पट्टोंसे विभूषित दीवारोंपर हरे-पीले रंगों, गेरूमें डुबाअी गअी अुँगलियों और सिंदूरके पंजोंसे अपनी-अपनी कल्पनानुसार अपने घरकी रखवालीके लिअे अपने सभी शुभचिन्होंको वे दीवारोंपर अुतारा करती थीं । बड़ी मेहनतसे द्वारके चारों ओर नक्काशी बनातीं, स्वस्तिकोंकी पंक्तियाँ अुतारतीं । घरका अभिमान.. घरका गौरव, कौतुक... नगरपालिकाकी कृपासे चुल्लूभर पानीके पास प्राप्त बीताभर भूमिपर मिट्टी और टट्टोंके मकानोंका कौतुक ! हमेशा ही अुस बस्तीमें अुल्लास...बेफिकरीकी हिम्मत... कर्तृत्वका समाधान दिखाअी देता था... ... !

दिनभरका कामकाज निपटाकर अुसी रास्तेसे पुनः लौटनेपर अिनकी बस्तीमें भी दिनके कामके निबटारेके चिन्ह दिखाअी देते। दिया-बत्तीका समय होनेसे पूर्व ही अुनके सारे काम निपट जाते । शायद कोअी नौजवान पासहीके सिनेमा थिअेटरमें भी घुसते हों, किन्तु कर्ताधर्ता लोग चिलमके कश खींचते, सुपारीके टुकड़े चूसते पास-वाले ढलानपर बैठे दिखाअी देते ।... कभी चाँदनी रातमें अिधर-से-अुधर टहलनेपर बस्तीके पासवाली सड़क-पर अेक-अेक मैला कपड़ा बिछाकर प्रगाढ निद्रामें लीन आदमियोंकी लम्बी कतार दिखाअी देती थी।... अुन्हींके कुछ दूरीपर...अुनकी झोपड़ियोंपर अिमलीके वृक्ष शांतता पूर्वक टहनियोंके चँवर डुलाते और पंखा झलते थे ।

अेक रात, लगभग ग्यारह बजे, नदीके आसपासका वह सारा प्रदेश आग बुझानेवाले दमकलोंकी घनघोर घंटि-योंसे और युद्ध-सामग्रीकी अग्निशामक मोटरोंके कर्णकटु भोंपुओंसे काँप अुठा । क्या बात हो गअी ? क्या किसी धनी मानी व्यक्तिके प्रासादमें आग लग गअी ? ना.... अैसी हानि दो दिनमें पूरी कर दी जाती है...

नदीकी ओर आगकी कितनी विकराल लपटें अुठी थीं धाँय-धाँय ! वे बसोरोंकी झोपड़ियाँ ही जल अुठी थीं और अुनमेंसे अूँची-अूँची अुठनेवाली धधकती ज्वालाअें, लपलपा रही थीं । आग चारों ओर फैलती जा रही थी । वह देखिअे....और अेक झोपड़ी सुलग गअी.. दूसरी....तीसरी...अग्निदेवता भी अुस जमावके साथ, जो आजतक अेक दिलसे होकर बसा था, क्योंकर पक्षपात करेगा ? बाँस सुलगे, बल्लियाँ धधकीं ! ! हिम्मत बाँधकर अुस धूँ-धूँ करती धधकती ज्वालाओंमें घुसकर कितने ही लोग अुन्हें खींच-खींचकर निकालते जा रहे थे, किन्तु बीचहीमें सुलग अुठा बाँस फटता और गोली चलनेकी-सी आवाज आती । टट्टों, सींकों, डालियों.... और झोपड़ियोंको स्वाहा करती भभकती आगके ताण्डवकी 'कड़कड़' ध्वनि लगातार जारी थी । बीचहीमें अुसे चीरकर बाँसके फटनेकी जोरदार आवाज आती...कहीं बच्चोंके बिलखनेकी आवाज....कहीं अेकाध नारीका आर्तस्वर....किन्तु वे सभी मानवी आवाजें अग्निके रौद्र संगीतमें लुप्त हो गअी थीं...अन्तिम झोपड़ी सुलगी.... अकस्मात अुस अिकलौते मुर्गेने अपनी सारी शक्ति बटोरकर अन्यथा बेकाम पंख फड़फड़ाअे और अग्निके घेरेके बाहर अुड़ान भरी । अुड़ते-अुड़ते मानो अुसने अपने मालिकको अेक कर्णकटु चीखसे पुकारा । अुसे सुनकर सचमुच ही वह मालिक अुसकी ओर लपका और अुसके सामने फड़फड़ाकर आ गिरनेवाले अुस मूक-पक्षीको अुसने अुठा लिया ।...

झोंपड़ियोंकी वह रंगीन नक्काशी...शुभचिह्न... स्वस्तिक...सबके सब आगके भेंट हो गअे ! !

सभी लोग आगका खेल शून्य दृष्टिसे देखते खड़े रहे । कुछ शान्त हो चली ज्वालाओंके प्रकाशमें सभीके चेहरे लाल हो गअे थे....आँखोंमें भी आग दिखाअी दे रही थी। आखिर अूँची-अूँची अुठती जा रही ज्वालाओंकी ओर गुमसुम देखनेके अतिरिक्त चारा भी क्या था ? बड़ी मुश्किलसे मिले नलकी जोड़-नलियोंको जोड़कर आग बुझानेवाले दमकलेसे छूटनेवाला पानीका फव्वारा.. ....कितना दीन हीन दीखता था वह....

सब भस्म....शेष केवल मन्द, अुदास, निष्प्राण प्रकाश....मानो चिताके बुझनेके बादका अन्धेरा !

अिमलियोंकी अूँची-अूँची शाखाअें भी झुलस गअी थीं ।....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औपचारिक सहानुभूतिके बाद अेकत्रित जनसमूह धीरे-धीरे लौट गया....सभी अपने-अपने घर लौट गअे.... जाकर बिस्तरोंपर लेट गअे....

थोड़ी-बहुत बची-खुची चीजें सामने लेकर बसोरोंके वे परिवार वहीं बैठे रहे....वहीं, अुस प्रचण्ड अंगीठीके सामने....पड़ोसकी राहपर किसीको नींदने घेरा हो... किसीकी आँख भी न झपकी हो... ।

दूसरे दिनका प्रातःकाल । यों अुस रास्तेसे जाते समय भूलसे भी अुनकी बस्तीकी ओर न झाँकनेवालोंकी भी आँखें अचक अुधरको घूमतीं । काली स्याह राखके ढेर...अधखड़ी, भून दी गअी मिट्टीकी दीवारें...अभी तक धधक रही बाँस-बल्लियाँ...! देखनेवालोंकी आँखें अूपरको अुठतीं । वहाँ झुलस गअीं अिमलियोंकी डालियाँ ! .....

अरेरे...! बेचारोंका सब कुछ जलकर खाक हो गया !.....

क्या सचमुच खाक हो गया ?

रास्तेसे आने-जानेवालोंकी दया भरी दृष्टियोंकी ओरसे मानो मुँह फेरकर दो-चार सालकी पंचियों व अेकाध फटी-पुरानी धोतीका मेल बनाकर वहां छोटे-छोटे आठ-दस डेरे तन गअे थे । अुनके सामने ही अुनके मटके और अुनके सामने तीन पत्थरों व पासवालेके चूल्हे .अुनपर कहीं अेकाध तवा, कहीं अेकाध मटका...कअी स्थानोंपर तो फटी-पुरानी धोतीका भी आसरा नहीं...केवल अेक-दो गठरियाँ, पथारियाँ और मटके.....

किन्तु कहीं बौराअे अंतःकरण होंगे ? हाय खाअे मन होंगे ? चिंतातुर बैठे हुअे दिल होंगे ?—भगवानका नाम लीजिअे .....

वही बेफिकरी...वही हिम्मत . .वही अेकता... और अिसके अलावा.....अपनेमेंसे किसीकी विशेष आवश्यकताओंकी अनुभूति.....

देखिअे अुस बीचवाले राअुटी जैसे आसरेको... क्या वह अुसका आश्रय स्थान है जो अिनमेंसे सभीसे कुछ अधिक पैसेवाला हो ?...नहीं...अुसमें अेक नवप्रसूता दो दिनके अपने शिशुको लिअे है...जैसे-तैसे आगसे बची हुअी है...

अभी दो दिन भी नहीं हुअे हैं कि लो वहाँ अुनका हथौटी भरा कला-कौशल भी प्रारम्भ हो गया । कोअी अपने मटकों व चूल्हेका स्थान झाड़ बुहारकर सफेद मिट्टीसे लीप रहा था, तो कोअी अुस स्थानको चारों ओरसे ठीक-ठाक बाड़ लगा रहा है...पुनः गृह निर्माण...और अुस निर्माणके कारण अंतःस्तलकी तहसे अुछलकर अूपर आनेवाला सौन्दर्यका शौक !...

क्या फिरसे झोपड़ियाँ बनानेका भी धैर्य अुनमें न था ? क्या पैसा न था ?...या फुरसत नहीं थी ?... कोअी कहते अनायास ही स्थान खाली हुआ देखकर नगरपालिका अुन्हें वहाँसे खदेड़ देनेकी सोच रही थी... मकान तो जल ही गअे...अूपर स्थान भी हाथसे निकल जानेकी संभावना थी...

कितना निस्सहाय निरावरण हो गया अुनका जीवन...आश्रय प्रश्रय तो दूर रहा, किंतु सारे संसारसे छिपा रखने योग्य दुखको छिपानेके लिअे अेक कोना भी पास न रहा ! ...अेक दिन दोपहरमें दूरसे ही किसीके क्रन्दनका दीर्घ स्वर सुनाअी दिया । अग्निदेवताके बाद अब यमदेवताने भी वहाँका दौरा प्रारम्भ किया था !...वहीं रास्तेकी बाजूमें अर्थी बनाअी जा रही थी । दो हाथकी दूरीपर अेक चिथड़ेपर अेक दस-बारह वर्षीय बालक पेट फूला हुआ पड़ा था ! ...पास ही में अुसकी माँ सिर धुन रही थी; अुनके जीवनके अैसे भागोंका भी दुनियाके सम्मुख प्रदर्शन !

कितने दिन तक ये लोग अैसे रहेंगे ? अभी चार दिनके बाद वर्षा प्रारम्भ हो जायगी ।.... आकाशसे सहस्रधारा बह निकलेगी .... अितना ही नहीं....बस्तीकी ओर ही नदीका पानी चढ़ता जाअेगा....क्या अुस अिमलीका आश्रय भी अुनसे छीन लिया जाअेगा ?....

यों ही बीतेगी अुनकी जिन्दगी....अेक आसरा छोड़ते, दूसरा निर्माण करते, भटकते ही रहेंगे.... खानाबदोश....आज कहीं भी अुनके लिअे अुनका अपना स्थान नहीं....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोअी कहेगा, अुन्हें अिस बातका कोअी सुख-दुख नहीं। अुनका मन तो अननुभूतिका पसारा है, पशु-पक्षियोंके स्तरका। अुनमें यह आकांक्षा नहीं कि कुछ प्राप्त करें, कुछ जोड़कर रखें और अिसीलिअे अुन्हें किसी चीजके चले जाने या जल जानेका कोअी दुख नहीं.... आखिर अुनका अपना था ही क्या ?.... चार चिथड़े और दो टट्टे....चिड़ियाँ नहीं अेक घोसला किसीके द्वारा तोड़ दिअे जानेपर चहचहाती हुअी दूसरा बनानेमें जुट जातीं ? प्रकृतिकी प्रेरणाके परे अुन्हें क्या किसी बातकी अनुभूति भी होती है ?

हो सकता है कि अैसा ही हो....अुनकी अूँची-अूँची हवेलियाँ नहीं जली थीं....जिन्दगीभर संजोअी धन-दौलत खाकमें नहीं मिली थी....किन्तु जो कुछ लुट गया वह अुनकी जीवनभरकी सारी कमाअी ही तो थी ! अितना अवश्य सत्य है कि वह कमाअी ही अुनका सर्वस्व न थी, क्योंकि अुस कमाअीके पीछे वे लोग अपने जीवनकी अन्तःशक्तियोंको नहीं खो बैठे थे।

कहीं भी जाअेंगे तो भी अुनमें हिम्मत है, बेफिकरीसे समय निभा ले जानेकी प्रवृत्ति है....अेक दूसरेकी कठिनाअियोंको समझ सकनेकी अिन्सानियत है।....

अिसीलिअे कल अुनकी अपनी जगह बननेवाली है। कलका जमाना अुनका है। शायद कलकी संस्कृति भी अुनकी होगी; अुनकी आगामी पीढ़ीका नअी अनुभूतियोंसे संचालित युवक कलको कहेगा....क्या हमारा जीवन अैसा था ?

(अनुवादक—श्री मोरेश्वर तपस्वी 'अथक')

कुछ मनपसन्द शेर-सुख़न

सच है 'बेखुद' से क्या मिले कोअी।
आदमी आदमीसे मिलता है॥
(बे-खुद = बेहोश, जो अपने आपेमें न हो)

दिल दिया, दर्द दिया, दर्दमें लज्जत दी है।
मेरे अल्लाहने क्या-क्या मुझे दौलत दी है॥

रंज हो, दर्द हो, वहशत हो, जुनूँ हो कुछ हो।
आप जिस हालसे खुश हों, वही हाल अच्छा है॥

या तो है देखनेमें नज़रका मेरी कुसूर।
या कुछ बदल गया है, जमानेका हाल अब॥

जो तमाशा नज़र आया अुसे देखा समझा।
जब समझ आ गअी दुनियाको तमाशा समझा॥

ग़म जो खाता हूँ तो मुझको खाअे जाता है यह ग़म।
"खाअूँगा फिर क्या मैं दुनिया भरका ग़म खानेके बाद ?"॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पागलपनका अिलाज

—श्री लाडली मोहन

नित्यकी तरह दफ्तरसे आकर मिस्टर कपूरने कपड़े अुतार दिअे और आराम कुर्सीपर बैठकर अखबार पढ़ने लगे। अुनके आफिससे आते ही अुनकी पत्नी कृष्णाने चाय चढ़ा दी और प्लेट साफ करने लगी। अखबार पढ़ते हुअे कभी-कभी कपूर साहब पत्नीको आफिसकी कोअी मनोरंजक घटना सुना दिया करते थे अथवा कृष्णाके पास कोअी बात होती थी तो वह सुना दिया करती थी।

अेक प्यालेमें चाय और तीन चार बिसकुट लेकर जैसे ही कृष्णा पतिके सामने पहुँची त्यों ही मिस्टर कपूरने अखबार फाड़ डाला और प्यालेको अुठाकर चौकमें फेंक दिया। अिसके बाद अुन्होंने बिसकुटोंवाली प्लेट अुठाअी और अुसे हवामें तैराते हुअे मकानकी छत पर फेंक दिया। बिसकुट अिधर-अुधर बिखर गअे। कृष्णा किंकर्तव्यविमूढ़-सी देखती रही। वह सोच रही थी अैसा तो अिन्होंने आजतक नहीं किया था। न जाने मुझसे क्या गलती हो गअी है। फिर सोचा शायद आफिसमें कोअी बात हो गअी हो, पूछा, "क्या बात है, कैसे नाराज हो गअे हो?"

अुत्तर देनेके लिअे कपूर साहब मुँहसे नहीं बोले, केवल चले जानेका अिशाराकर दिया और पलंगपर जाकर चुपचाप लेट गअे; अुस अवसरपर कृष्णाने वहाँसे हट जाना ही ठीक समझा।

करीब दो घन्टे पलंगपर गुम-सुम पड़े रहनेके बाद कपूर साहबने कृष्णाको आवाज दी, "सुनती हो।"

अिन दो घन्टोंमें कृष्णा न जाने कैसी-कैसी कल्पनाअें कर गअी थी। आवाज सुनते ही दौड़कर पहुंची और बोली, "जी"।

कपूर साहब अुठकर बैठ गअे। कृष्णाको अपने पास बिठा लिया और बोले "मैं बहुत घबरा रहा हूँ।"

"आखिर घबराहटकी कोअी बात तो होगी ही?"

"हाँ बात है तभी तो घबरा रहा हूँ। मुझे अैसा मालूम पड़ता है कि जैसे मेरा दिमाग खराब होता जा रहा है। मुझे कभी-कभी पागलपनका दौरा अुठता है। चाय फेंकते समय मुझे यही दौरा अुठा था। अेकबार आफिसमें भी अुठा था पर किसीको पता नहीं चला। अभी तो मैं अपनेको कन्ट्रोल कर लेता हूँ। सोचता हूँ यदि स्थिति कहीं अधिक बिगड़ गअी तो क्या होगा। आफिसमें बड़े साहबको कहीं पता चल गया तो नौकरी जाती रहेगी।"

विषय जितना गम्भीर था कृष्णा अुससे कहीं अधिक घबरा गअी। वह पतिका सिर सहलाने लगी और बोली, "अब अिसका अिलाज कराअिअे।"

"नहीं-नहीं, अिलाज करानेमें कअी खतरे हैं। बाहरके लोगोंको पता चल जायगा। आफिसवालोंके कानोंमें भी अिसकी भनक पड़ सकती है। वास्तवमें अिसका कोअी अिलाज ही नहीं है। मेरा तो यह ख्याल है कि जितना मैं अिस पागलपनके बारेमें सोचूंगा अुतना ही यह और बढ़ेगा।"

"आप मेरी बात मानिअे, चाय बिलकुल बन्द कर दीजिअे। दिनभरमें आप छह-सात प्याले पी डालते हैं। अिससे जरूर कुछ नुकसान होता होगा।"

"देखा जायगा, तुम चिन्ता न करो। मैं स्वयं काफी समझदार आदमी हूँ, परन्तु तुम किसीसे जिक्र न करना।"

कृष्णाको खाना बनाना था। वह अुन सभी चीजोंको सोच गअी जो गरम होती हैं। आलू गरम होते हैं। नहीं बनाने चाहिअे। आलूकी तरकारी दिमागको गरमी पहुँचा सकती है। रातको भी दूधके बजाय दहीकी लस्सी दूं तो कैसा रहेगा।

अिस घटनासे तीसरे दिन सुबह कृष्णाने देखा कि पति-देव ब्लेडसे पलंगके बान काट रहे हैं। पट्टियोंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बराबरसे सारे बान काटकर अुन्होंने अलग कर दिअे थे। अुसने फौरन पूछा, "आपने यह क्या किया? सारा पलंग बेकार कर दिया।"

"तुम मेरी हर बातमें टाँग क्यों अड़ाती हो? मैं जो ठीक समझता हूँ, करता हूँ। तुम बीचमें बोलनेवाली कौन हो? ज्यादा बक्-बक् करोगी तो कान पकड़कर बाहर निकाल दूँगा।"

कृष्णाको जान पड़ा कि अैसे अवसरोंपर बड़े मिठाससे बोलना चाहिअे। अन्यथा अिनका गुस्सा और बढ़ जायगा, बोली, "मैं कुछ कह थोड़ी ही रही हूँ, आप नाराज न हों।"

मिस्टर कपूर रो पड़े, बोले, "मुझसे गलती हुअी। मैं माफी चाहता हूँ। मुझे तुमपर गुस्सा नहीं करना चाहिअे था। वास्तवमें सुबहको चूल्हा सुलगानेमें तुम्हें काफी दिक्कत होती है। अिसलिअे तुम्हारी सुविधाके विचारसे मैंने पलंगके ये बान काट डाले थे। खैर, पानी तैयार हो तो मैं नहाने जाअूं?"

"तैयार है।"

पतिके चले जानेके बाद कृष्णा बहुत देरतक पलंगको गौरसे देखती रही, अुसका दिल घबरा रहा था। अैसी अजीब हरकतोंके समय वह पतिका चेहरा देखा करती थी। आखोंमें बहुत चमक होती थी। चेहरेपर फीकापन होता था। अुसने पलंगमें कहीं-कहीं जो बान लगे रह गअे थे अुन्हें भी अलग कर दिया, फिर अेक ओर अुसे कोनेमें खड़ा कर दिया।

नहाकर आते ही कपूर बोले, "मुझ जैसा गधा आदमी भी शायद ही कोअी हो। अच्छे खासे पलंगका नाश कर दिया।"

खाना खाकर जब कपूर साहब आफिस चले गअे तब कृष्णाने अेक अच्छी-सी धोती पहन ली और घरका ताला लगाकर अेक डाक्टरके पास पहुँची। यह मनोविज्ञानके डाक्टर थे। विदेश घूम आअे थे। पागलोंका अिलाज भी करते थे। कृष्णाने अकसर अुनके बारेमें सुना था। कृष्णा स्वयं पढ़ी लिखी थी, स्थानीय कॉलिजमें थर्डअियर तक शिक्षा प्राप्त की थी। चतुर थी। अुसके दो बच्चे देहरादूनमें पढ़ते थे। अुसने मन-ही-मन निश्चय कर लिया था कि पतिकी अिस बीमारीको अवश्य अच्छा करना होगा अन्यथा परिवारका सर्वनाश हो जाअेगा।

कृष्णाको देखकर डाक्टरने पूछा, "बताअिअे मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ?" कृष्णाने अपना गलत परिचय अिस प्रकार दिया, "रामनाथजीको तो आप जानते ही होंगे जिनकी बरफकी मिल है।"

"जी हाँ, जानता तो नहीं, मगर नाम सुना है।"

"वह मेरे पति होते हैं। अुनको अपने पागल होनेके बारेमें वहम हो गया है।" अिसके बाद अुसने वह सब हरकतें बता दीं जो अुसके पतिने समय-समयपर की थीं।

"मैं बिलकुल समझ गया देवीजी। यह अुनका वहम नहीं है। वास्तवमें अुन्हें पागलपनके दौरे आने लगे हैं। बढ़ते-बढ़ते यह अेक दिन स्थायी रूप ले लेंगे। और आप यकीन मानिअे कि अिसका ठीक अिलाज हो नहीं पाता जबतक कि मरीज बहुत ही बुद्धिमान न हो। अिसकी दूसरी स्टेजपर मरीज स्वयं दूसरोंसे कहने लगता है कि मैं पागल हो रहा हूँ या हो गया हूँ। फिर जब साथी लोग मजाक अुड़ाते हैं तब वह और पागल हो जाता है। झुँझलाता है और अपनेको पागल कहना बन्द कर देता है। अिस समय वह अजीब-अजीब हरकतें करने लगता है। फलस्वरूप दूसरे अुसे पागल कहने लगते हैं।"

"तो अिसका कोअी अिलाज नहीं है?"

"मैंने अभी आपको बताया कि अिस प्रकारके रोगियोंका अिलाज जिस प्रकार होना चाहिअे वैसा हो नहीं पाता। यही कारण है कि वह अच्छे नहीं होते। जैसा हम चाहते हैं वैसा ही अिलाज हो जाय तो प्रायः सभी रोगी अच्छे हो सकते हैं। आपके यहाँ आनेका अुनको पता है?"

"जी नहीं।"

"अच्छा तो देखिअे मैं अेक प्रयोग करता हूँ, लगता है जैसे सफल अवश्य होगा। मैं आपको अेक दवा दे रहा हूँ, अिसका न कोअी स्वाद है न रंग। अिसे आप अुन्हें सादे पानीमें घोलकर पिलाती रहिअे। अुन्हें यह पता नहीं चलना चाहिअे कि मैं दवा पी रहा हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अितना कहनेके पश्चात् अुन्होंने किसी दवाअीकी बीस पुडियाँ बाँधकर दे दीं और अेक बहुत ही पतली किताबमेंसे अुन्होंने अेक पृष्ठ फाड़ लिया। अुस पृष्ठको कृष्णाको देते हुअे बोले, "शामके समय कोअी भी सूखा खाद्य पदार्थ तुम अुन्हें अिस कागजपर रखकर देना, आपकी चेष्टा अैसी होनी चाहिअे जिससे वह अिस कागजको पढ़ लें। अिस कागजमें अेक बहुत-ही प्रसिद्ध विदेशी डाक्टरकी तारीफें लिखी हुअी हैं जो मानसिक रोगोंका विशेषज्ञ है। मैं चार पृष्ठोंकी अेक पुस्तक लिखूँगा और अिसी डाक्टरके नामसे दस बीस प्रतियाँ छपवा लूँगा। अिस पुस्तकको तुम अुन्हें पढ़नेको दे देना। बस, मेरा विश्वास है कि वह जरूर ठीक हो जाअेंगे।"

कृष्णाने झुकी हुअी आँखोंसे डाक्टरको बहुत-बहुत धन्यवाद दिया। जब रुपअे पूछे तो डाक्टरने कहा, "मैं तो शौकिया अिलाज करता हूँ। आप केवल पुस्तककी छपाअी दे दीजिअेगा।"

आफिससे लौटकर कपूर साहबने कृष्णाको बताया कि आज आफिसमें बहुत गड़बड़ हो गअी।

"क्या हुआ?"

"मैंने अेक चपरासीको बिना कसूर निकाल दिया।"

"यह तो बहुत बुरा किया, लोगोंको शक हो गया होगा?"

"नहीं शक तो किसीको नहीं हुआ, परन्तु मैंने अुसे अिसी वहमपर निकाल दिया कि वह दूसरोंसे मेरी बुराअी करता फिरता है। मुझे लगा कि जैसे वह कहता फिर रहा हो कि मिस्टर कपूर पागल हो गअे हैं। वास्तवमें अुसने किसीसे कुछ नहीं कहा था। केवल मेरा वहम था। किसीके मुँहसे पागल शब्द सुनते ही मैं सर्तक हो जाता हूँ। यह अधिक सतर्कता भी तो नुकसान देती है।"

"चपरासीको कल फिर रख लीजिअेगा?"

"हाँ, कल वापिस बुला लूँगा।"

कृष्णा अब बहुत ही मिठाससे बोलने लगी थी। पीनेवाले पानीमें वह नियमित रूपसे दवा मिला दिया करती थी। अुसे अिस बातकी भी खुशी थी कि डाक्टरके यहाँसे जो पृष्ठ वह लाअी थी अुसके पतिने अुसे पढ़ा ही नहीं; बल्कि सम्भालकर भी रख लिया था। पाँच-छह दिन बाद कृष्णाने पतिको चार पृष्ठोंवाली अेक किताब दी और कहा, "मैं कहती थी ना कि आपको केवल वहम हो गया है। किताबोंकी दुकानसे मैं यह किताब लाअी हूँ। किसी अँग्रेज डाक्टरकी किताबका अनुवाद है। पढ़कर तो देखिअे।"

मिस्टर कपूरने पढ़कर देखा। किताबमें जो लिखा था अुसका सार अिस प्रकार है।

अिस प्रकारके रोगी अजीब-अजीब हरकतें करने लगते हैं। कभी मुँह देखनेका शीशा फोड़ देते हैं। कभी चायकी प्याली अुठाकर फेंक देते हैं। हर बातमें शक करते हैं। पत्नीको पीटने लगते हैं। अुन्हें लगता है जैसे अुनका दिमाग खराब हो गया हो। वह यह भी सोचते हैं कि यदि अिस पागलपनके बारेमें और अधिक सोचेंगे तो और पागल हो जाअेंगे। अित्यादि... वास्तवमें अिस बीमारीका पागलपनसे कुछ सम्बन्ध ही नहीं होता। यह अेक अलग बीमारी होती है। जो अमुक विटामिनकी कमीसे पैदा हो जाती है। अिस प्रकारके रोगियोंको शीघ्र ही अेक कैलशियमका अिन्जेक्शन लगवा लेना चाहिअे। बीमारी सदाके लिअे दूर हो जाती है।

कपूर साहब अिस पुस्तकको पढ़कर बहुत खुश हुअे। अितनी सुन्दर पुस्तक देनेके लिअे अुन्होंने पहिले पत्नीका हाथ चूम लिया; फिर कपड़े पहनकर अेक डाक्टरके यहाँ जाकर कैलशियमका अिन्जेक्शन लगवा आअे।

अब वह बहुत खुश थे। कैलशियमके अिन्जेक्शनमें अेक विशेषता होती है। मनुष्यको अपना शरीर हलका-सा प्रतीत होने लगता है। कपूर साहबको लगा कि जैसे वह वास्तवमें बिलकुल ठीक हो गअे हैं।

कृष्णा देवी भी खुश थीं। असल बात वह शायद अपने मुँहसे कभी नहीं निकालेंगी।

मिस्टर कपूरको वैसे दौरे फिर कभी नहीं आअे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजी भंगिन

—श्री चुन्नीलाल मड़िया

भंगी बस्तीमें गरबाके स्वर गूँज रहे थे। मुहल्लेमें ही नहीं, बल्कि सारे गाँवमें 'चाँदका टुकड़ा' मानी जानेवाली युवती राजी गा रही थी और दूसरी तरुण स्त्रियाँ अुसका साथ दे रही थीं।

मुहल्लेकी झोंपड़ियोंके बीच अेक छोटा-सा मन्दिर बना था। चारों ओर गोबरसे लिपी-पुती जमीन। मन्दिरमें अेक लम्बे-चौरस पत्थरपर दो आंखें खोद दी गअी थीं और वही था अिस बस्तीका देवता, देवी या भैरव, जो भी कहो। मन्दिरके आसपास चारों ओर घूमने-फिरने लायक खुला दालान था। रामनवमी तथा गोकुल-अष्टमीके त्यौहारोंके अवसरपर सब लोग वहाँ जमा होते और भजन-कीर्तन तथा गरबा गाते। बीच-बीचमें कभी-कभी स्त्रियां भी वहाँ गरबा गातीं।

'अुकला राजीको ब्याह कर लौटा, तब राजीके साथ ही वह अुसके गाँवके गरबे भी ले आया है,' यही सब अुसे मजाकमें कहते रहते। राजीको गरबे गानेका बड़ा शौक था। गाँवमें आते ही अुसने मुहल्लेकी गाने-वाली लड़कियोंके साथ मेलजोल बढ़ा लिया। रातको झटपट अपने कामसे निबटकर राजी घरसे निकल पड़तीं—'अरी चलियो, गरबा गाअें।' और चौकमें गरबोंका समाँ बँध जाता।

अिस वक्त सारे मुहल्लेके लोग चौकमें जमा थे। तमाम झोंपड़ियोंकी तरुण बहू-बेटियाँ गरबे गा रही थीं। बड़े-बूढ़े अपनी झोंपड़ियोंके बाहर पुरानी टूटी-फूटी चारपाअियोंपर पड़े-पड़े सुन रहे थे। छोटे बच्चे वृद्धोंकी बगलमें सो रहे थे और कुछ किशोर वयके गरबेके कुंडलके बीच धूलके ढेर बनाकर खेल रहे थे। पुरुष वर्गमेंसे कुछ लोग बीड़ी बनानेवालों द्वारा फेंके हुअे पत्तोंको चुनकर बैठे-बैठे अुसकी बीड़ियाँ बना रहे थे। छैल-छबीले रसिक वृत्तिके युवकोंने अपनी निराली ही मण्डली जमाअी थी, जिसमें अेक दूसरेका मीठा हास-परिहास चल रहा था।

"अरे पेमला, यह तेरी लखुड़ी भी क्या गजबकी नाचती है। धमसे कदम रखती है तो ठेठ यहाँ तक धरती काँप अुठती है।"

"अरे, वह तो पेमलाको भी कम्पित कर देती होगी।"

"हाँ भाअी, सचमुच है तो बड़ी जबरदस्त!"

दूसरेने बात बदली: "तालीकी थाप तो बस संतलीकी मानी जाअेगी!"

"हाँ, बाकी सब बोदे।"

किसी सूक्ष्मदर्शीने खोज की: "यह मणकी अब जवान हो गअी है, मगर रघा बुड्ढेकी आँख ही नहीं खुलती।"

"सिरपर मैलेका डब्बा रखकर जब चलती है तब बस देखते ही बनता है।" किसीने दर्शन-मीमांसा की।

"तेरे जैसेको देखकर—"

"अबे रहने दे। देखता नहीं, तेरी ओर तो वह आँख भी मारती जाती है!"

फिर बात बदली।

"बेटा, नसीबदार तो बस अुकला ही है।" किसीने असन्तोषका निःश्वास लेकर कहा, "राजी जैसी औरत पा गया।"

"राजी तो राजाके घर शोभा बढ़ाने लायक है।"

"नहीं तो हमारी भंगी जातिमें कहीं अैसा रूप देखा है कभी?"

"यह रही अेक नाथड़ी नकटी।" किसीने बीचमें बोलकर सबको हँसा दिया।

"राजी तो चाँदका टुकड़ा है। ब्राह्मण-बनियोंके पाखाने साफ करते हो, मगर कहो, कहीं भी अैसा रूप देखा है?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सारा गाँव अिसके पीछे दिवाना हो गया है। यह आअी और गाहक छूटने लगे। सब लोग कहते हैं कि तीनके बजाय चार आने महीना देंगे, लेकिन पाखाना साफ करने तो बस राजी ही आअे।"

"अरे भाअी, कहेंगे क्यों नहीं? राजी जैसी अप्सरा तो अिन्दर राजाके यहाँ भी नहीं होगी।"

"जमादार अिसके अूपर लट्टू हो गया है। कल अुसकी कचेरीके पीछे राजी साड़ीका कच्छ मारकर झाड़ू निकाल रही थी, तब वहाँ आकर जमादारने अुसे बिना माँगे सिगरेट पीनेको दी।"

"अभी कहीं-न-कहीं यहाँ बैठा गरबा सुन रहा होगा और बेचारेके मनपर साँप लोट रहे होंगे।"

"अरे रातको नींद भी हराम हो जायगी।"

फिर बात मूल विषयपर आअी।

"बेटे अुकलेको कैसी लखमी जैसी औरत मिली!"

"हंस और कौअेकी जोड़ी!"

वहाँ बातचीतके सभी रस विद्यमान थे। दिन भरकी थकान अिस वक्त गायब हो गअी थी। झोंपड़ियोंके बाहर ही झाड़ू, टोकरे और टीनके टूटे-फूटे डब्बे आदि पड़े थे। पीछे गाँवके गन्दे पानीके निकासकी नाली बह रही थी, जिसमेंसे सिर फाड़ देनेवाली तेज दुर्गन्ध आ रही थी।

युवती स्त्रियोंने गाँवका मैला ढोते-ढोते गन्दे बने हुअे घेरदार घाघरे और सेठानियोंके पाससे जिद्द करके प्राप्त की हुअी फटी-फटाअी चोलियाँ पहन रखी थीं, दूसरे वस्त्रोंके अभावके कारण महीनोंसे अिनमें धूल और पसीना जमा होता जा रहा था। लेकिन अिस समय मुहल्लेके यौवनकी तरंगमें ये मैले-कुचैले गन्दे वस्त्र जरा भी बाधा नहीं डाल रहे थे।

राजीने जब गरबा पूरा किया तो सब लोग अुससे अेक और गानेके लिअे आग्रह करने लगे।

"राजी, अेक और सुनाओ।"

"अब तो तुममेंसे भी कोअी गाअे। क्या मैं ही अकेली गाती रहूँगी?" राजी बोली।

"लेकिन तेरे जितने गीत यहाँ आते भी किसे हैं?"

"अरी राजी, तुम अितने गरबे कहाँसे सीख आअी?" किसीने पूछा।

"अपनी माँसे। वह रोज सुबह चक्की पीसते हुअे गाती और मुझे याद हो जाते।"

"राजी, 'नहीं जाअूं सासरिअे' वाला गरबा गा तो भला।" मणकीने कहा।

"मणकी, तुझे ससुराल नहीं जाना है, अिसीलिअे गवा रही है?"

"हाँ हाँ, बस यही गा।" सबने कहा।

राजीने पुरजोश स्वरमें ललकारा:

"ना मा, नहीं जाअुं सासरिअे रे.....
हो, ना मा, नहीं जाअुं सासरिअे रे।"

[माँ, मैं ससुराल नहीं जाअूंगी, नहीं जाअूंगी।]

नवयुवकोंमें अिस गरबेकी चर्चा जागृत हुअी।

"अरे, यह मणकी तो सासरे जानेकी नाहीं करती है।"

"तो बेटे अब तुम बैठो हाथ मलते!"

राजीने आगे चलाया—

"सासरिअे जाअुं तो मारो ससरोजी भूंडो
मने लाजडियुं कढ़ावे....हो, ना मा--

[ससुराल जाती हूं तो मेरा ससुर बड़ा खराब है। वह मुझे घूंघट निकालनेको कहता है। माँ, मैं ससुराल नहीं जाअूँगी।]

"अरी, ओ गरबेवाली.....।" अन्तिम झोंपड़ीसे आवाज आअी। "अब यहाँ मर, बड़ी लाजवाली आ गअी।"

राजी घबराकर बोली। "हाय राम! आ गया! मैं तो मुअी गानेमें सब बिसर ही जाती हूँ।" कहकर वह अधूरा गीत छोड़कर भाग गअी। सब मुँह लटकाकर रह गअे।

"यह अुकला अभी थोड़ी देर न आता तो क्या बिगड़ जाता?"

"बेचारीके पाले पड़ा है। झाड़ूसे पीटेगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजीने जैसे ही घरमें प्रवेश किया, अुकलाने अुसका स्वागत किया : "जब देखो, तब गरबे ! बड़े अच्छे लगते हैं क्यों ? ले ! और ले !"

सड़-सड़-सड़ लाठीकी तीन आवाजें आअीं । "अिस तरह गरबे गा-गाकर ही सारे गाँवकी आँखमें चढ़ गअी है । वो तेरा काका जमादार आधी रातको मोटरमें अुठा ले जाअेगा तो क्या करेगी ?"

अिस प्रश्नका अुत्तर भी अुसने खुद ही राजीके घुटनेपर लकड़ी जमाकर दिया ।

"अुकला, बेचारी दो घड़ी गरबे गाती है तो अिसमें तेरा क्या लुट जाता है ?"—कहकर किसीने अुसके हाथसे लकड़ी छीन ली ।

"अैसी रतन जैसी औरतको कहीं अिस तरह पीटा जाता है ?"

"धत् तेरेकी । खबरदार जो कहीं झोंपड़ीसे बाहर कदम रखा !" अुकलाने अपना स्वामित्व दरशाया ।

दूसरे दिन राजीको अुसकी सहेलीने पूछा, "क्यों राजी, अुकलाने क्या कल बहुत मारा ?"

"कहीं भूल-चूक हो जाअे और वह मारे तो अिसमें क्या होता है ?"

"लेकिन सुनती हूँ लकड़ीसे मारा था ?"

राजी बोली, "वह तो पति है, पतिके हाथ मार खानेमें शरम कैसी ?"

फिर तो मुहल्लेमें जहाँ-जहाँ भी कर्कशा स्त्रियाँ थीं, वे सब राजीकी मिसाल देने लगे : "स्त्री तो बस अेक राजी है । अुकला ढोरकी तरह पीटता है, लेकिन मुँहसे अेक अक्षर नहीं निकालती । कैसी मार ! और कैसी पत्नी !"

अेक दिन राजी दरबार-गढ़में झाड़ू लगा रही थी । जमादार अूपर खिड़कीमें चुपचाप खड़ा था । कुछ समय बाद राजीके अकेली पड़नेपर वह नीचे आया और राजीको सिगरेट देते हुअे बोला, "ले, पी ।"

"अँ हूँ ! हम भंगी लोग अैसी सफेद बीड़ी नहीं पीते"—कहकर वह फिर पलकें झुकाअे बुहारने लगी ।

किसीके पैरोंकी आहट पाकर जमादार वहाँसे खिसक गया । राजीकी सहेलियाँ आ गअीं ।

"चल राजी, अब और कितना बुहारेगी ? हम सब जानती हैं, तू अितना क्यों झाड़ रही है !" लखुड़ीने सूचक अर्थमें कहा ।

"किसलिअे ? कह तो भला ?" राजी अेक बालककी तरह खिल-खिलाकर हँस पड़ी । कोमल गुलाबी अधरोंके बीच लाल-लाल रंगे हुअे दाँत अनारकी कलियोंकी भाँति चमक अुठे । हँसते समय गालोंपर पड़नेवाली ललाअी तो अनेक जमादारोंको अपनी तरफ आकृष्ट करनेकी शक्ति रखती थी ।

लखुड़ीने सिर्फ आँखों ही आँखोंमें कुछ कहा । "मगर किसलिअे बुहारती थी ! बोल न ?" राजीने फिर पूछा ।

"जमादारके पाससे सफेद बीड़ी पीनेके लिअे और क्या ? क्या हमें भगवानने आँख भी नहीं दी है ?"

"हाय राम ! क्या मैं अिसलिअे बुहार रही थी ? मैं तो अपनी '**सायबा सड़कुं बंधाव्य**' वाले गरबेके बोल याद कर रही थी ।"

झोंपड़ियोंकी ओर लौटते हुअे सब चर्चा करने लगीं :

"कमबख्त अीश्वरने हमें रूप भी नहीं दिया, नहीं तो कम-से-कम सफेद बीड़ी तो पीनेको मिलती !"

"हमारा तो सारा जनम होटलकी सीढ़ियाँ झाड़ते-झाड़ते जो ठूँठ हाथमें आ जाते हैं वही पीते-पीते गया । पूरी बीड़ी तो तीज-त्यौहारको ही नसीब होती है ।"

'हर रोज सफेद बीड़ी पीनेको भी भाग्य चाहिअे ।"

"और वह भी फिर जमादार सा'बके हाथकी !"

सबने राजीकी ओर देखा ।

राजी बिना कुछ समझे-बूझे अपनी निर्दोष हँसी हँस दी । लेकिन अुसकी सहेलियोंको अिसमें अनेक अुत्तर मिल गअे । और किसीके विषयमें कोअी सम्मति बनानेमें अुत्तरकी जरूरत कहाँ होती है ?

अुकलाका आजकल बड़ा आदर-सत्कार होने लगा । अन्य भंगी अन्दर-ही-अन्दर बातें करते कि अुकलाके अूपर जमादार सा'बकी बड़ी मेहरबानी है । शामको हमेशा जब और सब लोग रास्ते साफ कर चुकनेपर हाजरी देने जाते, तब अुकला 'गुलजारे मदीना'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हॉटेलके सामने फुटपाथपर बैठा-बैठा किसी साहबी अदासे चाय पी रहा होता ।

हाजरी भरानेके लिअे जानेवाले अुसे पूछते, "अुकला, हाजरी देने आता है ?" तो वह कपसे सिर अुठाअे बिना ही कहता कि हमारी तो बिना हाजिर हुअे भी हाजिरी लगती ही है । और दरअसल, पहली तारीखको कारकून बिना किसी दोषके जब हरेकके वेतनमेंसे दो-चार दिन काट देता, तब अुकलाको पूरे तीस दिनका वेतन मिलता । सब मन-ही-मन कहते— "सालेपर जमादारकी बड़ी मेहरबानी है ।"

× × ×

आज राजी जमादारका बाड़ा बुहारते हुअे गरबा गुनगुना रही थी कि घरके पिछले दरवाजेकी ओर कुछ खड़खड़ाहट हुअी । लेकिन राजी तो अपने गानेकी धुनमें बुहारती ही रही । झाड़ू लगा चुकनेपर कचरा टोकरीमें भरकर जब वह बाहर जा रही थी कि दरवाजा खुला और जमादार आया ।

"राजी, देख यहाँ तो कचरा ही पड़ा है ।" अपने पैरके पास जमादारने कुछ बतलाया ।

राजी टोकरा नीचे रखकर ज्यों ही निकट पहुँची कि जमादारने अुसे नशेसे चकचूर लाल-लाल आँखें नचाते हुअे साड़ी पकड़कर अपनी ओर खींचा ।

राजी समझ गअी । बोली, "हाय, हाय ! जमादार सा'ब, आप तो मेरे बाप बराबर हैं । यह क्या करते हैं ?"

घरमेंसे जोरकी आवाज आअी : "अरे बाड़ेमें कौन गया है...? "

जमादारने राजीको तुरन्त छोड़ दिया । "जा, भाग जा जल्दी ।"

× × ×

"अुकला, तुझे जमादार सा'ब बुला रहे हैं"— अेक सिपाहीने आकर कहा ।

अुकला काँप अुठा । वह सिपाहीके साथ जाकर जमादारके ऑफिसमें हाथ जोड़कर खड़ा हो गया ।

"क्यों बे, आजकल तेरी औरत बड़ा मिजाज करने लगी है ?"

अुकलाके लिअे अितना ही काफी था ।

"हैं...हैं .. साब !" अुकलाकी आँखोंमें अँधेरा छा गया ।

"कचरा अुठानेको कहते हैं तो अुठाती नहीं । नवाबजादी ! और आज अभीतक बाड़ा साफ करने क्यों नहीं आअी ?"

"हैं ? नहीं आअी ? अभी हरामजादीकी हड्डी-पसली ठीक किअे देता हूँ ।" अुकलाने जमादारको अपने स्वामित्वका परिचय देते हुअे कहा ।

जमादारका गुस्सा दूसरी दिशामें मुड़ गया । "यह ले, अिस महीनेकी तनख्वाह ले जा ।" जेबमेंसे रुपया निकालकर अुकलाको देते हुअे कहा । "देख, अुसीको देना हाँ ।"

"जी सा'ब ।"

"और सुन, कल यदि वह बाड़ा साफ करने नहीं आअी तो साले सब भंगियोंकी हड्डी-हड्डी तोड़कर रख दूँगा । मुहल्लेमें रहना मुश्किल हो जाअेगा !"

"अजी साहब, आप क्या कहते हैं ! अुसकी क्या मजाल कि आपका बाड़ा साफ करनेसे अिनकार करे ! सालीको धूल न चटा दूँ !"

"ठीक, तो अब जा ।" जमादारने अुकलाको बिदा किया ।

अुकला गुस्सेमें भरा हुआ घर आया ।

"क्योंरी, आज जमादार सा'बका बाड़ा साफ करने क्यों नहीं गअी ?"

"मैं अब वहाँ नहीं जाअूँगी ।" राजीने कहा ।

"तू नहीं जाअेगी तो कौन तेरा बाप जाअेगा ?"

"वह खुद ही क्या बापसे कम है । नीच कहींका !"

अुकलाने चटाकसे अेक लकड़ी जमाअी । "तेरी... जरा ठीक बोल नहीं तो जीभ खींच लूंगा । जमादार सा'बको नीच कहती है !"

"हाँ, हाँ, अेक बार नहीं, सात बार नीच । मुअेके घरमें अपनी माँ-बहन है या नहीं ?"

'और देख ?' अुकलाकी लकड़ीने राजीका मुँह बन्द कर दिया । "जबान सँभाल, नहीं तो....."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाठीके प्रहारोंके साथ-ही-साथ राजीका पुण्य प्रकोप भी बढ़ता जा रहा था। अुकलाको लगा कि अिस प्रकार पीटनेसे तो जुआर ही ठीक होती होगी बाकी यह नारी तो हरगिज नहीं; अिसके लिअे तो कोअी और ही अुपाय करना होगा। बोला–"हमें साहबकी मेहरबानीपर जीना पड़ता है। तू अिस प्रकार करेगी तो कैसे चलेगा? अुसका मन राजी रखा होता तो––"

"मर रे मुअे! तू पति होकर मुझे अैसी बात कहता है?"

अुकलाका दिमाग फिर काबूमें न रहा और अुसने लाठी जमाना शुरू किया। "राँड कहींकी। फिर मिजाज करती है। ले, और ले।" अुकलाने अेकके बाद अेक चार लकड़ी जमा दी।

राजी अिस असह्य मारसे लस्त-पस्त होकर अेक कोनेमें घुटने मोड़कर पड़ गअी।

अन्तमें अुकला थक गया और वह भी "आज नहीं तो कल मान जाअेगी"— अैसा सोचकर बाहर चला गया।

× × ×

दूसरे दिन फिर अुकलाने राजीको मनाकर देखा:

"अिस महीनेकी तनखाहका रुपया दिया है।"

"भाड़में जाअे। यह रुपया मेरे लिअे गोबर है।" कहकर राजीने रुपया फेंक दिया।

अुकलाने फिर लाठी अुठाअी। "देख, फिर तमाशा? हरामजादी कहींकी; ये नखरे मेरे घरमें नहीं चलेंगे। काम करने जाना नहीं और सेठानी बनकर रहना!"

"लेकिन काम करनेसे अिनकार किसने किया!" राजी बोली...।

अुकलाने प्रसन्न होकर कहा, "हाँ, जरा अैसी सयानी बनकर बात करे तो कैसी अच्छी लगे! हर महीने नकद रुपया मिलेगा।"

"मगर अपना शरीर बेचकर ही न?"

"यह भी तो शरीरके लिअे ही किया जाता है!" अुकला बोला..।

"अरे थोड़ी शरम रख! बिलकुल बेहया न बन। पति होकर तुझे शरीर बेचनेको कहते हुअे थोड़ी भी लाज नहीं आती?" राजी क्रुद्ध हो अुठी। अूपर हाथ करके बोली, "सिरपर राम बैठा है अुसका तो डर रख।"

"वैसे चलते-फिरते डर रखते फिरें तो भूखे मरें। भगवान कोई नीचे अुतरकर देने नहीं आअेगा।"

"तो यह काम मुझसे नहीं होगा।" राजीने अन्तिम बात सुना दी।

अुकलाने मूँछको बल देते हुअे कहा, "जबतक बाड़ा बुहारने नहीं जाअेगी तबतक खानेको नहीं मिलेगा।"

जब वह झोंपड़ीसे बाहर निकला तो दो-चार पड़ोसियोंने मार-पीटका कारण पूछा।

"अपने लख्खनसे मार खाती है। नहीं तो यों ही कौन मारना चाहता है? कहती है बाड़ा साफ करने नहीं जाअूँगी। बड़े लाट साहबकी बेटी ठहरी न?"

"अपनेको तो अवतार ही यह मिला है फिर न जानेसे कैसे चलेगा!"

"हमें अूँचे वरणके लोगोंकी तरह धरम पालना कैसे पुसा सकता है?"

पड़ोसी चर्चा करने लगे:

"देखे-देखे ये अूँचे वरणवाले! वे कैसा धरम पालते हैं, वह हम कहाँ नहीं जानते? मैलेके डिब्बेमें मरा हुआ बच्चा पानेकी बात क्या भूल गअे?" अेकने धर्म-मीमांसा की।

"हाँ, भाअी! और कल यदि जमादारकी आँख फिर गअी तो मुहल्लेकी अेक झोंपड़ी भी नहीं बचेगी। अुसे तो खुश रखनेमें ही भला है।"

अुकला तुरन्त बोला: "और जमादार सा'बने कहा है कि सीधे नहीं चले तो सबका रहना मुश्किल हो जाअेगा। अब कहो, मैं क्या करूँ?"

सब लोग जमादारके डरसे काँप अुठे।

"दो-चार अच्छी लगा दे तो अपने-आप मान जाअेगी। नहीं तो जो जमादार बिगड़ गया तो अिस महीनेकी पहली तारीखको कुछ भी तनखाहमेंसे हाथ नहीं लगेगा।"

आखिर सबकी सलाहसे अुकलाने राजीको रस्सीसे बाँध दिया और बोला: "अब तो तेरा बाप ही आकर छोड़े तो सही; नहीं तो मर भूखी और प्यासी।"

"मर जाअूँगी। तेरे जैसे नामर्दको पाकर मैं तो कब ही मर चुकी हूँ।" राजीने कहा।

पूरी रात राजी अुसी दशामें पड़ी रही। सुबहसे अबतक अुसने मुँहमें पानीकी अेक बूँद भी नहीं डाली थी। अुकला झोंपड़ीका द्वार बन्द करके गुलजार होटेलकी ओर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चला गया। बादमें राजीका मन विचारोंकी तरंगमें पड़ गया। "अब क्या करूँ? मुआ जमादार भी हठ करके बैठा है। पता नहीं मुझमें अैसे क्या हीरे मोती जड़े हैं, जो वह लेना चाहता है! सब कहते हैं कि राजी तो अैसी खूब-सूरत है कि बड़े-बड़े राजे-महाराजे भी अुसकी कदर करें। क्या सचमुच ही कोअी अैसी बात है? भाड़में जाअे यह रूप। अिसके बजाय तो कुबड़ी होती तो ज्यादा अच्छा रहता। आज यह दिन तो नहीं देखना पड़ता। लेकिन अब क्या किया जाय! कल बाड़ा साफ करने जाअूँ? अरेरे! शरीर भ्रष्ट कर दूँ? अूपर बैठा हजार हाथ-वाला खा ही जाअेगा! घरकी अिज्जत धूलमें मिल जाअेगी। अेक तो अभी ही भंगीका अवतार मिला है और अैसा पाप करूँ तो पता नहीं, अगले जनममें कौन-सी देह मिलेगी? मेरे माँ-बापकी लाज जाअेगी सो अलग। मुहल्लेकी वसे तो बहुत-सी स्त्रियां अैसा धन्धा करती हैं। लेकिन मुझे अेक जनममें दो भव नहीं करने हैं।" अिस प्रकार सोचती-विचारती वह बैठी रही। लेकिन अुसे फिर लगा: "अगर नहीं जाअूँगी तो यह मुझे भूखी-प्यासी ही मार डालेगा। अिसे तो जरा भी दया नहीं है। मार-मारकर हड्डियां तोड़ देता है। यह सब कितने दिन सहा जाअेगा? कल अगर बाड़ा साफ करने जाअूँ तो कम-से-कम मार खानेसे तो बच जाअूँगी।"

यों, कभी यह तो कभी वह—निर्णय करती वह रातभर जागती पड़ी रही।

सुबह अुकला शराब पीकर लड़-खड़ाते हुअे घर आया। आते ही अुसने वही बात शुरू की: "बोल, बाड़ा साफ करने जाना है या नहीं? या यों ही भूखे-प्यासे मरना है? याद रख, यहाँ कोअी तेरा बाप छुड़ाने नहीं आअेगा!"

राजी बोली: "भले मर जाअूँ, मगर मुझे अैसी रोटी खाकर नहीं जीना है।"

अुकला बाहर बैठा-बैठा नशेमें बक रहा था। राजी कुछ देर चुपचाप पड़ी रही, फिर अेकाअेक बोली, "अुकला, छोड़ दे मुझे; मैं बाड़ा साफ करने जाती हूँ।"

"हूँ, देख पहले ही अैसे मान जाती तो!" अुकलाने खुशी-खुशी राजीको छोड़ दिया।

कोनेमें पड़ी हुअी झाड़ू और टोकरा लेकर राजी बाहर निकली।

अुधर अुकला पड़ोसियोंके साथ गप्प लड़ाने बैठा।

\+ + +

दोपहर हो चली, मगर राजीके अब तक न आनेसे अुकलाको चिन्ता हुअी। थोड़ी देरमें सारे मुहल्लेमें खबर हो गअी कि राजी जमादारका बाड़ा साफ करने गअी है मगर अब तक नहीं लौटी। सब मनमानी कल्पनाअें करने लगे।

"जमादारने घरमें रख छोड़ी होगी।"

"नहीं, नहीं; वह अुसे मोटरमें अुड़ा ले गया है।"

"राजी जमादारको दाद दे अैसी नहीं। वह तो बाड़ा साफ करने जानेके बहाने अपने बापके घर चली गअी होगी।"

"हाँ, हाँ; यही बात होगी। बेचारी अुकलाकी मारसे बची।"

अुकला चारों ओर ढूँढ़ने लगा।

जमादारके घर गया तो अुसने अुलटी फटकार बताअी, "यहाँ तो तीन दिनसे आअी ही नहीं।"

वह आकुल-व्याकुल हो गया। राजीके बापके गाँवकी सड़कपर भी वह दूर-दूर तक देख आया।

मगर सब व्यर्थ।

ठेठ तीसरे दिन सुबह मुहल्लेकी स्त्रियाँ पानीकी मटकियाँ लेकर जब कुँअेंपर गअीं तब अन्दर कुछ रंगीन कपड़ा तैरता हुआ दिखा। तुरन्त आदमी अिकट्ठे हुअे और कुअेंमें अुतरकर राजीकी लाश बाहर निकाली।

जमादारके सिर अिस आत्महत्याके केसका पंचनामा करनेका कठिन कर्तव्य आ पड़ा। अुसने दो घंटेकी कड़ी मेहनतके बाद अुसकी नकल तैयार की और नीचे गाँवके दो सेठोंकी सही और मुहल्लेके दो भंगियोंके अँगूठेकी निशानी ली। बादमें सबके समक्ष, राजीकी मृतदेहके सामने जमादारने पंचनामा पढ़कर सुनाया, जिसमें नीचेका वाक्य वह लड़खड़ाती जबानसे बोला:

"कुअेंके किनारेपर कोअी आड़ या रोक नहीं होनेसे मजकूर बाअी राजी पैर फिसलनेसे कुअेंमें गिर गअी और अिस कारण अुसकी मृत्यु हुअी।"

(अनुवादक—श्री गौरीशंकर जोशी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी और शब्द-माधुर्य

--श्री किशोरीदास वाजपेयी

व्रजभाषाके शब्दोंमें सचमुच कुछ अैसा माधुर्य है कि बहरे लोग भी अिसपर लट्टू हो जाते हैं, विरोधी भी रसास्वादन करने लगते हैं। किसी समय व्रजभाषाका विरोध हिन्दीके रहस्यवादी कवियोंने किया था। कविवर पन्त अग्रगामी थे, जिन्हें मैंने ही समुचित अुत्तर देकर सब ठीक कर दिया था। बहुत दिन बाद कुछ दूसरे कवियोंने भी विरोधकी आवाज अुठाअी, जिनके सेनानी थे पं. रामनरेश त्रिपाठी। अुस मोर्चेका भी सामना मुझे ही करना पड़ा था। सब ठीक हो गया।

बहुत दिन बाद, अबसे दो-तीन वर्ष पहले, अेक मजेदार घटना घटी। कविवर पं. सुमित्रानन्दन पन्तके काव्य-सौन्दर्यपर श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी अपनी सर्वश्रेष्ठ आलोचना-कृति 'ज्योति-विहग' प्रयागमें छपवा रहे थे। पंत-वाणीके सर्वश्रेष्ठ आस्वादक और पारखी हैं द्विवेदीजी; यह वे स्वयं भी अनुभव करते हैं। 'ज्योति-विहग' 'सम्मेलन' प्रकाशित करा रहा था; परन्तु शुद्धता और सजावटका अतिशय ध्यान रखनेवाले द्विवेदी स्वयं वहाँ डटे हुअे थे और बड़ी लगनसे सब काम कर रहे थे। 'सम्मेलन' की अतिथिशालामें डेरा था। मैं भी अुन दिनों वहीं आराम कर रहा था। कभी-कभी द्विवेदीजी आनन्द-विभोर होकर 'ज्योति-विहग' के अवतरण सुनाते हुअे झूमने लगते थे। शब्दोंके संस्कार तथा माधुर्यपर द्विवेदीजी खूब ध्यान देते हैं। अेक दिन पूछने लगे कि शब्द 'ब्रह्म' है, या 'ब्रह्म्' है? मैंने कहा, 'ब्रह्म' है। बोले, अच्छी तरह समझकर कह रहे हैं? मैंने कहा, 'जी हाँ'। बोले—"भाअी, शब्द-संस्कारमें मैं अपनी ही कुछ कसौटी रखता हूँ। मुझे तो यहाँ 'व' अच्छा लगता है। 'ब' तो गँवारू-सा लगता है।"

—"तो फिर मुझसे क्यों पूछते हैं? जो अच्छा लगे, लिखिअे"—मैंने तेजीमें कहा। अिसपर वे स्मित-पूर्वक नरमीसे कहने लगे—"शब्दोंके रसास्वादनमें अपना अन्तर ही काम देता है।"

व्रजभाषाका मोह

अेक दिन द्विवेदीजीके मनमें न जाने क्या आया कि व्रजभाषाके शब्द-माधुर्यपर बात करने लगे। मुझे आश्चर्य हुआ! रहस्यवादी और कानोंके बहरे द्विवेदीजी व्रजभाषाके शब्द-माधुर्यपर थिरक रहे थे। मैंने कहा—"पन्तजीने तो व्रजभाषाका मजाक अुड़ाया है; आप तो अुनके परम प्रिय श्रोता या 'भावक' हैं। यह व्रजभाषा-प्रेम कहाँसे आ गया आपमें?"

—"आप रसकी चर्चाको विष बना देते हैं! भला, अुन बातोंका यहाँ प्रसंग क्या? देखिअे सूरके पद—

मैया मेरो कब बाढ़ैगो चोटी?

रस टपक रहा है!"

—"रस तो टपक रहा है जरूर; परन्तु आपने तो 'मेरो' और 'बाढ़ैगो' करके सूरकी भाषाको चकनाचूर कर दिया!"

—"क्यों? क्या बात है? व्रजभाषामें तो ओकारान्त ही प्रयोग होते हैं।"

—"सब जगह नहीं, केवल पुल्लिग अेक वचनमें 'ओ' रहता है; बहुवचनमें 'अे' हो जाता है और स्त्रीलिंगमें 'अी' हो जाता है।"

—"तो फिर क्या—

मैया, मेरी कब बाढ़ैगी चोटी?

अैसा होगा? मुझे तो ठीक नहीं मालूम पड़ता!" मन ही तो है। कभी बहक जाता है! कितने बड़े मनीषीने बिल्ली और अुसके बच्चेके लिअे कठघरेमें दो पृथक्-पृथक् द्वार बनवा दिअे थे!

पहले तो मनमें आया कि अिनसे कह दिया जाअे कि हाँ, ठीक है— आप ठीक कहते हैं। परन्तु फिर अुनके भोलेपनको देखा और यह देखा कि 'ज्योति विहग' जैसी अनवद्य कृतिमें यह व्रजभाषाकी विरूपता बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भद्दी रहेगी; मैं बदल गया। अुन्हें बताया कि यहाँ 'मेरी' तथा 'बाढ़ैगी' शब्द रहेंगे। पं. शान्तिप्रिय द्विवेदी अच्छे साधक हैं; पर भोले हैं; अिसलिअे अुनसे सब लोग मजाक कर लिया करते हैं।

अिसी समय पं. चन्द्रबली पाण्डेय आ गअे। मुझे मजाक सूझा कि 'मेरो चोटी' की चर्चा छेड़कर मजा लिया जाअे। हम दोनोंको कतअी पता न था कि पाण्डेयजी अपने फारसी-गुरु (श्री महेशप्रसादजी मौलवी फाजिल) का अन्तिम संस्कार करके आ रहे हैं और शोक-मग्न हैं। वे कुछ अनमने जरूर थे; पर मैंने समझा कि कड़ी धूपमें कहींसे आ रहे हैं; और कुछ नहीं! पाण्डेयजी स्नानार्थ धोती-अँगौछा निकालने लगे और मैंने द्विवेदीजीसे कहा—'भाअी, पाण्डेयजीसे भी पूछकर 'मेरो-मेरी' का निश्चय कर लीजिअे। कच्ची चीज 'ज्योति-विहग' में देना ठीक नहीं।'

बेचारे बहुत सीधे तो हैं ही। झटसे पाण्डेयजीकी ओर मुँह करके बोले—

"पाण्डेयजी, 'मेरो चोटी बाढ़ैगो' ठीक है; या 'मेरी चोटी बाढ़ैगी'?"

बस, पाण्डेयजीके लिअे अुस समय अितना बहुत था! भभक पड़े! अितना क्रोध मैंने पाण्डेयजीमें कभी भी न देखा था! द्विवेदीजी पर अुबल पड़े—"आपको कुछ सूझता भी है? जब देखो अंट-संट!"

मैंने समझा कि पाण्डेयजी अिसलिअे अितने नाराज हुअे कि अुनसे मजाक किया जा रहा है—वैसा प्रश्न करके! वे तो स्नान करने नीचे चले गअे और द्विवेदीजी मेरे अूपर बरस पड़े—

"आपने ही ये बातें मुझे सुनवाअीं!" मैं चुपचाप सुनता रहा। बहुत देर बाद पाण्डेयजीसे वह शोक-समाचार मालूम हुआ!

'क्या आप भी बहरे हैं?'

अुस समम द्विवेदीजीको खाँसी आती थी। रातमें ज़ोर बढ़ता था। कभी-कभी मैं कहा करता था—"द्विवेदीजी आप मुझे सोने नहीं देते हैं।" द्विवेदी बेचारे क्या करते?

अेक दिन मैं सो रहा था; रातके नौ बजे होंगे। सदा जल्दी सोता हूँ। द्विवेदीजी मित्र मण्डलमें घूमते-रम लेते दस-ग्यारह बजे तक आया करते थे। अुस दिन मेरी आँख लग ही रही थी। बिजली जलानेसे मेरी नींद खुल गअी। चुप पड़ा रहा। द्विवेदीजीने 'ज्योति-विहग' का प्रूफ देखा और बत्ती बुझाकर लेटे। कोअी बीस मिनट लेटे रहे और फिर अुठकर मेरे पास आकर बोले—

"वाजपेयीजी! वाजपेयीजी!"

—"हाँ, कहिअे क्या है?"

—"क्या, आपको भी खाँसी आती है?"

—"नहीं तो, मुझे कहाँ खाँसी आती है!"

—"आती कैसे नहीं! मैं क्या बहरा हूँ! कान फटे जा रहे हैं! सोने नहीं दे रहे हैं दूसरेको और अुलटे कहते हैं कि हमें सोने नहीं देते।"

अितना कहकर वे अपने पलंगपर जा लेटे। मैं सोचने लगा कि बात क्या है? बात समझमें आ गअी। अतिथिशालाके पिछवाड़े ('सम्मेलन' की ही भूमिमें) बड़े जोरसे लोहा काटा जा रहा था। अुसीकी तेज आवाज आ रही थी। अुसीको द्विवेदीजीने मेरी खाँसी समझ लिया था। मैं अुठकर अुनके पास गया और बोला कि यह लोहा काटनेकी आवाज आ रही है, जिसे आपने मेरी खाँसी समझ लिया है! गम्भीर स्वरमें बोले—

"अब सुनाअी पड़ी है आवाज! और, मुझे बहरा बतलाते हैं!"

मैं आकर लेटा; आनन्द लेता रहा।

संगीत-प्रियता

अेक दिन बात-चीतमें द्विवेदीजीने कहा कि अैसा 'संगी' चाहिअे, जिसे संगीत आता हो।

"आप तो बहरे हैं! संगीतसे आपको क्या मतलब?" मैंने सहज भावसे कहा। अिसपर द्विवेदीजी बहुत नाराज हुअे—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आप लोगोंने मुझे बहरा करके बदनाम कर रखा है ! और बहरा ही सही ! परन्तु संगीतके बड़े-बड़े मर्मज्ञ तो बहरे ही थे।" यह कहकर अुन्होंने कअी बहरे संगीतज्ञोंके नाम गिनाअे। फिर कुछ शान्त होकर बोले--"वाजपेयीजी, मैं वैसा बहरा नहीं हूँ। अेक कानमें मामूली और दूसरेमें कुछ ज्यादा खराबी जरूर है। सो, मैं बंबअी जाकर अिलाज कराना चाहता हूँ।"

अिसके बाद फिर वे बोले-- "आप बहुत धीरे-धीरे कुछ कहिअे। देखिअे, मैं सुन लेता हूँ कि नहीं !"

मैं धीरे-धीरे अेक वाक्य बोला। सचमुच द्विवेदीजीने अविकल सुन-समझ लिया। मालूम नहीं, ओठोंकी ओर ध्यान रखा, या क्या हुआ !

पं. शान्तिप्रिय द्विवेदी भगवती सरस्वतीके अेकान्त आराधक हैं। खूब मनन करते हैं। बहुत सीधे हैं-- मुझसे भी अधिक सीधे ! यही कारण है कि अुनसे बातें करके लोग रस लिया करते हैं। हिन्दी-संसारमें अपने ढंगके द्विवेदीजी अकेले ही हैं। वैसे 'सम्मेलन' के समारोहोंपर पं. भगीरथ प्रसाद दीक्षित तथा (किसी समय) सुकवि श्री दुलारेलालजीसे भी बातें करके लोग रस लिया करते थे। अिनके बिना सम्मेलन-समारोहमें मजा न आता था। परन्तु द्विवेदीजीमें जो सात्विक संस्कृतिका पुट है, वह अन्यत्र नहीं। वे बच्चोंकी तरह किसीके भी सौ खून भूल जाते हैं, माफ कर देते हैं। मैंने स्वयं कभी-कभी अुन्हें बहुत बनाया-खिझाया है, परन्तु अुनका अविच्छिन्न स्नेह मुझे प्राप्त है। अैसे पुरुष अिस युगमें दुर्लभ हैं।

वासन्ती

हिन्दीकी सर्वश्रेष्ठ साहित्यिक तथा सांस्कृतिक मासिक पत्रिका

: सम्पादक :

साहित्याचार्य पंडित सीताराम चतुर्वेदी

वासन्तीके तत्काल ग्राहक बनिअे

क्योंकि

वासन्तीके प्रत्येक अंकमें

१. सरल मुहावरेदार संस्कृतनिष्ठ विभिन्न भाषा शैलियाँ।
२. नाटिका, कहानी, अुपन्यास, पत्र, प्रवचन, निबन्ध, समीक्षा आदि रूप-शैलियाँ।
३. व्यंग्यात्मक, विनोदात्मक, गम्भीर, चिन्तनात्मक, प्रेरणात्मक, उपदेशात्मक, अुद्बोधनात्मक, भावात्मक आदि भाव-शैलियाँ।
४. अितिहास, काव्य, धर्म, दर्शन, कला, आचार, व्यवहार, नीति, मानवजीवन, विज्ञान आदि सब प्रकारके साहित्यिक और सांस्कृतिक विषय और प्रसिद्ध कठिन पदोंकी व्याख्या मिलेगी।

यदि आप अेक वर्षमें हिन्दीके प्रकाण्ड पंडित, वक्ता और लेखक बनना चाहें

तो

आजसे वासन्ती पढना प्रारंभ कर दीजिअे।

वार्षिक शुल्क ८)

१ प्रति ।।।)

व्यवस्थापक वासन्ती
श्री साधु बेला आश्रम
२५९, भदैनी : **बनारस**. यू. पी.

संपादक
आचार्य पं. सीताराम चतुर्वेदी
उत्तर बेनिया, **बनारस**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सड़क

—श्री अनन्तकुमार 'पाषाण'

कितनी लम्बी सड़क दूरतक
दूर-दूर जो होते-होते
है अदृश्य हो गयी जैसे
जीवनकी कड़वी यादोंका
नीला-नीला धुँआँ कसैला
हो जाये अदृश्य गगनमें
विशद समयके—और शून्य फिर !

बाबू लोगोंके जीवन-सी
फीकी-फीकी अूब अुमड़कर
फैल रही है खीसे खोले !

टप-टप-टप-टप बारिश भी तो
कुण्ठित होकर टपक रही है !
जीवनका जो मृत्यु तत्त्व है,
अुसकी अुखड़ रही है साँसें !
नयी चेतना गर्भवती है,
जीवन ग्रहण कर रहा जीवन !
फफक रहा है सन्नाटेका
आलम ! मंजिल दूर नहीं है !
निगल रहे हैं दीर्घ पन्थको
राहीके यह चरण तेज जो
होते जाते हैं प्रति पल ! मन
लालायित है—तोड़ सके वह
वह आकाश-कुसुम, पांखुरियाँ
जिसकी आँखें खोल रही हैं
चिड़ियाके कोमल बच्चों-सी !

अेक कशमकश ! सख्त कशमकश
चलती है, जीवन चलता है।
मानव हार न मानेगा पर
अपराजित है, साहस सुन्दर,
चलता है संघर्ष निरन्तर।

लुत्फ़ जिन्दगीका मर-मरकर
जिन्दा हो जानेकी ताक़त !
तोड़-मरोड़ बनाते हैं हम
मनके माफिक अपनी किस्मत !

लम्बी सड़क, सड़क है लम्बी !
अूबड़-खाबड़ कंकड़वाली !
चट्टानें, दलदल, औ गड्ढे
कीचड़, पत्थर घग्गड़वाली !
अूंची कहीं, कहीं है नीची,
चौड़ी कहीं, कहीं है संकरी !
पक्की कहीं, कहीं है कच्ची
कहीं-कहींपर फैली बजरी !
कहीं पेड़ हैं, दूर-दूरतक
दूरीका फैला लम्बापन !

कहीं नदी, फिर नाले गंदे,
बढ़ता चला जा रहा जीवन !
अक चली बनती लकीर है—
गाढ़े-गाढ़े लाल खूनकी !
छिदे हुअे खुरदुरे पाँवमें
गर्मी हिम्मतके जुनूनकी !

लम्बी सड़क कि जिसपर आते
और निकल जाते हैं आकर
शहर अनेकों, गाँव अनेकों,
छोटे कअी झोपड़े सुन्दर !
कहीं फूसके पीले-पीले
ढेर लगे हैं, खेत बिछे हैं !
कहीं नदीके दर्पणमें निज
देख रहे अपने मुख भूरे—
यह लम्बे खजूर तिरछे हैं !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सड़क न रुकती, पाँव न रुकते
समय न रुकता, प्रगति न रुकती !
गगन न झुकता, सूर्य न झुकता,
भाल न झुकता, प्रगति न झुकती !
बूढ़े-बूढ़े-से मकान वह
खड़े हुअे अपना मुख खोले,
शहर खड़े हैं चुप्पी साधे,
गाँव खड़े हैं चुप्पी साधे,
खुद मानव कमजोर बनेगा
अगर करे फरियाद भूलकर,
पोली हमदर्दी पानेको
या अपना छोटा मुँह खोले ।

सड़क गअी है जीवनमेंसे
होकर--है अितिहास पुराना ।
सड़क तरक्की-सी न रुकेगी
अपना है विश्वास पुराना !
रंग शहीदाना बिखरा है
आज सड़कपर तेज नजरकी ।
बाहर आकर बनी बगावत
कड़वाहट अपने अन्दरकी ।

खड़ा हुआ है घरके दरवाजे
पर मैं अपनी आँखें खोले--
मध्यवर्गके लोग जा रहे
नाटी रुह, फलसफे मंझोले !
खोटा पैसा सिर्फ अँधेरे-
में चल पाता है धोखा दे ।
खुद अपने अरमान छाँटना--
ढलते जीवनकी छलना है ।

फटा जाँघिया अधमैला-सा,
लीली बाँधे निज टखनेपर
जिसपर खूं कत्थअी जम गया
है अुसके फोड़ेसे बहकर--
लड़का अेक जा रहा छोटा
लाल किसी माअीका यह है ।
भोला मुख जिसपर चिन्तनकी
अधकचरी टेढ़ी रेखा है ।
चला जा रहा नीचा मुख कर--
मैंने देवपुत्र देखा है ।
घुटने टेक सिकन्दर अिसके
खड़ा सामने घिघियाता है !
भोला औ अधकचरा लड़का
पुष्ट पुरुष अब बन जाता है ।
कोने-कोनेसे अुमड़ा है
जो जनताका अब सैनिक-दल,
अुसमें मिलकर आज पुरुष बन
वह लड़का बढ़ता है पल-पल !

अुन भोले-भाले बच्चोंकी
जीवन-फुलवारीका माली,
जिनको गर्म हवाके झोंके,
झुलसाते थे भून-भूनकर ।
और कुचल देती थी खुरसे
अपने मृत्यु भयंकर काली ।

हम कलियोंमें खाद डालकर
अुनको फूल बनाने आअे ।
जो कि कजा भोले बचपनकी
अुसको आज मिटाने आअे !

जो संस्कृति, तहजीब भयानक
मानवका मन है अुखाड़ती
अुसके सीनेसे, सपनोंका
सब्ज चमन अुसका अुजाड़ती ।
नोंच प्रेमके कपड़े सुन्दर
नंगा जो करती मानव-मन ।
चाँदी औ' सोनेकी वजनी
सिलसे दबा रही नर-जीवन ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बूढ़ा शाहजहाँ रो-रो कर
चीख रहा है–"ताज छीन लो।
लेकिन कैद करो मत बेटा,
वृद्ध बापको। तुम बेटे हो!!"
औरंगजेब व्यंग्यसे मुस्का-
कर बोला–'ओ बुड्ढे। बक मत!!"
और जेलकी स्याह दीवारें
स्याह हो गअी अुसकी किस्मत।
फांसीपर लटका मुराद है,
आलमगीर ताज पहिनेगा।

हाँ माँको, अुसकी खिदमतसे
खुश होकर "पिंशन" दे देगा।
मानवके रिश्तोंकी साँसें
घोंट रही हैं जो कि व्यवस्था,
अुसको चकनाचूर करेंगे––
ताशोंका घर टिक न सकेगा।
लम्बी सड़क, शहंशाहोंकी
हड्डी अिसकी धूल बनी है।
कितनी लम्बी–और पुरानी
यह खामोश सड़क कितनी है।
पीछे छूटा––अरे, बहुत वह
छूट गया निष्ठुर नज्जारा!
बीत गया वह हैवानोंका
काला-काला क्रूर जमाना–
मुझे याद है––वर्ष हजारों
बीत गअे––शासक वर्गोंके
कुत्ते लिअे हाथमें कोड़े
मार रहे थे दिव्य पुरुषको,
जो सलीब कन्धेपर रखकर
गिरता-पड़ता यों चलता था––
मानों अपराजित साहसका
थका हुआ विद्रोह जा रहा!

अुस सलीबमें अमर हो गया
अुनका जीवन जो अपराजित
कूट-कूट वह सड़क बनाते
जिसका आदि न अन्त नहीं है।
सबके सुखको पेड़ लगाते,
कुअें खोदते, फूल अुगाते,
अूंचे और मकान अुठाते
छातीपर नंगी जमीन की।
जो कि नींवमें खुद गिर-गिरकर,
दीवारोंमें खुदको चुनते।
जिनके जिन्दा गीत सितारे
आसमानमें आकर सुनते।
गीत मशक्कतके तूफानी
गा-गाकर जो सड़क बनाते,
नूतन-नूतन नगर बसाते,
नूतन मानवके बेटे वह
अमर गूंजसे गगन हिलाते।

ओ ओ ओ ओ आ आ आ आ
गीत नये जीवनके गाओ।
झमक-झमककर दमक-दमककर
अैसा अेक आलाप अुठाओ,
जो न मिटे, अूंचा ही चढ़ता
जाअे––हो आरोह चिरन्तन!
पल-पल निश्चय निश्चल निर्मल
जन-जाग्रतिका मोह चिरन्तन।
कोटि-कोटि कण्ठोंसे अुमड़ा
आज थरथराता वह गायन,
जो बयार-सा झुलसे मनमें
गया अुड़ेल नवल संजीवन।
ओ ओ ओ ओ आ आ आ आ
हम धरतीके पुत्र लाड़ले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम ख्वाबोंके खेत अुगाते,
टीड़ी-दलको मार भगाते।
पत्थरको जरखेज बनाते।
मिट्टीमें मोती भर जाते।

लम्बी सड़क, सड़क है लम्बी--
मीठा होगा सफर हमारा।
गर्म चाशनी-से यौवनसे
तगड़ा बदन भरा है सारा!
हम अरूपको रूप दे रहे,
मर-खपकर पथ बना रहे हैं।
पीछे आनेवाली पीढ़ी
राह करे तय हँसते-हँसते,
अिसीलिअे पथके कूलोंपर
पेड़ अनेकों अुगा रहे हैं।
मेरी कविताकी प्याअूपर
प्यास बुझाना थके मुसाफिर।
जब चलते-चलते थक जाओ
कुछ सुस्ताना थके मुसाफिर।
और सफर फिर शुरू करो जब
याद हमें भी तब कर लेना।
अैसे ही चलती है दुनियाँ।
सोच यही आगे चल देना।

लम्बी सड़क, सड़क है लम्बी
लम्बा है अितिहास हमारा।
मोटे-ताजे गीत हमारे
कद्दावर विश्वास हमारा।
वे सब बौने लोग मर गअे
जो बनते थे कभी रुकावट।
पत्थरकी मूरत-सी सुन्दर
अपने तनकी ठोस बनावट।

गीत हमारे गूंज रहे हैं।
गूंज गगनमें फैल गअी है।
ज्यों चिड़ियोंकी लम्बी टोली
पंख खोलकर आज अुड़ी है।
भाषा जीवनकी भाषा है
चलती-फिरती हँसती-गाती।
कभी अुछलती, कभी कूदती
फिर धीरे चलने लग जाती।
सूक्ष्म नहीं, यह स्थूल बनी है
जीवन-सी, वह चित्र बनाती,
जो कि जिन्दगीकी हरकतकी
ठीक नुमाअिन्दा बन जाती।
लम्बी सड़क--सड़क है लम्बी।
ओ! ओ! ओ! ओ! आ! आ! आ! आ!
लमहे बनते लाल मशालें,
कारवान अब अपना चलता।

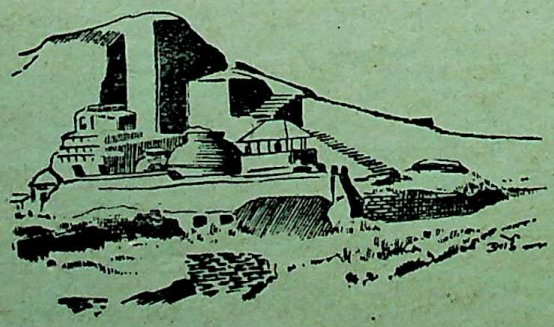

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्मानकी भीड़में

—श्री नन्दकुमार पाठक

अुमानाथ होनेको तो विधुर हो गअे थे लेकिन ससुरालमें अुनके जीवनका श्रेय और प्रेय दोनों पक्ष, पहलेकी तरह ही बने रहे। अिसीलिअे अुनके अेकमात्र पुत्र शशिनाथका विवाह वहींसे हुआ। अुनके गाँव और घरवाले राह देखते-देखते रह गअे, तो यह तो अुनकी आशाकी मरीचिका थी। कुछ लाचार कृपार्थी लोगोंने बड़ी-बड़ी आशाअें कर रखी थीं, सो जहाँकी तहाँ अुड़ गअीं। पहलेकी बात यह थी कि अुमानाथ लेन-देनको जीवनके अेक 'कमर्शियल वैल्यू' का रूप समझते थे। कितना दिया और कितना लिया? अब, अिधर अिनका दृष्टिकोण बदल गया है। अब हो गया है,—किसको कितना दिया और बदलेमें क्या मिलेगा। किसको? अिस 'किसको' का मोल-तोल होता है अुसके सामाजिक स्तरके पैमानेपर। भला, अपने गाँववाले अुन कुटुम्बोंको देकर वे क्या पाते? अुनके जीवनका स्तर कितना अूँचा अुठ सकता था! वे तो स्वयँ बेचारे अकिंचन थे, लाचार थे। हाँ, अुनके दिलमें पुराना प्रेम था, आशा थी, अुमंग थी; तो अिससे क्या? जीवनका हिसाब-किताब अिन लोगोंपर नहीं चल सकता। अुमानाथको तो अैसे समाजमें अपना ठाठ दिखाना था जहाँ अुनका सम्मान बढ़े, अुनका धरातल अूँचा हो सके; लोगोंमें अुनकी चर्चा हो; वे स्तंभित रह जायँ। हिसाब-किताबके अिस पहलूको वे 'सोशल (सामाजिक) वैल्यू' कहते थे।

बाहरके सभ्य समाजमें अुमानाथके शानदार खर्चकी धूम मच गअी। जिधर जाअिअे, अुधर ही चर्चा। सम्बन्ध भी हो रहा था कमिश्नरके घरमें। पीछे देखनेके लिअे वे आगे नहीं बढ़ रहे थे। पीछेवाले पुकारते हैं, तो यह अुनकी माया है। और माया जीवनको दुखमय बना देती है। दर्शनकारोंने योंही नहीं कहा है। हाँ, भीतर महिलाओंके वर्गमें अेक हल्की कानाफूसी चली। वह कुछ ओठोंसे कुछ कानों तक जाकर घरकी दीवारोंके भीतर ही दुबककर रह गअी। अुनकी सासने कहा,—"अरे हम लोगोंको तो लेना है नहीं, हमें तो देना ही है, लेकिन बेचारी कुन्तीको बबुआ अेक साड़ी ही दे देते। यह तो अुनके घरकी ही लड़की थी।"

बहुअें हामी भरकर चुप लगा गअीं और अुधर जाकर कुन्तीको प्यार करने लगीं। अिसकी चर्चा नहीं की। चर्चा नहीं करनेसे भी क्या? कुन्ती पहलेकी ही तरह है? शरीरके विकासके साथ अुसकी चेतना और बोधका भी तो विकास हो गया है! आजकी पृष्ठ-भूमिमें भी वह कितनी पुरानी यादें सँजोअे रखी है। अपनी माँकी याद। अपने पिताकी याद। अुनके सम्बन्धकी अैसी यादें अुसके मस्तिष्कमें आकर जम गअी हैं कि वह रोज भुलाना चाहती है। वे हैं कि भूलतीं नहीं। बार-बार याद आ जाती हैं, और अुसके नन्हेंसे हृदयको दर्दसे भर जाती हैं। रातमें जब वह चार-पाअीपर सो जानेके लिअे लेटती है तो माँकी याद आती है। मृत्यु-शय्यापर पड़ी, खाँसती, ढेर-सा बलगम अुगलती। अुस दिन बरसातकी भींगी साँझमें यही कुन्ती अपनी हथेलीमें थोड़ी-सी गीली मिट्टी लेकर गअी थी माँके पास—"माँ दवाअी लो न, खा जाओ।" माँ खाँसीके दौरका सामना करती हुअी बोली थी,—"जाओ, खेलो।" अुसने कुन्तीकी दवा ले ली थी। और फिर दूसरे दिन अुसकी माँका कुछ पता नहीं मिला। कुन्तीको अुसके पिता भी याद आते हैं। अस्पतालमें बेहोश पड़े थे। वह भी किसीके साथ अुन्हें देखने गअी थी। चेहरेपर दाढ़ी बढ़ गअी थी और वह डूबे पड़े थे। आँखें खोलीं तो कुन्तीको देखा। वह रो रही थी। वह भी रोने लगे थे। दोनों चुप रोते रहे। अितनी दाढ़ी कभी नहीं बढ़ती थी अुन्हें। वे तो रोज बनाते थे। अुफ्। फिर नर्सने आकर कहा—"समय हो गया, अब आप लोग चले जाअिअे।" अिसके बाद अुसे कभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्पताल नहीं ले जाया गया। अुसके पिताका अुसे कुछ पता नहीं चला। वह कितनी ही बार, कअियोंसे पूछ चुकी है। कोअी अुसे अुसके माता-पिताके बारेमें विस्तृत विवरण देना नहीं चाहता। और वह चाहती है कुछ और बातें जानना ताकि वह अिन दुखद बातोंको भूल जाय और दूसरी याद कर ले। पगली कुन्ती अब समझदार होती जा रही है, लेकिन वह अितना नहीं समझ पाती कि किसी बातको भूलनेके लिअे अुसे भूल जाना पड़ता है। रोज-रोज याद करते रहनेसे वह कैसे भूल सकती है!

अुस दिन अचानक कुन्तीको मालूम हुआ कि आज यह बाअिसवाँ दिन है कि कुन्ती अपने माता-पिताकी करुणा-जनक यादको भूल गअी है। याद भी वह कब करती? अुसके घरमें तो नया आकाश, नअी धरती, नअी दुनिया आ गअी है। बात-बातपर गीत, बाजे, रस्म, मेहमानोंका आना-जाना। कामकी मीठी-मीठी लुभावनी भीड़। वह भी भीड़में दौड़ती थी। यह करो; वह करो; यह ले जाओ; वह ले आओ। अुसके घरमें अेक दुलहिन आनेवाली है जो अुससे थोड़ी ही बड़ी होगी जिससे वह खूब बातें करेगी। कुछ अपनी कहेगी--कुछ अुसकी सुनेगी।

बाअीस दिनोंकी बिछुड़ी हुअी अिस दुखद यादने कुछ अजीब अवसरपर अुसे घेर लिया। आजकी रात दुलहिन आअी, और थोड़ी ही देरके बाद यह याद वापस आ गअी। घरका सम्पूर्ण वातावरण शोख और पागल बन गया था। दुलहिनके स्वागतमें दरवाजेसे लेकर भीतर कोहबरतककी जमीनपर रंगीन कपड़ा बिछा दिया गया था। शहनाअियाँ बज रही थीं। अनेक सुरोंके गीतोंकी लहरें झूम रही थीं। अुसी समय दुलहिन अुतरी। धीरे-धीरे डग भरती हुअी चली आअी। पीछे-पीछे, चादरकी गाँठमें जुड़े अुसके शशि भैया चले आ रहे थे। वह सामने चलनेवालीके माथेपर अपना हाथ थामे हुअे थे। कुन्ती देखती रही। कोहबरके घरमें जो रस्में हुअीं अुन्हें भी देखती रही। यह क्या बात है कि शशि भैया तो चावल भाभीकी अँजुलीमें देते हैं और वह नहीं देती। हजार कोअी समझाअे वह नहीं क्यों देती है। चावलके दानोंको चुपचाप चुनती जाती है। अुनसे जमीनपर कुछ बनाकर खेलती है। शायद लजाती होंगी? जब बातें होने लगेंगी, तो मैं तो पूछूंगी। आप मेरे भैयाकी अंजुलीमें चावल क्यों नहीं डालती? बड़ी वैसी हैं आप, भाभीजी! लेकिन कौन जाने, भाभीजी मुझसे बोलेंगी? न बोले तब? कमिश्नरकी बेटी हैं। सभी कहते हैं, कमिश्नर बड़े आदमी होते हैं। अितने बड़ेके घरमें हमारे घरके किसी आदमीका विवाह नहीं हुआ है। और लोग कहते हैं, अैसी शादी भी कभी नहीं हुअी थी। तो अितनी बड़ी भाभी मुझसे बोलेगी?

लेकिन क्यों? क्यों नहीं बोलेगी? तब तो वह और भी अच्छी होगी। मालती दीदी तो हमारे घरकी ही हैं। हम लोग क्या हैं? या अुनके पिताजी ही क्या है? लेकिन वह तो जैसे ही बड़े घरमें ब्याही गअी हम लोगोंको खराब समझने लगी। अुस दिन कहती थी, हुँह, गुड़ आदमीके खानेकी चीज होती है? अुसे तो जानवर खाते हैं। हम लोगोंको वह जानवर समझती हैं। तो, आदमी सब अेक ही किस्मके तो नहीं होते? वह आज बड़े घरमें जाकर बड़ी बन रही है। और भाभी बड़े घरकी ही है। यह वैसी क्यों होगी? नहीं होगी। और होगी तो हो।

रस्मोंका अेक बृहद् क्रम चला। कुन्ती देखती रही। कभी दूरसे, कभी बिल्कुल निकटसे; और कभी तो किसी कामको लेकर अिधर-अुधर भाग जाती। काम पूरा हो जाते ही भागी-भागी फिर हाजिर हो जाती। चेहरेपर बहुत कुछकी पच्चीकारी थी। व्यस्तातुरताकी, कौतूहलकी, अुल्लासकी। कुन्ती अभी है ही क्या? बच्ची है। तेरह-चौदह क्या अवस्था है? संसारसे परिचयके दिन अभी कुछ दिन बादसे शुरू होते हैं। अिन रस्मोंकी भीड़में कुन्ती निकट ही जाना चाहती है। वह तबतक निकट बढ़ती चली जाती है, जबतक दूर रहनेका कोअी संकेत दूसरी ओरसे अुसे नहीं मिल जाता।

मुँह जूठा करनेकी विधि आअी। यह क्या रस्म है? कुन्तीने सोचा, जो हो। यह भी कुछ है। बादमें दुलहिन और मालती दीदी—साथ, अेक थालीमें खाअेंगी। ओह! और अगर अुसे भी साथ ले लें, तो? अहा, हा! तब तो फिर क्या बात हो! कुन्ती अुन दोनोंके करीब तक चली गअी। चली गअी तो क्या होगा? चेहरेपर अुल्लासकी चमक अेक बात है और भौतिक स्थितिकी बात दूसरी है। वह तो पुरानी साड़ी पहने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुअे है। सो भी अस्त-व्यस्त ढंगसे। फिर आज दिन भरके काम-काजने अुसकी साड़ीपर अपने चिह्न भी बना दिअे हैं। अिन सब बातोंपर कुन्तीका ध्यान नहीं गया था। नअी साड़ी वह लाती भी कहाँसे? अुल्लासकी त्वरामें वह आगे बढ़ती गअी, अितनी तत्पर-सी, कि लगा वह भी साथ बैठे ही जाअेगी। बस, अब बैठकर ही रहेगी। अुसे अितना निकट देखकर अुसकी नअी भाभी जरूर बुला लेगी। देखेगी नहीं कि वह कितनी व्यस्त है अुसके आगमनकी तैयारीको लेकर?

बीचहीमें मालती झल्ला अुठी,—"कुन्ती, तुम जाओ। अुधर काम होगा। जाओ सम्हालो। यहाँ क्या चली आ रही हो?"—कुन्तीका चेहरा ही अुतर गया। अुल्लास डूब गअे। वह चली गअी। पीछेसे दौड़ती हुअी आकर और महिलाओंसे बोली,—"अैसी साड़ी अिसने पहन रखी है, तुम लोग हो कि अिसे वहाँ मुँह जुठानेमें भेज देती हो? देखो तो अिसकी हालत?"

कुन्ती काम करनेमें जुटी ही रही। काम करती ही गअी। जो काम नहीं हुआ था अुसे भी और जो काम हो चुका था अुसे भी किया। पगलीकी तरह अुसने मँजे-मँजाअे बर्तनोंको फिरसे धोया। सिर्फ अेक काम अुससे नहीं हो सका। अुसने खाया नहीं था। अुसे खानेकी अिच्छा ही नहीं हुअी। वह तो अुसका अपना काम था। अुसकी मर्जी—वह चाहे तो नहीं भी करेगी। अिससे दिनभरके कामोंकी भीड़में कोअी व्यतिरेक नहीं आता, और न ही कोअी सन्तुलन बिगड़ता है।

कुन्ती जाकर अपनी चारपाअीपर लेट गअी। वह सो जाना चाहती थी। लेकिन अुसे नींद नहीं आ रही थी, और अिसलिअे अुसके बारेमें सोचना मुश्किल है। तेरह-चौदह सालकी लड़कीका व्यक्तित्व कैसा? और व्यक्तित्वका अहं कहाँसे? जब व्यक्तित्व ही अुत्पन्न नहीं हुआ हो, तो? अहं तो जाकर व्यक्तित्वके कअी तह नीचे रहता है। फिर भी दर्द अुसे जरूर हुआ। वह कुछ बेचैन जरूर हुअी। अिक्कीस रातोंतक वह अुन चित्रोंको बनाना भूलती गअी है जिन्हें प्रत्येक रातको सो जानेके पहले तक बनाया करती थी। अपने माता-पिताके चित्र! आज अुसे अिस बातका मलाल हो रहा था कि पिछली रातोंसे वह अपने अुन चित्रोंको भूल गअी है जिन्हें वह भूलना चाहती थी। दुखदायी यादें जिनसे वह भागना चाहती थी, आज अुसे बड़ी प्यारी मालूम होने लगीं। अिसके अतिरिक्त, आज अेक अजीब बात हो गअी। वह जो चाहती थी वही हो गअी है। अेक नअी याद अुसे आ गअी। अुसके पिता अुसके बहुत-सारे कपड़े बनवाया करते थे। सलवारें और कुर्तियाँ। अेक बार दर्जिनने कहा था, 'बाबूजी, अभी तो यह बच्ची है। यह रोज-रोज बढ़ेगी। आप अितने कपड़े क्यों बनवाते हैं? छोटे होकर बेकार हो जाया करेंगे। कुन्तीको अेक अव्यक्त प्रसन्नता हुअी। आज अेक नअी याद आ गअी है। अब आगे अपने पिताको अस्पतालमें बेहोश पड़े, हजामत लिअे, आँसू बहाते नहीं देखा करेगी। अब वह दर्जिनको अपने पितासे यही बात कहते हुअे सुना करेगी। अिस सुखद यादके साथ क्या हुआ कौन जाने? वह रोने लगी। पहले धीरे-से फिर फफक-फफककर। वह रोते-रोते ही सोच रही थी—अगर अुसके पिता होते तो वह जरूर अपनी नअी भाभीके साथ मुँह जुठानेमें साथ देते। वह जितना सोचती, अुसका सन्देह अुतना ही मिटता जाता। यहाँतक कि मुँह जुठानेमें अुसे भी साथ ले लिअे जानेकी बात अुसके दिमागमें असन्दिग्ध हो गअी। क्यों नहीं? अुसे भी तो अच्छे कपड़े होते! लेकिन काम करते-करते खराब हो जाते तब? कैसे, क्यों? वह अितना काम ही क्यों करती? कपड़ोंको खराब होने देती? मालती दीदीने अितना काम क्यों नहीं किया? वह भी काम नहीं करती। लेकिन काम कैसे नहीं करती? नअी भाभीजी आ रही थी और वह काम नहीं करती? अरे, तो वह दूसरे कपड़े पहन लेती। तब मुँह जुठानेमें साथ देनेके लिअे अुसे कोअी रोक नहीं सकता था। जो कुछ भी होता, वह तो तब होता। अभी तो वह रो रही थी।

कमरेके भीतर करुण सन्नाटा छाया हुआ था। अुसकी आँखोंके आसपासका काला सन्नाटा तो अितना गीला हो चला था कि कुन्तीको लगा वह भींग रही है। किवाड़ खोल वह आँगनमें निकली। पहले अपनी नअी भाभीके कमरेके सामनेसे गुजरी तो अुसकी खिलखिलाहटकी आवाज सुनी। आगे बढ़ गअी। अिस कमरेमें अुसके मामा अुमानाथजीसे कह रहे थे—'अिस विवाहके बाद आपका नाम दुनियामें खिल गया।' अुसके बाद वह आँगनमें पहुँची। आकाशमें सितारे हँस रहे थे। लेकिन यह सब-कुछ बाहरकी बातें हैं। कुन्तीके भीतरकी बातें तो, बस अितनी ही हैं, कि अुसके पिताकी यादमें अेक दूसरी ही याद आकर जुड़ गअी है। साथ ही अेक दूसरा दर्द भी आकर भर गया है। अुसकी आँखोंमें अथाह आँसू थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सूचना–'राष्ट्रभारती'में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअे।)

स्विट्जरलैण्डका शासन––लेखक श्री महेन्द्र-प्रकाश अग्रवाल, अेम. अे., पृष्ठ-संख्या १८२, डबल क्राअून सोलह पेजी, मूल्य २।।) प्रकाशक– किताब महल, अिलाहाबाद ।

योरोपमें स्विट्जरलैण्ड अेक अैसा देश है, जो अपनी प्राकृतिक छटाके साथ-साथ प्रजातांत्रिक शासनकी विशेषताअें भी रखता है और यहाँकी शासन प्रणाली दुनियाकी शासन प्रणालियोंके सामने नया आदर्श अुप-स्थित करती है क्योंकि अिसमें जनताको अधिक अधिकार दिअे गअे हैं । यहाँ प्रजातंत्र सरल अेवं विशुद्ध रूपसे दिखलाअी पड़ता है और अुसमें वर्तमान जनतन्त्री ढाँचेसे नहीं, प्राचीन परम्पराओंसे आधार ग्रहण किअे गअे हैं ।

अिस समय जब कि भारत अेक लोक-तन्त्रीय शासन-प्रणालीके प्रयोगमें संलग्न है, तब जनताके लिअे विभिन्न देशोंकी शासन-प्रणालियोंका तुलनात्मक ज्ञान प्राप्त कर लेना आवश्यक है, क्योंकि अिससे भारतीय शासन-व्यवस्थाके विकासमें सहायता मिलेगी और अुसे अुचित जन-सहयोग भी प्राप्त होगा, जिसके बिना कोअी भी प्रजातान्त्रिक शासन सफलतापूर्वक नहीं चल सकता ।

प्रस्तुत पुस्तक भारतीय विश्व-विद्यालयकी बी. अे. कक्षाके विद्यार्थियोंकी आवश्यकताको ध्यानमें रख-कर लिखी गअी है। साथ ही अिसमें स्विस शासन-प्रणालीकी अन्य देशोंकी शासन प्रणालीसे तुलना भी की गअी है और अिस शासन-प्रणालीपर विभिन्न विद्वानोंके मत भी दिअे गअे हैं। संघीय, कार्य-पालिका, संघीय विधान मण्डल, कार्य पालिका तथा विधान-मण्डलके सम्बन्ध, संघवाद, प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र तथा स्विस राज-नीतिक दल आदि विषयोंपर अच्छा प्रकाश डाला गया है । मानचित्र और चार्टस् तथा परीक्षा-प्रश्नोंके कारण पुस्तक विद्यार्थियोंके लिअे अत्यन्त अुपयोगी हो गअी है । पुस्तककी छपाअी-सफाअी भी सुन्दर है ।

—"अजात शत्रु"

अर्हतका शाप—(अैतिहासिक अुपन्यास) लेखक––जॉन ओ' हिन्द, प्रकाशक––अमरनाथ, दिल्ली प्रेस, कनॉट सरकस, नअी दिल्ली, पृष्ठ संख्या––१९४ कीमत छपी नहीं ।

यह श्री जॉन ओ' हिन्द लिखित हर्षकालीन अैतिहासिक अुपन्यास है । हिन्दीमें अितिहास विषयक साहित्यका अभाव आज भी ज्यों-का-त्यों बना हुआ है। और अिस दिशामें अधिकार-पूर्ण कार्य करनेवालोंकी कमी सदा खटकती रही है । नअे साहित्यके साथ पुरानेके प्रति अनास्था आजकी प्रमुख क्षति है । यह क्षति अुस समय और भी भयंकर मालूम पड़ने लगती है जब हम अितिहास-विषयक काव्य, कथा, नाटक, अुपन्यास आदि साहित्य निर्माण करना गड़े मुर्दे अुखाड़ना समझते हैं।

श्री जॉन ओ' हिन्दने अिस दिशामें सफल कदम अुठाया है । अुनका पहला अुपन्यास 'स्वर्ण दुर्ग' मराठा अितिहासपर आधारित था । 'अर्हतका शाप' में आपने अर्हत विशोकके अभिशाप द्वारा सम्राट हर्षवर्धनके जीवनकी कतिपय पाप अेवं पाखंड-लिप्त घटनाओंका सरस चित्रण किया है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजनीतिज्ञ सम्राट हर्ष-वर्धन और अुनकी बहन महारानी राज्यश्री, ज्ञान पिपासू देवानन्द, रूपपुजारी जयवर्मा, अल्लड़ बालिका शीलवती, कूटनीतिज्ञ भिक्षु भैरव, नीति-कुशल राजा शशांक, प्रेमदीवानी राजकुमारी रमादेवी आदि चरित्र खूब अुभरे हैं। लेखकको अिनके विविध रूप चित्रित करनेमें सफलता मिली है।

अुपन्यासका प्रत्येक अध्याय अपनी समाप्तिके साथ अेक विशेष कुतूहल छोड़ जाता है। पाठककी, कथावस्तुमें अभिरुचि बनी रहती है। अिसमें भाषा, कल्पना-शक्ति, और अितिहासका गम्भीर अध्ययन सहायक होता है। 'अर्हतका शाप' में कथाका आनन्द है, अैतिहासिक रसका नहीं। यह आनन्द भी विशेषतया रोमांचक, अद्भुत वस्तुस्थितिके चित्रण द्वारा अुत्पन्न किया गया है। अनेक चित्र देकर साज-सज्जामें अभिवृद्धि की गअी है। पुस्तक अत्यन्त रोचक है।

—अनिलकुमार

हमारे सम्मुख सन् १९५६ में पहली बार मुद्रित अेवं प्रकाशित **"अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी"** की छह पुस्तकें हैं। सबका कागज, छपाअी-सफाअी—गेट-अप अच्छा है; साअिज क्राअून १/८ है; और पृष्ठ-संख्याको देखते हुअे मूल्य अधिक नहीं है। देखिअे —

१. सुन्दरपुरकी पाठशालाका पहला घंटा—ले.—श्री जुगतराम दवे, अनुवादक—श्री काशीनाथ त्रिवेदी। पृ. सं. १४४, मूल्य बारह आना।

प्रस्तुत पुस्तकमें सफाअीका महात्म्य सूझ बूझ अेवं अनुभवके आधारपर कला-पूर्ण ढंगसे विशद किया गया है जो पाठशाला ही नहीं, किसी छोटी-बड़ी संस्था, सभा-समिति, यहाँ तक कि प्रत्येक व्यक्तिके लिअे अुपादेय है। यद्यपि भाषाकी कुछ भूलें हैं कहीं-कहीं, तथापि विषय संस्मरणात्मक, संभाषणात्मक रीतिसे दिया गया है, जिससे वह सुगम अेवं रोचक बन गया है। 'सोलह कलाओंसे युक्त पूर्णेंदु' नामक मानचित्र सुन्दर अेवं बड़े ही कामका है। नअी तालिमके जनक "बापू" के स्वच्छता-प्रेमके कअी संस्मरण भी अिसमें दिअे गअे हैं।

२. खाद और पेड़-पौधोंका पोषण—ले०—श्री मथुरादास पुरुषोत्तम। पृ. सं. १४४, मूल्य अेक रुपया।

पुस्तकके नामकरणके अनुसार अिसमें विभिन्न खादोंका विवेचन-विश्लेषण, अुनमें अुपयोगी वस्तुओंके तत्व अेवं गुण-धर्मको समझाते हुअे किया गया है। अिस दिशामें पुस्तक बड़े कामकी है अिसमें सन्देह नहीं। अिसमें अुपजके मानको बढ़ानेके तरीके भी बताअे गअे हैं।

३. अेक बनो और नेक बनो—ले०— श्री विनोबा। पृ. सं. ३२, मूल्य दो आना।

जैसा कि विषयके प्रारम्भमें ही कहा है "हम गाँववालोंको समझाते हैं कि आप अेक ही गाँवमें अड़ोस-पड़ोसमें रहते हैं, तो दो बातें कीजिअे : अेक बन जाअिअे और नेक बन जाअिअे। फिर आपपर कोअी संकट या दुख नहीं आअेगा।" प्रस्तुत पुस्तकमें विनोबाजीने 'सर्वोदय' को मद्दे-नजर रखकर ग्राम-बन्धुओंको अपनी शैलीमें, सीधे-सादे-सरल ढंगसे समझानेका प्रयत्न किया, दृष्टि दी, नेक सलाह दी कि हम सब मिल-जुलकर रहें; काम करें। अिसको स्पष्ट करनेमें अुन्होंने कअी अुदाहरण दिअे, कहानियाँ बताअीं जिससे बात सुलझती है, समझमें आती है और अेक नअी शक्ति निर्माण करती है। अन्तिम पृष्ठपर दी गअी पाँच बातें यदि भारतका प्रत्येक ग्राम अपना लें तो सचमुच विनोबाजीके कहे अनुसार "गाँव-गाँवमें 'ग्राम-राज्य', 'राम-राज्य' या 'सच्चा-स्वराज्य' होगा।"

४. सर्वोदयके आधार—ले०—श्री विनोबा। पृ. सं. ६०, मूल्य चार आना।

प्रस्तुत पुस्तकमें विनोबाजीके चार प्रवचन हैं जो बेजवाड़ामें ता. १६, १७, १८, १९ दिसम्बर' ५५ को प्रार्थनाके समय किअे गअे थे।

५. गाँवके लिअे आरोग्य योजना—ले०—श्री विनोबा। पृ. सं. १६, मूल्य दो आना।

अिसमें ग्रामोंके लिअे आवश्यक चार बातोंका निर्देश मात्रकर, 'आरोग्य' के बारेमें ही कहा गया है। रोग-निवारणके लिअे जड़ी-बूटी-वनस्पतिके बगीचेके निर्माणकी आवश्यकताको बतानेके बाद युक्ताहारको समझाया है। अिसे पढ़ते समय अैसा लगता है कि यह यद्यपि गाँववालोंके लिअे है तथापि शहर-वासियोंके लिअे भी लाभदाअी सिद्ध होगी अिसमें सन्देह नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. कार्यकर्ता-वर्ग—ले०— श्री विनोबा। पृ. सं. १०४, मूल्य आठ आना।

अिसमें भूदान-यज्ञ-यात्री-दलके कार्यकर्ताओंको विनोबाजी द्वारा प्रवचन-स्वरूप बताअी गअी बातें दी गअी हैं। अिसके सम्बन्धमें प्रकाशकीय शब्दोंमें कहना चाहिअे कि 'आशा बहनकी प्रेरणासे मिला हुआ यह प्रसाद कार्यकर्ताओंके लिअे तो प्रेरक और कल्याणप्रद है ही; जो भी अिसका रसास्वादन करेगा, कृतकृत्य हुअे बिना न रहेगा। अहिंसक क्रान्तिके सभी मूल-तत्त्व अिसमें आ गअे हैं।'

७. सप्तदान:—रचअिता—श्री दुर्गाप्रसाद रस्तोगी 'आदर्श', प्रकाशक—आदर्श प्रकाशन मंदिर, दारागंज, प्रयाग। साअिज—क्राअून १।८, पृ. सं. ५८, मूल्य—सवा रुपया।

श्री 'आदर्श' जी की अबतक विविध साहित्यांगोंकी कतिपय रचनाअें प्रकाशित हो चुकी हैं जिनमें काव्य रचनाओंका आधिक्य है। प्रस्तुत रचना आपका अेक छोटा-सा खंडकाव्य है, जिसके लिअे श्री ग. वा. मावलंकरजीने काव्यके आदेश-सन्देश-विशेषपर प्रकाश डालते हुअे प्राक्कथन लिखा है। काव्यमें भाषा अेवं शैली विषयानुरूप सुबोध, प्रांजल, सुलझी हुअी है जिसमें प्रवाह है, गति है, और है सरसता।

मूल्य कुछ अधिक ही लगता है।

८. रश्मिहास:—ले०—श्री आनन्दवर्धन रामचन्द्र रत्नपारखी, प्रका०—सौ. अिन्दुलेखा रत्नपारखी, सी—२३०, विनयनगर, नअी दिल्ली। साअिज—क्राअून १।८ पृ. सं. १५२, मूल्य दो रुपया बारह आना।

अिसमें लेखककी विविध विषयोंपर, विभिन्न शैलीकी हिन्दीमें लिखी ५१ रचनाअें और संस्कृतमें लिखी ११ रचनाअें हैं। कुछ रचनाअें पद्यमें, कुछ गद्यमें और कुछ 'निविद्' रूपमें अर्थात् गद्यपद्यमय हैं, किन्तु चम्पूसे भिन्न हैं; कारण, अुनमें गद्य और पद्य दोनों अेकारी हैं; वे अैसी रचनाअें हैं जिनमें कुछ लक्षण पद्यके और कुछ गद्यके हैं। पद्यकी कुछ रचनाअें छन्दोबद्ध हैं, तो कुछ लयबद्ध। गद्यकी कुछ रचनाअें वस्तुतः गद्य, तो कुछ गद्यकाव्य, और कुछ मुक्त हैं अपनी अेक नवीनता लिअे हुअे।

प्रस्तुत पुस्तक, लेखककी रचनाओंका दूसरा संग्रह है जो जनवरी ५६ में प्रथम बार मुद्रित किया गया है। अिसे पढ़नेपर ज्ञात होता है कि यह विषय, भाव, भाषा, शैली सभी दृष्टिसे, छंद-दोष, भाषा-दोषके बावजूद अपने ढंगका अेक नवीन, अनोखा संग्रह है।

९. रणभेरी:—ले०—श्री राजेन्द्रकुमार पाठक, प्रका०—राजेन्द्र प्रकाशन मंदिर, शर्मा-भवन, सोरों-अेटा, अु प्र.। साअिज—क्राअून १।८, पृ. सं. ५८, मूल्य आठ आना।

यह लेखकके ३२ गीतोंका संग्रह है। यद्यपि पद्यके नाते गीत साधारणसे लगते हैं तथापि गीतोंमें चेतना, प्रेरणा, राष्ट्रीयता, शौर्यवीर्य है, और है राष्ट्रके लिअे बलिदानकी चुनौती जो पाठकको बरबस आकर्षित कर लेती है। कागज, छपाअी-सफाअी साधारण है।

—अभिराम

रेडियो नाट्य-शिल्प—लेखक—श्री सिद्धनाथ-कुमार अेम. अे., प्रकाशक—भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, पृष्ठ १८०, मूल्य २।।), क्राअून आकार।

हिन्दी साहित्यमें अिस तरहकी पुस्तकोंका प्रकाशन बहुत ही महत्वपूर्ण कहा जायगा। अब तक रेडियो-नाट्य-शिल्प विषयक अल्पज्ञताके अस्तित्व अपने थे, किन्तु अिस पुस्तकने सम्पन्नताकी दिशामें नअे चरणोंके अभियानका संकेत दिया है।

अिस शिल्पकी विभिन्न रीतियों-शैलियोंके अंकनमें लेखकने यथाशक्य प्रशंसनीय प्रयास किअे हैं। रेडियो प्रक्रियाओंके वैज्ञानिक अनुशीलनमें गुणदोषोंका पर्याप्त विवेचन लेखकके अभीष्ट दृष्टिकोणका ही परिणाम कहा जा सकेगा। ध्वनि-तरंगोंकी सीमाओंमें रूपकोंके प्रयोगकी विधिका निरूपण सुन्दर रहा है, जो कि रेडियोंके प्रारम्भिक नाटककारोंकी रचनात्मकतामें अधिक अुपादेय हो अुठा है।

अिन विधाओंके स्पष्टीकरणमें भाषाके सारल्यका महत्वपूर्ण स्थान है। कदाचित यही कारण है कि अुसकी अभिव्यक्तिकी सरलतामें कोअी गतिरोध नहीं आने पाया है। जहाँ तक अभिव्यक्तिकी सूक्ष्म व्यंजनाका प्रश्न है, वह निस्संदेह सुन्दर रहा है, किन्तु सूक्ष्मता संक्षिप्तताका सीमान्त भी नहीं कर पाअी है। लेखकका रेडियो-विषयक अनुभव प्रतिपाद्यकी पूर्णतामें सहायक सिद्ध हुआ है। प्रूफ विषयक अशुद्धियाँ नगण्य-सी हैं किन्तु अुनका सुधार आवश्यक है। छपाअी सुन्दर और आकर्षक रही है। लेखकके प्रयास स्तुत्य हैं।

—विजयशंकर त्रिवेदी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राज्यभाषा आयोग और हिन्दी—

सम्भवतः अिस महीनेके अन्ततक राज्यभाषा आयोग—हिन्दी आयोगका प्रतिवेदन तथा अुसके सुझाव प्रकाशित हो जाअेंगे। आयोगके सदस्योंने सारे देशमें भ्रमण किया। अुसके सामने हरअेक प्रान्तकी ओरसे भिन्न-भिन्न प्रकारके मन्तव्य तथा विचार रखे गअे। आयोगके सम्बन्धमें समाचार-पत्रोंमें समय-समयपर प्रकाशित समाचारोंसे विदित होता है कि देशमें—खासकर मद्रास तथा बंगालमें अंग्रेजीके पक्षकारोंकी कमी नहीं। और अैसे भी कितने ही श्रद्धाभाजन विद्वानोंकी ओरसे अंग्रेजीका समर्थन किया गया है कि जिनसे हम अैसी आशा कभी नहीं कर सकते थे। यह जानकर किसे आश्चर्य न होगा कि दक्षिणमें हिन्दीके प्रचार कार्यको सदा बल देनेवाले श्री राजाजी आज अंग्रेजीका पक्ष ग्रहण कर रहे हैं! यह समयके फेरकी बात है। जो लोग अंग्रेजीके पक्षकार हैं अुनके तर्कोंमें कोअी नअी बात नहीं। अुनका अुत्तर कअी बार दिया जा चुका है। परन्तु अुन तर्कोंका अुत्तर देनेसे ही तो काम नहीं चलता। जबतक अुनका दृष्टिकोण नहीं बदलता वे दूसरी बात सोच ही नहीं सकते और सब अपने-अपने मन्तव्यपर दृढ़ रहना चाहते हैं। अिसे हम अपने देशका सद्भाग्य कहें या दुर्भाग्य! यह सत्य है कि हिन्दीके सम्बन्धमें देशमें कअी प्रकारके विचार चल रहे हैं। अिसके कट्टर विरोधी भी हैं और समर्थक भी। विरोधियोंको हिन्दीसे जरा भी प्रेम नहीं, वे अुसे जहाँ तक बन पड़े दूर ही दूर रखना चाहते हैं। समर्थक अिसे अेक ही दिनमें राष्ट्रभाषाके स्थानपर प्रतिष्ठित करना चाहते हैं और अिसीमें देशका हित समझते हैं। कुछ लोग प्रान्तीय भाषाओंको आगेकर प्रान्तीय भावनाओंको भी अुभार रहे हैं। अैसे ही संघर्ष-कालमें आज हम हैं।

सद्भाग्यसे देशके प्रतिनिधियोंने १९४९ में अिसपर पूरा विचार कर लिया था और अुसके सब पहलुओंपर विचार करके संविधान सभाके निर्णयके रूपमें हिन्दीको राज्यभाषा या राष्ट्रभाषाके स्थानपर प्रतिष्ठित करनेका निश्चय प्रकट किया और अुसके लिअे अेक अवधि भी निश्चित कर दी। जिस दिन यह निर्णय किया गया वह हमारे लिअे बड़े गौरवका दिन है। वह हिन्दीके गौरवका दिन है अिसीलिअे अिस हिन्दी-दिवसपर (१४ सितम्बरके दिन) हम प्रतिवर्ष हिन्दी सेवाके निमित्त किअे गअे अपने कार्योंका लेखा-जोखा करते हैं और अुत्सव भी मनाते हैं। अुस दिन संविधान सभामें जो निर्णय हुआ वह जैसा भी क्यों न हो, आज हमारे भारतीय विधानका अेक अंग है। राज्यभाषा आयोग या हिन्दी आयोगकी जो नियुक्ति हुअी वह भी अुसी निर्णयके अनुसार हुअी है। अर्थात् आयोगके सदस्योंको अपना प्रतिवेदन देते समय तथा भविष्यके लिअे सुझाव देते समय संविधानकी अिन धाराओं तथा अुनके अुद्देश्यको सदा ध्यानमें रखना होगा। अुद्देश्य तो स्पष्ट है: १५ वर्षमें अर्थात् १९६५ तक केन्द्रीय सरकारके सब कार्योंमें तथा आंतर-प्रान्तीय व्यवहारमें हिन्दीको पूरी प्रतिष्ठा मिलनी चाहिअे। केवल हाअीकोर्टके लिअे १९६५ के बाद भी कुछ समय दिया जा सकता है परन्तु दूसरे कामोंके लिअे तो १९६५ तक हिन्दीका व्यवहार सम्पूर्ण रूपसे होना शुरू हो जाना चाहिअे।

राष्ट्रभाषा आयोगकी नियुक्तिका अुद्देश्य भी तो हिन्दीको किस प्रकार तथा कितनी जल्दी केन्द्रीय सरकारके कार्योंमें स्थान दिया जा सकता है अिसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाँच करना और अुसके लिअे अपने सुझाव देना है। आयोगके सामने हिन्दीके सम्बन्धमें जो विरोधी मन्तव्य आअे हैं अुन्हें देखते हुअे वह संविधानके अुद्देश्यकी सिद्धिमें शीघ्रता लानेके कोअी सुझाव दे सके यह संभव नहीं प्रतीत होता, तो भी हम यह आशा करें कि वह १५ वर्षकी अवधिमें ही यह कार्य पूरा सम्पन्न हो, अिसके लिअे अवश्य अपने सुझाव देगा। संविधानकी धाराओंके हेतुके विरुद्ध जानेका तो किसीको भी अधिकार नहीं। आयोगको तो अैसा अधिकार हो ही नहीं सकता। आयोग अपने सुझावोंके द्वारा अितना करा सके कि केन्द्रीय सरकारके सब विभागोंमें अंग्रेजीके साथ-साथ समान भावसे और अुत्तरोत्तर विशेष रूपसे हिन्दीको प्रतिष्ठा मिलने लगे, तो १९६५ तक हिन्दी अवश्य राज्यभाषाके स्थानपर बिना किसी कठिनाअीके प्रतिष्ठित हो सकेगी। और यह कार्य भी हमारी दृष्टिमें आयोगका कम महत्वपूर्ण काम न होगा। आज तो केन्द्रीय सरकारके हरअेक विभागके कर्मचारियोंके मनमें यह बात जमी हुअी है कि १९६५तक वे हिन्दीकी अुपेक्षा कर सकते हैं, यहाँतक कि कलकत्ता जैसे बहुभाषी नगरमें भी डाकखाने के कर्मचारी हिन्दीमें पता लिखा होनेपर रजिस्टर्ड पत्र या बुकपोस्ट लेनेसे अिनकार करनेमें संकोच अनुभव नहीं करते। हमारा विश्वास है कि कर्मचारियोंकी यह मनोभावना यदि बदल दी जायगी तो हिन्दीको राजकाजमें शीघ्र स्थान दिलानेमें बड़ी आसानी होगी।

रचनात्मक अेवं निषेधात्मक कार्य—

"अंग्रेजी हमारी राष्ट्रभाषा कभी नहीं हो सकती। अुसका प्रभाव हमारी गुलाम मनोदशाका परिचायक है। अुसे हटाना होगा और अुसके स्थानपर हिन्दीको प्रतिष्ठित करना होगा।" यह विचार या भावना हमारे अुद्देश्यकी सिद्धिके लिअे आवश्यक है। फिर भी राष्ट्रके कुछ चिन्तनशील अभिभावकोंका अभिप्राय है कि—'यह निषेधात्मक प्रवृत्ति क्यों हो? हमें तो रचनात्मक कार्यमें ही अपनी सारी शक्ति लगा देनी चाहिअे। हिन्दीका प्रचार जोरोंसे किया जाय, हिन्दीतर भाषी प्रान्तोंमें हिन्दीकी शिक्षा अेवं पठन-पाठनकी व्यवस्था की जाय, अुसके साहित्यका निर्माण हो, केवल विद्यालयोंके लिअे आवश्यक साहित्य नहीं, केवल ललित साहित्य भी नहीं, सब प्रकारके विज्ञान, यन्त्र तथा शास्त्र सम्बन्धी साहित्य भी तैयार किया जाय। अिस प्रकार हिन्दी समृद्ध होगी, अुसके जाननेवाले सब स्थानोंपर पाअे जाअेंगे और अितनी तैयारी जब हो जायगी हिन्दीको स्वयमेव प्रतिष्ठा प्राप्त होगी। संविधानका निर्णय तो है ही। अिसलिअे समय आनेपर हिन्दीको राज्यभाषाके स्थानपर प्रतिष्ठित करानेमें भी कोअी कठिनाअी न होगी। अुस समय अुसका विरोध भी कम हो जायगा। अिस प्रकार रचनात्मक कार्य द्वारा ही हमें हिन्दीको प्रतिष्ठा दिलानी चाहिअे, अिसका गौरव बढ़ाना चाहिअे, 'अंग्रेजीको हटाओ' जैसी निषेधात्मक प्रवृत्तिके द्वारा नहीं—अिस कथनमें बहुत कुछ सत्य है। रचनात्मक कार्य-के महत्व अेवं अुसकी आवश्यकताके सम्बन्धमें कभी मतभेद नहीं हो सकता। रचनात्मक कार्यके बिना निषेधात्मक कार्यकी न कोअी प्रतिष्ठा हो सकती है न मूल्य। वह केवल व्यर्थ परिश्रम मात्र बन जायगा। हिन्दीका प्रचार न हो, अुसके सीखने-सिखानेकी व्यवस्था न हो, अुसे राज्यभाषाके स्थानपर प्रतिष्ठित करने योग्य समृद्ध भाषा न बनाया जाय, तो 'अंग्रेजी को हटाओ' की प्रवृत्ति निरर्थक ही नहीं हास्यास्पद भी होगी। हिन्दीके गौरव तथा प्रतिष्ठाके लिअे हमारी मुख्य प्रवृत्ति रचनात्मक कार्य ही होना चाहिअे। निषेधात्मक प्रवृत्ति तो केवल गौण कार्य ही होगा। गाँधीजीने भी सदा रचनात्मक कार्यपर ही जोर दिया था। कअी देश-सेवक रचनात्मक कार्यमें लगे हुअे थे और वर्षों जब वह कार्य होता रहा तभी वे 'हिन्द छोड़ो' प्रस्ताव देशके सामने रख सके। परन्तु 'हिन्द छोड़ो' का प्रस्ताव ब्रिटिशोंके लिअे अुन्हें रखना पड़ा। यह अिस बातका प्रमाण है कि निषेधात्मक प्रवृत्ति अपने स्थानपर आवश्यक और महत्वकी होती है। अंग्रेजीने जहाँ अुसे नहीं होना चाहिअे वहाँ स्थान ग्रहण कर लिया है और हम अुसके मोहमें अैसे मुग्ध हैं कि हमें अपने परायेका विचार भी नहीं रहा है। हिन्दीको अुसके स्वाभाविक स्थानपर प्रतिष्ठित कराना है तो अुस स्थानपर जिस भाषाने बलपूर्वक कब्जा कर लिया है अुस स्थानसे अुसे हमें हटाना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगा और यह हटानेकी बात हमें कहनी ही होगी। हिन्दीका प्रचार तो आज २८ वर्षसे हो रहा है। अिस प्रचार-कार्यको अधिक वेगवान और प्रबल बनानेके सब प्रयत्न हमें करने होंगे और राष्ट्रीय भित्तिपर अुसके साहित्यका भी निर्माण करना होगा। परन्तु यह सब कार्य जिस अुद्देश्यसे हम करना चाहते हैं वह अुद्देश्य हमारी दृष्टिके समक्ष स्पष्ट होना चाहिअे। अंग्रेजी जो स्थान आज ग्रहण किअे हुअे है अुस स्थानसे अुसे हटाकर राजभाषा या राष्ट्रभाषा हिन्दीको हमें अुस स्थानपर प्रतिष्ठित करना है। अिसका यह अर्थ नहीं कि अंग्रेजीका कोअी अध्ययन ही न करेगा। अंग्रेजी हमारे यहाँ परायी भाषा नहीं रही है क्योंकि १५० वर्षसे हम अुसका अध्ययन करते आअे हैं और वह अन्तर-राष्ट्रीय भाषा होनेके कारण तथा अुसका साहित्य भी विविध तथा अुच्च प्रकारका होनेके कारण, अुसका लाभ लेना भी हमारा कर्तव्य हो गया है। परन्तु अुसमें व्युत्पन्न होनेवाले लोग संख्याकी दृष्टिसे बहुत होनेपर भी भारतकी जनसंख्याके अनुपातमें बहुत कम होंगे। जन-समाजको अुससे कोअी सरोकार न होगा। और हम मानते हैं कि अंग्रेजीके अैसे विद्वानोंकी अुनके अपने स्थानपर अच्छी प्रतिष्ठा भी होगी। अिसलिअे अंग्रेजी अथवा अंग्रेजीके विद्वानोंको किसी भी प्रकारका भय माननेका कोअी कारण नहीं।

नेपाल तराअीमें हिन्दी—

नेपाल तराअी काँग्रेस तथा नेपाल कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा संयुक्त रूपसे अेक परिपत्र निकाला गया है जो हमारे सामने है। अुससे प्रतीत होता है कि नेपाल सरकार द्वारा नियुक्त शिक्षा आयोग, जिसके अध्यक्ष अेक अमेरिकन शिक्षा-विशेषज्ञ मि. वुड थे, अुसने निर्णय दिया है कि नेपालके लिअे हिन्दी विदेशी भाषा है, क्यों कि "तराअीमें मैथिली, भोजपुरी, अवधी अित्यादि बोलियाँ ही बोली जाती हैं, हिन्दी किसी अेक खास क्षेत्रकी भाषा नहीं है।" यह बड़े ही आश्चर्यकी बात है। भारतमें तो मैथिली, भोजपुरी, अवधी आदि बोलियाँ जिन प्रदेशोंमें बोली जाती हैं अुन प्रदेशोंकी भाषा तो हिन्दी ही समझी जाती है और बालकोंकी शिक्षाके लिअे अुसे ही स्वीकार कर लिया गया है। नेपालकी तराअी भी तो हिन्दी प्रदेशोंसे जुड़ा हुआ प्रदेश है अिसलिअे अिन प्रदेशोंकी तरह वहाँ भी हिन्दीको ही शिक्षाका माध्यम बनानेमें कोअी आपत्ति नहीं होनी चाहिअे; विशेषतः अब जब कि हिन्दी भारतकी राष्ट्रभाषा बन गअी है। नेपालको देखा जाय तो वह भारतसे जुदा देश नहीं। आज तक नेपालमें हिन्दीकी प्रतिष्ठा भी अच्छी रही है। परन्तु प्रतीत होता है कि अभी-अभी कुछ अैसे चक्र गतिमान हुअे हैं कि जिनके कारण हिन्दीको हटानेका प्रयत्न किया जा रहा है। यह प्रवृत्ति भयजनक है और अुसका शीघ्र ही प्रतिकार होना चाहिअे। नेपालके बालकोंको मातृभाषाके अतिरिक्त दूसरी भाषाके रूपमें हिन्दीकी शिक्षा दी जायगी, तो अुससे अुन बालकोंका बहुत लाभ होगा और भारतके साथ नेपालका जो मधुर सम्बन्ध है अुसे और भी अधिक मधुर बनानेमें अुससे बड़ी सहायता प्राप्त होगी।

—मो० भ०

अेक श्रेष्ठ ग्रन्थका अवलोकन—

'राष्ट्रभारती' के अिसी अंकमें, 'साहित्यालोचन' स्तम्भमें अेक पुस्तककी छोटी-सी आलोचना जा रही है। वाचक पढ़ेंगे। पुस्तकका नाम 'स्विज़रलैंडका शासन' है। विचित्र छाया डालती है हमारे हृदयपर यह पुस्तक। भारतकी राष्ट्रभाषा बन रही हिन्दीके साहित्य-विभागमें अेक सुन्दर पूर्ति है और लेखककी मानसिक शक्तिकी परिचायिका। पुस्तक-प्रकाशक महाशयका अैसी पुस्तकें प्रकाशित करनेका अुपक्रम अेवं प्रयत्न योग्य दिशाकी ओर जा रहा है। हिन्दी जाननेवाले प्रत्येक भारतीय नवयुवकको अिस पुस्तकका स्वाध्याय कर अपने आपको पहिचानना सीखना चाहिअे। विगत पूरे १४२ वर्षोंसे आजतक योरोप महाद्वीपका यह अेक छोटा-सा, बहुत ही छोटा-सा देश अपनी तटस्थताकी नीतिको अक्षुण्ण बनाकर, अपना मस्तक अूंचा किअे अब-तक, अडिग खड़ा हुआ है। संसारमें अनेक महायुद्ध हुअे, राज्य-क्रान्तियाँ हुअीं; किन्तु यह छोटा-सा देश आजतक अत्यन्त शान्त और सुरक्षित है। आजके विश्वकी तीनों महाशक्तियों—अिंग्लैंड, अमरीका और रूसके कारण दुनियाकी राजनीतिका संदिग्ध वातावरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषाक्त होते हुअे भी स्विज़रलैंडमें 'गणतांत्रिक' शासन प्रणाली अपनी अुदात्त परम्पराको वज्रकी तरह अभेद्य और अक्षुण्ण बनाअे हुअे है। अनेक जातियों, नाना धर्मों और विविध भाषाओं तथा विभिन्न संस्कृति-स्रोतोंका स्विज़रलैंडमें संगम हुआ है। जहाँ स्विजरलैंडके निवासियोंमें केवल राष्ट्रीयताकी भावना ही प्रबल है; हम भारतीयोंको अिस छोटे-से, सुन्दर, स्वस्थ, स्वतन्त्र और प्रकृतिके लीला-क्षेत्र स्विज़रलैंड देशसे भारतके हितको सामने रखकर बहुत कुछ सीखना चाहिअे। अगर कुछ सीखना है और दुष्परिणामकारी खतरोंसे बचाना है भारतकी अेकताको, तो हम आगे बढ़ें। संसारमें स्विज़रलैंडकी राजनीति बहुत ही अूँचे स्तरकी है। राजनीति शास्त्रके विद्यार्थियोंको यह अवश्य पढ़नी चाहिअे। जो अिसका अध्ययन करेगा, अुसकी फलश्रुति है प्रामाणिक राजनीतिक ज्ञानकी वृद्धि!

हमें स्वतन्त्र भारतमें अेकताकी भावनाको अत्यन्त शक्तिशाली बनाना है। देशके नवयुवकोंको अिसका निश्चय कर लेना चाहिअे।

—ह० श०

टण्डन-निधि—

राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनके नागपुर अधिवेशन (ता. १०–११ नवम्बर १९५३) में राजर्षि टण्डनजीको अुनकी हिन्दी सेवाओंके अुपलक्ष्यमें प्रचारकों तथा हिन्दी प्रेमियोंकी ओरसे अेक थैली भेंट करनेका प्रस्ताव हुआ था। प्रतीत होता है कि प्रस्ताव करनेवालोंको अब अुसका विस्मरण-सा हो गया है। प्रस्ताव करके प्रचारकोंने अपने अूपर अेक बहुत बड़ी जिम्मेवारी अुठाअी थी। जब अुन्होंने यह प्रस्ताव किया, अुनका यह कर्तव्य हो गया कि वे टण्डनजीको अुनके अुपयुक्त थैली भेंट करनेके लिअे पर्याप्त मात्रामें धन अेकत्र करनेका पूरा प्रयत्न करते। परन्तु दुखकी बात है कि प्रस्ताव पारित करके वे जैसे अपने कर्तव्यको भूल ही बैठे हैं। दो सालसे अधिक हो गया परन्तु अभी तक रु. १६१६५) से अधिक रकम अेकत्र नहीं हो सकी है। १३५००० परीक्षार्थी समितिकी परीक्षाओंमें प्रतिवर्ष सम्मिलित होते हैं, ५००० के लगभग अुसके प्रचारक हैं, १९०० के लगभग अुसके केन्द्र हैं। अिन अंकोंको देखते हुअे तो आज तक बहुत बड़ी रकम अिकट्ठी हो जानी चाहिअे थी। परन्तु अैसा प्रतीत होता है कि किसीने अिस बातपर ध्यान ही नहीं दिया है। समितिकी प्रान्तीय समितियोंने भी अिस दिशामें कोअी विशेष प्रयत्न किया हो अैसा दिखाअी नहीं देता। समितिका यह सन्देश लेकर हिन्दी-प्रेमी जनता तक पहुँचनेकी आवश्यकता अुन्होंने सम्भवतः समझी ही नहीं। ये सब बड़े ही दुखकी बातें हैं। दुख प्रकट करनेके सिवा हमारे पास दूसरा कोअी अुपाय भी नहीं।

टण्डनजीकी हिन्दी सेवाओंके सम्बन्धमें यहाँ कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं। यह भी निर्विवाद है कि जो थैली अुनको भेंट की जाअेगी अुसका अुपयोग हिन्दीके लिअे ही होगा। अिसीलिअे तो राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनने अुनका अिस प्रकार आदर करना अपना कर्तव्य समझा है। हमें सम्मेलन तथा समितिका यह सन्देश घर-घर पहुँचाना चाहिअे। समितिने अब यह भी निश्चय किया है कि जो भी रकम अक्टूबर १५ तक अेकत्र हो जाअे, टण्डनजीको राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनके आगामी जयपुर अधिवेशनमें भेंट कर दी जाअे। अतअेव समितिके प्रचारकों, केन्द्र-व्यवस्थापकों तथा हिन्दी प्रेमियोंसे हमारी प्रार्थना है कि वे अेक बार अपने अिस कर्तव्यपर पूरा ध्यान दें और पुनः अेक प्रयत्न करके जितनी भी रकम अेकत्र कर सकें अेकत्र करें और आगामी अक्टूबरके आरम्भमें समितिको भेज दें। अिस कार्यमें अब विलम्ब करना अपने कर्तव्यसे मुँह मोड़ना है। यह कार्य अब हो ही जाना चाहिअे। प्रान्तीय समितियोंको भी अपने हिस्सेकी रकम पूरी करनेके लिअे भरसक प्रयत्न करना चाहिअे। यदि पूरा प्रयत्न किया जाय तो, हमारा विश्वास है कि थोड़े प्रयत्नसे ही अेक अच्छी रकम अेकत्र की जा सकती है। आशा है हमारी यह प्रार्थना व्यर्थ न जायगी।

मन्त्री,
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीका स्वतंत्र मासिक--

"नया समाज"

पढ़िअे

देश-विदेशकी राजनीति, सांस्कृतिक अेवं कला-प्रवृत्तियोंकी चर्चा, साहित्य, समाज और पाठकोंके मतोंका विहंगावलोकन तथा सम-सामयिक गतिविधिपर विचार आदि अिसके प्रमुख अंग हैं।

वार्षिक ८) ★ अेक प्रति ।।।)

'नया समाज' कार्यालय,

अिण्डिया अेक्सचेंज (३ तल्ला)

कलकत्ता।

हिन्दीका प्रसिद्ध साहित्यिक सचित्र मासिक पत्र

—: अजन्ता :—

संपादक--

वंशीधर विद्यालंकार

संचालक

हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद, दक्षिण।

अुच्चकोटिकी कविताअें, कहानियाँ, निबंध, अेकांकी, समीक्षा आदि।

* अेक प्रति १ रुपया वार्षिक ९ रुपया *

पता--हिन्दी प्रचार सभा,

हैदराबाद, दक्षिण

:: युगचेतना ::

साहित्य, संस्कृति और कलाकी प्रतिनिधि मासिक पत्रिका

-: सम्पादन समिति :-

डा. देवराज, कुंवरनारायण, कृष्णनारायण कक्कड़, प्रतापनारायण टंडन, डा. प्रेमशंकर

वार्षिक ८), अर्धवार्षिक ४),

१ प्रति १२ आना

पता :--

"युगचेतना" कार्यालय,

स्पीड बिल्डिंग, ला प्लास, लखनअू।

मासिक पत्रिका

:: नया पथ ::

२२, कैसर बाग लखनअू • वार्षिक ६) अेक प्रति ।।)

स्तम्भ—

चक्कर क्लब • साहित्य-समीक्षा

संस्कृति-प्रवाह • हमारे सहयोगी

लेख • कहानियाँ • कविताअें

--: सम्पादक :--

यशपाल ★ शिव वर्मा

राजीव सक्सेना

'नाटक अंक' की प्रति सुरक्षित कराअें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्धा समितिके प्रचारक बन्धुओंसे

निवेदन !

राष्ट्रभाषा प्रचार समितिका परिवार बहुत विशाल है। अिस परिवारमें ३००० के लगभग सेवाभावी मिशनरी प्रचारक हैं और लगभग २५०० केन्द्र-व्यवस्थापक भी हैं। ये सभी भारतके अ-हिन्दी क्षेत्रोंमें राष्ट्रभाषाका प्रचार कर रहे हैं। समितिके प्रति स्नेह-सहानुभूति रखनेवाले हिन्दी-प्रेमियोंकी संख्या भी बहुत बड़ी है।

'राष्ट्रभारती' समितिकी अन्तरप्रान्तीय (भारतीय) साहित्य और संस्कृतिकी प्रतिनिधि मासिक पत्रिका है। अिसकी अुपयोगिता और आवश्यकता आप लोगोंसे छिपी नहीं है। अपनी अितनी सस्ती, विविध विषय-सम्पन्न, अेवं सुरुचिपूर्ण मनोरंजक, ज्ञानपोषक, सुन्दर, अेक अूँचे दर्जेकी पत्रिकाको अगर आप लोग चाहें तो बहुत ही शीघ्र स्वावलम्बी बना सकते हैं। यह अितनी नियमित है कि प्रतिमास १ ली तारीखको पाठकोंके हाथमें ही पहुँच जाती है। वार्षिक मूल्य ६ रुपया, अर्धवार्षिक ३॥) और अेक अंकका दस आना है। स्कूलों-कालेजों और पुस्तकालय-वाचनालयोंके लिअे अिसका वार्षिक चन्दा ५) रु. रखा गया है।

प्रत्येक प्रचारक और केन्द्र-व्यवस्थापक 'राष्ट्रभारती' का ५) रु. देकर स्वयं ग्राहक बने तथा अपने-अपने प्रचार केन्द्रमें कम-से-कम अेक-अेक ग्राहक बना दें, तो अिसकी ग्राहक-संख्या बढ़ जायगी और तब यह स्वावलम्बी बन जायगी। सिर्फ आर्थिक लाभकी दृष्टिसे ही हमें नहीं सोचना है; भारतीय विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं और साहित्य और संस्कृतिके अुच्च अुद्देश्यको भी पूरा करनेके लिअे अिस पत्रिकाके पाठकोंकी संख्या बढ़ाना, ग्राहक बनाना अत्यन्त आवश्यक है। यह मुश्किल नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि आप लोग 'राष्ट्रभारती' के ग्राहक खुद बनेंगे, दूसरोंको बनाअेंगे और 'राष्ट्रभारती' की पाठक-संख्या बढ़ानेमें अपनी समितिकी सहायता करेंगे। मुझे विश्वास है।

आपका—

मोहनलाल भट्ट

मंत्री, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

मुद्रक तथा प्रकाशक:—मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस--राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

१९५६

अ
ग
स्त

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[बिहार, मध्यप्रदेश, भोपाल, सौराष्ट्र आदि राज्योंके शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत पत्रिका]

* अिस अंकमें कहाँ क्या पढ़ेंगे *

('राष्ट्रभारती' के प्रत्येक अंकका प्रत्येक पृष्ठ पठन-मनन योग्य सामग्रीसे पूर्ण रहता है।)

क्रम		पृष्ठ सं०
१.	'तिलक' लोकमान्य (कविता) श्री साहित्याचार्य माखनलाल चतुर्वेदी....	४९१
२.	जिस दिन मौत सिंगार किअे थी (कविता) श्री गौरीशंकर 'लहरी'	४९२
३.	लोक-तिलक (संस्मरण) श्री परदेशी, साहित्य-रत्न	४९५
४.	"देवापि तेसं पिहयन्ति" (अभिनन्दनपर लघु प्रार्थना) श्री राजेन्द्रनाथ भारद्वाज, अेम. अे.	४९९
५.	मुस्लिम भारतके साम्यवादी (जीवनियाँ) श्री राहुल सांकृत्यायन	५०१
६.	बिन बरसे मत जाना बादल (कविता) श्री रामेश्वर दयाल दुबे, अेम. अे., साहित्य-रत्न	५०७
७.	तिलकका जीवन-दर्शन (लेख) श्री प्रेमकपूर कंचन	५०८
८.	वन्दना ! (कविता) श्री 'प्रभात', अेम. अे.	५१०
९.	विषुव-मिलन (ओड़िया साहित्य संस्कृति-संगम) श्री अनसूया प्रसाद पाठक	५११
१०	महाकवि कंबन और अुनकी रामायण (तमिळ साहित्य) { श्री पार्थसारथि; श्री रा. वीळिनाथन	५१४
११.	सोरठ, तेरा बहता पानी (गुजराती साहित्य) श्री जयेन्द्र त्रिवेदी, अेम. अे.	५२७
१२.	धारा-नृत्य (अेकांकी) श्री आसाराम वर्मा, साहित्य-रत्न	५३०
१३.	ग्रैहम ग्रीनकी "दि क्वायट अमेरिकन" (आधुनिक अंग्रेजी साहित्य-१) श्री ओम्प्रकाश आर्य, लन्दन	५३५
१४.	मेघ-याचना (कविता) श्री परमेश्वर द्विरेफ	५३८
१५.	ल्येव निकोलाय तालस्तायः श्री वी. राजेन्द्र ऋषि अेम. अे. (रशियन भाषा और साहित्यके विशेषज्ञ)	५३९
१६.	अेक वकील (बलगेरियन कहानी) अनु० श्रीमती कमल आर्य, लन्दन ...	५४४
१७.	पन्द्रह अगस्त (कविता) डॉ. कन्हैयालाल सहल	५४६
१८.	हिन्दी शब्दोंकी व्युत्पत्ति (लेख) अध्यापक श्री बेचरदास दोशी	५४७
१९.	देवनागर (गुजराती और मराठी)	५५०
२०.	साहित्यालोचन....सर्वश्री लीला अवस्थी अेम. अे., लक्ष्मीनारायण भारतीय सा. र.; अनिलकुमार सा. र.	५५३
२१.	सम्पादकीय	५५६

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

रियायत— समितिके सभी प्रमाणित प्रचारकों, केन्द्र-व्यवस्थापकों और स्कूल-कालेजों तथा सार्वजनिक पुस्तकालय-वाचनालयोंको अेक वर्षतक केवल ५) रु. वार्षिक चन्देमें मिलेगी।

पताः—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[समग्र भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

सम्पादक

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

वर्ष ६] अगस्त–१९५६ [अंक ८

'तिलक' लोकमान्य

: माखनलाल चतुर्वेदी :

अकुलाते-अकुलाते मैंने
अेक लाल अुपजाया था,
था पंचानन[1] 'बाल' खलोंका
अेक काल अुपजाया था।

● ● ●

बागी दागी कहलानेपर,
जरा न मनमें मुरझाया,
अगणित कंसोंने सम्मुख
सहसा श्रीकृष्ण खड़ा पाया।

● ● ●

जहाँ पुकारा गया, वीर
रण करनेको तैयार रहा;
मातृ-भूमिके लिअे, लड़ाका
मरनेको तैयार रहा।

● ● ●

'तुझसोंका रहना ठीक नहीं,
ले देता हूँ काला पानी,'
हे वृद्ध महर्षि, हिला न सकी
कायर जजकी कुत्सित वाणी।

● ● ●

तू सहसा निर्भय गरज अुठा,--
'काला पानी सह जाअूं मैं,
मेरे कष्टोंसे भारत-माँ–
के बन्धन टूटे पाअूं मैं!'

● ● ●

"मजबूत कलेजोंको लेकर,
अिस न्याय दुर्गपर चढ़ो, चलो,
माताके प्राण पुकार रहे,
संगठन करो, बस चढ़ो, चलो।"

● ● ●

शुचि प्रेम-बीज, सब हृदयोंमें
गाली खाते-खाते बोया,
सद्भावोंसे अुसको सींचा,
अुसका भारी बोझा ढोया।

● ● ●

"मेरे जीते पूरा स्वराज्य
भारत पाअे अरमान यही,
बस शान यही, अभिमान यही,"
हम तीस कोटिकी जान यही।

● ● ●

तू देख, देश स्वाधीन हुआ,
अुसपर हम लाखों जिअें-मरें,
बस अितना कहना मान तिलक!
हम तेरे सिरपर तिलक करें।

१. पंचानन=सिंह, शेर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस दिन मौत सिंगार किअे थी :

--श्री गौरीशंकर 'लहरी'

(अुस ९ अगस्त १९४२ की यादमें)

(१)

अुमड़-घुमड़ घट-घटका सागर,
जिस दिन गरजा लिअे हलाहल,
अुस दिन मौत सिंगार किअे थी,
अुस दिन मौत दुलार लिअे थी,
अुस दिन मौत बहार लिअे थी,
अुस दिन मौत विचार लिअे थी,
अुस दिन अपना, अिसका, अुसका--
मौत नहीं घर-बार लिअे थी,
अुस दिन मौत हुअी मतवाली,
जीवन-पारावार लिअे थी,
अुस दिन तिल-तिलके प्राणोंमें
भर आया विद्रोह छलाछल
अुमड़-घुमड़ घट-घटका सागर,
जिस दिन गरजा लिअे हलाहल

(२)

अुस दिन जीना याद आ गया,
अुस दिन जीना स्वाद पा गया,
अुस दिन जीना भर जीना था,
अुस दिन मरना भी जीना था,
अुस दिन जीनेकी कीमतपर,
दुनिया मिट्टी मोल बिकी थी,
अुस दिन आग लगी साँसोंने
साँसोंकी तसवीर लिखी थी
अुस दिन "कहा" नहीं था, था बस—
"अरे चला-चल, अरे चला-चल।"
अुमड़-घुमड़ घट-घटका सागर,
जिस दिन गरजा लिअे हलाहल।

(३)

अुस दिन नियम-अियम टूटे थे,
अुस दिन सब छुट्टा छूटे थे,
अुस दिन पथ ही मोक्ष बना था,
अुस दिन सबने सुख लूटे थे,
अुस दिन बलियामें पापीका,
मुँह काला था देश निकाला,
अुस दिन चमका तेज "सतारा"
लील गया अंधड़ अंधियाला।
अुस दिन सब अधिकार जी अुठे,
भर आया माताका आँचल,
अुमड़-घुमड़ घट-घटका सागर,
जिस दिन गरजा लिअे हलाहल,

(४)

अुस दिन देश गुलाम नहीं था,
दुःशासनका नाम नहीं था,
वैसे कोअी काम नहीं था,
मरनेका बिसराम नहीं था,
अुस दिन सूलीपर चढ़ बोला,
"मौत कि आजादी" का नारा,
अुस दिन टूटे कटे तार भी,
गाते थे विप्लव मतवारा,
अुस दिन मुँह फाड़े पृथ्वीपर
दौड़ पड़ा था स्वयं रसातल
अुमड़-घुमड़ घट-घटका सागर,
जिस दिन गरजा लिअे हलाहल।

(५)

अुस दिन तन अुच्चास पवन था,
अुस दिन मन सन संतावन था,
अुस दिन साँस दुंवार हुअी थी,
अुस दिन आस दुधार हुअी थी,
अुस दिन संतावनकी रोटी,
नस-नसमें हुंकार अुठी थी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुस दिन बूंद-बूंद शोणितकी
"ध्वंस" "ध्वंस" फुंकार अुठी थी,
अुस दिन जालिमकी छातीपर
मूंग दली जाती थी पल-पल,
अुमड़-घुमड़ घट-घटका सागर,
जिस दिन गरजा लिअे हलाहल।

(६)

साध तिलककी अुस दिन पूरी,
बात तिलककी अुस दिन पूरी,
अुस दिन "मोती" का पानी था,
अुस दिन दीनबन्धु दानी था,
अुस "जतीन्द्र" की भूखी हड्डी
अुस दिन भोजन भर पाअी थी,
"शेखर" के जौहरकी तबियत
अुस दिन नया रंग लाअी थी,
अुस दिन बोले घाव "लाज" के
रावीका जी भरा तलातल।
अुमड़ घुमड़ घट-घटका सागर,
जिस दिन गरजा लिअे हलाहल।

(७)

अुस दिन जलियाँ-बाग फला था,
अुस दिन डायरका बदला था,
अुस दिन खून खौल मचला था,
अुस दिन हर घर अेक किला था,
अुस दिन काकोरीके बन्दों-
के अरमान हुअे हरियाले,
अुस दिन "बिस्मल" की छातीके
फूटे भरे मिटे थे छाले,
अुस दिन साम्राज्यके कीड़े
भोग रहे थे करनीका फल,
अुमड़ घुमड़ घट-घटका सागर,
जिस दिन गरजा लिअे हलाहल।

(८)

अुस दिन कपिल तेजकी आगी,
चली जलाने सभी अभागी,
अुस दिन सगरवंश मिटना था,
अैसा कुछ अनघट घटना था,
अुस दिन अुतर पड़ी थी गंगा
सब पापोंको पुण्य बनाने,
अुस दिनके सब जतन भगीरथ,
अुस दिन पहुंची खाक ठिकाने,
अुस दिन रुद्र जटाअें खोले
देने चले चुनौतीको बल।
अुमड़ घुमड़ घट-घटका सागर,
जिस दिन गरजा लिअे हलाहल।

(९)

अुस दिन कालेके फन-फनपर,
ताण्डव नाच अुठे थे नटवर,
गोप ग्वाल सब सखा सँगाती
अुस दिन कूदे सभी भूलकर,
अुस दिन बंसीके हर सुरमें,
अुमड़ा विप्लव वज्रनाद था,
अुस दिन बदल पड़ा जो अबतक,
कंगालोंका आर्तनाद था।
अुस दिन हर डगमें तथास्तु था
अुस दिन सभी अमंगल मंगल।
अुमड़ घुमड़ घट-घटका सागर,
जिस दिन गरजा लिअे हलाहल।

(१०)

अुस दिन था गोवर्धन पूजन,
अुस दिन छिना अिन्द्रका आसन,
अुस दिन कृष्ण हुअे थे बागी,
अुस दिन नअी भक्ति थी जागी
अुस दिन छिंगुरीपर पहाड़ था,
सर्वनाश अुस दिन चीं बोला,
अुस दिन घिरी घटा जुल्मोंकी
बरसा बिजली बादल ओला,
अुस दिन नरक नहीं था भाअी,
अगर स्वर्ग था तो थी हलचल।
अुमड़ घुमड़ घट-घटका सागर,
जिस दिन गरजा लिअे हलाहल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(११)

अुस दिन अर्जुन निर्मोही था,
संकल्पित मन, विद्रोही था,
ममता माया भूल चुका था,
समर कर्ममें झूल झुका था,
अुस दिन थे भगवान सारथी,
विजय-पराजयसे क्या नाता,
अेक 'स्वधर्मे निधनंश्रेयः' का
आल्हा 'जनगनमन' गाता।
अुस दिन 'दारुणः विप्लव माँझे'
प्रभुका शंखनाद था संबल।
अुमड़ घुमड़ घट-घटका सागर,
जिस दिन गरजा लिअे हलाहल।

(१२)

अुस दिन मीरा जहर पिअे थी,
'पद घूंघरू' में कहर लिअे थी,
आँखों, अधरोंमें हँसती-सी
मृत्युंजयकी लहर लिअे थी,
स्वाहाकी धुनमें जलती-सी,
निकली 'अरुणा' अलख जगाने,
कालीके ताण्डवकी महिमा
अुस दिन हम तुम सब पहचाने,
अुस दिन रणचंडीने अपना,
रूप कर लिया अदल-बदल।
अुमड़ घुमड़ घट-घटका सागर,
जिस दिन गरजा लिअे हलाहल।

(१३)

अुस दिन माटीके मसानमें,
जलो और दफनी जुबानमें,
सब शहीद अज्ञात सिपाही,
'शान रहे, क्या धरा जानमें'
कूक अुठे थे अुस दिन अपनी
आहुति सार्थक हुअी जानकर,
कब्र मजारोंमें जी अुट्ठे,
मिटनेवाले सभी आनपर
अुस दिन पानी जहाँ-जहाँ था,
वहाँ-वहाँ थी अुथल-पुथल।
अुमड़ घुमड़ घट-घटका सागर,
जिस दिन गरजा लिअे हलाहल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोक-तिलक

--श्री परदेशी

सन् १९२० का साल था।

बम्बअी नगरमें १ अगस्तके सुबह-सबेरे दो बहुत बड़ी घटनाअें हो गअीं।

पहली घटनाने सारे देशको—श्रीनगरसे श्रीरंगपत्तम् तक शोकमग्न कर दिया।

दूसरी घटनाने बम्बअी नगरके नागरिकोंको रोष और आक्रोशसे भर दिया।

पहला संवाद भगवान् तिलकके महाप्रस्थानसे सम्बन्धित था--दूर-दूरसे, जल-थलसे स्पेशल वाहन, आबाल-वृद्ध नर-नारीके अनन्त प्रवाहको बम्बअीकी ओर ला रहे थे, जहाँ लोक-तिलक अपनी शान्ति-शैय्यापर स्वर्गीय समाधिमें स्थित थे। देव-पुरुषके अन्तिम दर्शनके लिअे यह अपार जन-सागर अुमड़ा आ रहा था।

दूसरे संवादकी कथा अिस प्रकार है कि लोगोंने नगर-नायकोंसे निवेदन किया कि वे अपने महान् नेताका दाह-संस्कार बम्बअीके सागर-तटके परम रम्य-स्थल चौपाटीपर करना चाहते हैं, ताकि युग-युगान्तरों तक लौह-पुरुषका स्मृति-स्तम्भ सागर-पारके साम्राज्यवादी सत्ताधारियोंको चुनौती देता रहे, और अिस प्रकार संघर्षकी अुसकी परम्परा अविचल, अपराजेय और अमर रहे।

लेकिन नौकरशाहीके शासकोंको यह कैसे स्वीकार होता? यह अुपयुक्त स्थल तो अभी भी अुन्होंने सुरक्षित रखा था कि भविष्यमें अपने किसी ब्रिटिश सम्राट्की संगमरमरकी गोरी मूर्ति यहाँ, हमारे शीशपर छातीके पत्थरकी तरह खड़ी करें। बातकी बात! अेक ओर विदेशी सरकार अड़ गअी, दूसरी ओर दिशा-दिशासे अेकत्रित जनताने यह सत्याग्रह ठान लिया कि हमारे नेताका पवित्र दाह-संस्कार होगा तो बम्बअीकी अिसी चौपाटीपर होकर रहेगा। फलतः दोनों ओर संघर्षकी तैयारियाँ होने लगीं।

सरकारके हाकिम दौड़ने लगे और सैनिक अपनी संगीनोंकी धारें परखने लगे। और शोक-लीन जन-सागरका ज्वार था कि बढ़ता ही जाता था।

महायात्राका अभियान!

धरतीके अितिहासमें किसी सम्राट्के राज्यारोहण-पर्वपर भी अितनी बड़ी मानव-मेदिनी न जुटी थी!

लोगोंमें जो वृद्ध और अनुभवी पुरुष थे अुन्होंने सोचा कि यदि अिस पर्वपर सरकारसे संघर्ष छिड़ा तो जनताको अहिंसक रखना कठिन हो जाअेगा और दोनों ओरके सैकड़ों लोगोंको प्राणोंसे हाथ धोना पड़ेगा। जनता अिस समय क्रुद्ध, अवरुद्ध और असंयत दशामें है। अिसलिअे वे अर्थीके पीछे-पीछे चलते जन समूहको सड़कों, बाजारों और चौराहोंपर, सीधे, टेढ़े और चौड़ राजमार्गोंपर, घुमाते हुअे ले गअे। जुलूस अितना लम्बा था कि पीछे आते लोगोंको मालूम न था कि आगेवाले किधर जा रहे हैं, वे अिसी विश्वासमें रहे कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे-आगे चलते नेतागण अुन्हें अुचित स्थानपर ही ले जाअेंगे। अुधर अधिकारी अिस विराट् जन-समूहकी पहरेदारीमें अिस प्रकार व्यस्त हो गअे कि अुन्हें दूसरी किसी व्यवस्थाकी सुध न रही। नेतागण अिधर अुधर चक्कर काटते हुअे, अर्थीको अिस प्रकार ले आअे कि देखा तो सामने चौपाटी है। पलक मारते हजारों हाथोंसे चन्दनकी चिता बनी और जल अुठी। अधिकारी देखते ही रह गअे। अुस भीषण भीड़में अुनकी पैठ असम्भव थी। जब लगभग दस लाख आदमियोंके दस मील लम्बे जुलूसके अन्तिम छोरपर खड़े लोगोंमें भी यह समाचार फैल गया कि चौपाटीपर पवित्रात्माकी चिता जल अुठी है तो अिस शोकावस्थामें भी अुनके चेहरे खिल अुठे और होठोंपर, अधिकारियोंके विपरीत अपनी विजयपर, मुस्कान लहरा गअी!

महापुरुषका मरण महापर्व अैसा ही होता है। अुनकी बिदाअीसे जितना अन्धकार छा जाता है, अुतना ही प्रकाश अुनके समग्र पुण्य परिपक्व होकर मुक्तिमें प्रतिफलित होनेकी--अिस कालकी आभासे प्रसारित होता है।

यह महायात्रा लोकमान्य बाल गंगाधर तिलककी थी। 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' का नारा जिन्होंने पहली बार देकर शक्तिशाली लन्दनके राजाको ललकारा था। जिन्हें अिस नारेके लिअे छह वर्षका कठोर कारावास दिया गया था, लेकिन बंदीगृह अुन्हें बंद न रख सका, और अिसके विपरीत अध्ययन कक्ष बन गया! अुन्होंने अिस और अैसी ही अन्य जेल-यात्राओंमें जर्मन और फ्रेंच भाषाअें सीखीं। लगभग चार सौ बड़े-बड़े ग्रन्थोंका अध्ययन-मनन कर अमृत-मंथन किया और अिस अमृतको कअी ग्रंथोंके कंचन-कलशोंमें छलाछल भर दिया। हिन्दू धर्मका अितिहास, हिन्दू-राष्ट्र-धर्म, हिन्दू-धर्म-शास्त्र, गणित-शास्त्र, शिवाजी, बुद्ध-युग, अंग्रेजी राज्य, और गीता-रहस्य आदि ग्रंथ-रत्नोंकी रचना हुअी।

'गीता-रहस्य' को पढ़कर देश-विदेशके विद्वान विस्मय-चकित रह गअे। शायद गीता-प्रणेता भगवान् श्रीकृष्णके बाद बाल गंगाधर तिलकने ही गीताके गूढ़-रहस्यको अिस प्रकार समझा है। राजनीतिज्ञ पुरुषोंने अुसमें राजनीति देखी, तत्वज्ञानियोंने अुसमें अपना तत्व-दर्शन पाया, अहिंसावादियोंको अुसमें मूर्तिमन्त अहिंसा दृष्टिगोचर हुअी और कर्मयोगियोंने निष्काम कर्मकी प्रेरणा पाअी। अिस अमर ग्रंथने समस्त राष्ट्रके शरीरमें, शिरा-शिरामें, अंग-अंगमें, प्राण-प्राणमें नअी चेतना भर दी--यह संचेतना थी आजादीकी--अपने देशमें अपना राज्य लानेकी, स्वतंत्रता, भ्रातृत्व और समानतासे समन्वित आजादीकी, सर्वोदयके मार्गपर अग्रसर समाज-वादी राष्ट्ररचना की। अिस प्रेरणा, लगन और स्फूर्तिके संचरणकी देरी थी कि जनताने गीता-रहस्यके लेखकको गीता-प्रणेता भगवान् श्रीकृष्णके समान 'भगवान् तिलक' स्वीकार किया, अुसका वंदन-अभिनंदन किया।

२

भारत-केसरी लोकमान्य बाल गंगाधर तिलकका जन्म सन् १८५६ में दिनांक २३ जुलाअीको बम्बअीके रत्नागिरि जिलेमें हुआ था। बचपन वहीं बीता। गंगाधर शास्त्री पिताका नाम था। और होनहार बिरवान बाल गंगाधरने अपने चिकने पात अंकुरावस्थामें ही दिखलाअे। आयुमें आठ ही वर्षके अिस दीप्तिमान नक्षत्र बालकने संस्कृतके स्वनाम धन्य कलाकार बाण-भट्टकी कादम्बरीको कंठस्थ कर लिया था। और अजीब जमाना था वह कि पन्द्रह वर्षके होते-होते अुनका विवाह हो गया और गंगाधर शास्त्रीके घरमें परम सौभाग्यवती बहूका आगमन हुआ। अिस सुखको देखनेसे पिता वंचित रह गअे। तिलकके कोमल कंधोंपर गृहस्थी-का भार आ पड़ा, शिक्षाका भार तो पहले ही था, अब यह दुगुना-तिगुना बोझ और बढ़ गया। परन्तु तरुण बाल गंगाधरने जीवनकी ज्वालाओंसे हार न मानी और अपना श्रम-यज्ञ अखण्ड रखा। अिसका शुभपरिणाम यह हुआ कि २३ वर्षकी अल्पायुमें ही आपने अेल्. अेल्. बी. पास किया। २५ वें वर्षकी सीमामें चरण रखते-रखते मराठीके प्रखर प्रचण्ड साप्ताहिक 'केसरी' और अंग्रेजीके 'मराठा' नामक पत्रोंका प्रकाशन प्रारम्भ किया।

तिलक अपने अुग्र और क्रांतिकारी विचारोंके कारण सरकारकी नजरोंमें पहले ही खटक रहे थे कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिन पत्रोंका प्रकाशन सरकारको तिलकका बढ़ता हुआ कदम और अपनेपर किया गया प्रहार प्रतीत हुआ ! सरकारकी अुस बहीमें, जिसमें अुसके सभी दुश्मनोंके हालचाल लिखे हुअे थे, तिलकके नामका भी 'अेक खाता खुल गया।'

'केसरी' और 'मराठा' के स्वातंत्र्य-प्रिय, निर्भीक लेखों द्वारा किअे गअे सिंहनादसे जनता जागृत हुअी और अुसके अुत्साहका पारावार न रहा। वह अैसे नेताकी तलाशमें थी, जो अुसे भोग और विलासके गुलामी-पसंद-गीत न सुनाकर, आजादीके आल्हा सुनाअे और रण-निमंत्रण दे। तिलकमें, युगको अपने अभिनव नेताके दर्शन हुअे।

अिसी समयकी बात है कि विलायतसे २३ वर्षका अेक नौजवान अुस सारे हिन्दुस्तानका वाअिसराय बनकर आया, जिसे यूनानके अस्कन्दरकी सर्वसत्यानाशिनी सेनाअें भी न रौंद सकीं, और न जिसपर आलमगीरके औमानकी शमशीर चली। अिस नवयुवक, पर, अति दूरदर्शी गोरे अंग्रेजका नाम था लार्ड कर्जन। कर्जनने देशके टुकड़े कर देनेकी योजना बनाअी, ताकि हम और अधिक निष्ठुरतापूर्वक लड़ते रहें ! और विदेशी चैनसे अपनी बंसरी बजाता रहे ! जो काम लार्ड माअुन्टबेटन ने सन १९४७ में पूरा किया, अुसकी नींव अंग्रेजोंने कर्जनके हाथों सन् १९०५ में ही रखवा दी थी। कर्जनने वंग-भंगका फरमान निकाला; परन्तु, बंगाल तो अैसा बिगड़ैल निकला कि अुसने सभी तरीकोंसे अिस योजनाके खिलाफ अपना विरोध व्यक्त किया। वृद्धोंने भाषण दिअे और तरुणोंने बम-गोले और पिस्तौल हाथमें लिअे। अपने शासितोंकी द्रोहभरी लाल-लाल नजरें देखकर अत्याचारीकी काया काँप अुठी। और अुसकी योजनाअें विफल ही धरी रह गअीं। परन्तु वह और अुसके अुत्तराधिकारी अपनी कूटनीतिपर अड़े रहे और अपनी निकृष्ट हरकतोंसे बाज न आअे, और अुन्होंने बंगालको छोड़कर, देशके किसी दूसरे, कोमल कोनेपर अपना वार करनेका निर्णय किया। कालान्तरमें सिंधको बम्बअीसे अलग कर दिया गया। अुस समयके अंग्रेजको मालूम था कि अेक दिन अिस अेक राष्ट्रके टुकड़े होकर दो राष्ट्र बननेवाले हैं। आखिर, बंगालका भी बँटवारा हुआ ही, जिसे देखकर कर्जनकी कब्रमें पड़ी रूहको शान्ति मिली होगी। अिस प्रकार विदेशी फिरंगी हिन्दुस्तानके टुकड़ेपर टुकड़े करता गया और हरेक टुकड़ेमें नअे नेता और देशद्रोहीके काँटे अुपजानेवाले बबूल बोता गया। फिरंगीका दिया यह विष हिन्दुस्तानकी देहमें पाकिस्तान बनकर फूट निकला। खैर, यह तो दुनियाभरके दर्दसे भरी भौंडी-भद्दी अेक लम्बी कहानी है।

कर्जनके कालमें ही 'वन्देमातरम्' गीत और स्वदेशीका आन्दोलन चला। 'गॉड सेव दि किंग' के स्थानपर देशभरमें वन्देमातरम् गाया जाने चला। गोरोंसे गुलामोंकी यह 'मूर्खता' देखी न गअी और अुन्होंने अपनी बन्दूकोंके बल अिस गीतकी गूँजको दबा देना चाहा। अँग्रेज हुकूमतने पहली गलती यही की — वह गीतों और नारों जैसे अदृश्य स्वरोंके पीछे संगीन लेकर भटकनेके भावावेशमें आ गअे। नतीजा यह हुआ कि वन्देमातरम्की प्रत्येक आवाजका अुत्तर— सरकारी गोलीकी बोलीसे मिलने लगा और सरकारी गोलीकी ललकार वन्देमातरम्की बढ़ती हुअी बाढ़में डूब गअी। और अिस सारे तूफानका जिम्मेदार रत्नागिरिके दीवाने अुस नौजवानको ठहराया गया और अुपहारमें अुसे कारावासकी सदस्यता मिली। यह था हमारा लोक-तिलक !

सन् १९०८ में सर अेन्ड्रयू फ्रेजरकी गाड़ी अुलट देनेके प्रयासी खुदीराम बोसको फाँसीकी सजा दी गअी। अितनेपर भी फिरंगीका जी न भरा और वह कारावास-कालमें खुदीरामको जेलमें राक्षसी यंत्रणाअें देने लगा। तिलक अिस अत्याचारको देख-सुन न सके और अुन्होंने तीव्र कटुतापूर्वक सरकारकी क्रूरताकी निन्दा की। सरकार तो यही चाहती थी कि किसी-न-किसी बहाने वहँ तिलकको फँसा सके और अिस जरा-सी बातको लेकर सरकारने तिलकपर मुकद्दमा चला दिया।

सन् १९०८ की २२ जुलाअीके दिन बम्बअीके हाअीकोर्टमें अिस अभियोगपर निर्णय दिया गया और ५२ वर्षीय दिव्य-देहधारी लोकमान्यको छह वर्षका कठोर कारावास दिया गया। अिस फैसलेके अुत्तरदाअी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जूरीने तिलकको बहुमतसे दोषी ठहराया। और प्रधान न्यायाधीशने तिलकसे पूछा--'यह अन्तिम अवसर है, तुम कुछ कहना चाहते हो ?'

अुत्तरमें वह देवकाय अपराधी आगे बढ़ा और अुसने साम्राज्यको कँपानेवाली अपनी विद्रोही वाणीमें गर्जना की--'**बहुत कम कहूँगा। जूरीने मुझे दोषी ठहराया, यह अुनकी मर्जी है। लेकिन मैं दोषी नहीं हूँ। जज महोदय, आपकी अिस अदालतसे भी अूँची अेक अदालत है, जिसका न्याय सर्वोच्च न्याय है और अुस न्यायालयका न्यायाधीश संसारके समस्त न्याय-नियमोंका नियामक है, सम्भवतः अुस न्यायाधीशकी यही अिच्छा है कि मैं दण्ड पाअूँ और दण्ड द्वारा मेरा कार्य अधिक अुज्वल रूपमें प्रकाशित हो !**'....

लेकिन, अेक आध्यात्मपरायण भारतीय संत, दृष्टा, और अवतारी योगीकी अिस वाणीका मर्म मदान्ध नौकरशाहीका फिरंगी कैसे समझ पाता ? अुसने अकड़कर कहा--'मैं तुम्हें छह वर्षकी सख्त सजा देता हूँ, बहुत कम है यह। सुननेवाले कहेंगे कि जजने किस कुपात्रपर कृपा दिखलाअी !'

अुस फिरंगी जजका, जो अपने आसनकी प्रभुताके मदमें पथभ्रष्ट हो गया था, आज कोअी नाम लेवा नहीं रहा; परन्तु अुसका वह न्याय-कक्ष आज भी बम्बअीके हाअीकोर्टमें मौजूद है और कालगति विचित्र है कि अुस 'अपराधी' का चित्र टंगा हुआ है और लिखा हुआ है कि अिस कक्षमें देशकी आजादीके दीवाने बाल गंगाधर तिलकको विदेशियों द्वारा छह वर्षकी सख्त सजा दी गअी थी !

और बम्बअीमें यह 'न्याय-कक्ष' भी है और वह चौपाटी भी ज्योंकी त्यों है, जहाँ सन् १९२० की पहली अगस्तके दिन लोक-तिलकका, समीपस्थ सागरसे भी विराट व्यक्तित्व सदेह स्वर्ग सिधारा था !

आज भी अेक अगस्त आता है और सागरकी लहरें अुछलकर भगवान् तिलकके चरणोंमें दण्डवत प्रणाम करती हैं और अुनकी सहेलियोंके कण्ठसे गूँज भी अुठता है : 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है ! हम अिसकी रक्षा करेंगे।'

तब चौपाटीके तटपर हिमाचल-सी अुत्तुंग, मंगल-मअी गंगा-सी पवित्र यह लोक-तिलक मूर्ति मुस्कराती है और पृथ्वी, पवन, जल, अनल और आकाशके तत्वोंमें वर्त्तमान् 'भगवान्' का वरदहस्त भारत-भूमिपर छाया बनकर छा जाता है !

"मैं आर्योंका आदर्श बताने आया
जन-सम्मुख धनको तुच्छ जताने आया !
सुख-शान्ति हेतुमें क्रान्ति मचाने आया,
विश्वासीका विश्वास बचाने आया !!"

—मै० गु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"देवापि तेसं पिहयन्ति"

--श्री राजेन्द्रनाथ भारद्वाज, अेम. अे.

जिस कोटिके चैतन्य और ध्यान-धृत मनस्वी जनोंके जीवनकी सुगन्धकी स्पृहा देवता तक करते रहते हैं अुसी कोटिके दुर्लभ अुत्तम पुरुषोंमें महाकोशल-प्रदेशके पितृव्य माननीय पण्डित रविशंकरजी शुक्लकी गणना की जा सकती है। आज तीन अगस्तको वे अपने कीर्ति-सुरभित दीर्घ वयका ७९ वाँ साल पार कर नवीन अस्सीवें वर्षमें प्रवेश कर रहे हैं। बारंबार वर्षगाँठके अिस अुल्लासपूर्ण अवसरके आगमनकी कामनासहित अिस दिन अुन्हें शताधिक वर्षकी आयु प्राप्त करनेके लिअे आशीर्वाद देनेवाले पूज्य पण्डित सुखरामजी 'गुणाकर' आज नहीं रहे। अनुजोंमें भी कितने कम ही हैं। हाँ, अुनके आदेशों और निर्देशोंके वाहन अुनके भ्रातृज ही अधिक हैं। अिसीसे वे भारतके हृदय महाकोशल-प्रदेशके पितृव्य हैं। और अिसी कारण आज यह सारा प्रदेश अपने स्नेह-सागर "कक्काजी" की वर्षगाँठका समारोह अुल्लास सहित मना रहा है।

मंगल-कामना भ्रातृजकी अनधिकार चेष्टा है। वह अभिनन्दनका भी अधिकारी नहीं। वह केवल प्रार्थनाका सम्बल ले सकता है। अतः अिस शुभमुहूर्तमें हमारी लघु प्रार्थना ही रक्षाका हमारा बन्धन है।

सन् १९४२ तथा १९४५ में जब संकटके जानो कभी न कटनेवाले दिन समक्ष थे तब माननीय शुक्लजीके अत्यन्त ओजस्वितापूर्ण दो वक्तव्य भारतवर्षके समस्त पत्रोंने अुद्धृत किअे थे। वह कौन जानकार हृदय होगा जिसमें अुन शब्दोंमें अन्तर्हित सिंहनादकी गूँज अबतक न बनी हुअी हो। पूज्य शुक्लजीका स्मरण होते ही वे बातें अनायास याद हो आती हैं। सच तो यह है कि शुक्लजीकी वाणीमें सामान्यतः महासागरकी प्रशान्ति है; किन्तु जब महासागर किसी अवसर विशेष-पर आन्दोलित हो जाता है—जब अुनकी वाणी मुखर हो अुठती है—तब अुनके व्यक्तित्वका पुरुषार्थ और शान्त अूर्जस्विता गनगना अुठती है।

सन् १९४७ अी० में प्रथम बार जिस क्षण हमने अुन्हें निकटसे देखा तो सम्राट् चन्द्रगुप्त विक्रमादित्यके राखाल बाबू द्वारा चित्रित महामान्य दामोदर शर्माका व्यक्तित्व मूर्तिमान दिखाअी पड़ा! अन्तर केवल अितना कि राखाल बाबूवाले महामात्य वर्णमें कृष्ण थे; किन्तु हमारे पूज्य महामात्य वंशके भी शुक्ल हैं और वर्णके भी शुक्ल। जब अँधियारा पाख था वे तब भी शुक्ल थे, और आज अुजियारे पाखमें तो सभी शुक्ल हो रहे हैं।

वस्तुतः महामान्य शुक्लजी अेक युग और अेक वर्गके नहीं अपितु सहज सनातन महत्ताके महामानव हैं। वे यदि महाभारत-युगमें थे तो वे ही आचार्य द्रोण थे। भरद्वाज गोत्रीय शुक्लजीका, भरद्वाज गोत्रीय द्रोणाचार्यसे नैकट्य है ही। राजपूती युगमें वे ही बप्पा रावल थे और यदि मुगल सम्राटोंमें सोचना पड़े तो नवीन साम्राज्यके संस्थापक सम्राट् बाबर! कल्पनामें अिस प्रकारके चित्र अिस कारण अुभरते हैं कि महामना शुक्लजी शुद्ध सर्जनात्मक प्रतिभाके आगार हैं। क्षार-समुद्रको क्षीर-सागरमें परिवर्तित कर देनेकी अुनकी अक्षम प्रतिभा है और फिर अुस क्षीर-सागरमें भगवान-विष्णुकी प्रशान्तिकी प्रतिष्ठा करनेकी अुनमें शक्ति भी है। अुनका वास्तविक परिचय अुनके महान् निर्माण हैं; और अुनके अबतकके निर्माणोंमें जिनका दर्शन अिस प्रदेशमें पग-पगपर मिल रहा है। भविष्यमें अुनके सबल नेतृत्वमें पूर्णतया सम्पन्न होनेवाले महान् कार्योंकी झिलमिल झाँकी अभीसे प्राप्त हो रही है!

पूज्य शुक्लजी अजात शत्रु हैं। वे प्रियदर्शी हैं। वार्धक्यकी अुनकी वर्तमान धवलतामें अुनकी विगतकी प्रारंभिक धवलता अैसे ही लहराती है जैसे शंकरकी जटामें गंगाकी धारा! प्राचीन और अर्वाचीनका अैसा अद्भुत संगम अन्यत्र दुर्लभ है। तरुणोंको भी लजा देनेवाली अपनी अथक मन-हारिणी स्फूर्तिके कारण और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रबल अपने आशावादी चिर स्वस्थ दृष्टिकोणके कारण अेक ओर तो वे वयस्कोंमें तरुण हैं, और दूसरी ओर वे तरुणोंमें वयस्क हैं, वयके अतिरिक्त जीवनके गहन अनुभवोंके कारण, शील-सौजन्यके कारण और क्षमा-दाअिनी सहृदयताके कारण ।

चीनके महान् तत्वदर्शी महर्षि कन-फू-चीसने अुन्नतमना स्मृतिमान पुरुषोंके जितने लक्षण बताअे हैं वे सब माननीय शुक्लजीमें दृष्टिगोचर होते हैं । महर्षि कन-फू-चीस कहते हैं—"महामानव सदैव औचित्यका ही विचार रखता है जब कि सामान्य मानव यह सोचा करता है कि लोगोंको पसन्द क्या होगा । सामान्य मानवकी भाँति महामानव सम्पत्तिको नहीं; वरन् आत्माको अधिक मूल्यवान मानता है । महामानव दूसरोंके भिन्न दृष्टिकोणके प्रति अुदार तो होता है किन्तु अुनसे अेकदम सहमत कभी नहीं हो जाता । सामान्य मानव दूसरोंके भिन्न दृष्टिकोणसे सदा ही सहमत होता रहता है किन्तु अुनके प्रति अुदार नहीं होता । महामानव आसानीसे सबमें घुल-मिल जाता है किन्तु अपना कोअी अलग वर्ग नहीं बनाता । वह अपनी क्षतियोंके लिअे स्वतः अपनेको दोषी मानता है; किन्तु सामान्य-मानव सदा दूसरोंको दोषी ठहराता है । महामानवके साथ निर्वाह सरल; किन्तु अुसे प्रसन्न करना कठिन होता है क्योंकि वह प्रसन्न केवल औचित्यसे होता है । अिसके विपरीत सामान्य मानवको खुश करना आसान होता है पर अुसके साथ निर्वाह मुश्किल हो जाता है । अिसलिअे महान् कार्योंके संचालनके लिअे अूँचे पदोंपर जहाँ गहन विवेककी अपेक्षा रहती है केवल महामानवकी ही प्रतिष्ठा होनी चाहिअे । सुनिश्चित कार्य-प्रणालीको चलानेके लिअे जहाँ टीम-टाम जरूरी रहता है भले ही सामान्य मानव नियुक्त किअे जा सकते हैं ।"

सनातन सच्चरित्रताकी जिन विशेषताओंसे अुनका जीवन-पथ आलोकित है अुसे देख यह अटल विश्वासके साथ कहा जा सकता है कि श्रद्धास्पद शुक्लजी शत-शरदोंका पूर्ण तेजस्विताके साथ दर्शन करेंगे । गत वर्ष दमोहमें भाषण करते हुअे अुन्होंने कहा था—"दस वर्षोंमें मध्यप्रदेशका जो भव्य स्वरूप निर्मित होगा अुसे आप सब लोग हर्ष और आश्चर्यसे देखेंगे और अुसे मैं भी देखूँगा ।" अुनके मुखसे अुच्चरित ये शब्द अेक महर्षिकी भविष्य वाणी है । महर्षिकी भविष्य वाणी सदा सच हुआ करती है । अभी पूरा अेक वर्ष भी नहीं बीता कि अुस भविष्यकी झलक कुछ-कुछ दिखाअी देने लगी है । सर्वशक्तिमान भगवानसे हमारी प्रार्थना है कि अुस भव्य-स्वरूपकी प्रतिष्ठा भी पूज्य शुक्लजी ही के नेतृत्वमें हो । अेवमस्तु-शुभमस्तु ।

"पंडित रविशंकर शुक्लकी भुजाओंपर नर्मदाकी निर्मलता, ताप्तीका अखण्ड सौन्दर्य और महानदीकी गौरव-गरिमा हमेशा शोभित रहे, और कपास, ज्वार, और गेहूंके लहलहाते पौधे अुनकी भुजाके संरक्षणपर गर्व कर सकें, तथा हमारी खदानें, हमारे जन-जीवनके नर-नारी अिस बूढ़े, तरुणके अन्तःकरणमें अपने विश्वासोंको संजोकर रखते रहें, यही मेरी भगवानसे प्रार्थना है ।"

—माखनलाल चतुर्वेदी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुस्लिम भारतके साम्प्रदायिक

—श्री राहुल सांकृत्यायन

भारतका मुस्लिम-शासन हिन्दू-शासनकी तरह ही परम निरंकुशताका शासन था। अुसी तरह क्रूर और अखण्ड दास-प्रथा मुस्लिम-शासनमें भी चलती और हमारी अधिकांश जनताके लिअे सामाजिक न्यायकी जगह भीषण अंधेरनगरी मची थी। हमारे सोचने-समझनेवाले मस्तिष्क और हृदय अिसे जरूर देखते थे, पर ब्रह्माकी रेखमें मेख लगानेके लिअे हिन्दुओंमें तो कोअी नहीं दीख पड़ता था। अिसी कालमें कबीर और दूसरे बड़े-बड़े सन्त हुअे, जिन्होंने कुछ शीतल बयार चलानेकी खूब कोशिश की, पर ठोस पृथ्वीकी बयार नहीं बल्कि आसमानी। पृथ्वीकी ठण्डी बयारका चलाना बहुत खतरेकी बात थी, सिरकी बाजी लगानी पड़ती, जिसके लिअे कौन तैयार होता? अपने विचारोंके लिअे मुसलमान सन्तोंने अपने सिरकी बाजी लगाअी, सरमदका अुदाहरण हमारे सामने है। अितना ही नहीं, आर्थिक विषमता दूर करनेका प्रयत्न भी अुसमेंसे कुछने किया, जिसके लिअे सिर देने या अुससे भी अधिक ताड़ना-यातना सहनेके सिवा अुन्हें कुछ नहीं मिला। अुनकी कुर्बानियोंको लोगोंने भुला दिया, क्या अितिहास भी अुसे भुला देगा? अैसे तीन महापुरुष हमारे सामने हैं—सैयद महम्मद जौनपुरी, मियाँ अब्दुल्ला नियाजी और शेख अल्लाअी।

१. सैयद महम्मद जौनपुरी :

गुलाम, खलजी और तुगलक—तीन तुर्क-वंश दिल्लीके तख्तसे भारतपर शासन कर चुके थे। तीनों वंशधर विदेशी थे, अुनकी कोशिश यही थी, कि हिन्दुस्तानीपनका रंग अुनपर न चढ़ने पाअे। जनताके शोषण और अुत्पीड़नसे जो सम्पत्ति प्राप्त होती थी, वह विदेशसे आअे तुर्की शासकोंके लिअे थी। कुछ जूठे टुकड़े भारतीय मुसलमानोंको मिल जाते थे, और अुनके छोड़े हुअे टुकड़े हिन्दू लग्गू-भग्गू पाते थे। आर्थिक तौरसे नहीं, बल्कि सांस्कृतिक तौरसे भी तुर्क-वंश अपनेको भारतसे निर्लिप्त रखना चाहते थे। यदि अुसमें वह पूरी तौरसे सफल नहीं हुअे, तो अपने कारण नहीं। ११९२ अी. में दिल्ली तुर्कोंकी राजधानी बनी। अुसके दो सौ वर्ष बाद १३९८ अी. में मध्य-अेशियाका अेक तुर्क—तैमूरलंग—अुसके पतनका कारण हुआ। अिस प्रहारके कारण तुर्क-शासन संभल नहीं सका, और मुसलमानी सल्तनत कअी टुकड़ोंमें बंट गअी। दक्षिणके बड़े भागको बहमनी सल्तनतने सम्भाला। अिसी समय गुजरातमें अलग गुजराती मुस्लिम सल्तनत, बंगालमें भी अेक मुस्लिम सल्तनत कायम हुअी। सबसे जबर्दस्त सल्तनत जौनपुरकी थी, जिसे शर्की (पूर्वी) सल्तनत कहते थे। दिल्लीसे बागी होकर अस्तित्वमें आअी। ये सभी मुस्लिम सल्तनतें भारतकी मिट्टीसे अपना घनिष्ट सम्बन्ध जोड़नेके लिअे तैयार थीं। वस्तुतः अुसीके बलपर वह दिल्लीसे लोहा ले सकी थीं, क्योंकि बड़े-बड़े मुल्ले, शासक और सेनप दिल्लीके समर्थक थे।

यह आश्चर्यकी बात नहीं है, यदि हिन्दू नहीं, बल्कि ये मुस्लिम सल्तनतें हमारे प्रादेशिक साहित्यके निर्माणमें सबसे पहले आगे आअीं। अिस्लाम-प्रभावित हिन्दी अर्थात् अुर्दूका साहित्य बहमनियोंके समय शुरू हुआ। बंगलाकी भी यही बात है। जौनपुरकी शर्की सल्तनतने तो हमें कुतुबन, मंझन, जायसी जैसे हिन्दीके प्रेममार्गी रत्न प्रदान किअे। जौनपुरने हमारी धरतीमें बहुत नीचे तक घुसनेकी कोशिश की। १५ वीं सदीमें, अेक सौ सालसे अूपर तक, वर्तमान अुत्तर-प्रदेश और बिहारकी सांस्कृतिक और राजनीतिक राजधानी जौनपुर रही। अुसके महत्वको आज बहुत कम लोग समझते हैं। अिसी जौनपुरमें सैयद महम्मद जौनपुरीका जन्म हुआ था। अिनकी मृत्यु १५०५-६ अी. (हिजरी ९११) में हुअी। जान पड़ता है, यह १५ वीं शताब्दीके मध्यमें पैदा हुअे। अुनकी जवानीके समय देशकी अवस्था बड़ी ही दयनीय थी। चारों ओर बदअमनी छाअी हुअी थी। जौनपुरने काफिरोंके साथ अपना घनिष्ट सम्बन्ध जोड़कर कुफ्रकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर अेक कदम अुठा ही लिया था। हिन्दू-मुस्लिम दूध-पानीकी तरह मिलें, अिसे कोअी भी मुस्लिम शासक या धर्माचार्य पसन्द नहीं करता था। चावल-अुड़दकी तरह अुनका मेल हो, अिसके माननेवाले भी बहुत नहीं थे, तो भी अुसका अुतना विरोध नहीं होता था। शेरशाहने जौनपुरमें हिन्दू-मुसलमानकी अेकता देखी, वहाँ अुसका बचपन बीता था। यही शेरशाह प्रायः हर बातमें अकबरका मार्ग-प्रदर्शक रहा।

जौनपुरके अपेक्षाकृत अुदार वातावरण, और आर्थिक-राजनीतिक दुरवस्थाने सैयद महम्मदपर प्रभाव डाला था। अिस्लामसे पहले अीरानमें साम्यवादकी लहर अेक बार बड़े जोर-शोरसे आअी। अीसाकी तीसरी सदीमें सन्त मानी धार्मिक सुधार और समन्वयके साथ-साथ आर्थिक समानताके सिद्धान्तको लेकर चले थे, लेकिन अिसके लिअे अुन्हें देशसे बाहर मारा-मारा फिरना पड़ा। पाँचवीं-छठी सदीमें मानीके ही झण्डेको आगे लेकर मज्दक बढ़े और अेक बार तो आर्थिक साम्यवाद अीरानमें जंगलकी आगकी तरह बढ़ा। स्वयं सासानी शाहंशाह कवाद अुसके प्रभावमें आ गया, हालाँकि सिंहासनसे वंचित होना पड़ा। अन्तमें वह और अुसका पुत्र नौशेरवाँ ही मज्दकके मधुर स्वप्नको क्रूरतापूर्वक नष्ट करनेके कारण हुअे। अुसके सौ वर्ष बाद अीरान अिस्लामके झण्डेके नीचे आने लगा, और सातवीं शताब्दी बीतते-बीतते अेक अिस्लामिक देशके रूपमें परिणत हो गया। जर्थुस्ती-धर्म अब बहुत कम रह गया था, लेकिन मज्दक और अुसके लाखों शिष्योंकी कुर्बानियाँ बेकार नहीं गअीं। अिस्लामके दीर्घ शासनमें दूरसे अुस सुहावने युग और अुससे भी बढ़कर सुन्दर संदेशकी प्रतिध्वनियाँ विचार-शीलोंके कानोंमें पड़ती थीं। मज्दकी पंथ अब जिन्दीकके नामसे पुकारा जाने लगा था। जिन्दीक बाहरसे दूसरे मुसलमानों ही की तरह थे, पर भीतर आर्थिक साम्यवादकी भावना काम करती थी, और जिसके ही कारण अिस्लामके दूसरे पंथोंकी अपेक्षा ज़िन्दीकोंमें कम असहिष्णुता होती थी।

सैयद महम्मद जौनपुरी जैसे विद्वानके लिअे जिन्दीक अपरिचित नहीं हो सकते थे। शासकों और शोषकोंके लिअे खतरनाक विचार धर्मकी जबरदस्त आडमें ही पनप सकते थे। सैयद महम्मदने अुसीका आड़ लिया। कबीर अुनके समकालीन थे। कबीरने पैगम्बरसे कम होनेका दावा नहीं किया, लेकिन अुन्होंने अिस्लामके पारिभाषिक शब्दको अपने लिअे अिस्तेमाल नहीं किया। मुसलमानोंको भी खींचनेकी कोशिश जरूर की, पर सफलता हिन्दुओंमें ही हुअी। अिसलिअे कबीरकी भाषा और रीतिसे अपरिचित मुल्ला अुनकी तरफ अंगुली नहीं अुठा सकते थे। कबीरने आर्थिक साम्यवादको भी हाथमें नहीं लिया। महम्मद जौनपुरीने शायद तल्लीन होते समय आवाज सुनी—अन्त-ल्-मेहदी (तू मेहदी है)। मेहदीका शब्दार्थ शिक्षक या अन्तिम है। अिस्लाममें हजरत महम्मदके बाद आनेवाले सबसे अन्तिम पैगम्बरको मेहदी कहा जाता है। मेहदीका अिस्लाममें वही स्थान है, जो कि हिन्दुओंमें कल्कि अवतारका। मुल्लोंके लिअे यह बड़ी कड़वी घूँट थी। सौभाग्यसे सैयद महम्मद दिल्लीमें नहीं, जौनपुरमें पैदा हुअे, जहाँ अधिक खुलकर साँस ली जा सकती थी।

मेहदीके प्रचारका ढंग और अुसकी बातें अैसी थीं, कि लोग अुनकी तरफ आकृष्ट होने लगे। अनुयायिओंको बढ़ते देख अिस्लामके झण्डेबरदार चुप कैसे रह सकते थे? जौनपुरमें अुनका रहना असम्भव हो गया। वह वहाँसे चलकर गुजरात पहुँचे। गुजरातमें दिल्लीसे बागी होकर जौनपुरकी तरहकी ही अेक सल्तनत कायम हुअी थी। वहाँ मेहदीके अुपदेशोंका प्रभाव केवल मुस्लिम जनसाधारणपर ही नहीं पड़ा, बल्कि अबुलफजलके अनुसार सुल्तान महमूद स्वयं अुनका अनुयायी हो गया। बहुत दिनों तक वहाँ भी वह न टिक सके। अन्तमें वहाँसे अरब गअे। मक्का-मदीना देखा। घूमते-घामते अीरानमें निकल गअे। वहाँपर भी अुनके पास भक्तोंकी भीड़ लगने लगी। शाह अिस्माअीलने अीरानकी राष्ट्रीयताको अुभाड़नेके लिअे और अुसके द्वारा अपने राजवंशको मजबूत करनेके लिअे शिया धर्मको राजधर्म स्वीकृत किया था। शिया धर्मने कट्टर अिस्लामकी बहुत-सी बातें छोड़ दी थीं। मेहदी जौनपुरी वहाँ अेक और शाख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगाना चाहते थे । यह पसन्द न कर, शाह अिस्माअीलने कड़ाअी की । सैयदको अीरान छोड़ना पड़ा । अीरानमें मज्दकके अनुयायी जिन्दीकके नामसे अुस समय भी मौजूद थे, अिसलिअे अपने विचारोंको मेहदी जौनपुरीके मुँहसे सुनकर वह अुनकी शिष्य-मण्डलीमें शामिल होने लगे, तो आश्चर्य नहीं । और पीछे भी मेहदीसे मिलती-जुलती विचारधारा यदि अीरानमें मौजूद रही, तो अुसका श्रेय मेहदीको नहीं, बल्कि मज्दककी कुर्बानियोंको देना होगा ।

मेहदी अीरानसे लौट आअे और फरा या कडामें १५०५ या १५०६ अी० में अुनका देहान्त हो गया । लोग अुनकी कब्र पूजने लगे, और अुनके अनुयायी मेहदीके सन्देशको जीवित रखनेमें सफल हुअे ।

२. मियाँ अब्दुल्ला नियाजी :

मियाँ अब्दुल्ला नियाजी अफगान (पठान), शायद हिन्दुस्तानमें आकर बस गअे पठान थे । मेहदीकी तरह अुनके बारेमें भी नहीं कहा जा सकता, वह किस सनमें पैदा हुअे । वह शेरशाहके जमाने (१५४०-४५ अी०) में काफी वृद्ध हो चुके थे । हो सकता है, अुनका जन्म सैयद महम्मद जौनपुरीके अन्तिम वर्षोंमें हुआ हो । वह कअी साल अरब–मक्का-मदीनामें रहे । वहाँ ही वह जिन्दीक या मेहदी पंथके प्रभावमें आअे । भारतमें आकर बयाना (राजस्थान) में अुन्होंने गरीबोंके मुहल्लेमें डेरा डाला । स्वयं शरीरसे मेहनत करनेमें न झिझकते और मेहनत करनेवालोंसे ही वह बहुत आत्मीयता रखते थे । मुसलमानोंमें भिश्ती और दूसरे मेहनत-मजदूरी करके जीनेवाले लोग नियाजीके पास जाते । नियाजी अुन्हें लेकर नमाज पढ़ते । अपने पास जो कुछ होता, वह अुनमें बाँटकर खाते । वह बड़े आलिम (विद्वान्), अिस्लामके अच्छे ज्ञाता थे । अिस्लामकी जन्मभूमिमें वर्षों रहे थे । अैसे व्यक्तिके सादा और गरीबीके जीवनको देखकर लोगोंका हृदय अुनकी ओर खिचना स्वाभाविक था । अिन्हींमें बियानाके अेक गुरु-घरानेके गद्दीधर (सज्जादानशीन) शेख अल्लाअी थे । शेख अल्लाअीने जोत-से-जोत लगा दी । अब गुरु-चेलेका जीवन-प्रवाह अेक होकर चला ।

३. शेख अल्लाअी :

बंगालमें सन्तों (शेखों) का अेक परिवार कितने ही समयसे बस गया था । अिसीमें शेख हसन और शेख नसरुल्ला दो भाअी पैदा हुअे, जिसमें नसरुल्ला बहुत विद्वान् थे । दोनों देश छोड़कर हज करने गअे, वहाँसे १५२८–१५२९ अी. (हिजरी ९३५) में लौटकर बंगाल जानेकी जगह बयानामें रहने लगे । गुरुओंका सन्मान करना हमारे देशकी मिट्टी-पानीमें था । बयानामें भी अुन्हें चेलोंकी कमी नहीं हुअी । बड़े भाअी शेख हसन अपनी आध्यात्मिक शक्तिके कारण बयानाके मुसलमानोंके अेक सम्माननीय गुरु बन गअे । अुनका बेटा शेख अल्लाअी बचपनसे ही था "होनवार बिरवानके होत चीकने पात ।" परिवारमें ज्ञान-ध्यानका वातावरण और शिक्षा-विद्याका पूरा सन्मान था । विद्वत्ताके साथ-साथ असाधारण वाग्मी अल्लाअी बापके मरनेपर गद्दीपर बैठा । सादगीका जीवन अुसे पसन्द था, लेकिन अुसमें भारी परिवर्त्तन लानेके कारण मियाँ नियाजी हुअे । बूढ़े नियाजीने, अुसे अपनी तरफ खींचा । जान पड़ा, किसी चीजको वह भीतरसे चाहता था, जिसे वह जान नहीं पाता था । नियाजीके जीवनने अल्लाअीकी आँखें खोल दीं । अुसने अपने शिष्यों और मित्रोंसे कहा, वस्तुतः खुदाका रास्ता यह है । हम जो कर रहे हैं, वह थोथा, अहंमन्यता है ।

अब मनुष्यमात्र, और अुनमें भी गरीबोंका हित अल्लाअीके धर्म और जीवनका लक्ष्य बन गया । किसीके साथ यदि कभी गुस्ताखी हो गअी थी तो अुसके लिअे वह क्षमा माँगते । लोगोंके जूतोंको अपने हाथों सीधा करते । बाप-दादोंके जमानेसे पीरी-मुरीदी चली आती थी । मुसलमान शासकोंने जागीर दी थी । खानकाअि (गुरुद्वारा) थी, जिसमें आअे-गअेके भोजनके लिअे रात-दिन लंगर चला करता था । अल्लाअीको अब वह काट खाने लगी । अुन्होंने अपना सब माल-असबाब गरीबोंमें बाँट दिया । पुस्तकों तकको भी अपने पास रखना पसन्द न कर चाहनेवालोंको दे दिया । पत्नीसे कहा—"मेरा तो यही रास्ता है । तुम गरीबी और भुखमरीके लिअे तैयार हो, तो मेरे साथ रहो, नहीं तो अिस धनमेंसे अपना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिस्सा लेकर आरामसे रहो।" पत्नी पतिके रास्तेपर चलनेके लिअे दृढ़ होकर साथ गअी।

शेख अल्लाअी अब्दुल्लाके कदमोंमें आ गअे। गुरुने मेहदीके पंथकी बातें बतलाअीं। कैसे ज्ञान-ध्यान करना चाहिअे, यही नहीं बताया बल्कि गरीबी और अत्याचारकी चक्कीमें पिसे जाते बहुजनके दुखके लिअे जो आग अुनके हृदयमें जल रही थी, अुसे अल्लाअीके हृदयमें जला दी। अल्लाअीके हितमित्र और शिष्य-मण्डली भी अब नियाजीकी माला जपने लगी। लोग नियाजी और अल्लाअीके पीछे दौड़ने लगे। अल्लाअीकी वाणीमें जादूका असर था, लोग अपना सब कुछ अुनकी बातपर लुटानेके लिअे तैयार थे। अेक बार जो अुनके अुपदेशोंको सुन लेता, फिर वह कहाँ अपने आपेमें रह पाता? वहाँ हालत यह थी "कभी घनीघना, कभी मुट्ठी भर चना, कभी वह भी मना।" शामको जो भोजन बच रहता, अुसे अपने पास रखना अल्लाअीके धर्मके खिलाफ था। "का चिन्ता मम जीवने यदि हरिर् विश्वम्भरो गीयते" (जब भगवान् संसारके भरण-पोषण करनेवाले हैं, तो मुझे चिन्ताकी क्या जरूरत)। यही कह लीजिअे, या यह कि पेटकी चिन्ता मनुष्यको बराबर बनी रहनी चाहिअे, तभी वह सुपथपर चलनेकी चिन्ता कर सकता है। रोटी ही नहीं, नमक तक भी हर रात खतम कर देना चाहिअे, पानी भी घड़ेमें मत रखो। रातको सारे बासन खाली करके औंधे रख दिअे जाते थे। हर रोज नया जीवन आरम्भ होता था, हर रोज खट्टा-मीठा, नया तजर्बा हासिल किया जाता। गुरु और परमगुरुको अिसमें आनन्द आता था। अुनका अनुयाअियोंका बृहत् परिवार भी अिसमें आध्यात्मिक आनन्द अनुभव करता था।

पर, वह जानते थे, कि निरीहता और भिखमंगीसे हम अपने लक्ष्यपर नहीं पहुँच सकते। दुनियासे विषमता और गरीबी, दुआ और प्रार्थना द्वारा नहीं हटाअी जा सकती। अुसके लिअे सबसे बड़े साधन वही लोग हैं, जो विषमता और गरीबीके सबसे जबर्दस्त शिकार हैं। अुन्होंने नियम बनाया था। हमारे पंथके पथिक आठों पहर हथियार बन्द रहें। तीर-धनुष, ढाल-तलवार अपने पास रखना हरेकके लिअे अनिवार्य था। गुरु गोविन्द-सिंहसे दो शताब्दियों पहले अल्लाअीने लोहेका अमृत छकाया था। कोअी अनुचित बात टोले-मोहल्लेमें नहीं होने पाती थी। मजाल नहीं थी, सलतनतके हाकिमकी भी लोगोंपर मनमानी करें। हाकिम यदि न्यायके रास्तेपर चलनेके लिअे मदद चाहता, तो मेहदीपंथी जान देनेके लिअे तैयार थे। अल्लाअी और अुनके गुरुके जीवन और शिक्षाने बयानामें अेक विचित्र स्थिति पैदा कर दी। "बेटा बापको, भाअी भाअीको, पत्नी पतिको छोड़कर" अिस पंथमें चले आअे। हजारों आदमी गरीबीके जीवनको आनन्दका जीवन मानकर मेहदीके पंथमें दाखिल हो गअे। मियाँ अब्दुल्ला शान्त प्रकृतिके सन्त थे, पर शेख अल्लाअी आगके परकाले। अुनकी वाणीने चारों ओर धूम मचा दी थी। गुरुको डर लगने लगा, चेला अपने लिअे भारी खतरा मोल ले रहा है। अुसे समझाया। लेकिन, दिलकी लगी कैसे बुझ सकती थी? गुरुने सलाह दी, अैसी अवस्थामें तुम हजके लिअे चले जाओ। छह-सात सौ घर अल्लाअीके साथ हजके लिअे चल पड़े। अुस समय सूरतमें हजके लिअे जहाज मिला करते थे। लेकिन, शेरशाहकी सल्तनत समुद्र तक नहीं थी। सरहदपर खवास खां शेरशाहकी ओरसे हाकिम था। अुसने अल्लाअीका स्वागत किया। हाकिमके यहाँ हर बिअिफेको अुपदेश और गोष्ठी होने लगी। खवास खां मौज-मेले पसन्द करता था, जिसके लिअे न्याय-अन्यायकी पर्वाह नहीं करता था। सिपाहियोंकी तनखा तकको मार लिया करता था। शेख अल्लाअी अपने प्रति भक्ति दिखानेसे कैसे अुसे क्षमा कर सकते थे? हाकिमकी भक्ति ज्यादा दिन तक नहीं रह सकी। शेख अपने शिष्योंके साथ आगे बढ़े। बाधाअें रास्तेमें आअीं, अल्लाअीके लिअे जनताकी सेवा ही सबसे बड़ा हज था, अिसलिअे वह बियाना लौट आअे।

शेरशाहके बाद अुसका लड़का सलीमशाह (१५४५-५४ अी.) गद्दीपर था। बयाना आगरासे बहुत दूर नहीं है। सलीमशाह अुस वक्त आगरामें था। अल्लाअीकी विद्वत्ता, वाग्मिता और सन्त जीवनकी बात सलीमशाहके कानों तक पहुँची। मख्दूमुल्मुल्क मुल्ला अब्दुल्ला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुल्तानपुरी सल्तनतके सर्वोपरि धर्माचार्य थे। मेहदी-पंथको फिर सिर अुठाते देखकर अुसकी नींद हराम हो गअी थी। अुसने कान भरना शुरू किया – यह हथियार बन्द भुक्कड़ोंकी जमात जमा कर रहा है। यदि कहीं अिसने अपने हथियारोंको सल्तनतकी ओर घुमा दिया, तो भारी खतरेका सामना करना पड़ेगा। सलीमशाहने बुलवाया। अल्लाअी अपने अनुयायियोंके साथ आगरा पहुँचा। सभी हथियारबन्द, सभी कवच और शिरस्त्राण-धारी थे। सलीमशाहने अुस समयके बड़े-बड़े आलिम सैयद रफीअुद्दीन, अबुल्फतह थानेसरी आदिको दरबारमें बुलाया। अल्लाअीने दरबारमें आकर दरबारी कायदेके अनुसार वन्दना न कर पैगम्बर अिस्लामके जमानेके कायदेके मुताबिक लोगोंको "सलाम अलैकुम्" (तुम्हारे अूपर सलाम) कहा। सलीमशाहको बुरा लगना ही था, लेकिन सलामका जवाब दिया। मुल्ला सुल्तान-पुरीने शाहके कानमें भरा,—"देखा, कितना सर्कश है। मेहदीका मतलब संसारका बादशाह है। यह विद्रोह किअे बिना नहीं रहेगा। अिसे कत्ल करवा देना अुचित है।" शेख अल्लाअीने मौका पाकर व्याख्यान शुरू किया। व्याख्यान कुरानकी आयतोंकी व्याख्याके रूपमें था, जिसमें संसारकी विषमता और धनके बंटवारेमें भारी भेदको दिखलाते हुअे बतलाया: "हमारा जीवन कितना निकृष्ट है। निकृष्ट स्वार्थोंके लिअे हमारे धर्माचार्य क्या-क्या नहीं कर डालते। दूसरोंको वह क्या रास्ता दिखलाअेंगे, जब कि अपने ही अुन्हें रास्ता मालूम नहीं है।" अल्लाअीने गरीबीका चित्रण किया। मेहनत कर-करके मरनेवाले ये भी हमारे और आपके जैसे ही अल्लाके प्यारे लड़के हैं। वह चित्रण अितना सजीव और हृदयद्रावक था, कि लोगोंकी आँखोंमें आँसू भर आअे। सलीमशाह खुद अपनेको संभाल नहीं सका। जब दरबारसे महलमें गया, तो वहाँ दस्तरखानपर तरह-तरहके स्वादिष्ट भोजन सजे हुअे थे, पर बादशाहने अुसमें हाथ तक न लगाया। दूसरोंसे कहा कि आप जो चाहे खाअें। खाना क्यों नहीं खाते पूछनेपर कहा, अिस खानेमें गरीबोंका खून दिखलाअी पड़ता है। फिर सभा हुअी। सैयद रफीअुद्दीनने मेहदीपंथके बारेमें अेक पैगम्बर वचनपर बातचीत शुरू की। अल्लाअीने कहा—तुम शाफअी सम्प्रदायके हो और हम हनफी हैं। तुम्हारे और हमारे स्मृति-वचनों और अुनकी प्रामाणिकतामें अन्तर है। बेचारे चुप रह गअे। मुल्ला सुल्तानपुरीके लिअे तो जबान खोलना मुश्किल था। अल्लाअी कहते थे—"तू दुनियाका पण्डित है, लेकिन दीनका चोर है। अेक नहीं अनेक धर्म-विरोधी कार्य खुल्लम-खुल्ला करता है।" कअी दिनों तक सभाअें होती रहीं। अिन सभाओंमें फैजी और अबुलफजलके पिता शेख मुबारक भी शामिल होते थे, अुनकी सारी सहानुभूति अल्लाअीके साथ थी, जिसे कभी-कभी वह प्रकट करनेके लिअे भी मजबूर हो जाते थे। शेख मुबारक भी गरीबीके शिकार थे। अुनकी सारी प्रतिभा अुनकी दुनियामें बेकार सिद्ध हुअी थी, अिसलिअे भी वह अल्लाअीके साम्यवादको पसन्द करते थे।

आगरामें अल्लाअीकी धूम थी। कितने ही अफसर अपनी नौकरियाँ छोड़कर अुनके साथ हो लिअे। कितने ही दूसरे घरबार लुटाकर मेहदीके पंथके पथिक बन गअे। बादशाहके पास रोज-रोजकी खबरें पहुँचती रहती थीं। मुल्ला सुल्तानपुरी अुनमें और नमक-मिर्च लगाता था। आखिर सलीमशाहने दिक होकर हुकुम दिया—यहाँ न रह दक्षिणमें चले जाओ। अल्लाअीने सुन रखा था, दक्षिणमें मेहदी पंथके माननेवाले बहुतसे हैं। अुन्हें देखनेकी अिच्छा थी, जिसकी पूर्ति अिस समय हो सकती थी। अल्लाकी जमीन विशाल है, कहकर वह दक्षिणकी ओर चल पड़े। दक्षिणकी बहमनी रियासतें सूरी सल्तनतसे स्वतंत्र थीं। मुगल ही अुन्हें लेनेमें आंशिक सफलता पा सके।

सीमान्तके नगर हंडियामें पहुँचे। हाकिम आजम हुमायूं शिरवानी अल्लाअीका वचन सुनते ही गुलाम हो गया, बराबर अुपदेशमें आने लगा। अुसकी आधीसे अधिक सेना भी मेहदीपंथी बन गअी। साम्यवाद बहुजन-हितके लिअे ही सोता, अुसीके लिअे जागता है। फिर जब अुसकी सेवामें अल्लाअीकी वाणी मिले, तो वह क्यों न आदमीके हृदयको मथकर बेकाबू बना दे। शिरवानी सूरी हाकिम था, अुसकी अिस कार्रवाअीको मुल्ला सुल्तानपुरीने बढ़ा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चढ़ाकर सलीमशाहके कानोंमें पहुँचाया। सलीमशाहने दरबारमें हाजिर करनेका हुकुम जारी किया।

१५३६-३७ अी. की बात है। पंजाबमें नियाजी पठानोंने विद्रोह कर दिया। सलीमशाह बयानाके पास पहुँचा, तो मुल्ला सुल्तानपुरीने कहा: "छोटे फितनेका मैंने बन्दोबस्त कर लिया है। बड़े फितनेकी आप खबर लीजिअे।" बड़ा फितना मिया अब्दुल्ला नियाजी थे' जो कि अल्लाअीके गुरु थे। पीर नियाजीके पास हमेशा तीन-चार सौ हथियारबन्द चेले बयानाके पहाड़ोंमें तैयार रहते थे। पंजाबके नियाजियोंकी बगावतसे सलीमशाह जला-भुना बैठा था। दूसरे नियाजीके बारेमें सुनकर अुसका गुस्सा भड़क अुठा, और बयानाके हाकिमको लिखा: अब्दुल्लाको अुसके शिष्योंके साथ पकड़कर तुरन्त हाजिर करो। हाकिम अब्दुल्लाका भगत था। चाहता था, कि गुरु कहीं हट जाअें, तो अच्छा। लेकिन, बूढ़े गुरुने अिसे पसन्द नहीं किया। बादशाहके दरबारमें बूढ़े साम्यवादी संत पहुँचे। "सलाम अलैक" की, दरबारी कायदेके मुताबिक कोर्निश नहीं बजाअी। दरबारीने पूछा—"शेखा, ब-बादशाहाँ अिंचुनीं सलाम मीकुनन्द?" (शेख, क्या बादशाहोंके साथ अैसे ही सलाम करते हैं?) शेखने मुँहतोड़ जवाब दिया: अल्लाके रसूलको अिसी तरह सलाम करते थे "मन् गैर-अि नमिदानम्" (मैं अिससे दूसरा नहीं जानता)। सलीमशाहने जान-बूझकर पूछा—"पीरे अल्लाअी हमीं अस्त?" (अल्लाअीका गुरु यही है?) मुल्ला सुल्तानपुरी तो घातमें मौजूद ही था, बोला—"हमीं (यही)।" सलीमशाहने संकेत किया। बूढ़े संतपर लात, मुक्का, लाठियाँ, कोड़े बरसने लगे। जबतक बूढ़ेको होश रहा, तबतक वह कुरानकी अेक आयत पढ़ते दुआ माँग रहे थे—"रब्बना अग्फर लना जनूबेना व अस्राफेना।" (हे मेरे भगवान्, माफ कर हमें, हमारे गुनाहोंको, हमारे दुष्कर्मोंको)।

बादशाहने पूछा—"चि-मीगोयद्?" (क्या कहता है?) मुल्लाने बादशाहके अरबीके अज्ञानसे लाभ अुठाकर कहा—"शुमारा व मारा काफिर मीरबानद।" (आपको और मुझे काफिर कह रहा है।) बादशाहको और गुस्सा आया, अुसने और भी कड़ाअी करनेका हुकुम दिया। घण्टे भरसे ज्यादा बूढ़ेके शरीरपर प्रहार किअे जाते रहे। मुर्दा समझकर छोड़ दिया। जालिमोंके हटते ही लोग दौड़े। खालमें लपेटकर बूढ़े सन्तको अन्यत्र ले जाकर रखा। प्राण गअे नहीं थे। कितनी ही देर बाद होश आया।

सन्त बयानासे अफगानिस्तानकी ओर गअे। फिर पंजाबमें बेजवाड़ा और दूसरी जगहोंपर घूमते रहे। अन्तमें सरहिन्द पहुँचे वहीं अुन्होंने अपना शरीर छोड़ा। मालूम नहीं सरहिन्दमें अब भी अिस साम्यवादी सन्तकी कोअी कब्र है या नहीं।

अिधर हंडियामें अल्लाअीके बारेमें जो खबर मिली, अुसके कारण सलीमशाहकी नींद हराम हो गअी। वह अब अुसके पीछे पड़ा। आगमें घी डालनके लिअे मुल्ला सुल्तानपुरी मौजूद था। शेरशाहके समयसे मियां बुड्ढेकी बड़ी अिज्जत थी। अिस्लामके वह बड़े आलिम और दरबारके माननीय व्यक्ति थे। बुढ़ापेके कारण अब अधिकतर अेकान्तवास करते थे। अल्लाअी अुनके पास पहुँचे। मियाँ बुड्ढे प्रभावित हुअे। अुन्होंने सलीमशाहके पास पत्र लिखा, कि यह बात अैसी नहीं है, जिसके कारण अिस्लामकी जड़ कटती हो। मियाँ बुड्ढेके बेटेने समझाया, सुल्तानपुरी अिससे आपपर नाराज होगा। डर गअे, पिण्ड छुडानेके लिअे अल्लाअीसे चुपकेसे कहा—"तू तनहा दर गोशेमन बगो, कि अजींदावा तायब शुदम्।" (तू अकेले मेरे कानमें कह, कि मैंने अिस दावासे तोबा कर लिया)। भला जानके लोभसे अल्लाअी अैसा कर सकते थे? वह तो सिरसे कफन बांधकर अिस रास्तेपर चले थे।

अल्लाअी सलीमशाहके दरबारमें पहुँचे। सन् १५३९ अी० का कोअी अन्तिम महीना था। मुल्ला सुल्तानपुरी और दूसरे मुल्लोंको क्यों न घबराहट होती? अल्लाअी जादूगर था, अुसकी जबान चले, और सलीमशाहका दिल न बदले, यह कैसे हो सकता था? अल्लाअीको लोगोंने हटानेकी बहुत कोशिश की, लेकिन वह जानते थे, कि जिस स्वर्गको हम पृथ्वीपर अुतारना चाहते हैं वह अितनी आसानीसे नहीं अुतर सकता। अिसके लिअे लाखों कुर्बानियाँ देनी पड़ेंगी। मैं अुसमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीछे रहनेका पाप नहीं कर सकता। गुरुके अूपर गुजरी बातोंको जानते थे। तैयार होकर दरबारमें गअे। बादशाहने मुँह खोलनेका मौका न दे हुकुम दिया; तबतक कोड़े लगाओ, जबतक कि अिसकी देहमें प्राण है। तीसरे कोड़ेमें अल्लाअीका शरीर निष्प्राण हो गया। अितनेसे भी मुल्ला सूल्तानपुरी और सलीमशाहको सन्तोष नहीं हुआ। अल्लाअीके शरीरको हाथीके पाँवमें बाँधकर आगराकी सडकोंपर घुमाया गया। हुकुम था, लाशको कोअी दफन न करने पाअे। थोड़ी देरमें जबर्दस्त आँधी आअी। जान पड़ता था, महाप्रलय आया है। नागरिक जनता और बादशाही सेना अिसे बड़ा असगुन मानने लगीं। सभी कहने लगे, कि अब सलीमशाहकी सल्तनत कायम नहीं रह सकती। लाशको कहीं छोड़ दिया गया। रातों रात अुसपर अितने फूल चढ़े, कि वह फूल ही अुसके लिअे कब्र बन गअे। सलीमशाह और अुसके वंशकी सल्तनतकी कब्र सचमुच ही खुद गअी। केवल मुल्ला सुल्तानपुरीको ही नहीं बल्कि अिस्लामने अैसे सन्तोंको भी हमारे देशमें पैदा किया। मज्दक, मेहदीका स्वप्न आज दुनियाके आधे भागमें सजीव हो चुका है। हमारा देश भी अुसी साम्यवादके रास्तेकी ओर जा रहा है जिसके लिअे चार सदियों पहिले अल्लाअीने अपने प्राणोंकी आहुति दी।

बिन बरसे मत जाना बादल

—श्री रामेश्वर दयाल दुबे

बिन बरसे मत जाना बादल,
तुम्हें शपथ है अुच्छ्वासोंकी, तपन मिटाकर जाना बादल
नहीं सम्हाले जब सम्हलेगा, अरे कहीं तो बरसोगे ही
अूँचे नभसे अुतर धराको, बिना कहे ही परसोगे ही।
तृषित चातकीके प्राणोंकी प्यास मिटाते जाना बादल
ध्वनि कोअी गम्भीरकी पगली तेरा ही भ्रम कर लेती है
कुहक-कुहककर स्वागत स्वरसे दूर क्षितिजको भर देती है।
मत्त मयूरी मीरासे तुम नेह निभाते जाना बादल
मधु अितना पी लिया कि पगली अूष्मामें अपना स्वर भूली
व्यर्थ खोजती, मिले भला क्या? जहाँ अुड़ रही निशि दिन धूली।
स्वर भूली बावली पिकीको याद दिलाते जाना बादल
आशाओंके नव अंकुरसे हरा खेत लहरा जावेगा
कृषक बधूका चंचल अंचल निज धन देख सिहर जावेगा।
अुसकी भोली आस किअे बिन पूरी, मत बढ़ जाना बादल
मेघ भावके घिरे हृदयमें, पुतलीमें बदली घिर आअी
अेक कसककी तड़पन मनमें, पर बिरहिन कितना शरमाअी।
बिन करुणा सन्देश लिअे तुम, आगे मत अुड़ जाना बादल
बिन बरसे मत जाना बादल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तिलकका जीवन-दर्शन

—श्री प्रेमकपूर कंचन

"अुत्तिष्ठ ! जाग्रत ! प्राप्य वरान्निबोधत" ! (कठोपनिषद् ३.१४) अर्थ है–अुठो। जागो। और (भगवानके दिअे हुअे) अिस वरको समझ लो। सृष्टिका नियम है–'बिना किअे कुछ नहीं होता।' प्रश्न होता है। कर्म और अकर्म क्या है। मनकी अिसी शंकापर भगवानने स्वमुखसे गीताका अुपदेश दिया। अुस गीताको जिसने जैसा चाहा वैसा देखा। बाल गंगाधर तिलकने गीताको कर्मयोग शास्त्रके रूपमें स्वीकार किया और अपनी प्रस्तावनाके अन्तिम चरणोंमें अुन्होंने लिखा– 'निरी स्वार्थपरायण बुद्धिसे गृहस्थी चलाते जो लोग हारकर थक गअे हों अुनका समय बितानेके लिअे, अथवा संसारको छुड़ा देनेके लिअे गीता नहीं कही गअी, गीता शास्त्रकी प्रवृत्ति तो अिसलिअे हुअी है, कि वह अिसकी विधि बतलावे कि मोक्ष दृष्टिसे संसारके कर्म ही किस प्रकार किअे जावें और तात्विक दृष्टिसे अिस बातका अुपदेश करें कि संसारमें मनुष्य मात्रका कर्तव्य क्या है। अतः हमारी अितनी ही बिनती है, कि पूर्व अवस्थामें ही –चढ़ती हुअी अुम्रमें ही–प्रत्येक मनुष्य गृहस्थाश्रमके अथवा संसारके अिस प्राचीन शास्त्रको जितनी जल्दी हो सके अुतनी ही जल्दी समझे बिना न रह सके। स्पष्ट है कि अिन पंक्तियोंके लेखकके कर्मयोगकी मीमांसा पूर्ण स्पष्ट थी। अुन्होंने समर्थ गुरु रामदासकी कथनी– 'आधी केलें मग सांगितलें' (पहले किया बादमें कहा) की युक्तिका पूरा अनुसरण किया है।

तिलकका जीवन-अितिहास देखनेसे स्पष्ट हो जाता है कि बचपनसे ही अुनके मनमें निर्भय वृत्ति, स्वार्थ-त्याग, देश-भक्तिके अुग्र लक्षण विद्यमान थे। आगे चलकर तत्वज्ञान और व्यवहार, दोनोंका अुन्होंने समन्वय कर डाला जिसके फल-स्वरूप राजकीय आन्दोलन अुनके लिअे कर्मयोग बन गया। जब निष्काम कर्मयोगकी कल्पना बुद्धिमें साकार हो गअी तो कर्ममें अुतरते अुसे क्षण मात्र भी देर न लगी। क्योंकि गीता रहस्य लिखनेके बहुत पहले ही–'स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः'–स्व-कर्मणा तमभ्यर्च्यसिद्धिं विन्दति मानवः" यानी राष्ट्रोद्धारार्थ किया हुआ कर्म अीश्वरकी ही भक्ति है। यह अेकत्व बुद्धि अुन्होंने गीतासे ही प्राप्त की थी।

—'निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्'–यह महामंत्र ही तो था जिसके बल परतंत्रताके अुस परिधानमें जब कि स्वतंत्रताके सम्बन्धमें सोचना ही राजद्रोह हो जाता था; तिलकने घोषणा की, "स्वतन्त्रता हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है।" "केसरी" में प्रकाशित अुनके लेख आज भी पढ़नेवालोंको नव-चेतना देते हैं। व्याख्यान देते समय जब अुनकी वाणी-गंगा अपने दोनों किनारोंको पूर-प्लावित करती हुअी वेगवती हो प्रवाहित होती थी तब श्रोतागण अुससे विभोर होकर मन-ही-मन स्वराज्य प्राप्तिके हेतु प्राणाहुतिके लिअे प्रतिज्ञा कर बैठते थे। नौकरशाहीका वह कैसा क्रूर कठोर शासनकाल था। सन् १८५६ में जन्म हुअे ५७ के स्वतंत्रता महा-संग्रामकी आगको विदेशी सत्ताने पूरी बेरहमीसे कुचल डाला था। तिलकपर अुन सारी परिस्थितियोंका पूरा प्रभाव था। वह गर्मदलके नेता थे।

बी०अे० की परीक्षा पास कर अुन्होंने शिक्षकका कर्म-भार सम्हाला, लेकिन अपने अुग्र विचारोंके कारण अुन्होंने जन-जागरणके लिअे 'केसरी' मराठी और 'मराठा' अंग्रेजी पत्रोंका प्रकाशन आरम्भ किया। और अिसी 'केसरी' के लेखोंने अुन्हें दो बार जेल भेजा। दूसरी बार आपकी अवस्था ५२ वर्षकी थी। जब अदालतने अिनको तलब किया तो अिन्होंने अपने मुकदमेकी पैरवी स्वयं की और २१ घंटा १० मिनिट तक अदालतमें बहते प्रवाहकी अबाध गतिसे बोलते रहे। फिर भी अिन्हें छह वर्षकी काले पानीकी सजा दी गअी।

और तब देश शोकमें डूब गया था। अब क्या होगा? जेलकी वज्रादपि कठोर व्यवस्था! दस ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनोंमें तिलकका वजन दस पौंड घट गया। सरकार चाहती थी कि तिलक लोक-हित और लोक अुन्नयनका तनिक भी कार्य न कर सकें पर अीश्वरको कुछ और ही स्वीकार था। अपने जीवनमें साधे गअे कर्मयोगको जनसुलभ बनानेके लिअे अुन्होंने बर्मामें, माण्डले जेलमें २ नवम्बर सन् १९१० को गीता रहस्य लिखना आरम्भ किया और लगभग अेक हजार पृष्ठ ३० मार्च १९११ तक लिख डाले। कितना कठोर कर्मयोग था वह, और कैसी कठोर परिस्थिति जब कि अुन्हें यह भी आज्ञा नहीं थी कि वह अपने साथ कोअी किताब रख सकें। बादमें आज्ञामें संशोधन हुआ। पहले अुन्हें अेक समयमें चार किताबोंको रखनेकी आज्ञा दी गअी और फिर यह रोक भी हटा ली गअी। और जब वे कारागारसे मुक्त हुअे तो अुनके पास लगभग ४०० दर्शनकी पुस्तकें थीं। लिखनेके लिअे अुनको कागज खुला हुआ नहीं मिलता था। बन्धे हुअे रजिस्टर प्राप्त होते थे जिनके पृष्ठ गिने हुअे होते थे। किसी भी पृष्ठको फाड़ने काटने या नअे जोड़नेकी आज्ञा नहीं थी। रोशनी नहीं मिलती थी अिसलिअे केवल पेन्सिलसे लिखना पड़ता था। अिन परिस्थितियोंमें तत्वज्ञानकी विश्व-वाङ्मयकी अितनी बड़ी, अितनी महान् पुस्तककी रचना अुन्होंने की। क्या यह ठीक वैसा ही नहीं था जैसे कंसके कठोर कारागृहमें कृष्णजन्मकी महिमा। अीश्वरीय संकेत कितना स्पष्ट झलकता है अिस कार्यमें।

गीता विश्वका अनमोल ग्रन्थ। अुसका कर्मयोग-शास्त्र किन कठिनाअिओंमें देशको मिला। याद आता है, जन-कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ टैगोर घूमते हुअे आक्सफोर्डके पुस्तकालयमें गअे तो अुनका मन विश्वकी महान पुस्तकको देखनेका हुआ। अैसी पुस्तक देखनेका अिससे अच्छा और कौनसा अवसर या स्थान हो सकता था। अपने कालमें आक्सफोर्ड पुस्तकालय विश्वका बहुत ही विशालकाय पुस्तकालय था। टैगोरकी जिज्ञासापर पुस्तकाध्यक्षने सात रेशमी कपड़ोंमें लपेटी हुअी अेक पुस्तक अुनके सामने रख दी। बड़े अितमीनानसे टैगोरने कपड़ेकी गाँठ खोली और पुस्तकको सामने निकालते ही अुनका सारा शरीर पसीना-पसीना हो गया—अुन कपड़ोंके बीच श्रीमद्भगवत्गीता थी। गीताका धर्म सत्य और अभय है।

गीता रहस्य लिखनेसे बहुत पहले तिलकने भारतीय दर्शनपर, विशेषकर वेद और वेदकालपर कअी प्रामाणिक लेख विदेशके पत्रोंमें लिखे थे जिससे अुनका प्रभाव विदेशी दार्शनिकों और विद्वानोंपर गहरा पड़ चुका था। अपने कर्मयोग-शास्त्रमें अिन्होंने कर्म-जिज्ञासा, अधिभौतिक सुखवाद, सांख्यशास्त्र, सन्यास, सिद्धावस्था—पर विचार करते हुअे विदेशी दार्शनिक कान्ट, ग्रीन, मिल, स्पेन्सर, अित्यादिका विशद् बृहद् विवेचन किया है। अिससे स्पष्ट होता है कि आपने तात्कालिक सभी ग्रन्थोंका गहन अध्ययन किया था और अुसके साथ ही राजनीतिके कार्यसे भी मुक्ति नहीं थी। गृहस्थाश्रम भी अुन्होंने छोड़ नहीं दिया था।

अुनका विश्वास है—"हमेशा यह देखते रहो कि अधिकांश लोगोंका अधिक सुख किसमें है।" थोड़ा-सा विचार करनेपर यह सहज ही ध्यानमें आ जाता है कि सदाचार और दुराचार तथा धर्म और अधर्म शब्दोंका अुपयोग यथार्थमें ज्ञानवान मनुष्यके कर्मके लिअे होता है और यही कारण है कि नीतिमत्ता केवल जड़ कर्मोंमें नहीं, किन्तु बुद्धिमें रहती है। और अिसीलिअे अुन्होंने अपना जीवनका मापदण्ड 'धर्मोहि तेषामधिको विशेषः' स्वीकार किया है। अुन्होंने मुकद्दमेकी पैरवीमें अपने पत्र 'केसरी' और 'मराठा' पत्र संस्थाकी सारी सम्पत्ति लगा दी थी। मुकदमा कोअी अुनका अपना नहीं था। लोग जानते थे कि अगर यह केस हार गअे तो अुन्हें बहुत भारी क्षति पहुँचेगी। अुन्हें दुख भी होगा; पर फैसला लोक-तिलकके प्रतिकूल ही हुआ तो श्री गोखलेने अुनको अेक पत्र लिखा; अुनके अुत्तरमें जो अुन्होंने पत्र भेजा अुसका अनुवाद नीचे है—

१० हौले प्लेस मेहा वेल डब्ल्यू २
लन्दन ३ अप्रैल १९१९

प्रिय गोखले,

आपका तारीख सात मार्चका पत्र, साथके कागजों सहित मिला। अुसी तारीखको श्री तात्या-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहब केलकरका पत्र भी प्राप्त हुआ ।

वहाँ प्राप्त यह समाचार, कि मुकद्दमेका निर्णय अपने प्रतिकूल होनेके कारण मैं निराश हो गया हूँ बिलकुल निराधार है ।

अब मैं अितना तप चुका हूँ कि अगर सिरपर आसमान भी टूट पड़े तो विचलित नहीं हो सकता, बल्कि मैं टूटे हुअे आसमानका अपने अुद्देश्यकी पूर्तिके लिअे अुपयोग कर लूँगा । मनुष्यको समय-समयपर अुपस्थित होनेवाले संकटोंका सामना करना चाहिअे न कि वह अुनके आधीन हो जाय । आज तक मेरे समस्त कार्योंका यही ध्येय वाक्य रहा है ।

शान्ति-सम्मेलन प्रकट अेवं अधिकृत रूपसे भारतीय समस्यापर विचार नहीं कर सकता । फिर भी अिस समस्याके प्रति सम्मेलनका संकेत भर कर देना बहुमूल्य माना जायगा और अिस सम्बन्धमें मैं अभी निराश नहीं हूँ ।

आपका, बी० जी० तिलक ।

सारांश यह कि अतुलनीय धैर्यके अुदाहरणोंसे अुनका जीवन-चरित्र भरा पड़ा है । वे भारतीय स्वाधीनता-प्राप्तिके संग्रामका वर्षों तक सूत्र-संचालन करते रहे और अुसमें अुन्हें अकथनीय संकटोंका सामना करना पड़ा । किन्तु प्रत्येक नअे संकटका सामना करनेके लिअे नअे अुत्साहसे तैयार हो जाना और कर्तव्य पालन करते समय अुपस्थित होनेवाले किसी भी संकटकी चिन्ता न करना ही अुनका व्रत था—अुन्होंने लिखा है—"मूल गीताका अर्थ करके निराग्रह बुद्धिसे देखना है कि वह कौनसा विशेष मत है । हमें पहलेसे कोअी मत स्थिर करके गीताके अर्थकी खींचातानी नहीं करनी है । गीता भक्तोंमें प्रसार करके भगवानके ही कथनानुसार यह ज्ञानयज्ञ करनेके ही लिअे हम प्रवृत्त हुअे हैं ।"

राष्ट्र-पितामह तिलकका किया हुआ अखंड ज्ञान-यज्ञ अितिहासमें सदा-सर्वदा अगाध श्रद्धासे स्मरण किया जायगा । सात्विकताके जीवित अवतार होते हुअे भी, अनीति-अन्यायसे युद्ध करनेकी अुनमें सम्पूर्ण शक्तिमान ब्रह्म-सी तेजस्विता थी । यही तेजस्विता अुनके जीवन-दर्शनकी पृष्ठ-भूमि तैयार करती है जिसमें ज्ञान, विद्वत्ता, और कर्मण्यताका अद्भुत संमिश्रण है जो महान् अलौकिक आत्माओंको ही प्राप्त होता है ।

वन्दना !

वाणी ! दो यही वरदान

पथ तुम्हीं लिख दो किरणसे
स्पर्श कर चिर जागरणसे
साँस मेरी, तार मेरे, तुम भरो मृदु गान
वाणी ! दो यही वरदान

आजतक जिसको न देखा
तुम बनो वह भाग्य-रेखा
वर्तमान भविष्य दोनोंकी मधुर मुस्कान
वाणी ! दो यही वरदान

खोलते मुख सुमन नव-नव
झुक रहे हैं प्राण-पल्लव
सुरभि दो, सौन्दर्य दो शाश्वत, अखण्ड, महान
वाणी ! दो यही वरदान

मरणको तम दो, लुके वह
देख जीवनको, रुके वह
छन्द दो गतिको अमर स्वर-सुघर शुचि रुचिमान
वाणी ! दो यही वरदान

—'प्रभात'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषुव-मिलन

—श्री अनसूया प्रसाद पाठक

पाठकोंसे सविनय निवेदन है कि वे प्रथम शब्दके अर्थपर ध्यान दें तब संस्थाके अुद्देश्य और कार्यकलापपर सोचें। अिससे बहुत दूरके अुद्देश्य, आकांक्षा तथा काम निकट परिलक्षित होंगे।

मैंने अेक बार अुत्कल साहित्य मनीषी (वर्तमान बम्बअी-राज्यपाल) डाक्टर हरेकृष्ण मेहताबसे पूछा कि आपको ओड़ीसाके प्रधान मन्त्री पदकी झंझटोंके भारको सिरपर लादकर चलते रहनेपर भी, साहित्य-चर्चा करनेका समय कैसे मिल जाता है। अुत्तरमें डाक्टर मेहताबने कहा—मैं सुबह तीन-चारके बीच अुठ जाता हूँ। अुठानेवाली मेरी कलाअीकी घड़ी है। मैं लिखता हूँ। कभी-कभी बंशी बजाता हूँ। यह आज तक किसीको नहीं मालूम है कि मैं बंशी बजाना भी जानता हूँ। और वह मेरे पास हमेशा मेरे सूटकेसमें साथ-साथ रहती है। यह मेरी सबसे प्रिय आनन्ददायिनी संगिनी है।

जब मैं अुड़ीसाका प्रधान मन्त्री बना तो शुरू-शुरूमें मुझे १८-१८, २०-२०, घण्टे काम करना पड़ता था। ये सेक्रेटरी लोग, जो अच्छे नहीं हैं, मुझे हैरान करनेकी कोशिशें करते थे। मैं भी सोचा करता था। अिनकी नाड़ीकी गति कितनी दूर है। कितनी तेज चलती है। पता लगा कि बड़ी ही दुर्बल और मन्द गतिसे चलती है। मैंने किसीकी २–३ रुपयेकी तरक्की कर दी और किसीकी दूरकी बदली कर दी। बस, अब ठीक काम चलता है। ४–६ घण्टे कसकर काम करता हूँ साहित्य चर्चाका समय भी काफी मिल जाता है। सुबह-सुबह रोज बंशी बजाता हूँ।

जो यह विषुव मिलन होता है, वही साहित्यचर्चाका केन्द्र स्थल है। मैं अुसे ठीक अर्थोंमें केन्द्र-स्थल बनाने जा रहा हूँ। संस्थाअें अुद्देश्यकी पूर्तिके लिअे बनती हैं। मेरी बहुत दिनोंसे यह आन्तरिक अिच्छा थी कि मैं अेक अैसी सँस्था बनाअूँ जिसमें शुद्ध साहित्यिक चर्चा हो, और बिना भेदभावके, प्रजातन्त्र प्रचार समिति अुसी अुद्देश्यकी पूर्तिके लिअे है।

सन् १९२४, कटक स्वराज्याश्रममें अकेले बैठे अिस समितिकी परिकल्पना मनमें अुठी थी। किन्तु अिस अुफानके ज्वारमें भाटा आ जाता। अब स्वराज्य मिल गया है। मैं प्रधान-मन्त्री बन गया हूँ। पुरानी भावनाअें प्रसन्नवदन सामने आअीं। १९४७ में चिरपोषित कामनाको वास्तविक आभूषण पहिरानेका अुद्यम होने लगा। यह विषुव मिलन, अुसी कल्पनाका अेक अंश मात्र है सम्पूर्ण नहीं। मेरा मत है कि राजनीतिक अुद्यम क्षण-स्थाअी व्यापार है। जाति जीवनके लिअे सांस्कृतिक संगठन ही चिरस्थाअी है। अिसमें सभी श्रेणी, सभी दल और मत-मतान्तरके समन्वयोंकी जरूरत है। यह जो संस्था स्थापित हो रही है, वह स्वच्छ, सुन्दर तथा त्यागके मनोभावपर प्रतिष्ठित होगी। यह किसी प्रकारके लाभ तथा व्यापारके लिअे नहीं खड़ी की गअी है। अिसका अुद्देश्य है साहित्यिक वृन्दोंका मेल, युवकोंका मेल तथा भावी कर्णधार बच्चोंको अुत्साहित करना, आगे बढ़ाना तथा नारी जातिमें अेक सामूहिक संगठन तथा नव-जीवन जागरण लाना। अिसलिअे लाभ-हानिपर ध्यान न दे मैं फिलहाल बालकोंके लिअे मीना मण्डली, महिलाओंके लिअे नारी-जगत, विज्ञानके लिअे ज्ञान-विज्ञान, ग्रामीणोंके लिअे गाँव मजलिस, और साहित्य साधनाके लिअे रविवार-प्रजातन्त्र, चला रहा हूँ। आगे चलकर अिसकी और भी अुन्नति की जा सकती है।

साहित्यिकोंके लिअे जो मन्दिर निर्मित है वह है मासिक झंकार, जिससे वे अपनी जातिको समृद्धशाली बना सकें तथा अपने शुचिशुभ्र सुन्दर चिन्तनसे भारत भरमें नाम पा सकेंगे।

अिस कथनको ६ साल बीत गअे हैं। प्रजातन्त्र समिति कार्यमें सफल हो रही है, जो प्रत्येक वर्ष-विषुव,-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलनेके समय अुसका कार्य कलाप दो दिन तक आत्म-प्रकाश पाता है। यह विषुव मिलन केवल अुड़ीया भाषाका संगठन करता है, अैसी बात नहीं हैं; भारतीय भाषाओंके साथ समन्वय भी स्थापित करता है। बंगला भाषाके विद्वान श्रीयुक्त सुनीति कुमार चटरजी, तथा श्री कालिदास नाग, हिन्दी भाषाके विद्वान डाक्टर रघुवीर भी अिस विषुव मिलनकी सभाको अलंकृत कर चुके हैं। अभी गत विषुव मिलनमें मराठीके विद्वान डाक्टर कुलकर्णीजीने भी अिसका सभापतित्व किया है।

अिस सम्मेलनमें अुच्चकोटिके प्रबन्ध पढ़े जाते हैं। प्रतियोगितामें १, २, ३, श्रेणीके पुरस्कार हैं। 'झंकार' के विशेष अंकके लिअे अनेक प्रबन्ध, नाटक, कहानी तथा अुपन्यास, अेकांकी विषयोंपर समालोचनात्मक लेख लिखे जाते हैं। सुन्दर सुन्दर चित्र बनाअे जाते हैं। सामूहिक तथा स्थाअी मासिक झंकारके लेखकोंकी संख्या १५० के लगभग है।

बालकोंकी मीना मण्डलीने तो और अधिक अुन्नति की है। प्रधान मंत्री पं. जवाहरलालजी नेहरू जब अुत्कल भ्रमणके समय १९५५ में आअे थे, तो मीना-मण्डलीका नृत्य देखा था और गीत सुना था। अिन बालकोंकी ललित कलाको देखकर पण्डितजी अत्यन्त मुग्ध हुअे थे और प्रशंसा करते हुअे कहा था, बालकोंका काम अति सुन्दर और अुत्तम है। यह सभी प्रान्तोंके लिअे अनुकरणीय है। आदि-आदि।

"मीना-मण्डली" की सारे प्रान्तमें आज १९५ शाखाअें हैं और सभ्य संख्या है ९०००, नौ हजार। दिन-दिन सदस्य-संख्या बढ़ती जाती है। अिस मण्डलीके सदस्योंका प्रधान काम है स्कूल पढ़ाअीके बाद गरीबोंकी सहायताके लिअे काम करना, रोगियोंकी सहायतार्थ चन्दा करना, बाढ़ पीडित तथा मेलादिमें भूले-भटकोंकी सहायता करना। यथा स्थान पहुँचाना।

अिस अुद्यमसे सबसे बड़ा लाभ यह हुआ है कि कोमल मति बालक राजनीतिक दल-दलसे बचकर अपना जीवन गठन करने लगे हैं। दुनियामें कुछ करना है, असहायोंकी सेवा करना भी मनुष्यका परमधर्म है सोचना तथा आगे बढ़ना, अच्छी बातें सोचना, अच्छा काम करना तथा चिन्तन करना और अुसी अुत्तम पथपर चलनेका प्रयास करना सीख रहे हैं। अिस अुद्योगके कारण डाक्टर श्री मेहताबजीको सारे मीना-मण्डलीके बालक "चाचा महताब"के नामसे पुकारते हैं।

विषुव-मिलनके समय जो प्रदर्शनी होती है अुससे बच्चोंकी चिन्तन धारा और स्वभावके आग्रहका पता लगता है। पेड़-पौधोंके चित्र, नदी-नालों, नौकाके गमनके चित्र, नाना प्रकारके फूलोंके चित्र, हाथकी लिखावटके चित्र टंगे दीखते हैं, जिनके नीचे कलाकार बालकोंका नाम लिखा होता है।

नारी-जगत जिनकी सभ्य संख्या आज १५९ है, अुनके हाथके नमूने भी देखनेको मिलते हैं। जिसे देखकर अगले विषुव-मिलनमें अपने प्रतिद्वन्द्वीको पछाड़कर पुरस्कार पानेकी प्रबल अिच्छा प्रकट होती है।

विषुव-मिलनके जन्मदाता डाक्टर हरेकृष्ण मेहताबजी अिस समय बम्बअीके राजपाल हैं। वे विषुव मिलनमें नहीं आ सके। फिर भी सैकड़ों साहित्यिकोंका जमघट हुआ। अिस अुद्यमको सफल करनेमें श्री जानकी वल्लभ पटनायक अेम. अे. और श्री सत्यानन्द चम्पतराय अेम. अे. का प्रधान हाथ रहा है। साहित्यिकोंका स्वागत करनेमें वे अपनेको सदाकी भाँति लगाअे रहे। अिस परिचर्यासे मेहताबजीका काम पूरा हो रहा है। लोग समझने लगे हैं। प्रजातंत्र प्रचार समितिके मन्त्री श्री वनमाली पटनायक आगन्तुकोंका मुस्कानके साथ मंचपर स्वागत करते देखे गअे हैं। यह मिलन स्वच्छ दिलका था। निराडम्बर शामियाना तथा बाँसकी टट्टियोंकी छाया। दरी तथा जाजमकी सादा बिछावट तथा श्री प्राण कृष्ण परिजा (अुपकुल गुरु अुत्कल विश्वविद्यालय) सभापतिका आसन अलंकृत कर रहे थे। आनन्द और अुत्साहपूर्ण भावावेगके साथ साहित्यिकजन सभापतिके निमन्त्रणपर आते और अपने सुन्दर गवेषणापूर्ण सुचिन्तित विचार अुपस्थित साहित्यिक तथा साहित्य सेवियोंके सामने रखते और चले जाते। अुस समय प्रान्तमें फैली गन्दी राजनीति नजर नहीं आ रही थी। सभी प्रसन्न, शुद्ध स्वच्छ वेश तथा हँसते सुमन सदृश विचार झलकाते मुस्काते बैठे देखे गअे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने देखा है ज्यादा और सुना है शायद अुससे कम, सैकड़ों साहित्यिक जमा थे, मेरी आँखें अेक-अेकके आननपर, नाक, कान, कपोलोंके साथ-साथ केश-विन्यासपर पड़ी हैं, मुस्काते भावोंको पढ़नेका मुझे मौका मिला है। कितनी शुचि-सम्पन्न सभा जमी थी। अेक ही जाजमपर अेक ओर नर थे और अेक ओर नारी, मीना मण्डलीके किशोर-किशोरी अपनी नाट्य-कला दिखानेके लिअे मण्डप मंच सजानेमें लगे थे। सामने मंचपर पड़ा नीले रंगका पर्दा प्रजातंत्र प्रचार समितिके विचार-सागरकी लहरियाँ दिखा रहा था। कभी-कभी बच्चोंकी किलकारीसे समूचा मण्डप गूँज अुठता। पानसे रंजित ओठवाली देवियोंके मुस्कानसे मण्डप मुखरित हो अुठता। सभीकी नजर अुधर ही होती, किसीकी सीधी, किसीकी बांकी और किसीकी लचीली।

अिस मिलनमें कुछ तो प्रकट चर्चा हुआ करती है, और कुछ छिपी चर्चा होती है। मेरे पीछे पीठसे लगकर अेक साहित्यिक चर्चाका नमूना देखिअे। चर्चाके अधिकारी कौन हो सकते हैं? पाठक समय-वयकी कसौटीसे कस लेंगे।

पराअी बहिनोंको अेक टक देखने, घूरनेमें पाप लगता है-अेकने कहा-दूसरेने अुसी प्रकार चुपके अुत्तर दिया। (चारों ओर दृष्टि-निक्षेपकर) सौन्दर्यका दर्शन, विधिकी कलाका दर्शन है, पाप नहीं। और फिर कुमारी बहिनोंको पराअी नहीं कहा जा सकता। यहाँ विषुव-मिलनमें हम लोग आअे हैं, सौन्दर्यके अुपासक बनकर, पाप करनेके लिअे नहीं जमा हुअे हैं। चर्चा खतम नहीं हुअी थी। सभापतिजीने घण्टी बजाअी। सभीका ध्यान खिंच गया।

'विषुव-मिलन' मैंने प्रति वर्ष देखा है, पर मनने कुछ लिखकर अिस साहित्यधाराको प्रवाहित करनेका विचार अिसी बार किया है।

विषुव-मिलनमें डाक्टर मेहताबजीका स्थूल कलेवर नजर नहीं आता लेकिन अगर देखा जाय, गुना जाय तो अनुभव होगा कि अुनकी आत्मा अिस 'विषुव-मिलन' में विद्यमान है। अिसका आभास अुनके कथनसे होगा। जिसका अर्थ है—आज विषुव मिलन है। अुत्कल भाषाके साहित्यिक यहाँ अेकत्रित हैं। मैं दूर बम्बअीमें हूँ। मैं दूर हूँ लेकिन मेरा दिल विषुव-मिलन है। मैं खुश हूँ कि साहित्यिक बिना भेदभावके मिल रहे हैं। मैं देखता हूँ, और सोचता हूँ। मुझे अुर्दू भाषाके प्रसिद्ध कवि अिकबालकी दो पंक्तियाँ याद आती हैं—"गुरवतमें हों अगर हम रहता है दिल वतनमें, समझो हमें वहीं भी दिल हो जहाँ हमारा' जिन युवकोंके हाथमें अिसका भार है वे सफलताके साथ अिसको चला रहे हैं यह मेरे लिअे कितने गौरव और आत्म-आनन्दकी बात है। अैसी दशामें मेरी शुभ कामना और अधिक क्या काम देगी और लाभ-जनक साबित होगी।

डाक्टर श्री मेहताबजीने विद्वान युवकोंके हाथमें अिसको सौंप रखा है। अिनका नाम पाठक पीछे छोड़ आअे हैं। लेकिन डाक्टर साहब आज भी अुक्त अनुष्ठानको धन दे रहे हैं, मन दे रहे हैं। तनसे केवल दूर हैं।

अिस संस्थाका काम और बालकोंमें लगन देखकर अैसा लगता है, मानो पं. जवाहरलाल नेहरूका यह कथन धन्य करने जा रहे हैं कि बालक राष्ट्रके भविष्य हैं। वे ही आगे चलकर राष्ट्रपति, प्रधान मन्त्री आदि बन सकते हैं।

मुझे नहीं मालूम कि अिस सामूहिक अुन्नति मूलक कल्पनाको पूर्ण करनेके लिअे अन्यत्र कहीं अैसा संस्कृति संगठन और भी है। और अिस विषुव मिलन जैसा कार्य तो सर्वत्र होना चाहिअे। बालकोंके लिअे सुन्दर काम मिलना चाहिअे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाकवि कंबन और अुनकी रामायण

—श्री पार्थसारथि
—श्री रा. वीळिनाथन

जिस महान् सुकृती रस-सिद्ध कविके निर्माण कौशलसे दक्षिणकी अत्यन्त श्रेष्ठ अेवं प्राचीनतम भाषा तमिळका साहित्य-सौन्दर्य तथा वैभव तमिळ भाषी लोगोंके नेत्रों और मानसको सुख और सम्यक् तृप्ति प्रदान करता है अुस महाभागका नाम कम्बन है। यह तमिळ भाषाकी अपनी प्रकृति है कि अुसके अकारान्त पुँलिंग शब्दोंके अन्तमें प्रायः 'न' वर्ण लगता है, अेकवचनी प्रथमाके प्रयागमें। जैसे—राघवन्, राजगोपालन्, कृष्णन्, श्रीनिवासन् आदि हैं, वैसे ही कम्बन् भी। कविका सीधा-सादा नाम है कम्ब ! तमिळ साहित्य संसारमें कम्बका नाम अितना प्रख्यात है कि अुनकी चर्चा करते समय तमिळ लोग अुनका स्मरण कविवर, कविसम्राट या तमिळ-वाल्मीकि, अिन पदोंसे करते हैं। हिन्दी-जगत्में जो श्रेष्ठतम स्थान प्रातःस्मरणीय गुसाअीं तुलसीदासका है, वही तमिळ संसारमें कविवर कम्बका है। तमिळ-कवि-सम्प्रदायमें परम्परागत अेक पुरानी कहावत प्रचलित है कि कम्बनकी छड़ी भी छबीले छन्द छेड़ सकती है। अर्थात् कम्बकी कविताका अितना महत्व है कि अुनके साथ रहने मात्रसे अेक महामूर्ख भी कवि बन सकता है। कम्बकी प्रसिद्धिका कारण है अुनकी रामायण, जो दक्षिणमें कम्बरामायणके नामसे प्रसिद्ध है—जैसे तुलसीदास और अुनका रामचरित-मानस। जिस प्रकार गोस्वामी तुलसीदासके जन्म, मरण तिथि, स्थान आदिके बारेमें अब तक खोज हिन्दी जगत्की विभिन्न संस्थाओं अेवं बड़े-बड़े महाविद्यालयोंके प्राध्यापकों द्वारा चालू है और अब तक लोगोंका संशय निवारण नहीं हो सका है, वैसे ही कवि कम्बनके बारेमें भी समझिअे। अबतक परम्परागत अनुसन्धानोंके सहारे ही अुनके बारेमें कुछ ज्ञात हो सका है। कम्बनका जन्म तंजाबूर जिलेमें, यायावरम् स्टेशनके समीप तिरुवलुँदूर नामक ग्राममें हुआ था। आज भी वह ज़मीन मौजूद है जिसपर कम्बनका घर था। कम्बनके घरके प्रति आदर भावके कारण अुस स्थानपर लोग अब अपने घर नहीं बाँधते। अुनके पिताका नाम आदित्तन था और वे किसी मंदिरमें पुजारी थे। बाल्यावस्थामें ही अुनके पिताका देहान्त हो गया। लेकिन तिरुवण्णैनल्लूर ग्रामके अेक धनसम्पन्न अुदार हृदय शड़ैयप्पा मुदलियारने बालक कम्बनको अपने आश्रयमें रखकर पाला-पोसा और पढ़ाया-लिखाया। कृतज्ञ-हृदय कम्बनने अपनी कृती रामायणमें अपने आश्रयदाता अुक्त अुदार मुदलियारका कृतज्ञतापूर्वक स्मरण किया है। कम्बन रामायणके आरंभके १० छन्दोंमें अुनकी अुदारताकी प्रशंसा की है।

कम्बनके नामकरणके सम्बन्धमें तीन वृत्तान्त प्रचलित हैं। कुछ लोगोंके कथनानुसर माता-पिता द्वारा ही अुनका यह नाम रखा गया था। दूसरा वृत्त यह है कि बचपनमें गरीबीके कारण अुनके माता-पिता द्वारा कम्बू नामक धान्य विशेषके खेतके पास वह छोड़ दिअे गअे और अेक पहुँचे हुअे महात्माने अुन्हें अुस खेतमें पाकर अुनका यह नाम रख दिया था। तीसरा मत यह है कि तंजोर जिलेमें कंबनाडु नामक अेक कस्बा है, वहाँ जन्म होनेके कारण वह कम्बनके नामसे प्रसिद्ध हुअे।

कम्बनको ईश्वर-प्रदत्त प्रतिभा-शक्ति मिली थी। अुनमें निपुणता थी और अभ्यास और विद्वत् सत्संगके कारण कविकी ख्याति बढ़ी। धीरे-धीरे अुनका नाम सारे तमिळनाडु (नाडु कहते हैं देशको) में फैला और चोल देशके राजा कुलोत्तुँगनके पास तक पहुँचा। महाराज कुलोत्तुँगन काव्य-प्रेमी साहित्य-रसिक राजा थे। कम्बनको दरबारमें अच्छा आदर मिला। आश्रय मिला। कुलोत्तुँगनकी राजसभामें ओट्टक्कुत्तुर नामक अेक कवि अुस सभाके प्रधान पण्डित थे। यद्यपि तमिळ साहित्यमें ओटुक्कुत्तूरका भी स्थान अूँचा है, फिर भी अिनकी कविता कम्बनकी जैसी अत्युत्तम नहीं मानी जाती। कम्बनके समकालीन कवि पुसलेन्दि प्पुलवर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और ओवैयार भी महाराज कुलोत्तुंगनके दरबारमें आया करते थे। अिन दरबारी कवियोंमें पारस्परिक स्पर्धाके आधारपर तमिळ संसारमें कुछ जनश्रुतियाँ और छन्द भी प्रचलित हैं। अेक वृत्तान्तके अनुसार वाल्मीकि संस्कृत रामायणका अनुवाद कम्बन और ओट्टक्कुत्तूरकी आपसी स्पर्धाका परिणाम था।

कम्बन बड़े स्वतंत्र विचारके और अक्खड़ मिजाजके प्राणी थे। कभी किसीकी खुशामद नहीं की, केवल अपने बाल्य किशोर कालमें अुनको सहारा देनेवाले शडैयप्पा मुदलियारको ही अुन्होंने अपनी रामायणमें प्रशंसाका स्थान दिया है। अिससे चोल राजा और कम्बनमें कुछ मनमुटाव भी हो गया था। तमिळोंमें अेक जनश्रुति प्रचलित है कि कम्बनकी मृत्यु चोल राजाके द्वारा हुअी। जो कुछ भी हो।

कम्बनका समय

कम्बन कब हुअे, अिसका निर्णय करनेमें तमिलका अेक छन्द ही मुख्य आधार माना जाता है जिसे किसी कविने कम्बनकी मृत्युके बाद लिखा था। अुस छन्दका मतलब यही है कि अेण्णेटेलु शकाब्द कालमें कम्बने अपनी रामायण पूर्णकर श्रीरंगम (देवस्थान) के सर्वश्रेष्ठ कवियोंसे अुसके लिअे प्रमाण-पत्र प्राप्त किया था। राष्ट्रभारतीके पाठक अिस अेण्णेटेलु शब्दसे परिचित हो जाअें, अुनकी जानकारीके लिअे अेण्णेटेलुका अर्थ होता है ८०७ आठ सौ सात। शालिवाहन सवंत् ८०७, अीस्वी सन् ८८७ के बराबर है। अिसके आधारपर यह मान्यता है कि कम्बन नवमी शताब्दीमें मौजूद थे। कुछ विद्वानोंके परम्परागत जो अिधर खोज अनुसन्धान हुअे हैं अुनके आधारपर कम्बनका समय १२ वीं शताब्दी स्वीकार किया है।

कम्बनका धर्म

वे शुद्ध वैष्णव थे। कुछ प्रमाण मिलते हैं। अपनी रामायणके रामावतार शीर्षक अध्यायमें कम्बनने भगवान विष्णुको मेरे स्वामी कहा है। और शंभुमाली असुर संहार नामक सर्गमें रामचन्द्रके मुखारविन्दको श्रीरामानुजाचार्यके अनुयाअी श्री वैष्णवोंके सदृश मुख चिन्हांकित ही बतलाते हैं। कम्बरामायणके अनेक स्थलोंमें विष्णुको ही सबसे श्रेष्ठ माना है। कम्बनने दक्षिणके प्रसिद्ध वैष्णव सन्त नम्मालवार पर भी अेक-प्रशस्तिग्रन्थ लिखा है। नालादूर प्रबंधके व्याख्यान कर्ताओंने कम्बनके ग्रन्थोंसे अनेक अुदाहरण दिअे हैं। अुन प्रमाणोंसे यह अनुमान लगाया जाता है कि कम्बन वैष्णव ही थे। वे तुलसीदासकी ही तरह अुदार हृदय और सर्वधर्म समन्वयवादी थे। केवल अपनी भक्तिके लिअे अपने अिष्ट देव विष्णुको अेकमात्र अपना आराध्य मानते थे। कम्बन अपने ग्रन्थ अेरेलुपुतुके आरंभ ही में सबसे प्रथम जगवन्दन गणपतिकी गणेशवन्दना करते हैं। अपनी रामायणमें अुन्होंने शिवका भी वर्णन बहुत भक्तिभावपूर्वक किया है। कम्बनका यही दृढ़ विश्वास था कि सभी धर्म अेक ही परब्रह्मके पास जानेके भिन्न-भिन्न मार्ग हैं। वे अेक स्थलपर कहते हैं कि विष्णु या शिवको अेक दूसरेसे सर्वश्रेष्ठ बतलाकर जो मूर्ख जन आपसमें विद्वेषका प्रचार करते हैं और निन्दा करते हैं वे मुक्ति कभी न पावेंगे। कम्बन भी तुलसीदासकी तरह सगुण ब्रह्मवादी थे। किन्तु अन्तर अितना ही कि तुलसीदासजी शंकरमतानुयाअी मायावाद सिद्धान्तको मानते थे। कम्बन भगवानकी महिमा और करुणा पर ही जोर देते हैं कि सदा सर्वदा भक्ति पूर्वक अुनका ध्यान करना ही मोक्ष प्राप्तिकी सच्ची और पक्की सीढ़ी है।

कम्बनके ग्रन्थ

कम्बनके मुख्य ग्रन्थ ४ ही अुपलब्ध हैं। रामायण ही अुनका सबसे बड़ा और प्रसिद्ध तथा प्रामाणिक ग्रन्थ है। दूसरी कृति है शठगोपर अन्तादि, दक्षिणके अेक परम वैष्णव सन्त शठगोपकी अिसमें प्रशस्ति है और अिसमें सिर्फ सौ छन्द हैं जो बहुत अुच्च कोटिके हैं। तीसरा ग्रन्थ है सरस्वती अन्तादि। यह शायद कम्बकी अपनी आरम्भकी यौवन कालीन रचना है। चौथा है अेरेलुपुतु। जैसे तुलसीको अुनके राम चरित मानसने अमर कर दिया, कम्बनको भी वैसे ही अुनकी रामायणने अजर अमर कर दिया। जबतक दक्षिण भारत है और गोदावरी, कृष्णा, कावेरीकी जलधारा प्रवाहित है अेवं श्रीरंगजी तथा श्रीतिरूपति तीर्थराज विराजमान है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कम्ब रामायण

अेक जनश्रुतिके आधारपर कम्बनने चोलराजके विशेष अनुरोधसे वाल्मीकि रामायणका तमिलमें भाषान्तर किया। अेक किम्वदन्ती यह भी प्रचलित है कि यद्यपि कम्बन तमिलके सर्वश्रेष्ठ कवि थे और अुनमें राम-भक्तिकी कमी भी नहीं थी, तो भी आलस्यके कारण वे किसी कामको पूरा नहीं कर पाते थे। अिसलिअे राजाने कम्बन और कवि ओट्टक्कूत्तर, दोनोंको यह काम सौंपकर अुनमें स्पर्धा अुत्पन्न कर दी। कुछ कालके पश्चात् राजाने अुन्हें बुलाकर पूछा कि कहिअे, वे कहाँतक लिख चुके हैं। ओट्टक्कूत्तरने किष्किन्धा काण्डमें वर्णित समुद्रके दृश्योंका वर्णन पूरा कर लिया था, और राजाकी आज्ञासे अुसने अुस प्रसंगके छन्दोंको राजसभामें पढ़कर सुनाया भी। कम्बनने तब अेक शब्द भी नहीं लिखा था, तो भी राजसभामें अपने प्रतिस्पर्द्धी ओट्टक्कूतरके हाथसे अपना पराजय स्वीकार करनेकी अनिच्छासे और सरस्वती देवीकी कृपापर भरोसा रखकर अुन्होंने राजासे कहा कि मैं ओट्टक्कूत्तरके वर्णित समुद्र दृश्यसे बहुत आगे बढ़कर सेतुबन्धका प्रसंग लिख चुका हूँ। अितना कहकर वे सरस्वती देवीके वर-प्रसादसे अचानक ही अुस विषयपर धारावाही ७० छन्द सुना गअे। अुसके आगे भी वे अेक महत्वपूर्ण प्रसंग वर्णन करने लगे। कम्बनके प्रति अीर्ष्यासे अुत्तेजित होकर अुनके प्रतिद्वन्द्वी ओट्टक्कूत्तरने अुनके छन्दोंमें अेक शब्दका प्रयोग काव्य साहित्यके नियमोंके विरुद्ध बताया। जनश्रुति है कि दूसरे दिन सरस्वती स्वयं अेक दूधवालीके भेषमें दर्शन देकर कम्बनके अुस शब्द-प्रयोगको लोकाचारके अनुसार ठीक बताकर अन्तर्धान हो गअी। तबसे अपने वचन-वाक्यको सच्चा प्रमाणित करनेके लिअे कम्बन भी रामायण लिखनेमें जुट गअे। ओट्टक्कूत्तरने अपना रामायण ग्रन्थ शीघ्र ही पूरा कर लिया था, किन्तु अुनको यह विश्वास हो गया था कि अुसकी कवितासे कम्बनकी कविता बहुत ही अूँचे दर्जेकी है और संसारमें अुसे मान नहीं मिलेगा। अिस आशंकासे वे अुसे फाड़कर फेंकने लगे। ज्योंही यह समाचार कम्बनको मालूम हुआ, तो अुन्होंने बड़ी सहानुभूतिके साथ ओट्टक्कूत्तरके पास जाकर कहा, 'आपने अितने महान कठिन परिश्रमसे रामायण लिखकर अुसके पन्ने फाड़ डाले? छह काण्डोंको आपने फाड़ फैंका है, अब कमसे कम अुत्तरकाण्डको तो बचने दीजिअे। मैं अपने रामायणके साथ आपके अुत्तर-काण्डको जोड़ दूँगा। ओट्टक्कूत्तरने यह स्वीकार किया। अिसलिअे आज तमिळ रामायणमें पहले छह काण्ड कम्बनके हैं और अुत्तर-काण्ड अुनके प्रतिद्वन्द्वी ओट्टक्कूत्तरका है।

तमिल देशमें जब कभी कोअी कवि काव्य-रचना करता है तो अुसे अपने समयके सर्वश्रेष्ठ पण्डितोंको अपनी रचना सुनाकर अुनसे अुसकी अुत्कृष्टताका प्रमाण पत्र प्राप्त करना पड़ता है। अब यह परम्परा नहीं है। प्राचीन कवि-सम्प्रदायके अनुसार कम्ब भी अपनी रामायणको श्रीरंगम क्षेत्रकी पण्डित-परिषदमें ले गअे थे। वहाँके वैष्णव पण्डित लोग बहुत घमण्डी थे, और कम्बकी रामायणका सम्मान नहीं करना चाहते थे, अिसलिअे अुन्होंने कवि कम्बको चिदम्बरम्, तंजावूर आदि प्रसिद्ध स्थानोंको भेजकर वहाँके विद्वानोंकी सम्मति प्राप्त करनेको कहा। कम्बने वैसा ही किया। वहाँ-वहाँके पण्डितोंकी सम्मतियाँ प्राप्त करनेके पश्चात् श्रीरंगम्के पण्डित कम्बकी रामायण सुननेके लिअे श्रीरंगजीके मन्दिरमें अेकत्रित हुअे। वैष्णवोंके सर्व प्रसिद्ध आचार्यवर्य श्री नाथमुनि भी वहाँ विराजमान थे। वे महापण्डित थे और शीघ्र ही कम्ब रामायणकी अलौकिक महत्ताको समझ गअे। किन्तु अन्य पण्डित जन अुस महाकाव्यमें कोअी-न-कोअी त्रुटि या दोषारोपण करते ही रहे। यद्यपि वाल्मीकि रामायणमें प्रह्लादका चरित्र कहीं भी वर्णित नहीं है, फिर भी कम्बने युद्धकाण्डमें विभीषण जब रामकी महिमाका बखान रावणसे करते हैं अुस समय अुनके मुखसे हिरण्यकशिपुके संहारका वर्णन किया। अिस प्रसंगको भी अप्रासंगिक बतलाकर कम्बपर दोषारोपण किया गया है। कहते हैं, अुसी समय नृसिंहावतार भगवान गर्जन-तर्जन कर अुपस्थित लोगोंको अपनी भयंकर मूर्तिका दर्शन देकर अन्तर्धान हो गअे। अुन दोषज्ञ पण्डितोंने कम्बसे क्षमा याचना की और अुनकी कृतिका सम्मान करने लगे। यह तो अेक जनश्रुति मात्र है।

× × ×

तमिलनाडके बड़े-बड़े कवि-मनीषी कम्बनको तमिलका सर्वोच्च कवि-चक्रवर्ती मानते हैं और अुनके रचित रामायणको अेक महान् विलक्षण चमत्कारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रन्थ ! अेक कविका कथन है कि किसी युगमें जिस तरह भगवान विष्णुने समुद्रको मन्थराचलसे मथकर अमृत अुत्पन्न किया और अुसे देवोंको पान करने दे दिया, ठीक अुसी तरह कम्बनने अपनी जिव्हारूप मथानीको डालकर तमिल-वाङ्मयरूप महासमुद्रका मन्थन किया और रामायणरूप अमृत तमिळ भाषी जनताको पान कराकर अमरत्व प्रदान किया। और अेक दूसरा तमिळ कवि कम्बनके बारेमें अपनी राय देता है कि रामके चरित्रोंमें कम्बकृत रामायणको पढनेसे जो मनः प्रसाद और सौम्यत्व प्राप्त होता है अुसके आगे सर्व लोक-प्रभुता, अपार धनराशि और स्वर्ग-अपवर्ग (मुक्ति) के सुखको तृणवत् तुच्छ गिनता है। जगत्गुरु शंकराचार्य और महापण्डित मण्डनमिश्रके सम्बन्धमें जिस प्रकार अेक जनश्रुति प्रसिद्ध है कि जब यह महान आचार्य मिथिला नगरीमें पहुँचे तो मण्डन मिश्रके घरका पता अेक पनिहारिनसे पूछ बैठे, और पनिहारिनने झटसे अुत्तर दिया कि जिनके द्वारपर पिंजरेमें बैठे शुक सारिका वेदोंके प्रमाण्यपर स्वतः प्रमाण अथवा परतः प्रमाण, अैसा संस्कृत वाणीमें विवाद करते हैं,— 'जानीहि तन्मण्डन मिश्रगेहं'—वही मण्डन मिश्रका घर समझ लेना। अुसी प्रकार कवि कम्बनके बारेमें भी तमिलमें यह कहावत प्रचलित है, कि कम्बनके घरका करघा भी काव्य-रचना करता है (**कम्बन वाट्टु कटटु त्तरियुम कवि पाडुम्**)। अिस प्रकारके कवि-प्रवादोंसे अनुमान लगाया जा सकता है कि अुस जमानेमें काव्यका सिंहासन कितना सर्वोच्च तथा कठिन साधना-साध्य था। कविवर्य कम्बन अपने समयके कवि-सम्राट थे। अत्र कः सन्देहः।

कविने शुरूमें अपनी रामायणका नाम 'रामावतार' रखा; किन्तु कुछ समय पीछे अुसका नाम कम्ब-रामायण पड़ गया; जैसे तुलसीके रामचरितमानसका नामकरण हो गया तुलसीरामायण। कंबनके बाद अनेक कवियोंने अुसमें अपने कुछ छन्द मिला दिअे। ताड़पत्रोंपर लिखी हुअी प्रतियोंमें भी शब्द-भेद हो गया और पाठ भेद भी। कंब-रामायण आकार-प्रकारमें वाल्मीकिसे बड़ी है।

कम्बने वाल्मिकका आधार लिया सही, किन्तु पुरातन आचार-विचारों और विश्वासों, भावनाओं तथा परम्परागत कविमान्यताओंके अनुसार रामायणके वर्णनोंमें बहुत कुछ परिवर्तन भी किया है। वाल्मीकि सीधे सादे ढंगसे रामकथाका वर्णन शुरू कर देते हैं। कम्बन अपने पूर्ववर्ती तामिळ कवियोंके सम्प्रदायानुसार पर्वत, समुद्र तट, वनोपवन, नद, नदी, मेघ, निर्झर, आदिका वर्णन पहले ही करने लगते हैं बड़े विस्तारके साथ। कोशल देशका वर्णन करते हुअे कम्बने कोशल-देश वासियोंकी क्रीड़ाओंके वर्णन भी तामिल देशके खेल-तमाशोंकी तरह अत्यंत प्राकृतिक रूपमें चित्रवत् खींचे हैं। कुछ तमिल पण्डितोंका कथन है कि कुछ स्थलोंमें तो कम्बने वाल्मीकिसे भी बढ़कर कवि-कौशलका चमत्कार दिखलाया है। तमिळ साहित्यकी परम्पराके अनुसार कम्बरामायणमें धनुर्भंगसे पहले ही मिथिलामें सीता और रामका मिलाप कराकर अेक दूसरेपर मोहित होना बतलाया गया है। साथ ही अेक महाकाव्यके अुपयुक्त अैसे लम्बे-लम्बे वर्णन-पर्वत, समुद्र, देश, ऋतु, सूर्य, चन्द्रोदय, विवाह, सिंहासन आरोहण, पुष्प-कुंजोंमें विहार, जल-क्रीड़ा, मधुपान, संयोग-वियोग, काममुग्ध नायक-नायिकाकी क्रीड़ा आदि-आदि विषयोंका वर्णन होना किसी महाकाव्यके लिअे आवश्यक है। फलतः राजा दशरथका अपनी सेनाको लेकर मिथिला आगमन वर्णन कम्बने अपनी कल्पना शक्तिके सहारे "चन्द्रशैल पर्वत दृष्टि", 'पुष्पकुंजोंमें विहार', 'जल-क्रीड़ा', 'मधुपान' अिन प्रकरणोंका अति-विस्तारके साथ वर्णन किया है। वाल्मीकिके अनुसार अरण्य-काण्डमें रावण जब सीताका अपहरण करता है तो केश और जांघों-(टाँगों) को पकड़कर अुन्हें अुठाकर ले जाता है। गोस्वामी तुलसीदासने अिससे कुछ भिन्न प्रकारका वर्णन किया है। अिस तरहका वर्णन करना अपनी पवित्र भक्ति और जगत्जननीकी पवित्रतापर असंगति समझकर और रावणको पतिव्रता पर-स्त्रीके संस्पर्शसे सिर फूट जानेका अेक शाप होनेके कारण कम्बनने अिस दृश्यका वर्णन अपने ही ढंगसे किया है। रावण जमीन खोदकर पर्णकुटी समेत सीताको अुठा ले जाता है। हिरण्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कशिपुके वधका वृत्तान्त श्री वाल्मीकि रामायणमें कतअी नहीं है। अिसी प्रकार छोटे-मोटे प्रसंगोंमें भी बहुत अन्तर है--अन्तरम् महत् अन्तरम्। मर्मज्ञ विद्वानोंका कथन है कि कम्बने कअी स्थलोंमें वाल्मीकिसे भी बढ़कर कवि-चमत्कारकी चरम सीमा बतलाअी है। अितने मर्मस्पर्शी और चमत्कारी वर्णन हैं कि हमारे लिअे अुनका निरूपण करना सहज नहीं।

कम्बनके छन्द आखोंके सामने अद्भुत दृष्य लाकर खड़ा कर देते हैं कि वह अेक कलाकारकी कलापूर्ण कूंची व अंगुलियोंके संस्पर्शसे तैयार किया हुआ मनोमुग्ध-कारी चित्र बन जाता है। छन्दोंको गाते समय आँखोंके सामने चित्र अुभर आअें, पद-विन्यास तालपर थिरक अुठें, हमारे मन रागात्मक भावनाओंसे ओत प्रोत भर जाअें, पढ़कर दिल झूम-झूम अुठे, रसास्वादके आनन्दके आवेगमें नेत्र अर्द्धनिमीलित हो जाअें, यही तो आत्म विभोरपन महाकाव्योंका सच्चा लक्षण है। कम्बने अपनी अनन्त भक्ति-भावना और अखंड साधनाके बलपर ही तमिलके चोटीके महान भक्त कवियों,, आलवारोंमें, स्थान पाया है, जिससे वे कम्बनाट्टालवार कहलाअे।

कम्बन प्रायः सरल शब्दोंका ही प्रयोग करते हैं। काव्य-पदोंका अनुसरण समयानुसार कहीं प्रसन्न निर्मल सरोवरकी तरह प्रसन्न है; कहीं वर्षा-ऋतुकी वेगवती नदीकी भाँति प्रवाहित है, कहीं पहाड़ी झरनेकी तरह नर्तन निर्झरण करते हैं कम्बनके पद! शोकके करुण स्थलोंमें कविताकी गति दुःखोत्पादक हो जाती है कि मर्मज्ञ पाठकका हृदय गद-गद हो जाता है—'अपिग्रावा रोदिति, अपि दलति वज्रस्य हृदयम्।' कम्बन द्वारा वर्णित आनन्दके स्थलोंमें अनुप्रासकी छटा अितनी सुन्दर है कि पाठकका हृदय कदम्ब कुसुमके समान प्रफुल्लित हो जाता है। कम्बन कवितामें मनोहर शब्द-विन्यासको कितना महत्वका समझते थे, वह अुनके अिस छन्दसे ही प्रतीत होता है, वे सीताकी चालका अिस तरह वर्णन करते हैं। अुनकी गतिकी अुपमामें राजहंस या हथिनीकी गति भी न होगी। सिर्फ अुच्च कविताका पद विन्यास ही अुपमा हो सकती है।

अेक विद्वानने कहा है कि कम्बनके भावोंकी गम्भीरताकी सीमा पाठकोंकी बुद्धिकी सीमा है। अर्थात् अुनके गाम्भीर्यकी थाह बहुत डूबनेसे ही मिलती है। अुनके छन्द सामाजिक और धार्मिक भावोंसे प्लावित हैं। अयोध्या नगरका वे अिस तरह बखान करते हैं। जैसे अेक छोटेसे बीजसे अेक बड़ा वृक्ष अुत्पन्न होता है और अनेक शाखाओंको फैलाकर क्रमशः कली, पुष्प और फल देता है, ठीक अुसी तरह अयोध्यावासी लोग विद्वान् होनेके कारण अुनके ज्ञानरूपी बीजसे अीश्वर-भक्ति, योग-साधन, सर्वभूतहितत्व, अुदारता आदि गुणोंसे अुत्पन्न होकर अुन लोगोंको सुशोभित करते थे। वे सरयु नदीका अिस तरह वर्णन करते हैं—

जैसे सब धर्मोंका विचार मोक्ष साधन होनेपर भी वे भिन्न-भिन्न नामसे प्रचलित हैं, अुसी तरह सरयुका जल भी तालाब, सरोवर, नदी-नालों आदिमें बहकर अेक वस्तु होनेपर भी भिन्न-भिन्न नामसे प्रसिद्ध हुआ।

साधारण वृत्तान्तोंका वर्णन करते समय भी कम्बन अपना काव्य-चमत्कार दिखाते हैं। दशरथकी महिमाके बारेमें वे कहते हैं, अन्य राजाओंसे जो-जो यज्ञ करना बिलकुल असम्भव था, अैसे यज्ञ कअी बार पूर्ण-कर, दशरथ अुन्हें भूल भी गअे थे। ताड़का-संहारका अिस तरह वर्णन करते हैं—जब रामने अपना बाण छुआ, लोगोंने अुनके धनुषका टेढ़ा होना भी नहीं देखा, सिर्फ ताड़काके शूलके टुकड़े ही भूमिपर गिरते देख पड़े। मिथिलामें शिव-धनुष-भंगका अिस तरह वर्णन करते हैं--"अुपस्थित लोगोंने धनुषका अुठना देखा था, लेकिन अुसका तोड़ना सिर्फ सुना ही था कि टूट गया।" सीताकी सुन्दरता अिस तरह वर्णित है--"सीताके आभरणोंने अुनकी सुन्दरताको छिपा दिया।" "सीताके सहज सौन्दर्यसे अुनके आभरण भी सुशोभित हो गअे।" जब कैकेयी दो वर माँगती है, तब दशरथ कहते हैं कि तू मिट्टी ले ले, दूसरा वर भूल जा। यहाँ देखिअे राज्यके प्रति मिट्टी शब्दका प्रयोग कर, दशरथके शब्दोंमें अुसकी तुच्छता किस प्रकार प्रकट की गअी है। अैसे कअी दृष्टान्त कम्बरामायणके प्रत्येक पृष्ठमें मिलेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कम्बनकी कविता अुपर्युक्त अलंकारोंसे भूषित है और अुनके अलंकारोंमें यह विशेषता है कि अुनमें अक्सर कोअी-न-कोअी अुच्च भाव प्रकट किया हुआ होता है। अुपमाका दृष्टान्त देखिअे, अेक दरिद्र किसान अपने छोटे खेतकी जिस तरह रखवाली करता है, अुसी तरह चक्रवर्ती दशरथ अपने भू-मण्डलका पालन करते थे। अिसमें देखिअे राज्यका विस्तार, दशरथकी शक्ति, और शासनमें अुनकी सावधानी कैसी प्रकट की गअी है। ये दृष्टान्त भी देखिअे। जैसे स्वभावशील लोगोंके सहवाससे दुष्टजन भी गुणवान हो जाते हैं, अुसी तरह सेनाके रथोंके सुवर्ण चक्रोंकी रगड़से पर्वत भी सुवर्णमय हो गअे। तद्गुणालंकार कैसा फबता है यहाँ! राम लक्ष्मणके द्वारा विश्वामित्रके यज्ञका संरक्षण अिस तरह वर्णन किया गया है: राम और लक्ष्मण नेत्रोंके पलकोंकी तरह यज्ञमण्डपकी रखवाली करते थे। अिसका यह विशेषार्थ देखिअे। अूपरकी पलक बड़ी है, नीचेकी छोटी। अूपरकी पलक नेत्रपर घूम-घूमकर नीचेकी पलकसे अक्सर मिलती है, मानो वह छोटे पलकको सचेत करती है। वैसे ही यहाँ राम बड़े हैं, लक्ष्मण छोटे। राम आश्रममें घूम-घूमकर लक्ष्मणको सावधान करते थे। कम्बन दशरथके सिंहासनपर विराजमान होनेका अिस तरह वर्णन करते हैं। जो गंधर्व लोग घूमते-घूमते अयोध्या आअे, वे दशरथके प्रतापको देखकर अुनको यह सन्देह हुआ कि अपना राजा साक्षात् देवेन्द्र ही यहाँ विद्यमान है। लेकिन दशरथके हजार नेत्र न होनेके कारण अुनको यह लगता है कि ये देवेन्द्र नहीं है। अिसमें यह ध्वनित होता है कि गौतम मुनिके शापसे देवेन्द्रके यशमें अेक लज्जोत्पादक कलंक था, दशरथका प्रताप तो निष्कलंक था। कम्बनकी कुछ अुत्प्रेक्षाअें भी लीजिअे। कैकेयीके वर देनेके बाद सूर्योदयका अिस तरह वर्णन किया जाता है। निशारूपी स्त्री, दशरथके साथ कैकेयीकी निष्ठुरताको देखकर लज्जित हो अन्तर्धान हो गअी। कुक्कुट (मुर्गा) अपने पंखोंको छातीपर मारने लगा, मानो वह भी रामके वन-गमनकी बातसे दुःखी है। रामके राजतिलकके लिअे मोतियोंसे अलंकृत आकाशरूपी चंदोवा रामके वन-गमनपर फटकर अलग हो गया।

महाकवि कम्बन प्रकृतिके नाना रूपों और व्यापारोंके प्रति अति हर्षोल्लास प्रकट करते हैं। अुनके प्राकृतिक दृश्योंके वर्णनसे अुनके सूक्ष्म प्रकृति-सौन्दर्य निरीक्षणकी शक्तिका पता चलता है। चित्रकूटके वर्णनके समय वे जो अनूठा हर्षोत्पादक प्रकृति-वर्णन करते हैं, वह तमिळ साहित्यके अन्य किसी काव्य-ग्रन्थमें नहीं है।

रामायणके मर्मस्पर्शी स्थलोंके स्वाभाविक वर्णनमें कम्बनने अपनी पूर्ण ओजस्विता दिखाअी है। शील निरूपण और चरित्र-चित्रणमें वे अद्वितीय हैं। अुदाहरणार्थ, रामका शील निरूपण देखिअे। अुनकी बाल लीलाओंको कितने लालित्यके साथ बतलाते हैं। अुनके सर्व-भूत-व्यापक वात्सल्य गुणका चित्र कितनी सहृदयताके साथ खींचते हैं। जब कैकेयी रामसे कहती है कि राजाने तुम्हें चौदह वर्षतक वनवास करनेकी आज्ञा दी है तो वे प्रत्युत्तर देते हैं कि यदि वह आज्ञा राजाकी न हो, सिर्फ आपकी ही हो, तो भी अुसका पालन करना मेरा परम कर्तव्य है, मुझे वह आनन्ददायक है। मेरे भाअीका आनन्द मेरा आनन्द है। आपकी आज्ञाके अनुसार, आज ही वन जानेको तैयार हूँ। गुहकी प्रीतिको देखकर आनन्द विभोर हो राम अुसे आलिंगन करते हैं और कहते हैं, आजतक मेरे तीन ही भाअी थे, अब अेक भाअी और मिल गया है। चित्रकूटमें राम और भरतके मिलाप वर्णनमें दोनों भाअियोंके शील और स्नेह चमक अुठते हैं। रामायणके प्रत्येक पात्रके शील-निरूपणमें कम्बनकी सांसारिक अनुभव सम्बन्धिनी सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि प्रकट हो जाती है।

कम्बन अत्यन्त राम-भक्त होनेपर भी गृहस्थ थे। अुनके बारेमें यह भी कहा जाता है कि वे दुराचारी भी थे, और अुनकी प्रियतमा तीन वेश्याओंके नाम भी अबतक सुननेमें आअे हैं। यह बात सच्ची है, या नहीं, पर कम्बनकी रामायण श्रृंगाररससे परिपूर्ण है। खेदकी बात है कि प्राचीन कवियोंकी श्रृंगार रस-धारामें पड़कर कम्बन भी स्त्रियोंके नख-शिख वर्णनके समय अुनके अवर्णनीय अंगोंके वर्णनमें संकोच नहीं करते हैं; किन्तु वे अपवित्र भाव कभी नहीं प्रकट करते हैं। अेक अुदाहरण लीजिअे। 'चिन्तामणि' जीवक काव्यकर्ता तिरुत्तक्क देवर अपनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चरित्र-नायिकाके सौन्दर्यका वर्णन करते समय कहते हैं अुसे देखकर स्त्रियाँ भी कामकी अभिलाषासे अुत्तेजित होकर पुरुषाकृतिकी अिच्छुक थीं। अेक गृहस्थ स्त्रीका पर-पुरुषकी अिच्छा करना धर्मके विरुद्ध समझकर कम्बनने सीताका कभी अिस तरह वर्णन नहीं किया है। लेकिन अिस भावको रामके सम्बन्धमें प्रयोग कर अुनके सौन्दर्यका अिस तरह वर्णन करते हैं। रामकी सुन्दरता देखकर पुरुष भी अुनपर मोहित हो जाते थे। कम्बन नारी जातिके विषयमें बहुत अुदात्त आदर्श दिखलाते हैं। स्त्रियोंकी पति-भक्तिकी बहुत प्रशंसा करते हैं। अेक स्थलपर वे कहते हैं, रामके वियोगसे सीताका शरीर अितना क्षीण है कि वह मुझे बिलकुल न देख पड़ी लेकिन अुसकी जगह शील, क्षमा और पातिव्रत्य ये तीन वस्तुअें ही प्रकाशमान थीं। तुलसीदास गुसाअीं अेक विरक्त साधु होनेके कारण नारी जातिको निन्दनीय समझते हैं। वे कहते हैं—

नारि सुभाव सत्य कवि कहहीं।
अवगुण आठ सदा अुर रहहीं।
साहस अनृत चपलता माया।
भय अविवेक असौच अदाया॥

फिर कह डालते हैं मनमाने ढंगसे—

ढोल गँवार शूद्र पशु नारी।
ये सब ताड़नके अधिकारी॥

अैसे भाव कम्बनके मुखसे कभी नहीं निकले। वे अपनी रामायणमें स्त्रियोंको बहुत अुच्च स्थान देते हैं, और पवित्र स्त्रियोंको सर्वथा पूज्य बताते हैं। वे कहते हैं नारी जाति अीश्वरकी पवित्र सृष्टि है, और आदरके योग्य है। जिस देशमें स्त्रियाँ धर्म-परायण होती हैं, वहाँ वर्षाकी कमी कभी न होगी। और सब लोग सुखी रहेंगे। कम्बन स्त्रीकी हत्या सबसे बड़ा पाप मानते हैं। कम्बकी रामायणमें रामचन्द्रजी, स्त्री होनेके कारण ताड़काको मारनेमें सकुचाते हैं, और विश्वामित्र मुनि द्वारा अितिहासोंसे दुष्कृत्या स्त्रियोंका मारना धर्म विरुद्ध न होनेका बहुतसे प्रमाण देनेके बाद ही वे अुस निशाचरीपर बाण चलाते हैं। कम्बनकी रामायणमें स्त्रियोंके सम्बन्धमें जब कभी कोअी निन्दाकी बात आती है, तो वह काम-मोहकी है, स्त्रियोंकी नहीं।

प्रजाकी समृद्धि और सुखकी दृष्टिसे आजकल कम्बनका राजनीति प्रजातन्त्र शासन ही सबसे अुच्च माना जाता है। अिसमें मतभेद है कि प्राचीन-कालमें, भारतवर्षमें, प्रजातन्त्र राज्य विद्यमान था, या नहीं। कुछ भी हो, अिसमें सन्देह नहीं, कि भारतवर्षमें राजनीतिके आदर्श प्राचीन कालमें बहुत अुच्चकोटिके थे, और अेक तन्त्र शासन होते हुअे भी भारतवर्ष धन सम्पत्तिसे पूरिपूर्ण था, और सामाजिक तथा धार्मिक अुदात्त भाव जनताके स्वभावके अन्तर्गत थे। कम्बनके राजनीतिक विचारोंका कुछ-कुछ विचार यहाँ किया जाता है।

राजाको शास्त्रज्ञ होना चाहिअे। करुणा, धैर्य, अुदारता अुसके अत्यावश्यक गुण हैं। कम्बन दशरथके शासनका अिस तरह वर्णन करते हैं; करुणामें दशरथ माताके सदृश थे, जनताकी अिष्ट फल प्राप्तिमें तपस्याके समान थे, अुनके मोक्ष साधनमें अेक धर्मशील पुत्रके सदृश थे और अुनके दुराचारका युक्त दण्ड देकर अुन्हें सदाचारकी राहमें चलानेके कारण व्याधि और औषधके समान भी थे। वशिष्टजीके सामने अपनी पुत्र कामनाको दशरथ अिस तरह प्रकट करते हैं, आपके अनुग्रहसे मैं ६०,००० वर्ष तक प्रजाओंका पालन कर चुका हूँ। अब मेरा हृदय केवल अिसी दुःखसे पीड़ित है कि मेरे अुपरान्त अुनका पालन करनेका कोअी अुत्तराधिकारी नहीं है। अेकतन्त्री शासक होते हुअे भी राजा निरंकुश नहीं थे। हर अेक महत्वके कार्यमें मन्त्रि-मण्डलको भी अपनी सम्मति देनेके बाद ही राज्याभिषेककी तैयारियाँ करवाते हैं। प्राचीन राजा प्रायः किसी-न-किसी वनवासी ऋषिसे परामर्श लेते थे, जिसे साँसारिक वैभव और अर्थकी तृष्णा कभी आकर्षित नहीं करती थी। कम्बन अेक स्थानमें राजा और प्रजाकी अुपमा अेक वृक्षकी शाखाओं और अुसके मूलसे देते हैं। यद्यपि वृक्ष बहुत बड़ा देख पडता है, और अुसका मूल दृष्टिगोचर नहीं है, तो भी अुसका जीवन मूलमें रहता है। अुसी तरह राजा अत्यंत धनवान और बलवान होनेपर भी यह न भूलना चाहिअे कि अुसका आधार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनताका सुख है। संक्षेपमें कम्बनके राजनीतिक विचार यह है कि जनताका सुख ही प्रधान समझना चाहिअे और राजा प्रजाका सम्बन्ध पिता पुत्रके समान पवित्र प्रेमसे भरा होना चाहिअे।

शताब्दियाँ बीत गअीं। आज भी तमिल ग्रन्थोंमें साहित्यकी दृष्टिसे कम्बनकी रामायण अद्वितीय मानी जाती है। यद्यपि अुत्तर भारतमें तुलसीकृत रामायणकी तरह तमिल लोग, अपनी प्रधान धर्म पुस्तककी भाँति कम्बन रामायणका दैनिक पारायण नहीं करते हैं फिर भी कम्बनकी कवितामें जो विलक्षण सौन्दर्य है, अुसके लिअे अुनकी रामायणका बहुत आदर है, और जब तक तमिल भाषा, और अुसके बोलनेवाले हैं, तब तक कम्बनकी रामायण अजर अमर रहेगी।

कम्ब रामायणके कुछ मन पसन्द सुन्दर पद्य

भिन्न रुचिर्हि लोकः। कोअू काहूमें मगन, कोअू काहूमें मगन। तुलसीके दोहा चौपाअियोंमें अपनी मन पसन्दके छन्द चुनकर देनेका विशेष अनुरोध अगर कुछ रामायण-रामचरितमानस-प्रेमियोंसे किया जाअे तो, जो जिसे प्रिय होंगे वे वैसे चुन देंगे। यही स्थिति हमारी है।

हरेक भाषाकी अपनी अलग विशेषता होती है। अुन-अुन भाषाओंके साहित्यको खासकर पद्य-साहित्यको अुसकी मूल भाषामें पढ़ना ही श्रेयस्कर होता है। तभी काव्य-सुषमा, अर्थ गौरव आदिका ठीक-ठीक अिस-आस्वाद मिल सकता है। फिर भी 'राष्ट्रभारती' के पाठकोंके सामने कुछ छन्द चुनकर रखनेका जो यह क्षुद्र प्रयास किया जा रहा है, अुससे थोड़ा भी ज्ञान-पोषण तथा मनोरंजन हो जाअे तो हमारा श्रम सफल हुआ ही समझिअे।

कम्बन जैसे महान् कवि, जब वाल्मीकिके आगे अपनेको अकिंचन और तुच्छ समझते हैं, तब हम आधुनिक लेखक लिक्खाड़ किस खेतकी मूली हैं; फिर भी सहृदय पाठकोंसे कर जोड़ विनय करते हैं कि सार-सारको ले लें, निस्सारको छोड़ दें।

(१)

"ओशै पेदुयर् पार्कडल अुट्रोरु
पूशै मुट्रवुम नक्कुपु पुक्केन,
आशै पट्रि अरैयलुट्रेन, मट्रिक्
काशिल कोट्रन्तु अिरामन कदै यरो"

अर्थ :—अुत्ताल तरंगें भरनेवाले क्षीरसागरको अेक बिल्लीने देखा। अुसके दिलमें आया कि झटपट अुतरकर अिस दूधके समुद्रका साराका सारा दूध सफाचट कर जाअूं! वही हालत मेरी भी हुअी और अिच्छाके वश होकर मैं निर्दोष वीरतासे पूर्ण श्री रामचन्द्रकी कथाको काव्य-रूप देने बैठा हूँ!

छन्दमें यह भाव ध्वनित है कि अितना बड़ा काम हाथमें लेनेवाले अिस अदनेसे आदमीको देखकर लोग खिल्ली नहीं अुड़ाअेंगे? राम कथा तो अपार सागर है। अुसके रचनेवाले तो आदि कवि महामुनि वाल्मीकि ही हैं। अुसका आस्वादन कर काव्य-रूप देनेकी अिच्छा कम्बनके मनमें लहराने लगी तो अुन्हें अुस बिल्लीकी याद हो आती है, जो क्षीरसागरको देखते ही, अुसे अपने पेटमें रख लेना चाहती है!

२

अरैयुम् आडरंगुम् पडप्, पिल्लैकळ्
तरैयिल् कीरिडिल त्तच्चरुम् कावरोः
अिरैयुम् ज्ञानम् अिलाद अेन् पुन् कवि.
मुरैयिल् नूल् अुणर्दोरुम् मुनिवरो?

—बच्चोंका कल्पना-लोक ही अलग है। अपनी कल्पनामें वे अितने तल्लीन हो जाते हैं कि अुनकी आँखोंके सामने अुन्हींकी कल्पनाकी चीज सुन्दर मूर्त रूप धारण कर जम जाती है। वे आनन्द-विभोर हो जाते हैं। मनो-विज्ञानके पारदर्शी कवि अपने काव्यको बच्चोंका खेल बनाते हुअे कहते हैं:—

हाथमें अींटका टुकड़ा या खपरिया लेकर बच्चे जमीनपर अुससे अिधर-अुधर टेढ़ी-मेढ़ी लकीरें खींचते हैं और कहते हैं कि मैंने अेक सुन्दर-सा मकान बना दिया है! यह देखो, यह कमरा है, वह दालान है, यह शयनागार है, यह रंगमंच है, वह स्नानागार है। ये सब कहाँ हैं? टेढ़ी-मेढ़ी लकीरोंमें हैं। बच्चोंकी अिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काल्पनिक सृष्टिको देखकर क्या शिल्प-कला-विशारद नाक-भौंह सिकोड़ेंगे ! बच्चोंकी कल्पना देखकर दाद ही देंगे न ! वैसे ही मैं भी राम कथाको छन्दों-बद्ध करनेका प्रयास कर रहा हूँ। मुझमें तो ज्ञानका लेश मात्र भी नहीं है। छन्द रचना किस चिड़ियाका नाम है ?—यह भी मैं नहीं जानता। फिर भी अिच्छाके जोर मारनेपर छन्द रचना करने बैठा हूँ ! साहित्य-विशारद, काव्य-कलाके पारंगत पण्डित, और विज्ञ पाठक मुझपर कोप करेंगे ? नहीं, कभी नहीं ! बच्चोंका खेल समझकर मेरे काव्यमें भी आनन्द अनुभव करेंगे। यह साहस नहीं हो तो मैं क्यों लिखने बैठूँगा ?

३

वण्मै अिल्लै ओर् वरुमै अिन्मैयाल्,
तिण्मै अिल्लै नेर् शेरुनर् अिन्मैयाल्,
अुण्मै अिल्लै पोय् अुरै अिलामैयाल्,
ओण्मै अिल्लै पल् केळ्वि ओंगलाल्।

—कोशल देशका वर्णन करते हुअे कवि कहते हैं कि वहाँ बहुत 'अिल्लै' हैं। अर्थात् अनेक चीजोंका अभाव है। 'यह चीज नहीं है, वह चीज नहीं है !'—अिस तरह अेक 'अिल्लै' (अभाव) की सूची ही जब कवि तैयार कर लेते हैं तो पाठकोंके मनमें यही ख्याल पैदा होगा कि यह भी कैसा देश है, जहाँपर अितने 'अिल्लै' (नहीं) हैं ? देखिअे, वहाँ क्या क्या चीजें नहीं हैं।

कोशल देशमें दान-धर्म नामकी कोअी वस्तु ही नहीं ! क्योंकि वहाँ किसी प्रकारका अभाव (दारिद्र्य) नहीं है। हाथ फैलानेवाले दीन-हीन जन हों तभी तो दान-धर्मकी महिमा गाअी जा सकती है ? जहाँ कोअी लेनेवाला ही नहीं, देनेवाला कहाँसे आअे ?

"वहाँ वीरताका भी अभाव है। क्योंकि अुस देशपर आक्रमण करनेकी शक्ति रखनेवाला कोअी शत्रु नहीं है। जब कोअी शत्रु आक्रमण करे तभी तो कोअी वीर अपनी वीरता दिखा सकता है ? जब सारे देश हाथ बाँधकर कोशलकी अधीनता स्वीकार कर लें तो बेचारे कोशलके वीर क्या करें, स्वयं हाथ बाँधकर खड़े होनेको छोड़।

"कोशलमें सत्यका भी अभाव है। मिथ्याका भी अभाव है ! कोअी व्यक्ति झूठ बोले तभी तो सत्यकी महत्ता जानी जा सकती है ? जब सभी सत्य-बोलनेवाले हो गअे तो झूठ और सत्यके नामका भी निशान कहाँ रह सकता है ? अिसीलिअे कविने कह दिया कि वहाँ झूठ और सत्य दोनों ही नहीं हैं !

"वहाँपर प्रतिभाका भी अभाव है ! क्योंकि वहाँ अज्ञानताका अभाव है। देशके समस्त जन सब प्रकारकी विद्याओं व विवेचनाओंसे जब परिचित हैं, तब अेक आदमीका नाम लेकर अमुक व्यक्ति ही प्रतिभासम्पन्न है—यह कैसे कहा जा सकता है ?

जिस देशमें ये सारी चीजें नहीं हैं, अुस देशकी बड़ाअी कवि कैसे करे ? अतः अितना बड़ा 'अिल्लैप्पाट्टु' (अभावका गीत) गा लिया है !

४

निनैक्किलै, अेन कै निमिर्न्दिड वन्दु
तनक्कियला वहै ताळवदु, ताळ् विल्
कनक्करियानदु कैत्तलम्, — अेन्निल्
अेनक्किदन् मेल् नलम् यादु कोल्, अेन्ड्रान्।

—"महर्षि विश्वामित्र यज्ञ-रक्षाके लिअे श्रीराम-लक्ष्मणको वन लिअे जा रहे हैं। रास्तेमें अेक स्थलको देखकर श्रीराम पूछते हैं, यह किसकी भूमि है ? तब महर्षि विश्वामित्र, महादानी महाबलिकी कहानी सुनाते हैं।

राजा बलिने वामनको दान देनेका निश्चय कर लिया तो शुक्राचार्य मना करते हैं और कहते हैं, यह बौना और कोअी नहीं, साक्षात् विष्णु श्रीमन्नारायण हैं। अिनसे धोखा मत खा जाओ।

शुक्राचार्यकी बातें सुनते ही राजा बलि आनन्द विभोर हो जाता है और कहता है :—

आचार्य प्रवर, यदि आपका कहना सच हो तो मेरा अहोभाग्य ही समझिअे ! मालूम होता है, मुझे जो भाग्य प्राप्त होने जा रहा है, अुसपर आपने विचार ही नहीं किया। नहीं तो अिस तरहकी बातें क्यों करते ? दान देते हुअे मेरे हाथ अूँचे हैं और दान लेते हुअे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवानके हाथ नीचे हैं ! वे भगवान भी कैसे ? समस्त संसारकी रक्षा करनेवाले ! वे आजतक देना ही जानते हैं; लेना नहीं जानते। अपनी प्रकृतिके विरुद्ध आज मेरे सामने हाथ फैलाते हैं, तो अिससे बढ़कर मुझे बड़प्पन प्रदान करनेकी बात और क्या हो सकती है ?

आचार्यवर, और सुनिअे : मनुष्यका लक्ष्य क्या होना चाहिअे ?

५

'माय्न्दवर् माय्न्दवर अल्लर्कळ् : मायादु
अेन्दिय कै कोडु अिरन्दवर्, अेन्दाय् !
वीन्दवर अेन्बवर : वीन्दवरेनुम्,
ओन्दवर अल्लदु अिरुन्दवर यारे ?'

महाराज ! अिसमें कोअी शक नहीं कि अिस नाशवान संसारमें सबको अेक-न-अेक दिन मरना ही है। पर मरनेवाले सभी लोग मर गअे—यह नहीं कहा जा सकता। क्योंकि दूसरोंके सामने जाकर जो हाथ फैलाता है, वही मरता है। हाथ फैलानेवाला जीवित रहते हुअे भी मृतक ही है। पर हाथ फैलानेवालेको अपने दानसे जो निहाल कर देता है, वह मरकर भी अमर रहता है। मनुष्यका तो यही लक्ष्य होना चाहिअे कि अपने दानसे अमरत्व प्राप्त करे। आप कहते हैं, दान लेनेके लिअे साक्षात् भगवान श्रीमन् नारायण आअे हैं। अब कहिअे कि कौन नीचा है ? दान देते-देते मैं मरनेको भी तैयार हूँ ताकि अमर हो जाअूँ--कहकर बलि वामन महाराजको दान देने अुतारू हो जाता है। अिससे बढ़कर दानवीरताका नमूना और कहाँ मिल सकता है ? दानवीरताकी महिमा रहीमके शब्दोंमें भी यहाँ स्मरणीय है।

"रहिमन वे नर मर चुके, जे कहुँ माँगन जाहिं।
अुनतें पहले वे मुअे, जिन मुख निकसत नाहिं॥"

६

वण्ण मेखलै त्तेर ओन्डु, वाळ् नेडुम्
कण अिरण्डु, कदि मुलै ताम् अिरण्डु
अुळ् निवन्द नहै अेनुम् ओन्डुम् डण्डु,
अेण् अिल कूट्रिनुक्कु अित्तनै वेण्डुमो ?

"राम और लक्ष्मण विश्वामित्रके साथ मिथिला नगरीमें पहुँचते हैं। वहाँपर अेक फुलवारीमें रामचन्द्र और सीताकी आँखें चार होती हैं। तभी दोनोंके हृदयमें यह विचार जड़ पकड़ता है कि दोनोंका सम्बन्ध जन्म-जन्मान्तरसे है। जैसे सीताजी वियोगमें तड़पती हैं, वैसे ही रामचन्द्र भी वियोगमें तड़प अुठते हैं। वे सीताको नहीं भूल सकते। सोचते हैं कि मृत्युका देवता काल-पुरुष भी कैसा विचित्र पुरुष है कि प्राण लेनेके लिअे अेक साथ अितने अस्त्रोंका प्रयोग कर देता है !" कंबन वियोग शृंगारके वर्णनके साथ-साथ सीताजीकी अनुपम सुन्दरताकी भी कैसी झाँकी कराते हैं, देखिअे !

सीताजीका कटि प्रदेश अत्यन्त कृश है। वह सुन्दर मेखला पहने हुअे हैं। जैसे रथका निचलातल्ला पतला और अूपरका धीरे-धीरे मोटा होता जाता है, वैसे ही सीताजीका कटि प्रदेश नीचे पतला और अूपर चौड़ा-मोटा दिखाअी देता है। आँखें विशाल और तेजस्विनी हैं। अुभरे हुअे स्तनद्वय अुसकी सुन्दरतापर चार चाँद लगाते हैं ! सुन्दरतापर मोहित होकर दिल दे देनेवाले पुरुषको मारनेके लिअे अितने शस्त्र पर्याप्त हैं।

सीताजीने पहले पहल जब श्रीरामचन्द्रको देखा, अुनपर अेक अनूठी मुस्कान फेंक दी थी ! रामचन्द्रजीको अुसकी याद नहीं भूलती ! मनमें सोचते हैं कि अिस निर्दअी कालको वे शस्त्र पर्याप्त नहीं हैं क्या ? मुझे मारनेके लिअे मुस्क्यान रूपी अस्त्रको भी फेंक दिया !

७

तूय तवंगळ् तोडंगिय तोल्लोन्
अेय् अवन् वल् विल् अिरुप्पदन मुन्नन्,
शेयिषै मंगैयर चिन्तै तोरेटया,
आयिरम् वलविल अनंगन अिरुत्तान्।

धनुष यज्ञमें राम और लक्ष्मण महर्षि विश्वामित्रके साथ आ पहुँचे। मंडपमें अनगिनती नर-नारी अेकत्रित थे। सबकी आँखोंमें श्री रामचन्द्रकी सौम्य सुन्दर मूर्ति नाच रही थी। विश्वामित्र अभी श्री रामको आज्ञा नहीं दे पाअे थे कि तुम शिवधनुषको अुठाकर टंकार करो ! लेकिन यह क्या ? हजारों धनुष अेक साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैसे टूट पड़े ? सुन्दर आभूषणोंसे सुसज्जित युवतियाँ श्री रामचन्द्रजीपर अपने-अपने दिल देने लग गअीं तो मन्मथ-कामदेवके हजारों पुष्ण बाण टूट चुके थे । अर्थात् सभी युवतियोंके दिल रामचन्द्रकी मोहिनी मूरतपर लट्टू हो चुके थे ।

अुसी वक्त अुन युवतियोंके दिलमें धनुष यज्ञकी बात याद आती है और सीताजीके ब्याहके सम्बन्धमें सोचने लगती हैं । सीताका हाथ श्री रामचन्द्रको छोड़ और कोअी न पकड़े यह अुन युवतियोंकी मनोकामना है । अिसलिअे जनक महाराजको 'पागल' की खिताब दे देती हैं । कहती हैं :—

८

वळ्ळल् मणत्तै महिळ्न्दनन् अेन्ड्राल्
कोळ् अेन मुन्बु कोडुप्प दै यल्लाल्,
वेळ्ळै मनत्तवन् विल्लै अेडुत्तु अिप्
पिल्लै मुन अिट्टदु पेदैमै अेन्बार ।

जब श्री रामचन्द्र सीताजीके साथ विवाह करनेकी अिच्छा करते हैं तो झट जनक महाराजको कहना यह चाहिअे था कि 'शुभस्य शीघ्रम्' कहा गया है । अतः अभी पाणिग्रहण कर लीजिअे । अुसे छोड़कर भोले-भाले विवेक-हीन जनक महाराज क्या करते हैं ? शिव-धनुषको अुठाकर अिस सुकुमार किशोरके सामने रखते हैं और कहते हैं कि अिस धनुषको चढ़ाओ, तब शादी करो ! जनक महाराज पागल नहीं हैं तो और क्या हैं ? स्त्रियोंके दिलमें सीता रामकी जोड़ी खूब जमकर बैठ गअी है । अुनकी मनोकामना है कि सीता-राम विवाह आँख भरकर देखें । पर जनक धनुषको बीचमें रखकर रोड़ा अटकानेवाले दीखे तो अुन्हें पागल तक कहनेके लिअे नहीं हिचकीं । जो विवेकके लिअे जगत्प्रसिद्ध थे, अुन्हें अविवेकी कहनेको भी तैयार हो गअीं ! वाहरे स्त्रियोंका दिल !

९

तोळ् कण्डार तोळे कण्डार्,
तोडु कळर् कमलम् अन्न
ताळ् कण्डार ताळे कण्डार्,
तडक्कै कण्डारुम् अहदे;
वाळ् कोण्ड कण्णार् यारे
वडिविनै मुडिय क्कण्डार ?
अूळ् कण्ड समयत्तु अन्नान्
अुरुवु कंडारै ओत्तार !

कंब नाट्टाळ्वार्के भक्ति पुँजित हृदयका परिचायक है, यह छन्द ! अुस परिपूर्णानन्द परब्रह्मकी अुपासना, जो सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् है, अनादि कालसे होती आ रही है । आज तक अुसके पूर्ण सौन्दर्यको कोअी देख नहीं पाया है । बड़े-बड़े रहस्यवादी अद्वैतवादी अुपासक तो निराकार निर्गुण ब्रह्मकी अुपासना करते करते थक गअे हैं और कह गअे हैं कि अेक झाँकी मात्र मिली है । निर्गुणोपासनासे बाज आकार सगुणोपासनामें लगनेवाले तपस्वी भी अुस सच्चिदानन्द परब्रह्मके पूर्ण सौन्दर्यको देखने नहीं पाअे हैं । अखण्डाकार परब्रह्मको पूर्ण रूपसे पाना कोअी साधारण काम नहीं है ।

साधारणतया अिस संसारके किसी सुन्दर पुरुषको ही लीजिअे ! अुस पार्थिव शरीरवाले पुरुषकी सुन्दरताका, पूरी सुन्दरताका, अेक साथ पान करना कहीं संभव है ? अेक अेक अंगकी तारीफ की जा सकती है । अुसकी सुन्दरतामें जिसको जो चीज पसन्द आअी, अुसीका वह वर्णन करेगा ! कवि कुलोत्तुंग कम्बनने अिस बातका अच्छी तरहसे अध्ययन किया है और अिसीलिअे कहा है कि मर्यादा-पुरुषोत्तम रामचन्द्रजीके पूर्ण सौन्दर्यको यद्यपि मानुषावतार लेकर वे अनेकों वर्ष अिस भूमिपर विराजे हैं, कोअी पूर्ण रूपसे देख नहीं पाया !

जिसने श्री रामचन्द्रका कंधा देखा, अुसने अुसीको देखा । कंधेपरसे अुसकी आँखें कहीं नहीं हटीं । वैसे ही जिसने अुनके चरण-कमलोंकी झाँकी ली, वह अुसीकी झाँकी लेता रहा । अन्य अंग अवयवोंको देखनेकी सुध-बुध तक खो बैठा । अुनके विशाल बाहुओंका सौन्दर्य-पान जो करने लगा था, वह आखिर तक वही करता रहा । परमानन्द रूप श्री रामचन्द्रके परिपूर्ण रूपको देखनेका भाग्य किन नेत्रोंको मिला ? संसारमें कितने ही धर्म हैं । अुन-अुन धर्मोंने परमात्म-दर्शनका अपना-अपना मार्ग अलग रखा है ! वे परमात्माको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने-अपने रास्तेमें पानेका प्रयत्न करते हैं, वैसे ही अपने-अपने मनोनुकूल दिशामें लोगोंने रामचन्द्रजीकी झाँकी ली है। पूर्ण रूपसे किसीने नहीं ली है!

अिससे क्या विदित होता है? अगम्य अगोचर भगवानको पूर्ण रूपसे देखनेवाला कोअी नहीं है! अुस परमात्माका जरा भी करुणा-कटाक्ष प्राप्त कर लिया तो बस, फिर वह अुसीका हो गया! अिसीलिअे तो कबीरदासने कहा है;—

"लाली मेरे लाल की, जित देखों तित लाल।
लाली देखन मैं गअी, मैं भी हो गअी लाल॥"

१०

'आडवर् नहै युर आण्मै माशुर
ताड़कै अेनुम् पेयर त्तैयलाळ् पडक्
कोडिय वरिशिलै अिरामन्.कोमुडि
शूडुवन् नाळे! वाळ्वु अिदु' अेन च्चोल्लिनाळ्।

—राज तिलकका आयोजन हो रहा है। कुबड़ी मन्थराको जब यह पता चलता है तो अुसकी छातीपर साँप लोटने लगता है। सीधे वह कैकेयीके पास पहुँचती है और कौशल्याके सौभाग्यकी बात कहती है। तब अुसके अुन शब्दोंमें कैसा तीखा व्यंग छिपा है, रामके प्रति वह कैसी घृणा प्रकट करती है, देखिअे!

क्या तुम्हें मालूम नहीं, रामने कैसा कार्य किया है; अुनके कार्यको देखकर पुरुष-सिंह खिल्ली अुड़ाकर हँसेंगे, पुरुषत्व कलंकित होकर सिर नीचा कर लेगा। ताड़का नामकी अेक अबलापर अुसने अपनी वीरताकी निशानी धनुष चढ़ाया और बाणोंसे छेदकर मार गिराया! तुम्हीं बोलो, अेक अबलापर हाथ अुठानेवाला कैसा वीर होगा? कल वह चक्रवर्तियोंका राजमुकुट पहननेवाला है! अब बोलो, तुम्हारी सौतका भाग्य जगा है या नहीं?

ताड़काके प्रसंगको लेकर अुसने श्री रामचन्द्रको अिस प्रकार अुतार दिया और कहा कि तुम्हारे रहते हुअे कौशल्याके भाग्य कैसे जागे? मन्थराका व्यंग्यपूर्ण तर्क अुसके दिलमें असर किअे बिना कैसे रहे? मन्थराकी बातोंमें कैकेयी आ गअी और राजा दशरथके आनेपर अपने अभीप्सित दो वर माँग ही डाले। सम्राट दशरथको अुस वक्त अैसा क्रोध आता है कि वह देखते ही बनता है। कहते हैं,—

११

'नारियर् अिञ्ञालम् अेळुम् अेन्नक्
कूरिय वाळू कोडु कोन्ड्रु नीक्कि यानुम्
पूरियर अेण्णिडै वीळूवन्' अेन्ड्रु पोंगुम्
वीरियर वीरम् विळुंगि निन्ड्र वेलान्।

—प्रबल शत्रुओंसे मुकाबिला कर अुन सबोंकी वीरताको हरनेवाले हैं, राजा दशरथ! अुनकी वीरताका क्या कहें? श्री रामचन्द्रको वनवास देनेकी बात सुनते ही अेक ओर पुत्रसे बिछुड़नेका दुख, दूसरी ओर कैकेयीके हठसे—

अुभड़नेवाला क्रोध दोनों अितना प्रबल रूप धारण करते हैं कि वे गरज पड़ते हैं—"मैं अपनी तेज तलवारसे सातों लोककी नारियोंको निर्मूल कर दूँगा। अेक भी नारी जीवित नहीं छोड़ूँगा। सबको मौतके घाट अुतार दूँगा। तब मेरा नाम म्लेच्छोंमें गिना जाअेगा! तो भी परवाह नहीं। लोग कहेंगे कि वीरोंको हराकर महावीर बननेवाला दशरथ अबलाओंपर हाथ चलाता है और मुझ पर थूकेंगे। तो भी परवाह नहीं!

अितने क्रोधमें भी राजा दशरथके दिलमें धार्मिक भावना कैसी प्रबल है। 'नारियोंपर हाथ साफ करनेवाला जंगली कहलाअेगा' यह जानते हुअे भी क्रोधके वशमें होकर बोलते हैं। वहाँ भी वह धार्मिक भावना अुभर ही आती है!

सत्यसे न डिगनेवाले दशरथ चुप्पी साध लेते हैं। राम वनवासके लिअे चल पड़ते हैं तो घर-घर कैसा शोक छा जाता है!

१२

अट्टिलुम अिळन्दन पुहै; अहिल पु है
नेट्टिलुम् अिळन्दन; निरैन्दपाल, किळि
वट्टिलुम् अिळन्दन; महळिर् कै, मणिन्
तोट्टिलुम् अिळन्दन, मठवुम शोरवे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—रसोअीसे धुआँ नहीं निकला। रामके वन-गमनकी बात सुनते ही स्त्रियाँ अितनी शोकमग्ना हो गअीं कि चूल्हा जलाकर खाना पकाना भूल गअीं! अैसी हालतमें रसोअीसे धुआँ कहाँ निकलेगा? अगरुचन्दनके धुअेंमें स्त्रियाँ अपनी केशराशि सुखाने अट्टालिकाओंपर नहीं चढ़ीं। अिसलिअे अगरुचन्दनका धुआँ भी नहीं निकला। शोकके कारण वे तो स्नान करना ही भूल गअी थीं! स्नान किया होता तभी न अपने गीले बालोंको सुखाने अगरुचन्दनके धुअेंकी चाहना करतीं! तोतोंको दूध देनेका स्मरण भी अुन्हें नहीं रहा। अिसलिअे पिंजड़ेमें जो दूधका कटोरा था, वह दूध विहीन था। पिंजरबद्ध तोते भी तो शोकमें डूबे थे। अुन्हें भी स्मरण नहीं रहा कि कटोरेमें दूध नहीं है। अगर स्मरण रहा तो चीख-चिल्लाकर वे स्मरण न दिलातीं? औरतोंके कर हिंडोले झुलानेमें न लगे। बच्चोंको लाड़ प्यार करने और दुलार करनेकी सुध हो तभी न वे हिंडोले झुलाने जातीं! सारा वातावरण राम-वन-गमनके कारण अेकदम शोकमें डूबा हुआ था।

पर पितृ-वचन परिपालनके लिअे घरसे चल पड़नेवाले रामचन्द्रजी कैसे थे? सीताजी कैसी थीं? यह जाननेकी अुत्सुकता होती है न? चलिअे, पंचवटी प्रकरणमें अेक झांकी आंख भर कर देख लें।

१३

ओदिमम् ओदुंगक्कण्ड अुत्तमन् अुळैयळाहुम्
सीतै तन् नडैयै नोक्कि च्चिरियदोर मुसवल्
शेय्दान्:—
मादवळ् तानुम्, आण्डु वन्दु नीर अुण्डु मीळुम्
पोतकम् नडप्प नोक्कि प्युदियदोट् मुरुवल्
पूत्ताळ्।

—पर्वतकी तराअीमें अेक पहाड़ी नदी बह रही है। राम अुसके किनारे खड़े होकर प्राकृतिक दृश्यका आनन्द लूट रहे हैं। वहीं पास ही अेक हंसिनी अपनी सुन्दर स्वाभाविक चालमें चल रही है। अुसी समय अुस ओर सीता आती हैं, रामको देखते ही वे अुनकी ओर बढ़ती हैं। रामचन्द्र अुनकी चालको देखते हैं। फिर हंसिनीकी चालको देखते हैं। अिस तरह बार-बार दोनोंकी चालको देखकर साम्य ढूंढ़ रहे हैं और आँखोंमें अेक लघु मुस्क्यान लाते हैं। मानों वह सीतासे पूछ रहे हैं कि तुम दोनोंकी चाल अितनी सुन्दर है कि क्या कहें? तुमने अिस हँसिनीसे यह चाल सीखी या अिस हँसिनीने तुमसे सीखी?

सीताजी अुनकी मुस्क्यानका अर्थ समझ लेती हैं। अुसी समय अेक हाथी, अपनी मस्त चालसे पानी पीकर लौट रहा है। अुन्होंने रामचन्द्रको देखा। फिर अुस हाथीकी ओर देखा। रामचन्द्र ही की तरह अुन्होंने बार-बार देखा। तब सीताके होंठोंपर अेक नअी मुस्कुराहट खेल गअी: अुनकी मुस्कुराहट मानों यह पूछ रही थी, आपकी चाल भी तो अिस हाथीकी चाल जैसी है! आपने यह चाल अिस हाथीसे सीखी या अिसने आपसे सीखी?

कहावत है, लैलाको मजनूँका कुत्ता प्यारा है। संसारमें हर किसीको अपने-अपने मन-पसन्दकी वस्तु अत्यन्त सुन्दर लगती है! अुस वस्तुका कार्य किसी दूसरी वस्तुमें पाया जाअे तो अुस चीजके अुस कार्यमें अेक प्रकारका सौंदर्य हमें दिखाअी देता है। स्त्रियोंकी चाल सुन्दर होती है। अुनकी चालमें चलनेवाली हँसिनीकी चाल हमें पसन्द आती है। कारण क्या? स्त्रियोंकी चाल अुसमें दिखाअी देती है। हँसिनीकी चालको देखनेपर स्त्रियोंको देखें तो सौंदर्य और भी निखर अुठता है। अिस तरह सौंदर्य स्त्री और हँसिनीकी चालमें परिवर्तित होकर परिवर्धन भी पाता है। यह सौन्दर्य तत्वमें पाया जानेवाला अेक अनूठा तथ्य है!

भाव पुरुषोंके मुखमें प्रस्फुटित होते हैं। अैसा होना स्वाभाविक भी है। लेकिन स्त्रियोंके मुखमें तो भाव खेलते हैं। यह कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी कि स्त्रियोंका मुख भावोंके खेलनेकी फुलवारी ही है। यही कारण है कि नृत्य-कलाके पारंगत अुस कलाको स्त्रियोंके हाथोंमें सौंप गअे हैं।

महाकवि कंबन कहते हैं कि रामचन्द्रजी अेक मृदु मुस्क्यान भर लाते हैं। पर सीताकी बात कहते हुअे कहते हैं कि सीताके होठोंमें अेक नवीन-सी मुस्कुराहट खेल गअी!

केवल शब्दार्थ या वाच्यार्थ देनेसे अन्य भाषाकी साहित्य-सुषमाको समझना मुश्किल समझकर भावार्थ रखनेका हमने प्रयास किया है। अिसमें कहाँ तक सफलता हुअी है—यह विज्ञ पाठक ही जान सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोरठ, तेरा बहता पानी

—श्री जयेन्द्र त्रिवेदी, अेम. अे.

"नायक नहीं, नायिका नहीं, प्रेमका त्रिकोण नहीं; सोरठी जन-जीवनकी अैसी यह जन-कथा है। गुजराती साहित्यका अेक अमर आंचलिक अुपन्यास है यह। अिस कथाका नायक समस्त जन-समाज है।" अिस कृतिके पहले संस्करणमें अिसके लेखक स्व. झवेरचन्द मेघाणीने अपने निवेदनके आरम्भमें ये पंक्तियाँ लिखी थीं। अुसके बाद तो अिस पुस्तकके चार संस्करण निकल चुके हैं और गुजरातकी श्रेष्ठ लोकप्रिय पुस्तकोंमें अिसका अपना स्थान निश्चित हो गया है।

साधारण तौरपर चरित्र-प्रधान अुपन्यास नायकके जीवनपर केन्द्रित होता है। यह अुपन्यास भी तो चरित्र-प्रधान है; परन्तु किसी अेक व्यक्तिके चरित्रकी भली-बुरी घटनाओंका वर्णन करनेकी लेखककी अिच्छा नहीं है। परन्तु नामपरसे ही जैसे स्पष्ट होता है, सौराष्ट्रके निकट अतीतमें विलीन हो जानेवाले सोरठी जन-समूहकी ही यह तस्वीर है। स्व. मेघाणीजी लिखते हैं, 'यह अितिहास व्यक्तियोंका है भी और नहीं भी है किन्तु समष्टिका अितिहास तो यह है ही। अितिहास जिस प्रकार घटनाओं—वाकयाओंका होता है अुसी प्रकार वातावरणका भी हो सकता है अथवा घटनाओंसे भी वातावरणकी जरूरत अितिहासमें विशेष होती है—अगर वह जन-समूहका अितिहास बनना चाहता है तो।"

यह अेक आंचलिक अुपन्यास है। किसी भी भाषामें आंचलिक अुपन्यासोंकी भरमार नहीं होती[1]। अुपन्यासका यह प्रकार अूपरसे जितना सरल दीखता है, वास्तवमें अुतना ही कठिन होता है। किसी प्रदेश विशेषके मनुष्य, पशु-पंछी, नदी-नाले, मैदान-पहाड़, जँगल-गाँव सबका पूरा परिचय चाहिअे और चाहिअे जाति-खण्डोंमें विभक्त मनुष्य-समाजकी सच्ची-झूठी मान्यताओंका सम्पूर्ण ज्ञान। प्रादेशिक रीति-रिवाजों, व्रत-अुत्सवों, लोक-कथाओं और वहमों तकसे लेखकका परिचय आवश्यक है। और अिससे भी अधिक आवश्यक चीज है अिन सबके प्रति हृदयमें लबालब ममता; 'ये जैसे भी हैं मेरे देशवासी हैं'—वाला नितान्त पवित्र भाव।

और ये सब गुण अेक साथ विरले ही साहित्यकारमें मिलते हैं। स्व. मेघाणीजी सोरठी संस्कृतिके सबसे बड़े परिचायक थे। लोक-साहित्यके मार्मिक संग्राहकके रूपमें अुनकी कीर्ति अत्यन्त अुज्ज्वल है। अुनकी हरेक कृति लोक-साहित्यके अध्ययनकी खुशबूसे छलकती है। हरेक देश और अुसकी प्रजाको अपना साहित्यकार, राष्ट्रीय कवि—शायर, शिल्पी, संगीतकार चाहिअे। सौराष्ट्रके भूत-वर्तमान जीवनके समर्थ साहित्यकार-शायर मेघाणी हैं। अुन्होंने कहा है, मैं पहाड़की पैदावार हूँ। पहाड़के फूलफल ही नहीं; पहाड़-निवासियोंके दोहों-सोरठोंका भी मैंने नैसर्गिक रसास्वाद लिया है।.....मैं पहाड़ोंमें साहित्य और अितिहासके पृष्ठ पढ़ रहा हूँ। पुराने विगत युगको वापिस लानेकी नादान ख्वाहिश नहीं; मगर पुराने सोरठी-युगको प्रेमपूर्वक देखने-पहचाननेकी प्यास मुझे पागल कर रही है।"

और कैसी थी यह प्यास! 'फूलछाब' साप्ताहिकके सम्पादक-मण्डलमें काम करनेवाले स्व० झवेरचन्द मेघाणीजी हर सप्ताह सौराष्ट्रके गाँव-गाँवमें घूमने निकलते। सप्ताहमें तीन दिन घुमक्कड़ीमें और बाकी दिन 'फूलछाब' कार्यालयमें; अुनका यह क्रम कअी वर्षोंतक चला। सौराष्ट्रकी अहीर, राजपूत, मेर, काठी, कोली, चारण, आदि जातियोंमें वे भटकते, घुलते-मिलते और सरल, गुलाबी स्नेहपूर्ण स्वभावके कारण वे अन्तःपुरकी राजपूतानियोंके गलेसे भी अनमोल गीत अुठा लाते। चारण अिनको अपना अगुआ मानते।

१ हिन्दी अुपन्यासोंमें 'मैला आँचल' के रूपमें हमने अेक सशक्त आंचलिक अुपन्यासको पढ़ा है। —सं०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सौराष्ट्रका पत्थर-पत्थर अुनके सामने वाणी धारण करता। और गुजराती साहित्यको मेघाणीसे अमर रचनाअें मिलतीं।

लेकिन सोरठी संस्कृतिका परम अुपासक यह हृदय-साहित्यकार मन-ही-मन पुराने सौराष्ट्रसे नअे सौराष्ट्रकी तुलना करने लगता। और अिस तुलनासे वह सुखी न होता। भूतकालकी खाअीमें विलीन हो रहे सौराष्ट्र जीवनके कुछ अत्यन्त आकर्षक पात्र वह कभी नहीं भूल सकते। अुसने कलम अुठाअी। गुजरातको 'सोरठ तेरे बहते पानी" जैसा अमूल्य अुपन्यास दिया।

अुपन्यासका कथा-समय अीसाकी बीसवीं शताब्दीके आरम्भका है। कैसा था वह समय? अुस समयके अेक अँग्रेज अफसर जस्टिस बीमन लिखते हैं, "Yet as late as the eighties Kathiawar (i. e. Saurashatra of to-day) was a happy hunting ground for wild adventerous spirits, and a paradise for young officials. The last of the great out-laws were still at large; romance, the lingering spirit of chivalry brooded over the land.....the Kathiawar of those days was full of glamour & charm, and threw its own spell over all those who came within its influence."

अुपन्यासका अेक पात्र, शौर्य-प्रेमी गोरा पुलिस-अधिकारी भी सोरठी युवाओंकी बहादुरी देखकर साँसें छोड़ता है कि 'Such fine types of chivalry are fast decaying.' और लेखकने आगे अुसी अंग्रेज अधिकारीके मुँहमें अपना मनोरथ रखा है, 'अफ्सोस! अिस नेक बहादुर जातिका नाश हो रहा है, अगर मैं भारतीय सैन्यका कोअी बड़ा अफसर होता तो जरूर सोरठकी अेक रेजिमेन्ट बनाता!'

तो कैसे थे ये चरित्र?

शौर्य और वफादारीकी अडिग मूर्ति महीपतराम; शांत वीरताके अद्भुत प्रतीक रूखड़ सेठ और लक्ष्मण फटगर; जोगमाया जैसी रूखड़की विधवा सिपारिन; सौम्य गौरवसे लबालब भरे सुरेन्द्रदेव; जीवनकी पाठशालाके आचार्य किसान-सेठ; हरेक चरित्र अेक-अेक अुपन्यासका बोझ अुठानेके लिअे समर्थ है; तो देवलबा, भावर-झुलेखां, हेडमास्टर, सुमारियो, बाघजी फौजदार, अंग्रेज पुलिस-अधिकारी सब अेक-अेक करुण-रम्य कहानीके नायक तो हो ही सकते हैं।

अिन सबको अेकही सूत्रमें पिरोना भारी मुश्किल काम है। लेकिन लेखकके पास अेक बहुत बड़ी सुविधा है। लेखक स्वयं सौराष्ट्रके अेक बहादुर पुलिस अधिकारी-श्री. कालिदास मेघाणीके पुत्र हैं अिसलिअे अिस अुपन्यासके पात्र पिनाकिनकी अनेक संवेदनाअें लेखककी अपनी संवेदनाअें हैं। अपने वीर पिताके जीवन-प्रवाहमें आ मिले अनेक व्यक्तित्वोंके जीवन-निर्झरोंमें लेखकने आकंठ स्नान-पान किया है। साथ ही किसी भी अुपन्यासकारके पास होनी ही चाहिअे वह परकाया प्रवेशकला लेखकके पास है। अिसलिअे पिनाकिन अिस रचनाका केन्द्रबिंदु है। फिर भी वह नायक नहीं है, अुसके जीवन-प्रसंगोंपर अुपन्यासकी कथावस्तु आधारित नहीं है, वह तो खाली द्रष्टा है, आजसे लगभग पचास वर्ष पूर्व सौराष्ट्रके जन-जीवनमें जो कुछ भलाबुरा था अुसका वह अेक प्रशंसक मात्र है। मगर कथाके अंतिम भागमें वह द्रष्टा न रहकर स्वयं स्रष्टा भी बन जाता है। पतिता पुष्पाके पाणि-ग्रहणमें अुसने जो बहादुरी दिखाअी है वह लेखकने अेकान्त-अूर्मि-तरंगके रूपमें नहीं; मगर अितने साहसिक चरित्रोंके प्रेरणा-पानके असरके रूपमें दिखाअी है। और अगर अिस अुपन्यासकी कथा दूसरी पुस्तकमें आगे बढ़ती—दुर्भाग्यसे लेखककी यह अिच्छा अपूर्ण ही रह गअी—तो निस्सन्देह अुस कथाका नायकत्व पिनाकिनके विशाल स्कंधोंपर ही आता।

अगर पिनाकिनका यह रूप कथाके अन्तमें न मिलता, पिनाकिन पुष्पाके साथ अपना सम्बन्ध जोड़नेमें जरा भी सोच-विचारमें पड़ता तो सारी कथा निस्सार हो अुठती; जिन चरित्रोंके सतसंगका अनमोल लाभ अुसको शैशवसे मिला है, वे चरित्र ही फीके प्रतीत होते और सारी कृति प्रेम-शौर्यकी जीवंत कथा न रहकर अतीतकी अेक अर्ध-काल्पनिक रचना ही रह जाती!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रचनाका सबसे बड़ा आकर्षण है जोरदार कथा-प्रवाह। घटनाअें विपुल हैं और अपनी विपुलतामें भी सस्ती नहीं हैं। अेक-अेक घटना मानव-प्रकृतिके अेक-अेक बड़े भावपर आधारित है और स्व. मेघाणीजीकी बिल्कुल यथार्थ संवाद-शक्तिकी मददसे हमें कोअी पात्र या घटना या कथोपकथन असंभवित नहीं जँचता। स्त्री और पुरुषके नैसर्गिक सम्बन्धोंका आकर्षण-तत्त्व कथामें जगह जगह दिखाअी पड़ेगा—स्वयं पिनाकिन अिससे कहाँ बचा है—परन्तु अिन सभी प्रसंगोंमें लेखकने कहीं भी मर्यादाका अतिरेक नहीं किया है। मेघाणीजीके स्वभावमें कौतुहल-प्रेरक, रोमान्टिक, अद्भुत-रसिक तत्त्वोंका सुभग संमिश्रण था। लेकिन अैसे प्रसंगोंमें, अैसी भावनाओंकी अभिव्यक्तिके समय वे अितने साहजिक हो अुठते हैं कि अत्यंत नाजुक क्षणोंको भी वे पूरा कलात्मक रूप दे सकते हैं।

कथाके कअी पात्र यथार्थ जीवनसे लिअे गअे हैं। लोगोंने अिनको पहचान भी लिया है। स्व. दरबार गोपालदासके चरित्रका अंश सुरेन्द्रदेवमें है तो किसान सेठके रूपमें पारेवाडाके श्री छगनभाअी हैं। महीपतरामके चरित्रमें लेखकके पिताके चरित्रके कुछ अंश आअे ही हैं। परन्तु किसी भी लेखककी सच्ची शक्ति बड़े चरित्रोंके चित्रणमें नहीं मगर छोटे-छोटे पात्रोंके चित्रणसे ही नापी जा सकती है। स्व. मेघाणीजीकी कलमसे निकला हुआ छोटा-सा पात्र भी अपना पूरा परिचय दो क्षणोंमें ही दे देता है। अिस अुपन्यासके भी वाशियांग जैसे अनेक पात्र अिस बातकी गवाही देंगे।

मेघाणीजीके अधिकांश अुपन्यास पूर्वनिश्चित योजनाके अनुसार नहीं लिखे गअे हैं। वे पत्रकार थे। अपने पत्रमें धारावाहिक अुपन्यास अुन्हें देना पड़ता था। अुनके अनेक अुपन्यास अिस प्रकार लिखे गअे हैं। नित्शेने कहा है: All that is Prearranged is false: यह वाक्य संपूर्ण सत्य न होते हुअे भी अिस कलाकारके लिअे संपूर्ण खरा अुतरता है। अिस प्रकारके अुपन्यासोंमें प्रायः वस्तुसंकलनकी त्रुटि रह जाती है। कहीं कथा अेकदम बहने लगती है और कहीं अत्यन्त शिथिल पड़ जाती है। मगर मेघाणीजीमें यह दोष अिस-लिअे नहीं है कि अेक तो अुनके पास प्रसंगोंकी कमी नहीं है—कहाँसे घटनाअें और चरित्र लाअेंगे यह अुनकी समस्या नहीं थी, अुनकी अुलझन तो थी किस घटना और किस चरित्रको छोड़ देंगे और किसको रखेंगे—और दूसरे वे प्रौढ़-रसिक शैलीके स्वामी थे। चतुर लेखक अपने शैली-बलसे अैसी शिथिलताको हमेशा ढाँक लेता है। और आँचलिक अुपन्यासमें अैसी शिथिलता अेक हदतक क्षम्य भी मानी जा सकती है। मगर यहीं आँचलिक अुपन्यासका सबसे बड़ा भयस्थान भी है। कथाको समेटना अैसे अुपन्यासका विकटतम कार्य हो जाता है। अिसीलिअे प्रस्तुत अुपन्यासमें महीपतरामके वृद्ध पिताका पात्र लटकता ही रह गया है, पिनाकिनके अपने माँ-बाप कथामें कोअी स्थान नहीं रोक पाअे हैं और जेल तोड़कर भागनेवाली मामीका और अैसे अनेक पात्रोंका बादमें क्या हुआ अिसका अिशारा भी लेखक नहीं दे पाअे हैं।

फिर भी कथाका अन्त काफी चोटदार है। पिनाकिनको किसान-सेठकी पाठशालामें भेजकर स्व. मेघाणीजीने आजके नौकरी-प्रिय, साहसहीन, मरे हुअे युवकोंको चेतनाका टॉनिक डोज ही दिया है। लेखक लोकभाषाके बादशाह हैं। अुपमाओंके सम्राट हैं। और ये अुपमाअें भी भावानुरूप रौद्र, कोमल, ललित गम्भीर रूप धारण करती हैं। केवल अपनी अुपमाओंके बलपर भी यह कृति पाठकको मुग्ध कर सकती है। हाँ, अिसीलिअे अिसका अनुवाद करना बहुत कठिन है। जगत्की सभी महान् कृतियाँ अनुवादसे परे होती हैं। और अिसमें भी किसी लोक-भाषासे समृद्ध रचनाका अन्य भाषामें अनुवाद करना तो और भी मुश्किल हो जाता है क्योंकि प्रादेशिक शब्द अपनी खास व्यंजनाअें रखते हैं जो दूसरी भाषाके शब्दोंमें आ ही नहीं सकतीं। फिर भी राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धाके प्रधान-मन्त्री श्री मोहनलाल भट्टने अपने व्यस्त जीवनमेंसे भी समय निकालकर गुजराती अुपन्यास-साहित्यकी अिस विशिष्ट कृतिका जो सन् १९३७ की श्रेष्ठ कृति सिद्ध हुअी थी—हिन्दीमें अनुवाद करके राष्ट्रभाषाकी गोदको समृद्ध ही किया है। आशा है, हिन्दी-संसारमें भी अिस कृतिका समुचित आदर होगा।*

* सोरठ तेरा बहता पानी—ले. झवेरचन्द मेघाणी, प्रकाशक राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा
वितरक: राजकमल प्रकाशन लिमिटेड, दिल्ली, प्रयाग तथा बम्बअी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारानृत्य

—श्री आसाराम वर्मा

पात्र

१. धरती माता	६. चौथी बूँद
२. नारदमुनि	७. पांचवीं बूँद
३. पहली बूँद	८. छठी बूँद
४. दूसरी बूँद	९. अिन्द्र
५. तीसरी बूँद	१०. बिजली

(स्थान—धरतीतल)

धरती माता–(प्रवेश करते हुअे) "……पानी ……पानी ……विधाता पानी।"

नारद–(प्रवेश करके) "नारायण……नारायण ……नारायण।"

धरती माता–(प्रणाम करती हुअी) "प्रणाम मुनिवर।"

नारद–"शुभाशीर्वाद देवी! ……कहो सब कुशल-मंगल तो है न?"

धरती–"कैसा कुशल-मंगल महाराज।……देख रहे हो न मेरी यह दुर्दशा…।…न अुदरमें अन्न है, न शरीरपर वस्त्र…। सारा शरीर ग्रीष्मकी कड़ी धूपसे काला-कलूटा बन गया है। भगवान सूर्य नारायणने मेरा हरियालीका सिंहासन और फूलोंका मुकुट छीन लिया है।……मैं लुट गअी हूँ मुनिवर।……मुनिराज मेरी पवित्र पुत्रियोंका अपहरण कर अुनका धर्म परिवर्तन किया गया है।"

नारद–(आश्चर्यसे) "पुत्रियाँ?"

धरती–"हाँ भक्त प्रवर, पुत्रियाँ ……सरिताअें। जिन्हें कि बाष्प बनाकर ग्रीष्म देवताने अपने अन्तःपुरमें कैद कर लिया है। मैं अपनी पुत्रियोंके बिना भी जी सकती किन्तु अुनका भाअी अुनकी अनुपस्थितिमें तड़प-तड़प कर प्राण दे देगा मुनिवर।"

नारद–(आश्चर्यसे) "भाअी?…कौन भाअी?"

धरती–"किसान।……किसान ही अुनका भाअी है।.. वह अपनी बहनोंसे वरदान पाकर ही सारे संसारका पालन-पोषण करता है।……अन्नदाता कहलाता है। मुनिवर, आषाढ़ लग चुका है।…… सावन भी आनेवाला है। यदि अिस बीच मेरी पुत्रियाँ न लौटीं तो अनर्थ हो जाअेगा।……देखो-देखो वह अकालका भयानक अजगर दुनियाको निगलनेके लिअे अिस ओर ही बढता आ रहा है।……बचाओ…… बचाओ…… बचाओ मुनिवर।"

(नारदजीके चरणोंपर गिरती है)

नारद–(धरती माताकी बाँह पकड़कर अुठाते हुअे) "अुठो पुत्री अुठो। …… तुम चिन्ता न करो।…… मैं सारी व्यवस्था करता हूँ, आज ही और अभी।…… नारायण……नारायण……नारायण।

(नारदजीका प्रस्थान)

(स्थान – आकाशकी छत)

पहली बूँद–(हर्षसे) "कितनी अच्छी है यह आकाशकी छत।……भगवान सूर्य नारायणने कितना अुपकार किया है हमपर?……न काँटोंका डर न रोड़ोंका भय। जिधर चाहो अुधर स्वच्छन्दतासे घूमो। ……सब ओर शान्तिका साम्राज्य।"

दूसरी बूँद–"न बत्तखोंका शोरगुल, न बगुलोंका छलकपट, न मछलियोंका फूहड़पन, न मेंढ़कोंकी टर्र-टर्र ……न नौकाकी फर्र-फर्र।"

तीसरी बूँद–"न गागरका बन्धन, न सागरको वन्दन।"

चौथी बूँद–"सागर?… अरे बाप रे।…… कड़वा-कड़वा थू।"

पाँचवी बूँद–"सखियो, कहाँ–वह क्षुद्र धरती और कहाँ यह……अिन्द्रका महल।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छठवीं बूँद-(विरोधसे) "बहनो, अिन्द्रके दरबारमें आकर अपनेको न भूलो।.....धरती हमारी माँ है। सागर हमारा स्वामी है।.....किसान हमारा भाअी है।.....देखो-देखो वह किसान आँखोंमें आँसू भरकर किस तरह हमारी प्रतीक्षा कर रहा है।..... चलो, भैयाको राखी बाँधने चलें।"

पहली बूँद-(तिरस्कारसे) "अरी तू जा।..... हमें क्यों खींचती है?.....तू ही अेक अकेली अभागिन है जो कि स्वर्ग त्यागकर फिर मृत्युलोकमें बसना चाहती है। अमृत त्यागकर धूल फाँकना चाहती है।..... स्वतन्त्रताको त्यागकर परतन्त्रता चाहती है।"

छठवीं बूँद-"विवेकके आग्रहसे स्वीकार किया हुआ बन्धन, बन्धन नहीं, जग-जीवन है--मुक्तिसे भी महान्।"

दूसरी बूँद-"अरी जाना हो तो जा.....हमें अुपदेश न दे अभागिन।"

छठवीं बूँद-"जो स्वार्थी है वह अभागी है, जो त्यागी है वही भाग्यवान है।"

तीसरी बूँद-"अरी, अेकबार कह दिया न अुपदेश मत दे। धरा रहने दे यह तेरा अुपदेश!"

चौथी बूँद-"सखियो, यह अिस तरह न मानेगी। .....अिसे अेकबार छतसे नीचे लोट ही दो।

(लोटना चाहती है)

छठवीं बूँद-"मुझे नीचे लोटनेकी कोअी आवश्यकता नहीं। मैं स्वयं ही नीचे अुतरती हूँ।"

(नीचे अुतरना चाहती है।)

(नारदजीका प्रवेश)

नारद-"नारायण.....नारायण .....नारायण।"

सब बूँदें-(हाथ जोड़ती हुअीं) "प्रणाम मुनिवर।"

नारद-(आशीर्वाद देते हुअे) "क्योंरी बून्दो, क्यों लड़ रही हो आपसमें?"

पहली बूँद-(छठवीं बून्दकी ओर अिशारा करते हुअे) "मुनिवर, यह हमें नीचे अुतरनेके लिअे आग्रह कर रही है।.....अब आप ही कहिअे.....क्या अिसका प्रस्ताव अुचित है?"

नारद-(मुस्कराकर)"बहुत ही अनुचित।"

सब बूँदें-(तालियाँ बजाती हुअीं छठवीं बून्दसे) "क्योंरी, अब किसकी जीत हुअी?"

नारद-(मुस्काकर) "... हाँ.....हाँ..... हाँ.....अिस तरह फूलो मत।.....तुम भी पहले मेरे अेक प्रश्नका अुत्तर दो तब तुम्हारी जीत होगी।"

कुछ बूँदें-(अेक साथ) "प्रश्न करिअे मुनिवर।"

नारद-"तब तुम धरतीपर थीं तब तुम्हारा रूप कैसा था?"

पहली बूँद-"अुज्वल।"

नारद-"और अब?"

चौथी बूँद-"अब तो हम फीकी हैं।"

नारद-"अच्छा,..... जब तुम धरतीपर थीं तब तुम्हारे अनेक नाम थे।.....तुम्हें कौन-सा नाम प्रिय लगता था?"

पाँचवीं बूँद-"जीवन।"

नारद-"ओ हो!.....जीवन।.....किन्तु अब तुम्हारा क्या नाम है?"

पहली बूँद-"बदली।"

नारद-"नारायण..... नारायण.....नारायण (व्यंग्यसे) बदली?".....बदली शब्दका अर्थ है जो बदल गअी.. ...याने जिसने विश्वासघात किया। (आवेशसे) विश्वासघात किया अपनी जननी धरतीसे। .....विश्वासघात किया अपने स्वामी समुद्रसे, विश्वास-घात किया अपने बन्धु किसानसे,.....क्यों ठीक है न मेरा कहना?"

दूसरी बूँद-"किन्तु मुनिराज, हमने तो मुक्ति प्राप्त की है।"

नारद-"नारायण..... नारायण.....नारायण (व्यंग्यसे) काला शरीर, फीकी आत्मा और बदली नाम यह सब मुक्तिके लक्षण नहीं, बल्कि स्वार्थ और वासनाके लक्षण हैं.....जड़ता है। मुक्तिकी व्याख्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेकान्त विलास नहीं, बल्कि अखिल विश्वमें सेवा-भावसे विलीन होना है।.....सेवा ही सच्ची शक्ति है, भक्ति है, मुक्ति है।.....देखो.....नीचे देखो तुम्हारे बिछुड़नेसे सारा संसार अन्तिम साँस ले रहा है। नदियाँ सूख गअी हैं। पेड़-पौधे मुरझा गअे हैं। खेत अुजड़ गअे हैं। समस्त प्राणियोंके प्राण प्याससे छटपटा रहे हैं। धरतीमाता केश खोले विलाप कर रही है।.... जिस जननीकी कोखमें तुम्हारा जन्म हुआ है क्या अुसपर भी तुम्हें दया न आअेगी ?.....अुत्तर दो.....?"

सब बूँदें-(अेक साथ) "गुरुदेव, क्षमा कीजिअे, हम अभी धरतीपर अुतरती हैं।"

नारद-(जाते हुअे) "नारायण.....नारायण .....नारायण।"

सब बूँदें-(अेक साथ) "चलो-चलो सखियो नीचे अुतरें.....चलो-चलो।"

पहली बूँद-"किन्तु हम तो छोटी-छोटी बूँदें हैं।"

दूसरी बूँद-"हम कर ही क्या सकती हैं ?"

तीसरी बूँद-"यदि हम संगठित हैं तो सब कुछ कर सकती हैं। छोटी वह है जो अकेली है।..... देखो सखियो, कोअी अकेली नीचे न अुतरना। आधे मार्गमें ही भगवान भुवन-भास्कर अपने यज्ञ-कुण्डमें तुम्हें स्वाहा कर देंगे।.....चलो, हजारों लाखों करोड़ों बूँदें अेक साथ धावा कर दें।"

चौथी बूँद-(भयसे) "अरी मैयारी मैया। .....वह कौन महादैत्य हमारे मार्गमें खड़ा है।..... अुसकी वह भयानक आकृति देखकर मेरे प्राण पिघल रहे हैं।"

(पाँचवीं बूँदसे लिपट जाती है।)

पाँचवीं बूँद-"दुत् पगली।.....वह कोअी दैत्य थोड़े ही है। वह तो पर्वतराज है पर्वतराज।..... पृथ्वीका सेनापति। वह हमसे युद्ध करनेके लिअे नहीं, बल्कि हमारा स्वागत करनेके लिअे खड़ा है। पहले हम हिम-शिखरोंके मुकुटोंपर चरण धरकर ही धरतीके अंचलमें अुतरेंगी। निर्झरकी गलियोंमें आँख-मिचौनी खेलेंगी।.....नदियोंकी तरंगोंपर रास रचाअेंगी।

पहली बूँद-"किन्तु धरतीका राजा हमें कोड़े लगाअेगा तो ?"

पाँचवीं बूँद-"कौन कोड़े लगाअेगा ?--वायु? ...वायुको तो हम अपना घोड़ा बनाअेंगी।...अुसकी पीठपर चढ़कर सारी सृष्टि वर्षा-विभोर कर देंगी। ...आओ चलें।"

पहली बूँद-"देखो कोअी अकेली नीचे न अुतरना।"

दूसरी बूँद-"संगठन ही शक्ति है।"

तीसरी बूँद-"हम हैं तो क्षुद्र किन्तु हमारा कार्य महान् होगा।"

चौथी बूँद-(छठवीं बूँदसे) "बहन, तुम तो बिलकुल ही रूठ गअी। बातचीत भी नहीं करती। (हाथ जोड़कर) दीदी, मुझे क्षमा कर दो।"

सब बूँदें-"हाँ बहन, हम सबको क्षमा कर दो।"

पहली बूँद-"दीदी तुम जीतीं, हम हारीं। ...आजसे तुम हमारी रानी हो।.. तुम्हारे नेतृत्वमें ही हम धरतीपर अुतरेंगी। (हाथ अुठाकर)...वर्षा-रानी की..."

सब बूँदें-"जय !"

छठवीं बूँद-"सखियो, आओ आकाशको घेरती हुअी नीचे अुतरें।...देखो हमें पृथ्वी प्रणाम कर रही है।...पपीहा...पिअू-पिअूकी रट लगा रहा है मानो सरस्वतीका वाहन बनना चाहता है।...देखो वे किसान खेत जोत रहे हैं।...लड़के कागजकी नावें बना रहे हैं।"

चौथी बूँद-(ताली बजाकर) "दीदी...देखो ...देखो वे पण्डितजी आज मृग नक्षत्रके मुहूर्तमें भी पाठशाला जा रहे हैं।....चलो-चलो अुनकी किताबें भिगो दें।"

पाँचवीं बूँद-"अरी बावली, पण्डितजीकी किताबें नहीं...वह देखो अुधर...अपने कर्जदारपर दावा करने वह जो साहूकार जा रहा है न, चलो अुसका बहीखाता भिगो दें।...कुछ तो सूद कम होगा ही।...सखियो ...चलो-चलो जल्दी करो।....कहीं वह कचहरी न पहुँच जाअे। (कूदना चाहती हैं।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छठवीं बूंद–(बाँह पकड़ते हुअे) "सम्भलकर । ...कोअी अकेली नीचे न अुतरना । ...नहीं तो नष्ट हो जाओगी । अेकता ही हमारी शक्ति है । चलो अेकसाथ नीचे अुतरें ।"

(बूंदें हाथोंकी शृंखला बनाकर अेकसाथ नीचे अुतरना चाहती हैं)

(अिन्द्रका प्रवेश)

अिन्द्र–"बूंदो, मेरा दरबार छोड़कर कहाँ जा रही हो ?"

छठवीं बूंद–"धरतीपर सुरराज ।"

अिन्द्र–(आश्चर्यसे) "धरती पर ? .....पगलियो वह धरती मिट्टी और पत्थरकी बनी है ।.....बहुत कठोर ।.....गिरते ही चकनाचूर हो जाओगी ।"

छठवीं बूंद–"कोअी चिन्ता नहीं ।.....हमारा जीवन 'बहुजन हिताय...बहुजन सुखाय' के लिअे है ।"

अिन्द्र–"न वहाँ नीलमका महल है, न अिन्द्र धनुषकी कमानें, न तारोंके दीपक, न कल्पलताके झूले, और न अमृतके घट ही ।.....वहाँ तो सिर्फ मृत्युका साम्राज्य है मृत्युका ।"

पाँचवीं बूंद–"देवेन्द्र, आप हमें न रोकिअे ।"

अिन्द्र–"अैसा कौन-सा आकर्षण है वहाँ ? क्या किसी चातकके क्रन्दनपर करुणा आअी है ? ...या किसी पपीहेकी पिअू-पिअूपर पिघली हो ? ...या किसी तानसेनकी मल्हारसे धरतीपर खिंची जा रही हो ? या किसी राजाके यज्ञपर सिद्धिकी तरह प्रसन्न हुअी हो ?"

छठवीं बूंद–"न तो हमें किसी चातकके क्रन्दनपर करुणा आअी है । न किसी पपीहेकी पिअू-पिअूपर हम पिघली हैं । न किसी तानसेनकी रागिनी ही हमें धरतीपर खींच रही है । और न किसी राजाके यज्ञपर ही हम प्रसन्न हुअी हैं । हम तो अेक कविपर प्रसन्न हैं ।"

अिन्द्र–"अैसा भाग्यशाली कवि कौन है ? .... क्या नाम है अुसका ?"

छठवीं बूंद–(अुल्लास सहित) "किसान ।"

अिन्द्र–(आश्चर्य और अट्टहाससे) "किसान ! ....और कवि ? ...हा...हा...हा...!! धन्य है तुम्हारी रसिकताको ।"

छठवीं बूंद–"सुरराज, किसान ही सच्चा कवि है । धरती अुसका कागज है । हल अुसकी लेखनी है । श्रमबिन्दू अुसकी स्याही है और अुसके महाकाव्यका नाम है अन्न ।"

अिन्द्र–"जो कुछ भी हो मैं तुम्हें न जाने दूंगा । (क्रोधसे ताली बजाते हुअे) बिजली...ओ बिजली.... बिजली ।.....कैद कर लो अिन्हें और डाल दो कारागृहमें ।

(नेपथ्यमें बिजली..."आअी महाराज ।")

छठवीं बूंद–"आओ बिजली रानी ।....आओ । ...हम तुम्हारी प्रतीक्षामें ही रुकी हैं ।.....आओ सु-स्वागतम् है तुम्हारा । ...तुम भी अपना शंख फूंकती हुअी हमारे साथ चलो । हमारे साथ तुम भी पृथ्वीपर गिरोगी ।.....गिरना हो तो विषमताके महलोंपर ही गिरना, किन्तु सर्वोदयकी झोपड़ियोंपर न गिरना, जलाना हो तो राजसत्ताके मुकुट-सिंहासन ही जलाना किन्तु लोक-सत्ताके ध्वजको भूलकर भी स्पर्श न करना ।"

(धनुषधारी बिजलीका प्रवेश ।--प्रखर प्रकाश)

अिन्द्र–(छठवीं बून्दकी ओर अंगुली अुठाकर) "पकड़ लो अिसे ।"

बिजली–"महाराज, यह अन्याय मुझसे न होगा । मैं भी अिनकी ही अेक सहेली हूँ ।....अिनका ही साथ दूंगी ।"

अिन्द्र–(झुंझलाकर) ...विश्वासघात....विद्रोह... भयानक विद्रोह ।"

नारद–(प्रवेश करते हुअे) "शान्त....शान्त... देवेन्द्र शान्त । अिनके जाने देनेमें ही तुम्हारा कल्याण है ।...नारायण....नारायण...नारायण ।"

अिन्द्र–"कैसा कल्याण है मुनिवर ?"

नारद–"अिन्द्र, तुम्हारे स्वर्गमें क्या अन्नकी खेतियाँ हैं ?...जब धरतीपर अन्न अुपजेगा तभी यज्ञों-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा देवोंको प्राप्त होगा। किसीने ठीक ही कहा है...
मानवकी भिक्षापर ही तो देवोंका जीवन है निर्भर।
धरतीसे ऊँचा होकर भी धरतीसे नीचा है अम्बर॥

अिन्द्र–(हाथ जोड़कर) "देवर्षि, मुझे क्षमा कर दो। युगके साथ मुझे भी अब अपना परिवर्तन करना होगा।...धन्य हैं आप, आपने मेरी स्वप्निल पलकोंमें सत्यका अंजन लगाया है।"

नारद–"ब्रह्म तो सत्य है किन्तु जगत् महा सत्य है।....नारायण...नारायण...नारायण।"

अिन्द्र–(बूँदोंसे) "बूँदो, तुम जीतीं और मैं हारा।...भोगसे त्याग श्रेष्ठ है। मैं तुम्हें धरतीपर अुतरनेके लिअे सहर्ष बिदा करता हूँ।

छठवीं बून्द–(नारदजीसे) "हमें आशीर्वाद दीजिअे मुनिवर।"

नारद–"आशीर्वाद पुत्रियो।"

सब बून्दें–(हाथोंकी शृंखला बाँधती हुअी) "चलो-चलो सखियो अेक साथ नीचे अुतरें।"

नारद–"अिस तरह नहीं, नाचती-गाती धारा-नृत्य करती हुअी (मुस्कराकर) नारायण....नारायण .. नारायण।"

(बूँदें गाती हुअी नृत्य करती हैं।)

(नृत्य गीत)

रिम-झिम नाचो री जलधार॥

आओ सखियो आओ आओ
अपने मंगल घट बरसाओ
गाओ मेघ-मलार।
रिमझिम नाचो री जलधार॥

पिअू-पिअु पिअु-पिअु चातक गाअे
मयुर अपने मन मुस्काअे
नाचे पंख पसार।
रिम झिम नाचो री जलधार॥

झर-झर झर-झर निर्झर बोले
कागजकी नैया फिर डोले
बालकका खिलवार।
रिम-झिम नाचो री जलधार॥

हरियाली ही हो हरियाली
झूमे कलियां, झूमे डाली
कविताका संसार।
रिम-झिम नाचो री जलधार॥

बीजोंको फिर हलधर बोअें
जागे अंकुर रजमें सोअें
जागे गेहूँ ज्वार।
रिम-झिम नाचो री जलधार॥

श्यामल वदनी, नभकी सजनी
अूतरो भूपर, बनकर जननी
लेकर प्यार दुलार।
रिम-झिम नाचो री जलधार॥

(पानी बरसता है।)

सब बूँदें–(हर्षसे) "अहा—हा!! धरतीमाता कैसी हरिताम्बरा हो रही है।

नारद–(मुस्कराते हुअे) "नारायण...नारायण .....नारायण।"

(परदा गिरता है।)

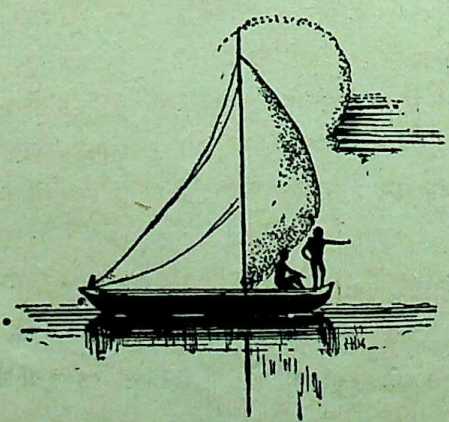

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रैहम ग्रीनकी "दि क्वायट अमेरिकन"

—श्री ओम्प्रकाश आर्य, लंदन

यह बड़े आश्चर्यकी बात है कि आधुनिक अंग्रेजी साहित्यकी प्रवृत्तियों और अुसकी अच्छी पुस्तकोंके बारेमें हमारी साहित्यिक पत्रिकाओंमें चर्चा कम होती है, हालांकि अंग्रेजी जाननेवाले कमसे-कम पाँच लाख व्यक्ति हिन्दी क्षेत्रमें रहते हैं। अंग्रेजी साहित्यमें जो कुछ अपने देशमें रुचि है वह है अुसके पुराने साहित्यमें चौसरसे लेकर बर्नार्ड शॉ, अेच० जी० वेल्स और कभी-कभी टी० अेस० ओलियट तक। अुसके बाद नहीं। पर अैसा क्यों? ओलियटका असली सृजनकाल अगर अुन्हें सृजनात्मक कलाकार माना जावे तो, वह आजसे बीस-पच्चीस साल पहले समाप्त हो चुका है। यों आज वे भौतिक रूपसे जीवित हैं। ब्रिटिश विश्वविद्यालयोंमें मान्य भी हैं परन्तु सृजनात्मक क्षेत्रसे वे बाहर जा चुके हैं। वही बात बहुत कुछ जे० बी० प्रीस्टलेपर लागू होती है। यों प्रीस्टले ओलियटसे अधिक मुखर हैं और टैलीविजन जैसे माध्यमोंके लिअे कुछ-न-कुछ लिखते रहते हैं। हालांकि पिछले दस सालोंमें अुन्होंने कोअी अैसी रचना पेश नहीं की है जो कि स्थायी साहित्यमें कही जा सके।

ब्रिटेनमें आजके अंग्रेजी साहित्यके असली लेखक हैं अेच० अी० बेट्स्, ग्रेहम ग्रीन, ग्विन, टौमस, डौरिस लैसिंग, नाओमी मिचिसन, जैक लिंडसे, प्रभृति व्यक्ति। मैं समझता हूँ कि अिनकी चर्चा आलोचना आदि हमें आजका अंग्रेजी साहित्य समझनेके लिअे करनी चाहिअे। अंग्रेजी भाषाके अमेरिकन लेखक भी हैं और अच्छे लेखक हैं; परन्तु अुनका विचार अमेरिकन राष्ट्रीय स्थिति देखकर होना चाहिअे। अभीतक पर्ल बक, जौन स्टाअिनबैक, अर्न्स्ट हैमिंगवे, होवर्ड फास्ट आदि जो कुछ प्रस्तुत कर रहे हैं, वह कम महत्वपूर्ण नहीं समझना चाहिअे।

अिस लेखमें हम ग्रैहम ग्रीनकी सबसे हालकी पुस्तक "**दि क्वायट अमेरिकन**" की चर्चा करेंगे। ब्रिटेनमें अिस पुस्तककी बिक्री काफी हुअी है और भारतको छोड़कर बाकी सारी दुनियामें, न्यूयॉर्कसे लेकर मास्कोतक, अिसकी चर्चा कसरतसे हुअी है। क्योंकि यह आजके अंग्रेजी साहित्यमें अेक अैसी कृति है जिसकी अुच्चता कलाके स्तरपर भी है और कहानीके राजनीतिक अंगके स्तरपर भी। और अिसका सम्बन्ध अन्तरराष्ट्रीयतासे भी अुतना ही गहरा है जितना हिन्द चीनकी आजादीकी लड़ाअीसे। कअी अर्थोंमें यह पुस्तक बहुत अुत्कृष्ट है। अिसका यह अर्थ नहीं कि अिसमें खामियाँ नहीं हैं; परन्तु मेरी समझसे ग्रैहम ग्रीन जैसे कैथोलिक धर्मके माननेवालेके लिअे कम्यूनिज्मके माननेवालोंको गहरे रूपसे समझनेकी कोशिश करना और अुसमें सफल होना अेक काफी बड़ी बात है। नैतिक साहसके लिहाजसे और कलाकी गहराअीके लिहाजसे। कहींपर लेखककी अपनी मान्यताओंने हावी होनेकी कोशिश नहीं की है। लेखकने जिस सच्चाअी और साफगोअीका परिचय दिया है वह कुछ हमारे लेखकोंके लिअे भी सीखने लायक है।

कहानी बहुत सीधी है, हिन्द-चीनकी लड़ाअीके समय दो दफे अेक अधेड़ व्यक्ति अेक अंग्रेजी अखबारका संवाददाता होकर वहाँ जाता है। और वहाँ जो कुछ देखता है अुसका वर्णन करता है। अुस वर्णनमें स्थानीय अमेरिकन आर्थिक सहायता आयोगमें काम करनेवाला अेक अमेरिकन युवक है जो अभी तुरंत ही विश्वविद्यालयसे निकलकर आया है और आदर्शवादसे ओत-प्रोत है। अुस युवकको हिन्द-चीनियोंको आपसमें लड़वानेके लिअे, हिन्द-चीनमें अेक अमेरिकन प्रभावित "दल" के संघटनके लिअे अिस्तेमाल किया जाता है। परन्तु अिस बीच अुसका सूराग आजादीके सिपाहियोंको लग जाता है और वे अुस युवककी हत्या कर देते हैं। वह युवक अेक हिन्द चीनी लड़कीसे प्रेम करता था। अुसीके साथ रहता भी था जोकि समयपर अुससे शादी करनेवाली थी; परन्तु जो कि अिस ब्रिटिश संवाददाताकी रखेल भी अेक जमानेमें रह चुकी थी। अमेरिकन युवककी हत्याके बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह हिन्द-चीनी लड़की फुआँग फिरसे अिस ब्रिटिश संवाददाताके पास रहने चली आती है, और अेक दिन फुआँगको छोड़कर वह संवाददाता घर चला आता है और हिन्द-चीनकी लड़ाअी जारी रहती है।

कहानी छोटी-सी है। अेक साथ बैठिअे तो सात आठ घंटेमें पढ़ी जा सकती है। कहनेका ढंग अितना सीधा कि कहीं अस्वाभाविकता और अवास्तविकता नहीं लगती है। कहीं मुलम्मा नहीं चढ़ा है। कहीं शब्दाडम्बर नहीं है। कहींपर प्रचारकी भावना नहीं है। कहींपर अुपदेश देनेका यत्न नहीं है। कहींपर लेखकने किसी चरित्रके साथ अपना लगाव जाहिर नहीं किया है। निरपेक्ष रूपसे अुसने जो सचाअी समझी अुसका बयान किया है जो कि यद्यपि राजनीतिक और अन्तरराष्ट्रीय रूपसे अमेरिकाके विरुद्ध पड़ता है तो भी लेखक अमेरिका विरोधी नहीं है। वह अपने अमेरिकन दोस्तोंको अच्छे-से-अच्छे प्रकाशमें दिखलाता है। यह अेक अैसा विरोधाभास है, जो कि बिना अुपन्यास पढ़े समझमें नहीं आता है।

कहानीकी शैली अैसी है कि जैसे आप सिनेमाके पर्देपर फिल्म देख रहे हों, वैसे आजके पश्चिमी योरोपी अुपन्यासोंमें अिस शैलीका प्रयोग अिसलिअे भी किया जाता है कि ये अधिकतर अेक दिन फिल्मोंके रूपमें सामने आनेको होती हैं। अिससे सिनारियो लेखकोंको अधिक मेहनत नहीं करनी पड़ती है। बातचीत अितनी स्वाभाविक है, वाक्य अितने छोटे हैं, प्रवाह अितना स्पष्ट और मन्द है। युद्धके अुकसावेमें भी लेखककी गम्भीरता और अुसकी भाव-प्रवणता अुसे छोड़ती नहीं है। अैसा लगता है कि अुस संघर्षके बीच रहते हुअे भी वह अछूता रह गया हो। किसी प्रकारकी अमानवीय भक्तिसे ओत प्रोत हो जो कि मोर्चेके अूपर खड़े होकर दोनों ओर देख पाता हो। वैसे यह शैली श्री ग्रेहम ग्रीनकी अपनी विशिष्ट शैली है, जिसका वर्णन असम्भव है, यह केवल अनुभव गम्य है।

जहाँतक अिसके साहित्यमें स्थानका प्रश्न है यह अपने समयमें ही बहुत अधिक प्रचारित हुअी है। पाँच महीनेके अन्दर पचास हजारके तीन संस्करण बिटेनमें और लगभग डेढ़ लाखके तीन संस्करण अमेरिकामें अिसके बिक चुके हैं। परन्तु अैसी लोकप्रियता ही किसी अच्छी साहित्यिक पुस्तकका मापदण्ड नहीं हो सकती है, अँग्रेजी भाषा-भाषी जगत्का कोअी अैसा बड़ा पत्र नहीं है जिसमें अिसकी आलोचना न निकली हो। अिसपर टीका न की गअी हो। कुछ अमेरिकन अखबारोंने लेखकको अमेरिकन विरोधी कहा है। कुछने अुसे कम्युनिस्ट प्रचारका शिकार कहा है। परन्तु मेरी समझमें ब्रिटेनके अधिकांश अखबारोंने जो दृष्टिकोण अपनाया है वही अिस पुस्तकके बारेमें सही है और वह यह कि लेखककी निरपेक्षता सराहनीय है। अुसने अपने चरित्रोंके साथ अन्याय नहीं किया है। अेशिया-वासियोंको हीन दिखलानेका यत्न नहीं किया है; वरन् अपने अेक छोटे चरित्र, ब्रिटिश संवाददाताके अेक भारतीय सहकारीको अुसने बहुत ही अच्छी रोशनीमें पेश किया है और अुसके चरित्रको हिन्दू दर्शन शास्त्रका ज्वलन्त प्रतीक साबित करनेकी कोशिश की है।

और केवल अँग्रेजी साहित्यमें ही नहीं; वरन् विश्व साहित्यमें जो कुछ पिछले साल नया प्रकाशन हुआ है, अुसमें भी ग्रेहम ग्रीनकी यह पुस्तक स्थान पाअेगी, अिसमें शक नहीं है, और वह अिसलिअे कि अिसकी कला चेतना अूँचे किस्मकी है, चरित्र-चित्रण बहुत परिपक्वताके साथ हुअे हैं। हिन्द-चीनकी लड़ाअीमेंसे अुसने फ्रांसीसी अुपनिवेशवादकी भौंड़ी सूरत दिखलानेके साथ यह भी दिखला दिया है कि अुपनिवेशवाद किसी गुलाम देशमें कैसी नैतिकता, कैसा समाज, कैसे लोग पैदा करता है। और आजके अन्तरराष्ट्रीय संदर्भमें फ्रांसीसी अुपनिवेशवादको हटानेका यत्न करनेके साथ ही अमेरिकन सरकारी अधिकारी किस प्रकार अेक नअे प्रकारका अुपनिवेशवाद कायम करनेका यत्न करते हैं, और अुसमें असफल होते हैं।

यह तो हुअी अिसकी खूबियोंकी चर्चा। पर क्या अुसमें खामियाँ भी हैं? मेरी समझसे अवश्य हैं। और वे शायद अिसलिअे कि यह कहानी अेक अँग्रेज भद्र पुरुषने लिखी है। लेखक अन्याय देखता है। अत्याचार देखता है। व्यभिचार और षड्यन्त्र देखता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। अुनका निरपेक्ष वर्णन करता है। परन्तु अुनके विरुद्ध संघर्ष नहीं करता है। वह अपनेको केवल अकेला पाता हो अैसी बात ही नहीं है, वरन् यह भी कि वह अुसको लिख देनेके बाद समझता है कि अुसकी जिम्मेवारी समाप्त हो गअी है। अुसकी आत्माको जो धिक्कार मिल रहे थे वे समाप्त हो गअे हैं। वह समझता है कि अुसका कार्य वहींतक था। वह अिसका "रास्ता" नहीं दिखलाता है।

शायद बहुतसे लोग साहित्यमें अिस "रास्ता" दिखलानेको गलत कहें परन्तु मैं यह लेखकका नैतिक कर्तव्य समझता हूँ कि जहाँ वह यह भौंडापन देखे, वहाँ वह अिसका वर्णन करके ही संतोष न कर ले वरन् अुस संघर्षमें हिस्सा भी ले। दूसरे वह अपने कथानकको अिसकी तर्क-सम्मत परिणितितक नहीं ले जाता है। अुसने दिखलाया है कि हिन्द-चीनमें फ्रांसीसी अुपनिवेश-वाद कितना क्रूर है। परन्तु अुसने यह नहीं दिखलाया कि अिसी कारण हिन्द-चीनके निवासियोंको अुनसे लड़नेकी जरूरत हुअी। अिसी कारण अुनका मुक्ति संग्राम हर जनवादी नागरिकके कमसे-कम नैतिक सहयोगकी अपेक्षा रखता है।

कुछ लोग कह सकते हैं कि यह तो राजनीतिज्ञका काम है कि वह मुक्ति संग्रामोंमें लड़नेके नारे दे। साहित्यिककी जिम्मेवारी तो अेक रोचक, यथार्थवादी कहानी कह देने भरसे है। हर साहित्यिकको राज-नीतिज्ञ या राजनेता कैसे बनाया जा सकता है? जो लोग अिस विचारको सही मानते हैं अुनसे मुझे कुछ नहीं कहना है। परन्तु जो अिसे सही नहीं मानते हैं जो कि साहित्यको भी समाजिक परिवर्तनका अुसके सही विकासका अंग मानते हैं और अिसलिअे साहित्यिकसे किसी 'राधेश्याम कथावाचक' से कहीं कुछ अधिक अुम्मीद करते हैं अुनको अितनी अुत्कृष्ट साहित्यिक कृतिमें भी अैसी कमजोरी खटकेगी।

अपने प्रेमचन्दको ही देखिअे। अुनकी वे रचनाअें अधिक अुत्कृष्ट बन पाअी हैं जिनमें अुन्होंने अपने नायक-नाअिकाओंके संघर्षमें नैतिक हिस्सा लिया है और प्रेमचन्द हिन्दी साहित्यके मैक्सिम गोर्की अिसलिअे नहीं बन सके क्योंकि अुन्होंने अपने विद्रोहमें वह तीव्रता नहीं पनपने दी। अिस तथ्यको हमें स्वीकार करना चाहिअे।

श्री ग्रैहम ग्रीन कभी समाजवादी लेखक नहीं थे और न वे अिसमें सामने आते हैं। वे पहले भी व्यक्तिवादी थे और आज भी व्यक्तिवादी हैं। वे धार्मिक विचारोंमें कैथोलिक हैं। पर अिसके कारण अुनकी हर कृतिको निकृष्ट नहीं कहा जाना चाहिअे। अुनकी कला प्रवणता अुच्च किस्मकी है, यह मानना पड़ेगा। अुन्होंने युद्धोत्तर कालमें अेक अुपन्यास लिखा था "दि थर्ड मैन" जो कि सारी दुनियामें मशहूर हुआ। अुसमें चोर-बाजारीका आन्तरिक रूप दिखलानेकी कोशिश की गअी थी, और बहुत सफल कोशिश की गअी थी। अुसका अभिनय हुआ। अुसकी फिल्म भी बनी। और आज वह पुस्तक ब्रिटिश साहित्यकी स्थाअी संपत्ति गिनी जाती है। अुसके लिअे भी मैं वही आलोचना करना चाहूँगा, जो कि मैंने "दि क्वायट अमेरिकन" के लिअे की है। और शायद यह बात अुनकी दूसरी पुस्तकोंके लिअे भी कहनी होगी।

क्योंकि वे समाजवादी लेखक नहीं हैं अिसलिअे वे प्रगतिशील नहीं हो सकते हैं, यह बात भी अमान्य लगती है, और अिसलिअे कि अुन्होंने अन्यायको मान्य और अुच्च साबित करनेकी कोशिश नहीं की है। अुनका विद्रोहका स्वर धीमा है, कअी दफे बहुत धीमा कि सुन भी मुश्किलसे पड़ता है। अुनमें संघर्षकी भावना नहीं है। परिवर्तन करनेकी ललकार नहीं है। पर साथ ही वे संघर्षके विरोधी नहीं हैं। वे परिवर्तनके अनुरोधक नहीं हैं। वे अपने देशके अैसे वातावरणकी अुपज हैं जिसमें अुन्हें अुनके जीवनके सबसे महत्वपूर्ण कालमें बाहरी दुनियाकी सच्चाअियोंसे परिचित होनेका मौका नहीं मिला है। अिसलिअे अुनमें वह संघर्ष और विद्रोहकी भावना घर नहीं कर पाअी। अुसीके साथ स्पेनिश युद्धके बादसे लेकर कोरियाअी युद्धतक समाजवादी लेखकोंने जो दृष्टिकोण गैर-समाजवादी लेखकोंके प्रति अख्तियार किया वह भी अिसके लिअे जिम्मेवार है कि अेक लम्बे अरसेतक साम्राज्यवादकी भौंड़ी सूरतें सच्चे और साफगो अँग्रेजी लेखकोंके सामने नहीं आ सकीं। और जब आअीं तब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुनकी अुम्र पक चुकी थी। शारीरिक शक्तियाँ क्षीण हो चुकी थीं। जीवनके जोश ठण्डे पड़ चुके थे। आदर्शवादके लिअे मर मिटनेकी भावना लुप्त हो चुकी थी। और अिसलिअे अुसके बाद जो कुछ अुन्होंने सृजन किया वह अुतना अुत्कृष्ट नहीं हो सका जितनी कि अुनकी प्रतिभाअें आशा दिलाती थीं। फिर भी आजके अँग्रेजी साहित्यमें अिन्हें छोड़ा नहीं जा सकता है। अिन्हें आँखोंसे ओझल नहीं किया जा सकता है।

ये लेखक वेल्स और शॉके बादसे आजके नअे जैक लिंडसे और जैम्स औलिडजके बीच अेक अैसी कड़ी हैं जिनसे ब्रिटिश समाजके विकासका पता चलता है। जिनसे यह भी पता चलता है कि साम्राज्यवादी विचारकोंने कैसे स्वच्छ सोशल डिमोक्रैटिक विचारधाराको गन्दा करके, अुसको बौद्धिक घूस दे करके, साम्राज्यवादकी दूसरी प्रतिरक्षा पंक्ति बनानेका यत्न किया और अुस यत्नमें सामयिक रूपसे लगभग बीस-पचीस सालतक सफल हो सके। बेट्स और ग्रीन जैसे लेखकोंने अुनसे भी प्रभाव पाया यह जानना चाहिअे।

"दि क्वायट अमेरिकन" श्री ग्रेहम ग्रीनके जीवनमें और अुनके लेखनमें अेक बड़ा मोड़ साबित हो सकता है। नअे परमाणु युगमें जब कि ब्रिटिश साम्राज्यवादकी जवानी ढल रही है; और जब कि नअे सवाल ब्रिटिश जनताके सामने आ रहे हैं, अुस समय श्री ग्रीन जैसे लेखकोंका फिरसे संघर्षमय बन जाना कुछ अनहोनी घटना नहीं होगी बशर्ते कि समाजवादी लेखक और विचारक अुनके साथ सौतेलेपनका बर्ताव करना छोड़ दें।

श्री ग्रेहम ग्रीनकी प्रतिभाका सूरज अभी चमक ही रहा है। अुसके अस्त होनेसे पहले हमें अुसकी रोशनी नअी कृतियोंके रूपमें देखनेको मिलेगी अिसमें मुझे कोअी शक नहीं है।

मेघ-याचना

— श्री परमेश्वर द्विरेफ

बरसो हे मेरे घन अुदार !

पग-पगपर, खग-खगपर, नगपर
तरु-तरुपर, मरुपर, मग-मगपर
दृग-दृगपर, भगपर, अग-जगपर
छोड़ो अपनी शीतल फुहार
बरसो हे मेरे घन अुदार !

हम चाह रहे हैं सभी शरण
कर लो, द्रुत यह संताप-वरण
आओ, आओ, हे नमित चरण,
धाराअें फूट चले अपार
बरसो हे मेरे घन अुदार !

गा रहे गीत तुम घुमड़-घुमड़
मेरा भी आया हृदय अुमड़
पड़ता कण्ठोंसे रस झड़-झड़
कर रहा पपीहा भी पुकार
बरसो हे मेरे घन अुदार !

करते कितना ही पार अयन
विष पी-पीकर, कर सुधा-चयन
तुम चिर-विह्वल, तुम अुन्मन
हे नीलकण्ठ ! हर लो न भार।
बरसो हे मेरे घन अुदार !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ल्येव निकोलाय तालस्ताय

--श्री वी. राजेन्द्र ऋषि अेम. अे.
(रशियन भाषा और साहित्यके विशेषज्ञ)

[महात्मा तालस्तायने सदा सत्य और अहिंसाका ही पक्ष लिया। अहमदाबाद साबरमती सत्याग्रहाश्रममें सन् १९२८ की बात है, ११ वीं सितम्बरको तालस्ताय-जयन्ती मनाअी गअी थी। अुस अवसरपर महात्मा गांधीने कहा था कि "जिन ३ महापुरुषोंने मुझपर अपना प्रभाव डाला है अुनमें अेक तालस्ताय भी हैं। अुनके सम्बन्धमें मैंने बहुत पढ़ा नहीं है; फिर भी अुनकी लिखी "Kingdom of heaven is within you" नामक पुस्तकने मेरे दिलपर बड़ा असर किया है। अिससे मेरी नास्तिकता, हिंसा और अश्रद्धा आदिके विचार हमेशाके लिअे चले गअे। सत्य और त्यागकी मूर्ति तालस्तायका मैं आज भी पुजारी हूँ। तालस्तायने भरी जवानीमें अपना रुख बदला और तीव्र विरोधोंके होते हुअे भी वे अपने विचारोंपर दृढ़ बने रहे। तालस्ताय अहिंसाके बहुत बड़े पुजारी थे। अुन्होंने यूरोपको अहिंसा विषयक जितना साहित्य प्रचुर मात्रामें दिया है अुतना और किसीने नहीं दिया।" अुनकी वाणीने लोगोंको शान्तिप्रिय अेवं अहिंसक बनाया है। अिससे मानव संहारकारी युद्धोंके प्रति लोगोंमें द्वेष बढ़ रहा है। रूसी भाषा और साहित्यके मर्मज्ञ श्री वी. राजेन्द्र ऋषि द्वारा प्रस्तुत लेखमें तालस्तायको पढ़िअे। --सम्पादक]

तालस्ताय रूसके अेक विश्वविख्यात लेखक हैं। वह वर्तमान रूसी साहित्यके स्तम्भ माने जाते हैं। तालस्तायके रूपमें रूसने विश्वको अेक अैसा शक्तिशाली लेखक दिया है जिसने भाषाकी सीमाको लाँघकर अैसे साहित्यकी रचना की है जिसको सारा विश्व अपनी सम्पत्ति मानता है। तालस्ताय रूसकी आत्मा है। वह रूसी चरित्रकी विलक्षणता, विशिष्टता और आवश्यकताका प्रतीक है।

अीश्वरने तालस्तायको बाज जैसी अति-पैनी दृष्टि प्रदान की थी, जिससे वह प्रत्येक वस्तुको बड़ी गहराअी तथा अुसके वास्तविक रूपमें देख पाते थे। अपने लेखक जीवनके आरम्भसे लेकर मृत्यु पर्यन्त अुन्होंने किसी भी वस्तुके रूपको स्वयं सिद्ध नहीं माना, प्रत्युत वह अपनी पैनी दृष्टिसे अुसे भली-भाँति जाँचकर अुसके वास्तविक रूपका स्वयं पता लगाते थे। पैनी दृष्टिके साथ-साथ अीश्वरसे अुनको अपनी जीवन यात्रामें देखी गअी वस्तुओं, घटनाओं और मनुष्योंकी मानसिक अवस्थाओं और विचारोंका ब्योरेमें तथा सूक्ष्म रूपसे सुन्दर चित्र खींचनेका अनुपम वरदान मिला था। अिसीके कारण अुन्होंने विश्वके महान गद्य-लेखककी पदवी प्राप्त की। अुनकी अमर रचनाअें अब विश्व साहित्यकी प्रथम श्रेणीमें गिनी जाती हैं।

तालस्तायका जन्म १ सितम्बर सन १८२८ को, मास्कोसे २०० किलोमीतरकी दूरीपर तुलाके समीप "यास्नाया पोल्याना" नामक अेक जागीरमें हुआ था। अुनकी माता, मारिया निकोलायेवना वोलकोन्स्काया, अुनको दो वर्षका ही छोड़कर चल बसी थी। अुनके पिता ग्राफ निकोलायेविच अिलीच तालस्तायकी भी मृत्यु अुनकी नौ वर्षकी आयुमें ही हो गअी थी। अिसलिअे भावी महान् लेखक तालस्तायके भरण-पोषणका भार अुनकी अेक दूर-सम्बन्धी महिला येरगोलस्काया पर पड़ा।

अपना अधिकतर जीवन तालस्तायने अपने गाँव यास्नाया पोल्यानामें ही बिताया। अुसे अुन्होंने अपनी मृत्युके केवल दस दिन पहिले ही छोड़ा था। १८४४ में वह कजान विश्वविद्यालयमें दाखिल हो गअे, परन्तु विश्व-विद्यालयकी तत्कालीन शिक्षा पद्धति अुनको सन्तुष्ट न कर सकी। अिसलिअे १८४७ में बिना विद्या-अध्ययन समाप्त किअे ही कजान छोड़कर वापिस यास्नाया पोल्याना लौट आअे। वहाँ आकर तालस्ताय अपने किसानोंका जीवन सुधारनेमें लग गअे। साथ-साथ विद्या-अध्ययनका काम भी जारी रखा। विशिष्ट साहित्यका अनुशीलन कर अुन्होंने अपने ज्ञानकी वृद्धि की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८५१ में वह स्वेच्छासे काफकाज चले गअे और वहाँ जाकर सेनामें भरती हो गअे। वहाँ अुन्होंने तीन वर्ष तक युद्धमें भाग लिया। यहींपर अुन्होंने अपनी कथा "बचपन" "लड़कपन" और युद्ध-विषयक अन्य कथाओंकी रचना की। "लड़कपन" १८५२ में अेक पत्रिका "सोव्रेमैन्निक" (समकालीन) में प्रकाशित हुअी। अिससे तालस्ताय रूसके शक्तिशाली लेखकोंमें गिने जाने लगे। अिसके पश्चात् अुनकी कथा "लड़कपन" और अन्य युद्ध-विषयक कथाओंने साहित्य-क्षेत्रमें अुनकी स्थितिको और भी सुदृढ़ बना दिया। मानव-आत्मा तथा बच्चों और बूढ़ोंके भीतरी जीवनके सूक्ष्मसे सूक्ष्म, प्रायः परस्पर विरोधी, पहलुओंको अपनी पैनी दृष्टिसे गहनतापूर्वक देखते और अुनको सुन्दरतापूर्वक चित्रण करनेकी क्षमता अुनकी अिन पहिली कृतियोंसे ही स्पष्ट हो चुकी थी।

काफकाज और तत्पश्चात क्रीमिया-युद्धमें स्वयं भाग लेनेके कारण तालस्तायके पास युद्ध और युद्ध-जीवन विषयक प्रचुर सामग्री अेकत्रित हो चुकी थी। काफकाजकी छाप जो अुनपर पड़ी अुसका चित्रण अुन्होंने अपनी कथा "नाबेग" (आक्रमण) और "सबका लेसा" (जंगलकी कटाअी) में किया है। अिन कथाओंमें युद्धका वर्णन तालस्तायने अपने ही ढंगपर किया है। वह युद्धके बाहरी रूपके वर्णनकी ओर अितना ध्यान नहीं देते थे, जितना कि अिस बातके वर्णनमें कि युद्धके वातावरणमें लोग कैसा व्यवहार करते हैं और किस स्वभावका प्रदर्शन करते हैं। अिन कथाओंमें और बादमें "युद्ध और शान्ति" में वास्तविक नायक अैसे साधारण और सरल लोग हैं जिसमें किसी प्रकारका बाहरी साहस दिखाअी नहीं पड़ता। रूसी सिपाहीकी दिलेरीका वर्णन करते हुअे तालस्ताय "जंगलकी कटाअी" नामक कथामें लिखते हैं: "रूसी सिपाहीकी दिलेरी दक्षिणके सिपाहियोंकी भाँति नहीं जो अेकदम भभक अुठती है और फिर तुरन्त ठण्डी पड़ जाती है। रूसी सिपाहीके साहसको जगाना भी अुतना ही कठिन है जितना फिर अुसको दबाना, अुसको जगानेके लिअे न तो युद्धके नारों, चीखों, गीतों और न ही ढोल अित्यादि बजानेकी आवश्यकता है। अिसके विपरीत अुसको जागनेके लिअे आवश्यकता है शान्तिकी, व्यवस्थाकी, तनावके सर्वथा अभावकी।"

काफकाजसे लौटनेपर तालस्तायको डैन्यूब सेनामें भेज दिया गया जहाँ तुर्कोंके साथ युद्ध हो रहा था। वहाँसे १८५४ में अुनको क्रीमिया भेज दिया गया। जहाँ अुन्होंने विख्यात सेवास्तापोलके बचाव-युद्धमें भाग लिया। स्वयं तालस्तायने भी अिस युद्धमें बड़ी वीरता दिखाअी। अेक माससे भी अधिक समयतक अुन्होंने अेक बड़े खतरनाक स्थानपर काम किया। सेवास्तापोलके घेरेका सुन्दर वर्णन अुन्होंने अपनी तीन कथाओं "सेवास्तापोल दिसम्बर १८५४ में" "सेवास्तापोल मअी १८५५ में" और "सेवास्तापोल अगस्त १८५५ में" किया है। युवक लेखककी अिन्हीं कृतियोंको देखकर तुर्गन्येवने भविष्य-वाणी की थी "यह मदिरा अभी नअी है। परन्तु जब यह तैयार हो जावेगी तो अिससे अेक अैसा पेय निकलेगा जो सर्वथा देवताओंके अुपयुक्त होगा।"

नवम्बर १८५५ में तालस्ताय पीतरबुर्ग आ गअे, जहाँ सर्वप्रथम अुन्हें साहित्यिक वातावरण मिला। वहाँ अुनका परिचय रूसके सुप्रसिद्ध लेखक तुर्गन्येव, नेक्रासोव, गोंचारोव, चैर्नेश्येवस्की आदिसे हुआ। अेक ही वर्षके भीतर अुन्होंने अपनी तीसरी कथा "जकनी" और अन्य कथाअें "तूफान", "जमींदारकी सुबह" आदिकी रचना की। "जमींदारकी सुबह" में तालस्तायने दास किसानोंकी हालतका बड़ा मार्मिक और सच्चा चित्र खींचा है। अिस कथाके बारेमें चैर्नेश्येवस्कीने लिखा था कि "अिसमें न केवल किसानोंके बाहरी जीवनकी प्रत्युत अुनका विभिन्न वस्तुओंकी ओर दृष्टिकोण क्या था अिसका भी अद्भुत और कलात्मक चित्र मिलता है। वह अुनकी आत्मामें प्रविष्ट हो गया है। अुसके किसानकी भाषामें सजावट नहीं, वाक्चातुर्य नहीं। किसानकी बुद्धि और समझका तालस्तायने वैसा ही सच्चा तथा यथार्थ वर्णन किया है जैसा कि रूसी सिपाहीका। किसानकी झोपड़ीका वह अुतना ही अभ्यस्त और परिचित था जितना कि कजाक सिपाहीके तम्बूका।"

नवम्बर १८५६ में तालस्तायने नौकरीसे अिस्तीफा दे दिया और विदेश यात्राको चले गअे। विदेशमें भी अुन्होंने अपनी कथा "कजाक" लिखनेका काम जारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखा। जुलाअी १८५७ में वह वापिस रूस लौट आअे। अब वह कभी मास्कोमें और कभी यास्नाया पोल्यानामें रहने लगे। अिसी दौरानमें अुन्होंने अपनी कथा "तीन मृत्युअें" और "अेलबर्ट" समाप्त कीं और "कजाक" लिखनेका काम बराबर जारी रखा। "तीन मृत्युअें" कथामें मालकिन, किसान और पेड़की मृत्युका वर्णन है। मालकिनका जीवन प्रकृतिसे बहुत दूर है--अतः अुसकी मृत्यु घृणापूर्ण और दयनीय है। किसानका जीवन प्रकृतिके सन्निकट है—अतः अुसकी मृत्यु शान्तिपूर्ण और व्यावहारिक है। सबसे सुन्दर मृत्यु है पेड़की क्योंकि वास्तवमें वह मृत्यु नहीं है, परन्तु अमर प्रकृतिके प्रसन्नतावर्धक जीवनको नअे सिरेसे प्राप्त करना है। तालस्तायके विचारमें वे व्यक्ति धन्य हैं जिनका प्रकृतिसे अधिक सम्बन्ध है और जो अुसके नियमोंका पालन करते हैं। अुनका जीवन सुन्दर और बुद्धिपूर्ण है। अिसके विपरीत प्रकृतिके नियमोंका अुल्लंघन करनेवालोंका जीवन मिथ्या है, दुर्बल है और भीतरसे खोखला है। यही विचार अुनकी अिन कृतियोंका आधार है।

तालस्तायने महसूस किया कि अल्पसंख्यक अभिजातवर्ग (Nobility) तथा बहुसंख्यक श्रमिक लोगोंके जीवनमें अेक भारी दरार है। जमीदारोंकी हालत देखकर वह व्याकुल हो अुठा। अुसने निश्चय किया कि अिसको दूर करनेका केवल अेक अुपाय है और वह है अुनकी शिक्षा। अिसलिअे किसानोंको शिक्षा देना अुसने अपने जीवनका अेक ध्येय बना लिया। यास्नाया पोल्यानामें अेक स्कूल खोल दिया गया जहाँ गरीब किसानोंके बच्चोंको वह स्वयं पढ़ाते थे।

१८६० में तालस्ताय फिर विदेश गअे। अिस बार अुनकी विदेश यात्राका अुद्देश्य था पश्चिमी यूरोपकी शिक्षा पद्धतिका अध्ययन करना। वहाँ अुन्होंने बहुतसे स्कूल देखे, परन्तु वहाँकी शिक्षा-पद्धतिसे वह असंतुष्ट ही रहे। अुन्होंने "स्वतंत्र शिक्षा" के विचारको अपना आधार बनाया जिसमें विद्यार्थीकी रुचिको स्वाभाविक ढंगसे जागृत करने (न कि अुसपर किताबोंका बोझ लादने) का ध्येय मुख्य था। अुसका ढंग था स्वतन्त्र वाद-विवाद। अिसकी ओर बहुतसे शिक्षक भी आकृष्ट हुअे। अपने शिक्षा सम्बन्धी सिद्धान्तोंके प्रचारके लिअे वह "यास्नाया पोल्याना" नामक अेक पत्रिका निकालने लगे।

जब तालस्ताय विदेशसे रूस लौटे तो दास-प्रथाका अन्त हो चुका था, परन्तु किसानोंकी हालत फिर भी दयनीय थी। तालस्तायको सदा अुनकी ही चिन्ता सताती रहती थी। अुन्होंने अुनका अुद्धार करनेका बीड़ा अुठा रखा था। परन्तु अेक वर्षके भीतर ही तालस्तायको यह शुभ-कार्य छोड़ देना पड़ा, क्योंकि राजदरबारी अब अुनसे बुरा व्यवहार करने लग गअे थे। अुन्होंने अुनपर अिलजाम लगाया कि वह राजदरबारियोंका भला न सोचकर केवल किसानोंका ही भला चाहते हैं। तालस्तायके काममें तरह-तरहकी रुकावटें डाली जाने लगीं, जिनसे आखिर तंग आकर अुन्हें अपना काम बंद करना पड़ा। सरकार अुनको संदेहकी दृष्टिसे देखने लगी। १८६२ में अुनकी अनुपस्थितिमें "यास्नाया पोल्याना" की तलाशी ली गअी, परन्तु वहाँसे पुलिसको कुछ न मिल सका।

१८६२ में तालस्तायने मास्कोके अेक डाक्टरकी कन्या सोफिया आन्द्रेयेवना बेरससे विवाह कर लिया। परिवारिक जीवनसे भी अुनको कोअी शान्ति न मिली। अिसलिअे फिरसे अुन्होंने साहित्यके कामको ही अपनाया। "कज़ाक" कथा जो वह बहुत समय पहिलेसे ही लिखते आ रहे थे अब समाप्त की। अुनकी कथा "पोलीकूशका" भी अुसी समय प्रकाशित हुअी। "कजाक" तालस्तायकी अेक काव्यपूर्ण कृति है। अिस कथामें अुत्तरी काफकाजकी प्रकृति तथा जनताका बड़ा सुन्दर वर्णन है। चाचा येरोशका, कज़ाक सुन्दरी मारियान्का, कज़ाक लूकोशका प्रकृतिके स्वतंत्र और सुदृढ़ सपूत हैं। अुनमें वह आत्मिक विपर्यता नहीं जो राजधानी निवासी अभिजात वर्गसे सम्बंध रखनेवाले ओलेनमें पाअी जाती है। ओलेन स्वयं अुन लोगों जैसा स्वतंत्र और सरल जीवन बिताना चाहता है। वह अुनसे घुल-मिल जानेका प्रयास करता है, परन्तु असफल रहता है। वह यहाँ अजनबी है। मारियान्का अुसके प्रेमका कोअी अुत्तर नहीं देती। हताश वह कज़ाकोंसे बिदाअी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेता है और अपने पुराने अभ्यस्त शहरी जीवनको फिरसे अपनानेके लिअे वापिस राजधानी लौट जाता है।

"पोलीकूशका" में भी अेक दास किसानकी दुखान्त कथाका वर्णन है। "जमींदारकी सुबह" की तरह अिस कथामें भी जमींदारोंकी ओरसे दास-किसानोंके प्रति सहायताका झूठा घमण्ड दिखाया गया है। अिस कथाको पढ़कर तुर्गन्येवने लिखा था : "पोलीकूशका पढ़ी...अिस अुत्कृष्ट प्रतिभासे चकित हुआ...तुम सचमुच ही अेक कलाकार हो ! कलाकार ! ! "

अधिकारी वर्गके भीतरी खोखले और भद्दे जीवनका सुन्दर तथा साहसपूर्ण वर्णन तालस्तायने अपनी कथा "खोलस्तोमेर" में किया है। अिस कथामें अेक घोड़े खोलस्तोमेरके जीवनका वृत्तान्त है और साथ-साथ अुसके बारी-बारीसे होनेवाले मालिकोंका भी चित्र खींचा है। खोलस्तोमेर अुन सब रूढ़ियों और अंधविश्वासोंसे अनभिज्ञ है, जिनके कारण लोगोंने अपने जीवनको भ्रष्ट बना रखा है। अुसको जायदाद अर्थात मालकीयत पद्धति व्यर्थ और क्रूर दिखाअी पड़ती है। तालस्तायके विचारके अनुसार प्रकृतिके नियमोंका पालन करते हुअे अुस घोड़ेका जीवन आदिसे अन्त तक सही है, परन्तु अुसके मालिकोंका जीवन भ्रष्ट, तुच्छ, और दयनीय है।

"युद्ध और शान्ति"

सन् १८६३ के अन्तमें तालस्तायने अपना अुपन्यास "युद्ध और शान्ति" लिखना आरम्भ किया। अिस वृहद कृतिकी रचनामें पाँच वर्षसे अधिक समय लगा। यह साधारण अुपन्यास न होकर गद्यमें अेक महाकाव्य है और विश्व साहित्यका श्रेष्ठतम रत्न है। "युद्ध और शान्ति" के बारेमें बातचीत करते हुअे तालस्तायने गोर्कीसे स्वयं कहा था : "बिना कृत्रिम विनीत-भावसे कहता हूँ—यह अिल्यादा है"। यह कहना और भी अुपयुक्त होगा कि यह अुपन्यास रूसी साहित्यका अिल्यादा ही नहीं, प्रत्युत ओडेसा भी है।

"युद्ध और शान्तिका समय अुन्नीसवीं शताब्दीके पहले बीस-पच्चीस वर्ष है। अुपन्यासके प्रारम्भमें रूसी समाज और अुसके नैतिक पतन तथा खोखलेपनका चित्रण किया गया है। बादमें राजनीतिक और युद्ध-क्षेत्रमें ले जाता है और आओस्तर-लित्स्कीके रणका दृष्य हमारे सामने आता है। अिसके पश्चात् शान्ति कालका चित्र खींचा जाता है। फिर रूस और नैपोलियनमें युद्ध छिड़ जाता है। अब रूस ही युद्ध क्षेत्र है, नैपोलियन रूसकी सीमा पार करके आगे ही आगे बढ़ा चला आता है। मास्कोके पास बोरोदीनापर घमासान लड़ाअी होती है। नैपोलियन मास्कोपर कब्जा कर लेता है और रूसी सेना मास्को खाली कर देती है परन्तु हथियार नहीं डालती। नैपोलियनका भाग्य अुलट जाता है और अुसकी सेना वापिसीके समय सर्दी और बर्फके तुफानों और भुखमरीके कारण नष्ट हो जाती है। नैपोलियनकी बरबादी रूसमें वीरताके बीज बो जाती है और देशमें राष्ट्रीयता जागृत हो अुठती है।

"युद्ध और शान्ति" के विषयमें तालस्तायने स्वयं लिखा है : "अिस अुपन्यासमें मैंने जनताका अितिहास लिखनेका प्रयास किया है।" और सचमुच "युद्ध और शान्ति" की वास्तविक नायक रूसी जनता ही है जो अपने देशकी रक्षाके हित नैपोलियनसे जान हथेलीपर रखकर लड़ी। स्वयं जनताने ही अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षा की। रूसियोंके दिलोंमें देश-प्रेम कूट-कूटकर भरा है। वह अपने देशकी स्वतन्त्रताके लिअे अपना सब कुछ निछावर करनेके लिअे तैयार है। सच पूछिअे तो बोरोदीनाके युद्धमें रूसी जनता ही की नैतिक विजय हुअी थी। रूसी सेनाके आधे सिपाही मारे जा चुके थे, परन्तु फिर भी वह नैपोलियनकी सेनाका डटकर मुकाबला कर रहे थे। नैपोलियनकी सेनापर रूसी सेनाके नैतिक स्तरका सिक्का बैठ चुका था। अिसके विपरीत नैपोलियनको अपनी सेनाकी नैतिक दुर्बलताका भी आभास हो चुका था। यही था मुख्य कारण नैपोलियनकी अन्तिम पराजयका। नैपोलियनकी सेना मास्को तक पहुँच तो गअी थी परन्तु बोरोदीनाकी लड़ाअीका घाव अुसके सर्वनाशका कारण बना। रूसियोंने मास्कोको भी अिसलिअे ही छोड़ा था कि बाहरसे नैपोलियनकी सेनापर घातक आक्रमण किअे जावें। "रूसी जनताके लिअे यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न ही नहीं अुठता था कि नैपोलियनकी अधीनता स्वीकार करनेपर अुनका भला होगा अथवा बुरा। अुनके लिअे नैपोलियनके अधिपत्यमें रहना किसी मूल्यपर भी सम्भव नहीं था।" रूसी जनताकी अिस भावनाका जो फल हुआ वह रूसी अितिहासमें सदा अमर रहेगा।

जनताके अुत्साह और वीर भावनाने बड़े-बड़े जर्नैलोंको जन्म दिया। तालस्ताय लिखते हैं कि केवल वही जर्नैल सफल होता था और शत्रुपर विजय प्राप्त कर सकता था जो जन-समूह अर्थात् साधारण सिपाहियोंकी भावनाओंका सम्मान करता था। कुतूजोव अेक अैसा ही जर्नैल था, जो जन-भावनाकी सजीव मूर्ति था।

कुतूजोव मृत्यु पर्यन्त कहता रहा कि बोरोदीनाकी लड़ाअी ही रूसी सेनाकी महत्वपूर्ण विजय थी। अुसने अेक कठिन समयमें सेनाकी बागडोर सम्भाली थी। अुसने जनताकी अिच्छाओंके अनुरूप ही बोरोदीनाकी लड़ाअीका निर्देशन किया। अुधर जनताने भी अपनी सारी शक्ति लगा दी थी।

कुतूजोव जानता था कि विजय रूसी जनताकी वीरताके कारण ही हुअी है। अुसको भली भाँति पता था कि रूसी सेनाका नैतिक स्तर नैपोलियनकी सेनासे कहीं बढ़कर था। बार्कलाया-डी-तौल्लीके आदेशानुसार अेक जर्नैल बौलत्सोगेनने कुतूजोवको रिपोर्ट दी कि "बोरोदीनामें सब महत्वपूर्ण स्थानोंपर शत्रुका कब्जा हो चुका है और कि रूसी सेनाके पाँव अुखड़ गअे हैं। अुसमें भाग-दौड़ मच गअी है।" अुस समय कुतूजोवने क्षुभित होकर कहा था : "आप कैसे..... आपका यह साहस क्योंकर हुआ .... श्रीमान्, आपको यह कहनेका साहस क्योंकर हुआ ? आप कुछ भी नहीं जानते। मेरी ओरसे जर्नैल बार्कलायाको कह दीजिअे कि अुसकी रिपोर्ट सरासर गलत है और अप्रमाणित है। युद्धकी वास्तविक स्थितिका ज्ञान अुसकी अपेक्षा प्रधान-सेनापतिके नाते मुझे अधिक है। मैं सब कुछ भली भाँति जानता हूँ।" बौलत्सोगेन अुत्तरमें कुछ कहने ही वाला था कि कुतूजोवने अुसे टोकते हुअे कहा ! "बाअीं ओर शत्रु परास्त हो चुका है। दाअीं ओरसे अुसे मार भगा दिया गया है..... कृपया बार्कलायाके पास जाकर कहो कि प्रातःकाल ही शत्रुपर अवश्य ही आक्रमण कर दिया जाअे।.....शत्रु अब पूर्णतः परास्त हो चुका है और प्रातः ही अुसे रूसकी पवित्र भूमिसे भगा देना है।"

कुतूजोवके मास्को छोड़नेका अुद्देश्य भी रूसकी रक्षा ही करना था। अुसका दृढ़ विश्वास था कि रूस छोड़नेका अर्थ रूसी सेनाका हथियार डालना कदापि नहीं हो सकता। जब अुसको पता लगा कि नैपोलियन मास्कोसे चला गया है तो वह अिस सूचनासे अितना प्रसन्न हुआ कि अुसका गला रुंध गया। वह अिस प्रसन्नतासे रो पड़ा कि रूस अब सुरक्षित है।

तालस्तायने नैपोलियनका चित्र कुतूजोवके बिल्कुल विपरीत खींचा है। वह निरंकुश है, आत्मप्रेमी, आत्म-प्रशंसी, आत्मश्लाघी है। किसीका जरा भी अुत्कर्ष सहन नहीं करता। वह केवल अपने आपपर ही विश्वास करता है। वह अपनी सफलताओंसे फूला नहीं समाता और अपने आपको ही अितिहासकी गतिविधिका संचालक मानता है।

देशप्रेमकी शक्ति और बल जिसका रूसी जनताने १८१२ के युद्धमें प्रदर्शन किया और जिसकी मूर्ति स्वयं कुतुजोव था, आन्द्रेअी बालेकोत्स्की, पअेर, बेजूखोव और नाताशा रोस्तोवायामें भी कूट-कूटकर भरी है। वे सब देशप्रेमको सर्वोपरि मानते हैं।

तालस्तायका विश्वास था कि अितिहासकी रचना अेक व्यक्ति नहीं; प्रत्युत सारी जनता मिलकर करती है। अिन विचारोंको वह कुतूजोव द्वारा व्यक्त करते हैं। तालस्ताय यह भी प्रकट करते हैं कि भाग्य पूर्व निर्धारित है और अिसको टालना असम्भव है। अिस नियतिवादके होते हुअे भी तालस्तायने घटनाओं और व्यक्तियोंका अितिहास-सम्भव चित्र प्रस्तुत किया है। स्त्री पात्रोंमें नाताशा रोस्तोवाके चरित्रका विकास बड़े ध्यानसे दिखाया गया है। वह अुसकी सुलभ सुन्दरता, शालीनता, स्वाभाविकता, और जीनेके आनन्दका बड़ा सुन्दर वर्णन करते हैं। नाताशा भावुक और प्रकृतिके निकट है। ग्राम-जीवन और लोक-संगीतसे अुसे प्रेम है। अुसके अुद्देश्य और आदर्श परिवार और समाज दोनों हैं। हम अुसे परिवारके साथ मास्को छोड़नेकी तैयारीमें अत्यन्त व्यवहारपटु और कुशल देखते हैं। अिसके साथ-साथ अुसके साहस और देशभक्तिका भी पता लगता है। बादमें वह विवाहित दिखाअी जाती है और बदली हुअी मिलती है। अुसका जोश कम पड़ गया है किन्तु वह सन्तुष्ट और शान्त है। अुसका सारा ध्यान पति और बच्चोंपर केन्द्रित है।

(शेष आगामी अंकमें)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बलगेरियन कहानी

अेक वकील

—श्री अेलन पैलिन

जिला कचहरी चालू थी; अुसमें गोरेसक गाँवके मिटरी मैरिनिनका केस चल रहा था। अुसके पड़ोसी पीटर मैरिनिनने अुसपर अपने घोड़ेकी हत्याका आरोप लगाया था।

गर्मीका दिन था। सड़ककी ओर खुली हुअी खिड़कियोंसे थोड़ी-थोड़ी रोशनी और हवा आ रही थी। कचहरीके भीतर काफी गर्मी थी और वह करीब-करीब खाली थी। केवल दो, तीन किसान अिस केसपर अपनी गवाही देनेके लिअे चुपचाप अपनी-अपनी जगहोंपर बैठे हुअे केसकी कार्यवाहीको गौरसे सुन रहे थे।

मुजरिम द्वारा मुकर्रर वकील केसकी सफाअीपर बोल रहा था। वह ठिगना, गठीले बदनका आदमी था। अुसकी आँखें प्रेसीडेन्टकी ओर लगी हुअी थीं। वह समय-समयपर अपनी जेबसे हाथ निकालकर मुजरिमकी ओर भी संकेत करता जाता था। वह अपने कथनसे लोगोंको प्रभावित करनेका पूरा प्रयत्न कर रहा था। अुसकी आवाज तीखी थी; अैसा लगता था मानो फटे बाँससे निकल रही हो। वह चिल्ला-चिल्लाकर आसमानको संकेत करनेके लिअे छतकी ओर देखता था। लोगोंका ध्यान आकर्षित करनेके लिअे अपनी छाती अुभार कर और हाथ हिला-हिलाकर प्रत्येक बातको स्पष्ट करनेका प्रयत्न कर रहा था। मगर अुसके अितना सब करनेके बावजूद भी जजोंके चहरोंपर अुसे अपने कथनके प्रभावका कुछ भी आभास नहीं दिखाअी पड़ रहा था जिससे अुसे आशाकी कोअी झलक मिलती।

प्रेसीडेन्ट चिन्तामग्न थे। अुनके पास बैठे हुअे जजोंमेंसे अेक जज घोड़ोंकी तस्वीर बना रहा था और दूसरा जज निपुण संगीतज्ञ था जिसने अर्धाल्प बनाकर सामने रख छोड़ा था और अुसे पैन्सिलसे बढ़ा रहा था।

मुजरिम मिटरी मैरिनिन छोटे कदका भूरे बालोंवाला किसान नंगे पैरों हाथमें हैट लिअे खड़ा था। वह अपने वकीलकी लम्बी-चौड़ी स्पीचका अेक शब्द भी न समझ सका था। अुसका ध्यान तो खिड़कीके शीशेपर फड़फड़ाती हुअी मक्खीपर था जो कि निकल नहीं पा रही थी। अेकाअेक वकील जब बोलते-बोलते साँस लेनेके लिअे रुका तो मिटरी जल्दीसे कचहरीके चपरासीके पास गया जो कि अपने नाखून दरवाजेसे साफ कर रहा था और अुससे जोरसे बोला :

"ये मेरे दोस्त अिस मक्खीको बाहर निकाल दो। यह बहुत देर तक फड़फड़ा चुकी है।"

जजोंने अुसकी ओर मसखरे और दयाके भावसे देखा। प्रेसीडेन्टने अपनी घन्टी बजाकर कहा :

मिटरी मैरिनिन। तुम यहाँ अेक मुजरिमकी हैसियतसे हो। तुमसे खामोश रहनेकी अुम्मीद की जाती है।

"ओह, चली गअी," मिटरीने खिड़कीकी ओर अिशारा करके कहा।

जज लोग फिरसे हँस पड़े। वकीलने अपने मुव्वकिलकी ओर देखा और मुस्कराकर कहना शुरू किया :

"मेरे लॉर्ड, जो कुछ भी हुआ है वह अैसी परिस्थितियोंमें हुआ है जिसकी ओर कि हमें पहले ध्यान देना चाहिअे। दूसरे शब्दोंमें अुस समयकी मनोवैज्ञानिक स्थितिका अध्ययन करना चाहिअे। अेक रातकी कल्पना कीजिअे जो कि कोयलेके समान काली हो...और वह भी अेक गांवमें। मेरा मुव्वकिल अपने खेतके सामनेवाले आँगनमें लेटा हुआ था। वह अपनी सब्जियों और गेहुँओंकी रखवाली कर रहा था जिसको कि अुसने अपना खून पसीना अेक करके बोया था और अपनी चीजोंकी रखवाली करनेका तो सभी आदमियोंको अधिकार है। अेक तरहसे तो वह अपने ही कड़े परिश्रमकी देखरेख कर रहा था। वहाँ वह अपने कठिन परिश्रमसे थका हुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेटा था। वह अुस समय सब कुछ भूल गया था। गवाहोंने अुसकी ओर मूक दृष्टिसे देखा, सब कुछ,.. अपनी औरत, बच्चों और यहाँ तक कि स्वर्गको भी जैसा कि कवि लोगोंको हुआ करता है। कड़े परिश्रमके कारण ही वह गहरी नींदमें सोया हुआ था। मगर... मगर अेकाअेक मेरे लॉर्ड, वह क्या देखता है वास्तवमें क्या? शब्द अुसका वर्णन नहीं कर सकते हैं। मनुष्यकी जबान खामोश हो जाती है। सच...भौंचक्का होकर मेरा मुव्वकिल अुठ बैठता है और चारों ओर देखता है। ओह! भयावना दृश्य...मेरे मुव्वकिलकी जिन्दगी अुस समय अेक कच्चे धागेपर लटक रही थी। अुसके सिरपर अेक भयानक राक्षस अुसको निगलनेके लिअे खड़ा था। अैसी परिस्थितिमें यह स्वाभाविक ही था कि मेरा मुव्वकिल अपना होश खो बैठा। अुसने देखा कि राक्षसकी जीभसे आगकी लपटें निकल रही हैं और अुसकी खूनी आँखें प्रतिहिंसासे भरी हुअी हैं। मेरा मुव्वकिल अेकदम घबड़ा गया कि वह कहाँ है और क्या हो रहा है। नींदमें भरे ही अुसने अपनी बन्दूक अुठाअी और ठांय-ठांयकी आवाज गूँजी। राक्षस गिर पड़ा। फिर दुबारा अुठकर अपने पूरे जोरसे मेरे मुव्वकिलके पैरोंकी ओर झपटा और भूसेके गट्ठरमें जा गिरा और वहीं दर्दसे मर गया। मेरे लॉर्ड; मैं आपसे पूछता हूँ कि अिसमें मेरे मुव्वकिलकी क्या गल्ती है? कि वह राक्षस और कोअी नहीं किसी पीटर मैरिनिनका घोड़ा निकला। अेक घोड़ा...क्या कहा मैंने? गरीब जानवर जिसकी कि कीमत मुश्किलसे कुछ होगी। अिसमें क्या गल्ती है? वास्तवमें क्या गल्ती है? अिसलिअे मेरे लॉर्ड सोचिअे और फिर अिस केसपर गौर कीजिअे। दो सिद्धान्तोंपर मनन कीजिअे। पहला अीश्वरका सिद्धान्त जो कि हम सबपर लागू है कि हम अपनी रक्षा करें और दूसरा मनुष्योंका सिद्धान्त जो कि क्रियाओंको अपराध और निरअपराधमें विभाजन करता है। अिन दोनों सिद्धान्तोंके अनुसार मेरा मुव्वकिल निरपराध है।

वकीलने चारों ओर विजयकी दृष्टिसे देखा। और माथेपरसे पसीनोंकी बूँदोंको पोंछकर अपने मुव्वकिलकी ओर मुस्कराकर नजर डाली।

जज लोग आपसमें मश्वरेके लिअे फुसफुसाने लगे। प्रेसीडेन्टने घण्टी बजाकर आवाज दी।

"मिटरी मैरिनिन," मुजरिम।

"हाजिर हूँ," मिटरीने सिपहसालारकी आवाजमें अुत्तर दिया।

"तुम अिस विषयमें क्या कहना चाहते हो?"

"कौन मैं?"

"हाँ तुम, दरअसल तुमसे ही तो मैं बात कर रहा हूँ।"

"अच्छा, तो मैं यह कह सकता हूँ कि यह कैसे हुआ।"

"अच्छा, तो यह ठीक-ठीक बताना कि यह कैसे हुआ?"

"घोड़ेके विषयमें," मिटरीने चिल्लाकर कहा। वह मेरे खेतमें अक्सर आ जाता था। मैंने कअी बार पीटर अपने पड़ोसीसे कहा कि अपने घोड़ेको तालेमें बन्द करके रखो नहीं तो किसी दिन भेड़िये अिसको खत्म कर देंगे। अिसने मुझे बहुत नुकसान पहुँचाया है....हाँ.... ना? यह मेरे बगीचेको रौंदता था। दिन छिपते ही यह मेरे खेतकी ओर आया और मुझे बरबाद कर दिया। मुझे और किसी चीजकी अुतनी परवाह नहीं थी जितनी कि काशीफलकी। मेरे लॉर्ड, मैंने सोचा कि अपने दिलकी सच्ची बात आपको बता दूँ। यह काशीफल ही था जिसके कारण मुझे अुसपर अितना गुस्सा आया। आपने कभी अुतने बड़े-बड़े काशीफल नहीं देखे होंगे। अुस बदमाशने मुझे बरबाद कर दिया। मैं खड़ा-खड़ा देखता रहा और मैंने कहा मैं तुझे अपने काशीफलको बरबाद करनेका अच्छा सबक सिखा दूँगा। मैंने अपनी बन्दूक भरी और अुसके लिअे अिन्तजार करने लगा। आधी रातको जब कि मैं सोनेके लिअे जा रहा था यह कूदकर मेरे खेतमें आया और अुस बदमाशसे क्या अुम्मीद थी....

"अच्छा तब फिर क्या हुआ?" प्रेसीडेन्टने पूछा।

"अच्छा, तो मैंने अुसे अपनी बन्दूकसे मार डाला।"

"और तब?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब मैं और मेरी पत्नी अुसे घसीटकर गाँवके अन्त तक ले गअे। हम लोगोंने अुसे भूसेमें दफना दिया और अूपरसे खूब ढक दिया मगर....

वकीलने अपने मुव्वकिलकी सीधी सादी कहानी सुनी और गुस्सेसे भनभना अुठा। अुसने चाहा कि वह अिशारेसे अुसे चुप रहनेको कहे मगर मिटरी मानों अपने वकीलको भूल गया और केवल प्रेसीडेन्टकी ओर देखता रहा।

"अच्छा तो तुम्हारे विचारसे घोड़ेकी क्या कीमत होगी?" प्रेसीडेन्टने पूछा।

"मुझे क्या मालूम कि अुसकी क्या कीमत होगी? मगर वह अच्छा घोड़ा था, मिटरीने अुत्तर दिया।

वकील गुस्सेसे अुठा और अुसने अपने सारे कागजात अुसके पैरोंपर फेंक दिअे।

जजोंने आपसमें सलाहके लिअे कचहरीकी बैठक बरखास्त कर दी। वकीलने मिटरीको बाहर घसीटकर ले जाकर गुस्सेसे चिल्लाकर कहा :

"तुम बेवकूफ हो। जब तुम्हें झूठ बोलना नहीं आता था तब तुमने वकील क्यों मुकर्रर किया," और गुस्सेमें भरा हुआ वह वहाँसे चला गया।

[अनुवादिका–श्रीमती कमल आर्य]

पन्द्रह अगस्त

—डॉ० कन्हैयालाल सहल

नमस्कार अुन नअे-पुराने
सभी क्षणोंको
अिस दिनके जो––
स्वतन्त्रताका ताना-बाना
अिन्हीं क्षणोंके
धागोंसे ही
बुना गया था।
नमस्कार अुन नींव-प्रस्तरों-
को, अदृश्य जो
स्वतन्त्रताका महल अनोखा
भव्य, अुन्हींपर
'चिना' गया था।
नमस्कार अुन नव कलियोंको
बिना खिले ही
जो मुरझाकर
स्वतन्त्रताकी बलिवेदीपर
बिखर गअी थीं––
आज अुन्हींकी सुरभि-सुगन्धित
स्वतन्त्रता-अुद्यान हमारा
गहगह-गहगह महक रहा है।
नमस्कार ... ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी शब्दोंकी व्युत्पत्ति

—श्री बेचरदास दोशी

बहुत समयसे मेरे मनमें अैसा विचार आता रहा है कि जिस प्रकार मैंने कुछ गुजराती शब्दोंकी व्युत्पत्तिके सम्बन्धमें 'शब्दोना वंशो' अिस नामसे 'नवजीवनकी 'शिक्षणपूर्ति'में तथा 'शिक्षण और साहित्य' में चर्चा की है ठीक अुसी प्रकार हिन्दी शब्दोंकी व्युत्पत्तिके विषयमें भी चर्चा करूँ। अिसके सम्बन्धमें माननीय पुरुषोत्तमदासजी टण्डन तथा हिन्दी भाषाके प्रसिद्ध पण्डित अंबिकाप्रसादजी वाजपेयी तथा मान्य श्री नाथूरामजी प्रेमीसे भी कअी बार चर्चा चली और अुन महाशयोंने मुझे लिखनेको भी अुत्साहित किया मगर मैं आजतक लिख ही नहीं सका। थोड़े दिन पहले मेरे स्नेही भाअी महेन्द्रकुमारजी जैन मुझसे मिलने आअे। वैसे तो वे मेरे पुराने परिचित स्नेही हैं। वे आजकल दक्षिण हिन्दी प्रचार सभाके अेक विशिष्ट कार्यकर्ता हैं और मद्रासमें त्यागरायनगरमें रहते हैं। मेरी बड़ी पुत्री भी आजकल मद्रासमें ही झवेरी पी. अेच. कन्याशालामें मुख्य शिक्षिकाके पदको संभालती है। भाअी महेन्द्रजी अहमदाबादसे मद्रास जानेवाले थे और पुत्रीके लिअे कुशल समाचार ले जानेके लिअे मेरे घर मिलने आअे थे। अिसी सिलसिलेमें जो कुछ बातें हुअीं अुसमें हिन्दी शब्दोंकी व्युत्पत्तिके सम्बन्धमें भी चर्चा चली। मैंने अपना विचार अुनके पास जाहिर किया तो वे बड़ी खुशीसे मुझसे कहने लगे कि आप जरूर हिन्दी शब्दोंकी व्युत्पत्तिके विषयमें लिखिअे। अिस सम्बन्धमें वर्धाकी राष्ट्रभाषा प्रचार समिति आपको बराबर प्रोत्साहन देगी और अुस संस्थाके मुखपत्र 'राष्ट्र-भारती' म आपके लेखोंको महत्वपूर्ण स्थान मिलेगा।

भाअी महेन्द्रजीके कहनेसे व्युत्पत्ति लिखनेके मेरे पूर्व संस्कार तत्काल अुद्बुद्ध हो गअे और कअी दिनोंसे जो मेरा विचार निष्क्रिय होकर पड़ा रहा था वह सक्रिय हो गया। मैंने महेन्द्रजीको कहा था कि रामचरित मानसकी संशोधित प्रामाणिक पुस्तक पाकर मैं अुसमेंसे ही शब्दोंको लेकर व्युत्पत्तिकी चर्चा करूँगा।

काशी नागरी प्रचारिणी सभाने अपनी ओरसे रामचरित मानसका अेक अच्छा संशोधित ग्रंथ प्रकाशित किया है। अुसको लक्ष्यमें रखकर अिधर व्युत्पत्तिकी चर्चा होगी।

चर्चा आरम्भ करूँ अुसके पूर्व अेक सूचना अवश्य कर देनी चाहिअे कि हिन्दी भाषा, गुजराती भाषा, बंगला भाषा तथा मराठी भाषाका अुपादान कारण अपभ्रंश भाषा है तथा अपभ्रंश भाषाका सीधा सम्बन्ध प्राकृत भाषासे है। प्राकृत शब्दसे तमाम प्रकारकी प्राकृत भाषाअें तथा बोलियाँ समझना चाहिअे अतः अिधर मैं व्युत्पत्तिकी चर्चा करूँगा तब प्रधानतः हिन्दी शब्दोंका सम्बन्ध प्रधानतः अपभ्रंश भाषा तथा प्राकृत भाषासे बताअूँगा और केवल तुलनाके लिअे ही संस्कृत भाषाके शब्दोंका अुपयोग बताअूँगा। पाठक-गण अिस बातको बराबर ध्यानमें रखें कि भारतीय वर्तमान भाषाओंका जितना गहरा सम्बन्ध प्राकृत और अपभ्रंशसे है अुतना कभी भी संस्कृतसे नहीं। वैदिक भाषाका शब्द जब चालू भाषामें आता है तो प्राकृत और अपभ्रंशका सहारा लिअे बिना वर्तमान भाषाका रूप नहीं पा सकता। अतः भाषाके शब्द और प्राकृत अपभ्रंशके शब्द अिन दोनोंके बीच प्रगाढ़ सम्बन्ध जाना जा सकता है। संस्कृत शब्द-गण तो भाषाके शोभारूप हैं परन्तु मूल अुपादान नहीं। मूल अुपादान वैदिक शब्द, तदनन्तर प्राकृत और अपभ्रंश शब्द और बादमें प्राचीन हिन्दी और अर्वाचीन हिन्दी अिस प्रकार वास्तविक क्रम है। जैसे कि—रामचरित मानसके धुनि, आयसु, दादुर, सुमिरि, नाचहिं (प्रथम सोपान बालकांड रामचरित मानस पृ० ३३६) ये विविध शब्द हैं। अिनकी तुलनाके लिअे अनुक्रमसे वैदिक शब्द ध्वनि, आदेश, दर्दुर, स्मृत्वा, नृत्यन्ति बताअे जायँ यह सर्वथा अुचित है। परन्तु जब तक प्राकृत व अपभ्रंश भाषाका आश्रय न लेंगे तब तक धुनि अित्यादि शब्दोंकी अुत्पत्ति जानना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वथा असम्भव है। प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषामें कहीं-कहीं 'व' कारका 'अु' अुच्चारण हुआ करता है जैसे कि सुपिन अथवा सुविण (स्वप्न), अुसह (वृषभ) अिसी अुच्चारण नियमानुसार धुनि (ध्वनि) शब्द हुआ है : धवनि-धअुनि-धुनि। ध्वनि और धुनिके बीच कदाचित अिस प्रकारका क्रम हो। वेदोंमें कअी जगह जहाँ संयुक्त 'व' होता है वहाँ 'व' के पूर्वमें 'अु' कारका प्रक्षेप होता है : तन्वम्-तनुवम्, स्वर्गः-सुवर्गः, विभ्वम्-विभुवम् आअेस-आयस-आदेश, अन्तिम 'अु' प्रथमाके अेकवचनका सूचक प्रत्यय है। प्रा. आअेसो–अप. आअेसु-आयसु, (सं. आदेशः), दद्दुर-दादुर-दर्दुर, सुमरिअ-सुमिरि (स्मृत्वा) प्राकृतमें और अपभ्रंशमें 'सुमर' धातुका सम्बन्धक भूतकृदन्तका रूप 'सुमरिअ' होता है। प्रस्तुत 'सुमिरि' रूपका सम्बन्ध सं. स्मृत्वासे नहीं बैठ सकता। किंतु अप. 'सुमरिअ' से बराबर बैठ जाता है। नाचहिं क्रियापद अन्यपुरुष वा तृतीय पुरुषका बहुवचन है। मूल धातु 'नच्च' है, अुसका तृतीयपुरुष बहुचन 'नच्चंति' होता है परन्तु अपभ्रंश भाषामें तृ० पु० ब० नच्चहिं रूप भी होता है। प्रस्तुत नाचहिं और अप० नच्चहिं के बीचमें जैसा साक्षात् सम्बन्ध है वैसा सं० नृत्यन्तिके साथ नहीं घट सकता। अिस प्रकार थोड़े अुदाहरणोंसे भी स्पष्ट मालूम हो जाता है कि प्राचीन अर्वाचीन हिन्दी शब्दोंका जैसा और जितना घनिष्ठ वा साक्षात् सम्बन्ध प्राकृतसे वा अपभ्रंशसे है अुतना और अैसा संस्कृतसे नहीं। अतअेव हिन्दी शब्दोंकी व्युत्पत्तिकी चर्चामें संस्कृतकी अपेक्षा प्राकृत और अपभ्रंशकी विशेष अपेक्षा रहती है यह बात सर्वथा असंदिग्ध है। अस्तु।

प्रस्तुतमें राम-चरित-मानसके प्रथम पद्यको लेकर थोड़ी बहुत व्युत्पत्ति चर्चा करनी है और आगे अिसी प्रकार अनुक्रमसे राम-चरित-मानसके हरेक पद्यके शब्दोंकी चर्चा होगी।

प्रस्तुतमें जो व्युत्पत्ति चर्चा होगी व अन्तिम ही है अैसा कोअी न समझे, अुसमें भी चर्चाका जरूर अवकाश रहेगा। अतअेव हिन्दी-भाषाके व्युत्पत्ति विशारदोंसे मेरी नम्र प्रार्थना है कि वे सज्जन महाशय अिस चर्चामें जहाँ कोअी त्रुटि हो वा कोअी गलती हो तो वहाँ जरूर सूचना करनेकी मेहरबानी करें।

जेहि सुमिरत सिधि होअि गननायक करिबर बदन।
करअु अनुग्रह सोअि बुद्धिरासि सुभगुन सदन ॥१॥

अिस पद्यमें जेहि, सुमिरत, सिधि, होअि, करअु और सोअि अितने शब्दोंकी व्युत्पत्ति चर्चा आवश्यक है, और जो अन्य शब्द हैं वे संस्कृतसिद्ध वा प्राकृतसिद्ध शब्द हैं अतअेव अिनकी व्युत्पत्ति चर्चा जरूरी नहीं। आगे भी अैसे सिद्ध शब्दोंकी चर्चा न होगी। यह ख्याल बना रहे।

१. **'जेहि'** षष्ठीका बहुवचन है। प्राकृतमें 'ज' शब्दका 'जेसिं' रूप बनता है। और अपभ्रंशमें भी यही रूप प्रचलित है। 'जेसिं' रूप ही 'जेहि' रूपमें परिणत हो गया है। पालिभाषाका 'येंस' और संस्कृत भाषाका 'यषाम्' रूप अिधर तुलनाके लिअे अुपयोगी है। रामचरित मानसमें यद्यपि छपा रूप 'जेहि' है परन्तु सम्भव है कि 'जेहिं' रूप भी वहाँ हो सकता है। संशोधकने वहाँ कोअी पाठान्तर नहीं दिया है अतः 'जेहिं' पाठान्तर असंभवित नहीं।

२. **सुमिरत** शब्द पंचमीका अेकवचन है। अपभ्रंश भाषामें बिना विभक्तिके भी प्रयोग होना सुप्रतीत है। सुमिरत माने स्मृतिसे-स्मरणसे। प्रा. और अप. भाषामें स्मरण अर्थमें 'सुमिर' धातु है। अुसको भाववाचक 'ति' प्रत्यय लगानेसे 'सुमिरति' और अंत्य 'अि' का 'अ' होनेसे 'सुमिरत' (सं. स्मृति)।

३. **सिधि** प्रा. अप. सिद्धि; अुससे सिधि (सं. सिद्धि)।

४. **होअि** प्रा. अप. में सत्ताके अर्थमें 'हो' धातु है। 'हो' धातुका वर्तमानकालमें तृतीय पुरुष अेक वचनमें 'होअि' अथवा 'होअि' रूप होता है। सन्तकवि तुलसीदासजीने अिधर सीधा प्राकृत वा अपभ्रंशके 'होअि' रूपका प्रयोग किया है। 'होअि' का अर्थ है--'होता है' गुजरातीमें 'होय छे' अथवा' थाय छे' (सं. भवति)।

५. **करअु** 'करने' अर्थमें प्रा. अप. 'कर' धातु सुप्रतीत है। अुसका आज्ञार्थ अथवा लोटलकारका तृतीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरुष अेकवचन 'कर+अु=करअु' रूप होता है। 'अु' प्रत्यय है। करअु अर्थात् करो। (सं. करोतु अथवा करतु)।

६. सोअि पालिभाषामें 'क' शब्दका प्रथमा अेकवचन 'को' होता है, और अुस 'को' रूपसे स्वार्थिक 'चि' प्रत्यय लगानेसे 'कोचि' रूप बनता है। प्राकृतमें 'कोअि' रूप होता है। अिस प्रकार 'त' शब्दका प्रथमाका अेकवचन 'सो' होता है और अुसको 'चि' प्रत्यय लगनेसे 'सोचि' रूप होगा और अुससे प्रस्तुत 'सोअि' रूपकी निष्पत्ति है। सोअि माने वही (सं. सः)।

चढ़अि गिरिवर गहन।
जासु सो दयाल द्रवअु ।।

--(रामच. द्वितीय पद्य)

७. चढ़अि आचार्य हेमचन्द्र कहते हैं कि 'आ+रुह' के अर्थमें 'चड' धातुका प्रयोग होता है : आरुहेः चड-वलग्गौ ८।४।२०६। अर्थात् कोअी अति प्राचीन 'चड' धातु देश्य है अुसका प्रा. अप. में तृ० पु० अेकवचनमें 'चडअि' रूप होता है। प्रस्तुत 'चढ़अि' और प्रा. अप. चडअि अुसके बीचमें बहुत कम अन्तर है।

८. जासु प्रा. में 'ज' शब्दका षष्ठी अेकवचन 'जस्स' और 'जास' अैसे दो रूप होते हैं और अपभ्रंशमें 'जासु' रूप भी और अधिक होता है। तुलसीदासजीने अिसी 'जासु' रूपका प्रयोग किया है। अपभ्रंशमें "निच्छअि रूसर जासु" ।८।४।३५८ हेमचन्द्र। (सं. यस्य. पालि यस्स)।

९. सो प्रा. अप. में 'त' शब्दका प्रथमाका अेकवचन 'सो' होता है और अिधर अिसी रूपका अुपयोग किया गया है। (सं. सः पालि सो) देखिअे ६ 'सोअि'।

१०. दयाल दया+आलु=दयालु-दयावाला-दया करनेवाला। 'दयाल' शब्दसे 'दयाकार' शब्दकी भी कल्पना हो सकती है। दयां करोति दयाकारः जैसे कुम्भकारः सुवर्णकारः अित्यादि। अन्तिम 'कार' का कारु-आरु-आलु होकर दयालु बन सकता है और दयालुसे दयाल। मत्वर्थीय 'आलु' और 'आल' प्रत्ययका सम्बन्ध अुक्त 'कार' से जोडा जाय तो अनुचित नहीं; परन्तु अिस विषयमें सादारगणका संवाद मिले तो यह कथन अविसंवादी बन सके।

११. द्रवअु प्रस्तुत रूप 'द्रव' धातुसे 'करअु' की तरह बन सकता है और अपभ्रंश भाषाका है। 'द्रव' माने रस होना-प्रवाही होना-पिघलना-अर्थात् परमेश्वर मेरी नम्र-प्रार्थनासे पिघल जाओ-प्रसन्न हो।

(क्रमशः)

सूचना :—(लेखककी सम्मति लिअे बिना अिस लेखका वा लेखके किसी अंशका अन्य कोअी अुपयोग नहीं कर सकते —ले०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुजराती

वांसळी वेचनारो

[श्री अुमाशंकर जोशी]

'चच्चार आने !
हेली अमीनी वरसाओ काने !
चच्चार आने !
हैयां रुंधायां वहवो न शाने !'
मीठी जबांने ललचावी हैयां
रसे पूरा किंतु खीसे अधूरा
श्रमीण को'ने अमथुं रिबावतो
बराडतो जोसथी बंसीवाळो.
घराक साचा सुणवा न पामे
वेगे जती गाडी महीं लपाओ जे
बंसी सुणंता प्रणयोर्मिगोष्ठिनी.
'चच्चार आने !'
ना कोओ माने,
अने खभे वांसळी जूथ अेनुं
थयुं न स्हेजे हळवुं, भम्यो छतां.
'चच्चार आने !
लो, ने रमो रातदि स्वर्ग-ताने !'
'चच्चार आने !'
'दे अेक आने !'
'ना, भाओ ना, गाम जओश मारे,
छो ना खपी ! इंधनथी जशे नहीं.
चच्चार आने ! बस चार आने !!'
पाछा वळंतां, पछी, जूथमांथी
खेंची मझानी बस अेक बंसी,

हिन्दी

बाँसुरीवाला

(अनु०--श्री गौरीशंकर जोशी)

'चार चार आने !
लो, भाओ लो, और बरसाओ अमृत कान अपने !
चार चार आने !
हैये रुंधाये बहाते क्यों न ?'
यों वह बाँसुरीवाला गाता-बजाता
अपनी मीठी जबानसे दिल ललचाता
किसी श्रमिकको, जो है रसीला
मगर जिसकी जेबमें है नहीं अधेला,
निरर्थक ही पीड़ा पहुँचाता
है जोरसे आवाज लगाता--
'चार चार आने !'
सच्चे गाहक नहीं पाते थे सुन
वे तो तेजीसे भागती गाड़ीमें अेक-दूसरेसे चिपटकर
प्रणय गोष्ठिकी बीनमें थे लीन !
'चार चार आने !'
ना कोओ माने,
और अुसके कंधेपर रखा हुआ बन्सियोंका गट्ठर
बहुत भटकनेके बावजूद न हुआ हलका जरा भी।
'चार चार आने !
लो, भाओ लो, और अिसकी स्वर्गकी तानमें
रात-दिन रमो !'
'चार चार आने !'
'दे अेक आने !'
'ना, भाओ ना, गाँव चला जाअूँगा मेरे,
भले न खपें ! ओन्धन का काम तो देंगी ही।
चार चार आने ! बस, अेक ही बात, चार आने !!'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आषाढ़नी सांजनी झरमरोमां
सुरोतणां रंगधनु अुडावती
अेणेय छेडी अुरमांथी झर्मरो.
जीवंत आवी सुणी जाहिरात, को
बारी महीं'थी जरी ब्हार झूकती,
बोलावती ताली स्वरे थी बाला
हवे परंतु लयलीन कान,
घराकनुं लेश रहयुं न भान.

गाँवको मुड़ते हुअे, गट्ठरमेंसे
अुसने अेक बढ़िया बन्सी निकाली,
आषाढ़की संध्याकी रिम-झिममें
स्वरोंके अिन्द्र-धनुष अुड़ाती अुसने
हृदयकी तान छेड़ दी अपने।
अिस सजीव विज्ञापनको सुनकर
झरोखेसे थोड़ा झुककर, अुसे
बुलाया किसी बालाने ताली देकर।
किन्तु अब तो लयलीन कान
गाहकका रहा न लेश भान।

संत तुकारामके अभंग

[लोक-व्यवहार-बोध]

(गतांकसे आगे)

मराठी

६. चिंतनासी न लगे वेळ। सर्व काळ करावें ॥
सदा वाचे नारायण। तें वदन मंगल ॥
पढ़िये सर्वोत्तमा भाव। येर वाव पसारा ॥
अैसें अुपदेशी तुका। अवघ्या लोकां सकळां ॥

७. अर्थेविण पाठांतर कासया करावें।
व्यर्थचि मरावें घोकूनियां ॥
घोकूनियां काय वेगीं अर्थ पाहे।
अर्थ रूप राहे होऊनियां ॥
तुका म्हणे ज्याला अर्थी आहे भेटी।
नाहीं तरी गोष्टी बोलों नका ॥

८. हरिहरां भेद नाहीं। करूं नये वाद ॥
एक एकाचे हृदयीं। गोडी साखरेच्या ठायीं ॥
भेदकासी नाड। एक वेलांटीच आड ॥
उजवे वामांग। तुका म्हणे एकचि अंग ॥

हिन्दी

६. भगवत्‌चिंतनके लिअे, किसी अलगसे निर्धारित समयकी आवश्यकता नहीं होती; वह तो हरदम किया जाना चाहिअे। जिस मुँहसे सदैव नारायणका नाम स्मरण होता हो, वह मुँह मंगलकारक है। सर्वोत्तम अर्थात् भगवानको, भाव ही प्रिय होता है; अतः अन्य दिखावा व्यर्थ है। मेरा समस्त जनोंको यही अुपदेश है।

७. यदि अर्थकी ओर ध्यान न देना हो, तो फिर किसी पाठको कंठाग्र ही क्यों किया जाय? ग्रन्थोंको केवल रटना, जीवन विनष्ट करनेके सिवा और कुछ नहीं। रटनेसे क्या लाभ? शीघ्रतापूर्वक अर्थ समझकर, अुस अर्थके अनुसार आचरण किया जाना चाहिअे। तुकाराम कहता है कि केवल अुसीका जीवन सफल है, जिसने कि अर्थसे साक्षात्‌कार किया हो; अन्यथा क्रियाके बिना व्यर्थकी वाचालतासे क्या लाभ?

८. हरि (भगवान विष्णु) और हर (भगवान शंकर) में कोअी भेद नहीं; अतः अुनके विषयमें अुनके भक्तोंको विवाद नहीं करना चाहिये। जिस प्रकार शक्कर और अुसकी मिठास अभिन्न होती है, अुसी प्रकार हरि और हरमेंसे अेक, दूसरेके हृदयमें समाविष्ट है। भेद करनेवाले व्यक्तिको, केवल 'अिकार' के ही अंतरकी अड़चन! वैसे चाहे हम 'दायां अंग' और 'बायां अंग' क्यों न कहते हों, किंतु अुन दोनोंको मिलाकर देह अेक ही होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. लय लक्षूनियां जालों म्हणती देव ।
तोही नव्हे भाव सत्य जाणा ॥
जालों बहुश्रुत न लगे आतां कांहीं ।
नको राहूं ते ही निश्चितीनें ॥
तपें दानें काई मानिसी विश्वास ।
बीज फळ त्यास आहे पुढें ॥
कर्म आचरण यातीचा स्वगुण ।
विशेष तो गुण काय तेथे ॥
तुका म्हणे जरी होईल निष्काम ।
तरिच होय राम देखे डोळां ॥

९. कुछ लोग अैसा समझते हैं कि भगवानकी ध्यान-धारणासे अुन्हें भगवानकी योग्यता प्राप्त हो चुकी है; किंतु अुनकी यह कल्पना असत्य है । अुसी प्रकार भगवद्विषयक पठन-श्रवण-मार्गोंपर बल देकर, स्वयंको ज्ञानी अेवं कृतकृत्य समझ बैठनेकी निश्चितता भी समुचित नहीं । तप और दानके फल होनेके कारण, अुस मार्गपर भी निर्भर न रहा जाय । वैसे ही स्वजातिके गुणानुसार (स्वधर्मानुसार) आचरणका मार्ग स्वीकार करनेमें भी कोअी खास विशेषता नहीं। अतः तुकाराम कहता है कि यदि आप अपने कर्म निष्काम भावसे अर्थात् फलकी आशा न रखते हुअे करें, तो ही आपको भगवानका साक्षात्कार हो सकेगा ।

१० सत्य संकल्पाचा दाता नारायण ।
सर्व करी पूर्ण मनोरथ ॥
यथें अलंकार शोभती सकळ ।
भाव बळें फळ इच्छेचें तें ॥
अंतरींचें बीज जाणे कळवळा ।
व्यापक सकळा ब्रह्मांडाचा ॥
तुका म्हणे नाहीं चालत तांतडी ।
प्राप्त काळ घडी आल्याविण ॥

१०. यदि आपके काम अच्छे और सुनियोजित हों, तो नारायण अुन्हें सिद्धि प्रदानकर आपकी समस्त मनोकामनाअें पूर्ण करता है । सत्य संकल्पको, सभी प्रकारके अलंकार शोभा देते हैं; भाव-सामर्थ्यके बलपर, किसीभी प्रकारका अिच्छित फल प्राप्त किया जा सकता है। समूचे ब्रह्मांडको व्यापनेवाला भगवान यह जानता है, कि आपके अंतःकरणके संकल्प (काम) किस प्रकारके हैं । किंतु तुकाराम कहता है कि फल-प्राप्तिका अुचित समय आअे बिना, व्यर्थकी अुतावलीका तानिक भी अुपयोग नहीं हो पाता ।

११. नाहीं रिकामिक परी वाहे मनीं ।
तया चक्रपाणी साहच होय ॥
उद्वग जिवासी पंढरीचे ध्यान ।
तया नारायण साहच करी ॥
शरीरासी बळ नाहीं स्वता भाव ।
तया पंढरीराव साहच करी ॥
असो नसो बळ राहे पराधीन ।
तरी अनुमान करूं नका ॥
तुका म्हणे येणें करोनी चिंतन ।
तया नारायण जवळीक ॥

११. जिस व्यक्तिको चक्रपाणि (भगवान) का चिंतन करनेकी दृष्टिसे तनिक भी अवकाश नहीं, किंतु जो अपने दैनिक व्यवहार भगवद्स्मरणके साथ करता रहता है, अुसे भगवान सहायता करते हैं । अुसी प्रकार चित्त अुद्विग्न होनेपर भी जिसका ध्यान पंढरीनाथकी ओर लगा रहता है, अुसको भी भगवान सहायक होते हैं । वैसे ही शरीरमें बल न होनेपर भी जिसके पास भाव हैं, अुसे भी भगवान सहायता करते हैं । अतः यदि आप बलहीन अथवा पराधीन हों, फिर भी भगवद्-चिंतनकी दृष्टिसे सोच-विचार न कीजिअे । तुकाराम कहता है कि अिस प्रकार सभी परिस्थितियोंमें अीश-चिंतन करनेवाला व्यक्ति, नारायणको अपने समीप ही पाता है ।

—श्रीमती शारदा वझे, बी. अे. विशारद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सूचना–'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअे।)

निशिकान्त — [लेखक : विष्णु प्रभाकर, प्रकाशक—आत्माराम अेन्ड संस, दिल्ली ६; पृष्ठ-संख्या—३२४, मूल्य—पाँच रुपअे।]

समाजकी अिकाअीमें मनुष्यके कअी रूप हैं, परन्तु ये सब रूप अेक मनुष्यका पूर्ण चित्र अुपस्थित करनेकी सामर्थ्य रखते हैं। विष्णु प्रभाकरजीने अपने अुपन्यास "निशिकान्त" में पात्र निशिकान्तके कअी पूर्ण चित्र दिखाअे और अुन्हीं चित्रोंने निशिकान्तके चरित्रको पूर्णतासे दर्शाया है, जिसमें लेखकको सफलता भी मिली है। अुपन्यासकी कथावस्तु १९२० से आरम्भ होकर युद्धकालीन परिस्थिति अेवं १९४२ की घटनाओंको समेटती हुअी चलती है। अुपन्यासके कथोपकथनसे यह स्पष्ट होता है और होना भी चाहिअे। अैसे अुपन्यासके पात्र किसी कामके नहीं होते, जो राजनैतिक अेवं सामाजिक परिस्थितियोंसे अछूते रहकर आगे बढ़ जाते हैं और अपनी कथावस्तु पूरी कर देते हैं।

अुपन्यास 'निशिकान्त' में १९२० से १९३९ के युगकी अेक अैसे युवककी कहानी है जो परिस्थितियोंके बन्धनमें बँधकर मनचाही नहीं कर पाता। वह चाहता है देशकी सेवा करना, परन्तु करनी पड़ती है अुसे विदेशी सरकारकी नौकरी। वह चाहता है मुसलमान लड़कीसे विवाह करके हिन्दू-मुस्लिम अेकता स्थापित करना; परन्तु करना पड़ता है हिन्दू लड़की कमलासे विवाह। वह चाहता है छुआछूतकी भावनाका निर्मूलन करना परन्तु जब कलालके घरकी लड़की कमला अुसकी माँके चूल्हेपर खाना पकाना चाहती थी तो वह हिचकिचाता है। अिस प्रकारकी कअी और बातें भी अुपन्यासमें आती हैं, अुसी संघर्षका अिस अुपन्यासमें चित्रण है। मनुष्य प्रायः संस्कारवश कअी बातें न चाहते हुअे भी कर जाता है। निशिकान्त अैसा ही पात्र है। अिस अुपन्यासमें तत्कालीन समाज और समाजकी मनोवृत्तिका चित्रण सुन्दर और स्वाभाविक बन पड़ा है।

अुपन्यास "निशिकान्त" अपने दूसरे संस्करणमें नअे नाम और नअे रूपमें आया है। नाम पहले "ढलती रात" था। लेखकके अनुसार अिस नाम परिवर्तनमें कोअी विशेष कारण न था। परन्तु नाम परिवर्तनके साथ पृष्ठ संख्या ५४३ से ३२४ हो गअी। लेखकने दूसरे संस्करणमें कथामें कोअी परिवर्तन नहीं किया, भाषा भी नहीं बदली, परन्तु कम हो सकनेवाले प्रसंगोंको कम कर दिया; अिधर-अुधरसे कुछ सतरें कम कीं, प्रूफकी अनेक गलतियोंको ठीक किया। बस अिसीमें २१९ पृष्ठ भी कम हो गअे। परन्तु २१९ पृष्ठोंके कम हो जानेसे कथावस्तुमें गठन आ गअी और आ गया बहावका आनन्द। कहींपर कथावस्तुका विस्तार खटकता नहीं है अतः कथावस्तुमें रुचि बनी रहती है।

"ढलती रात" में निशिकान्तको आलोचकोंने कायर सिद्ध किया था परन्तु अुपन्यास 'निशिकान्त' को पढ़कर पात्र निशिकान्तको कायर न कहकर विचारशील कहना ठीक लगता है। निशिकान्त परिस्थितियोंसे संघर्ष करने और अुन्हें जीतनेका आरम्भसे अन्ततक प्रयत्न करता है। प्रत्येक परिस्थितिको अच्छी तरहसे परखकर सोच कर ही आगे कदम बढ़ाता है। वह परिस्थितिकी बाढ़में बहता नहीं है, परन्तु परिस्थितियोंको अपनी बुद्धिके अनुसार मोड़ना चाहता है। अिसमें अुसे असफल भी होना पड़ता है परन्तु वह हारनेवाला कायर व्यक्ति न था। वह अपने विचारोंकी रक्षा करता हुआ आगे बढ़ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है और अन्तमें अपनी ही कर दिखाता है। यह निशिकान्तके चरित्रकी प्रशंसनीय बात है। संघर्षमें अपने अस्तित्व और अपने विचारोंकी, भावनाओंकी और सिद्धान्तोंकी रक्षा करना अत्यधिक कष्टदायक कार्य होता है, परन्तु निशिकान्त वह सब कर दिखाता है जो साधारण व्यक्ति नहीं कर सकता।

श्री विष्णु प्रभाकरने अुपन्यास निशिकान्तमें सामाजिक और राजनैतिक कथावस्तु द्वारा जो पात्र, कथोपकथन अेवं चरित्र-चित्रण पाठकोंके सम्मुख प्रस्तुत किअे हैं, वह प्रशंसनीय है। अिस अुपन्यासका अुद्देश्य बहुत अूँचा है। भाषा सरल और रोचक है। छापेकी गलतियाँ भी नहींके बराबर हैं। आशा है, अुपन्यास "निशिकान्त" का स्वागत आलोचक और पाठक समान रूपसे करेंगे।

—लीला अवस्थी

शरत्के नारी पात्र— [ले०—श्री रामस्वरूप चतुर्वेदी, प्र०—भारतीय ज्ञानपीठ; काशी, मूल्य ४॥) पृष्ठ ३५२ क्राअून साअीज डबल]

शरत् विश्वसाहित्यके अमर कलाकार हैं। भारतीय साहित्यमें शरत्-साहित्यने अुच्चतम स्थान प्राप्त कर लिया है; किन्तु वह दिन दूर नहीं, जब विश्व-साहित्यमें भी अुसको वही स्थान प्राप्त हो जायगा। मानवमनके न सिर्फ आलेखक, अभिवक्ता; बल्कि अेक कला-शिल्पीके रूपमें भी अुनकी ख्याति होगी। अुनकी नारी तो अजर-अमर है। वह भारतीय मन-हृदय-मस्तिष्कको अैसे अभिभूत किअे हुअे है कि जो अेकबार शरत्की नारीको पढ़ लेगा, वह हर नारी चित्रणकी कसौटी शरत्की नारीमें ढूँढ़ेगा। शरत्की नारी कितनी ही प्रान्तीय या देशीय हो, अन्ततः वह नारी है और अुसके साथ बीता हुआ अेवं बीतनेवाला जमाना अैसा जुड़ा हुआ है कि शरत्की नारी कभी संकुचित दायरेकी कैदमें नहीं रह सकती। शरत्की नारीको पढ़कर "नारीको क्या होना-बनना चाहिअे" यह विवादकी वस्तु हो सकती है, लेकिन "नारी क्या और कैसी है" अिसके बारेमें कोअी मतभेद नहीं हो सकता। हर पाठक यही कहेगा कि यह तो युग-युगका अितिहास अपने भीतर संजोअे हुअे है।

"शरत्की नारी" जब हम कहते हैं, तब हमारे मन व मस्तिष्कपर करुणामअी, स्नेहमअी, सहनशीला, विशाल हृदया नारी पात्र छाअे रहते हैं, यह स्पष्ट है, तथापि दुष्टा, क्रोधी, घातक नारी-पात्र भी शरत्ने चित्रित किअे हैं और तब भी अुन्हें अैसा घृणास्पद नहीं बनाया है, जिससे पाठक नारी-नारीके बीच खोदी हुअी बहुत बड़ी खाअी ही देखे। अैसे महान्, सहानुभूतिपूर्ण, करुणामय लेखकके ग्रंथोंकी अेवं अुसके नारी पात्रोंकी आलोचना करना भी अुतना ही गुरुतर कार्य है और हमें प्रस्तुत पुस्तक पढ़कर यह कहते संकोच नहीं होता है कि आलोचक भले ही बहुत गहरेमें हर जगह न जा सके हों, लेकिन सहानुभूति, कलाकी परख-दृष्टि अेवं तटस्थता निबाहनेमें वे समर्थ रहे हैं। शरत्की भव्य नारीके योग्य समीक्षकके रूपमें हम चतुर्वेदीजीको मान सकते हैं। निस्सन्देह अुनकी कअी मान्यताओंसे मतभेद हो सकता है। शरत्के दुष्ट नारी पात्रोंके प्रति भी शरत्की करुणा या सहानुभूति समाप्त नहीं।

लेखक (शरत्) आलोचककी पकड़में बराबर आअे हैं, यह अनेक स्थलोंपर स्पष्ट होता है। कला जब सामाजिकता लिअे हुअे होती है, तो वह जनता जनार्दनीय बन जाती है। शरत्की कला अैसी ही थी और आलोचकने भी ठीक अिस चीजको समझ लिया है। शरत्पर जो-जो आक्षेप समय-समयपर हुअे हैं, अुनका भी सम्यक् खंडन जगह-जगहपर आलोचकने किया है और वह तटस्थता अेवं सहानुभूतिके साथ किया है। शरत्ने नारी जीवनके प्रत्येक अंगको चित्रित किया है, तो आलोचकने अुस चित्रणका मर्म प्रकट करनेकी पूरी कोशिश की है। जगह-जगह अेक पात्रकी दूसरेके साथ, अेक कथाकी दूसरीके साथ तुलना की गअी है, मैत्री अेवं विरोध बताया है। नारायणी-बिन्दो, रायगृहिणी-रायकी सुमति, चरित्रहीनकी किरण अैसे अनेक पात्रों-कथाओंकी तुलना सम्यक् रूपसे लेखकने की है।

आलोचक यदि वस्तुनिष्ठ अेवं सहानुभूतिशील न हो तो वह लेखकके प्रति न्याय नहीं कर सकता। अिस आलोचनामें वस्तुनिष्ठा अेवं सहानुभूति तो है ही, लेखकके प्रति अेक आत्मानुभूति भी है, जो शरत्के हर पाठकमें, अुसकी रचनाअें पढ़कर सहज भावसे, अुद्भूत हो जाती है। वैसे, आलोचकोंने शरत्की नारियोंको अैसा दुर्बल माना है कि बंगालकी तत्कालीन दुःस्थितिके कारणोंको वहाँ तक पहुँचा दिया है। हम अैसा नहीं मानते। विद्रोही नारी शरत्का लक्ष्य न होते हुअे भी शरत् अुस चित्रणसे अेकदम अछूते नहीं रहे। परन्तु शरत्का लक्ष्य, जैसा कि हम कह चुके हैं, "वह क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होनी चाहिअे" यह अुतना नहीं था, जितना "वह क्या अेवं कैसी है," यह है। लेकिन "क्या अेवं कैसी होनी चाहिअे" यह भी शरत्से अछूता नहीं रहा है। परन्तु शरत् अिसमें काल-सापेक्ष्य या परिस्थिति-सापेक्ष्य नहीं, मानवीय भावना-सापेक्ष्य रहे हैं। और भी वे गहरेमें गअे हैं।

और आलोचकने यह समझकर ही अुन टीकाकारोंके स्वरमें अपना स्वर नहीं मिलाया, जो शरत्को दुर्बल नारीका ही सर्जक मानकर अुसको अप्रगतिशील भी मानते हैं। प्रश्न परिस्थितिसे अूपर अुठकर मानवीय शाश्वत मूल्योंके आविष्करणका है। लेखककी वही कसौटी होती है। शरत्की सफलताका यह बहुत बड़ा कारण है।

छपाअी-गेटअप आदिके लिअे ज्ञानपीठ कीर्तिशील है ही। पर कीमत कुछ अधिक लगती है।

--लक्ष्मीनारायण भारतीय

बोलोंके देवता:--(कविता-संग्रह) [कवियित्री–सुमित्रा कुमारी सिनहा; प्रकाशक–युगमन्दिर, अुन्नाव; पृष्ठसंख्या–५९ तथा मूल्य ढाअी रुपअे]

"बोलोंके देवता" श्रीमती सुमित्रा कुमारी सिनहाका नवीनतम कविता-संग्रह है। अिस ५१ गीतोंके संकलनकी भूमिका प्रसिद्ध लब्ध प्रतिष्ठ आलोचक पं. नन्ददुलारे बाजपेअीजीने लिखी है। सिनहाजीके प्रस्तुत संग्रहके गीतोंकी पृष्ठभूमिमें आचार्य नन्ददुलारेजीने आजकी हिन्दी कविताके सम्बन्धमें कतिपय प्रश्नोंकी चर्चा की है। आचार्यजीके निष्कर्ष अिस प्रकार हैं--

(१) आजकी हिन्दी कविता विचित्र विघटनकी स्थितिपर आ पहुँची है।

(२) प्रसाद, पन्त, निराला आदिने जिस अदम्य प्रेरणा, आत्मविश्वास और सौन्दर्य कल्पनाकी रागिनी छेड़ी थी वह आज विलुप्तप्राय हो गअी है।

(३) पुराने निष्ठावान कवि भी व्यंग्य और विनोदकी हल्की भूमिपर अुतर आअे हैं।

(४) समाजवादी नअी प्रवृत्तियाँ स्वतन्त्र जीवन शैलीकी सम्पूर्ण रूपरेखा प्रतिष्ठित करनेकी शक्ति नहीं संचित कर सकीं। अिस विचार धारा और जीवन-शैलीका कोअी प्रतिनिधि कवि भी अबतक हमारे बीच नहीं आया।

(५) कोअी भी काव्यशैली समाजके श्रेष्ठतम बुद्धिजीवियोंका समर्थन और सहयोग प्राप्त करनेपर ही वस्तुतः पल्लवित और पुष्पित हो सकती है।

(६) हिन्दी काव्यको अतियथार्थवादी दुर्दिनसे बचानेवाली जिन शक्तियोंपर हम विश्वास रख सकते हैं अुनमें सुमित्रा कुमारी सिनहा अेक प्रमुख शक्ति हैं।

(७) व्यक्तिकी जीवनके प्रति निश्चल आस्था, जीवन साधनाकी रचनात्मक भावभूमि, और भौतिक क्षेत्रमें कर्मकी सुनिश्चित प्रेरणा "बोलोंके देवता" का विषय है।

कुछ आलोचक अबतक 'आँसू' और 'कामायनी' में ही आत्म-विभोर होकर दलील दिअे जा रहे हैं हिन्दी कवितामें नअी प्रवृत्तियोंका, नअी जिन्दगीका आगमन नहीं हो रहा है। हिन्दीकी कविता क्यों विघटनकी स्थितिमें है अिसका सबसे अच्छा अुदाहरण है "बोलोंके देवता!" "सपना ही था पर सुन्दर था" जैसे कि शोरावस्थाके स्वप्निल गुँजन-गीत हमारे तथाकथित स्वनामधन्य कवि अुतरती अुम्रमें भी पोपले मुखसे गाते हैं--"तुम्हारे प्यारके दो चार क्षण पाकर!" अथवा मिलन रात्रिकी कल्पनामें सोचते हैं –"मधुर समर्पणके क्षण पुलक प्रयात बनेंगे!" जैसे जीवनमें सुहाग रातकी कल्पना या यथार्थसे बढ़कर अन्य कोअी यथार्थ है ही नहीं? परन्तु आचार्यजी अुसे अनावश्यक अतियथार्थवादी दुर्दिन मान बैठे हैं तभी वे छायावादी सपनोंकी प्रेयसी-कवियित्री सुमित्रा कुमारी सिनहाजीको आधुनिक कविताके विघटनके जवाबमें अेक प्रमुख शक्ति मान रहे हैं।

सुमित्राजीके गीत सुन्दर हैं, प्रासादिक हैं, माधुर्य भावमें लिप्त हैं। कवियित्रीकी कल्पना छायावादी भावधारामें निमज्जित होकर "बोलोंके देवता" का पूजन करने बैठी है। अुसके सभी अुपकरण पुराने हैं, समर्पणका ढंग भी छायावादी अस्पष्टतामें अुलझा हुआ है। अिन प्रणय गीतोंमें सर्वत्र बोलोंके देवताके रूपमें स्थूल प्रियतमकी अर्चना है। जीवनके प्रति निश्चल आस्था, जीवन साधनाकी रचनात्मक भावभूमि अेवं भौतिक क्षेत्रमें कर्मकी सुनिश्चित प्रेरणाके दर्शन दुर्लभ हैं जैसा कि भूमिका-लेखकने अत्यन्त अतिशयोक्तिपूर्ण शब्दोंमें स्वीकार किया है तथा प्रमाणस्वरूप दो-चार पंक्तियाँ भी खोज ली हैं।

—अनिलकुमार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जय बाल गंगाधर तिलक !

पिछली अेक शताब्दीमें भारतमें अैसे दो ही महामानव अुत्पन्न हुअे तिलक और गान्धी, भारत-भाग्य विधाता जो अपने युगके निराले विभूति पुरुष नरनारायण कहलाअे। तिलक कोंकण महाराष्ट्रके और मराठी-भाषी थे; किन्तु अरविन्द, रवीन्द्र, लाजपतराय, मदनमोहन मालवीय, गान्धी और जवाहरने अुनकी लोकमान्यताको नतमस्तक हो अपने मस्तकपर चढ़ाया। सारे भारतने आ-सेतु हिमाचल तिलकको लोकमान्य माना। और महाराष्ट्रने १९२० के अगस्त १ के बाद अैसा कोअी अखिल भारतीय नेता, जिसे वर्तमान भारत सिजदा—कोअी प्रणाम—कर अपने मस्तकपर अुसकी महत्ताको धारण करता, नहीं दिया; यह सभी मराठी-भाषी नेता मिलकर अपने हृदयतलमें सोचें कि अुनका दृष्टिकोण लोक-तिलक, लोक-मान्य तिलकके दृष्टिकोणसे भिन्न प्रकारका है या नहीं। महाराष्ट्रकी और मराठी भाषाकी मंगल कामना और अुसका योगक्षेम हर भारतीय तहे-दिलसे चाहता है।

गान्धी भारतके प्राचीन महान् सन्तोंकी परम्परापर जीवनके अन्तिम क्षणतक चले, और तप, अहिंसा और करुणाकी असिधारापर चलकर परतन्त्र पराधीन भारतको मुक्ति दिला गअे। तिलकने गान्धीसे पूर्व, भारतको अपना कर्म-क्षेत्र, गीताको कर्मयोग-शास्त्र और अपने समस्त जीवनको संघर्षमय कठोर कर्मठ कर्मयोगी बनाकर सारे भारतमें अँग्रेजी राज्यके प्रति महान् असन्तोषकी प्रचण्ड ज्वाला धाँय-धाँय प्रज्वलित कर दी। तिलकने सार्वजनिक क्षेत्रमें पहला कदम रक्खा ही था कि अुन्हें नौकरशाहीका सर्वप्रथम पुरस्कार कारावास मिला, और आगे चलकर लम्बी-लम्बी मुद्दतोंके कठिन कारागार-वास तिलकको मिले। और अँग्रेजोंके निरंकुश दमनने तिलककों जनताके हृदयका—कभी न मुरझानेवाला—हार बना दिया और अिस पतित पराधीन भारतकी करोड़ों जनताके मुखसे तिलकने 'स्वराज्य' को हमारा 'जन्मसिद्ध अधिकार' अुद्घोषित करवाया। काश्मीरसे लेकर कन्याकुमारीतक अिस महान् देशकी जनताने अुनको लोकमान्य माना और गोरे शासक अुद्दण्ड अँग्रेजोंने तिलकको अपना सबसे बड़ा ख़तरनाक व्यक्ति और अपने साम्राज्यवादी स्वार्थोंका दुश्मन, संहारकर्ता प्रलयंकर कालरूप देखा। अुनके 'केसरी' और "मराठा" की गर्जना पराधीन दुखी विवश भारतीयोंकी जोरदार बुलन्द आवाज बनी। अुन्होंने सामने खड़ी हुअी विघ्न-बाधाओंकी विकट शैल-श्रेणियोंको चूर-चूरकर डालनेवाले अपने गर्जन-तर्जनसे अन्यायका बदला कुदरती न्यायसे लिया। लोकमान्यने अपनी तपस्याके बलपर भारतकी सदियोंकी दासताकी बेड़ियोंकी कठिन-कठोर कड़ियाँ अपनी वज्रवाणीके हथोड़ेकी मारसे तोड़ दीं। किसी भविष्यवक्ताने तब सच ही कहा था कि 'तिलकको, जब वह सिर्फ २४ सालकी अुम्रके ताजे तरुण थे दुनियाने सन् १८८० का गुलाम भारत सिपुर्द किया था और तिलकने अपनी आजीवन निःस्वार्थ कठोर साधना और कष्ट-सहन द्वारा स्वराज्यकी प्रस्थापना और गोरे विदेशी शासनको जड़-मूलसे अुखाड़ फैंकनेकी ताकत व हिम्मत रखनेवाला सन् १९२० का भारत दुनियाके आगे रख दिया और गान्धीजीको अुसकी विरासतका अुत्तराधिकारी बनाया। लोकमान्य राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय लिपिके रूपमें हिन्दी अेवं देवनागरीकी प्रतिष्ठापनाको भारतकी राष्ट्रीय अेकताका आधार मानते थे। भारतमें स्वावम्बन, आत्म-गौरवकी प्रबल भावना जागृत करनेवाले, सारे राष्ट्रमें अत्यन्त असंतोष-जागृतिके जनक, स्वराज्य-मंत्रकी राष्ट्रीय दीक्षाके गुरू और नव भारतके निर्माता, भारतीय जनताके हृदय-सम्राट्, महान् कर्मयोगी लोकमान्य बाल गंगाधर तिलककी जय!

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धाने अिस बार 'तिलक जन्म शताब्दी' के पुण्यस्मृति महोत्सव प्रसंगपर लोकमान्यका सचित्र जीवन-चरित्र प्रकाशित कर अपनी श्रद्धाजलि अर्पित की है।

—हृ० शर्मा

× × ×

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राज्यभाषा आयोगके प्रतिवेदनपर शान्तचित्तसे विचार करें :

ता. १ अगस्तको राज्यभाषा आयोगका प्रतिवेदन प्रकाशित होने जा रहा है। सम्भवतः यह टिप्पणी पाठकोंके हाथमें पहुँचे, अुससे पूर्व अुन्होंने समाचार-पत्रोंमें अुसकी सिफारिशोंका सारांश पढ़ लिया होगा। यह सम्भव नहीं कि यह प्रतिवेदन सब लोगोंको पूर्ण सन्तोष दे सके। आयोगके सदस्योंमें भी मतभेद रहा है। समाचार पत्रोंमें प्रकाशित समाचारके अनुसार दो सदस्योंने अपना भिन्न मत प्रकाशित किया है और अेकने अपनी स्पष्टीकरणकी नोट अलग लिखी है। परन्तु निर्धारित समयपर ही आयोगने अपना प्रतिवेदन तैयार कर लिया है यह बड़ी प्रसन्नताकी बात है। आयोगके अध्यक्ष श्री खेरके परिश्रम और अध्यवसाय तथा अुनके सहयोगियोंकी कार्य-तत्परताका यह परिणाम है।

राज्य पुनर्गठन आयोगके प्रतिवेदनके कारण सारे देशका वातावरण किसी-न-किसी प्रकार संक्षुब्ध रहा है। राज्यभाषा आयोगका प्रतिवेदन अैसे ही संक्षुब्ध वातावरणमें प्रकाशित हो रहा है। और यह सम्भव है कि अुसकी सिफारिशोंके प्रति किसी-न-किसी अंचलमें और वर्गमें असन्तोष भी पैदा होगा। अैसी परिस्थितिमें हम अपने देशवासियोंसे यह आशा करें कि वे किसी भी प्रकारका अुतावलापन न दिखाअें और समग्र देशकी राष्ट्रीय भावनाओंका विचार करके राज्यभाषा आयोगकी सिफारिशोंका शान्त-चित्तसे अध्ययन करें और आयोगके प्रतिवेदनके रचनात्मक पहलूपर ही अपना ध्यान केन्द्रित करें।

हमारे लिअे यह बड़ी सौभाग्यकी बात थी कि राज्यभाषा आयोगके अध्यक्षके रूपमें हमें श्री खेर प्राप्त हुअे। अुनकी ख्याति Amiable Gentleman—'मीठे सज्जन' के नामसे है। साथ ही वे दृढ़ कर्तव्य-परायण व्यक्ति भी हैं। हमें विश्वास है कि सब तरहके मन्तव्योंपर, जो अुनके समक्ष अुपस्थित किअे गअे हैं, सम्पूर्ण विचार करके ही वे अपने सहयोगियोंके साथ अुन निष्कर्षोंपर पहुँचे होंगे, जिन्हें अुन्होंने अपने प्रतिवेदनमें स्थान दिया है। संविधानकी धाराओंको ध्यानमें रखकर देशके विभिन्न मतोंपर विचार कर अुन्होंने जो निर्णय दिअे हैं अुनका स्वागत करना हमारा सबका कर्तव्य है। राज्य पुनर्गठन आयोगके प्रतिवेदनकी तरह राज्यभाषा आयोगका प्रतिवेदन देशमें प्रान्तीय भावनाओंको अुभारकर हमारी राष्ट्रीयताको किसी भी प्रकारकी हानि न पहुँचाअे अिसका हमें ध्यान रखना होगा।

हिन्दी दिवस :

राष्ट्रभाषा हिन्दीकी दृष्टिसे १४ सितम्बरका दिन अेक विशेष महत्व रखता है। यही वह दिवस है जिस दिन सम्पूर्ण देशके प्रतिनिधियोंने अेक मत होकर हिन्दीको राज्यभाषा या राष्ट्रभाषा घोषित किया था।

भारतकी सभी भाषाअें—संविधानके साथ संलग्न सूचीमें चौदह भाषाअें दी गअी हैं—राष्ट्रीय भाषाअें हैं। परन्तु प्रादेशिक तथा प्रान्तीय भावनाओंसे अूपर अुठकर राष्ट्रीय भित्तिपर राष्ट्र-निर्माण तथा राष्ट्र-कार्य करनेके लिअे अेक सामान्य भाषाकी आवश्यकता वर्षोंसे अनुभव की जा रही थी। यह भाषा अँग्रेजी नहीं हो सकती।

भारतीय संविधानने हमारी राष्ट्रीय भावनाको दृढ़ करनेके लिअे जिस दिन हिन्दीको राजभाषा या राष्ट्रभाषा घोषित किया वह १४ सितम्बरका दिन गत कुछ वर्षोंसे 'हिन्दी-दिवस' की संज्ञा पा चुका है और सम्पूर्ण भारतमें भारतीय जनता अुसे बड़े अुत्साहके वातावरणमें मनाती है। हिन्दी-दिवसके दिन जो अुत्साह जनता व्यक्त करती है अुससे पता चलता है कि राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रति जनता कितना गहरा अनुराग रखती है।

१४ सितम्बरका दिन दूर नहीं है। आगामी हिन्दी दिवसके अवसरपर भी हिन्दीके प्रेमी, हिन्दीके प्रचारक और हिन्दीके सेवक राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रति अपना अनुराग व्यक्त करेंगे। हम आशा करते हैं सभी हिन्दी-प्रेमी अुत्साहके साथ हिन्दी-दिवस मनावेंगे और अपने प्रयत्न और सेवा द्वारा अुसके प्रचार-प्रसारमें, अुसे समृद्ध करनेमें यथा-योग्य योग दान देंगे।

प्राकृतिक दुर्घटनाअें :

आसाममें बाढ़के कारण सैकड़ों लोग बिना घर-बारके हो गअे। कुछ दिन पहले बिहार तथा अुत्कलमें बाढ़ने बहुत हानि पहुँचाअी। अब कच्छ-अंजारमें भूकम्पने मानव-जीवनपर क्रूर आक्रमण किया है। अुसमें सौसे अधिक आदमी मर गअे और हजारों अपना सब कुछ गँवाकर "अूपर आकाश और नीचे धरती" की स्थितिमें किसी प्रकार जी रहे हैं। ये प्राकृतिक दुर्घटनाअें मानव जीवनकी क्षणिकता और तुच्छताको प्रकट करती हैं और बड़े कष्टसे बसाअे गअे अुसके संसारको नष्टकर अुसके सामाजिक जीवनको भी छिन्न-भिन्नकर देती हैं। परन्तु अुसके साथ ही अिन दुर्घटनाओंके अवसरपर मानवकी मानवता भी किसी प्रकार प्रकाश पाती है। मानवता यों सरलतासे पराजय स्वीकार करनेको तैयार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं। कच्छकी भयंकर दुर्घटनाके समाचारसे सारे देशमें सहानुभूति और वेदनाका विद्युत प्रवाह दौड़ गया। कच्छकी दुर्घटनाओंको बम्बअी, मध्यप्रदेश, कलकत्ता, मद्रास आदि स्थानोंपर भी लोगोंने अपनेपर आअे हुअे कष्टकी तरह अनुभव किया। हमारी राष्ट्रीयता, हमारी अेक भारतीयताका यह तकाजा है कि हम अपने भाअियोंका कष्ट स्वयं अनुभव करें और लोगोंने अिस प्रकार अिसका अनुभव किया भी है। सेवाभावी कार्यकर्ता कच्छकी सहायताके लिअे दौड़ पड़े हैं। आवश्यक आर्थिक सहायता सारे देशसे प्राप्त होने लगी है। यह हमारे लिअे गौरवकी बात है। जिन लोगोंपर यह आकस्मिक आफत आ पड़ी है अुनके घाव भरनेमें तो बहुत दिन लगेंगे। कुछ लोगोंके घाव तो कभी भरेंगे कि नहीं, अिसमें भी सन्देह है। फिर भी अुन्हें जो सहानुभूति तथा सहायता मिल रही है, अुससे अुनके मनको कुछ तो शान्ति मिलेगी ही, अुनको प्रतीत होगा कि वे अकेले नहीं, सारा देश अुनके साथ है। अन्तमें हम यही प्रार्थना करते हैं: अिन प्राकृतिक दुर्घटनाओंसे व्यथित जनोंको अीश्वर कष्ट सहन करनेका शारीरिक तथा मानसिक बल दे।

सर्वोदयका अर्थशास्त्र :

आज हमारे देशमें पंचवर्षीय योजनाओंका क्रम चल रहा है। प्रथम पंचवर्षीय योजनाका काल समाप्त हो चुका है और द्वितीय पंचवर्षीय योजनाका काल अुपस्थित है। दोनों पंचवर्षीय योजनाओंका अध्ययन जिन्होंने किया है वे निःसंकोच यह कह सकेंगे कि हमारी आर्थिक नीति विशाल तथा केन्द्रित अुद्योगोंकी नीति नहीं है और न वह विकेन्द्रित ग्रामोद्योगकी ही नीति है। देशमें जो क्रान्तिकाल चल रहा है, अुसमें पश्चिमसे आअी हुअी औद्योगिक नीतिका प्रभाव बहुत अधिक है परन्तु गाँधीजीने सर्वोदयकी दृष्टिसे जो विकेन्द्रित ग्रामोद्योगकी नीतिपर जोर दिया, अुसे भी हमारे शासनकर्ता, सर्वथा भूला नहीं सके हैं। अिसलिअे अुन्होंने अिन योजनाओंमें अिन दोनों आर्थिक नीतियोंका अेक प्रकारका सम्मिश्रण कर दिया है, यद्यपि अुसमें बड़े उद्योगोंको ही अधिक प्रधानता दी गअी है। हम अपने देशकी अुन्नति चाहते हैं, अुसे समृद्ध भी बनाना चाहते हैं अिसमें सन्देह नहीं। परन्तु हम यह नहीं जानते कि हमारा आदर्श क्या है? हम देशको क्या बनाना चाहते हैं? हमारा चिन्तन स्पष्ट नहीं, हमारा ध्येय निश्चित नहीं। अैसी परिस्थितिमें हमारे विचारक वर्गपर बहुत बड़ी जिम्मेदारी आ जाती है। अुन्हें देशको मार्गदर्शन कराना होगा। परन्तु वे तभी यह कर सकेंगे जब कि अुनका चिन्तन शुद्ध और स्पष्ट होगा और अुनके विचार परिमार्जित और संस्कार-सम्पन्न होंगे। हमारे सामने पश्चिमके जनतन्त्र तथा रशियाके समाजवादके अुदाहरण हैं परन्तु अपने अनुभवसे हम देखते हैं कि अुनके आदर्श हमारे अनुकूल नहीं। आज विश्व-युद्धके भयसे मानव समाज आतंकित हो रहा है अिसलिअे हमें कोअी दूसरे ही मार्गका अनुसरण करना चाहिअे। सर्वोदयका मार्ग हमारे सामने है। अुसके अनुकूल हमें अर्थ-शास्त्रकी भी रचना करनी होगी। श्री भगवानदास केला सर्वोदय विचारसरणीके पुरस्कर्ता हैं। वे लिखते हैं: "बड़े-बड़े निर्माण कार्योंकी योजनाअें बनती हैं, रुपअे-पैसेका, सोने चान्दीका, कागजी टुकडों (नोटों) का ब्योरा अुपस्थित किया जाता है, पर असली धन (मनुष्य) की अुपेक्षा की जाती है; अथवा, अुसे भी क्रय-विक्रयका पदार्थ समझ लिया जाता है। रस्किन, गान्धी और विनोबा जैसे व्यक्तियोंका अर्थशास्त्री होना स्वीकार नहीं किया जाता, क्योंकि वे नीति, प्रेम, सेवा और त्याग आदि मानवी गुणोंकी बात कहते हैं।

"मैं अर्थशास्त्रके लेखकों, अध्यापकों और शिक्षार्थियोंसे विनम्रता-पूर्वक परन्तु स्पष्ट कहना चाहता हूँ कि जिस साहित्यमें 'गान्धी विचारधारा' को यथेष्ट स्थान नहीं दिया जाता, अर्थात् जो साहित्य मानवताका या सर्वोदयका दृष्टिकोण नहीं अपनाता, अुसे शास्त्रका नाम देना शास्त्रका अपमान करना है। अर्थशास्त्रके नामपर हो या किसी और नामपर हो जो साहित्य हमें कोरा बौद्धिक ज्ञान देता है और हमारे हृदयमें मानवीय भावनाओंका विकास नहीं करता, अुसे लिखना या पढ़ना-पढ़ाना बेकार है, वह अेक कुसेवा है, अुसमें लगना अपने समय और शक्तिका दुरुपयोग करना है। हिन्दी भाषाभिमानी अपने दायित्वको समझें और अिस दिशामें अपना कर्तव्य निर्धारित करें।

"आवश्यकता है कि विद्वान सज्जन सर्वोदय विचारधाराका चिन्तन और मनन करें, जिससे हिन्दीमें अिस तरहकी रचनाओंकी कमी न रहे।"

हम श्री केलाजीके विचारोंके प्रति अपने पाठकोंका ध्यान खींचना चाहते हैं। आशा है वे अुसपर मनन करेंगे और यदि दे सकें तो अिस कार्यमें अपना योग भी देंगे।

—मो० भ०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्धा समितिके प्रचारक बन्धुओंसे

निवेदन !

राष्ट्रभाषा प्रचार समितिका परिवार बहुत विशाल है। अिस परिवारमें ३००० के लगभग सेवाभावी मिशनरी प्रचारक हैं और लगभग २५०० केन्द्र-व्यवस्थापक भी हैं। ये सभी भारतके अ-हिन्दी क्षेत्रोंमें राष्ट्रभाषाका प्रचार कर रहे हैं। समितिके प्रति स्नेह-सहानुभूति रखनेवाले हिन्दी-प्रेमियोंकी संख्या भी बहुत बड़ी है।

'राष्ट्रभारती' समितिकी अन्तरप्रान्तीय (भारतीय) साहित्य और संस्कृतिकी प्रतिनिधि मासिक पत्रिका है। अिसकी अुपयोगिता और आवश्यकता आप लोगोंसे छिपी नहीं है। अपनी अितनी सस्ती, विविध विषय-सम्पन्न, अेवं सुरुचिपूर्ण मनोरंजक, ज्ञानपोषक, सुन्दर, अेक अूँचे दर्जेकी पत्रिकाको अगर आप लोग चाहें तो बहुत ही शीघ्र स्वावलम्बी बना सकते हैं। यह अितनी नियमित है कि प्रतिमास १ ली तारीखको पाठकोंके हाथमें ही पहुँच जाती है। वार्षिक मूल्य ६ रुपया, अर्धवार्षिक ३॥) और अेक अंकका दस आना है। स्कूलों-कालेजों और पुस्तकालय-वाचनालयोंके लिअे अिसका वार्षिक चन्दा ५) रु. रखा गया है।

प्रत्येक प्रचारक और केन्द्र-व्यवस्थापक 'राष्ट्रभारती' का ५) रु. देकर स्वयं ग्राहक बने तथा अपने-अपने प्रचार केन्द्रमें कम-से-कम अेक-अेक ग्राहक बना दें, तो अिसकी ग्राहक संख्या बढ़ जायगी और तब यह स्वावलम्बी बन जायगी। सिर्फ आर्थिक लाभकी दृष्टिसे ही हमें नहीं सोचना है; भारतीय विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं और साहित्य और संस्कृतिके अुच्च अुद्देश्यको भी पूरा करनेके लिअे अिस पत्रिकाके पाठकोंकी संख्या बढ़ाना, ग्राहक बनाना अत्यन्त आवश्यक है। यह मुश्किल नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि आप लोग 'राष्ट्रभारती' के ग्राहक खुद बनेंगे, दूसरोंको बनाअेंगे और 'राष्ट्रभारती' की पाठक-संख्या बढ़ानेमें अपनी समितिकी सहायता करेंगे। मुझे विश्वास है।

आपका—

मोहनलाल भट्ट

मंत्री, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
रजिस्टर्ड नं० ना० २५६

राष्ट्रभारतीके प्रेमी पाठकोंसे निवेदन

जो राष्ट्रभाषा-प्रेमी सज्जन ग्राहक हैं और 'राष्ट्रभारती' को नियमित पढ़ते हैं अुनसे हमारा यह निवेदन है :--

गत जनवरी-१९५६ से राष्ट्रभारतीने छठे वर्षमें प्रवेश किया है। भारतके और देश-विदेशके भारतीय साहित्यके-प्रेमी विद्वान् साहित्यकारोंने मुक्त-कंठसे 'राष्ट्रभारती' की प्रशंसा की और अुसमें लिखना शुरू किया।

'राष्ट्रभारती' को अबतक जो कुछ सफलता और लोकप्रियता मिली है, यह अुसके प्रेमी रसिक पाठकों और कृपालु लेखकोंके स्नेह तथा सहयोग-दानका फल है। अिसके लिअे हम आभारी हैं। यदि आप चाहते हैं कि 'राष्ट्रभारती' राष्ट्रकी, राष्ट्रभाषाकी और विविध समृद्ध समग्र भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी अच्छी तरह स्वावलम्बी होकर, अपने पैरोंपर खड़े होकर, सतत सेवा करती रहे तो आप सबका हार्दिक सक्रिय सहयोग तुरन्त अुसे मिलना चाहिअे और वह अितना ही कि--

आप तो अिसके स्थाअी ग्राहक, पाठक, बने ही रहें, साथ ही आप अपने अिष्ट-मित्रों, परिचितोंमेंसे भी कम-से-कम दो नअे ग्राहक राष्ट्र-भारतीके लिअे अवश्य बना दें और मनीआर्डरसे ही प्रतिग्राहक ६) रु. चन्दा भिजवा दें।

रियायत:--समितिके प्रमाणित प्रचारकों, शिक्षकों, केन्द्र-व्यवस्थापकों तथा सभी सार्वजनिक पुस्तकालयों, वाचनालयोंके लिअे केवल ५) वार्षिक चन्दा रखा गया है। अतः वे ५) रु. मात्र म० आ० से भेजें।

'राष्ट्रभारती' के प्रत्येक अंकका सामग्री-स्तर अूंचे धरातलका और पठन-मनन-चिन्तन योग्य रहता है। अूपरी टीमटाम तथा तड़क-भड़कसे दूर, सादगी अुसकी विशेषता है।

पता:--व्यवस्थापक,
'राष्ट्रभारती', हिन्दीनगर, वर्धा

मुद्रक तथा प्रकाशक:—मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[बिहार, मध्यप्रदेश, भोपाल, सौराष्ट्र आदि राज्योंके शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत पत्रिका]

* अिस अंकमें कहाँ क्या पढ़ेंगे *

(सूचना :—' राष्ट्रभारती ' के प्रत्येक अंकका प्रत्येक पृष्ठ पठन-मनन योग्य सामग्रीसे पूर्ण रहता है ।)

(लेखकोंसे नम्र निवेदन है कि 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ वे जो कुछ सामग्री—कविता, कहानी, अेकांकी, निबन्ध, लेख आदि मौलिक या अनुवाद भेजें, वह अप्रकाशित ही रचना हो जो मनोरंजक, ज्ञानपोषक, साहित्य-संस्कृति-सुरभि-सम्पन्न तथा बहुत स्वच्छ सुवाच्य नागरी लिखावटमें होनी चाहिअे । अस्वच्छ, अस्पष्ट, क्लिष्ट लिखावट हमें कदापि स्वीकृत न होगी । सामग्री भेजनेसे पहले कृपालु लेखक विचार कर लें । —सं.)

		लेखक	पृ. सं.
१. लेख :			
१. रामचरित-मानसमें सन्त-असन्त	...	डा. बलदेवप्रसाद मिश्र	५६१
२. राजस्थानी भाषा और अुसका साहित्य	...	श्री अगरचन्द नाहटा	५६९
३. तेल मलना (लघु-निबन्ध)	...	स्व. महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री	५८०
४. साअिप्रसका सवाल	...	श्री परदेशी, साहित्य-रत्न	५८२
५. श्री 'अज्ञेय' से लन्दनमें भेंट	...	श्री धीरेन्द्र शील, लन्दन	५८९
६. आचार्य रामचन्द्र शुक्लकी पहली रचना	...	श्री चन्द्रशेखर शुक्ल	५९२
७. बरसात	...	श्री 'कुमार'	५९६
२. कविता :			
१. मेरे स्वप्न खोलकर दे दो.....!	...	श्री माखनलाल चतुर्वेदी	५५९
२. भारत जननी अेक हृदय हो !	...	श्री रामेश्वर दयाल दुबे, अेम. अे., साहित्य-रत्न	५६०
३. दीप जलमें बह चला !	...	श्री 'अंचल'	५९१
४. गीत !	...	श्री रंगनाथ 'राकेश'	६१५
३. कहानी :			
१. पापुअी द्वीपकी ध्वंस-कथा (बंगला)	...	श्री नवेन्दु घोष अनुवादक—श्री प्रबोधकुमार मजुमदार	५९९
४. साहित्यालोचन		श्री कालिकाप्रसाद दीक्षित 'कुसुमाकर' प्रो. रामचरण महेन्द्र, अेम. अे.	६१६
५. सम्पादकीय	...	...	६१९
६. राष्ट्रभारती मुझे बहुत प्रिय है !	...	श्री वाणीभूषण मिश्र, बी. अे. (आनर्स)	६२२

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

रियायत— समितिके सभी प्रमाणित प्रचारकों, केन्द्र-व्यवस्थापकों और स्कूल-कालेजों तथा सार्वजनिक पुस्तकालय-वाचनालयोंको अेक वर्षतक केवल ५) रु. वार्षिक चन्देमें मिलेगी ।

पता—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[समग्र भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

वर्ष ६] सितम्बर-१९५६ [अंक ९

मेरे स्वप्न खोल कर दे दो....

—श्री माखनलाल चतुर्वेदी

तुमने मुट्ठीमें बांधे हैं मेरे स्वप्न खोल कर दे दो।
मेरे अपराधोंकी यादें टुक जीसे टटोल कर दे दो !

दिन बीते, मौसमें बिताओं, बरस गअे, दृग बरस गअे, बस !
छोड़े सब वरदान तुम्हारे, खेल-खेलमें तरस गअे बस !!

पूरबमें क्या लखूँ ? सुनहली धूलोंका अम्बार लगा है,
पश्चिममें अणुके अरमानोंसे मानव-संहार जगा है ।

अुत्तरके हिम-खण्डोंमें, जागरण-ज्योतिसे आग लगी है,
जल न अुठे अेशिया, प्रकृतिके आँखों कुंकुम् ज्योति जगी है ।

रामेश्वरसे विश्वनाथके टुकड़े कर क्या देख रहे हो !
गंगासे कृष्णा रूठेगी, भू-को पागल लेख रहे हो ?

बोली, मजहब, कौम, अिबारत, जायदाद क्या क्या नखरे हैं,
भाअीसे भाअी कहता है--तुम खोटे हो, हमीं खरे हैं !

बद्रीनारायणकी यात्रामें हम साथ साथ ही डोले,
रामेश्वरपर गंगाजल जब चढ़ा साथ ही अर्चा बोले !

तीर्थ यात्रियोंने समस्त भारतको अपना घर ही जाना,
भाषाओंके हेलमेलको विविध विश्वका वर ही जाना ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम अपनी मर्कट-लीलासे माना, अग जग व्याप अुठे हैं;
पैमायश अैसी कर डाली, माँका आँचल माप रहे हैं !
झगड़े तो मानव स्वभाव है, अिससे बिगड़ अुठे क्यों लाला,
अैसा मानव आज मिले जो मातृ-भक्त बन सहे कसाला,
संस्कृतिने न्यौता न दिया तुम देश विभाजन स्वर सुन बैठे,
लोकमान्य बापू रवीन्द्र किसने बतलाया ? क्या गुन बैठे !
मेल बढ़े, संस्कृति हुलसावे, लहरे सप्त-सरितकी धारा,
साथ-साथ सब हो यदि अुतरे 'क्षण-योजना-बुखार' तुम्हारा !
गंगाजल रामेश्वर पूजे; चढ़े समुद्र-नीर बदरी पर,
अेक गगन हो, अेक पवन हो, अेक राष्ट्र स्वर गूँजे घर घर।
मिलनेके वरदान, अुठो, अुन्नतिमें आज घोल कर दे दो,
तुमने मुट्ठीमें बांधे हैं, मेरे स्वप्न खोलकर दे दो।

भारत जननी अेक हृदय हो !

—श्री रामेश्वर दयाल दुबे

अेक राष्ट्रभाषा हिन्दीमें,
कोटि-कोटि जनताकी जय हो,
स्नेह-सिक्त मानसकी वाणी,
गूंजे गिरा यही कल्याणी,
चिर अुदार भारतकी संस्कृति
सदा अभय हो, सदा अजय हो।
भारत जननी अेक हृदय हो,
मिटे विषमता, सरसे समता,
रहे मूलमें मीठी ममता
तमस-कालिमाको विदीर्ण कर
जन-जनका पथ ज्योतिर्मय हो
भारत जननी अेक हृदय हो।
जाति-धर्म-भाषा विभिन्न स्वर
अेक राग हिन्दीमें सजकर
झंकृत करें हृदयतन्त्रीको
स्नेह-भाव प्राणोंमें लय हो
भारत जननी अेक हृदय हो।

(दिनांक १४ सितम्बर अखिल भारतीय हिन्दी-दिवसके अुपलक्ष्यमें, जिसे रा. भा. प्र. समिति वर्धा भारतके विभिन्न प्रान्तोंमें बड़े समारोहके साथ अुत्सव रूपमें मनाती है। तब यह गीत सु-स्वरमें गाया जाता है।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामचरित-मानसमें सन्त-असन्त

—डॉ० बलदेवप्रसाद मिश्र :

[श्री मिश्रजी (डॉ. पण्डित बलदेव प्रसाद) ने गोस्वामी तुलसीदासका अेक महान् भारत-भाग्य विधाता, राष्ट्रनिर्माताके रूपमें सम्पूर्ण दर्शन, श्रवण, चिन्तन, मनन, अध्ययन, अध्यापन और निदिध्यासन किया है और तुलसीके 'मानस' में गहरे पानी पैठ अनमोल अगनित मोती निकाले हैं। डॉ. मिश्र हिन्दी-जगत्की महती विभूति हैं। —सम्पादक]

बन्दहुँ विधि पद रेनु, भवसागर जेहिं कीन्ह जहं,
सन्त-सुधा ससि धेनु, प्रगटे खल विस वारुनी ॥

अेक ही पिताके दो पुत्रोंमें अेक सन्त हो सकता है और दूसरा खल हो सकता है। भवसागर अेक ही है जिसे विधाताने बनाया परन्तु अुसीसे सुधा, शशि और कामधेनु सरीखे सन्त तत्व प्रकट हुअे और खल, विष तथा वारुणी (मदिरा) सदृश असन्त तत्व भी। सन्तत्व और असन्तत्वके लिअे कुलकी नहीं, किन्तु करतूतकी प्रधानता है। देखिअे न :—

अुपजहिं अेक संग जल माँही,
जलज जोंक जिमि गुन बिलगाहीं।
सुधा सुरा सम साधु असाधू,
जनक अेक जग जलधि अगाधू ॥
भल अनभल निज निज करतूती,
लहत सुजस अपलोक विभूती ॥

दोनोंके सामान्य व्यवहार भी अेकसे हो सकते हैं परन्तु अुन दोनोंके परिणाममें जमीन-आसमानका अन्तर हो जाता है। दोनों ही दूसरोंको दुख देनेकी क्षमता रखते हैं, दूसरेके लिअे दुख सहनेकी क्षमता रखते हैं, दोनोंमें ही जीवनका अुज्ज्वल और श्याम पक्ष बराबर-बराबर रह सकता है, फिर भी परिणामकी दृष्टिसे अेक परम यशस्वी होता है और दूसरा परम निन्दनीय। देखिअे :—

बन्दअुँ सन्त असज्जन चरना,
दुखप्रद अुभय, बीच कछु बरना।
मिलत अेक दारुन दुख देहीं,
बिछुरत अेक प्रान हरि लेहीं ॥
भूरज तरु सम सन्त कृपाला,
पर हित नित सह विपति कसाला।
सन अिव खल परबन्धन करअी,
खाल कढ़ाअि विपति सहि मरअी ॥
सम प्रकास तम पाख दुहुं,
नाम भेद विधि कीन्ह।
ससि पोषक सोसक समुझि,
विधि जस अपजस दीन्ह ॥

दुखप्रद वह भी है जो मिलते ही दारुण दुखकी नींव डाल दे और वह भी है जो बिछुड़नेसे मर्मान्तिक पीड़ा दे। अन्यके लिअे दुःख-सहिष्णु सन भी है और भोजपत्रका वृक्ष भी, अिसी तरह बराबर-बराबर अन्धेरे अुजेलेवाला कृष्णपक्ष भी है और शुक्लपक्ष भी। परन्तु फिर भी अेक अनर्थ-कारी अतअेव अपयश-भाजन है और दूसरा अुपकार-कारी अतअेव सुयशका भाजन है।

सुमति और कुमतिकी भांति सन्तत्व और खलत्व प्रत्येक हृदयमें निवास करता है, परन्तु जहाँ सन्तत्वकी प्रधानता है वहाँ सच्ची समृद्धिकी प्रधानता है और जहाँ खलत्वकी प्रधानता हो जाती है वहाँ समझिअे कि विपत्तिकी प्रधानता होगी ही।

सुमति कुमति सबके अुर रहहीं,
नाथ पुरान निगम अस कहहीं।
जहाँ सुमति तहं सम्पति नाना,
जहाँ कुमति तहं विपति निदाना ॥

सुमतिका तकाजा यह है कि मन-वाणी-क्रियासे परोपकारपर ध्यान रखा जाय। सन्त और असन्तके परखनेकी कसौटी भी यही है।

पर अुपकार वचन मन काया,
सन्त सहज सुभाव खगराया।

मनुष्यमें जड़ और चेतन-तन और आत्मा—दोनोंका ही मेल है। जड़त्व यदि प्रबल हुआ तो आसुरी अथवा खलत्वकी प्रवृत्ति जागेगी, चेतनत्व प्रबल हुआ तो दैवी प्रवृत्ति अथवा सन्तत्वकी वृति जागेगी। जड़त्वकी प्रबलतामें मनुष्य अपने ही साढ़े तीन हाथके शरीरको सब कुछ मान बैठता है और अपनेसे भिन्न व्यक्तियोंको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने सुखका--अैश, आराम और स्वार्थका साधन बनानेके लिअे अुनके साथ भाँति-भाँतिके विपरीत व्यवहार करने लगता है और परिणाममें भाँति-भाँतिके दुख भी अुठाता है। फिर तो जिस शरीरके सुखके लिअे अुसने अितनी खटपट अुठाअी थी अुसको भी घोर संकटमें डालकर वह दूसरोंका अुपकार करता फिरता है। यही अुसका स्वभाव बन जाता है।

'खल बिनु स्वारथ पर अपकारी,
अहि मूसक अिव सुनु अुरगारी।'

चेतनत्वकी प्रबलतामें मनुष्य अपनी ही प्रतिच्छाया प्रत्येक मनुष्यमें ही नहीं; किन्तु प्रत्येक प्राणी और जड़-चेतन सभी वस्तुओंमें देखने लगता है। 'पर अुपकार' ही अुसका 'सहज सुभाव' बन जाता है।

खलवृत्तिवाला मनुष्य दूसरोंके छिद्र, अैब ही ढूँढा करता है और सन्त-वृत्तिवाला मनुष्य गुणोंकी ही खोजमें रहता है। 'जो जेहि भाव नीक पै सोअी'।

जड़ चेतन गुण दोषमय,
विस्व कीन्ह करतार।
सन्त हंस गुण गहहिं पय,
परिहरि बारि विकार॥

यही नहीं, अपने-अपने स्वभावके अनुसार दोनोंकी मनोवृत्तियाँ भी अिस ढंगकी बन जाती हैं कि अेक दैवी सम्पत्तियोंवाला बन जाता है और दूसरा आसुरी सम्पत्तियोंवाला। गीतामें कहा गया है "दैवी सम्पद् विमोक्षाय, निबन्धायासुरी मता" अिन सम्पत्तियोंका अितना असर होता है कि जिन व्यक्तियोंके पास ये पहुँचती हैं अुनमें तो ये असर करती ही हैं परन्तु जो अैसे व्यक्तियोंके सम्पर्कमें आता है अुसपर भी अिनका असर हो जाता है।

हानि कुसंग सुसंगति लाहू,
लोकहु वेद विदित सब काहू।

अिसलिअे--'बुध नहिं करहिं अधम कर संगा।'

अतअेव नितान्त आवश्यक है कि सन्तों और असन्तोंकी परख कर ली जाय। अुनके लक्षणोंको समझ लिया जाय। गोस्वामीजी सन्तोंकी वन्दना करते हुअे अुनके स्वभावका अिस प्रकार वर्णन करते हैं:-

बन्दअुं सन्त समान चित,
हित अनहित नहिं कोअू।
अंजलिगत सुभ सुमन जिमि,
सम सुगन्ध कर दोअू॥

० ० ०

सुनु मुनि सन्तनके गुन कहहूँ,
जिन्ह ते मैं अुनके बस रहहूँ।
षट् विकार जित अनघ अकामा,
अकल अकिंचन सुचि सुखधामा।
अमित बोध अनीह मित भोगी,
सत्यसंध कवि कोविद जोगी।
सावधान मानद मदहीना,
धीर भगति पथ परम प्रवीना।
निज गुन स्रवन सुनत सकुचाहीं,
पर गुन सुनत अधिक हरखाहीं।
सम सीतल नहिं त्यागहिं नीति,
सरल सुभाअु सबहिसन प्रीति।

० ० ०

दम्भ मान मद करहिं न काअू,
भूलि न देहिं कुमारग पाअूं।
गावहिं सुनहिं सदा मम लीला,
हेतुरहित पर-हित-रत सीला।

० ० ०

सन्तनके लच्छन सुनु भ्राता,
अगनित सुरुति पुरान विख्याता।
विषय अलम्पट सील गुनाकर,
पर दुख-दुख सुख-सुख देखे पर।
सम अभूत-रिपु विमद विरागी,
लोभामर्ख हरष भय त्यागी।
कोमल चित दीनन पर दाया,
मन वच क्रम मम भगति अमाया।
सबहि मानप्रद आपु अमानी,
भरत प्राणसम मम ते प्राणी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोस्वामी तुलसीदासजीने भगवान्‌के मुखसे सन्तोंके लक्षण विस्तारपूर्वक दो स्थलोंपर कहलवाअे हैं। अेक तो अरण्यकाण्डमें नारदके प्रश्नपर और दूसरे अुत्तर-काण्डमें भरतके प्रश्नपर। नारदसे भगवान् कहते हैं कि सन्तोंके जिन गुणोंके कारण मैं अुनके वशमें रहता हूँ वे फलाने-फलाने हैं। भरतसे भगवान् कहते हैं कि सन्तोंके जिन गुणोंके कारण वे मुझे परम प्रिय लगते हैं वे अमुक-अमुक हैं। अुन दोनोंकी प्रमुख तालिका अूपर दी गअी है। प्रथम तालिकामें सम, सीतल, नहिं त्यागहिं नीति, सरल सुभाअु, सबहिं सन प्रीती, और दूसरी तालिकामें विषय अलम्पट, सील गुनाकर, परदुख-दुख सुख-सुख देखे पर तथा मन क्रम वच मम भगति, अमाया अैसे दस लक्षण विशेष रूपसे दर्शनीय हैं। यों तो कह ही दिया गया है कि अुनके लक्षण 'अगणित श्रुति पुराण विख्याता' हैं।

सन्त ही सच्चा मित्र हो सकता है क्योंकि मित्रताका अर्थ है अपने स्वार्थकी अपेक्षा अपने किसी घनिष्ठके स्वार्थको अधिक महत्व देना। अतअेव जो वास्तविक मित्र होगा वह निश्चय ही सन्त भी होगा। सन्त ही सच्चा भक्त हो सकता है। भक्तिका अर्थ ही अपने समूचे स्वार्थको प्रभुके चरणोंमें अर्पित कर देना और प्रभुकी अिच्छाको ही सर्वोपरि मान लेना। अतअेव जो भक्त होगा वह निश्चय सन्त भी होगा। हम तो यह भी कहेंगे कि जो अपना हितैषी है, चाहे वह सामान्य पाटकीट हो (रेशमका कीड़ा), (**पाटकीट ते होय, तेहि ते पाटम्बर रुचिर, पालत हैं सब कोय परम अपावन प्रान सम**) चाहे माता-पिता-गुरुके समान महनीय व्यक्ति हो (**मातु पिता गुरु प्रभु कअी बानी, बिनहिं विचार करिय सुभ जानी।**) वह अुसी अंश तक सन्तकी श्रेणीमें है। जिससे जिस अंशमें परहित हो रहा है वह अुसी अंशमें सन्त है। मित्रके लक्षण गोस्वामी-जीने किष्किन्धा काण्डमें कहे हैं और भक्तके लक्षण तो जगह-जगह कहे हैं। विशेषतः वे स्थल देखे जायँ जहाँ वाल्मीकिने भगवान्‌को अुनके रहनेलायक स्थान बताअे हैं, स्वतः भगवान्‌ने लक्ष्मण और शबरीको अपनी नवधा भक्ति बताअी है तथा बिभीषणकी कुशल-चर्चापर अपना स्वभाव बताया है।

सन्तों या सत्‌जनोंके लक्षणोंके सम्बन्धमें मुख्य कसौटी वही है जो पहिले बताअी गअी है। जहाँ अुनके स्वार्थका प्रश्न होगा वहाँ वे वज्रके समान कठोरताके साथ नीति-धर्मका पालन करेंगे और जहाँ दूसरोंके स्वार्थका प्रश्न होगा वहाँ वे कुसुमसे भी कोमल हो जाअेंगे। अुनका अुदय सदैव सुखकारी होता है।

सन्त बिटप सरिता गिरि धरनी,
परहित हेतु सबन्हि कै करनी।
सन्त-हृदय नवनीत समाना,
कहा कविन्ह पै कहअि न जाना।
निज परिताप दहअि नवनीता,
परहित द्रवहिं सन्त सुपुनीता॥

० ० ०

सन्त अुदय सन्तत सुखकारी,
विस्व सुखद जिमि अिन्दु तमारी।

परन्तु कठिनाअी यह है कि सच्चे सन्त बहुत कम ही मिला करते हैं। कबीरने भी तो कहा है—"साधु न चलहिं जमाति।" गोस्वामीजी कहते हैं:—

जग बहुनर सरिसर सम भाअी,
जे निज बाढ़ बढ़हिं जलु पाअी।
सज्जन सुकृत सिन्धु सम कोअी,
देखि पूर विधु बाढ़अि जोअी॥

० ० ०

प्रिय बानी जे सुनहिं जे कहहीं,
अैसे नर निकाय जग अहहीं।
बचन परम हित सुनत कठोरे,
सुनहिं जे कहहिं ते नर प्रभु थोरे॥

० ० ०

जिन्हके लहहिं न रिपु रन पीठी,
नहिं लावहिं परतिय मन दीठी।
मंगन लहहिं न जिनके नाहीं,
ते नरवर थोरे जग माहीं॥

अथवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारि नयन सर जाहि न लागा,
घोर क्रोध तम निसि जो जागा।
लोभ पास जेहि गर न बंधाया,
सो नर तुम समान रघुराया ॥
यह गुन साधन ते नहि कोओी,
तुम्हरिहि कृपा पाव कोओि कोओि।

वे कम होते हुअे भी अितने अुदार होते हैं कि अपनेसे छोटोंको ठुकराना तो दूर रहा, सिर माथेपर ही लेते हैं। वे दुख सहकर भी दूसरोंके छिद्र दुराते हैं:—

बड़े सनेह लघुनपर करहीं,
गिरि निज सिरन्ह सदा तृन धरहीं।
जलधि अगाध मौलि बह फेनू,
सन्तत धरनि धरत सिर रेनू ॥

० ० ०

साधु चरित सुभ सरिस कपासू,
निरस बिसद गुनमय फल जासू।
जो सहि दुख पर-छिद्र दुरावा,
बन्दनीय जेहि जग जस पावा ॥

अिसलिअे आग्रहपूर्वक अुनसे सम्पर्क बढ़ाना चाहिअे।

सत्संगके बिना कभी कोओी शुभ कार्य बनता नहीं। सत्संग सुलभ हो तो समझिअे कि अीश्वरकी बड़ी कृपा है अिसलिअे वह अेक क्षणके लिअे भी मिल जाय, अुसका अेक-अेक परमाणु भी मिल जाय, तो समझिअे कि बड़े भाग्य हैं हमारे।

जलचर थलचर नभचर नाना,
जे जड़ चेतन जीव जहाना।
मति कीरती गति भूति भलाओी,
जो जेहि जतन जहाँ लगि पाओी ॥
सो जानब सत संग प्रभाअू,
लोकहु वेद न आन अुपाअू।

० ० ०

सत संगति मुद मंगल मूला,
सोअि फल सिधि सब साधन फूला।

० ० ०

गिरिजा सन्त समागम,
सम न लाभ कछु आन।
बिनु हरि कृपा न होहि सो,
गावहिं वेद-पुरान ॥
बिनु सतसंग विवेक न होओी,
रामकृपा बिनु सुलभ न सोओी।

० ० ०

तबहिं होहिं सब संसय भंगा,
जब बहु काल करिय सतसंगा।

० ० ०

भगति सुतंत्र सकल गुन खानी,
बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी।
पुन्य पुँज बिनु मिलहिं न सन्ता,
सत संगति संसृति कर अन्ता।

० ० ०

बिनु सतसंग न हरिकथा,
तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गअे बिनु रामपद,
होअि न दृढ़ अनुराग।
मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा,
किअे जोग जप जाग विरागा।

परन्तु दुर्लभ होते हुअे भी प्रबल अिच्छा हो तो वह सत्संग 'सबहि सुलभ' भी हो सकता है:—

मुद मंगलमय सन्त समाजू,
जो जग जंगम तीरथराजू।
राम भगति जहं सुरसरि धारा,
सरसअि ब्रह्म विचार प्रचारा।
विधि निषेधमय कलिमल हरनी,
करम कथा रवि नंदनि बरनी।
हरिहर कथा विराजति बेनी,
सुनत सकल मुद मंगल देनी।
बट विस्वासु अचल निज धर्मा,
तीरथराज समाज सुकर्मा।
सबहि सुलभ सब दिन सब देशा,
सेवत सादर समन क्लेसा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकथ अलौकिक तीरथराऊ,
देअि सद्य फल प्रगट प्रभाऊ।
सुनि समुझहिं जन मुदित मन,
मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत तनु,
साधु समाज प्रयाग।
मज्जन फल देखिअे ततकाला,
काक होंहि पिक बकहु मराला।

गोस्वामीजी कहते हैं कि सामान्य व्यक्तियोंके अूपर संगका असर हुअे बिना रह नहीं सकता। सुसंग मिला तो वे अच्छे हो जाअेंगे और कुसंग मिला तो बुरे हो जाअेंगे। सामान्य वस्तुओंतकमें यह असर देखा जा सकता है।

गगन चढ़अि रज पवन प्रसंगा,
कीचहि मिलहि नीच जलसंगा।
साधु असाधु सदन सुक सारी,
सुमिरहिं रामु, देहिं गनि गारी।
धूम कुसंगति कारिख होअी,
लिखिय पुरान मंजु मसि सोअी।
सोअि जल अनल अनिल संघाता,
होअि जलद जग जीवनदाता।
ग्रह भेसज जल पवन पट,
पाअि कुजोग सुजोग।
होंहि कुवस्तु सुवस्तु जग,
लखहिं सुलच्छन लोग।

अिस प्रसंगमें 'सुरसरि जलकृत वारुनि जाना, कबहुं न सन्त करहिं तेहि पाना, सुरसरि मिले सो पावन कैसे, अीस अनीसहिं अन्तर अैसे—वाला दृष्टान्त भी भली-भाँति मननीय है।

सामान्य जनकी कौन कहे यदि खल भी सुसंगमें पड़ जाय तो कुछ-न-कुछ भलाअी कर ही बैठता है, भले ही अपने स्वभावसे लाचार होकर पीछे अुसकी पोल खुल जाय, परन्तु सज्जनताका बाहरी बाना रखकर वह कुछ तो अपनेको पुजवा ही लेता है। और यदि कोअी दिखावमें साधुताका बाना न भी रखता हो किन्तु हो वस्तुतः साधु तो अुसका तो जगत्में सम्मान होगा ही और अुसका संग भी लाभप्रद रहेगा।

खलअु करहिं भल पाअि सुसंगू,
मिटअि न मलिन सुभाअु अभंगू।
लखि सुवेसु जग बंचक जेअू,
वेस प्रताप पूजयहि तेअू।
अुघरहिं अन्त न होअी निबाहू,
कालनेमि जिमि रावणराहू।
कियेहु कुवेसु साधु सनमानू,
जिमि जग जामवन्त हनुमानू।
हानि कुसंग सुसंगति लाहू,
लोकहु वेद विदित सब काहू।

खल लोग भी सन्तोंका वेश धारण करके समाजमें विचरण कर सकते हैं और सन्त लोग 'कुवेस' धारी होकर अपरिचित बने रह सकते हैं। किसको अपनाया जाय और किसको त्यागा जाय यह तो पहिचान या परख होनेपर ही निश्चित किया जा सकता है "संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने।" अतअेव जिस प्रकार सन्तोंके विस्तृत लक्षण जान रखना जरूरी है अुसी प्रकार अ-सन्तोंके भी लक्षण विस्तृत रूपमें जान रखना जरूरी है।

समान-चित्त गोस्वामीजीने जिस प्रकार सन्तोंकी वन्दना की है अुसी प्रकार खलोंकी भी वन्दनाकी है और अिसी वन्दनामें अुन्होंने खलोंके बड़े खास-खास लक्षण बता दिअे हैं। वे कहते हैं :—

बहुरी बन्दि खल गन सति भाये,
जे बिनु काज दाहिनेहु बांयें।
पर हित हानि, लाभ जिन केरे,
अुजरे हर्ष विषाद बसेरे।
हरिहर जस राकेस राहुसे,
पर अकाज भट सहस बाहुसे।
जे पर दोष लखहिं सहसाखी,
पर हित घृत जिनके मन माखी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेज कृसानु रोष महिसेसा,
अघ अवगुन धन धनी धनेसा।
अुदय केतु सम हित सब ही के,
कुम्भकरन सम सोवत नीके।
पर अकाजु लगि तनु परिहरहीं,
जिमि हिम अुपल कृषी दलि गरहीं।
बन्दअुँ खल जस शेष सरोषा,
सहस बदन बरनअी पर दोषा।
पुनि प्रनबअुँ पृथुराज समाना,
पर अघ सुनअि सहसदस काना।
बहुरि सक्र सम बिनवअुँ ते ही,
संतत सुरानीक हित जेही।
बचन वज्र जेहि सदा पियारा,
सहस नयन पर दोष निहारा।
अुदासीन अरि मीतहित,
सुनत जरहिं खल रीति।
जानि पानि जुग जोरि जनु,
बिनती करअि सप्रीति।
में अपनी दिसि कीन्ह निहोरा,
तिन निज ओर न लाअुब भोरा।
बायस पलियहि अति अनुरागा,
कबहु निरामिष होअि कि कागा?

मजा यह है कि वन्दना करते हुअे भी वे यह नहीं कहते कि खल लोग अुनके साथ अपनी खलता छोड़ दें।

भर्तृहरिने 'नीति शतक' में* चार प्रकारके मनुष्य बताअे। अेक वे जो स्वार्थका त्यागकर दूसरेका हित करें। अेक वे जो स्वार्थको साधते हुअे दूसरेका हित करें। तीसरे वे जो स्वार्थके लिअे दूसरेका हित नष्ट करें और चौथे वे जो बिना स्वार्थके भी दूसरोंका अहित करते रहें। तीसरे दर्जेवालोंको अुन्होंने मानव-राक्षस कहा है और चौथे दर्जेवालोंको क्या कहा जाय यह वे भी नहीं समझ पाअे। गोस्वामीजीने दो दर्जे और बढ़ा दिअे हैं। पांचवाँ दर्जा अुनका है जो दूसरोंका अहित करने ही में अपना स्वार्थ मानों **परहित हानि, लाभ जिन केरे, अुजरे हर्ष, विषाद बसेरे,** और छठां दर्जा अुनका है जो दूसरोंका अहित करनेमें अपना सर्वस्व, और यहाँ तक कि जीवन भी, अर्पित कर देंगे। **'परहित घृत जिनके मन माखी।'** मक्खी घीमें पड़कर भले ही मर जाय परन्तु घी तो बिगाड़ेगा ही। अिससे भी तगड़ा अुदाहरण है **'जिमि हिम-अुपल कृषी दलि गरहीं'** का। कौनसा स्वार्थ है ओलोंका, कि वे आकाशका अुच्च अुन्नत निवास त्यागकर फसलका जबरदस्ती नुकसान करनेको ही यहाँ बहुत नीचे धरातलपर ही अुतर आते हैं: **'अूंच निवास नीच करतूती देखि न सकहि पराअी विभूती।'** भले ही अुसे चौपट करनेमें अुन्हें स्वतः भी गलकर नष्ट हो जाना पड़े। यह है आदतकी लाचारी। यह है सच्चा खलत्व। हमने सुभाषितमें पढ़ा था कि अेक मनुष्य अिसलिअे जबरदस्ती जंगली बाघका भक्ष्य बना था कि अुसे खाकर बाघको नरमाँसकी चाट लग जाय और वह फिर अुस गाँवके सब आदमियोंको, जिनसे कदाचित् अुसकी शत्रुता हो गअी होगी, अेक-अेक करके खा डाले। नीरोने कब परवाह की कि अितिहास अुसके मुँहपर खूब कालिख पोतकर अुसे जन्म-जन्मतक गालियाँ देता रहेगा। परन्तु अुसने तो देखा कि मनुष्य अपने बाल-बच्चों समेत किस प्रकार जल-भुँजकर और तड़प-तड़पकर मर सकते हैं।

गोस्वामीजी लिखते हैं:— **खल बिनु स्वारथपर अपकारी, अहि मूषक अिव सुनु अुरगारी।** अैसा आदमी यदि बिलैया दण्डवत करे—बड़ी नम्रता दिखावे - तो भी अुससे बहुत सतर्क रहना चाहिअे। **'नवनि नीच कै अति दुखदाअी, जिमि अंकुस धनु अुरग बिलाअी।'** राक्षस-वर्ग अिन्हींमेंसे तो रहता है। गोस्वामीजी कहते हैं—

---

* यह रहा श्री भर्तृहरिका वह श्लोक जिसकी व्याख्या डॉक्टर बलदेवप्रसाद मिश्रजीने अूपर की है:—

अेके सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थं परित्यज्य ये,
सामान्यास्तु परार्थमुद्यतभृतः स्वार्थाविरोधेन ये।
तेऽमी मानुषराक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये,
येतु घ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे॥

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाढ़े खल बहुचोर जुआरा,
जे ताकहिं परधन परदारा।
मानहिं मातु पिता नहिं देवा,
साधुन्ह सन करवावहिं सेवा।
जिन्हके ये आचरन भवानी,
ते जानहु निसिचर सम प्रानी।।

जैसे भरतके प्रश्नपर प्रभुने सन्तोंका वर्णन किया है, वैसे ही असन्तोंका भी वर्णन किया है। वे कहते हैं-

सुनहु असन्तन केर सुभाऊ,
भूलेहु संगति करिय न काऊ।
तिन्ह कर संग सदा दुखदाओ,
जिमि कपिलहि घालअि हरहाओ।।
खलन्ह हृदय परिताप विसेखी,
जरहिं सदा पर-सम्पति देखी।
जहं कहुं निन्दा सुनहिं पराओ,
हरषहिं मनहु परी निधि पाओ।।

० ० ०

बयरु अकारन सब काहू सों,
जो कर हित अनहित ताहू सो।

० ० ०

बोलहिं मधुर वचन जिमि मोरा,
खाहिं महा अहि हृदय कठोरा।
परद्रोही परदार रत, परधन परअपवाद,
ते नर पाँवर पापमय, देह धरे मनुजाद।।
लोभअि ओढ़न लोभअि डासन,
सिसनोदर-पर जमपुर त्रास न।
काहू कै जौं सुनहिं बड़ाओ,
स्वास लेहिं जनु जूड़ी आओ।।
जब काहू कै देखहिं बिपती,
सुखी भअे मानहु जग नृपती।

० ० ०

अैसे अधम मनुज खल, कृत जुग त्रेता नाहिं।
द्वापर कछुक वृन्द बहु, होअिहहिं कलिजुग माहिं।।

कलियुगका तो यह हाल है कि:—

लघु जीवन संवत पंचद-सा,
कलपात्र न नास गुमान असा।
कलिकाल बिहाल किअे मनुजा,
नहि मानत कोअु अनुजा तनुजा।।
अिरिसा परुषाच्छर लोलुपता,
भरि पूरि रही समता विगता।
तनु पोषक नारिनरा सगरे,
परनिन्दक जो जगमों बगरे।

यही नहीं, और भी कहा गया है :—

मारग सोअि जाकहं जोअि भावा,
पण्डित सोअि जो गाल बजावा।

० ० ०

सोअि सयान जो परधनहारी,
जो कर दम्भ सो बड़ आचारी।

० ० ०

जो कर झूठ मसखरी जाना,
कलियुग सोअि गुनवन्त बखाना।

० ० ०

जे अपकारी चार, तिन्ह कर गौरव मान्य तेअि,
मन क्रम वचन लबार, तेअे बकता कलिकाल महुं।

० ० ०

नारि विवस नर सकल गोसाओं,
नाचहिं नट मरकटकी नाओं।

० ० ०

मातु पिता बालकन्ह बोलावहिं,
अुदर भरअि सोअि धरमु सिखावहिं।

० ० ०

ब्रह्मग्यान बिनु नारिनर, करहिं न दूसरि बात।
कौड़ी लागि मोह बस, करहिं विप्र-गुरुघात।

० ० ०

आपु गअे तिन्हहू कहं घालहिं,
जे कहुं सतमारग प्रतिपालहिं।

अतअेव कलियुगमें तो खलोंसे बहुत ही सतर्क रहनेकी आवश्यकता है। परन्तु अुनकी संख्या अितनी अधिक है कि अुनसे दुश्मनी मोल लेना अपनी आफत मोल लेना होगा। अुनसे दोस्ती हो नहीं सकती क्योंकि वे जिस पत्तलपर खाते हैं अुसपर छेद किअे बिना मानते नहीं। जिस सीढ़ीसे अूपर चढ़ते हैं अुसे ठुकराकर गिराअे बिना मानते नहीं हैं। अिसलिअे अुनसे अुदासीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहना ही सर्वोत्तम है। कुत्तेको पुचकारिअे तो मुँह चाटेगा और दुतकारिअे तो सम्भवतः काट खायगा। आप चुपचाप अुससे अुदासीन होकर अपनी राह चले जाअिअे तो वह भूँक-भाँककर चुप रह जायगा। देखिअे :--

जेहि ते नीच बड़ाअी पावा,
सो प्रथमहि हठि ताहि नसावा।
धूम अनल-सम्भव सुनु भाअी,
तेहि बुझाव घन पदवी पाअी।
रज मगु परी निरादर रहअी,
सब कर पग प्रहार नित सहअी।
मरुत अुड़ाअि प्रथम तेहि भरहि,
पुनि नृप नयन किरीटन्ह परअी।
सुनु खगपति अस समुझि प्रसंगा,
बुध नहिं करहिं नीच कर संगा।
कवि कोविद गावहिं अस नीती,
खल सन कलह न भलि नहिं प्रीती।
अुदासीन नित रहिय गोसाअीं,
खल परिहरिय स्वानकी नाअीं।

शठ लोग सत्संगति पाकर सुधर सकते हैं और सज्जन लोग दुर्भाग्यवश कुसंगतिमें पड़ गअे तो अपना सत् स्वभाव सहसा छोड़ते नहीं।

सठ सुधरहिं सत्-संगति पाअी,
पारस परसि कुधातु सुहाअी।
विधिवस सुजन कुसंगति परहीं,
फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं।

परन्तु फिर भी सज्जनोंतकको अपने सन्तत्वपर गर्व करके कुसंगके रास्ते झाँकते न रहना चाहिअे। महात्मा गांधीजीके अनेकों तथा अन्य ढेरों अुदाहरण सतसंगतिसे शठोंके सुधरनेके प्रकरणमें दिअे जा सकते हैं। मनकी वृत्ति तो है, न जाने कब कैसी हो जाय। गोस्वामीजी पहिले ही कह गअे हैं।--

बोले विहंसि महेश तब, ग्यानी मूढ़ न कोय।
जेहि जब रघुपति करहिं जस, सो तस तेहि छन होय।

जीवनका अधःपतनकी ओर अुन्मुख होना सरल है, परन्तु अूपरकी ओर चढ़ना कठिन है। अतअेव मनुष्यको चाहिअे कि वह दुष्टोंको पहिचानकर अुनसे बचता जाय और सज्जनोंको पहिचानकर अुनसे मेल-जोल बढ़ाता जाअे।

संक्षेपमें गोस्वामीजीने अुन दोनोंके स्वभाव और अुन दोनोंके परिणामको अेक अुदाहरणसे स्पष्ट कर दिया है। वे कहते हैं।--

सन्त असन्तन कै अस करनी,
जिमि कुठार चन्दन आचरनी।
काटअि परसु मलय सुनु भाअी,
निज गुन देअि सुगंध बसाअी।
ताते सुर सीसन्ह चढ़त, जगवल्लभ श्रीखण्ड।
अनल दाहि पीटत घनहिं, परसु वदन यह दण्ड॥

अेक अुदाहरण क्यों, अुनके अनेकानेक दृष्टान्त, अनेकानेक अुदाहरण, अनेकानेक अुपमान, जिनका दिग्दर्शन अूपर हो चुका है, अितने मार्केके हैं कि अुनका स्पष्टीकरण करके प्रवचनकार, कथा-वाचक लोग सन्त असन्त और सत्संग-दुःसंगके बड़े स्पष्ट और भव्य चित्र श्रोताओंके हृदयोंपर अंकित कर सकते हैं। जलज-जोंकके सुधा-सुराके, भूज तरु और सन (जूट) तरुके, विटपके, नवनीतके, कपासके, प्रयागके, रज और धूलके, सुरसरि जल और वारुणीके, मनमाखी और हिम अुपलके, श्वानके, पारसके, कुठार और चन्दनके अुपमान तो विशेष रोचक ढंगपर समझाअे जा सकते हैं। बीच-बीचमें प्रसंगानुसार बाहरके भी दृष्टान्त बड़े मजेमें दिअे जा सकते हैं। अुदाहरणार्थ 'अुजरे हर्ष' में वह कथा सुनाअी जा सकती है जिसमें साधकको शंकरने यह वरदान दिया था कि वह जो मांगेगा वह अुसे मिल जाअेगा, परन्तु अुसके पड़ोसियोंको बिना माँगे ही दूना मिला करेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजस्थानी भाषा और अुसका साहित्य

—श्री अगरचन्द नाहटा

राजस्थान प्रान्त अपने विशेष गौरव-गरिमासे भारतमें ही नहीं, विदेशोंमें भी अच्छी तरह ख्याति प्राप्त है। यहांकी वीर-गाथाओंने विश्वको अेक नया आकर्षण दिया। पुरुषोंने ही नहीं, यहां की कोमल नारियोंने भी जौहर आदि द्वारा जो साहस, वीरता और सतीत्व-प्रेमका परिचय दिया है अब वह अन्यत्र दुर्लभ है। यहांके सन्तोंने अपनी अनुभव वाणियों द्वारा जो अमृत जनताको पिलाया वह भी उल्लेखनीय है। साहित्य और कला-के निर्माण अेवं संरक्षणमें भी राजस्थानका योगदान अविस्मरणीय है। राजस्थानी कलाके जितने अधिक व प्राचीन चित्र मिले हैं भारतके किसी भी भूभागके नहीं। आबूका कला-पूर्ण मन्दिर तो विश्व-विख्यात है। वैसे अिस शैलीके और भी कअी मन्दिर राजस्थानमें हैं पर अुन्हें अितनी प्रसिद्धी नहीं मिली। राणकम्फूर आदिके जैन देवालय अत्यन्त भव्य हैं। यहांके किले और बावड़ियां आदि भी अपनी विशेषता रखते हैं।

बीकानेर राज्यके पल्लू ग्रामसे प्राप्त दो जैन सरस्वती मूर्तियोंकी कलाकी मर्मज्ञोंने काफी प्रशंसा की है। बीकानेर राज्यके सरस्वती प्रदेशमें काफी प्राचीन सामग्री मिली है। चितौड़का कीर्तिस्तम्भ भी अपना सानी नहीं रखता। जैसलमेरके प्राचीन जैन भंडारके ताड़पत्र-पर और कागजपर लिखे हुअे प्राचीनतम जैन ग्रन्थ बहुत ही मूल्यवान हैं। बीकानेरकी अनूप संस्कृत लाअिब्रेरी, हमारा अभय जैन ग्रन्थालय व अन्य जैन भन्डार, जयपुरका पोथीखाना, जयपुर व नागौरके दिगम्बर शास्त्र भन्डार प्राचीन संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती भाषाके साहित्यसे लबालब भरे हैं।

हजारों हस्त लिखित प्रतियां और हजारों चित्र राजस्थानसे अन्य प्रान्तों व विदेशोंके संग्रहालयोंमें पहुंच उनकी शोभा बढा रहे हैं। भान्डारकर ओरियन्टल अिन्स्टीटयूट पूना, अेशियाटिक सोसायटी कलकत्ता और लन्दन आदिके संग्रहालयोंमें राजस्थानसे बहुत साहित्य और कला सम्पत्ति पहुँच चुकी है। फिर भी राजस्थानमें दो लाखसे अधिक हस्तलिखित प्रतियां और २५–३० हजार राजस्थानी चित्र लेखककी जानकारीमें हैं। शस्त्रास्त्र और अन्य विविध अुपादानोंका तो अभीतक अध्यापन ही नहीं हो पाया। यहां पुरातत्वकी सामग्री भी प्रचुर मात्रामें है। पर हमें केवल यहां राजस्थानी भाषा और साहित्यकी थोड़ीसी जानकारी देना ही अभीष्ट है।

राजस्थानी भाषा बहुत प्राचीन और व्यापक भाषा है। उत्तर भारतकी प्रान्तीय भाषाओंकी भांति अिसका भी विकास अपभ्रंश भाषासे ही हुआ है। पर अपभ्रंश की जितनी अधिक विशेषताअें राजस्थानीको मिली हैं, अन्य किसी भी प्रान्तीय भाषाको नहीं मिलीं। अिसीलिअे अिसको अपभ्रंशकी जेठी-बेटी कहा जाता है। विक्रम सम्वत् ८३५ में जालौरमें रचित उद्योतन सूरिके कुवलय माला ग्रन्थमें भारतकी १६ प्रान्तीय भाषाओं और वहांके निवासियोंकी विशेषताअें उल्लिखित हैं। अुनमें मरु-प्रदेशकी भाषाकी विशेषता अिस प्रकार बतलाअी हैं। मरु-प्रदेशसे संलग्न गुर्जर, लाट व मालव भाषाकी विशेषताके भी उद्धरण दे रहा हूँ।

'अप्पा तुछर' भणिरे, अह पेच्छअी मारूअे ततो।
'णडरे भल्डं' भणिरे, अह पेच्छअी गुज्जरे अवरे॥
'आहम्ह काअीं तुम्हं भितु' भणिरं पेच्छअि लाड़े।
'माडअ भअिणी तुम्हे' भणिरे अह मालंवे दिहे॥

अिससे राजस्थानी भाषाका प्राचीन नाम मरु-भाषा सिद्ध होता है। अुस समय राजस्थानमें मरूप्रदेश ही मुख्य था और बहुत अंशोंमें आजतक भी अिसकी प्रधानता चली आ रही है। राजस्थानके किसी भी प्रदेशका निवासी दूसरे प्रान्तमें जाता है तो मारवाड़ी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नामसे ही सम्बोधित किया जाता है। चाहे वे शेखावटी हों या मेवाड़ी आदि।

मरु-प्रदेश अिस प्रान्तका सबसे बड़ा और प्राचीन खण्ड है। गुजरातका कुछ हिस्सा भी अिसीमें समाविष्ट रहा है। गुर्जर लोग पंजाब और सिंधसे जब यहां आकर बसे तो मरु-प्रदेशका प्राचीन नगर भिन्नमाल और डीडवाना आदि प्रदेश गुज्जर (संस्कृत गुर्जर) प्रान्तके नामसे प्रसिद्ध हुअे। जिसका परिवर्तित विकसित नाम गुजरात है। मालवे और मध्यभारतका कुछ प्रदेश भी राजस्थानमें सम्मिलित था। अिस प्रकार राजस्थानी भाषाकी व्यापकता, राजस्थानी राजस्थान प्रान्त तक ही सीमित नहीं है, अपितु गुजरात, सौराष्ट्र कच्छके सारे प्रदेशमें किसी समय अेक ही भाषा थी और मालवा प्रदेशकी तो आज भी राजस्थानी है। अब चाहे मालवीका स्वतंत्र आंदोलन चलाया जाय पर वास्तवमें वह राजस्थानीकी अेक शाखा व बोली है स्वतंत्र भाषा नहीं।

वैसे हिन्दी भाषाके बाद भारतकी सबसे अधिक व्यापक भाषा राजस्थानी है। क्योंकि राजस्थानके निवासी मारवाडी व्यापारार्थ भारतके प्रत्येक प्रदेशमें हर कोनेमें बसे हुअे हैं। और अुन सबकी भाषा राजस्थानी है अिसलिअे अिस भाषाको हम भारत व्यापी भी कह सकते हैं।

कलकत्ता, मुर्शिदाबाद, बिहार, मध्यभारत, बम्बअी आदिमें रची हुअी राजस्थानी रचनाअें भी अिस बातका प्रमाण हैं। राजस्थानी भाषाका शब्दभंडार, मुहावरे, कहावतें व साहित्य सभी दृष्टिसे अपनी विशेषता रखता है।

अुपर्युक्त वक्तव्यसे यह स्पष्ट है कि अपभ्रंशसे राजस्थानी-मरु-भाषाका स्वतंत्र विकास ९ वीं शताब्दीसे पहले ही हो चुका था और अुसकी व्यापकता भी बहुत विशाल प्रदेशमें रही है। जहांतक प्राचीन साहित्यकी अुपलब्धिका प्रश्न है राजस्थानी भाषाकी रचनाअें जितनी प्राचीन और प्रचुर मिलती हैं, अन्य किसी भी प्रान्तीय भाषा की नहीं। कारण स्पष्ट है कि प्रथम तो साहित्यकारोंको यहां राज्य व जनताका आदर व प्रोत्साहन खूब मिला। अतः साहित्य-निर्माण बहुत अच्छे परिमाणमें हुआ। दूसरा राजस्थान प्रदेश अन्य प्रान्तोंकी अपेक्षा अधिक सुरक्षित रहा। अतः सावधानी पूर्वक संरक्षित बहुतसी प्राचीन रचनाअें नष्ट होनेसे बच गअीं। अिन दोनों बातोंमें जैन विद्वानोंकी सेवा बहुत ही महत्वकी रही है।

चारण, भाट आदि कवि तो राजाश्रित कवि थे। लिखित रूपमें अुनकी प्राचीन रचनाअें आज तो जो कुछ बच पाअी हैं वे जैन-विद्वानोंकी कृपासे ही। क्योंकि कविताअें करना अुनका जन्मगत संस्कार व पेशा-सा हो गया था। अुन्हें घरका वातावरण भी उसी रूपमें मिलता और अुनकी आजिविका भी राजाओंके दिअे हुअे दान व गांवोंकी जागीरीसे ही चलती थी। कुलागत संस्कार या प्रकृति-प्रदत्त काव्य प्रतिभा होनेपर भी अुनकी कविताअें प्रायः कण्ठस्थ ही रहा करती थीं। लिखनेकी प्रणाली अुनमें कम थी और शुद्ध लिखना तो बहुत कम ही चारण जानते थे।

चारण कवि अपनी कविताअें कण्ठस्थ ही रखते थे। अतः चारण और भाट कवियोंने समय२ पर जो प्रासंगिक दोहे, कविता आदि राजाओंसे कहे या दरबारमें सुनाअे अुनका कुछ संग्रह जैन विद्वानों द्वारा रचित प्रबन्ध संग्रह ग्रन्थोंमें प्राप्त होता है। महाराजा मुंजसे लगाकर १५ वीं शताद्वी तककी राजस्थानी जैनेतर प्राचीन स्वतंत्रता रचनाअें नहीं मिलतीं। वीसलदेव रासोकी भी समितियां जैन विद्वानोंने लिखी थीं। फुटकर पद्य जो जैन प्रबन्ध ग्रन्थोंमें ही मिलते हैं जिनसे ११ वीं शताद्वीसे प्राचीन राजस्थानी रचनाओंकी परम्परा मिलने लगजाती है।

कालिदास सर्वज्ञ सुप्रसिद्ध साहित्यकार हेमचन्द्र सूरिने जो प्राचीन दोहे अपने व्याकरण व छन्द ग्रन्थमें अुद्धृत किअे हैं वे भी अी०स्वी० १०-११ वीं समयके प्रतीत होते हैं। १५ वीं शताब्दीसे जैनोंपर राजस्थानी गुजराती रचनाअें स्वतंत्र रूपसे मिलने लगी हैं पर वे भी जैन ग्रन्थभंडारोंमें जैन विद्वानोंके लिखित ही हैं और अुनकी संख्या भी थोड़ी हैं। १६ वीं शताब्दीके अुत्तरार्धसे अपेक्षाकृत अधिक रचनाअें मिलने लगती हैं। १७ वीं शताब्दीसे १९ वीं में तो खूब रचनाअें रची गअी हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैन विद्वानोंने, जनताके लिअे ही अधिकांश साहित्यका निर्माण किया और भगवान महावीरसे यही परम्परा अुन्हें मिली थी कि वे जनभाषामें ही धर्म प्रचार करते रहें। अिसलिअे भारतकी प्रायः सभी प्रांतीय भाषाओंमें जैन रचनाअें मिलती हैं। राजस्थान और गुजरातमें तो मध्यकालमें जैन धर्मका बड़ा ही प्रभाव रहा है। गुजरातकी राजधानी पाटणके बसनेसे पूर्व जैन धर्मका प्रभाव राजस्थानमेंही अधिक रहा। श्वेतांबर जैन जातियोंमें श्रीमाल, पोरवाल और ओसवाल मुख्य हैं। अिसीतरह दिगम्बरोंमें खंडेलवाल आदि अिन सभी जातियोंका अुत्पत्ति व मूल स्थान राजस्थान है। ९ वीं शताब्दीमें जब पाटण गुजरातकी राजधानी बना तो अुसके संस्थापक और शासक वनराज चावडा, जैनाचार्य शीलगुण सूरिजी के आश्रयमें पला था। अिसलिअे अुसके राज्यमें मुख्य पद जैनोंको ही मिले। फलतः भिन्नमाल आदि राजस्थानसे झुण्डके झुण्ड जैन परिवार पाटण आदि गुजरातमें चले गअे। अिससे पूर्व अिस समय तक राजस्थानके जिस प्रदेशका नाम गुजरात था, वहांसे गुर्जर आदि अन्य लोग भी आगे बढ़े और सौराष्ट्र आदिमें तो जैन धर्म पहलेसे प्रचारित था ही, अिसलिअे जैन मुनियोंका निरंतर आवागमन राजस्थानसे गुजरात सौराष्ट्र तक चालू था। अब राजस्थानके श्रावक भी अिधर बहुत बस गअे। अतः जैन मुनियोंका सर्वत्र एकसा प्रभाव रहा। और अिस सारे विशाल प्रदेशकी भाषा अेक ही थी। १५ वीं शताब्दी तक वह भाषागत अेकता बनी रही। अिसलिअे प्राचीन राजस्थानी या प्राचीन गुजराती अेक ही भाषा है जिसे गुजरातके कुछ विचारक विद्वानोंने मरु-गुर्जर या मरु-सौराष्ट्र संज्ञा दी है। रूपावतीनामक सं १६५७ में रचित काव्यमें भी यह नाम मिलता है।

श्वे० जैन विद्वानोंकी अपभ्रंश और प्राचीन गुजरातीकी रचनाओंकी परम्परा भी ११ वीं शताब्दीसे ही अधिक मिलती है। मुंज और भोजके राजकवि धनपाल ११ वीं शताब्दीके अन्तमें राजस्थानवर्ती साचौरमें आअे और वहांके महावीर भगवानकी स्तुति सत्यपुरीय महावीर अुत्साहके नामसे की, जिसे मुनि जिनविजयजीने जैन साहित्य संशोधकमें प्रकाशित किया था। यह धनपाल मालवेका राजकवि था और अुस समय राजस्थान और मालवेमें अेकसी भाषा प्रचारित थी जिसकी परम्परा आज भी प्राप्त है। मालवी भाषामें रची हुअी प्राचीन और अधिक संख्यामें रचनाअें प्राप्त नहीं है।

जैन कवियोंकी राजस्थानी कविताअें हमें निरंतर मिलती हैं यह एक बहुत बड़ी विशेषता है। १२ वीं शताब्दी तक साहित्यकी भाषा अपभ्रंश-प्रधान रही पर १३ वी शताब्दीमें प्राचीन राजस्थानीका स्वतन्त्र विकास अितना अधिक हो गया कि वह साहित्य रचनाकी माध्यम बन गअी। तबसे तो और भी अधिक रचनाअें मिलने लगती हैं और १५वीं शताब्दी तक तो राजस्थानी साहित्यकी सभी मौलिक रचनाअें अुन्हींकी प्राप्त हैं। १३ वींमें पृथ्वीराज रासो और वीसलदेव रासो, जैनेतर रचनाओंमें अुल्लेखनीय हैं। पर वे आज जिस रूपमें प्राप्त हैं, अुस समयकी भाषाका प्रतिनिधित्व नहीं करते। जबकि जैन रचनाअें सम-सामयिक लिखित मिलती हैं अतः अुनकी भाषा सुरक्षित है। यह विशेषता किसीभी प्रान्तीय रचनाओंमें नहीं मिलेगी। रचनाके समकालीन या निकटवर्ती समयमें रचना लिखी जाना और भाषाके मूल रूपमें सुरक्षित पाना यह जैन विद्वानोंकी कृपाका ही फल है।

१३ वीं १४ वीं शताब्दीकी अधिकांश रचनाअें छोटी २ हैं और वे संग्रह प्रतियोंमें लिखी हुअी पाअी जाती हैं। १५ वींसे अुनके परिमाणमें विस्तार होता है और वह फिर बढ़ता ही चला जाता है।

प्राचीन राजस्थानी रचनाअें प्रधानतया चरित काव्य हैं, कुछ धार्मिक व औपदेशक भी हैं। चरित्र काव्योंमें अैतिहासिक और पौराणिक दो प्रकार की रचनाअें होती हैं। ये रचनाअें खूब लोकप्रिय रहीं। रास-चर्चरी और फागु आदि तो मंदिरों व अुत्सवोंमें गानेके साथ खेले जाते थे। डांडियों और तालियोंकी ध्वनिके साथ गाअे जानेके कारण "रास मुख्य दो प्रकारके बताअे गअे हैं:—(१) ताला रासक (२) डंडिया रासक। १४ वीं शताब्दी तककी कअी रचनाओंमें अिसका स्पष्ट सूचन है। १५ वीं शताब्दीके प्रारंभ तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह परम्परा रही होगी पर फिर बड़े-बड़े चरित-काव्य बनने लगे और तब वे अभिनय योग्य न रहकर केवल गेय ही रह गअे। अुन रासादि रचनाओंको जैन मुनि आजतक गाकर ही सुनाते हैं। और अैसे रास आज भी बनते हैं। अपभ्रंशसे राजस्थानी साहित्यको परम्परा संज्ञा और शैलीके रूपमें मिलती है। और अपभ्रंशके सबसे अधिक रचना प्रकार राजस्थानी साहित्योंमें मिलते हैं। जैन रचनाओंकी अेक और बड़ी विशेषता है कि अुन्होंने लोक प्रचलित रागिनियों और लोक गीतोंकी देशियोंकी चालमें अपनी रास आदिकी ढालें और गीत बनाअे। जिससे बहुतसे प्राचीन व विस्मृत लोक-गीतोंका हमें पता चल जाता है।

१७ वीं शताब्दीसे तो अुन्होंने जो भी ढालें व गीत बनाअे अुसके प्रारंभमें ही अुसे किस प्रकारसे किस लोक-प्रचलित रागिनीमें गाया जाय अिसका अुनके प्रारंभमें ही निर्देश कर दिया है। अुस लोकगीत का नाम या प्रथम पंक्ति और कहीं २ अधिक पंक्तियां भी अुद्धृत करते हुअे "अेदेशी" अिन शब्दों द्वारा अमुक गीतकी चालमें गानेका सूचन किया है। अैसे लोक-गीतों अेवं जैन रचनाओंकी देशियोंकी अेक विस्तृत सूची जैन साहित्य महारथी स्वर्गीय मोहनलाल देसाअीने अपने जैन गुर्जर कवियों भाग ३ के परिशिष्टमें दी है। अिन देशियोंकी संख्या करीब २५०० है। अिनके अतिरिक्त भी अनेक लोक-प्रसिद्ध देशियोंका प्रयोग व अुल्लेख अप्रकाशित जैन रासों और स्तवनों आदिमें मिलता है। यह विशेषता भी अन्य किसी भी प्रान्तीय भाषाके साहित्यमें नहीं मिलेगी। यह जैन-विद्वानोंकी मौलिक सूझका परिणाम है। लोककथाओंको भी सबसे अधिक जैन विद्वानोंने ही अपनाया है। अेक २ लोक-कथाके सम्बन्धमें दस-बीस राजस्थानी जैन रचनाअें भी प्राप्त हैं; जिससे अुन लोक-कथाओंकी प्राचीनता व तत्कालीन प्रसिद्ध रूपका पता लगानेमें बडी सुगमता हो गअी है। यद्यपि जैन विद्वानोंने अधिकांश लोक-कथाओंको, धर्म प्रचार व अुपदेशका माध्यम बना लिया जिससे उन्हें कुछ परिवर्तन व परिवर्धन कर उनको अपने ढांचेमें ढालना पड़ा। पर बहुत-सी असी कथाओं मूल रूपसे सुरक्षित नगण्य परिवर्तनके साथ प्राप्त हैं।

राजस्थानी साहित्यकी पांच विशेषताअें तो सर्व विदित हैं। प्रथम तो वीर रसका सबसे अूँचा व अनोखा और अधिक साहित्य राजस्थानीका है। दूसरा राजस्थानी गद्य, प्रान्तीय भाषाओंमें सबसे प्राचीन व अधिक मिलता है। तीसरी अैतिहासिक और लोक कथाओंका सबसे बड़ा भण्डार राजस्थानी साहित्यमें है। लिखित रूपमें अितना अधिक और प्राचीन अिन विशेषताओं वाला साहित्य, अन्य मिलना दुर्लभ है। चौथी विशेषता ११ वीं से १५ वीं शताब्दीकी रचनाअें अन्य प्रांतीय भाषाओंकी अपेक्षा राजस्थानीमें अधिक निरन्तर मिलती हैं। पांचवीं विशेषता यह है कि अपभ्रंशकी सबसे अधिक विशेषताअें व परम्परा राजस्थानी भाषाको ही प्राप्त है।

राजस्थानी भाषाकी मुख्य चार बोलियाँ बोली जाती हैं:--(१) मारवाड़ी:--जो जोधपुर बीकानेर शेखावाटी, जैसलमेर और अुदयपुरमें बोली जाती है। (२) ढूढांअी जो जयपुर, हाड़ोती प्रदेश आदिमें बोली जाती है। (३) मेवाड़ी व अहीरी जो अलवर प्रदेशकी बोली है (४) मालवी–जो मालवा और अुसके दक्षिणी प्रदेश मेवाड निमाड़ आदिकी बोली है। वैसे छोटे भेद तो अनेक किअे जा सकते हैं।

अूपर जो चार बोलियां बतलाअी गअी हैं वे बोलचालकी प्रधान भाषाअें हैं। साहित्यिक भाषाके रूपमें तो सदासे मरु-भाषाकी प्रधानता ही रही है। जिसमें चारणों आदिकी अेक शैली डिंगलके नामसे प्रसिद्ध है और जैन कवियोंकी भाषा मारवाडी प्रधान है, जो बोलचालकी भाषाके निकट ही रही है, क्योंकि अुनका प्रधान लक्ष्य जन साधारणके नैतिक स्तरको अूँचा अठाना ही रहा है। राजस्थानी साहित्य प्रधानतया जैन कवियों और चारणोंका ही है। ब्राम्हणों आदिका बहुत कम अुपलब्ध है। संतोंका साहित्य हिन्दी प्रधान है। लोक साहित्य तो बोलचालकी भाषामें है पर मौखिक होनेसे अलग-अलग बोलियों का जो भेद है वह अुसमें है ही। चारण, सौराष्ट्र, कच्छ आदिमें रहे तो भी अुनकी साहित्यिक भाषा राजस्थानी डिंगल ही मिलती है। गुजरात के चारणी साहित्यका परिचय सौराष्ट्रके सुप्रसिद्ध लोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य सेवी स्वर्गीय झवेरचंद्रजी मेघानीने "चारणो अने चारिणी साहित्य" नामक ग्रन्थमें दिया है। राजस्थान के चारण आदि कवियोंकी रचनाओंका कुछ परिचय डाक्टर मोतीलाल मेनारियाकी "राजस्थानी भाषा और साहित्य" नामक पुस्तकमें अेवं स्वामी नरोत्तमदासजीके कअी ग्रन्थों अेवं लेखोंमें दिया गया है। पर वह बहुत ही संक्षिप्त और अपूर्ण है। क्योंकि बहुत-सी जैन-जैनेतर राजस्थानी रचनाओंका प्रकाशन अेवं विवरण ग्रन्थ गुजरातसे ही प्रकाशित हुअे हैं। अुसका प्रायः ग्रन्थोंमें अुपयोग नहीं किया गया और वास्तवमें विशाल राजस्थानी साहित्यका परिचय अभीतक बहुत ही कम प्रकाश में आया है। जैन गुर्जर कवियों और गुजरातके ग्रन्थोंमें अुल्लेखित जैनेतर प्राचीन रचनाओं अेवं जैन कवियोंको अुचित स्थान मिलना आवश्यक है। वे ग्रन्थ संख्यामें काफी हैं। अतः अुनके अुल्लेख बिना राजस्थानी साहित्यका परिचय अपूर्ण ही रहेगा। स्वामी नरोत्तमदासजीने अुदयपुरके महाकवि सूर्यमाला-आसनसे दिअे हुअे भाषण और मैंने भी अिसी आसनसे राजस्थानी जैन साहित्यका कुछ परिचय देनेका प्रयत्न किया था पर हम दोनोंके भाषण ग्रन्थ रूपमें हैं और अुनके कुछ अंश ही अभीतक प्रकाशित हुअे हैं। अिस छोटेसे लेखमें राजस्थानी साहित्यका सिलसिलेवार परिचय देना सम्भव नहीं; अतः बहुत संक्षेपमें ही केवल अुसकी झांकी-सी कराअी जा सकेगी।

प्रायः लोगोंकी धारणा है कि राजस्थानीमें वीर रसका साहित्य ही अधिक है अन्य रसों अेवं विषयों पर साहित्य नगण्य है। पर यह धारणा ठीक नहीं है। व्याकरण, छन्द, अलंकार, कोष, प्रेमकाव्य औपदेशिक-विविध प्रकारकी छोटी बड़ी कहानियां और गणित, ज्योतिष, वैद्यक, स्वप्न सामुद्रिक आदि वैज्ञानिक विषयों का भी अच्छा साहित्य है। साथ ही विविध विषयोंके प्राकृत संस्कृत आदिके अनुवाद गद्य पद्यमें काफी हुअे हैं। धार्मिक साहित्यमें गीता, भागवत, पुराण, वृत्त कथाअें आदिका अनुवाद राजस्थानीमें हुआ है। अिसी तरह पंचतंत्र, सिंहासन बतीसी, वैताल पचीसी, शुक बहोतरी, भर्तृहरि शतक; वैदिक ग्रन्थोंमें योग-चिन्तामणि आदि, ज्योतिष षट्पंचासिका, फारसी ग्रन्थोंमें अखलाक अलमोहुशनी, अकबर नामा आदिका अनुवाद अेवं जैनोंके तो प्रायः सभी आगमों और अुपदेशमाला आदि औपदेशिक ग्रन्थों, कथाओं और बड़े कथा ग्रन्थोंमें शत्रुंजय महातम आदि ग्रन्थोंके संक्षिप्त और वृहद् विवेचन राजस्थानीमें प्राप्त हैं। जिनकी विशालताका कोअी अनुमान भी अभीतक नहीं लगाया गया है। राजस्थानी जैन साहित्यका कुछ परिचय जैन गुर्जर कवियोंके भाग २-३ तकमें मिलता है और जैनेतर साहित्यका थोड़ा परिचय अनूप संस्कृत लाअीब्रेरीके राजस्थानी ग्रन्थोंकी सूची, कविचरित, चारणों अने चारणी साहित्य और मेनारिया व स्वामीजीके ग्रन्थोंसे मिलता है। मैं यहांपर अुसकी विशालता व विविधताका थोडासा दिग्दर्शन करा रहा हूँ।

चारण कवियोंके रचित काव्योंके अतिरिक्त चार पद्योंवाले डिंगल गीत और दोहे अितने अधिक मात्रामें मिलते हैं कि अुसीसे चारणी कवियोंकी प्रचुरता और साहित्यिक विशालताका कुछ अनुमान पाठक लगा सकते है। डिंगल गीत (चारणोंके) मौखिक ही अधिक रहे अतः हजारों पुराने गीत चारणोंके कण्ठपर थे, वे नष्ट हो गअे व हो रहे हैं। पर लिखित रूपमें ही प्राप्त डिंगल गीतोंकी संख्या २०-२५ हजार है। अिनके सबसे अच्छे व बड़े संग्रह सीतारामजी लालस जोधपुर राजस्थान विश्व विद्यापीठ, अुदयपुर अनूप संस्कृत लाअिब्रेरी, हमारा अभय जैन ग्रन्थालय, राजस्थान रिसर्च सोसायटी और बंगाल हिन्दी मण्डलके संग्रहमें हैं।

राजस्थानी फुटकर दोहे जिनमें कअी सुभाषित और कहावतोंके रूपमें भी प्रसिद्ध हैं अुनकी संख्या भी २०-२५ हजारसे कम न होगी। अेक-अेक दोहे-पर चारण कवियोंको बडा सम्मान और जागीरें मिलीं और अुनकी चमत्कार व करामात भी वैसी ही गजबकी थी जिससे असम्भव कार्य भी सम्भव हो गअे। अपनी कुलकी परम्परासे विचलित होनेवालोंको भी वे ठीक ठिकानेपर ले आअे। कायरोंकी नसनसमें वीरता भर दी, दुष्कृत्य करनेपर अुतारू व्यक्ति भी अुनके द्वारा बाल बाल बच गअे। अितनी अधिक संख्यावाले डिंगल गीत और दोहोंमेंसे अभी प्रकाशन बहुत ही कम हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिसी तरह ख्यात और बातोंका गद्य साहित्य भी बहुत बड़ा है। पचासों बड़े २ पोथे लिखे मिलते हैं। अेक अेक ठिकाने और राज्यकी ख्यात होती थी। जिनके आधारसे अितिहास निर्माण किअे गअे। अभी मूलरूपसे नैणसी और दयालदासकी ख्यातके कुछ अंश ही छपे हैं और सैंकडो बातोंमेंसे तो दस बीस ही छपी हैं।

केवल जैनोंका राजस्थानी साहित्य करीब दस लाख श्लोकका होगा। वह केवल जैन धर्मसे सम्बधित ही नहीं, पर कथा, कहानी, गद्य, चरित, काव्य तथा फुटकर सभी विषयोंका मिलता है। अुसमेंसे तो अेक पैसाभर भी अभी प्रकाशमें नहीं आया है।

लोक साहित्यमें लोकगीतोंका ही अधिक प्रकाशन हुआ है। पचीसों राजस्थानी लोक-गीत-संग्रह राजस्थानसे ही नहीं दूसरे प्रदेशोंसे भी छपे हैं। जिसका कुछ परिचय मैंने परम्परा और वीणामें प्रकाशित अपने लेखमें दिया है। और कहावतोंके संग्रह व प्रकाशनका अभीतक जो भी कार्य हुआ है अुसका परिचय 'राष्ट्र भारती'में दिया गया है। पर अभी हजारों लोकगीत अप्रकाशित पड़े हैं और लोक कथाओंके संग्रह अेवं प्रकाशनका काम तो प्रायः हुआ ही नहीं। अिसी तरह लोक-काव्योंमेंसे चार पांच ही प्रकाशमें आअे हैं। पाबूजीरा पावाडा, जीण मातारो गीत, डूंगजी जवाहरजीरो गीत, तेजोरो गीत, गोपीचन्द गीत आदि।

अभी श्री मनोहर शर्मा, बिसाअू, डाक्टर कन्हैयालाल सहल, पिलानी व पुरुषोत्तम मेनारिया जयपुर आदि लोक साहित्यके सम्बन्धमें अच्छा काम कर रहे हैं। अिधर अुदयपुरके भारत लोक कला मण्डलने सैंकडों राजस्थानी लोक-गीतोंका रेकार्डिंग किया है व स्वर-लिपियां बनअी हैं और वे लोक-नृत्योंका पुनरुद्धार भी कर रहे हैं।

राजस्थानी भाषाकी जैन गद्य पद्यात्मक रचनाओंके लिअे "जैन गुर्जर कविओ" भाग १–२–३ देखने चाहिअे। राजस्थानी तुकान्त गद्य, व वर्णनात्मक ग्रन्थ बहुत ही सुंदर व अधिक संख्यामें मिले हैं। अुनका कुछ परिचय मैंने "राजस्थानी भारती"में दिया है व अेक संग्रह-ग्रन्थ संपादित किया है।

अब मैं राजस्थानी भाषा और साहित्य सम्बन्धी जो कार्य विगत ६० वर्षोंमें हुआ है व अब हो रहा है अुसकी संक्षिप्त जानकारी दे रहा हूँ। अबसे करीब ५०–६० वर्ष पहले राजस्थानी ग्रन्थों का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ तो जोधपुरके श्रीरामकरणजी आसोपाने मारवाडी भाषाकी प्राथमिक पाठ्य पुस्तकोंके तीन भाग तैयार किअे और राजस्थानी व्याकरण बनाकर प्रकाशित किया। 'रतना हमीरकी बात' का प्रकाशन किया अुन्होंने मुहणोत नैणसीकी ख्यातको मूल रूपमें छपाना आरम्भ किया पर वह अधूरा ही छपा। जोधपुरके सर सुखदेवरायने राजस्थानी कहावतोंका अंग्रेजी अनुवाद कर प्रकाशित किया। अुन्होंने शब्दकोश बनाना आवश्यक समझ पं. रामकरणजी आसोपाकी देखरेखमें काम प्रारम्भ किया। और करीब ६० हजार शब्द अर्थसहित चिटोंपर लिखे गअे। पर वह कार्य भी अधूरा ही रहा। यद्यपि अिससे पूर्व मुरारीदानजीका डिंगल कोष नामक पद्यबद्ध शब्द कोष प्रकाशित हो चुका था।

अिटलीके विद्वान श्री अेल. पी. टेसिटौरीने अिटलीमें रहते हुअे राजस्थानी भाषाका अध्ययन प्रारम्भ किया। फिर वे कलकत्तेके रॉयल अैसियाटिक सोसायटी द्वारा निमंत्रित होकर भारत आअे और जोधपुर अेवं बीकानेरमें रहकर राजस्थानी ग्रन्थोंकी हस्त लिखित तीन विवरणात्मक सूचियाँ तैयार कीं और कृष्ण रुखमणिरी बेलि, राव-रतन महेश दासोतरी वचरोनिका और राव जैतसि छंद अिन तीन ग्रन्थोंको सम्पादित कर अेशियाटिक सोसायटीसे प्रकाशित करवाया। राजस्थानी भाषाका वैज्ञानिक व्याकरण भी अुन्होंने अिटलीमें सर्वप्रथम बनाया। पर थोड़ा काम करनेके अनंतर ही वे बीकानेर में स्वर्गवासी हो गअे अिसलिअे अुनसे जो आशाअें थीं योंही रह गअीं। अेशियाटिक सोसायटीसे "सूरजप्रकाश" नामक और अेक राजस्थानी ग्रन्थ द्वारा रामकरणजी सम्पादित अपूर्ण छपा है। पं. हर प्रसादजी शास्त्री ने राजस्थानमें खोजकर अेक रिपोर्ट भी सोसायटीसे प्रकाशित की है।

अिधर बीकानेरमें ठाकुर रामसिंह, स्वामी नरोत्तम दासजी और स्वर्गीय सूर्यकरण पारीकने राजस्थानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रन्थोंको सुसम्पादितकर प्रकाशित करना प्रारम्भ किया। सर्वप्रथम हिन्दुस्तानी अेकेडेमीसे 'कृष्ण रुक्मिणी की वेलि' बड़े सुन्दर रूपमें सम्पादित की जाकर प्रकाशित हुअी। फिर नागरी प्रचारिणी सभासे 'ढोल मारूरा दोहा' प्रकाशित करवाया। और राजस्थानी लोकगीतोंका बड़ा संग्रह करके अुनमेंसे चुने हुअे गीतोंको दो भागोंमें राजस्थान रिसर्च सोसायटी कलकत्तेसे प्रकाशित करवाया। स्वामी नरोत्तमदासजीने राजस्थानी दोहोंका अेक संग्रह और पारीकजीने राजस्थानी वातोंकी अेक पुस्तक तथा स्वयं लिखित 'वोलावण' नामक नाटक पिलानीसे प्रकाशित करवाया। स्वामीजीके सम्पादित और भी अनेक ग्रन्थ हैं। पर वे ग्राम्टासिन 'राजिअेके सोरठेके' अतिरिक्त अप्रकाशित अवस्थामें पड़े हैं। गतवर्ष केवल कृष्ण रुक्मणिकी वेलिका अेक विशिष्ट संस्करण अुनका संपादित आगरेसे प्रकाशित हुआ है। श्री सूर्यकरणजी पारीककी राजस्थानी लोक-गीतों सम्बन्धी अेक महत्वपूर्ण पुस्तक हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयागसे प्रकाशित हुअी। टेसिटोरीके भांति अिनका भी युवावस्थामें स्वर्गवास हो गया। अिन दोनोंका असामायिक स्वर्गवास, राजस्थानीके लिअे अपूरणीय क्षति है।

कलकत्तेमें श्री रघुनाथ प्रसादजी सिंघानिया और भगवती प्रसादजी सेनने राजस्थानी साहित्यके संग्रह और प्रकाशनका बहुत ही अुल्लेखनीय कार्य किया है। अुन्होंने जोधपुर, जयपुर, कोटा, बूंदी आदिमें घूमकर बहुतसे ग्रन्थोंकी मूल प्रतियां और हजारों पृष्ठ नकल करके राजस्थान रिसर्च सोसायटी नामक संस्थाकी स्थापना श्री रामदेवजी चोखानी आदिके सहयोगसे कलकत्तेमें की, जिसका महत्वपूर्ण संग्रह आज भी जालान स्मृति मन्दिरमें पड़ा है। सिंघानियाने मारवाड़ी भजन सागर नामक अेक बड़ा संग्रह ग्रन्थ निकाला और किशोरसिंह बारहठके सहयोगसे "राजस्थानी" नामक मासिक पत्रिका दो वर्षतक प्रकाशित की। तीसरे वर्षमें अुसका सम्पादन स्वामीजी और मेरे द्वारा हुआ। किशोरसिंहने हरिरस नामक भक्ति ग्रन्थ सम्पादित कर सोसायटीसे प्रकाशित करवाया। अन्य प्रकाशनोंमें राजस्थानी लोकगीत दो-भाग, करणी-चरित्र, सुन्दरदास ग्रन्थावली अुल्लेखनीय है।

पिलानीमें श्री सूर्यकरणजी पारीक बिड़ला कॉलिज के प्रोफेसर रहे तो राजस्थानीके लिअे अेक अच्छा वातावरण तैयार हो गया। फलतः गणपति स्वामीने लोकगीतों, कहावतों और जीणमातारो गीत, डूंगजी जवारजीरो गीत तेजेरो गीत और पाबूजीरा पवाड़ा अिन लोककाव्योंका भी संग्रह किया। ये चारों लोककाव्य बहुत ही सुन्दर हैं और राजस्थान भारती, राजस्थानी और मरुभारतीमें प्रकाशित हो चुके हैं। पिलानीमें बिड़लाजीके अुत्साहसे बंगाल हिन्दी मण्डल संस्था स्थापित हुअी। जिससे राजस्थानी साहित्यके संग्रहका सुन्दर कार्य हुआ। साथही डा. कन्हैयालाल सहल संपादित वीर सतसअी, द्रौपदी विनय ग्रन्थ भी प्रकाशित हुअे हैं। सहलजीने राजस्थानके अैतिहासिक और सांस्कृतिक प्रवादोंके दो भाग और चोवोली नामक राजस्थानी गद्यवार्ता प्रकाशित करवाअी और राजस्थानी कहावतोंपर बहुत ही महत्वपूर्ण लिखकर डाक्टरेट पदवी प्राप्त की।

आधुनिक राजस्थानी लेखकोंमें श्री शिवचन्द भरतियाने समाज सुधार आदिकी भावनासे राजस्थानीमें अुपन्यास, नाटक व कविताअें आदि ग्रन्थ मारवाड़ीमें लिखे और अुनके कअी ग्रन्थ प्रकाशित भी हुअे। अुपन्यास राजस्थानीमें सर्वप्रथम अुन्होंने ही लिखा। अिन ग्रन्थोंका प्रचार भी अच्छा हुआ पर खेद है कि अिनके ग्रन्थ अब अप्राप्य हैं।

जोधपुरके अमरदानजीने जो राजस्थानी कविताअें बनाअीं अुनका अेक संग्रह जगदीश सिंह गहलोतने अमर काव्यके नामसे प्रकाशित किया है। गहलोतजीके अुन्य प्रकाशनोंमें राजियेके सोरठे, मारवाड़ी लोकगीत, वर्षा सम्बन्धी कहावतें आदि अुल्लेखनीय हैं।

जयपुरके पुरोहित हरिनारायणजीने नागरी प्रचारिणी सभासे बांकीदास ग्रन्थावलीके तीन भाग, शिखर वंशोत्पत्ति, रघुनाथ रूपक प्रकाशित करवाअे। सभाके अन्य प्रकाशनोंमें वीसलदेव रासो, और पं. रामकरणजी सम्पादित 'राज-रूपक' अुल्लेखनीय हैं। अभी टैसिटोरीके निबन्धका अनुवाद पुरानी राजस्थानीके नामसे प्रकाशित किया है। पहले रामदेव चोखानीकी अुक्त पुस्तक प्रकाशित की थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुदयपुरके श्री चतुरसिंहजीने[1] मेवाड़ी भाषामें बहुतसे ग्रन्थ अनूदित और कुछ मौलिक भी तैयार कर प्रकाशित किअे हैं। जो बहुत ही अुल्लेखनीय हैं।

स्वामी नरोत्तमदासजी और श्री मुरलीधरजी व्यास जो राजस्थानीके अुल्लेखनीय कहानी लेखक हैं, कलकत्ते पधारे तो राजस्थान रिसर्च सोसायटीका नवीन करण होकर "राजस्थानी साहित्य परिषद" स्थापित हुअी। अुसकी ओरसे राजस्थानी निबन्धमालाके दो भाग, राजस्थानी कहावतोंके दो भाग और अभी व्यासजी-का राजस्थानी कहानी संग्रह "बरसगांठ" के नामसे प्रकाशित हुआ है।

बीकानेरके नवयुग ग्रन्थ कुटीरसे पहले कहमुकरनी, चन्द सखीके भजन, राजियेके सोरठे प्रकाशित हुअे थे। गतवर्ष आधुनिक राजस्थानी भाषाके कवियोंकी रचना-ओंका अेक संग्रह "अलगोजा" के नामसे निकला है।

ठाकुर रामसिंहजी और स्वामीजीके प्रयत्नोंसे बीकानेरके महाराजा शार्दूल सिंहजीने "सादूल-राज-स्थानी रिसर्च अिन्स्टीटयूट" नामक संस्था स्थापित की जिससे राजस्थानी शब्दकोशका महत्वपूर्ण कार्य हो रहा है। करीब दो अढ़ाअी लाख शब्द अबतक संग्रहीत हो चुके हैं और कहावतों, मुहावरों और लोकगीतोंका संग्रह भी किया गया है। राजस्थान भारती नामक राजस्थानकी सर्व श्रेष्ठ शोध पत्रिका भी अिन्स्टीटयूटसे निकल रही है जिसका पांचवाँ भाग चालू है। कलायण नामक ऋतुकाव्य (नानूराम संस्कर्ता रचित) के प्रकाशन में भी अिन्स्टीटयूटका सहयोग है।

जयपुरमें कुंअर चन्द्रसिंह आदिके प्रयत्न से "राज-स्थान भाषा प्रचार सभा" गत दो वर्षोंसे 'मरुवाणी' नामक पत्रिका निकाल रही है जो राजस्थानी भाषाकी अेक मात्र और बहुत ही महत्वकी मासिक पत्रिका है। कुंअर चन्द्रसिंह राजस्थानी भाषाके सुकवि हैं। अुनके 'लू' और 'बादली' नामक दो ऋतुकाव्य प्रकाशित हो हो चुके हैं। अिस सभासे अुमर खयामके दो राजस्थानी पद्यानुवाद हाल ही में निकले हैं।

बीकानेरमें स्वामीजीके प्रयत्नसे राजस्थानी साहित्य पीठ द्वारा आयोजित साप्ताहिक गोष्ठियोंसे प्रेरणा पाकर नवीन राजस्थानी रचनाअें काफी लिखी गअीं और कअी लेखक और कवि तैयार हुअे। बीकानेरके श्रीलाल जोशीका 'आमेपडी' नामक राजस्थानी भाषाका अुप-न्यास प्रकाशित हो रहा है। श्री मुरलीधर व्यासने कहानियोंके अतिरिक्त अेकांकी नाटक, स्केच भी सुन्दर लिखे हैं। श्रीलाल जोशीकी हास्यरसकी कअी रचनाअें और स्केच बहुत सुन्दर हैं। श्री गजानंद वर्माकी 'धरती री धुन' नामक कविता संग्रह अभी निकला है और श्री मेघराज वर्मा 'मुकुल' की सेनानी आदि कविताअें तो बहुत अधिक प्रसिद्ध हैं। अुनकी कविताओंका अेक संग्रह भी अजमेरसे निकला है।

जयपुरमें मुनि जिनविजयजीके प्रयत्नसे राजस्थान पुरातत्व मन्दिर नामक संस्था सरक-मरकी ओरसे चालू की गअी। जिससे राजस्थानी भाषाके अनेक ग्रन्थ छपे हैं। पर अभी कान्हडदे प्रबंध ही प्रकाशित हुआ है। मुजौत नेठासीरी ख्यात, बांकीदासरी अैतिहासिक बातां, गौराबादलरी चौपाअी और बातवजाव दुपहरी आदि छपे पड़े हैं। शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाले हैं।

बीकानेरकी अनूप संस्कृत लाअीब्रेरी राजस्थानकी ही नहीं भारतवर्षकी प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थोंकी महत्वपूर्ण संग्रहोंमेंसे अेक है। राजस्थानी भाषाका भी सबसे अच्छा संग्रह यहीं है। अुनकी वर्गीकृत सूची भी प्रकाशित हो चुकी है। अन्य राजस्थानी प्रकाशनोंमें दयालदासकी ख्यात भाग १, राजस्थानी वीर गीत, गीत मंजरी अुल्लेखनीय हैं। अिस लाअीब्रेरीकी राज-स्थानी साहित्यकी जो सूची प्रकाशित हुअी है अुससे राजस्थानी साहित्यकी विविधता और विशालताका अनुमान लगाया जा सकता है।

---

१ आप अेक सन्त पुरुष व विद्वान थे। आपके परमार्थ-विचार ७ भाग, अनुभव प्रकाश (हिन्दीमें), हृदय रहस्य सर (पृ. ४५१–८–३५) श्री गीताजी, योगसूत्र सांख्यकारिका, चतुरचिंतामणि— भाग १, २, ३, मानवमित्र-रामचरित, महिम्न मेवाड़ी रूपश्लोकी अनुवाद; चन्द्रशेखर रूपक, समनबत्तीसी आदि मेवाड़ी भाषाके ग्रन्थ अुदयपुरसे प्रकाशित हो चुके हैं।—ले.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुदयपुरके राजस्थान विश्वविद्यापीठ द्वारा भी डिंगल गीतों, लोकगीतों, कहावतों आदिका अच्छा संग्रह हुआ है और अुसकी मुखपत्रिका शोध पत्रिका ६ वर्षसे निकल रही है। जिसमें राजस्थानी साहित्यके बारेमें भी अच्छी जानकारी रहती है। अिस संस्थाके शोध स्थान द्वारा राजस्थानमें हस्त-लिखित हिन्दी ग्रन्थोंकी खोज-विवरणके चार भाग निकले हैं जिसमें मेरे संपादित दो भाग तो अज्ञात हिन्दी ग्रन्थोंके विवरण रूप हैं। पहले और तीसरे भागमें राजस्थानी रचनाओंका भी विवरण शामिल है। मेवाड़की कहावतां, मालवेकी कहावतां, भीली कहावतां, भीली लोक-गीत आदि ग्रन्थोंके प्रकाशन भी अुल्लेखनीय हैं।

अुदयपुरके श्री मोतीलाल मेनारियाने अुल्लेखनीय कार्य किया है। अुन्होंने राजस्थानी भाषा और साहित्यमें राजस्थानी साहित्यका अच्छा परिचय दिया है और डिंगलमें वीर रस तथा हालां झालांरा कुंडलिया भी अुनके अुपयोगी ग्रन्थ हैं।

श्री पुरुषोत्तम मेनारिया राजस्थानी भाषाके बहुत अुल्लेखनीय प्रेमी व कार्यकर्ता हैं। अुत्साह भी अुनमें खूब है। अुन्होंने राजस्थानी लोकगीत तो हजारोंकी संख्यामें संग्रहित किअे ही हैं पर 'राजस्थानकी रसधारा', 'राजस्थानी बातां' 'राजस्थानकी लोक-कथाअें' और अेक राजस्थानी भाषा सम्बन्धी ग्रन्थ लिखकर अच्छी सेवा की है। सहयोग मिलनेपर बहुत अधिक और अच्छा कार्य करनेका अुनका अुत्साह व प्रयत्न है।

जोधपुरमें स्व. श्री अमृतलाल माथुरने राजस्थानी लोकगीतोंकी तर्जपर रामायणके गीत बनाअे और अन्य भी कुछ रचनाअें की हैं। श्रीनाथजी मोदी आदिने गोमाजाट नाटक और सुधारक गीत बनाअे। श्री खेतदान चारण तो राजस्थानीके अच्छे कवि हैं ही। अुनकी रचनाओंका प्रकाशन पीथल प्रकाशनसे शीघ्र ही हो रहा है। श्री नारायणसिंह भाटी तो बहुत ही अुल्लेखनीय सुकवि हैं। जिनका मेघदूतका राजस्थानी पद्यानुवाद बहुतही सुन्दर व सर्व प्रशंसित है। अुनकी सांझ और दुर्गादास नामक दो रचनाअें भी पीथल प्रकाशनसे प्रकाशित हैं। अिनसे बहुत आशा है।

श्री सीताराम लालस राजस्थानीके अच्छे विद्वान हैं। अिन्होंने करीब अेक लाख राजस्थानी शब्दोंका संग्रह किया है। और कहावतें आदि भी अच्छी संख्यामें संग्रहीत की हैं। डिंगल गीतोंका तो अुनके पास बहुत ही विशिष्ट और बड़ा संग्रह है। "राजस्थानी व्याकरण" अिनकी महत्वपूर्ण पुस्तक है, जो पीथल प्रकाशनसे छपी है। वीरमायण आदि कुछ ग्रन्थोंका अुन्होंने संपादन भी किया है।

फुटकर रूपसे अुदयरायजी अुज्वल, शिवसिंह चपल, मांगीलाल चतुर्वेदी, गोविन्दनारायण माथुर, नृसिंहलाल पुरोहित, पं. हीरालालजी शास्त्रीने अपनी रचनाअें स्वयं प्रकाशित की हैं। अुदयपुरके प्राचीन परिपाटीके चारण कवि नाथूदान म्हैयारियाकी वीर सतसअी जो हाल ही में प्रकाशित हुअी है अेवं बस्तावर कविरावका केहर-प्रकाश विशेष रूपसे अुल्लेखनीय है। जोधपुरसे कवियाकरनी दानका बिरद श्रृंगार, बिरद छिहतरी, पाबू प्रकाश बिद श्रृंगार, बिरद छिहतरी, पाबू प्रकाश आदि कअी ग्रन्थ अलग २ प्रकाशकोंने निकाले हैं। ब्यावरके श्री हरि कविने आधुनिक गीत बनाकर कअी भाग प्रकाशित किअे हैं। जयपुरके मदनमोहनसिंहने जयपुरकी ज्यौनारके तीन भाग प्रकाशित किअे हैं।

राजस्थानी हिन्दी मिश्रित भाषाके सैकड़ों ख्याल जो लोक-नाटकके रूपमें सर्वत्र प्रसिद्ध हैं, भिन्न स्थानोंके कअी कवियोंने अनेक (ख्याल) बनाअे और वे जोधपुर जयपुर, किशनगढ, नसीराबाद, कुचामन, मथुरा आदि अनेक स्थानोंसे छपे हैं जिनका कुछ परिचय मैंने अपने ख्यालोंकी पूर्व परम्परा नामके लेखमें दिया है जो भारतीय लोक कला मण्डल की "लोककला" नाम पत्रिकाकी दूसरे मालामें प्रकाशित है। अिसी [illegible] रुक्मणी मंगल, नरसीजीरो माहेरो आदि लोक-काव्य भी बम्बअी आदि कअी स्थानोंसे छपे हैं। फुटकर आड़ी संग्रह, शलोका-संग्रह व मुकलावा बहार आदि कअी पुस्तकें प्रकाशित हुअी हैं। कालिया रातक व शोभाचन्द जम्मड़के बाल व वृद्ध विवाह पर दो नाटक व भगवतीप्रसाद दारुकाका मारवाड़ीके पंच नाटक भी अुल्लेखनीय हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिसाअूके श्री मनोहर शर्मा राजस्थानी लोक साहित्यके अुल्लेखनीय संग्राहक हैं। अुन्होंने लोक साहित्यके विविध प्रकारोंपर पच्चीसों सुन्दर लेख लिखे हैं। अरावलीकी आत्मा, गीतकथा, जिनवाणी अनुवाद, गीता-का पद्यानुवाद अुमरख्यामका पद्यानुवाद आदि अुनकी कअी रचनाअें प्रकाशित हो चुकी हैं। चन्दसखीके भजनोंका भी अिन्होंने बहुत बड़ा संग्रह किया है। चन्दसखीके भजनोंका प्रचार राजस्थान, मालवा, अुत्तरप्रदेशमें खूब रहा और अुनके अनेक संग्रह निकल चुके हैं। अिसी तरह मीराके भजनोंके अनेक संग्रह छपे हैं।

सुजानगढ़के श्री कन्हैयालालजी सेठिया बहुत ही अच्छे कवि हैं। अिनकी हिन्दी कविताओंके दो तीन संग्रह निकल चुके हैं। राजस्थानी कविताअें भी बड़ी सुन्दर हैं। और गद्य काव्य भी राजस्थानीमें लिखे हैं। अिन्होंने राजिअेरा सोरठा प्रकाशित किया है। भीलवाडाके दौलतसिंह लोढ़ा अरविंद भी हिन्दीके अच्छे कवि हैं। अुनकी मेवाड़ी भाषाकी कविताअें "मेवाड़ मां" के नामसे निकली है और डूंगाजी जवारजीका गीत भी अिन्होंने अपने प्रदेशसे संग्रहीतकर प्रकाशित किया है। बगड़ावत नाम लोक काव्यको भी अिन्होंने गानेवालोंके मुंहसे सुनकर लिखा है।

अप्रकाशित पचासों राजस्थानी ग्रन्थ आधुनिक शैलीमें लिखे पड़े हैं पर राजस्थानमें योग्य प्रकाशक न होनेसे वे प्रकाशमें न आ पाअे। श्रीमंत कुमार व्यास राजस्थानीमें "हनुमान" पर महाकाव्य लिख रहे हैं। नाटक व गीत भी लिखे हैं। नारायणसिंह भाटीने गद्य-काव्य भी लिखे हैं। गोवर्धनशर्माने निबन्ध भी लिखे हैं। दाअु जोशीका "आपणो घर" नाटक व भीमपांडियाके गीत अप्रकाशित हैं। श्रीमंतकुमारकी कविताअें व अेक नाटक भी बड़ा सुन्दर है। श्री चन्द्ररायने लघु कहानियां लिखी हैं।

राजस्थानी भाषामें साप्ताहिक व पाक्षिक पत्र भी निकले थे जिनमें मारवाडी हितकारक, अागीवाण और जागती ज्योत अुल्लेखनीय है। पूनासे प्रकाशित राज-स्थानी वीरका गत दीपावली विशेषांक राजस्थानी भाषा में ही निकला है और प्रायः प्रत्येक अंकमें राजस्थानी रचनाअें रहती हैं। जोधपुरके अेक पत्रका विशेषांक पहले राजस्थानी भाषामें ही निकला था। ओलमो नामक मासिकका अेक अंक रननगढ़से निकला था।

अबतक मैंने जैनेतर राजस्थानी साहित्यके प्रका-शनों आदिकी थोड़ीसी सूचना दी। अिसमें विदेशी विद्वानोंके कार्य भी अुल्लेखनीय हैं। टैसीटोरीके कार्यका अुल्लेख पहले किया जा चुका है। पर जर्मन महिला डा. काअुझे (सुभद्रा) ने वहां रहते हुअे राजस्थानी गद्यमें लिखित नामकेतकी कथाका संपादन कर प्रका-शित किया था, फिर वे भारतमें आगअीं और जैनधर्म स्वीकार कर लिया। गुजराती हिन्दीमें ये अपनी मातृ-भाषाकी तरह ही बोल व लिख लेती हैं। कअी राज-स्थानी गुजराती रचनाओंका अुन्होंने संपादन भी किया है। अभी ये ग्वालियरमें रहती हैं और मांडवगढ़ पर अनुसंधान कर रही हैं।

जर्मनके अेक अन्य विद्वान डा. केलावने मारवाड़ी मेवाड़ी, ढूढाड़ी, जयपुरी बोलीका व्याकरण व अेक कोष तैयार किया था। व्यावरके मिशनके पादरीने "मार-वाड़ी ख्यालाज" पुस्तक प्रकाशित की थी। बाअिबल आदिके राजस्थानी अनुवाद भी निकले थे। मैकालिस्टर साहबने जयपुरके गांव-गांवकी बोलियोंकी जांच पडताल की। धामणगांवसे मारवाड़ी हितकारक अेक पत्र निकला व कअी राजस्थानी ग्रन्थोंका प्रकाशन हुआ था; पर वे अभी मेरे सामने नहीं हैं।

गुजरात और सौराष्ट्रसे राजस्थानीके कअी ग्रन्थ प्रकाशित हुअे हैं जिनमें हरिरस, रणमलछंद, नागदमन, वसंत-विलास व बडौदा ओरियंटल सीरीजसे प्रकाशित गणपति कविका माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध जो करीब २५०० दोहोंमें है, अुल्लेखनीय है।

जैन विद्वानोंकी तो राजस्थानीमें सैकड़ों छोटी-बड़ी रचनाअें राजस्थान गुजरातसे प्रकाशित हुअी हैं। १३ वीं शताब्दीसे १५ वी शताब्दी तक राजस्थान और गुजरात की भाषा अेक ही थी। अतः अुस समयकी रचनाओंको गुजराती विद्वानोंने गुजराती भाषाकी रचनाओंके रूपमें प्रकाशित किया है जिनमेंसे बड़ौदा ओरियन्टल सीरीजसे प्रकाशित प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह, यशो-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विजय ग्रन्थमाला भावनगरसे प्रकाशित अैतिहासिक रास संग्रह चार भाग, प्राचीन तीर्थमाला संग्रह तथा आत्मानन्द सभा भावनगरसे प्रकाशित और मुनि जिन विजयजी-सम्पादित अैतिहासिक जैन काव्य संचय और मुनीजीने प्राचीन गद्य रचनाओंका अेक संग्रह प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भके नामसे प्रकाशित करवाया। भारतीय विद्याभवन बम्बअीसे प्रकाशित व मुनिजीसे संपादित भारतीय विद्या पत्रिकाके तीन वर्षोंमें भरतेश्वर बाहुबलि रास, जीव दया रास, बुद्धिरास आदि १३ वीं शताब्दीके और कुमारपाल रास, श्रृंगार सत आदि १५ वी शताब्दीके काव्य तथा राठौर वंशावली गद्यका कुछ अंश प्रकाशित हुआ था। सिंधी ग्रन्थमालासे प्रकाशित सृष्टितक बालावबोधकी २–३ प्राचीन गुजराती गद्यमें छपी है विदेशमें ऋषिवर्धन सूरिका नलरास छपा है। २० वर्ष हुअे १३ वीं शताब्दी से २० वीं शताब्दीके प्रारम्भ तककी अैतिहासिक रचनाओंका अेक बड़ा व सुन्दर संग्रह हमने भी "अैतिहासिक जैन काव्य संग्रह" के नामसे प्रकाशित किया था।

देवचन्द्र लालाभाअीके पुस्तकोद्धार फंड सूरतकी ओरसे "आनन्द काव्य महोदधि" नामक प्राचीन राजस्थानी गुजराती काव्य संग्रहोंके आठ भाग प्रकाशित हुअे। जिनमें कअी रास राजस्थानीके हैं। अिसी तरह भीमसिंह माणेक आदिने बहुतसे रास प्रकाशित किअे जिनमें कअी राजस्थानीके हैं।

बड़ौदा विश्वविद्यालय प्रकाशन द्वारा नलरास, प्राचीन फागु संग्रह और वर्णक संग्रह आदि गद्य पद्य राजस्थानी ग्रन्थ प्रकाशित हुअे हैं। बड़ौदाके जैन विद्वान लालचन्द गांधीने संवत् १२४१ में रचित भरतेश्वर बाहुबालि रासका सुन्दर संपादन कर प्रकाशित किया है। बड़ौदा ओरियन्टल सीरीजसे भी प्राचीन रासोंके दो संग्रह शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाले हैं। गुजरात विद्या सभा अहमदाबादसे प्राचीन गुर्जर काव्यके पहले भागमें १५वीं शताब्दीके काव्य हैं और हंसावलि आदि प्राचीन काव्य भी छपे हैं। फार्बस सभा बम्बअीसे भी कअी प्राचीन रास निकले हैं और राजस्थानीके सुप्रसिद्ध काव्य कृष्णरुक्मणीरी वेलि भी गुजराती अनुवाद सहित प्रकाशित हुअी है।

स्वर्गीय झवेरचन्द मेघाणीजी सौराष्ट्रके सबसे बड़े लोक साहित्यके संग्राहक व विवेचक थे। अुन्होंने अपने ग्रन्थोंमें चारणादि कवियोंके दोहे प्रकाशित किअे हैं। और गुजरातके चारणी साहित्यपर दिअे भाषणोंका "चारणोंने चारणी साहित्य" नामक ग्रन्थ गुजरात विद्या सभासे प्रकाशित करवाया है।

अहमदाबादसे प्रकाशित चारण नामक पत्रमें कअी राजस्थानी रचनाअें छपी है। गुजरात और सौराष्ट्रमें अनेक चारण राजकवि हैं। क्षात्रधर्म क्षत्रिय सन्देश आदि अनेकों पत्रोंमें राजस्थानी रचनाअें छपी हैं।

कच्छ भुजमें महाराव लखपत बड़े विद्याप्रेमी थे। अुनके पिताके समयसे चारणकवि वहां आश्रय पाते रहे, जिनमें हमीर कवि नाम विशेष अुल्लेखनीय है। अिनके रचित हमीर पिंगल नामक छन्दशास्त्र, नाममाला नामक कोष और जदुवंशावलि नामक काव्य प्राप्त हुअे हैं। अिसी तरह महाराव भोजके पुत्र देसलके आश्रित कवि अुदयरामके कविकुल-बोध नामक महत्वपूर्ण ग्रन्थमें छन्द कोष, अलंकार और काव्य रीतिका अच्छा विवेचन है। पर ये ग्रन्थ अप्रकाशित हैं।

बंगालमें भी कअी जैन कवियोंने राजस्थानी ग्रन्थोंकी रचनाअें की हैं। विशेषतः अजीमगंज, मुर्शिदाबाद, कासमबाजार, कलकत्ता आदिमें रचित कअी रचनाअें अुल्लेखनीय हैं। वैसे जैन समाज भारतमें सर्वत्र फैला हुआ है। अतः अुनके अुपदेशकके रूपमें जैन यति जहां २ गअी वहां राजस्थानीमें रचनाअें भी कीं।

जैन विद्वानोंके छोटे बड़े सैकड़ों राजस्थानी ग्रन्थ विविध स्थानोंसे प्रकाशित हो चुके हैं। जिनमें बहुतसे जैनधर्म सम्बन्धी हैं और बहुतसे कथा व चरित्र रूप हैं। अिन सबका परिचय देना अेक ग्रन्थका ही विषय है।

श्वेताम्बर जैन समाजमें स्थानकवासी और तेरापन्थी मुनियोंका तो अधिकांश साहित्य राजस्थानीमें है। तेरहपन्थी सम्प्रदायके आचार्य जीतमलजीने भगवती सूत्रका राजस्थानी पद्यानुवाद किया जो अेक ग्रन्थही ६० या ८० हजार श्लोकोंमें है। अुनकी समस्त रचनाअें २–३ लाख श्लोककी मानी जाती हैं। जैन कवियोंकी रचनाओंका विवरण स्वर्गीय मोहनलाल दलीचन्द देसाअीके जैन गुर्जर कवियोंके तीन भागोंमें मिलता है। स्थानवासी तेरहपन्थी मुनियोंका राजस्थानीका हिस्सा कअी ग्रन्थोंमें निकला है।

अिस प्रकार बहुत संक्षेपसे राजस्थानी साहित्यका परिचय दिया गया है। आशा है अिससे प्रेरणा पाकर अिस महत्वपूर्ण साहित्यका अनुसन्धान व प्रकाशन करनेकी ओर विद्वानोंकी प्रवृत्ति बढ़ेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेल मलना

—स्व. महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री

[बंगलामें व्यंग्य-विनोदात्मक लघुतम निबन्ध अपनी कुछ विशिष्टता रखते हैं। वैसे हमने देखे हैं मराठीमें भी। हिन्दीमें अभी-अभी कल-परसोंतक यह लघु-निबन्ध परम्परा चली, आज वह नष्टप्राय हो गअी है। 'तेल-मलना' अेक बड़ा मजेदार मीठा मुहावरा है। हिन्दीमें तेल मलनेके फायदे भी बहुतसे बतलाअे गअे हैं आयुर्वेद, यूनानी और डाक्टरीमें; पन्ने-के-पन्ने भरे पड़े हैं। किन्तु तेलकी मालिशका फौरन् मिलनेवाला फायदा जग-जाहिर है। सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, औद्योगिक जितने भी हमारे-जीवनके क्षेत्र हैं, सब जगह तेल मलनेके अखाड़े हैं, और पठ्ठे बड़े मजेसे अुन अखाड़ोंमें जाकर तेल मलते हैं। क्या आपने अिन अखाड़ोंमें जाकर कभी तेल मला है ? सीनेपर हाथ रखकर अन्तस्तलसे पूछिअे। बंगलाके अिस लघु निबन्धसे तेल-मलनेकी, स्नेह-सम्मर्दनकी, वार्ता सुनिअे। बंगालके महामहोपाध्याय स्व० हरप्रसाद शास्त्रीजी जहाँ गम्भीरातिगम्भीर महापंडित थे, वहाँ वे हल्के-फुल्के व्यंग्य-विनोद-पटु भी थे। 'स्वाधीनता' के सम्पादक सुहृद्वर डॉ. महादेव साहाके सबल सहयोगसे हम अुस लघु-निबन्धको प्रस्तुत करते हैं। मजा लूटिअे तेलके मलनेका।—सम्पादक]

तेल क्या चीज है अिसे संस्कृत कवियोंने समझा था। अुनके मतानुसार तेलका ही दूसरा नाम स्नेह है—वास्तवमें स्नेह और तेल अेक ही पदार्थ है। मैं तुमसे स्नेह करता हूँ, तुम मुझसे स्नेह करते हो अर्थात् हम परस्परको तेल लगाते हैं। स्नेह क्या है ? जो स्निग्ध या ठंडा करता है अुसका नाम स्नेह है। तेलकी तरह और कौन-सी चीज ठंडा कर सकती है।

संस्कृतके कवियोंने ठीक ही समझा था। क्योंकि अुन्होंने सभी मनुष्योंको अेक समान स्नेह करने या तेल लगानेका अुपदेश दिया है।

यथार्थमें तेल सर्व-शक्तिमान है। जो बलसे असाध्य है, जो विद्यासे असाध्य है, जो धनसे असाध्य है, जो कौशलसे असाध्य है, वह अेकमात्र तेलसे सिद्ध हो सकता है।

जो सर्व-शक्ति-मय तेल व्यवहार करना जानता है वह सर्वशक्तिमान है, अुसके लिअे संसारके सभी काम आसान हैं, अुसे नौकरीकी चिन्ता नहीं करनी पड़ती है—वकालत चमकानेके लिअे वक्त बर्बाद करनेकी जरूरत नहीं पड़ती—बेकार बैठना नहीं पड़ता, किसी भी काममें शिक्षानवीशी नहीं करनी पड़ती है।

जो तेल लगा सकता है अुसके पास विद्या न होनेपर भी वह प्रोफेसर हो सकता है, अहमक होनेपर भी मजिस्ट्रेट बन सकता है, साहस न होनेपर भी सेनापति हो सकता है और दुर्लभराम होनेपर भी ओड़िसाका गवर्नर बन सकता है।

तेलकी महिमा अति विचित्र है, तेलके बिना संसारका कोअी भी काम नहीं बनता है। तेलके बगैर काम नहीं चलता, दीया नहीं जलता, व्यंजन स्वादिष्ट नहीं होता, चेहरा नहीं खुलता, हजार गुण हों अुनका परिचय नहीं मिलता। तेलके होनेपर और किसी भी चीजकी कमी नहीं होती।

सर्वशक्तिमय तेल नाना प्रकारसे सारे संसारमें व्याप्त है। तेलकी जिस मूर्तिसे हम गुरुजनोंको स्निग्ध करते हैं अुसका नाम है भक्ति, जिससे गृहिणीको स्निग्ध करते हैं अुसका नाम है प्रणय, जिससे पड़ोसीको स्निग्ध करते हैं अुसका नाम है शिष्टाचार या सौजन्य; "फिलनथ्रपी।" जिससे साहबको स्निग्ध करते हैं अुसका नाम है लायल्टी, जिससे बड़े आदमीको स्निग्ध करते हैं अुसका नाम है नम्रता या माडेस्टी। नौकर-चाकरोंको हम तेल लगाते हैं, अुसके बदले भक्ति या सेवा पाते हैं। बहुतोंको तेल लगाकर तेल निकालते हैं।

परस्परके घर्षणसे बहुतेरी चीजोंसे आग निकलती हैं। अुस आगके निवारणका अेकमात्र अुपाय है तेल। अिसलिअे रेलके पहिअेमें तेलके अनुकल्प चर्बी लगाते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। अिसलिअे जब दो आदमियोंमें घोर महाभारत मच जाता है तब रफा नामक तेल आकर अुसे ठंडा कर देता है। तेलमें अगर अग्निनिवारिणी शक्ति न होती तो घर-घरमें गाँव-गाँवमें पिता-पुत्रमें पति-पत्नीमें राजा-प्रजामें झगड़ा-तकरारमें निरन्तर चिनगारियाँ निकलतीं।

पहले ही कहा गया है कि जो तेल लगा सकता है वह सर्वशक्तिमान है। लेकिन तेल लगानेसे ही काम नहीं बनता है। लगानेके पात्र हैं, समय है, कौशल है।

तेलसे आग भी बसमें आती है। आगमें थोड़ा-सा तेल डालकर सारी रात घरमें बन्द करके रखा जा सकता है। लेकिन वह तेल मूर्तिमान है।

किसे तेल नहीं लगाया जा सकता यह नहीं कहा जा सकता। भोजुआ तेलीसे लाट साहब तक सभी तेल लगानेके पात्र हैं। तेल अैसी चीज नहीं है जो बर्बाद हो। अेक बार लगा रखनेमें कभी न कभी अुसका फल होगा ही। लेकिन फिर भी जिससे अिसी दम काम बनाना होगा वही तेल निकपका प्रधान पात्र है।

समय—जिस समय भी हो तेल लगानेसे काम होगा ही। लेकिन अैन मौकेपर थोड़ेसे तेलसे ज्यादा काम बनता है।

कौशल—पहले ही कहा गया है कि, जैसे भी हो तेल लगानेसे कुछ न कुछ फायदा होगा ही। चूँकि तेल बर्बाद नहीं होता फिर भी तेल लगानेका कौशल है। अिसका प्रमाण यह है कि भट्टाचार्यगण दिनभर बकर-बकर करके भी जिससे बीस आनेसे ज्यादा नहीं वसूल कर सके, अेक अँगरेजी-दाँ अनायास पचास रुपअे अेंठ ले सकता है। कौशलके साथ अेक बूंद लगानेसे जितना काम होता है, बिना कौशलसे गागर-गागर अुड़ेलनेसे भी अुतना नहीं होता।

व्यक्ति विशेषसे तेलके गुणका बहुत तारतम्य दिखाअी देता है। खाँटी तेलका मिलना दुर्लभ है। लेकिन तेलकी अेक अैसी अदभुत सम्मिलनी शक्ति है कि अुससे सभी पदार्थोंके गुणोंको आत्मसात् किया जा सकता है। जिसके पास विद्या है अुसका तेल मेरे तेलसे मूल्यवान है। तिसपर अगर धन हो तो अुसके प्रत्येक बूंदका दाम लाख रुपअे है। लेकिन तेलके न होनेपर बुद्धि हो, हजार धन हो, अुसका किसीको पता ही नहीं चलता।

तेल लगानेकी प्रवृत्ति स्वाभाविक है। यह प्रवृत्ति सभीमें है और सुविधाके अनुसार अपने घर और अपने दलमें सभी अिसका अिस्तेमाल करते हैं। लेकिन बहुतेरे अितने अधिक स्वार्थी हैं कि बाहरके आदमीको तेल नहीं लगा पाते हैं। तेल लगानेकी प्रवृत्ति स्वाभाविक होनेपर भी अिसमें सफल होना तकदीरकी बात है।

आजकल विज्ञान, शिल्प वगैरह सिखानेके लिअे नाना प्रकारकी चेष्टाअें हो रही हैं। जिसमें बंगालके लोग प्रैक्टिकल अर्थात् कामके आदमी बन सकें अिसके लिअे सभी सचेष्ट हैं। लेकिन कामका आदमी होनेके लिअे तेल लगाना सबसे पहिले आना चाहिअे। अतअेव तेल लगानेकी कला सिखानेके लिअे अेक स्कूल स्थापित करना बहुत जरूरी है। अिसलिअे हमारा सुझाव है कि चुन-चुनकर किसी रायबहादुर या खानबहादुरको प्रिन्सिपल बनाकर शीघ्र ही स्नेहनिषेकका अेक कालिज खुलना चाहिअे। कम-से-कम वकालत सिखानेके लिअे ला-कालिजमें अेक तैल अध्यापक नियुक्त होना आवश्यक है। अैसा कालिज खुले तो बहुत अच्छा हो।

लेकिन अैसा कालिज खोलना हो तो शुरूमें ही गड़बड़ी दिखाअी देती है। तेल सभी लगाते हैं। लेकिन कोअी अिस बातको स्वीकार नहीं करता कि वह तेल लगाता है। अतअेव अिस विद्याका अध्यापक मिलना कठिन है, यह विद्या देख-सुनकर सीखनी पड़ती है। काबिल लेक्चरर नहीं मिलते हैं। यद्यपि कोअी कालिज नहीं है फिर भी जिससे नौकरी या प्रोमोशनकी सिफारिशी चिट्ठी मिल सकती है अुस आदमीके घर हमेशा जानेसे अच्छी तालीम मिल सकती है। बंगालियोंके पास बल नहीं है, विक्रम नहीं है, बुद्धि नहीं है, अिसलिअे बंगालियोंको अेकमात्र तेलका भरोसा है। बंगालमें जिसने जो कुछ किया है सब तेलके बलपर ही किया है। बंगालियोंके तेलकी कीमत अधिक नहीं है। किस कौशलसे यह तेल विधाता पुरुषोंके लिअे सुखसेव्य होता है, अिसे भी बहुत कम लोग जानते हैं। जो जानते हैं अुन्हें मैं धन्यवाद देता हूँ। वे ही हमारे देशका मुख अुज्ज्वल किअे हुअे हैं।

तेल विधाता पुरुषोंके लिअे सुखसेव्य होगा, अिसकी शिक्षा अिच्छा होनेपर भी अिस देशमें पाना कठिन है। अिसके लिअे विलायत जाना जरूरी है। वहाँकी रमणियाँ अिस विषयकी प्रधान अध्यापक हैं। अुनके थ्रू होनेपर काम बहुत जल्दी बनता है।

अन्तमें याद रखना चाहिअे कि अेक तेलसे मशीनका पहिया घूमता है तो दूसरे तेलसे मन घूमता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साअिप्रसका सवाल

—श्री परदेशी

साम्राज्यवाद बड़ा विचित्र दानव है।

वह अैसी नागिन है, जो कभी-कभी अपने ही बच्चोंको निगल जाती है। अेक ओर जहां साम्राज्यवादियोंने काले और गोरेके भेदको महत्व दिया और रंगभेदकी नीति बनाकर, अफ्रीकामें, अफ्रीकाके मूल निवासियोंके प्रति अनहद अत्याचार किअे (आज भी कर रहे हैं।) और अमरीकामें तो, बावजूद अब्राहम लिंकनकी शहादतके, गोरे और कालेका भेद घटनेके बजाय बढ़ता ही जा रहा है। अधिक दिन नहीं हुअे अिस घटनाको जब कि अमरीकामें भारतीय राजदूत श्री जी. अेल. मेहताको अेक होटलने अपने बड़े भोजन–कक्षमें भोजन देनेसे अिन्कार कर दिया था। लेकिन, अपने राजनीतिक और देशीय स्वार्थोंके लिअे साम्राज्यवाद गोरे–गोरोंमें भी भेद मानता है। और नागिनकी तरह छोटे, निर्बल गोरे देशोंको हडप कर जानेकी कोशिशमें रहता है। तभी न, साम्राज्यवादी जर्मनीने आस्ट्रीयाको, अमरीकाने पिछले जमानेमें टैक्सास और केलिफोर्निया को, (और आज आर्थिक सहायताके पर्दे पीछे अनेक देशोंको) और ब्रिटेनने जिब्राल्टर और साअिप्रसको अपने आधीन रखा। और कलकी तो बात है, जब आयरलैंड ब्रिटेनके फौलादी पंजेसे मुक्त हुआ। स्वयं अमरीकाको अपनी आजादीके लिअे ब्रिटेनसे युद्ध लड़ना पडा। रूसमें जब क्रांति हुअी तो योरपके कअी देशोंने अुसके विरुद्ध सेनाअें भेजकर, समूचे रूसको अपने जालमें फंसा लेना चाहा। अिसी परम्परामें ब्रिटेन साअिप्रसको दबाअे हुअे है। अुसे अिस बातका लिहाज नहीं कि यूनानसे अुसके राजा के परिवारिक–सम्बन्ध रहे हैं, अथवा साअिप्रसमें भी गोरे बसते हैं।

शायद आजसे दस या पांच वर्ष पूर्व यदि साअिप्रस में साम्राज्यवादके विरुद्ध बगावत होती तो, साअिप्रसको अपनी आजादी सहज मिल जाती, परन्तु आज तो ब्रिटेनकी आर्थिक और राजनैतिक हालत अितनी कमजोर है कि वह साअिप्रसका मोह नहीं छोड सकता। यही कारण है कि साअिप्रसके बाजारोंमें यूनानी क्रांतिकारियोंके सीने ब्रिटिश सैनिकोंकी संगीनोंको टक्कर दे रहे हैं।

भारत, बर्मा, और मिस्रसे निकाल दिअे जानेपर भी, ब्रिटेन साअिप्रसमें डटा रहना चाहता है। क्योंकि मध्यपूर्वसे अुसे जोड़नेवाली अेकमात्र कड़ी यही भूमि रह गअी है।

दूसरी ओर यूनानमें साअिप्रसको लेकर बड़ा द्रोह फैला हुआ है, ब्रिटेनके प्रति। ब्रिटिश सैनिकोंको दिन दहाड़े सड़कोंपर मार दिया जाता है। और पिछले वक्त यह रोष यहांतक फैलाकि ब्रिटेनके साथी अमरीका पर भी यह आरोप आया कि, सभी राष्ट्रोंकी स्वतंत्रताकी अपनी बड़ी-बड़ी बातोंके बावजूद भी, वह अुपनिवेशवाद को पोषण देता है। गोवा और फार्मूसामें, अफ्रीकामें अुसने अुपनिवेशवादी शक्तियोंको बलवन्त बनाया है। यही धारणा रही कि यूनानी अधिकारियोंने अमरीकी काअुन्सल जनरलकी हत्या कर दी। जाने क्या बात है कि अमरीका अुपनिवेशवादी ताकतोंके विरूद्ध खुलकर सामने नहीं आता। वह तटस्थ भी नहीं रह पाता। अुलटे, अुसे अिन अुपनिवेशवादियोंकी पीठ ठोंकते देखा गया है। अुसने स्पेन, पुर्तगाल, ब्रिटेन, फ्रान्स, बेल्जियम और हॉलंडके औपनेवेशिक स्वार्थोंमें सहयोग दिया है। अिससे दुनियामें–विशेषकर पूर्वमें अमरीकी सम्मानको गहरा आघात लगा है।

साअिप्रसका मामला बड़ा विचित्र है। स्वामित्व का दावा पेश करनेवाला यूनान नेटो और मेडोका सदस्य है। ब्रिटेन भी अिन दलोंका सदस्य है। ये दोनों दल खालिस साम्राज्यवादी गुट्ट हैं। यदि यूनान अिन अभिसन्धियोंमें शामिल न होता, तो अुसे पूर्वके अुन अनेक राष्ट्रोंकी सहानुभूति मिल जाती, जो सदियों तक साम्राज्यवादियोंके शिकार रहे हैं और अुनके जुल्मों को खूब जानते हैं। मिस्र–यूनानका पड़ौसी अुसका बड़ा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहायक होता। भारत पूरी मदत देता। और अिसी प्रकार पूर्वके सभी देश यूनानके दुःखको अपना दुःख समझते। यों, अिस सवालको, ये पूर्वीयदेश अपना सवाल तो आजकी अवस्थाओंमें भी मानते हैं, चाहे यूनान किसी भी रास्ते जाय, चाहे अिनके विपरीत ही रहे। लेकिन जब अेशिया और अफ्रीकाने अुपनिवेशवादके विरुद्ध जिहादकी घोषणा कर दी है तो, अिसका आशय यह नहीं कि वे सिर्फ काले लोगोंके लिअे ही लड़ेंगे। जहां-जहां अुपनिवेशवादका दानव अपना खूनी पंजा गड़ाअे हुअे है, वहां-वहांसे अुसे अुखाडकर तोड़ देना पूर्वीय राष्ट्रोंका धर्म बन गया है। और जिस आजादीको लेकर, वे अपने लिअे लड़ते हैं, अुस आजादीको दूसरोंको देने और दिलानेके लिअे भी वे सदैव तत्पर रहेंगे। चाहे अैसा पीड़ित देश गोरा ही क्यों न हो और चाहे वह पश्चिममें ही क्यों न हो। यह तो यूनानके देश-प्रेमियोंके समझनेकी बात है, कि अुनका सच्चा साथी कौन है और हो सकता है।

साअिप्रस भूमध्यसागरका अेक छोटासा द्वीप है। अिसके निकट पड़ौसमें तुर्की, सीरिया, और मिस्र हैं। अिसका अड्डा वायुयानोंके द्वारा योरपको पश्चिमी अेशिया यानी मध्यपूर्व और अुत्तरी-पूर्व अफ्रीकासे जोड़ता है। स्वेज नहरमें होकर भारत और पूर्वी अेशिया जानेवाले मार्गके नाकेपर यह द्वीप स्थित होनेसे विश्वके विजेता वीरोंको साअिप्रसने सदैव आकर्षित किया है। और अिस आकर्षणने साअिप्रसको सदैव अशान्तिके वातावरणमें रखा है। पहले मिस्री योद्धाओंने, फिर सिकन्दरने, तब फारस, रोम और बाअिजेन्टाअिन शाहोंने, वेनिस, और तुर्कीके शासकोंने अिसपर अधिकार और अनाचार बरसाअे। अीसा मसीहसे ५८ वर्ष पूर्वसे लेकर ३९५ वर्षतक साअिप्रस रोमन प्रांत रहा। रोमन साम्राज्य के पतनपर, यह बाअिजेन्टाअिन सम्राटोंके फंदेमें फंसा। १५ वीं शताब्दीके अुत्तरार्धमें वेनिसवालोंने अिसपर अपना शासन जमाया। तब सन् १५७१ में तुर्कीके सुल्तान सुलेमान द्वितीयने अिसे जीतकर, अपना अधिकार अिसपर स्थापित किया। तीनसौ वर्षों तक राज रहा और अिसी अवधिमें साअिप्रसमें तुर्क लोगोंकी आबादी आअी, जो आज पूरी जनसंख्याका १८ प्रतिशत भाग है। और अिसी आबादीके बलपर तुर्की ब्रिटेनसे कहता है कि साअि-प्रसको अैसी आजादी न दी जाअे, जिसमें आप-जैसे रक्षक न रहें। साफ है कि तुर्की साम्राज्यवादियोंके साथ है। और पिछले दस वर्षोंमें अुसकी राजनीतिने अेशिया और अफ्रीकाके लिअे हितकारी हितोंपर कुठाराघात किया है। आज वह खुले आम पाकिस्तान और यूनानकी संगतिमें अमरीकाके अुस गुट में है, जो स्वतंत्रताकी मांगको अच्छी नजरसे नहीं देखता। यह कैसा गुट है? यूनान और तुर्कीमें विरोध भी है और दोनों साथ भी हैं। अिस-से यह साबित होता है कि दोनों राष्ट्रोंके पास अैसी कोअी मुक्त और मौलिक नीति नहीं, जो प्रत्येक दशामें अपने देशका विकास करती हुअी, अपनी सत्यताको प्रमाणित करती रहे।

यद्यपि साअिप्रसपर विदेशियोंके अनेक आक्रमण हुअे, परन्तु वहांके निवासी यूनानियोंने अपनी भाषा और संस्कृतिको सदैव अक्षुण्ण रखा। आज भी अुनकी जीवन-यापन प्रणाली, रहन-सहन, खान-पान, और रस्म-रिवाजमें अपना राष्ट्रीय ढंग दृष्टिगोचर होता है। प्राचीन देवालयोंके भग्नावशेष अिस बातके साक्षी हैं कि अेक दिन था जब अिस भूमिभागपर यूनानकी समृद्ध संस्कृतिका सिंहासन सुशोभित था।

जब रूस और तुर्कीमें (सन् १८७७–१८७८में) युद्ध छिड़ा और तुर्की कुछ निर्बल मालूम हुआ तो, ब्रिटेन-ने, जो नित्य अैसे मौकोंकी ताकमें रहता है, तुर्कीसे साअिप्रसको हथिया लिया। ब्रिटेनने ४ जून १८७८के दिन, साअिप्रस कन्वेंशन्की संधिपर हस्ताक्षर करते हुअे, तुर्कीसे यह लिखवा लिया कि ब्रिटेनको अिस द्वीपपर अधिकार और शासन करनेका पूरा हक रहेगा और अिसके अेवज ब्रिटेन तुर्कीके सुल्तानको, रूसके विरुद्ध सहायता देगा। खैर, आज तो सन्धियोंके कागज पुराने हो गअे हैं और न तुर्कीमें सुल्तान रहे, न साअिप्रसपर तुर्कीका अधिकार ही रहा। तुर्की क्या अिसना कमजोर देश है कि वह अपनी जनताकी रक्षाके लिअे सदा विदेशियोंको निमंत्रण देता रहेगा?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वास्तवमें, साअिप्रसको अपने अधिकार में लेनेकी ब्रिटिश-साजिश रूस-तुर्की युद्धसे पहले ही चल रही थी। अर्ल ऑफ बेकन्सफील्डने अपनी पुस्तक "बेन्जामिन डिजरॉयलीका जीवन चरित्र" में अिस विषयपर प्रकाश डाला है। ब्रिटेनके कूटनीतिज्ञ अिस स्थानकी सैनिक स्थितिके कारण, अिसे अपने कब्जेमें लेना चाहते थे। वे जानते थे कि यहाँ रहकर वे मिस्र और भूमध्यसागरीय देशोंपर अपना दबाव डाल सकेंगे। लाअिफ ऑफ सालिसबरीमें अिस बातका स्पष्ट अुल्लेख है कि तुर्कीके सुल्तानपर अंग्रेजोंने किस प्रकार जोर डाला। अिस्तम्बुल स्थित अंग्रेज राजदूतने अपनी सरकारकी आज्ञा पाकर २४ मअी १८७८ के दिन सुल्तानके सामने यह मांग रखी कि वह ४८ घंटेके अन्दर साअिप्रस ब्रिटेनके हवाले कर दे। फलतः सुल्तानकी ओरसे साअिप्रसकी राजधानी निकोसियामें ३० जून १८७८ में अेक फरमान प्रकाशित किया गया कि भविष्यमें ब्रिटेन साअिप्रसका अस्थाअी शासक होगा। लेकिन ब्रिटेनको तो पैर रखनेको जगह चाहिअे। अब वह दूसरे मौकेकी तलाशमें था।

प्रथम महायुद्धमें तुर्कीने जर्मनीका साथ दिया। बस, ब्रिटेनको मुह मांगा मौका मिला और अुसके अुपनिवेशवादियोंने नवम्बर १९१४ में तुर्कीको सदाके लिअे 'सम्राटके भूभागमें' मिला दिया। महायुद्धकी समाप्ति पर, तुर्की भी करीब-करीब समाप्त ही हो गया। सन् १९२३ की २४ जुलाअीके दिन 'लूसांकी सन्धि' के अनुसार तुर्कीने साअिप्रसपर अंग्रेजी अधिकार मान लिया।

जबसे अंग्रेज साअिप्रसमें आअे, अुनकी कूट-नीति दिन-प्रति-दिन नअे-नअे रंग दिखलाने लगी और सारे भूमध्यसागरमें अशान्तिका बादल मँडराने लगा। प्रथम महायुद्धमें यूनान तटस्थ था, साअिप्रसमें मेहमान बने अंग्रेजोंने अुसपर यह दबाव डाला कि वह जर्मनीके विरुद्ध हथियार अुठाअे, परन्तु, शान्ति-प्रिय यूनानियोंने साफ अिन्कार कर दिया। तभीसे यूनान अिस तथ्यको जाने हुअे था कि साअिप्रसमें अंग्रेजोंका रहना अुसके अस्तित्वके लिअे अेक भारी खतरा है। लेकिन यूनान ब्रिटेनका पुछल्ला बना रहा और आर्थिक अेवं राजनीतिक दृष्टिसे अिस प्रकार अुसके आश्रित रहा कि साअिप्रसकी आजादीकी मांग न रख सका।

दिन-दिन साअिप्रसकी दुर्दशा होती गअी। अंग्रेजोंने अुसे खेतीहर प्रदेश बना दिया और अुसके कच्चे मालसे अपने जहाज भर-भरकर अिंग्लैंडके कारखानोंको सम्पन्न और साअिप्रसको विपन्न बनाया। अपनी सारी तैयारियों और साजिशोंके अुपरान्त भी ब्रिटेन यूनानियोंके दिमागसे अिस बातको नहीं निकाल सका कि साअिप्रस अुनका नहीं है। २५ फरवरी १९५४ के 'टाअिम्स' ने लिखा- "साअिप्रसकी आजादीकी मांग अुतनी पुरानी है, जितना पुराना साअिप्रसपर ब्रिटेनका अधिकार है।"

द्वितीय महायुद्धकी समाप्तिपर, विश्वमें शान्ति और स्वतंत्रताकी नअी लहर फैल गअी। और भारतकी आजादी और अुसकी तटस्थ नीतिने, अुसकी साम्राज्यवाद-विरोधी चुनौतीने दुनियाके सभी गुलाम देशोंको आजादीकी अुमंगसे भर दिया और कलतक जो सिर झुकाअे खड़े थे, वे देश सीना तानकर खड़े हो गअे। साअिप्रसमें भी राष्ट्रीय आंदोलनने जोर पकड़ा। कअी सामाजिक और राजनैतिक दल सामने आअे अिनमें अिनोसिस जिसका प्रणेता आर्क बिशप मेकेरियस है। दूसरी ओर अैसे युनानी भी हैं जिन्होंने यूनानके नेटो परिवारमें जानेपर जोर दिया। और भी दल हैं, जिनमें कामगार लोगोंका प्रगतिशील दल (अेकेल), 'प्रजातांत्रिक यूथ लीग' (अे. अेस. अेन.) और महिलाओंकी संस्था 'प्रजातांत्रिक वुमन्स लीग' आदि हैं।

आजके साअिप्रसवासी अनेक प्रकारसे ब्रिटेनके अुपनिवेशवादी शासनसे लड़ रहे हैं—अुनके आंदोलनमें हड़ताल, प्रदर्शन और विश्वकी शान्तिप्रिय संस्थाओंसे अपील आदि कार्य सम्मिलित हैं। कुछ अैसे लोग भी हैं, जो सशस्त्र क्रांतिमें विश्वास रखते हैं; अंग्रेजोंसे प्रतिशोध लेना चाहते हैं। अैसे लोग देशप्रेमियोंको दी गअी फांसियोंका बदला लेते हैं और आअे दिन ब्रिटेनके सैनिकोंको प्राण-दण्ड देते हैं। साअिप्रसमें, खुले आम, ब्रिटिश राज्यपालका सिर काटकर लानेवालेके लिअे लाखों रुपयोंका अिनाम घोषित किया गया है और राष्ट्रप्रेमियोंके अिस रुद्र रोषसे अपने राज्यपालकी रक्षाके लिअे ब्रिटेनको बड़ी तैयारी रखनी पड़ती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साअिप्रसकी जनता चाहती है कि वह जल्द-से-जल्द आजाद हो। और अपने पितृदेश यूनानसे अुसका मेल हो। १५ जनवरी १९५० में वहां अिस विषयक निर्वाचन भी हुआ। ब्रिटेनने अिस कार्यमें कअी रोड़े अटकाअे। फिर भी साअिप्रसकी पांच लाख जनतामेंसे ९६ प्रतिशत लोगोंने यूनानसे सम्मिलनके पक्षमें अपना मत दिया। अिसके अतिरिक्त साअिप्रसने संयुक्तराष्ट्रसंघके समक्ष भी अपनी आजादीके लिअे दुहाअी दी। यूनानमें भी साअिप्रसके मेलका मामला जोर पकड़ता जा रहा है। राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्रोंके लिअे यह अेक अहम मसला बन बैठा है। यह आश्चर्यकी बात है कि यूनानकी प्रतिगामी सरकार साअिप्रसके मामलेमें सदैव खामोश रही; लेकिन जन-आंदोलनने अुसे ब्रिटेन और अमरीकाके विरुद्ध बोलनेको मजबूर कर दिया। फिर भी १९५४ के मअी मासकी २० वीं तारीखको यूनानके प्रधानमंत्री अेलेक्जेंडर पेपेगसने यहांतक कह दिया—"हम यह मानते हैं कि ब्रिटेनको साअिप्रसमें सैनिक अड्डे बनानेकी अनिवार्य आवश्यकता है। मैं कहता हूं कि हम ब्रिटेनको साअिप्रस और यूनानमें अुसी प्रकार अड्डे बनानेकी सुविधा देना चाहते हैं, जिस प्रकार हमने अमरीकाको दी है।" अिसका अर्थ यह हुआ कि यूनानकी सरकार साअिप्रसपर अपना अधिकार मात्र चाहती है। वह दोनों स्थानोंमें अमरीका और ब्रिटेनको सैनिक अड्डे देनेके लिअे अुत्सुक है। चाहे ये अड्डे योरप और अेशियाकी शांतिके लिअे कितने ही विघातक क्यों न सिद्ध हों। अिस अवस्थामें साफ जाहिर है कि यूनानी सरकार ब्रिटेनके खिलाफ संयुक्तराष्ट्र परिषदमें यह समस्या अुपस्थित करना नहीं चाहती थी, लेकिन जनताकी प्रबल पुकारने अुसे मजबूर कर दिया।

जब ब्रिटेनने अप्रेल १९५४ के यूनानी मेमोरंडमके प्रति कोअी संतोषजनक अुत्तर न दिया तो यूनानने अपना मामला यू. अेन. ओ. के सामने पेश किया। जनरल असेम्बलीकी नअी बैठकमें यूनानने यह मांग रखी कि संयुक्तराष्ट्रसंघकी देखरेखमें साअीप्रसकी जनताके लिअे भी समानता और आत्मनिर्णयके अधिकारका सिद्धांत लागू किया जाअे। लेकिन यूनानकी सरकारने जिस प्रकार आधे मनसे अिस मामलेमें कदम बढ़ाया, अुसे देखकर जनतामें आशाका वातावरण न था। 'तनिया' पत्रने तो पहले ही यहां तक लिखा—"साअीप्रस वासियोंको भय है कि यूनानकी सरकार साअीप्रस विषयक बहसमें दिलोजानसे भाग न लेगी।" अिसके विपरीत ब्रिटेनने यू. अेन. ओ में यूनानका कड़ा मुकाबला किया।

अिस विषयपर बोलते हुअे सीरियाके प्रतिनिधिने यू. अेन. राजनीतिक समितिमें कहा—"ब्रिटेन कहता है कि अुसे साअीप्रसकी जरूरत अरब समूहकी सुरक्षाके लिअे है, परन्तु मैं पूछता हूं कि यह सुरक्षा हमें किस शत्रुसे चाहिअे? हमारी सभी कठिनाअियां पश्चिमसे आअी हैं। पिछले डेढ़ सौ वर्षोंमें पश्चिमने हमें अनेक कष्ट दिअे हैं। अरब समूहकी सुरक्षा साअिप्रसमें सैनिक अड्डे रहनेसे कदापि नहीं होगी। अुसके विपरीत हमारी सुरक्षा अिसीमें है और केवल अिसीमें है कि अरब समूह जल्द-से-जल्द पश्चिमी प्रभावसे मुक्त हो।"

यू. अेन. ओ. में रूसको छोड़कर, पश्चिमके किसी भी राष्ट्रने यूनानका साथ नहीं दिया और अुसे बुरी तरह हारना पड़ा। 'तटस्थता' को कोसनेवाला अमरीका अिस मामलेमें तटस्थ रहा और 'नाटो' कि जिसकी सहायतापर यूनानको गर्व है—अुसी 'नाटो' के ग्यारह सदस्योंमेंसे नौने यूनानके विरुद्ध मत दिया। पश्चिमी कूटनीतिज्ञोंने अपने पिट्ठू न्यूजीलैंडके जरिअे अेक नया प्रस्ताव रखवाया, जिसका आशय यह था कि अधिकांशमें यह ब्रिटेनका घरेलू मामला है और फिलहाल अिसे स्थगित रखना चाहिअे। और अुस बैठकमें तुर्कीका प्रतिनिधि तो अिस बेढंगे और अशिष्ट तरीकेसे बोला कि यूनानकी सरकार को अुसकी अभद्रताके विरुद्ध तुर्की सरकारको कड़ा पत्र लिखना पड़ा।

संयुक्तराष्ट्रसंघमें यूनानकी जो हार हुअी, अुसकी कटुता यूनानके पत्रोंमें और नेताओंके अभिभाषकोंमें प्रकट हुअी। यहां तक कि यूनानके दक्षिणपंथी दलोंने भी अमरीकी सरकारके कदम को 'कृतघ्नता' बतलाया। लेकिन आश्चर्य है कि किसी भी पत्र, नेता या विरोधी दलके व्यक्तिने अिस बातपर विचार न किया कि यू. अेन.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ. में हमारी हार क्यों हुअी; अिसका अेक मात्र कारण यही है कि साम्राज्यवादी महाशक्तियां प्रत्येक राष्ट्रीय मुक्ति-आंदोलनको कुचल देना चाहती हैं। अिसका कारण यह है कि यूनानकी प्रतिगामी सरकारने स्वतंत्र विदेश नीति न अपनाकर, अुन समूहों और दलोंका साथ दिया, जो विश्व-जनताकी शान्तिको भंग करनेके अपराधी हैं। अैसे अपराध वृत्तिके पोषक मित्रोंका साथ-देकर, यूनानने अपनेही लिअे बाधाअें खड़ी कर ली हैं। अब तो, यूनानमें किसी प्रगतिशील शक्तिके हाथोंमें सत्ता आअे, तभी साअिप्रसका सवाल हल हो सकता है कि जिस प्रकार मिस्रके राष्ट्रपति लेफ्टि. जनरल नासेरने स्वेज नहरपर खोया प्रभुत्व पाया और जिस दिन गोरोंका अंतिम सैनिक भी अिस स्थानसे नीचा सिर किअे विदा हुआ, मिस्रने खुशियां मनाअी और घीके चिराग; जलाअे, कि जिस तरह जार्डनने अपने यहांसे 'गुलबपाशा' और दूसरे पदाधिकारियोंको निकाल बाहर किया।

अब जरा हम पश्चिमके अुन राष्ट्रोंके साअिप्रस सम्बन्धी विचार भी जान लें, जिनकी मित्रताका दावा यूनान करता है। पिछले पांच वर्षोंसे ग्रेटब्रिटेन साअिप्रसमें रात-दिन फौजी तैयारी करता रहा है और प्रत्येक प्रकारका सैनिक सामान वहां भेजा जाता रहा है। अिसके अतिरिक्त लारनाकामें नअी छावनी बनाअी है। जबसे मिस्र और ब्रिटेनके सम्बन्ध तीन और छः छत्तीस हुअे, तबसे ब्रिटेन की नजरोंमें साअिप्रसका महत्व और आवश्यकता बढ़ गअी। १९५२ में ब्रिटेनने साअिप्रसमें अितनी तैयारी करली थी कि आवश्यकता पडनेपर वह स्वेजके सवालपर मिस्रसे लड़ ले। परन्तु ब्रिटेनके पैर कअी समस्याओंमें अुलझे थे अिसलिअे वह अपना जौहर न दिखला सका। अीरान और मलायामें अुसके सामने कअी समस्याअें खड़ी थीं। 'डेली टेलीग्राफ अेण्ड मॉर्निंग पोस्ट' नामक अखबार अपने अगस्त १९५३ के अेक अंकमें लिखता है कि साअिप्रसकी आवश्यकता हमें स्वेज नहरमें लनेड़वाली सेनाओंको वहां हटा लेनेके लिअे पड़ सकती है। अिसी अवधिमें मध्यपूर्व के ब्रिटिश हेड क्वार्टर्स, हर क्षेत्रसे हटाकर, साअिप्रस लाअे गअे।

अिस प्रकार ब्रिटेन जब साअिप्रसमें जम गया, तब अुसने वहां अपने बने रहनेके पक्षमें कअी कारण खोज लिअे।

ब्रिटेनका कहना है कि अीसामसीहसे पूर्व चौथी शताब्दीके अतिरिक्त साअिप्रस कभी भी यूनानके अधिकारमें न रहा। (और स्वयं ब्रिटेन भी कब अपने अधिकारमें रहा;) हाअुस ऑफ कॉमन्सकी अेक बहसमें भाग लेते हुअे, अुपनिवेश सचिव श्री अेलेन लेनाक्स बॉयडने ५ मअी १९५५ को बतलाया—"साअिप्रसका महत्व हमारी विश्व-व्यापी स्ट्रैटेजीमें मध्यपूर्वके महत्वपर आधार रखता है; अिससे अिन्कार नहीं किया जा सकता। मध्यपूर्व, योरप, अेशिया और अफ्रीकाके बीच स्थल-पुल है, और वह मुस्लिम संसारका केन्द्र है। अिसके अलावा अफ्रीकामें साम्यवादका प्रवेश रोकनेकी हमारी सुरक्षाके लिअे आधार-प्रस्तर है। यह अनिवार्य है कि तुर्कीके दक्षिणमें शक्तिहीन खोखलापन बननेसे रोका जाअे।" अिसके अतिरिक्त ब्रिटेन, अीराक और लिबियाकी सहायताके लिअे अिस स्थलका अुपयोग करना चाहता है। मध्यपूर्वके अपने तेल-स्वार्थोंकी वह रक्षा चाहता है और वह यह नहीं चाहता कि साअिप्रस-अैसा छोटासा प्रान्त अुसे अपने यहांसे अुखाड़ फेंके। यों यह ब्रिटेनकी 'प्रेस्टिज' का सवाल भी बन गया है। अिन्हीं कारणोंको ब्रिटेनके प्रतिनिधिने लन्दनकी अेक कान्फरेन्समें रखा, जिसमें ब्रिटेन, तुर्की और यूनानके प्रतिनिधियोंने भाग लिया था। प्रतिनिधि हेरॉल्ड मेकमिलनने कअी सन्धियों का हवाला दिया (ब्रिटेनको अपनी स्वार्थ-पोषक सन्धियां बड़ी प्रिय हैं और वह अपनी प्रतिज्ञाओंके प्रति भी परम-पितामहकी तरह अचल रहना चाहता है।) श्री मेकमिलनने कहा कि ब्रिटेनको तुर्की-अिराकी पैक्ट, अेंग्लो-अिराकी समझौत अेंग्लो-जोरडानियन सन्धि आदिका खयाल है और वह साअिप्रसमें सिर्फ अड्डे ही नहीं चाहता, वरन् समूचे-द्वीपपर अपना अधिकार और अुपयोग चाहता है। अिस तरह ब्रिटेन अपने साम्राज्यवादी दृष्टिकोणको लेकर, अपने प्रति पूरा अीमानदार रहा।

अब जरा यह देखना है कि साअिप्रसकी जनता के मुक्ति अधिकार और आत्म-निर्णयके विषयमें ब्रिटेनका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या कहना है। अिसकी झलक हमें लन्दनकी कान्फरेन्समें तुर्कीके प्रश्नपर दिअे गअे, श्री मेकमिलनके अुत्तरसे मिलती है—"हम आत्म-निर्णयके सिद्धांतको सब जगह प्रयोग करनेमें विश्वास नहीं रखते। हमारा विचार है कि भौगोलिक, पारम्परिक, अैतिहासिक और सैनिक आदि दृष्टि-कोणोंको देखते हुअे अपवाद अवश्य होने चाहिअे।"

अिस कान्फरेन्समें यूनानकी स्थिति बड़ी विचित्र रही। अेक ओर तो वह साअिप्रससे अंग्रेजोंको निकालना चाहता था, दूसरी ओर अुन्हें बने रहनेका आमंत्रण देता था। अिससे जाहिर था कि यूनानी लोकमतमें अेकता नहीं थी। यूनानके तत्कालीन विदेशमंत्री महाशय अिस्टेफानोपौलसने कहा कि यूनान ब्रिटेनके साअिप्रसमें रहनेके अधिकारको स्वीकार करता है और अुसके वहां रहनेकी अहमियतको समझता है। यूनान अिस बातको तरजीह देता है कि साअिप्रसमें रहकर ब्रिटेन अपने मित्रोंके प्रति अपने वादे पूरे कर सकेगा और स्वयं यूनानकी सुरक्षामें भी सहयोग देगा। तथापि यूनानियोंका कहना है कि चूँकि 'नाटो' की व्यवस्थामें सर्वत्र सैनिक अड्डे मित्रराष्ट्रोंके बने हुअे हैं, अिसलिअे साअिप्रस स्थित ब्रिटेनके अड्डोंका विशेष महत्व नहीं रहता। और अिन अड्डोंके कारण साअिप्रस वासियोंके मनमें ब्रिटेनके प्रति कटुता आगअी है, वह तभी दूर हो सकती है। जब साअिप्रसकी जनताको आत्मनिर्णयका अधिकार दिया जाअे।

तुर्कीने अिस कान्फरेन्समें और यू. अेन. ओ में यूनानका भयंकर मुकाबला किया और बराबर यह कोशिश की कि ब्रिटेन साअिप्रसमें बना रहे। तुर्कीने यू. अेन. ओ. में ब्रिटेनके स्वरमें स्वर मिलाकर यह कहा कि यू. अेन. ओ. को ब्रिटेनके अिस घरेलू मामलेमें दखल देनेका अधिकार नहीं है। तुर्कीको अितनेसे ही संतोष न मिला और अुसके षडयंत्रकारियोंने यूनानको 'साम्यवादका साथी' बतलाया। कहाँ बेचारा प्रतिगामी यूनान!

तुर्कीमें अिस बातका प्रचार किया गया है कि चूँकि साअिप्रसका सैनिक महत्व है, वह किन्हीं विश्वसनीय हाथोंमें रहना चाहिअे और यूनानकी आंतरिक स्थिति अितनी सुदृढ़ नहीं है कि वह साअिप्रसकी रक्षा कर सके। अिस प्रचारित विचारसे अितना तो स्पष्ट झलकता है कि अिसमें ब्रिटेनका स्वर बोल रहा है। यदि कोअी राष्ट्र अपने किसी भागकी रक्षा करनेमें असमर्थ है, तो अिसका यह अर्थ नहीं कि वह भाग किसी समर्थ देशको दे दिया जाय। अिस प्रकार तो सभी भूभाग समर्थ शक्तियोंके हाथमें चले जाअेंगे।

तुर्की और यूनान—दोनोंही देशोंमें, साअिप्रसके विषयमें अपने-अपने पक्षको पोषण देनेवाला प्रचार कार्य हो रहा है। तुर्कीको यह विश्वास है कि आगे-पीछे यूनान साअिप्रसको महाशक्तियोंके हाथमें सौंप देगा; अिसलिअे वह यूनानसे अपने सम्बन्ध बिगाड़ना नहीं चाहता—और अुतना ही विरोध करता है, जितनेसे साँप भी मर जाअे और लाठी न टूटे। सन् १९२२ में तुर्कीके अफयानकराहिसार नामक स्थानमें तुर्की और यूनानी सेनाओंके बीच टक्कर हुअी थी; अिसी स्थान पर हाल ही में अपने वक्तव्यमें प्रधानमंत्री मेन्डेरिसने बताया कि तुर्की साअिप्रसके मामलेमें यूनानको कोअी रियायत नहीं देना चाहता और २८ अगस्त १९५४ के दिन तुर्की प्रधानमंत्रीने खुले आम यहाँतक कहा—"साअिप्रस द्वीप यूनानको कदापि नहीं दिया जाअेगा।"

वैधानिक दृष्टिसे यदि देखा जाअे तो लूसा की सन्धिकी ३० वीं धाराके अनुसार साअिप्रसपर तुर्कीका सार्वभौम अधिकार ५ नवम्बर १९१४ के दिन समाप्त हो जाता है। अिसी दिन प्रथम महायुद्धके समय तुर्कीने मित्र राष्ट्रोंके विरुद्ध युद्ध-घोषणा की थी।

सामरिक दृष्टिसे तुर्कीके लिअे साअिप्रसका बड़ा महत्व है, क्योंकि साअिप्रसमें रहकर तुर्कीकी आर्थिक और राजनैतिक अवस्थाको प्रभावित किया जा जा सकता है और तुर्कीके पूर्वमें स्थित देशोंका हित या अहित साअिप्रस कर सकता है। तुर्कीके बन्दरगाहोंमें दक्षिण के बन्दरगाहोंका विशेष महत्व है क्योंकि अुनके द्वारा पूर्वी और पश्चिमी देशोंसे सम्बन्ध बना रहता है। अुत्तरमें काला सागरके कतिपय बन्दरगाह अुतने महत्वके नहीं हैं। अिसलिअे युद्धकालमें जो शक्ति साअिप्रस,..

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रीट और रोड्समें रहती है, वह सहजही तुर्कीके बन्दरगाहोंकी नाकेबन्दी कर सकती है और यूनान तथा अन्य बाल्कन देशोंपर अपना प्रभुत्व-प्रभाव स्थापित कर सकती है। शायद अिसलिअे साअिप्रसमें ब्रिटेन बैठा है।

तुर्कीके विपरीत रूसने साअिप्रसके मामलेमें यूनानका साथ दिया। यू. अेन. ओ. की राजनीतिक समितिमें रूसके प्रतिनिधिने न्यूजीलैंडके प्रस्तावका विरोध करते हुअे, साअिप्रसवासियोंके आत्मनिर्णय अधिकारपर जोर दिया। आश्चर्यकी बात तो यह थी कि अिस बैठकमें स्वयं यूनानने अपने ही प्रस्तावके प्रतिकूल गतिविधि प्रदर्शित की। जब यू. अेन. समितिका निर्णय अेथेन्स और सलोनिकाके लोगोंने सुना तो अुन्होंने अत्यन्त अुद्वेग अेवं रोषपूर्वक अपने अुद्गार प्रगट किअे, जुलूस निकाले और सभाअें कीं। नतीजा यह हुआ कि स्थानीय पुलिससे अुनकी मुठभेड़ हुअी, जैसा कि साधारणतया अैसे अवसरों पर होता है। लोगोंने ब्रिटिश और अमरीकन सम्पत्तिको हानि पहुंचाअी। अमरीकी राजदूतने अिसके विषयमें अपने देशके विदेशविभागकी चिन्ता व्यक्त की। अुसी दिन यूनानके प्रधान मन्त्रीने सलोनिकाके पुलिस अधिकारी और अुत्तरी यूनानके गवर्नर-जनरलको पदच्युत कर दिया। अिससे साबित होता है कि यूनानमें अमरीकी प्रभाव कितना गहरा है, लेकिन अमरीकी सरकार यूनानकी सरकारपर ही दबाव डाल सकती है, यूनान और साअिप्रसकी जनताकी भावनाको वह नहीं कुचल सकती। अेंग्लो-अमरीकी ब्लाक यू. अेन. में अपने गुटके बहुमतसे साअिप्रसवासियोंके विरुद्ध निर्णय दे सकता है परन्तु साअिप्रसकी सड़कोंपर देशके दीवानोंमें जो लहू अुबल रहा है, अुसके अुफान और तूफानको वह नहीं रोक सकता। यह अुफान सिर्फ साअिप्रसमें ही नहीं है, यह विश्वके अुन सभी लोगोंमें शेष है; जो गुलामीके विरुद्ध, अपने आत्मनिर्णय और स्वातंत्र्यके लिअे, अपने वैरीको ललकार कर अुठ खड़े हुअे हैं। अुन्हें विश्वकी पंचायतसे न्याय मिलनेमें देर हो सकती है, स्वार्थी सदस्य अुनके न्यायदानकी तिथिको अस्थाअी रूपसे आगे धकेल सकते हैं, पर न्याय तो अुन्हें मिलेगा ही और निर्णय अुन्हींके पक्षमें रहेगा, यह दोनों दल भली-भांति जानते हैं। यू. अेन. ओ. में साअिप्रसके सवालको महाशक्तियोंने अपने स्वार्थको सुरक्षित रखते हुअे, जिस प्रकार नष्ट-भ्रष्ट किया है, अुसे देखते हुअे दुनिया भरमें यह साबित हो गया है कि महाशक्तियां शान्ति और सहयोगकी चाहे जितनी बातें करें, छोटे राष्ट्रोंको सुरक्षाका चाहे जितना बड़ा प्रलोभन और आश्वासन दें, छोटे-छोटे देशों और राष्ट्रोंको न्याय मिलना दुर्लभ है। क्योंकि महाशक्तियां अपने स्वार्थोंसे तटस्थ रहकर, न्यायालयमें अुपस्थित नहीं होतीं। अुन्हें विश्वशान्ति और विश्व-न्यायकी अुतनी चिंता नहीं, जितनी अपने राष्ट्रीय स्वार्थोंकी परिपूर्ति की।

अिस प्रकार अुद्वेलित भूमध्यसागरकी गोदमें तैरता हुआ साअिप्रस समस्त संसारके लिअे अेक प्रश्नचिन्ह बनकर खड़ा हुआ है।

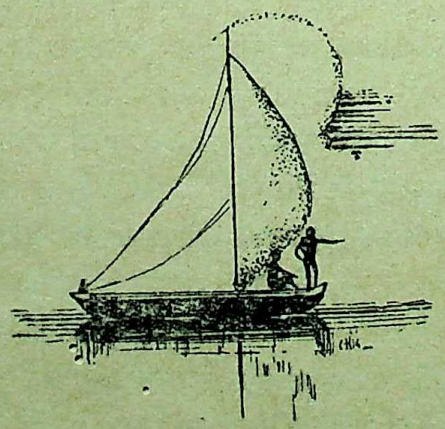

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री 'अज्ञेय' से लन्दनमें भेंट

—श्री धीरेन्द्र शील, लन्दन

गत वर्ष हिन्दीके दो बड़े लेखक श्री जैनेन्द्र तथा श्री अज्ञेयने यूरोपका दौरा किया था, स्वतंत्र भारतके गौरवशाली अुत्थानमें हमारे साहित्यकारोंका विदेशोंसे परिचित होना निस्सन्देह और नितान्त आवश्यक है। किन्तु यदि अैसी यात्राओंके परिणाम-स्वरूप श्री यशपालकी "लोहेकी दीवारके दोनों ओर" सरीखी अेकांगी अेवं पक्षपात-पूर्ण रचनाअें प्रकाशित हों तो मैं अिसे हिन्दीका दुर्भाग्य ही कहूँगा।

मअी मासमें श्री अज्ञेय लन्दन पधारे थे। अुनके यहां आनेपर हमारी लन्दन स्थित 'हिन्दीपरिषद' की ओरसे अुनके स्वागतमें अेक गोष्ठीका आयोजन किया गया था और यहींपर मुझे अुनके दर्शनोंका सर्वप्रथम सौभाग्य मिला। मैंने अुन्हें पढ़ा था बहुत पहले और अिधर-अुधरसे बहुत कुछ पढ़-सुनकर बड़ी ही विचित्र व भ्रान्त धारणाअें बना बैठा था अुनके व्यक्तित्वके प्रति। तो भी यह सत्य है कि "शेखर : अेक जीवनी" ने मुझे बहुत ही अुग्रतमरूपमें प्रभावित किया था। अुसे मैंने पढ़ा अेकबार, दोबार और कअीबार। पर अुनकी 'नदीके द्वीप' कृति दो वर्षसे अधिक मेरे पास रहनेपर भी कभी मैंने अुसे पढ़नेका यत्न नहीं किया। वरन् सत्य तो यह है, जी न चाहा, और अेक दिन अेक मित्रको जो अमरीका जा रहे थे, वह पुस्तक भेंट कर दी। तो अिसीलिअे मैंने शेखरके अपने प्रिय लेखक 'अज्ञेय' को बड़ी समीपता-से देखना चाहा, देखा और समझनेकी कोशिश की।

अुस दिन लन्दनकी 'हिन्दी-परिषद' में जब वह आअे, बन्द गलेका कोट पहने हुअे थे। स्वस्थ स्वास्थ्य, भरा हुआ चेहरा, बिना फ्रेमका चश्मा और अुस भरे चेहरे व अुन्नत ललाटके नीचे छोटी-छोटी फ्रेंचकट दाढ़ी के साथ अुनके मुखपर शान्ति, गम्भीरता और अेक विचित्र सी दृढ़ताके भाव थे। अुस दिन हमारी परिषदकी कार्य-वाही हमारे प्रधान डा. अल्विनके "आधुनिक हिन्दीकी समस्याअें" लेख पढ़नेसे प्रारम्भ हुअी थी। लेखमें पश्चिमी लेखकने कहा था कि आधुनिक हिन्दीमें अधिकसे अधिक पाश्च्यात्य साहित्यके अनुवाद किअे जाने चाहिअें। तत्पश्चात् श्री अज्ञेयजीसे लेखपर विचार व्यक्त करनेके लिअे कहा गया। अभी तक वह शान्त, संयमी-से बैठे थे। पर अब वह बड़ी शालीनता और दृढ़तासे कह रहे थे—"हमारी परिपाटी रही है कि अतिथिके दोष नहीं कहे जाते और अिसी प्रकार आतिथेयकी भी आलोचना नहीं करते, किन्तु मेरे विचारमें आज हिन्दी साहित्यको विदेशी साहित्यके अनुवादसे पूर्व अपने ही प्राचीन संस्कृत साहित्य के अुच्च अनुवादोंकी आवश्यकता है। विदेशी साहित्यसे जानकारी भी होनी चाहिअे और यह भी ठीक है कि लेखकको देशकालका अधिकाधिक ज्ञान होना चाहिअे, किन्तु मैं नहीं मानता कि अच्छे साहित्यकी बुनियाद जानकारी है अथवा 'कृति'—अुससे अुत्पन्न होनेवाली अुपज। 'कृति' जानकारीके प्रदर्शनमें नहीं है। आनन्द पाना और 'दृष्टि' देना यही साहित्यका अुद्देश्य है।"

यहां वह आनन्द, कृति और दृष्टिके प्रयोग अिस ध्वनिसे कर रहे थे कि लगता था कि ये ही अुनकी सर्जनाके मूल हैं।

अब अुनसे सभी प्रकारके प्रश्न पूछे जा रहे थे, व्यक्तिगत भी और साहित्यिक। जैसे वह पत्रकारों-की भीड़में आ फंसे हों। किन्तु प्रत्येक शद्वका अुत्तर वह देते थे बडी संयत भाषामें, नपे तुले शद्वोंमें। वह बोलते किन्तु बिना किसी आवेश या अुलझनके; शान्त और विनोदी भाषामें। मैंने देखा कि वह व्यक्तित्व शास्त्रीय महापुरुषकी परिभाषाका मूर्तरूप है। वह केवल मुस्कराते अेक स्निग्ध मुस्कान। अुनके बोलनेमें शद्वोंका व्यर्थ प्रयोग नहीं होता; मानो वह पारखीकी भांति अपने प्रत्येक शद्वका मूल्य समझते हों। मैंने अन्य लेखकों और विद्वानोंको भी देखा है किन्तु बहुत कममें अहंशून्य, गम्भीर व्यक्तित्व और संयत भाषाके दर्शन हुअे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभिन्न प्रश्नोंके अुत्तरमें अुस 'सरस्वतीके गम्भीर साधक' के समाधान थे—"मैं अपने राष्ट्रके विधानका सम्मान करता हूँ। किन्तु वस्तुतः विधानकी स्वीकृतिसे पूर्व भी हिन्दी राष्ट्रकी भाषा थी। अुसका भविष्य अुज्वल है।" और फिर अनेक प्रश्नोंकी झड़ी 'शेखर-जीवनी' सम्बन्धित चलती रही और लगा जैसे महारथी अुनके लिअे बहुत पूर्वसे ही तैयार बैठा था। वह बोले—"हां! 'शेखर' में आपको परस्पर-विरोधी बातें मिलेंगी। वास्तवमें 'शेखर' का विकास सत्य है, न कि विकासके मध्यकी स्थिति—।" अुनका कथन अितना सरल न था कि हमसे साधारण मस्तिष्क अुसकी पैठ पाते, किन्तु अुनकी बातको समझनेके लिअे हमें अूपर अुठना था, न कि वह हमारे स्तरपर आता।

तो क्या आनन्द, दृष्टि और कृतिके साहित्यकारपर समाजका दायित्व नही हैं। वह बोले—"समाज से तात्पर्य मानव समाजसे है और अुसे अवश्य ध्यानमें रखना ही चाहिअे।" मैं देखता था कि अुनकी भाषामें अेकांगी साम्यवादी धाराका मिश्रण न होकर सांस्कृतिक मानववादका आग्रह था।

अपने प्रिय साहित्यकारोंमें, अुन्होंने कहा—"मैं नाम नहीं गिना सकता। गिनाना सम्भव भी नहीं। पर प्रेमचन्द, निराला, ब्राअुनिंग, तुर्गनेव मुझे पसन्द हैं।"

और जैनेन्द्रके बारेमें आपके क्या विचार हैं? "वही जो पहले थे।"

तभी अेक प्रश्न आया 'हिन्दी और अुर्दू' के सम्बन्ध पर।

अुन्होंने अुत्तर दिया—"भारतमें अेक वर्ग है जो अुर्दूको हिन्दीकी ही अेक शैली मानता है। पर मेरा विचार है कि चाहे प्रारम्भ कुछ भी हो; अुसके लेखकोंकी प्रेरणा अलग-अलग है और जनताके मनमें वे दो भाषाअें हैं।"

अेक दूसरे प्रश्नके अुत्तरमें वह बोले:—"अनुभव और सूक्ष्म निरीक्षणके अभावमें हिन्दी साहित्यका स्तर अुंचा नहीं अुठ पाता। फिर भी आज हिन्दी साहित्यकार स्वतन्त्र चेतनासे लिख रहा है और अुसे बंगला या अन्य भाषाओंसे प्रेरणाकी आवश्यकता नहीं है। आज अैसी स्थिति है। हिन्दीका भविष्य अुज्वल है। अिस बारेमें मैं आशावादी हूं।" और फिर वादोंके विवादसे अूपर अुठते हुअे कहा—"भविष्यमें किसी नअे वादका प्रवाह हिन्दी कवियोंकी लेखनीको अपने प्रवाहमें बहाले जाअेगा, अैसा हम क्यों सोचें और आशा क्यों करें। वादों का युग बीत गया। अब बिना वादोंके भी काम चल सकता है।"

प्रश्नोंके अुत्तर वह अैसे देतेथे कि चाहे प्रश्नकर्ता अुनकी गहराअी समझा न हो किन्तु लगता था कि वह सन्तुष्ट है और 'परास्त' भी। अुनका दृढ़ व्यक्तित्व और पांडित्य मेरी स्मृतिमें अिससे पूर्व कहीं अन्यत्र न देखा था।

अुनकी अिस भेंटसे पूर्व 'शेखर' के लेखकको मैं अुच्छृंखल, विद्रोही और "नास्तिक आत्मार्थी" समझता था। अभी भी शेखरकी अेक अुक्ति मुझे अुचाट कर रही थी। कअी वर्ष पहले अपनी अपरिपक्व वयमें मैंने 'शेखर' में पढ़ा था—"वासना अमर है प्रेम नश्वर"। अपने विकासके साथ मेरा अनुमान था कि लेखकका भी विकास हो चुका होगा। अतः मैंने पूछा—"क्या यह आपका प्रयोग-वाद था अथवा आज भी आप अैसा मानते हैं।" तो वह अेक मुस्कराहटसे बोले—"वह तो औपन्यासिक चमत्कारोक्ति है। अुसे आदर्श वाक्य मत समझिअे। मैं आज भी वही मानता हूं जो तब मानता था और तब वह मानता था जो आज मानता हूं। पर, प्रेम और वासनाका मैं वह अर्थ नहीं लेता जो आप।"

और तब मैंने अुनसे पूछा कि शची रानी गुर्टूने 'साहित्य दर्शन' में अुनकी अिलियटसे जो तुलना की है, क्या वह अिसे संगत समझते हैं; तो अुनका अुत्तर था—"क्या अन्य तुलनाओंसे आप सहमत हैं।"—निसंन्देह नहीं। और ठीक अैसा ही अुत्तर मुझे कुछ मास बाद अिसी प्रश्न पर लन्दनके अिसी स्थानपर श्री जैनेन्द्रसे मिला। जैनेन्द्रजीने तो यहाँ तक कह डाला कि "लेखिकाने अेक बार ग्रन्थ लिखनेसे पूर्व अुनसे पूछा था कि क्या अमुक लेखककी अमुकसे जोड़ी बैठ जाअेगी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहां जोड़ियां जोड़ी बैठानेके लिअे ही बिठाअी गयी हों वहां औचित्य कहां तक चल सकेगा।"

जैनेन्द्रजीके अिन शब्दों से मुझे अेसा लगा कि हिन्दी में विश्व-साहित्यके विद्यार्थियों और अुसके सफल आलोचकोंका अभी भी बहुत बडा अभाव है। किन्तु अिसका यह अभिप्राय नहीं कि गुर्टूजीका प्रथम हिन्दी-प्रयास प्रशंसा-भाजन न हो!

अब हमारा आग्रह था अज्ञेयजीसे कविताअें सुननेका। अुन्होंने अेक सुनाअी और हमारी चाह और बढ़ गअी। "अच्छा अेक और सुनाअे देता हूं", और हमारे आग्रह पर तीन-चार और पांच तक सुनाकर वह शान्त हुआ चाहते थे कि हम फिर मचल अुठे। तुरन्त अुन्होंने कह दिया—"हमारी ओर से तो वह अन्तिम न थी, आप भले ही अुसे अन्तिम कहें।" तब अेक सदस्याने कहा, "सुना भी दीजिअे, न जाने भारतमें आप सुनाअें भी या नहीं।" तो अुस वज्रादपि कठोराणि" किन्तु "मृदूनि कुसुमादपि" के कोमल कविने कहा—"आजका वचन याद दिलाने पर (भारतमें) सुना दूंगा।" और फिर हमने दो कविताअें और सुनलीं। गद्य-शब्दोंकी तरह अुनकी कविताअें भी दर्शन और साधनाके आनन्दका सृजन हैं। "मैं वहां हूं" और "ओ सर्प! तू कभी नागरिक न बन सका, पर बता तूने डसना कहांसे सीखा?" कविताअें—अुनकी 'दृष्टि' की अनुपम 'कृति'—सुनने को मिलीं।

अुस दिन बाद वह ब्रिटेनके दौरे पर चले गअे। कुछमास बाद जब वह फिर लन्दन लौटे, तब अेक सन्ध्याको 'यायावर' ने मेरे यहां 'पाथेय' स्वीकार किया। यह मेरी अुनसे व्यक्तिगत भेंट थी। अिसमें मैंने अुनसे बहुतसे अैसे व्यक्तिगत प्रश्न पूछ डाले जिनका न मुझे अधिकार था; और जो कमसे कम लन्दनमें बैठकर तो कभी पूछे ही नहीं जा सकते थे। किन्तु 'शेखर' को अितना समीप पाकर अपनी अुलझनें बिना बूझे कैसे छोड़ देता। तो मैंने पूछे और स्पष्ट दो टूक अुत्तर भी पाया। किन्तु मैं पूर्ण रूपेण सन्तुष्ट न हो सका, अपनी अिस धृष्ठताके लिअे मैंने कअी बार क्षमा मांगी किन्तु अुन्होंने अेक बार भी अिस बातको न छुआ। नहीं जानता अुन्होंने मुझे क्षमा कर दिया या अुन्होंने बुरा ही न माना। किन्तु अिस व्यक्तिगत भेंटमें अितना अवश्य देख पाया कि अैसा गम्भीर, मनस्वी और साधक जीवनमें न नास्तिक हो सकता है ना ही अुच्छृंखल, न वह कम्युनिस्ट हैं और ना ही संस्कृति-द्रोही। अपितु वह हैं सरस्वती के सतत अेवं सफल साधक जिनके लिअे आचार्योंने कहा है—

"काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे.."

दीप जलमें बह चला

—अंचल

दीप जलमें बह चला
कूलमें बन्दी विरहकी ज्योतिका आश्वास ले
अेक भीगी वेदनाका स्वप्न लें अुल्लास लें
दीप जलमें बह चला

साँझ होते ही नमित मुख आगअी वह बालिका
मर्माकित, वक्ष-कंपित अधाखिली शेफालिका
दीप जलमें बह चला

नींदकी माती निभा-सी किरण आँचलमें छिपा
अेक कणमें मरण जीवनकी मिलन-ज्वाला दिया
दीप जलमें बह चला

दूर अूपर व्योममें मुसका अुठी नव तारिका
हो चली सरि गीत जिसका तृषित वह नीहारका
दीप जलमें बह चला

स्वर तरंगोंके लिअे जाते कहाँ अज्ञातमें
ज्योतिमें निज ज्योति भरने दीप्त झंझावातमें
दीप जलमें बह चला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आचार्य रामचन्द्र शुक्लकी पहली रचना

—श्री चन्द्रशेखर शुक्ल

किसी कृतिकी पहली रचना अपना अलग महत्व रखती है। वह बताती है कि अुक्त मनीषीके साहित्यिक विकासका प्रारम्भिक रूप क्या था। किसी ख्यातनामा विद्वानकी पहली रचना अुसके विकासके अितिहासकी पहली कड़ी है जिसके बिना अुसका शुद्ध रूप समझना कठिन हो जाता है। अिस दृष्टिसे स्व० आचार्य रामचंद्र शुक्ल लिखित श्री राधाकृष्ण दासका जीवन चरित अपना अलग महत्व रखता है। भारतेन्दुके फुफेरे भाअीका जीवन-वृत्त होनेके साथ ही साथ वह अुक्त आचार्यके प्रौढ़ साहित्यके प्रारम्भका अद्भुत निर्देशक भी है। अिस रचनामें आचार्यकी समास विरला प्रांजल गद्य शैलीका पूर्वरूप सुप्रतिष्ठित है। अिसमें घटनाओंपर टिप्पणीके रूपमें अपना मत प्रकट करनेकी प्रवृति अुनकी गंभीर आलोचनाका बालरूप है। शुक्ल शैलीके अन्य कतिपय गुण अपने आदिम रूपमें यहाँ विराजमान हैं। शब्दोंका तत्सम प्रयोग, अनुवाद किअे हुअे शब्दोंकी सजीवता, शब्द चित्रण, अवगुंठित हास्य विनोद, भावोंकी गंभीरता, विचारोंकी निर्भीकता और स्वतंत्रता, भाषाका प्रवाह और प्रसन्नता, अुर्दु और अंग्रेजी शब्दोंका पर्याप्त अुपयोग और विश्लेषणात्मक विचार-धारा अुनकी रचनाकी मौलिकताके अिस रचना-स्थित संकेत हैं। अिस पहली रचनामें ही शुक्लजीकी वह प्रवृत्ति परिलक्षित है जिसके अनुसार वे किसी नअी वा पुरानी बातको बिना तर्कपर कसे ग्रहण नहीं करते थे। विदेशी शब्दोंमें अंग्रेजीके कुछ शब्दोंको ज्योंका त्यों ग्रहण कर अुन्होंनें अिस पहली रचनामें ही शब्द-संग्रहके अनुवाद और यथावत् ग्रहणका अुभयात्मक मार्ग दिखाया "प्लैट-फार्म, मेमोरियल, डेपुटेशन, जज, डाक्टर, फेल्ट, ड्यूक, वायसरॉय, गजट, नोटिस, पेज" आदि ज्यों-के-त्यों ले लिअे गअे हैं। अिसके विपरीत नीचे दिअे हुअे शब्दोंके लिअ अुनके सामने दिअे अनूदित हिन्दी शब्द ग्रहण किअे गअे हैं।

Propriter–स्वामी।
Manager–प्रबन्ध-कर्ता।
Impression आभा।
Relief Fund–अनाथ कोष।
Prosecution–अभियोग।
Difficulty–आपत्ति।
Function–अनुष्ठान।
Stage अवस्था।
Summons–सम्मन।
Edition- संस्करण।

अनुवादमें मूल शब्दकी शक्तियोंको सुरक्षित रखना कठिन है। किन्तु अिसके बिना अनुवाद निर्जीव और विकृत हो जाता है। अतः किसी शब्दके लिअे विदेशी भाषामें अुसके जितने प्रयोग हैं अुनमेंसे अधिक-से-अधिकका द्योतक शब्द ही चुनना चाहिअे। अूपरके अनुवादमें अैसा ही चुनाव है।

अस्तु। २१–२२ वर्षकी अवस्थामें डॉ० श्यामसुन्दरदासकी प्रेरणासे आचार्य रामचन्द्र शुक्लने बाबू राधाकृष्णदासका जीवन चरित्र लिखा, जिसे काशीकी नागरी प्रचारिणी सभाने सन् १९१३ में प्रकाशित किया।

अिस जीवन-चरितमें बा० राधाकृष्णदासका आभ्यन्तर और बाह्य दोनों रूप पूर्ण चित्रित है। अुनके रूप-रंग और डील-डौलके साथ हृदयके अनेक पक्ष अच्छी तरह व्यक्त हैं। अुनकी देश-भक्ति, समाज-सेवा, हिन्दी-प्रेम, नागरी-प्रचारिणी-सभाकी सेवा, हरिश्चन्द्र-स्कूलकी सहायता आदिका परिचय बड़े रोचक शब्दोंमें दिया गया है। अुनकी जीवन-चर्चाके बाद आकार, रूप-रंग, वेशभूषा, स्वभाव, डील-डौल, चेहरा-मोहरा, चाल-ढाल, और रचनाओंका पूरा परिचय सन्निविष्ट है। पुस्तक बहुत बड़ी नहीं है और अितनी रोचक है कि बिना समाप्त किअे पाठकका मन नहीं मानता। रोचकताका अेक कारण अवगुंठित शुक्ल प्रणालीके शिष्ट हास्य-विनोदका अिष्ट योग भी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसीको यह बतानेकी जरूरत नहीं कि शुक्लजी कलाकार और आलोचक दोनों थे। जीवनियाँ अनेक लिखी गअी हैं। किन्तु अुनमेंसे अधिकांश घटना-भारसे नीरस हो गअी हैं। प्रस्तुत जीवनीको घटनाओंके विवरणसे नीरस होनेसे बचानेके लिअे शुक्लजीने आवश्यकतानुसार बीच-बीचमें अपनी टिप्पणी दे दी है। अिसमें अुन्हें पूरी सफलता मिली है। कोअी भी बात अितनी लम्बी नहीं कि मन अूब सके।

रचनाओंकी निष्पक्ष समालोचना और सिद्धान्त निरूपण आचार्य शुक्लकी ये दो प्रधान विशेषताअें अिस जीवन-चरितमें ही प्रादुर्भूत हैं। किसी रचनाके केवल गुणगानमें भाट न बनकर अुसके गुणदोष-निरूपण द्वारा सत्समालोचक बने रहनेवाली शुक्ल-समालोचनाकी विख्यात पद्धतिका सूत्रपात अिस जीवनीमें ही हो जाता है। संक्षेपमें कहा जा सकता है कि प्रस्तुत जीवन-चरित जीवन-लेखन-कलाका अच्छा नमूना है। और यह कहना अनुचित न होगा कि जैसे रामायण लिखकर वाल्मीकि तथा "life of Dr Johnson" लिखकर बॉसवेल अमर हुअे वैसे ही अिस जीवन चरितको लिखकर, (अन्य समस्त कृतियोंके अभावमें भी), आचार्य रामचन्द्र शुक्ल अमर हैं।

नीचे अुक्त ग्रन्थसे कुछ अुद्धरण पाठकोंके अवलोकनार्थ दिअे जाते हैं :—

१ "ज्ञान संचयके पीछे जिन कार्यों द्वारा लोग अच्छा नाम पैदा करते हैं अुनकी ओर विद्याभ्यासकी अवधिके भीतर ही ये **लपकने** लगे।"

२ "जिन बातोंको लेकर बाबू राधाकृष्णदास पहले पहल लेखकके रूपमें आये वे **अनुभूत नहीं अनुकृत** थीं। अेक १५।१६ वर्षके बालकका विधवाओंका व्यथा वर्णन करने बैठना स्वाँगसा-मालूम होता है।"

३ "अुनके ये भाव **हृदयसे अुमड़े हुअे नहीं.....** अूपरसे **ओढ़े हुअे** हैं।"

४ ".....यह बात वास्तवमें अुन लोगोंके पेटसे निकली जो किसीको खड़े-खड़े पानी पीते देखकर कहने लगते हैं कि 'यह क्रिस्तान हो गया।"

५ "अुस समय भारतेन्दु अुस धनको जिसने अुनके पूर्वजोंको **खाया था खा चुके थे**।"

६ "अुस समय तक भारत-धर्म महा-मंडलका **आडंबर नहीं खड़ा हुआ था**।"

७ "अिस भयानक स्थानमें चार चौकियाँ थीं... किन्तु ... अैसी बेहिसाब... . चौकियोंपर भी चौकीदार दो ही चार, वे भी अैसे बदरोब कि समय पड़नेपर **अेक ही घुड़कीमें सन्नाटा खींच लें**। हिन्दुस्तानी प्रबन्ध अिसीका नाम है!"

८ "जाड़ेका दिन था। टिकनेका स्थान माँगनेके लिअे ये लोग गाँवमें गअे। वहाँ अैसे-अैसे **महात्माओंसे** भेंट हुअी जिन्होंने अिनकी अेक न सुनी। अन्तमें अेक पेड़के नीचे रात भर सब लोग जागते और तापते ही रहे।"

९ "हमारे चरित्र-नायककी तो यह सब दशा हुअी पर संसारको अिससे क्या? वह तो अेक क्षणके लिअे भी **अपना चरखा** बन्द करनेवाला नहीं।"

१० "अब भारतेन्दुकी कीर्तिरक्षा किस प्रकार हुअी वह भी सुनिअे। न जाने कितनी पुस्तकें अुनके नामसे निकाली गअीं जिनका कर्तृत्व स्वीकार करनेमें **अविख्यात अुपन्यासोंके अनुवादक भी** अेक बार हिचकेंगे। मल्लिकाकी लिखी 'कुलीन कन्या' और राजा भरतपुरकी 'माधुरी' भारतेन्दुके नामसे निकाली गअी।"

११ "यद्यपि यह बाल समाज था पर पचीस वर्षके **मुछाड़िअे** भी अिसमें सम्मलित होते थे।"

आचार्यकी शक्ति-शील और सौन्दर्यमें विकसित होनेवाली मर्यादाका मूल अिस जीवन चरितमें मिल जाता है और अुनकी विश्लेषणात्मिका समालोचनाका भी। नीचे दो चार अुदाहरण देखिअे :—

१२ "ये अुन लोगोंसे सर्वथा भिन्न थे जो मर्यादा-बद्ध हिन्दू समाजको विशृंखल करके **विलायती ब्रह्मचर्यका** सुख भोगना चाहते हैं। प्रत्येक प्राचीन रीति व्यवहार देखकर अिनकी नाक भौं नहीं चढ़ती थी।.....

अिन्होंने न दिनको दिन समझा और न रातको रात।.....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसारकी गति देखिअे कि पहले तो मनुष्योंकी प्रवृत्ति परोपकारकी ओर होती ही नहीं । यदि किसीकी हुअी भी तो अुसके अूपर अैसा पहाड़ टूटने लगता है कि वह बेचारा घबड़ा जाता है और कहने लगता है कि 'कहाँसे हमने अिस मार्गपर पैर रखा ।'.....

फैजाबादको भी लखनअूका अेक पुछल्ला समझना चाहिअे । वहाँ अुर्दूका बड़ा माहात्म्य है ।...

सौभाग्यवश मुँहसे आशा बँधानेवालोंकी कमी हमारे हिन्दी समाजमें नहीं है । ...

ये सरस्वतीके अनन्य अुपासक नहीं थे । अिनमें लिखने पढ़नेकी वासना अितनी तीव्र और प्रचंड नहीं थी कि ये संसारकी और बातोंकी परवा न करते ।....

अिनका शरीर स्वस्थ दशामें बहुत कम रहा । जो कुछ अिन्होंने किया अस्वस्थ शरीर लेकर । अिससे अिनके मनकी दृढ़ता और शक्तिका आभास मिलता है । ज्वर, श्वास, आदिसे पीड़ित रहकर भी व्यवसायका अुद्योग और लिखने पढ़नेका काम बराबर किअे जाते थे । जब बहुत अशक्त हो जाते थे तभी बैठते थे। अिनका परिश्रम देखकर लोगोंको चकित होना पड़ता था । व्यवसायकी हाय-हाय भी वैसी ही, साहित्य सेवाकी धुन भी वैसी ही । अेक ओर अर्थकी कराल चिंता, दूसरी ओर लोकोपकार और साहित्य चिंता ! ये दोनों चिन्ताअें अिनके स्वभावतः क्षीण शरीरको चर गअीं ।.....

१ ली अप्रैल (१९०७) की रातको दो बजते-बजते बा० राधाकृष्णदास अिस लोकसे चल बसे । नागरी प्रचारणी सभाकी शोक सभामें सुधाकरजी (म. म. प. सुधाकर द्विवेदी) ने कहा 'बहुत-सी बातें अैसी थीं जो मुझे अुनसे पूछनी पड़ती थीं ।' अिसपर मुझे अपने अेक मित्रकी बात याद आअी जो कहीं डाक्टरीकी नियमित शिक्षा न पाकर अपनी डाक्टरी जमा रहे थे । मैंने अेक बार अुनसे अुनके बीमार पिताका स्वास्थ्य पूछा । अुन्होंने कहा 'बस, अिसीसे समझ जाअिये कि मैं और डाक्टर बुलाने जा रहा हूँ ।' मेरे मित्रको तो लोग चाहें जो कहें पर संस्कृतके पंडितोंके लिअे यह कोअी बहुत बड़ा बेढंगापन नहीं ।.....

बाबू दुर्गाप्रसाद मिश्रने १८९६ में कहा था कि 'जबसे भारतेन्दुका गोलोकवास हुआ हिन्दीके सारे लेखक स्वतंत्र और बन्धन-विहीन हो गअे और लगे अपनी अपनी डफली और अपना-अपना राग अलापने । न कोअी किसीकी आन मानता है. ....दगहे साँडसे फिरा करते हैं ।' पर संसारमें सबको अपने अूपर अितना अविश्वास नहीं होता । यदि हो तो भिन्न-भिन्न ढंगके नअे-नअे कार्य ही संसारमें न हों । यदि लोग अपने प्रत्येक विचारके लिअे व्यक्तिगत अवलंब ढूँढ़ने लगें तो फटफटाते ही मर जायँ । बात यह है कि जहाँ नअे विचारके लोग सहमतिकी आवश्यकता समझते हैं वहाँ आप पुरानी परिपाटीके अनुसार अनुमतिकी आवश्यकता समझते थे ।.....

महाराणा प्रतापसिंह--

नाटक अेक संबद्ध कलाके रूपमें नहीं होता आख्यानकी कुछ घटनाओंको रंगभूमिसे अलग करना पड़ता है । अतः अैतिहासिक नाटक में सबसे अधिक निपुणताकी बात यह है कि अितिहासकी मर्मस्पर्शी घटनाओंको (चाहे वे क्षुद्र हों) रंगभूमिके लिअे चुन ले । लेखकने यह निपुणता पूरी तरहसे दिखाअी है। चेतक घोड़ेका मरना और सक्ताका मिलना दिखानेके लिअे अेक गर्भांक ही रचा गया है । अेक गर्भांकमें जंगलमें विपत्तिके दिन काटना, लड़कीके हाथसे बिल्लीका रोटी छीन ले जाना अैसे स्वाभाविक ढंगसे दिखाया गया है कि कठोर-से-कठोर हृदय पिघल सकता है ।

प्रतापसिंहकी वीरता और धीरता तथा अकबरकी गंभीर राजनीतिक चाल बड़े कौशलसे दिखलाअी गअी है । महाराणाके शब्द प्रतिशब्दसे स्वाभाविक तेज टपकता है । यह अिनकी (बाबू राधाकृष्णदासकी) सबसे प्रौढ़ रचना है ।

यह नाटक हिन्दीमें अपने ढंगका अेक है । भारतेन्दुके पीछे अैसा नाटक और नहीं बना । हिन्दी साहित्यमें लेखकका स्मरण यह सदा बनाअे रहेगा। यह अुनकी कीर्तिकी सबसे गहरी गड़ी हुअी पताका है।

पुस्तकमें थोड़ीसी त्रुटियाँ रह गअी हैं ।

(१) आगरेके किलेमें अब तक बने मीना बाजारका दिल्लीमें दिखाया जाना ।

(२) शाहजहाँके दर्बारके पंडितराजको अकबरके समयमें दिखाना ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) भूमिकामें सलीमका मेवाड़की चढ़ाअीमें जाना अितिहास विरुद्ध बतलाकर भी नाटकमे दिखाया जाना।

(४) राजा टोकरमलका बिना अित्तला बादशाहके कमरेमें अेकाअेक पहुँच जाना।

(५) राजमहिषीका संस्कृतके नाटकोंके अनुकरणपर अकबरको 'आर्यपुत्र' कहकर सम्बोधित करना।

वाक्योमें असंबद्धता और शिथिलता भी है। जैसे—

(अ) 'और आपके पूर्वजोंको किसने बिठाया है? केवल अपने बाहुबलसे, तेजसे, दृढ़तासे।'

(ब) 'जो वे सर्वनाश करते हैं तो न केवल ..... होते हैं, वरंच परमेश्वरके यहाँ भी अुत्तरदाता होना पड़ता है।'

रहिमन विलास--

रहीमने अपने दोहोंमें मनुष्यकी सामाजिक स्थिति खूब दिखाअी है। लेखकने अुनमें कुंडलियोंको जोड़कर भावोंको और भी विस्तृत क्षेत्रमें झलका दिया है।

सूर-सागर--

पंडितोंने जैसा जीमें आया है पाठ अंडबंड करके छापकर अिसे किनारे किया है। यह संस्करण दूसरे संस्करणोंसे भी भ्रष्ट है। सूरसागर योंही कठिन ग्रंथ है, अिस संस्करणने अुसे और भी लोहेका चना बना दिया है।

पृथ्वीराज प्रयाण--

सूदन कविकृत। अिसमे अस्त्र, शस्त्र, कपड़े, गहने बरतन, फल, आदि यावत पदार्थोंके अितने नाम गिनाअे गअे हैं कि जिनका कुछ दिनों पीछे लोग नाम तक न जानेंगे।

पृथ्वीराज प्रयाण (कविता)—

[सन् १९०० में लिखित १९०१ में सरस्वतीमें प्रकाशित।]

जिसे थोड़ी भी ममता अपने देश और जातिपर होगी अिन मर्मस्पर्शी वाक्योंको पढ़कर अुसके चित्तकी दशा थोड़ी देरके लिअे और ही हो जायगी।"

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कुशल अध्यापक, कवि, समालोचक, निबन्धकार, गद्य-शैली-निर्माता और अितिहास-लेखक तथा अनुवादक थे यह सब जानते हैं। वे श्रेष्ठ जीवनी लेखक भी थे यह बहुत कम लोग जानते हैं जैसे अिसका पता बिरले मनुष्योंको ही है कि वे निपुण चित्रकार भी थे। अूपरके विवेचनसे अुनकी अिस कलाका यथेष्ठ परिचय मिल जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बरसात

—श्री 'कुमार'

अब अिस बरसातको ही लीजिअे। अिसके सौन्दर्यका वर्णन कविगण अनादिकालसे करते आअे हैं। दर्जनों क्या, सैंकड़ों छोटे बड़े कवियोंने अिस ऋतुका वर्णन ही क्यों, गुणगान भी किया है। कोअी मेघोंके रूप-रंगपर मोहित हो गअे है तो कोअी पेड़-पौधोंकी हरियाली पर। किसीको पपीहे या कोयलकी पुकार मधुर लगी तो किसीको मेंढकोंकी टर्र ! टर्र ! टें टें ! किसी कवि महोदयकी काल्पनिक नायिकाको बरसातमें अपने प्रियकी याद सताने लगी तो कोअी अन्य नायक बरसातमें अपनी प्रियतमाके विरहमें घुलने लगा। कअी कवियोंको रंगबिरंगे फूल भाअे तो कअीयोंको किसी बागमें घूमती हुअी लडकियां ही फूल सी लगीं और अुन्होंने अुन्हींका नखशिख वर्णन कर डाला। और अन्य कअी तो यूं ही फूल कर कूप्पा हो गअे और बरसाती रंगमें रंग कर कुछ भी सामने आया, अुसीको दे दबोचा और लगे अुसका वर्णन करने। बस यही समझिअे कि बरसाती मेंढकोंकी तरह टर्राने लगे।

सार यह कि सभीको बरसात या वर्षा ऋतु बहुत भाअी और सबको अिस समय चारों ओर सौन्दर्य ही सौन्दर्य दिखाअी दिया। पुराने समयके बारेमें हम अधिक नहीं जानते, अिसलिअे अुस कालके कवियोंके वर्णनके बारेमें हमें विशेष आपत्ति नहीं, परन्तु जब आजकलके कवि भी अुसी लीक को पीटते हुअे, वर्षा ऋतु व मेघोंके सौन्दर्य तथा पपीहेकी मधुर पुकार और नायिकाओंका विरह वर्णन करते हैं, तो हमें यह बात जचती नहीं। क्योंकि हमें तो वर्षामें या वर्षा ऋतुमें तनिक भी सौन्दर्य नहीं दिखाअी देता और कठिनाअियां तो बरसातमें अितनी अधिक हो जाती हैं कि प्रेमके विचार व भाव मनसे यूं भाग जाते हैं जैसे गधेके सिरसे सींग। कमसे कम कवियों द्वारा वर्णित प्रियतमाकी याद तो कभी नहीं आती।

अिससे तो हम यही अनुमान लगाते है कि कवियोंका अिस ऋतुके सौन्दर्यका वर्णन तो बस कोरी कविकी कल्पना है या केवल ढकोसला मात्र ही है। यदि आपको सन्देह है तो प्रत्यक्ष प्रमाण देखिअे। अब अिन मेघोंको ही लीजिअे। मेघ कअी रंगोंके होते हैं, नीले, पीले, काले, सफेद, गुलाबी अित्यादि और कअी आकृतियोंके। कभी यह पहाड़ की तरह दिखाअी देते है और कभी मुर्गे की तरह। कभी यह अैसी आकृति बना लेते हैं कि पता लगता है दो बिल्लियां आपसमें लड रही हैं और कभी अैसा लगता है मानों कोअी बारासिंगा खडा है। कभी यह सत्याग्रह कर अेक स्थानपर खड़े हो जाते हैं परन्तु कभी रेसके घोड़ोंकी तरह अिस-तरह सरपट भागते हैं मानों डर्बीकी रेस में दौड़ रहे हों। कअी महानुभावोंको अिनकी आकृति, रंग, दौड़ आदि बहुत अच्छे लगें तो कोअी आश्चर्यकी बात नहीं। कभी-कभी तो यह बड़े काम भी आते हैं। आखिर अिन्हीं बादलों द्वारा ही तो महाकवि कालिदासने यक्षके सन्देश अुसकी प्रियतमा तक पहुंचाअे थे। यह अलग बात है कि आजकल यदि कोअी कवि अपनी प्रियतमाको बादलों द्वारा पत्र भेजे और पोस्ट ऑफिसवालोंको पता चल जाय तो वह अुसे बेरंग कर देंगे और प्रियतमासे दुगने पैसे वसूल कर लेंगे।

परन्तु प्रश्न तो यह है कि क्या बादलोंकी सुन्दरता केवल दूरसेही अच्छी लगनेवाली नहीं ? हमारे विचारमें तो यह दूरके ढोल सुहावनेवाली बात है। क्योंकि बादल दूरसे ही अच्छे लगते हैं। परन्तु जब बरसते हैं तो सब बंटाढार हो जाता है। अिनके बरसनेका भी तो पता नहीं चलता। मन में आअे तो चार छींटे फेंक कर चल देंगे और मूडमें आअे तो बिना हिसाबके सैंकडों गेलन पानी फैंक कर भी दम नहीं लेंगे। यह श्रीमानजी (मेघ) तो वर्षा कर कहीं और जा पधारेंगे पर लोगोंपर, यही समझिअे, घड़ों पानी पड़ जाता है। परन्तु कवि महोदय तो बस चिकने घड़े ठहरे, अुन पर अिसका प्रभाव ही नहीं पड़ता और वह तो मूसलाधार वर्षाके सौन्दर्यपर ही मोहित होते हैं।

अब आप ही बताअिअे कि क्या यह अुचित है? हमारे विचारमें तो वर्षासे जितनी कठिनाअियां अुत्पन्न होती है, अुनकी ओर देखें तो कवि महोदयका मुंह नोच लेनेको जी चाहता है। भला अिस वर्षासे लाभ ही क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है? कहीं किसानोंके खेतों में हो गअी, तो हो गअी परन्तु शहरमें वर्षाका होना तो बिल्कुल बहिष्कृत होना चाहिअे। शहरमें हर कोअी सूट बूट पहने होता है। अुठते बैठते, चलते फिरते पैंटकी क्रीजका और बूटोंकी चमकका विशेष ध्यान रखा जाता है। परन्तु यदि आप कहीं जा रहे हैं और रास्तेमें वर्षा आ जाअे तो कपड़े भीगने तो निश्चित है। अब बताअिअे कि क्या पैंट या बुश शर्टकी क्रीज कायम रहेगी और क्या बूटोंकी चमक पूर्ववत रहेगी। बिना क्रीजके और बूटोंकी चमकके मनुष्यका व्यक्तित्व ८५ प्रतिशत कम हो जाता है। और आजकल युग है परसनेलिटी बनानेका। अुच्च सरकारी पदोंसे लेकर घरमें बर्तन मांजनेवाले छोकरे-छोकरियों तक को भर्ती करते समय व्यक्तित्वका ध्यान रखाजाता है। निस्सन्देह वर्षा व्यक्तित्वको बनाअे रखनेमें सबसे बड़ी बाधक है।

परन्तु यदि वर्षा अधिक हो जाअे तो न केवल व्यक्तित्व ही बिगड़ जाता है बल्कि कपड़े भी बिगड़ जाते हैं। और यदि कपड़ोंको बचानेके लिअे आप कहीं ठहर जाअेंगे तो दफ्तर जानेमें देरी हो जाअेगी। तो हो सकता है आपके कपड़े न बिगड़े परन्तु दफ्तर जानेपर साहब अवश्य बिगड़ेगा। परन्तु यदि कपड़े भिगोकर दफ्तर समयपर पहुंच गअे तो सारा दिन वहां या तो गीलें कपड़ोंमें बैठो या फिर साधुओंका बाना पहन, केवल अेक लंगोट कौपीन धारणकर काम करना पड़ेगा। और आपको अैसी परिस्थितिमें लानेवाली है यही वर्षा जिसका गुणगान करते कवि महोदय नहीं थकते।

फिर वर्षा होनेके बाद कअी दिनोंतक कीचड़ व फसलन रहती है और सड़कके किनारे कअी जगह पानीके छोटे २ द्वीप बन जाते हैं। आपका पैर फिसल जाअे या साअिकलका पहिया फिसल जाअे, तो बातकी बातमें अच्छे खासे कार्टून बन जाअेंगे। और यदि किसी दूसरे आदमीकी ही साअिकल फिसले तो भी वह दो चारको अपनी लपेटमें ले ही लेता है। और यदि आप भी न फिसलें, आपका साथी भी न फिसले परन्तु साथमेंसे कोअी मोटरगाड़ी ही गुजर जाअे तो आपकी वही हालत होगी जो होलीके दिन किसी स्वांग की होती है। और यह सब है वर्षा ऋतुके अुपहार।

घर लौटेंगे तो श्रीमतीजीका भी वर्षाके मारे नाकमें दम आ गया होगा। घरमें जाते ही आप रोजकी तरह कपड़े अुतार चायकी प्रतीक्षा करने लगेंगे, परन्तु चाय नहीं मिलेगी। क्यों? श्रीमतीजी आपको बताअेंगी कि वर्षाके कारण लकड़ी और कोयले सब गीले हो गअे हैं और अिस कारण आग नहीं जल रही है। अब आप वर्षाके गुणानुगान कीजिअे और पेट पर सन्तोष का हाथ फेरिअे।

फिर शामको बिजली जलाअिअे तो नाना प्रकार के कीड़े मकौड़े और अुनके कअी भाअी-बन्ध आपके अतिथि बनकर आजाअेंगे। यदि आपकी जीव-जन्तुओं में रुचि है तो आपको अनुसन्धानके लिअे पर्याप्त सामग्री मिल जाअेगी और आप अुनकी जातियों व अुपजातियोंके सम्बन्धमें कोअी थीसिस लिखकर पी. अेच. डी. की अुपाधी प्राप्त कर सकते हैं। परन्तु यदि आप पढ़ना चाहें तो वह नहीं हो सकेगा। और आपके अतिथि (कीड़े, मकौड़े) आपको अतिथि-सत्कारके कर्तव्य निभानेको बाधित करेंगे। परन्तु यदि आप पढ़ न सकें तो अपने अतिथियोंको दोष न दीजिअे, हां यह अवश्य ही स्मरण रखिअे कि वह केवल वर्षा ऋतुकी अुपज है और कवि महोदय गा रहे हैं, 'बरखाकी रुत आअी रे...'।

कीड़ोंका आगमन आपके घरमें ही नहीं होता बल्कि फल और सब्जीकी दूकानों पर भी होता है। तो यह कीड़े भी हर फलको चखते हैं यह देखनेके लिअे कि कहीं यह कच्चा तो नहीं। जी हां, यह कीड़े भी जानते हैं कि कच्चा फल स्वास्थ्यके लिअे हानिकारक होता है। परन्तु हमारे स्वास्थ्य विभागके अधिकारी कहते हैं कि कीड़ोंद्वारा टैस्ट किअे हुअे फल मनुष्योंको नहीं खाने चाहिअे। परन्तु अिसमें कीड़ोंका क्या अपराध? यह तो ऋतु ही अैसी है जिसमें कीड़े मकौड़े फलते-फूलते हैं। और अुन्हें भी फल टैस्ट करनेकी वैयक्तिक स्वतंत्रता है। कहते हैं कीड़ोंके संविधानमें भी वैयक्तिक स्वतंत्रताका अुल्लेख है।

परन्तु यदि आपने अैसे फल खा लिअे तो हैजा, जुकाम, मलेरिया आदि कुछ भी हो सकता है। अिसके फलस्वरूप किसीको भी पांच दस दिनका आराम मिल सकता है, वरना जीवनमें बीमारीके सिवा और आराम भी कब मिलता है। हां कअी आदमी अिन बीमारियोंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण जानसे हाथ धो बैठते हैं। परन्तु यह तो अुनकी अपनी भूल है क्योंकि डाक्टरोंका कहना है कि हाथ सन-लाअिट साबुनसे धोने चाहिअे। अिसलिअे यदि वह जानसे हाथ धोते हैं तो अुसमें किसीका क्या दोष! परन्तु यदि न बरसात आती, तो न वर्षा होती, न वर्षा होती तो न मच्छर होते, और न मच्छर होते, तो न कोअी बीमारी लगती या फैलती। अिसलिअे यदि किसीकी मृत्यु हो जाती है तो अुसका सारा अुत्तरदायित्व अिसी बरसात पर है। पर अिधर तो जान जाती है और अुधर कवि महोदय गा रहे हैं, 'अुमड़ घुमड़ कर आअे बदरवा .....।'

और फिर रातके समय यदि वर्षा आ जाअे और आप बाहर या छत पर सो रहे हों तो रात भर सोना हराम हो जाता है। यदि आपका मकान पुराना है तो हो सकता है टप, टप, टप, टप, टप टप, टपकी संगीत-ध्वनि आपके कानोंमें पडे। वैसे तो यह कोअी विशेष बात नहीं, पर हो सकता है कि आपकी छत (यानी आपके मकानकी छत) चू रही हो। फिर आपको चाहे नींद आ रही हो या मीठे सपने, परन्तु अुठना ही पड़ेगा और अिसका भी प्रबन्ध करना ही पड़ेगा वरना सब चीजोंका, अेक मुहावरे-के अनुसार, सत्यानाश ही हो जाअेगा।

परन्तु यह बात केवल आप पर ही नहीं आती। आअे दिन समाचार आते रहते हैं कि अुस नदीमें बाढ़ आ गअी, कअी पुल टूट गअे, गअी बान्ध टूट गअे, कअी गांव बह गअे, सैंकडों हजारों लोग बेघर हो गअे और खड़ी फसलें खराब हो गअीं। देशकी जितनी हानि बाढ़से होती है यदि अुसका हिसाब लगाया जाअे तो अरबों रुपये तक पहुंच जाअे। और अिस बाढ़का कारण आपने कभी सोचा? अजी बस यही बरसातकी करतूत है। जिसका घर बाढ़में बह गया हो, अुस भले आदमीके सामने कवि महोदय यदि गुनगुनाने लगें, 'हमसे मिले तुम, तुमसे मिले हम, बरसातमें,'' तो अुनका क्या हाल होगा, यह आप स्वयं ही सोच सकते हैं।

तो भी यह कवि लोग वर्षा की ऋतु में प्रेमका रोना क्यों रोंने लगते हैं, यह हमें आज तक पता नहीं चला। बस वर्षा हुअी नहीं कि कविगण मेंडकोंकी तरह टर्राने लगते हैं, 'सावन आया तुम नहीं आअे'। अब यह तो हर कोअी जानता है कि वर्षामें बाहर निकलना जान जोखिममें डालनेवाली बात है। कपड़े भीगनेका भय रहता है, जुकाम भी लग सकता है, और फिर वर्षामें कोअी क्यों मारा मारा फिरे? परन्तु वह कवि ही क्या जो तर्क संगत बात करे। बस पिया या पियारीको चिल्लाकर बुलाते रहेंगे। अपने प्रेम-पात्रकी सुविधाका तो तनिक भी विचार नहीं करते। क्या ही अच्छा होता यदि वह घर बैठे प्रियतम या प्रियतमाको बुलानेके लिअे कविता लिखनेकी बजाअे, कोअी रेनकोट या छाता ही भेज देते ताकि 'अुनको' आनेमें ही कुछ सुविधा तो होती। वरना वर्षामें तो 'वह' आनेसे रहे।

परन्तु परमात्माने भी क्या भारी भूल की। गांवोंमें तो भला बादलोंको भेज ही दिया, परन्तु शहरोंमें अुनकी क्या आवश्यकता थी? अिसलिअे हमारे विचारमें जब कि हर चीजपर नियंत्रण किया जा रहा है, बादलों पर भी नियन्त्रण होना चाहिअे। अैसा कानून बनना चाहिअे कि बादल केवल खेतों पर ही बरस सकें। यदि वह किसी शहर या बस्ती पर बरसना चाहें तो अुन्हें अुस शहरके डिप्टी कमिश्नरको कमसे कम २४ घंटे पूर्व सूचित करना चाहिअे। बादलोंको यह बता दिया जाना चाहिअे कि यदि वह अिस कानूनका अुल्लंघन करेंगे और बिना आज्ञा और पूर्व सूचनाके किसी शहरपर बरसेंगे तो धारा १४४के आधीन अुनके विरुद्ध कार्यवाही की जाअेगी।

और जबतक बादलों पर नियन्त्रण लगानेका यह कानून नहीं बनता, तब तक किसी भी कविको वर्षा ऋतु या अुससे सम्बन्धित किसी भी विषयके सम्बन्धमें कविता या गीत बनाना दण्डनीय घोषित किया जाना चाहिअे। यह तो हम अूपर बता ही चुके हैं कि बरसातसे लाभ तो कोअी होता नहीं, परन्तु कठिनाअियाँ कअी पैदा हो जाती हैं। और अिसी कारण पुराने कवियों-द्वारा रची हुअी वर्षा ऋतु सम्बन्धी कविताओंका पढ़ना पढाना, सुनना सुनाना अवैधानिक घोषित किया जाना चाहिअे। आशा है देशके कानून-निर्माता अिस दिशामें तुरन्त अुचित कदम अुठाअेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पापुअी द्वीपकी ध्वंस-कथा

—श्री नवेन्दु घोष

आजकल मैं पापुअी द्वीपमें ही रहता हूं। पूरी दुनियाका चक्कर लगाकर आया हूं, देखा—कहीं पर भी न शान्ति है न प्रेम। भटकते हुअे थककर, आखिरमें अिस पापुअी-द्वीपमें आकर मैंने अपना डेरा डाला है। यहां पर प्रेम है अिसलिअे शान्ति भी है।

पापुअी द्वीप अितना छोटा है कि भूगोलके नक्शेपर अेक नुक्तेके समान भी वह चिन्हित नहीं है। सभ्य लोगोंके यात्रापथमें भी नहीं है वह। अुसकी परिधि सिर्फ बारह वर्गमील है और जापानके पूरबकी ओर प्रशान्त महासागरके गहनतम स्थानपर अवस्थित है। अुसके बाद सौ मीलके अन्दर अन्तहीन समुद्रकी जलराशिके अलावा और कुछ नहीं।

सभ्य जगतसे यह पापुअी द्वीप बहुत दूरी पर है—सभ्य लोगोंकी रेल, स्टीमर, हवाअी जहाज आदिकी जटिलता और कुटिलतासे बहुत दूर। अिसलिअे यहां पर शान्ति है, प्रेम है।

अुद्वेलित समुद्रके वक्षपर छोटासा स्थल कमल-सा यह पापुअी द्वीप। द्वीपके अेक ओर मरा हुआ ज्वालामुखी पर्वत फिजिमा दो हजार फुट अूंचा अुठकर मेघलोकके नीले आकाशको छू रहा है। पहाड़की तलहटीमें घना जंगल। अुसमें अिधर अुधर कअी झरने। हाअितारू, मंगचुआ और किस्म-किस्मकी जानी अनजानी जंगली चिड़ियोंकी काकलीसे वन मुखरित रहता है। फिजिमा पहाड़के ढालसे लेकर समूचे द्वीपको घेरकर नारियल-कुंज की घनी स्निग्ध छाया। अिधर अुधर कपास, बांस, केला और पपीताके बगीचे और कहीं कहीं रंगीन सितारोंसे अनगिनत पुहुटकुआ फूल खिले रहते और प्रगाढ़ अनुरागसे मौटुस्की चिड़ियाँ अुनका मधु पीती रहतीं। और द्वीपके ठीक बीचोबीच वर्षा और झरनेके पानीसे बना हाअिसानू झीलका काकचक्षुसा पानी। अुसीके चारों ओर नारियलके पत्तेसे छाअी हुअी लकड़ी और बांस की झोपड़ियां जमीनसे अुंचाअी पर, मचान पर बनी हुअी क्योंकि पापुअी द्वीपमें रेंगनेवाले जीवोंकी अधिकता है। —अिसके अलावा और कोअी डर नहीं है। जंगली जानवर यहां दिखाअी नहीं पड़ते। पहाड़के जंगलमें सिर्फ गीदड़ हैं और अेक जातिके लम्बे सींगवाले हिरण हैं।

हाअिसानू झीलके चारों ओर पापुअी द्वीपके नरनारी रहते हैं। अुनके शरीरका रंग बादामी है—कुछ कुछ देखनेमें जापानिओंकी तरह।

कहते हैं कि सूर्य देवके हजार पुत्रोंमेंसे अेक सुपुत्र हानाकाने आकर पापुअी द्वीपमें अपना राज्य स्थापित किया था—अुसीसे अुसके वंशधर अपनोंको हानाकाअी कहकर परिचय देते हैं। सामान्य जलवायुके कारण पापुअी द्वीपमें मर्द और औरत करघेमें बुने हुअे रंगीन कपड़ेके टुकड़ेको घुटनों तक लुंगी की तरह कसकर पहनते हैं—शरीरका बाकी हिस्सा खुला ही रहता है। लेकिन अिसके लिअे सभ्य-जगतके लोगोंकी तरह हानाकाअियोंमें कोअी शर्म या संकोच नहीं है। ग्रैनाअिटकी तरह खुदे हुअे पुरुषोंका पेशल शरीर और नारियोंके दृढ़ और सुडौल स्तन वहांकी आवरणशून्य प्रकृतिके साथ सुन्दर रूपसे घुलमिल गअे हैं। शान्त, किन्तु अिन साहसी हानाकाअियोंकी संख्या कुछ ज्यादा नहीं। ज्यादासे ज्यादा पांचसौ होंगे। अिस संख्याके बारेमें अुनको बड़ा क्षोभ है। दिनोदिन अुनकी संख्या घटती जा रही है। अुन्हें मालूम नहीं कि क्यों अैसा हो रहा है। अिसीलिअे बीच-बीचमें वे लोग फिजिमा पहाड़की तलहटीमें भगवान आकमारूके मन्दिरमें बूढ़े पुरोहित ओमांगाके नेतृत्वमें जाकर प्रार्थना करते हैं कि दुनियाके दूसरे आदमियोंके पापोंके लिअे हानाकाअियोंको समाप्त न किया जाअे।

फिजिमा पहाड़की ओरसे पापुअी द्वीप अेक अुतार में समुद्रमें जा मिला है। जितना भी अुपकूल है अुसके मुलायम बालू पर काले पत्थरोंके टुकड़े बिछे हुअे हैं।

अुपकूलसे आधेमालकी दूरीपर मीलभर लम्बा प्रवालका बान्ध है। अुस जगह पर समुद्रका जल अितना स्वच्छ है कि पानीकी गहराअीमें तैरते हुअे अिन्द्रधनुषकी तरह विचित्र रंगबिरंगे मछलियोंके झुंड साफ दिखाअी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ते हैं। पूनमकी रातमें प्रशान्त महासागरकी जलपुरीसे जब स्वर्णिम चांद फिजिमा पहाड़की चोटीके अपर आ जाता है, जब वायुकी हाहाकार करती हुअी ध्वनिके साथ नारियल-कुंजकी मर्मर ध्वनि अुठती है और पुहुटुकुआकी तीव्र मदिर गन्धसे बोझिल चांदनी द्वारा प्लावित समुद्र, अुपकूल और हाअिसानू झीलकी सुन्दरता अपूर्व मालूम पड़ने लगती है, तब द्वीपके प्रेमियोंके जोड़े—किशोर और किशोरियां नारियलके तनेकी बनी किश्तीमें बैठकर प्रवालके बान्धकी ओर रवाना हो जाते। तीन चार फुट अूँचे बान्धके अुपर वे अपने शरीरको लिटाकर प्रेमकी गुंजनध्वनि करते—अुस गुंजनसे ज्वार आता, कभी-कभी अेकाध अुद्धत तरंग आकर बान्ध पर अुछल पड़ती और अुनके बेबस विव्हल क्षणोंको झकझोरते हुअे मजाक करती।

पापुअी द्वीपमें प्रेम है, शान्ति है और अिसिलिअे मैं अिस जगह पर हूं। अुपकूलके दक्षिण जहांपर नारियल-कुंज घने हो गअे हैं; जहांसे चलते समय हिमके कणसे अुज्वल रंगके सांजिनी फूलोंको रौंदकर जाना पड़ता है वहां पर पत्थरकी बनी अेक अिमारतका खंडहर है। कब वह अिमारत बनी थी, अुसमें कौन लोग थे—यह किसीको मालूम नहीं। हानाकाअी लोग कहते हैं कि सूर्यके पुत्र हानाकाका महल था वह। लेकिन मेरा खयाल यह है कि वह मंगोल जलदस्युओंका अेक अड्डा था। हजार सालसे भी ज्यादा अुसकी अुम्र होगी—टूट टूट कर पत्थरका स्तूपसा बन गया है—महासागरका पानी अुस जगह पर संकरी खाड़ीके रूपमें आकर अुस प्रस्तर स्तूपके रक्ताक्त अितिहासको अनवरत लेहन करता रहता है। सेहलाके मोटे तहसे फिसलते, बेल पौधोंसे भरे जलदस्युओंके अड्डेमें ही मैं आजकल रहता हूँ। दिनभर द्वीपमें घूमता रहता हूँ, फिजिमा पहाड़की चोटीपर बैठकर हवाखोरी करता, झीलके किनारे कभी २ विश्राम कर लेता, चांदनी रातोंमें प्रवाल बान्ध पर जाकर बैठता और नींद आनेपर अपने पुराने अड्डेमें जाकर सो जाता।

लेकिन, मैं आदमी नहीं हूं—आदमियोंकी तरह रक्तमांसका जीवन मेरा नहीं है। वायुके शरीर पर अदृश्य रेखाओंसे मेरा शरीर सीमित है, रोशनी और हवा मेरे शरीरमेंसे होकर अनायास आया जाया करती है, मैं मृत हूँ, मैं प्रेत हूं, मेरा कोअी नाम नहीं है।

मैं प्रेत हूं, पर कोअी दुष्ट आत्मा नहीं हूं। मैं सदात्मा हूं। मै अशरीरी प्रकृतिको शरीर देनेमें सहायता करता हूं, मेरी तरह और सभी मिलकर फूलोंकी सुगन्ध हवामें मिला देते, तुषारको जमाते और पिघलाते सूरजकी द्युति चारों ओर फैला देते, बीजको कोपलोंमें परिणत होनेमें सहायता करते और फूलको फलमें। हम लोगोंके पास बहुतसे काम हैं।

लेकिन फिर भी मेरा जीवन बडा अकेला है। प्रेतलोकमें कोअी किसीका अंतरंग नहीं है—मित्रता है पर आकर्षण नहीं। अिसलिअे मुझे अपनेको बड़ा अकेला और विषादमय महसूस होता है। अपने रोजमर्राके काम खत्म करके जब मैं महासागरके अुपकूल पर बैठा रहता हूं तब कुहासेकी तरह मेरा अतीत मनुष्य-जीवन धुंधला हो अुठता है। मैं बहुत धनी था और मेरा अेक लड़कीसे बहुत प्यार था। कितनी सुन्दर थी वह! घनी बरोनियोंवाली आंखें अुसकी! कितने मदिर और मधुर थे अुसके दोनों लाल अधर। लेकिन वही लड़की अेक-दिन दुलहन बनकर आअी—फिर अेकदिन मुझे जहर पिलाकर .....। अब भी अिस निराकार देहमें अुस वेदनाकी स्मृति मरोड़ अुठती। वह करीब पचास साल पहलेकी बात है। अुसके बाद कितने ही दिन बीत गअे हैं। प्रेतलोकके कितने अन्धकार और आलोकित स्तरोंको पारकर फिर धरती पर घूमनेका अदृष्य आदेश मिला—जन्म लेनेका आदेश।

लेकिन मैं फिरसे जन्म लेना नहीं चाहता था। मैं जानता हूँ कि जितने भी दृश्य या अदृश्य पंचभूत हैं, वे ग्रह अुपग्रह और नक्षत्रोंका रूप लेनेकी साधना कर रहे हैं और मैं यह भी जानता हूं कि आत्मा मनुष्य होकर जन्म लेना चाहती है। क्योंकि सभी देवत्वका स्थूल रूप मनुष्यत्व ही है। फिर भी मुझे डर लगता है। क्योंकि मैं अपने अतीतको जानता हूं—मैं जानता हूं कि अन्धकारके राजा शैतान और अुसके अनुचर भी स्थूल-रूप पानेके लिअे मनुष्यके शरीरमें आश्रय लेते। नहीं तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे अतीत जीवनकी स्त्री दूसरे पुरुषसे प्रेमकर मुझे जहर क्यों पिलाती ....। अिसके अलावा प्रेतलोकसे भी मैं आदमी और दुनियाको देखता आ रहा हूं। दिन-ब दिन मनुष्यकी लालच और हिंसा बढ़ती जा रही है—स्वार्थके लिअे छीनाझपटी बढ़ती ही जा रही है। फिरसे आदमी होकर जन्म लूँगा—प्यार करनेपर भी प्यार नहीं पाअूंगा, स्वार्थी नीचोंके चक्रान्तसे फिर मृत्युकी गहराअीमें डूब जाअूंगा—अिसी डरसे चौकन्ना बैठा हूं मैं। अेक शान्त और प्रेमपूर्ण आश्रय पानेके लिअे हम देश देशमें चक्कर लगा चुके हैं। लेकिन अड़तालीस साल तक मुझे कोअी आश्रय नहीं मिला। हर कहीं शैतानोंकी डरावनी धाक देखी है। हर कहीं देखा है कि आदमी जीवित रहनेकी अिच्छा रखते हुअे भी जिन्दा नहीं रह पाता—प्यार करनेकी ख्वाहिश लेकर भी प्यार नहीं कर पाता। जहां कहीं भी गया हूं हर कहीं युद्ध, दंगा, फसाद, मारपीट, हिंसा, लोभ, धोखा और स्वार्थके तप्त विषकी भापसे मेरा दम घुट गया है और मैं अुन जगहोंसे भागता आया। अन्तमें अिस पापुओ द्वीपपर आकर मुझे शान्ति मिली है—मुझे प्रेम मिला है।

यहीं पर मेरे दिन कटते—रातें बीततीं। कभी २ रातके वक्त दो चार मित्र हवामें तैरते हुअे मेरे पास आते हैं। अुनके साथ बैठकर गप लड़ाता हूं और लम्बी सांस भरता हूं। दुनियाभरमें अब भी शुभ-अशुभकी लड़ाअी चल रही है। अशुभ और पाप अब भी शैतानको प्रधान बनाअे हुअे हैं। देश-विदेशकी बातोंकी आलोचना हम करते हैं, सिर हिलाकर फैसला लेते कि आदमी जब तक सुधरकर अच्छे न हो जायँ तब तक आदमीके रूपमें जन्म नहीं लेंगा।

बीच बीचमें हवा खूब गर्म हो अुठती। आंधीकी तरह हा हा शब्दमें वह हवा चलती—तब दम घुटने लगता। स्थूल देहमें किसीको अिस हवाका पता न लगेगा। असलमें दुनियाभरका सब पाप हवा बन कर दुनियाभरमें विचरता है, फिर आसमानोंमें चक्कर लगाता बादलको जलशून्य करता, सूर्यलोकको तप्त करता, ग्रह-अुपग्रहोंमें जाकर अशुभ छाया डालता और व्याधियोंको जन्म देता है। फिर भी वह खत्म नहीं होता—खत्म होगा भी नहीं जबतक शैतानका राज्य समाप्त न हो जाअे।

फिर कभी-कभी दिनमें या रातमें चेतनाको सुन्न कर देनेवाला अेक ठण्डा स्रोत हवाके अन्दर बहता। भँवरसा चक्कर खाता हुआ वह आता। अुसमें फंस-जानेपर कुशल नहीं, वह स्रोत विदेही आत्माओंको बेहोश कर देता, अुसके बाद अुन्हें आलोकमें मिलाकर, भापमें बदलकर बादलोंमें बिखेर देता। अुसके बाद वर्षाके साथ वे धरतीपर जा गिरते, अनाजके कणोंमें और फलोंमें वे सुप्त रहते और अन्तमें खाद्य बनकर माँके गर्भमें जाकर नया शरीर धारण करने लगते। जब यह ठण्डा स्रोत बहता तब मैं डरसे काँपता रहता। अुस प्राचीन प्रस्तर स्तूपके अेक शिलाखंडसे मैं चिपका पड़ा रहता। नहीं, नहीं, मैं अभी जन्म नहीं लूंगा। मैं जानता हूं कि जन्म मुझे लेनाही पड़ेगा—प्रकृतिके अमोघ विधानसे मैं बच नहीं सकता हूं—फिर भी मैं भागता फिरता हूं, काम्य मनुष्य जीवनके लोभको मनुष्यकी हिंसाके डरसे ही दूर हटा देता है। अभी नहीं, दुनियामें प्रेम और शान्ति प्रतिष्ठित है। अुसके बाद मैं जन्म लूंगा। मालूम नहीं कितने दिन तक मैं अपनी अिच्छाके अनुसार जन्मसे बचता रहूँगा—पर जितने दिन तक वह सम्भव है अुतने दिनमें अिस पापुओ-द्वीपमें ही रहूँगा क्योंकि यहांके नरनारियोंके जीवनमें प्रेम है, शान्ति है।

हानाकाअियोंके मां-बाप अपनी सन्तानोंको प्यार करते हैं; दोस्त दोस्तमें, भाअी-भाअीमें, भाअी-बहनमें यहां पर गहरा प्रेम है। यहाँके प्रेमियोंके प्यारमें मानो सूर्योदयकी पवित्र अरुणिमा है। और सबसे महान् है यहाँके अेक किशोर और किशोरीका प्रेम, जिनका प्रेम मुझे अुद्बोधित करता और जिनके पीछे-पीछे मैं अदृश्य प्रहरी-सा लगातार घूमता रहता। अुनका नाम नागासी और लुसान था।

बाअीस सालका जवान नागासी अठारह साल की तरुणी लुसानसे प्यार करता था। अुनके प्रेमसे पापुओ द्वीपकी हवा निर्मल होती, पु हुटुकुआ फूलकी सुरभि अुग्र हो अुठती और हाँअितारू पक्षीके गीत मीठे हो जाते। नागासी पुरुषत्वका साकार रूप था तो लुसान यौवन-पूर्ण सौन्दर्यकी सफार प्रतिमा थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे बचपनसे ही अेक-दूसरेको अच्छी तरहसे जानते थे। पापुअी द्वीपमें कोअी किसीका अपरिचित नहीं है। नागासी जानता है कि लुसान कुशल नर्त्तकी और गायिका है। लुसान जानती है कि नागासी भाला फेंकनेमें बेजोड़ है और मछली और तिमिंगल (शॉर्क) पकड़नेमें भी कुशल है। हाअिसानू झीलके दक्षिण जो तीन चार मील तक खेत है वहां पर धानके बीज बोने, चारा लगाने और धान काटनेके समय कितनी ही बार नागासी और लुसानकी मुलाकातें हुअी हैं। अुनकी मुलाकात अुनके देवता आकामारूके मन्दिरमें हुअी है। हरबारके दर्शनमें अुनका अनुराग बढ़ता ही गया है। अुसके बाद अेक-दिन .....

अुसदिन दोपहरको मैं सो गया था। नींद टूटते ही देखा कि सांझ हो गअी है। समुद्र और आसमानकी नीलिमामें लाल सूर्यका खून पुता हुआ है। फिजिमा पहाड़की चोटी पर अन्धेरा घिर आया था और प्रशान्त महासागरके वक्षसे अशान्त पवनके साथ हल्के कुहरे तैरते आ रहे हैं। अच्छी तरहसे अुपकूलकी ओर देखते ही पाया कि सागरके जल में लुसान स्नान कर रही है। अेकदम अकेली।

अैसे ही समय नागासी वहां पर हाजिर हो गया। लुसानको देखते ही वह ठिठक कर खड़ा हो गया। लुसानने भी अुसे देखा—देखकर समुद्रके जलसे अुपर अुठ आअी। अुसके लम्बे केश पानीसे भींगकर भारी होकर अुसकी पीठ पर फैल गअे थे, केशके सिरोंसे पानी टप-टप गिर रहा था। पानीसे धुली हुअी वह अुज्वल बादामी रंग-की बाला अुस रहस्यमअी सन्ध्याके आलोकमें सुन्दर स्वप्नसी मालूम पड़ने लगी। अस्त हुअे रविके रक्तकुंकुममें लुसानकी अनावृत अर्धनग्न देहकान्तिने मानों बाअिस सालके युवक नागासीको अिन्द्रियोंसे परे अेक अनुभूति की खोज दी।

लुसान चली जा रही थी, नागासी आगे बढ़ कर अुसके सामने खडा हो गया।

लुसान ने कहा, "घर जाती हूं"।

नागासीने कोअी जवाब नहीं दिया, अपने अुज्वल दो नयनोंसे लसानका जलसिक्त सौन्दर्य देखने लगा। लुसान वाकशून्य नागासीकी ओर देखती रही फिर धीरे धीरे मानों अुसके मनके अुथल-पुथलका अुसे पता चला। पता चलते ही वह शर्मा गअी, दोनों हाथोंसे सीनेको ढककर मुंह नीचा कर आगे पैर बढ़ाया।

साथ-ही-साथ लुसानके कन्धे पर नागासीने हाथ रखा, धीमी आवाजमें कहा, "रुक जा लुसान—"सिर नीचा किअे हुअे ही लुसानने कहा, "क्यों"?

"मेरी ओर देख"—

"नहीं—"

"मैं अेक जवाब चाहता हूं"

"बोल"

"तू मेरी बनेगी?"

अेकबार लुसानकी देहलता कांप अुठी। नागासी अुस कम्पनको अनुभव कर पाया। धीरे धीरे लुसानने मुँह अुठाया, और गर्दन टेढ़ीकर शर्मसे लाल आंखोंसे तिरछी निगाह डालते हुअे मुस्कराअी।

"बोलो लुसान—"

लुसान अब गंभीर मुद्रामें हो गअी और बोली, "नहीं"

"नहीं!" नागासीके पौरुष पर मानों यह चोट थी, "नहीं?"

"नहीं—"

नागासीने दोनों हाथ हटा लिअे। लुसान आगे बढ़ गअी। लेकिन कुछ कदम आगे बढ़कर वह रुक गअी, फिर पीछेकी ओर नागासीको देखते हुअे खिल-खिला कर हंसने लगी।

छलनामअी नारी! नागासीका अपमानित पौरुष क्षणभरमें आत्म-प्रत्ययसे भर गया। वह लुसानकी ओर तेज कदमोंसे बढ़ा।

लुसान हंसती हुअी दौडने लगी। लेकिन नागासीसे कैसे जीत सकती—कुछ गज आगे बढ़ते ही पकड़में आ गअी। हिमकण-से-अुज्वल रंगके सांजिनी फूलोंके बीचमें खड़े होकर नागासीने दोनो हाथोंसे लुसानका चेहरा अुठाकर कहा, "अब बोल—"

"नहीं—" लुसान हँसी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नहीं!"

"हां" कहकर अचानक अेक वन्य आवेशमें लुसान नागासीके सीनेपर टूट पड़ी।

अुस दिन पापुआ द्वीपके अुपर तारोंकी पंक्तियोंने मुस्कराया, महासागरकी गर्जनध्वनि और समुद्र पवनसे ताड़ित नारियल-कुंजकी मर्मरध्वनि मिलकर अेक महान आर्केस्ट्राकी तरह ध्वनित हुअीं और अुसके बाद आधी रातके समय अुनींदी आखोंमें जब चांदकी बंकिम कला महासागरसे निकल आअी तब अुसके आलोकके रथपर सवार होकर परियोंका अेक दल आकर पुष्पित कुआ फूलके बगीचोंमें नाचने लगा।

अुसके अगले दिन पापुआ द्वीपको मालूम हुआ कि और अेक नअे प्रेमने जन्म ले लिया है।

हानाकाआ लोग धानकी खेती करते और मछली पकड़ते हैं। यही अुनकी खूराकका सामान है। अिसके अलावा टापूपर केला और पपीता मिलते हैं। मुर्गी और तिसांग फल मिलते हैं। हफ्तेमें अेक रोज हाअिसानूके पूरबकी ओर अुनका बाजार लगता था—वहाँ पर लेन-देनकी रस्ममें वे लोग अपनी जरूरतकी चीजों की खरीद-फरोख्त करते थे। सालमें अेक बार, जाड़ेके दिनोंमें, सौ मील दूरके ताअिहान टापूके लोग नावमें आकर गर्म कपड़े दे जाते और अुसके बदलेमें मूंगा और मोती ले जाते। अुन्हीं लोगोंके पाससे अिन्हें बाहरी दुनियाके बारेमें धुँधला आभास मिलता। हानाकाअियोंकी जरूरतें भी बहुत कम हैं। अिसलिअे अुनके जीवनमें न तो कोअी झगड़ा है न लालच। रोजाना जीवन संग्रामके बाद अुनके लिअे काफीसे ज्यादा अवकाश रहता है—अुस समय वे हाअिसानूके किनारे नाचते गाते हैं या प्रवालके बाँधोंपर जाकर स्वप्न देखते हैं।

अुस रोज महासागर शान्त था। टापूके नौजवान नाव और डोंगियोंपर सवार होकर हड्डी और पत्थरके बने भाले लेकर मछली पकड़ने चले गअे। सारा दिन गुजर गया। ढलते दोपहरके समय पूरबके आसमान में काले बादलोंका पुंज देखकर टापूके लोग अुत्कंठित होकर अुपकूलपर आ खड़े हुअे। लुसान भी वहीं पर आ खड़ी हुअी क्योंकि नागासी भी तो मछली पकड़ने गया था।

लेकिन नागासी है कहाँ? दिगन्त तक तो कुछ भी दिखाअी नहीं पड़ रहा था। अुधर पूरबके आसमानमें वह काला बादल धीरे-धीरे बड़ा आकार धारण करने लगा। लुसानकी आंखें गुस्सा और अफसोससे भर आअीं।

अन्तमें सभी नौजवान समय पर वापस आ गअे। लुसानको देखकर नागासीका चेहरा खिल अुठा। छलांग मारकर नावसे अुतरते हुअे अुस रोजका बड़ा शिकार जो कि अेक तिमिंगलका बच्चा था अुसे दिखानेके लिअे लुसानकी ओर नजर अुठाते ही देखा कि वह तेज कदमोंसे चली जा रही है।

'लुसान' नागासीने आवाज लगाअी।

लेकिन लुसानने कान नहीं दिया। वह नाराज हो गअी थी।

सचमुच, अगर नागासी आंधीमें फंस जाता। अगर फंस जाता तो नागासी लौट नहीं सकता था अिसमें कोअी शक नहीं है। क्योंकि कुछ देरके बाद ही महासागरको हिंडोलते हुअे तूफान आया, फिजिमा पहाड़की चोटी अंधकारपूर्ण मेघलोकमें अदृश्य हो गअी। नारियल-कुंजोंमें हाहाकार छा गया और अुस प्राचीन ध्वंस स्तूप पर महासागरकी बड़ी-बड़ी तरंगें आकर भीषण-नादके साथ पछाड़ खाने लगीं। और अुस आँधीमें वही अेक जहरीला भाप—सारी दुनियाके लोगोंका पाप!! मेरा दम घुटने लगा—साँस लेनेकी गरजसे मैं नागासीके पास चला गया।

नागासी अुस समय आँधीसे लड़ते हुअे लुसानके मकानमें जा पहुँचा था।

लुसानके मां-बापने दरवाजा खोलकर अुसे भीतर बिठाया—लुसानको भातसे बनी शराब लानेको कहा। लुसान शराब लाकर अेक ओर चुपचाप खड़ी हो गअी और तिरछी निगाहोंसे नागासीकी ओर बीच बीचमें देखती रही।

शराब पीकर नागासीकी आँखें लाल हो गअीं। लुसानके बुढ़े बाप कांगचीनकी आवाज नशेसे भरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गअी। बूढ़ा अूटपटांग गप लड़ाने लगा—करीब बीस साल पहले प्रवालके बांधके पास अेक अजीब नाव आअी थी। वह नाव मकान अैसी बड़ी थी और अुसका नाम था जहाज। बहुत दूर जापान नामका अेक देश है—अुस देशके लोग अुस जहाजमें थे। वे भले आदमी नहीं थे, लोहेसे बने आग अुगलने वाले बन्दूक नामके हथियार-से चार पांच आदमियोंको मारकर, पूरा टापू घूमकर वे तीन चार दिनके बाद चले गअे थे। लेकिन अुन चार दिनोंमें लड़कियोंको बाहर निकलना मुश्किल था। जहाज चले जानेके बाद टापूमें आधेसे ज्यादा मुर्गियाँ और कअी लड़कियां गायब हो गअीं।

"नहीं..." नशेमें नागासी गरज अुठा, चिल्ला कर बोला, "नहीं—अब कभी भी कोअी जहाज यहां नहीं आयगा—दूरकी दुनिया पापसे भरी है, वहांके लोगोंके कदम रखते ही हम अुन्हें मार डालेंगे—"

दरवाजेसे टेक लगाकर मैं हंसा। बेचारा नागासी दुनियाके बारेमें कितना कम जानता है!

बाहर धीरे धीरे आँधी रुक गअी। हवाके थपेड़से बादल पश्चिमकी ओर अुड़ गअे, आसमानके नीले शामियानेसे लटकते हुअे त्रयोदशीके चांदको मुक्ति मिली और अुसकी प्रसन्न हँसीसे महासागर और पापुअी टापूमें अुजाला फैल गया।

बूढ़ा कांगचीन अुस समय फर्श पर लेट गया था। काँगचीनकी स्त्री भीतर थी। नागासीने आरक्त आंखों-से लुसानकी ओर देखा। मछलीकी चर्बीसे जलाअे हुअे प्रदीपकी रोशनीमें अुनकी दोनो आंखोंके तारे, गले में पड़ी हुअी मोतियोंकी माला और प्रवालका कर्णाभूषण चमक रहे थे।

नागासी विचलित हो अुठा, अुठकर आगे बढ़ा और लुसानका हाथ पकड़कर अुसे बाहर खींच लाया।

दबी जबानमें लुसानने पूछा, "कहां ले जा रहे हो मुझे?"

नागासीने कोअी जवाब नहीं दिया, अचानक अेक हल्की चिड़ियासी लुसानके पूरे शरीरको दोनो बाहोंमें अुठाते हुअे, पेड़-पौधोंको रोंदते हुअे, पुहटुकुआ झाड़ीके बगलसे अुपकूलके रास्तेकी ओर बढ़ गया।

"मैं नाराज हो जाअूंगी, नागासी।"

जवाबमें नागासीने लुसानको सीनेसे सटा लिया। नागासीके पुष्ट सीनेके स्पर्श और अुत्तापसे लुसानका सारा शरीर रोमांचित हो अुठा। वह फिर कुछ न बोली।

सीधे चांदनीसे धुले रेतीले समुद्र तटपर पहुंचकर नागासी रुका। अुसके पैरोंकी आहट पाकर लाल रंगके केंकड़ोंके दल अपनी बिलोंमें छिप गअे। रंग बिरंगे जवाहिरातोंकी तरह अिधर-अुधर सीपियां बिखरी पड़ी थीं। मानों सफेद रंगके रेशमी कपड़े पर जरदोजी-का काम हो। अुस सुन्दर बालूके सेज पर लुसानको लिटाकर नागासी अुसके बगलमें बैठ गया और नशेसे लाल आँखोंसे अपनी प्रेयसीकी ओर देखने लगा। लुसान हंसने लगी।

"क्यों हंस रही हो?"

"मेरी खुशी।"

"आज तू नाराज क्यों हो गअी थी?"

"मछली पकड़ने जाकर तूने देर क्यों की?"

"मर्दों को क्या डरनेसे काम चलता?"

"नहीं..."

नागासीके खूनमें अेक आंधी-सी आअी। चारों ओर प्रशान्त वातावरण। महासागर गरज रहा था और अुसके तरंगशीर्ष चांदनीमें अग्नि शिखासे लग रहे थे। नारियलके कुंजोंको हिलाते हुअे समुद्रकी हवा चल रही थी—साँजिनी फूलों पर कोमल हाथ फेरते हुअे। प्रस्तरस्तूप पर बैठा मैं मुग्ध होकर मनुष्यके प्रेमका वह स्वर्गीय दृष्य देखने लगा। दूर बीस हाथ अूंचे मचानके अूपर दो तीन घर दिखाअी पड़ रहे थे। अुनमें कोअी नहीं रहता। हानाकाअियोंकी शादी होनेपर नअे जोड़े अुन घरोंमें जाकर सातदिन मधु-यामिनी गुजारते हैं।

अुस ओर लुसानका चेहरा घुमाकर नागासीने कहा, "देख"

"देखा—" लुसान मुस्कराअी।

"कब चलोगी?"

"तू बोल—"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आने वाले गोल चांदके दिनके बादके गोल चांदके दिन . . . ."

"तो मैं कांगचीनसे कहूँ . . ."

"कह देना . . ."

"अुसके बाद।"

"अुसके बाद, क्या ?"

नागासीने भर्राअी आवाजमें कहा, "हानाकाअियों की संख्या घटती जा रही है, लेकिन मैं आकामारूसे प्रार्थना करूंगा कि मैं अकेला ही अेक सौ हानाकाअि अुपहार दे सकूं—"

"धत्—" कहकर लुसानने मुंह छिपा लिया।

कितने ही अस्फुट प्रेमकी बातें अुस रोज पापुओ द्वीपकी हवामें फूलोंकी सुगन्धसी बिखेरती रहीं। अुसके बाद लुसानको नागासी घर पहुंचा गया।

मैं अकेला बैठा हुआ सोचने लगा कि सारी दुनिया कब प्रेमका राज्य बन जाअेगी। सोचते सोचते कितना समय बीत गया था पता नहीं। अेकाअेक मैंने अेक प्रखर गर्मीका अनुभव किया। देखा फिजिमाके दूसरी ओर चांद ढुलक गया है। मेरे चारों ओर अन्धेरा छा गया था और सामनेके शून्य मार्गसे शैतानोंके अनुचरोंका अेक दल नाचता हुआ पापुओ द्वीपके अुपर घूमने लगा। अुनमेंसे किसीके हाथ नहीं तो किसीके पैर नहीं। वे देखनेमें बड़े विकट विकृत और वीभत्स थे। अुनके आविर्भावके पहले ही समुद्रकी तरंगें अुछलने लगीं। चांदनी मलिन हो गअी, कुहरा छा गया। मेरी ओर अुंगली अुठा अुठाकर वे कहकहा लगाकर हँसने लगे।

मैं डर गया। वे क्यों आअे ? पापुओ द्वीपमें न कोअी अशान्ति है और न पाप। तो क्या सारी दुनियाके अूपर शैतानका ही राज्य बन गया ? लेकिन अैसा नहीं। दुनियाभर में हर कहीं मैंने देखा है कि मंगल और कल्याणके लिअे मनुष्योंका अेक दल जी-जानसे लड़ रहा है। तो ?

सुबह होते ही मेरा रातका डर और बढ़ गया। पापुओ द्वीपकी हवा और गर्म हो अुठी और अचानक अेक गुंजनध्वनि सुनाअी पड़ी। मानों हजारों भ्रमर अेक साथ गूंज रहे थे। धीरे-धीरे यह आवाज नजदीक आती गअी। आसमानकी ओर देखते ही मैं जान गया। दो हवाअी जहाज आ रहे थे।

ये प्लेन द्वीपके चारों ओर कअी बार चक्कर लगाते रहे—अुसके बाद नीचे अुतर आअे। अितना नीचे वे अुतर आअे कि हानाकाअि लोग सभी डरकर जंगल और मकानोंमें छिप गअे। सिर्फ नागासी और कअी साहसी जवान बाहर निकलकर मामलेको गौरसे देखने लगे।

अुनकी ध्वनि विकट थी, बिजलीकी गतिसे नीचे अुतरकर टापूका हालचाल समझनेकी कोशिश कर फिर वे हवाअी जहाज अूपरकी ओर अुठाने लगे।

पापुओ द्वीपमें आर्तनादका स्वर सुनाअी पड़ा। आधे घंटेके बाद हवाअी जहाज वहांसे बिदा हो गअे। फिजिमा पहाड़के अुपर अुठकर मैंने देखा कि चार हवाअी जहाज चारों ओर चले गअे। और दो हवाअी जहाज दिशाओंके अेक कोणसे अुड़ने लगे। अेक प्लेनके डैनेपर जाकर मैं बैठा और झाँककर देखा कि अन्दर दो श्वेतांग सैनिक बैठे थे। अेक आदमी बेतारसे खबर भेज रहा था, "हल्लो . . . .कंट्रोल ? सुनो . . .मिल गया है, करीब-करीब जनशून्य अेक टापू . . . .चारों ओर सौ मील के अन्दर कहीं पर कुछ नहीं है . . . .चक्कर लगाकर देखा जा रहा है . . . ."

मैं अुतर आया। फिजिमा पहाड़के जंगलमें हैटी पेड़की शाखोंमें कलके वे दुष्ट प्रेत चमगादड़ोंकी तरह लटक रहे थे। अुन्हें देखकर मैं चौंक अुठा। लेकिन वे मुझे देखकर ठहाका मारने लगे। अुनका यह ठहाका कोअी भी हानाकाअि सुन नहीं पाया। सिर्फ बांसकी झाड़ियोंके अूपरसे वह ठहाका अेक हवाका झोंका बनकर, सड़ी दुर्गन्धको फैलाता हुआ दूरकी ओर अुड़ गया। आकामारूके मन्दिरमें देवताकी प्रस्तर मूर्तिके सामने प्रार्थना करते हुअे ओमांगा और हानाकाअि लोग अुस दुर्गन्धके चपेटमें तिलमिला अुठे और फिर प्रार्थना करने लगे। हे देवता, सभ्य जगतके यन्त्रपक्षियोंकी श्येनदृष्टि हमारे टापूके अूपर पड़ी है—हमलोगोंकी रक्षा करना। वे पक्षी फिर न लौट आअें और हमारे अिस शान्त टापू पर मृत्यु और ध्वंसको न बुला लाअें।

पापुओ द्वीपमें अेक अशुभ छाया पड़ चुकी थी। पूरा टापू स्तब्ध-सा हो गया था। सब आदमी कैसे . .

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विमूढ़से हो गअे थे। अिधर-अुधर हर कहीं घेरा बनाकर वे अिस बातकी आलोचना कर रहे थे। महासागरके गर्जन और समुद्रवायुके सन-सनमें मानों कोअी अनर्थ आनेका सन्देश था। और वह दम घुटनेवाला ताप। मानों मुझे विष-वाष्पका आभास मिल रहा था। मेरे मनमें विषाद छा गया। पापुअी टापूका आश्रय भी क्या मुझसे छूट जाअेगा? टापू छोड़कर शून्यमें महासागरके अूपर बहुत दूर तक घूम आया लेकिन कोअी भी दोस्त या किसी परिचितकी शक्ल दिखाअी नहीं पड़ी। कुछ भी जान नहीं पाया।

दिन गुजर गया और टापूमें रात आ गअी। पूनमकी रात। प्रवालके बाँधपर अिस चांदनी रातमें भी कोअी दिखाअी नहीं पड़ा। नागासी और लुसानमें भी आजकल कोअी बातचीत नहीं होती। नागासी अपने कुछ मित्रोंके साथ आजकल रात-दिन टापूके चारों ओर पहरा देता।

कुछ जरूर होकर रहेगा। तभी तो रात होने पर हैटी पेड़से सब दुष्ट प्रेत अुतर आते और टापूभरमें अुछलते, कूदते, घूमते—कुछ होकर रहेगा।

हुआ भी। पांच दिनके बाद अेक दिन सबेरे सभी लोग यह देखकर दंग रह गअे कि अुपकूलसे निकट अेक महलसा बड़ा जहाज लँगर डाले पड़ा है। हानाकाअि लोग समझ नहीं पाअे; लेकिन मैं समझ गया कि वह जंगी जहाज था और अुसपर तोप और मशीनगन लगे हुअे थे।

पापुअी द्वीपभरमें यह खबर बिजलीकी तरह फैल गअी।

डरे हुअे द्वीपवासी समुद्रके किनारे अिकट्ठे हो गअे।

जहाजके डेकके अूपर सैनिक आकर अिकट्ठे हो गअे। अुन लोगोंने हाथ हिलाते हुअे चिल्लाकर कुछ कहा। हानाकाअि लोग नहीं समझ पाअे लेकिन मैं समझ गया कि वे दोस्तीका बहाना कर रहे हैं।

बूढ़े कांगचीनने कहा, "जहाज!—जैसे बीस साल पहले आया था—"

दूसरे बूढ़ोंने सिर हिलाअे।

ओमांगाने कहा, "लेकिन अुससे यह दसगुना बड़ा है—बहुत बड़ा है।

जहाजसे दो नावें समुद्रकी सतह पर अुतरने लगीं। हानाकाअि लोग दम साधकर अुसे देखने लगे। अुसके बाद रस्सीकी सीढ़ीकी सहायतासे तीस आदमी अुन दोनों नावों पर अुतरे। अुनमें से बीस आदमियोंके हाथोंमें मशीनगन, टामीगन और रायफलें थीं।

कांगचीनने दबी जबानमें कहा, "अुनके हाथोंमें लोहेके हथियार—बन्दूक हैं।

हानाकाअि लोग डर कर कअी कदम पीछे हट गअे। दोनों नावें आगे बढती आअीं। अब वे दिखाअी पड़े। श्वेतांग सैनिक—हाथ हिलाकर आनन्द-ध्वनि करते हुअे चिल्लाने लगे, "डरो नहीं, हम तुम्हारे मित्र हैं—"

तटकी रेतमें आकर अुनकी दोनों नावें रुक गअीं। सैनिक अुतर आअे। सबसे पहले कमरसे रिवाल्वर लटकते हुअे चार आदमी आअे। अुनके पीछे अर्ध-चन्द्रसा गोला बनाकर मशीनगन ढोनेवाले और टामीगनवाले खड़े हो गअे। अुसके बाद हंसमुख वे लोग आगे बढ़ आअे। नजदीक आकर खड़े हो गअे।

अुनके सरदारने आगे बढ़कर हंसते हुअे कहा, "हमलोग दोस्त हैं—तुम्हें कोअी डर नहीं—हम यहां पर चन्द रोजके लिअे घूमने आअे हैं।"

हानाकाअि लोग कुछ भी नहीं समझ पाअे।

कुछ सैनिक कअी नक्शे ढोकर लाअे थे—अुन्हें अब अुन लोगोंने खोला। अुसके अन्दर रंगीन रेशमी कपड़े, खिलौने और बिस्कुटके टीन थे। अुन्हें अब वे बांटने लगे।

अुनके सरदारने कहा, "लो—हमलोगोंका अुपहार लो—दोस्तीकी भेंट लो—"

नागासीने कहा, "नहीं—मत लो—"

हानाकाअियोंमें गुनगुनाहट सुनाअी पड़ी। आपसमें मत-भेद हुआ। आखिर अेक दलने अुपहार लिअे और अेक दलने नहीं।

अेक नौजवान सैनिकने अेक रंगीन ओढ़नी लाकर लुसानके कन्धेपर डाल दी और अुसके अनावृत्त वक्षको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखकर हँसा। नागासी लपक कर अुस ओर गया और ओढ़नी अुठाकर जमीन पर फेंक दी।

मशीनगन और टामीगन हिलने लगे। गोरोंके सरदार हंसने लगे, मामलेको हल्का करनेके लिअे नागासीके कन्धेपर हल्कीसी चपत लगाते हुअे कहा, "अरे नाराज क्यों होते हो—हमलोग दोस्त हैं— तुमलोगोंके साथ दोस्ती करने आअे हैं—"

कांगचीन और दो अेक बूढ़ोंने नागासीको जोशमें आनेके लिअे मना किया।

नागासीने बहुत कोशिशसे अपनेको संभालते हुअे आश्चर्यके साथ देखा कि लुसानने अुस ओढ़नीको जमीनसे अुठाकर कन्धेसे लपेट लिया और अुसके बाद अुसके नर्म स्पर्शसे पुलकित होकर मुस्कराते हुअे अुस जवान सैनिकको ओर देखा। नागासीका दिल टूटने लगा।

मेरा भी दिल टुकड़े-टुकड़े होने लगा। हवामें मैंने कितने ही दफे आवाज लगाअी, "सावधान, होशियार—वे पाप हैं, अुनके सामने सिर नीचा करते ही तुम्हारी आत्मा मलिन-मलिच्छ हो जाअेगी—तुममें लोभ लालसा फैल जाअेगी, सावधान—"

लेकिन, हाय, मेरी बात किसीको सुनाअी नहीं पड़ी। हवामें बुलबुलेकी तरह मेरी सावधान-वाणी गायब हो गअी।

शामसे पूर्व जहाजके तोपोंके मुंह अुन्होंने टापूकी ओर घुमा दिअे। समुद्रतटपर चार बड़े-बड़े तम्बू सैनिकोंने डाल दिअे और बांस काटकर चारों ओर कंटीले तारोंसे अुनका घेरा बनाया। हानाकाअियोंने दूरसे सब कुछ देखा और गुस्सा तथा भयसे किकर्त्तव्य-विमूढ़ बने रहे।

हानाकाअि लोग दो हिस्सोंमें बंट गअे। अेक दलने कहा, "देखा जाअे कि ये लोग क्या करते हैं। फिलहाल चुप रहा जाअे।" यही गुट बड़ा था। अिसके नेता कांगचीन अित्यादि बूढ़े थे।

दूसरे दलने कहा, "नहीं अुन्हें चले जानेको कहें।"—अुनके नेता मित्सू और नागासी थे। लेकिन अुनका दल छोटा था। ओमांगाने दोनों दलोंसे कहा, "बाहरसे आअे हुअे लोगोंके लिअे तुमलोग खबरदार आपसमें मारपीट मत करना।" ओमांगाके कहनेपर नागासी और अुसके साथी खामोश रहे।

बूढ़े कांगचीनने सैनिकोंसे दोस्ती जमा ली। दोनों दल अिशारोंमें बातचीत करते थे। बूढ़ेको अुन लोगोंने बोतल खोलकर शराब पिलाअी और शामको सबलोगोंको बुला लानेके लिअे कहा।

बूढ़े कांगचीनने सबके पास जाकर बड़ी खुशीके साथ यह खबर सुनाअी।

अेक-अेक कर सभी लोग आअे। नागासी और अुसके साथी दूर खड़े रहे। जहाजसे रातके अन्धेरेमें दो श्वेतांगिनियां तम्बुओंके सैनिकोंसे आकर मिलीं। वे बड़ी अजीब सुन्दरी थीं और अुनकी पोशाक भी कितनी चमकदार थी! औरतोंके अेक दलके साथ लुसान भी वहीं आकर खड़ी हो गअी। अुसे देखकर नागासीकी आंखे दहक अुठीं। लुसानके कन्धेपर वह ओढ़नी थी।

"लुसान, तूने वह कपड़ा क्यों पहन रखा है?" नजदीक जाकर रूखाअीके साथ अुसने कहा।

लुसानने मुस्कराकर कहा, "देखनेमें बहुत सुन्दर है न, अिसिलिअे—क्यों, मुझे क्या खूबसूरत नहीं लगता अिसमें?"

"फेंक दे अुसे—"

"नहीं—"

"तो, तू मुझे नहीं चाहती है।" नागासीकी आँखें धधकने लगीं।

अुद्धत ढंगसे लुसानने कहा, "तू ही मुझे नहीं चाहता है।"

अेकाअेक अुनके झगड़ेको दबाकर विदेशी बाजा और गाना शुरू हो गअे—दुर्बोध्य लेकिन मीठी आवाज। हानाकाअियोंने दांतों तले अुंगली दबाते हुअे देखा कि बहुत बड़े बक्सके भीतरसे आवाज निकल रही है। ताज्जुब की बात, जो गा बजा रहे हैं—वे हैं कहां? आश्चर्यके साथ अुनके मनमें डर भी समा गया। ये विदेशी कौन हैं? अिनकी ताकत कितनी जबर्दस्त है?

नागासीने बड़बड़ाते हुअे कहा, "दुश्मन,—वे हमारे जादूगर दुश्मन हैं।"

मैंने हामी भरते हुअे अुसके कानमें कहा, "हां—तुम ठीक कहते हो—अैसा ही है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाना चलता रहा। वे गोरे सैनिक और वे युवतियां अेक बर्तनसे सबको शराब देने लगे। पहले तो सब हिचकिचाअे, फिर पी ली, और पीकर हंसते हुअे होंठ चाटने लगे। अुसके बाद बिस्कुट मिले, चाकलेट मिले। महासागरकी गहराअीसे चांद निकल आया। प्राचीन जल-डाकुओंके अुस प्रस्तर-स्तूपपर श्वेतांगोंके वे मत्त-मदिर गाने महासागरकी तरंगोंकी तरह आकर टकरा रहे थे। अुस संगीतके तालमें ज्यादातर हानाकाअि सिर हिला रहे थे। हानाकाअि लड़कियां तेज शराबके नशेमें आकर कभी-कभी खिलखिलाकर हंस रही थीं। साथ ही साथ वे दुष्ट प्रेत भी कहकहा लगाने लगते। वे अब सारे दलको घेरकर अुन कंटीले तारोंपर बैठे थे।

अेकाअेक अुस गानेके तालपर दो गोरी औरतें दो मर्दोंके साथ बदन-से-बदन सटाकर नाचने लगीं। हानाकाअि मर्द और औरत शर्मा गअे। यह कैसा ढंग है। अुन लोगोंका? लेकिन नाच बड़ा जोरदार था। खूनमें अुस समय शराबका तेज नशा काम कर रहा था। थोड़ी देर बाद अुनकी शर्म काफूर हो गअी, वे बड़ी-बड़ी आँखें करके नाच देखने लगे और अपनी अपनी औरतोंके नजदीक खिसक-खिसककर बैठ गअे।

वह नौजवान सैनिक अब लुसानके पास आकर खड़ा हो गया। अुसके अेक हाथमें अेक गिलास शराब थी और वह लड़खड़ाती हुअी जबानमें बोला, "तुमने नहीं पी। लो पिओ।"

चमकती हुअी आंखोंको फैलाकर लुसान हंसी और सिर हिलाते हुअे बताया "नहीं"।

"नहीं—तुम्हें पीना ही पड़ेगा"—युवक सैनिकने हंसते हुअे लुसानका अेक हाथ पकड़कर खींचा।

मदिर हंसी हंसते हुअे, भवोंको अेक विचित्र ढंगसे सिकोड़ते हुअे लुसानने अुस गिलासको होंठसे लगाया।

नागासीसे और सहा नहीं गया, अचानक दौड़कर अुस नौजवान सैनिकको अेक धक्का देकर हटा दिया। सैनिककी आंखोंमें आग धधक अुठी, नीची आवाजमें अेक गन्दी गाली देकर अुसने नागासीको अेक जोरदार घूंसा मारा। नागासी अेक ओर लुढ़क गया। साथ ही मित्सू कूद पड़ा। लेकिन अुससे पहले ही अेक गोरे सैनिकने हवामें टामीगनसे गोली छोड़ी। हवामें आगकी रेखा दमक कर गायब हो गअी। हानाकाअि लोग आर्त्तनाद कर अुठे। मित्सू ठिठकर खड़ा होगया। नागासी धीरे धीरे अुठकर खड़ा हो गया। अुनके दलके लोग आकर नागासी और मित्सूको पकड़कर कंटीले तारके घेरेके बाहर ले गअे।

गोरोंका सरदार आकर ठहाका मारकर हँसने लगा। अपने सिरको दिखाकर और नागासीके दलकी ओर अिशारा करके अुसने कहा, "अुनके दिमाग गर्म हैं—लेकिन तुम लोग डरो मत—हमलोग शान्ति चाहते हैं—आओ, नाचो, गाओ, अैश करो, खाओ—"

अुन दोनों लड़कियोंके साथ सटकर फिर दो सैनिकोंने निर्लज्ज नाच शुरू कर दिया। फिर नाच-गानेके तालमें हानाकाअी लोग सिर हिलाने लगे।

और वह नौजवान सैनिक लुसानके पास आकर खड़ा हो गया और अुसकी ओर देखकर मुस्कराया। असमाप्त गिलासको लुसानने खाली कर दिया। अुसके शरीरमें तब आग जलने लगी। गोरा नौजवान सैनिक कितना सुन्दर दिख रहा था। लुसान मुस्कराअी।

कंटीले तारके घेरेके अूपर नाचते हुअे वे दुष्ट प्रेत भी ठहाका मारकर हंसने लगे। दम घुटनेवाली गर्म आबहवा मेरे लिअे असहनीय हो गअी। मैं अपने आँसूको रोकते हुअे वहांसे दूर हट गया। पापुअी टापूपर खतरा है। हानाकाअि लोग अपनी सु-बुद्धि खो बैठे हैं। प्रेमको अिन गोरे मेहमानोंने भगा दिया है।

सिर्फ नागासीके दलपर ही जो कुछ भरोसा है। हालांकि अुसका दल बहुत छोटा है। नागासी क्या कर रहा है?

कांगचीनके मकानके बाहर नागासी बैठा था। लुसानकी प्रतीक्षामें।

चाँद जब फिजिमा पहाड़के अुपर चढ़ आया तब लुसान लौटी—साथ नशेमें चूर बूढ़ा कांगचीन भी था।

कांगचीन गा रहा था—वह मन ही मन बड़बड़ाता हुआ बोला, देशी शराब बिलकुल अच्छी नहीं है, विदेशी शराब बड़ी अच्छी है। बीस साल पहलेके अुस जहाजसे यह जहाज बड़ा है। अुसमें जापानी थे। लेकिन ये लोग अुनसे अच्छे हैं। अहा! कितने अुदार हैं ये गोरे!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़खड़ाते हुअे कांगचीन अन्दर गया।

लुसान भी अन्दर जा रही थी, पर अुसका हाथ पकड़कर जोरसे अपने सीनेपर नागासीने अुसे खींच लिया।

"कौन ?"

"मैं—"

"ओः ! तू !"—लुसानके मुखसे शराबकी बू आ रही थी और अुसके कन्धे पर वह ओढ़नी थी।

ढकेलकर लुसानने अपनेको छुड़ाना चाहा पर नागासी अुसे अपने सीनेमें खींच कर पीस डालना चाहता था।

"आह—छोड़—छोड़ दे—"

"नहीं—नहीं—"

"नागासी !"

"लुसान तू बड़ी बेरहम है—"

"क्यों, मैंने क्या किया है ?"

"लुसान, तू वहाँपर फिर मत जाना।"

"क्यों वे लोग कुछ बुरे तो नहीं हैं।"

"नहीं नहीं—वे दुश्मन हैं—अवश्य ही अुन लोगोंका कुछ मतलब है—"

"झूठमूठ डर रहा है तू—"

लुसानकी बातोंमें न मालूम कैसी ठंढक थी—मानों वह बहुत दूरसे बोल रही हो। नागासी क्रोधित हो अुठा, अेकाअेक अुसका बर्बर पौरुष हिंस्र रूपमें जाग अुठा। दांतसे दांत पीसकर अुसने कहा, "सुन लुसान तू मेरी है—अिसलिअे तुझे मेरी बात सुननेनी पड़ेगी—"

लुसानने क्रुद्ध होकर नागासीकी ओर देखा, अुसके बाद जोर लगाकर अपनेको छुड़ाकर बोली, "तेरा हुक्म मैं नहीं सुनूंगी—"

"नहीं सुनेगी।"

"नहीं—"

"तो, तू मुझे नहीं चाहती?"

"तू जितने दिन मुझे आँख दिखाअेगा अुतने दिन तुझे नहीं चाहूंगी—"

"यही तेरी आखिरी बात है?"

"हाँ—"

नागासी लुसानपर अपटा और दोनों हाथोंसे अुसका गला दबा दिया। जीमें आया कि लुसानको खत्म कर दे। शंखसे मुलायम अुसके गलेके अूपर अुसकी अुंगलिया दब कर जरा बैठीं। लेकिन लुसानके होंठ कितने रसभरे हैं, अुसकी आंखोंके तारे कैसे अजीब हैं। लुसानको ढकेलकर नागासीने अेकाअेक रोनेकी तरह अेक विकृत शब्द कर, दौड़ता हुआ भागा और अन्धेरेमें गायब हो गया।

पापुआ टापूमें मौत आअी जानकर मेरा रक्त-मांस-हीन शरीर हवामें कांपने लगा।

क्या करें ? कहाँ जाअें अब ? यहाँ तो अब रहा नहीं जायगा।

प्रवालके बान्धपर जाकर मैं बैठा। आज वहाँपर हानाकाअि जोड़ोंका प्रेमगुंजन नहीं था। शराब बिस्कुट और रंगीन कपड़ेके टुकड़ोंकी लालचमें, अेक नअे विशाल सम्पदाकी दुनियाकी खोज पाकर जिन चार-पांच हाना-काअि लड़कियोंने अपना वंशानुगत नीतिज्ञान खो दिया था वे आज कुछ अुन्मत्त सैनिकोंके साथ प्रवाल बांधपर आअी थीं। महासागर अुनका निर्लज्ज अभिसार देखकर गरज रहा था।

अपने प्रस्तर स्तूपमें मैं फिर लौट गया। हवामें विष-वाष्प ओतप्रोत होकर बह रहा था। और न मालूम कहाँ कोअी रो रहा था—शायद पापुआ द्वीपकी आत्मा ही हो।

सवेरे विदेशियोंके तम्बूमें अेक नअी चीज देखी गअी। रातके अन्तिम प्रहरके अन्धेरेमें कमसे कम पचास बोरा सिमेन्ट और कअी किस्मके औजार वगैरा वे ले आअे थे। शायद कोअी दीवार बना रहे हैं। लेकिन क्यों ?

मेरा खयाल सही निकला। धूप निकलनेपर देखा कि बूढ़े कांगचीनको वे कुछ समझा रहे हैं : कांगचीन समझ नहीं पाया। तब अेकने फावड़ेसे मिट्टी खोदकर दिखाया। कांगचीनने सिर हिला दिया।

घंटेभरके बाद देखा गया कि कंटीले तारके अेक घेरेमें बीस फुट जगह सैनिक खोद रहे हैं और वह मिट्टी हानाकाअि लोग टोकरीमें भर-भरकर अुठा रहे थे। बगलमें चार-पांच आदमी अेक ओर चौकोर जमीन खोद रहे थे। वहाँपर पानी अिकठ्ठा किया जाअेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ देरके बाद दस हानाकाअि लड़कियां हाअिसानू झीलसे मिट्टीके बर्तनमें पानी भर-भरकर अुस जगहपर जमा करने लगीं। खुदी हुअी मिट्टीको पानीसे सानकर सैनिक अुन्हें सांचेमें ढालकर अींट बनाने लगे।

कौतूहलसे हानाकाअि लोग झुडके-झुंड वहाँपर तमाशा देखने आअे। सैनिकोंने फिरसे अुनका आदर सत्कार किया। आज अुन्हें सिग्रेट पीना सिखाया गया।

नागासीका दल भी दूरसे आकर देख गया। कुछ देरके बाद लुसान आअी। अुसे देखकर नागासीका चेहरा गुस्सा और नफ़रतसे तमतमा अुठा। अुसके बाद वह अपना दल लेकर वहाँसे चला गया।

अुस खूबसूरत सैनिकने आकर अेक कपड़ेकी कुर्सीपर लुसानको बैठनेको कहा। लुसान मारे अहसानके पिघल गअी।

ताप बढ़ रहा था। पापका अुत्ताप। दिन और रात बीत जाते। अींटोंको सजाकर सैनिकोंने आग जलाअी। अुसके बाद आग धीमी हो जानेपर अुन अींटोंसे और सिमेन्टसे वे चुनने लगे।

दिन गुजरते गअे।

दीवार खड़ी हो गअी—अेक कमरा भी बन गया। फौलादी कंक्रीटका कमरा। अुस कमरेमें सिर्फ अेक दरवाजा। अुसके अूपर लोहेके छड़ लगाकर कअी तरहके तार बिछा दिअे गअे।

बीस दिन बीत गअे।

अिन कअी दिनोंमें पापुअी द्वीपमें बड़ी-बड़ी तबदीलियाँ हुअीं। हर मकानमें विदेशी शराबकी बू भरी रहती और अुनमें सिग्रेटका धुंआ अुड़ता। टापूके बकरे और मुर्गे; मोती और मूंगा लाकर हानाकाअि लोग अुन्हें देते और बदलेमें रंगीन कपड़े, जाड़ेके कपड़े, घड़ी, बिस्कुट और रोल्ड गोल्डके गहने पाते। लुसानके गले और कानमें नकली नग लगे नकली सोनेके गहने चमकते। वह अजीब सुन्दरी दिखती। लेकिन नागासी अुससे दूर रहता। मानों कोअी जहरीली रेंगनेवाला जीव-जन्तु हो।

अेक दिन अुस नौजवान सैनिकके साथ नावपर चढ़कर लुसान जहाजमें सवार होकर घूम आअी। अुसे सब मर्द और औरत घेरकर खड़े हो गअे। लुसानकी आँखोंमें आश्चर्य और अुत्तेजना थी।

लुसान जोशीली आवाजमें कहती कि अुसने क्या क्या देखा है। करीब-करीब पापुअी टापू-सा ही बड़ा है वहाँ जहाज। अुसके अन्दर अनगिनत कमरे हैं और देवताओंके भोगके योग्य कितनी सुन्दर-सुन्दर वस्तुअें हैं। सुनते-सुनते सभीका दम जोश और लालचसे घुटने लगा।

शामके बाद हररोज तम्बूके सामने नाच और गाना होता। वे दोनो श्वेतांगिनियां कभी-कभी प्रायः विवस्त्र होकर नाचतीं। हानाकाअि भी मतवाले होकर नाचनेकी कोशिश करते हैं। मतवाली होकर लुसानने भी अुस नौजवान सैनिकके साथ नाचनेकी कोशिश की थी।

अुसके बाद अेक दिन अुस विराट जहाजसे कुछ सैनिक कपड़ेसे ढककर बहुत होशियारीसे कोअी चीज ढोकर ले आअे। अुस कंक्रीटके मकानके अेकमात्र दरवाजेसे वे अन्दर घुसे। मशीनगन और टामीगन लेकर सैनिक बाहर पहरा देने लगे। जो हानाकाअि नजदीक आ रहे थे अुन्हें दूर भगा दिया गया—बहुत दूर।

अिस खबरको सुनकर नागासी और अुसके साथी सलाह मशविरा करने लगे कि मामला क्या है? किस लिअे अुन लोगोंने वह मकान तैयार किया है! क्यों वे टापू छोड़कर नहीं जा रहे हैं? अुस मकानके अन्दर गुप्त रूपसे अुन्होंने क्या स्थापित किया है? कोअी विदेशी देवताको? आकामारूको अुखाड़ फेंक देंगे? कोअी प्रेत? पापुअी द्वीपको क्या वे ध्वंस कर देंगे?

अुधर सैनिकोंकी वह गुप्त कार्रवाअी खत्म होती। कंक्रीटसे बने अुस मकानके अेकमात्र दरवाजेको वह बन्द करते—लोहेकी पत्तीके अूपर अींट और सिमेन्टसे अुसे दुर्भेद्य बना देते।

अुसके बाद तम्बूमेंसे शराब निकालकर वे त्योहार मनानेके ढंगसे पीते। अुस कंक्रीटके मकानके अूपर आकर हथकटे पैरकटे और सिरकटे दुष्ट प्रेत मारे खुशीके लोटपोट खाने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठीक अुसी समय नागासी और मित्सूका दल वहाँ आया। अुनके हाथमें पत्थर और हड्डीकी बर्छियाँ थीं।

मशीनगनवालोंने कहा, "दूर हो जाओ।"

श्वेतांग सरदारने कहा, "आने दो--"

नागासी और अुसके साथी आअे। वे बीस थे अुस समय दोपहर ढल रही थी। दूसरे हानाकाअि अुस समय नजरोंसे बाहर थे।

मित्सूने कहा, "तुम लोगोंने अुस मकानमें क्या रखा है?

श्वेतांग सरदारने अिशारेको समझकर हंसते हुअे कहा--"हमने अपने आकामारू (देवता) को रखा है वहाँपर--"

मित्सूने कहा, "तुम लोग हटा लो अपने देवताको, पापूअी टापू हम लोगोंका है।"

गोरे सरदारने हंसकर कहा, "शराब पिओगे?'

मित्सूने सिर हिलाते हुअे कहा, "नहीं--तुम-लोग जाओ यहाँसे और अपने अुस देवताको भी हटा ले जाओ।"

गोरे सरदारने मित्सूको धक्का देते हुअे कहा,--"जाओ घर जाओ--पागलपन मत करो--"

लेकिन आज मित्सू और अुसके साथी पागलसे हो गअे थे। अचानक मित्सू अुस सरदार पर झपटा। साथ ही साथ श्वेतांग सैनिकने मशीनगनको मित्सूके दलकी ओर घुमा दिया।

रैट्--टैट्--टैट्--टैट्

झपाझप मित्सू और अुसके चार साथी गिर पड़े। धरती परसे नीले रंगका धुंआ अुड़ गया। कंक्रीटके अुस मकानके अूपर दुष्ट प्रेत मुंहमें अुंगली डालकर सीटी बजाने लगे। पांच आदमीकी कराह हवामें मिल गअी। पाँच आदमियोंके गर्म खूनसे अेक रक्त वर्ण पंचमुख प्रेत अुठकर वीभत्स नृत्य करने लगा। हवामें गर्मीकी अेक लहर आअी और वह मुझे डुबो देनेकी कोशिश करने लगी। अुस बलिमंडपसे मैं बड़े मुश्किलसे भागा। हानाकाअि-लोग मशीनगनकी आवाजसे चौंक पड़े लेकिन आगे बढ़नेमें अुन्हें रुकावट महसूस हुअी। अुधर नागासी डर गया--दल लेकर पीछे हट गया।

श्वेतांग सरदारने कंक्रीटका मकान दिखाकर पूछा, "क्यों, हमारा देवता रहेगा?"

नागासीने सिर हिलाया, अुसकी दोनों आंखोंसे आंसू लुढ़क पड़े। गोरे सरदारने कहा, "अब जाओ।"

दुम दबाअे हुअे कुत्तेकी तरह नागासीका दल लौट आया। और अुन पांचोंकी लाशें खींचकर झटपट कुछ सैनिक अेक नावमें डालकर महासागरके गन्दे पानीवाले हिस्सेमें चले गअे। कंक्रीटके मकानमें सयत्न-रक्षित अुनके देवताको अपमान करनेवाली अिन पांच लाशोंको वे जलमें दफनाअेंगे।

खबर दबी नहीं रही। हानाकाअि लोग डर गअे। नागासी मूढ़ बन गया था। बूढ़ा कांगचीन अिन बे-अदब छोकरोंकी निन्दा करते न अघाता।

शाम हो आअी। आज भी तम्बूसे नाच गाना और हुल्लडकी आवाज आअी। लेकिन आज किसीको भी जानेकी हिम्मत नहीं हो रही थी। हाअिसानू झीलके किनारे वे कानाफूसी करने लगे।

अेकाअेक बूटोंकी मशमशाहटसे वे चौंक पड़े। गोरा सरदार और दस सैनिक आकर खड़े हो गअे। आजके अुत्सवमें अुन सभीको वे बुलाने आअे थे। पांच गर्म-दिमागोंकी मृत्युके लिअे वे दुःखित थे, लेकिन अुन लोगोंने अुनका अपमान किया था और अुनपर हमला किया था अिसलिअे आत्मरक्षाके लिअे ही अुन लोगोंने गोली चलाअी थी। कांगचीनका दल डरते हुअे तम्बूकी ओर बढ़ गया। सिर्फ नागासीका दल ही दूर खिसक गया वहाँसे।

विदेशी शराब बड़ी अजीब चीज है। थोड़ी देर बाद ही हानाकाअि सब कुछ भूल गअे। खुशीमें अुछलते हुअे वे नाचने लगे। आज गोरी औरतें खूबसूरत हाना-काअि नौजवानोंके साथ भी नाचने लगीं।

ठीक अुसी समय सभीकी आंखें बचाकर लुमान अुस जवान सैनिकके साथ निकल गअी। अुस समय चांद नहीं निकला था और चारों ओर अन्धेरा था। नरककी बहुत गन्दी दुर्गंध मुझे मिल रही थी, लेकिन अुनके नशेसे मतवाली, वासनासे विव्हल पांचों अिन्द्रियोंको पु हुट्कुआ और सांजिनी फूलकी सुगन्ध अुत्तेजित कर रही थी। मैंने अुन लोगोंका पीछा किया। अुसी प्रस्तर स्तूपमें जहाँ-पर मैं रहता था वह नौजवान सैनिक और लुमान जा घुसे। वे अगल-बगल बैठ गअे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवक सैनिकने कहा, "मैं तुमसे शादी करूँगा लुसान—"

लुसान समझ नहीं पाअी, पर हंसी और दोनों हाथोंसे सैनिकका मुँह अपने मुंहकी ओर खींच लिया।

अुनके असंयत अनाचारको मैं बरदाश्त न कर सका। मैं वहांसे भागा। पचास साल पहलेका मनुष्य जीवन मुझे याद आया। मेरी स्त्रीने मुझे जब विष देकर...। पाप, पाप दुनियाको लील रहा था। अिसीलिअे रातों-रात प्रेम गायब हो जाता, शुद्धाचार पापाचारमें बदल जाता, अिसलिअे—

सभीको शराब बांटते हुअे गोरे सरदारने कहा, सुनो हम तुम्हारा मंगल चाहते हैं। अिसलिअे अेक बात कह रहा हूं—तुमलोग चार दिनके अन्दर यह टापू छोड़कर बहुत दूर चले जाओ—"

कोअी नहीं समझ पाया। बार बार अिशारेकी सहायतासे सरदारने कांगचीनको समझाया। कांगचीनने बाकी सबको समझाया।

"क्यों? क्यों? क्यों?" हानाकाअि लोग आतंकसे सिहर अुठे।

गोरे सरदारने फिर समझाया, "कुछ दिनोंके बाद ही यह टापू डूब जाअेगा—हमलोग यंत्रकी सहायतासे यह बात जान गअे हैं।"

अुत्सव बन्द हो गया। हानाकाअियोंके सिरपर मौत अुतर आअी। दुखित होकर निःशद्व वे घर लौट गअे। अुस समय महासागरके पानीमें नहा कर बंकिम चांद आसमानकी सीढ़ीपर पैर रख चुका है और फिजिमा पहाड़की चोटीपर घना कुहरा छा गया है।

बहुत रात गअे अुस नौजवान सैनिकके शरीरसे सटकर पापिन लुसान मेरा प्रस्तर स्तूप छोड़कर बाहर निकल आअी। लेकिन विश्वासघातिनी अपने घर नहीं लौटी। वह नौजवान सैनिक अुसे तम्बूकी ओर ले गया। अुनकी पापवासनासे कलुषित अुस स्तूपके अेक किनारे बैठकर मैं सोचने लगा। क्या करूं—कहाँ जाअूं?

सोचते-सोचते मैं सो गया। अेक घर्घर गों-गों शद्वसे जब मेरी नींद टूटी तब देखा कि प्रवालके बांधके दूसरी ओर विदेशियोंका जहाज फीकी चांदनीसे घिरे सागर जलको मंथन करते हुअे दूर चला जा रहा है।

चला जा रहा है? कूदकर मैं तम्बूकी ओर गया। कहां? अेक भी तम्बू नहीं। कोअी कहीं पर नहीं है। सिर्फ खूनसे भीगी मिट्टीकी अेक फीकी गन्ध। और अेक विराट समाधि-सा कंक्रीटका बना वह मकान। सभी कंटीले तारोंसे अेक घेरा बनाकर अुस मकानको अुन-लोगोंने अेक दुर्भेद्य किला-सा बना दिया था।

क्यों? क्या है अुसके अन्दर? कैसा है वह देवता? कंटीले तारोंको पार कर मैंने अुस दीवारपर जाकर चोट की। पत्थरकी तरह मजबूत। रास्ता कहां है? तब मैं सूक्ष्मदेह धारण कर लोहे और तार को लांघते हुअे अुस मकानके अन्दर घुसा।

अन्धकार! वायुहीन अन्धकारके अनेक स्तर। अुस अन्धकारमें अेक लोहेका सन्दूक देखा। अुसके भीतर भी घुसा। बच्चोंके खिलौने-सा लोहेसे बना अेक गेंद। यह क्या था? अच्छी तरहसे देखा। देखा शैतान गेंद बनकर बैठा हुआ है। देखा शैतान हाअिड्रोजेनपर सवार होकर अेक विराट ध्वंसके स्वप्नमें निद्रित है। ज्यादा देरी करता तो शायद मैं वहींपर बेहोश हो जाता। अिसीलिअे झटपट बाहर निकल आया। समझ गया, कि दुनियाको अकेले भोग करनेके लिअे जो लड़ाअी दुनियामें लगी है अुसीके लिअे अुन विदेशियोंने यह बम बनाया है। अुसके ध्वंस करनेकी शक्तिका नाप लेनेके लिअे वे हानाकाअियोंके अिस टापूपर अुस ध्वंस देवताकी प्रतिष्ठा कर गअे। परीक्षा सफल होनेपर ही अपने शत्रुओंको ध्वंस करनेके लिअे वे तैयार हो जाअेंगे।

मुझे देखकर सब दुष्ट प्रेत चारों ओरसे मेरी ओर दौड़े और मुझे पीटने लगे, काटने लगे। मैं रोता-चिल्लाता वहांसे भागा।

पापुअी द्वीपपर खतरा है। सबेरा होते ही नागासीके दलको ढूंढ़ निकाला मैंने। क्या कर रहे थे वे? नागासीके मकानके सामने वे बैठे हुअे थे। चिन्तित, पराजित और विमूढ़।

नागासीके नजदीक खड़े होकर मैंने बार-बार चिल्लाते हुअे कहा, "होशियार, होशियार हो जाओ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागासी—विदेशी तुम्हारे टापूमें सर्व-ध्वंसका बीज बो गअे हैं—"

लेकिन वह सुन नहीं पाया। मेरी बातोंने हवाको जरा आन्दोलित किया लेकिन कोअी नतीजा न निकला।

ठीक अुसी समय अेकने आकर खबर दी, "संहारक विदेशी स्वार्थी लुटेरे चले गअे हैं—न जहाज है और न कोअी आदमी।"

"नहीं है!" नागासी अुछल पड़ा, फिर समुद्र-तटकी ओर दौड़ा।

सभी कोअी अुस कांक्रीटके मकानके पास जा पहुंचे।

नागासीने पूछा, "क्या रख गअे वे शैतान? क्या है अुसके अन्दर?"

मैंने कहा, "अेक बम—"

कोअी भी सुन न पाया।

नागासीने कहा, "चारों ओर घेरा बिछा गअे हैं—हटाओ अुन्हें।"

अेक भाला अुठाकर कंटीले तारोंसे फंसाकर अुसे हटाने गया और साथ ही साथ आर्तनाद करते हुअे दूर जा गिरा।

"क्या हुआ? क्या हुआ?"

अुस आदमीने कहा, "मालूम नहीं—अेक जबर्दस्त ताकतने मानो मुझपर चोट की और मेरा सारा शरीर सुन्न हो गया।"

मैं समझ गया। भीतर वे बिजलीकी बैटरी रख गअे हैं और कंटीले तारोंमें बिजली दौड़ रही है।

लेकिन असभ्य अज्ञान हानाकाअि लोग अिसे नहीं समझ पाअे। वे गोरोंके देवताका परिचय पाकर पीछे हटते हुअे सोचने लगे। अब? क्या होगा?

अैसे ही समय कांगचीन दौड़ते हुअे वहांपर आया। सीना पीटते हुअे वह बोला, "लुसान—लुसान नहीं है"—नागासीने अुसके पास आकर पूछा, "नहींका मतलब?"

"कल रातको अेक नौजवान सैनिकके साथ वह नाच रही थी, अुसके बाद वह घर नहीं लौटी—अिसके अलावा और तीन लड़कियां भी टापूमें नहीं मिल रही हैं—माअितिसी, रांचा—"

नहीं है, तो गअी कहां? नागासीने चिल्लाते हुअे पूछा।

कांगचीनने सिर नीचा करते हुअे कहा, "शायद अुनके जहाजमें चली गअी है।"—अुसके चेहरेके कुंचित चमड़ेपर आँसू ढुलक पड़े।

लेकिन नागासीके चेहरेपर जरा-सी भी हमदर्दी नहीं दिखाअी पड़ी—बल्कि अुसने पागलकी तरह झपट कर कांगचीनका गला पकड़ लिया, "लालची कुत्ता—अपने बेटीको बेच दिया—"

कांगचीनके मुखपर थूककर नागासी महासागरकी ओर चला गया।

"नागासी कहां जा रहे हो?" साथियोंने बुलाया।

नागासीने अेक नावको खींचते हुअे कहा, "जहाज पकड़ने—"

"क्यों? क्यों?" साथी अुसकी ओर दौड़े।

"लुसानको लौटा लाअूंगा"—नावको पानीमें गिराकर अुसपर नागासी सवार हो गया।

"पागल—तू पागल है नागासी—"

नागासी महासागरमें बह चला।

"नागासी, वह जहाज कहां है—वह तो बहुत दूर है—लौट आ—"

"कहीं भी जाअे—अुन्हें पकड़कर रहूंगा।"

"नागासी—नागासी"—

लेकिन नागासीने पीछे घूमकर भी नहीं देखा। अुसकी नजर सामनेकी ओर थी। महासागरपर अुसकी नाव धीरे-धीरे छोटी होते-होते नजरोंसे ओझल हो गअी।

पापुओ द्वीपमें कोअी जान नहीं रह गअी थी। टापूके लोगोंमें मौतकी खामोशी छा गअी थी। पाँच आदमी मर गअे थे। चार लड़कियां गायब हो गअी थीं। विदेशी देवताने आकर अुनके टापूपर पूरा अड्डा जमा लिया था। हर रोज आकामारुके मन्दिरमें हानाकाअि लोग विषादपूर्ण प्रार्थना करते और दुष्ट प्रेत अुनका मजाक-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुड़ाते, बांसकी चोटियोंपर चढ़कर कूदफांद मचाकर शून्यमें मारे खुशीके लोटपोट हो जाते।

× × ×

दिन बीतते।

महासागर गरजता। नमकसे भरी जीभको लपलपाते हुअे अुस प्रस्तर स्तूपको चाटता रहता। नारियलके कुंजोंमें हवा अपना बाजा बजाती।

पहले ही की तरह पुहुटुकुआ फलकी खुशबू हवामें फैल जाती। ओसके बूंदसे सांजिनी फूल खिलते और मुरझाते।

पके हुअे तिसांग फल पेड़ोंसे गिरते। हाअितारू और मंचुआ चिड़िया पहलेकी तरह रोजका गीत गाती। और मृत ज्वालामुखी फिजिमा अपनी अग्निपूर्ण जवानीका स्वप्न देखते हुअे कभी कभी बादलोंके मलमलमें मुख ढक लेता।

अेक दिन!

दो दिन!

तीन दिन बीत गअे!

रोज-ब-रोज पापुअी टापूका ताप बढ़ने लगा। समझ गया कि मेरे जानेका वक्त आ गया है। और कोअी नया टापू। लेकिन कहां? दुनिया तो मैं देख चुका हूँ।

रात आअी। अन्धेरी रात। महासागरसे चाँद आज आखिरी रातमें शायद निकलेगा। पापुअी टापू निःशब्द, खामोश।

पापुअी द्वीपमें अब प्रेम नहीं रह गया था। लुसान विश्वासघातिनी निकली। नागासी कहाँपर है? क्या वह अभीतक जिन्दा है?

अेकाअेक हवामें अुड़ते हुअे हमारे प्रेत मित्र आअे। "आओ—भाग आओ—झटपट" वे चिल्ला-चिल्लाकर बुलाने लगे।

मैंने पूछा, "क्यों? क्या हुआ है?"

"वक्त नहीं है—कह तो रहे हैं कि चले आओ।"

"पहले बताओ—"

यहाँसे जो जहाज गया है वह अब दो सौ मीलकी दूरीपर है। अुस जहाजके अन्दर अेक बेतारका यन्त्र है जिसका बटन दबाते ही अिस जगहके कांक्रीटके मकानके अन्दर अेक कल हिल अुठेगी—अुसके बाद—"

अुनकी बातें शेष होनेसे पहले ही अेक प्रलयंकर धमाका हुआ और अेक साथ हजारों बिजलीकी चमककी तरह ज्योति जग पड़ी। साथ-ही-साथ मेरे मित्र मेरा हाथ पकड़कर बिजलीकी गतिसे अूपर अुठने लगे। अूपर-अूपर, बहुत अूपर।

नीचेकी ओर सशंकित होकर देखा कि समूचा पापुअी द्वीप क्षणभरमें फटकर टुकड़े-टुकड़े होकर महासागरके पानीमें मिल गया। पूरा टापू अेक आगकी गेंदसा बनकर धीरे-धीरे बड़ा होकर अेक विराट छतरीसा बन गया और अूपरकी ओर तीरकी गतिमें आने लगा। हवामें प्रचण्ड दबाव पड़नेसे हवा आँधी बनकर चारों ओर भागने लगी और अुस हवा पर मौत सवार होकर मँडराने लगी। हवा आग बन गअी। पशु, पक्षी, कीड़े-मकोड़े, दृश्य, अदृश्य सभी प्राणशक्तिका लोप करते हुअे चारों ओर सौ मील तक ध्वंसकी आंधी बह चली। और अूपरकी ओर वह पच्चीस मील तक दौड़ती हुअी आअी। महासागरका तलदेश तक मौतके विषसे जर्जर हो गया। दुनिया काँप अुठी। शून्यमें कम्पन शुरू हो गया। अुस कम्पनसे दूसरे ग्रह अुपग्रह भी काँप अुठे।

तप्त मृत्युकी वह धारा आंधीकी तरह दौड़ती रही। बहुत मीलों तक अेक मृत्युका मंडल बन गया। अुस मण्डलमें फिर कब प्राणशक्ति लौटे, किसीको मालूम नहीं।

अूपरसे हम सभी कुछ देख पा रहे थे। आंधी रुकी। पापुअी द्वीप निश्चिन्ह-निःशेष हो चुका था। अुसके बदले अेक बड़ा-सा ज्वालामुखी महासागरके तलदेशमें आग अुगल रहा था। मीलों तक महासागरका पानी अुबलने लगा।

आंधी रुकी। लेकिन मौतकी राख हवामें अुड़ती रही। दुनियाभरमें वह मौत फैलाअेगी—फैलाअेगी असंख्य अज्ञात बीमारियां। पुरुषके पुरुषत्वको वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुरा लेगी, नारीके नारीत्वका वह लोप करेगी—बहशीपन को वह स्थाअी बनाअेगी। मन्थरगति अेक गिद्धनीकी तरह, बहुत सूक्ष्म राखके कणपर मौत सारी सृष्टिको ढकनेके लिअे अुड़ने लगी।

शून्य पथमें हाहाकार सुनाअी पड़ा।

ग्रह अुपग्रहसे, विभिन्न वायुमण्डलसे, सभी प्रेत-लोकसे प्रेत भागकर आने लगे।

"सुनो—सभी सुनो—"

छायापथके नजदीक जाकर हम सब अिकट्ठे हो गअे। सभी के मुंहमें अेक ही सवाल था। क्या होगा? क्या होगा? अगर अैसे ही कअी ध्वंसयज्ञ हों तो प्राणका स्पन्दन रुक जाअेगा। सभी प्राणशक्तियोंमें श्रेष्ठ जो मनुष्य है वही जिन्दगीको नहीं चाहता—मौतको चाहता है। घृणा और हिंसाने अुन्हें मौत का अुपासक बना दिया है। अब?

"नहीं—अैसा नहीं हो सकता—जिन्दगीसे कोअी और चीज बड़ी नहीं है"—प्रेत सब चिल्ला अुठे, "अै आदमियों सुनो, प्रेम, सिर्फ प्रेम ही तुम्हें मौतके हाथोंसे बचा सकता है—प्रेम।" प्रेत चिल्लाते रहे।

मैं समझ पाया कि दुनियाके लोग अुस चिल्लाहटको सुन नहीं पाअे। फिर भी हम चिल्लाते रहेंगे। जब सुबहकी रंगीन किरणें अुनके चेहरों पर पड़ेंगी, जब फूल खिलेंगे, चिड़िया चहचहाअेंगी, बच्चे हंसेंगे और रूप-सियां शर्मीली आंखोंसे देखेंगी तब शायद वे समझेंगे कि हमने अुन्हें बुलाया है, सावधान होनेको कहा है, बार-बार कहा है—सबको प्यार करो, प्यार करो; अकेले प्रेम ही मौतके अूपर विजय पा सकता है।

लेकिन दुनिया हिंसामें अुन्मत्त है। अगर आदमी हमारे कहने पर भी प्रेमको अस्वीकार करे! तो? तो क्या होगा?

प्रेतलोककी अुस चिल्लाहटमें मैंने प्रार्थना की—"हे जन्मके देवता, पचास सालसे मैं तुमसे भाग-भागकर बचता रहा, लेकिन अब और नहीं—अब मुझे तुम सैनिक बनकर जन्म लेने दो—दुनियामें शान्ति चाहिअे।"

[अनुवादक—श्री प्रबोधकुमार मजुमदार]

गीत

: श्री रंगनाथ 'राकेश' :

बरसो ना री बादरिया!.....
ना मारो, मारो ना स्वरके शर, ओ साँवरिया!
साँसोंके ताग न अैसे काटो
मेरा दर्द न जगको बाँटो
साधोंकी फुगनी पनपी तनमें
अुसको खिलने दो, मत छाँटो
संझाका दीप अुजागर कर लेने दो, फूंको ना बाँसुरिया!
मनकी डगर न रुंधो रसिया
मैं भोरी गँवअीकी बसिया
ये दो गागर माथ अुठा दो
बढ़ रही अरे अब घोर-अन्हरिया
आखरका रस ढुरक न जाअे मैं अुठ आअी हूँ अधनिंदिया!
पलकोंमें पीड़ा पग जाने दो, मत छेड़ो, ओ छलिया!
मैं पाँव पड़ रही तेरे काँधा
कबका बैर अरे यह साधा?
मेरा मोहन दूर देशमें
आहोंमें डूबी मनकी राधा!
अुठत बयसिया, भादों रतिया, बरसो ना री बादरिया!
ना मारो, मारो ना स्वरके शर, ओ साँवरिया!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सूचना–'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअे।)

पार्वती—(महाकाव्य), लेखक—श्री रामानन्द तिवारी, शास्त्री, 'भारतीनन्दन'; साअिज रायल आठ पेजी, पृष्ठ सख्या, ५६९+१०, मूल्य १५), प्रकाशिका—श्रीमती शकुन्तलारानी, मंगल-भवन, प्रोफेसर कोलोनी, नयापुरा, कोटा (राजस्थान)।

श्री रामानन्द तिवारीको कविके नाते हिन्दी-जगत् विशेषरूपमें भले ही न जानता हो, परन्तु अुनकी यह कृति हिन्दी-काव्य-साहित्यमें अुत्कृष्ट स्थान पानेकी अधिकारिणी है। अिस महाकाव्यमें महाकाव्य सम्बन्धी प्राचीन शास्त्रीय परम्पराओंका यथेष्ट रूपसे पालन किया गया है और अिसलिअे सम्भव है कि काव्यकी वर्तमान परिपाटीसे अनुराग रखनेवालोंको अिसमें विशेष आनन्द न प्राप्त हो, परन्तु प्राचीन शास्त्रीय नियमोंको देखते हुअे कहा जा सकता है, कि श्री अयोध्यासिंह अुपाध्यायके 'प्रिय-प्रवास' के पश्चात् खड़ी बोलीमें **'पार्वती'** भी अपने ढंगकी सुन्दर कृति है और अुसमें भाषा, भाव, छन्द सभीका अुपयुक्त समन्वय किया गया है।

अिस महाकाव्यका कथन शिव-पार्वतीके कथानकसे सम्बन्ध रखता है, जिसका समावेश तुलसीदासके 'रामचरित मानस' और 'पार्वती मंगल' में किया गया है। कथाका आरम्भ दक्ष-यज्ञसे होता है और अन्तमें 'त्रिपुर अुदय' तथा 'शिव संस्कृत-वर्णन' नामके सर्ग मिलते हैं। 'शिवधर्म' और 'शिवनीति' सर्ग भी अपनी विशेषता रखते हैं। कथानक और अुक्तियोंपर संस्कृत ग्रंथोंका भी प्रभाव है, परन्तु कविकी प्रतिभाने सर्वत्र नया रंग-ढंग ला दिया है। कथानकमें भी नवीनता परिलक्षित होती है।

सम्पूर्ण पुस्तक २९ सर्गोंमें विभाजित है और अन्तमें आरती तथा कवि-परिचय भी काव्यमें दिया गया है। कथानकके अनुसार विभिन्न सर्गोंमें छन्दोंका चयन भी सुन्दर ढंगसे किया गया है और भाषा भी रसके अनुसार अपना प्रवाह और प्रभाव बदलती रहती है। पुस्तकमें प्रकृति वर्णन भी सुन्दर है और प्रथम सर्ग हिमालयकी नैसर्गिक सुषमाके वर्णनसे ही आरम्भ होता है, जिससे कवि अपने कथानकका प्रकृतिके साथ तादात्म्य स्थापित कर देता है। नगाधिराज हिमालयके अन्तस्तलसे निसृत होनेवाली पीयूषवाहिनी नदियोंका वर्णन करते हुअे कवि कहता है:—

जीवनके सहस्र रूपों-सी जहाँ अनर्गल, चंचल, शान्त,
करती है सहस्र धाराअें गुञ्जित पर्वतका अेकान्त;
पद-पदपर जल-धाराओंका संगम बन अपूर्व अनुराग,
पर्वतके पावन प्रदेशमें रचना कितने पुण्य प्रयाग।

दूसरे सर्गमें हिमालय कुमारी, तीसरेमें योगीश्वर शिव, चौथेमें त्रिपुरासुरके वधके लिअे देवताओंकी चिन्ता, पाँचवेंमें मदन-दहन, छठेमें अुमाकी तपस्या, सातवेंमें शिवका दर्शन तथा आठवेंमें परिणय प्रसंग आदिका वर्णन है। सभी स्थलोंपर कविने सुरुचिका खयाल रखा है और अिस मामलेमें वह गोस्वामी तुलसीदासके अिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मतका अनुयायी जान पड़ता है कि "जगत मातु-पितु शम्भु-भवानी तेहि शृंगार न कहौं बखानी"। अैसा जान पड़ता है कि कविने समस्त रचना शिव और पार्वतीको अपना आराध्य मानकर की है और अिसीलिअे समस्त कृतिमें अेक धार्मिक भावना तथा सहज-ज्ञानका प्रभाव दिखलाअी पड़ता है और भारतीय संस्कृतिके प्रति कविकी श्रद्धा भी प्रसंगानुसार व्यवस्थित रूपमें अभिव्यक्त हुअी है। 'मदन-दहन' के समय शिवकी अर्चनाके लिअे पधारी हुअी पार्वतीका वर्णन करते हुअे कवि कहता है :

अिसी समय हत-प्राय कामको संजीवित-सा करती,
अनुपम रूप-सुधा-से, भयमें नव साहस-सा भरती;
रूप-अर्चना-सी, शंकरकी पूजा-हेतु पधारी,
वन देवी-सी शुचि सखियोंसे अनुसृत शैल-कुमारी।

परन्तु तपस्विनी अुमाका वर्णन करते हुअे कवि कहता है कि तपके प्रभावसे शाप भी बरदान बन जाते हैं।

रूप औ लावण्य हैं मनकी मनोहर भ्रान्ति,
देहका अनुराग केवल अिन्द्रियोंकी श्रान्ति,
रूप औ अनुराग केवल हैं प्रकृतिके पाप,
पूत हो तपसे अमृत वरदान बनते शाप।

जिस समय शंकर अपना तृतीय नेत्र खोलकर कामदेवको भस्म करते हैं, अुस समयका वर्णन करते हुअे महाकवि कालिदासने 'कुमार-सम्भव' में "क्रोधं प्रभो संहर संहरेति".....आदि लिखा है। 'पार्वती' महाकाव्यका वर्णन भी अिसी प्रकारका है:—

"क्षमा! क्षमा! शिव!" मरुद गणोंकी वाणी वेध गगनको,
श्रुति-गोचर, हो सकी न, तबतक ज्वाला-लीढ़ मदनको,
भस्म शेष कर चुकी वन्हि वह निःसृत दृगसे हरके,
व्याकुल हुअे विमोह-भीतिसे सुहृद समाहत स्मरके।

समस्त पुस्तक अुमा पार्वतीके अलौकिक जीवन, अुनकी अगाध तपस्या और शिवत्वका सुन्दर चित्रण अुपस्थित करती है, जिसके द्वारा भारतीय संस्कृतिकी प्रवृत्तियोंके प्रति स्नेह अुत्पन्न होता है और अैसा जान पड़ता है कि सामने अेक अैसे युगका चित्र अुपस्थित है, जो कल्पना-लोकका होते हुअे भी सत्यसे परे नहीं। पुस्तककी छपाअी-सफाअी भी सुन्दर है।

'शब्द-साधना' (भाषा विज्ञान), लेखक—श्री रामचन्द्र वर्म्मा, पृष्ठ संख्या ३७६+४१ डबल क्राअुन सोलह पेजी, मूल्य ५), प्रकाशक-साहित्य-रत्न-माला कार्यालय, २० धर्म कूप, बनारस।

शब्दोंके प्रयोगमें आजकल राष्ट्रभाषाके नामपर जो मनमानी चल पड़ी है, अुस ओर ध्यान देना आवश्यक है; परन्तु अिसके लिअे यह जरूरी है कि शब्दोंका ठीक प्रयोग बतानेवाली पुस्तकें तैयार की जाअें और वे अितनी सरल तथा सुपाठ्य हों कि अन्य भाषा-भाषी भी अुनसे लाभ अुठा सकें। पर्यायवाची शब्द तो सरलतासे मिल सकते हैं, परन्तु अुनका अन्तर समझनेके लिअे कोअी योग्य साधन नहीं मिलता।

वर्म्माजी लिखित "अच्छी हिन्दी" और 'हिन्दी प्रयोग' नामक पुस्तकमें व्याकरणकी दृष्टिसे भाषाका शुद्ध स्वरूप अुपस्थित किया जा चुका है, परन्तु यह पुस्तक विशेषकर प्रयोगोंपर प्रकाश डालती है। अुदाहरणार्थ; अज्ञात, अगोचर, अज्ञेय, अनभिज्ञ और अपरिचित शब्दोंको ही लीजिअे। साधारणतया ये चारों शब्द अेक ही अर्थके द्योतक जान पड़ते हैं, परन्तु विचारपूर्वक देखनेपर अुनमें अेक अति सूक्ष्म भिन्नता भी दिखलाअी देगी, जिसके कारण अुनका प्रयोग भी पृथक्-पृथक् ढंगसे होगा।

जैसे अज्ञात वह, जिसे हम किसी रूपमें न जानते हों, अज्ञेय जिसका अस्तित्व हो, परन्तु जिसके सम्बन्धमें प्रयत्न करनेपर भी पूर्ण जानकारी न प्राप्त हो सके; अगोचर जिसका ज्ञान अिन्द्रियोंसे नहीं केवल बुद्धि और मनसे ही हो सके। बादमें जिस व्यक्तिको अेक दो बार देख चुके हों, वह परिचित और अिससे विपरीत स्थितिमें अपरिचित होगा अर्थात् जिसका परिचयके रूपमें ज्ञान न हो। अिसी प्रकार अनेक शब्दोंका विश्लेषण किया जा सकता है।

अिस पुस्तककी भूमिकामें मद्रासके राज्यपाल श्रीयुत श्रीप्रकाशने लिखा है कि "मुझे कितने ही शब्दोंकी व्याख्याकी पाण्डुलिपि देखनेका अवसर मिल चुका है। मैं तो चकित हो गया; क्योंकि बहुत-से साधारणसे साधारण शब्दोंके वास्तविक अर्थ और अुनके पर्यायोंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थमें सूक्ष्म भेद समझनेका मैंने अवसर पाया।" सच-मुच यह पुस्तक शब्दोंकी अिसी प्रकारकी व्याख्यासे भरी हुअी है और जैसा कि श्रीयुत श्रीप्रकाशजीने भूमिकामें लिखा है, अच्छा होता यदि अँग्रेजीमें दिअे गअे पर्यायवाची शब्द रोमन लिपिके स्थानपर नागरी लिपिमें लिखे जाते।

पुस्तक केवल हिन्दी सीखनेवालोंके लिअे ही नहीं, हिन्दीके विद्वानों, पत्रकारों और अध्यापकोंके लिअे भी बड़े कामकी है, जो अक्सर शब्दोंके प्रयोगमें भूलें किया करते हैं। पुस्तकके अन्तमें दी हुअी शब्दोंकी अनुक्रमणिका भी अुपयोगी है।

—कालिका प्रसाद दीक्षित 'कुसुमाकर'

विद्याधर राजकुमार (जीमूतवाहन)

अेकांकी : लेखक– प्रो. महेन्द्र भटनागर अेम अे.; प्रकाशक– स्वरूप ब्रदर्स, अिन्दौर; मूल्य ८ आना, पृष्ठ संख्या ३०।

प्रस्तुत अेकांकी मध्यभारतके प्रतिभाशाली तरुण प्रो. कवि महेन्द्र भटनागर द्वारा श्री हर्षवर्द्धन देव लिखित "नागानंद नाटकम्" का संक्षिप्त किन्तु यत्किंचित् परिवर्तित रूप है। भारतीय नाट्यपरम्पराके अनुसार यह नाटक भी सुखान्त है; पर लेखकने असाधारण और अलौकिक सत्वोंसे बचनेके लिअे अिसे दुखान्त ही रखा है—जो घटनाओंका अेक स्वाभाविक परिणाम है। अिसमें मूल नाटकको छोटाकर, न छोटा किअे जानेवाले १२ पात्रोंका समावेश किया गया है तथा मूल नाटकके मध्य भागका कथानक अिसमें नहीं है। यद्यपि संवादों, परिस्थितियों तथा घटनाओंके क्रममें नाटककारने कुछ परिवर्तन अवश्य किअे हैं, पर सर्वत्र मूल नाटककी आत्माको बनाअे रखा है। अिसका अुद्देश्य नैतिक है। परोपकारके लिअे जीमूतवाहन अपनी देहका बलिदान कर देता है। राष्ट्रीय नवनिर्माणमें अैसे भावोंका बड़ा महत्व है। भटनागरजीने अपनी सरस शैली, सुललित भाषा और चुस्त कथानक द्वारा बड़ा चित्ताकर्षक अेकांकी दिया है। प्रौढ़ शिक्षणके लिअे यह विशेष रूपसे अुपयोगी है। आकर्षक तिरंगा कवर, बढ़िया बड़े अक्षरोंकी छपाअी और सुन्दर गेट अपके कारण ग्राम-पुस्तकालयोंके लिअे संग्रहणीय है।

--प्रो० रामचरण महेन्द्र अेम. अे.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वकी दो महान् विभूतियाँ :

राष्ट्रके सर्वतोमुखी समुत्थानके लिअे सितम्बर मासमें जिन दो महापुरुषोंने जन्म लिया; अुनमें आर्यावर्त पुण्यभूमि भारतकी दो विश्व-विख्यात विभूतियाँ है सर्वपल्ली राधाकृष्णन् और आचार्य विनोबाजी। यद्यपि आज विश्वके राजनीतिक गगनपर हमारे प्रियदर्शी प्रधान-मंत्री पंडितजी ही सर्वाधिक जाज्वल्यमान नक्षत्र हैं; फिर भी भारतकी प्राचीन, पावनकारी और प्रबल ज्ञान-सम्पदाकी समग्र संस्कृतिके ये दो ही श्रेष्ठ अुत्तराधिकारी हैं जो अिस संकट-ग्रस्त व्याकुल विश्वपर भारतीय धर्म, भारतीय संस्कृति और भारतीय तत्वज्ञानकी गहरी छाप डाल रहे हैं और विदेशोंमें भारतकी प्रतिष्ठाको अूँचा अुठा रहे हैं। दुनिया सानन्दाश्चर्य अिनकी ओर देख रही है। भारत अिन दो विभूतियोंको अत्यन्त श्रद्धा, निष्ठा और भक्ति भावसे देखता है। विश्वमें विभूतियोंका प्रादुर्भाव लोकाभ्युदयके ही लिअे होता है—

भवोहि लोकाभ्युदयाय तादृशाम्।

पाँच सितम्बरको दक्षिण भारतमें, अेक छोटे-से गाँवमें, राधाकृष्णनका जन्म हुआ। माता-पितासे अिनको सु-संस्कार मिले। आपकी शिक्षा-दीक्षाका आरम्भ अेक मिशनरी क्रिश्चियन स्कूलमें हुआ था। कोमल बुद्धि भारतीय बालकोंको ये ओसाओ पादरी किस तरह फुसलाते—बहकाते हैं, जग जाहिर है यह बात। कहते हैं, अेक दिन अपने ओसाओ पादरी अध्यापकके साथ राधाकृष्ण किसी बातको लेकर झगड़ा कर बैठे कि दुनियामें केवल क्रिश्चियन–ख्रिस्ती–धर्मके पास ही सत्यकी ठेकेदारी नहीं है। बाअिबलमें कुछ सचाओ जरूर हो सकती है, परन्तु भारतीय धर्म, संस्कृति और भारतीय शास्त्रोंमें जो शाश्वत सत्यके तत्व भरे हुअे हैं अुनको असत्य ठहराना और अपनेको ही सत्य साबित करना सरासर असत्य है। सर्वपल्ली राधाकृष्णन्का व्यक्तित्व असाधारण है! स्वामी विवेकानन्द और महात्मा गाँधीकी आपके अूपर पूरी गहरी छाप पड़ी हुअी है। भारतकी समग्र दार्शनिकताका वे पूर्ण प्रतिनिधित्व करते हैं। वे भारतका सुन्दर भव्य रूप विश्वके सामने प्रस्तुत करते हैं। जब यह दुबला-पतला व्यक्ति बोलता है, भारतीय तत्त्वज्ञानकी आधुनिक व्याख्याको अिसके मुखसे सुनकर विश्वके बड़े-बड़े विश्वविद्यालयोंके दार्शनिक शिरोमणि साश्चर्य मुग्ध हो जाते हैं। वेदोंकी ऋचाअें, अुपनिषदोंकी सूक्तियाँ, जिसकी बाअिबलके वचन, जरथुस्तके अुपदेश, तथागत बुद्ध, साक्रेटिस और प्लेटोकी वाणीका धारा-प्रवाह राधाकृष्णके मुखसे निर्झरित होता है। प्रतिभा, कल्पना-शक्ति, जीवनका अुच्च आदर्श, अहंकार-शून्यता, सादगी और व्यक्तित्वमें विनम्रता, सीधा-सादा स्वच्छ वेश, सादा-जीवन और अुच्च विचार, प्लेन लिव्हिंग हाय थिंकिंगकी साकार सजीव प्रतिम हैं सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, भारतके अुपराष्ट्रपति।

× × ×

दिनांक ११ सितम्बरको, १८९५ में, सह्याद्रिकी अुपत्यका और सागरके तीर, प्रकृतिकी जहाँ अनुपम शोभा है, महाराष्ट्रके कोंकण प्रान्तमें, कोलाबा जिलेके गागोदे नामक अेक छोटे-से ग्राममें दूसरी विश्वविख्यात विभूति—दरिद्रनारायण विनोबाका जन्म हुआ। पिताका नाम श्री नरहरि और माताजीका श्रीमती रुक्मिणी। प्राचीन भारतीय संस्कृतिके पक्के पाबन्द अेक महाराष्ट्रीय माता-पितामें जो ब्राह्मणत्वकी सम्पूर्ण धर्म-निष्ठा होती है अुसकी विरासत विनोबाको मिली। मातासे अिन्हें जो दीक्षा मिली वह थी—दरिद्रों, अनाथ-अनाश्रितों, अपाहिजों तथा समाजके पददलित मानवोंकी सेवा और समर्पणकी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन् १९२० में गान्धीजीका युग आया सत्य और अहिंसाको लेकर। अुनकी अन्तरात्माकी गूँजने पराधीन गाफिल भारतको चेतना दी—अुत्तिष्ठ, जाग्रत, प्राप्य वरान् निबोधत। हजारों वर्षोंकी गुलामीकी चक्कीमें पिसे हुअे भारतको बन्धन-मुक्त करनेके लिअे गान्धीजीके व्रतकी दीक्षा जिन्होंने ली अुनमें विनोबाजी अेक कदम सबसे आगे हैं। गान्धीजीने ही सर्वप्रथम, विनोबाको आधुनिक भारतके सन्तके रूपमें हमारे सामने रखा और आज वे हमारे लिअे सन्त ज्ञानेश्वर, तुकाराम, कबीर और तुलसीदासकी कोटिके महान् पुरुष हैं।

अिस जर्जर दुबले-पतले शरीरके आदमीने आजसे छह वर्ष पहले सेवाग्राममें बापूकी कुटियाके समीप, सर्वोदय सम्मेलनमें प्रतिज्ञा की थी कि "मैं पैदल ही जाअूँगा"; सो वह आज भी त्रिविक्रम तीन डग भरता हुआ पैदल चला ही जा रहा है, सैकड़ों क्या, हजारों मील चल चुका है मंजिलपर मंजिल पार करता हुआ। वह रुकना नहीं जानता। भारतकी अन्तःशुद्धि, बहिःशुद्धि, श्रम, शान्ति और समर्पणके लिअे वह चला जा रहा है पैदल! कितना अमोघ, अ-डिग आत्म-विश्वास, आत्मबल–आत्म-संकल्प है यह! भारतमें और संसारमें आज रिश्वत, चोरी, लूट-पाट, चोरबाजारी, मारकाट और अनाचार–अनीतिका बोलबाला बढ़ गया है। यह सन्त विश्वभ्रातृत्व चाहता है। जहाँ-जहाँ वह जाता है प्रेम और विश्वासके साथ पुकारता है—"भाअियो, मैं तुम्हारा भाअी हूँ और तुमसे अेक भाअीके नाते ही कुछ कहने यहाँ आया हूँ। सब मेरे भाअी हैं गरीब, अमीर, जमींदार, मजदूर, किसान। यह जमीन सबकी है। जल सबका है, आकाश सबका है। सूर्यका प्रकाश सबका है। वैसे ही यह पृथ्वी भी सबकी है।" हम देख रहे हैं, भारतकी भूमिका नक्शा बदल रहा है। ५ करोड़ अेकड़ भूमि अेकत्रित करनेका अुसका सत्य संकल्प है और 'सत्य संकल्पाचा दाता भगवान' है। अुसकी वाणीका बल बढ़ता ही जा रहा है—भूदान, सम्पत्तिदान, श्रम-दान, बुद्धिदान, और सर्वस्वदान विश्वकी विषमता दूर करनेके लिअे। अिन महामानव विनोबाकी सत् संकल्प-संसिद्धिके लिअे विश्वात्मा जनता-जनार्दनसे हम अुनकी दीर्घायुकी कामना अपनी प्रार्थना द्वारा करें।

—ह० श०

हिन्दी साहित्य सम्मेलन विधेयक:

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयागमें अुपस्थित गत्यावरोध दूर करनेके लिअे सरकारकी ओरसे जो विधेयक अुत्तर प्रदेशीय विधान सभामें प्रस्तुत किया गया था, वह स्वीकार कर लिया गया है। पाठकोंको स्मरण होगा कि गत ३०, ३१ दिसम्बर १९५५ के दिनोंमें वर्धामें अ. भा. "हिन्दी-सम्मेलन" के नामसे हिन्दीके साहित्यिक, विद्वान, प्रेमी तथा अुसके प्रचार-प्रसार कार्यमें रत सेवकोंका सम्मेलन बुलाया गया था और अुसमें अुत्तर-प्रदेशीय सरकारसे अनुरोध अेवं प्रार्थना की गअी थी कि वह हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयागमें अुपस्थित गत्यावरोधको दूर करनेके लिअे अेक विधेयकके द्वारा कदम अुठाअे। वर्धाके हिन्दी सम्मेलनका यह प्रस्ताव हिन्दी सम्मेलन द्वारा नियुक्त समितिके संयोजक सेठ श्री गोविन्ददासजीने स्वयं जाकर अुत्तर प्रदेशीय सरकार तक पहुंचाया और हिन्दी संसारकी अभिलाषा तथा चिन्ता व्यक्त की। सरकार अुसपर विचार ही कर रही थी कि विभिन्न प्रदेशों तथा नगरोंके २५० से अधिक हिन्दी साहित्यिक, विद्वान तथा प्रेमियोंकी ओरसे अेक वक्तव्य अुत्तरप्रदेशके मुख्य-मंत्री श्री सम्पूर्णानन्दजीकी सेवामें अुपस्थित किया गया, जिसमें अिसी प्रकारके अेक विधेयककी मांग की गअी थी। ता. २२, २३ अगस्तको विधेयकपर विधान सभामें चर्चा हुअी और सदस्योंकी बहुत बड़ी बहुमतिने अिसका समर्थन किया यह सन्तोषका विषय है। अेक-दो व्यक्तियोंने अिसका विरोध किया अवश्य परन्तु अुनके वक्तव्यका सदनपर कोअी असर नहीं पड़ा।

पाठकोंको यह भी स्मरण होगा कि हिन्दी सम्मेलनके हिन्दी साहित्य सम्मेलन विषयक विधेयक सम्बन्धी प्रस्ताव-पर हमने अिन स्तम्भोंमें चिन्ता प्रकट की थी। सरकारका हस्तक्षेप हमें रुचिकर नहीं प्रतीत होता था। आपसके समझौतेसे जो बात सिद्ध होनी चाहिअे थी वह विधेयक द्वारा की जाय यह हमें अुचित नहीं लगा था और सरकार हस्तक्षेप करेगी तो सम्मेलनपर अपना वर्चस्व किस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार बनाअे रखनेका प्रयत्न करेगी और अिसमें कितना समय लगेगा अिसकी भी हमें बड़ी चिन्ता थी। परन्तु प्रसन्नताकी बात है कि विधेयककी जो रूपरेखा प्रकाशित हुअी अुसे देखते हुअे अिस प्रकारकी चिन्ताके लिअे अब कोअी अवकाश नहीं दिखाअी देता। विधेयकके अनुसार सरकार अुसके अध्यक्ष और मन्त्रीके साथ ११ सदस्योंकी अेक अंतरिम समिति नियुक्त करेगी। यह समिति सम्मेलनकी नियमावलि-नियम-अधिनियम बनाअेगी, अुसकी स्थाअी समितिका चुनाव कराअेगी और नियमावलि बन जानेपर ३० दिनके अन्दर सम्मेलनके सदस्योंकी अेक प्रमाणित सूची प्रकाशित करेगी।

अंतरिम समिति स्थापित होनेपर चार महीनेके अन्दर सम्मेलनके नियम-अधिनियम प्रकाशित किअे जाअेंगे और छह महीनेके अन्दर अथवा राज्य सरकार द्वारा विशेष आज्ञा द्वारा जो समय बढ़ा दिया जाय अुसके अन्दर अुन नियमोंके अनुसार स्थाअी समितिका प्रथम चुनाव कराअेगी और स्थाअी समिति तैयार हो जानेपर पन्द्रह दिनके अन्दर सम्मेलनकी व्यवस्था अुसे सौंप देगी। नियमावलि तथा सम्मेलनके प्रबन्धके सम्बन्धमें जो मुकद्दमे अदालतमें चल रहे हैं वे वापस कर लिअे जाअेंगे।

विधेयकका अुद्देश्य हिन्दी साहित्य सम्मेलनके गतिरोधको दूर कर अुसे पहलेकी तरह कार्य करने योग्य बनाना है, यह अिससे स्पष्ट हो जाता है। समयकी भी मर्यादा बांध दी गअी है। अभी अंतरिम समिति बननेमें कुछ समय लगेगा। विधेयक विधान-सभामें अुपस्थित होगा, फिर अुसपर राज्यपालसे अनुमति प्राप्त की जाअेगी। अिसमें कुछ समय तो लगेगा ही। परन्तु हमें आशा है, यह अंतरिम समिति शीघ्र ही कार्य करने लगेगी और जब हिन्दी साहित्य सम्मेलनका गतिरोध दूर होकर वह सार्वजनिक संस्थाके रूपमें हिन्दीका कार्य करने लगेगी तब सारे हिन्दी संसारमें प्रसन्नता फैल जाअेगी अिसमें सन्देह नहीं। हिन्दीका कार्य करनेवाली संस्थाअें वैसे ही बहुत कम हैं और हिन्दी साहित्य सम्मेलन जैसी पुरानी और कार्यशील संस्था निष्क्रिय हो जाय, तो वह हिन्दीके साहित्यिकों तथा विद्वानोंके लिअे सचमुच बड़े दुख और शर्मकी बात है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन फिरसे कार्य करने लगेगा तो हिन्दीके सेवाभावी कार्यकर्ताओंका भी अुससे अत्साह बढ़ेगा।

हिन्दी आयोगका प्रतिवेदन :

श्री बालसाहब खेरकी अध्यक्षतामें नियुक्त हिन्दी आयोग-राज्यभाषा आयोगका प्रतिवेदन आयोगकी ओरसे अगस्तके आरम्भमें ही राष्ट्रपतिके समक्ष पेश कर दिया गया है परन्तु अगस्त समाप्त होनेपर भी अुसे प्रकाशित नहीं किया गया है यह आश्चर्यकी बात है। राज्य-पुनर्गठनपर लोकसभामें चर्चा हो रही थी अुसके कारण देशका वातावरण बहुत तंग और ज्वालाग्राही बना हुआ था और अैसे वायुमण्डलमें अुस प्रतिवेदनको अभी प्रकाशित करना सम्भव है अुचित न समझा गया हो। भाषाका प्रश्न आज अैसा विकट बन गया है यह हमारे लिअे बड़े ही दुखकी बात है। हम क्या राष्ट्रीय दृष्टिसे अिन प्रश्नोंपर विचार करनेके लिअे तैयार नहीं? क्या प्रान्तीय भावनाअें, प्रान्तीय अस्मिता या प्रदेशाभिमान अितना प्रबल हो गया है कि हम अपनी भारतीय नागरिकता, भारतीय गौरव तथा राष्ट्रभिमानको भी भुलानेको तैयार हो गअे हैं? पहले तो अैसा प्रदेशाभिमान कभी नहीं देखा गया। वर्णाभिमान था, धर्माभिमान था, फिर भी सारा भारत सांस्कृतिक अेकताका अनुभव करता था। हमारे अेक प्रदेशके सन्त सब प्रदेशोंमें सम्मान पाते थे, भक्ति पाते थे, धर्माचार्योंका भी सर्वत्र स्वागत होता था। संगीत-कलाका लेन-देन सारे भारतवर्षमें होता था। आज जब हमें अेक भारतीयताकी भावनाकी सबसे अधिक आवश्यकता है, तभी क्या हम खण्ड-खण्ड होना चाहते हैं? बम्बअी, अहमदाबादके दंगोंका क्या रहस्य है? महाराष्ट्र, गुजरातमें जो आन्दोलन चल रहा है, अुसे समर्थन क्यों और कहांसे मिल रहा है? प्रत्येक भारतीयको अिसपर विचार करना चाहिअे और अपनी दुर्बलताको अनुभव कर अुसे दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिअे।

—मो० भ०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभारती मुझे बहुत प्रिय है !

गत जुलाअी ५६ की राष्ट्रभारतीका अंक मुझ-घुमक्कड़को बनारसमें मिला। तब रातके १० बज चुके थे। सोनेसे पेश्तर थोड़ासा स्वाध्याय करनेकी मेरी आदत है। करीब साढ़े ११ बजे तक पड़े-पड़े अिस अंकको पूरा पढ़ गया। मैं देखता हूं 'राष्ट्रभारती' प्रतिमास, पहले सप्ताहमें मेरे जैसे स्वाध्याअी प्रेमी पाठकोंके हाथमें पहुंच जाती है। पत्रिका समयके पालनमें 'पंक्चुअल' है। अिसकी दूसरी विशेषता है अिसकी सादगी, सुरुचिपूर्ण, अुच्चस्तरीय सुन्दर पाठ्य-सामग्री। स्टालोंपर मण्डरानेवाले सैकडों स्ट्रीट जर्नलोंकी तड़क-भड़क छीना-झपटी और आत्म-विज्ञापन-बाजीसे कोसों दूर। हिन्दीकी चुनी हुअी कुछ ही श्रेष्ठ पत्रिकाओंमेंसे अेक।

जुलाअी अंकका मुखपृष्ठ बहुत कलात्मक, आकर्षक, शुचि और सुन्दर है। पहले ही पृष्ठपर पंडित माखनलालजीकी छोटी-सी कविता है। हिन्दीके अुस व्रज तथा अवधी युगमें सूर तथा तुलसी, व्रजेश नन्दबाबा और जसोदा मांके और अवधेश दशरथ कौशल्याके कृष्ण और रामकी शिशुता झलकाती नन्ही नन्ही द्वै दन्त पंक्तियोंका वात्सल्यमय सजीव चित्रण करनेमें सफल हुअे, और खड़ी बोली हिन्दीके अिस आधुनिक युगमें श्री माखनलालजी 'भारतीय आत्मा' और स्वर्गीया सुभद्राकुमारीजी चौहान ये दो ही कवि बालमानस और मातृ-हृदयके वात्सल्यकी सुन्दर स्वप्नमय सृष्टि सफलतापूर्वक कर सके हैं।

दूसरे पृष्ठपर है "हमारा भारत", कुल मिलाकर थोड़ी-सी २४ पंक्तियोंमें अितने महान् स्वतन्त्र भारतका संविधानपूर्ण अति संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करनेमें आपको गागरमें सागर-जैसी सफलता मिली है। अिस अंककी कविताओंमें सर्वश्री डा. रांगेय राघव, शिवकुमार श्रीवास्तव, अनन्तकुमार 'पाषाण' और देवप्रकाश गुप्तकी रचनाअें अुत्तम हैं। जबलपुरके श्री पुरुषोत्तम खरेकी कविता कभी-कभी पाठकको अूँचे धरातलपर ले जाती है; किन्तु अुनका अिस अंकका गीत बहुत ही साधारण है।

लेखोंमें, डॉ. कन्हैयालाल सहल, शंकर कृष्णतीर्थ, मंगलकिशोर पांडेय, श्रीमती प्रो. कुसुमावतीजी देशपांडे (मराठी) की रचनाअें प्रौढ़ और पठनयोग्य हैं। खडगपुरके नन्दकुमार पाठक अेक नवीन अुदीयमान कहानीकार हैं। "सम्मानकी भीड़में" अुनकी कहानी अेक सुन्दर मनोमन्थनका वातावरण पेश करती है। राष्ट्रभारती मनीषी लेखकोंका सहयोग पाती है और नअे-नअे लेखकोंको प्रोत्साहित करती है, लेखकोंको यथाशक्ति 'पत्रपुष्प' भेंटका 'राष्ट्रभारती' बराबर पालन करती है। और रचनाओंके प्रकाशनमें आपकी यह अल्हड़ शर्त भी खूब है कि जैसे आपने मेरे पत्रके अुत्तरमें स्पष्ट किया था अुस दिन, कि जो रचना आपके मन और मस्तिष्कको मुग्धकर मजबूर कर देती है अुसी अ-प्रकाशित रचनाको आप सर—आँखोंपर रखकर प्रकाशित करते हैं। अन्यथा आप विवश हैं।

आपके अगस्त और सितम्बरके अंक पढ़ लेनेपर कुछ लिखूँगा। आपने जुलाअीमें अपने पत्रमें लिखा था कि अगस्तके अंकमें गौरीशंकर लहरीजीकी कविता "अुस ९ अगस्त '४२ की यादमें जब मौत सिंगार किअे थी" और भगवान लोकमान्य पर परदेशीका 'लोकतिलक' और दक्षिण महाकवि कम्ब और अुनकी रामायण; तथा रामेश्वरदयाल दुबेकी 'बिन बरसे मत जाना बादल' कविता तथा सितम्बरके अंकमें तुलसी-साहित्यके पारंगत पंडित डॉ. ब. प्र. मिश्रका "मानसमें सन्त और असन्त" निरूपण, साहित्य-मनीषी अगरचन्द नाहटाका "राजस्थानी भाषा साहित्य" पर लेख जरूर पढ़ लूं। बंगलाके अुदीयमान कहानीकार बाबू नवेन्दुघोषकी कहानी—हृदय हिला देनेवाली कहानी, जिसमें अणुबम्ब और हाअीड्रोजन बम्बकी ध्वंसात्मक भीषण और आधुनिक सभ्यताकी नग्न अमंगल वेशमअी बंगला कहानीको पढ़ लेनेका भी आपका आग्रह है। जरूर पढ़ूंगा। घुमक्कड़ हूं, जब घर वापस लौटूंगा, दोनों अंक पढ़ूंगा।

—वाणीभूषण मिश्र
बी. अे. (ऑनर्स), बनारस।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्धा समितिके प्रचारक बन्धुओंसे

निवेदन !

राष्ट्रभाषा प्रचार समितिका परिवार बहुत विशाल है। अिस परिवारमें ३००० के लगभग सेवाभावी मिशनरी प्रचारक हैं और लगभग २५०० केन्द्र-व्यवस्थापक भी हैं। ये सभी भारतके अ-हिन्दी क्षेत्रोंमें राष्ट्रभाषाका प्रचार कर रहे हैं। समितिके प्रति स्नेह-सहानुभूति रखनेवाले हिन्दी-प्रेमियोंकी संख्या भी बहुत बड़ी है।

'राष्ट्रभारती' समितिकी अन्तरप्रान्तीय (भारतीय) साहित्य और संस्कृतिकी प्रतिनिधि मासिक पत्रिका है। अिसकी अुपयोगिता और आवश्यकता आप लोगोंसे छिपी नहीं है। अपनी अितनी सस्ती, विविध विषय-सम्पन्न, अेवं सुरुचिपूर्ण मनोरंजक, ज्ञानपोषक, सुन्दर, अेक अूँचे दर्जेकी साहित्यिक पत्रिकाको अगर आप लोग चाहें तो बहुत ही शीघ्र स्वावलम्बी बना सकते हैं। यह अितनी नियमित है कि प्रतिमास १ली तारीखको पाठकोंके हाथमें ही पहुँच जाती है। वार्षिक मूल्य ६ रुपया, अर्धवार्षिक ३॥) और अेक अंकका दस आना है। स्कूल-कालेजों और पुस्तकालय-वाचनालयोंके लिअे अिसका वार्षिक चन्दा ५) रु. रखा गया है।

प्रत्येक प्रचारक और केन्द्र-व्यवस्थापक 'राष्ट्रभारती' का ५) रु. देकर स्वयं ग्राहक बने तथा अपने-अपने प्रचार केन्द्रमें कम-से-कम अेक-अेक, नया ग्राहक बना दे, तो अिसकी ग्राहक-संख्या बढ़ जायगी और तब यह स्वावलम्बी बन जायगी। सिर्फ आर्थिक लाभकी दृष्टिसे ही हमें नहीं सोचना है; भारतीय विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं और साहित्य और संस्कृतिके अुच्च अुद्देश्यको भी पूरा करनेके लिअे अिस पत्रिकाके पाठकोंकी संख्या बढ़ाना, ग्राहक बनाना हम–राष्ट्रभाषा हिन्दीके मिशनरी प्रचारकोंका अत्यन्त आवश्यक कर्तव्य है। यह मुश्किल नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि आप लोग 'राष्ट्रभारती' के ग्राहक खुद बनेंगे, दूसरोंको बनाअेंगे और 'राष्ट्रभारती' की पाठक-संख्या बढ़ानेमें अपनी समितिकी सहायता करेंगे। मुझे विश्वास है।

आपका—

मोहनलाल भट्ट

मंत्री, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

रजिस्टर्ड नं० ना० १५
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी-दिवस समारोह

(१४ सितम्बर—१९५६)

राष्ट्रभाषा हिन्दीकी संस्थाओं तथा राष्ट्रभाषा प्रेमियोंसे अनुरोध

राष्ट्रभाषा प्रचारक बन्धुओं तथा हिन्दीका प्रचार-कार्य करनेवाली संस्थाओं तथा राष्ट्रभाषा प्रेमियोंके लिअे १४ सितम्बर अेक सांस्कृतिक पर्व है। अिसी दिन विधान परिषद्ने हिन्दीको राष्ट्रभाषा और नागरी लिपिको राष्ट्रलिपिके रूपमें स्वीकार किया था। यह प्रसन्नताका विषय है कि धीरे-धीरे हिन्दीको राष्ट्रीय गौरव प्राप्त होता जा रहा है और न केवल वह देशमें किन्तु विदेशोंमें भी गौरव प्राप्त कर रही है। अितना होनेपर भी यह मानना ही पड़ेगा कि अिस दिशामें अभी बहुत कार्य करना शेष है।

गत वर्षोंसे राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके अनुरोधपर सम्पूर्ण भारतमें 'हिन्दी-दिवस' १४ सितम्बरको बड़े अुत्साहसे मनाया जा रहा है। अिस वर्ष भी और अधिक अुत्साहके साथ आगामी १४ सितम्बरको हमें 'हिन्दी-दिवस' मनाना है। 'हिन्दी-दिवस' का संक्षिप्त कार्यक्रम अिस प्रकार है।

प्रात :—ध्वज-वन्दन और प्रतिज्ञा-वाचन

सन्ध्या :—सार्वजनिक सभा तथा सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि

अिसके अलावा अपनी सुविधानुसार अन्य कार्यक्रम भी किअे जा सकते हैं। अुदाहरणके तौरपर—

१—प्रभात फेरी

२—जुलूस

३—हिन्दी-दिवस बैज वितरण

४—सार्वजनिक सभा तथा सांकृतिक-कार्यक्रम

प्रभात फेरी तथा जुलूसमें निम्न नारोंका प्रयोग किया जाय :—

१४ सितम्बर ..... जिन्दाबाद
हिन्दी-दिवस .... अमर हो
जय हिन्दी ..... जय नागरी
भारत जननी ..... अेक हृदय हो।

अुस दिनके समाचार-पत्रोंमें राष्ट्रभाषा हिन्दीपर विशेष लेख प्रकाशित करवानेका प्रयत्न आदि।

आशा है, आप प्रतिवर्षके अनुसार अिस वर्ष भी सोत्साह "हिन्दी-दिवस" मनाकर राष्ट्रीयता तथा राष्ट्रभाषाको बल देनेमें अपना अमूल्य सहयोग देंगे।

(मोहनलाल भट्ट)
मंत्री
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा.

मुद्रक तथा प्रकाशक:—मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

अक्टूबर

१९५६

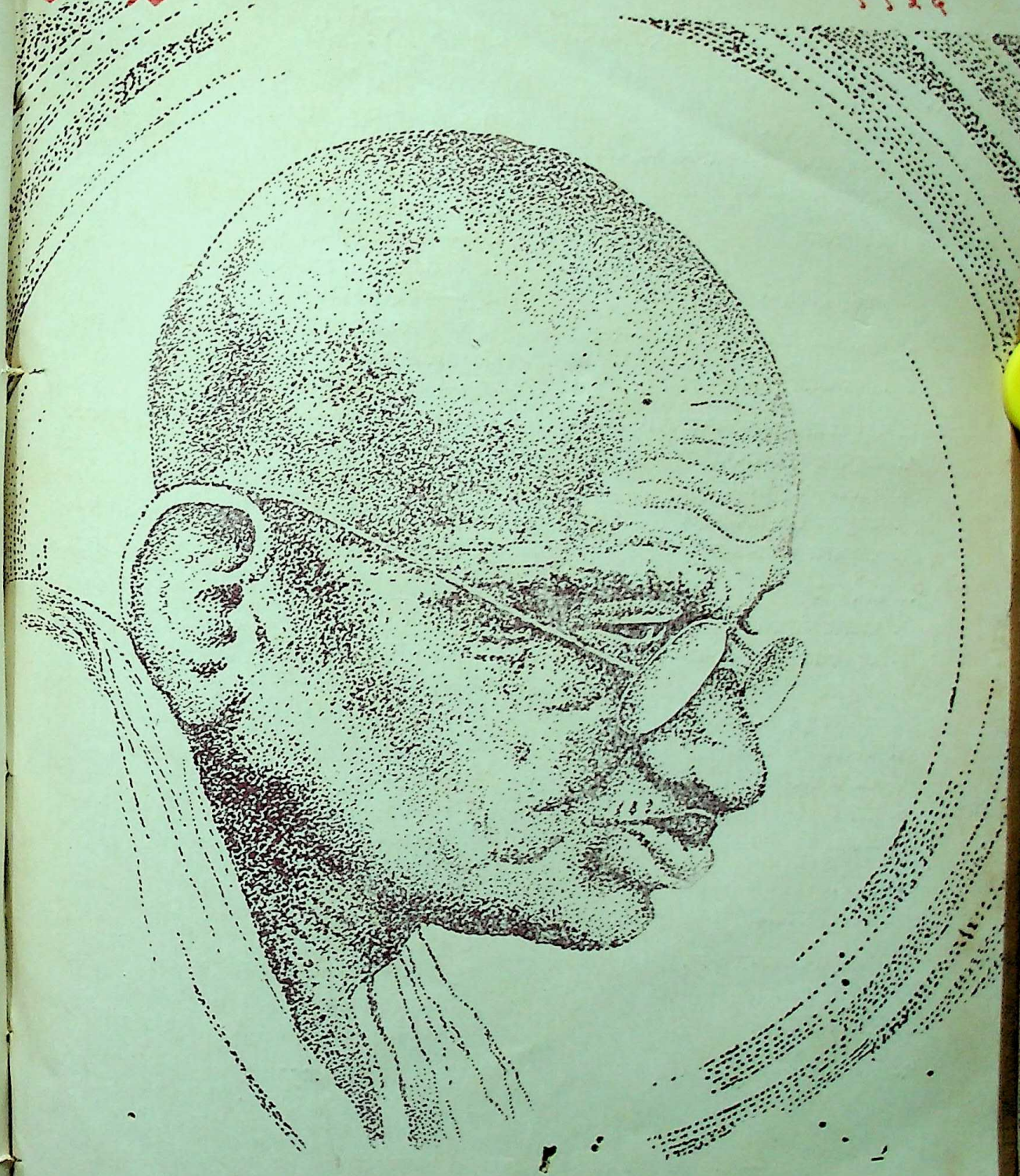

अिनकी ८८ वीं जन्मजयन्तीके पुण्यस्मरणमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[बिहार, मध्यप्रदेश, भोपाल, सौराष्ट्र आदि राज्योंके शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत पत्रिका]

* अिस अंकमें कहाँ क्या पढ़ेंगे *

		लेखक	पृ. सं.
१. लेख :			
१. गांधीजी (संस्मरण)	...	श्री महापण्डित राहुल सांकृत्यायन	६२६
२. बापूकी यादमें (संस्मरणात्मक श्रद्धांजलि)	...	श्री बनारसीदास चतुर्वेदी	६२८
३. 'महात्मा गांधीकी जय !'	...	श्री परदेशी साहित्यरत्न	६३३
४. कन्नड़ रंगमंच	...	श्री आद्य रंगाचार्य अनु०—श्री नारायण दत्त	६३६
५. व्रत–अुद्यापन (बंगला)	...	स्व. गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर अनु०—श्री हरिशंकर शर्मा	६४०
६. हिन्दी शब्दोंकी व्युत्पत्ति (लेखांक–२)	...	श्री पं. बेचरदास दोशी	६५४
७. तिलक जयंति (तमिल)	...	श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य अनु०—श्री रा. वीळिनाथन	६४९
८. बहुमुखी प्रतिभा-सम्पन्न नाटककार गोविन्ददास	...	श्री राजेन्द्रप्रसाद अवस्थी 'तृषित'	६५१
९. कल्हणकृत राजतरंगिणी	...	श्री मंगलकिशोर पाण्डेय	६५५
१०. प्रज्ञाचक्षु पं. सुखलालजी	...	श्री दलसुख मालवणिया	६६७
११. जयपुरका सांस्कृतिक महत्व	...	डा. कन्हैयालाल सहल अेम. अे., पी. अेच. डी.	६७१
१२. राष्ट्रभाषा भारत-आशा	...	श्री अुदयशंकर भट्ट	६८०
२. कविता :			
१. माटीका मोहन !	...	श्री रंगनाथ राकेश	६२३
२. वह विराट पुरुष (गद्य-काव्य)	...	श्री रामनारायण अुपाध्याय	६२४
३. सहस्रार	...	डा. कन्हैयालाल सहल, अेम. अे., पी. अेच. डी.	६२५
४. अै शब्द तुम्हें शत नमस्कार	...	श्री श्रीकान्त जोशी	६४३
५. कविताकी कविता	...	श्री पुरुषोत्तम खरे	६४४
६. छाँहके छन्द	...	श्री भारतभूषण अग्रवाल	६५९
७. गीत !	...	श्री ललित गोस्वामी	६७०
८. बरसात !	...	श्री शंकर शेष	६८५
३. कहानी :			
१. 'मनकी परछांअी'	...	श्री जी. अेस. तिवारी	६६०
२. 'गरुड़खंभ दासय्या (कन्नड़)	...	श्री गुरुराम आयंगार अनुवादिका—श्रीमती राजलक्ष्मी राघवन	६७८
४. साहित्यालोचन		श्री विनयमोहन शर्मा, श्री मदनमोहन शर्मा, अेम. अे. साहित्य-रत्न	६८६
५. सम्पादकीय	...	...	६९०

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य ८० आना

रियायत— समितिके सभी प्रमाणित प्रचारकों, केन्द्र-व्यवस्थापकों और स्कूल-कालेजों तथा सार्वजनिक पुस्तकालय-वाचनालयोंको अेक वर्षतक केवल ५) रु. वार्षिक चन्देमें मिलेगी।

पता—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[समग्र भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

वर्ष ६] अक्तूबर–१९५६ [अंक १०

माटीका मोहन !

—रंगनाथ राकेश

(१)

पांशु-पांशुके रन्ध्र-रन्ध्रमें माटीका मोहन फूट रहा !
संसृतिका सर्जन और पतन;
अनियंत्रित–जीवन–जरा–मरण,
निन्दा-कलंक-ईर्ष्याका व्रण;
कर सका शैल भी नहीं वरण !
पर माटीका सच्चा साधक अिनसे भी अूपर हूक रहा !!

(२)

पंक और पानीमें अंतर ?
गति-हीन अंबु ही तो कीचड़,
गतिमय चपला बँधी नहीं तो–
युग-युगसे हहर रहा अंबर !
वर्ण-जाति-अक्षांशोंकी सीमाको, वह दह-दह करता फूंक रहा !!

(३)

काल-केतु भी कर्मचन्द्रसे हारा;
स्नेह-भरोसे सिंधु बाँधती राका-कारा!
आँसूके गीले धागोंसे बाँधा जिसने––
सारी वसुधा, वह माटीका बापू प्यारा !
विष-प्याला, शूली, गोलीका अितिहास सर्वदा अमर रहा !
पांशु-पांशुके रन्ध्र-रन्ध्रमें माटीका मोहन फूट रहा !!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह विराट पुरुष

—रामनारायण अुपाध्याय

सुदूर पूर्वाचलकी कन्दराओंमेंसे वह निकला, अुसने समुद्र-स्नान किया, और चल दिया अपनी मंजिलकी ओर।

बड़ी सुबह खेत जानेवाले किसानोंने अुसे प्रणाम किया, मन्दिरके पुजारीने अुसे अर्घ्य चढ़ाया, और गाँवके चरवाहेने कुछ दूर तक अुसका संग निबाहा।

वह श्वेत वस्त्रोंपर श्वेत रंगकी चादर ओढ़े था, और अुसका अुन्नत ललाट सूर्यकी तरह चमक रहा था।

वह सहस्रों भुजाओंवाला था, और अुसके कदम सन-सन करती वायुसे होड़ ले रहे थे।

वह बड़ी-बड़ी नदियों, पर्वतों, और मैदानोंको अुलांघता, और अपने विशाल बाहुओंसे समयके पृष्ठोंको अुलटता चला जा रहा था।

दिन भर चलनेके बाद जब वह अपनी मंजिलके नजदीक पहुँचा, तो खेतसे लौटते किसानोंने अुसे पुनः प्रणाम किया, और गायोंको चराकर लौटता हुआ चरवाहा अुससे पुनः आ मिला।

साँझ पड़े धूपके बच्चोंने वृक्षोंकी अूँचीसे-अूँची चोटीपर चढ़कर अुसे बिदा दी।

और छायाने, बड़े हर्षसे ललककर अुसके चरण छू लिअे।

दिनभरका हारा-थका, होनेसे अुसने पुनः पश्चिमी समुद्रमें स्नान किया।

और सुदूर अस्ताचलकी कन्दराओंमें चला गया!

"आज जब विश्व-गगन अणु और हाअिड्रोजन बम्बोंके युद्धके बादलोंसे अेक छोरसे दूसरे छोरतक आच्छादित है, जब विज्ञानके भयंकर विनाशकारी यंत्र मानव-सभ्यताको भू-तलसे मटियामेट करनेको आतुर दिखाअी पड़ रहे हैं, जब स्वार्थी भौतिकवाद मानवीय आदर्शोंको कुचल रहा है और संसार सर्वसंहारके भयसे पीड़ित, अुत्पीड़ित, हाहाकार कर रहा है तो गान्धी और अुसका सन्देश व्याकुल मानवताको शान्ति और धीरजका अमृत प्रदान करता है।.....

आज यद्यपि गान्धीजी हमारे बीचमें नहीं हैं, तो भी अुनकी वाणी हमारे कानोंमें गूंजती है और हमारा पथ-प्रदर्शन करती है। अुन्हींके दिखाअे हुअे मार्गपर चलकर आज जवाहरलाल नेहरू विश्वव्यापी शान्तिका दूत बन गया है।..."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहस्रार

—डॉ० कन्हैयालाल सहल

अपने अन्तस्का स्नेह-दान
देकर तुमने हे अमर-ज्योति !
प्रज्वलित किया था ज्योति-दीप
निष्कम्प शिखाकी लौ जिसकी
जलती रहती, अविरत, पल-पल
अणुके भी झंझावातोंमें !

* * *

दुनियाके वे जो धुरी-राष्ट्र
अगणित-से जिनके प्राण-पोत
हिंसाकी अुन चट्टानोंसे
टकराकर होते चूर-चूर
पर देव ! बने तुम
ज्योति-सदन
जिसका बिखरा आलोक सदा
मानवताका कर रहा त्राण ।

* * *

दुनियाके जितने भौतिक जन
मिट्टीसे जिनका निर्मित तन
वे सबके सब अवसरवादी
पर रहे समयसे आगे तुम
या हुआ काल-फन नत हरदम ?
बढ़ते ही तुम तो रहे, समय भी साथ तुम्हारे चल न सका
वह पिछड़ गया, तुम बढ़े चले !
तुम वर्तमानमें ही भविष्यको ले आअे !
युग सह न सका !
तुम समय-अुदधिके विकसित थे क्या अेक कमल ?
जो युगासीन रहकर भी युगसे अूपर ही थे अुठे रहे!
नव सहस्रार अुस अमल-कमलकी ज्योति अमर
हे अमर-ज्योति !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गांधीजी

(अेक संस्मरण)

—राहुल सांकृत्यायन

मैं गान्धीजीका भक्त कभी नहीं बन सका, लेकिन अुनका प्रशंसक और कभी-कभी प्रभावित भी रहा। कारण यही था, कि मैं भक्ति-प्रधान नहीं बुद्धिप्रधान वृत्ति-वाला आदमी हूं। मुझे लोकमान्य पहले बहुत आकर्षक रहे, और मार्क्सके सामने आनेपर ही अुनको द्वितीय स्थान देनेके लिअे बाध्य हुआ। १९१४–१९१५ में पहलेपहल राष्ट्र और उसकी स्वतन्त्रताका भाव मेरे हृदयमें भरने लगा। उस समय तिलक–बंगाल क्रांति-कारी और कर्मवीर गांधी दोनोंकी बातें मेरे कानोंमें पड़ीं, और दोनोंने राष्ट्रीय भावना भरी। गान्धीजी अभी शायद दक्षिण आफ्रिकामें ही थे, लेकिन उनके सम्बन्धकी पुस्तकें और हिन्दी पत्रोंमें लेख पढ़नेको मिलते थे। अुनका अेक फोटो अब भी मेरे मानस-पटलमें अंकित है, जिसमें वह कुर्ता पहने, कन्धेमें झोला डाले हाथमें शायद डंडा लिअे खड़े हैं। सिरपर टोपी नहीं। अुनकी सादगीने अितना प्रभावित किया, कि मैं भी स्वदेशी मोटे कपड़े, कुर्ता-धोती पहनने लगा। अपने मठ छपरा जिलेकी जमींदारीके गांवमें गया, तो जाड़ेके दिनोंके लिअे जुला-हेके हाथके करघेसे बुने मोटे कपड़ेकी चौबन्दी सिलवाअी, जिसे देखकर महन्त गुरुजीको दुख हुआ, कि अिससे अिनकी नामहंसाअी होगी। मुझे शुद्ध अूनी फलालैन या किसी और कीमती कपड़ेकी चौबन्दी बनवानी चाहिअे थी। अुनको नई दुनियाका क्या पता था।

छोटी ही जीवनियां सही, पर गान्धीजीके विचा-रोंको जाननेका अुस समय मौका मिला था। लेकिन मेरा तो अुस समयका आदर्श वाक्य था—"असिना गीतया चैव जअिश्ये भुवनत्रयम्।" मैं शठके सामने अहिंसा नहीं, शाठ्यको पसन्द करता था। पर, गान्धीजीका काम करनेका जो ढंग था, वह बहुत गम्भीर था। अिसे मुझे असहयोगके दिनोंमें मानना ही पड़ा। आखिर जनताकी शक्तिके बलपर ही हम अपने देशको मुक्त कर सकते थे, और हरेक भारतवासीके हृदयमें–शिक्षित ही नहीं, अशिक्षित ग्रामीण तकके हृदयमें भी स्वतन्त्रताकी लगन पैदा करनेमें उनका रास्ता अमोघ सिद्ध हुआ, और अुसीके बलपर अन्तमें हमें आजादी प्राप्त करनेमें भारी सफलता मिली।

मेरा राजनीतिक कार्यक्षेत्र बराबर छपरा जिला रहा, जो चम्पारनकी सीमापर है और बोली-वाणीसे दोनों जिले एक हैं। बल्कि अंग्रेजोंके आदिम शासनमें दोनों एक ही सारन जिलेमें सम्मिलित थे। बीचमें केवल गंडक दोनोंको अलग करती है। गान्धीजी जब चम्पारनमें थे, अुस समय मैं वहां नहीं था। जब अुनकी विजय-दुंदुभी बजने लगी थी, तब मैं वहां पहुंचा था। गांवोंमें भी लोग गान्धी साहबकी कथाअें सुनाया करते थे। वहां रातके वक्त "लौरिकी", "सौभनैका", "कुंवर-विजअी" आदि लम्बे पंवाड़े गाया करते थे। मुझे भी अुनके सुननेका शौक था। मैंने बल्कि प्रयत्न नहीं किया, कि वह गान्धीजीका भी अेक पंवाड़ा गाअें। यह असहयोगसे पहलेकी बात है।

गान्धीजीका प्रथम दर्शन, जहां तक मुझे याद है, गौहाटी-कांग्रेसमें १९२६ में हुआ, और अगले सालके आरंभमें वह छपरामें घूमनेके लिअे आअे। छपरा जिलेकी कांग्रेसका प्रमुख नेता होनेके कारण अुनके स्वागत और सभाओंके प्रबन्ध करनेका मुख्य भार मुझपर था। अनावश्यक तौरसे बड़े नेताओंसे घनिष्टता स्थापित करना मेरे स्वभावमें नहीं है। इसलिअे मैं प्रबन्ध ही में लगा रहता था। अेक या दो दिनके लिअे गांधीजी डॉ. राजेन्द्र बाबूके गांव जीरादेअिमें विश्राम करनेके लिअे ठहर गअे। अुस समय मैं भी वहां ठहरा; और राजेन्द्र बाबूके कहने और परिचय करानेसे मैं भी अुनके पास गया। मामूली ही शिष्टाचारकी बात हुअी होगी। वस्तुतः मैं अैसी कोअी जिज्ञासा नहीं रखता था, जिसकी पूर्ति गांधीजी करते। भक्तहृदय नहीं था, कि दरस-परसके लिअे लालाअित रहता, लेकिन अुनकी महत्ताको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं अस्वीकार नहीं करता था। चरखेके अस्थाओी महत्वको मैं मानता था और अुसी ख्यालसे मैंने अपने अेकमात्र थानेमें कओी सौ चरखे अिकट्ठा बनवाअे और बाढ़के दिनोंमें बंटवाअे थे। खादीका कांग्रेसी भण्डार भी खोला था। अिससे मालूम होगा, कि अेकांशतः अुपेक्षाकी दृष्टिसे मैं खादीको नहीं देखता था।

गान्धीजीके अन्तिम दर्शन १९३४ में पटनामें थोड़ी देरके लिअे हुअे। भूकम्पकी सहायताका काम हो रहा था। अुसी सिलसिलेमें गान्धीजी भी आअे थे। अुनकी अेक अंग्रेज महिला शिष्या पहिलेसे बिना प्रबन्ध किअे जल्दी जहाजसे इंगलैण्ड जाना चाहती थी। कोलम्बोमें ही स्थान मिलनेकी संभावना थी। वहां किसी परिचितकी अवश्यकता थी। राजेन्द्र बाबूने मेरा नाम लिया, कि अुनके वहां कोओी परिचित होंगे। अिसी सिलसिलेमें मैं अुनके सामने गया, और दो मिनटमें बात करके चला आया। तार दे दिया और महिलाका प्रबन्ध हो गया।

संभव है, अिनके अतिरिक्त भी कभी कांग्रेसके समय गान्धीजीका दर्शन हो गया हो, पर बात करनेका अवसर सिर्फ दो ही मर्तबे आया, जिससे भी मैंने अधिक लाभ नहीं अुठाया, जिसका कारण स्पष्ट ही है।

पर, ३० जनवरी १९४८ की शामकी भयंकर घटनाको सुनकर तो मैं स्तब्ध रह गया। अुस दिन साहित्य-सम्मेलनके सभापतिके तौरपर घूमते हुअे मैं मथुरामें था। अेक चाय-पार्टीमें बैठा था। लोगोंने चाय पी ली थी। अिसी वक्त अेक आदमीने दौड़कर कहा—"दिल्लीमें गान्धीजीको किसीने गोली मार दी।" भला यह विश्वास करनेकी बात थी? अजातशत्रु हम पौराणिक गाथाओंमें पढ़ते थे, या अैसे आदमीका नाम जो क्रूरताकी मूर्ति था; पर यहां सच्चा और साकार अजातशत्रु हमारे बीच घूमता था। अुसपर किसी आतताअीने हाथ छोड़ा होगा, अिसे मन विश्वास करनेको तैयार नहीं था। आदमीने कहा: "रेडियो बार-बार अिस खबरको दोहरा रहा है।" तुरन्त मैं और मेरे साथी नीचे अुतरकर सड़कपर रेडियोके सामने गअे, जहां और लोग भी थे। अब कैसे अिस खबरको झूठी कहा जा सकता था। मैं बतला चूका हूं, शठ और आतताअीके प्रति अहिंसा बरतना मुझे कभी नहीं स्वीकार हुआ। मेरा हृदय दुखके साथ अपार घृणासे भर गया। वर्षों पहले पढ़ी चौपाअी मुंहमें दोहराने लगा—जो "नहि दण्ड करहुं शठ तोरा, भ्रष्ट होअि श्रुतिमारग मोरा।" दण्ड तो शठको मिलने ही वाला था और मिला, पर क्या अुससे हम अपनी खोअी निधिको पा सकेंगे? गान्धीजी अब तक मेरे हृदयमें निर्लेपसे रहे, किन्तु अब वह अुसमें समा गअे। अिसका यह अर्थ नहीं, कि मेरे मस्तिष्कमें पीछे कोअी परिवर्तन हुआ, पर हृदयमें अवश्य भारी परिवर्तन हुआ। मैं समझने लगा, गान्धीजी मानवकी तुला थे। जो गुण अुनमें थे, वह गुण हरेकके लिअे अनुकरणीय आदर्श हैं। जो दोष अुनमें थे, अुनसे मुक्त मानवका ढूंढ़ना बेकार है। अुन्होंने अपने जीवनका क्षण-क्षण अपने देश और मानवताके लिअे अर्पण किया। और अन्तमें अपने जीवनकी समाप्ति भी अुसीके लिअे की। अपने जीवनके कण-कणका अितना मूल्य शायद किसीने नहीं वसूल किया। अिस विषयमें वह पक्के बनिया थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बापूकी यादमें

—बनारसीदास चतुर्वेदी

[श्रद्धेय पंडित चतुर्वेदीजीका यह संस्मरण कअी दृष्टियोंसे अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जो सामग्री अुन्होंने अिसमें प्रस्तुत की है वह हमारे लिअे बहुत विश्वसनीय और प्रेरणाप्रद है। अिस संस्मरणात्मक लेखमें वे बाहरसे भीतरतक पूरे अीमानदार हैं। पंडितजीके पीछे हाथ धोकर पड़े रहे हम दो सप्ताहतक, और हमारे तीन-तीन पैसोंके कुछ टेलिग्राम तकाजेपर तकाजा करते हुअे नागपुरसे धड़ाधड़ ९९ नॉर्थ अेवेन्यु, नअी दिल्ली पहुँचे तब कहीं जाकर हमारी प्रेरणासे ही 'राष्ट्रभारती' के लिअे लेखकने यह संस्मरण लिख भेजा! चतुर्वेदीजी तबियतके बड़े फक्कड़ हैं। अपने लेखों, विचारों और व्यवहारोंमें पूरे फक्कड़! आपके लेखोंपर सभी पत्र-पत्रिकाओंको प्रकाशित करनेका अधिकार रहता है, अुनकी रचना मुश्तरका होती है अर्थात् जिसपर कअी हिन्दी पत्र-पत्रिकाओंका अेकसा अधिकार रहता है। हम दिनांक २ अक्टूबरके पवित्र दिनके अुपलक्षमें अपने पाठकोंको यह संस्मरण भेंट करते हैं। —सम्पादक]

बापूके प्रथम दर्शन करनेका सौभाग्य मुझे सन् १९१८ के प्रारम्भमें प्राप्त हुआ था, जब कि वे हिन्दी-साहित्य सम्मेलनका सभापतित्व करनेके लिअे अिन्दौर पधारे थे। अुस समयका मुझे अितना ही स्मरण है कि वे अुन दिनों काठियावाड़ी पगड़ी पहनते थे। स्टेशनकी अुस भीड़में दूरसे ही अुनके दर्शन हुअे थे। फिर अधिवेशनके अवसरपर तो अनेक बार दर्शन हुअे। चूंकि अुसके चार वर्ष पहलेसे ही मेरी रुचि प्रवासी-भारतीयोंके विषयमें हो गअी थी अिसलिअे बापूसे पत्र-व्यवहार तो सन् १९१५ से ही होता रहा था। सम्मेलनके साहित्य तथा प्रदर्शिनी विभागके मन्त्री होनेके कारण मुझे अुनकी कुछ सेवा करनेका अेक अवसर और भी मिल गया—यानी बापूने जो दो प्रश्न भारतके शिक्षा-विशेषज्ञों, राजनैतिक नेताओं तथा साहित्यसेवियोंके नाम भेजे थे अुनके अुत्तरोंको सम्पादित करके साहित्य-सम्मेलन द्वारा छपानेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था। अेक प्रश्न था मातृभाषाओं द्वारा शिक्षा देनेका और दूसरा था हिन्दीके राष्ट्रभाषा होनेके विषयमें।

बापू जहां ठहरे हुअे थे वहां स्वयंसेवकोंका कठोर पहरा था। स्वर्गीय सत्यनारायण कविरत्नको अुनसे मिलानेके लिअे ले गया था, पर स्वयंसेवकोंने जाने नहीं दिया। हम लोग बहुत देरतक बाहिर प्रतीक्षा करते रहे। अुस समय सत्यनारायणजीने मजाकमें कहा था, "कहौ तौ बु कविता महात्माजीकौं लिख भेजें—'मोहन! अब न अधिक तरसैयो'।"

यद्यपि महात्माजी अुस समय कविरत्नजीको दर्शन न दे सके पर जब अुन्होंने १५—२० हजारके जनसमूहको अपनी कविताओंसे मनोमुग्ध कर दिया तो महात्माजीके चेहरेपर भी मुस्कराहट आ गअी और अुन्होंने कविरत्नजी-का परिचय भी पूछा। कविरत्नजीने पहले तो अपनी 'प्रतिनिधि प्रेम पुष्पांजलि' सुनाअी थी और तत्पश्चात् महात्माजीकी ओर मुख करके श्रद्धापूर्वक सिर नवाकर कहा था—

"अब कुछ महाराजकी सेवामें अपनी तुकबन्दी निवेदन करूँगा"।

"तुमसे बस तुमहीं लसत और कहा कहि चित भरैं
'सिविराज' 'प्रताप' अरु मेजिनी किन-किन
सों तुलना करैं।।"

जब सत्यनारायणजीने यह पद्य पढ़ा तो जनताका हृदय प्रेमसे विव्हल हो गया। फिर अपने कोकिलकण्ठसे जब अुन्होंने कहा—

"अपुहिं सारथी बने कमलदल आयत लोचन
अरजुन सों बतरात बिहंसि त्रयताप विमोचन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धीरज सब विधि देत यही पुनि-पुनि समझावत ।
'दैन्य' 'पलायन' अेकहु ना मोहि रनमें भावत ।।
अिक निमित-मात्र है तू अहो, फिर क्यों चित विस्मय धरें।
गोपालकृष्ण मोहन मदन सो तुम्हार रक्षा करें ।।

मार्च १९१८ से जनवरी १९४८ तक तीस वर्षोंमें बापूका कितना समय मैंने नष्ट किया, कितनी बार अुनसे मिला, कितनी बार अुनसे दूसरोंको वक्त दिलवाया और अुनके द्वारा कितना पैसा मुझपर या मेरे क्षुद्र कार्योंपर व्यय हुआ अिन सबका ठीक-ठीक लेखा-जोखा करना अिस समय मेरे लिअे सम्भव नहीं, पर अन्दाजसे अितना तो कह ही सकता हूं कि अुनका योग सैकड़ों घंटे तथा सहस्रों रुपअे तो होगा ही।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि मेरे जैसे सहस्रों लक्षों व्यक्तियोंको बापूने अपना अमूल्य समय दिया होगा और अुन्हें आर्थिक सहायता भी दिलाअी होगी। अिससे गणितका मामूली जाननेवाला भी महात्माजीके व्यस्त जीवन, अुदारता और सहृदयताका हिसाब लगा सकता है।

तीस-वर्ष व्यापी संस्मरणोंको भला अेक लेखमें कैसे दिया जा सकता है? कुछ घटनाअें जो अिस समय याद आ रही हैं, दे रहा हूं।

बापूके प्रेमका जाल

महात्माजीने अेक पत्रमें किसी लड़कीको लिखा था:—"यह बात सत्य है कि जो आदमी अेक बार मेरे जालमें फंस जाते हैं, अुन्हें मैं फिर निकलने नहीं देता। यह कहा जाता है कि दूसरेके जालमें फँसनेसे आदमीका सर्वनाश हो जाता है। पर मेरे जालमें फँसनेसे किसीका भी नाश हुआ, अैसा मैं नहीं जानता।"

निस्सन्देह बापूजी अेक महान् कलाकार थे और अुन्होंने अपने प्रेमके जालमें लाखों ही व्यक्तियोंको फँसा लिया था। कवींद्र श्री रवीन्द्रनाथ ठाकूरके वयोवृद्ध ज्येष्ठ भ्राता सत्तर पचहत्तर वर्षीय बड़े दादासे लगाकर चार-चार पांच-पांच वर्षोंके बच्चों तकको अपने प्रेमसूत्रमें जकड़कर बांध लिया था। असंख्य व्यक्तियोंके साथ अुनका घर-जैसा व्यवहार था।

घरेलू बातोंकी पूछताछ

सन् १९२० की बात है। गान्धीजी अपने ज्येष्ठपुत्र हरीलाल भाअीके पास कलकत्तेमें ठहरे हुअे थे। प्रवासी भारतीयोंके विषयमें बातचीत करनेके लिअे मैं अुनकी सेवामें अुपस्थित हुआ। जब प्रश्नोत्तर समाप्त हुअे महात्माजीने पूछा "तुम्हारा विवाह हो चुका है?" मैंने कहा "हां" "बाल बच्चे हैं? कितने? और घर-पर कौन-कौन हैं? शान्ति-निकेतनमें दीनबन्धु अैण्ड्रूज तुम्हें कितना वेतन देते हैं? अुससे गुजर ठीक हो जाती है? अित्यादि।" मैंने सब प्रश्नोंका अुत्तर दिया। अुस-समय मुझे तो अिस बातसे आश्चर्य हुआ कि वे अिस प्रकार-के सवाल क्यों कर रहे हैं पर आगे चलकर मैं भली-भांति समझ गया कि गान्धीजी दर असल 'बापू' थे, वे अपने अधीनस्थ कार्यकर्ताओंके साथ वैसा ही बर्ताव करते थे, जैसा कोअी पिता अपने पुत्रके साथ करता है। कार्यकर्ताओंके सुखदुखका– अुनकी सुविधाओं तथा कठिनाअियोंका–वे ब्यौरा रखते थे और अुनके दूर करनेका प्रयत्न भी करते थे। अेक बार जिसको अुन्होंने अपने विश्व-व्यापी कुटुंबका सदस्य बना लिया फिर अुसे अुन्होंने जीवन भर नहीं छोड़ा चाहे वह आगे चलकर कितना ही अयोग्य क्यों न सिद्ध हुआ हो! सामाजिक धार्मिक तथा राजनैतिक मतभेद अुनके निष्कपट प्रेमके मार्गमें कभी भी बाधक नहीं हुअे। बल्कि अीमानदारीके साथ जो अुनका विरोध करता था अुसपर अुनकी कृपा दृष्टि और भी बढ़ जाती थी क्योंकि अुनकी सहनशीलता पराकाष्ठाको पहुंच चुकी थी।

मेरी नालायकी

अपनी धृष्टताके अनेक अुदाहरण मुझे याद आ रहे हैं। अुनमें अेक यहां देता हूं। चरखेके लिअे बापूके हृदयमें सबसे अधिक प्रिय स्थान था और अपनी मूर्खतावश मैंने अुसीपर आघात किया। गुजरात विद्यापीठके हिन्दी-अध्यापकके पदसे त्यागपत्र देते हुअे मैंने लिख दिया:

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"चरखेमें श्रद्धा न होनेके कारण मैं अपने पदसे त्याग-पत्र देता हूं।"

महात्माजीने (जो हमारे गुजरात विद्यापीठके कुलपति थे) बड़े सौजन्यके साथ अुस त्यागपत्रको स्वीकृत किया और विद्यापीठके प्रिंसिपल कृपलानीजी तथा अन्य अध्यापकोंके सम्मुख अुसकी प्रशंसा भी की। यही नहीं, बापूने यह भी कहा "तुम आश्रममें ही रहकर प्रवासी भारतीयोंका काम करते रहो। तुमको मासिक वेतन ज्यों-का-त्यों मिलता रहेगा।"

मुझे भली भांति स्मरण है कि आश्रमसे चले आनेके बाद भी बापूने मेरे घरपर प्रवासी भारतीयोंका कार्य-करनेके लिअे नौ सौ रुपअे भेजे थे।

'तुम्हारा विरोध तो मुझे प्रिय लगता है'

आगे चलकर विशाल-भारतमें मुझे अनेक बार बापूके विचारोंकी आलोचना करनी पड़ी, पर बापूने अुससे कभी बुरा नहीं माना। अुन्होंने अपने अेक पत्रमें मुझे लिखा भी था "तुम्हारा विरोध तो मुझे प्रिय लगता है।"

'पर कोअी सुनता भी है ?'

अेक बार जब बापू कलकत्ते पधारे तो अुन्होंने मेरी प्रार्थनापर बीस मिनट टाअीम मिलनेके लिअे दिया। टाअीम तो मुझ-अकेलेके लिअे दिया था, पर मैं १५–१६ आदमियोंको ले पहुंचा। बापूने हंसकर कहा "ये तो तुम फौजकी-फौज ले आअे मेरे सामने!"

जब बातचीत समाप्त हो चुकी तो मैंने कहा "बापू, मैं तो विशाल-भारतमें बहुत कुछ आपके खिलाफ लिखा करता हूं।" बापूने तुरन्त अुत्तर दिया "ये तो ठीक करते हो, पर कोअी सुनता भी है ?"

बापूसे अनुरोध

जिन लोगोंपर बापूकी कृपा थी वे अपने बापूसे धृष्ठता-पूर्वक अनेकों काम लिया करते थे और अुनकी फर्माअिशोंको पूरा करनेमें अुनका बहुतसा वक्त चला जाता था। यहां अपनी तीन धृष्ठताओंकी याद मुझे खास तौरपर आ रही है।

'चार काम कीजिअे'

महात्माजी आगरा जानेवाले थे और वहांसे अुन्हें फीरोजाबाद भी जाना था। मैंने बापूकी सेवामें अेक कार्ड भेजा, जिसमें लिखा था, 'चूंकि आप आगरा और फीरोजाबाद जा रहे हैं मेरी प्रार्थना है कि आप चार काम अवश्य करें।

(१) आगरेमें दयालबाग देख लें।

(२) मेरे छोटे भाअी रामनारायणको, जो कालेजका विद्यार्थी है, बीस मिनट दें।

(३) फीरोजाबादमें मेरे पिताजीसे मिल लें।

(४) लाला चिरंजीलाल जैनका नाम पब्लिक मीटिंगमें ले लें।

यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं कि बापूने चारों काम कर दिअे। दयालबाग देखनेमें साढ़े-तीन घंटे लगाअे, रामनारायणको समय दिया, फीरोजाबादमें मेरे वृद्ध पिताजी बापूके दर्शनार्थ पहुंचे तो बापूने अपने स्थानसे अुठकर अुनका सम्मान किया। कक्का अुम्रमें अुनसे १०–१२ वर्ष बड़े थे और बापू भला वयोवृद्धोंका अुचित सम्मान करनेमें कब चूक सकते थे ? कक्का बापूके बड़े भक्त थे। वे विव्हल हो गअे और अिस बातको जिन्दगी भर याद रखा कि बापू अुनके लिअे अुठ खड़े हुअे थे। फीरोजाबादमें बीस हजारकी पब्लिक मीटिंगमें यह आवाज लगाअी गअी "लाला चिरंजीलाल जैन कौन हैं- महात्मा गान्धीजी जानना चाहते हैं।" चिरंजीलालजी अुठ खड़े हुअे और अुन्होंने हाथ जोड़कर बापूको प्रणाम किया।

बापूने कहा "अच्छा!"

लाला चिरंजीलालजी साहित्यप्रेमी व्यापारी सज्जन थे। चूड़ियोंकी दूकान करते थे और बिना ब्याज लिअे मुझे ढाअीसौ रुपअे तक अुधार दे दिया करते थे। बस अुनके प्रति कृतज्ञता प्रगट करनेके लिअे मैंने बापूको कष्ट दिया था। चिरंजीलालजी भी जीवनभर अिस बातको न भूले कि अुस बीस हजारकी मीटिंगमें बापूने केवल अुन्हींको याद किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेख पढ़िअे और हाथसे चिट्ठी लिख भेजिअे

बापूकी सेवामें मैंने अेक पत्र भेजा जिसका आशय यह था कि हैद्राबाद विश्वविद्यालयके जाफरहसन साहब वरधामें आपकी मौजूदगीमें अेक लेख पढ़ना चाहते थे, पर आप अुसे दिन पधारे नहीं, अब मैं अुसे भेजता हूं। पढ़ तो लीजिअे ही, लेकिन साथ-साथ अुन्हें अपने हाथसे अेक खत भी लिख भेजिअे। बापूने लेखको पढ़ा और अपने हाथसे लिखकर जाफर साहबको अेक पत्र भी भेजा। यही नहीं अुन्होंने अपने हाथसे मुझे भी अेक कार्ड भेजा, जिसमें लिखा कि लेख 'रसिक' है और अुसकी अलग प्रतियाँ छपाअी हों तो मुझे भेज दो। बापूको अिस बातका पता था कि मैं अपने लेखोंके रिप्रिण्ट लिया करता था और अनेक बार बापूसे निवेदन करता था कि वे अुन्हें पढ़ लें और बापू भी किसी-न-किसी तरह अपने व्यस्त जीवनमेंसे वक्त निकालकर मेरे लेखोंको पढ़ लिया करते थे।

दीन-बन्धुकी समाधिपर फूल भिजवाअिअे

५ अप्रैल दीनबन्धु अैण्ड्रूजकी पुण्यतिथि है। मैंने बापूको लिख भेजा "कृपाकर श्री केदारनाथ चटोपाध्याय-को लिखिअे कि वे ५ ता० को आपकी ओरसे दीनबन्धुकी समाधिपर पुष्प भेजें।"

लौटती-डाकसे बापूका अनुरोध पत्र भी केदारबाबू (सम्पादक माडर्न रिव्हयू) के नाम आ गया और अुसमें अेक वाक्य यह भी लिखा था 'बनारसीदाससे कहना कि मैंने अुनके अनुरोधका पालन किया है।'

यह समाचार कलकत्ते भरमें फैल गया कि अिस-बार बापूने अैण्ड्रूजकी समाधिपर फूल भिजवाअें हैं और अिस कारण और भी बीसियों सज्जनोंने पुष्प अर्पित किअे। वहां अेक छोटासा मेला भी लग गया।

स्थानाभावके कारण मैंने अपनी धृष्ठताओंके केवल तीन उदाहरण ही दिअे हैं।

यदि मैं अुन सब मुलाकातोंका जिक्र करूं जो मेहर-बानी करके बापूने मुझे दी थीं तो अुनसे अेक भारी पोथा ही बन सकता है।

अेक बार रातको साढ़े नौ बजे अुन्होंने आध घंटा बातचीत करनेके बाद कहा "रातको डेढ़ बजेका अुठा हुआ हूं और दिनमें कुल पच्चीस मिनट आराम कर सका था।" मैं दंग रह गया। रातके डेढ़ बजेसे रातके साढ़े नौ बजे तक २० घंटे परिश्रम और कुल २५ मिनट आराम! मुझे अिस बातका कुछ भी पता नहीं था, नहीं तो अुस दिन बापूसे वक्त ही न लेता। क्षमा-याचना करके मैं लौट आया। मैंने अुसी समय भाअी हरिहर शर्मासे, जो अुन दिनों वहीं थे, कहा "बापू अितना बेहद परिश्रम क्यों करते हैं?" शर्माजीने तुरन्त ही अुत्तर दिया "अिसलिअे कि हम लोग आलसी हैं।"

बापूसे मजाक

बापू संसारके सर्वश्रेष्ठ महापुरुष थे यह जानते हुअे भी हम लोग कभी-कभी अुनसे मजाक करनेकी धृष्ठता कर बैठते थे।

अेक दिन बापूने वरधामें कहा "खूब आरामसे चाय पीना।" मैंने निवेदन किया "क्या आपको मेरे चाय पीनेका हाल मालूम हो गया है?"

"हां काका साहबने मुझे बतलाया है कि तुम बहुत चाय पीते हो।"

मैंने कहा "दीनबन्धु आपके छोटे भाअी हैं?"

बापूने कहा "हां"

"और आप अुनके बड़े भाअी हैं"

बापू "हां"

मैं बड़े भाअीकी बात नहीं मानता छोटे भाअीकी मानता हूं। महात्माजी खूब हंसे और तुरन्त ही बोले "तब तो मैं अैण्ड्रूजको लिख दूंगा कि "तुम्हें अच्छा शिष्य मिल गया है।"

आश्रममें मस्तक भंजन

साबरमती आश्रममें प्रार्थना-स्थलपर गया। बाहर अपनी हॉकी स्टिक रखता गया। प्रार्थना समाप्त होते ही हॉकी मैंने हाथमें अुठाअी ही थी कि अुधरसे बापू आ निकले। हंसकर बोले "लाठी तो आपने बहुत मजबूत बांधी है" मैंने अुत्तर दिया:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अिसका नाम कविवर माखनलाल चतुर्वेदीने मस्तक-भंजन रखा है"।

बापू हंसकर बोले "तब तो ठीक है। सत्याग्रह आश्रममें मस्तकभंजन रखना चाहिअे।"

बापूसे नाराजी

जिस प्रकार बच्चे अपने माता-पितासे नाराज हो जाते हैं हम लोग भी बापूसे कभी-कभी नाराज हो जाते थे। अेक बार मैंने क्रोधवश बापूको लिख दिया—"मैं आपसे अेक पैसा नहीं चाहता और न कोअी सिफारिश ही।" यह मेरी हिमाकत थी। दर-असल मैं बापूसे पैसा भी चाहता था और अुनकी सिफारिश भी। बापूने पूनाके श्री सदाशिव गोविंद वझेको मेरे अुस पत्रका जिक्र करते हुअे लिखा था "बनारसीदास हैज अननैसेसरिली अिम्पौवरिश्ड हिमसैल्फ" "बनारसीदासने व्यर्थ ही अपनेको गरीब बना लिया है।" वझे महोदयने बापूका वह पत्र मुझे ही भेज दिया।

आज अपनी अुन फर्मायशों और धृष्ठताओंका स्मरण करता हूं तो लज्जासे सिर झुक जाता है। बापू अपने छोटेसे छोटे भक्त और सेवकको याद रखते थे। अपने स्वर्गवासके पन्द्रह बीस दिन पूर्व अुन्होंने हरिजनमें स्व. तोतारामजी सनाढ्यके प्रति जो श्रद्धांजलि प्रगट की थी अुसमें भी वे मुझे न भूले थे। "तोतारामजीको आश्रममें लानेका श्रेय बनारसीदासको है"; यह वाक्य भी अुन्होंने अुस नोटमें लिखा था। यद्यपि बापूने हम लोगोंको नहीं भुलाया, पर हम लोग ही अुन्हें भूल गअे।

३० जनवरीकी शामको जब टीकमगढ़से यह समाचार कुण्डेश्वर (जहां मैं रहता था) पहुंचा तो हृदयको जबरदस्त धक्का लगा। रातभर नींद नहीं आअी। तीस वर्षकी घटनाअें अेकके बाद अेक मस्तिष्कके पर्देपर आती रहीं।

वैसे तो समस्त भारतवर्ष ही महात्माजीका ऋणी है, पर खास तौरपर वे लोग, जिन्हें अुनकी संरक्षतामें रहनेका सौभाग्य अनेक वर्षों तक प्राप्त हुआ, अुनके कर्जदार हैं। वह ऋण अितना भारी है कि हम लोग जीवन भर नहीं अुसे चुका सकते।

अुनके जन्म-दिवसपर अुनकी पवित्र स्मृतिमें अपनी श्रद्धाके ये चार फूल चढ़ा रहा हूं।

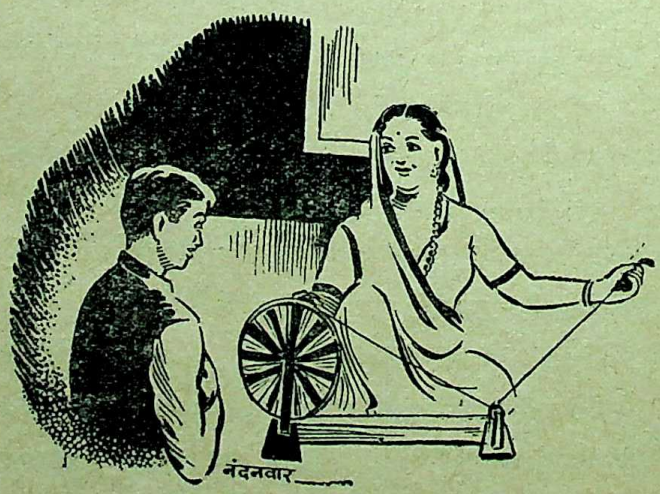

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'महात्मा गांधीकी जय !'

—परदेशी

आज यह नारा कितना विचित्र और पुराना लगता है–'महात्मा गान्धीकी जय !' किन्तु, भारतीय जीवनके पिछले तीन युगोंमें, यह नारा प्रतिदिन गूंजकर अितिहासकी रचना करता रहा है! 'महात्मा गान्धीकी जय'–अिसलिअे कि जिन सिद्धान्तों अेवं आदर्शोंके लिअे वे अुठ खड़े हुअे थे, वे सत्य थे।

किन्तु सत्यके पक्षमें विरोधियोंका सामना करना सदैव संकट-पूर्ण रहा है। क्योंकि, हम जानते हैं कि सत्यके समर्थक सन्त सूलीपर चढ़ाअे जाते हैं। अुन्हें विषका प्याला पीना पड़ता है। अुन्हें शहीद होना पड़ता है। विषका प्याला पीकर अुन्हें अिसलिअे शहीद होना पड़ता है कि वे अपने समयसे बहुत आगे रहते हैं। वे दूरदृष्टा होते हैं। अुन्हें समझनेमें हमसे भूल होती है। गान्धीजी अपने समयसे कअी सौ वर्ष आगेके सालमें रहते थे और अभी कअी शताब्दियाँ पूरी होंगी तब जाकर कहीं मनुष्य अुनके आदर्शोंको प्राप्त कर सकेगा ! शायद ही !

गान्धीजी पैगम्बर थे, अैसे युगमें जब पैगम्बर होनेका कोअी मूल्य नहीं था। अुन्होंने सत्य, अहिंसा, प्रेम, शांति और न्यायका पक्ष लिया, अैसे समयमें, जब कि असत्य, हिंसा, घृणा, युद्ध और अन्यायका सर्वत्र शासन था (और आज भी है)।

गान्धीजीके देहावसानपर जितनी श्रद्धांजलियाँ अर्पित की गअीं अुनमें आजके विश्व-विख्यात वैज्ञानिक आअिन्स्टाअिनकी अंजलि अधिक विचित्र अेवं महत्वपूर्ण है। अुन्होंने कहा–'अेक हजार वर्ष पश्चात् कोअी अिस बातपर विश्वास ही न करेगा कि दुनियामें महात्मा गान्धी जैसा व्यक्ति अिस धरतीपर चलता फिरता था!'

दूसरी अुक्ति अमरीकाके प्रसिद्ध समाज-सेवी अेवं विद्वान डॉ. जॉन हेन्स होम्सकी है। आपने कहा—

"पिछले युगोंके समस्त संतोंके समान गान्धी महान् हैं। राष्ट्रीय नेताओंमें वे अल्फरेड, वेलैस, वाशिंग्टन, काजिडस्को और लफायेतके तुल्य हैं। पराधीन जातियोंके अुद्धारकके रूपमें वे क्लार्कसन, विल्बरफोर्स, गैरिसन, लिंकन जैसे हैं। प्रेम और अहिंसाके गुरुओंमें वे सन्त फ्रांसिस, थ्यूरो और टॉल्स्टॉयके समान हैं। अितना ही नहीं; अवतारोंमें अुनका स्थान लाओत्से, बुद्ध, जरुत्थस, और अीसामसीहके बराबर है। समस्त कालोंके सर्वोपरि धार्मिक मसीहाओंमें अुनका नाम लिया जा सकता है।"

अुपरोक्त श्रद्धांजलि सत्य है, परन्तु चूंकि गान्धीजी हमारे युगमें हुअे हैं, हमें अैसा प्रतीत होगा कि यह अतिशयोक्ति है। लेकिन, यहां हम सप्रमाण अिस तुलनाको अुपस्थित करते हैं।

पूर्व और पश्चिमके समस्त राष्ट्रीय नेताओंमें अल्फरेड, वेलैस, वाशिंग्टन और लफाअेतकी अपने समयमें अत्यधिक आलोचना की गअी और अुन्हें बहुत बुरा-भला कहा गया। यही दशा गान्धीजीकी भी हुअी। अपने जीवनमें अुन्हें अपने विरोधियोंकी ही नहीं वरन् अपने दलके लोगोंकी भी कटुतम आलोचना सहनी पड़ी। वास्तवमें, आलोचकोंकी दृष्टि अुतनी पारदर्शी नहीं थी जितनी कि महात्मा गान्धीकी। अमरीकामें काले-गोरेके प्रश्नपर लिंकनको कितनी लांछना सहन करनी पड़ी, और अन्तमें अपने प्राणोंसे हाथ धोना पड़ा। अुसी प्रकार दक्षिण अफ्रिकामें गान्धीजीको अिसी भेदको मिटानेके प्रयत्नमें शारीरिक अुत्पीड़न सहना पड़ा और स्वदेशमें तो प्राण ही दे देने पड़े।

प्रायः गान्धीजीको प्रतिगामी, समझौतावादी और न जाने क्या-क्या कहा जाता है पर अैसी बात नहीं है। वे सदैव प्रतिक्रिया और प्रतिगामी दलोंकी शक्तिके विरुद्ध संघर्ष करते रहे हैं। मुस्लिमलीग और अन्य प्रतिगामी दलोंकी धर्मान्धताका सदैव विरोध अुन्होंने किया। अपनी शक्तिके बल अुन्होंने ब्रिटिश सरकारको बार-बार थर्रा दिया। अपने सिद्धांतोंकी शर्तोंपर अुन्होंने जनताको अपने पीछे चलने और अुन सिद्धांतोंका पालन करते-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुअे विदेशी सत्तासे लड़ने योग्य बना दिया। यह क्या छोटी विजय थी? नहीं, यही अुन्हें 'क्रांतिकारी' बना देती है। गान्धी बापूके अिस क्रांतिकारी रूपके प्रति स्तालिनके रूसने आंखें मूंद ली थीं परन्तु ख्रुश्चेवके सोवियत रूसने गान्धीजीको विश्वका महान् सन्त, सृष्टा और क्रांतिकारी माना है।

मानव जीवनका अैसा कोअी अंग या प्रश्न नहीं है जिसपर गान्धीजीने विचार न किया हो और अुसके विकास या हलका मार्ग न खोज निकाला हो। पंथका पता लगानेमें तो महात्मा गान्धी पूर्णतया निष्णात थे। वे न केवल समस्याका निदान ही ज्ञात कर लेते वरन्, अुसे नवीनता भी प्रदान करते। अुनके समस्त अुपचार अपने अनुकूल थे। अुन्होंने कभी अपनी सीमाके बाहर बढ़कर अुपचार अेवं अुपाय नहीं अपनाअे, अिसीसे तो हमने अुन्हें क्रांतिकारी बताया है। समाज, साहित्य, धर्म, राजनीति, जीवन-दर्शन, विज्ञान और अितिहासके विभिन्न क्षेत्रोंपर गान्धीजीका अपार प्रभाव पड़ा। अुन्होंने समष्टि रूपसे भारतीय जीवनको अेक नअी दिशा, गति और दृष्टि दी। विश्वकी मानवीय परम्पराओंपर भी अुनके अनुदानने अपना प्रभाव प्रकट किया है।

यहां हम गान्धीजीके विचार विषयानुसार अिस-प्रकार प्रकाशित करते हैं:

अीश्वर: 'अेक अैसी रहस्यमअी शक्ति है जिसकी परिभाषा नहीं हो सकती और जो सर्वव्यापी है। मुझे अुसका भान होता है यद्यपि मैं अुसे देख नहीं सकता। यह शक्ति दयामय है अथवा अदयामय? मैं तो अुसे नितान्त दयामय ही मानता हूं। अीश्वर जीवन है, सत्य और प्रकाश है। वह प्रेम है।'

—यंग अिंडिया, ११ अक्टोबर २८

धर्म: 'हमारा धर्म, हमारी संस्कृति, हमारा स्वराज्य अपनी आवश्यकताअें बढ़ानेके लिअे नहीं हैं, न विलास या उपभोग करनेके लिअे हैं, वरन् अपनी आवश्यकताओंकी कमी और आत्म-संयमके लिअे हैं।'

—यंग अिंडिया, ६ अक्टोबर '२१.

सत्य: 'विचारोंमें सत्य हो, वाणीमें सत्य हो और कर्ममें सत्य हो। जिसने सत्यको पूर्णरूपेण जान लिया, अुसके लिअे दूसरा कुछ जाननेको शेष नहीं रहता, क्योंकि सत्यमें ही समस्त ज्ञान निहित है।'

—यंग अिंडिया, ३० जुलाअी '३१.

पूर्णता: 'पूर्णता केवल अीश्वरका ही विशेषण है और यह अनिवर्चनीय है। परिभाषाओंकी पहुंचके परे है। मेरा विश्वास है कि मनुष्य अुतना ही पूर्ण हो सकता है, जितना कि अीश्वर। यह आवश्यक है कि हम सब पूर्णताकी प्राप्तिके लिअे प्रयत्नशील हों।'

अहिंसा: 'मेरी अहिंसाका मत सर्वथा सक्रिय बल है। अिसमें कायरता अथवा कमजोरीको कहीं स्थान ही नहीं है। किसी हिंसक व्यक्तिके किसी दिन अहिंसक हो जानेकी आशा है, पर किसी कायरके लिअे अैसी आशा नहीं की जा सकती। अतअेव, मुझे हजारवीं बार दुहराने दें कि अहिंसा वीर बहादुरकी है, कायर-कमजोरकी नहीं।'

—८.-५.- '४१.

अर्थशास्त्र: 'वह अर्थशास्त्र जो किसी राष्ट्र या व्यक्तिकी नैतिक अुन्नतिको रोकता है, अनैतिक है, अिस कारण पापपूर्ण है। यह मेरा दृढ़ विश्वास है कि आजका योरप अीश्वर या अीसाअियतकी आत्माका नहीं, शैतानकी आत्माका प्रतिनिधित्व करता है।'

—यंग अिंडिया ३ सितम्बर १९२०.

श्रम: 'अपने श्रमका भोजन करो'—बाअिबलका कथन है। बलिदान कअी प्रकारके हैं, अुनमेंसे अेक-श्रमसे प्राप्त रोटी है। यदि सब लोग अितना ही करें कि अपनी-अपनी रोटी श्रमपूर्वक कमाकर खाअें तो, संसारमें सबके लिअे पर्याप्त भोजन और पर्याप्त विश्राम होगा।'

—हरिजन, २९ जून १९३५.

भारत: 'भोगभूमिकी विपरीततामें भारतवर्ष निश्चय ही कर्मभूमि है।'

—यंग अिंडिया ५ फरवरी '२५.

निशस्त्रीकरण: 'यदि शस्त्रसज्जाकी यही पगली दौड़ जारी रही तो, परिणाममें अेक अैसा हत्याकाण्ड होगा, जैसा अितिहासमें कभी नहीं हुआ। यदि कोअी देश विजअी भी हुआ तो, अुसकी वह विजय ही अुसके लिअे मौत बन जाअेगी।'

—हरिजन १२ नवम्बर '३८.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मचर्य : 'ब्रम्हचर्य निरा कुंवारापन नहीं है। अिसका अर्थ समस्त अिन्द्रियोंपर संयम है। विचार, वचन और कर्म—तीनोंकी कामुकतासे मुक्ति—ब्रम्हचर्य है।'

—यंग अिंडिया, २९ अप्रैल '२६.

विवाह: 'विवाह अिसलिअे किया जाता है कि दम्पत्ति विकृत वासनासे अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लें और अीश्वरके निकट जाअें।'

—यंग अिंडिया, २९ अप्रैल '२६.

नारी : 'नारी अहिंसाकी प्रतिमा है। जीवनमें जो कुछ विशुद्ध और धर्ममय है स्त्री अुसकी संरक्षिका है। अुसमें पुरुषके समान ही बुद्धि अेवं योग्यता है।'

कला : 'समस्त सत्य कलाअें आत्माकी अभिव्यंजनाअें हैं।'

—यंग अिंडिया १३ नवम्बर '२४.

अिस प्रकार महात्मा गान्धीने अपने विचारों और कार्योंके द्वारा भारतीय जीवन और अुसकी गतिपर पूर्ण प्रभाव डाला। अपने जीवनकालमें ही अुनके सद्-प्रयत्न सफल हुअे और वे भारतके स्वतंत्र वातावरणमें अन्तिम सांस ले सके, यह क्या कम गौरवकी बात है?

लेकिन, गान्धीजीके देहान्त और स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके पश्चात् जनता और अुसके नेताओं द्वारा गान्धीजीके आदर्श विस्मृत कर दिअे गअे हैं। जिन चीजोंके प्रति गान्धीजीके मनमें अपार घृणा थी, वे आज भी जीवित हैं और सब क्षेत्रोंका पोषण अुन्हें प्राप्त है।

अेक अुदाहरण लीजिअे—विदेशी शिक्षाओंको सब स्वीकार करते हैं; परन्तु 'विदेशी भाषा'के माध्यम द्वारा सब विषयोंको शिक्षा देनेका विरोध गान्धीजीने वर्षों पहले व्यक्त किया था। अुनके शब्दोंमें कितनी वेदना और तीव्रता है, यह निम्न अवतरणसे प्रकट होगा। यंग अिंडियाके ५ जुलाअी १९२८ के अंकमें वे लिखते हैं:

'विदेशियोंके शासनसे जितनी बुराअियां अिस देशमें आअीं, अुनमेंसे सबसे बुरी है—अिस देशके युवकोंपर विदेशी भाषाके माध्यम-द्वारा दी जानेवाली शिक्षा। यह अितिहास-द्वारा सबसे बड़ा दुष्कार्य माना जाअेगा। अिसने राष्ट्रके सारे बल और अुत्साहकी जड़ खोद डाली है। अिसने लोगोंकी जीवनी-शक्तिको क्षीण कर दिया है।

यदि अभी भी यही प्रणाली रखनेपर जोर दिया जाता है तो, अिससे कहीं अच्छा है कि डाका डालकर राष्ट्रकी आत्मा छीन ली जाअे।'

विदेशी भाषाके लिअे मतवाले, अुसे अपने देशमें लादनेवाले 'अंग्रेजी साहबों'को यह ध्यानमें रखना चाहिअे।

गान्धीजीकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि वे जन-जीवनसे दूर रहकर नहीं जिअे। जनसाधारणके दैनिक जीवनको अपना जीवन बनाकर वे जन-जनके अन्तरतममें तल्लीन हो गअे। 'अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनानाम्।' अपने जीवनकालमें ही अनेक लोग अुनकी पूजा करने लगे, अिस रहस्यके पीछे अुपरोक्त कारण है। गान्धीजीने भारतीय जन जीवनमें ही अीश्वर, धर्म, समाज और ज्ञानको अभिव्यक्ति दी, कि ये सब अिसकी पूर्णता और पवित्रतासे परे नहीं हैं। अुन्होंने मनुष्यमें ही अीश्वरके दर्शन किअे, यह अुनकी महानता थी।

"राम तुम मानव हो, अीश्वर नहीं हो क्या?
तो, मैं निरीश्वर हूं, अीश्वर क्षमा करे!"

गान्धीजीका अीश्वर भी मनुष्य मात्रमें रमा हुआ 'राम' था। कविका राम केवल मनुष्य नहीं, अीश्वर भी है और गान्धीजीका अीश्वर केवल अीश्वर नहीं, मनुष्य भी है। अुन्होंने मनुष्यकी पवित्रता और पूर्णताको परमात्म-तत्व माना है।

भारतवर्षके अनेक सन्त-साधुओंके समान, गान्धीजी सदैव अमर हैं। अुनके द्वारा अपनाअे गअे आदर्श आज भी विश्वशांति अेवं विश्व-बन्धुत्वके कारण बन सकते हैं। अुन आदर्शोंके पीछे गान्धीजीकी प्रतिच्छवि सदैव रहेगी। अिसीलिअे, समस्त संसार समवेत-स्वरमें कहता है—'महात्मा गान्धी की जय!'— दुनियाके अिस छोरसे अुस छोरतक यह ध्वनि गूंजी!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कन्नड़ रंगमंच

—आद्य रंगाचार्य

कन्नड़ रंगमंचपर दृष्टिपात करनेसे ये तीन मुख्य बातें प्रकट होती हैं:

(१) कन्नड़ रंगमंच कन्नड़ साहित्यसे कम प्राचीन नहीं है;

(२) आरम्भसे ही वह मुख्यतः जनताकी कला रही है और

(३) अब तक गवेषणाशील विद्वानोंका ध्यान अुसके अध्ययनपर नहीं गया है।

कन्नड़ साहित्य अेक हजार वर्षसे भी पुराना है। कन्नड़की सबसे प्राचीन अुपलब्ध साहित्यिक रचना अीसाकी ९ वीं सदीकी है। रचनाकी शैली और अुसका पाण्डित्य-पूर्ण आडम्बर बताते हैं कि अुससे कअी सदी पहलेसे ही कन्नड़में साहित्य-साधना चलती रही होगी। अीसाकी छठी और सातवीं सदीमें कन्नड़के शिलालेख मिलते हैं। अिनमें भी सुविकसित काव्यमय शैली देखनेको मिलती है। अिनके अनन्तर आते हैं जातीय वीर-काव्य, सन्तों (तीर्थंकरों) के चरित्र, पंचतन्त्रके किस्से और गणित आदि शास्त्रीय विषयोंपर छन्दोबद्ध रचनाअें। सदियोंके अितिहासका क्रमिक अवलोकन करनेपर हमें सांगव्य, त्रिपदी और षट्पदी जैसे विविध छन्द अुपलब्ध होते हैं। अीसाकी १२ वीं १३ वीं सदीसे आगे अेक नअी गद्यशैली मिलती है जो अत्यन्त सरल और साथ ही अर्थपूर्ण है। यह है "वचन" शैली। बादके दास सन्तोंके पदोंमें अिसी गद्यशैलीको संगीतका सुन्दर परिधान पहनाया गया। अिस तरह कन्नड़ साहित्य निरन्तर पुष्ट होता रहा और अुसकी सम्पन्नता और विविधता अुत्तरोत्तर बढ़ती गअी। अिसलिअे यह विशेष आश्चर्यकी बात है कि प्राचीन कन्नड़ साहित्यमें नाटकोंका खटकनेवाला अभाव है। कन्नड़का सबसे पुराना नाटक १७ वीं सदीका मिलता है। और यह नाटक भी श्री हर्ष रचित संस्कृत नाटक 'रत्नावली' की नकल भर है। अिस कन्नड़ संस्करणका नाम 'मित्र-विन्द-गोविन्द' है और यह नाम ही बताता है कि लेखकको नाटक कलाका कितना कम परिचय रहा होगा।

अिन बातोंसे, संभव है, कोअी यह समझ ले कि कन्नड़में नाटकका अुद्भव १६ वीं - १७ वीं सदियोंमें जाकर हुआ और वह भी संस्कृतके प्रभावसे। पर यह निष्कर्ष ठीक नहीं है और अिसके कअी कारण हैं। अव्वल १६ वीं १७ वीं सदी तक संस्कृत रंगमंच अेकदम निष्प्राण हो चुका था और अुसमें अन्य साहित्योंको प्रेरणा देनेकी शक्ति नहीं रह गअी थी। दूसरे, नाटकका अर्थ केवल लिपिबद्ध नाटक नहीं है। संस्कृतके नाटक अेकदम साहित्यमय थे और संभवतः वे अुन्हीं प्रेक्षकोंके सामने खेले जाते थे (बशर्ते वे सचमुच खेले जाते रहे हों) जिन्हें कालिदासने 'सन्तः' और 'विद्वान्सः' कहा है। अिस ढंगके नाटक कभी सच्चे अर्थोंमें लोकप्रिय नहीं हो सकते थे। पर यह भी नहीं कहा जा सकता कि अुस समयका जनसाधारण सार्वजनिक मनोविनोदके अिस साधनमें दिलचस्पी नहीं लेता होगा। १२ वीं सदीके पुराने ग्रन्थोंमें अवाचिक अभिनय (पॅण्टोमाअिम) और कठ-पुतलीके खेलका अुल्लेख मिलनेसे अेक अैसे रंगमंचका अस्तित्व सिद्ध होता है जो अुस समयके 'निचले वर्गों' (प्राकृत जनों) के मनोविनोदका साधन था। वास्तवमें अशोकके शिलालेखोंसे पता चलता है कि अैसे सामूहिक मनोविनोदों (समाज) को प्रोत्साहन नहीं दिया जाता था। पर अगर नाटक सच्चे अर्थोंमें लोककला है तो कोअी कानून अुसे समाप्त नहीं कर सकता। अिस प्रकार रामायण और महाभारतके रचना कालसे नाटचने अेक निश्चित रूप धारण किया।

रामायण और महाभारतने नाटकमें युगान्तर अुपस्थित किया। अिससे पहलेके नाटक शायद अैसे थे कि अुन्हें अशोक सरीखे अुपदेष्टा-शासकसे प्रोत्साहन न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलना ही अुचित था। पर अब नाटक मनोविनोदके साथ शिक्षाके भी साधन बन गअे। रामायण, महाभारतके आख्यानों और राजा हरिश्चन्द्रके चरित्र जैसी कथाओंसे दिलबहलाव तो होता ही था, साथ-साथ धार्मिक जीवनका आदर्श भी सामने आता था। शायद दूसरी भाषाओंवाले अिन कथाओंको पढ़कर सुनते-सुनाते रहे हों, पर कन्नड़भाषी अिन्हें अभिनयपूर्वक रंगमंचपर प्रस्तुत करते थे। कथाभागको अेक भक्त (भागवत) सस्वर पढ़ता था और अभिनेताओंके संभाषणोंमें शायद अुसकी व्याख्या होती थी। यह था कन्नड़ नाटकोंका प्राचीन प्रथम रूप। ये प्रदर्शन अूपर बताअे हुअे कारणसे 'भागवतर आट' (भागवतोंका खेल) कहलाते थे। कअी अन्य कारणोंसे यही नाटकीय शैली दक्षिण कन्नड़ जिलेमें 'यक्षगान' कहलाअी। कहीं-कहीं अिन्हें 'बयल आट' (मैदानका खेल) भी कहते थे जिससे मन्दिरकी चहारदिवारीमें होनेवाले कथापाठसे अिनका अन्तर सूचित होता था।

ये रूपक जनताकी संस्कृतिके अविभाज्य अंग थे। आज यह बात समझना कुछ कठिन है क्योंकि आज नाटक या तो पैसा कमानेका जरिया है अथवा सांस्कृतिक प्रचारका साधन। आरम्भमें कुछ अुत्सवोंमें तो नाटक अेक अनिवार्य वस्तु थी। हमें यह नहीं भूलना चाहिअे कि अुस जमानेमें गांवका समाज मुख्यतः कृषिजीवी था। खेत जोतनेका अेक निश्चित समय था। अुसके बाद बारिश होती थी और बीज बोअे जाते थे। फिर किसान फसलकी प्रतीक्षा करता था। ये दिन अक्सर खेतोंकी रखवाली करनेमें बीतते थे। पर अपनी मेहनतका अच्छा फल मिलनेके आसार प्रकट होते ही किसान प्रसन्न व बेफिक्र हो जाता था। ये दिन (कर्नाटकमें) दशहरे और दिवालीके बीचके होते हैं। अिनमें कअी अवाचिक अभिनय (पॅण्टोमाअिम) प्रस्तुत किअे जाते थे और किसान अपने हल-बैल आदि कृषि-साधनोंकी पूजा करते थे। यह विशेष ध्यान देनेकी बात है कि दशहरे और दिवालीके दिनोंमें केवल अवाचिक अभिनय होते थे और वे भी अुत्सवों और जुलूसोंमें। सार्वजनिक नाटकोंके लिअे यह अुपयुक्त समय नहीं था क्योंकि किसानोंको खेतीके काम-काजसे पूर्ण छुट्टी नहीं होती थी। पर अिन प्रदर्शनोंके वक्त ही अगले बड़े नाटकके समय और पात्रों आदिका निश्चय हो जाता था। गांवके निरक्षर परन्तु अुत्साही अभिनेता अपने पार्ट अपने-अपने ढंगसे याद करते थे और जब नया अनाज खलिहानोंसे घरके गोदामोंमें पहुंचता तबतक सब कलाकारोंकी तैयारी पूरी हो चुकती थी। नाटकका चुनाव और पात्रोंकी नियुक्ति बड़े-बूढ़े करते थे। लड़कोंका नाटकमें काम करना परिवारका सामाजिक योगदान समझा जाता था। अन्तमें जो नाटक होता था वह समूचे गांवके सहयोगका सुफल होता था। अुसमें स्टेज बनानेवाले ग्रामीण बढ़अीसे लेकर कलाकारोंके लिअे कीमती पोशाकें देनेवाले जमींदार तक सबका हाथ होता था। प्रत्येक ग्रामवासी अनुभव करता था कि नाटक अुसीके किअेसे हुआ है; अिसलिअे अुसे नाटकमें विशेष आनन्द मिलता था। पास-पड़ोसके गांव नाटकमें अेक-दूसरेको मात देनेकी कोशिश करते थे।

यह था कन्नड़का परम्परागत रंगमंच। जैसा अूपर दिखाया गया है कि ये अभिनय-प्रयोग जनताके सामाजिक और सांस्कृतिक जीवनके निश्चित अंग थे। किसान खेतमें जी-तोड़ मेहनत करते थे; धरती माताको हर तरहसे रिझाते थे, ताकि वह भरपूर अन्न दे और अन्तमें अपने परिश्रमका मीठा फल—अनाज, घरमें भरते थे। श्रमके सार्थक होनेका संतोष, अपनी सफलता पर कृतज्ञतापूर्ण अभिमान, अगली फसल तक अपनी आर्थिक सुरक्षाका आश्वासन और मिलजुलकर काम करनेकी महिमाका भान—ये और अैसी अन्य अनेक सामाजिक भावनाअें नाटकोंके आयोजनमें अभिव्यक्त होती थीं। तब फिर अचरज ही क्या कि तमाम गांववाले रातभर बैठकर अिन प्रदर्शनोंका रस लेते थे। हर आदमी नाटकका पूरा-पूरा आनन्द अुठानेपर तुला रहता था। यह कल्पना करना कठिन नहीं है कि कालक्रमसे दूसरे कलाकौशलोंकी तरह नाटककला भी कुछ कुलोंकी क्रमागत सम्पत्ति बनकर विकसित हुअी।

अैसे ही कुलक्रमागत कलाकारोंकी अेक टोली अुन्नीसवीं सदीके मध्यमें सांगली आअी। यद्यपि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांगलीके राजा और अुनके कर्मचारी मराठी-भाषी थे फिर भी अुन्होंने कन्नड़ नाटकोंमें खूब रस लिया। राजा साहब अितने प्रसन्न हुअे कि अुन्होंने कुछ महाराष्ट्रियोंको अेक नाटक मण्डली बनाकर मराठी नाटक प्रस्तुत करनेकी प्रेरणा दी।

यह था मराठी रंगमंचका बीजारोपण।

* * *

मराठी रंगमंचके विकासकी चर्चाका यह अुचित संदर्भ नहीं है। पर अेक बात यहां कहनी-ही पड़ेगी कि अुक्त घटनाके बादसे कर्नाटकके रंगमंच ही नहीं, बल्कि हमारे गांवोंके परम्परागत अभिनयने भी मराठीके प्रभावमें गलत राह पकड़ी और अवनतिकी ओर बढ़ना शुरू किया। महाराष्ट्रमें स्थापित पेशेवर नाटक कम्पनियां मानो सबके लिअे आदर्श बन गअीं। फिर ग्रामीण कलाकारोंको अपनी परम्पराअें छोड़कर मराठी नाटकोंकी नकल शुरू करनेमें देर नहीं लगी। महाराष्ट्रकी पेशेवर नाटक कम्पनियोंकी सफलतासे कर्नाटकमें भी अैसी मण्डलियोंकी स्थापनाको बढ़ावा मिला। पर अुनके पास न ट्रेनिंग थी और न सही मार्गदर्शक। देखते-ही-देखते गांवके लोग अपने नाटक खेलनेके बजाय "कम्पनीका खेल" देखनेके लिअे जाने लगे। गांवका रंगमंच नष्ट हो गया।

अिसी समय कन्नड़भाषी जनताके जीवनमें दूसरे भी परिवर्तन हो रहे थे। अंग्रेजी पढ़े शिक्षितोंका अेक नया दल सिर अुठा रहा था, जिसे अपने अस्तित्वका नया भान था। कन्नड़के नाटक-जगत्पर अिस जागरणके दो परिणाम हुअे। अेक था : कन्नड़ लेखकों द्वारा संस्कृत और अंग्रेजीके नाटकोंका कन्नड़में अनुवाद किया जाना और दूसरा, गैर-पेशेवर कलाकारोंकी नाटक-प्रवृत्तियोंका आरम्भ। शाकुन्तल, रत्नावली, अुत्तररामचरित जैसे संस्कृत नाटकोंके कन्नड़ रूपान्तर तैयार हुअे। स्वर्गीय शेषगिरिराव तुरमरि द्वारा रचित अेक अैसे रूपान्तरका रंगमंचके लिअे अुपयोगी संस्करण तैयार किया गया जिसमें पद्योंकी जगह गाने रखे गअे थे। अिन गानोंमें कअीकी तर्जोंको बादमें श्री अण्णासाहब किर्लोस्करने अपने मराठी नाटकोंमें समाविष्ट किया। अिस कन्नड़ शाकुन्तलसे प्रेरणा पाकर धारवाड़के कअी शौकिया कलाकार युवकोंने भारत कलोत्तेजक नाटक मण्डलीकी स्थापना की। बेंगलूरमें भी अेक अेमेच्योर ड्रामेटिक अेसोसिअेशन कायम हुआ।

* * *

अिस समयसे कन्नड़ रंगमंच लगातार गिरता गया जिसके कअी कारण थे। अेक कारण यह था कि शहरके लोग अब गैर-पेशेवर कलाकारोंके नाटक अधिक पसन्द करने लगे थे जिससे पेशेवर नाटक कम्पनियोंको जो अक्सर पड़ोसी भाषाओंके नाटकोंकी कोरी और भद्दी नक्कल करती थीं, अपना स्तर नीचा करना पड़ा। दूसरी ओर गैर-पेशेवर कलाकारोंकी सरगर्मियां अनियमित और निरुद्देश्य थीं। कुछ समय तक तो चलचित्रोंकी लोकप्रियताके कारण पेशेवर नाटक मण्डलियोंने महसूस किया कि अुन्हें अपना अस्तित्व कायम रखनेके लिअे फिल्मी कहानीके सब चमत्कार रंगमंचपर पेश करने होंगे। दूसरी ओर नगरवासी प्रेक्षकोंकी पसन्दके नाटकोंके अभावसे शौकिया कलाकार भी निरुत्साहित हो चले थे।

अितिहास मनुष्यके बनानेसे नहीं, बल्कि अक्सर परिस्थितियोंके प्रभावसे बनता है। मनुष्य तो निमित्त मात्र होता है। अूपर वर्णित दशामें कन्नड़ रंगमंचके अितिहासका पन्ना पलटनेमें मनुष्य फिर निमित्त बना। अंग्रेजीके अध्ययनसे और किसी हदतक अिंग्लैंडमें आंग्ल-जीवन और कलाका प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त करनेसे लेखकोंके अेक नअे वर्गको स्फूर्ति और प्रेरणा मिली। अिस तरह अिस सदीके दूसरे दशकसे अैसे नाटककार मिलने लगते हैं जिन्होंने या तो श्री केरूर वासुदेवाचार्यकी तरह आंग्ल-नाटकोंको हमारे आधुनिक जीवनसे मेल खानेवाला भारतीय चोला पहनाया, अथवा बेंगलूरके स्वर्गीय श्री टी. पी. कैलासम् और गदगके श्री नारायणराव हुयिगोल की तरह कर्नाटकके समकालीन सामाजिक जीवनको रंगमंचपर अुपस्थित किया। कन्नड़ नाटक साहित्यके सृजनमें यह अेक शानदार विष्कंभक था। अिसमें अनेक नअे प्रयोग किअे गअे और वे सफल हुअे। सर्वश्री गोविन्द पअी, के. वी. पुट्टप्प, पी. टी. नरसिंहाचार जैसे कवियोंने मुक्तछन्दमें भावपूर्ण नाटक लिखे; टी. पी. कैलासम्, कारन्त, अ. ना. कृष्णराव और श्रीरंग आदिने ओजपूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामाजिक नाटक रचे; अे. अेन. कस्तूरी सदृश हास्य रसके लेखकोंने प्रहसनोंका प्रणयन किया। कारन्तने गीत नाटक और गीतनाटिकाअें रचीं; क्षीरसागर और पर्वतवाणी सरीखे नअे नाटककार आगे आअे; श्रीरंगने अेकांकी नाटकोंके अेक नअे तन्त्रका विकास किया। अिनके पीछे और भी नाटककार आअे।

* * *

परन्तु नाटक लेखनका अितिहास रंगमंचके अितिहाससे अलग चीज है। यह बात कन्नड़ रंगमंच-की वर्तमान स्थितिसे स्पष्ट हो जाअेगी। मौलिक तथा अुंचे स्तरके अनेक नाटकोंके रचे जानेके बावजूद कन्नड़ रंगमंच आज भी अुसी अवनतिके गर्त्तमें पड़ा है। कलके कितने ही सफल नाटक-लेखक आज नाटक-रचनासे विमुख हैं। अिनमेंसे कुछ अुपन्यासोंकी ओर झुके हैं, कअीने निराशाका पल्ला पकड़ा है। कारण बहुत स्पष्ट है। स्वयं कालिदासको भी कहना पड़ा कि नाटक 'प्रयोग-प्रधान' अर्थात् मुख्यतः रंगमंचपर प्रस्तुत करनेके लिअे ही होता है। अच्छे नाटकके लिअे अच्छे कलाकार ही नहीं; बल्कि अच्छा सूत्रधार (प्रोड्यूसर) भी चाहिअे जो स्वयं भी नाटककार जितना ही प्रतिभान्वित हो। यही नहीं, रसज्ञ दर्शक और साधन-सम्पन्न रंग-शाला भी चाहिअे। अिन पांच आवश्यक तत्वोंमेंसे हमारे पास कुछ वक्त तक अेक तत्व यानी लेख तो था। पर जब तक दूसरे सब तत्व भी अुपस्थित नहीं होंगे, और जब तक ये पांचों तत्व युगपत अेकत्र नहीं होंगे, तब तक कन्नड़ रंगमंचके भविष्यकी बात करना बेकार है। विडम्बना यह है कि अब भी मनोविनोदके अिस दृश्य-श्रव्यसाधनमें जनताको पहले जैसी ही तीव्र आसक्ति है। पर बद-किस्मतीसे हमारे यहां न तो अैसे नाटक-विमर्शक हैं और न ही अैसे प्रतिभासम्पन्न कलाकार हैं जो जनताको दिखा सकें कि कोअी नाटक क्यों, कब और कैसे सफल होता है।

अन्तमें अेक और बातका अुल्लेख करना होगा जो विशेष ध्यान देने योग्य है। जैसा कि आरम्भमें कहा जा चुका है, नाटक कला कन्नड़ जनताके खूनके कण-कणमें समाअी हुअी है। हमने अपने परम्परागत रंगमंचको अवनत और विलुप्त होने दिया और अिस तरह हम असली जनताकी रुचिसे विमुख हो गअे। अब केवल अंग्रेजी पढ़े मध्यम-वर्गके जीवनसे सम्बद्ध नाटक लिखकर हम अपनी जनताको रंगमंचसे विमुख कर रहे हैं। सामाजिक और शास्त्रीय शोध करनेवालों और विद्वानोंको चाहिअे कि वे अितिहासका अध्ययन करें और अिस उदा-सीनताके कारणोंका पता लगाअें। कन्नड़ संस्कृतिसे सम्बन्ध रखनेवाले विश्वविद्यालयोंको अैसे शोध-कार्यको आयोजित और प्रोत्साहित करना चाहिअे। सामाजिक कार्यकर्ता अपने अनुभव नअे लेखकोंके सामने रखें। आजकल नाटक-लेखनकी प्रतिभा रखनेवाले युवक पत्र-पत्रिकाओं और रेडियोके लिअे संभाषण लिखनेमें ही अपनी शक्ति व्यय कर डालते हैं। अगर दुर्भाग्यसे अुनकी कुछ रचनाअें स्वीकार हो जाती हैं तो वे अपनेको असली नाटककार मान बैठते हैं और अपना ही नुकसान करते हैं। सच्चा नाटककार तो अेक युगकी और कअी बार कअी सदियोंकी साधनाका सुफल होता है। पर समाजका प्रत्येक सदस्य अिस सुफलोदयके लिअे अनुकूल परिस्थितिके सृजनमें मदद देकर अितिहासके निर्माणमें हाथ बँटा सकता है।

('कर्नाटक दर्शन' के सौजन्यसे : अनुवादक—श्री नारायण दत्त)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्रत-अुद्यापन

—गान्धीजीके बारेमें स्व० गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुरका अेक संस्मरण

गम्भीर अुद्वेगके बीच, मनमें आशा लेकर, पूनाकी ओर यात्रा की। लम्बा पथ, जाते-जाते आशंका बढ़ती जाती, पहुँचकर न जाने क्या देखनेको मिलेगा! कोअी बड़ा स्टेशन आते ही मेरे दोनों संगी अखबार खरीद देते, मैं अुत्कण्ठित हो पढ़ने लगता। अच्छी खबर नहीं है। डॉक्टरोंने कहा है—महात्माजीके शरीरकी अवस्था खतरेकी सीमा (Danger zone) पर पहुँच गअी है। देहमें मेद या मांसकी मात्रा अितनी नहीं जो दीर्घकालसे चले आ रहे क्षयको सहन कर सके। आखिर मांस-पेशियां क्षीण होने लगीं। Apoplexy (मूर्च्छा) होनेसे अकस्मात् प्राणहानि हो सकती है। अिसीके साथ-साथ पत्रोंमें देखता हूं, बहुत दिनोंसे अेकके बाद अेक जटिल समस्याओंको लेकर अुन्हें अपनी और विरोधियोंसे गम्भीर चर्चा करनी पड़ी है। आखिर हिन्दू समाजके भीतर ही दलित-वर्गको विशेष राजनैतिक अधिकार देनेके सम्बन्धमें अुन्होंने दोनों पक्षोंको राजी कर लिया। शरीरकी समस्त यन्त्रणा दुर्बलताको जीतकर अुन्होंने असाध्य साधन किया है। अब अिंग्लैंडसे अिस व्यवस्थाके मंजूर हो जाने पर ही सब निर्भर करता है। मंजूर न होनेका कोअी संगत कारण नहीं हो सकता; क्योंकि प्रधान-मन्त्रीका यह-कथन ही था कि हिन्दू दलित-वर्गके साथ अेकमतसे जो निर्णयकर लेंगे अुसे स्वीकार करनेको वे बाध्य हैं।

आशा-निराशाके बीच झूलते हुअे २६ सितम्बरको प्रातः हम कल्याण-स्टेशनपर पहुंचे। वहां श्रीमती वासन्ती और श्रीमती अुर्मिलासे भेंट हुअी। वे लोग कलकत्तेसे किसी दूसरी गाड़ीसे कुछ ही पहले आ पहुँची हैं। और देरी न कर अपनी भावी आतिथेया द्वारा भेजी मोटर-गाड़ीमें बैठ पूनाके रास्तेपर चल पड़े।

पूनाका पार्वत्य-पथ रमणीय है। जब नगरके द्वारपर पहुँचे तो देखा युद्धका अभ्यास चल रहा है—बहुतसी आर्मर्डकार, मशीनगन और रास्तेमें स्थान-स्थानपर सैनिकोंके दल परेड और कवायद करते दृष्टिगोचर हुअे। आखिर श्रीयुत विठ्ठलभाअी ठाकरसी महाशयकी कोठीपर गाड़ी रुकी। अुनकी विधवा पत्नीने अत्यन्त सौम्य और प्रसन्न-मुखसे हमारा स्वागत किया और हमें साथ ले चलीं। सीढ़ियोंके दोनों ओर खड़ी हुअी अुनके विद्यालयकी छात्राओंने गान गाकर हमारा अभिनन्दन किया।

घरमें प्रवेश करते ही समझ लिया था कि अेक गम्भीर आशंकासे वहांका वातावरण बोझिल है। सभीके मुखपर दुश्चिन्ताकी छाया है। पूछनेपर ज्ञात हुआ, महात्माजीके शरीरकी अवस्था संकटापन्न है। विलायतसे तब तक भी खबर नहीं आअी थी। मैंने प्रधान-मन्त्रीके नाम अेक जरूरी तार भेज दिया।

तार भेजनेकी आवश्यकता नहीं थी। शीघ्र ही यह अफवाह सुनाअी पड़ी—विलायतसे अनुमति आ गअी है। किन्तु वह अफवाह सच है या नहीं अिसका प्रमाण मिला कअी घंटे बाद।

आज महात्माजीका मौन-दिवस है। अेक बजेके बाद मौन भंग करेंगे। अुनकी अिच्छा है मैं अुस समय अुनके पास रहूं। रास्तेमें जाते हुअे यरवदा जेलसे कुछ ही दूर हमारी मोटर रुक गअी। अंग्रेज सिपाही बोले—'किसी गाड़ीको आगे जाने देनेका हुक्म नहीं है।' भारतवर्षमें आजकल जेल जानेका पथ प्रशस्त है, यही तो जानता हूँ। गाड़ीके चारों ओर नाना लोगोंकी भीड़ जमा हो गअी।

जेलके अधिकारियोंसे अनुमति लेनेके लिअे हम लोगोंमेंसे अेक व्यक्तिके आगे बढ़ते ही श्री देवदास आ पहुँचे। जेलमें भीतर जानेका अनुमति-पत्र अुनके हाथमें था। पीछे सुना—महात्माजीने ही अुन्हें भेजा था। क्योंकि हठात् अुन्हें मनमें लगा—पुलिसने कहीं हमारी गाड़ी रोक दी है। हालांकि अिसकी कोअी सूचना अुन्हें नहीं मिली थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेकके बाद अेक लोहेके दरवाजे खुले और फिर बंद हो गअे। सामने दिखाअी पड़ा ऊंची दीवारोंका औद्धत्य, बंदी आकाश, सीधी लाअीनमें बंधा हुआ पक्का रास्ता और दो-चार वृक्ष।

मुझे जीवनमें दो चीजोंकी जानकारी जरा देरसे हुअी: अभी हाल ही में विश्वविद्यालयका द्वार पारकर अन्दर पहुँचा हूँ। जेलमें घुसते समय बाधा अुपस्थित होनेपर भी आखिर आ ही पहुँचा।

बाअीं ओर सीढ़ियां चढ़, दरवाजा पारकर, दीवारोंसे घिरे हुअे अेक आंगनमें हमने प्रवेश किया। दूर-दूर दो-चार कमरे। आंगनमें अेक छोटे आमके पेड़की घनी छायामें महात्माजी शय्याशायी थे।

महात्माजीने मुझे दोनों हाथोंसे अपने हृदयके निकट खींच लिया, बहुत देर तक अिसी प्रकार लगाअे रहे। बोले—'कितना आनन्द हुआ'।

शुभ सम्वादके ज्वारके साथ बहा चला आया हूँ, अिसीलिअे अुनसे अपने भाग्यकी प्रशंसा की। तब डेढ़ बजेका समय था। विलायतकी खबर भारत-भरमें फैल चुकी है। पीछे सुना, अुस समय राजनीतिज्ञोंके दल शिमलेमें मसौदेको लेकर आम सभाओंमें विचार कर रहे थे। अखबारवालोंको भी पता चल गया है। जिनकी प्राण-धारा प्रतिपल क्षीण हो मृत्यु-सीमाको प्रायः छूने लगी है केवल अुनके प्राण-संकट मोचनके लिअे यथेष्ट शीघ्रता नहीं।

अति दीर्घ लाल फीतेकी जटिल निर्भयतासे विस्मय हुआ। सवा चार बजे तक अुत्कण्ठा प्रतिक्षण बढ़ने लगी। सुनता हूँ, खबर दस बजे तक पूना पहुँची थी।

चारों ओर बन्धु-बान्धव घिरे हैं। महादेव, वल्लभभाअी, राजगोपालाचारी, राजेन्द्रप्रसाद, अिनको देखा। श्रीमती कस्तूरबा अेवं सरोजिनीको देखा। जवाहरलालकी पत्नी कमला भी थी।

महात्माजीका स्वभावतः शीर्ण शरीर शीर्णतम हो गया है। कण्ठ-स्वर प्रायः सुनाअी नहीं पड़ता। पेटमें अम्ल अेकत्रित हो गया है। अिसीसे बीच-बीचमें सोड़ा मिलाकर पानी पिलाया जा रहा है। डाक्टरोंका दायित्व चरम-सीमापर पहुँच गया है।

किन्तु मानसिक शक्तिका तनिक भी ह्रास नहीं हुआ। चिन्तनकी धारा प्रवहमान, चैतन्य-अपरिश्रान्त। अनशनके पहलेसे ही कितनी दुरूह चिन्ताओं, कितने जटिल विचारोंमें अुन्हें निरंतर निरत रहना पड़ा है। समुद्रपारके राजनीतिज्ञोंसे पत्र-व्यवहारमें मनपर कठोर घात-प्रतिघात हुअे हैं। अुपवास-कालमें नाना दलोंके प्रबल दावोंने अुनकी अवस्थाके प्रति तनिक भी ममता नहीं दिखाअी, यह सभी जानते हैं। किन्तु मानसिक दुर्बलताका कोअी चिह्न भी तो नहीं है। अुनके चिन्तनकी स्वाभाविक स्वच्छ प्रकाश-धारामें मलिनता नहीं आअी। शारीरिक कष्ट-साधनाके भीतरसे आत्माकी, अपराजित अुद्यमकी अिस मूर्तिको देखकर आश्चर्य होने लगा। पास न पहुँचनेपर अिस प्रकारकी अनुभूति न होती। कितनी प्रचण्ड शक्ति है अिस क्षीणकाय-पुरुष की।

मृत्युके वेदी-तल-शायी अिन महत् प्राणोंकी वाणी आज भारतवर्षके कोटि-कोटि प्राणों तक पहुँच गअी। कोअी बाधा अुसे रोक न सकी—दूरत्वकी बाधा, अींट-पत्थरोंकी बाधा, प्रतिकूल 'पॉलिटिक्स" (राजनीति)-की बाधा। अनेक शताब्दियोंकी जड़ताकी बाधा आज अुसके सामने खाकमें मिल गअी।

महादेव बोले—महात्माजी मेरी ही प्रतीक्षा कर रहे थे। अपनी अुपस्थितिसे राष्ट्रीय समस्याओंके समाधानमें सहायता कर सकूं मेरी अितनी योग्यता नहीं। अुन्हें जो तृप्ति दे पाया हूँ, यही मेरा आनन्द है।

सभीके भीड़कर खड़े होनेसे यह अुनके लिअे कष्टप्रद होगा, यह सोच हम हटकर बैठ गअे। बहुत देरसे प्रतीक्षा कर रहे हैं—कब खबर पहुँचेगी। अपराह्णकी धूप तिरछी होकर अींटोंकी चहार-दीवारीपर चढ़ रही थी। यहाँ-वहाँ दो-चार लोग, शुभ्र-खद्दरधारी स्त्री-पुरुष शान्तभावसे बातचीत कर रहे हैं।

लक्ष्य करनेकी बात है—कारागारके बीच यह जनता। किसीके व्यवहारमें प्रश्रयजनित शिथिलता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं। चरित्र-शक्ति विश्वास अुत्पन्न करती है। जेलके अधिकारी यही विश्वासकर अिन लोगोंको अत्यन्त स्वतन्त्रतापूर्वक मिलने-जुलने दे रहे थे। अिन लोगोंने महात्माजीकी प्रतिज्ञाके प्रतिकूल किसी भी अवसरका लाभ नहीं अुठाया। आत्म-मर्यादाकी दृढ़ता और अचंचलता अिनमें परिस्फुटित है। देखते ही समझा जा सकता है कि भारतकी स्वराज्य-साधनाके योग्य साधक हैं ये लोग!

आखिर जेलके अधिकारी हाथमें गवर्नमेण्टकी मुहर-लगा लिफाफा ले अुपस्थित हुअे। अुनके चेहरेपर भी आनन्दका आभास मिला। महात्माजी गम्भीर-भावसे धीरे-धीरे पढ़ने लगे। मैंने सरोजिनीसे कहा, अब अुनके चारों ओरसे सबका हट जाना अुचित होगा। महात्माजीने पढ़ना समाप्तकर संगी-साथियोंको पुकारते सुना, अुन्होंने अुन लोगोंसे विचार करनेको कहा। अेवं अपनी ओरसे बताया कि कागज डॉक्टर अम्बेडकरको दिखाना आवश्यक है। अुन (डॉ. अम्बेडकर) का समर्थन मिलनेपर तभी वे निश्चित होंगे।

मित्रोंने अेक तरफ खड़े हो चिठ्ठी पढ़ी। मुझे भी दिखाअी। चिठ्ठीकी भाषा कूटनीतिक है। सावधानीसे लिखी हुअी, सावधानीसे ही पढ़नी होती है। पता चला, महात्माजीके अभिप्रायके प्रतिकूल नहीं है। पण्डित हृदयनाथ कुंजरूको यह भार दिया गया कि चिठ्ठीके विषयका विश्लेषण कर महात्माजीको सुनाअेंगे। अुनकी प्राञ्जल व्याख्यासे महात्माजीके मनमें और कोअी संशय नहीं रहा। अनशन-व्रत पूर्ण हुआ।

चहार-दीवारीके निकट छायामें महात्माजीकी शय्या सरकाकर लाअी गअी। चारों-ओर जेलके कम्बल बिछाकर सभी बैठ गअे। श्रीमती कमला नेहरूने नीबूका रस तैयार किया। (Inspector General of Pirsons) (जेलोंके अिन्सपेक्टर जनरल)–जो गवर्नमेण्टका पुत्र लेकर आअे थे–ने अनुरोध किया। "श्रीमती कस्तूरबा अपने हाथोंसे महात्माजीको रस दें।" महादेव बोले, 'जीवन जखन शुकाअे जाअे करुणा धारायं अेसो' गीतांज्जलिका यह गान महात्माजीको प्रिय है।' गीतका सुर भूल गया था। अुस समय जैसा बन पड़ा सुर देकर गाना पड़ा। पण्डित श्याम शास्त्रीने वेद-पाठ किया। अुसके बाद महात्माजीने श्रीमती कस्तूरबाके हाथसे धीरे-धीरे नीबूका रस पान किया। अन्त साबरमतीके आश्रमवासियों अेवं अेकत्रित सभीने 'वैष्णवजन तो तेने कहिअे' भजन गया। फल और मिष्टान्न वितरण हुआ, सभीने ग्रहण किया।

जेलके अवरोधोंके भीतर महोत्सव! अैसी घटना और कभी भी नहीं घटी। प्राणोत्सर्गका यज्ञ हुआ जेलखानेमें, अुसकी सफलताने यहीं रूप धारण किया। मिलनकी यह अकस्मात् आविर्भूत अपरूप मूर्ति, अिसे कह सकता हूँ 'यज्ञसम्भवा।'

रातको पूनाके–जिनमें पण्डित हृदयनाथ कुंजरू प्रमुख थे–अेकत्रित विशिष्ट नेताओंने मुझे आ पकड़ा। अगले दिन महात्माजीकी वर्षगांठके अुत्सवमें मुझे सभापति होना पड़ेगा; मालवीयजी भी बम्बअीसे आअेंगे। मैंने सुझाव दिया कि मालवीयजीको सभापति बनाकर मैं दो-चार सामान्य बातें लिखकर पढ़ दूंगा। शारीरिक अस्वस्थताकी चिंता न कर शुभ दिनकी अिस विराट जनसभामें योग देनेके लिअे तैयार हुअे बिना अपनेको रोक न सका।

तीसरे पहर शिवाजी मंदिर नामक-विशाल मुक्त आंगनमें विराट जनसभा हुअी। बहुत कष्टसे भीतर प्रवेश कर पाया। सोचा, अभिमन्युकी तरह प्रविष्ट तो हो-गया किन्तु निकलनेका क्या अुपाय है! मालवीयजीने अपनी विशुद्ध हिन्दीमें आरम्भिक भाषणमें भली-भांति समझाया कि अस्पृश्यताका विचार हिन्दूशास्त्र-संगत नहीं है। अुन्होंने बहुतसे संस्कृत श्लोकोंका अुद्धरण दे अपनी युक्तिको प्रमाणित किया। मेरा कण्ठ क्षीण है। मेरी सामर्थ्य नहीं कि अितनी बड़ी सभामें अपनी बात लोगोंके कानों तक पहुँचा सकूं। मुँह ही मुँहमें दो-चार बातें कहीं। बादमें मेरी रचनाओंका पाठ करनेका भार लिया पण्डितजीके पुत्र गोविन्द मालवीयने। अपराह्न-के क्षीण प्रकाशमें अदृष्टपूर्व रचना अिस प्रकार धारा-प्रवाह और सुस्पष्ट कण्ठसे पढ़ गअे, अिससे विस्मय हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी समस्त रचनाअें आप लोग पत्रोंमें देख पाअेंगे। सभामें आनेके थोड़ी देर पहले अुनकी पाण्डुलिपि जेलमें जाकर महात्माजीके हाथोंमें दे आया था।

मोतीलाल नेहरूकी पत्नी अपने भाअी-बहनोंको लक्ष कर कुछ बोलीं, सामाजिक समानताके व्रतकी रक्षामें, ताकि जरा भी त्रुटि न हो। श्रीयुत राजगोपालाचारी, राजेन्द्रप्रसाद आदि प्रमुख अन्यान्य नेताओंने भी अपने अन्तरकी व्यथा प्रकट करते हुअे सामाजिक अशुचिको दूर करनेके लिअे देशवासियोंका आव्हान किया। सभामें अेकत्रित विशाल जनसमूहने हाथ अुठाकर अस्पृश्यता निवारणकी प्रतिज्ञा की। यह देखकर लगा कि आजकी वाणी सबके अन्तस्तल तक पहुँची है। कुछ ही दिन पहले अिस प्रकारके दुरुह संकल्पका समर्थन अितने हजार लोगों द्वारा सम्भव नहीं था।

मेरा काम समाप्त हुआ। अगले दिन प्रातः बहुत देर तक महात्माजीके पास था। अुनके और मालवीयजीके साथ बहुत देर तक नाना विषयोंपर बातचीत हुअी। अेक ही दिनमें महात्माजीने अप्रत्याशित बल प्राप्त कर लिया है। अुनका कण्ठस्वर दृढ़तर और ब्लडप्रेशर प्रायः सामान्य था। अतिथि-अभ्यागत अनेक ही आ रहे हैं और प्रणाम कर आनन्द प्रकट कर जाते हैं। महात्माजी सभीके साथ हँसकर बात करते हैं। शिशुओंका दल पुष्प लेकर आता है। अुनको लेकर अुन्हें कितना आनन्द है। संगी-साथियोंसे सामाजिक समताके प्रसंगमें नाना प्रकारकी बातचीत चल रही है। अब अुनकी चिन्ताका प्रधान विषय है—हिन्दू-मुसलमानोंका विरोध अुन्मूलन।

आज जो महात्माका जीवन विराट् भूमिकामें अुज्ज्वल होकर दिखाअी दिया, अिसमें मानवमात्रमें महामानवको प्रत्यक्ष करनेकी प्रेरणा है। वही प्रेरणा भारतमें सर्वत्र सार्थक हो।

मुक्ति-साधनाका सच्चा पथ मनुष्यकी अैक्य साधनामें है। राष्ट्रकी पराधीनता हमारे सामाजिक सहस्रों भेद-प्रभेद और विच्छेदके सहारे ही परिपुष्ट है।

जड प्रथाके समस्त बन्धनोंको छिन्न-भिन्नकर देनेपर अुदार अेकताके पथपर मानव सभ्यता अग्रसर होगी। वही दिन आज आया है।

(—अनु० श्री हरिशंकर शर्मा, शान्तिनिकेतन)

कविता

अै शब्द तुम्हें शत नमस्कार

: श्रीकान्त जोशी :

लो नमस्कार,
अै शब्द ! तुम्हें शत नमस्कार।
दो शक्ति मुझे, अपनी पलकोंपर
वजन तौलनेका,
दो श्रेय शब्द ! व्यक्तित्व तुम्हारा
मुझे खोलनेका।
लो नमस्कार,
अै शब्द ! तुम्हें शत नमस्कार।
दो नेह मुझे अपनी वाणीमें
गीत पुकार सकूं,
खेअी आस्था, मुझे विश्वासोंको—
संस्कार सकूं।
लो नमस्कार,
अै शब्द ! तुम्हें शत नमस्कार।

हर 'शब्द' 'शब्द'
मणिधरकी मणि-सा
दुर्लभ है, मँहगा है,
हर 'शब्द' 'शब्द' हीरा है,
पन्ना है, मूंगा है।
हर शब्द, शब्द, है सत्य-मग्न
मय शिवं शिवं, सौंदर्य-लग्न
क्षय-विश्व-शक्तिका महोच्चार !!
लो नमस्कार,
अै शब्द ! तुम्हें शत नमस्कार ॥
जिस जगह अुचित,
जिस जगह शब्दका लगे चित्त,
कर सकूं वहीं, अै वाक्-अश्व
मैं तेरी महिमाका प्रसार।
लो नमस्कार ! लो नमस्कार !!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविताकी कविता

--पुरुषोत्तम खरे

दृष्टि तुम्हारी रही खोजती सदा प्रियाकी कोमल बाहें
साँसें गिनती रहीं, तुम्हारी सदा, प्रियाकी बेकल आहें
तृष्णाओंके पीछे दौड़े, अपने मन-मृगको कर पागल
नाच नचाता रहा; तुम्हारी तरुण कामनाओंको काजल
शब्दोंको बेहोश बनाये रही, सदा रुनझुन पायलकी
जगसे दूर तुम्हें, भरमाये रही, सदा माया आँचलकी

× × ×

अपने भीतर सीमित रहकर, आधी उम्र तुम्हारी 'जी' ली
यौवनके रसकी प्यासोंने; आधी उम्र तुम्हारी पी ली
(क्षणभरके सुखकी खातिर, अिन्द्रिय-लोलुप सपने रचनेमें)
कागज़ किये खराब; शराबी रातोंका लेखा रखनेमें
"हेय तुम्हारी वह रचना; जिसमें कि प्रतिष्ठित 'आज' नहीं हो
वह लिखना; जिसमें युग-सत्योंकी; गुंजित आवाज़ नहीं हो"

× × ×

क्या विचार वे? जो कि 'घुटनकी काराओं' को तोड़ न पाये
शब्द मरे वे, जो कि दमनकी धाराओंको मोड़ न पाये
वाणी पंगु; विषमतासे-जो समताकी लय; जोड़ न गाये
छंदोंके आकाश व्यर्थ वे; जो चेतनके काम न आये
जड़ वे स्वर, जिनने जन-जनके हृदय-प्राणको नहीं दुलारा
गूँजें वे निष्प्राण; सुसुष्ट चेतनाको जिनने न अुभारा

× × ×

कविता है विस्तार, नहीं वह केन्द्र--परिधि हो जिसकी प्रणयन
प्यास रूपकी; या चमड़ेकी भूख, वासनाका आवेदन
चारण-भक्ति, स्वार्थोंकी असफलताओंका क्रन्दन; गाली--
कविता जीवन-सविताके क्षण-जलकी हलचल! स्वर-गति वाली
कविता—वह मधुमास, कि है सम्पूर्ण धराकी सुषमा जिसमें
अैसा वह आकाश; अनेकों सूरज और चन्द्रमा जिसमें!!

× × ×

कविता है वह मेघ, कि जिससे जीवनकी फसलें हरियातीं
अैसी धूप; कि जिससे, घड़ियोंकी कलियाँ रससे भर जातीं
कविता : वह अनुरक्ति; प्रेरणा देती है जो सदा सृजनको
कविता : है वह शक्ति; कि जो गतिमय करती है सदा लगनको
अैसी चन्दन-दृष्टि : अँधेरेका; न साँप –जिसको डस पाता
अैसी झिलमिल ज्योति : समयका राहु नहीं जिसको गस पाता

× × ×

कविता है वह प्यार : कि जिसके रिश्ते फैले अखिल जगतमें
जिसमें सबके सुख-दुख बँटते, नचते अेक तान स्वर-गतमें
कविता: संस्कृति-शान्ति-सभ्यता-कला, और जीवनकी 'गीता'!
गंगाजल, बाअिबिल; कुरान; मंदिर-मस्जिदकी तरह पुनीता!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी शब्दोंकी व्युत्पत्ति (लेखांक-२)

— पं० बेचरदासजी दोशी

१२. **क्षीर**—प्राकृत क्पीर तथा खीर। रामचरित मानसकी भाषामें क्पीर तथा खीर दोनों प्रचलित हैं। क्पीर सागरका अर्थ दूधका समुद्र–क्पीर समुद्र। क्पीर सागर सयन (सोरठा ३ पृ. ३)। क्पीरसागरसयन शब्दका पौराणिक अर्थ–जिनका सयन–बिछौना–क्पीर-सागरमें है अर्थात् विष्णु। दूसरा अर्थ जिनका सयन–बिछौना–क्पीर सागरके समान अुज्ज्वल–शुक्ल–शुक्लतम है। संस्कृतमें अिसका समान शब्द क्पीर। क्पीरका मूल धातु क्पर (क्पर-गिरना-टपकना ? खरना।) वेदोंकी भाषामें 'अच्छ' शब्दका प्रयोग आता है। 'अच्छ'का–समान संस्कृत 'अक्प' बताया गया है। अतः यह सिद्ध होता है कि 'क्प' के बदले 'छ' का प्रयोग करनेका रिवाज अति प्राचीन है। देखो गुजराती भा. पृ. ६२। प्राकृत भाषामें भी 'क्प' के स्थानमें 'छ' तथा 'ख' का प्रयोग होता है। लच्छण–लक्पण। लक्खण–लक्पण। मच्छिआ-मक्पिका। मक्खिआ–मक्पिका, अित्यादि। देखो हेमचन्द्र ८।२।३। संस्कृत भाषामें भी अैसे शब्दोंका प्रयोग वर्ज्य नहीं: पिच्छ–पक्प, पुच्छ–पक्प, छुरी–क्पुरी, कच्छ–कक्प, अित्यादि। देखो गुजराती भा. पृ. ९४। तथा खुल्लक–क्पुल्लक, पुङ्ख–पक्प, खुर–क्पुर, 'खुर' शब्दका प्रयोग तो महाकवि कालिदासने भी अनेक जगह अपने रघुवंशमें किया है। 'रजकणैः खुरोद्धूतैः' तथा 'तस्याः खुरन्यास पवित्र पांसु'–अित्यादि। रघुवंश प्रथम सर्ग श्लो. ८५. तथा द्वितीय सर्ग श्लो. २)

१३. **सयन**—प्राकृत सयण। रामायणी भाषामें सयन। संस्कृत समान शब्द शयन। शयनका मूल धातु (शी–सोना) प्राकृत भाषामें तथा अपभ्रंश भाषामें श तथा षका प्रयोग नहीं है; मात्र सकारका प्रयोग है। तुलसीदासजीने अपने अिस काव्यमें 'स' कारका ही अधिक प्रयोग किया है : स्याम (श्याम), संभु (शम्भु) वस (वश) अित्यादि। 'श' कारका प्रयोग नहींवत् है तथा 'ष' कारका तो प्रयोग 'दोष' 'रोष' 'हरष' 'विषाद' अित्यादि अनेक शब्दोंमें किया है।

१४. **रमन**—प्राकृत रमण। रामचरितकी भाषामें रमन। प्राकृत करुणा। राम. भाषामें करुना। (सोरठा ४ पृ. ३)। (प्रस्तुतमें प्राकृत भाषा तथा अपभ्रंश प्राकृत भाषा अिन दोनों को बतानेके लिअे 'प्राकृत' शब्दका प्रयोग किया है, यह ख्याल में रहे।) संस्कृत समान शब्द रमण (मूल धातु रम्)। सं. स. करुणा। तुलसीदासजी अपने अिस काव्यमें णकारका प्रयोग नहींवत् करते हैं और अधिकतर 'न' कारका ही प्रयोग करते हैं: गुन (गुण), गन (गण), हरनी (हरणी), करनी (करणी), अित्यादि।

१५. **जाहि**—जाहि दीनपर नेह-(सोरठा ४ पृ. ३) अिस वाक्यका अर्थ: जिसमें दीनोंके अूपर स्नेह है अर्थात् जिसके चित्तमें दीनजनोंके अूपर स्नेह रखनेका भावहै। जाहि–'ज' शब्दका सप्तमीका अेक वचन 'जहिं' होता है। देखो हेमचन्द्र ८।३।६०। राम० भाषामें 'जहि' के बदले 'जाहि' रूप बना मालूम होता है। सं. स. यस्मिन्. अथवा अपभ्रंश भाषामें 'ज' शब्दके षष्ठीका अेक वचन 'जासु' रूप होता है। देखो हे० म० व्या०।८।४।३५८। तथा प्राकृतमें जास, जस्स, जासु, जहो, जस्सु-अितने रूप बनते हैं। अिन रूपोंमेंसे प्रस्तुत 'जाहि' रूपका किसीके साथ साम्य नहीं दीखता। अतअेव अिधर प्रा. 'जहिं' के साथ अुसका साम्य दरसाया है।

१६. **नेह**—प्रा. नेह। 'नेह' पद सं. 'स्नेह'का समान शब्द है। गुजराती भाषामें भी अिसी अर्थमें 'नेह' शब्दका व्यवहार प्रचलित है। प्राकृतमें सणेह और नेह दोनों शब्द प्रचलित हैं। देखो : हे० म० व्या० ।८।२।१०२। संस्कृत भाषाकी अपेक्षासे 'स्नेह' शब्दमें 'स्निह' धातु है।

१७. **मरदन**—मरदन मयन (सोरठा ४ पृ. ३) प्राकृत–मद्दण। संस्कृत समान शब्द 'मर्दन'। 'मर्दन' शब्दमें 'र्द' के र् तथा द के बीचमें 'अ' आ जानेसे मरदन, रत्नका रतन, अग्निका अगणि, प्लक्पका पलक्खं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिसी प्रकार मरदन-मर्दन। देखो: हेम० व्या० ८।२।१००। १०१ तथा १०२–१०३। सं. मर्दन शब्दमें 'मृद्' धातु है। मृद्–पीसना–चूरा करना–अेकदम पीस डालना। प्रस्तुत सोरठेमें 'मयन' शब्द लुप्तपसुयंत है अिसका अर्थ–मदनको पीस डालनेवाले––

१८. **मयन**––प्रा. मयण। राम. च. भा. मयन.। सं. स. मदन.। 'मदन' शब्दमें धातु 'मद' है। प्राकृत भाषामें दो स्वरोंके बीचमें आनेवाले क ग च ज त द प य व व्यंजनोंका लोप हो जाता है।

काय (काक), नयर (नगर), कय (कच) पया (प्रजा), पायाल (पाताल), गया (गदा), मयण (मदन), रिअु (रियु), नयण (नयन), लायण्ण (लावण्य), हेमचन्द्र ८।१।१७७। वेदोंकी भाषामें भी अिस प्रकार व्यंजन लोप होता है। वे० शये (शेते), वे० अीशे (अीष्टे), वै. पअुग (प्रयुग), वै. सीमहि (सिव्–महि), वै. यामि (या चामि), वै. अन्ति (अन्तिके)---देखो गुजराती भाषानी अुत्क्रान्ति-मुम्बअी युनिवर्सिटी प्रकाशित, पृ. ५३, ५८)

१९. **वंदअु**––वंदअु गुरु पदकंज (सोरठा ५ पृ. ३) वंदअु–वंदन करता हूँ। प्राकृत भाषामें प्रथम पुरुष अेक वचनमें 'मि' प्रत्यय आता है और वह प्रथम पुरुषके अर्थको सूचित करता है। प्रा. वंदामि। अपभ्रंश भाषामें 'मि' प्रत्यय और 'अु' प्रत्यय प्रथम पुरुषके अेक वचनको सूचित करते हैं। वंदामि तथा वंदअु प्रस्तुत (वंदअु) क्रियापदमें कवि तुलसीदासने अिसी 'अु' प्रत्ययका प्रयोग करके 'वंदअुं' क्रियापदका प्रयोग किया है। प्राचीन और अर्वाचीन गुजरातीमें भी वर्ण 'वुं', गाअुं अित्यादि क्रियापदोंमें 'अुं' प्रत्ययका प्रयोग होता है। देखो हेमचन्द्र ८।४।३८५। कड्ढअुं, कड्ढामि।

२०. **कंज**––'क' शब्द जलका सूचक है। अिसी प्रकार 'कं' पद भी जलवाचक है। 'ज' का अर्थ जन्म लेनेवाला-अुत्पन्न होनेवाला अर्थात् कं-जल-से, ज-जन्म लेनेवाला अर्थात् कमल। 'ज' शब्दमें संस्कृत भाषाकी अपेक्षासे 'जन्' धातु समझना चाहिअे।

२१. **तमपुंज**––प्रा. तम। तम–अन्धकार। सं. स. तमस्। प्राकृत भाषाओंमें किसी भी व्यंजनांत शब्दका अन्तिम व्यंजन लुप्त हो जाता है। देखो हेमचन्द्र ८।१।११। राम० भाषामें भी जस (यशस्) जोती (ज्योतिष्) जग (जगत्) सरि (सरिव्) अित्यादि अनेक प्रयोग सुलभ हैं। वेदोंकी भाषामें भी शब्दोंके अन्तिम व्यंजनका लोप होनेका रिवाज है। वै. पश्मा (पश्मात्), वै. अुच्चा (अुच्चात्), वै. नीचा (नीचात्) वै. दिद्यु (दिद्युत्), वै. युष्मा (युष्मान्), वै. स्य (स्यः)। अिस निशानमें दिअे हुअे प्रयोग संस्कृत भाषाके हैं। देखो गुज. पृ. ५४–५५।

२२. **जासु**––जासु वचन–(सोरठा ५ पृ. ३)। प्रा. जासु–जिसका सं. स. यस्य। 'जासु' प्रयोग प्राकृतका शुद्ध प्रयोग है और भाषामें वह ज्योंका त्यों अविकल रूपसे कवि द्वारा अुपयुक्त हुआ है। देखो 'जाहि' का विवेचन।

२३. **पदुम**––गुरुपद पदुम परागा–(चौ. १ पृ. ३)। प्रा. पदुम अथवा पअुम–कमल। पदुम शब्द भी प्राकृतका शुद्ध प्रयोग है और वर्तमानमें प्रचलित भाषामें भी प्रसिद्ध है। कितने लोग 'पदुम' के स्थानमें, 'पदम'-शब्दका भी व्यवहार करते हैं। सं. स. पद्म। कितने संयुक्त वर्णोंमें बीचमें स्वर रखनेकी प्रक्रिया अधिक प्राचीन है। वेदोंकी भाषामें भी अैसे शब्दोंका प्रयोग हुआ है जिनमें संयुक्त वर्णमें स्वर लगाया गया हो। वै. तनुवम् सं. तन्वम्, वै. सुवर्गः सं. स्वर्गः वै. त्रियम्बकम् सं. त्र्यम्बकम्। देखो गुजराती भा. पृ. ६०। प्राकृत भाषामें भी अैसा स्वर रखनेका रिवाज है। दुवार-द्वार, पदुम-पद्म, मुरुक्ख-मूर्ख। देखो हेमचन्द्र ८।२।१०० से ११५ तक। संस्कृतमें भी अैसे प्रयोग दुर्लभ नहीं: हरिष–हर्ष, वरिष–वर्ष, कमर–कम्र, चन्दिर–चन्द्र।

२४. **सुबास**––सुबास सरस अनुरागा-(चौ. १ पृ. ३) सुबास-सुगंध। सुवास और सुबास दोनों शब्द समानार्थक हैं। तुलसीदासजी 'व' कारके स्थानमें अधिकतर 'ब'कारका प्रयोग करते हैं: बस–वस, वणिग–बणिग, विमल–बिमल, विभूति–बिभूति अित्यादि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राकृत भाषामें भी 'व' के स्थानमें 'व' का अुच्चारण प्रचलित है। देखो हेमचन्द्र ८।१।२३७।

परागा—अनुरागा :— ये दोनों पद प्रथमा विभक्तिके अेक वचन रूप हैं। अपभ्रंश प्राकृतमें बहुत करके नामोंका विभक्तिरहित भी प्रयोग होता है, और जब विभक्ति न हो तब नामका अन्य स्वर ह्रस्व हो तो दीर्घ हो जाता है तथा दीर्घ हो तो ह्रस्व हो जाता है। जैसे ढोल्लका ढोल्ला (प्रथमा, अेकवचन) सामलका सामला (प्रथमा अेकवचन) दीहका दीहा (द्वितीय अेक वचन) देखो हेमचन्द्र ८।४।३३०।

अिसी नियमके अनुसार अिधर 'पराग' का परागा तथा 'अनुराग' का अनुरागा। ये प्रथमांत हैं। अिधर कोअी छंदके कारण दीर्घ नहीं हुआ है यह बात ख्यालमें रहे।

२५. **अमिय**—अमिय मूरिमय चूरन चारू—(चो. १ पृ. ३)। अमिय—अमृत जिसके खानेसे मृत्यु नहीं होती है जैसा कोअी द्रव्य 'अमिय' शब्दका अभिधेय है। प्राकृतमें ऋकारका प्रयोग सर्वथा वर्ज्य है, हां, अपभ्रंश प्राकृतमें कहीं-कहीं ऋकारका प्रयोग निषिद्ध नहीं। तुलसीदासजी भी 'कृषि' अित्यादि शब्दोंमें ऋकारका प्रयोग करते हैं और 'अमिय' अित्यादि शब्दोंमें ऋकारका प्रयोग नहीं करते हैं। प्राकृत भाषामें कितने शब्दोंमें ऋकारके स्थानमें 'अ' कारका प्रयोग होता है। घय-घृत-घी, कय-कृत-किया। तण-तृण-तरणुं (गु.) कितने शब्दोंमें ऋकारके स्थानमें 'अि' कारका तथा 'अु' कारका भी प्रयोग होता है: अि—सिंगार-शृङ्गार-सिंगार, दृष्ट-दिट्ठ-दीठुं (गु.), कृसरा-किसरा-खीचड़ी. अु- वुड्ढ-वृद्ध-बूढ़ा, पाअुस-प्रावृष-पाअुस (मराठी)। भाअु-भ्रातृ-भाअु (मराठी)। कितने शब्दोंमें 'रि' कारका प्रयोग भी होता है। रिसि-ऋषि, रिच्छ-ऋक्ष, रिद्धि-ऋद्धि अित्यादि। देखो हेमचन्द्र ८।१।१२६ से १४१ तक। 'अमिय' का सं. स. अमृत। वेदोंकी भाषामें भी ऋकारके स्थानमें 'र' कारका तथा कहीं कहीं 'अु' कारका प्रयोग पाया जाता है: र—वै. रजिष्ठम् सं. ऋजिष्ठम्। अु—वै. वुन्द सं. वृन्द, वै. कुट सं. कृत अित्यादि। देखो गुजराती भा. पृ. ६१।

अमरकोशमें 'अमृत' का अन्य अर्थ अिस प्रकार बताया है: मृतका अर्थ याचना—भीख मागना, अमृतका अर्थ याचना नहीं करना—भीख नहीं मांगना—पुरुषार्थ-पूर्वक रहना। "द्वे याचित-अयाचितयोः यथा संख्यं मृत-अमृते"—(अमरकोश १९ वैश्यवर्ग श्लो. ३) अर्थात् मृत—याचित। अमृत—अयाचित।

२६. **मूरि, मूरि मूली**—जड़ जैसे वृक्षका मूल। ल के स्थानमें 'र' का अुच्चारण गुजरातकी कअी प्रान्तिक बोलियोंमें प्रचलित है: हालार-(जामनगर) तरफकी बोली में 'मूलचन्द', नामको 'मूरचन्द', 'मूल-शंकर' को 'मूरसंकर' कहते हैं 'मूला' को 'मूरा' बोलते हैं। प्राकृतमें 'स्थूल' के स्थानमें 'थूर' अुच्चारण भी संमत है। संस्कृतमें भी परिघ-पलिघ, पर्यङ्क—पल्यङ्क, परायते—पलायते अित्यादि 'र' के स्थानमें 'ल' कारके अुच्चारण सुविश्रुत हैं। तथा 'ड' 'ल' 'र' ये तीनों व्यंजन बहुत प्राचीन समयसे वैदिक भाषामें, संस्कृत भाषामें तथा प्राकृत भाषामें अेक -दूसरेके स्थानमें प्रयुक्त होते आअे हैं। अतः मूलीका मूरी अुच्चारण कोअी नया प्रयोग नहीं।

२७. **चूरन**—सं. स. चूर्ण। मूलधातु चूर् 'चूर्ण' और 'चूरन' ये दोनों समान शब्द हैं। बीचमें 'अ' आनेसे चूरन अुच्चारण हुआ है। संयुक्त व्यंजनों में 'अ' 'अि' वा 'अु' का आ जाना प्राचीनतम पद्धतिसे सिद्ध है। २३ 'पदुम' शब्दका विवेचन देखो।

२८. **समन**—समन सकल भवरुज परिवारू। समन माने शांति करनेवाला। प्राकृत-समण। राम० भाषामें समन। सं. स. शमन। मूल धातु शम। देखो १३ सयनका विवेचन, श कारके स्थानमें सकारका व सकारके स्थानमें शकारका प्रयोग वैदिक भाषाके जमानेसे चला आ रहा है। देखो: स्याल व श्याल—साला—वधूका भाअी, शूर्य व सूर्य—सूप—सूपडुं (गु.) काशी व कासी, शाक व साक (साग भाजी), श्वान व स्वान। अिसके अधिक अुदाहरणोंके लिअे देखो शब्दरत्नाकर कोश कां. १, २, ३, ४ में आअे हुअे श्लोक। अिसी प्रकार ष कारके स्थानम सकारका तथा सकारके स्थानमें ष कारके भी प्रयोग जिसम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो वैसे भी कअी अुदाहरण सुलभ हैं। देखो: वृषी व वृसी, चाप व चास, मषी व मसी, अित्यादि।

और शब्दरत्नाकर कोश कां. ३, ४ प्राकृतमें तो साधारणतया श और ष का प्रयोग नहीं होता। मात्र अुन दोनोंके स्थानमें सकारका प्रयोग होता है। देखो हेमचन्द्र ८।१।२६०।

२९. **बिभूति**—'सुकृत संभुतन विमल बिभूती' (चौ. २ पृ. ३) प्रा. विभूति। सं. स. विभूति। अमरकोशमें 'भूति' शब्दके दो अर्थ बताअे हैं। "भूतिर्भस्मनि संम्पदि", भूति माने भस्म–राख तथा संपत्ति–धन–लक्ष्मी —(तृतीयकाण्ड, नानार्थवर्ग श्लो. ६९)। हेमचन्द्रने अपने अनेकार्थ संग्रहमें लिखा है कि—"भूतिस्तु भस्मनि मांसपाकविशेषे च संपद्–अुत्पाद्योरपि"–(द्वितीयकाण्ड श्लो. १८१, १८२)।

प्रस्तुतमें बिभूति शब्द भी 'भूति' के अर्थका सूचक है। संभुतन–शंभुतनु–शंभुके शरीरपर लगी हुअी विभूति–भस्म।

गुजरातीमें भभूति शब्द तथा हिन्दीमें भभूत शब्द भी विभूतिका समानरूप है।

३०. **तन**—तनु अथवा तणु. सं. स. तनु–तन–शरीर। मूल धातु तन्। तनु, अंग, शरीर, देह, काय, क्षेत्र, कलेवर अित्यादि अनेक पर्याय शब्द हैं।

३१. **किअें तिलकु**—किअें तिलकु गुनगन बस करनी।

शंभु–महादेवके शरीरपर लगी हुअी विभूति–भस्मका तिलक करनेसे गुणगण अपने वशमें आ जाते हैं अर्थात् जो पुरुष वा नारी शंभुकी यथार्थ भक्ति तन, मन और वचनसे करता है वह अवश्य गुणी हो जाता है। प्रस्तुतमें शुद्ध भक्ति–सेवाका भाव समझना आवश्यक है। बाहरी शुष्क आडंबरी सेवाका भाव अिधर कतअी अभिप्रेत नहीं है, यह ख्याल में रहे। तिलक करनेसे अैसा अर्थ प्रतिपादन किया है, अिससे मालूम होता है कि किअें और तिलक दोनों पद तृतीया विभक्तिके हैं। तिलकेन-कृतन् अर्थात् विभूतिके तिलक करने से, रूप साधनसे गुण प्राप्ति होती है। प्रस्तुतमें 'किअें' प्रयोग शुद्ध अपभ्रंश प्राकृतका है। अप. प्रा. में तृतीयाके अेक वचनमें अकारांत नामको 'अे' प्रत्यय लगता है। देखो हेमचन्द्र ८।४।३३३ तथा ३४२। दहअें प वसंतेण। प्रा. किअ, तृतीया किअें। सं. स. कृत–कृतेन। देखो २५ अमियका विवेचन। प्राकृतका तृतीया विभक्तिका 'अेण' प्रत्यय, अपभ्रंशका 'अें' प्रत्यय तथा संस्कृतका 'अेन' प्रत्यय परस्पर अधिक साम्य रखता है।

'तिलकु' को लगा हुआ तृतीया विभक्तिका अेक वचन लुप्त हो गया है। लुप्त न होता तो 'तिलकें' अैसा रूप बनता। अपभ्रंश प्रा. में नामोंके प्रयोग लुप्त विभक्तिके भी होते हैं। देखो परागाका विवेचन २४ 'सुवास' शब्द।

(क्रमशः)

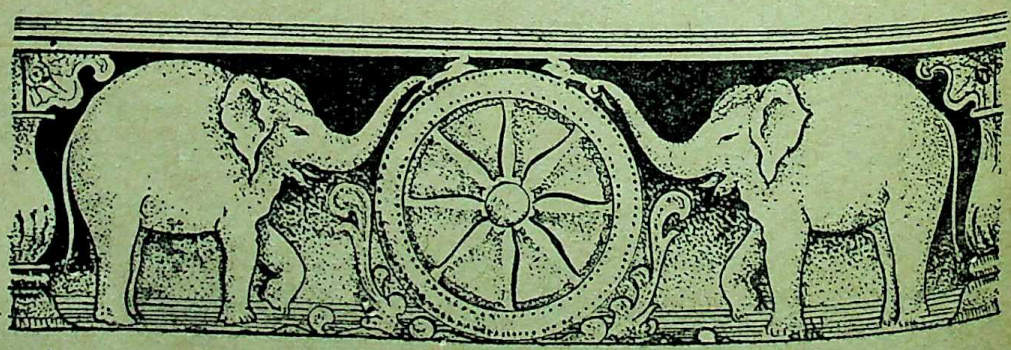

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमिल

तिलक जयंती

—चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

तिलक कौन थे? अुन्होंने क्या किया? अुनपर कैसी-कैसी विपदाअें आअीं? किस हद तक हम अुनके कृतज्ञ हैं?—ये सारी बातें पचास-बरसके अन्दरके आजके लोगोंको मालूम हों तो कैसे हों? मेरी पीढ़ीके अथवा मेरे समवयस्क लोगोंको ही अुनके बड़प्पनका भली-भांति पता चल सकेगा। जिस प्रकार जन्म देनेवाली माताको भूला नहीं जा सकता, अुसी प्रकार हम तिलक और तिलककी सेवाओंको किसी भी दशामें नहीं भूल सकते।

महात्मा गान्धी राजनीतिके रंगमंचपर अुतरे तो समस्त संसारका ध्यान अुनकी ओर चला गया। असहयोग आन्दोलनके प्रारम्भ होनेके कुछ ही दिनोंके अन्दर तिलक सिधार गअे। जब कि लोगोंका यह विचार था कि ब्रिटिश सिंहकी दुष्टताका दमन करना किसीसे भी सम्भव नहीं है, तब महात्मा गान्धीने अेक नया तरीका अख्तियार किया और अुसकी पूंछ पकड़कर अैसी मरोड़ी कि वह दर्दसे कराह अुठा। बस, भारतीयोंका ध्यान अुनकी अिस नअी प्रणालीकी ओर आकृष्ट हो गया।

जो गान्धीजी अपनेको गोखलेका विनयावनत परमानन्द शिष्य बताते थे तथा नरमदलवालोंका मित्र कहते थे, वे अैसे साहसपूर्ण कार्यमें अुतर गअे तो लोगोंका अुनकी ओर आकृष्ट होना स्वाभाविक ही तो था। अिस ध्यान-भंगसे लोग गोखलेको भूल ही गअे।

तिलककी पार्थिव देह और अुनकी पुण्य-स्मृति चौपाटी समुद्रतटकी रेतपर जलकर भस्मसात् हो गअी। अब केवल काँसेकी अेक मूर्ति अुनकी स्मृतिके अवशेष-स्वरूप शेष रह गअी है। कारण अितना ही था कि गान्धीजीकी माया-जाल-विद्याओंको देखते रहने ही में लोगोंका अधिकतर समय बीत गया।

गान्धीजीके सभी कार्य अेक दूसरेसे बढ़कर ब्रिटिश शासक-वर्गके क्रोधको अुभाड़नेवाले सिद्ध होते थे। अतः आवेशमें भरकर ब्रिटिशवालोंने दमन नीतिको अपनाया।

दमननीतिके शिकार होनेपर लोगोंको पीछे मुड़कर देखनेका अवकाश ही कहां मिला? यही वजह है कि लोग तिलककी साधनाओंको स्मृति-पटलपर नहीं ला पाअे। संसारकी प्रकृति भी तो यही है न!

गहरा खोदकर अच्छी नींव डालनेपर ही भवन निर्माण करते हैं। भवनको अुठते देखकर छोटे बच्चे यह भूल जाते हैं कि भूमिकी सतहके नीचे नींव नामकी कोअी चीज भी है।

लेकिन हमारा भी कोअी कर्तव्य है। हमें अुसकी अुपेक्षा नहीं करनी चाहिअे। भारतकी स्वतन्त्रताके लिअे लोकमान्य तिलकने जो महान् सेवा की है, अुसे भूल जाना महानतम पाप होगा!

अुनकी सेवा मिट्टीके नीचे धँसी हुअी नींव है; बल्कि नींवसे भी बढ़कर है। अुसीके अूपर भारतका स्वातन्त्र्य-रूपी भवन अुठ खड़ा हुआ है।

महानोंमें महान बाल गंगाधर तिलक प्रेमके स्वरूप थे। वे भारतकी प्राचीनतम परंपरागत संस्कृति तथा शास्त्र-ज्ञानमें महान् पारंगत विद्वान थे। अुन्होंने भारतके लिअे जो जो कष्ट सहे अुनका क्या वर्णन किया जाअे? देश-निकाला, कारावास, सत्ताधारियोंकी यातनाअें आदि अुन्होंने जितने संकट झेले, अुतने किसीने नहीं झेले। अुनके पहले भी नहीं, पीछे भी नहीं।

अुनका अटल सिद्धान्त था कि स्वराज हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है। अुन्होंने प्रण कर लिया था कि चाहे कोअी कितना ही क्यों न रोड़े अटकाअे, साहसके साथ अुसका सामनाकर अपना यह अधिकार प्राप्त करके ही रहूंगा। अिसके लिअे अुन्होंने जो जो कष्ट सहे अुनपर अेक शब्द भी नहीं कहा, अेक पंक्ति भी नहीं लिखी।

कारावाससे रिहा होकर बाहर आते हुअे हर बार वे नवजात शिशुकी तरह फुर्तीले दिखाअी देते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे लोगोंके समक्ष अपनी बात अैसी खूबीसे रखते कि लोग अेकदम जोशसे भर जाते। अुस जमानेमें लोग विदेशी शासनकी भीति और भ्रममें पड़े अैसे तड़पते थे कि क्या कहें! अुस समयके राजनीतिक नेताओंने भी अिस बातका प्रयत्न किया कि लोगोंको भय-भ्रांतिके चंगुलसे छुड़ाअें। स्वयं भय-भ्रांतिमें फंसे, आगे बढ़नेका अुपाय सोचते थे। अुन लोगोंकी धारणा यह हो गअी थी कि विदेशी सत्ताको हटाना नितान्त असंभव है। अतः अुन लोगोंका राजनैतिक लक्ष्य अितना ही था कि ब्रिटिश राज्यके अधीन हम अुपनिवेश-अधिकार पा जाअें।

अैसी हालतमें तिलकको अेक ओर नरम-दलवालोंसे लड़ना पड़ा और दूसरी ओर भयसे विव्हल जनताके भ्रमको दूर हटाकर जाग्रत करना पड़ा। अिन कामोंसे तिलक नरम-दलवालोंकी घृणाके पात्र बन गअे। वे ब्रिटिश-वालोंसे भी बढ़कर तिलकसे घृणा करने तथा अुनका बहिष्कार करने लग गअे।

घृणाकी कलामें नरम-दलवाले ब्रिटिशवालोंसे कअी कदम आगे बढ़-चढ़ गअे थे। अिसीलिअे राज-नीतिक क्षेत्रमें अनगिनत मुसीबतोंमेसे होकर तिलकको गुजरना पड़ा था।

सन् १९१८ अी. में अैसा मालूम होता था—कांग्रेसमें तिलककी धाक जमेगी। पर अितनेमें अेक अैसी हवा चली कि अुसकी आशा न रही।

राजनीतिके रंगमंचपर पड़ा हुआ अेक पर्दा अुठा और असहयोग-आन्दोलनका दृश्य दिखाअी दिया। अिसके अुपरान्त तिलक अधिक दिनों तक जीवित नहीं रहे। तिलकके साथ ही अुनका अुग्रगामी विचार भी बिदा हो गया।

तिलक जानते थे कि अुनके आन्दोलनकी सफलता जनताकी जाग्रतिमें निहित है। लेकिन अुस जमानेमें सभा-समाजोंका संगठन, प्रस्ताव-सुझाव आदि सभाअें, केवल पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त लोगोंके बीचमें हुआ करती थीं। तिलक ही अेक अैसे व्यक्ति थे जिन्होंने साधारण जनताका ध्यान भी राजनीतिकी ओर आकृष्ट किया था। यह देखते ही ब्रिटिश अधिकारी वर्गने समझ लिया कि आफत सिरपर आ गअी है। जन-शक्तिसे वे भली-भांति परिचित थे। अुनके क्रोधका कोअी पारावार नहीं रहा। अुस जमानेके राजनीतिज्ञोंसे तिलकको विलग रखनेका प्रयत्न किया और अिस काममें अुन्हें सफलता भी प्राप्त हुअी। नौकरीपेशा लोगों और सुसभ्य राज-नीतिज्ञोंने लोकमान्य बाल गंगाधर तिलकका अेक तरहसे बहिष्कार ही कर दिया था।

यह अत्याचार जारी रहता, यदि महात्मा गान्धी अवतरित नहीं हुअे होते। गान्धीजीके असहयोग आन्दोलनने ब्रिटिशवालोंका दिमाग ही फेर दिया था। आखिर अुनको भारतसे बाहर भी कर दिया।

भारतकी राजनीतिमें भारतीयोंकी शक्तिपर प्रकाश डालनेवाले तिलक थे। अुनके तीस सालके अथक परिश्रमके फलस्वरूप ही लोग महात्माजीकी नअी प्रणालीको आसानीसे समझ सके। अिसे हमें कदापि नहीं भूलना चाहिअे। लोकमान्य तिलककी अतुल सेवाअें अुस समय हमें प्राप्त नहीं हुअी होतीं तो महात्मा गान्धीजीके मत भी, अन्य महापुरुषोंके मत हीकी भांति निरे वेदांतके विषय ही बन गअे होते।

भारतमें नवजागरण लानेवाले महान तिलक ही थे। अुसी जागरणकी वजहसे महात्मा गान्धीके धार्मिक सिद्धान्तोंको लोग समझ सके और पालन भी कर सके। अितना ही नहीं, स्वातन्त्र्य-सिद्धि रूपी लक्ष्यको भी प्राप्त कर सके।

(अनु०– श्री रा० वीलिनाथन्)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुमुखी प्रतिभा-सम्पन्न नाटककार गोविन्ददास

—राजेन्द्रप्रसाद अवस्थी 'तृषित'

रोक सकी सम्पत्ति न घरकी,
और न बाहरकी बाधा,
जियो सेठ गोविंददास तुम,
कठिन साध्य तुमने साधा।
राष्ट्रभारतीके आराधक,
त्याग तथा तपके साधक।
पा जाता पूरा कृतित्व मैं,
पाकर भी तुमसे आधा।

राष्ट्र-कवि मैथिलीशरण गुप्तकी अूपरकी पंक्तियोंमें सेठ गोविन्दासजीका समस्त तापस जीवन अुतर आया है। अुनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि विपुल-वैभवके बीच जन्म लेकर भी अुन्हें सुख और विलाससे संतोष नहीं मिला। अुनके पितामह राजा गोकुलदास अपने समयके सर्वाधिक सम्पन्न करोड़पति व्यक्तियोंमेंसे थे। जबलपुरके जिन लोगोंने वह जमाना देखा है, वे बताते हैं कि सेठजीके यहाँ रुपया गिना नहीं, अपितु तौला जाता था और केवल रुपयोंकी बोरियां ही गिनी जाती थीं। बाबू साहबके पूर्वज श्री सेवारामजी जैसलमेर राज्य-दरबारमें पन्द्रह रुपया मासिक पर नौकरी करते थे। बादमें राज्यसे अुनका झगड़ा हो गया और अुन्हें राज्य-त्याग करना पड़ा। तब अुनके पास केवल अेक लोटा-डोर था। अूस समय सम्भवतः कोअी यह कल्पना भी नहीं कर सकता था कि सेवारामजीकी तीन पीढ़ी बाद यही घराना अेक दिन जैसलमेर रियासतको ढाअी लाख रुपयोंका कर्ज देगा। आज राजा गोकुलदासजीकी बनवाअीं अनेक सार्वजनिक अिमारतें अुनके वैभवकी गाथा कहती हैं।

सेठ गोविन्ददास

गोविन्ददासजीका जन्म अैसे ही सम्पन्न-सुखी परिवारमें सन् १८९६ की विजयादशमीको हुआ। अुनके जन्मसे सारा परिवार खुशीमें झूम अुठा। अुनके जन्मोत्सवके समय लगभग अेक लाख रुपया पुत्र-जन्मकी खुशीमें व्यय किया गया था और लगभग अितना ही निर्धनोंको बांटा गया था। अिसके बाद अुनका बचपन जिस शानका रहा वह अनेकानेक राजकुमारों और महाराजकुमारोंके भाग्यमें भी न रहा होगा। अैसे वातावरणमें पलनेके बाद यह स्वाभाविक होता यदि गोविन्ददासजी आज असंख्य दुर्गुणोंके शिकार होते और वैभव-वासनाकी मदिरामें झूमते होते। किन्तु अिसके सर्वथा विपरीत जाकर अुन्होंने अपने जीवनको अेक चमत्कारपूर्ण जीवनकी साधनाके सांचेमें ढालकर सिद्ध किया। अुन्होंने लक्ष्मीको छोड़कर सरस्वतीकी सेवा-समुपासनाका व्रत लिया, त्याग और तपस्याका जीवन अपनाया और अपने अंग्रेज-भक्त परिवारकी दिशा ही बदल दी। याद रहे गोविन्ददासजीके प्रपितामह सेठ खुशालचन्दजीको अंग्रेज सरकारकी सहायता करनेके अुपलक्ष्यमें सन् १८५७ अी० में अेक जड़ाऊ कमरपट्टा भेंट किया गया था, पितामह सेठ गोकुलदासजीको राजाकी पदवीसे सम्मानित किया गया था और पिताको दीवान-बहादुरका खिताब मिला था। अंग्रेजोंके अितने विश्वस्त परिवारका यह बालक, अुनका ही दुश्मन होगा, अुनके शासनके विरुद्ध अहिंसात्मक क्रान्तियुद्ध छेड़ेगा और जिस तरह राम अपने सम्पूर्ण राज्यको कीरके कागरकी तरह त्यागकर सुख, समृद्धि और शान्तिकी प्रतिष्ठाके लिअे वन-वन भटकते फिरे थे, बाबू साहब भी अेक वीतरागी तापसकी भांति जेलके सीकचों और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारागारोंमें अपना जीवन व्यतीत करेंगे, अिसकी कल्पना भी अुस समय नहीं की जा सकती थी।

तीन-रूप

अिस पृष्ठ-भूमिमें यदि हम सेठजीके कर्मठ जीवनपर अेक दृष्टि डालें तो प्रमुख रूपसे अुनके तीन स्वरूप हमारे सामने आते हैं—पहिला है राष्ट्रसेवी बाबू-गोविन्ददासका वह रूप जो स्वाधीनता संग्रामके दिनोंमें कर्कश कठिनाअियोंसे खूब जूझता रहा। दूसरा है—कलमके धनी, सरस्वतीके साधक और प्रतिभाशील लेखकका वह रूप, जिसकी विपुल संख्यक रचनाअें हिन्दी-जगत्में समादृत हुअी हैं। अिसीके अन्तर्गत अुनकी वह महत्वपूर्ण सेवा भी सम्मिलित है जो अुन्होंने हिन्दीके प्रसार और प्रचारके लिअे की और हिन्दीकी विजय-वैजन्ती देशकी सीमाके बाहर भी फहराअी। अुनका तीसरा रूप है सच्चे कर्मनिष्ठ तथा गान्धीवादी समाज-सेवकका जो महात्मा गान्धीके बताअे आदर्शोंपर चलकर देश, धर्म और अपने समाजकी सेवामें संलग्न रहा।

स्वाधीनतामें योग-दान

भारतके स्वाधीनता आन्दोलनमें बाबूसाहबका योगदान महत्वपूर्ण है। अुन्होंने सन् १९२०में सार्वजनिक जीवनमें प्रवेश किया और पांच बार जेलयात्राकी तथा कुल-मिलाकर ८ वर्ष कारागारमें व्यतीत किअे। सन् २० का समय भारतमें गान्धीवादके अुदयका वर्ष है। अिसी समय अेक सार्वजनिक कार्यकर्ताके रूपमें अुन्होंने सर्व प्रथम नागपुर कांग्रेसमें भाग लिया। बाबूसाहब अपना साहित्यिक जीवन तो अिसके पूर्व ही प्रारम्भ कर चुके थे (अिसकी चर्चा आगे की जाअेगी)। अुन्होंने साहित्य और राजनीति दोनोंको अेक दूसरेमें मिला दिया और 'राष्ट्रीय हिन्दी मन्दिर' की स्थापना द्वारा सामने आअे। महात्मा गान्धीके असहयोग आन्दोलनमें भाग लेकर आपने आलीशान कीमती कपड़ोंको त्यागकर खादी धारण की। सन् १९२२ में देशमें अखिल भारतीय स्वराज्य-पार्टीकी स्थापना हुअी और गोविन्ददासजी अुसके कोषाध्यक्ष चुने गअे। १९२३ में मध्यप्रान्तके जमींदारोंकी ओरसे अुन्हें केन्द्रीय असेम्बलीके लिअे सदस्य चुना गया। अिसी समयसे मध्यप्रान्तकी राजनीतिमें अुनका प्रमुख स्थान बना, और आजकल तीसरी बार संसद सदस्यके रूपमें यहांका प्रतिनिधित्व कर रहे हैं।

हिन्दी-सेवा

जब बाबूसाहबकी समाज-सेवाकी बात आती है तो मारवाड़ी-समाजके अध्यक्ष, गौ-रक्षक और हिन्दी-साहित्य सम्मेलनके अुन्नायक अित्यादि विभिन्न रूप सामने आते हैं। गौसेवा और हिन्दी-भक्तिकी अद्भुत लगनने अुन्हें अेक सच्चा आडम्बरहीन वैष्णव सिद्ध किया है। संविधानमें हिन्दी होनेका श्रेय जिन थोड़े व्यक्तियों-को प्राप्त है, अुनमें बाबूसाहब भी अेक हैं। लॉर्ड मकालेने जिस अंग्रेजीको अिस तरह कूट-कूटकर हमारे भीतर बोया कि आज अुसका अुखाड़ना लोहेके चने चबाना सिद्ध हो रहा है, अुसके विरुद्ध बाबूसाहबने गत कुछ वर्षोंसे प्रबल आन्दोलन छेड़ा है। संसदके भाषणों और स्वतन्त्र लेखोंसे अुन्होंने हिन्दीके पक्षका प्रबल समर्थन किया। अुनका कहना है कि "हिन्दीका प्रश्न स्वराज्यका प्रश्न है। पूरी आजादी तो हमें अंग्रेजीकी गुलामी छोड़ देनेपर ही मिलेगी।" विदेशी-भाषाको अपदस्थ करनेके प्रश्नपर तो सब अेक मत थे किन्तु विवाद यह था कि राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानीको स्वीकार किया जाअे अथवा विश्वकी अेकमात्र वैज्ञानिक लिपि नागरीसे मण्डित राष्ट्रभाषा हिन्दीको। अेक ओर राजनीतिके कर्णधारों-की शक्ति थी तो दूसरी ओर करोड़ों जनताकी हार्दिक भावनाओंका समवेत स्वर। यह स्थिति हिन्दी जगतमें गम्भीर चिन्तनका विषय बनाया हुअी थी। अिसी समय बाबू गोविन्ददासजीको हिन्दी साहित्य सम्मेलनका सभापति चुना गया। अुन्होंने मेरठ-अधिवेशनमें सभापति-पदसे भाषण देते हुअे कहा:—

"हिन्दीका राष्ट्रभाषा होना अिसलिअे स्वाभाविक नहीं है कि वह अन्य प्रान्तीय भाषाओंसे श्रेष्ठ है। हम अन्य प्रान्तीय भाषाओंको नीचा और हिन्दीको अुनसे अूंचा नहीं मानते। हिन्दीका राष्ट्रभाषा होना अिसलिअे स्वाभाविक है कि कुमाअूंसे लेकर बस्तर तक और जेसल-मेरसे बिहारके पूर्वीय छोरके अन्तिम ग्राम तक हिन्दी ही लोगोंकी भाषा है, अुसे अिस देशकी तीस करोड़मेंसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अठारह करोड़ जनता बोलती और बाअीस करोड़ समझती है। संयुक्त प्रान्त, बिहार, महाकोशल, राजस्थान, मध्यभारत, विन्ध्यप्रदेश, पूर्वी पंजाब, हिमाचल-प्रदेशकी भाषा हिन्दी है। दक्षिणमें भी अुसका प्रचार अत्यन्त शीघ्रतासे हो रहा है।"

आज हिन्दी अिस विशाल देशकी राष्ट्रभाषा स्वीकार की जा चुकी है, किन्तु अभी भी अुसके मार्गमें बड़ी-बड़ी बाधाअें आ रही हैं। शिक्षा-मन्त्रियोंके सम्मेलनमें हिन्दी सम्बन्धी लिअे गअे निर्णय दुर्भाग्य-पूर्ण हैं। अिसपर बाबूसाहबने संसदमें जो भाषण दिया, वह भी अुनकी हिन्दी-हित-भावनासे ओतप्रोत है। आशा की जानी चाहिअे कि हिन्दीपर संकटके ये बादल अधिक देर तक न रहेंगे और हिन्दीका पथ प्रशस्त होगा।

साहित्यिक-जीवन

अन्तमें हम बाबूसाहबके साहित्यिक जीवनका अुल्लेख करना चाहेंगे। वास्तवमें अुनका यह जीवन अन्य सभी प्रवृत्तियोंमें सर्वाधिक आगे बढ़ा-चढ़ा है। अेक हाथमें चक्र और दूसरेमें लेखनी सम्हालकर अुन्होंने स्वतन्त्रता देवीकी साथ-साथ साधना की है। अुन्होंने जिस साहित्यका सृजन किया है, वह बहुमुखी धाराओंमें प्रवाहित हुआ है। कवि, लेखक, अुपन्यासकार और नाटककार—नाना रूपोंमें बाबूसाहब सामने आते हैं। अिस छोटेसे लेखमें अिन सबकी समीक्षा सम्भव नहीं है। यहां मैं केवल अुनकी साहित्यिक विशेषताओंका संक्षिप्त अुल्लेख करूंगा।

गोविन्ददासजीने सोलह वर्षकी आयुसे साहित्य-सृजन आरम्भ कर दिया था। 'तीन-नाटक' नामक ग्रन्थकी भूमिकामें अुन्होंने लिखा है—'अपनी बचपनकी रचनाओंको मैं खिलौना समझता हूं।' यदि अिन खिलौनोंको छोड़ दिया जाअे तो 'विश्व-प्रेम' बाबूसाहबका पहिला नाटक है। यह सन् १९१७ में प्रकाशित हुआ था। अिसके पूर्व सन् १९१५ में शेक्सपियरकी दो अमर कृतियों—'अेज़ यू लाअिक अिट' और— 'पैरोक्लिस प्रिन्स ऑफ हामर' के आधारपर क्रमशः 'कृष्णकामिनी' और 'होनहार' (छायानुवाद) प्रकाशित हो चुके थे। 'स्पर्धा' नामक सामाजिक अेकांकी नाटकके द्वारा बाबूसाहबने अेकांकी-नाटकोंके क्षेत्रमें प्रवेश किया। यह रचना सन् १९१७ में प्रकाशित हुअी थी और अिसे पढ़कर स्वयं प्रेमचन्दजीने कहा था—'स्पर्धा सेठजीकी पहिली रचना है, जो हमारी नजरोंसे गुजरी है। अिसके बाद अिस सामाजिक नाटकने हमारी यह धारणा मजबूत कर दी कि सामाजिक नाटक ही आपका क्षेत्र है।' अब तक आप ९९ नाटक लिख चुके हैं और अब राष्ट्रपिता महात्मा गान्धीके पूरे जीवनपर अपना सौवां नाटक लिखकर अेक शतक पूर्ण करना चाहते हैं।

नाटक लिखनेकी अुनकी गति अितनी तीव्र है कि 'बड़ा पापी कौन?' जैसा चार अंकोंका विशाल नाटक आपने केवल तीन दिनोंमें ही लिख डाला। लगता है जैसे बाबूसाहबके मस्तिष्कमें नाटकोंके लिअे न जाने कितनी समस्याअें, कितनी कथाअें, कितने चरित्र और कितनी कल्पनाअें अुठा करती हैं। राजनीतिकी चहल-पहलमें भी वे नाटकोंके प्लॉट सोच लिया करते हैं। हिन्दी क्या, शायद ही किसी साहित्यमें अैसा कोअी व्यक्तित्व हो जिसने अितनी अधिक गतिसे अपनी सृजन-शक्तिका अुपयोग किया होगा।

नाटक रचनाके क्षेत्रमें आपकी सफलताका सबसे बड़ा कारण यह है कि आपने भारतीय समाजके विकास-कारक तथा ह्रास-कारक तथ्योंको भलीभांति पहिचाना है और अुनका कुशल चित्रण किया है। आचार्य हजारी-प्रसाद द्विवेदीने लिखा है—"सेठ गोविन्ददास हिन्दीके प्रतिभाशाली नाटककार हैं। अुनके नाटकोंमें मानव-जीवनको समझनेके अनेकानेक द्वार अुद्घाटित हुअे हैं। अुनके चरित्र जीवन्त मानव हैं और जिन समस्याओंको हमारे सामने अुपस्थित करते हैं, वे मनुष्य-समाज और जीवनकी गहराअीको प्रभावित करती हैं। सेठजीने अपनी प्रतिभाके द्वारा जीवनके अत्यन्त मूल्यवान भण्डारको सुलभ किया है। यह प्रतिभा बहुमुखी है और कअी प्रकारके काव्यांगोंमें सफल हुअी है।"

मैं समझता हूं अिसके बाद गोविन्ददासजीके नाटकोंपर अधिक लिखनेकी आवश्यकता नहीं है। जहां तक अुनकी शैलीकी बात है स्वयं बाबूसाहबने स्वीकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया है कि अिब्सन, बर्नार्ड शॉ, ब्राउनिंग, स्टेण्डवर्ग तथा नीलके प्रभावसे वह बच नहीं पाअी। अुसकी विशेषता यही है कि अिनके प्रभावमें पड़कर अुसने भारतीय दृष्टि नहीं छोड़ी, मौलिकताको नहीं जाने दिया।

नाटकोंके सिवाय गोविन्ददासजी 'अिन्दुमती' नामक अेक विशालकाय अुपन्यास, अेक महाकाव्य और यात्रा सम्बन्धी तीन पुस्तकें भी लिख चुके हैं। अेक-सहस्त्र-पृष्ठोंकी विशालकृति 'अिन्दुमती' में बाबूसाहबने पिछले पचास-साठ वर्षोंकी तूफानी हलचलोंका सुन्दर चित्रण किया है। वह अेक अुत्तम कृति है और हिन्दी-अुपन्यास लेखन कलामें अेक नअी शैली लेकर प्रस्तुत हुअी है। अुसकी स्टाअिल हिन्दी अुपन्यासकी समस्त शैलियोंमें निराली है।

गोविन्ददासजीने विश्वके प्रायः सभी प्रमुख देशोंकी यात्राअें की हैं और अिन यात्राओंके संस्मरणोंके रूपमें—'हमारा प्रधान अुपनिवेश', ''सुदूर दक्षिण-पूर्व' और 'पृथ्वी-परिक्रमा'—तीन पुस्तकें लिखी हैं। अिन पुस्तकोंका अच्छा आदर हुआ है। पुस्तकों-में न केवल विश्वके विभिन्न भागोंकी यात्राका विवरण है अपितु अुन देशोंके राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक जीवनपर भी प्रकाश डाला गया है।

कदाचित् यह कम लोग जानते हैं कि गोविन्ददासजी अेक कवि भी हैं। अुन्होंने 'बाणासुर–पराभव' (जिसका नाम बादमें 'प्रेम-विजय' रख दिया गया) नामक अेक महाकाव्य भी लिखना आरम्भ किया था। वह अधूरा पड़ा है। सन् १९४६ में 'स्नेह या स्वर्ग' नामक अेक पद्यात्मक नाटक भी प्रकाशित हो चुका है। यह यूनानके महाकवि होमरके महाकाव्य 'अिलियड' में वर्णित अेक कथापर आश्रित है। नाटकके पद्य अमित्राक्षर-छंदमें हैं। अुसे पढ़कर कविका काव्य कौशल देखते ही बनता है। अुदाहरणके लिअे नीचे दो पद्य दिअे जा रहे हैं।

फिर याद आती हैं मुझे विस्मृत स्मृति-सी
बाल्य कालकी कअी घटनाअें, घटिकाअें।
अनेक बार खेलमें खोती वह निजको
याद रहता न खाना-पीना और न सोना।
धक धक धधकती हुअी धूप ग्रीष्मकी,
पड़-पड़ पड़ती हुअीं बूंदें पावसकी,
सन-सन बहती हुअी समीर शीतकी,
कोअी जब अुसे हटा सकता न खेलसे।
तब मैं बलसे अन्त कर देता क्रीड़ाका।
अुस काल तो हो जाती रौद्र रोषानल-सी,
किन्तु शान्त होनेपर कहती–'अच्छा किया।'

(प्रथम अंक, पृष्ठ–४३)

अैसी बहुमुखी प्रतिमाके धनी गोविन्ददासजीकी ६० वीं जन्म गाँठ (सालगिरह) पर हिन्दी संसार अुन्हें अेक अभिनन्दन-ग्रन्थ भेंट कर, जो सन्मान कर रहा है, वह वास्तवमें सारे देशका सन्मान है, भारतकी बड़ी लाड़ली पुत्री हिन्दीका सन्मान है। हम ऋग्वेदके अिन मंत्रों द्वारा आपके दीर्घ जीवनकी शुभ कामना करते हैं—

ते सन्तु जरदष्टयः सम्प्रियौ रोचिष्णू सुमनस्य मानौ,
पश्येम् शरदः शतं जीवेम् शरदः शतं श्रृणुयाम् शरदः–शतम्।।

(अर्थात्–देखें शत शारदोंकी शोभा, जिअें सुखी सौ वर्ष,
सुनें कोकिलोंके कलरवमें, सौ वसन्तके हर्ष।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कल्हण कृत राजतरंगिणी

—मंगल किशोर पाण्डेय

संस्कृत-वाङ्मयमें कल्हणकी 'राजतरंगिणी' अपूर्व महत्व रखती है। संस्कृतमें यही अेकमात्र कृति है जिसे अितिहासकी संज्ञा दी जा सकती है। 'राजतरंगिणी' काव्यबद्ध अितिहास है। यों अैतिहासिक घटनाओंपर आधारित काव्योंका संस्कृतमें अभाव नहीं है। भास कृत 'स्वप्नवासवदत्तम्' और 'यौगन्धरायण', शूद्रकका 'मृच्छकटिक', अश्वघोषका 'बुद्धचरित', विशाखदत्तका 'मुद्राराक्षस', बाणभट्टका 'हर्षचरित', बिल्हणका 'विक्रमाङ्कदेवचरित', वाक्पतिराजका 'गौडवहो', आदि कृतियां अिस कोटिमें आती हैं। परन्तु 'राजतरंगिणी' सच्चे अर्थोंमें अितिहास है। 'राजतरंगिणी'में कल्हणने ११८४ अी. पूर्वसे लेकर ११५०–५१ अी. तक अर्थात् २३३५ वर्षोंके कश्मीरके राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक अेवं अितिहासका चित्रण किया है।

स्वर्गीय रणजीत सीताराम पण्डित द्वारा किअे गअे 'राजतरंगिणी'के अंग्रेजी-अनुवादकी भूमिकामें श्री जवाहरलाल नेहरूके शब्द विचारोत्तेजक हैं:—"फिर भी कल्हणकी कृति राजाओंकी कहानीमात्र नहीं है। यह राजनीतिक, सामाजिक तथा कुछ अंशोंमें आर्थिक ज्ञानका समृद्ध भण्डार है।" अुसी भूमिकामें आगे चलकर जवाहरलालजी लिखते हैं:—"मैंने प्राचीनकालकी यह गाथा बड़े चावसे पढ़ी है क्योंकि मैं कश्मीर तथा अुसके समस्त हृदयोल्लासकारी सौन्दर्यका प्रेमी हूं, क्योंकि मेरे अन्तर्तममें अपनी प्राचीन पितृभूमिके स्मरणमात्रसे स्पन्दन होते हैं। चूंकि मैं पितृभूमिके अिस आव्हानका अुत्तर देनेमें असमर्थ हूं, अिसलिअे अपनी कल्पनाकी आँखों द्वारा देखकर ही सन्तोष कर लेता हूं ..... अिस समय मैं कारागारकी चहार दीवारियोंसे घिरा हूं। मैदानकी सरतोड़ गर्मी अलग परेशान किअे हुअे है। लेकिन कल्हणकी 'राजतरंगिणी' की बदौलत मैं अिन चहारदीवारियोंको भूल गया हूँ और ग्रीष्मके अुत्तापसे दूर अुस सुरम्य प्रदेशमें पहुँच गया हूँ जहाँ अूषा अपनी प्रथम स्वर्णिम लाली चिरतुषाराच्छादित शिखरोंपर बिखेरती है, जहां नीचे घाटीमें वितस्ता नदी मुस्कुराते हुअे खेतों, और फलोंसे लदे वृक्षोंको सींचती हुअी मन्द-मन्थर गतिसे अठखेलियां करती हुअी बहती है, कहीं चीनारके अूँचे वृक्षोंसे आंखमिचौनी खेलती है, तो कहीं सद्यःविकसित कमलपुष्पोंसे ढकी प्रशान्त झीलोंसे होकर जाती है, और तब मानों चैतन्य होकर दर्रोंसे गरजती और *घहराती हुअी नीचे पंचनद प्रदेशमें आती है।"

'राजतरंगिणी' की रचना कल्हणने ११४८ अी.–११५० अी. में की थी। कल्हण कश्मीरी ब्राम्हण थे। अुनके पिता कश्मीरके राजा हर्ष (१०८९ अी.—११०१) के कर्मचारी थे। जैसा कि 'राजतरंगिणी' के अध्ययनसे पता चलता है वह अपने स्वामी हर्षकी विपत्तिमें भी अुनके साथ बने रहे। कल्हण सन् ११०० अी. के लगभग जन्मा और पिताकी राजनीतिक अुदासीनताके कारण वह न तो राजसभ्य हो सका और न अुसे कश्मीरका राजनीतिक वातावरण ही मिल सका। यदि अुसका पिता राजनीतिक कार्यक्षेत्रमें होता तो सम्भवतः कल्हणको भी मन्त्री-पद प्राप्त हो जाता। परन्तु अब अधिकतर अुसकी सम्भवना जाती रही।

कल्हणका पितृव्य कनक भी हर्षका स्वामीभक्त सेवक था। राजा संगीतका प्रेमी और अुसका आचार्य था। कनकने अुससे संगीत सीखा और अुसके शुल्कके व्याजसे अेक लाख सुवर्ण मुद्राअें राजाको भेंट कीं। कल्हण सम्भवतः परिहासकार था। वहांकी बुद्ध-मूर्तिको जब राजाने क्रोधपूर्वक नष्ट करना चाहा तो कनकने अपनी प्रार्थनासे अुसे प्रसन्नकर मूर्तिकी रक्षा की।

---

*कल्हण कृत 'राजतरंगिणी' के अंग्रेजी-अनुवादकी यह भूमिका २८ जून १९३४ को देहरादून जेलमें जवाहरलालजीने लिखी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामीकी मृत्युके पश्चात् कनक काशी चला गया। कल्हण और अुसके पिता दोनों शिवके अुपासक थे। कल्हणको काश्मीरी शैवसम्प्रदाय और शैव-शास्त्र प्रिय थे, परन्तु तान्त्रिक शैवोंके प्रति अुसके हृदयमें आदर नहीं था। बौद्ध धर्मके प्रति अवश्य अुसकी प्रचुर श्रद्धा ज्ञात होती है। और कतिपय कश्मीरी राजाओंकी पशुहिंसानिवृत्ति-की वह बड़ी प्रशंसा करता है। अिसमें कोअी सन्देह नहीं और अैसा अुसके कथनसे भी सिद्ध होता है कि बौद्ध सम्प्रदायके आचरण अब प्रायः हिन्दू सिद्धान्तोंके अनुकूल हो गअे थे। तभी शैव होते हुअे भी कल्हणको अुस सम्प्रदायके सम्बन्धमें अनुकूल भावना हो सकी। क्षेमेन्द्र-ने स्वयं बुद्धकी दश अवतारोंमें गणना करके अुनकी स्तुति की थी और अुसके काफी पहले बौद्ध भ्रमण विवाहित गृहस्थका जीवन व्यतीत करने लगे थे।*

कल्हणके जीवनवृत्त सम्बन्धी अुपर्युक्त अुद्धरण मुख्यतः "राजतरंगिणी" में यत्र-तत्र बिखरे वर्णनोंपर आधारित है। यह सही है, संस्कृतके कवियोंकी परम्पराका अनुसरण करते हुअे कल्हणने अपने विषयमें कुछ भी नहीं लिखा है। किन्तु 'राजतरंगिणी' के प्रत्येक तरंगके अन्तमें कल्हणने अपनेको चम्पकका पुत्र बताया है। कल्हण कश्मीरके संस्कृत कवियोंकी प्राचीन गौरवमअी परम्पराकी अेक कड़ी थे। 'राज-तरंगिणी' कल्हणकी अगाध विद्वत्ता अेवं कवित्व-शक्तिके साथ-साथ बहुज्ञताकी परिचायक है। वेद-पुराण-दर्शन, महाकाव्य, व्याकरणशास्त्र, ज्योतिषशास्त्र, आदि का कल्हणने गहरा अध्ययन किया था। अितिहासके तो वह पण्डित थे ही।

स्वभावतः प्रश्न अुठता है कि कल्हणका अैतिहासिक दृष्टिकोण कैसा था? क्या अुन्हें आधुनिक अितिहास-कारोंकी पांतिमें बिठाया जा सकता है?

कल्हणके अैतिहासिक दृष्टिकोणके सम्बन्धमें विद्वानोंने भिन्न-भिन्न मत प्रकट किअे हैं। अुदाहरणार्थ कश्मीरी विद्वान् पं. रामचन्द्र काकका कहना है कि "कल्हणका मुख्य दोष है समीक्षात्मक प्रज्ञाका अभाव, वह शायद ही किसीके मत अथवा वक्तव्यका खण्डन करता है। वह काल्पनिक अेवं वास्तविक कथावस्तुका विवेचन करनेमें असमर्थ है।"* श्री अेस. अेन. दासगुप्ता और अेस. के. डेका कहना है कि "यह स्पष्ट है कि कल्हणके कृतित्वका क्षेत्र व्यापक है किन्तु अुसके सम्पादनमें सौष्ठवकी अेक-रूपता नहीं है। 'राजतरंगिणी' का पूर्वार्द्ध त्रुटिपूर्ण अेवं अविश्वसनीय है किन्तु अपनी समकालिक घटनाओंके वर्णनमें वह कल्पनालोकमें नहीं विचरता।"×

कल्हणके विषयमें डाक्टर बुहलेरके ये शब्द दृष्टव्य हैं: "वह अपने देशके अितिहासको युधिष्ठिरके राज्या-भिषेक जैसी पौराणिक घटनाकी काल्पनिक तिथिके साथ जोड़ता है और यह शेखी बघारता है कि अुसकी कृति औषधि सरीखी जीवनप्रद है, यद्यपि अुसकी कृति असंगतियोंसे भरी पड़ी है।+

बुहलेर, आरेलस्टाअीन, कनिंघम आदि पाश्चात्य विद्वानों तथा अुनकी देखादेखी बहुसंख्यक भारतीय विद्वानोंने भी कल्हणके सम्बन्धमें प्रायः अिसी स्वरमें अपने विचार व्यक्त किअे हैं। किन्तु अब समय आगया है कि कल्हण और राजतरंगिणीके अूपर नअे सिरेसे विचार किया जाअे और वस्तुपरक ढंगसे अुसकी छानबीन अेवं मीमांसा की जाअे। अेक छोटेसे निबन्धमें अिस सम्बन्धमें मोटे तौरपर निर्देशमात्र ही किया जा सकता है।

सर्वप्रथम यह अुल्लेख्य है कि कल्हणका व्यक्तित्व न तो कोरे अितिहासकारका था, और न कविका, वरन् कवि और अितिहासकार दोनोंका मधुर सम्मिश्रण अुनके व्यक्तित्वमें था।

---

*'संस्कृत वाङ्मय': भगवत शरण अुपाध्याय (हिन्दी विश्वभारती: खण्ड ५)

* अेनशेण्ट मोनुमेण्ट ऑफ कश्मीर: रामचन्द्र काक—

× संस्कृत साहित्यका अितिहास (खण्ड अेक): अेस. अेन. दासगुप्ता, अेस. के. डे.

+ अिंडियन अेंटीक्वेरी: खण्ड ६, पृष्ठ २६४, संस्करण १८७७: डाक्टर बुहलेर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राचीन अितिहासको समझनेके लिअे कल्पनाकी आँख चाहिअे, कविकी नवनवोन्मेषशालिनी प्रज्ञा चाहिअे, तथा वस्तुपरक ढंगसे तथ्योंका संग्रह करनेकी अेकान्त निष्ठा और लगन चाहिअे। अितिहास मात्र तिथियों और नामोंकी सूची नहीं है, और न तोतामैना तथा साढ़े तीन यारकी कहानी है। अितिहास तो किसी राष्ट्रके समस्त व्यक्तित्वका विकास है। अिसके स्वच्छ मुकुटमें हम न केवल अुसकी सर्वांगीण प्रगतिका पद-चाप सुनते हैं, वरन् अुसकी विशाल आत्माका भी दर्शन करते हैं। घटनाओंका पूर्वाग्रहपूर्ण विवेचन अितिहास नहीं, शासकोंकी स्तुति-प्रशस्ति अितिहास नहीं, वरन् किसी राष्ट्रके युगानुयुगकी पूंजीभूत अनुभूतियोंका विवेचन अितिहास है—अनुभूतियां जो आलोक-स्तम्भकी तरह अनादि-कालसे राष्ट्रका पथ-प्रदर्शन कर रही हैं। यदि किसी राष्ट्रका अितिहास पढ़ते समय अुसकी आत्मा अपनी समस्त गहराअियोंके साथ दृष्टिपथके सामने साकार अेवं सजीव नहीं हो जाती तो वह अितिहास अितिहास नहीं, वरन् घटनाओंका विवरण मात्र है। स्पष्ट है कि अितिहासकारके लिअे कवि होना आवश्यक है। पुराणोंकी रचना करते समय सम्भवतः कुछ अैसे ही विचार हमारे पुण्यश्लोक आचार्योंके सामने रहे होंगे। हमारे लिअे यह जानना अत्यन्त जरूरी है कि अिस सम्बन्धमें कल्हणके क्या विचार थे। 'राजतरंगिणी' के प्रथम तरंगका चौथा श्लोक कल्हणके दृष्टिकोणको खोलकर हमारे सामने रख देता है :

कोन्यः कालमतिक्रान्तं नेतुं प्रत्यक्षतां क्षमः।
कविप्रजापतींस्त्यक्त्वा रम्यनिर्माणशालिनः।।

अर्थात्, सुन्दर निर्माण करनेवाले कवि और विधाताके सिवाय अतीतकालको आंखोंके सामने साकार करनेकी क्षमता और किसमें है ?

कल्हण अिस बातको अच्छी तरह समझते थे कि अेक अितिहासकारके लिअे कवि होना वांछनीय है। अेक अितिहासकारको कैसा होना चाहिअे अुसके सम्बन्धमें जलद-गम्भीरस्वरमें कल्हण अुद्घोष करते हैं कि :

श्लाघ्यः स अेव गुणवान्रागद्वेष बहिष्कृता।
भूतार्थकथने यस्य स्थेयस्येव सरस्वती।।

अर्थात्, वही गुणवान व्यक्ति प्रशंसाका पात्र है जिसने अपनेको राग और द्वेषसे मुक्त कर लिया है और जो अेक न्यायाधीशकी बुद्धिसे अतीतकी घटनाओंका ठीक-ठीक वर्णन करता है।+

अिन पंक्तियोंके लेखकका यह तुच्छ विचार है कि अेक अितिहासकारके रूपमें कल्हणका मूल्यांकन करते समय विद्वानोंने अिन श्लोकोंकी अुपेक्षा की है, जबकि सत्यका तकाजा यह था कि अिन श्लोकोंको अेतत् सम्बन्धी मूलभूत सिद्धान्तके रूपमें ग्रहण किया जाता। कल्हण सम्बन्धी अध्ययन अेवं शोधके गणितके हलके लिअे ये श्लोक सूत्ररूप हैं। अिस दृष्टिसे प्राच्य अेवं पाश्चात्य विद्वानोंकी कल्हण सम्बन्धी धारणाअें अेकांगी, पक्षपातपूर्ण अेवं भ्रामक हैं।

कल्हणके अूपर "शेखी बघारने" का आरोप करना जैसा कि बुहलरने किया है नितान्त निराधार और क्षुद्रतापूर्ण है। खेदकी बात है कि तोतारटन्तकी तरह ये घातक विचार आज भी हमारे विश्वविद्यालयोंके आचार्यों द्वारा दुहराअे जाते हैं।

भला जो स्वयं यह कहे कि "पूर्वबद्धं कथावस्तु मयि भूयो निबन्धति"* अुसमें क्या अहंकार का अस्तित्व सम्भव है ? और भी—

दाक्ष्यं कियदिदं तस्मादस्मिन्भूतार्थ वर्णने।
सर्वप्रकारं स्खलिते योजनाय ममोद्यमः।।‡

अर्थात् : बीती घटनाओंका वर्णन करनेमें मेरी कौनसी दक्षता है। सभी प्रकारकी त्रुटियोंकी जिम्मेदारी मेरी है।

जो व्यक्ति अपनी प्रतिभाके विषयमें अितनी लघुता प्रदर्शित करे अुसपर 'शेखी बघारने' का आरोप लगाना क्या सत्यका गला घोंटनेके समान नहीं है। भारतके काव्यसृष्टाओं अेवं द्रष्टाओंकी गौरवमअी परम्परामें 'शेखी बघारना' नितान्त क्षुद्रताका द्योतक समझा जाता है। यहांका जीवन्त आदर्श 'विद्या ददाति विनयम्' है।

+राजतरंगिणी, तरंग १, श्लोक ७

*राजतरंगिणी : तरंग प्रथमः श्लोक आठ

‡राजतरंगिणी : तरंग प्रथमः श्लोक दस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहांके बड़ेसे बड़े कविने 'कवित विवेक अेक नहीं मोरे, सत्य कहहुं लिखि कागद कोरे' कहकर अपनी लघुता दर्शाअी है। 'शेखी बघारना', आत्मश्लाघा करना बुहलरके देशके कवियोंकी विशेषता हो सकती है, भारत के मनीषियोंकी नहीं।

कल्हणका आदर्श था राग-द्वेषसे रहित होकर अेक विचार-पतिकी तरह घटनाओंकी समीक्षा करना*। अपनेको आधुनिक अितिहासकार कहनेवाले, बात-बातमें नृतत्वशास्त्र तथा पुरातत्वशास्त्रकी कुछ रटी-रटाअी बातें दुहरानेवाले कितने महापुरुष कल्हणकी कसौटी-पर सही अुतर सकते हैं? 'राजतरंगिणी' से अन-गिनत मिसालें देकर रेखागणितके साध्यकी तरह यह सिद्ध किया जा सकता है कि कल्हणने आश्चर्यजनक निष्पक्षताके साथ घटनाओंका वर्णन किया है। अुसने अपने समकालीन घटनाओंका यथातथ्य वर्णन करते समय कश्मीरके तत्कालीन राजा हर्ष तकको नहीं छोड़ा है, औरोंका तो पूछना ही फिजूल है। स्मरण रहे कि अुसका पिता चम्पक राजा हर्षका मन्त्री था। अुसने कश्मीरी चरित्रको सुन्दर किन्तु कुटिल अेवं चंचल कहा है। नागरिकोंको वह आलसी, विलासप्रिय, कुटिल और चंचल कहता है।

'राजतरंगिणी' के प्रथम तरंगकी श्लोक संख्या ११, १२, १३, १४, १७, १८, १९ से स्पष्ट होजाता है कि अुसने अपने युगमें अुपलब्ध अितिहासकी सामग्रियोंका बड़े यत्नपूर्वक संचयन अेवं संग्रह किया था।

अुसने पहलेके जिन अितिहासकारों और कवियोंकी कृतियोंकी ओर संकेत किया है अुनमें सुव्रत, क्षेमेन्द्र, हेलाराज, पद्मनिहिर, छुविल्लाकर, नीलमुनि, आदिके नाम अुल्लेख्य हैं। लेकिन यह कहना सरासर गलत है (जैसा कि पं. रामचन्द्र काक, आदिके अुपर्युक्त अुद्धरणोंसे स्पष्ट है) कि अुसमें 'समीक्षात्मक प्रज्ञाका अभाव, है। अिसके अुत्तरमें कल्हणकी यह पंक्ति है: "अंशोऽपि नास्ति निर्दोषः क्षेमेन्द्रस्य नृपावलौ" (अर्थात् क्षेमेन्द्र रचित 'नृपावलि' का अेक अंश भी दोषमुक्त नहीं है।)*

पाठक स्वयं विचार करें कि कल्हणकी यह अुक्ति अुसकी 'समीक्षात्मक प्रज्ञा' की द्योतक है, अथवा अुसके अभावकी? जिसने अितिहासकारकी तुलना नीरक्षीर विवेकी हंस अथवा रागद्वेष रहित विचारपतिसे की है, अुसपर "समीक्षात्मक प्रज्ञाके अभाव" का दोष लगाना क्या सत्यपर परदा डालना नहीं है? क्योंकि 'राजतरंगिणी' के अुद्धरणोंसे अुनकी दर्पपूर्ण अुक्तियोंकी धज्जियां अुड़ जाती हैं।

अितिहासकारों और लेखकोंकी कृतियोंके अलावा कल्हणने अुपलब्ध प्राचीन अुत्कीर्ण लेखों, मन्दिरों, राज-प्रासादों, दानादिके ताम्र-पत्र, प्रशस्तिलेखों और प्राचीन हस्तलिपियोंसे भी काफी सामग्री अेकत्र की थी। अपने देशके कोने-कोनेका वह जानकार था और आधुनिक अितिहासकारकी भांति अुसने सिक्कों और विविध कुलोंके कागज-पत्रोंको भी देखाभाला था।×

लेकिन आगे चलकर जब श्री अुपाध्याय यह कहते हैं "कि कल्हणका अैतिहासिक दृष्टिकोण निस्सन्देह वैज्ञा-निक नहीं है। निश्चय ही अिस दृष्टिकोणसे वह न तो आधु-निक अैतिहासिकोंकी पंक्तिमें खड़ा हो सकता है और न हिरोडोटस . . . . .आदि प्राचीन विदेशी अितिहासकारों-की पंक्तिमें ही" तो अुनके कथनके पूर्वांश अेवं अुत्तरांशमें विरोध पैदा हो जाता है। कल्हणने तो 'राजतरंगिणी'-के तरंग प्रथम और श्लोक सातमें ही अपने दृष्टिकोणका अुद्घोष कर दिया है। वह कौनसा वैज्ञानिक दृष्टिकोण है जो अिस अुद्घोषित दृष्टिकोणकी अवहेलना करनेकी क्षमता रखता है? किन्तु श्री अुपाध्यायका यह कथन यथार्थ है कि "कल्हण सचमुच भारतका पहला और प्रबल अितिहासकार है . . ."

कल्हणके सम्बन्धमें स्वर्गीय रणजीत सीताराम पण्डितकी ये पंक्तियां मनन करने योग्य हैं: "कल्हण न

---

*राजतरंगिणी : तरंग प्रथम : श्लोक सात

*राजतरंगिणी : तरंग प्रथम : श्लोक तेरह

× संस्कृत वाङ्मय : भगवत शरण अुपाध्याय (हिन्दी विश्वभारती : खण्ड ५)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केवल अेक अितिहासकार वरन् अेक कवि था, जिसकी रगरगमें अपनी मनोहारिणी जन्मभूमिके प्रति, अुसकी नदियों और जलप्रपातोंके प्रति, फूलोंसे ढकी हुअी चरागाहों, बादलोंकी छायाके नीचे शस्यश्यामल खेतोंके प्रति तथा हिमाच्छादित पर्वतोंके प्रति, जिनपर अूषा और गोधूलि अपनी समस्त गुलाबी और सुनहरी सम्पत्ति बिखेरती हैं—प्रेम भरा था। अिसमें सन्देह नहीं कि पुरातत्वने मृत अतीतके रहस्योंको हमारे सामने खोलकर रख दिया है किन्तु पुरातत्वके गर्दो-गुब्बारमें अतीतकी आत्मा पकड़में नहीं आती।"

प्राचीन अितिहासके अध्ययनमें पुरातत्व और नृतत्वका महत्व असन्दिग्ध है। किन्तु पुरातत्वको ही अितिहासका आदि, मध्य और अन्त मान बैठना अितिहासके प्रति अपने दृष्टिकोणको जानबूझकर संकुचित अेवं सीमित कर लेना है। अिसका अर्थ है तत्वको छोड़कर छायाके पीछे भागना। पुरातत्व साधन है साध्य नहीं। आर. अेस. पण्डितके ही शब्दोंमें "कल्हणकी राजतरंगिणीके छन्द मानों अुतने ही गवाक्ष मार्ग (झरोखे) हैं जिनके द्वारा हमें अुसके तत्कालीन संसारके दर्शन होते हैं।"*

*'राजतरंगिणी' के अपने अंग्रेजी अनुवादकी भूमिकासे : रणजीत सीताराम पण्डित।

कल्हणकी 'राजतरंगिणी' के तटपर खड़े हो हम महाभारत कालसे लेकर बारहवीं शतीके मध्य तक के कश्मीरके अितिहासकी शोभायात्राको चलचित्रोंकी भांति अपने सामने गुजरते देखते हैं, कल्हणकी कलध्वनि वितस्ताकी मन्द-क्षिप्र लहरोंके साथ अद्भुत संगीतकी सृष्टि करती प्रतीत होती है; गोनन्द, अशोक, कनिष्क, प्रवरसेन, ललितादित्य, अवन्तिवर्मन, शंकरवर्म्मन, दीदा, अुच्चल, सुस्साल, जयसिंहरिचन, कोटादेवी आदि कश्मीरी राजाओं तथा मुक्ताकण, शिवस्वामी, आनन्दवर्धन, रत्नाकर, भर्तृमेण्ड, विल्हण, चन्दक, क्षेमेन्द्र, मातृगुप्त, शङ्कुक, तथा वसुवन्द आदि कश्मीरी कवियों और साहित्यकारोंके चित्र तारोंके कारवाँकी तरह दृष्टिपथके सामने आते हैं और धीरे धीरे कालके विकराल स्रोतमें विलीन हो जाते हैं! किन्तु 'राजतरंगिणी' की मधुर मन्द्र कलकलध्वनि आज भी वितस्ताकी चंचल लहरोंसे होड़ ले रही है। वितस्ता और 'राजतरंगिणी' अमर हैं, नित्य हैं, शाश्वत हैं! और अिनके साथ ही कल्हण भी अमर हैं! न अेनं छिन्दन्ति शस्त्राणि, न अेनं दहति पावकः.....।

छाँहके छन्द

: श्री भारतभूषण अग्रवाल :

लगी क्षितिजमें आग जल अुठी
संध्याके सुहागकी होली
पिघल-पिघल बह गअी अरुणके
कनक-कलशकी रंजित रोली

गअी सुनहली संध्या क्षणभर
मुस्कानोंसे भरकर दिशिको
दीन क्षितिज रह गया पसारे
खाली अपनी मैली झोली

निगल लिया दिनके रंगोंको
फैल धुँअेने सारे जगमें
कौन चितेरेने नभ-प्याली
में निज काली तूली घोली

सहसा गिरी यवनिका दिशिके
रंगमंचके हेम-नाट्यकी
मोहित कुमुदोंने विरक्त हो
अपनी आकुल आंखें खोलीं

झिल्लीकी झनकारोंमें सब
डूब गअे स्वर पुलिन-बीनके
ओस कणोंसे तरु-डालीने
अपने पटकी कोर भिगो ली

नभको रोते देख, कमलने
दुखमें अपनी पलकें मूंदीं
कुछ विस्मयसे, कुछ विषादसे
ठक रह गअीं वीचियाँ भोली

शेष कालिमा अेक धूमिला
बुझीं चिताकी लपटें सारी
अरुणाभाकी राख, यामिनी
के तनकी विभूति-सी हो ली

श्मशानका प्रहरी-सा यह
अन्धकार है खड़ा क्षितिजपर
शोक गान-सी लगती है यह
दूर विटपके खगकी बोली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

'मनकी परछांअी'

—श्री जी० अेस० तिवारी

दिल्लीका आलीशान जंक्शन! अेंजिनों और बोगियोंसे ठसाठस भरी हुअी रेल पटरियां! सिगनल! कुछ झुके हुअे और कुछ झुकनेकी प्रतीक्षा करते हुअे। प्लेटफार्मोंपर रेल्वेके वर्दीधारी कर्मचारी और यात्री! काले, पीले और गोरे, विभिन्न वर्गोंके, जातिके, धनी और गरीब यात्री! कुली, मजदूर और भिखारियोंसे लेकर बड़ेबड़े तोंदवाले सेठ, राज्य सरकार अथवा केन्द्रीय सरकारके अुच्च अफसर, सेक्रेटरीज, मिनिस्टर्स और अुनके वर्दीधारी चपरासी! मिलीटरीके सोलजर से लेकर लेफ्टीनेंट, केप्टन, मेजर, कर्नल और जनरल भी अपनी शानदार वर्दियोंमें शोभायमान होते हुअे और सिगरेटके कश खींचते हुअे अिधरसे अुधर बड़ी अदासे गतिमान हो रहे थे। कोअी ट्रेनसे अुतर रहा है तो कोअी ट्रेनमें चढ़नेकी कोशिश कर रहा है। पान-बीड़ी-सिगरेट, चाय और मिठाअीकी आवाजें! अेंजिनोंकी चिंघाड़ें, शन्टिंग करते हुअे अेंजिनों और डिब्बोंकी घड़र-घड़र और यात्रियोंका शोरगुल, वातावरणको क्षुब्ध कर रहा था।

मैं ग्रान्ट ट्रंक-अेक्सप्रेससे अभी-अभी अुतरा हूं। मैं किस कार्य अथवा कारणसे दिल्ली आया हूं? अुत्तर बिलकुल स्पष्ट है। मैं दिल्लीमें होनेवाले अन्तर्राष्ट्रीय औद्योगिक मेले (प्रदर्शनी) को देखने और साथ ही संसदकी शरत्कालीन बैठकको भी देख लूंगा, अिसी विचारसे दिल्ली आया हूं। हां! यदि समयके खातेमें कुछ बचत निकली तो पुरानी और अैतिहासिक दिल्लीके भी दर्शन करता चलूंगा। अिन महत्वपूर्ण कार्योंके लिअे मैंने स्वयंकी पंच-दिवसीय योजना बनाअी थी। योजनाको सफलीभूत बनानेके लिअे धनकी सख्त जरूरत पड़ती है, अतः मैंने अपना रक्त और स्वेद अेक करके जो धन जोड़ा था अुसमेंसे करीब तीन सौ रुपअे बड़ी मुश्किलसे मनको काबू करके निकाले थे। सोचा था, कि मालूम नहीं अिस दो दिनकी जिन्दगीका क्या भरोसा कब और किस वक्त यमराजके यहांसे निमंत्रण आ जाअे। और दिल्ली देखनेकी साधको साथ लेकर ही चले जावें। अेक पंथ दो काज! दिल्ली भी देख लेंगे और साथ-ही-साथ औद्योगिक मेला अेवं संसदका अधिवेशन भी देख लेंगे। रुपयोंको बड़ी सावधानीसे रखा गया था। मैं जानता था कि दिल्लीमें गिरहकट बहुत होते हैं। अतः मैंने अेक अुपाय खोज लिया था। तीन-सौके आधे रुपअे तो मैंने सूटकेसमें कपड़ोंके नीचे दबाकर रख दिअे थे और आधे अूपरी कामके लिअे कोटकी जेबमें। यदि सावधानी रखते हुअे भी किसीने जेब सफाया कर ही दी तो सूटकेसके रुपये काममें आजावेंगे। गिरहकट यह कभी नहीं सोच सकता कि मैंने रुपये सूटकेसमें भी रखे हैं, वे तो पाकेटकी ही ओर गिद्ध दृष्टिसे देखते हैं।

स्टेशनसे जैसे तैसे बाहर आया। बाहर टेक्सियां, प्राअिवेट कारें, तांगे, अिक्के, साअिकिल-रिक्षे और आदमी रिक्षोंकी भीड़ लगी थी।

मैं सोचने लगा कि किस सवारीसे चलना अुचित है। यद्यपि टैक्सीसे जानेमें दो फायदे थे—प्रथम पैसेकी बचत और द्वितीय समयकी। परन्तु मैंने रिक्षोंसे जाना अुचित समझा। क्योंकि सुबहका समय था अिसलिअे गंतव्य-स्थानपर जल्दी पहुंचना भी मेरे विचारसे ठीक नहीं था और रिक्षेवालेकी चाल कम होनेसे दिल्लीको भी मजेसे देखते चलेंगे। अतः मैं साअिकिल रिक्षेवालोंके झुंडकी ओर बढ़ा। शायद किसी रिक्षेवाले छोकरेने मेरे विचार पढ़ लिअे अिसलिअे वह अपना रिक्षा लेकर मेरे अेकदम समीप आगया और बड़ी नम्रतासे बोला—"बाबूजी, कहां चलिअेगा, आअिअे बैठिअे।" मैंने कहा—बड़ी दूर चलना है, कनाट-सर्कस, क्या लोगे?" वह बोला—"आअिअे बैठिअे तो, आप जो कुछ अुचित समझें दे दीजिअे" अुसने मेरे सामानकी तरफ देखते हुअे कहा (जिसमें केवल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो डाक ही थीं–अेक सूटकेस और दूसरा होलडाल)। मैंने कहा–भाअी जब तक तुम किराया नहीं बतलाओगे तब तक मैं नहीं बैठूंगा। यह कहकर मैंने किसी अन्य रिक्षेवालेको देखनेके अिरादेसे अपनी दृष्टि वहीं खड़े हुअे दूसरे रिक्षेवालोंकी ओर फेरी। मैंने समझ लिया कि लड़केकी गरज है। किन्तु अुसने मेरा हाथ पकड़ लिया और चेहरेपर विवशताके भाव लाते हुअे कहा–"बाबूजी, आप विश्वास रखें, मैं आपसे कुछ भी नहीं लूंगा। आप अेक पैसा भी दे देंगे तो मैं सहर्ष स्वीकार कर लूंगा।" मैं चाहता भी यही था। अतः मैंने मुस्कराकर अपनी सम्मति दे दी। बस दूसरे ही क्षण मैं रिक्षेपर था।

रिक्षेवाला मेरे विचारसे लगभग बीस बाअीसकी अुम्रवाला ही होगा। रंग अच्छा खासा गोरा था। अेक आवारा टाअिपकी शर्ट और किसी पुराने माल बेचनेवालेसे सस्तासा खरीदा हुआ अूनी फुलपैंट जिसके पुट्ठोंके पासवाले भागपर दो पैं-बंद लगे थे और पैरोंमें पठानी चप्पलें पहिने था। सिरपर अेक मिलिटरी सिपाहीका बेरेट, जो शायद पिछले महायुद्धमेंसे काम आ गया होगा, बड़े शानसे लगा हुआ था। देह न अधिक मोटी थी और न अधिक पतली ही। हां, यदि जिन्दगीभर रिक्षा ही खींचता रहा तो अवश्य टी. बी. महाराजकी कृपाका पात्र बन सकता है। मैं अबतक चुपचाप ही बैठा हुआ दिल्ली रानीके दर्शन कर रहा था और वह भी सांस खींचता हुआ रिक्षेकी साअिकिलपर अपनी ताकत अजमा रहा था। मैं बड़ा जिज्ञासु स्वभावका व्यक्ति हूं। अतः मैंने मौन भंग करते हुअे अुससे पूछा–"क्यों भाअी तू कहां रहता है। नअी दिल्ली अथवा पुरानी?" अुसने बड़ी ही नम्रतासे मेरी बातका अुत्तर दिया–"जी, मैं पुरानी दिल्लीमें ही रहता हूं।" "तुम्हारे घरमें कितने आदमी हैं खानेवाले, और कमानेवाले कितने हैं।" "जी, खानेवाले तीन प्राणी हैं–मैं, मेरी मां, और बहिन, बस, और कमानेवाला केवल मैं।"

"क्या अितनेमें तुम तीन प्राणियोंका भरण-पोषण अिस महँगे शहरमें हो जाता है?"

"मजबूरी है, साहब, करना ही पड़ता है।"

"क्या तुम लोग दिल्लीके रहनेवाले हो अथवा कहींसे आकर यहां बसे हो," अिस प्रश्नने सहसा अुसे कुछ कहनेको मजबूर कर दिया हो। अुसने अपना पसीनेसे भरा हुआ मुख मेरी ओर घुमाया जिसपर करुणाकी छाप स्पष्ट झलक रही थी। फिर तुरन्त अपना मुख सामने कर लिया और ठंडी सांस भरते हुअे कहा–"बाबूजी मेरी कहानी मजेदार नहीं। वास्तवमें मैं दिल्लीका मूल निवासी नहीं हूं।" अुसके बोलनेके ढंगसे कुछ अैसा प्रतीत हो रहा था कि वह कुछ पढ़ा लिखा अवश्य है। 'मेरी कहानी मजेदार नहीं है,' अिस वाक्यने मेरी जिज्ञासाको और बढ़ा दिया। जब वह अुपरोक्त वाक्य कहकर चुप हो गया तो मुझसे न रहा गया। मैंने कहा–"भाअी, मैं तुम्हें तुम्हारी कहानी कहनेको तो मजबूर नहीं करता हूं और नहीं मुझसा साधारण व्यक्ति तुम्हारा दुःख-सुख ही बँटा सकता है, लेकिन तुम्हारे साथ मुझे हार्दिक सहानुभूति अवश्य है।" यद्यपि मैं अुसका चेहरा स्पष्ट तो नहीं देख सकता था परन्तु मुझे कुछ अैसा आभास हुआ कि वह कुछ मुस्कराया अवश्य और बोला "नहीं बाबूजी, आप अैसी बात कहकर मुझे शर्मिंदा न करें। मेरे सौभाग्य कि आप जैसे सज्जनने मेरी दुख-दर्दकी कहानी सुननेकी अिच्छा और सहानुभूति प्रकट की। नहीं तो अिस बड़े शहरमें हजारों आदमी आते और जाते हैं, किसे किसकी गाथा सुननेकी पड़ी। किसीको भी अपने काम और रामसे फुरसत ही नहीं। सब अपने ही दुख-सुखसे दुनियाको तौलता है। मैं आपसे अवश्य अपनी कहानी कहूंगा।" और पैडिलपर जोर लगाते-हुअे वह बिना रुके ही बोला–"हां तो बाबूजी मैंने आपसे कहा था कि मैं दिल्लीका रहनेवाला नहीं हूं। मैं रहनेवाला हूं बिहारके अेक छोटेसे गांव रामपुरका। मेरा गांव जहां घाघरा नदी गंगासे मिलती है वहीं संगमपर बसा है। मेरी वहाँ करीब पचास बीघे जमीन है, लेकिन अब नहीं रही। अेक पक्का मकान, और गाय, बैल, भैंस आदि सब मिलाकर दस मवेशी भी थे। बाप भी था। और घरमें खुशहाली थी। मैं पटनामें हाअिस्कूलकी ९ वीं जमातमें पढ़ता भी था। लेकिन अिस साल भगवान हमसे रूठ गया, न जाने पूर्व जन्ममें अैसे क्या पाप किअे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे कि बाढ़ आ गअी और हमें तबाह कर दिया। पशु तो बाढ़में न जाने कहां बह गअे और मकानको भी गिराकर बाढ़ अपने साथ बहा ले गअी। वह जमीन जो पिछले कअी सालोंसे सोना अुगल रही थी, बाढ अुतर जानेपर अूसर हो गअी। खेतोंमें रेत ही रेत भर गअी जब बाढ़का पानी गांवमें घुसने लगा तो लोग अपनी जानें लेकर जिधर रास्ता मिला अुधर ही भग पड़े। मेरे पिताजी भी, मां और बहिनको लेकर पटना भग आअे। बाढ़ने सब चौपट कर दिया था। पिछले साल पिताजीने मेरी बहिनकी शादी भी तय कर ली थी, किन्तु, पासमें अेक कौड़ी भी न बची। बहिन अविवाहित ही रह गअी। बाप पूरे देहाती आदमी थे अिसलिअे बैंकमें रुपया भी नहीं जमा किया। सब कमाअी गाड़कर ही रखते थे। थोड़ा बहुत जेवर जो साथ लाअे थे वह सब खाने-पीने में समाप्त हो गया। मेरी पढ़ाअी भी, फीस और पुस्तकें न जुटा सकनेके कारण छूट गअी। अिन सब विपत्तियों-को वे न सहन कर सके और साधारणसे ज्वर मलेरियाने ही अुनका दम तोड़ दिया। यदि बहिनकी शादी किसी भी तरह हो जाती तो सम्भव है अुनको अितना आघात न भी पहुँचता और वे बच भी जाते। परन्तु हुआ बिलकुल विपरीत।"

"क्या तुम्हारे कोअी रिश्तेदारने तुमको कोअी मदद नहीं दी?" मैंने बीचमें ही पूछा। "अेक तो कोअी घनिष्ट सम्बन्धी ही न थे और जो कुछ थे भी, वे फुकलेट थे और बाबूसाहब, जो कुछ अच्छे भी थे वे सब हमारे सिरपर विपत्ति नाचते देख डर गअे। बाबू-साहब रिस्तेदार तो अमीरी ही में शोभा देते हैं। मेरी मां अेक अच्छे खानदानकी थी। अतः अुसने गरीबी ही भोगना अुचित समझा। वह नहीं चाहती थी कि किसीके आगे हाथ फैलाअे। वह बड़ी स्वाभिमानी है। अुससे हमारी विपन्नता नहीं देखी गअी और अतः वह दिल ही दिलमें घुटने लगी। अुसे हृदय रोग हो-गया।

"मैं नहीं चाहता था कि हम पटनामें रहें और हमारी दुर्दशाको देख-देखकर हमारे जाने-पहिचाने और रिस्तेदार हमपर दया दिखावें। अतः अेक रात मैं अपने बचे हुअे कुटुम्बको लेकर कलकत्ता मेलसे दिल्ली आगया। मुझे किसी मित्रसे ज्ञात हुआ था कि दिल्लीमें रोजगारी आसानीसे मिल जाअेगी। दिल्लीमें पहले मैंने अेक होटलमें नौकरी की। वहां मुझे दोनों समय भोजन और महीनेमें २५ रुपअे मिलते थे। तीन महीने तक-मैंने रात और दिन अुस दूकानपर नौकरी की। परन्तु अेक दिन मेरे हाथसे कप-बसीके दो जोड़े फूट गअे, बस फिर क्या था होटलके मालिकने मेरे पुरखे न्यौत दिअे। दो झापड़े लगाअे और कप-बसीके दुगने दाम काटकर मुझे बिदा कर दिया। मैंने भी वहां रुकना पसंद नहीं किया और नहीं मैंने क्षमा मांगी। मैं सीधा घर चला आया। अिस तरह बाबू साहब, कअी विपत्तियां झेलीं, लोगोंकी झिड़कियाँ सहीं। और अब रिक्षा चला रहा हूं।"

अिस समय रिक्षा चांदनी-चौकमेंसे जा रहा था। अिस बातका ज्ञान मुझे दूकानोंपर लगे पोस्टरोंसे हुआ। मैं वास्तवमें अुसकी कहानीपर ध्यान पूरा नहीं दे रहा था। मेरा आधा ध्यान दिल्लीकी बड़ी बड़ी अिमारतोंको देखनेमें लगा था। अिस बातका आभास रिक्षावालेको भी हो गया था। अिसलिअे अुसने कुछ और अधिक न कहकर संक्षेपमें ही अपनी कहानी समाप्त कर दी। लेकिन ज्योंही अुसने आगे कुछ कहना बंद किया त्यों ही मैंने अुससे कहा—"अरे भाअी, तुमने अपनी बात क्यों रोक दी? मुझे वास्तवमें अत्यन्त खेद है कि तुम जैसे अच्छे घरानेके लड़केको अितनी मुसीबत अुठानी पड़ रही है। मुझे तुम्हारे साथ पूर्ण सहानुभूति है। कहो,-कहो और कहो फिर क्या हुआ?" यद्यपि अुसने अपनी कहानी वहीं समाप्तकर दी थी। परन्तु मैंने पूरी तरह गौर नहीं किया, क्योंकि मेरा ध्यान तो दूसरी ओर लगा था, अिसलिअे मैंने अुससे और कहनेको कहा। जैसे वह कोअी दादी-नानीकी कहानी सुना रहा था। "जाने भी दीजिअे बाबू साहब, जो कुछ मैंने सुनाया वही बहुत है। लड़केने जैसे मेरा अिरादा पहिचान लिया हो। मैं भी चुप हो गया और शहर देखनेमें खोगया। करीब तीन-चार फर्लांगके बाद रिक्षावाला अपनी साअिकलसे अुतर पड़ा। मैंने पूछा—"क्या बात है, क्यों अुतर पड़े? क्या कनाट सर्कस आगया है?" नहीं बाबूसाहब,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहां आपको चढ़ाअी नहीं दिखाती क्या ?" "अच्छा हां, ठीक है, चढ़ाअी है, अब हमको और कितनी दूर चलना है?" "बस, अिसी चढ़ाअीके बाद कनाट सर्कस आया समझिअे," और सचमुच कुछ मिनटोंमें हम कनाट सर्कस जा लगे। मैंने कनाट सर्कसके सम्बन्धमें यहाँ वहाँ पढ़ा था कि वह दिल्लीकी मशहूर जगह है, अिसलिअे अपनी कल्पनासे अुस स्थानका मस्तिष्कमें अेक चित्र खींचा था। परन्तु जैसा मैंने अनुमान किया था वैसा वहां कुछ नहीं था। वह स्थान बिलकुल कल्पनाके चित्रसे भिन्न था। वाह क्या शानदार जगह है। मैंने लड़केसे पूछा,–"होटल डी वोल्गा किस जगह है?" लड़केने अेक ओर अिशारा किया। मैंने कहा,–"तो वहीं ले चलो, वहां दूसरी मंजिलपर मेरे अेक मित्र श्री मनमोहनलालजी दुबे अेम. पी. रहते हैं। मैं वहीं ठहरूंगा।"

कुछ ही मिनटोंमें हम 'होटल डी वोल्गा'के पास पहुंच गअे। वाह क्या शानदार होटल है, मैंने मन-ही-मन कहा। मैंने होटलके अूपरकी ओर नजर फेंकी। बड़ा ही सौभाग्य था कि मिस्टर दुबे दूसरी मंजिलपर खड़े हुअे दिख गअे। मैंने नीचेसे ही अुन्हें पुकारा। पहले अुन्होंने मुझे घूरकर देखा और शायद ठीकसे पहिचानकर अूपर आनेका संकेत किया। मैंने रिक्षावाले लड़केसे कहा–"भाअी, जल्दी सामान अूपर ले आना। दूसरी मंजिलपर समझे?" यह कहकर मैं अूपर चढ़ गया। और थोड़ी देर बाद रिक्षावाले लड़केने मेरा सामान अूपर पहुंचा दिया। मैंने अुससे फिर पूछा–"अच्छा भाअी, तुमको क्या दे दूं?"

वह बोला––"जो आपकी मर्जी।" मैंने अुसकी दुर्दशापर तरस खाकर झट अेक रुपया दे दिया। क्योंकि वह मुझे करीबन पांच मील लाया था जबकि मैं अपने शहरके स्टेशनसे जब कभी घर जाता था जो कि लगभग अेक मील ही है, बारह आने देता था। यों तो मुझे और अधिक देना पड़ता यदि ठहराव हो जाता। परन्तु अुस समय तो लड़केको गरज थी। लड़केने अेक गहरी नजर डालकर चुपचाप बिना कुछ चीं-चपड़ किअे रुपया ले लिया और सलाम करके चला गया। मैंने अितमीनानकी सांस ली। घड़ीमें देखा तो दस बज रहे थे। अुस समय श्री दुबेजी भोजनकी टेबिलपर जानेवाले थे। अिसलिअे मुझसे भी अुन्होंने कहा–"बहुत खुशी हुअी कि आप समयपर आगअे। नहीं तो मैं भोजन करके बाहर जानेवाला ही था। अच्छा, गुसलखानेमें जाकर पहले हाथ मुंह धो लो और कपड़े बदल लो। भोजन तैयार है। जल्दी करो।" "ठीक है", मैंने कहा। गुसलखानेमें जानेके पहिले मैं आपको श्री मोहनलालजी दुबेका थोड़ा परिचय अवश्य देता जाअूं। सुनिअेगा–मिस्टर दुबे मेरे घनिष्ट मित्र हैं। आप कहेंगे कि मैं अेक साधारण क्लर्क ठहरा और मिस्टर दुबे अेक जागीरदार और अेम. पी.। अिस दोस्तीमें अवश्य कोअी रहस्य होना चाहिअे। हां साहब, वही बात मैं आपसे कहता हूं। जनरल अिलेक्शनके दिनोंमें मि. दुबेको मैंने गुप्त रूपसे सहायता दी थी। अुनके अेक दैनिक-पत्र 'सेवक' का गुप्त रूपसे मैंने सम्पादन भी किया था और अुनकी योग्यता अेवं जनताके प्रति सेवा-भाव, सच्चरित्रता, दयालुता और अेक कर्मठ नेता आदि आदि बातें दैनिक 'सेवक' द्वारा जनताके दिल और दिमागतक पहुंचाअी थीं। अिसके अतिरिक्त और भी बहुत बातें हैं जिनको मैं प्रकट करनेका साहस नहीं कर सकता हूं। केवल अितना ही परिचय पर्याप्त होगा।

हाथ-मुंह धोकर जब मैंने कपड़े बदलनेके लिअे अपना सूटकेस खोला तो अपने घड़ी किअे हुअे कपड़ोंको अस्तव्यस्त पाया और सूटकेसको खूब झाड़ पोंछकर देखा परन्तु वह रुपअे न दिखे। मैंने मन-ही-मन अपना करम ठोंक लिया। मस्तिष्क विकृत हो अुठा। जैसे किसी सांपने डस लिया हो। मैं हत-बुद्धिसा होकर वहीं बैठ गया। अब सुखानुभूतिके बाद मेरी दुखानुभूति (ट्रेजेडी) प्रारम्भ होती है। मुझे कुछ देरी होते देख श्री दुबेजी बोले–"अरे, भाअी, पाण्डे अितनी देरी क्यों, बैरा खाना रख गया है, ठण्डा हो जाअेगा। करीब आधा घण्टा होनेको है और तुम हो कि वहांसे आनेका नाम ही नहीं लेते। क्या गुसलखाना पसन्द आ गया?" अुन्होंने मजाक करते हुअे कहा। "नहीं, नहीं, मैं जल्दी ही आता हूं, आप खाअिअे, मैं आया, हां आया।" मैंने घबड़ाते हुअे कहा। और मैं, नहीं मेरा शरीर टेबिलके पास आकर बैठ गया। श्री दुबे साहबने अपना भोजन शुरू कर दिया। मैंने भी चेहरेपर कुछ बनावटी मुस्कान लाते हुअे अुनकी ओर देखा। और अुन्हें देखता हुआ कुछ सोचने लगा। जब घरसे चला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था तो श्रीमतीने अेक बनारसी साड़ी दिल्लीसे लानेको कहा था। बच्चेने कहा था–'बाबूजी मेरे लिअे दिल्लीसे अेक छोटी साअिकिल, अेक हाकी और अच्छी स्वेटर जरूर लाना। हाँ, भूलना नहीं, नहीं तो मैं आपसे कभी नहीं बोलूँगा। छोटी बच्ची कुछ नहीं बोली। हां, अुसके न कहनेपर भी मैंने अुससे अुसके लिअे सडिल और बढ़िया फ्राक लानेको कहा था। अिसपर वह बहुत खुश हुअी थी। अुसने कहा था मेरे पापा बड़े अच्छे हैं। लेकिन अब क्या होगा? हे भगवान क्या करूं? जेबमें सब-कुछ मिलाकर सौ-सवासौ रुपअे ही बचे होंगे। लौटूँगा तो अुस समय भी कमसे-कम तीस रुपअे तो जरूर ही चाहिअे। अस्सी-नब्बे रुपअेमें किस-किसकी मांग पूरी करूँगा? किसके लिअे क्या ले जाअूँ? यदि पत्नीको मालूम हो गया तो क्या होगा? और यह बात तो लाख छिपानेपर भी अेक-न-अेक दिन अुसे मालूम हो ही जाअेगी। फिर क्या होगा? महाभारत! ओफ! मेरे मुखसे 'ओफ' सुनकर श्री दुबेजी बोले–"अरे भाअी, किसके लिअे आह भर रहे हो?" मैं बड़ा ही स्वाभिमानी व्यक्ति हूँ। किसीके आगे हाथ फैलाना मेरी शानके खिलाफ है। अिसलिअे रुपयोंको बड़ी ही हिफाजतसे रखता और हिसाबसे खर्च करता हूँ। अिसलिअे दुबेजीके पूछनेपर मैंने कहा–"कुछ नहीं यों ही जरा थक गया हूं।" और मैंने फिर अेक बनावटी मुस्कान चेहरेपर ले ली। मैं नहीं चाहता था कि श्री दुबेजीसे कहूँ कि अुस धूर्त रिक्षावाले लौण्डेने मुझे अुल्लू बनाकर किस प्रकार ठगा है; क्योंकि मैं अुनके कृपण स्वभावसे परिचित ही था। वे मुझे कुछ सहायता देनेके बजाय हँसते और बेवकूफ बनाते।

"दिल्लीके लिअे कितने दिनोंका प्रोग्राम बनाया है?" "केवल आज और कल।" "अरे, अितने जल्दी ही चले जाओगे। क्यों क्या.....?" मैंने अुन्हें आगे बोलनेका अवसर न देते हुअे बात काटकर बीचमें ही कहा,–"नहीं, बात यह है कि छुट्टी केवल दो-दिनकी मंजूर हुअी है।" मैं समझ गया था कि श्री दुबेजी आगे-श्रीमतीजीने अधिक दिन ठहरनेको मना कर दिया होगा,—वाक्य अवश्य बोलते। मैं नहीं चाहता था कि वे जलेपर नमक छिड़कते। मैंने कहा–"आज हम अन्तर्राष्ट्रीय औद्योगिक मेला (प्रदर्शनी) देख लें और कल संसदका अधिवेशन भी देख लूँगा, ठीक है न? और अधिक ठहरनेसे क्या लाभ?" वे बोले–"लेकिन संसदकी बैठक तो सोमवारको होगी, यानी परसों और तुम तो परसों ही चले जाओगे।" चूंकि मेरा मस्तिष्क ठिकाने नहीं था, अतः मुझे मन-ही-मन दुख और चिन्ता खाअे जा रहे थे। मुझे सबकुछ ज्ञात होते हुअे भी मेरी बुद्धि भ्रमित हो रही थी। मैं सोच रहा था जीवनमें अेक-बार जैसे-तैसे दिल्ली आना हुआ और वह भी बिना साध पूरी किअे जाना पड़ेगा। अेक दिल कह रहा था कि क्यों न दुबेजीसे रुपयोंकी चोरीकी बाबत कह दूं। शायद लड़का पकड़ा जाअे। परन्तु मुझे अुसके रिक्षाका नम्बर भी तो नहीं मालूम था। किस आधारपर वह पकड़ाता। दूसरा मन कहता, जाने भी दो–जो होगया सो हो गया, पश्चात्ताप करनेसे क्या फायदा। रुपअे मैंने ही कमाअे थे और यदि मेरे ही हाथों खो भी गअे तो किसीको मुझसे कहनेका क्या हक? यदि दुबेजीसे रुपयोंकी याचना करूँ और कहीं अुन्होंने टालमटोल की तो फिर रही सही दोस्ती भी जाती रहेगी। आफिसमें हेडक्लर्क पेन्शनपर जानेवाला है और मैं तथा अेक अन्य क्लर्क सीनियर पोस्ट हैं अिसलिअे अुस स्थानको पानेके लिअे दुबेजीकी दोस्ती काम आवेगी। क्योंकि मामला नाजुक है। "यदि संसदकी बैठक न भी देख सकूंगा तो कोअी विशेष बात नहीं। मैं चाहता हूँ कि आज अन्तर्राष्ट्रीय औद्योगिक प्रदर्शनी ही देखी जाअे क्योंकि अैसी नुमाअिश बहुत कम ही होती है। संसदका अधिवेशन तो बादको भी देख सकता हूँ।" मैंने अुदास चेहरा बनाकर दुबेजीकी बातका अुत्तर दिया। दुबेजी भी कुछ नहीं बोले। और अुस दिन हम लोगोंने खूब जी भरकर प्रदर्शनी देखी। दूसरे दिन दिल्लीके कुछ महत्वपूर्ण स्थान भी देखनेको मिल ही गअे।

तीसरा दिन। मैं ग्राण्ड-ट्रंक-अेक्सप्रेसके सेकण्ड क्लास कम्पार्टमेण्टमें बैठा हुआ था। अुदास चेहरा लिअे हुअे मैं आज फिर वही दृश्य देख रहा था जो मैंने दिल्ली स्टेशनपर अुतरते समय देखा था। सब कुछ प्रायः वैसा ही था। मैं भी वही था किन्तु मेरा मस्तिष्क विकृत था। मैं अुस छोकरेको मन-ही-मन कोस रहा था और अपनी मूर्खतापर कुढ़ रहा था। गाड़ी छूटने ही वाली थी कि अितनेमें दरवाजा खुला और अेक लड़का बुड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फुर्तीसे भीतर आया। वह मेरे समीप आया। अुसने अपने कमीजके खीसेसे अेक छोटा-सा मैले कपड़ेका बण्डल निकाला और मेरे हाथमें देते हुअे बोला—'केवल अेकसौ-तीस रुपअे।' अितना कहकर वह जिस वेगसे डिब्बेमें आया था अुसी वेगसे बाहर निकल गया और प्लेटफार्मकी भीड़में न जाने कहां अदृश्य हो गया। लड़का वही था—वही रिक्षेवाला। किन्तु आज अुसमें भी परिवर्तन हो गया था। अिसलिअे मैं अुसे और अुसके कार्यको समझनेमें असमर्थ हो रहा था। मैं किंकर्तव्य-विमूढ़सा होकर अुसे देखता रहा। मेरी जीभमें जैसे किसीने ताला लगा दिया हो। मैं मूक होकर अुसे देखनेमें ही लगा रहा, जबतक वह मेरी आँखोंके सामनेसे ओझल न हो गया। बड़ी देरतक अुस मैले कुचेले बण्डलको जिसमें रुपये बन्धे थे पकड़े रहा। मुझे अैसा लग रहा था कि रूमालमें कोअी घृणित वस्तु बंधी हो। कुछ देर बाद मैंने अपने आपको संयत किया और अुस मैले कुचेले रूमालको जिसमें रुपये बंधे थे बिना परवाह किअे वहीं बगलमें रख लिअे।

अिस समय मैं अपने आपको कुछ अस्वस्थ महसूस कर रहा था। मेरी मानसिक अस्वस्थता ही अधिक थी। अतः मैंने अपना होलडाल खोला और सीटपर बिछा लिया। मेरे हृदयमें दिल्लीमें हुअी घटनाओंका तूफान अुठने लगा। मुझे अैसा ज्ञात हो रहा था कि मैं मनुष्यतासे नीचे गिर रहा हूं। मैं सोच रहा था कि यथार्थमें मानवकी परिभाषा क्या है। यह विचार बहुत पहलेसे मेरे दिमागमें चक्कर काट रहा था। अेका-अेक मुझपर जैसे किसीने प्रहार किया और मैं नीचे गिर पड़ा। मैं बेहोश होकर अुसी लड़केको देख रहा था। अुस टेलिविजनमें जिसे मैंने औद्योगिक मेलेके अमेरिकन स्टालमें देखा था। मैं बड़ा ही प्रसन्न हो रहा था। जिस टेलिविजनमें देशके दो महान् नेताओंको बोलते और हंसते हुअे देखा था अुसीमें अुस रिक्षावाले छोकरेको भी देख रहा था। वह जैसे कोअी नाटकका पात्र हो। मैं अुसे कनाट सर्कसमें देख रहा था। वह अपने रिक्षेके पास खड़ा था। अुसने अपनी जेबसे चाबियोंका अेक गुच्छा निकाला और अेक चाबी मिलाकर मेरा सूटकेस खोला। रुपअे निकालकर फुलपेण्टकी गुप्त जेबमें जो कि फुलपैंट के भीतरी बाजू थी जल्दीसे रख लिअे। अिस कार्यको करनेमें अुसके हाथ पैर कंप रहे थे और चेहरेपर घबराहटके चिन्ह स्पष्ट दिख रहे थे। वह फिर होटलके अूपर आया। मैं स्वयंको अुसे अेक रुपया देता देख रहा था। वह बिना कुछ अधिक मांगे ही नीचे अुतर आया। अब अुसने रिक्षापर बैठकर अुसे बड़ी तेजीसे चलाया। दृश्यमें परिवर्तन हुआ—अिस समय वह हांपता हुआ रिक्षेकी साअिकिलसे अुतरा। अुसके साथ ही अेक खूसट व्यक्ति भी नीचे अुतरा। अिस व्यक्तिके हाथमें अेक डाक्टरी दवाअियोंकी पेटी थी और गलेमें स्टेथस्कोप झूल रहा था। निश्चित वह व्यक्ति डाक्टर ही था। लड़का दौड़कर अेक टीनके टपरेमें घुसा। अुस टपरेके आसपास अुसीके जैसे अन्य भाअी बन्धु भी थे। वहाँ अेक प्रकारसे नीरवता थी। हां, टपरोंके बीचकी सँकरी गलीमें खुजलीसे सड़े हुअे दो अेक कुत्ते और बिल्लियाँ अवश्य अिधर अुधर दौड़ रहे थे। और टपरोंके बगलमें बहती हुअी नालियोंके सड़े बदबूदार पानीमें कुछ बतकें चां चां कर रही थीं। टपरेके भीतरका दृश्य हृदय रोगसे पीड़ित अेक नारीकी हड्डियोंका ढांचा दवादारूके अभावमें जीवनसे मुक्त होनेकी राह देख रहा था। अुसकी खटियाके पास ही अेक नवयुवती बैठी थी। वह सुन्दर अवश्य रही होगी, किन्तु अिस समय तो अुसके गोरे और सुडौल मुखपर विषादकी गहरी रेखाअें फैली हुअी थीं। चेहरा पीला, मुरझाअी हुअी कलीके समान। लड़का घुसते ही चिन्तित और भर्राअे स्वरमें बोला—"मां, मां कैसी तबियत है, तेरी। देख मैं तेरे लिअे डाक्टर ले आया। अब तू जरूर अच्छी हो जाअेगी।" अुसके सूखे हुअे मुखपर प्रसन्नताकी अेक क्षीण रेखा क्षण-भरके लिअे खिंच गअी। परन्तु मरीजके मुखसे अुत्तरमें अेक भी शब्द नहीं निकला। हां अुसने बोलनेकी कोशिश अवश्य की थी जो अुसके हिलते हुअे ओठसे स्पष्ट दिखाअी दिया। केवल मांकी धँसी हुअी आँखोंमें ममता अुभरकर रह गअी। डाक्टरने पहले मरीजका हाथ देखा। फिर मुंहपर निराशाके भाव लाते हुअे अुसने अेक दवा पानीमें मिलाकर पिलाअी। अिसके बाद अेक अिंजेक्शन दिया और मुंह बनाकर खड़ा हो गया। लड़केने डाक्टरकी ओर मुंह फेरकर बड़ी व्यग्रतासे पूछा—"डाक्टर साहब, अिस अिंजेक्शनसे कुछ-न-कुछ लाभ तो अवश्य ही होगा। आप तो बता सकते हैं कि कुछ आशा है भी या नहीं?" डाक्टरने अपना काला मुँह लटका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिया और कुछ नहीं बोला। लड़का पुनः बोला—"डाक्टर साहब, आप फीसकी चिन्ता न करें। मैं आपको दुगुनी फीस दूंगा। आप किसी भी तरह मेरी मांको चंगी कर दें।" वह आगे और भी कुछ बोलनेवाला ही था कि मरीजको अेक हिचकी आअी और क्षण भरमें आँखोंकी पुतली लौट गअी। डाक्टर चुपचाप बाहर चला गया। लड़की और लड़का सब कुछ समझ गअे। दोनोंके मुंहसे अेक चीत्कार निकली और साथ-ही-साथ आँखोंसे दुःख दर्दके साथी आंसू भी।

दृश्य परिवर्तन—मैं ग्रांटट्रंक-अेक्सप्रेसके सेकण्ड क्लासके डिब्बेमें बैठा हुआ हूं। और जैसा कि अभी कुछ देर पूर्व वह लड़का मेरे हाथमें अेक मेले रूमालमें बंधे हुअे रुपअे देता है और कहता है—"केवल अेक सौ तीस रुपअे।" और फिर वह स्टेशनकी भीड़को चीरता हुआ स्टेशनके बाहर निकल जाता है। वह शायद अब अपने घरकी ओर बेतहाशा भागा जा रहा है। सड़कपर भीड़ बहुत है। मोटरें अिधरसे-अुधर बड़ी तेजीसे दौड रही हैं। वह लड़का अेक मोटरकी चपेटमें आ जाता है। मोटर मालिक रोके बिना ही भाग जाता है। अेक चीत्कारके साथ ही दृश्य समाप्त हो जाता है। और मैं भी अेक हल्कीसी चीख मारकर अुठ बैठता हूँ। रेलके सेकण्ड क्लास डिब्बेमें नहीं, अपने स्वयंके घरके सोनेके कमरेमें। दीवालपर घड़ीमें आठ बज रहे थे। अेक बजे सिनेमा देखकर आया था अिसलिअे अुठनेमें देरी हो गअी थी। ठण्ड होते हुअे भी मेरी देहसे हल्का पसीना निकल आया था। मैं स्वप्नकी भयावनी घटनाका स्मरण कर रहा था। हां, तो अुस लड़केके मरनेके बाद अुस लड़कीका क्या हुआ होगा? यही अेक बड़ा प्रश्न था जो मुझे कुछ सोचनेको मजबूर कर रहा था। क्या लड़कीने अपने जीवनसे प्यार किया होगा, यदि किया होगा तो किस तरह, किस प्रकारका जीवन! अथवा वह भी अपने सगोंके साथ चली गअी होगी। मैं आगे अधिक नहीं सोच सका क्योंकि मुन्ना बगलवाले कमरेसे जोर-जोरसे कलका बासा नवभारत-टाअिम्स पढ़ने लगा—दिल्ली बुधवार, १२ दिसम्बर। भारतके प्रधान मन्त्री नेहरूने अन्तर्राष्ट्रीय औद्योगिक प्रदर्शनीके अमेरिकन पेण्डालका निरीक्षण किया.....। नागपुर—गुरुवार १३, आज रेल्वे ब्रीजपर अेक रिक्षा-वाले और मोटरमें भिड़न्त। रिक्षावाला नवयुवक था। घटनास्थलपर ही अुसकी मृत्यु हो गअी। देहरा-दून—गुरुवार १३, सुरक्षा मन्त्री काटजूने मंगलवार-को नेशनल डिफेंस अेकाडमी, देहरादूनमें गोरखा राअिफल्सकी अेक टुकड़ीकी सलामी ली। आप चित्रमें बाअेंसे दाअें तृतीय हैं। आपकी बगलमें मेजर जनरल मि. चोपड़ा खड़े हैं.... पटना—गुरुवार १३, प्रजा सोशलिस्ट नेता श्री नरेन्द्र सिंह यादव अेम. अेल. अे. ने बाढ़ पीड़ितोंका लगान माफ करनेकी सरकारसे सिफारिश की। दिल्ली—बुधवार १२, आज संसदमें श्री कालिक प्रसाद मेहताने 'वेश्या वृत्तिको बिलकुल समाप्त कर देना—अिस विषयपर अेक गैरसरकारी बिल प्रस्तुत किया...' फिर अुसने दिल्लीकी किसी अेक फर्मका विज्ञापन पढ़ा जो कि कनाट-सर्कसमें हैं जिसमें आवश्यकता है—"अेक अेम. अे. पास असिस्टेन्ट मैनेजरकी, साढ़े-तीन सौ वेतनकी जगह। मैंने केवल अितना ही सुना और जैसा कि मेरा सुबह अेक दो कदम टहलनेका नियम है, मैं तुरन्त बाहर आ गया। बाहर निकलते ही मुझे वही दो बीघा जमीनका पोस्टर फिर दिखाअी दिया जिसे कल रात मैंने देखा था। और फिर अेक बार अुस फिल्मके हीरोका कलकत्तामें रिक्षा खींचना याद आ गया! सहसा मुझे अेक महत्वपूर्ण बात और स्मरण हो गअी। वह थी अेक तारीख। हाँ आज अेक तारीख है। आफिस जाना है। मुझे आगे टहलनेका अीरादा छोड़ देना पड़ा और घरकी ओर और जल्दी-जल्दी लौटना पड़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रज्ञाचक्षु पं० सुखलालजी

—श्री दलसुख मालवणिया

[अिस वर्ष, अिसी मासमें अ. भा. राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनके जयपुर अधिवेशनमें वर्धा समितिकी ओरसे 'महात्मागान्धी निधि पुरस्कार रूप १५०१) रु. पण्डित सुखलालजीको ताम्रपत्र-सहित अर्पण किया जा रहा है। अिसके पूर्व आचार्य क्षितिमोहन, आचार्य सातवलेकर, सम्पादकाचार्य बाबूराव पराड़कर और आचार्य विनोबा भावेको ये पुरस्कार अर्पण किअे जा चुके हैं।]

पण्डित सुखलालजीके नाम और कामको सुनकर यह कोअी नहीं जान सकता कि वे जन्मतः ब्राम्हण नहीं किन्तु वैश्य हैं। मित्रों और परिचितोंमें तो वे केवल 'पण्डित-जी' ही हैं। किन्तु 'पण्डित' के साथ जो व्यवहार कुशलताका अभाव लगा हुआ है, वह पण्डित सुखलालजीमें नहीं है, अिसका कारण यह है कि अुनका जन्म अेक व्यापारी वैश्य कुटुम्बमें हुआ। अपने अध्ययन औरअध्यापनमें सतत अप्रमत्त भावसे लगे रहनेके कारण अुनको कभी अिसका ख्याल ही नहीं हुआ कि अुनकी जन्म तारीख क्या है। बनारस युनिवर्सिटीमें अध्यापकीसे निवृत्त होनेके अवसरपर युनिवर्सिटीने जब तारीख पूछी तब अुसकी सुध लेनेका सोचा। सद्भाग्यसे अुनके छोटे भाअीने पुरानी बहीमेंसे पता लगाया और लिखा कि अुनका जन्म ८ दिसम्बर १८८० अी. में हुआ है। तबसे अुनको और अुनके मित्रोंको अुनके जन्मदिनका पता लगा। अुनका जन्मस्थान अपना ही गांव 'लीमली' है। या मामाका घर कोंढ अिसका पता लगानेका साधन अब नहीं है। पण्डितजी जब चार वर्षके थे अुनकी माताका देहावसान हो गया था। अुनके पिताका नाम संघजी है। अुनका कुटुम्ब 'संघवी' नामसे जाना जाता है, किन्तु गोत्र है 'धेर्कट' (धाकड)। प्रसिद्ध कवि धनपाल भी धर्कट था, पण्डितजी भी धर्कट हैं। जैन साहित्यके अितिहासमें ये दोनों धर्कट अमर रहेंगे।

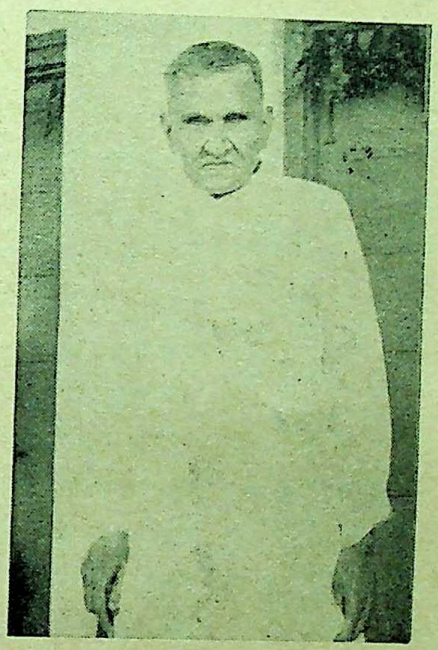

प्रज्ञाचक्षु पं० सुखलालजी

बचपनके संस्मरण कभी कभी पण्डितजी सुनाते हैं तो पता लगता है परिश्रम करनेकी वृत्ति, बड़ोंका आदर, खेलकूदमें रस, साहस-प्रियता और जिज्ञासा ये गुण बचपनसे ही अुनमें थे। किशोरावस्थामें तैरना सीखे बिना ही अेक बार तालावमें कूद पड़े तो मित्रोंकी मददसे मुश्किलसे बचे। घोड़ेपर सवारी तो सामान्य बात थी, किन्तु घोड़ेपर खड़े होकर घोड़ेको दौड़ाते थे। अैसा करनेमें पटक भी खाअी। अेक बार दो मित्रोंमें होड़ की कि पीछे पग दौड़नेमें कौन आगे निकलता है। आगे निकलनेकी धुनमें आप कांटोंमें गिर गअे। यह साहसी-वृत्ति आज भी अुनके जीवनमें पाअी जा सकती है, किन्तु अुसमें विवेक जुड़ा हुआ है।

गांवकी पाठशालामें जो कुछ सीखते, अुसे तो पूरी तरह आत्मसात् कर ही लेते किन्तु गांवमें आनेवाले फकीर, साधु, यति, चारण, माणभट आदिसे भी बहुत कुछ सीख लेनेकी तीव्र जिज्ञासा आपमें थी। जैन साधु साध्वी तो अुनके पड़ौसमें ही ठहरते। अतअेव अुनका सम्पर्क तो सहज ही प्राप्त हो जाता था। अुनसे भी आपने अनेक धार्मिक बातोंका ज्ञान प्राप्त किया और अुनके जीवनका बारीकीसे निरीक्षण भी किया।

सातवीं कक्षाको समाप्त करके अंग्रेजी पढ़नेकी अिच्छा होते हुअे भी अुनको पैत्रिक व्यापारमें लगना पड़ा, किन्तु भावी कुछ और ही था। शादी भी तय हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुकी थी। परन्तु अुनकी अपर माताका देहान्त होनेके कारण रुक गअी और १६ वर्षकी अवस्थामें तो चेचकके कारण आंखें चली गअीं। अेक महत्वाकांक्षी युवकके समक्ष अब भविष्य अन्धकारमय हो गया। किन्तु अुनके साहस और धैर्य तथा ज्ञानोपार्जनकी तीव्र अिच्छाके सामने बाह्य अन्धकारका पराजय हुआ और पुरुषार्थसे अुनके अन्तरचक्षु खुल गअे।

अन्ध होनेके बाद तो अुनके लिअे अन्य सभी कार्य बन्द हो गअे। गांवमें जो साधु-सन्त आते अुनसे नया-नया सीखनेकी प्रवृत्ति ही अब शेष रह गअी। अिस प्रकार दो वर्षतक अुन्होंने संस्कृत और प्राकृतका प्रारम्भिक अध्ययन किया।

सद्भाग्यसे अुन्हीं दिनों बनारसमें जैन पाठशालाका अुद्घाटन आचार्य विजय धर्म सूरिने किया था। पिता आदि सभी कुटुम्बियोंका विरोध होनेपर भी वे अेक मित्रको साथ लेकर अध्ययनके लिअे बनारसकी ओर चल पड़े। यह विक्रम संवत् १९६० की बात है। दोनोंको रेल-यात्राका कुछ भी अनुभव नहीं था। अतअेव अनेक प्रकारके कष्ट हुअे। किन्तु जब बनारस पहुंचे तो अुक्त आचार्यजीने अुनका जो स्वागत किया अुससे वे अुन सब कष्टोंको भूलकर विद्याध्ययनमें दत्तचित्त हो गअे।

अुन दिनों जैनोंको नास्तिक मानकर बड़े-बड़े पण्डित लोग जैन विद्यार्थियोंको पढ़ानेमें संकोच ही नहीं पापका अनुभव भी करते थे। अुस स्थितिमें भी अुन्होंने अपना अध्ययन गुरुजनोंको प्रसन्न करके जारी रखा। अध्ययनकी तीव्र रुचिके अलावा प्रतिभा भी थी, अुससे पण्डित वर्ग खुश होकर अुन्हें पढ़ानेमें आनन्दका अनुभव करता था। यह सब होते हुअे भी कभी-कभी अैसा भी प्रसंग आया कि प्रखर गरमीके दिनोंमें छात्र चार-पांच मीलसे चलकर आया और गुरुजीका दिल पढ़ानेमें न लगा तो अुसे निराश होकर घर लौट जाना पड़ा। अैसी मुसीबतें होते हुअे भी श्री सुखलालजीने बनारसमें रहकर व्याकरण, साहित्य, अलंकार, वेदान्तादि दर्शन आदि विषयोंका सांगोपांग अध्ययन किया। और जब देखा कि अब बनारसमें रहकर नया अभीप्सित अध्ययन सम्भव नहीं तब मिथिलाकी ओर चल पड़े। वहां भी कअी गुरु किअे और अन्तमें अुनकी भेंट म. म. बालकृष्ण मिश्रसे हुअी। गुरु अच्छे शिष्यकी तलाशमें थे ही। गुरुने हृदय खोलकर अुनको नव्य न्याय पढ़ाया। ये गुरु और शिष्य दोनों ही कअी वर्ष बाद हिन्दू युनिवर्सिटीमें अध्यापक बने। मिथिलाकी कड़ी शीतमें अेक गुरुजीका ध्यान छात्रके गरम स्वेटरकी ओर गया। तो तुरन्त ही शिष्यने अुस स्वेटरको गुरुजीको दे दिया और स्वयं शीत सहन करते रहे। अैसे प्रसंग अुनके जीवनमें आअे हैं जब चना चबाकर भी अुन्होंने अपने गुरु और वाचककी सुख-सुविधाका ध्यान रखा है।

विद्याध्ययन तो करते थे किन्तु प्रारम्भमें परीक्षा देनेका विचार नहीं था। मित्रोंके आग्रहसे अुन्होंने वि. १९६६ में सम्पूर्ण मध्यमाकी परीक्षा दी। किन्तु लेखक संस्कृत नहीं जानता था। अिस बातका जब पता लगा तो अुन्होंने प्रिन्सिपाल वेनिस साहबसे मौखिक परीक्षा लेनेके लिअे प्रार्थना की। अुस समयके धुरंधर तीन-चार पण्डितोंने अुनकी मौखिक परीक्षा ली और वे अतीव प्रसन्न हुअे। पण्डित वामाचरण भट्टाचार्यने तो अुनके घर आकर अध्ययन करनेको भी कहा। न्यायाचार्यके तीन खण्डोंकी परीक्षा भी क्रमशः दे दी, किन्तु अुसके बाद पण्डित मण्डलीका जो कटु अनुभव परीक्षा भवनमें हुआ अुससे प्रतिज्ञा की कि अब कभी परीक्षा देनेके लिअे यहां नहीं आना है। अुसी परीक्षा-भवनमें आगे पाठ्य निर्धारण समितिके सदस्य रूपमें ही अुन्होंने पुनः पैर रखे।

अभ्यास पूर्ण करके वि. सं. १९७३ में गान्धीजी द्वारा स्थापित आश्रममें अहमदाबाद जाकर रहे। वहां गान्धीजीके साथ स्वावलम्बी जीवनके पाठ पढ़े। गान्धीजीके साथ आटा भी पीसा और देश और जातिकी सेवाका भी पाठ पढ़ा। किन्तु ज्ञानयोगीको कर्मयोगमें अुतना रस नहीं आया जितना गान्धीजीको था। अतअेव ज्ञानयोगकी साधना करनेके लिअे पुनः गान्धीजीके नवीन संस्कारोंके साथ बनारस आकर रहे। वहां अध्ययनके साथ अध्यापन भी किया, किन्तु मित्रोंने कहा कि अब आपको कुछ लेखन कार्य भी करना चाहिअे। तब वि. १९७२ से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुन्होंने मातृभाषा गुजराती होते हुअे भी राष्ट्रभाषा हिन्दीमें लिखनेसे अधिक अुपकार होगा, अिस जागृत भावनाके साथ हिन्दी साहित्यकी सेवा शुरु की। जो आजतक अविरत रूपसे चालू है। अुनकी प्रथम पुस्तक 'हिन्दी कर्म ग्रन्थ' जो अी. स. १९१८ में प्रकाशित हुअी, अुसकी भूमिकामें राष्ट्रभाषा हिन्दीमें ही मैं क्यों लिखता हूँ अिसका स्पष्टीकरण अुन्होंने किया है। तबसे बराबर वे अपने मित्रों और शिष्योंको हिन्दीमें ही लिखनेकी प्रेरणा करते आअे हैं। मित्रोंके आग्रहसे जब गुजरातमें रहे तब वहां अनिवार्य रूपमें गुजरातीमें लिखा है।

कर्मग्रन्थके चारों भाग हिन्दीमें ही लिखे। प्रतिक्रमण और तत्वार्थसूत्र विवेचन भी हिन्दीमें ही लिखा। प्रमाण मीमांसा, जैन भाषा, ज्ञानबिन्दु, तत्वोपप्लव आदि ग्रन्थोंकी प्रस्तावनाअें और दार्शनिक तुलनात्मक टिप्पण भी हिन्दीमें ही लिखे गअे। ओरिअेण्टल कोन्फरन्सके विभागीय प्रमुख पदसे व्याख्यान भी हिन्दीमें ही दिया। पत्र-पत्रिकाओंमें भी हिन्दी लेखोंकी संख्या कम नहीं है।

पण्डितजीको अमर बना देनेवाला कार्य तो अुनका 'सन्मति तर्क' ग्रन्थका सम्पादन है। गान्धीजी द्वारा स्थापित गुजरात विद्यापीठके द्वारा अिस महाग्रन्थका सम्पादन पांच भागोंमें पण्डितजीने किया है। विद्यापीठमें वि. १९७८ में दर्शनके अध्यापक रूपसे नियुक्त हुअे तब अध्यापनके साथ ही अुस ग्रन्थका सम्पादन भी किया। अुसमें पाठ शुद्धि तो की ही है। किन्तु अुस ग्रन्थमें भिन्न-भिन्न दर्शनोंके विचारोंकी तुलना करनेवाले जो टिप्पण दिअे अुससे संस्कृत ग्रन्थोंके सम्पादनमें अेक नया-युग ही प्रारम्भ हुआ। अिसी परंपराको अपने अन्य ग्रन्थ 'प्रमाण-मीमांसा' आदिमें भी कायम रखा। चार्वाक दर्शनका अेकमात्र अुपलब्ध ग्रन्थ तत्वोपप्लवसिंहका सम्पादन गायकवाड़ सिरीजमें केवल अेक प्रतिके आधारपर किया और अुसी सिरीजमें बौद्ध ग्रन्थका भी सम्पादन किया। ये ग्रन्थ अुनकी विद्वत्ताके प्रकाशदीप हैं।

विद्यापीठमें जब अध्यापक थे तब अुनके वर्गमें श्री काका कालेलकर, श्री रसिकलाल परीख (संचालक गुजरात विद्या सभा), श्री गोपालदास पटेल, स्व. श्री रामनारायण पाठक, प्रो. आठवले, श्री मगनभाअी देसाअी जैसे आजके गण्यमान्य व्यक्ति जुट जाते थे। भारतमें बौद्ध दर्शनकी पढ़ाअी होती ही नहीं थी। किन्तु श्री धर्मानन्द कोसाम्बीने देशान्तरोंमें प्रवासकरके अुस विद्याको प्राप्त किया था। जब कोसाम्बीजी विद्यापीठमें आअे तब पण्डितजी अुनके विद्यार्थी बने और बौद्ध दर्शनका भी गुरुमुखसे अध्ययन किया। सं. १९८७ तक वे विद्यापीठमें कार्य करते रहे। गान्धीजीने अी. १९३० में जब दाण्डीकूंच की तब विद्यापीठ बन्द हुआ। अुस अवसरको श्री पण्डितजीने अंग्रेजीकी पढ़ाअीमें लगाया। सं. १९८८ में वे बनारस युनिवर्सिटीमें जैन दर्शनके अध्यापक पदपर नियुक्त हुअे और सं. २००० तक अुस पदपर बने रहे। वहांसे निवृत्त होकर बम्बअीके भारतीय विद्याभवनमें दर्शनके अवैतनिक अध्यापक रहे। अुसके बाद वि. २००७ संवत् से अुन्होंने अहमदाबादमें ही स्थाअी निवास किया और वहां गुजरात विद्या सभामें दर्शनके अध्यापक हैं। अगले दिसम्बर १९५६ में श्री पण्डितजी ७६ वर्ष पूर्ण करेंगे। किन्तु आज भी अुनकी विद्योपार्जनकी लालसा बनी हुअी है और आप योग्य शिष्योंको संशोधनमें मार्गदर्शन कर रहे हैं।

श्री पण्डितजीने नौकरी तो की है किन्तु अर्थकी अपेक्षा विद्याको ही महत्व दिया है। विद्याका अुपार्जन और वितरण ये दो ही अुद्देश्य अुनके जीवनमें रहे हैं। किन्तु अिसका अर्थ यह नहीं है कि चरित्र निर्माणकी ओर अुनका ध्यान नहीं है। बिना चरित्रके विद्याको वे विद्या ही नहीं समझते; वह तो अुनके मतसे विद्याका व्यभिचार है।

सामाजिक अन्याय जिस किसी क्षेत्रमें देखा अुन्होंने अुसका डटकर विरोध किया है। अुनके विचारोंमें तार्किक बल तो है ही। साथ ही दर्शन और धर्मके क्षेत्रमें समन्वयकी भावनाका प्रचार अुनके लेखनका प्राणभूत तत्व है। अुसीके कारण वे जैन धर्म और दर्शनको केन्द्रमें रखकर लिखते हैं तब भी अुनके लेखोंमें सब धर्म और दर्शनके साथ समन्वय करनेकी दृष्टि रहती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुनका जीवन अेक तपस्वीका जीवन है। जीवनकी सादगी और निराडम्बरताके दर्शन किसीको भी अुनके दर्शन करते ही प्रत्यक्ष होते हैं। जीवनकी आवश्यक अनिवार्य सामग्रीको छोड़कर अुनके पास परिग्रहकी वृत्ति नहीं रहती।

बाह्य जीवन, आंखें नहीं होनेसे परावलम्बी दिखता है; किन्तु अुनकी आत्मा तो स्वावलम्बनकी साक्षात् मूर्ति है। अितने दीर्घ जीवनमें अुनका जीवन अध्यापन, संशोधन और सम्पादन द्वारा हुआ है। अपनी परवशताके नामपर अेक पाअी भी किसीसे दानके रूपमें लेनेसे सदैव अुन्होंने अिन्कार किया है। किसीकी दयाके भिखारी वे कभी नहीं बने। यहांतक कि अपने कुटुम्बी-जनोंकी भी सहायता नहीं ली। यही कारण है कि वे अपने स्वाभिमानकी रक्षा कर सके हैं।

आज भी अुनके लेखनकी विशेषता है–'नामूलं लिख्यते किंचित्'। अतअेव किसी भी प्रकारका विधान करनेके पहले प्रतिपाद्य विषयसे सम्बद्ध जितनी सामग्री हो सकती है वह सब देख लेनेका वे प्रयत्न करते हैं। यही कारण है कि आजसे ४० वर्षसे पहलेका लिखा हुआ भी आज तत् तत् विषयमें प्राचीन सामग्रीकी दृष्टिसे परिपूर्ण होता है। अुनके जो विधान हैं अुन्हें बदलना आसान नहीं। वे स्वयं सदैव अपने विधानोंका परिवर्तन करनेको तैयार रहते हैं; किन्तु प्रबल प्रमाणोंके मिलनेपर। अुनके लेखनका ध्रुवमन्त्र है सत्य। सत्यके समक्ष संप्रदायका मूल्य नगण्य है। अतअेव वे जैन समाजकी साम्प्रदाअिक मान्यताओंकी परीक्षा तटस्थ दृष्टिसे कर सकते हैं। यही कारण है कि साम्प्रदाअिक जैन लोग अुनके लेखनको पसन्द नहीं करते। किन्तु अुनको अिसकी परवाह नहीं। वे तो सच्चे सत्यान्वेषी हैं।

गीत

: ललित गोस्वामी :

शरद् पूनो गअी, मावस अँधेरी आ गअी साथी,
मगर, चिन्ता नहीं कुछ, दीप मेरे पास है जबतक ॥

पली है मुक्ति कारागारके दुर्भेद्य घेरेमें,
अुजालेका हुआ है अवतरण प्रायः अँधेरेमें,
भले ही देरसे आअे सबेरा—किन्तु आअेगा—
करूँगा तप, तपस्याका अमर अितिहास है
जबतक ॥ शरद्

रुलाने दुःख आअेगा मुझे तो—आप रोअेगा,
निरखकर धैर्य मेरा—दर्द अपना धैर्य खोअेगा,
न हारूँगा कभी मैं—हार खुद ही हार जाअेगी,
न होगा आँखमें आँसू, अधरपर हास है
जबतक ॥ शरद्

करे दुर्दैवकी नाअीं भले व्यवहार दुनिया भी,
मचाअे द्वन्द्व कर दे बंद सारे द्वार दुनिया भी,
बढ़ूँगा तानकर सीना, चुनौती जुल्मको दूँगा,
सफल 'अंशु' भी न होगा शान्तिपर विश्वास है
जबतक ॥ शरद्....

डगरमें शूल हों या शैलपर, रुकता नहीं मानव,
प्रकृतिकी क्रान्तिके आगे कभी झुकता नहीं मानव,
प्रलयमें भी न होता क्षय सृजनकी सूक्ष्म सत्ताका,
शवोंका क्या भला अस्तित्व? शिवका वास है
जबतक ॥ शरद्....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जयपुरका सांस्कृतिक महत्व

—डॉ० कन्हैयालाल सहल अेम. अे. पी. अेच. डी.

अेक विहंगावलोकन : जहां दिनांक १८, १९ अक्तूबरको अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनका ७ वाँ अधिवेशन हो रहा है।

(१)

आगरासे १५१ मील और बान्दीकुअी जंक्शनसे ५६ मील, जयपुरका भव्य स्टेशन है। जयपुर वर्तमान राजस्थानकी राजधानी, भारतके अत्युत्तम शहरोंमेंसे अेक और राजस्थानके सभी शहरोंमेंसे साफ-सुथरा सर्वोत्तम शहर है। शहरके पूरब, पश्चिम और अुत्तर तीन ओर पहाड़ियाँ हैं जिनपर पुराने जमानेके किले बने हुअे हैं। शहरके समीप ही पश्चिमोत्तर पहाड़ीके सिलसिलेके अन्तमें नाहरगढ़ पहाड़ी किला है। जयपुर शहरके चारों ओर औसत २० फीट अूँची और ९ फीट मोटी सुन्दर शहर पनाह है। शहरपनाहमें ७ फाटक हैं। पूर्व सूरजपोल, पश्चिम चांदपोल, अुत्तरमें आंबेर दरवाजा और गंगापोल, और दक्षिणमें किसनपोल, सांगानेर दरवाजा और घाट दरवाजे हैं। चार-पांच मीलके लम्बे-चौड़े दायरेमें यह शहर आबाद है। शहरसे बाहर दूर तक बाग-बगीचे, बंगले और कोठियां हैं।

जयपुरकी सड़कें अपनी चौड़ाअी और सफाअीके लिअे काफी प्रसिद्ध हैं। यहांकी सबसे बड़ी सड़क ११२ फीट चौड़ी है। शहरके मध्यमें प्रधान सडकपर मानिक चौक है, जिसके दक्षिण जौहरी बाजार सड़क, अुत्तर हवामहल सड़क, पूर्व रामगंज बाजारकी सड़क और पश्चिम त्रिपोलिया बाजार और चांदपोल बाजारकी सड़कें हैं।

सड़कोंके दोनों ओर, सब मकान आलीशान, अेक रूप और अेक ही कदके बने हैं। अुन मकानोंपर अधिकांशमें अेक ही प्रकारका चित्र-रंग है। मकान अितने सुन्दर बने हैं, जिससे जयपुरके नागरिक-सौन्दर्यका बोध होता है। सारे हिन्दुस्थानमें यह अेक ही अैसा शहर है जिसमें अेक ही नक्शे और अेकही प्रकारके मकान बने हुअे हैं। देखकर तबीयत बहुत खुश हो जाती है।

जयपुर प्रसिद्ध सौदागरी शहर है, खास करके दस्तकारियोंका, जवाहिरातोंका और छापे हुअे रंगदार कपड़ोंके लिअे और राजस्थानकी खादीके लिअे देशमें यह बहुत मशहूर है। अेक जमानेमें, अंग्रेजोंके समयतक जयपुरमें शुद्ध सोनेकी मुहर, रुपअे पैसे बनते थे। सारे शहरमें अपरिमित शक्तिकी बिजलीकी रोशनी जगमगाती है। शहरपनाहसे बाहर सरकारी कोर्ट-कचेरियाँ, कार्यालय, दफ्तर और सचिवालय हैं, शिक्षण संस्थाअें हैं। चैत्र सुदीमें रामनवमीके अुत्सवका बड़ा मेला जयपुरमें भरता है। मेलेमें दूर-दूरसे बड़े-बड़े सौदागर और दर्शक यात्री पहुँचते हैं। सवाअी दूसरे जयसिंह महाराज खगोल (ग्रह-नक्षत्र) विद्या और आकाश-दर्शनके पारंगत विद्वान थे और विद्यानुरागी कला-प्रेमी महाराज थे। अुन्होंने बनारस, मथुरा, दिल्ली, अुज्जैन और जयपुरमें बड़े परिश्रम और व्ययसे, गृह-नक्षत्रोंकी गतिविधिके दर्शनके लिअे जो गणित ज्योतिष-शास्त्रानुसार स्थान बनवाअे, वे बड़े महत्वके हैं। ये आब्जर्वेटरी हैं। जयपुरकी आब्जरवेटरी सबसे बड़ी है। आश्चर्यजनक यन्त्रोंसे यहांका ग्रहनक्षत्र-दर्शन स्थान सुसज्जित है।

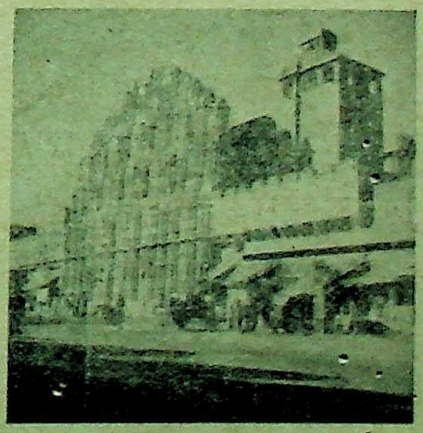

हवामहल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यन्त्रोंमेंसे बहुतेरे बेकाम हैं, बेमरम्मत हैं। सरकार सुधारकी ओर ध्यान दे तो ये स्थान चिर-सुरक्षित रह सकते हैं। शहरकी शानदार सड़कोंमेंसे अेकके किनारे-पर 'हवामहल' नामक अेक प्रसिद्ध अिमारत है। यहां अनेक दर्शनीय मन्दिर हैं। बड़े सुन्दर मन्दिर हैं।

रामनिवास बाग, भारतके सबसे अुत्तमबागोंमेंसे

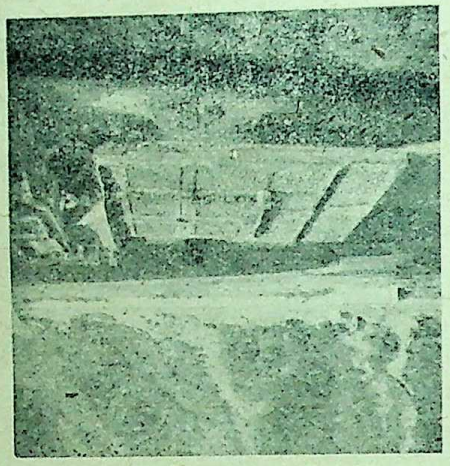

राम बाग

अेक है। बागमें अेक 'सावन-भादों' नामक यथा नाम तथा गुण अेक मनोहर विचित्र बंगला है। अिसमें पेड़-पौधोंकी गहरी हरियाली है और जलयन्त्रोंके जरिअे मन्द-मन्द जलकी फुहार बरसती रहती है। बागके पूर्वमें मशहूर चिड़ियाखाना है जिसमें बहुतेरे वन-जन्तु पाले गअे हैं। रामनिवास बागके अेक भागमें अेक सुन्दर संग्रहालय (म्युजियम) है। ज्ञान-विज्ञानकी शिक्षाके क्षेत्रमें

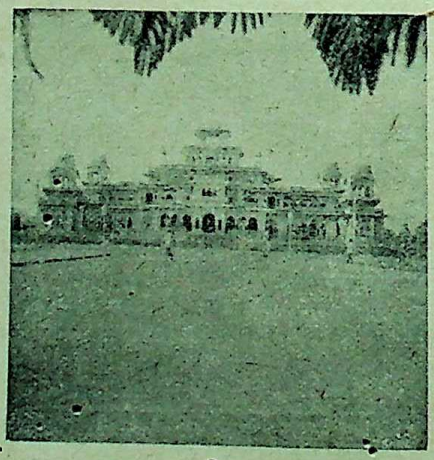

म्यूजियम

जयपुर भी भारतमें दूसरे राज्योंकी दौड़में अुन्नति-पर है। संस्कृत कालेज, महाराजा-कालेज आदि कअी कालेज हैं। हजारों छात्र अध्ययन करते हैं। राजस्थान युनिवर्सिटी यहींपर है। पिलानी अेक छोटासा शहर, सुप्रसिद्ध करोड़पति व्यवसाअी और हिन्दी-प्रेमी, विद्या-विनय सम्पन्न बिड़लाजीके ज्ञान-विज्ञानकी जिज्ञासाका प्रतीक पिलानी, शिक्षा क्षेत्रके समस्त साधनोंसे सुसज्जित विद्यापीठ है। जयपुर राज्यमें नमककी सांभर झील सारे भारतमें प्रसिद्ध है। आम्बेर जयपुरसे लगभग ५ मील पूर्वोत्तर पहाड़ी झीलके किनारेपर जयपुरकी प्राचीन राजधानी था। यहाँके महल अपनी खूब-सूरतीके लिअे प्रसिद्ध हैं। संग-मर्मर (मार्बल) पत्थरका हस्तकौशल, मेहराबोंमें नकाशीका काम, बहुत सुन्दर है।

सवाअी महाराजा रामसिंहजीके राज्यके समय जयपुरकी चतुर्मुखी सौन्दर्य-श्रीकी वृद्धि हुअी।

(२)

राजस्थानको यदि वीरताकी जन्म-भूमि कहा जाअे तो अिसमें तनिक भी अतिशयोक्ति न होगी। विश्वका अितिहास अिस बातका साक्षी है कि जिस प्रदेशमें वीरता जन्मग्रहण करती है, वह साहित्य, संगीत और कलाकी दृष्टिसे भी अत्यन्त समृद्ध हुआ करता है। मरु-भूमि-के नामसे पुराण-प्रसिद्ध राजस्थानपर सरस्वती देवीकी भी महती कृपा रही है। मीराबाअी जैसी ऋषि-कल्प साधिकाकी जन्म-भूमि होनेका गौरव राजस्थानको ही प्राप्त है। गीति-काव्यकी अधिष्ठात्री देवी और मूर्तिमती भक्तिका यदि अेक सम्मिलित चित्र बनाया जाअे तो अुसका शीर्षक 'मीरा' के अतिरिक्त और क्या हो सकता है? अिसी प्रकार चित्र-कला, भास्कर्य, धातु, अेवं वास्तु-शिल्प की दृष्टिसे भी राजस्थानका जो स्थान है, अुसका महत्व कला-मर्मज्ञोंकी दृष्टिमें प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। साहित्यके क्षेत्रमें तो राजस्थानकी देन और भी अनुपम है। हिन्दी साहित्यके अितिहासका आदि-युग तो राज-स्थानके ज्ञान-भण्डारोंके आलोकके बिना सदा अन्धकारमें ही पड़ा रहेगा। और सबसे बड़ी बात तो यह है कि राजस्थानकी मिट्टी, जो वीरताकी चिर समाधि है, राजस्थानवासियोंके त्याग और बलिदानके कारण सभीके लिअे नमस्य हो गअी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजस्थानमें, अिस राज्यकी राजधानी जयपुरका, जिसे भारतवर्षका पेरिस कहा जाता है, अनेक दृष्टियोंसे महत्वपूर्ण स्थान है। महाराजा जयसिंह द्वितीयने सन् १७२८ में अिस प्रसिद्ध नगरको बसाया था। मध्ययुगमें जयपुर राज्य आमेरके नामसे प्रसिद्ध था, लेकिन अुसका प्राचीन नाम मत्स्य देश है। मत्स्य देश महाभारत-कालमें भी अुल्लेखनीय रहा है क्योंकि पाण्डवोंने अपने अज्ञातवासका अेक वर्ष यहीं बिताया था। महाकाव्योंके अुस युगमें मत्स्य-देशकी राजधानी वैराट थी। वैराट जयपुर जिलेका ही अेक ग्राम है। महाभारत-कालमें यह विराट नगरके नामसे प्रसिद्ध था। जयपुरका अेक दूसरा नाम ढूंढाड़ भी है। किसी-किसीका अनुमान है कि ढूंढ नामक किसी पराक्रमी व्यक्तिके नामपर अिस प्रदेशका नाम ढूंढाड़ पड़ा है।

भूगर्भ-विद्याविशारदोंने बतलाया है कि अिस प्रदेशमें प्रागैतिहासिक कालके अवशेष पाअे जाते हैं। राय-बहादुर डी. आर. साहनीके मतानुसार वैराटकी घाटी प्रागैतिहासिक कालसे पूर्व ही आबाद हो चुकी थी। खोजके परिणामस्वरूप रेढ़ नामक स्थानपर जो दीवालें मिली हैं, वे वैसी ही हैं जैसी हड़प्पा और मोहेञ्जोदडोमें खोदकर निकाली गअी हैं।

शक्तिकी अुपासना भारतवर्षमें कब प्रारम्भ हुअी, यह अेक विवादास्पद प्रश्न है। आचार्य श्री क्षिति-मोहन सेनका कहना है. कि वैदिक साहित्यमें देवी-विषयक कोअी मन्त्र नहीं मिलता। अितिहासके विद्वानोंका मत है कि शक्तिकी अुपासना वेदोंसे भी प्राचीन है। सिन्धु-सभ्यताके धर्मका सम्बन्ध शक्तिकी अुपासनासे जोड़ा जाता है। जयपुरके रेढ़ और अितर स्थानोंमें देवीके जो प्रतिरूप प्राप्त हुअे हैं, वे अुन प्रतिरूपोंसे बहुत मिलते-जुलते हैं जो बिलोचिस्तान, अीरान, मेसोपोटामिया, अेशिया माअिनर, सीरिया, फिलस्तीन, मिश्र आदि स्थानों-में मिले हैं। बहुत सम्भव है कि आर्योंके भारतवर्षमें आनेसे बहुत पहले ही जयपुर प्रदेशमें शक्ति-सम्प्रदायका अस्तित्व रहा हो और कालान्तरमें वैदिक कालीन 'धरती-की अुपासना' ने ही शक्तिकी अुपासनाका रूप धारण कर लिया हो।

जयपुरके वर्तमान महाराज कछवाहा वंशके हैं और अिस वंशका अुद्भव महाराज रामके पुत्र कुशसे माना जाता है। महाभारतके अध्ययनसे भी स्पष्ट है कि जयपुरका महत्व अुस युगमें भी अक्षुण्ण रहा, क्योंकि कौरव-पाण्डवोंके अुस अैतिहासिक युद्धके अेक महत्वपूर्ण दृश्यका अभिनय जयपुर प्रदेशके विराट नगरमें ही हुआ था। अिसी स्थानपर भीमसेनने कीचक और अुसके सौ कुटुम्बि-योंका वध किया था। कौरवराज दुर्योधनने विराट नगरको ही अपनी सेनासहित आ घेरा था; और अन्तमें अुसे हार खानी पड़ी थी। अुत्तरा और अभिमन्युका पाणि-ग्रहण भी यहीं हुआ था। बौद्ध-कालमें भी यह प्रदेश कम महत्वपूर्ण नहीं था। सांभरमें जो छाप मिली है, अुसपर छड़ोंसे घिरे हुअे त्यूपका चिन्ह अंकित है। सांभर और वैराटके निकट "नगर" में मठोंके अवशेष प्राप्त हुअे हैं जिनमें हीनयान प्रतीकोंका प्रयोग हुआ है।

मौर्य-युगमें भी जयपुर प्रदेशका वैराट नगर अेक समृद्धिशाली शहर था क्योंकि सम्राट अशोकने यहां भी अपना अेक शिला-लेख खुदवाया था। अिस शिलालेखमें धर्माधर्मके सिद्धान्तोंकी चर्चा की गअी है। यह वस्तुतः गौरवका विषय है कि अुस पुराकालमें भी अशोक-महान्‌ने वहां अपना अेक शिला-लेख खुदवाया। आमेर और पावटाकी सड़कपर स्थित अेक अन्य स्थानपर अेक दूसरे शिलालेखका भी पता चला है। जयपुर राज्यमें दो-दो शिला-लेखोंका खुदवाया जाना स्पष्ट ही अिस प्रदेशके अैतिहासिक महत्वका परिचायक है। जयपुरसे करीब २५ मील दक्षिणकी ओर चाअुमू नामक स्थान है, जिसका सम्बन्ध विक्रम संवत्‌के प्रवर्तक विक्रमादित्यके निकटवर्ती पूर्वजोंसे स्थापित किया जाता है। अुस दशामें जयपुर प्रदेशकी अैतिहासिक प्राचीनता ५७ अी. पूर्व तक समझनी चाहिअे।

वैराटमें जो खुदाअीका काम हुआ है, अुसमें बहुतसे सिक्के मिले हैं, जिनका सम्बन्ध हिन्दू और ग्रीक दोनोंसे है। ग्रीक सिक्कोंमें अेक हेलिओकलसका सिक्का मिला है, जिसका समय १४० अी. पूर्व है। हेलिओकलस बैक्ट्रियाका अन्तिम ग्रीक बादशाह था। मेनन्दरके १६ भिन्न-भिन्न प्रकारके सिक्के मिले हैं। अेक अेण्टियूक्लिडस्‌का सिक्का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा दो हर्मेओसके सिक्के प्राप्त हुअे हैं। अिन सिक्कोंसे ज्ञात होता है कि वैराट और अुसके आसपासके प्रदेशोंपर कभी ग्रीक शासकोंका अधिकार रहा होगा। मेनन्दर तो राजपुताने तक आया था; यही कारण है कि २८ सिक्कोंमेंसे १६ सिक्के अुसीके हैं।

बर्नलामें जो यूप-स्तम्भ मिले हैं, वे चौथी शतीके हैं। अिससे जान पड़ता है कि ओसाकी प्रारम्भिक शताब्दियोंमें भी यह प्रदेश बड़ा महत्वपूर्ण रहा है।

सांभर और वैराटमें प्राचीनताके जो अवशेष मिले हैं, अुनसे यह भी प्रकट होता है कि हिन्दू-कालमें भी यह प्रदेश बड़ा महत्वशाली था। अिंडोग्रीक बादशाह तथा गुप्त सम्राटोंके जो बहुतसे सिक्के प्राप्त हुअे हैं, अुनसे स्पष्ट है कि अुस प्राचीन कालमें भी यह प्रदेश अत्यन्त प्रसिद्ध रहा होगा। सांभर, वैराट और रेढ़में जो खुदाअी हुअी है, अुसमें ताम्बे और लोहेकी अनेक वस्तुअें प्राप्त हुअी हैं जिनसे अिस राज्यकी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति-पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। अुस समय जयपुर प्रदेशके कुछ शहर महत्वपूर्ण औद्योगिक केन्द्र रहे होंगे और वहांके कारीगरोंने बड़ी ख्याति प्राप्त की होगी। जो खुदाअी हुअी है, अुसमें बहुतसे कारीगरीके नमूने प्राप्त हुअे हैं। जहांतक धर्मका सम्बन्ध है, जयपुर राज्यके निवासी हिन्दू-युगके अधिकांश कालमें ब्राम्हण धर्मके अनुयाअी रहे होंगे क्योंकि मिट्टीके सुन्दर बर्तनोंपर जो पौराणिक कथा-सम्बन्धी चित्र मिलते हैं, अुनसे हम अिसी परिणामपर पहुँचते हैं।

सातवीं शताब्दीके अुत्तरार्ध तक जयपुरने धर्मके सम्बन्धमें बड़ी अुदार नीतिका पालन किया था। यहांपर विभिन्न धर्मावलम्बी सुखपूर्वक अपना जीवन व्यतीत किया करते थे। चीनी यात्री हेनसांगके वर्णनसे यह बात प्रमाणित हो जाती है। सन् १९४९ में जब श्री विनोबा भावे जयपुर पधारे थे, अुस समय अुन्होंने हिन्दू-मुसलमानोंकी पारस्परिक सद्भावनाको सराहा था।

बर्नलामें अेक मिट्टीका कलश मिला है जिसमें बहुतसे पुराने सिक्के हैं। किन्तु जयपुर प्रदेशकी अैति-हासिक प्राचीनता और अुसका महत्व केवल सिक्कोंके आधारपर ही सिद्ध नहीं होता; सांभरमें अैसी बहुतसी अन्य वस्तुअें मिली हैं जिनसे जयपुरकी प्राचीनतापर प्रकाश पड़ता है। कहा जाता है कि सांभरके देवयानी तालाबके पास अेक मन्दिर था जिसका सम्बन्ध अीसाकी १० वीं शताब्दीसे है। अिस तालाबमें काले पत्थरकी जो मूर्तियां मिली हैं, वे जयपुरके संग्रहालयमें सुरक्षित हैं। अिससे प्रायः स्पष्ट हो जाता है कि अुत्तरी भारतके चौहानोंकी राजधानी पहले पहल सांभर ही रही होगी जो सन् ११९८ तक बनी रही।

आमेरके शहरकी स्थापना संभवतः १० वीं

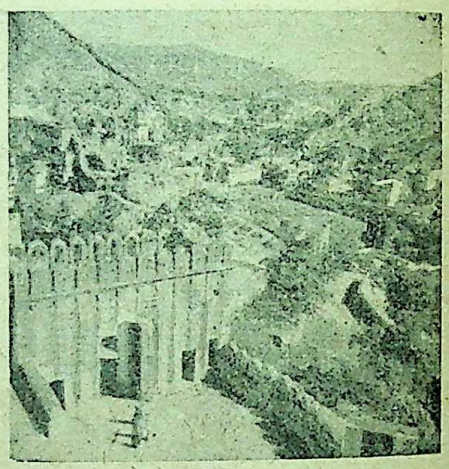

आमेर शहर

शतीमें हुअी होगी। १० वीं शताब्दीका युग जयपुरके अितिहासमें अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सन् ९६६ में सोढ़ देवीजी और अुनके पुत्र धूलेराय या दूलहरायजीने ढूढ़ाड़पर विजय प्राप्त की। सोढ़ देवीने दौसा, खोह मंच, जमवा रायगढ़ आदिको जीतकर सम्पूर्ण ढूंढ़ाड़को अपने अधिकारमें कर लिया था।*

राजपूत तथा मुगल-युगमें जयपुरका जो अैतिहासिक महत्व रहा है, अुसका वर्णन अितिहास-सम्बन्धी पुस्तकोंमें विस्तारके साथ हुआ है। आचार्य क्षितिमोहन सेनके शब्दोंमें "दिल्लीके अत्याचारसे श्री गोविन्द, राधा दामोदर, गोपीनाथ, श्यामसुन्दर, राधाविनोद, गोकुला-

---

*(अिस अंशके लिखनेमें मॉडर्न रिव्हयूके अेक लेखसे सहायता ली गअी है।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नन्द, अिन कअी मूर्तियोंको राजस्थानके जयपुरमें चला जाना पड़ा और श्री मदनमोहनको जयपुराधीशने अपनी ससुराल करौलीमें भेज दिया। जयपुर नरेशके साले करौलीके राजा गोपालसिंहने सन् १७४० के आसपास करौलीमें श्री मदनमोहनका अेक सुन्दर मन्दिर बनवाया। कहा जाता है कि भक्त सूरदास वृन्दावनमें अिन्हीं श्री मदनमोहनके बड़े अुपासक थे।

"वृंदावनमें गोविन्दजीका जो मन्दिर था, वह जैसा मनोरम था, वैसा ही विशाल भी। अिस मन्दिरकी दीवालमें जड़े हुअे अेक अस्पष्ट प्रस्तर-फलकके पाठसे जाना जाता है कि आमेर नरेश मानसिंहने अकबरके ३४ वें राज्याब्दमें, श्री रूप सनातनके तत्वावधानमें, गोविन्दजीकी प्रतिष्ठा कराअी थी। मुल्तानके कृष्णदास वणिकने भी अिसमें पर्याप्त सहायता दी थी। यह मन्दिर बादको मुसलमानोंके हाथसे विकृत हो गया। जो थोड़ासा बच रहा है, अुसे देखकर ही अचरजमें पड़-जाना पड़ता है।"

अिस्ट अिन्डिया कम्पनीके साथ जयपुरका जो सम्बन्ध रहा है, अुसपर डा. बवाने शोध-प्रबन्ध लिखकर राजपूताना विश्वविद्यालयसे पी. अेच. डी. की अुपाधि प्राप्त की है तथा अभी हाल ही में राजपूताना विश्व-विद्यालयके यूनिवर्सिटी प्रोफेसर डा. मथुरालाल शर्माने जयपुर राज्यका अेक बृहद् अितिहास लिखकर अेक बड़े अभावकी पूर्ति की है। राजनीतिक दृष्टिसे आधुनिक युगमें भी जयपुर प्रगतिके पथपर निरंतर अग्रसर हो रहा है।

(३)

साहित्यिक महत्व

राजस्थानके सभी राज्योंमें विद्या-व्यसनी और काव्य-प्रेमी राजा हो गअे हैं। जहांतक जयपुरका सम्बन्ध है, महाराजा मिर्जा राजा जयसिंह, सवाअी जयसिंह और महाराजा प्रतापसिंह 'व्रजनिधि' ने हिन्दीकी अच्छी अच्छी सेवाअें की हैं।

मिर्जा राजा जयसिंह (वि. सं. १६६८–१७२४) विद्यानुरागी और कवियोंके अच्छे आश्रयदाता थे। अुनके यहां संस्कृत, फारसी तथा हिन्दीके बहुतसे पण्डित और कवि रहते थे। महाकवि बिहारीने अिन्हींका आश्रय पाकर 'सतसअी' लिखी जो श्रृंगार-साहित्यमें हिन्दीका श्रृंगार है।

हिन्दी साहित्यिक जगत्में यह बड़ी प्रसिद्ध घटना है। किम्वदन्ती है कि अेक बार कविवर बिहारीलाल जयपुरकी तत्कालीन राजधानी आमेर गअे। अुन दिनों महाराज जयपुराधीश सवाअी जयसिंहने नअी शादी की थी और अपनी मुग्ध सुन्दर नवोढ़ा (नव विवाहिता) अल्प-वयस्क रानीके प्रेममें अुन्मत्त हो दिन-रात अुसीके महलमें पड़े रहते थे। राजकाज छोड़ दिया था। शासन ठप्प हो रहा था। सं. १६९२के लगभग बिहारीलाल आमेर गअे। अुनको राजाकी अिस दशापर शोक हुआ। बिहारी मानव-स्वभावके बड़े पारखी थे। सोच विचार-कर अुन्होंने राजमन्त्रीके परामर्शसे अेक दोहा कागजके टुकड़ेपर लिखा। दोहा सराबोर श्रृंगारात्मक था। वह दोहा महलके अन्तःपुरमें राजाके पास अेक दासी द्वारा भिजवाया गया। बहुत ही प्रसिद्ध है वह—

नहिं पराग नहिं मधुर मधु,
नहिं विकास यहि काल।
अली कली ही तें बन्ध्यो,
आगे कौन हवाल।

यह अन्योक्ति चमत्कारपूर्ण मार्मिक ममतासे लबालब भरा हुआ दोहा राजाके हाथ पहुँचा। दोहेमें भौंरे (अलि) के बहाने राजा जयसिंहको ही लक्ष्यकर कहा गया था कि हे भ्रमर, जिस पुष्पकी कलीमें तू अभीसे अितना अनुरक्त है अुसमें न तो पराग है, न मधुर मधु (मकरन्द) है और अभी वह कली अच्छी तरह खिली भी नहीं है। भौंरा अैसी अवस्थामें ही अगर कच्ची कली से प्रेम करने लगा है तो आगे कलीके खिलनेपर यौवन सम्पन्न होनेपर अुस भौंरेकी दशा क्या होगी? आगे कौन हवाल?

अिस दोहेने जादूका काम किया। राजाको अपनी अैयाशी, स्त्रैणता और राजकाज-विमुखताका अच्छी तरह बोध हुआ। राजा रंगमहलसे तुरन्त बाहर आ गअे। महाराज जयसिंहको भौंरा और मुग्धा नवोढ़ा रानीको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कली बनाकर कितनी विदग्धताके साथ यह दोहा कहा गया और अिसमें भौंरेके प्रति कितनी हितकामना थी यह "नहीं पराग, नहिं मधुर मधु . . . ." दोहेके शब्द-शब्दमें सुन्दर संकेत भरा है और सभी रसिक काव्य-प्रेमी जन जयपुरमें बनाअे हुअे अिस दोहेपर जियत-मरत-झुकि-झुकि परत! जयपुरमें ही हिन्दी साहित्यके श्रृंगार रसकी श्रृंगार बिहारी-सतसअीको प्रौढ़ता प्राप्त हुअी।

सतसअीके अतिरिक्त अिनके कुछ और कवित्त भी मिलते हैं जिनमेंसे अेक मिर्जा राजा जयसिंहके दादा महाराज मानसिंहकी प्रशंसामें है—

महाराजा मानसिंह पूरब पठान मारे,
श्रोणितकी सरिता अजौं न समिटत है।
सुकवि बिहारी अजौं अुठत कबंध कूद,
अजौं लग रणते रणोही ना मिटत है।
अजौं लौं पिशाचनकी चहेलत तें चौंक-चौंक,
सची मघवाकी छतियाँते लिपटत है।
अजौं लग ओढ़े हैं कपाली आली-आली खालें,
अजौं लग काली मुख लाली ना मिटत है।

अिसी प्रकार कुलपति मिश्र भी जो रीतिके आचार्य और बड़े कवि थे, मिर्जा राजा जयसिंहके आश्रयमें रहे। कहते हैं, कुलपतिने नवों रसोंके ३४ ग्रन्थ बनाअे थे किन्तु अप्राप्य होनेके कारण वे देखनेमें नहीं आअे। कुलपति मिश्रने 'संग्राम सार' नाम देकर महाभारतके द्रोण-पर्वका छन्दोबद्ध हिन्दी अनुवाद किया तथा देशभक्ति चन्द्रिका (दुर्गासप्तशतीका छन्दोबद्ध भाषानुवाद), रस-रहस्य (काव्य-रीतिका ग्रन्थ), युक्ति-तरंगिणी, नख-शिख आदि कअी ग्रन्थ लिखे जिनमेंसे कुछ प्राप्य हैं। कुलपति मिश्रने रेख्ताकी भाषामें भी कुछ रचना की है। जैसे,

हूँ मैं मुश्ताक तेरी सूरतका नूर देख,
दिल भरपूर रहे कहने जवाबसे ॥
मेहरका तालिब फकीर है मेहरबान,
चातक जो जीवता है स्वाति वारे आबसे ॥
तू तो है अयानी यह खूबीका खजाना तिसे,
खोलि क्यों न दीजे सेर कीजिअे सवाबसे ॥
देरकी न ताब जान होत है कबाब बोल,
हयातीका आब बोलो मुख महताबसे ॥

महाराज सवाअी जयसिंह (वि. सं. १७४५-१८००) संस्कृत, फारसी और भाषाके विद्वान् थे। अिन्होंने भारतीय ज्योतिष-शास्त्रका अुद्धार करके भारतवर्षकी सबसे बड़ी सेवा की। देश-विदेशके प्रसिद्ध ज्योतिषियों-को बुलाकर ज्योतिषके सिद्धान्तोंको स्थिर किया गया तथा दिल्ली, मथुरा, अुज्जैन, जयपुर तथा काशीमें वेध-शालाअें बनवाअी गअीं। अिन्हींके राज्य-कालमें "जीज मुहम्मदशाही" नामक ग्रन्थकी रचना फारसी और नागरीमें हुअी। अिन महाराजाने भारतवर्षमें वह काम किया जो पोप ग्रेगरी (तेरहवें) ने योरपमें किया था। अिसके अतिरिक्त अुन्होंने पण्डितों और विदेशी विद्वानोंको अपने यहां नियुक्त करके ज्योतिष और गणितके अनेक ग्रन्थ संस्कृतमें लिखवाअे। "जय-सिंह कल्पलता" नामक ग्रह-गणित सम्बन्धी ग्रन्थ स्वयं संस्कृतमें लिखा। महाराजाकी आज्ञासे कालिदासके रघुवंशका व्रजभाषामें पद्यात्मक अनुवाद भी हुआ था, जिसे पं. चन्द्रधर शर्मा गुलेरीने अेक बार देखा था।

जयपुर-नरेशोंमें महाराज प्रतापसिंह 'व्रजनिधि' (वि. सं. १८२१-१८६०) अपनी प्रखर काव्य-प्रतिभाके कारण व्रजभाषाके अुत्कृष्ट कवियोंमें गिने जाते हैं। अुनकी भक्ति-रसकी कविता बड़ी ही सरस, मनोहारी और काव्य-कलाकी दृष्टिसे अुत्तम कोटिकी हुअी है। जयपुरके परम विद्यानुरागी स्व. पं. हरिनारायणजी पुरोहितने काशी नागरी प्रचारिणी सभासे 'व्रजनिधि-ग्रन्थावली' का प्रकाशन करवाया था जिसमें अुक्त महा-राजाकी अबतक प्राप्त कविता-पुस्तकोंका संग्रह बड़ी विद्वत्ताके साथ किया गया है। महाराजा व्रजनिधि ने कुल मिलाकर २३ काव्य-ग्रन्थ सुललित व्रजभाषामें लिखे। अुनकी कुछ व्रजभाषामें कहीं-कहीं राजस्थानी रूप भी मिलते हैं। अिनकी कविताके विषय भगवद्-भक्ति, श्रृंगार, नीति, हरियशवर्णन आदि हैं। अिन महाराजाने भर्तृहरिशतकत्रयका अनुवाद नीति-मंजरी, श्रृंगार-मंजरी और वैराग्य-मंजरीके नामसे किया था। अिसके अतिरिक्त अिनके प्रमुख ग्रन्थोंमें प्रीति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लता, सनेह संग्राम, व्रजनिधि मुक्तावली, हरिपदसंग्रह, प्रेमप्रकाश, स्नेह बहार, मुरली विहार, रमक झमक बतीसी आदि हैं।

खेतड़ीके राजा अजीतसिंह भी बड़े विद्वान् और काव्य-रसिक पुरुष थे। ये स्वयं कविता भी करते थे और हमेशा कवियों, विद्वानों और वेदान्तियोंसे घिरे रहा करते थे। अिनका निम्नलिखित कवित्त प्रसिद्ध है–

कहत अजीत आन राजोंको अजीत अेक,
सुकृत करोगे जस लोगे सो ही तोको है।
कौनके हैं पुत्र त्रिया बंधु धन कौनको है,
कौनके हैं साज राज कौनको अिलाको है,
द्रिष्ट देय देखो सब बीजको झपाको है।
अेक दिन फाको दिन अेक है नफाको दिन,
अेक है वफाको अेक सफम-सफाको है।

राजस्थानके प्रसिद्ध विद्वान् पं. झावरमल्ल शर्माने राजा अजीतसिंहजीकी जीवनी भी प्रकाशित करवाअी है। स्वामी विवेकानन्द और अुक्त राजामें जो परस्पर पत्रोंका आदान-प्रदान हुआ था, अुसका भी अच्छा संग्रह श्री शर्माजीके पास है।

जयपुर-प्रदेशके अितर कवियोंमें अुल्लेखनीय हैं—चतुर्भुज मिश्र, रघुनाथ मिश्र, श्यामलाल मिश्र, चौबे व्रजलाल, चौबे राधावल्लभ, रसरासि, व्रजनाथ, भैरूँ लुहार, दुलीचन्द, रामप्रताप, कृष्णराम गौतम गोत्रीय आदि।

अुक्त कवियोंमेंसे चतुर्भुज कवि, कुलपति मिश्रके वंशज थे और जयपुरके महाराजा रामसिंहजीके आश्रित थे। अिनका देहान्त सं. १९४६ में हुआ। अिनके दो ग्रन्थ मिलते हैं–(१) व्रजपरिक्रमा– सतसअी और (२) (२) वंशविनोद (जयपुरके राजाओंकी वंशावली)।

'रसरासि'—अिनका नाम रामनारायण था। ये महाराजा सवाअी प्रतापसिंहजीके दीवान जीवराज सिन्धीके पास रहते थे। अिन्होंने अेक संग्रह-ग्रन्थ 'कविरत्नमालिका' लिखा जिसमें प्राचीन कवियोंके ८०१ कवित्त संगृहीत हैं। अिसी संग्रहमें १०८ कवित्त अिनके भी मिलाअे गअे हैं। यह ग्रन्थ बड़ा अुपयोगी है और प्राचीन कवियोंका परिचय प्राप्त करनेके लिअे अमूल्य साधन है। सं. १८२७ में यह ग्रन्थ लिखा गया था जो अभी छपा नहीं है। अिनकी कविता बड़ी सुन्दर, प्रसादगुण सम्पन्न और अुत्तम कवियोंके कोटिकी है।

राजस्थान पुरातत्व मन्दिर, जयपुरके श्री गोपाल-नारायण बहुराने 'रसरासि' के जीवनपर हाल ही में कुछ विशेष प्रकाश डाला है। अुन्होंने अिस कविकी रसिक पच्चीसी, मान-मनरंजनी नौका, अिश्क-दरियाव, अिश्क-फन्द पच्चीसी, मालिक मुकाम, सुरोदय तथा हरिकीर्तनमाला–अिन ७ कृतियोंका अुल्लेख किया है।*

'रसरासि' ने राजस्थानी भाषाके कुछ सुन्दर गानेके पद भी बनाअे हैं। ये पद अितने सुन्दर हैं कि मीरा और चन्द्रसखीको छोड़ अैसे पद कहीं देखनेको नहीं मिले। अेक पद यहाँ अुद्धृत किया जा रहा है:—

"कान्हांजी म्हांनै कुंजांमें ले चालौ।
म्हेतो राज रै कांधे चढ़ चालस्यां, पगमें छै छालौ।
रिमझिम रिमझिम मेह बरसै छै, मारग छै आलौ।
भीजैली म्हारी सुरंग चूनड़ी, दीजै राज दुसालौ।
राधांता म्हे थां पर छाया, रीझया छां देद डुमालौ।
हन्या कदमकी झामां मांही, लाल हिंडौलो घालौ।
बांहां-जोड़ी हींड मचास्यां, पीस्यां रंग रो प्यालौ।
सरस सुहांवण सांवणमेजी,
म्हारो मनड़ो हुयो छै मतवालौ।
साथै ल्यौ 'रसरासि' सखीनैं,
थे तो लटक-मटकता हालौ॥

आधुनिक जयपुर

सारे राजस्थानकी राजधानी है। वह राजस्थानका गौरव है और भारतका भी गौरव है। सारा नगर अेक सजे सँवारे हुअे सुन्दर गुलदस्तेकी तरह है। संस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी भाषाओंका यहाँ त्रिवेणी-संगम है। यहाँ संस्कृतके धुरन्धर महामनीषी सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र पण्डित हैं, हिन्दीके लब्धप्रतिष्ठ प्रौढ़ कवि, लेखक यहाँ हैं। राजस्थानी साहित्यके मर्मज्ञ सिरमौर यहाँ हैं। विविध ललित कलाओं और अमित ज्ञान-विज्ञानकी शिक्षाओंके आचार्य यहाँ हैं। जयपुर भारतीय साहित्य, कला और संस्कृतिका सम्पन्न सर्वांग सुन्दर अेक दर्शनीय मन्दिर है।

---

*द्रष्टव्य 'कविवर रसरासि और अुनके कुछ पद' (मरु-भारती, वर्ष ४, अंक २, पृ. ८८, ८९)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कन्नड़ कहानी

'गरुड़खंभ दासय्या'

—गुरुराम आयंगार

[प्रस्तुत कहानीके लेखक श्री गुरुराम आयंगार मैसूर निवासी हैं। अपने प्रदेशकी रूढ़ियोंके अनुसार आप कहानी साहित्यकी वृद्धि कर रहे हैं। जीवनमें नित्य प्रति होनेवाली साधारण बातोंमें जो हास्य विनोद है अुसे अच्छी तरह प्रस्तुत करनेमें आयंगारजी बड़े कुशल हैं।

"गरुडखंभ दासय्या" नामक अिस छोटीसी आपबीतीमें मैसूरके सुप्रसिद्ध भिखारीको लेकर विषयका विस्तार किया गया है। आजकल भी बंगलोर, म्हैसूर तथा मैसूरके गाँव, नगर, सब जगह दासय्या लोग झोली और गरुडखम्भ लेकर आते हैं, तब गृहस्थ लोग चावल, पैसे आदि अुन्हें भीखमें देते हैं। कभी-कभी दीपकमें तेल कम हो जानेपर वे तेल भी माँग लेते हैं।

अुपर्युक्त स्थानोंके अतिरिक्त दक्षिणके अन्य स्थानोंपर यह गरुडखम्भ नहीं है। दासय्या है। "दास" शब्द स्थान विशेषसे 'अय्या' के साथ मिलकर दासय्या बन गया है। प्राचीन परम्पराके अनुसार जो व्यक्ति अीश्वर-भजनमें और अुसके दास्यमें अपना समय बिताते थे वे कालान्तरमें 'दास' नामसे पुकारे जाते थे। भजनमें लीन कर्नाटक संगीतके जनक "पुरन्दर दास" के बादसे 'दास' काल प्रचलित होगया। कअी भजन करनेवाले बीचमें अेक बत्तीका खम्भा रखकर गोलाकार खड़े होकर भजन करते हैं। बादमें वही अेक वंशका नाम बन गया। जब अुसकी वेशभूषामें परिवर्तन हुआ तब वह भिखारियोंके रूपमें परिणत हो गया।]

हमारे गांवकी हरिजन–बस्तीके आदि कर्नाटक लोग बहुत दिनसे भजन करनेके लिअे आवश्यक अेक "गरुड़खम्भ" की मांग कर रहे थे। बत्तीके खम्भको गरुड़खम्भ कहते हैं। मैंने भी "हां हां" करके डेढ़ साल बिता दिया। अुस दिन दोपहरके वक्त बंगलौर गया था। वहां मेरे मित्र शंकरप्पाने कहा–"मल्लेश्वर-में मद्यपान-निषेध करनेवाला जो साधू है अुसके पास अेक गरुड़खम्भ है। अुस साधूका और मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध है। आज दोपहरको वह बिन्नी मिलके पास 'दारू पीना बड़ा पाप है' अिस विषयपर बोलनेवाला है। अुसे अफीम खानेकी आदत है, अुसके बिना अुसे स्फूर्ति नहीं मिलती। पासमें पैसा नहीं है अिसलिअे वह गरुड़-खम्भको बेचना चाहता है। तुम अुसे ले लो।"

"जाओ जी, यदि मैं अुस गरुड़खम्भको लूंगा तो मुझे नुक्कड़पर जाकर भीख मांगनी पड़ेगी।" मैंने निरुत्साहसे कहा।

शंकरप्पा बोला–"तुम्हारे आदि कर्नाटक लोगोंके काम आअेगा। कम दाममें दे देगा। ले लो।" और शंकरप्पाने दो रुपअेकी कीमतके गरुड़खम्भको दस आनेमें दिला दिया। बादमें मुझे बड़ी खुशी हुअी क्योंकि दो रुपअे देनेपर भी वह नहीं मिल सकता था। हमारे आदि कर्नाटक बन्धुओंको अिससे बड़ी खुशी होगी यह सोचकर अुत्साहके साथ मैं तीन बजेकी गाड़ीसे गरुड़खम्भ-को हाथमें लिअे मल्लेश्वरसे रवाना हुआ। जब मैं कृष्ण-बाजार पहुँचा तब मुझे अैसा लगा कि मानों सब लोग मेरी ही प्रतीक्षामें खड़े हैं। ये लोग मुझे अैसे घूरकर देखें अैसी सुन्दरता मेरे पास कहां है। यह सोचता हुआ चार कदम और आगे बढ़ा। तभी मुझे अेक-दम याद आया कि मेरे पास गरुड़खम्भ है अिसलिअे लोग सोचते हैं कि अिसके पास झोली नहीं है फिर भी दासय्या ही है अिसमें शक नहीं है।

मेरा वेश भी अुस समय झोलीवाले भिखारीके समान ही था। खादीकी फटी-पुरानी धोती और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोटे शरीरपर अेक तंग कुरता। अुसके अूपर भी अेक मैला कुचैला दुपट्टा, जिसमें मैंने कुछ खीरे बांध लिअे थे। मेरे कर्मकाण्डी पिताजी बंगलौर आनेवाले थे अिसलिअे मैंने दाढ़ी नहीं बनाअी थी। बाल बढ़ रहे थे। अिस प्रकार विकृत वेशमें मुझे अेक होटलमें बैठा हुआ देखकर अेक व्यक्तिने कहा–"अिस प्रकार मुफ्तमें बिठानेके लिअे तुझे तनखाह नहीं दी जाती है, जा जल्दीसे दोसा लेकर आ।" मुझे लोगोंने दासय्या समझ लिया है, यह जानकर मुझे बहुत लज्जा आअी। मैं कुछ बोल नहीं सका। यदि मैं धरतीमें समा जाता तो भी मुझे अुस दिन अितना दुख नहीं होता।

किंकर्तव्य-विमूढ मैं दो मिनट वहीं बैठा रहा। अुन दो मिनटोंमें मेरे सामनेसे सैकड़ों व्यक्ति निकल गअे। सबके सब मेरे गरुड़खम्भपर ही अपनी दृष्टि जमाअे हुअे थे। मुझे अैसा लग रहा था कि मानों वे लोग मुझे ही देखकर, हंसी अुड़ा रहे हैं। तब मैंने अुसे कपड़ेमें लपेटनेकी बात सोची लेकिन वह तो तैलसे तर था। मल्लेश्वरकी अेक गलीमें मेरा अेक मित्र रहता था। मैं वहां गया और अुसके कमरेमें गरुड़खम्भको रखकर अेक लम्बी सांस ली–"हे राम! अब बचा!"

अुस मित्रके कमरेमें कअी लोग आअे। अुन सबकी निगाह भी अुसीपर पड़ी। सबके सब हंसी-अुड़ाने ही वाले थे कि अेक मित्रने यह समझकर कि मेरा गरुड़खम्भसे कोअी ताल्लुक नहीं है कहा–"यह शैतान दासय्या कौन है जो तुम्हारे गले पड़ा है, अुसने अेक अच्छे मित्रको फंसाया है। दासय्या लोग, भिखारी लोग, गुडगुडीवाले ये सब तुम्हारे मित्र बन गअे हैं। तुम्हारी योग्यताको भ्रष्ट कर दिया है।" अैसी बहुतसी बातें कह डालीं। मेरे बेचारे दोस्तने अैसा मुंह बनाकर मुझे देखा जैसे अुसे सूलीपर लटकाया जाने-वाला हो। मैं तो बिलकुल बुद्धू बना बैठा था।

सोचा कि गरुड़खम्भके अूपर कुछ कागज लपेट दिअे जाअें परन्तु जो लोग आअे थे वे बाहर जानेका नाम भी नहीं लेते थे। अुनके सामने अुसे लपेटा तो वे मुझे अवश्य दासय्या समझ लेंगे। अिस भयसे मैंने अुसे ढकनेका प्रयास नहीं किया। अुस जगहसे हिलना भी मुझे नहीं सूझा। भीषण आपदाओंसे पीड़ित व्यक्ति जैसे विमूढ बनकर और जो जो आअेगा अुस सबका सहन करनेकी शक्ति बटोरता है वैसे ही मैं भी जो-जो बेअिज्जत हो, अुसे सहनेकी तैयारी करता रहा।

रात्रिमें दस बजेकी गाड़ीसे रवाना होना था। मेरा विचार था कि अुस वक्त वे लोग यहांसे चले जाअेंगे। परन्तु साढ़े नौ बजनेपर भी वे लोग कमरेसे बाहर नहीं निकले। विवश होकर मैंने गरुड़खम्भको अुठाया और रेल्वे स्टेशनकी ओर चल पड़ा।

जिस गाड़ीमें मैं बैठा अुसीमें अेक अमीर आदमी भी बैठा था। बेंचके नीचे जो गरुड़खम्भको मैंने रखा वह अुसीको देखता रहा। मैंने चाहा कि वह अैसा न समझे कि कहीं मैं दासय्या हूं, सोचकर अंग्रेजीमें बातें करने लगा। फिर भी वे तो अविश्वाससे देखते रहे और मुंह बनाते रहे।

आखिर गाड़ी हमारे गांवके स्टेशनपर रुकी। मैंने अुस नाशवान् गरुड़खम्भको अुलटकर पकड़ा और अन्धेरेमें ही आदि कर्नाटकोंके भजन-मन्दिरकी ओर दौड़ने लगा। स्टेशन-मास्टर पुकार अुठा–"वह कौन है रे दासय्या। बे टिकट अुस ओरसे भागता है।"

"तुम्हारा बाप दासय्या" मैंने कहा और टिकट फेंकते हुअे पागलोंकी तरह घरकी ओर भागा।

अनुवादिकाः—श्रीमती राजलक्ष्मी राघवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभाषा भारत-आशा

—अुदयशंकर भट्ट

*राष्ट्रभाषाके तपःपूत भविष्य-द्रष्टा प्रचारकों द्वारा ज्ञानाभिषेकके पश्चात् भी क्या अैसी कुछ बातें हैं जिनके प्रति मैं आपका ध्यान आकर्षित करूं? मैं अिसे बहुत सोच-विचार करनेपर भी नहीं समझ पाया। फिर भी कदाचित् आप अेक लेखकके मस्तिष्कके चेतन-तन्तुओं-में निरन्तर मथित होनेवाले विचार जानना चाहते हैं। यह मानकर ही मैं कुछ कहनेका साहस कर रहा हूं। वस्तुतः लेखक, अध्यापक और छात्र अथवा पाठक अेक अिकाअी हैं। क्योंकि योग्यता, आकांक्षा और अभिव्यंजनाका परस्पर सम्बन्ध रहा है। जो लेखक लिखता है, अध्यापक अुसे अपने ढंगसे छात्रके क्षुधित मस्तिष्कमें भरता है। पाठक अुसके द्वारा अपनी आत्माको तृप्ति देता है। तीनों क्रियाअें समन्वित होकर मानसके विकासमें सहायक होती हैं। मैं मानता हूं कि चिन्तन वाणीका रूप धारण करते ही ध्येय बन जाता है। भलेही साहित्य स्वान्तः सुख हो; किन्तु परहित और परसुखास्वादन भी अुसकी दृष्टिसे ओझल नहीं रहता। साधारणतः शिक्षाका अर्थ ज्ञानवृद्धि लिया जाता है। सब प्रकारकी ज्ञानवृद्धि; क्योंकि हमारे जीवनका सम्पूर्ण व्यापार अिसी ज्ञानपर निर्भर करता है। जो हम जानते हैं अुसका मनन करते हैं, विचार करते हैं और अुसके अनुसार आचरण करते हैं। अुसीसे हमारे जीवनकी दिशाअें निश्चित होती हैं। फलतः ज्ञानकी दूसरी सीढ़ी मननका शिक्षासे गहरा सम्बन्ध है। अिसीलिअे किसी वस्तुको जान लेना भर काफ़ी नहीं है। अुसको पचाना भी अुसका मनन है, जो आगे चलकर मनुष्यमें विवेककी सृष्टि करना है। अिसलिअे मैं मानता हूं कि शिक्षाका प्रथम कर्तव्य शिक्षार्थीमें विवेक अुत्पन्न करना है। यदि हम सत्य और अहिंसाके बहुतसे अुपदेश सुनने और अुसके सम्बन्धमें बहुतसी पुस्तकें पढ़नेपर भी अुसपर आचरण नहीं करते और पाण्डित्यपूर्ण प्रतिपत्तियोंपर व्याख्यान देकर "मनस्यन्यत् वचस्यन्यत्" को सार्थकता देते हैं तो वह शिक्षापूर्ण नहीं कही जा सकती। क्या आप नहीं मानते कि हमारी वर्तमान शिक्षा कुछ कुछ अैसी ही है।

पिछले डेढ़ हजार वर्षोंकी दासतासे हमारी भीतर जो विकृतियां भर गअी हैं, जो मूढ़ग्राह पैदा हो गया है, अुससे हमारा जन-जीवन अभी मुक्त नहीं हुआ है। जैसे मनुष्यका दुमुँहा रूप अेक साधारणसी बात है, स्वार्थ दृष्टि, प्रान्तीयता, असमानता, आत्म और पर-प्रतारणा जैसे अेक साधारण बात हो गअी है। हम अपने व्यक्तिगत स्वार्थोंसे अूपर अुठकर देख नहीं पाते। जब कि शिक्षाका ध्येय साहसी स्पष्ट वक्ता तथा चरित्र-वान् बना देनेवाला होना चाहिअे।

स्वभावतः मनुष्यकी प्रकृतिका ताना-बाना 'स्व' से बना है, जिसे हम दार्शनिक भाषामें 'अहम्' कहते हैं। वह 'स्व' सबसे पहले अपनेको और अपनेसे सम्बन्ध रखनेके कारण, बाहरसे भीतरसे सब जगह, अुसी 'स्व' को पुष्ट करता रहता है। यहां तक कि बाहरसे लिअे हुअे ज्ञान-रसपर भी अुसकी स्वार्थ-दृष्टि रहती है। अुस दिशामें शिक्षा अेवं सत्संग आदि ही कुछ अैसे तत्व हैं जो व्यक्तिकी स्वदृष्टिको मोड़कर मनुष्यको पर की ओर खींचते हैं। अुसके ज्ञानको विशाल, दृष्टिको अुदार और विचारोंको व्यापक बना सकते हैं। अैतरेय अुप-निषदके अेक मन्त्रमें कहा गया है "वाङ मे मनसि प्रतिष्ठिता मनो मे वाचि प्रतिष्ठितम् आविरावीर्म अेधि"। मेरी वाणी प्रतिष्ठित हो, मेरा मन वाणीमें स्थिर हो और वह मुझे आगे बढ़ावे। अिसका तात्पर्य यही है कि हमारी वाणी मनके व्यापारोंके साथ अेकरस हो। अर्थात्

---

*नागपुर महाविद्यालयके 'स्वातन्त्र्य-सभाभवन' में, म. प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके नागपुर-केन्द्र द्वारा आयोजित पदवीदान-समारम्भमें 'कोविद' 'विशारद' 'रत्न' अुत्तीर्ण स्नातकों तथा प्रचारकोंके समक्ष दिया हुआ अभिभाषण।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो मनमें, वही वाणीपर आना चाहिअे। मैं दो तरहकी बात न करूं। मेरे जीवनमें अेकरसता हो। मस्तिष्क-का सही और वास्तविक मार्गपर चलना ही जीवन अेवं संसारको सुख और शान्तिके पथपर चला सकता है। संसारमें जितने भी युद्ध हुअे मस्तिष्कके विकारसे। जितनी शान्ति और सुख फैले वह भी मस्तिष्कके संतुलित होनेपर। वैज्ञानिक सुख-साधनोंका आविष्कार भी मस्तिष्कने किया है। वस्तुतः मस्तिष्ककी भूख शैतानकी भूखसे भी बड़ी है। मस्तिष्ककी विवेकहीन निर्बलतासे अितिहास भूलोंके पन्नोंसे भरे पड़े हैं। नहीं तो रावणमें किस ज्ञानकी कमी थी? दुर्योधनमें कौनसे शास्त्र-ज्ञानका अभाव था? दूर क्यों जाअें, ये पिछले दो महायुद्ध किस अभावसे प्रताड़ित होकर लड़े गअे? मस्तिष्ककी विकृतिका परिणाम केवल पागलपन ही नहीं है, अनु-चित स्वार्थ, अुद्दण्ड गर्व, अुद्भ्रांत प्रतिहिंसा, अुग्र प्रतिशोध भावना भी विकृत मस्तिष्कके लक्षण हैं। आज भी जो हमारे युवक अेवं प्रौढ व्यक्ति बात-बातमें विरोध, विद्रोहके बहाने सरकारी अिमारतों, थानों और डाक-खानों, रेलोंको जलाकर निरीह-निर्दोष व्यक्तियोंकी हत्या करके, आत्मतृप्तिके नामसे प्रतिशोधकी ओर अग्रसर होते हैं, वह सब क्या है? क्या मस्तिष्कके विकार नहीं हैं? लगता है जैसे महायुद्धकालमें अुत्पन्न व्यक्तियोंमें हत्या, विद्रोह अेक साधारण बात हो गअी है। यह सब हमारी परंपरामें कहां था? कहांसे सीखा यह सब हमने आपको यह मानना होगा कि अुक्त विका-रोंको दूर करनेवाली शिक्षा हमें नहीं मिली। जो मिला अुसमें ज्ञान था, विवेक नहीं था। मुझे अैसा लगता है जैसे परिष्कृत मस्तिष्क न होनेके कारण हमारे अवचेतन मनके सब विकार अुपचेतन और चेतनकी तहमें समय पाते ही प्रबल हो अुठे, अुसका अेक कारण यह भी दिखाअी देता है कि राजनीति (कूटनीति) ने धर्म, आचार और साहित्यपर अपना अधिकार जमा लिया है। अैसी दशामें सत्शिक्षासे ही हमारे जनजीवनमें कल्याणके अंकुर फूट सकते हैं। आज हमें संक्रान्ति कालके अिस युगमें अैसी शिक्षाकी आवश्यकता है जो ज्ञानको समाना-नुवर्ति बनाकर व्यक्ति और समाजको सशक्त कर सके। अुसमें त्याग और अुसके महत्वको प्रतिष्ठित कर सकते। जो त्याग नहीं कर सकता, वह वह ग्रहणके महत्वको भी जाननहीं सकता। त्यागसे ग्रहण शक्तिमान होता है। जो वृक्ष शिशिर ऋतु आनेपर अपने पत्तोंका मोह छोड़ देते हैं, वसन्त ऋतुका सौन्दर्य वे ही भोगते हैं। फिर किसी चीजके छिन जानेका अर्थ त्याग नहीं है। त्याग वास्तवमें जीवनकी अेक आवश्यकता है।

राष्ट्रभाषाके ये तपस्वी जिन्होंने अपनी सारी अिच्छाअें विसर्जित करके प्रचारका कार्य अपनाया है, जो गृह, परिवार और बन्धु-बान्धवोंकी अेवं जीवनकी आवश्यकताओं और चिन्ताओंका परित्याग करके अिस कर्मक्षेत्रमें अग्रसर हुअे हैं, यह अुनके त्यागका ही फल है। यह अुनकी अभीप्सित संकल्प-वृत्तिका परिणाम है कि आज अेक राष्ट्रव्यापी संस्थाको फलाफूला देख रहे हैं, अिस देशकी परम्परामें यह नया प्रयोग नहीं है। यहांके जन-जीवनका सदासे यह लक्ष्य रहा है कि अुन्होंने कर्तव्य समझकर, अिच्छाओंपर विजय पानेकी चेष्टा की। जैसा कि मैंने अभी कहा कि मस्तिष्ककी खुराक, विचार हैं। विचार ही व्यक्ति और समाजका निर्माण करते हैं। अुस दशामें विचारका अपना महत्व है। देश अेवं राष्ट्रको ठीक दिशा दिखानेके लिअे, सदा हमारे देशमें विचारकोंकी परम्परा रही है।

आज जब कि स्वतन्त्रताके पश्चात् देशका चतुर्मुखी नव-निर्माण हो रहा है, हमें अैसे त्याग-वृत्तिसे प्रेरित सेवाभावी, सब प्रकारके लोगोंकी आवश्यकताअें हैं, जिनमें जो शक्ति हो, क्षमता हो, सामर्थ्य हो, अुसके द्वारा देशकी गरीबीको दूर करें। यहां गरीबीका अर्थ मैं केवल धन ही नहीं ले रहा हूं, गरीबी दरिद्रताका मतलब अभाव है। ज्ञानका अभाव, मानसिक विकासका अभाव, अुन्नतिके साधनोंका अभाव, शक्ति सामर्थ्यका अभाव। हमें अिस देशको सर्वांग शक्ति-सम्पन्न बनानेके लिअे यहां सभी प्रकारके भौतिक अभावोंको दूर करनेकी चेष्टा करना है, वहां लोगोंका मानसिक विकास भी करना है। अुन्हें चरित्रवान् भी बनाना है, अुन्हें भविष्यके प्रति सजग और सक्षम बनाना है। अिस देशके पास ज्ञानकी अनन्त निधि है। संस्कृतिका सतत अविच्छिन्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवहमान स्रोत है। जिसकी परम्पराअें आज भी विच्छिन्न नहीं हुअी हैं। अुन्हें अपनानेकी और अुनकी और जिज्ञासासे देखनेकी आवश्यकता है। साथ ही अपनी शक्ति और क्षमताओंको युगानुकूल बनानेकी भी आवश्यकता है।

हमारी भाषाका प्रश्न भी अुनमेंसे अेक है। यह स्पष्ट है कि देशकी अेकता, अेक प्रकारके विचार-वाहनके लिअे भाषाका अपना महत्व है। सौभाग्यसे भाषाका प्रश्न हिन्दीको राष्ट्रभाषा मानकर प्रारम्भ किया गया है। किन्तु अिसका यह आशय कदापि नहीं है कि राष्ट्रभाषाके रूपमें हिन्दीको अुच्च स्थान दिलानेकी कोशिशोंमें हम अन्य भाषाओं अर्थात् अपनी प्रान्तीय भाषाके महत्वको स्वीकार नहीं करते। मेरा मत है कि हिन्दी यदि समर्थ और समृद्ध हो सकती है तो अिन प्रान्तीय भाषाओंके सहारे। जो वटका वृक्ष मैदानमें अपनी महान छायासे आगंतुकोंको सुखी बनाता है अुसको जड़ें न जाने कितनी दूरसे पानी खींचती हैं। भाषा जब विचारका वाहन है और अुसे देशके विचारोंका वाहन बनना है, तो निश्चय ही अुसे सब भाषाओंसे रस-ग्रहण करना होगा। अुसके बिना वह संपूर्ण देशकी आकृति व प्रकृतिको ग्रहण नहीं कर सकती। अभिव्यंजना भी भाषाकी परम शक्ति होती है। अुसकी विविध प्रकारमअी सरल अभिव्यक्ति साहित्य अेवं दर्शनकी क्षमताको प्रौढ़ बनाती है। वह प्रौढ़ता ही भाषाकी शक्ति है। हिन्दीकी अभिव्यक्तिके लिअे भी यह आवश्यक है, कि वह हिमालयसे लेकर कन्या-कुमारीतककी भौगोलिकतामें प्रतिष्ठित जन-जीवनके सौन्दर्यको पूर्ण अभिव्यक्ति दे सके। जहां हमें पंजाबके वायु-मण्डलमें गूंजते, वहांके निवासियोंके प्रौढ किसनअीके गीतोंमें अदैन्य प्रेमकी रसमअी स्वर-झंकृतिसे अुत्पन्न भाव-सौन्दर्यकी आवश्यकता है, वहां बंगालकी भावुकतासे भरी अन्तर्गंभीरा स्वर-शिजीनीकी व्यापक आत्माको भी हमें जानना-समझना है। अपने युगके अेकमात्र भविष्यद्रष्टा, मनीषी, कवि महामानव रवीन्द्रकी वाणी-माधुर्यको भी अिस भाषामें पिरोना है। दोपहरके समय चमकते सूर्यसे महाराष्ट्रकी प्रखर ज्योतिष्क ज्ञान-राशिसे भी हिन्दीको सुशोभित करना है। अिसी तरह तमिल, तेलुगु, मलयालम, कन्नड़, गुजराती आदि सम्पन्न भाषाओंकी साहित्य-सुगंधिसे भी अिसे प्रभावशाली बनाना है। अिन सभी भाषाओंकी अपनी परम्परा है, समृद्धि है, अुनका अपना अितिहास है। अिनमेंसे कोअी भी किसी अंशमें छोटी नहीं है। जैसे सभी प्रान्तके लोग अेक-समान अिस प्रजातन्त्रके अविभाज्य अंग हैं, सभी मिलकर भारत और भारतीयताको पूर्ण करते हैं—ठीक अिसी प्रकार अुन अुन प्रान्तोंकी भाषाअें भी प्रत्येक भारतीयके लिअे अपनी भाषाकी तरह आदरणीय हैं-जीवनदाअीनी हैं। यदि मेरी बातको धृष्टता न समझा जाय तो मैं कहना चाहूँगा कि यदि सब भाषाओंकी लिपि अेक ही (नागरी) हो जाय तो प्रत्येक प्रान्तीय भाषाको समझने सीखनेमें अधिक विलम्ब न लगेगा, और भाषाकी दृष्टिसे हम अेक दूसरे प्रान्तके अधिकतर निकट आ जाअेंगे। यह काम मुश्किल नहीं है, किन्तु मुश्किल है। किसी रूढ़िको तोड़ना जो मानव-जीवनकी सबसे बड़ी कमजोरी है। किन्तु मेरा विश्वास है, चाहे मैं यह परिवर्तन अपने जीवनमें न देख सकूँ पर भविष्यके अधिनक निकटवासी युवकोंको यह काम करना होगा। मैं मानता हूं कि भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे अुच्चारणकी असुविधाअें होंगी। किन्तु वे अक्षर अुस लिपिमें और भी बढ़ा दिअे जा सकते हैं। साहसकी जरूरत है। वह साहस हमें कब प्राप्त होगा कहा नहीं जा सकता।

फिर आन्तरप्रान्तीय भाषाओंके विचार-विनिमय आदान-प्रदान और अनुवादोंमें भी अुतनी कठिनाअी नहीं होगी। सारे देशमें अेक प्रकारका टाअिप होनेके कारण सरलता सुविधासे साहित्य अेक-दूसरेके निकट आसकेगा। हमें मानना चाहिअे कि भाषा विचारोंका साधन है, साध्य नहीं। साध्य है समन्वय दृष्टि, अेकात्मकता, अेकरूपता और भारतीयता। अुस दृष्टिसे यदि हम देखें तो यह बात कठिन नहीं है। पर जो हमें यदि हम देखें तो यह बात कठिन नहीं है। पर जो मैं कह रहा हूँ क्या वह सम्भव है जब कि हम अेक नगर या गांव या तहसीलके अेक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमें जानेके नामपर मर मिटनेके लिअे तैयार हो जाते हैं? जब कि शासनकी दृष्टिसे अुसमें कोअी विशेष अन्तर नहीं पड़ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमें यदि अिस देशमें अेक होकर रहना है तो यह राजनीतिक स्वार्थ-दृष्टि छोड़नी होगी। राजनीतिने जहां कुछ सुधार किअे हैं प्रजातन्त्र जैसे सिद्धान्त स्थापित किअे हैं वहां अुसने मनुष्यको मनुष्य-भक्षी भी बना दिया है। भाअी-भाअीको, पति-पत्नीको, पिता-पुत्रको, समाज-समाजको, अेक-दूसरेके प्रति अुसने अनुदार बना दिया है। लगता है, जैसे राजनीतिकी अुत्पत्ति शक्ति-सामर्थ्यकी होड़के लिअे ही हुअी है। यही अेक अैसा ज्ञान है जिसके सामने आचरण, धर्म, नीति-मर्यादा, व्यवहार-सभ्यता, साहित्यके विवेक अतलस्पर्शी होजाते हैं।

फिर भी अिस भयसे भीत नहीं हूँ। मैं मानता हूँ, यदि हम मानवकी प्रतिष्ठापर बल दें, अुसकी सेवामें अपनेको अर्पित कर दें तो अुसको वास्तविक मनुष्यता प्राप्त नहीं होगी। साहित्यका सम्बल, अुसका प्रभाव सर्वोपरि होता है। यदि साहित्यकार मानवात्माकी प्रतिष्ठाका लक्ष्य रखकर साहित्यका निर्माण करे तभी मानवजातिका कल्याण हो सकता है। मुझे लगता है जैसे आजके साहित्यकारके सामने राजनीतिकी ओरसे अेक चुनौती है। प्रश्न है, क्या वह अुसे स्वीकार करेगा? निश्चय है यदि राजनीतिका यह रूप जीवित रहता है और अुसकी आवाज साहित्यसे अूपर रहती है तो सम्पूर्ण मानवजातिका विनाश अेक दिन अवश्यंभावी है। आज आपके सामने सबसे बड़ी जटिल समस्या यह है कि आप राजनीतिको अपनाते हैं या मानवकी प्रतिष्ठा चाहते हैं। अुसका पूर्णांग विकास चाहते हैं। आपको चाहे मालूम हो या न हो, मुझे लगता है कि यदि हम समयसे पूर्व नहीं चेते तो धीरे धीरे घुमड़ते प्रलयके बादल अेकदम संसारका नाश करनेके लिअे आकर टूट पड़ेंगे। आवश्यकता अिस बातकी है कि हम समयको पहचानें और मानव मात्रके मनमें अिस विनाशकारी राजनीतिके प्रति घृणा अुत्पन्न कर दें। पर यह काम नारोंसे नहीं होगा। अिसके लिअे हृदय-परिवर्तनकी आवश्यकता है। मनुष्यमें विवेक अुत्पन्न करनेकी आवश्यकता है। वह काम साहित्यके द्वारा हो सकता है। नारोंकी अुत्पत्ति जोशसे होती है और जोश विवेकके साथ नहीं चलता। अिसी-लिअे मैं आजके साहित्यकारसे कहता हूँ कि आज साहित्यमें वादोंकी अितनी आवश्यकता नहीं है जितनी अुद्देश्यके प्रति अेक दृष्टि की। भाषामें, शैलीमें प्रयोग हम फिर भी कर सकते हैं। नअी अुपमाओं, नअी व्यंजनाओंकी खोज, छानबीन फिर भी होती रहेगी। किन्तु आज सबसे बड़ी आवश्यकता है शान्तिके साहित्यकी, युद्धके प्रति घृणाके साहित्य की। अुनके हृदयमें युद्धकी विभीषिका अुत्पन्न करनेवाले साहित्यकी, जिनके हाथमें अुद्धत युद्धके घोड़ोंकी नकेलें हैं जो गर्वमें अुनींदे मुस्कराकर प्रलयका ताण्डव देखना चाहते हैं। क्या संसारके कलाकार अिस मामलेमें अेक होकर मरणासन्न मानवको नहीं बचा सकते? यह अेक चुनौती है। चुनौती बाहरसे आती है और अुसे स्वीकार करनेवालेकी परख करती है। यह हमारी परखका समय है। साहित्य-कार क्या अिसे स्वीकार करेगा? राजनीतिकी विजय जनता अेवं साहित्यके दिवालिअेपनका चिन्ह है। साहित्य-ने जहां समयकी गतिको मोड़ा है, मानवका मार्ग-प्रदर्शन किया है वहां विनाशसे अुसकी रक्षा भी की है। वीर-साहित्यने जहां आदर्शकी स्थापनाके लिअे अपने स्वर अुंचे किअे हैं वहां पीड़ित, प्रताड़ित, दबेहुअे प्राणीकी रक्षा भी की है। आजका समय बिलकुल अनोखा है जिसकी हम कल्पना नहीं कर सकते, अुपमा नहीं दे सकते। अिस दृष्टिसे केवल भारतकी रक्षाका ही प्रश्न नहीं है। प्रश्न है मानवजातिकी रक्षाका जो प्रलयके हुंकारी दानवोंकी तेज डाढ़ोंमें किसी भी समय कुचली जानेको बलिके बकरेकी तरह तैयार बैठी है।

मुझे आजके प्रधान मन्त्री और अुस समयके नर-रत्न पण्डित जवाहरलालके वे वाक्य याद आ रहे हैं जो अुन्होंने १९२१ में, लाहौरकी कांग्रेसके अधिवेशनमें रावीके तटपर कहे थे। अुन्होंने उस समय कहा था—अगर हम दुनियाकी हालतपर ध्यान नहीं देते तो हमें संकटोंका सामना करना ही पड़ेगा। अुस समय चाहे वे संकट अुतने अुग्र न हों, भयंकर भी न हों, किन्तु आज वे संकट पीठके पीछे आकर घहरा रहे हैं। अिसलिअे मैं पण्डितजीके ही शब्दोंको दुहराकर कह रहा-हूँ कि भय और अविश्वाससे लड़नेके लिअे कोरी दलीलें निर्बल अस्त्र सिद्ध होती हैं। विश्वास और अुदारतासे ही अुन्हें पराजित किया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे शान्तिके प्रयत्नोंमें अुतनी अुदारता होनी ही चाहिअे कि हम हिंसक मनोवृत्ति बदलकर क्रूर हिंसकको सदय अहिंसक बना सकें। किसी भी वर्ग या ग्रूपमें शामिल होनेसे अपने पक्षके प्रति कट्टरता और दूसरे या विरोधीके प्रति अनुदारताके भाव जाग्रत होते हैं। नदीके दो किनारोंपर खड़े व्यक्ति कभी अेक दूसरेसे नहीं मिल सकते जबतक वे किनारे न छोड़ दें। आग्रहमें सत्यका अंश भलेही हो, किन्तु न मिलनेकी अनुदारता अुनमें होती है। और वे वादमें हितकी भावनासे स्थापित किअे जानेपर भी प्रायः अहित ही करते हैं।

आप लोग, जो राष्ट्रभाषा हिन्दीके स्नातक विद्यार्थी रह चुके हैं, आपने शब्दकी शक्तिको परखा होगा। मैं अेक मोटासा अुदाहरण देकर कहता हूँ कि क्या अेक गाली किसीको देनेपर वह अुसके अन्तसको नहीं खौला देती—बौखला नहीं देती। अिसी प्रकार क्रोधाविष्ट मनुष्यके सामने अुसकी प्रशंसाके वाक्य क्या अुसे शान्त नहीं कर देते? स्वर्गीय कवि पद्माकरका सर्दीपर लिखा गया कवित्त क्या ग्रीष्मके हृदयताप आतपमें अेक ठण्डी लहर नहीं पैदा करता? हम दूर क्यों जाअें, भवभूतिके अुत्तराम-चरितको पढ़कर—"अपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य-हृदयम्" की अुक्ति चरितार्थ नहीं होती? फिर क्या कारण है अगर हम हृदयसे शब्द-शक्तिका अभ्यास करके शान्तिका आवाहन करें तो संसारमें शान्ति स्थापित न कर सकें, और भूताविष्ट संसारको अकाल मृत्यु-जलदकी प्रलयंकर वर्षासे न बचा सकें।

हमारे यहां मुक्तिका अर्थ है आत्यन्तिक दुःखका विनाश, परमानन्दकी अुपलब्धि अर्थात् सायुज्य या सारूप्य अवस्थाकी प्राप्ति। किन्तु लौकिक अथवा व्यावहारिक रूपमें मुक्तिका अर्थ है दुःखका विनाश, अभावोंका निराकरण। संसारमें रहते हुअे कभी मानव-समाजकी यह अवस्था आ सकेगी यह कहना कठिन है। शायद अैसा समय कभी नहीं आवेगा जब मनुष्यके सम्पूर्ण अभावोंका निराकरण हो सके। क्योंकि जीवनका अर्थ निरन्तर आवश्यकताओंके साथ प्रवाहित होता रहना है। पर मनुष्यको वह समय अवश्य प्राप्त होगा जब अुसकी स्वतन्त्रताका पूर्ण विकास हो सके। अुसकी चेतना अपनी पूर्णताको पहुँच जाअे। साहित्यकार साहित्यके द्वारा मनुष्यके अुस विकासकी कल्पनामें रत है जिसमें मनुष्यके रामराज्यकी कल्पना भी वही है है जिसमें मनुष्यका जीवन निःस्वार्थ और अहिंसक होगा। वस्तुतः स्वार्थका कम होते जाना जीवनकी पूर्णताकी ओर अेक कदम है। स्वार्थवृत्ति मनुष्यने पशुसे ग्रहणकी है जो मनुष्यके विकासके साथ-साथ घटती जाती है। फिर मनुष्यके अतिरिक्त अिस चराचरमें और है ही क्या लगता है जैसे सारी सृष्टीका अुपभोग मनुष्य है। देवता भी मनुष्यके लिअे हैं। दानव भी अुसे तंग करनेके लिअे हैं। वही अेक-मात्र शक्ति है जिसे प्रकृतिने पूर्णता प्रदान करनेके लिअे बनाया है। 'नहि मनुष्याद्धि श्रेष्ठतरं किंचित्'—मनुष्यसे श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है।

शिक्षा मनुष्यकी पूर्णताकी अेक सीढ़ी है, अुसके विकासका अेक मार्ग; अिसीलिअे भाषा, विज्ञान, आदि जीवनके साधन हैं, साध्य नहीं। हमारे जीवनमें जो अुद्देश्य बनाते हैं वे अेक सीमातक ही हमें ले जाते हैं। अुसके बाद दूसरा अुद्देश्य प्रारम्भ होता है, अुसके बाद तीसरा, चौथा; यही क्रम है। जैसे डाक्टरका काम शरीरको स्वस्थ रखना है, स्वास्थ्यकी प्राप्तिके साथ ही डाक्टरका काम समाप्त हो जाता है। स्वस्थता प्राप्तिके बाद व्यक्ति-सुख, समाजका स्वास्थ्य ज्ञानके द्वारा समाजकी अुन्नति, देशकी अुन्नति, राष्ट्रकी अुन्नति और फिर मानव मात्रकी हितकामना, यही जीवनका क्रम है; जिसकी ओर मानव-समाज गतिमान होता रहता है। यह हमारा क्रम कब पूरा होगा यह नहीं कहा जा सकता। हमारे देशकी जनताको आज अद्वैतवादकी आवश्यकता है। मन, वाणी और कर्मसे हम देशके अद्वैतमें विश्वास करें। व्यक्ति-गत रूपसे अपनी सामर्थ्यके अनुकूल हम अुन्नति करें और विचार, वाणी; कर्ममें अेक रूप होकर रहें। गायें अलग-अलग होती हैं। अलग-अलग खाती पीती हैं किन्तु वे सब दूध देती हैं अेक ही प्रकारका। सबका दूध अेकसा श्वेत, जीवनदायक होता है। अिसी प्रकार हम अलग रहते हुअे अेकसा सोचें, अेक होकर काम करें। यही आजके युगकी सबसे बड़ी आवश्यकता है। युगकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवश्यकताको समझना, अुसके अनुसार आचरण करना मनुष्यकी समझदारीकी सबसे बड़ी पहचान है।

अन्तमें अेक बात कहना चाहूँगा कि हम छोटी छोटी मंजिलोंको पूरी करके ही बड़ी मंजिलतक पहुँच सकते हैं। तभी हम अपने महान् अुद्देश्यको प्राप्त कर सकते हैं। अिसके लिअे हमें अपनेको तैयार करना होगा। अिस समय देशकी अेकताको बनाअे रखना हमारा परम अुद्देश्य होना चाहिअे। अुसके मार्गमें यदि अपने स्वार्थोंकी बलि भी देनी पड़े तो पीछे नहीं हटना चाहिअे। नगर जलनेपर हम घरकी रक्षा नहीं कर सकते। अिसलिअे बड़े अुद्देश्यकी सिद्धिके लिअे हमें छोटे अुद्देश्योंकी बलि देना सीखना होगा। भगवान बुद्धने 'धम्मपद' में कहा है:

अुत्तिट्ठे नप्पमज्जेय धम्मं सुचरितं चरे।
धम्मचारी सुखं सेति आसिमलोके परहि च ॥

मनुष्यको चाहिअे वह कभी प्रमादी न बने, लापरवाह न बने। अच्छे सिद्धान्तोंका आदर करे। धर्मका आचरण करनेवाला अिस लोकमें और अुस लोकमें सुखी होता है। हमें अपनी सांस्कृतिक निधिका यह अमर वाक्य कभी नहीं भूलना चाहिअे—

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु माकश्चित् दुःखमाप्नवेत् ॥

बरसात

—शंकर शेष :

किरणोंके हलसे जोत रहा है सूरज
धरतीकी छाती
आनेवाला है भादों लेकर मेघोंकी
काली टोकरियोंमें जल-बीजोंकी थाती,
नअी कोपलोंकी मेंहदीसे डालीने
सूखी टहनीकी अुँगलियोंका किया सिंगार,
हरी दूबसे लदी खेतकी पार
प्राणोंपर छा जाता जैसे प्रथम मिलन का प्यार !
पारोंकी सीमाओंमें,
भर आया है बीते बीते जल
पिघले सोने-सा जल
पीले घूंघट-सा जल
नअी वधू-सी अुगती फसलें
झाँक रही हैं बौराअी-सी मचल-मचल !
यह रंभा-सी वायु
दुर्वोंके तालोंपर नर्तन करती
सुगन्धकी साँसें भरती
मृदु शीतल स्वच्छंद चरण धरती
फसलोंकी नस-नसमें
सिहरनके बीज बिछाती है
झन झन्न् झन्न्की पायल पहने आती है।
गाँवका पागल नाला
जमा रहा है धौस जवानीकी
ढहती कगारपर
हो रही निंदाअी खेतोंमें
गूंज रहा है ग्राम्य बहूकी
चूड़ीका श्रम-स्वर
धरतीपर केवल हरियालीका आसन है
क्षितिज छोर तक हरियालीका शासन है
लो मेघोंकी कान्हा दौड़ा आता है,
हरियालीकी साड़ी पहने धरतीको
थक रहा अनावृत करनेमें
किरणोंका दुश्शासन है।
अब खदेड़ते अन्धकारके दूत
चंदा तारोंकी सेना,
गरज गरजकर, घुमा-घुमाकर
बिजलीकी तलवार
काली भेड़ोंके जत्थेसे बादल
अुतर रहे
पहाड़की ढालोंके अुस पार !
अब रससे भींगे प्राणोंसे गीले दिन
अब बादरका काजर आंजे प्रात है
अब केवल श्रमका वसन्त है
फसलोंका रंग बिरंगा मेला लेकर
आअी यह बरसात है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सूचना–'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअे।)

सागर, लहरें और मनुष्य— अिधर हिन्दीमें "आंचलिक अुपन्यासों" का द्रुतगतिसे प्रणयन हो रहा है। गतवर्ष पूर्णिया (बिहार) के मेरीगंज-अंचलको चित्रित करनेवाले श्री फणीन्द्रनाथ 'रेणु' के अुपन्यासका प्रकाशन पर्याप्त ख्याति लाभ कर चुका है। अुसमें मेरीगंजके अंचलमें होनेवाली गत सात-आठ वर्षोंकी सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक घटनाओंका "आंखों-देखा हाल" भाषाकी स्थानीय छटाके साथ मुखरित हो अुठा है। अुसमें समाजका सम्पूर्ण जीवन लहरा रहा है। जहां तक Objective life (जीवनके बाह्यांग चित्रण) से सम्बन्ध है "रेणु" का यह अुपन्यास (मैला आंचल) बेजोड़ है।

अिस वर्ष हिन्दीके यशस्वी कवि और नाटककार पं. अुदयशंकर भट्ट भी अेक आंचलिक अुपन्यास-सागर लहरें और मनुष्य लेकर कथाके मनोरम क्षेत्रमें अवतीर्ण हुअे हैं। अिसके पूर्व अुनके दो अुपन्यास प्रकाशमें आ-चुके हैं। अिस अुपन्यासकी अधिकांश घटनाअें बम्बअीके पश्चिम तटपर बसे हुअे मछलीमारोंके गांव बरसोवाके अंचलमें घटी हैं, जिसकी गलियाँ दुर्गन्ध, पानी और कीचड़से नहा रही हैं। अिसमें मछुओंके समाजका बाह्य और आभ्यंतरिक जीवन अुच्छवसित हो रहा है। प्रकाशकीय वक्तव्यके अनुसार अिस अुपन्यासमें "लेखकने समुद्रको वाणी दी है, लहरोंसे बातें की हैं और दी हैं सदियोंसे सोअी मछलीमारोंकी आत्मा पहिचाननेकी आँखें।" अुपन्यासका कथानक अिस प्रकार है—

विठ्ठल सम्पन्न परिवारका व्यक्ति है जो अपनी पत्नी वंशीके अिंगितोंपर नाचता है। रत्ना अुसकी (अिन्टरतक) पढ़ी हुअी 'छोकरी' है जिसके मनको बम्बअीकी नअी सभ्यता खींचती है। यशवंत अुसका सखा है जिसके साथ वह समुद्रकी लहरोंपर खेलती रही है। अेक दिन बम्बअीका रहनेवाला मछुआ माणिक समुद्री तूफानसे बचकर गांवमें आ जाता है और अपने बम्बअी-जीवनके वैभवका बखान करता है। रत्नाके मनमें यशवंत और माणिकके बीच द्वन्द्व समुपस्थित होता है। यशवंतमें मांसल पौरुष है। माणिकमें शहराती नजाकत है। भोली रत्ना माणिकके शहराती जालमें फंस जाती है। बम्बअी जानेपर अुसे ज्ञात होता है कि माणिक न तो धनिक ही है और न अुसकी यौन-तृष्णाको तृप्त करनेमें सक्षम।

यथार्थवादी लेखकके ही शब्दोंमें "हर-रात रत्नाके सहवासमें अुसे अपनी कमजोरी मालूम होती है और जैसे अुसके शरीरकी सामर्थ्य-रति-अुत्तेजनामें अुसके सामने हीन है—सपनेमें बेचारी "अनजानेमें अपने स्तनको अपने हाथसे ही दबा" लेती है। अैसी स्थितिमें अुसका माणिकसे क्रोधित होना और दूर भाग जाना स्वाभाविक ही है। वह अपनी सखीके यहां चली जाती है। यहां अेक पारसी वकील धीरुवालाके चक्करमें आ जाती है पर वासनाका अेक ही प्याला पीकर वह चौक पड़ती है। अुसे ज्ञात हो जाता है कि धीरुवाला अुससे विवाह नहीं करना चाहता—अुसे केवल "रक्षिता"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के रूपमें ही स्वीकारना चाहता है। अुसे त्यागकर वह पुनः आश्रयकी खोजमें निकलती है और अेक डाक्टरके यहां 'नर्स' का कार्य करने लगती है। डाक्टर अुसकी निश्छल सेवापर मुग्ध हो जाता है, रत्नाके कारण अुसका दवाखाना चलने लगता है। अेक दिन रत्नाकी माँ अन्धी होकर अुसी दवाखानेमें आती है। ज्ञात होता है, रत्नाके वियोगके आघातसे ही अुसकी आंखें ज्योतिहीन होगअी हैं। जब मां-बेटी मिल जाती हैं तो रत्नाकी माकी ज्योति लौट आती है। रत्ना जो धीरुवालाके पापका 'भार' ढो रही थी, डाक्टरके द्वारा अपना ली जाती है और अिस प्रकार समाजमें पुनः प्रतिष्ठित हो जाती है।

रत्नाके चरित्र-चित्रणमें लेखकको सफलता मिली है। यशवन्त रत्नाको हृदयसे प्रेम करता है—अुसके हृदयपर विजय पानेके लिअे अनेक अुपाय करता है, कष्ट झेलता है पर जब वह अप्राप्य हो जाती है तब वह अुसके सुखमें अपने सुखको निहितकर अुसे अन्तमें 'बहिन' के रूपमें स्वीकार कर लेता है। यशवन्त अेक आदर्शपात्र है जिसके प्रति पाठककी सहानुभूति सजल हो अुठती है। रत्ना कअी मोड़ोंसे चलती है—गिरती और अुठती है पर अुसके पतनसे भी हम अुसकेप्रति अनुदार नहीं बनते, प्रत्युत अुसकी विवशतापर दुखी होते हैं क्योंकि अुसकी नैतिक फिसलन अुसकी परिस्थितिका परिणाम होती है। यह सच है कि "जो औरत अपनी मर्यादाओंसे अेकबार निकल जाती है अुसका अन्त नदीकी बाढ़की तरह होता है।" पर हम जानते हैं कि मछुओंकी सामाजिक मर्यादा आभिजात्य वर्गकी नैतिक मर्यादाओंके समान जटिल नहीं है। यथार्थवादी होते हुअे भी लेखकने "विवाहकी मर्यादा" का समर्थन किया है। रत्ना स्वच्छन्द होते हुअे भी धीरुवालासे विवाहका आग्रह करती है। डाक्टरका यद्यपि रत्नासे विवाह नहीं हुआ तोभी वह रत्नाकी सामाजिक मर्यादाके लिअे यह घोषित करता ही है कि अुसका अुससे विवाह हो चुका है। मछुओंमें यद्यपि नैतिकताका विशेष महत्व नहीं है फिर भी रत्नाकी माँ वंशी जागलाको अुपपतिके रूपमें रख-कर भी समाजसे अिस तथ्यको छिपानेका यत्न करती है। वंशी अपने 'पुरुषों' पर शासन करती है। जागला-को जब अुसका शासन असह्य हो जाता है तो वह भागकर दूसरी स्त्रीके साथ रहने लगता है। मछुअे समुद्रकी लहराती लहरोंमें किस प्रकार प्राणोंकी बाजी लगाकर जीवन-यापन करते हैं अिसका सजीव चित्रण अिस अुपन्यासमें किया गया है। मैला आंचल और अिस अुपन्यासका अन्त प्रायः समान परिस्थितियोंमें हुआ है। दोनोंमें डाक्टर अपनी पत्नीकी सामाजिक प्रतिष्ठाकी रक्षा करते हैं और अवैध संतानको अपना लेते है।

दो शब्द अुपन्यासकी भाषाके सम्बन्धमें। अुसने मछुओंकी भाषा विकृत बम्बअिया हिन्दी है। क्या बारसोवाकी स्थानीय भाषा यही है? वह तो मराठी भाषी क्षेत्र है। जब मछुअे मराठीतर भाषियोंसे मिलते हैं तब अुपन्यासमें व्यवहृत हिन्दीका प्रयोग करते होंगे। अैसी दशामें मछुओंसे मराठीतर भाषियोंसे बातें करते समय विकृत हिन्दीका प्रयोग यथार्थताका भान करा सकता था। यदि हम यह मान भी लें कि मछुओंकी परस्पर व्यवहारकी भाषा विकृत हिन्दी ही है तो सभी स्थलोंपर मछुओंसे यही विकृत रूप प्रयुक्त कराना था। अेक-दो स्थलोंपर लेखकको विस्मरण हो गया है। पृष्ठ ३६ पर मछुआ माणिक अपनी सामुद्रिक यात्राका वर्णन साहित्यिक हिन्दीमें करता है। यह पाठकको खटक अुठता है। अिसके विपरित "मैला आंचल"में यत्र-तत्र जिन विकृत शब्दोंका प्रयोग किया गया है वे आज भी बिहारके अंचल-विशेषमें ग्रामवासियोंद्वारा प्रयुक्त होते हैं। अिसीलिअे अुन प्रयोगोंमें कृत्रिमता नहीं झलकती। पाठक अपनेको बिहारी ग्राम-वातावरणके बीच पाकर हर्ष-मिश्रित कुतूहलसे भर जाता है। सागर, लहरें और मनुष्यमें धीरुवाला और अेक गुजराती पात्र जब विकृत हिन्दी बोलते हैं तब वे सचमुच गुजराती समाज द्वारा व्यवहृत बाजारू हिन्दीकी यथार्थ अनुकृति अुपस्थित करते हैं और हमारा मनोरंजन करते हैं।

क्षेत्रीय झलक दिखानेके लिअे पात्रोंसे विकृत भाषाके वाक्योंको आदिसे अंततक कहलानेकी आवश्यकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं। कतिपय विशेष शब्द-प्रयोग ही वातावरण और पात्र विशेषकी स्थितिको प्रकट करनेके लिअे पर्याप्त होते हैं। अिस अुपन्यासमें भी कुछ स्थल अतियथार्थ चित्रणसे रंजित हैं। यदि माणिकके रत्नाको पूर्णरूपसे शरीर-सुख प्रदान करनेमें अक्षम रहनेके दृश्योंका वर्णन न भी किया जाता तब भी अुपन्यासकी यथार्थ-वादितामें कोअी कमी न रह जाती। प्रथम पृष्ठमें चिन्तातुर मछुअेकी पत्नीका नींदमें भी कामातुर होना अटपटासा प्रतीत होता है। और अप्रकृत भी। अति-वास्तव वादके दृश्योंको छोड़कर कुछ दृश्य विशेषकर समुद्री-तूफानका वर्णन, बड़े सजीव हैं। कथावस्तुकी नवीनता और गठन तथा पात्रोंके चरित्रांकनकी दृष्टिसे अुपन्यास सफल है। लेखकके पिछले अुपन्यास "नअे-मोड़" की नाअिका शेफालीमें जहां संघर्षोंसे लोहा न ले सकनेके कारण पलायनकी प्रवृत्ति दिखलाअी गअी है। जिससे अुपन्यासमें कुछ छूटा-छूटा-सा प्रतीत होता है। वहां अिस अुपन्यासमें नाअिका रत्ना हर विषय परि-स्थितिसे झगड़ती है और अपना हम स्वयं खोजकर मंजिले मकसूदतक पहुँच जाती है और कथानकको पूर्णता प्रदान करती है। आशा है, भविष्यमें लेखककी अुपन्यास-कला अुत्तरोत्तर जीवनके मर्मका अुद्घाटनकर मानवात्मा-को अूर्ध्व गति प्रदान करनेमें सहायक होगी।

—श्री विनयमोहन शर्मा

अभियान—(कविता संग्रह) लेखक—श्री महेन्द्र भटनागर अेम. अे. अेल. टी., प्रकाशक—श्री श्यामस्वरूप जैन, ३१, गोलकुण्डा, अिन्दौर (म. भारत), पृष्ठसंख्या—८७; मूल्य १।।)

प्रस्तुत पुस्तकमें श्री भटनागरजीकी ३६ कविताअें हैं जिनमेंसे नौ कविताअें प्रेमचन्द, तुलसीदास तथा गान्धीजीपर लिखी गअी हैं। बाकीकी २७ कविताओंमें सामाजिक व्यवस्था, वर्ग विद्वेष, शोषण तथा पराधीनता सम्बन्धी विचार व्यक्त किअे गअे हैं। कविता संग्रहका नामकरण अभियान नामक अन्तिम कविताके शीर्षकपर ही आधारित है अैसा लगता है।

अन्तिम कविता अभियानको पढ़नेपर अैसा लगता है कि कविने वर्ग भेदके सारे बन्धनोंको मिटाने, प्राचीन व्यवस्थाको बदलने, शोषणकी चिताको आग लगाने और आजादी तथा समताके नव अितिहासको बनानेका अेक मात्र अुपाय सशस्त्र 'अभियान' माना है—जो पाठकके मनपर अपना अमिट प्रभाव नहीं डाल पाता। अिसमें कविपर वामपक्षी विचारधाराओंके प्रभावका भी असर परिलक्षित होता है, जिसे कविने अपने 'मेरी कविता' शीर्षक वक्तव्यके अन्तर्गत स्वीकार भी किया है। अतः यह कहनेमें कोअी आपत्ति नहीं है कि 'अजीब अजीब शक्लके झण्डोंकी फड़फड़ाहट' और 'दलोंके मोर्चो' और 'गोटोंकी अिश्तहारबाजी' की दौड़में कविने वामपक्षी विचारधाराके झण्डेकोफ ड़फड़ानेका प्रयत्न किया है। हमारी समझमें तो यदि कवि अिन सब गुटबाजियोंसे अूपर रहकर अपने कविको अुपस्थित प्रश्नोंके शाश्वत अुपायोंकी खोजमें लगाता तो अधिक प्रभाव डाल सकता था। अभियानकी कविताओंको पढ़ जानेपर अुनका पाठकके मनपर व्यापक प्रभाव नहीं पड़ता।

कविताओंके पढ़ जानेपर मनपर अेक प्रभाव यह अवश्य पड़ता है कि कविने अपनी भावनाओं अेवं आस्थाओं-के प्रति अिमानदारी बरती है और अुसमें ओज पैदा करनेका प्रयत्न किया है। 'खेतिहर' और 'खेतोंमें' अिन दो कविताओंका नाटकीय ढंग अच्छा बन पड़ा है।

समष्टि रूपमें अैसा लगता है कि मार्क्सवादी विचारधाराको भावोत्तेजक परिधान पहनानेकी धुनमें काव्यके स्वाभाविक गुण रागात्मकताका प्रभाव अत्यन्त क्षीण हो गया है जिससे संग्रहकी कविताओंको पढ़नेपर मनपर अुनका स्थाअी प्रभाव नहीं पड़ पाता जो काव्यका अत्यन्त आवश्यक गुण है।

अितना अवश्य है कि विषय और भावनाओंके संकुचित दायरेको त्यागकर यदि कवि विशाल भावनाओंको अपनाअे और काव्यके चिरंतन सत्यकी ओर अभियान करे तो अुसकी प्रतिभा अधिक अुपयोगी होगी अिसमें सन्देह नहीं।

—मदनमोहन शर्मा
अेम. अे. साहित्यरत्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आममहुआ--[लेखक—श्री केसरी, प्रकाशक—पुस्तक-भंडार पटना, पृष्ठ ६०, मूल्य २) । डिमाअी आकार ।]

यों तो बालोपयोगी साहित्यकी कमी वर्तमान हिन्दी-साहित्यकी अपनी कमी है । किन्तु यह पुस्तक सम्पन्नता अिस दिशामें किअे जानेवाले प्रयत्नोमें अेक अच्छा प्रयत्न कहा जा सकेगा । कविताओंमें बालोपयोगी भावनाओंके अतिरिक्त ग्राम्य-जीवनकी मनोहारिता भी सुन्दर और सरल स्वरूपमें अभिव्यंजित हो अुठी है ।

बालमनोविज्ञानके आलोकमें लिखी गअी कविताओंमें जहाँ सरलताका सौन्दर्य परिलक्षित हो अुठता है वहीं लेखककी अुपदेशात्मकता भी अुभर आती है । कदाचित् लेखकका हृदय अिस प्रवृत्तिका मोह संवरण करनेमें असमर्थ रहा है । ग्राम्य-निकुंजोंके सौन्दर्यांकनमें ग्रामीण शब्दोंका प्रयोग अुसके लालित्यकी पर्याप्त अभिवृद्धि करता है । कविताओंकी गतिमें शब्दोंकी मृदुताने भावोंके अंकनमें निःसन्देह कविके अंतस्को अुभार कर रख दिया है ।

कविताओंका यह सुन्दर संकलन निःसन्देह बालजीवनके लिअे अुपादेय है । प्रूफकी अशुद्धियोंका अभाव प्रकाशनके वैशिष्ट्यका परिचायक है । क्षीण किन्तु आकर्षक कलेवर पुस्तकके सौन्दर्यको बढ़ानेमें सहायक सिद्ध हुआ है । छपाअी सुन्दर और आकर्षक है । कविके प्रयास स्पृहणीय हैं ।

—विजयशंकर त्रिवेदी

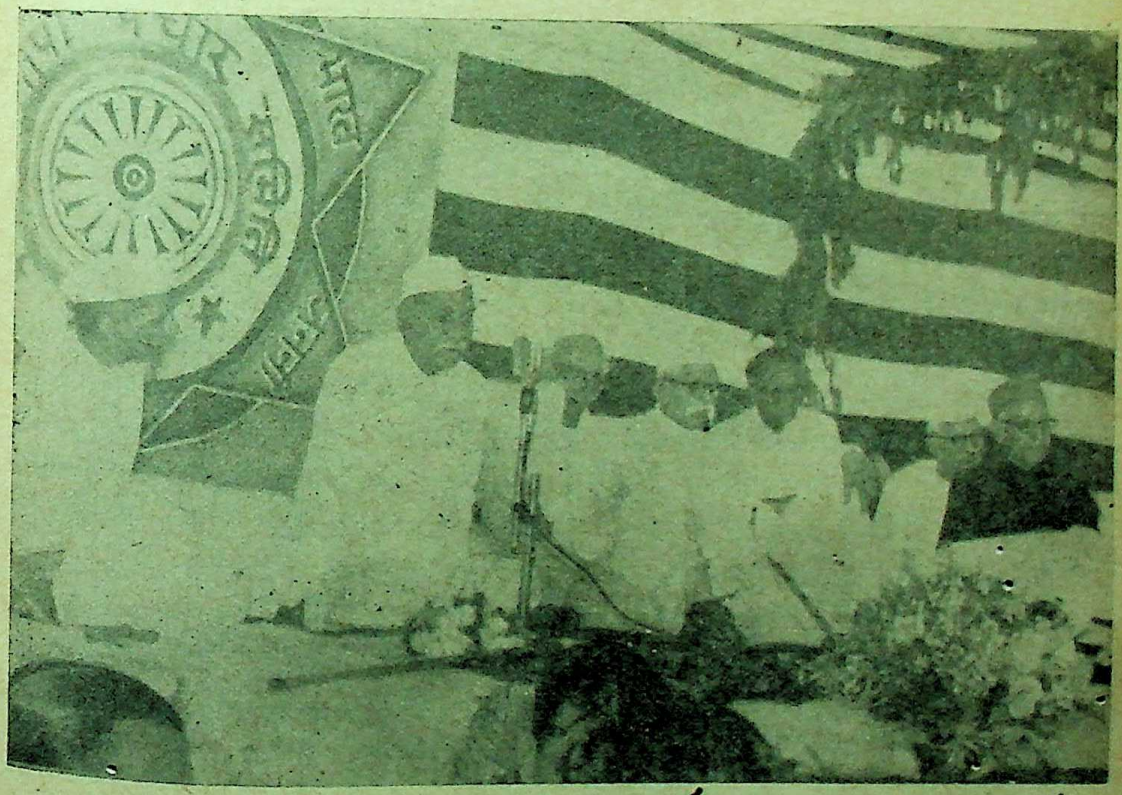

मध्यप्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, नागपुर कार्यालय-भवनका शिलान्यास भारतके राष्ट्रपति महामहिम डॉ० राजेन्द्रप्रसादजीके करकमलों द्वारा ता० १३-९-५६ को सम्पन्न हुआ । अिस अवसरपर राष्ट्रपतिजी भाषण देते हुअे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो अक्टूबरका पुण्य स्मरण:

हम लोग जो पिछले ३८ वर्षोंसे अिस महान् देशके विभिन्न प्रान्तीय अहिन्दी क्षेत्रोंमें हिन्दीके प्रसार कार्यमें जुटे हुअे हैं, प्रातः स्मरणीय पूज्य बापूके अतिनिकट सम्पर्कमें आते रहे। हम लोगोंपर अुनकी बड़ी ममता रही। वे आज हमारे बीचमें नहीं हैं। यह जरूरी नहीं कि हम बापूकी स्तुति करें, अुनका स्तोत्र-गान करें। किन्तु अेक बात है; अुनकी दी हुअी सीखों, शिक्षाओं या नसीहतोंको अिस अवसरपर अेक बार याद करें। अुनमेंसे बापूकी अेक नसीहत हममेंसे प्रत्येक व्यक्ति समझ ले कि बापूने जितने भी महान् कार्य भारतके नव-निर्माणके लिअे किअे हैं, अुन छोटे-बड़े सभी सेवा-कार्योंकी सफलताका रहस्य क्या है? अुस रहस्यको हमें हृदयंगम करना होगा। दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके मानवोचित अधिकारोंकी रक्षाके लिअे किअे गअे अहिंसात्मक सत्याग्रह-संग्रामसे लेकर, १९४७ के १५ अगस्तको प्राप्त भारतीय सम्पूर्ण स्वातन्त्र्य-समयतक और १९४८ की अुस ३० जनवरीकी आखिरी शामतक, जब प्रार्थनामें जाते हुअे बापूकी छातीमें जान ले-लेनेवाली गोलियां लगीं—जब अुनके मुखसे अेकबार 'हे राम!' निकला, मरणकी अुस बेलातक, हम अुनको अेकदम नम्रताकी मूर्ति, निरभिमान—निरहंकार पाते हैं। हम जो सार्वजनिक क्षेत्रोंमें हिन्दीका काम कर रहे हैं, बापूकी अुस दिव्य नम्रताकी मूर्तिपर हमारा ख्याल जाना चाहिअे और हम हिन्दीके सेवक नम्रताकी मूर्ति बनें। बापूको अपने नेतृत्वका लेशमात्र भी अभिमान न था। कभी अुनके कथन या कृतित्वमें अैसा नहीं आया कि वे भी अेक बड़े भारतभाग्य-विधाता हैं और करोड़ों जन और हरिजन अुनकी बात मानते हैं। बापूके विचारों और अुनकी काम करनेकी पद्धतिका अध्ययन करनेसे पता चलता है कि वे सबके साथ नम्रताका व्यवहार करते थे और सबसे नर्म वचन बोलते थे। वह नम्रता और नर्म भाषणका गुण हमने आचार्य विनोबा और सद्गत श्री मश्रुवालाजीमें ही पाया। आज नम्रताकी मूर्ति बापूकी याद हमें रह-रहकर आती है। आधुनिक जगत्के सामने जो अत्यन्त गम्भीर, जटिल और भीषण समस्याअें अुपस्थित हैं, मनुष्यका भविष्य आज अन्धकारमें डूबने जा रहा है, अुन्मत्त व्यक्ति घृणा-द्वेषके दल-दलमें आकण्ठ फँसते जा रहे हैं और मानवकी चेतनाको कलुषित राजनीतिकी विषैली काली नागिन डस रही है, अुद्जन बमसे भी ज्यादा विनाशक बम बनानेकी खोजमें जब मदान्ध मनुष्य लगा हुआ है, जब हमारे आदर्श और आचरण मनस्यन्यत्—वचस्यन्यत्के अनुसार बिलकुल विपरीत दिशामें जा रहे हैं, अैसे संहारकारी समयमें नम्रताकी अुस परम पावनमूर्ति बापूकी वाणीका हम आवाहन करें।

हम दूसरोंपर "ध्वंसात्मक" आक्रमण करनेका अहंकार परित्यागकर अुस दिव्य वाणीको फिरसे गुंजा दें जो मनुष्यताको मौतसे बचाअे, और भड़के हुअे, भटकते हुअे, टूटे दिलोंको जोड़नेवाली दिव्य अुस ममता-भरी वाणीका हम बहुजनहिताय, बहु-जनसुखाय और लोकानुकम्पाय प्रचार करें। अुस महा-मानवकी नम्रताका मर्म समझनेका यही अवसर है। बापू नम्रताकी मूर्ति तो थे ही, अुनकी प्रत्यक्षानुभूतिका सर्वशक्तिमान् अीश्वर भी, जिसे वे विशाल विभु और अखिल विश्वका सर्जनहार मानते थे, साक्षात् नम्रताकी ही मूर्ति था। अुन्होंने अपने अिष्ट आराध्य देवको 'नम्रताके देव, दीन-हीन भंगीकी कुटियाका निवासी' बतलाया है। बापूकी 'नम्रताके देव' की वह प्रार्थना अुनकी ८८ वीं जयन्तीके पुण्यस्मरणके समय हम अेक बार फिर दुहरावें:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे नम्रताके सम्राट! दीन-हीन भंगीकी कुटियाके निवासी, गंगा, यमुना और ब्रम्हपुत्राके शीतल जलोंसे सिंचित अिस सुन्दर देशमें, तुझे सब जगह खोजनेमें हमें मदद दे। हमें ग्रहणशीलता और खुला दिल दे; तेरी अपनी नम्रता दे; हिन्दुस्थानकी जनतासे अेक-रूप होनेकी शक्ति और अुत्कण्ठा दे।

हे भगवन्! तू तभी मददके लिअे आता है, जब कोअी शून्य बनकर तेरी शरण लेता है। हमें वरदान दे, कि सेवक और मित्रके नाते जिस जनताकी हम सेवा करना चाहते हैं, अुससे कभी अलग न पड़ जाअें। हमें त्याग, भक्ति और नम्रताकी मूर्ति बना, ताकि: अिस देशको हम ज्यादा समझें और ज्यादा चाहें।

अिस पुण्य स्मरणके समय बापूके प्रान्तीय भाषा व राष्ट्रभाषा हिन्दी और देवनागरी लिपि विषयक विचारोंको भी हम अपने ध्यानमें लावें। युगपुरुष, युगनिर्माता थे, गान्धीजी। अिस महान् देशकी भाषाओंके सम्बन्धमें भी अुन्होंने काफी ध्यान दिया, समय दिया और देश-वासियोंका ध्यान खींचा। बापूने देशी भाषाओंकी प्रगतिके लिअे अपना समय दिया। अुन्होंने हमें बताया कि भारतकी प्रत्येक प्रादेशिक भाषा जनताकी भाषा है और वह भाषा अपना भी विशेष महत्वका स्थान रखती है। वे जनताके हृदयकी बात जनताकी भाषामें ही सुनना ज्यादा पसन्द करते थे। गुजराती-काठियावाड़ी होकर भी हिन्दीको अुन्होंने अुसका अुचित स्थान दिलाया। सारे भारतके लिअे हिन्दीको ही अुन्होंने चुना और वर्षों पहले मद्रासकी हिन्दी प्रचार सभा और वर्धाकी राष्ट्रभाषा प्रचार समितिद्वारा यह काम शुरू करवाया जो आज भी अनवरत अुत्साहसे चल रहा है। हिन्दीको भारतीय जनताकी शक्ति बापूसे मिली। वे भलीभांति अिस बातको जानते थे कि अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी शासनने हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओंका गला घोंटनेमें तथा अुन्हें 'नेटिव'–'व्हर्नाक्युलर' बोलियां घोषित करनेमें, अुन भाषाओंको अुनके महत्वके पदसे गिरानेमें, और अुनको दबोचनेमें कोअी कसर नहीं अुठा रखी थी। भला हो अुस महात्माका, जिसने हिन्दी और प्रान्तीय भाषाओंको अुनका अुचित पद दिलवाया। आज हम अुनके अनुयाअी अुनके प्रतिकूल चल रहे हैं। आज बापू अंग्रेजी-माध्यमके प्रभावको विश्व-विद्यालयोंके लिअे अेक क्षणके लिअे भी बरदाश्त न करते। शिक्षाके क्षेत्रमें अुन्होंने विदेशी भाषाके माध्यमको घातक और सबसे बदतर बुराअी माना है। देवनागरी लिपिकी राष्ट्रीय अुपयोगिताके बापू बड़े कायल थे। वे नागरी लिपिकी वैज्ञानिकताको अच्छी तरह जानते थे और यह भी जानते थे कि हिन्दीमें और भारतकी विभिन्न प्रान्तीय भाषाओंमें–मराठी, बंगला, गुजराती, तेलगु, मलयालम आदि भाषाओंमें संस्कृत शब्दोंकी संख्या ज्यादा है, अुन सबके समानीकरणके लिअे देवनागरी लिपिका अुपयोग वे आवश्यक समझते थे। अुनका विश्वास था कि आगे चलकर देवनागरी लिपि ही अपनी वैज्ञानिकताके कारण और सरलताके कारण सबके लिअे अुपयुक्त होगी, और अन्तमें वही लिपि टिकेगी। हिन्दीको वे सर्वसुलभ और आसान बनानेके लिअे बारबार प्रेरणा देते थे। आजतक बापूकी कल्पनाकी वैसी सुन्दर सरल हिन्दीका नमूना कोअी अुनका अनुयाअी देशके सामने पेश नहीं कर सका। काश वैसी कोअी कोशिश करता!

मुन्शी प्रेमचन्दजीका स्मारक:

आज वे हमारे बीचमें होते तो पुरे ७६ बरसके, सर्व प्रिय और अेक सर्वश्रेष्ठ हिंदी-कहानीकार और अुपन्यास-लेखकके रूपमें हिन्दी-संसारमें विद्यमान होते। हिन्दीका यह दुर्भाग्य ही कहा जाअेगा कि अत्यल्प वयमें, ५५–५६ की अुम्र कोअी बड़ी नहीं होती, सन् १९३६ के अक्टूबरमें, ८ वीं तारीखको बनारसमें अेक लम्बी बीमारीके बाद प्रेमचन्दजीका देहन्त हो गया। अुनकी असामयिक आकस्मिक मृत्युसे हिन्दीको बहुत बुरा आघात लगा। प्रेमचन्दजी लेखनी लेकर जब हिन्दी-जगत्में अवतीर्ण हुअे तब वह जमाना आचार्य महावीर प्रसादजीके युगका मध्याह्नकाल था और महात्मा गान्धीका प्रभाव देशकी आत्माको राष्ट्रीय चेतना दे रहा था। गान्धी-युग आरम्भ हो गया था। प्रेमचन्दजी हिन्दीकी अेक नअी आदर्श शैली और नअी टैकनीक लेकर कहानी कलाके क्षेत्रमें आअे तो पराधीन भारतके लाखों नर नारियों और नौजवानोंके हृदयोंमें नअी आशा, आकांक्षा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मविश्वास और आत्मबलका संचार हुआ। हिन्दी भी राष्ट्रभाषाके रूपमें आसेतु हिमाचल लोकप्रिय अेवं गौरवान्वित हुअी। अपनी कृतियोंके कारण वे हिन्दी पाठकोंके लिअे–जन-जनके हृदयमें अजर-अमर होकर विराजमान हैं। प्रेमचन्दका जन्म सन् १८८० के जुलाअीमें ३१ वीं तिथिको हुआ था और देहावसान १९३६ में ८ वीं अक्टूबरको। अुनका सारा जीवन साहित्य साधनामें तप और त्यागका जीवन रहा। वे भारतकी स्वतन्त्रताके लिअे जिये और अुसकी स्वतन्त्रताका स्वप्न देखते देखते मरे। हिन्दीको अुन्होंने दारिद्र्यसे मुक्त किया, अुसे सम्पन्न और सशक्त बनाया, हालां कि आप खुद निर्धन, गरीब और रोगाक्रांत रहे। अुनके निधनके पश्चात् २० बरसतक हम हिन्दीवाले अपने महान् कलाकारकी अुपेक्षा करते रहे, आलसियोंकी लाचारीकी अंगड़ाअियां लेते रहे। १९५५ के २२ वें अप्रैलकी बात है, जब स्व. प्रेमचन्दजीके जन्मस्थान लमही ग्राममें, जो बनारससे ५–६ मीलके फासलेपर है, हमें स्मरण है, महताबरायजीके सभापतित्वमें अेक सभा हुअी थी। अुस छोटी-सी सभामें श्रीमती शिवरानी प्रेमचन्द, डॉ. महादेव साहा, बैजनाथ सिंह विनोद, जगत्नारायण, शंखधर और त्रिलोचनशास्त्री, अितनेही हिन्दी साहित्यिक जमा हुअे थे। यह प्रेमचन्दका पहला स्मारक था। अेकत्रित ये लोग स्मारककी साधन-सामग्रीको पूर्ण करनेवाली आर्थिक व्यवस्थासे बिलकुल कंगाल थे। हृदयमें ये आत्मविश्वास और आशा लेकर लमही ग्राममें प्रेमचन्दके अुस जीर्ण-शीर्ण घरमें समवेत हो गअे थे। अिनके पास कुछ न था, जो कुछ था वह प्रेमचन्दकी अेक खाट, अेक मेज, अेक-दो कुर्सी और प्रेमचन्दके कुछ कपड़े, लोटा, गिलास और दवात-कलम, अुनकी अेक-दो सीधी-साधी निराडम्बर, बेठाटबाटकी फोटो, बस यही चीजें अुन्होंने जुटा ली थीं। ये लोग अेक प्रेमचन्द-संग्रहालयकी कल्पना कर रहे थे, प्रेमचन्दकी पुस्तकों और व्यवहृत चीजोंकी प्रदर्शनी की। आखिर अिन सदाशय साहित्यिक आत्माओंकी पुकार बेकार नहीं हुअी। अब स्वतन्त्र भारतकी काशी नागरी प्रचारिणी सभा जागृत हुअी है। महामहिम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद भी अग्रसर हुअे हैं। नागरी प्रचारिणी सभाने प्रेमचन्दजीका अेक भव्य स्मारक बनानेका दृढ़ निश्चय कर लिया है। प्रेमचन्दजीके जन्मस्थान लमही ग्राममें ही यह स्मारक बनेगा। हमारी प्रार्थना है–अुन निर्माताओंसे कि अिस स्मारकमें प्रेमचन्दके जीवनका और अुनके कृतित्वका समग्र अमर दर्शन हो। प्रेमचन्द सारे भारतके थे, सारे भारतका सहयोग अिस स्मारक निर्माणमें मिलना चाहिअे। देर आयद दुरुस्त आयद!

—ह. श.

सेठ श्री गोविन्ददासजीकी षष्ठिपूर्ति :

सेठ श्री गोविन्ददासजीकी षष्ठिपूर्तिके अवसरपर हम अुन्हें हार्दिक बधाअी देते हैं। सेठजीकी साहित्यिक तथा राजकीय सेवाअें अगण्य और सराहनीय हैं। अेक करोड़पति कुटुम्बमें जन्म पानेपर भी अुन्होंने अपना सारा जीवन राष्ट्र-सेवामें अर्पित किया और साहित्यके सभी अंगोंकी सेवा करते हुअे १०० से भी अधिक नाटक लिखकर अुसके अुस अंगकी विशेष पुष्टि की है। अुनकी हिन्दीकी सेवा भी अनुपम है। गोरक्षाका काम भी वे बड़ी निष्ठासे कर रहे हैं। अुनकी सेवाओंके सम्बन्धमें अेक लेख अिसी अंकमें प्रकाशित हो रहा है। सेठजीके सम्बन्धमें अधिक लिखना हम अुचित भी नहीं समझते क्योंकि सेठजी हमारे अपने हैं। वे सदासे राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके बहुत पुराने सहायक, समर्थक और अभिभावक रहे हैं। अिस वर्षका हमारा राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलन भी अुन्हींकी अध्यक्षता तथा नेतृत्वमें जयपुरमें हो रहा है। परमात्मासे हमारी हार्दिक प्रार्थना है कि सेठजी दीर्घायु हों और देशकी तथा हिन्दीकी सेवा अधिकसे अधिक कर सकें।

हम कहाँ जा रहे हैं?

शिक्षाके क्षेत्रमें मातृभाषा और अुसके बाद राष्ट्रभाषाको महत्व देनेकी बात हम मानते थे कि सर्वमान्य हो गअी है। अुपराष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन्की अध्यक्षतामें बने विश्वविद्यालय कमिशन (१९४७) तथा डॉ. मुदलियारकी अध्यक्षतामें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बने माध्यमिक शिक्षा कमिशनने मातृभाषा-- प्रादेशिक भाषा तथा हिन्दीको क्रमशः शिक्षाका माध्यम बनानेपर जोर दिया। कुछ राज्योंने माध्यमिक शालाओंमें शिक्षाका माध्यम अपनी प्रादेशिक भाषाको बनाकर अंग्रेजीका शिक्षण ८ वें दर्जेसे आरम्भ करनेकी व्यवस्था भी की। किसी-किसी विश्व-विद्यालयने भी अपनी प्रादेशिक भाषा या हिन्दीको शिक्षाका माध्यम स्वीकार कर लिया। अिस लिअे हम यह विश्वास करने लगे थे कि कुछ वर्षोंमें अंग्रेजीको शिक्षाके क्षेत्रमें जो अनुचित महत्व दिया जा रहा है वह कम हो जाअेगा और प्रादेशिक भाषाओंको तथा हिन्दीको अुनका अुचित महत्व प्राप्त होगा। परन्तु कुछ ही दिन हुअे-- तारीख २-३ अगस्तको दिल्लीमें शिक्षा-मन्त्रियोंके सम्मेलनमें माध्यमिक तथा अुच्च शिक्षामें अंग्रेजीकी शिक्षाको पहलेकी तरह पुनः प्रतिष्ठित करनेके लिअे कुछ निर्णय किअे गअे हैं। अुससे हमें बड़ी निराशा हुअी है। वे हमारे संविधानकी अभीप्साके सर्वथा विरुद्ध हैं, यही नहीं अुससे जिन विश्व-विद्यालयोंने हिन्दी अथवा अपनी प्रादेशिक भाषाओंमें अुच्च शिक्षा देना शुरू कर दिया है अुनकी कठिनाअियां बहुत बढ़ जाअेंगी और विद्यार्थियोंके प्रति भी बहुत बड़ा अन्याय होगा। यह और भी अधिक दुख और क्षोभका कारण है कि अभी-अभी नअी दिल्लीमें शिक्षा-मन्त्रियोंके सम्मेलनमें जो निर्णय हुअे वे केन्द्रीय शिक्षा-मन्त्रीकी अध्यक्षतामें और भारतके प्रधान-मन्त्री श्री नेहरूके भाषणमें अंग्रेजीकी शिक्षापर जोर देनेपर हुअे। परन्तु राज्य सरकारोंसे हम आशा रखते हैं कि वे अिन निर्णयोंको मान्य नहीं करेंगी और संविधानके अनुसार हिन्दीको अुसकी अवधिके भीतर ही केन्द्रीय सरकारके तथा अन्तर-प्रान्तीय व्यवहारके कार्योंमें प्रतिष्ठित करनेके लिअे अधिक तीव्रतापूर्वक काम करेंगी।

केन्द्रीय तथा राज्योंके शिक्षा-मन्त्रियोंका रुख देखते हुअे संविधानकी हिन्दी-सम्बन्धी धाराओंको ठीक तरहसे कार्यान्वित करानेका बहुत बड़ा भार जनता-पर आ पड़ा है। हम सब मिलकर यह सोचें कि हिन्दीके सम्बन्धमें अबतक हमने क्या और कितना काम किया और भविष्यमें हमें क्या करना चाहिअे। आगामी आठ वर्षोंमें ही हिन्दीको अुसके अपने स्थानपर हम प्रतिष्ठित करना चाहते हैं। यह हमारा सबका कर्तव्य-धर्म है। कुछ हजार अिंजिनियर या दूसरे शास्त्र या तन्त्रके निष्णातों-की हमें आवश्यकता है अिसलिअे करोड़ों बालकोंपर अंग्रेजीका बोझ लादना बहुत बड़ी राष्ट्रीय आपत्ति होगी। हम अंग्रेजीकी शिक्षाका विरोध नहीं करते। माध्यमिक तथा अुच्च शिक्षामें मातृभाषा तथा राष्ट्रभाषाकी शिक्षा-के बाद अंग्रेजीकी शिक्षा प्राप्त करनेका अवसर विद्या-र्थियोंको दिया जाअे तो अुसमें किसीको आपत्ति नहीं। पर यदि माध्यमिक शिक्षाके आरम्भ होनेके पूर्व ही बालकोंको अंग्रेजी सिखानेकी बातपर जोर दिया जाने लगे तो यह राष्ट्रीय दृष्टिसे हमारे लिअे बहुत ही हानिकर होगी। अंग्रेजीको विश्वविद्यालयोंका माध्यम बनाअे रखनेकी भी जो बात कही गअी है वह भी हमारी अस्वस्थ मनोदशाकी सूचक है। श्री नेहरुजीने शिक्षा-मन्त्रियोंके सम्मेलनमें दिअे गअे अपने भाषणके बारेमें स्पष्टता की है कि वे अंग्रेजीको माध्यम बनाना नहीं चाहते। हम अुन्हें अिसके लिअे धन्यवाद देते हैं। परन्तु केन्द्रीय शिक्षा-मन्त्रालय तथा विभिन्न राज्योंके शिक्षा-मन्त्रा-लयोंका अब रुख क्या रहेगा अिसका अनुमान लगाना कठिन है। यह माना कि शिक्षा-मन्त्रियोंके सम्मेलनके निर्णयोंको मान्य रखना या न रखना अिन राज्य-सरकारोंके अधिकारकी बात है। परन्तु जब राज्योंके शिक्षा-मन्त्रियोंने अमुक निर्णय लिये हैं जो राष्ट्र तथा राष्ट्रके बालकोंके लिअे हानिकारक हैं तो यह चिन्ताका विषय हो ही जाता है। हम आशा करते हैं कि सब राज्योंके शिक्षा-मन्त्रीगण अपनी भूलको समझेंगे और शिक्षाके क्षेत्रमें भारतकी राष्ट्रीय भाषाओंको ही महत्व देंगे। अंग्रेजीका मोह हमें जितना भी हो सके शीघ्र छोड़ना होगा। हाँ, शास्त्रीय विषयोंकी शिक्षाके लिअे आवश्यक पुस्तक तैयार करानेका प्रयत्न करना हमारा सबका धर्म है। केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारें यदि चाहें और अिसके लिअे धन तथा यत्न दोनोंकी व्यवस्था करें तो यह कार्य शीघ्र हो सकेगा। और फिर शास्त्रीय विषयोंके निष्णातोंकी हमारे लिअे कभी कमी न होगी।

—मो० म०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीका स्वतंत्र मासिक--

"नया समाज"

पढ़िअे

देश-विदेशकी राजनीति, सांस्कृतिक अेवं कला-प्रवृत्तियोंकी चर्चा, साहित्य, समाज और पाठकोंके मतोंका विहंगावलोकन तथा सम-सामयिक गतिविधिपर विचार आदि अिसके प्रमुख अंग हैं।

वार्षिक ८) ★ अेक प्रति ।।।)

'नया समाज' कार्यालय,

अिण्डिया अेक्सचेंज (३ तल्ला)

कलकत्ता।

हिन्दीका प्रसिद्ध साहित्यिक सचित्र मासिक-पत्र

—: अजन्ता :—

संपादक--

वंशीधर विद्यालंकार

संचालक

हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद, दक्षिण।

अुच्चकोटिकी कविताअें, कहानियाँ, निबंध, अेकांकी, समीक्षा आदि।

* अेक प्रति १ रुपया वार्षिक ९ रुपया *

पता--हिन्दी प्रचार सभा,

हैदराबाद, दक्षिण

:: युगचेतना ::

साहित्य, संस्कृति और कलाकी

प्रतिनिधि मासिक पत्रिका

-: सम्पादन समिति :-

डा. देवराज, कुंवरनारायण, कृष्णनारायण

कक्कड़, प्रतापनारायण टंडन,

डा. प्रेमशंकर

वार्षिक ८), अर्धवार्षिक ४),

१ प्रति १२ आना

पता :--

"युगचेतना" कार्यालय,

स्पीड बिल्डिंग, ला प्लास, लखनअू नि

मासिक पत्रिका

:: नया पथ ::

२२, कैसर बाग ● वार्षिक ६)

लखनअू अेक प्रति ।।)

स्तम्भ--

चक्कर क्लब ● साहित्य-समीक्षा

संस्कृति-प्रवाह ● हमारे सहयोगी

लेख ● कहानियाँ ● कविताअें

--: सम्पादक :--

यशपाल ★ शिव वर्मा

राजीव सक्सेना

'नाटक अंक' की प्रति सुरक्षित कराअें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीका बिलकुल नया अुपन्यास

'सागर लहरें और मनुष्य'

हजारों हिन्दी प्रेमी जिसे पढ़नेको अुत्सुक हो रहे हैं।

[लेखक--अुदयशंकर भट्ट, प्रकाशक--राजकमल प्रकाशन, दिल्ली। मूल्य रु. ४-८-० । बढ़िया गेटप]

अिस अुपन्यासकी अेक प्रति खरीदकर जरूर पढ़िअे। अपने यहाँके सभी सार्वजनिक पुस्तकालयोंमें अिसे पढ़नेके लिअे रखवाअिये, जिससे हिन्दी-प्रेमी अिस क्रान्तिकारी नअे अुपन्यासको पढ़ें।

कुछ हिन्दीके प्रसिद्ध साहित्य-मनीषी कलाकर अिस नवीनतम अुपन्यास-पर क्या सम्मति देते हैं, पढ़िअे :

श्री सुमित्रानन्दन पन्त :--'सागर लहरें और मनुष्य' को मैं अेक ही साँसमें पढ़ गया। बहुत ही रोचक कथानक है। अिसे मैं हिन्दीका प्रथम सफल आँचलिक अुपन्यास कहूँगा।" **श्री यशपाल** :--"सागर लहरें और मनुष्य मुझे बहुत पसन्द आया।" **श्री शिवदानसिंह चौहान** :--"सागर लहरें और मनुष्य पढ़कर आश्चर्य-चकित रह गया हूँ।" **प्रोफेसर विनयमोहन शर्मा** अिसे अेक सुन्दर आँचलिक अुपन्यास बतलाते हैं। **डा. देवराज अुपाध्याय, गंगाप्रसादजी पांडेय, कृष्णचन्द्र शर्मा 'भिक्खु'** आदि सभी सुलेखक मुक्तकण्ठ होकर अिसे हिन्दी जगत्का अेक श्रेष्ठतम अुपन्यास बता रहे हैं।

मिलनेका पता :—

राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय साहित्यकी प्रतिनिधि-पत्रिका

राष्ट्रभारतीके प्रेमी पाठकोंसे निवेदन

अिस अक्टूबरका यह सुन्दर अंक आपके हाथमें है।

जो सज्जन ग्राहक हैं और 'राष्ट्रभारती' को नियमित पढ़ते हैं अुनसे हमारा यह निवेदन है :--

गत जनवरी-१९५६ से राष्ट्रभारतीने छठे वर्षमें प्रवेश किया है। भारतके और देश-विदेशके भारतीय साहित्यके प्रेमी विद्वान् साहित्यकारोंने मुक्त-कंठसे 'राष्ट्रभारती' की प्रशंसा की और अुसमें लिखना शुरू किया।

'राष्ट्रभारती' को अबतक जो कुछ सफलता और लोकप्रियता मिली है, यह अुसके प्रेमी रसिक पाठकों और कृपालु लेखकोंके स्नेह तथा सहयोग-दानका फल है। यदि आप चाहते हैं कि 'राष्ट्रभारती' राष्ट्रकी, राष्ट्रभाषाकी और विविध समृद्ध समग्र भारतीय साहित्यकी स्वावलम्बी होकर, अच्छी तरह सेवा करती रहे तो आप सबका हार्दिक सक्रिय सहयोग तुरन्त अुसे मिलना चाहिअे और वह अितना ही कि--

आप तो अिसके स्थाअी ग्राहक, पाठक, बने ही रहें, साथ ही आप अपने अिष्ट-मित्रों, परिचितोंमेंसे भी कम-से-कम दो नअे ग्राहक राष्ट्र-भारतीके लिअे अवश्य बना दें और मनीआर्डरसे ही प्रतिग्राहक ६) रु. चन्दा भिजवा दें।

'राष्ट्रभारती' को हिन्दी अेवं प्रादेशिक भाषाओंकी सेवाके लिअे शीघ्र ही पूर्ण स्वावलम्बी बनाना है। आअिअे, आप हमारा हाथ बँटावें।

<u>रियायत</u> :-- समितिके प्रमाणित प्रचारकों, शिक्षकों, कोविद, रा. भा. रत्न, विशारद और साहित्य-रत्नके विद्यार्थियों, केन्द्र-व्यवस्थापकों तथा सभी सार्वजनिक पुस्तकालयों, वाचनालयोंके लिअे और स्कूल-कालेजोंके लिअे केवल ५) वार्षिक चन्दा रखा गया है। अतः वे ५) रु. मात्र म० आ० से भेजें।

'राष्ट्रभारती' के प्रत्येक अंकका सामग्री-स्तर अूँचे धरातलका और पठन-मनन-चिन्तन योग्य रहता है। बाहरी तड़क-भड़कसे दूर, सादगी अुसकी विशेषता है।

पता:--व्यवस्थापक,
'राष्ट्रभारती', हिन्दीनगर, वर्धा

मुद्रक तथा प्रकाशक:--मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस--राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[बिहार, मध्यप्रदेश, भोपाल, सौराष्ट्र आदि राज्योंके शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत पत्रिका]

* अिस अंकमें कहाँ क्या पढ़ेंगे *

	लेखक	पृ. सं.
१. लेख :		
१. हमारे प्रियदर्शी प्रधानमंत्री पंडितजी	श्री 'परदेशी'	६९६
२. साहित्यकार नेहरू	श्री कृष्णशंकर व्यास, बी. अे.	६९९
३. रवीन्द्रनाथके कुछ नारी-पात्र (बंगला)	श्रीमती माया गुप्त	७०३
४. साहित्य और संस्कृतिके तीन महान् तीर्थ	श्री लक्ष्मीशंकर व्यास, अेम. अे. (ऑनर्स)	७०६
५. साहित्य-सृजनमें अनुभूतिका स्थान	श्री केदारनाथ मिश्र 'प्रभात', अेम. अे.	७१०
६. ब्रिटेनका स्वप्नदर्शी कवि : वाल्टर दिला मेयर	श्री ओम्प्रकाश आर्य, लन्दन	७१८
७. 'बोली' : अेक पंजाबी लोक-गीत	श्री घनश्याम सेठी	७२९
८. ल्येव निकोलाय तालस्ताय–२	श्री वी. राजेन्द्र ऋषि, अेम. अे.	७३२
९. मैं कौन हूँ (अँग्रेजी)	वाल्ट व्हिट मैन अनु०—श्री परदेशी	७४०
२. कविता :		
१. गीत !	श्रद्धेय माखनलाल चतुर्वेदी	६९५
२. समयका बान्ध	डॉ. कन्हैयालाल सहल, अेम. अे.	७२६
३. गीत !	प्रो. 'नीरज', अेम अे.	७२७
४. प्रेमचन्दके पिताकी चिता और प्रेमचन्द	श्री परमेश्वर द्विरेफ	७३७
३. कहानी :		
१. नअी गृहस्थी (मराठी)	डॉ. अ. वा. वर्टी अनु.–श्री रा. र. सर्वटे	७१३
२. चामर-ग्राहिणी (तेलुगु)	श्री विश्वनाथ सत्यनारायण, अेम. अे. अनु०—श्री बालशौरी रेड्डी	७२१
४. साहित्यालोचन	सर्वश्री मदनमोहन शर्मा, अेम. अे., सा. र. देवव्रत अधिकारी परमेश्वर द्विरेफ	७४१
५. सम्पादकीय		७४३

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

रियायत— समितिके सभी प्रमाणित प्रचारकों, केन्द्र-व्यवस्थापकों और स्कूल-कालेजों तथा सार्वजनिक पुस्तकालय-वाचनालयोंको अेक वर्षतक केवल ५) रु. वार्षिक चन्देमें मिलेगी।

पता—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[समग्र भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

वर्ष ६] नवम्बर-१९५६ [अंक ११

गीत

—श्री माखनलाल चतुर्वेदी

समर्पणके मृणालकी डोर,
बन्धे रहने दो दोनों छोर !

तालपर अुतर रहे जलजात
गगनसे अुतर रहा है प्रात
बिखरता कंचन बनकर ज्वार
सिमटता नहीं, सिमटते गात

प्राण व्याकुल छूनेको छोर
समर्पणके मृणालकी डोर।

कुटीके छिद्रोंसे छनकर
चांदनी अुतर रही बनकर
प्रार्थनाकी कड़ियों-सा धीर
अुतरता मलयज मन्द समीर !

अुतरती बरसातें, रस धार
अुतरता विधिका मधु व्यापार
अुतरती साँझ, अुतरता भोर ॥

समर्पणके मृणालकी डोर ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे प्रियदर्शी प्रधानमंत्री पंडितजी

—श्री 'परदेशी'

(जिनकी ६८ वीं सालगिरह १४ नवम्बरको आशा और विश्वासका प्रकाश फैलाती है)

आज व्लादिवोस्तकसे वाल्डिविया तक और अुत्तरी ध्रुवके नोवाया जेमल्यासे दूर दक्षिणमें न्यूजीलैण्ड तक, प्रकाश और पवनके समान सर्वत्र अेक ही शब्दकी ध्वनि लहरा रही है—और वह शब्द है, 'पंडित नेहरू'। यद्यपि विज्ञान और विद्याके वैभवको प्राप्तकर, विश्वका सीमाकोष आकण्ठ भर गया है, और देशोंकी दूरियाँ और भेदकी दीवारें दूर हो चली हैं तथापि विश्व-अितिहासके समस्त ग्रन्थों और अुनमें वर्णित समस्त कालोंमें मनुष्यने अैसा जागृति, ज्योति और जीवनदायक शब्द कभी न सुना, जैसा कि यह 'नेहरू' शब्द! मनुष्यने जीवनकी सर्वक्षेत्रीय, सार्वकालिक अुन्नति और अभिवृद्धिके निमित्त जितने भी शब्द पाअे, अुनमें यह शब्द है जो सर्वोपरि बन गया। हाँ, 'अीश्वर' शब्दके परम कल्याणकारी पावन नामके पश्चात्, परम-शान्तिदाअी शब्द 'नेहरू' ही आया। 'अीश्वर' पारलौकिक सुख और सम्पदाका प्रतीक बना तो 'नेहरू' अिस लोकमें मानवमात्रकी मुक्ति और शान्तिका साकार स्वप्न बन गया। आँधी, तूफान और भूकम्पोंसे त्रस्त, महामारियों और महायुद्धोंसे ग्रस्त विश्वके मानवके सामने 'नेहरू' शब्द ही शान्तिकी शीतल शरण बनकर प्रकट हुआ। सृष्टिके आरम्भसे आजतक राजपुरुषों, राजपण्डितों, राजश्रेष्ठियों और राजपुत्रों-द्वारा अभिशासित, अभिशोषित और अभिशापित मनुष्यने मात्र युद्ध, हिंसा, अशान्ति, मृत्यु और अुत्पीड़नको ही जाना। ज्यों-ज्यों मनुष्यने प्रगति की, विज्ञानके चरण बढ़े, समयकी सीमाअें पराजित हुअीं—त्यों-त्यों, अुसका भय भी फैलता गया, पहले मृत्यु केवल अेक ही बार आती थी, और अुसका माध्यम था, जरावस्था, रोग, आत्मघात अथवा अकस्मात्। किन्तु, (मनुष्यकी अपनी ही कयामत कहें) अब तो वह दिनमें दस बार मरने लगा। जितना बहुमुखी अुसका ज्ञान और सम्पर्क बना अुतनीही सहज अुसकी मृत्यु अवस्थित हुअी। पहले वह मरना जानता था, जीना जानता था। अब जीवन-पोषणके प्रयत्नोंमें ही पागल बना भटक रहा है और प्रतिपल मृत्युके भयसे संत्रस्त रहता है। अुसीका विज्ञान और अुस विज्ञानके कल्पलता-फल अुसके लिअे दुर्घटना-जनित मृत्युओंके बीज बन गअे हैं। पहले, यदि युद्धमें मृत्यु सहज और सस्ती थी, तो अुससे भयभीत न होकर, वीरवर अुसे वरणका मुहूर्त मानते थे, किन्तु अब तो वह पद-पदपर मृत्युका मुँह देखकर पलायन करता है। और मृत्यु भी बड़ी कुटिल और चतुर है कि अपनेसे डरनेवालेका पीछा करती है और अुसे सर्वव्यापिनी दृष्टिगोचर होती है। अिस प्रकार आजका मानव मृत्यु-भयसे अशान्तिमें जी रहा है।

अैसे समय, अन्धकारके अन्तरालको चीरकर प्रकाशित होनेवाले सूर्यके समान नेहरूका अुदय हुआ। अुसने स्वदेशकी पराधीन प्रजाका समरस्थलमें नेतृत्व किया और मुक्तिके मंगल-घटका सुधापान कराया। विद्रोह और विप्लव अुसके भृकुटि संचालनके आश्रित बने। सिंहासनों और शासनोंने अुसकी गतिमें अपनी अवगति और दुर्गति देखी। अिस प्रकार विनाश और सृजनका वह विचित्र विधाता बना। आजतक, हम सुनते थे कि त्रिमूर्ति—ब्रह्मा, विष्णु, महेश सृष्टिका निर्माण, पालन और संहार करते हैं, परन्तु नाश और निर्माणका अद्भुत सामंजस्य हमने नेहरूमें पाया। ब्रह्मा और महेशके समन्वित स्वरूपकी झांकी हमने अुसमें देखी। अब तो, दुनिया जानती है कि वह विष्णुके सर्वपालक कर्तव्यका परिपालन कर रहा है।

विश्वका अितिहास अिस तथ्यकी साक्षी देता है कि, आजतक जितने-जितने, नेता, विजेता और प्रणेता हुअे अुनमेंसे अधिकांशने जीवनकी अेकांगी लीलाको अभिनय किया। वाशिंगटनने अमरीकाकी स्वतन्त्रता प्राप्त की, लेनिनने स्वदेशको जारके फन्देसे छुड़ाया, गान्धीने आजादीके अनुष्ठानकी रचना की, माओने अनुशासनका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अद्वितीय अुदाहरण प्रस्तुत किया और अिससे पूर्व, हमारे अवतारोंने भी अेक-अेक लीला दिखलाअी, वही लीला अुनके जीवनकी अुनके नाम, ग्राम और गोत्रकी परिचायिका बनी। किन्तु, नेहरूने भयभीत मानवताको युद्धसे अभयदान दिया, नवरचना और नवविधानका संदेश दिया और आजतक, धर्म अेवं आध्यात्मिक तपस्यासे ही जो वैयक्तिक शान्ति-सिद्धि मिलती थी, अुसे मानवमात्रके लिअे सुलभ कर दिया।

युद्धकी अैसी भीषणता अेवं शान्तिका अैसा संयोग-संसारके समक्ष कभी अुपस्थित न हुआ! कभी मानवताका अेक कदम जीवनके कगार और दूसरा मृत्युकी अतलान्त खाअीमें अिस प्रकार पड़ा न रहा!

पिछली अर्धशताब्दीमें नेहरू-परिवारने स्वराष्ट्र और स्वराज्यकी जो सेवाअें कीं वे सर्वविदित हैं और अिस प्रकार जन-मनमें घर कर गअी हैं कि अुनका अुल्लेख लेखको वृद्धि देगा। अतः विदेशी सीमाओंके आरपार पहुँचकर भारत और समस्त मनुष्य जातिके गौरवको अक्षत रखनेवाले नेहरूका ही अभिनन्दन अिसी १४ नवम्बरको आनेवाले अुनके जन्मदिनके अुपलक्षमें, हम यहाँ कर रहे हैं।

बीसवीं शताब्दीकी सबसे बड़ी घटना—अणुबमकी अुपलब्धि नहीं, विज्ञानकी विकासमान विजय नहीं, "शीतलच्छाय सांस्कृतिक सूर्य"—गान्धीके नेतृत्वमें भारतीय स्वतन्त्रता और अेशिया—अफ्रीकाका महा-जागरण है। सदियोंकी निद्राको त्यागकर, अिस भूभागने केवल अपनीही मुक्ति नहीं, वरन् धरतीके प्रत्येक प्राणीकी मुक्ति और मंगलका आयोजन किया। अेशिया और अफ्रीकाने अपने नवजागरणपर यह जो रचनात्मक चरण बढ़ाया, आखिर, अुसका स्वप्न किसने देखा? रामजन्मके पूर्व पूरी रामायणकी रचनाका स्वप्न देखनेवाले भगवान वाल्मीकिके समान नेहरूने अेशियाअी जागृति और शान्तिका स्वप्न देखा है।

कल तक दुनिया हमें 'कुली' कहती थी। विदेशी राजदरबारोंमें ही नहीं, सभा-समाजों और बाजारोंमें हमारा अपमान किया जाता था और हमें दुत्कारा जाता था। जहाँ-जहाँ सम्पदा और सत्ताको अपने लिअे सेवकोंकी, सस्ते आज्ञाकारी दासोंकी आवश्यकता पड़ी, संगीनके बल हमें, हमारे पूर्वजोंको भरती किया गया। अफ्रीकाके वनोंमें वे खेत जोतते हुअे धूपमें झुलस मरे और फ्रान्सके मैदानोंमें अुद्दण्ड जर्मनीके गोलोंका खाद्य बने। अुन्होंने अपने लहूसे विदेशी साम्राज्यवादी राष्ट्रों और महा राष्ट्रोंकी जनताका अभिषेक किया! अपमान, लांछना और तिरस्कारके अिस पतनशील और रुग्ण नारकीय जीवनसे हमें नेहरूने ही निकाला। अुसीने सबसे पहले भारतीय, चीनी, जापानी, बर्मी, स्यामी, लंकाअी या मिस्री कहे जानेवाले काले आदमीको 'अेशि-याअी' की सम्माननीय संज्ञा देकर अेकसाथ ही अुसे स्वतन्त्रता और संगठनके सोपानपर प्रतिष्ठित कर दिया। साम्राज्यवादियोंके नक्शों, मानचित्रों और दस्तावेजोंमें हमें भारत, चीन या जापानके टुकड़ोंमें जाना जाता था और प्रयत्न यह रहता था कि अिन टुकड़ोंके भी टुकड़े हों और प्रत्येक टुकड़ेके भी सौ-सौ टुकड़े हों। नैपोलियनने कहा—'चीन, अरे यह तो भीमकाय राक्षस है, जिस दिन जाग जाअेगा धरतीके ओर-छोर हिला देगा, अिसलिअे कुशल अिसीमें है कि यह अूंघता पड़ा रहे, बेड़ियोंमें जकड़ा रहे।' और नेपोलियनके बेटोंने हमसे अफीमकी खेती करवाअी और हमारे अपने ही भाअी चीनको वह अफीम पिलाया गया। लेकिन पहली बार नेहरूने कृष्ण-जातियोंके परित्राण, साम्राज्यवादियोंके विनाश और अेशियाअी जातिके अभ्युत्थानका महास्वप्न देखा। 'अेशिया—अेशियावासियोंके लिअे' का नारा अुसीने दिया। भारतीय स्वतन्त्रताके अनन्तर, केवल पाँच ही वर्षोंमें अुसने अेशियाअी देशोंको अेकता और स्नेहकी मालाके मोतियोंको जागृतिके सूत्रमें गूंथ लिया। यदि नेहरूका जन्म न हुआ होता, तो भारतीय स्वतन्त्रता तो आगे-पीछे आती ही, परन्तु विदेशोंमें भारत और भारतीय राष्ट्र और प्राणीको, जो महा-महत्व मिला, वह कदापि न मिलता और नेहरूके बजाय, कोअी दूसरा विदेश-मन्त्री होता तो, विदेशोंमें हमारी वही स्थिति होती, जो आज अन्तर्राष्ट्रीय-जगत्में पाकिस्तानकी है—अपमान अेवं अवज्ञापूर्ण!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेहरूने विश्वके समस्त देशोंकी समस्त जनताको 'अेक' माना। अुसने 'जनविराट्' की हमारी वैदिक कल्पनाको आकार दिया और व्यवहारमें अुसकी प्रतिष्ठा का प्रयत्न किया। देश-देशोंकी संस्कृति, लोकव्यवहार, भाषा, भेष और भावोन्मेषका अुसने अिस प्रकार सामंजस्य किया कि अेक परिवार और अेक विश्वका स्वप्न सुलभ प्रतीत होने लगा।

अितिहास, जीवनदर्शन, संस्कृति और मानव-भावना-के प्रति नेहरू अितना महत्वशील, भावुक और तन्मय रहा कि अुनसे अुसका तादात्म्य स्थापित हो गया। अिसी आधारपर वह षड्यन्त्रकारी साम्राज्यवादियोंकी चालोंको दिगम्बर बना सका। अुसने अुन्हींकी तर्क प्रणाली और रीति-नीतिमें अुत्तर दिया कि वे निरुत्तर हो गअे। अितिहास और अन्तर्राष्ट्रीय वातावरणका अैसा अेकाग्र अेवं समग्र अनुभव दूसरी किसी व्यक्तिमत्ताको नहीं था। यही कारण है कि जवाहरकी वाणीको विश्वका विश्वास और वैभव मिला। अिस विषयमें, यहाँ दो-अेक अुदाहरण देना अप्रासंगिक न होगा। गोवाके मामलेमें श्री नेहरूने कहा कि हम अपने देशकी भूमिपर विदेशी आधिपत्य कभी बर्दाश्त न करेंगे। गोवामें यदि विदेशी गुट्ट सामरिक अड्डे बनाता है या सैन्य-संधियोंमें अुसे फंसाता है, तो भारत अैसी कार्यवाहियोंको अपने विरुद्ध आक्रान्तात्मक समझेगा। अमरीकाके राष्ट्रपति मनरोने कहा था कि हम अपने देशकी तटस्थता सुरक्षित रखनेके लिअे यह आवश्यक समझते हैं कि संयुक्तराज्यकी भूमिपर विदेशी आधिपत्य न रहे और न विदेशी अड्डे ही रहें। यह तर्क नेहरूने भारतीय विदेशनीतिकी प्रामाणिकताके प्रमाणमें अमरीकी दोस्तोंके सामने रखा। अिसी प्रकार जब संयुक्त राष्ट्रसंघमें चीनको लेनेसे अमरीकाने अिन्कार किया और कहा कि चीनकी वर्तमान सरकार विद्रोही सरकार है और अिसने अपनी आजादी सशस्त्र-क्रान्तिके बल प्राप्त की है। अिसपर मानवीय मनोविज्ञान और अितिहासके प्रकाण्ड विद्वान् श्री नेहरूसे न रहा गया। अुन्होंने गर्जना की– अमरीकाकी मौजूदा सरकार अिस सचाअीपर नाराज है कि लाल चीनकी सरकारकी स्थापना चीनके लोगोंने क्रान्तिके बल की है। आजादी बिना संघर्षके कब मिली है? और जो अमरीकन सरकार चीनकी क्रान्तिका विरोध करती है, स्वयं अुसकी स्वतन्त्रता जार्जवाशिंगटन और अन्य देश-भक्तोंने तलवारके जोरपर प्राप्त की थी। क्या अमरीका अिसे भूल गया है?

यों, हम देखते हैं कि विगत पच्चीस वर्षोंसे नेहरू अन्तर्राष्ट्रीय भूमण्डलमें भारतको गौरवपूर्ण पद दिलानेके लिअे सतत प्रयत्नशील रहे हैं। अुन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमें देश-देशकी आजादीके जंगको अपनी लड़ाअी माना है और चाहे वे घरमें रहे हों, चाहे बन्दीघरमें, अुनके मन-प्राण सदैव अुस देश विशेषकी स्वातन्त्र्य-संघर्षनिरता जनताके साथ रहे हैं। स्पेनकी समाजवादी लड़ाअीमें वे स्वयंसेवकके रूपमें गअे और सम्मिलित हुअे। और बम्बअीमें कअी लोगोंने अुस दिन अुन्हें पहली बार सिसकते हुअे देखा है, जब योरपसे लौटते हुअे बम्बअीके बन्दरगाह-पर, जहाजसे अुतरते ही अुन्हें यह खबर दी गअी कि स्पेनमें जनरल फ्रेन्कोके फासिस्ट-दलोंकी जीत हुअी और समाज-वादी सेना हार गअी। अिस हारके पीछे स्पेनके कअी राष्ट्रीय अेवं अन्तर्राष्ट्रीय कारण रहे हैं। अिन घटनाओं-को युग बीत गअे, लेकिन आज भी पं. जीके मनमें स्पेनके समाजवादियोंका अखण्ड पौरुष अेवं अन्तर्राष्ट्रीय ब्रिगेड (जिसके वे सैनिक रहे हैं) का अनन्त संघर्ष साकार सुस्मृत है। हालहीमें श्री धूर्जटि प्रसाद मुकर्जीने पण्डित नेहरुसे हुअी अेक मुलाकातके सिलसिलेमें लिखा था कि पण्डितजीने श्री मुकर्जीको आधीरातके समय भी, स्पेनी क्रान्ति और समाजवादी संघर्ष-विषयक कविताअें स्वयं पढ़कर सुनाअीं। और अुन्होंने यह भी पूछा कि विश्वसाहित्यमें अैसा अमर-काव्य अन्यत्र भी प्रचुर-प्रमाण-में क्यों नहीं मिलता? और अिस प्रसंगपर हमें रूसके अेक महान् साहित्यकारके ये शब्द याद आते हैं– 'जवाहरलाल तो कवियोंका राजकुमार है, अिसीके लिअे, कवि बननेके निमित्त अुसका जन्म हुआ, किन्तु आश्चर्य है वह राज-पुरुष कैसे बन गया!' और हम अिस महाप्राण, महाकवि, महापुरुषके शुभजन्म-दिवसपर अधिक न कहकर अुर्दूके रस-सिद्ध शायरके साथ, आपके स्वरमें स्वर मिलाकर कहना चाहेंगे—

'तुम सलामत रहो, हजार बरस।
हर बरसके दिन हों पचास हजार।'

'शान्तिका पैगम्बर अमर रहे! महरबा रसूल-अल् सलाम!'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यकार नेहरू

—श्री कृष्ण शंकर व्यास

अेक बार श्री नेहरूने कहा था "किसीको यह याद दिलाना कि तुम अितने बरसके हो गअे हो, अुसकी भलाअी करना नहीं है। जिस आदमीका ख्याल ही न हो अुसे अुसकी अुम्र याद दिलाना अुसे बरसोंके बोझके नीचे दबानेके अतिरिक्त क्या है? मैं अपनी धुनमें जीता चला जा रहा हूँ, अुम्रका कभी ध्यान नहीं आता।"

स्पष्ट है कि जीवनके प्रति नेहरूजी कितने जागरूक हैं। पर वे अितने व्यस्त रहते हैं कि अुन्हें कभी अपनी जिन्दगीके लेखा-जोखाको रखना भारस्वरूप प्रतीत होता है। प्रायः वे कहा करते हैं—"न अध्ययनके लिअे मेरे पास अवकाश है और न चिन्तनके लिअे।" अिससे स्पष्ट है कि अुस महान राजनीतिज्ञको अध्ययन और लेखनसे भी बहुत अधिक प्रेम है। नेहरूजी आज विश्वके महान राजनीतिज्ञोंमें तो अग्रगण्य हैं ही; साथ ही साथ अेक साहित्य-महारथीके रूपमें भी वे श्रेष्ठ हैं। विश्वके महान्तम लेखकोंमें श्रेष्ठ अेवं भारतमें सम्यक् आदरणीय हैं। यदि हम नेहरूजीकी साहित्यिक प्रतिभासे पूर्णतया परिचित हो सकें तो अिस निष्कर्षपर पहुँचते देर न लगेगी कि विश्व शान्तिका यह अग्रदूत अेक महान् साहित्यकार भी है।

निम्न पंक्तियोंमें हम अुनकी साहित्यिक अभिरुचिका परिचय प्रस्तुत करनेका प्रयत्न करेंगे।

नेहरूजी कब लिखते हैं?

कअी बार लोगोंने पण्डितजीसे पूछा—"आखिर आप पढ़ते-लिखते कब हैं?" वस्तुतः यह प्रश्न बहुत ही स्वाभाविक है। नेहरूजी राजनीतिमें अितने व्यस्त रहते हैं कि अुन्हें लिखने-पढ़नेका अवकाश बहुत ही कम मिल पाता है। लेकिन नेहरूजीका कथन है कि वे रात्रिके समय लिखने-पढ़नेका अवकाश निकाल लेते हैं और अिस प्रकार वे कुछ समयके लिअे राजनीतिसे दूर चले जाते हैं।

अुनका कहना है कि आजसे कोअी दो-डेढ़ दर्जन साल पहले लिखनेका अधिकांश काम मैं रेलके सफरमें ही किया करता था। लेकिन अब मैंने सफरमें अधिक लिखनेकी आदत छोड़ दी है। शायद मेरा शरीर भी अुतना लचीला नहीं रहा है और सबसे बड़ी बदकिस्मती यह हुअी है कि अब तो रेलका सफर भी नसीब नहीं होता। मगर आज भी अपनी यात्राओंमें किताबोंसे भरकर संदूक मैं ले जाता हूँ। अुन्हें चाहे पढ़ूँ नहीं मगर अपने आसपास किताबोंके रहनेसे जो अनोखा सन्तोष मिला करता है अुसे मैं किस प्रकार छोड़ दूं।

अभिप्राय यह है कि नेहरूजी राजनीतिके साथ ही साथ साहित्यमें भी अभिरुचि रखते हैं। अुन्होंने कतिपय अैसी पुस्तकें लिखी हैं जो विश्वमें अुनकी साहित्यिक प्रतिभाकी स्वयं प्रतीक हैं।

नेहरूजीका गद्य-काव्य

नेहरूजीके साहित्य प्रेमकी मूल भावनामें अुनका प्रकृतिप्रेम है। अिस सम्बन्धमें मैंने अेक वायुयान चालकके संस्मरण कहीं पढ़े थे। लीजिअे आप भी सुनिअे—'अेकबार कैरोसे लंदनकी वायुयात्रामें प्रधान-मन्त्री पण्डित नेहरू वायुयानमें बैठे थे। जब जहाज हिमाच्छादित आबू पर्वतपरसे अुड़ा चला जा रहा था तब पण्डितजी नैसर्गिक सौन्दर्यके मनोहर दृश्योंको देखनेके लिअे वायुयान संचालकके स्थानपर आ गअे। ज्यों ही वायुयान चालक पण्डित नेहरूको स्थान देनेके लिअे खड़ा होने लगा वह अुनके कन्धेपर हाथ रखते हुअे बोले—"नवयुवक, यह स्थान तुम्हारा है और अुसपर बैठनेका तुम्हारा अधिकार है जो तुमसे कोअी नहीं छीन सकता। मेरी निगाहमें यह बैठक साहसकी भावनाकी प्रतीक है।

यह अुस तरुण भारतकी आत्मा है जो हमारे आस पास घिरे काले बादलोंसे अूंचा अुठनेका प्रयत्न कर रही है। अेक बार जब तुम अुन बादलोंसे अूंचे अुठ जाओगे तो तुम्हारे सम्मुख पूर्णतया नवीन रंगीला तथा प्रकाशमय क्षितिज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगा। अैसे सांहसिक स्थानोंपर बैठे हुअे भारतीय तरुणोंसे मैं अपेक्षा करता हूँ कि वे हमारे राष्ट्र-ध्वजको अधिक अूंचा लहराते हुअे, अुसको दूर-दूरके देशोंतक पहुंचाअेंगे।

याद रखो जब तुम मिलकर अेक ही जहाजी दलके रूपमें अेक ही अुद्देश्य और दृढ़ताके साथ काम करोगे तब आकाश ही तुम्हारी सीमा बनेगा।"

पंडितजीकी आत्मकथा

लिटन स्ट्रैचीने अेक बार कहा था कि "गिबनका ध्यान आते ही प्रसन्नता शब्द अेकदम मस्तिष्कमें कौंध जाता है।" अुसी प्रकार यह कहना कि नेहरूजीका ध्यान आते ही स्वतन्त्रता शब्द अपने व्यापक अर्थोंमें गूंज अुठता है तो अनुपयुक्त न होगा!

नेहरूजीकी आत्मकथामें भारतीय स्वतन्त्रताके संग्रामकी कहानीका वर्णन बहुत ही रोचक ढंगसे प्रस्तुत है। आत्मकथाको जैसे-जैसे हम पढ़ते हैं अुसमें हमें नेहरूजीके आकर्षक व्यक्तित्वका अद्भुत परिचय मिलता है। पाठक भारतीय राजनीतिके विषयमें जानकारीके लिअे जिज्ञासु हो अुठता है और नेहरूजी अकाट्य तर्कोंको बड़ेही सुन्दर ढंगसे प्रस्तुत करते हैं। तभी तो अुनकी आत्मकथा आज भी लोग अुतनी ही रुचि और जिज्ञासाके साथ पढ़ते हैं जैसा कि सन् १९३६ में अुसके प्रथम प्रकाशनके समय हुआ करता था। समयकी अितनी लम्बी अवधि भी अुसपर अपना कोअी चिन्ह अंकित न कर पाअी।

बालक जवाहरको अिलाहाबादमें राजसी ठाठके साथ-ही-साथ महान् व्यक्तियोंको देखने और जाननेका अवसर प्राप्त हुआ। समय अपनी अबाध घड़ीसे आगे बढ़ता चला। सन् १९१६ में नेहरूजी महात्मा-गान्धीसे मिले। अुन्होंने प्रथम भेंटके संस्मरणोंको लिपिबद्ध किया है। गान्धीजी अुन्हें सक्रिय राजनीतिसे कोसों दूर दिखे, पर अुनकी वाणीसे शक्ति और सच्चाअी-का आभास अुन्हें अवश्य मिला।

पण्डितजीकी आत्मकथामें हमें गान्धीजीके अेक वाक्यका व्यावहारिक आदर्श मिलता है जो अिस प्रकार है—"पाशविक वृत्तिवाले मनुष्यकी आत्मा शिथिल पड़ जाती है और पाशविक शक्तिके अतिरिक्त वह कोअी नियम नहीं जानता।" गान्धीजीकी अहिंसाका प्रभाव पण्डितजीपर पड़ा है। अुन्होंने अुसे विभिन्न तर्कोंके बाद स्वीकार किया है। अुनका कथन है "यह कर्मक्षेत्रसे किसी भीरुका पलायन नहीं था बल्कि अेक-बारकी बुराअी और राष्ट्रीय पराधीनताको चुनौती थी"। अिसी प्रकार अुनमें गान्धीजीके प्रति श्रद्धा अुत्तरोत्तर बढ़ती गअी और अुनके निर्देशनमें पण्डितजीका व्यक्तित्व शक्तिके रूपमें परिवर्तित हो गया। अुनकी आत्मकथा केवल जीवनी ही नहीं अपितु भारतीय स्वतन्त्रता संग्रामकी गौरव गाथा है जिसमें सचाअी और स्वतन्त्रता-युद्धके अिस अमर सेनानीकी गौरव कहानी भी मिल जाती है।

जेलमें साहित्य-सृजन

राजनीतिक बन्दियोंके लिअे जेल जीवन बहुत ही भारस्वरूप रहता है। और विदेशी शासकोंके युगकी कहानी तो और भी विचित्र थी। लखनअूके डिस्ट्रिक्ट जेलके बारेमें लिखा गया है कि "सूर्योदय अथवा सूर्यास्त तक दिखाअी नहीं देता। क्षितिज हमारी आँखोंसे ओझल था। कहीं रंगीनी नहीं थी और हमेशा मिट्टीकी भूरी दीवारों और बेरकोंको देखते-देखते हमारी आँखें पथरा चली थीं।"

अैसे जेलजीवनमें साहित्य सृजनका कार्य बहुत ही दुष्कर प्रतीत होता है। फिर भी अुन्होंने अपनी कतिपय विश्व-प्रसिद्ध पुस्तकोंको जेलमें ही लिखा है। अिसमें कोअी अत्युक्ति नहीं, तथा अुन्होंने प्यारी पुत्री प्रियदर्शिनी अिन्दिराको पत्र जेलसेही लिखे जिसमें सभ्यताओंके अुत्थान और पतनकी व्याख्या बड़े सुन्दर ढंगसे की गअी है।

"डिस्कव्हरी ऑफ अिण्डिया" का भी लेखन नेहरूजीने जेलमें ही आरम्भ किया। अहमदनगरके अैतिहासिक किलेमें अुन्हें नया चन्द्रमा दीखा जिसने अुन्हें आध्यात्मवादके रहस्यकी कहानी लिखनेकी प्रेरणा प्रदान की। "डिस्कव्हरी ऑफ अिण्डिया" के प्रथम अध्यायमें वे लिखते हैं "बीस माससे अधिक समय बीता जब हम यहाँ लाअे गअे थे। हमारे यहाँ पहुँचनेपर अन्धकार-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्ण आकाशने जगमगाते दूजके नअे चन्द्रमासे हमारा स्वागत किया।"

अुन्हें प्रकृतिसे प्रेम है। और साहित्यकार नेहरू चन्द्रमाके बारेमें आगे लिखते हैं "चन्द्रमा, जेलमें मेरा सदाका साथी, अब अधिक घनिष्टताके साथ मेरे और निकट आ गया है। संसारके सौन्दर्यकी, जीवनके विकास और ऱ्हासकी, अन्धकारके बाद प्रकट होनेवाले प्रकाशकी, अनन्तकालसे अेक दूसरेके पीछे आनेवाली मृत्यु और पुनर्जीवनकी याद दिलानेवाला चन्द्रमा निरन्तर परिवर्तनशील है परन्तु फिर भी नवी है।"

"मैंने अिसके विभिन्न स्वरूपों और मुद्राओंको देखा है—शामको जब कि साअे लम्बे हो जाते हैं, रात्रिके नीरव प्रहरोंमें जबकि अुषाकी आंख नअे दिवसका सन्देश देती है, दिन और महीने गिननेमें चन्द्रमा कितना सहायक है। क्योंकि जिन दिनों चन्द्रमा दिखाअी देता है' अिसके आकार और स्वरूपसे मासकी तिथि काफी ठीक-ठीक जानी जा सकती है। यह अेक सीधा-सा कैलेन्डर है और खेतमें किसानके लिअे तो दिन और ऋतु परिवर्तन बतानेके लिअे सरलतम साधन है।"

अुपरोक्त अुद्धरणसे स्पष्ट है कि साहित्यकार नेहरूने प्रकृतिके विभिन्न स्वरूपोंके सूक्ष्म निरीक्षणमें जेल-जीवनका अधिकांश समय व्यतीत किया है। अेक राजनीतिक बन्दी जिसका हृदय देशकी दुर्दशाको देख पीड़ित हो अुसके लिअे प्राकृतिक सौन्दर्यके दृश्य अमृतकी बूंदोंके समान होता है। प्रकृति विश्लेषण अुनमें नव-जीवनकी शक्ति प्रदान करता है और अिसीलिअे जेलके नीरस जीवनमें साहित्यकार नेहरूने ज्ञान-विज्ञानके दुर्लभ कोशोंका निर्माण सुन्दर ढंगसे किया है।

अुनकी विभिन्न पुस्तकों और भारतके सम्बन्धमें अुनके प्रामाणिक ग्रन्थ न केवल अुनकी साहित्यिक प्रतिभाके परिचायक हैं अपितु आगामी पीढ़ीके लिअे अितिहासके प्रामाणिक ग्रन्थके रूपमें अक्षुण्ण रहेंगे। जेल जीवन-की अुनकी रचनाअें भारतीय साहित्यकी ही नहीं वरन् विश्व साहित्यकी रचनाओंमें अग्र स्थान प्राप्त कर सकेंगी।

देश-प्रेमकी अभिव्यक्ति

किसी भी व्यक्तिका देश प्रेम कोअी आश्चर्यजनक तथ्य नहीं कहा जा सकता। परन्तु पण्डितजीके देश-प्रेममें अेक अजीब नवीनता है। वे अनुभूति अेवं दृढ़ विश्वासके साथ देश-प्रेम प्रकट करते हैं। भारतकी अेकता अेवं भारतीय अितिहाससे सम्बन्धित अुनकी सभी रचनाओंके मूलमें यही भावना हमें देखनेको मिलती है। अुनका कथन है कि सभ्यताके अभ्युदयसे ही भारतीय मस्तिष्क अेक प्रकारकी अेकताका स्वप्न देखता रहा है। अेकताका यह स्वप्न सत्यका रूप धारण कर लेता है, जब सभी वर्ण जातियों और विश्वासोंके भारतीय किसी दूर देशमें राष्ट्रीय पर्व मनानेके लिअे अेकत्र होकर बैठते हैं।

भारतकी अेकतापर साहित्यकार नेहरूने बराबर जोर दिया है। "दी युनिटी ऑफ अिण्डिया" में तो भारतीयोंमें अेकता लानेके लिअे प्रयत्नोंकी चर्चाका सविस्तार अुल्लेख मिलता है। अुन्होंने सर फ्रेडरिक वायरके अिन शब्दोंका अुद्धरण दिया है "भारतकी परस्पर विरोधी बातोंमें सबसे प्रमुख यह है कि अिसकी विभिन्नताके अूपर अिससे बड़ी अेकता है। यह सरलतासे तुरन्त दिखाअी नहीं देती क्योंकि अितिहासमें कभी अैसा नहीं हुआ कि देशको अेक सूत्रमें बांधनेके हेतु किसी राज-नीतिक संयोगमें अिसकी अभिव्यंजना हुअी हो। परन्तु यह अितना बड़ा सत्य है कि भारतके मुस्लिम संसारको भी यह मानना पड़ा है कि अिस अेकताका अुसपर और भी व्यापक प्रभाव पड़ा है।" और यह कहना अनुपयुक्त न होगा जैसा कि रेनांने कहा है, सत्य रंगकी बारीकियोंमें है।

सरल और सहिष्णु साहित्यकार

जवाहरलालजीने सदा अपनेको अेक जिज्ञासु माना है। अुनकी बुद्धिमें अनाग्रह और प्राञ्जलताका दर्शन होता है। नअे अनुभवोंके आधारपर वे सदा अपनी राय बदलनेको तत्पर रहते हैं। अिसीमें अुनकी विनययुक्त सरलता निहित है। अुनका जीवनके प्रति बड़ा सरल दृष्टिकोण है। अुनका कहना है कि साह-सिकता अिन्सानमें कुदरतसे होती है। और दरअसल,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिन्सानके भीतर समाअी अिस साहसिकताको देखकर मैं कअी बार ताज्जुबमें पड़ जाता हूँ और सोचने लगता हूँ आखिर यह क्या है। यह जोश जो अिन्सानके दिलको अदम्य बना देता है–जो प्रेरणाकी आवाज बन आसमानसे गरज-गरजकर हमें चुनौती देता है। हममेंसे अधिकतर अिस आवाजको बहरे कानोंसे ही सुनते हैं। मगर हमेशा अैसा नहीं होता। अिन्सानकी नस्लकी खुश-किस्मतीसे कभी-कभी अैसे लोग पैदा हो जाते हैं जो अिसे ध्यानसे सुनते हैं और हमारी मौजूदा व आनेवाली पीढ़ियोंको जीना सिखा देते हैं।

"दि डिस्कव्हरी ऑफ अिण्डिया" में भी हमें मानवके प्रति अिन्हीं भावनाओंका चित्रण दीखता है। अुसमें प्रौढ़ व्यक्तिके विचार हैं जिसने यौवनका "निश्चय" और "विश्वास" कुछ खो दिया है परन्तु अुसके "साहस" और "शक्ति" में जरा भी कमी नहीं दिखाअी देती।

नेहरूजीकी सहिष्णुता सराहनीय है। स्वतन्त्रताके लिअे जिस व्यक्तिको बहुतेरे कष्ट अेवं कटु अनुभव हुअे हों अुसे अितना सहिष्णु पाना बहुत ही कठिन है। आज तो वे अपने साथियों अेवं भूले व्यक्तियोंके प्रति आवश्यकतासे अधिक सहिष्णु हैं। अुनकी रचनामें कहीं-कहीं "आलोचनाके तीखापन" का अभाव अवश्य खटकता है पर अलंकारिक शब्द जालसे मुक्त अुनका साहित्य बहुत ही आकर्षक प्रतीत होता है। अुनकी भाषा शैलीमें निजी व्यक्तित्व है, अमिट सौन्दर्यकी छाप है और सरलताके दर्शन भी अुसमें होते हैं। नेहरूजीने अबतक केवल दो शब्द-चित्र लिखे हैं। अेक अपने राजनीतिक गुरू-महात्मा गान्धी और दूसरा अपने पिता पण्डित मोतीलाल नेहरूके प्रति।

अुन दोनों शब्द-चित्रोंमें छविका अपूर्व दर्शन होता है। अवकाशके क्षणोंमें वे अपने पिताजीके बारेमें कुछ अधिक जानकारी दे सकेंगे अैसी आशा समस्त साहित्य जगतको है। नेहरूजी आशावादी सिद्धान्तोंमें विश्वास रखते हैं। अुनका कहना है "मैं निराशामें यकीन नहीं करता, मुझे अुम्मीद है हालत बदलेगी और अिन्सान अपनी महान विरासतके काबिल बनेगा।

अिन्सानकी कूवतमें मेरी आस्था अडिग है। क्योंकि अुसके दुर्बल पतले शरीरमें मस्तिष्क नामकी अेक अैसी बेमिसाल चीज है जो कोअी बन्धन स्वीकार ही नहीं करती। कभी हार नहीं मानती"।

सच पूछिअे तो साहित्यकार नेहरूमें हमें अेक सृजनात्मक प्रवृत्तिका परिदर्शन होता है। अुनकी शैलीमें पाश्चात्य साहित्यकारोंकी भाँति अेक विशिष्ट विचारधाराका प्रभाव तो नहीं मिलता पर अनायास अुनके मुखसे कुछ शब्द निकलते हैं वे हमारी और आगामी पीढ़ीके लिअे साहित्य और कलाके अुत्कृष्ट अुदाहरणोंके रूपमें सदा ही स्मरणीय रहेंगे।

साहित्यकार नेहरूको कवितासे बहुत अधिक प्रेम है। अुन्होंने आडेन, वाल्टर, डा–ला–मेयर, स्पेंडर, अिलियत, कीट्स आदि कवियोंको खूब अच्छी तरह पढ़ा है। अिस सम्बन्धमें धूर्जटिप्रसाद मुकर्जीने अपने अेक संस्मरणमें लिखा है–"मैंने कितने ही कवियोंको कविता पाठ करते सुना है किन्तु पण्डितजीका कविता पढ़नेका ढंग अुन सबसे अच्छा है। कहीं आवश्यक जोर, कृत्रिम भावुकता, नाटकीयता या अभिनय नहीं, अेक शान्त, संवेदनशील, अंतरंग अलगाव, अुचित गुरुता लेकिन भारीपन कहीं नहीं, मानों वात्तिचेली द्वारा अंकित फरिश्तोंकी भांति गुरुत्वाकर्षणसे परे।"

वस्तुतः नेहरूजीका गम्भीर अध्ययन ही अुनकी रचनाओंकी अुत्कृष्टताके मूलमें है। आशा है, नेहरूजी अवकाशके क्षणोंमें साहित्यके महत्वके विषयोंपर हमें अधिक जानकारी दे सकेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रवीन्द्रनाथके कुछ नारी-पात्र

—श्रीमती माया गुप्त

रवीन्द्रनाथके कुछ नारी-पात्रोंके विषयमें कुछ कहना आसान नहीं है। अिसका कारण यह है कि लगभग साठ वर्षकी निरन्तर साहित्य-साधनामें अुन्होंने कितने ही अुपन्यास, नाटक, नाटिकाअें, कहानियाँ, काव्य तथा कविताअें लिखीं, जिनमें सर्वत्र कहीं अेक, कहीं दो और कहीं अुससे भी अधिक नारी-पात्रोंकी सृष्टि की है। यदि अिन पात्रियोंको टाअिपोंकी सीमाओंके अन्दर लाया जा सकता, तो यह कार्य आसान होता, पर अुनकी अेक-अेक पात्री अपने आपमें अेक टाअिप है, अैसा कहा जाय, तो कोअी अत्युक्ति न होगी। अेकसे दूसरी पात्री अितनी भिन्न है जैसे गुलाबसे चमेली या कमलसे रातरानी। सबमें अपनी-अपनी विशेषताअें हैं। कोअी पात्री महिमामअी है तो दूसरी तरफ क्षुद्रताओंसे पूर्ण नारियाँ भी हैं। परन्तु जो जैसी भी हैं, हैं वे नारियाँ।

नारी पात्रियोंमें अुर्वशी कवीन्द्र रवीन्द्रकी अनोखी सृष्टि है। वह न तो माता है, न कन्या है, न वधू है, वह सुन्दरी रूपसी नन्दन वासिनी अुर्वशी है। वह अूषाके अुदयकी तरह अनवगुंठिता और अकुण्ठिता है। वह युग-युगान्तरसे विश्वकी प्रेयसी है, अित्यादि अित्यादि। पर अुर्वशीको शायद अेक पात्री कहना सही न होगा, क्योंकि वह कवि-कल्पनाके मन्थनसे अुत्पन्न हुअी है। वास्तविक जगत्में अुसका अस्तित्व कहाँ तक है, यह विचारणीय है।

अब कवीन्द्र रवीन्द्र द्वारा प्रस्तुत कुछ पौराणिक नारी चरित्रोंको देखा जाय। वे चरित्र पौराणिक होनेपर भी कवीन्द्रने अुनकी मूल विशेषताओंको कायम रखते हुअे भी अुन्हें जहाँतक सम्भव है, वास्तविक नारी बनानेका प्रयास किया है। "गान्धारीका आवेदन" नाटकमें गान्धारी चरित्र और "कर्ण-कुन्ती संवाद" के कुन्ती चरित्रपर कुछ कहना आवश्यक है। अिन लघु रचनाओंमें अिन दोनों पौराणिक नारियोंका चरित्र अुभर-कर अिस प्रकारसे हमारे सामने आता है कि वे बिल्कुल वास्तविक मालूम होते हैं, साथ ही अुनके जीवनका अन्तर्द्वन्द्व स्पष्ट होकर सामने आता है।

दुर्योधनकी माता होते हुअे भी गान्धारी धृतराष्ट्रसे प्रार्थना करती है कि दुर्योधनको सजा दी जाय। वह कहती है कि जिस दिन अुसने पांचालीका वस्त्र-हरण किया, अुसी दिन गान्धारीके अवशेष मातृत्व गर्वपर घातक आघात पहुँचा। गान्धारीका कहना यह है कि सजाके रूपमें पुत्रको त्याग देनेमें दुःख तो होगा ही, पर जबतक सजा पानेवालेके साथ-साथ सजा देनेवालेको दुःख नहीं होता, तबतक सजा देनेका अधिकार भी तो नहीं होता। जब पाण्डव माता गान्धारीसे विदा होने आअे, तो अुसने आशीर्वाद दिया—"बिना पापे दुःख भोग, अन्तरे ज्वलन्त तेज करुक संयोग" याने तुम लोग बिना पापके दुःख भोग रहे हो, अिस कारण तुममें ज्वलन्त तेजकी सृष्टि हो। अिसी प्रकार गान्धारीने द्रौपदीसे कहा—तुम्हारे अपमानको सारे विश्वकी कुलवधुओंने, कायरताके हाथोंसे सतीकी लांछनाको बाँट लिया है।

अिस प्रकारसे गान्धारी-चरित्रके रूपमें हमारे सामने अेक अैसी महिमामयी नारी आती है, जो माता होते हुअे भी, अुससे बढ़कर और भी कुछ है। अुनमें अितनी शक्ति थी कि वह माता होनेके कारण न्यायके मार्गसे विचलित नहीं हुअी। वह कठोरता और कोमलता-का अपूर्व संमिश्रण है। अैसी नारी सर्वकालकी माताओंके लिअे अेक आदर्श है।

"कर्ण कुन्ती संवाद" में जिस समय कुन्ती कर्णके सामने आती है, तो अुनका वह रूप सामने आता है, जो अुस नारीका रूप है, जिसने समाजके भयसे घबड़ाकर असहाय शिशुको विसर्जित कर दिया। कुन्तीका व्यक्तित्व अितने वास्तविक रूपमें पेश किया गया है कि महाराणी कुन्तीका कोअी पता नहीं। वह अेक अति साधारण स्त्रीके रूपमें दिखाअी गअी है, जो अपनी सन्तानको त्याग देती है। अुसके चरित्रमें विद्रोहका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोअी अुपादान नहीं है। अपने किअे हुअे कार्यके समर्थनमें मस्तक अूंचा करके खड़ा होने और संसारकी ओर चुनौती भरी दृष्टिसे देखनेकी सामर्थ्य अुसमें नहीं है। यह कुन्तीका चरित्र है, जो हमारे सामने आता है।

कवीन्द्र रवीन्द्रके नाटक "चित्रांगदा" का चित्रांगदा-चरित्र अिन सबसे भिन्न है। मुझे अिस बातकी बहुत अिच्छा होती है कि यह कहूँ कि रवीन्द्रनाथकी नारी-पात्रियोंमें चित्रांगदाका चरित्र सबसे सफल और सबसे सार्थक है। सारे विश्व साहित्यकी नारी-पात्रियोंम यह अेक अनोखा चरित्र है। चित्रांगदाने अपने प्रियतमको पानेके लिअे घोर तपस्या की, जिससे अर्जुनकी अुदासीनताको भंग करनेके लायक रूप अुसे प्राप्त हो। बात यह है कि रूपमें कमी होनेके नाते ही अर्जुनने अुसके प्रेम निवेदनको ठुकरा दिया था। तपस्याके फलस्वरूप चित्रांगदाको सुन्दर शरीर मिला; साथ ही प्रेमास्पद भी मिले, पर शरीर सर्वस्व प्रेममें तृप्ति कहाँ और रूप या शरीर ही नारीमें अेक मात्र काम्य वस्तु नहीं। नारी केवल प्रियसंगिनी, मधुर देहकी संगिनी नहीं, अुसमें अेक आत्मा भी है और अुसकी भी कुछ माँगें हैं। जब वे माँगें पूरी हों, तभी नारीत्व सार्थक होता है। केवल शारीरिक मिलन कुछ नहीं।

आजसे साठ सालके पहले अिस चरित्रकी सृष्टि हुअी थी, पर वह आधुनिक नारीकी सामाजिक चेतनाका प्रतीक है। चित्रांगदाके शारीरिक सौन्दर्यसे अर्जुन मुग्ध और फिर श्रान्त हो जाता है। असली चित्रांगदा नकली याने तपस्यासे प्राप्त रूप युक्त चित्रागंदाके विरुद्ध विद्रोह करती दिखाअी पड़ती है। जो चित्रांगदा तीर और धनुष लेकर देशकी रक्षामें कठोर जीवन बिताती थी, वह कहीं श्रेष्ठ थी। अिसीलिअे अर्जुनसे विदाअी लेते समय वह कहती है—मैं देवी नहीं हूँ, मैं साधारण स्त्री हूँ, यदि मुझे संकटके मार्गमें बगलमें रखो और दुरूह चिन्तनमें भाग दो, यदि मुझे तुम्हारी सहायताके लिअे कठिन व्रतकी अनुमति हो, यदि सुख और दुखमें मुझे सहचरी रखो, तभी तुम मेरा सही परिचय पाओगे।

कवीन्द्रका कहना था कि यदि नारीके अन्तरमें चरित्रकी यथार्थ शक्ति हो, तो वही युगल जीवनकी जययात्रामें सहायक हो सकती है। केवल अिसीमें आत्माका स्थाअी परिचय है। अिसमें अवसाद नहीं है और तभी अभ्यासकी धूलसे अिसकी ज्योति मलिन न पड़कर ज्यों-की-त्यों अुज्ज्वल बनी रहती है।

रवीन्द्रका अेक मुख्य नारी पात्र देवयानी है। यह चरित्र भी अपने स्थानपर अुतना ही स्वाभाविक और ओजस्वी है जैसे चित्रांगदा और गान्धारी। वह खेदके साथ कचसे कहती है—मुझे कृतज्ञता नहीं चाहिअे, यदि केवल मेरे अुपकारही याद हैं और कुछ नहीं, तो अुन्हें भी भूल जाना। कच जब प्रेमको स्वीकार करता है, तो देवयानी कहती है—नहीं जानते हो कि प्रेम अन्तर्यामी है? जब कच कहता है कि अपने लिअे कुछ भी स्वार्थ कामना नहीं है, तो देवयानी अुसे मिथ्याभाषी कहकर दुतकार देती है। क्या कचने केवल विद्याके ही लिअे तपस्या की थी, देवयानीके लिअे नहीं? कचकी क्षमा-भिक्षाके अुत्तरमें देवयानी कहती है—मेरे मनमें क्षमा कहाँ है, नारीका चित्त वज्रकी तरह कठोर है।

पराजित प्रेम नारीको कठोर बना देता है और देवयानी कचको अभिशाप देती है। देवयानीके चरित्रमें असाधारण या यों कहिअे अस्वाभाविक संवेदन नहीं है। अुसका व्यक्तित्व बलिष्ठ है। वह प्रेममें प्रत्याहत होकर गिड़गिड़ाती नहीं है। अपने सारे गुणों और अवगुणोंके साथ वह नारीकी मर्यादामें सुप्रतिष्ठित है।

अब कवीन्द्रके अुपन्यासकी अेक दो पात्रियोंको बानगीके रूपमें लिया जाय। स्वाभाविक रूपसे अुपन्यासकी ये पात्रियाँ हमारे युगके अधिक निकट मालूम देती हैं। बात यह है कि हम जिस वातावरणमें चलती फिरती हैं, वे अुसीमें विचरण करती हैं। पर प्रत्येक नारीमें अुर्वशीसे लेकर गान्धारी, कुन्ती, चित्रांगदा, देवयानीके अंश मौजूद हैं और ये पात्रियाँ पौराणिक होते हुअे भी कवीन्द्रने अिन्हें जिस रूपमें पेश किया है, वे हमसे दूर नहीं मालूम होतीं।

"गोरा" अुपन्यासमें कअी पात्रियाँ हैं, जिनमें अेक आनन्दमयी है। वह पहले बड़ी कट्टर थी, पर जब अेक मेमके पुत्र गोराको वह अपना पुत्र बनाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पालती है तो, वह कट्टरतासे बिल्कुल दूर हो जाती है। अन्ततक अुसकी यह अुदारता बनी रहती है। आनन्दमयीने गोराको कहा था–"बेटा तुझे गोदमें पाकर मैं धर्मके असली मतलबको समझ गअी थी और तबसे कट्टरतासे भागती हूँ।"

आनन्दमयी सचमुच आनन्दमयी है। अिसके विपरीत अिसी अुपन्यासमें वरदा सुन्दरीका चरित्र है, जो बहुत कट्टर ब्राह्म समाजी है और अन्य किसी समाजमें भलाअी हो सकती है, अिस बातको माननेके लिअे तैयार नहीं है, कवीन्द्रने अुसके कट्टरपनको बड़ी निर्दयतासे चित्रित किया है। वरदा सुन्दरी हाकिमोंके घर आना जाना पसन्द करती थी। अिस प्रकारसे अेक ही अुपन्यासमें ये दो परस्पर भिन्न चरित्र आ जाते हैं।

महाकविकी मृत्युके करीब पन्द्रह साल पहले अेक अुपन्यासमें कविने लावण्य नामके अेक नारी चरित्रकी सृष्टि की। 'शेषेर कविता' अुपन्यासमें लावण्य अेक आधुनिक अुच्चशिक्षिता युवती है। अुसमें तीखी बुद्धि है और अुसकी विश्लेषण-शक्ति प्रबल है। और अेक बात लावण्यमें जैसे सहजात रूपसे ही है, वह है अुसकी धीर दूर दृष्टि। वह यदि प्रेम चाहती है तो यह भी चाहती है कि प्रेम समयके साथ-साथ मलिन न हो। सहजात बुद्धिसे वह जानती है कि प्रेम बन्धनकी छोटी चहार दीवारीमें कभी मलिन हो जाता है। वह जानती है कि अुसका प्रेमिक 'अमित रे' (राय) अुसे जो प्रेम करता है वह बड़ा नाजुक है, अुसमें प्रबलता है, यौवनकी लापरवाही है, पर वह अैसा प्रेम नहीं है जो समयके धक्कों और अभ्यासकी मलिनता नहीं सह सकेगा। अतः अुसने अन्तमें अमितसे विवाह करनेसे अिन्कार किया और विवाह शोभनलालसे किया जो अुसे किशोरावस्थासे प्रेम करता रहा। प्रेम यदि अैसा हो कि अुसकी मधुरता केवल नअे रूपोंमें ही जीवित रह सकती है तो नारीके लिअे वह प्रेम आनन्दकर हो सकता है, पर अुसपर भरोसा नहीं किया जा सकता। अुसे घर बसाना है, और घर टूटनेपर फिर नया घर बसाना आसान नहीं है। अुसकी सन्तानके लिअे निरापद आश्रय अवश्य चाहिअे।

लावण्य अेक अैसी नारी है जिसे हम सांसारिक जीव कह सकते हैं। प्रेम जीवनका अेक पहलू अवश्य है पर अेक मात्र पहलू नहीं। लावण्य वर्तमान अुच्चशिक्षित अुच्च मध्यवर्गकी अेक आधुनिक स्त्री है, वह भीरू लज्जावगुन्ठिता वैष्णव प्रेमिका नहीं। प्रेमके लिअे लावण्य अपनेको अेक हद तक ही ले जाती है, अुसके आगे नहीं। अुसके सामने और भी कुछ है।

रवीन्द्र-संगीत

१. **भालो बेसे सखि निभृत यतने**
आमार नामटी लिखियो–तोमार
मनेर मन्दिरे।

अर्थात् अे सखि, प्यार करके अेकान्तमें यत्नपूर्वक, अपने मनोमन्दिरमें मेरा नाम लिख लेना।

२. **आमार पराणे जे गान बाजिछे**
ताहार तालटी सिखियो––तोमार
चरण मंजिरे।

मेरे प्राणोंमें जो संगीत बज रहा है, अुसकी ताल; अपने पैरोंमें बजनेवाले नूपुरोंसे सीख लेना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य और संस्कृतिके तीन महान् तीर्थ

—लक्ष्मीशंकर व्यास

भारतीय साहित्यके प्राचीन साधना और निर्माण केन्द्रोंमें पाटलिपुत्र, अुज्जयिनी, कान्यकुब्ज, वल्लभी, अनहिलवाड़ा, श्रीमाल तथा धवलकाके नाम चिरस्मरणीय हैं। अिनमें वल्लभी, श्रीमाल, अनहिलवाड़ा तथा धवलका, यद्यपि पश्चिमी भारतमें प्रतिष्ठित थे पर साहित्य अेवं संस्कृतिके अिन कला-केन्द्रोंने सम्पूर्ण देशको ही नहीं, पूरे महादेशको अपनी ज्ञान-विज्ञानकी प्रकाश किरणों से आलोकित किया है। संस्कृत-भाषा और गद्यशैलीके प्राचीनतम निदर्शन भी देशके अिसी अंचलमें प्राप्य हैं। प्राकृत तथा संस्कृत भाषा अेवं शैलीके अशोक, रुद्रदामन तथा समुद्रगुप्त-कालीन नमूने अिस क्षेत्रके जूनागढ़ (गिरिनार) में शिलालेखके रूपमें आज भी विद्यमान हैं। भारतीय वाङ्मयके विकास, प्रचार-प्रसार तथा अुसकी विभिन्न प्रवृत्तियोंके अध्ययनमें अिन साहित्यिक तीर्थोंकी साधनाका अितिहास अत्यन्त ज्ञानवर्धक, मननीय और मनोरंजक है। प्रस्तुत निबन्धमें अैसे ही तीन साहित्यिक अेवं सांस्कृतिक तीर्थोंका परिचय प्रस्तुत किया जायेगा।

वल्लभीपुर

ज्ञान-विज्ञान और कला-संस्कृतिका यह केन्द्र वल्लभीके मैत्रकोंके कालमें 'वला' के नामसे प्रसिद्ध रहा है। सौराष्ट्रका यही सांस्कृतिक नगर वल्लभी था। गुजरातका यही वल्लभीपुर ब्राह्मण, बौद्ध तथा जैन-धर्मका महान् केन्द्र रहा है। अी. सन् ६४१ में प्रसिद्ध चीनी यात्री व्हेनसांगने अिस नगरीके वैभवका वर्णन करते हुअे लिखा है कि यहाँ सैकड़ों संघाराम थे, जिनमें लगभग छः हजार बौद्ध भिक्षु हीनयान शाखाका अध्ययन-मनन करते थे। व्हेनसांगके समसामयिक अित्सिहने वल्लभीके ज्ञान-केन्द्रका विशद वर्णन करते हुअे यह अभिमत प्रकट किया है कि दक्षिण बिहारमें नालन्दा तथा पश्चिमी भारतमें वल्लभी, भारतमें अैसे दो स्थान हैं, जिनकी तुलना चीनके अत्यन्त सुप्रसिद्ध विद्यापीठोंसे की जा सकती है, जहाँ बौद्ध-दर्शनके निमित्त दूर-दूरसे जिज्ञासु विद्यार्थी अध्ययनार्थ आते थे। यह केवल बौद्ध दर्शन अेवं संस्कृतिका ही महान् केन्द्र न था अपितु ब्राह्मण अेवं जैन संस्कृतिका भी साधना स्थल था।

संस्कृत साहित्यका प्रथम व्याकरण

विभिन्न संस्कृतियोंके अतिरिक्त जब हम साहित्य साधनाके विचारसे अिस अैतिहासिक नगरीके अितिहासपर दृष्टिपात करते हैं, तो विदित होता है कि भट्टीकाव्य या रावणवध (सन् ५००–६५०) जो संस्कृत साहित्यका सर्व-प्रथम व्याकरण माना जाता है अुसकी रचना वल्लभीमें ही हुअी थी। पाँच-सौ वर्षोंकेबाद आचार्य हेमचन्द्रने जिस 'द्वयाश्रय महाकाव्य' की रचना की–अुसका पूर्व रूप अुक्त काव्यमें देखा जा सकता है। वल्लभीमें जितने अुत्कीर्ण लेख मिलते हैं अुनमें संस्कृतके गद्यकाव्यकी शैलीका पूर्वाभास मिलता है।

जैन धर्मका भी केन्द्र

वल्लभी जैन धर्मका भी अेक प्रमुख केन्द्र रहा है, अिसका अुल्लेख हम पहले कर चुके हैं। भगवान् महावीरके निर्वाणके पश्चात् नौवीं शताब्दीमें आर्य-नागार्जुनने यहीं जैन परिषद् आमन्त्रित की थी। पाटली-पुत्र, मथुरा तथा वल्लभीमें कमसे-कम तीन जैन परिषदें बुलाअी गअी थीं। अिनमें मथुरा-वाचन तथा वल्लभी-वाचन प्रसिद्ध हैं। यहीं जैन जगत्के महान् विद्वान् मल्लवादिन हुअे थे।

मल्लवादिन जैन तर्क-शास्त्र द्वादशन्यायचक्रके महान् प्रणेता थे। प्रभाचन्द्र सुरिके 'प्रभावकचरित' में मल्लवादिनकी परम्परा, अध्ययन और शास्त्रार्थमें विजयका अुल्लेख मिलता है। हेमचन्द्राचार्यने अपनी सुप्रसिद्ध रचना सिद्ध हेम-व्याकरणमें (अन्मल्लवादिनं तार्किकाः), मल्लवादिनका अत्यन्त श्रद्धा-पूर्वक अुल्लेख किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन् ७८९ ओस्वीमें अिस सांस्कृतिक नगरीका सम्पूर्ण वैभव अरबोंके आक्रमणके फलस्वरूप क्षत-विक्षत हो गया। विविध तीर्थकल्पके प्रणेता श्री जिन-प्रभासूरिने अिसका विस्तृत विवरण किया है। भारतके प्राचीन अितिहासमें सुप्रसिद्ध अितिहासज्ञ विसेण्ट स्मिथने भी अिसका अुल्लेख करते हुअे लिखा है कि वल्लभीके बाद पश्चिमी भारतके मुख्य सांस्कृतिक केन्द्रका स्थान अनहिलवाड़ा (पाटन) ने ग्रहण किया। अिसके वर्णनके पूर्व गुर्जरोंकी प्रथम राजधानी श्रीमालकी सांस्कृतिक परम्पराओं तथा देनपर भी विचार कर लेना समीचीन है।

विविध विद्याओंका केन्द्र श्रीमाल

श्रीमाल भिन्नमालके नामसे पहले प्रसिद्ध था। व्हेन-सांगने अिसके सम्बन्धमें लिखा है कि यह आबूकी ५५ मील पहाड़ीसे पश्चिममें स्थित है। अिसका क्षेत्रफल ८३० वर्गमीलका था। सातवीं शताब्दीमें यह गुजरात राज्यकी राजधानी थी। अब तो यह नगर अुध्वस्त हो गया है पर अब भी यहाँ अनेक महत्वके अुत्कीर्ण लेख मिलते हैं। श्रीमाल पुराणमें अिस नगरीके वैभव अेवं अैश्वर्यका वर्णन मिलता है। अिससे विदित होता है कि भिन्नमाल (श्रीमाल) अेक समय बड़ा और वैभवपूर्ण नगर था। प्रभावक चरितमें श्रीमालका विस्तृत अुल्लेख मिलता है। सन् १६१२ अी. में भी अिस नगरीकी किलेबन्दी विद्यमान थी। अिसी समयमें आअे अंग्रेज व्यापारी निकोलस यू फ्लीटने लिखा है कि अिस नगरकी ३६ मीलकी किलेबन्दी अत्यन्त भव्य अेवं सुन्दर लगती है। पर यहाँके तालाब जीर्ण-शीर्ण हो रहे हैं। अब ये कहाँ लुप्त हो गअे, यह कहना कठिन है।

संस्कृतियोंका त्रिवेणी संगम

वल्लभीपुरके समान ही यह नगर भी ब्राह्मण, बौद्ध तथा जैन विद्याका महत्वपूर्ण केन्द्र था। जब यह स्थान राजधानी नहीं रहा तब भी यहींके प्रतिभासम्पन्न लोगोंने अन्यत्र जाकर गुजरातको वैभवपूर्ण बनानेमें योग-दान दिया। यहींके निवासियोंने सर्वप्रथम गुजरात प्रदेशका नामकरण अेवं परिकल्पना की। व्हेन-सांगके तथ्य वर्णनसे स्पष्ट है कि यह स्थान बौद्ध-अेवं दर्शनके अध्ययन-मननका भी केन्द्र था। श्रीमाल पुराणके अनुसार यहाँ अेक हजार ब्रह्म शालाअें थीं तथा चार हजार मठ थे। अिनमें विभिन्न विद्याओंकी शिक्षा दी जाती थी। श्रीमाल-पुराणमें स्पष्ट लिखा है —

> चतुर्वेदाः साङ्गाश्च त्वुपनिषत्संहितास्तथा।
> सर्वे शास्त्राणि वर्तन्ते श्रीमाल श्री निकेतने।

अैतिहासिक तथा शैक्षणिक महत्वके अतिरिक्त अिस नगरीमें महान् साहित्य निर्माताओंका भी निवास रहा है और अुन्होंने भारतीय साहित्यकी अुल्लेखनीय अभिवृद्धि की है। महाकवि माघके सुप्रसिद्ध महा-काव्य शिशुपालवधमें यहाँके राजा वर्मालांटका अुल्लेख आया है। माघके प्रपिता अिस राज्यके महामन्त्री थे। महाकवि माघ भी यहींके निवासी थे।

प्रसिद्ध ब्रह्मगुप्त ज्योतिषीका जन्मस्थान भी श्रीमाल नगरी थी। हरिभद्रकी गुरु परम्परामें यहाँके सिद्धर्षि महान् संस्कृत कथाकार हो गअे हैं। जैन दर्शनपर अनेक ग्रन्थोंके प्रख्यात प्रणेता हरिभद्रका अिस नगरीसे निकट सम्बन्ध रहा है। अिन्हीं हरिभद्रने अपनी गुरु-परम्परामें श्रीमाल निवासी महाकवि देवगुप्त तथा अुनके शिष्य शिवचन्द्रका भी अुल्लेख किया है।

सन् ९५३ अी. तक गुर्जर प्रदेशकी यह सबसे महत्वपूर्ण नगरी थी। सन् ११४७ अी. में अिस नगरीकी 'श्री' अुत्तरी गुजरात, मुख्यतः अनहिलवाड़ामें चली गअी। अनहिलवाड़ा (पाटन) जब पश्चिमी भारतका सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र बना तब भारी संख्यामें श्रीमालके ब्राह्मण, वणिक, कलाकार यहीं चले आअे और अुन्होंने गुजरातके अितिहासमें गौरवपूर्ण योगदान दिया।

सांस्कृतिक केन्द्र अनहिलवाड़ा

दसवीं शताब्दीसे पन्द्रहवीं शताब्दी तक पश्चिमी भारतके प्रमुख सांस्कृतिक केन्द्रका स्थान अनहिलवाड़े (पाटन)ने ग्रहण किया। गुजरातकी अिसी अैतिहासिक नगरीमें अेक राजवंशके लगातार तीन अुत्तराधिकारियों-ने साहित्य अेवं संस्कृतिके प्रति स्नेह प्रदर्शित किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस नगरकी स्थापना सरस्वती नदीके तटपर पोवड़ा जातिके प्रधान वनराजने श्रीमालके पतनके पूर्व सन् ७४६ अीस्वीमें की थी। यहीं सन् ९४२ अी. में मूलराजने भारतीय अितिहासके प्रख्यात राजवंश चौल्युक्य-वंशकी प्रतिष्टापना की। मूलराज महान् योद्धा तथा विजेता था। अुसने सिद्धपुरमें रुद्रमहालयका निर्माण कराया जो चौल्युक्य कालीन सबसे बड़ी कलापूर्ण अैतिहासिक अिमारत है। यही नहीं, अिस नगरीको सांस्कृतिक केन्द्र बनानेके लिअे अुसने अुत्तरापथके विद्वान ब्राह्मणोंको गुजरातमें आमन्त्रित किया। यही ब्राह्मण आजकल अुदीच्च अथवा औदीच्य ब्राह्मण कहे जाते हैं। मूलराजके समयसे ही 'गुजरात' नामकी प्रसिद्धि प्रान्तरूपमें होने लगी।

अिस नगरीके साहित्यिक अेवं सांस्कृतिक निर्माणमें जिन लोगोंने महान् योगदान दिया अुनमें कर्ण, सिद्धराज जयसिंह तथा कुमारपालका नाम भारतीय अितिहासमें सदा स्मरण किया जाअेगा। सिद्धराज और अुसके बाद कुमारपालके समयमें अिस नगरीका साहित्यिक, सांस्कृतिक विकास चरम सीमापर पहुँचा। भीमदेव प्रथम (१०२२-१०६४ अी.) के समयमें महमूद गजनीके आक्रमणके होनेपर भी यहाँका सांस्कृतिक विकास रुका नहीं।

गुर्जर साम्राज्यकी राजधानी बननेके बाद अनहिलवाड़ा (पाटन) में ब्राह्मण तथा जैन विद्वानों अेवं कवियोंने महान् साहित्यका निर्माण किया। शान्तिसूरि तथा नेमीचन्द्रने अुत्तराध्ययन सूत्रपर टीकाअें लिखीं जो विद्वानों तथा अध्येताओंके लिअे अत्यन्त अुपादेय हैं। १०६४ अी. में अभयदेवसूरिने जैन दर्शनके नौ अंगोंपर विद्वत्तापूर्ण टीकाअें लिखीं। अिन टीकाओंका द्रोणाचार्यने संशोधन किया। ११ वीं शताब्दीके पूर्वार्धमें जिनेश्वर तथा बुद्धि सागरने धार्मिक अेवं विभिन्न विषयोंपर ग्रन्थोंकी रचना की।

अुन दिन प्रदेशों तथा राज्योंमें स्वस्थ साहित्यिक स्पर्धाका सुन्दर रूप देखनेको मिलता है। गुजरात (अनहिलवाड़ा) और मालवा (धारा) में अुन दिनों साहित्यिक प्रतिद्वन्द्विता चलती थी। अिसका स्तर अैसा था कि साहित्यके विकासमें बड़ी सहायता मिलती थी। परम्परा यह थी कि अेक प्रदेशके विद्वान् दूसरे प्रदेशमें अपने राज्यके गौरव-वर्धनके लिअे शास्त्रार्थ करने जाया करते थे। सन् ११३६-३७ अी. में सिद्धराज जयसिंहने मालवापर विजय प्राप्तकर अुसे गुजरातके साम्राज्यमें मिलाया। अिसके पूर्व राजनीतिक युद्ध होते हुअे भी दोनों राज्योंके मध्य स्वस्थ साहित्यिक प्रतिस्पर्धा चलती थी।

युग-निर्माता आचार्य हेमचन्द्र

सिद्धराज जयसिंह अपने समयका सबसे बड़ा और प्रतापी राजा था। गुजरातके लोक-साहित्य अेवं नाट्यमें अुसकी विक्रम तथा भोजकी भांति ही सुख्याति रही है। अुज्जयनीके विक्रमादित्यके समान ही सर्वतोमुखी प्रगतिकी महत्वाकांक्षा अुसमें थी। सारे देशके विद्वान् अुसकी राजसभामें आते थे। दिगम्बर कुमुदचन्द्र और श्वेताम्बर देवसूरिका महत्वपूर्ण विचार-विनिमय अुसीकी राज्यसभामें हुआ था। अैसी सभाओंकी अध्यक्षता वह स्वयं करता था। अिसी सिद्धराजकी राज्यसभाका और अपने युगका महान् साहित्यकार आचार्य हेमचन्द्र, मालवाकी गौरवपूर्ण साहित्यिक परम्पराके स्तरका साहित्य सर्जन करता था। आचार्य हेमचन्द्र श्री देवचन्द्रके शिष्य थे। अुनकी प्रतिभा सर्वतोमुखी और असाधारण थी। प्रकाण्ड पण्डित होनेके अतिरिक्त वे महान् कवि भी थे। अिन्हींके तत्वावधान तथा प्रेरणासे गुजरातमें १२ वीं तथा १३ वीं शताब्दीमें जैन-साहित्यका अभूतपूर्व निर्माण हुआ।

सिद्धहेम व्याकरणकी रचना

आचार्य हेमचन्द्र (सन् १०८८-११७३) युग-निर्माता साहित्यकार थे। अुन्होंने न केवल जैन ग्रन्थ ही लिखे अपितु व्याकरण, कोश, काव्य, छन्द, आलोचना सभी विषयोंपर निदर्शक ग्रन्थोंकी रचना की। यह पहले ही लिखा जा चुका है कि सिद्धराज को अुज्जयनीकी साहित्यिक परम्पराओंसे होड़ लेनेकी प्रबल अिच्छा रहती थी। अेक बार अुसने हेमचन्द्रके सम्मुख व्याकरणके प्रणयनकी चर्चा की। आचार्य हेमचन्द्रने अिसे स्वीकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया। सारे देशमें प्रचलित व्याकरण खरीदे गअे। जब आचार्य हेमचन्द्रने अिसका प्रणयन किया तो अिसपर राजा और लेखक दोनोंके नामपर अिसका नामकरण 'सिद्ध-हेमव्याकरण' रखा गया। अिसकी प्रतिलिपियाँ कराअी गअीं और देशके विभिन्न भागोंमें अिसे भेजा गया। तत्कालीन विद्याकेन्द्र कश्मीरमें अुक्त व्याकरणकी बीस प्रतियां भेजी गअी थीं। आचार्य हेमचन्द्रने जितनी प्रभूत साहित्य रचना की अुसपर विस्तृत अेवं विशद विचारकी आवश्यकता है। संक्षेपमें यही कहना अुचित होगा कि अुनकी रचनाअें गुजरात अथवा जैन जगत्के लिअे ही नहीं, संस्कृत साहित्य तथा राष्ट्रभाषा हिन्दीके क्रमिक विकासके अध्ययनके लिअे भी आवश्यक है और भारतीय साहित्यमें अुसका महत्वपूर्ण स्थान है। सिद्धराजके पश्चात् कुमारपालके शासन-कालमें भी अनहिलवाडामें अभूतपूर्व साहित्यिक अेवं सांस्कृतिक अुत्थान हुआ। आचार्य हेमचन्द्र, अुनके सम-सामयिक तथा शिष्योंने विशाल साहित्यकी रचना की है।

रंगमंच और नाट्य-प्रयोग

सिद्धराज तथा कुमारपालके समय संस्कृत नाटकोंकी रचनाके साथ ही अुनके सफल प्रयोग भी किअे जाते थे। गुजरातमें लिखे गअे दो दर्जन संस्कृत नाटकोंका महत्व आज भी अुल्लेखनीय है। अितिहासमें अिस बातके स्पष्ट अुल्लेख मिलते हैं कि सिद्धराज कभी-कभी वेश-परिवर्तनकर नाट्याभिनय देखने जाया करते थे। अुसके अुत्तराधिकारी कुमारपालके जीवनसे सम्बद्ध मोहराज पराजय नाटकका अभिनय कुमार-विहारमें महावीरकी मूर्तिकी स्थापनाके समय हुआ था। अुस समयके अनेक नाटकोंके अभिनयके विवरण मिलते हैं।

सांस्कृतिक पुनरुत्थान

गुजरातकी राजधानी अनहिलवाड़ा (पाटन) देशकी प्रमुख सांस्कृतिक नगरी बन गअी थी। साहित्य, कला और सांस्कृतियोंका जैसा यहाँ संगम देखनेको मिलता है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाओंमें यहाँ अनेक शताब्दियोंतक साहित्य रचना हुअी जो अुस समय यहाँ प्रचलित रही होगी। मूलराजसे कर्णवघेलतक अनेक सहस्र अुल्लेख्य ग्रन्थोंका प्रणयन हुआ। अिनमेंसे अनेक अभीतक अप्रकाशित हैं। ये अधिकतर जैन-भण्डारोंमें पड़े हैं जिन्हें कतिपय विद्वानों-को छोड़कर कोअी देख भी नहीं सकता। महान् संस्कृति-प्रेमी और प्रख्यात साहित्य-निर्माता वस्तुपालने यहाँ अेक विशाल पुस्तकालयकी स्थापना की थी। अिसमें संस्कृतके अनेक अैसे दुर्लभ ग्रन्थरत्न हैं, जो अन्यत्र कहीं भी प्राप्त नहीं।

प्रिय-पथके यह शूल मुझे अलि प्यारे ही हैं!

× × ×

ओढ़े मेरी छाँह
रात देती अुजियाला
रज-कण मृदु पद चूम
हुअे मुकुलोंकी माला!

मेरा चिर अितिहास चमकते तारे ही हैं!

× × ×

विरह बना आराध्य
द्वैत क्या कैसी बाधा!

खोना पाना हुआ जीत वे हारे ही हैं!
प्रिय-पथके यह शूल मुझे अलि प्यारे ही हैं!

—श्री निराला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य-सृजनमें अनुभूतिका स्थान

श्री केदारनाथ मिश्र 'प्रभात'

चाहे जिस प्रकारका निर्माण हो अुसके लिअे आधार-की आवश्यकता होती ही है। आधार-रहित निर्माणकी कल्पना भी असम्भव है। साधारणतः अवलम्ब अथवा आश्रयको ही आधार कहते हैं। अुसके मूलमें कअी तत्व होते हैं। ये विविध तत्व जब अपना पृथक अस्तित्व खोकर अेकाकार हो जाते हैं तब निर्माणके अुतरनेकी भूमिका तैयार होती है। अर्थात् तभी निर्माणका कार्य आरम्भ होता और आगे बढ़ता है। आदि-नियामक ब्रह्माको भी अिन आधार–तत्वोंकी आवश्यकता पड़ी थी। जब तक अिन तत्वोंकी अुपलब्धि न हुअी तब तक सृजनारम्भ न हो सका। अिन तत्वोंके जानने-समझनेके लिअे ब्रह्माको कअी युगोंतक कठोरातिकठोर साधनाअें करनी पड़ी थीं।

साहित्य-निर्माणके सम्बन्धमें भी यही बात लागू है। साहित्य भी अेक संसार है। वह तत्वोंका, विचारोंका संसार है और अुसका महत्व अिस स्थूल, दृश्य संसारसे किसी प्रकार कम नहीं है। सत्य तो यह है कि साहित्य-संसार अिस मरणशील स्थूल जगत्को प्रत्येक अवस्थामें प्रभावित करता रहता है जिसके कारण विचारोंकी आकृतियोंके साथ-साथ कार्य-कलापकी पद्धतियाँ भी बदलती रहती हैं। युगपर युगका निर्माण होता है, अवस्थाअें और स्थापनाअें नव-नवीन रूप ग्रहण करती हैं अेवं समाज तथा जीवनको नअी मान्यताअें, नअे स्तर और नअे स्वर मिलते हैं।

साहित्य-निर्माणके आधारमें जो अनेकानेक तत्व पाअे जाते हैं अुनमें अनुभूतिका अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। यों तो प्रत्येक तत्वकी अपनी विशिष्टता है। तुलनात्मक दृष्टिसे हम अिनमेंसे किसीको भी निम्न-कोटिका नहीं कह सकते। मानव-शरीरके जितने अंग अवयव हैं, सबका अलग-अलग महत्व है। सबके पूर्ण सहयोगमें ही शरीरका सौष्ठव निहित है। यह कहना कठिन है कि आँखें अधिक महत्वपूर्ण हैं या हाथ-नाक अधिक महत्वपूर्ण है या मुख। यदि शरीरका अेक भी अंग अथवा भाग खण्डित हुआ तो सम्पूर्ण शरीर दोष-युक्त हो जाता है। साहित्य-निर्माणके आधारगत तत्वोंके विषयमें भी यही बात कही जा सकती है। परन्तु अनुभूतिको अत्यंत महत्वपूर्ण माननेका कारण यह है कि अुसके द्वारा विचारोंका संचालन होता है और विचारोंके लिपि-बद्ध रूप-भण्डारको ही साहित्यकी संज्ञा मिलती है।

अनुभव, परिज्ञान, अुपलब्धि, तथा समवेदनाकी अेकरूपताको अनुभूति कहते हैं। किसी-न-किसी अर्थमें ये चारों अनुभूतिके पर्यायवाची हैं–अेक विशिष्ट मनोदशा के संज्ञापक, मानस-आवेगसे ओतप्रोत जिनका स्वर अनुभूतिकी झंकारोंमें बार-बार बज अुठता है। न्यायके अनुसार अनुभूतिके चार भेद माने गअे हैं। जैसे प्रत्यक्ष, अनुमिति, अुपमिति और शब्दबोध। जो वस्तु या दृश्य नयनगोचर है, आँखोंके सामने है, स्पष्ट, सीधा और समीप है अुससे प्रत्यक्ष ज्ञानकी अुपलब्धि होती है। अनुमान, परामर्श, या तर्कसे अुत्पन्न ज्ञानको अनुमिति कहते हैं। अुपमा या सादृश्यसे अुत्पन्न ज्ञान अुपमितिकी संज्ञा पाता है। शब्दोंको गिनकर मनन-चिन्तनके पश्चात् जिस ज्ञानका बोध हो अुसको शब्द-बोध कहा जाता है।

अनुभूतिका यह पारिभाषिक विश्लेषण साहित्यको अमान्य नहीं है। प्रत्युत् साहित्य-कला-मर्मज्ञ अनुभूतिको साहित्यका प्राण और आत्मा मानते आअे हैं। सामान्यतः गद्य-पद्य सब प्रकारके ग्रन्थोंके समूहका दूसरा नाम साहित्य है जिसमें सार्वजनिक हित-सम्बन्धी स्थाअी विचार रक्षित रहते हैं। दूसरे शब्दोंमें हम कह सकते हैं कि विचार ही साहित्य है। विचार और ज्ञान अेक दूसरेके पूरक हैं, अन्योन्याश्रयी हैं। दोनोंका कार्य-कारण सम्बन्ध है। क्रौंच-पक्षीके वधसे अुत्तेजित महर्षि वाल्मीकिके विचार संगीत बनकर फूट पड़े। कालान्तरमें यह विचारधारा, ज्ञानके स्फुरणसे अनुभूति बनी और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर संसारभरकी, युग-युगोंकी अनुभूति बन गअी। रामायण–जैसे सार्वजनिक मांगल–साहित्यके मूलमें विचार और ज्ञानका यही सतत आन्दोलन है; अनुभूतिका यही चिरस्पर्श है जिससे मन-मस्तिष्ककी चेतनाअें जागती हैं, अंगड़ाअी लेती हैं, और वाणीकी कृपासे अक्षर बन जाती हैं।

अिस प्रकार हम देखते हैं कि साहित्य-निर्माणके मूलमें, तात्विक दृष्टिसे प्रवृत्तियाँ चाहे जितनी काम करती हों, परन्तु अुसकी प्रेरक शक्ति अनुभूति ही है। अिसीलिअे अनुभूतिको साहित्यकी आत्मा मानते हैं। सम्पूर्ण भारतीय साहित्य अिसका प्रमाण है। संसारका प्राचीनतम ग्रन्थ, ऋग्वेद, अनुभूतियोंका भण्डार है। भारतीय आर्य प्रकृत्या भावुक और प्रकृति–प्रेमी थे। अुनका हृदय कृतज्ञताके पुलकसे आनन्द-विह्वल था। अिस देशकी सुदूरतक फैली हुअी सुजला सुफला भूमिने अपनी वैभव-भरी वन-वीथियों और हरियालियोंके अमृत-प्रभावसे अुनके मन-प्राणोंको आन्दोलित किया। अिस सौभाग्य-समन्वित भू-खण्डके प्रत्येक कणमें आर्योंने सौन्दर्यकी अपूर्व अभिव्यक्तिका अनुभव किया, तृण-तृणमें,तिनके-तिनकेमें भविष्यकी अपार सम्भाव्यताओंको निमन्त्रण देते हुअे पाया; पत्र-पल्लवकी प्रत्येक मर्मर-ध्वनिमें आत्माकी पुकारको सुना और अुन्होंने मन्त्र-मुग्ध होकर प्रकृतिसे तादात्म्य स्थापित किया। अुनके मनकी यही गहन अनुभूति कहीं आशा बनी कहीं विश्वास; कहीं आनन्दकी नूपुर-ध्वनि बनी, कहीं अुल्हासका अुन्मुख नृत्य; कहीं अन्तर्चेतनाके प्रांजल विकासकी वाणी बनी, कहीं वाणीके मर्मका मनो-मुग्ध-कारी पराग; कहीं अिस परागकी आग; कहीं अिस आगके भीतर बसनेवाला अमर-अनुराग। आर्योंने पहली बार, अिसी पवित्र भू-खण्डपर, बाह्य-विश्वके आलोकमय दर्पणमें अपने हृदय और मस्तिष्कके सम्पूर्ण सौन्दर्यको प्रतिबिम्बित पाया और बाह्य विश्वके समस्त वैभवको अपनी संगीतमअी साँसोंपर थिरकते हुअे देखा अिस अनुभूतिसे अुस साहित्यका आविर्भाव हुआ जिसके समकक्ष स्थान पानेवाला साहित्य-संसारके किसी भागमें नहीं पाया जाता। अिसी अनुभूतिसे प्रेरणा पाकर मनुष्यने सर्वप्रथम, अपने मनके मानोंके अनुरूप देवता और देवत्वका निर्माण किया। सुप्रसिद्ध दार्शनिक डॉ. राधाकृष्णन्‌के अनुसार मानव-मस्तिष्कको अैसी देन, मानव-हृदयकी अनुभूतियोंका अैसा कृतित्व अन्यत्र देखनेको नहीं मिलता।

स्पष्ट है कि मानव-मनकी अनुभूतियां ही अभिव्यक्तिका रूप धारण करती हैं तब साहित्य-कलाका निर्माण होता है। नृत्य-कला और संगीत-कलाके मूलमें भी यही तथ्य है। परन्तु अिसका यह अर्थ नहीं कि साहित्य तथा कलामें सौन्दर्य, आनन्द अेवम् अुल्लासके अतिरिक्त किसी अन्य रागात्मिका वृत्तिकी अभिव्यंजनाकी गुंजाअिश नहीं है। सत्य तो यह है कि दुःख और पीड़ाकी अभिव्यक्तिके भी दो पक्ष होते हैं। अेक है अुसका कलापक्ष, यथार्थ और आदर्श। दूसरा है अुसका आध्यात्मिक पक्ष। अुत्कृष्टताकी दृष्टिसे दोनोंमें आत्माका प्रतिबिम्बन अपेक्षित है। प्रतिकूल परिस्थितियोंके प्रतिबिम्बनमें भी आत्माके सौन्दर्यका दर्शन कराया जा सकता है। यथार्थ तो यही है कि मनुष्यात्माको कोअी विकार छू ही नहीं सकता। दुखमें, सुखमें आत्मा अेक ही तरह रहती है। आत्माके अिसी रूपके प्रतिबिम्बनको हम अुसका सौन्दर्य कहेंगे। परन्तु आध्यात्मिक पक्षमें आत्माकी पवित्रता अभिव्यक्त होती है। दुख और पीड़ाका कलात्मक मूल्य अभिव्यक्तिकी अुत्कृष्टतामें निहित नहीं है। परन्तु जब यह अभिव्यक्ति आत्माके सौन्दर्य और पवित्रताकी प्रकाश-किरणोंके अुतरनेकी भूमिका बन जाती है तभी दुःख और पीड़ाका सच्चा कलात्मक मूल्यांकन हो सकता है। कलात्मक अभिव्यक्तिकी अनुभूतिसे प्रेम, सहानुभूति, करुणा आदि हृदयकी कोमल वृत्तियाँ जागती हैं और अुनके स्पर्शसे हृदयकी संकीर्णता मिट जाती है। फिर जिस वातावरणका निर्माण होता है अुसमें सभी अेक सूत्रमें बंधे दिखते हैं।

साहित्यमें, विशेषकर काव्य और नाटकमें रसको प्रमुख स्थान दिया जाता है। सामान्यतः प्रेम, हास्य और शोकादि मनोंविकारोंके जो कारण, कार्य और सहकारी कारण होते हैं, वे नाटक और काव्यमें, रति, हास्य, शोकादि अित्यादि भावोंके कारण, कार्य और सहकारी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण न कहे जाकर क्रमशः विभाव, अनुभाव, और व्यभिचारी भाव कहे जाते हैं। अिनसे परिपुष्ट होकर जो स्थाअी भाव व्यक्त होता है वही रस है। साहित्याचार्योंने ब्रह्मानन्दको रसके रसत्वका मूल तत्व माना है। अिस मान्यताके आधारमें भी अनुभूति ही है।

पारिवारिक जीवनके आरम्भमें रसका अर्थ स्वाद ही माना जाता था। जैसे—कटु, तिक्त, मधुर अित्यादि। कालान्तरमें मानव-चेतना जब पर्याप्त रूपसे अुभर आअी और विचार निखर गअे, जब मनुष्य कामिक स्वादका दासमात्र नहीं रहा तब अिसके अर्थमें परिवर्तन हुआ क्योंकि मनुष्य, धीरे-धीरे, शारीरकीय सम्बन्धोंके अतिरिक्त अन्य पारिवारिक सुखोंमें सन्तोष और माधुर्यका अनुभव करने लगेगा। कुछ समय बाद जब मनुष्य सामान्य जीवनस्तरके अूपर अुठकर कलाके नगरमें विचरने लगा और कलाके सौन्दर्य दर्शनसे आनन्दित-पुलकित होने लगा तब रसके अर्थमें फिर परिवर्तन हुआ। वह मात्र सन्तोषका पर्यायवाची न रह सका। अिस प्रकार वसन्त-ऋतुमें वृक्ष-पादप नव-नव सुरभित परिधान धारणकर लेते हैं और नूतन आनन्दकी सृष्टि करते हैं। परिवर्तनका यह क्रम चलता रहा। दिन-प्रतिदिन मानव-अनुभूति अधिकसे अधिक गहरी होती गअी और वह समय आया जब अनुभूतिने रसको ब्रह्मानन्द-सहोदर मान लिया।

अिस प्रकार हम देखते हैं कि भारतीय साहित्यकी प्रवृत्तियाँ बाह्य-विश्वसे अन्तर्जगतकी ओर अुन्मुख हुअीं और भावाभिव्यक्ति व बाह्य अलंकरणके अूपर अुठकर आत्मा और प्राणकी वाणी बन गअी। साहित्य-शास्त्रने रसानुभूतिके माध्यमसे अेवम् आध्यात्मवादने आत्माके दर्शन-निदर्शनके माध्यमसे अेक ही सत्यका प्रतिपादन किया।

रसो वै सः रसं ह्येवायं लब्ध्वानन्दीभवति।

शंकराचार्यके अनुसार कलाकार, शान्तिदर्शी होता है। वह सृजनकी घड़ियोंमें शाश्वत जीवन, शाश्वत सौन्दर्य और शाश्वत सत्यके स्पर्शका अनुभव करता है, और अनुभूतिके अिन्हीं कणोंको लिपिबद्ध करता है तब स्थाअी साहित्यका जन्म होता है। अेकमात्र भारतीय साहित्यमें ही हम अनुभूतिकी अुन प्रकाश-किरणोंको देखते हैं जो प्रेम और भक्तिके बीच स्वर्ण-श्रृंखलाकी भांति चमक रही हैं।

कला और सौन्दर्य-सम्बन्धी भारतीय स्थापनाअें अलंकार शास्त्र और साहित्य-शास्त्रमें सगुम्फित हैं। ये दोनों संज्ञाअें सारगर्भित हैं। अेकका अर्थ है, सौन्दर्यकी सुन्दर अभिव्यक्ति। दूसरी संज्ञाका अर्थ है कि सौन्दर्य-बोध अथवा सौन्दर्यकी अभिव्यक्ति ही आत्माकी चिर संगिनी है। अेकमात्र काव्यात्मक शब्दार्थको ही साहित्य नहीं कहते; मात्र स्वर और भावका संगीतात्मक समन्वय भी साहित्य नहीं है। चित्रकलामें विचारों और रंगोंका मात्र अेकीकरण भी साहित्य नहीं है। अिसी प्रकार मूर्तिकला-गत सौन्दर्य और विरामका सन्धि अेवम् गृह-निर्माण-कला-गत सौन्दर्य और विस्तीर्णताका संयोग मात्र साहित्य नहीं कहा जा सकता। काव्यात्मक शब्दार्थ-गौरव, स्वर और भावकी संगीतात्मक अेकात्मता, विचारों और रंगोंके अेकीकरण, सौन्दर्य और विरामकी सन्धि, अेवम् सौन्दर्य और विस्तीर्णताके संयोगके साथ-साथ साहित्य अनिवार्यतः सौन्दर्य और अनुभूतिकी झंकार भी है। यह सौन्दर्य कलाका सौन्दर्य होता है और यह अनुभूति आध्यात्मिक आनन्दकी अनुभूति होती है।

मानव-मनकी अकिंचित् अनलशिखाअें प्रकाशके स्वर्णांचलको छूनेके लिअे अूपर अुठती हैं। अिसी प्रकार जाग्रत मनुष्यके आलिंगन हेतु प्रकाश, अपनी सन्ध्याओं और अुषाओंके साथ नीचे झुकता है। अिन दोनोंके बीच अेक पवित्र संगम मुस्काता रहता है जिसकी अनुभूति मानवके अस्तित्व और जीवनकी विजयकी द्योतक है।

यह वही पुण्य संगम नभ जहाँ अुतरता
सिन्दूर माँगमें अिस धरतीकी भरने
आनन्द अुतरता जहाँ अमृत ले, मधु ले,
आत्माको चुपके चूम सुहागिन करने।
शुचि पृष्ठभूमिमें अिसी महान-मिलनकी
मानव प्रति-पल पी-पीकर विष-रस दुखका
मानवताको अवदान नया देता है
अिस संगमके मृदु तीर्थ-कणोंके सुखका।

—प्रभात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मराठी कहानी

नअी गृहस्थी

—डॉ० अ० वा० वर्टी

"मृणाल!"

कालीके मन्दिरसे किसीने पुकारा और अिसे सुनते ही मृणाल चौंककर अेकदम खड़ी हो गअी।

स्वर अुसके परिचयका था। अुस स्वरमें भरी हुअी प्रेमकी आर्द्रता अुसके हृदयके लिअे चिरपरिचित थी। पिछले कअी दिनोंसे अुसने यह स्वर न सुना था। फिर कभी मैं यह स्वर सुन सकूंगी, यह आशा भी अुसने त्याग दी थी।

अुस पुकारको सुनते ही अुसके हृदयमें आनन्दकी लहरें अुमड़ अुठीं। थोड़ी देरके लिअे वह अपने आपको भूल गअी—सारी दुनियाको भूल गअी। फिर अुसके होंठ दातोंतले किंचित् दबे। अुसके कोमल नथुने किंचित् फूल गअे। अुसके पुष्ट अुरोज अूपर नीचे होने लगे—

"तुषार! —डरपोक! क्यों आया है अब वह? वह मन-ही-मन क्रोधसे झुँझलाअी।"

नित्यकी भांति आज भी मृणाल अपने घरसे बाहर निकली थी। अुसकी कमरपर गगरी थी। वह रोज सुबह अपने घरसे निकलकर तालाबपर जल भरने जाया करती थी। जिस पगडंडीसे जाती थी, वह नारियल और सुपारीके अूंचे-अूंचे वृक्षोंमेंसे गुजरती थी। आसपास धानके लहलहाते हुअे खेत क्षितिज तक फैले हुअे थे। नवाखालीकी वह सुजला सुफला भूमि मानवोंपर सृष्टि-सौन्दर्य और समृद्धि दोनों हाथोंसे लुटा रही थी।

धानके अुन हरे-भरे खेतोंमेंसे नारियल और सुपारीके वृक्षोंकी शीतल छायामेंसे होती हुअी मृणाल रोज जल भरने जाया करती थी। करीब आधे रास्तेपर कालीका मन्दिर था। अुस मन्दिरकी ओर देखती तो अुसके हाथ आप ही आप जुड़ जाते थे। परन्तु वह शीघ्र ही मनको रोक लेती और अुस मन्दिरकी ओर अेक तुच्छ कटाक्ष फेंकती हुअी आगे बढ़ जाया करती थी।

काली! शक्तिकी देवी! कहाँ गअी वह शक्ति हजारों लोगोंकी गृहस्थियाँ धूलमें मिल गअीं—हजारों लोग कतल कर दिअे गअे। सैकड़ों स्त्रियोंका सुहाग लुट गया—कअियोंको विधर्मियोंकी रखेल बनकर रहना पड़ा। अुस समय क्यों नहीं अिस काली माताने अपनी अष्ट भुजाअें शत्रुपर अुठाअीं।

शक्तिकी अुपासना करनेवाले भक्त-गण बच्चोंकी तरह क्यों भाग गअे? डटकर दुश्मनोंसे लड़े क्यों नहीं? राजपूतोंकी तरह अपनी स्त्रियों और बच्चोंको स्वयं अपने हाथोंसे ही क्यों नहीं मार डाला और फिर लड़ते-लड़ते खुद ही क्यों न काम आ गअे? डरपोककी तरह अपनी स्त्रियों और बाल-बच्चोंको क्रूर भेड़ियोंके मुंहमें छोड़कर वे क्यों भाग गअे?

रोज आते-जाते वह मन्दिरको देखा करती। अुसके आसपास बहुतसे पेड़ मन-माने बढ़ गअे थे। भीतर मकड़ियोंने जहाँ-तहाँ जाले बुन रखे थे। जाले-धोंसे पड़ गअे थे। कअी दिनोंसे अुसकी सफाअी नहीं हुअी थी। कअी दिनोंसे वहाँ दिया न जला था—वहाँका घण्टा न बजा था। मन्दिरको हर तरहसे भ्रष्टकर देनेमें मुसलमानोंने कुछ भी न अुठा रखा था। वहाँ जाते ही बड़ी दुर्गन्ध आती थी। नाकको अंचलसे दबाअे बगैर अुसके नजदीक जाना असम्भव हो गया था—

किसी समय—अेक वर्ष पहले ही पूजाके दिनोंमें अिसी मन्दिरमें बहुत बड़ा अुत्सव हुआ करता था। घण्टा-निनाद और शंखकी पवित्र ध्वनिसे सारा वातावरण निनादित हो अुठता था। नारियल और सुपारीके वृक्ष आनन्दसे सिर हिलाकर झूमने लगते थे। कालीके जय-घोषसे सर्वत्र आनन्द और समृद्धिका वातावरण फैला रहता था—

और आज? अुसी कालीकी यह कैसी विडम्बना हो गअी है? काली ही की क्यों—अुसके सारे भक्तोंकी—मेरी भी—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दंगेकी भयानक आग भड़क अुठी थी। घर-बार जल रहे थे। खूनकी नदियाँ बह रही थीं। चीखों और चीत्कारोंसे आसमान फटा जा रहा था--

और लोग भाग रहे थे-जान लेकर भाग रहे थे-- औरतों और बच्चोंको छोड़कर भाग रहे थे-स्त्रियाँ बच्चोंको छोड़कर भाग रही थीं--

मुझे छोड़कर तुषार भी अिसी तरह भाग गया था-- और अब मैं फजलुलके साथ रह रही थी-अुसकी औरत-अुसकी रखैल-अुसकी दासी होकर--

"मृणाल!" — अुसके कानोंमें फिर वही कातरतासे भरी आवाज आअी। तो वह विचार तन्द्रासे जागकर होशमें आअी। अुसने मन्दिरके बरामदेकी ओर देखा। वहाँकी गंदगीमें दीवारकी आड़में छिपकर बैठे हुअे तुषारका मुंह अुसे दिखाअी दिया--

तुषार! मेरे पतिदेव-जिन्हें मैंने प्राणोंसे भी अधिक प्यार किया, जो मेरे स्वामी थे-जिन्हें जन्म-जन्मान्तर में पतिके रूपमें पानेके लिअे मैंने अनेक व्रत किअे थे-और जो मुझे भी अपने प्राणोंसे अधिक चाहते थे और जिनके सहवासमें तीन वर्ष मैंने स्वर्ग-तुल्य आनन्दमें व्यतीत किअे-वही तुषार बाबू?

किसी मैदानमें दो मस्त हाथियोंकी भिड़न्त शुरू हो जाअे अुस तरह मृणालके मनकी स्थिति हो गअी। अेक ओरसे तुषारको आया हुआ देखकर अुसके मनमें आनन्दका सागर अुमड़ने लगा और अुसी समय दूसरी ओरसे तुषारके प्रति अुसका त्वेष अुबल पड़ा। वह अुसी तरह निश्चल खड़ी रही।

"मृणाल मैं तुमसे मिलने आया हूँ-" तुषारने कहा।

वही है यह आवाज-जिस आवाजने मेरे कानोंमें प्रेमामृतके शब्द ढाले थे। वही है यह भावनावशता-वही है प्रेमकी वह आर्द्रता-वही है यह....

"मृणाल जरा मुझसे बोलो न? मैं तुमसे बहुत-बहुत बातें करना चाहता हूँ।"-तुषारने कहा।

मृणालके हृदयमें अुथल-पुथल मच गअी। पतिपर अुसका जो क्रोध था अुसे वह क्षण भरके लिअे भूल गअी। काँपते हुअे पैरोंसे वह मन्दिरके पास गअी।

तुषार वहाँ बैठा हुआ था। अिस तरह भयभीत और छिपा हुआ जैसे शिकारी कुत्तेसे पीछा किअे जानेपर कोअी खरगोश बैठता है। अुसकी आँखोंमें प्यार था और भय भी।

मृणालको लगा कमरपर रखी गगरी फेंक दूँ, अेकदम दौड़ती हुअी जाअूँ और अुसके गलेमें बाहें डाल दूँ, अुसकी आंखोंपर आअे बालोंमें अंगुलियाँ चलाअूं....

परन्तु वह अपने स्थानसे हिली नहीं। पलकोंको न हिलाते हुअे वह तुषारकी ओर देखती हुअी निश्चल खड़ी रही।

अुसकी अुजड़ी हुअी आंखोंको देखकर तुषारके हृदयमें हलचल मच गअी। वह भावनावेशसे बोला, "मृणाल, मैं तुम्हें लेने आया हूँ—तुम्हें अपने साथ कलकत्ता ले जानेके लिअे आया हूँ।"

"मुझे लेने आअे हो?" मृणालने पूछा-फिर मुझे छोड़कर भाग क्यों गअे थे? अुसी समय अपने संग क्यों नहीं ले गअे?

"मृणाल माफ कर दो मुझे। अुस समय क्या हुआ और कैसे हो गया अिसका मुझे जरा भी ज्ञान नहीं है। मुझे सिर्फ अितनी ही याद आती है कि अुस समय मैं बहुत बुरी तरहसे डर गया था-सभी लोगोंको अुस समय भयने घेर लिया था, अुसी तरह मुझे भी घेर लिया था। मेरी विचार शक्ति अुस समय नष्ट हो गअी थी। मैं क्या कर रहा हूँ, अुस समय मुझे अिसका भी कोअी पता न था। दूसरे लोग भागने लगे थे और मैं भी अुनके साथ भागने लगा।"

"अुस समय आपको मेरी याद न आअी?..." मृणालने पूछा।

"नहीं आअी।" -तुषार भावनाकुल स्वरमें बोला-"मृणाल मैं कायर बन गया था। अब मुझे स्वयं अपनेपर शर्म आती है। अपने प्राणभी मैं न रखता। परन्तु मुझे आशा लगती थी कि कभी-न-कभी तुम मुझे जरूर मिल जाओगी और हम लोग फिरसे अपनी गृहस्थी आरम्भ करेंगे। अिसी आशापर मैंने अपने प्राण अटका-कर रखे हैं। मृणाल चलो, मेरे साथ कलकत्ता चलो।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृणाल खिन्नतासे हँसी और बोली– "यह अब कैसे सम्भव है ?"

"क्यों, क्या अब तुम मुझसे प्यार नहीं करती हो?"

"यह मैं कैसे कहूँ? अुस समय जो भयंकर आग लगी थी, हो सकता है अुसमें मेरा प्रेम भी जलकर राख हो गया हो। मैं कुछ नहीं जानती–कुछ भी मेरी समझमें नहीं आता। अुस समय जो मैंने बरदाश्त किया–अुसके सामने किसी भी पवित्र वस्तु या भावनाका जीवित रहना कैसे सम्भव हो सकता है?"–मृणालने कहा। अुसकी दृष्टि कालीके मन्दिरकी ओर गअी। मानो अनजाने वह यह सूचित कर रही थी कि अुस मन्दिरकी तरह ही मेरे मनकी भी स्थिति हो गअी है।

"अैसा न कहो मृणाल ! मैं तुमसे अब भी पहले जैसा ही प्यार करता हूँ और मैं जानता हूँ कि तुम भी मुझपर पहलेकी तरह ही अनुरक्त हो। यह कभी सम्भव ही नहीं हो सकता कि मेरे प्रति तुम्हारा प्रेम थोड़ा भी कम हुआ हो।"

"कौन जाने ? परिस्थिति बदल गअी है। लोग बदल गअे हैं। भावनाअें भी बदली हुअी हैं।" विषण्ण स्वरमें मृणालने कहा। फिर अुसका स्वर किंचित् क्रोधायमान हो गया। वह बोली– "आप मुझे छोड़कर चले गअे–अुस कसाअीके साथमें मुझ अकेलीको छोड़ गअे ? आप मुझे प्राणोंकी तरह रखा करते थे–फिर यह आप कैसे कर सके ?"

तुषारकी आँखोंसे आंसू बहने लगे। वह रुद्ध कण्ठसे बोला—

"मृणाल, मैंने अभी कहा न कि मैं कायर बन गया था। मैं क्या कर रहा था, यही अुस समय मेरी समझमें नहीं आता था–पर प्यारी मृणाल, बीती बातोंको भूल जाओ अब। कलकत्तेमें मैंने अेक दूकान खोली है। अच्छी चल भी रही है। जब मैं वहाँ ठीक तरहसे जम गया तो अब अपनी मृणालको लेने आया हूँ। चलो, चलती हो न् मेरे साथ ?"

"आपके साथ मैं चलूं ?"—क्षण भर अुसका स्वर आनंदकी भावनासे खिल गया। फिर रुद्ध कण्ठसे बोली–"यह अब कैसे हो सकता है ? मैं अब फजलुलकी रखैल हूं। वही अब मेरा स्वामी है।"

"मृणाल तुम्हें यहीं रहना अच्छा लगता है क्या?"

"हाँ, यहीं–अिसी नरकमें पड़े रहनेके लिअे अब मैं मजबूर हूँ। मेरी किस्मतमें अब यही लिखा है।"

"नहीं मृणाल–अैसा कभी नहीं होगा। तुम मेरे साथ चलो। अिन बीचके दिनोंको हम भूल जाअेंगे। और फिर नअी गृहस्थी शुरू करेंगे। कलकत्तेमें मेरा अेक छोटासा घर है। वह अपने स्वामिनीकी बड़ी आतुरतासे प्रतीक्षा कर रहा है।"

"यह अब कैसे सम्भव है? अिस भ्रष्ट देहसे मैं तुम्हारी गृहिणी अब किस तरह बनूं ?–मैं जीवित भी न रहती–मुझे कअी बार लगता कि प्राण दे दूं–परन्तु फिर सोचती कि क्यों मैं प्राण दूं ? मेरे पति जो मुझे छोड़कर भाग गअे हैं, भारतमें कहीं-न-कहीं आनन्दमें होंगे–अुनके लिअे मैं क्यों प्राण दे दूं ?–और अिसीलिअे मैं आजतक अिस नरकमें भी जी रही हूँ।"

"मृणाल तुमने प्राण नहीं दिअे यह बड़ा अच्छा किया। यदि तुम प्राण त्याग देतीं तो मैं भी जीवित नहीं रह सकता था–पर अिन बातोंको छोड़ो। तुम लौटकर मेरे साथ आओगी, सिर्फ अिसी अेक आशापर मैं अबतक किसी तरह जी रहा हूँ। और अिसीलिअे अनेक संकटोंका सामना करता हुआ मैं यहाँ आया हूँ। मैं बिल्कुल गुप्त रूपसे आया हूँ। हम लोग आज शामको अन्धेरा होते ही यहाँसे चल देंगे।"

तुषार बातें कर रहा था। अुसका हर अेक शब्द प्रेमसे सराबोर था।

मृणालको अुसके शब्द अत्यन्त मीठे लगते थे। भविष्यकी आशाओंको खिलानेवाले शब्द थे वे। बीचके समयको लुप्त कर देनेकी शक्ति थी अुनमें। वे शब्द मृणालके दिलपर जादूकासा असर कर रहे थे। अुसके मनपर मोहनी मन्त्रका-सा प्रभाव पड़ रहा था। अुसकी अुजड़ी आंखोंमें अेक विशिष्ट भावनाकी झलक चमकने लगी। तुषार कह रहा था—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मृणाल आज शामको तुम यहीं आ जाना। अिस मन्दिरमें मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करता रहूँगा। तुम्हारे आते ही हम दोनों भाग चलेंगे–कलकत्ता चलेंगे–अपने जीवनकी टूटी श्रृंखलाको फिर जोड़ देंगे–मृणाल आओगी न?"

"आअूंगी।" –मृणालके मुंहसे शब्द निकले। "आओगी?" –हर्षविभोर होकर प्रसन्नताके स्वरमें तुषार बोला–"जरूर आओगी न? बिल्कुल पक्की बात?"

"हां आअूंगी।"–मृणालने कहा–"मैं जाती हूँ अब। बहुत देर हो गअी है। कोअी शक करेगा।"

अुसने तुषारकी ओर अेकबार प्रेम-भरी दृष्टिसे देखा और फिर तेज कदम बढ़ाती हुअी वह घरकी तरफ जाने लगी। थोड़ी दूर जाकर अुसने अेक बार मुड़कर पीछे देखा। तुषार गरदन अूंची अुठाकर अुसकी ओर पागलकी तरह देख रहा था।

मृणाल घरके नजदीक आअी। अुसने देखा भारी भरकम देहवाला फजलुल द्वारपर ही खड़ा था। मृणाल विचारोंमें खोअी हुअी ही रास्ता तय कर रही थी। फजलुलको देखते ही वह होशमें आअी। जैसे स्वप्न-सृष्टिसे सत्य सृष्टिमें अुतर आअी हो।

"क्यों री, आज पानी लाने अितनी देर क्यों हुअी तुझे?"–फजलुलने संदेह और क्रोध भरे स्वरमें पूछा।

"अं?"–मृणालने घबड़ाते हुअे कहा–"तालाबपर रोशन बी मिल गअी थीं। अुनसे बातें कर रही थी।"

"रोशन बी–वोशन बी मैं कुछ नहीं जानता।" फजलुल अुसकी ओर आग्नेय नेत्रोंसे देखता हुआ चिल्लाया "मैंने तुझे सख्त ताकीद कर दी है न कि तुझे किसीसे भी बातें न करनी चाहिअे?"

मृणालके दिलमें फजलुलके प्रति तिरस्कार भरा हुआ था। अुसके हाथ निरपराधियोंके रक्तसे रंगे हुअे थे। अुसकी आँखें राक्षसी काम-वासनासे डबडबा रहीं थीं। मृणालको अुसकी घृणा आती थी। वह अुसे स्पर्श करता कि अुसे अुबकी-सी आने लगती थी। परन्तु वह अुसकी बीवी बनकर रह रही थी। अिस नरक यातनाको सहते हुअे अुसके मनमें यह विचित्र सन्तोष होता था कि अैसा करनेसे वह डरपोक और कायर तुषारसे बदला ले रही है।

"तू झूठ बोल रही है।"–फजलुल गरजा। मृणालके चेहरेपर आज अेक अनोखा तेज चमक रहा था, यह बात फजलुलकी तेज शिकारी नजरोंसे छूट न सकी। जब वह आ रही थी तो वह अुसे देख रहा था। अुसका सुखके सपनोंमें खो जाना और मस्तीसे झूमते हुअे आना। फजलुल ताड़ गया कि जरूर कोअी खास बात है। अुसने धमकाकर पूछा–

"कौन मिल गया था तुझे? किससे घुल-घुलकर बातें कर रही थी?"

मृणालका हृदय धक-से हो गया। वह डर गअी। अुसे शक होने लगा कि अुसने तुषारसे जो बातें कीं कहीं फजलुलने अुन्हें सुन तो न लिया हो। कालीका मन्दिर अुसके घरसे करीब अेक फर्लांग दूर था और वहाँ अुसे किसीसे बातें करते हुअे देख लेना भी फजलुलके लिअे कोअी असम्भव बात न थी। यदि यह बात होगी तो वह तुषारकी बोटी-बोटी काटे बगैर न रहेगा और फिर मेरी भी खैर नहीं। अेक क्षण ही मृणालके मनमें बड़ा तूफान अुठा। फिर वह तूफान अेकदम शान्त हो गया। अुसने मनमें अेक विचार दृढ़ किया। सच है, स्त्री-चरित्रको कौन जान सकता है?

मनमें धीरज धरकर वह बोली—"तुमसे क्या कहूँ? मैंने कभी नहीं सोचा था कि किसीकी यह भी हिम्मत हो सकती है कि वह मुझे–तुम्हारी बीबीको रास्तेमें रोक ले।"

"क्या? क्या कहा? फजलुलकी बीबीको किस सालेने रोकनेकी हिम्मत की? बता, बता किसने रोक लिया था तुझे?"

"तुषार बाबू आअे हैं।"

"तुषार बाबू तेरा खाविंद?–तुझे यहीं छोड़कर जो डरसे भाग गया था वही कायर तुषार?"

"हाँ, अुन्हींने मुझे रोक लिया था।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अभी जाकर कत्ल कर डालता हूँ अुसको। क्या अुसने फजलुलकी बीबीको किसी भगोड़ बाबूकी स्त्री समझा है?–क्या कहा अुसने ? " मुट्ठियां बांधते हुअे फजलुलने पूछा।

"वे बोले, चलो हमारे साथ, हम दोनों कलकत्ता भाग चलें।"

"और मेरे जिन्दा रहते हुअे? सारी दुनियाँ अुलट दूंगा–पर तुझे मैं वहाँसे खींचकर ले आअूंगा। क्या कहा तूने अुससे ?"

"मैंने कहा––चलूंगी।"

"क्या?" शेरकी तरह दहाड़कर फजलुल बोला, "तू फिर अुस हीजड़ेके साथ जाअेगी? फिर मैं तुझे जिन्दा छोड़ दूंगा क्या?"

कहकर फजलुल दो कदम अुसकी ओर बढ़ा। वह अुसपर आक्रमण करने ही वाला था कि––

"पर जरा सुनो तो"––मृणाल अुसकी ओर अेक प्रेम भरी निगाह डालकर बोली,–"अुन्हें जालमें फँसानेके लिअे ही मैंने यह स्वीकार कर लिया है। आज शामको कालीके मन्दिरमें वे मेरी प्रतीक्षा करनेवाले हैं।"

"शाबास मेरी जान, शाबास–" फजलुल खुश होकर बोला," बड़ी चालाक और होशियार है तू। कालीके सामने आज ही शामको मैं अुस बकरेको हलाल कर डालता हूँ। देखना तो!––"

फजलुलने अपना छुरा निकाला। अंगुलियोंपर फेरकर अुसकी धारकी परीक्षा की। जब अुसे अितमीनान हो गया कि धार अच्छी तेज है तो अुसने अुसे अपनी जेबमें रख लिया और दिलमें बेचैनी दबाअे वह वह अिधर अुधर टहलने लगा।

शाम हुअी तो फजलुल जेबमें छुरा छिपाअे घरसे बाहर निकला। मृणालने अुस राक्षसको घरसे बाहर जाते हुअे देखा। अुसके मुखपर अब पूर्ण सन्तोष झलक रहा था। फजलुल कब लौटकर आता है, अिसकी सांस रोककर प्रतीक्षा कर रही थी वह।

सूर्य भगवान तेजीसे अस्ताचलकी ओर गमन कर रहे थे। नारियल और सुपारीके वृक्षोंकी छायाअें तनी जा रही थीं और अस्पष्ट हो रही थीं। समीपके घरोंके छप्परोंसे शामकी रसोअीका धुवाँ शान्तिसे चक्कर काटता हुआ आकाशमें चढ़ रहा था। मृणाल दरवाजेमें खड़ी हुअी थी और मन्दिरकी तरफ जा रहे फजलुलकी ओर देख रही थी।

फजलुल अुसकी दृष्टिसे ओझल हो गया। सायंकालका रात्रिमें रूपान्तर हो रहा था। अिसी समय मृणालको भास हुआ जैसे अुसने कालीके मन्दिरकी तरफसे आनेवाली अेक अस्पष्ट-सी चीख सुनी––

थोड़ी ही देरमें फजलुल लौट आया। अुसके हाथमें छुरा था और अुसमेंसे खून टपक रहा था।

"ठीक छातीमें ही घुसेड़ दिया था।"–सीना तानकर फजलुलने कहा–अेक ही वार किया था। सीधा कलेजेमें घुसेड़ा–और अेक मिनिटके भीतर ही सारा खेल खत्म हो गया।"

मृणालने अुसकी ओर देखा। फजलुलने मन-ही-मन सोचा–"औरतें बहादुरोंपर ही मरती हैं। देखो, यह छोकरी कितनी खुश है?" अिस विचारसे वह बड़ा खुश हुआ।

"देखूँ-देखूँ–वह खून भरा हुआ छुरा"–मृणाल अेकदम पागलकी तरह दौड़ती हुअी अुसकी ओर बढ़ी और फजलुल कुछ कहे अिससे पहले ही अुसने वह छुरा अुसके हाथसे ले लिया। अुसने अुस छुरेको अूपर अुठाया और पागलकी तरह हंसकर बोली–"अुनके हृदयमें ही घुस गया?–यह खून अुनके हृदयका ही है––"

अुसकी आँखें अेक विचित्र तेजसे चमकने लगीं। अुस तेजके कारण फजलुल भी जहांके तहाँ खूंटेकी तरह स्थिर खड़ा रहा। मृणालने कहा––

"मुझे अपने साथ ले जा रहे थे वे। अिस भ्रष्ट स्त्रीको साथ ले जाकर फिर अपनी गृहस्थी शुरू करनेवाले थे। परन्तु यह अब कैसे सम्भव था? फिर हमारी गृहस्थी पहलेकी तरह कभी हो सकती थी क्या? नहीं, नहीं। यह कदापि सम्भव नहीं था और अेक दूसरेके बिना हम जी भी नहीं सकते थे–अुनसे मैं प्रेम करती हूँ–पहले जैसा ही प्रेम करती हूँ।"

अुसने वह खूनसे तर-बतर छुरा अूपर अुठाया और क्षणार्धमें अपने हृदयमें घुसेड़ लिया–और अिस विचित्र रीतिसे दो हृदयोंका पुनर्मिलन हुआ।

"हमारी नअी गृहस्थी?"–मृणालकी मुद्रापर असीम शान्ति छाअी हुअी थी। वह पुटपुटाअी––"अब अपनी नअी गृहस्थी अगले जन्ममें–नाथ, आपके पीछे-पीछे ही आ रही हूँ मैं––!"

(मराठी–"लोकसत्ता"–से साभार– अनुवादक श्री रा० र० सर्वटे)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक अंग्रेजी साहित्य–२

ब्रिटेनका स्वप्नदर्शी कवि. . .वाल्टर दि ला मेयर

—श्री ओम्प्रकाश आर्य, लन्दन

अभी हालहीमें ब्रिटेनका सबसे वृद्ध कवि वाल्टर जौन डि ला मेयर चल बसा। ८३ सालकी पकी अुम्रमें अुनकी मृत्युसे शोक करनेवाले अधिक नहीं थे। परन्तु अिस बातके लिअे अफसोस अवश्य किया गया कि अब अुनकी चमकती, दमकती, स्वप्नलोक दर्शाती, तन्मय करती कविता पढ़नेको कम मिलेगी। पर जितना कुछ वे लिख गअे हैं वह अपनेमें ही काफी है। अुन्होंने अपनी पहली कविता तीस सालकी अुम्रमें प्रकाशित की थी; और अन्तिम कविता अस्सी सालकी अुम्रमें। अिस प्रकार सृजनात्मक रचनाके लिअे अुन्हें आधी सदीसे अधिक समय मिला जिसके अन्दर वे अंग्रेजी बोले जानेवाली दुनियामें पर्याप्त ख्याति पा सके।

जो कुछ अुन्होंने लिखा अुसका अधिकांश अंग्रेजी साहित्यकी स्थाअी सम्पत्ति हो गया है। अपने जीवन-कालमें ही अुनकी अितनी ख्याति हुअी कि वे अंग्रेजी साहित्यके अितिहासमें नाम पाने लगे। कविता-संग्रह अुनकी कविताओंके बिना अधूरे समझे जाने लगे और स्कूलके विद्यार्थीतक अुनकी कविताओंको पढ़नेके लिअे बाध्य होते रहे।

हालांकि श्री वाल्टर डि ला मेयर अिस बीसवीं सदीमें हुअे (साहित्यिक कृतियोंके लिहाजसे) तो भी यह आश्चर्यकी बात है अुनपर बीसवीं सदीकी नवीनताओंकी कोअी विशेष छाप नहीं है। अुन्हें सदा स्वप्न देखना, कल्पना करना, सौन्दर्यको वाणी देना अच्छा लगा और अुन्होंने वैसा ही किया। अेक खाते-पीते घरानेमें पैदा-होने और १६ सालकी अुम्रसे लेकर ३४ सालकी अुम्रतक अेक तैल-कम्पनीमें क्लर्क होनेके नाते अुन्हें जीविकाके संघर्षका बोध ही नहीं हुआ। अुसके बाद अुन्हें अेक सरकारी पेन्शन मिल गअी और अुनकी अपनी पुस्तकोंसे अुनकी आमदनी कम नहीं होती थी। अुनकी लाखों प्रतियाँ अुनके जीवन-कालमें बिक पाअीं।

अुन्हें पता नहीं लगा कि बीसवीं सदीके ब्रिटेनमें मजदूरोंको कैसे संघर्ष करने पड़े? भारत जैसे गुलाम देशोंको कैसे आजादी मिली? मिस्र और मलायामें कैसी मुठभेड़ हुअी? हिटलरके विरुद्ध ब्रिटेनने युद्ध कैसे जीता? हवाअी जहाज, रेडिओ, टैलीविजन, रैडार, परमाणु बमका दुनियापर क्या असर पड़ा? वे सदा अपने हाथी दांतकी मीनारमें बैठे रहे और रसकी अनुभूति लेते रहे। अिसे दुनियाका अेक बड़ा साहित्यिक आश्चर्य ही समझना चाहिअे कि संवेदनशील व्यक्तित्वके आगे पिछले पचास सालोंमें क्रान्तिकारी हिला देनेवाले परिवर्तन हो जावें और वह निस्पृह, निर्मोह, निर्लिप्त प्राणीकी तरह अुनके प्रति मुखातिब ही न हो। परन्तु वॉल्टर डि ला मेयरमें यह हमें देखनेको मिलता है।

अुनका जन्म कैन्ट नामक जिलेमें चार्लटन नामक स्थानपर २५ अप्रैल, १८७३ को हुआ था। अुनके पिता फ्रान्सीसी ह्यूगोनोट थे और अुनकी मां स्कॉटलैण्डकी रहनेवाली थीं। प्रारम्भिक स्कूलकी शिक्षाके बाद जब यह देखा गया कि अुनका ध्यान अधिक अध्ययनकी ओर नहीं है तब वे अेक तैल कम्पनीमें क्लर्की करने लगे। अुसमें भी अुनका मन नहीं लगता था तब अपनी कम्पनीकी स्टेशनरीपर कविताअें लिखने लगे। तीस सालकी अुम्रमें अुनकी पहली पुस्तक "साँग्स ऑफ चाअिल्डहुड" (बचपनके गीत) नामक कविता संग्रहके रुपमें निकली। प्रारम्भमें अिसपर अधिक ध्यान नहीं दिया गया। परन्तु अेक दिन वह पुस्तक अेंड्रयू लैंग नामक साहित्यिक आलोचकके हाथ लग गअी और वाल्टर डि ला मेयरका सितारा चमक अुठा।

जिस समय अुन्होंने अपनी पहली पुस्तक प्रकाशित की थी अुस समय अुन्होंने अपना नाम वाल्टर रमाल रखा था। अुसके बाद अुनका पहला अुपन्यास "हैनूब्रोकेन" (१९०४) भी अिसी नामसे निकला। फिर "कवितअें"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१९०६) भी अिसी नामसे निकली और जब १९०८ में अुन्होंने अपनी सरकारी पेन्शन पाअी तब तक अुनका पूरा नाम वाल्टर जौन डि ला मेयर जनताके सामने आ चुका था। अुसके बाद लगभग हर दो तीन सालपर अुनके कविता-संग्रह या कहानियाँ निकलती रहीं। अुनमेंसे कुछ मुख्य जिल्दोंके नाम यों हैं। "कविताअें" (१९१९ से १९३४ तक), "औन दि अेज" (१९३०), "दि लौर्ड फिश" (१९३३), "दि विण्ड क्लोज ओवर" (१९३६), "अर्ली वन मॉर्निंग" (१९३५), "बिहोल्ड दिस ड्रीमर" (१९३६), "लव" (१९४३), "दि बर्निंग ग्लास अेंड अदर पोअेम्स" (१९४५), "दि ट्रैवलर" (१९४७), "विग्ड चैरियट" (१९५१), "प्राअिवेट व्यू" (१९५३), और "ओ लवली अिंग्लैण्ड" (१९५४)।

अुनका वैवाहिक जीवन पर्याप्त सुखी और सन्तोषजनक रहा और वे रोमांसकी खोजमें अिधर अुधर नहीं भागे। अुन्हें जीवनसे प्रेम था अिसलिअे कि वे मृत्युकी विभीषिकाको अच्छी तरहसे समझते रहे। अुनका अध्ययन विस्तृत था और अुनकी लेखनीसे अेक ही चीज दुबारा नहीं निकलती थी, मौलिकता अुनकी सहचरी बनी रही। अुन्होंने बहुत सी कविताअें बच्चोंके लिअे लिखी हैं जिनमें कहीं भी प्रचार और अुपदेशकी प्रवृत्ति नहीं दिखलाअी देती है। अिसलिअे वे कविताअें बच्चोंकी अनेक सन्ततियोंके काम आवेंगी और आती रही हैं।

अैसा कहा जाता है कि अुनका स्वभाव बहुत सरल और मृदु था। अेक आलोचकने तो यहाँतक लिख दिया है कि अुनके व्यक्तित्वमें "अेक पुरुष, अेक नारी, अेक बच्चे और अेक कुत्तेके सब अच्छे गुण अेकसाथ मिलते थे।" अिससे बढ़कर अुनके व्यक्तित्वके लिअे नहीं कहा जा सकता है।

अैसा कहा जाता है कि टैनीसनके बादसे वह पहले अंग्रेज कवि थे जो सौन्दर्य और स्वप्नकी अितनी सहज अनुभूति पाठक या श्रोताके मनमें पैदा कर सकते थे। अुनमें ब्लेकसे बढ़कर बच्चोंको समझनेकी शक्ति थी। अुनके लिअे स्वप्न और कल्पनाका विश्व अुतना ही वास्तविक था जितना चेतना और ज्ञानका विश्व। और अुन्हें दोनों विश्वोंमें क्षणके हजारवें हिस्सेके अन्दर जाने-आनेकी स्वतन्त्रता थी। तथ्य और कल्पनाका यह मिश्रण ही अुनकी कृतियोंमें वह पुट भर देता है जो अपना प्रभाव देरतक और दूरतक पाठक या श्रोतापर बनाअे रखती हैं।

वे सादी चीजोंमें अपना विशेष अर्थ खोजते थे जो कि रोमांसवाद और रहस्यवादके बीच कहींपर खड़े होते हैं जिस स्थानसे वे दोनों तरफ देख सकें। अुन्होंने लिखा है:

In the long drouth of life,
Its transient wilderness,
The mindless euthenesia of a kiss,
Reveals that in
An instant's beat
Two souls in flesh confined
May yet in an immortal freedom meet.
From those strange windows
Called the eyes, there looks
A heart athirst
For heaven's waterbrooks.....

(जीवनके लम्बे कालमें, अुसकी बदलती हुअी विवेकन्यूनतामें, चुम्बनोंको मस्तिष्क विहीन चक्करमें, यह पता लगता है कि अेक क्षणमें दो आत्माअें अपने देहोंमें बन्द होकर भी अमर स्वतन्त्रतामें मिल सकती हैं। अुन विचित्र खिड़कियोंसे जिन्हें आंखें कहा जाता है अेक हृदयकी प्यास दिखलाअी पड़ती है जो कि स्वर्गके जलमय प्रवाहोंकी राह देख रही हो....)

यहाँपर कल्पना भौतिक चित्रसे अूपर अुठकर आगे देखनेकी कोशिश करती है तो भी चुम्बनकी भौतिकता और कम्पनात्मक यथार्थतासे दूर नहीं भागती। यह डि ला मेयरकी अपनी खूबी है। वे नअे, नाजुक, नफीस, नुकीले, नशीले चित्र पेश करते हैं। अेक छलांग रहस्यवादी विश्वकी ओर लगाते हैं। पर दूसरा पैर अिस भौतिक भित्तिपर ही पड़ा रह जाता है। और अिस प्रकारकी अद्भुत सृष्टि मनमोहक बन जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुनपर ब्लेक, डौने, मारवेल, औरेलियन टाअुनसेण्ड आदि अंग्रेजी कवियोंका विशिष्ट प्रभाव पड़ा है। और टामस हार्डीके लिअे तो अुन्होंने लिखा है।

"O ! Master, lorn thy tidings, grievous thy song: Yet thine too this solacing music, as we earthen folk stumble along."

(हे मास्टर! आपकी ज्वार रेखाअें अुतर चुकी हैं। आपका गीत दुखद है। परन्तु आपका ही यह शान्त करुण संगीत है जब कि हम अिहलोक-वादी लड़खड़ाते हुअे जा रहे हैं।)

बीसवीं सदीने ब्रिटेनमें वाल्टर डि ला मेयरके अलावा हार्डी, यीट्स और औलियट नामक कवि पैदा किअे और अिन सबकी जगह अेक साथ समझी जाती है। हालांकि हार्डी अनुसंधानवादी, यीट्स रहस्यवादी और औलियट पलायनवादी रहे तो भी वाल्टर डि ला मेयरको किसी वादके साथ नहीं जोड़ा जा सकता है। कुछ लोग अिन्हें भी पलायनवादी कहते हैं। परन्तु शायद वह सही नहीं है। मेरी समझसे पलायनवादी अुसे कहा जाना चाहिअे जो कि यथार्थताके भौण्डेपनसे डरकर दूर भागनेकी कोशिश करे। वाल्टर डि ला मेयरको यथार्थताका सामना ही नहीं करना पड़ा। वे अेक तरहसे कल्पनाके नशेमें जीवनभर चूर रहे। सौन्दर्य देखते सुनते रहे। रस पीते रहे। गीत लिखते सुनाते रहे। सृजनकी वेदनाअें अनुभव करते रहे। दुनियाकी रफ्तारकी, अुसकी दिशाकी, हवाओंकी, खुश्की और गर्मीकी, अुन्होंने कभी परवाही नहीं की।

अिसलिअे यद्यपि अुन्हें प्रगतिवादी कवि नहीं कहा जा सकता है, और अिसका अुन्होंने कभी दावा भी नहीं किया, अुन्हें प्रगतिकी अनुभूति ही नहीं हुअी। अेक वृत्तमें बैठकर अुसके चारों ओर चक्कर लगानेवालेको प्रगतिका बोध नहीं होता है। वाल्टर डि ला मेयर अैसे ही वृत्तमें बैठे रहे।

अुन्होंने छन्दमय गीत लिखे हैं। व्यंग लिखा है तीखा, कटु और मधु, चरित्र-चित्रण लिखे हैं और बाल साहित्य प्रस्तुत किया है और यह सब अेक धीमे पर निरन्तर विकासके रूपमें सामने आया है। अुनकी लेखनीमें किसी विशेष दर्शनकी छाप नहीं है। किसी मतवादका आग्रह नहीं है। किसी ध्येयके लिअे प्रयास नहीं है। किसी मंजिलकी खोज नहीं है। किसी देवताकी पूजा नहीं है। और अिन सब नकारात्मक खण्डोंके बावजूद भी वह मोहक, मनोरंजक, है। और यह अेक विशेष बात है। कुछ वैसे ही कि बिना हवाअी जहाजका सहारा लिअे आदमी आँख मूँदकर आसमानमें अुड़ आअे और लोग भौंचक देखते रहें।

तब अैसे व्यक्तिका विकास वर्तमान ब्रिटिश समाजमें कैसे हो सका? साम्राज्यकी भयंकर साहसिकताके बीच, युद्धोंके कर्ण-भेदी निनादके बीच, आर्थिक ढांचोंके ज्वालायुक्त संघर्षोंके बीच वे पनपे कैसे? आजके जीवनकी द्रुत आपाधापीमें लोगोंको अुन्हें पढ़नेका, रस लेनेका अवसर कैसे मिला?

अंग्रेजी भद्र लोगोंमें बहुतसे अैसे लोग हैं जिन्होंने अपने सामने अभिनीत होते हुअे भौंडेपनको नजर अन्दाज किया है। लन्दनके वातावरणमें वैसा कर सकना अधिक मुश्किल नहीं है। और अुसके लिअे यह आवश्यक नहीं है कि हर व्यक्ति सुरा-सुन्दरीकी दुनियाको अपनाअे ही। अुसके बिना भी दिल-बस्तगीके अनेक साधन हैं। और आम जनतामें अितने यन्त्रवादी वातावरणके बाद भी, व्यक्तिगत लाभकी आपा-धापीके बावजूद भी रसकी अनुभूति लेनेकी क्षमता नष्ट नहीं हुअी है। और वाल्टर डि ला मेयरका अुत्थान और अुच्च शिखरपर स्थापन अिसका ज्वलंत अुदाहरण है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेलुगु कहानी

चामर-ग्राहिणी

—श्री विश्वनाथ सत्यनारायण

शालिवाहन शकका १०२ वाँ वर्ष। रोम नगरमें अुस दिन अेक महलके सामने लोगोंकी बड़ी भीड़ जमा थी। अुस अुत्सवका कारण हेलीना नामक अेक रूप-वतीका दो मास पर्यंत जनशून्य बड़े-बड़े मरुस्थलोंको पार करते हुअे यात्रा समाप्तकर रोमनगरमें प्रवेश करना था। वह चार वर्ष पूर्व आन्ध्रचक्रवर्ती गौतमी-पुत्र श्री शातकर्णीके यहाँ चामरग्राहिणी बनकर गअी थी। अुसके वापस लौटकर आनेके अुपलक्ष्यमें ही अिस अुत्सवका आयोजन था।

जब वह चार वर्ष-पूर्व आन्ध्र-देशमें गअी थी, अुस समय रोम नगरमें अेक शानदार जलसा मनाया गया था और अुसे सम्मानित करके विदा किया गया था। साधारणतः जो सुन्दरियाँ चामर-ग्राहिणी बनकर जाती हैं, वे १५ वर्ष पर्यंत नहीं लौटतीं। परन्तु हेलीना चार ही वर्षोंमें वापस लौट आअी है। वह अितने अल्प समयमें क्यों वापस आ गअी, किसीको पता नहीं, पर अुतने दूर देशसे आअी हुअी महिला द्वारा भारत और आन्ध्र देशके समाचार जाननेकी अुत्कट अभिलाषासे ही जनता अुसके घरपर अेकत्रित हुअी थी। वह बड़ी धनी होगी। आन्ध्र देशसे मोती, हीरे-जवाहरात, रेशमी दुकूल दन्त-सामग्री, कस्तूरी, अिलायची, लवंग अित्यादि अपूर्व द्रव्य अपने साथ लाअी होगी। अिन अपूर्व द्रव्योंको आन्ध्रके व्यापारी सालमें अेकबार लाकर रोममें बेचा करते हैं। अुनका मूल्य अधिक होनेके कारण बड़े-बड़े रअीस और श्रीमन्त ही अुन्हें खरीदा करते हैं। साधारण प्रजाने अुन्हें देखातक नहीं। लौंग और अिलायचीके स्वादसे भी वहाँके अधिकांश लोग अपरिचित हैं। जायपत्री और लौंगके सेवनसे जिह्वामें होनेवाली रसास्वादकी अनुभूतिका अुन्हें अनुभव नहीं। अिस स्वादका परिचय देनेवाला शब्द भी अुनकी भाषामें नहीं है। अिसलिअे जनता अुसके स्वाद और सुगंधिसे भी अपरिचित है।

हेलीना साधारण परिवारकी लड़की है। गुदड़ीमें प्राप्त माणिक है। रोमनगरके कअी धनिकोंने अुसे पाना चाहा; लेकिन चारवर्ष पूर्व आन्ध्रचक्रवर्तीके अधिकारी चामर-ग्राहिणियोंकी खोजमें आअे थे। साधारणतः चामर-ग्राहिणियोंके चुनावमें जमीदारों तथा राजवंशीय पुत्रियोंको ही प्रधानता दी जाती है। पर हेलीना साधारण परिवारकी कन्या होनेपर भी अपूर्व सौन्दर्यवती होनेके कारण तथा अधिकांश लोगोंकी सिफा-रिशपर आन्ध्र-साम्राज्यके अधिकारियोंने अुसे ले जाना अंगीकार किया था। किन्तु अुन लोगोंने अेक शर्त रखी थी। वह यह थी कि यदि चक्रवर्ती हेलीनाको राजवंशिनी न होनेके कारण स्वीकार करनेसे अिन्कार करें तो दूसरे वर्ष ही अुसे व्यापारियोंके काफिलेके साथ वापस भेज दिया जाअेगा। यह व्यापारी जत्थे आन्ध्र-देशसे सालमें अेक बार रोम जाया करते थे।

आन्ध्रचक्रवर्ती यदि अेक चामर-ग्राहिणीको स्वीकार करते हैं तो अुसके परिवारको २० मन हीरे-जवाहरात तथा मोती दिया करते थे। शेष सुगंधि द्रव्य ४० मन दिया करते थे। वह साधारणतः १५ वर्ष चक्रवर्तीकी चामर-ग्राहिणी बनकर रहा करती थी। चक्रवर्तीके स्वीकार करते समय अुसकी अुम्र १६ वर्षसे अधिक नहीं होनी चाहिअे।

हेलीनाको महाराजने स्वीकार किया। अुसका प्रधान कारण हेलीनाका सौन्दर्य ही है। अुसकी देह-कांति सफेद नहीं—चन्द्रमाको सानपर चढ़ा शहदमें भिगोअे जैसी है। भ्रमर जैसे केश। अुसका समस्त सौन्दर्य अुसके विशाल नेत्रोंमें मूर्तिभूत है। अुसकी पुतलियोंकी कांति अपूर्व अेवं अद्भुत है। अुस रूपसीको देखनेपर चक्रवर्तीने अंगीकार ही नहीं किया; बल्कि अुसे प्रधान चामर-ग्राहिणी बनाया।

चामर-ग्राहिणियाँ अन्तःपुरकी स्त्रियाँ थीं। अुनके भोग राज-भोग थे। वे बाहर निकलती हैं तो पालकियों-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर जाती हैं। कोअी भी आँख अुठाकर अुन्हें देख नहीं सकता। यदि कोअी अुन्हें चामर-ग्राहिणियाँ न समझे तो राज-कन्याअें ही मान लेगा। अुनके शरीरपर शोभित-होनेवाले आभूषण रत्नमय तथा अुनके धारण करनेवाली साड़ियाँ स्वर्णमय हुआ करती थीं। चक्रवर्ती सदा अुनकी अिच्छाअें पूर्ण करते थे। अुन दिनोंमें नारी होकर जन्म लेनेमें दो चरितार्थ थे। प्रथम आन्ध्र-चक्रवर्तीकी रानी होना और द्वितीय चामर-ग्राहिणी बनना।

हेलीना गत चार वर्षोंसे अपने माता-पिताको अमूल्य रत्न, कस्तूरी, जायपत्री, लौंग, अिलायची, पान, सुपारी अित्यादि भेजा करती थीं। अुनके माता-पिता भी अुनका स्वाद रोम-वासियोंको कराते थे। जिन लोगोंने अुनका स्वाद लिया, वे हेलीनाके माता-पिताके भाग्यकी सराहना करते थे। अन्य लोग अुनके स्वादसे परिचित होनेको लालायित रहते थे।

अैसी स्थितिमें हेलीना घर आअी। लौटते समय दो अूँटोंपर अपना सामान लादकर लाअी थी। लोगोंकी यह धारणा थी कि हेलीना अुन सबको अपने नगरवासियोंमें बाँटनेवाली है। फिर जनता अेकत्रित क्यों न होगी ?

हेलीनाको चार दिनतक आराम नहीं मिला। अपने साथ लाअी हुअी भारतीय वस्तुओंके प्रदर्शन तथा थोड़ासा अुनका स्वाद करानेमें वह लगी रही। दस दिनतक यह कार्य चलता रहा।

अिन दस दिनोंसे 'डार्टिमो' बराबर हेलीनाके घर आता रहा। 'डार्टिमो' अेक सम्पन्न जमींदारका पुत्र। हेलीनाके चामर-ग्राहिणी बनकर जानेके पहले ही डार्टिमोने अुससे प्रेम किया था। अुसका प्रेम पानेको अनेक प्रयत्न किअे। हेलीना अेक सामान्य परिवारकी लड़की है। अेक जमींदारके पुत्रका हेलीनासे विवाह करनेसे बढ़कर अुसके माता-पिताको और क्या चाहिअे ? सब अिस सम्बन्धको चाहते थे, पर हेलीनाका हृदय विकल था। अुसने डार्टिमोके प्रेमका तिरस्कार किया। वह अिस बातको प्रकट भी नहीं कर सकती, अिन्कार भी नहीं कर सकती, और स्वीकार भी नहीं कर सकती। वह यह मानती थी कि अिस पृथ्वीपर अुससे बढ़कर सौन्दर्यवती शायद ही होगी।

सौन्दर्य और विवेकके लिअे आत्मज्ञान अधिक होता है और आत्माभिमान भी। अुसके हृदयमें अेक अुत्कट महत्त्वाकांक्षा थी—अेक चक्रवर्तीकी पत्नी बननेकी। जब वह चामर-ग्राहिणी बनकर जा रही थी, अुस समय अुसने कल्पना की थी कि अुसकी अिच्छा अवश्य पूर्ण होगी। अुसके माता-पिताको धन पानेकी आशा थी, पर अपनी पुत्रीका दूर देशोंमें जाना अुतना पसंद नहीं था। हेलीनाके हठ करनेपर ही अुन लोगोंने मान लिया था। अुन्हें मालूम था कि चामर-ग्राहिणियाँ कदापि चक्रवर्तीकी पत्नियाँ नहीं बन सकतीं। पुनः अुसकी पुत्री वापस लौटकर आ भी सकती है, नहीं भी आ सकती है। कुछ चामर-ग्राहिणियाँ अपनी ३५ वीं अथवा ३६ वीं वर्षकी अवस्थामें विवाहकर आन्ध्र-देशमें ही रह जाती हैं। नृत्य-गीत अित्यादिका अभ्यासकर अुस कलामें ही जीवन-यापन किया करती हैं। हेलीना यदि वापस लौटकर भी आती है तो अुसकी अवस्था अधिक होगी। अैसी दशामें यहाँपर विवाह होना कठिन है लेकिन जीवन-पर्यंत सम्पत्तिका सुखानुभव कर सकती है।

अुस देशमें डेल्फाव नामक ग्राममें अेक भविष्यवक्ता ज्योतिषी रहता था। अुससे हेलीनाने अपनी १५ सालकी अुम्रमें जाकर अपना भविष्य पूछा था। कहा गया था कि वह अेक चक्रवर्तीके यहाँ अन्तःपुरमें रहेगी। अुसका मतलब हेलीनाने चक्रवर्तीकी पत्नी होना लगाया।

हेलीनाके वापस लौट आनेपर अकेले डार्टिमोने ही सन्तोष प्राप्त किया। लड़कीके माता-पिताको सम्पत्तिके आगमका द्वार बन्द हो जानेका दुःख हुआ। लेकिन अिस बातका अुन्हें हर्ष था कि हेलीना वापस आते-आते बहुतसी सम्पत्ति लाअेगी, जिससे वे अधिकांश जमींदारोंकी अपेक्षा ज्यादा धनी होंगे। अुस धनसे अेक अच्छी-सी जमींदारी खरीदी जा सकती है। फिर अुन्होंने अपनी पुत्रीके भाग्यके फूटनेका अनुभव किया। डार्टिमोने अपने भाग्यको फला हुआ-सा अनुभव किया।

डार्टिमोके माता-पिताको यह कतअी पसंद नहीं था। पहले हेलीनाके सौन्दर्यपर मुग्ध हो अुन लोगोंने अुसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी बहूके रूपमें स्वीकार करनेकी सम्मति भी दी थी। परन्तु आज अुन्हें यह पसन्द नहीं था। अुनका यह मनोभाव है, कि चामर-ग्राहिणी चक्रवर्तीकी पत्नी ही मानी जाती हैं। पूर्णरूपसे पत्नी न हो, फिर भी पत्नी-जैसी ही है। चामर-ग्राहिणीके माने वह राज-रानी नहीं। चमरमृग नामक अेक जातिके हिरण भारतमें होते हैं। अुनकी पूँछें बड़े जूड़ों-सी होती हैं। अुन रत्नजटित सुवर्ण दण्डोंमें बंधे हुअे जूड़ोंको लेकर नारियाँ चक्रवर्तीके दोनों तरफ खड़ी हो जाती हैं और चँवर डुलाती रहती हैं। सम्राटके सिंहासनपर विराजमान होते ही यह कार्य होता है। अन्य समयोंमें अुन्हें कोअी काम नहीं रहता। चामर-ग्राहिणियोंकी खोजमें जब आन्ध्रके अधिकारी आअे थे, अुस समय अुन लोगोंने कहा था कि चामर-ग्राहिणियों और चक्रवर्तियोंके बीच कोअी सम्बन्ध नहीं रहता। साधारण प्रजा अिसपर विश्वास नहीं करती। अिसलिअे डार्टिमोके माता-पिताका अुद्देश्य है कि हेलीना चक्रवर्तीकी पत्नी ही है। यही कारण है कि वे डार्टिमोके विवाहमें सम्मति नहीं देते हैं।

फिर भी डार्टिमोने हेलीनाके रोम छोड़कर चले जानेपर भी किसीसे विवाह न करनेका संकल्प किया। अुसने मनमें निश्चय कर लिया कि मरण-पर्यंत वह अन्य स्त्रीके साथ प्रेम नहीं करेगा। लेकिन अपने अिस निश्चय-को डार्टिमोने किसीसे नहीं कहा। अुसका भी अभिप्राय था कि हेलीना आन्ध्र-चक्रवर्तीकी पत्नी हो गअी है और चक्रवर्ती तथा हेलीनाके बीच वैमनस्य होनेके कारण वह भारत छोड़कर चली आअी है। अब हेलीनाका प्रेम चक्रवर्तीपर न होगा। अपना प्रणय सफल-सिद्ध होगा।

गत दस दिनोंसे डार्टिमो हेलीनाके घर आता और दिनभर वहीं पड़ा रहता। अुसीके घर भोजन करता। हेलीना आन्ध्र-देशके समाचार सुनाती और लोगोंके साथ डार्टिमो भी कान खोल अुन सब समाचारोंको सावधानीसे सुनता। हेलीना डार्टिमो-को मित्रकी भांति मानती और वैसे ही अुसके साथ बरताव करती। हेलीनाके साथ डार्टिमो अेकान्तमें मिलना चाहता, पर हेलीना वैसा मौका नहीं देती।

हेलीनासे लोग पूछते कि तुम क्यों भारत छोड़कर यहाँ चली आअीं? तो कुछ लोगोंके प्रश्नोंपर वह ध्यान नहीं देती, कुछ लोगोंके प्रश्नोंका अुत्तर देती कि मुझे वहाँपर रहना पसन्द नहीं था। सहेलियोंके पूछनेपर अपने नेत्रोंसे दीनता टपकाती। माता-पिताके पहले पूछनेपर जवाब दिया था—हमारे लिअे यह सम्पत्ति काफी नहीं? पुनः-पुनः पूछनेपर रुष्ट हो कहती—"जवाब तो दिया है न? बार-बार वही क्यों पूछते हैं?" अुन लोगोंने भी क्रमशः पूछना बन्द कर दिया। बड़ी धनराशि प्राप्त हुअी है। अुसकी वह अधिकारिणी है। फिर वे चुप क्यों न रहेंगे?

दिनके बीतते हेलीनाके नेत्रोंमें चिन्ताकी भावना झलकने लगी। सदा वह प्रसन्न रहनेका प्रयत्न करती, पर किसी समय दीनताका भाव आकर अुसकी आँखोंमें बैठ जाता। अुस समय वह अपने अेक विशेष कक्षमें जाकर अेकान्तमें रहती।

कअी महीने बीत गअे। डार्टिमो प्रति-दिन हेलीनाके घर जाता। पर वह प्रेमिकाके घर जानेका अनुभव नहीं करता, पड़ोसीके घरकासा अनुभव करता। अेक वर्ष बीत गया। क्रमशः हेलीनाकी चिन्ता बढ़ती गअी। हेलीनाके बारेमें नगरमें तरह-तरहकी बातें लोग सोचने लगे। हेलीनाके विवाह होनेपर ही ये अफवाहें बन्द नहीं हो सकतीं। हेलीनाके माता-पिताने भी डरते-डरते चार-पाँच बार अुससे कहा—'तुम डार्टिमोके साथ विवाह कर सकती हो। अुसके माता-पिता भी अिस सम्बन्धमें कोअी रुकावट पैदा नहीं करेंगे। वे भी धनी हैं। अिस समय तुम्हारी अुम्र २२ से अधिक भी नहीं है। तुम आन्ध्र-देशमें भी जा नहीं रहीं हो। अभी जीवन काफी पड़ा हुआ है। डार्टिमो तुमसे ६-७ वर्षोंसे प्रेम कर रहा है। वह दूसरी लड़कीसे विवाह भी नहीं करेगा। अुसका जीवन व्यर्थ होता जा रहा है। तुम भी अिधर दुखी हो।' अिस प्रकार माता-पिताके समझानेपर हेलीनाने डार्टिमोसे बोलना-चालना शुरू किया। अिसपर अुसके माता-पिता बहुत ही प्रसन्न हुअे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सप्ताहमें अेक बार हेलीना और डार्टिमो टहलने जाते हैं। डार्टिमोने बहुत समय तक अपने प्रेमको व्यक्त नहीं किया। अेक बार प्रकट करनेपर वह डार्टिमोको छोड़ चली गअी। अिसके बाद भी डार्टिमो अपने प्रेमको प्रकट करता और हेलीना सुनकर चुप रह जाती।

लगभग दो वर्ष बीत गअे हैं। हेलीनाके हृदयमें डार्टिमोके प्रति प्रेम है, कि नहीं? डार्टिमोको पता नहीं, पर अुन दोनोंके बीच घनिष्ट परिचय हो गया। डार्टिमो हेलीनाके कंधेपर हाथ रखता तो हेलीना अुसे हटाती नहीं और न ही अुससे दूर हटकर बैठती। लोग अुन्हें पति-पत्नी मानते, किन्तु वे विवाह क्यों करते नहीं, अिस बातका सबको संदेह था।

अेक दिनकी शामको अुस नगर प्रदेशके गिरिश्रृंगपर दोनों बैठे हुअे थे। डार्टिमोने हेलीनाके हाथोंको अपने हाथोंमें लेकर कहा—"हेलीना! मैंने अपना जीवन तुम्हें समर्पित किया। मैं तुमसे प्रेम कर रहा हूँ। पर तुम नहीं करतीं। मुझे मालूम है कि तुम मुझसे प्रेम नहीं करोगी, मुझे केवल अेक परम आप्त मित्र मानती हो। तुम्हारे मनमें जो चिन्ता है, अुसका कारण मुझे ज्ञात नहीं हो रहा है। वही चिन्ता तुम्हें जलाअे जा रही है। यदि मैं तुम्हारा परम आप्त मित्र हूँ तो वह रहस्य मुझे बताओ। मैं भी तुम्हारी कठिनाअीमें हाथ बँटाअूंगा"।

डार्टिमोके अिस प्रकार गिड़गिड़ानेपर हेलीनाने जवाब दिया—"डार्टिमो! तुमसे बढ़कर मेरा आप्त मित्र और कोअी नहीं है। मुझपर तुम्हारा जो प्रेम है, वह दैवी प्रेम है। मैं तुमसे पुनः प्रेम नहीं कर पा रही हूँ। अिसलिअे मुझसे बढ़कर कोअी कृतघ्न अिस विश्वमें दूसरी नहीं हो सकती। मैं अपनी कहानी किसीको सुनाना भी नहीं चाहती थी। मैं अिस कहानीको तुम्हें सुनाकर तुमसे पुनः प्रेम न कर सकनेके पापका प्रायश्चित्त करूँगी।"

तुम्हें मालूम है कि मैं अत्यन्त रूपवती हूँ। अिसपर मेरे अभिमानकी सीमा भी नहीं है। अिसलिअे भगवानने मेरे घमण्डका अिस प्रकार दण्ड दिया है। जबसे होश सँभाला तभी मैंने निश्चय किया कि मैं अेक चक्रवर्तीकी ही पत्नी हो सकती हूँ। किसी अन्यकी कदापि नहीं। चामरग्राहिणीके कर्तव्यका परिचय देनेपर मैंने अधिकारियोंकी बातोंपर विश्वास नहीं किया। अुस चक्रवर्तीके हृदयपर अधिकार कर सकनेका अहंकार था। लेकिन आन्ध्र-देशके पहुँचने तक मेरे मनमें यह भय बना रहा था कि वहाँपर मुझसे भी बढ़कर रूपवतियाँ होंगी। पर मुझसे बढ़कर कोअी सौन्दर्यवती अुस देशमें न थी, अिस बातकी साक्षी स्वयं आन्ध्र-चक्रवर्ती ही हैं। मेरे सौन्दर्यपर प्राकृत भाषाके कवियोंने कविता की। चित्रकारोंने मेरे चित्र तैयार किअे। शिल्पियोंने मेरी मूर्तियाँ गढ़ीं। चक्रवर्तीके अन्तःपुरमें वसन्तऋतुमें सौन्दर्योत्सव मनाअे जाते हैं। अुन अुत्सवोंकी रानी मैं ही थी। चक्रवर्तीत्वके प्रति जो सम्मान व मर्यादाअें होती हैं, वे सब मेरे प्रति भी हुआ करती थीं। मेरे नेत्रोंमें आरती अुतारते थे। मुझे देखनेके लिअे बड़े-बड़े राजा-महाराजा चक्रवर्तीकी राजसभामें आया करते थे।

मेरा मन चक्रवर्तीपर अनुरक्त था। भाअी डार्टिमो! वे चक्रवर्ती केवल अधिकार बलसे ही चक्रवर्ती नहीं। अुनके सौन्दर्यके सामने मेरा सौन्दर्य ही क्या है? समस्त पुरुष सौन्दर्यका मूर्तभूत रूप ही वह चक्रवर्ती हैं। हे डार्टिमो! मैं अपने दुर्भाग्यका परिचय कैसे दूँ। वह चक्रवर्ती अेकपत्नी-व्रती हैं। अक्सर हम सुना करते हैं कि प्राच्य देशके राजा अनेक पत्नियाँ रखते हैं। यह बात सत्य नहीं। यदि किसी राजाके दो-तीन रानियाँ हों, तो भी अुन पत्नियोंको छोड़ अन्य स्त्रियोंकी वे कामना नहीं करते। वे महान् नीतिज्ञ हैं। अुन देशोंके सम्बन्धमें हम जो कुछ भी बुरा सोचा करते हैं, वह ठीक नहीं। वह अेक दिव्य जाति है।

मुझे अिस बातका आश्चर्य है कि वह चक्रवर्ती मेरे सौन्दर्यकी आराधना करते हुअे मेरे प्रेमको नहीं पाते। मेरे सौन्दर्यके वास्ते अेक चक्रवर्तीकी पत्नीके जैसे मेरा आदर करते हैं। सौन्दर्य नामक यदि कोअी साम्राज्य है तो मैं अुसकी महाराज्ञी हूँ। अन्य विषयोंमें मैं किसी काम की नहीं। चक्रवर्ती और अुनकी पत्नी भी मेरे सौन्दर्यपर मुग्ध थे। पर चक्रवर्ती कभी भी प्रेम-भरी दृष्टि मेरी तरफ दौड़ाते न थे। मेरा स्पर्श करते हुअे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे नहीं बढ़ते, मेरा हाथ पकड़नेका प्रयत्न नहीं करते। मेरे पास बैठे रहनेकी अिच्छा भी अुनमें नहीं थी।

मैं अपनी बात क्या कहूँ? मेरा हृदय चक्रवर्तिमय हो गया था। मुझे निद्रा नहीं आती, भोजन करनेकी अिच्छा तक नहीं होती। मेरा सारा जीवन अन्धःकारमय हो गया। मेरी अिच्छा होती है कि सदा चक्रवर्ती दरबार लगाअे रहें। अुसी समय अुनके दर्शन होते हैं और वर्षमें अेक बार वसंतोत्सवके समयमें भी।

भाअी डार्टिमो! मैं अबतक मर जाती। निद्राहारके अभावमें मेरा शरीर शुष्क हो गया था। पर दरबारमें चक्रवर्तीके दर्शन होते ही मेरा शरीर प्रफुल्लताके मारे पुष्ट प्रतीत होता। अुनके नेत्र अमृतके निधि तो नहीं?

अिस प्रकार चार वर्षतक मैंने सहन किया। अिसके बाद मुझमें सहनशीलता नहीं रही। डार्टिमो, तुम्हारी सहनशीलताके लिअे शत-शत नमस्कार हैं। मुझसे अितना प्रेम करके प्रेम-विधानको ८ वर्ष तक सहन करते रहे, जीवन-पर्यंत भी सहन कर सकते हो। अिसलिअे हम दोनोंके प्रेमकी तुलना नहीं हो सकती। हे भाअी! अिसलिअे हम दोनोंका सम्बन्ध अुचित नहीं। तुम प्रेमसे पूर्ण हो, मैं क्षमा विहीन व्यक्ति हूँ।

अेक दिन मैं चक्रवर्तीके बिस्तरके पास पहुँची। अन्तःपुरकी स्त्रियाँ अुस दिन अुत्सव मना रही थीं। महारानी अुस दिन चक्रवर्तीके यहाँ जानेवाली थी। खबर भी भेज दी थी। पर आधीरातके समय महारानीको मालूम हुआ कि वह अब किसी कारण वश जा नहीं सकतीं। यह समाचार चक्रवर्तीतक पहुंचानेके लिअे महारानीने किसीको भेजा। अुस समय मैं चक्रवर्तीके कमरेके पास थी। चक्रवर्ती सो रहे थे। मेरे मनमें अेक अिच्छा पैदा हुअी। मेरे आलिंगनके बन्धनमें तथा मेरे चुम्बनोंकी गरमीमें जागृत चक्रवर्तीने कैसा पता लगा लिया कि अुनके आलिंगनमें स्थित मैं महारानी नहीं हूँ, मुझे ज्ञात नहीं। मैंने मणिमय दीपकपर गाढ़ा कपड़ा ओढ़ाकर सारे कमरेको अन्धकारमय बना दिया।

दूसरे ही क्षण मैं दीपकके प्रकाशमें खड़ी थी। वह चक्रवर्ती मेरे प्रति प्रेमविहीन थे, पर दया विहीन नहीं। हे डार्टिमो! अुस अपराधके लिअे फाँसीकी सजा दी जाती है। चक्रवर्ती छोड़ भी दे, श्री महारानी नहीं छोड़ती। सजा भोगनी ही पड़ती है।

मेरी चामर-ग्राहिणीकी नौकरी चली गअी। अेक सप्ताह भरमें पुत्रीको ससुराल भेजनेके की भाँति मेरे साथ फौजका रक्षण देकर, दो अूँटोंपर बड़ी सम्पत्ति लदवाकर चक्रवर्ती और अुनकी पत्नीने मुझे अपने माता-पिताके घर भेज दिया।

अिस समय सारा जगत् अन्धकारवृत था। गिरिशिखरके अेक वृक्षपर बैठा अेक अुल्लू बोल रहा था!!

(अनुवादक—श्री बालशौरी रेड्डी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समयका बाँध

—डा० कन्हैयालाल सहल

[डॉ. सहल राजस्थानके लब्ध-प्रतिष्ठ विशिष्ट प्रतिभा-सम्पन्न सरल प्रकृतिके मनीषी हैं--विचारक, समीक्षक और निबन्धकारके रूपमें। अिधर कुछ समयसे सहलजी काव्य-रचनाके पथमें नअे सुन्दर प्रयोग लेकर आ रहे हैं। "समयका बाँध" कविता अैसा ही अेक सुन्दर प्रयोग है। पलक गिरानेमें जितना समय लगता है, अुसको भी व्यतीत होनेसे कोअी रोक नहीं सकता। पाश्चात्य देशोंके साहित्यमें 'कैन्यूट' नामक राजाने अेक मरतबा समुद्रकी बढ़ती हुअी लहरोंसे कहा था कि अरी लहरो, ठहर जाओ, बढ़ो मत। अैसा कौन है जो काल-लहरियोंको ललकार सकता है? क्या कोअी मृत्युसे कह सकता है कि हे मृत्यु! तुम अेक क्षण बाद आना। समय भी सागरके समान अनन्त अनादि है। हम टाअिम-टेबिल आदिके द्वारा समयको बाँधनेकी कोशिश करते हैं अितने मिनट, अितने घंटे! जो समय बीत जाता है वह कौन-सी गुफामें जाकर अिकट्ठा होता रहता है?

समयका बाँध अेक दूसरे प्रकारसे भी बाँधा जाता है। गान्धीने समयका बाँध बाँधा था ३० जनवरी ४८ की शामतक-प्रत्येक क्षणका हिसाब रखा कि वे अितना कह गअे, अितना लिख गअे और हमारे सामने रख गअे। जितने कुछ बरस अुन्हें मिले, अुसका अुन्होंने सदुपयोग ही किया। गान्धीजीकी कृतियाँ, अुनकी रचनाअें, अुनकी सारी बातें जो वह बोल गअे, समयरूपी जलराशिके बाँध हैं जिनमें स्नान करके मानवता सतत सदियोंतक स्निग्ध रहेगी, वह मरूस्थल न बनेगी। श्री सहलकी कवितामें अिस तरहकी भावधारा प्रकट हुअी है।

—सम्पादक]

देव-दनुज गंधर्व-मनुजकी
सृष्टि-बीच वह कौन?
अरे जो
रोक सके गतिशील समयके
निमिष-मात्रको?
काल-लहरियोंको ललकारे
सुनो, लहरियो।
तनिक न आगे
कदम बढ़ाना
अुस नरेश कैन्यूट-सदृश
जिसने समुद्रको
ललकारा था?
यह दुरन्त काल तो
क्षण-क्षण प्रति-पल
बीत रहा है
और बीतता चला जायगा

समय अनन्त महासागर है
कितना विस्तृत, कितना आयत
कौन जानता?
कबसे है प्रारम्भ समयका?
प्रादुर्भूत हुअी थी रजनी
अथवा पहले दिनका ही
अवतरण हुआ था
अुदय हुआ था
कौन बताअे?
नासदीय सूक्तके ऋषिकी
अुस वाणी-सा
जिसमें कहा गया है
वह भी, परम व्योममें
जो रहता है
कौन कह सके?
स्वयं जानता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा वह भी नहीं जानता !
महाकाल यह बिखर पड़ा है
जगती-तलमें
बूंद-बूंद बन
रिसता ही रिसता रहता है !
किस अतीतमें संचित होते
बीत-बीतकर वर्तमान क्षण ?
कहाँ छिपी है गहन गुफा वह
किस भविष्यका स्वप्न देखती ?
प्रथम पंचवर्षीय योजना
जिसमें बाँध अनेक बने थे
अैसे ही मैं सोचा करता
बाँध समयका भी क्या कोअी
कभी कहीं बाँधा जाता है ?
स्कूल और कालेजोंके वे टाअिम-टेबिल
अथवा रेलोंकी वह 'समय-सारिणी'
टिक् टिक् टिक् टिक् करनेवाली
वह क्षण-सूअी
समय-बाँधके ही प्रकार क्या ?
वह गाँधी जो प्रतिक्षणका
लेखा रखता था
समय-बाँधका ही प्रयास
क्या नहीं कर गया ?
समय अनंत महासागरसे
लेकरके वे वर्ष अनोखे
बाँधना है जो बाँध विलक्षण
अूसर मानवताका मरुथल
अुससे सदा सिक्त होकर ही,
हरियालीमें परिणत होगा
नअी-नअी आशाअें जिससे
कुसुमों-सी विकसित हो-होकर
जगतीके विस्तृत आँगनको
पुलकित सुरभित सदा करेंगी !

गीत

—प्रो. नीरज

ओ प्यासे अधरोंवाली ! अितनी प्यास बढ़ा
बिन जल बरसाअे बादल आज न जा पाअे !

गरजीं-बरसीं सौ बार घटाअें धरतीपर
गूँजी मल्हारकी तान गली-चौराहोंमें
लेकिन जब भी तू मिली मुझे आते-जाते
देखी रीती गगरी ही तेरी बाँहोंमें
सब भरे-पुरे तब प्यासी तू
हँसमुख जब विश्व, अुदासी तू,
ओ गीले नयनोंवाली ! अैसे आँज नयन
जो नजर मिलाअे तेरी मूरत बन जाअे !
ओ प्यासे अधरोंवाली ! अितनी प्यास बढ़ा
बिन जल बरसाअे बादल आज न जा पाअे !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेशमके झूले डाल रही है झूल धरा
आ-आकर डार बुहार रही है पुरवाअी
लेकिन तू धरे कपोल हथेलीपर बैठी
है याद कर रही जाने किसकी निठुराअी,
तू अुन्मन जब गुँजित मधुवन
तू निर्धन जब बरसे कंचन,
ओ सोलह साव नवाली ! अैसे सेज सजा
घर लौट न आअे जो घूँघटसे टकराअे !
ओ प्यासे अधरे वाली ! अितनी प्यास बढ़ा
बिन जल बरसाअे बादल आज न जा पाअे !!

पपिहेके कंठ पियाका गीत थिरक है
रिमझिमकी वंशी बजा रहा घनश्याम झुका
है मिलन-प्रहर, न भ-आलिंगन कर रही धरा
तेरा ही दीप अटारीमें क्यों चुका चुका,
जब भरी नदी, तू रीत रही,
जी अुठी धरा, तू बीत रही,
ओ चाँद लजा वाली ! अैसे साज सपन
जो आँसू गिरे सितारा बनकर मुस्काअे ।
ओ प्यासे अधरे वाली ! अितनी प्यास बढ़ा
बिन जल बरसाअे बादल आज न जा पाअे !!

बादल खुद आ नहीं समुन्दरसे चलकर,
प्यास ही धरा अुसे बुलाकर लाती है
जुगनूमें चमक नहीं होती, केवल तमको
छूकर अुसकी ना ज्वाल बन जाती है,
सब खेल यहाँपर है धुनका,
जग तान बाना है गुनका,
ओ सौ गुनवाली ! अैसी धुनकी गाँठ लगा,
सब बिखरा जल गर बन-बनकर लहराअे !
ओ प्यासे अधरे वाली ! अितनी प्यास जगा
बिन जल बरसाअे बादल आज न जा पाअे ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'बोली' : अेक पंजाबी लोक-गीत

—श्री घनश्याम सेठी

पंजाबके मध्यप्रदेशोंका लोक-प्रिय गीत 'बोली' है। गानेवाले अपने विशेष यन्त्रोंके झन-झन स्वरोंपर अिसे अिस मिठास और तेजीके साथ गाते हैं कि यूं प्रतीत होता है जैसे वह किसी मन्दिरमें अपने अिष्ट देवके स्तुति-गानमें मगन हों। बोलियोंमें कुछ अश्लील भी हैं। और कुछ बहुत अच्छी भी। साफ-सुथरी 'बोली'में श्रोताको अितनी पकड़ और गहराअी मिलती है कि वह झूम-झूम अुठता है। दो-तीन वाक्योंमें पूर्ण घटना सम्पूर्ण प्रयोग और समूची दास्तां सिमिट आती है। निम्नांकित 'बोली'को जरा देखिअे:—

बहू कम करन नूं कही
बहू सुज भडोला होअी
बहू खान नूं कही दो सजरियाँ दो बही।

(बहूको काम कहा बहूने मुंह फुलालिया। बहूको खानेके लिअे कहा, बहूने दो बासी और दो ताजी रोटियाँ सामने रख लीं।)

बोलियोंमें व्यक्त संकेत भी अितने सरल और स्पष्ट होते हैं कि समझनेमें कोअी दिक्कत नहीं होती:—

नहाके छप्पड विचो निकली
सुलफे दी लाट वर्गी।

(सुन्दर ललना जब तालाबसे नहाकर निकली तो यूं लगती थी जैसे सुलफेकी लाट हो।)

दो-तीन वाक्योंमें अुपर्युक्त 'बोली' अेक कला-पूर्ण शब्द चित्र है। 'सुलफे' की चिलमसे निकली हुअी 'लाट'को ध्यानपूर्वक देखा जाअे तो विदित होगा कि अिसके शोलेका सिरा छोटा और काला होता है। मध्य-भाग जरा चौड़ा और बेहद लालिमासे युक्त होता है। और निम्न सिरेतक आकर वह पुनः छोटा हो जाता है। तालाबसे स्नानकर निकली रमणीके लिअे यह अुपमा कितनी आश्चर्यजनक है। और फिर यह किसानके निरूपणका परिणाम है जिसे हमारा भौतिकवादी समाज अपनी व्यवस्थाका सबसे घटिया पूर्जा समझता है। पंजाबके अन्य लोक-गीतोंके समान 'बोलियों'का रचयिता भी यही किसान ही है। अिसलिअे अधिकांश 'बोलियां' ग्राम्य-जीवनकी झाँकियाँ ही प्रस्तुत करती हैं, जहाँ हवाओंकी गुन-गुनाहटको भी अर्थपूर्ण समझा जाता है, जहाँ अबाबीलें निस्तब्ध आकाशमें अुड़ानें भरती हैं और सन्ध्याके समय चमगादड़ोंकी पंक्तियोंकी पंक्तियाँ जंगलोंकी ओर तैरती हैं, और गांवको लौटनेवाले मवेशियोंके गलेमें बंधे घुंगरू बज-बज अुठते हैं, जहां मिट्टीके घरौंदोंकी दीवारोंमें 'घर' बसाअे जाते हैं, मिट्टीके अिन नन्हे-नन्हे घरौंदोंके आँगनोंमें अुपले चिपके रहते हैं और अिनमें रहनेवाला अिन्सान अिन्सानके दुख बांटना और सुख बांटना अपना धर्म समझता है। मिट्टीके ये घरौंदे भी अेक-दूसरेसे प्रेम करते हैं। क्योंकि अिनमें अन्तर नहीं—अेक कोठा दूसरे कोठेके साथ मिला हुआ है। अिन कोठोंपर चिलचिलाती धूपमें माहिअे, ढोले और किस्से सुने-सुनाअे जाते हैं—और अिन्हीं कोठोंपर चढ़कर ललनाअें अपने प्रियतमोंकी प्रतीक्षा करती हैं:—

कोठे अुपर खली आं
मेरी सड गअियाँ पैरा दियां जलियां
मेरा यार नजर न आवे।

(कोठेपर खड़ी हूँ—खड़े-खड़े मेरे पैरके जलुअे जल गअे हैं किन्तु प्रियतम तो कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता।)

प्रियतम जब आता है तो दूरसे अुसे अपनी प्रेमिका तो नहीं दिखाअी पड़ती परन्तु अुसकी नाकका 'लौंग' नाकका आभूषण अुसे अवश्य धूपमें चमकता हुआ दिखाअी पड़ता है और अिसी लौंगसे सम्बन्धित अेक 'बोली' है:—

तेरे लौंग दा पया लिशकारा
ते हालियां हल डक लअे।

(तेरी नाकका लौंग जब चमका तो हालियोंने अपने हल रोक लिअे—अुन्होंने समझा शायद बिजली चमक रही है।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेक जमाना था जब ग्रामीण बालाअें दाँतोंमें सोनेकी कीलें जड़वा लिया करती थीं (तब यह फैशन था)। हँसती हुअी अिन कीलोंको देखकर गांवके अेक अल्हड़ नवयुवकने कहा——

मौज ते सुनियार ले गया
जिनें लाअीयां दंदां विच मेखा।

(मजा तो वह सुनार ले गया जिसने तुम्हारे दांतोंमें यह कीलें जड़ीं।)

और क्या मालूम कि सोनेकी कीलोंवालीको भी कुछ कहना हो——

सिर बन्नके खद्दर दा साफा
चन्दरा शुरीन हो गया।

प्रवासी प्रियतमकी यादमें पंजाबकी अेक ललना कहती हैः——

मेरा यारसी सरुदा बूटा
बेढें विच ला रख दी।

(मेरा प्रियतम क्या था सर्रुका पौधा था, बस अुसे आँगनमें लगा रखती।)

परन्तु प्रियतम नहीं लौटता। यह 'बोली' मैंने युद्धकालमें सुनी थी। पता नहीं पंजाबकी कितनी ललनाओंके प्रियतमोंकी हड्डियां मिस्र और अफ्रीकाके रेगिस्तानोंमें चमक रही होंगी, वह अुनकी यादमें शायद रह-रहकर पुकार अुठती होंगीः—

की खटिया अिश्क गल लाके
जिन्दड़ी नूं रोग ला लया।

(प्रेमका आलिंगन करके तूने क्या पाया, अपनी जानको रोग लगा लिया है।)

अेक नामुराद 'रांझे'की बात कितनी तीखी हैः——

कदी न चंदारिअे हाक मारी
चूड़े वाली बाँह कड़के।

(अरी! कभी तो तूने 'चूड़े' वाली बाँह निकालकर अपने पास बुलानेका अिशारा नहीं किया।)

जीवनके प्रत्येक पक्षका स्पर्श 'बोलियों'को मिला है।

अेक नव-वधू पतिसे विनती करती हैः——

मैनूं आज दी रात न छेड़ी
मेंधी वाले हत्थ जोड दी।

(मुझे आजकी रात न छेड़ना; देखो मैं मेंहदी लगे हाथ जोड़कर विनती करती हूँ।)

जब नव-वधू 'घरवाली' बन जाती है तो झगड़े और मन-मुटाव भी होते हैं। शायद कभी अुसके पतिको यह भी पता चल जाअे कि 'घरवाली' की सोनेकी कीलोंपर कोअी दिल लुटा बैठा था और जल-भुनकर वह अुसे बुरा-भला कहे। घरवाली मुँहसे शायद कुछ न बोले पर अुसके मनोभावोंकी अभिव्यक्ति अिस बोलीमें कितनी अतिशयताके साथ हुअी हैः——

मेरे यार नूं मंदा न बोली
मेरी भावें गुत यह लअी।

और फिर कभी आँखमें दर्द होनेपर वह ताने कसकर 'घरवाली' से कहेगाः——

केढ़े यार दा गुदाअी ग वा
कि अंख विच करव यै गया।

(तूने किस प्रेमी (की गाय भैंसोंके लिअे) चारा बनाया है कि तेरी आंखोंमें तिनका पड़ गया?)

और फिर.....और फिर....यूं ही अुमर बीत जाअेगी और यह दास्तां अुस गाँवमें कअी नअी कहानियोंको जन्म देगा।

कांचकी चूड़ियाँ पंजाबी ललनाओंका सर्वप्रिय-श्रृंगार है। सब तरहकी चूड़ियाँ गांवमें बंजारे लाते हैं-सस्ती टिकाअू नअेसे नअे फैशनकी परन्तु फिर भी अिन चूड़ियोंके लिअे गांवकी ललनाओंका मन मचलता ही रहता है। जब प्रियतम नअी-नअी चूड़ियोंसे सज्जित कलाअीको पकड़ना चाहता है तो प्रेमिकाकी कलाअी मछलीके समान अुसके हाथोंसे फिसल जाती है और वह बनावटी गम्भीरताके साथ कहती हैः——

असां नवियां चढ़ाअियाँ चूडियाँ
हत्थां ते न मारी न वैरियाँ।

(हमने नअी-नअी चूडियाँ पहनी हैं। अरे दुष्ट! मेरे हाथोंपर हाथ न चलाना।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जब अुसका प्रेमी शहर जाने लगता है तो वह अुससे कहती है:-

मेले चलियां ते लयावीं पहंची
वे ले जा मेरा गुट मिन के।

(मेले जा रहे हो तो मेरे लिअे कंगन लाना। लो! मेरी कलाअीका माप लेते जाओ।)

और जब वह खाली हाथ लौट आता है तो वह कहती है:—

मेरी अिक न मन्नी कम जाता
तेरी मैं लाख मन दी।

और फिर वह रूठ जाती है। प्रियतम अुसे मनानेमें कोअी प्रयत्न नहीं छोड़ता। और अन्तमें हारकर वह अुसे ताना देते हुअे कहता है:—

कच्ची भारी लड्डुओं दी
लड्डू मुक्के मारानें टुट्टे।

(लड्डुओंकी (यानी झूठी) मित्रता कच्ची होती है। लड्डू समाप्त हो गअे तो मित्रता भी समाप्त हो गअी।)

परन्तु सजनीपर कोअी प्रभाव नहीं पड़ता और वह अिस बातपर अड़ जाती है कि:—

तेरे सामने बैठके रोणां,
ते दुःख तैनूं नहीं दसणां।

(तुम्हारे सामने बैठकर रोअूंगी परन्तु अपना दुख तुमपर प्रकट न करूंगी।)

साजनके लिअे यह कितना बड़ा दुख है—सजनी सामने बैठकर रो रही है परन्तु यह नहीं बतलाती कि अुसे क्या कष्ट पहुँचा है।

अुर्दूके प्रसिद्ध गद्यकार "मन्टो"ने अेक बार निम्नांकित 'बोली'का प्रयोग करनेके पश्चात लिखा था—

"यारी तोड़के खंडां ते बैह गयां
ते हुण तूं केड़ा रब हो गयां"

(दोस्ती तोड़कर तुम कटे हुअे वृक्षोंपर बैठ गअे हो तो अब कौनसे खुदा बन गअे हो अैसा करनेसे।)

"वृक्षोंकी टुंड-मुंड जड़ोंपर अैसे कअी खुदा देहातोंमें बैठे रहते हैं जिनकी खुदाअी आनकी आनमें औंधी हो जाती है.....। आसमानोंवाला खुदा अूपर बैठकर यह तमाशा देखता रहता है और खामोश रहता है।"

कअी बोलियाँ अुत्तर-प्रत्युत्तरमें भी चलती हैं जैसे:—

'खटने नूं टोर बैठी आं जोगी खटके लगाया फीता।
अखां दे सुरमेने नास कुड़ी दा बीजा'

(अुसे कमानेके लिअे भेजा वह 'फीता (केश-श्रृंगारका अेक प्रसाधन) कमा लाया। अरी! आंखोंमें सुरमा डालकर अिसने लड़कीका सत्यानाश कर दिया।)

अिसके जवाबमें लड़केका वकील अुत्तर देता है,

"जोगी खय्या कबूजर काला
दमड़ी दा अेक मलके मुड़ा मोह लया नवीनां बाला"

("कमानेके लिअे भेजा था वह काला कबूतर लाया। अेक दमड़ीका 'दंदासा' (लड़कियोंका दातुन जिससे अधर रंगे जाते हैं) मलकर लड़कीने छबीले नवयुवकको मोह लिया।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ल्येव निकोलाय तालस्ताय—२

—श्री राजेन्द्र ऋषि

[तालस्तायकी "युद्ध और शान्ति" तककी रचनाओंपर अिससे पूर्व लेखमें प्रकाश डाला जा चुका है।]

आन्ना कारेनिन

"युद्ध और शान्ति"की रचना कर चुकनेके पश्चात् तालस्तायने आन्ना कारेनिनाकी रचना आरम्भ की। अिस अुपन्यासकी रचनामें चार वर्ष लगे। पहले पहल तालस्तायने केवल अेक बेवफा पत्नीके भाग्यकी कथाकी रूपरेखा बनाअी थी, परन्तु लिखते-लिखते कथाका अितना विस्तार हो गया कि अुनको अिस कथाको अुपन्यासका रूप देना पड़ा। अिस अुपन्यासमें तालस्तायने तालस्तालीन वैज्ञानिक और दार्शनिक समस्याओं, कला, अैतिहासिक अेवम् राजनीतिक घटनाओं तथा सामाजिक जीवनका अेक सुन्दर और अनुपम चित्र खींचा है। "आन्ना कारेनिना" अेक सामाजिक तथा पारिवारिक अुपन्यास बन गया। अिसके अतिरिक्त अिस अुपन्यासमें सुधार–पूर्व रुसकी आर्थिक दशाका भी विस्तृत वर्णन है।

"आन्ना कारेनिना" के दो मुख्य पात्र हैं। अेक है स्वयम् आन्ना और दूसरा है लेविन। आन्ना अेक प्रतिष्ठित सरकारी नौकरकी पत्नी है। बड़ी सुशील और समवेदनाशील महिला है। लज्जा और मिलनसारीका अुसमें अितना सुन्दर समन्वय है कि वह शिष्टता और भोले-भाले सौन्दर्यका अद्वितीय प्रतीक है। वह अपने भाग्य तथा पतिसे बिलकुल सन्तुष्ट है। घरके शान्तिमय वातावरणको अपने हृदयसे चाहती है। अेक बालक है जिससे वह बहुत ही प्रेम करती है, परन्तु भाग्यका अुलट फेर आते कोअी देर नहीं लगती। अुसकी वरोन्स्ककीसे भेंट होती है। परिचय बढ़ते-बढ़ते गूढ़ प्रेममें परिणित हो जाता है और धीरे-धीरे आन्नाका नैतिक-स्तर नीचेको आने लगता है। अब अुसके जीवनका अेक-मात्र ध्येय है वरोन्स्कीको अपने प्रेमजालमें फंसाना, परन्तु वरोन्स्की अुसको चक्करमें रखता है। अुधर वह अपने पतिसे तलाक लेनेमें भी असफल रहती है। अन्तमें वरोन्स्की अुसको छोड़कर सेनामें चला जाता है। हताश आन्ना रेलगाड़ीके नीचे आकर अपनी जान दे देती है। दूसरा नायक है लेविन जो तालस्तायकी ही परछाअी है। वह भी अेक विशिष्ट जीवनकी खोजमें लगा रहता है। तालस्तायकी भांति वह भी रअीस परिवारका है। परन्तु सरकारी नौकरी और समाजमें ख्याति प्राप्त करनेके विचारको तिलांजली देकर देहात सुधारमें लग जाता है। तालस्तायकी भांति वह भी तीन बहनोंको अेक साथ प्रेम करने लगता है। बड़ी बहन दोली आन्ना कारेनिनके भाअीसे ब्याह दी जाती है। जब मझंली बहन भी अुसके हाथसे निकल जाती है, तो वह सबसे छोटी बहन कीतीसे विवाह कर लेता है।

अिस अुपन्यासमें तत्कालीन रूसी समाजके विभिन्न वर्गों—अभिजातवर्गसे लेकर किसानोंतकके जीवनका यथार्थ चित्र मिलता है। अुपन्यासके सब नायकोंमें प्रेम, पारिवारिक जीवन तथा समाज सेवा द्वारा सौभाग्यशाली बननेके सब प्रयास विफल रहते हैं। आन्ना और वोरोन्स्कीका प्रेम दुःखान्त है। लेविन और कीतीका प्रेम और बादमें पारिवारिक जीवनके बन्धनमें बंध जाना आरम्भमें सुखमय प्रतीत होता है, परन्तु विवाह होनेके कुछ ही समयके पश्चात् अुनके जीवनमें नीरसता और अतृप्ति छा जाती है। लेविनका समाज-सेवामें जुट जाना तथा अुनका परस्पर प्रेम भी अुनके जीवनकी नीरसताको दूर नहीं कर सकता। हताश अपने जीवनकी नीरसतासे रक्षा वह अपने अिस विचार द्वारा कर पाता है कि जीवनका अुद्देश्य आत्मसुख न होकर अीश्वर और आत्माके अर्पण होना है। अिसीके लिअे फिर वह जीवनका संघर्ष करता रहता है।

अुधर कठोर हृदय और समवेदनाशून्य कारेनिन और मौजी और चंचल वोरोन्स्की दोनों अपनी पत्नियोंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवनको दुःखमय बना देते हैं। आन्ना विवाह बन्धनसे मुक्ति पाना चाहती है। परन्तु अिसमें केवल अुसकी मृत्यु ही सहायक होती है। डोली अपने लापरवाह पतिका कार्यभार बड़े धैर्यसे स्वयम् अुठाती है और अपने बच्चोंका भरण-पोषण करती है। वह अपने परिवारकी दिन-प्रतिदिन गिरती हालतको सुधारनेकी कोशिशमें लगी रहती है।

अिस अुपन्यासमें आन्नाके वोरोन्स्कीके प्रति प्रेमकी अुत्पत्ति और विकास बड़ी यथार्थता और अद्वितीय ढंगसे चित्रित किया गया है। आन्नाका ऑपेरामें जाना, अुसकी अपने बच्चेसे चोरी-चोरी भेंट, अपने पतिको छोड़कर संसारकी तनिक भी परवाह न करना और फिर धीरे-धीरे दुःख और निराशाके कारण रेलगाड़ीके नीचे आकर अपने प्राणत्याग देना, अिन सब घटनाओंका वर्णन तालस्तायने मार्मिक चित्रों द्वारा किया है। यह सब दृश्योंका वर्णन पढ़कर पाठकका रोमांचित तथा पुलकित होना अनिवार्य है। अिन सब घटनाओंमें यथार्थताकी छाया है।

तालस्ताय आन्नाकी अिसलिअे निन्दा नहीं करता कि अुसने तत्कालीन कुत्सित समाजको चुनौती देनेका साहस किया, किन्तु अिसलिअे कि अुसने केवल अपनी भावनाओंकी तृप्तिके लिअे पारिवारिक सुखको नष्ट कर दिया। तालस्तायके विचारमें परिवार अेक पवित्र धरोहर है और अुसकी रक्षाके लिअे स्त्रीको हर प्रकारका बलिदान करनेके लिअे तत्पर रहना चाहिअे। दोलीके जीवनसे तालस्तायने अिसी भावनाका चित्रण किया है। तालस्तायके विचारमें स्त्रीको राजनीतिक जीवनसे भी परे रहना चाहिअे। अुसके लिअे अुपयुक्त स्थान न ही धर्मवेदी है और न ही दफतर। अुसका धर्म है समाज-सेवा अर्थात बच्चोंका पालन-पोषण। जीवनके अिस नियमका अुल्लंघन करके स्त्री अपना शारीरिक और मानसिक सुख खो बैठती है। तालस्ताय कारेनिनके मुखसे कहलाते हैं—"हमारा जीवन गठ-बन्धन (अर्थात विवाह) लोगोंने नहीं किन्तु स्वयम् अीश्वरने किया है। अिस बन्धनको ताड़ना पाप है और अिसका दण्ड है नरक।"

तालस्ताय अभिजात वर्गसे अपील करते हैं कि वे अपने अनैतिकतापूर्ण नीरस और अस्वस्थ शहरी जीवनको छोड़कर अपने मूलभूत व्यवसाय खेतीको अपनाअें और अुसकी अिस ढंगसे व्यवस्था करें जिसमें कृषकों और जमींदारों दोनोंका भला हो। कृषक और जमींदार समाजके मुख्य अंग हैं। अिसलिअे अिनका परस्पर लाभके लिअे अेक-दूसरेका भला सोचना देश तथा समाजकी अुन्नतिके लिअे अत्यन्त आवश्यक है।

× × ×

आन्ना कारेनिनाकी रचनाकी समाप्तिके समयतक तालस्तायके जीवन, अुसके नैतिक आधार, धर्म और समाज विषयक विचारोंमें पूरी तबदीली आ चुकी थी। यह तबदीली अुनकी आगामी कृतियोंमें पूर्णरूपेण प्रतिबिम्बित है। अपनी कृतियों "स्वीकारण" "मेरा धर्म क्या है?" "तो फिर क्या करना चाहिअे?" में तालस्तायने नैतिक, धार्मिक और समाज-विषयक अपने विचारोंको अेक बार फिर बड़ी भावुकता और सच्चाअी के साथ टटोला।

अपने बच्चोंको अुचित ढंगसे शिक्षा देनेके अुद्देश्यसे १८८१ में तालस्ताय कुछ लम्बे समयके लिअे मास्को आ गअे। मास्कोकी खीतरोव मण्डी और सरायने तथा १८४२ में हुअी तीन-दिवसी जनगणनामें भाग लेनेके कारण तालस्तायपर कुत्सित शहरी जीवनकी छाप पड़ी जिसको अुन्होंने अपने निबंध "तो फिर क्या करनाचाहिअे?" में चित्रित किया है। अिस निबंधमें अुन्होंने धर्म, नीति, विज्ञान, कला, समाज और शिक्षा सम्बन्धी महत्वपूर्ण समस्याओंपर अपने विचार प्रकट किअे हैं। तालस्ताय पितृसत्ताक कृषकपन (patriarchal peasants) के समर्थक थे, जो गाँवमें भी पूंजीवादके घुस जानेसे नष्ट होता जा रहा था। अपने निबंधोंमें तालस्ताय सदा पूंजीवादका खण्डन करते रहे। अुनका विचार था कि समाजके अन्याय सामाजिक क्रान्ति द्वारा नहीं किन्तु जनताके नैतिक पुनर्जीवन द्वारा दूर किअे जा सकते हैं।

सन् अस्सीमें तालस्तायके विचारोंकी यह अुथल-पुथल अुनकी कृतियों और अुनकी कलाके अुद्देश्य विषयके विचारोंपर अपना प्रभाव डाले बिना न रह सकी। अुस समयकी अुनकी सारी कृतियोंमें न केवल अुनकी शक्ति ही टपकती है, प्रत्युत अुनकी दुर्बलता भी झलक मारती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। तालस्तायकलाके विरुद्ध अुठ खड़े हुअे, क्योंकि अुस समय कलाका अुद्देश्य केवल अुच्चवर्गकी ही तृप्ति करना समझा जाता था। अधिकसे अधिक व्यक्तियोंको आत्मिक-क्रियाशीलताके सूत्रमें बांध रखनेमें समर्थ जन-कलाकी अुन्होंने रक्षा की। अुन्होंने बताया कि कला सर्वसाधारणकी समझमें आ जाने योग्य सहज होनी चाहिअे और अुसका मुख्य अुद्देश्य जनता (जनताका अर्थ तालस्तायने केवल किसान लोगोंसे ही लेते थे) के जीवन सम्बन्धी समस्याओंको हल करनेमें सहायक होनी चाहिअे। अिस कलाका आधार वह धार्मिक प्रारम्भ मानते हैं।

तालस्तायने लोक-साहित्य—कहानियाँ, कल्पित-कथाअें, बिलीने, मुहावरे आदिका बड़ा मूल्यांकन करते थे। स्वयम् अुन्होंने भी अिस प्रकारकी लोक-कथाअें आदिकी रचना की। लोक-कथाओंके साथ-साथ अुन्होंने लोक-नाटकोंकी भी रचना की। नाटक "अन्धकार की शक्ति" में मनोविश्लेषणसे ओत-प्रोत अुन सभी साधनोंका प्रयोग किया गया है, जिनसे हम अुनकी पहिली कृतियोंसे भली-भांति सुपरिचित हैं। अिस नाटकमें अुन्होंने पूंजीवादसे प्रभावित अेक पिछड़े हुअे पितृसत्ताक रूसी गांवका वर्णन किया है। अिस नाटकका जनतापर बड़ा प्रभाव पड़ा। कथासार अिस प्रकार है:—

आनीस्या अेक किसान युवती अपने बूढ़े पतिसे जिसने आनीस्यासे दूसरा विवाह किया था, सन्तुष्ट नहीं है। अुसका अेक नौकर निकीत्का है, जो जवान है। वह अुससे प्रेम करती है। अपना रास्ता साफ करनेके लिअे वह अपने पतिको विष देकर मार डालती है। अुधर निकीत्का अुसकी सौतीली लड़कीसे फँसा हुआ है। अुनके अेक बच्चा होता है, परन्तु आनीस्या अुस बच्चेको भी मरवा डालती है। अन्तमें जीत भलाअीकी होती है। निकीत्का अपने पापोंको स्वीकार कर लेता है और पश्चाताप करनेके लिअे तैयार है। अीश्वरसे भय रखनेवाला अुसका पिता अुसे विश्वास दिलाता है कि अीश्वर अुसके पापोंको अवश्य ही क्षमा कर देगा। वह कहता है—"अीश्वर तुम्हें अवश्य ही क्षमा दान देगा, मेरे बच्चे, तुमने अपने आपपर तनिक भी दया नहीं की, परन्तु वह तुमपर अवश्य दया करेगा।"

"अन्धकारकी शक्ति"के पश्चात तालस्तायने अेक और नाटक "शिक्षाका फल" लिखा जिसमें अुन्होंने अभिजातवर्गके चोंचलों तथा अकर्मण्यता तथा मूल आदि विषय अुनके विचारोंपर तीखा व्यंग्य किया है।

अिसके साथ तालस्तायकी कथा "अिवान अिलीचकी मृत्यु" प्रकाशित हुअी। अिसमें अेक अैसे मनुष्यकी मृत्युके भयका चित्रण है जिसका समस्त जीवन दयनीय अकर्मण्यता और निरर्थक बातोंसे भरपूर है। अिवान-अिलीचके नीरस जीवनमें कोअी महत्वपूर्ण बात नहीं हुअी थी। अपनी नौकरी तथा घर-गृहस्थीके कोल्हूके चक्करमें अुसके मस्तिष्कमें कभी भी कोअी गम्भीर प्रश्न नहीं अुठा था। अेक दिन बैठकमें पर्दा लगाते समय वह गिर पड़ा और बीमार पड़ गया। रोगी होनेपर अुसे पता चला कि अुसका कोअी सहारा नहीं। सब परिचित लोगोंने अुसे भुला दिया। पत्नी भी ताड़ गअी थी कि अब अुसके बचनेकी कोअी आशा नहीं। वह अपने भावी जीवनका प्रबन्ध करने लगी। बड़ी लड़की अपने विवाहकी चिन्तामें डूबी थी। अिलीच अिन लोगोंके व्यवहार तथा अपनी बीमारीके कारण खिन्न और अुद्विग्न हो अुठा। अन्तमें मृत्युने ही अिन वेदनाओंसे अुसको मुक्ति दिलाअी। तालस्तायने अिलीचकी बीमारीका बड़ा सूक्ष्म और ब्यौरेवार वर्णन करते हैं। अिस कथामें अुन्होंने दिखाया है कि अिवान अिलीच किस प्रकार गहरा आत्मनिरीक्षण करके अपने जीवनकी निरर्थकतापर पश्चाताप करता है। तालस्तायसे पूर्व किसीने भी मरते हुअे व्यक्तिकी मानसिक और शारीरिक वेदनाओंको अितनी सत्यता और मार्मिक ढंगसे व्यक्त नहीं किया।

पुनर्जन्म

१८८९ में तालस्तायने अपना अुपन्यास "पुनर्जन्म" लिखना आरम्भ किया। अिस अुपन्यासमें तालस्तायने शासक-वर्गके मूलभूत सिद्धान्तोंपर अितनी बड़ी आलोचना और तीव्र विरोध प्रकट किया है कि अन्तमें जब यह अुपन्यास १९०० में पत्रिका "नीवा" में प्रकाशित हुआ, तो अिसका मूलपाठ अधिकांशमें सरकार द्वारा बदल दिया गया था। अिसी अुपन्यासके कारण तालस्तायका चर्चसे बहिष्कार हुआ।

अिस अुपन्यासका नायक नेहल्यूदोव है जो स्वयम् तालस्तायकी प्रतिच्छाया है। नेहल्यूदोवकी विस्तारपूर्ण कथा बताते हुअे तालस्तायने अुसका आरम्भमें अेक अैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवकके रूपमें चित्रण करते हैं जिसको रूसीसमाजने अभीतक भ्रष्ट नहीं किया और जो नैतिक और सामाजिक समस्याओंको सुलझानेके लिअे संघर्ष कर रहा है। विश्व-विद्यालय छोड़नेके पश्चात् नेहल्यूदोव सेनामें भरती होकर अेक अैसे सामाजिक वातावरणमें फंस जाता है कि असका चरित्र भ्रष्ट हो जाता है। अुसकी पशुभावनाअें जागृत होकर अुसकी दैवी-भावनाओंका दमन कर देती हैं। अेक लड़की कात्यूशा मासलोवायाको अपने प्रेम जालमें फंसाकर अुसको भी भ्रष्ट कर देता है, जिससे वह गर्भवती हो जाती है। अुसे वह असी हालतमें छोड़कर चला जाता है। परिस्थितियोंकी शिकार मासलोवाया वेश्या-वृत्ति अपनाती है। अेक सेठकी हत्याके अपराधमें अदालतमें अुसपर मुकदमा चलाया जाता है। नेहल्यूदोव अुस अदालतका अेक सदस्य है और मासलोवायाको पहचान लेता है। मासलोवायाकी भेंटसे अुसपर गहरी चोट लगती है। आत्मनिरीक्षण करके वह अपने पापोंका प्रायश्चित करनेका संकल्प करता है। समाजसे अुसको घृणा हो जाती है। अदालतकी वह बड़ी आलोचना करता है। वह अब अपनी आत्माका अुद्धार करना चाहता है। अुसे पवित्र बनाना चाहता है क्योंकि प्रत्येक व्यक्तिके भीतर तथा भूखण्डपर 'अीश्वरीय साम्राज्य' स्थापित करनेका केवल यही अेक मात्र अुपाय है। नेहल्यूदोव अपने भीतर अेक दृष्टि फेंकता है और अपने आपको पापोंसे भरपूर पाता है। वह अिस निष्कर्षपर पहुँचता है कि अिस सबका मूल कारण अुसका अेक जमींदार होना और अेक बड़ी सम्पत्ति-का मालिक होना है। अिसका त्याग करनेकी लहर अुसके मनमें अुठती है, परन्तु मानसिक दुर्बलताके कारण वह तुरन्त अैसा नहीं कर पाता। अपनी भूमि वह किसानोंको लगानपर दे देता है। हाँ अितना अवश्य करता है कि भूमि देते समय वह किसानोंसे अैसी शर्तें करता है कि जिससे स्वयम् अुसे कोअी लाभ न हो। अुसके मनमें यह भाव घर कर जाता है कि जीवनका सार है "अपने आपको मालिक न समझकर जनताका सेवक समझना"।

मासलोवायाके चरित्रमें तालस्ताय व्यक्तिका नैतिक पुनर्जन्म दिलाते हैं। अुपन्यासके प्रारम्भमें मासलेवाया भी अेक पवित्र और मासूम लड़की है, परन्तु नेहल्यूदोव द्वारा भ्रष्ट और व्यक्त, अुसको गर्भवतीकी अवस्थामें ही घरसे बाहर निकाल दिया जाता है। मासलो-वाया भयंकर और तूफानी रातको नेहल्यूदोवको अन्तिम बार मिलनेके लिअे स्टेशनपर जाती है, परन्तु भेंट नहीं हो पाती और वह मरती-मरती बचती है। तालस्ताय लिखते हैं कि "अुस भयंकर रातमें अुसका भलाअीपरसे विश्वास अुठ गया.....अुस रातसे अुसे विश्वास हो गया कि वे लोग जो सदा अीश्वरका नाम रटते रहते हैं केवल जनताको धोखा देने मात्रके अुद्देश्यसे ही अैसा करते हैं।" अुस रातसे वह भ्रष्टा हो गअी। नेहल्यूदोव अुसको कैदसे छुनेड़ाका हर प्रकारसे प्रयत्न करता है और अन्तमें वह अुससे विवाह करनेका प्रस्ताव तक करता है। मासलोवाया अुसको प्रेम करती हुअी भी अुससे विवाह अिसलिअे नहीं करती कि अुससे नेहल्यूदोवका पारिवारिक जीवन सुखमय न हो सकेगा।

अिस अुपन्यासमें तालस्ताय किसानोंकी गरीबीका भी चित्रण करते हैं। अुन्होंने अिसमें दिखाया है कि १८६१ के सुधारोंसे अुनका कोअी लाभ नहीं हुआ, अिसलिअे अुन्हें अुन क्रान्तिकारियोंकी ओर भी ध्यान देना पड़ा जो जनताकी दशा सुधारना चाहते थे। वह क्रान्तिकारियोंके दो वर्गोंका समावेश करते हैं। अिनमेंसे अेक वर्गके प्रति अुनकी सहानुभूति है। अिसमें वे क्रान्तिकारी चित्रित किअे गअे हैं जो अपने ध्येयकी पूर्तिमें तन-मन-धनसे रत थे। तालस्ताय युद्धसे लेकर पशुहत्या तक सभी प्रकारकी हिंसाके विरुद्ध हैं। दूसरे हिंसात्मक क्रान्तिकारियोंके प्रति अुनकी सहानुभूति नहीं है। अुनको वह "असीम अुत्साहसे भरपूर परन्तु नैतिक गुणोंसे हीन और खोखली महत्वाकांक्षाओंसे भरा हुआ" कहते हैं।

अपने जीवनके अन्तिम दिनोंमें अुन्होंने अपना नाटक "जीवित लाश" और अेक कथा "हाजी मुरात" की रचना की। "जीवित लाश"का नायक फेद्या प्रोतासोव अेक अैसे बुरझुआ परिवारके कानूनबद्ध पाखण्डके प्रति विरोधकी सजीव मूर्ति है जिसमें विद्रू-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन्धनका आधार परस्पर प्रेम न होकर केवल कानूनका दबाव है।

प्रोतासोवकी पत्नी अुससे प्रेम न करके किसी औरसे प्रेम करती है। अपनी पत्नीको अपने प्रेमीसे विवाह करनेके लिअे रास्ता खोलनेके लिअे वह आत्म-हत्याका बहाना कर लेता है। अुसकी तथाकथित 'मृत्यु' पर अुसकी पत्नी अपने प्रेमीसे विवाह कर लेती है। और सुख और आनन्दका जीवन व्यतीत करने लग जाती है। बादमें भेद खुल जानेपर अुसपर और अुसकी पत्नीपर मुकदमा चलाया जाता है और अदालत अुनको विवाह बन्धनमें बन्धे रहनेके लिअे विवश करती है। अदालतका फैसला सुननेसे पहिले फेद्या अपने मित्र पेत्रुश्किनसे पूछता है:

"फेद्या:—तुम मुझे केवल यह बताओ कि बड़ीसे-बड़ी सजा क्या हो सकती है?

पेत्रुश्किन:—मैं तुम्हें पहले ही बता चुका हूँ—कड़ीसे-कड़ी सजा है साअिबेरियामें प्रवास।

फेद्या:—यानी किसको?

पेत्रुश्किन:—तुम्हे और तुम्हारी पत्नीको।

फेद्या:—और नर्मसे नर्म सजा क्या हो सकती है?

पेत्रुश्किन:—चर्चमें जाकर पश्चात्ताप और स्पष्ट-रूपसे दूसरे विवाहका खण्डन।

फेद्या:—अिसका अर्थ है वे मुझे अुसके साथ अर्थात् अुसको मेरे साथ फिरसे बांध देना चाहते हैं!

प्रोतासोव अैसे विवाह-बन्धनको स्वीकार नहीं कर सकता जिसका आधार परस्पर प्रेम नहीं। अुसको अिस अुलझनसे निकलनेका केवल अेक अुपाय सूझता है। वह अदालतमें आत्महत्या कर लेता है।

जीवनके अन्तिम समयमें तालस्तायने बड़ा अनथक काम किया है। १९०१—१९०२से लगे अेक गम्भीर रोगके होते हुअे भी अुनमें न केवल मानसिक शक्ति ही थी, परन्तु शारीरिक बल भी था। ज्यों ज्यों समय बीतता गया अुनका दिल यास्नाया पोल्यानासे अुठता गया। पास-पड़ोसके गाँवोंके निर्धन किसानोंके मध्य अुनको अपना समृद्ध और सुखी जीवन अखरता था। अिसी कारण वह सदा व्यथित रहने लगे। वह यास्नाया पोल्याना छोड़कर भाग निकलनेकी ताकमें थे। १९०५ में अुन्होंने अपनी डायरीमें लिखा: "अपनी सन्तुष्टता और पास-पड़ोसके गाँवोंके किसानोंकी निर्धनताके कारण मेरी व्यथा और रोग बढ़ता जा रहा है।" जनसाधारण-की अवस्था अुनके लिअे असह्य हो अुठी थी। १९०८ में अुन्होंने फिर अपनी डायरीमें लिखा: "यास्नाया पोल्यानाका जीवन अब पूर्णतः विषैला हो चुका है। जहाँ भी जाता हूँ—लज्जा और पीड़ा देखता हूँ।" अन्तमें १० नवम्बर १९१० को तालस्ताय चोरीसे पोल्याना छोड़कर चल दिअे। रास्तेमें वह अस्सी बरसका वृद्ध रेलके तीसरे दर्जेके डिब्बेमें बीमार पड़ गया। ओस्तापोवो रेल्वे स्टेशनका स्टेशनमास्टर अुसको अपने घर ले गया। २० नवम्बरको वह अिस संसारसे चल बसे। अुनका मृतक शरीर यास्नाया पोल्यानामें ले जाकर दफनाया गया। अुनकी अिच्छाके अनुसार अुनकी कब्र पर कोअी समाधि नहीं बनवाअी गअी और न ही कोअी पत्थर आदि लगवाया गया। अुनकी सादी कब्र अब भी अुनके सादा जीवनकी याद दिलाती है।

यास्नाया पोल्यानाको अब रूसी सरकारने राष्ट्रकी सम्पत्ति बना दिया है। अब वहाँ अेक बड़ा अजायब घर है जहाँ तालस्तायके जीवन सम्बन्धी वस्तुअें, अुनके रहने-सहनेके कमरे, पुस्तकालय आदि सब ठीक अुसी तरहसे सुरक्षित हैं, जैसे वे अुनके जीवन कालमें थे। यास्नाया पोल्याना अब अेक बड़ा तीर्थ-स्थान बन गया है। १९५२ में लेखकको भी वहाँ जानेका सौभाग्य प्राप्त हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेमचन्दके पिताकी चिता और प्रेमचन्द

—श्री परमेश्वर द्विरेफ

लपटें अुठती थीं लाल लाल
जिव्हा-लोलुप ज्यों व्याल-जाल
निर्गत ज्वालाके अंचलमें
कर रहीं नसें थी चट्ट-चट्ट
अुल्काकी रौद्र पिपासामें
हो गये लुप्त थे मृतक-पट्ट
अुद्घाटित कृष्णायित कपाल
यों लगता था ज्यों क्रुद्ध काल

(२)

लक्कड़-खन्डोंका था जमाव
जिनकी लपटोंमें तीव्र-ताव
वह चिता कठिन नौका-सी थी
जिससे मिल जाता तीर, पार
करती रहती जो अट्टहास
सुन्दर तनको कर क्षार-क्षार
भीषण थे अुसके हाव भाव
कर्कशतम था अुसका स्वभाव

(३)

परितः विस्तृत थे भस्म-ढेर
कालानुसार थी हेर फेर
कोअी अति ही प्राचीन, जीर्ण
कोअी अीषत् नूतन, नवीन
चंचल, हँसमुख, सौभाग्यवान्
कोअी दुर्बल, असहाय, दीन
नव साथीको ज्यों रहे घेर
दृग हारें जिनको हेर हेर

(४)

अत्यन्त शान्त ही था श्मशान
जैसे कोअी कुछ हो न ध्यान
अविरल आते रहते ही हैं
किस किसका रक्खा जाय ध्यान?
अब तक न यहाँ जाने कितने
अैसे ही जन आये अजान
की नहीं जरा पहिचान जान
जिनका स्मृतियोंमें भी न ज्ञान

(५)

यह आदिम युगसे यों अशेष
जलता परिवर्तन-शून्य वेश
निगले शत-शतजन लक्ष कोटी
अिसकी बुझ पायी पर न प्यास
लप-लप करती ज्वालाओंकी
जिव्हामें भीमाकार ग्रास
दुर्दम अनंत तृष्णा-प्रदेश
चिन्ता न व्यथा मनमें न ठेस

(६)

विस्तृत है अिसका शून्य पेट
जिसमें अगणित ही गअे लेट
प्रेमी द्रोही, पंडित गँवार
पापी धर्मन्धर, अुदासीन
लघु दीर्घ, शीर्ण विस्तीर्ण सभी
ही अेक नियमसे हुअे लीन
ली कभी किसीसे कुछ न भेंट
सबकी निश्चलता ली समेट

(७)

अिसके मनमें कुछ नहीं भेद
मानवने ही रे, किन्तु खेद
कर दिया यहाँ भी अूंच नीच
वक्षस्थल पर धर दिया भार
विस्तृत समाधि है अेक ओर
विच्छुरित दूसरी ओर क्षीर
भावोंका कर सम्बन्ध छेद;
भर दिअे निम्न अूंचे विभेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(८)

अुस दग्ध चिता पर चिर प्रसुप्त
जो मानव था चेतना-लुप्त
अुत्तुंग श्रृंग चट्टानोंने
निर्झरका रोक दिया बहाव
दिवसों, मासों, वर्षों युगके
चिन्तनने अुरमें किये घाव
अुनको रखना ही ठीक गुप्त
वह चिन्ता ही था लिअे सुप्त

(९)

तन कंटक-सा था रहा सूख
ज्यों मासोंकी हो तीव्र भूख
अुसकी अभिलाषा भूखी थी
रूखे थे अुसके मनोकान
मंजुल सपने स्वर्णिम अपने
धारे थी कृशतम शुष्क चाम
यातना अरुणकी-सी मयूख
मँडराओ जीवन गया सूख

(१०)

कितने ही दिवसोंसे बीमार
था अम्बर-च्युत-सा निराधार
जो अेक बार शय्या पकड़ी
वह फिर न कभी भी सका छोड़
अुठना चाहा, छुटना चाहा
अुसने अविरल जी तोड़ तोड़
पर कुछ भी पड़ पायी न पार
टूटे, साँसोंके शिथिल तार

(११)

अुपचारोंका सारा अभाव
कैसे तट पाती भग्न नाव ?
मरुमें गंगा-सा बना स्वप्न
औषधियोंका समुचित प्रबन्ध
सिर-भुजदंडोसे हीन कहाँ
तक लड़ सकता दुर्बल कबंध ?
विपदाओंका कितना दुराव ?
निर्जनमें लीन हुआ विराव

(१२)

अुसको न मिला भर पेट अन्न
जीवन भर सतत रहा विपन्न
गिनतीकी मुद्राओंमें ही
प्रातः सायं ज्यों क्रीत-दास
अविराम परिश्रम करता, था
फिर भी मिलते पूरे न ग्रास
करता रहता सिर भन्न-भन्न
कैसे रह पाता वह प्रसन्न ?

(१३)

वह अेक नहीं, थे कअी और
दे अुन्हें, स्वयं या खाय कौर
था वृहत् शकटके अनड्वान्
की ज्यों जीवनका लिअे भार
लीकों लीकोंही चला, किन्तु
गिर पड़ा धरा पर हार-हार
कष्टोंका किंचित् था न छोर
अुसका चल पाया कुछ न जोर

(१४)

रोते-रोते रह गअे बाल
कुछ भी पर द्रवित हुआ न काल
तरुणी नारी विधवा बनकर
रोती थी, करती थी विलाप
आधार नहीं, पतवार नहीं
अुर रह जाता है काँप-काँप
हा, अबलाका पुछ गया भाल
छिन गया विभाका तार-जाल

(१५)

अितने जीवोंका व्योम-यान
कैसे भर पाअेगा अुड़ान
किसके अिंगित, बलपर अुड़कर
यात्राकर पाअेगा समाप्त ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चालक-विहीन यह धूम्र-शकट
क्या कर लेगा वह छोर-प्राप्त ?
दुर्बलके जीवनमें महान्
बाधा विपदाओंका वितान

(१६)

पहली नारी भी मरी दीन
दिन पर दिन होकर क्षीण, हीन
चिन्ताओंकी व्याकुलताने
अुसको कर डाला था बीमार
वह सदा रुग्ण ही रहती थी
अुठते मिटते रहते विचार
कैसे रह पाती, पुष्ट, पीन ?
अुसकी सब अिच्छाअें विलीन

(१७)

अुस नारीका सुत अेक शेष
जो बैठा था व्याकुल विशेष
पढ़ने लिखनेके ही दिन थे
पढ़ता था वह चंचल किशोर
असहाय बना, अुसके सिरपर
टूटा कष्टोंका अचल घोर
वह रुंड-मुंड था महाक्लेश
अुजड़ा सपनोंका मुक्त देश

(१८)

अपलक था रहा चिता निहार
मस्तकपर था दुर्दान्त भार
क्रमशः कर, पग, मुख, कर्ण, केश
रजमें होकर परिणत असार
अुपहास कर रहे थे जीवन
है क्षार; जीवका यही सार
क्या कुछ, जीवनके आर पार ?
चिन्तनका रहा अभग्न तार

(१९)

पावक, भू, नभ, जल-वायु-तत्व
जब पाँचोंमें होता समत्व
जीवनका जल अुठता प्रदीप
आलोकित हो अुठता प्रकोष्ठ
पर अन्धकारका महाकाय
जब डस लेता है अुसे ओष्ठ
विच्छिन्न, भिन्न अन्यत्र स्वत्व
क्षय पाँचों भूतोंका महत्त्व

(२०)

नभमें नभ, मारुतमें समीर
पावकमें पावक, नीर नीर
मिट्टीमें मिट्टी यों अपना
अस्तित्व पृथक् कर पंच भूत
अपने प्रवाहमें जा मिलते
जो दृश्यमान वह सब अभूत
तारक-जालोंका रम्य चीर
अूषा-लालीमें ज्यों अधीर

(२१)

जीवनका नहीं अदृश्य पूर
रे, अिस जीवनसे परे, दूर
है शून्य मात्र, कुछ नहीं और
यह लोक सार, पर लोक क्षार
जब तक जीवन तब तक गुंजन
चिंतन, स्पंदन, मन, स्वन, विचार
संसार सदा भरपूर, चूर
छाया, भ्रम वह जो दूर-दूर

(२२)

यह प्रगति नहीं, यह वज्र-पात
हिंस्रोंने शोषित किया गात
देखता रहा वह विश्व-पिता,
निर्बलको जगने दिया मार
मकरोंने अुसको निगल लिया
कर सका नहीं मझधार-पार
झड़ सका न होकर पीत पात
ले गयी हरा ही तोड़ वात

[लेखकके अप्रकाशित युगस्रष्टा (प्रेमचन्द) महाकाव्यके प्रथम सर्गसे कुछ अंश]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं कौन हूँ ?

(अँग्रेजी)

—वाल्ट व्हिट्मेन

मैं मानवदेहीका कवि हूँ और मैं मानव-आत्माका कवि हूँ।

स्वर्गके आनन्द और विलास मेरे साथी हैं; नरककी पीड़ा और यातनाअें मेरे निकट हैं।

—अिनमेंसे प्रथमको मैं स्वयं अपने अन्तरमें विकसित करता हूँ और द्वितीय मेरी अभिनव वाणीमें प्रतिध्वनित हैं।

मैं सुन्दरियोंका कवि हूँ और समानरूपसे पुरुषोंका भी।

और 'मैं' कहता हूँ स्त्री होना अुतनाही महान् है जितना पुरुष होना ! और मैं कहता हूँ—भूमण्डलमें 'मनुकी माँ'से महत्तम और कोअी नहीं है।

मैं मानके मन्त्र गुनगुनाता हूँ और विस्तारकी वीणापर गौरवके गीत गाता हूँ। मैं देखता हूँ कि आकार ही अेकमात्र विकास है।

मैं वही हूँ—जो सुकोमल अेवम् अुदीयमान रात्रिके साथ चलता है।

मैं रजनी द्वारा अर्ध-ग्रसित सागर और पृथ्वीको पुकारता हूँ। और कहता हूँ; हे विवसन वक्षानिशा सुन्दरि ! निकट आओ। मेरे और निकट चली आओ ! हे मनहरणि, हे जीवनदाअिनि !

ओ, दखिन पवना श्यामा !

ओ, दीर्घ अेवम् गण्यमान तारावंती !

प्रशान्ते ! सिर हिलाकर स्वीकृति-सूचक सैन करनेवाली रजनी कन्ये !

प्रमत्ता, नग्ना, ग्रीष्म रात्रि-बाले ! निकट आ जाओ।

हे सुहासिनी, सदा विलासिनी, हिमश्वासिनी भूमा, जरा मुस्कराओ !

निद्रित एवम् सहज प्रवाहित द्रुमवति वसुन्धरे !

ओ, बिछुड़ी हुअी साँझवाली धरतीमाता ! ओ गिरिवरोंसे जड़ित धरित्रि !

ओ पूर्णचन्द्रके नभनील, समुज्जवल, पारदर्शी-प्रकाशसे प्रकाशित वसुधे !

अनन्तके छोरोंतक पहुँचती बाहुओंवाली धरित्री ओ, प्रपुष्ट पयोधरोंवाली धरती माँ !

तनिक मुस्कराओ कि तुम्हारा 'प्रेमी' आया है।

ओ मुक्तमना, तुमने मुझे प्यारका अुपहार दिया है और अिसीलिअे तो मैं तुम्हें यह प्रेम समर्पित कर रहा हूँ।

अरे, यह अनिवर्चनीय, आत्मविभोर प्रेम !

हे सुहासिनी, सदाविलासिनी !

(२)

और मैं कह चुका हूँ कि आत्मा शरीरसे बड़ा नहीं है। और मैंने कहा है कि शरीर आत्मासे बड़ा नहीं है।—अैसा कोअी पदार्थ नहीं है, जो किसी चीजसे महत्तर हो! स्वयम् अीश्वर भी नहीं।

और जो कोअी सहानुभूति-शून्य हृदय लिअे, अेक कदम भी चलता है, वह अपनी ही स्मशान-यात्राको जा रहा है और अपने ही कफनकी पोशाक पहने है।

और मैं, तुम और हम चाहे हमारे पास कानी कौड़ी भी न हो भूमण्डलको खरीद सकते हैं और हमारी अेक दृष्टिमें युग-युगान्तरोंका ज्ञान समाहित है।

और मैं सभी स्त्री-पुरुषोंसे कहता हूँ कि अनन्तानन्त ब्रह्माण्डके सम्मुख भी तुम्हारी आत्मा अनुद्वेलित अेवम् प्रशान्त स्वरूप लिअे खड़ी रहे !

और मैं मानव-जातिसे कहता हूँ—अरे, अीश्वरके विषयमें अुत्सुक, जिज्ञासु न बनो, वह कोअी विचित्र, अप्राप्य वस्तु नहीं है।

विश्वकी कोअी वचनावली अिस विषयका वर्णन नहीं कर सकती कि मैं अीश्वर और मृत्युके बारेमें कितना निश्चिन्त हूँ।

अरे भाअी, मैं प्रत्येक वस्तुमें प्रभुके दर्शन करता हूँ (अुसका हृदय-स्पन्दन सुनता हूँ), फिरभी वह मेरे लिअे सर्वथा अज्ञात है।

और मैं यह नहीं समझ पाता कि संसारमें मुझसे अधिक विस्मयजनक कौन है ?

भला मैं आजकी अपेक्षा अधिक दर्शन-अभिलाषा क्यों रखूं ? चौबीस घण्टोंमेंसे प्रत्येक घड़ी और प्रतिपल मैं अुसके दर्शन करता हूँ।

मैं मानव-मात्रके—नर और नारीके वदनारविंदमें अपने प्रभुको देखता हूँ।

—अनुवादक, श्री परदेशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सूचना–'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअे।)

प्रस्थान (खण्डकाव्य)— लेखक—यदुनाथ पाण्डेय 'अश्रु' साहित्यरत्न। प्रकाशक—शान्ति निकेतन, ४८ पोन्नप्पाचेट्टी स्ट्रीट, पार्क टाअुन, मद्रास–३। पृष्ठ संख्या ५५ (६½ ड. क्रा.)। मूल्य १)।

पाण्डेयजीने 'प्रस्थान' नामक अपने खण्डकाव्यमें रानी दुर्गावतीके पुराने अैतिहासिक कथानकको लेकर सरल भाषामें अपने हृदयके भावोंको अुँडेलनेका प्रयत्न किया है। अुनका यह प्रयत्न बहुत बड़े अंशमें सफल भी हुआ है। मद्रासके क्षेत्रमें सरल हिन्दीके स्तरको लेखकने ध्यानमें रखा है।

वीरोंका अेक ही बाना होता है और वह है मातृभूमिकी आजादीकी रक्षाके लिअे अपने प्राणों तकका अुत्सर्ग करनेके लिअे सदैव तत्पर रहना। अिसी बातको कविने प्रभावशाली ढंगसे कहा है—

"वीरो काया बन्धन तजकर
हमें अमर हो जाना है;
मातृभूमि है सिसक रही, अुस
को आजाद बनाना है।
चलो चलो चल पड़ो जवानो !
रख दो अिस अबलाकी लाज,
देख हमारा रण-कौशल, मग
चले छोड़कर रण यमराज।"

अिन पंक्तियोंको सुनकर कौन माताका सेवक अुछल न पड़ेगा।

परिणामतः

फैला शुभ सन्देश, कटारें
नागिन-सी फुफकार अुठीं,
भाले बरछे जाग पड़े, असि
युगसे प्यासी तड़प अुठीं।

अैसा होना स्वाभाविक ही था।

कहीं कहीं कविने सफलता पूर्वक संस्कृतकी कविताओंसे कुछ भावोंको भी लिया है। देखिअे—

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंकजश्रीः
अित्थं विचिन्तयति कोषगते द्विरेफे
हा हन्त हन्त नलिनीं गज अुज्जहार।

अुक्त श्लोकके भावको कविने अिस प्रकार प्रकट किया है :—

हाय ! प्रेममें पागल, भोला
भौंरा धोखा खाता है,
शतदल संपुटमें बंध घरसे,
दूर रात रह जाता है।

संक्षेपमें यही कहा जा सकता है कि 'प्रस्थान' में कवि काफी सफल रहा है। तथा अहिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्रके लिअे अुक्त पुस्तक बोधप्रद, हिन्दीके प्रति रुचि अुत्पन्न करनेवाली तथा हिन्दी सीखनेमें सहायक सिद्ध होगी।

–मदनमोहन शर्मा, अेम. अे. साहित्यरत्न,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाल गोपाल (मासिक) :—प्रकाशक, मध्य-प्रदेश शिशु कल्याण परिषद्, नागपुर, मूल्य वार्षिक ४ रु. अेक अंकका ६ आना।

मध्यप्रदेशमें अेक बालोपयोगी मासिक पत्रिकाका अभाव बहुत दिनोंसे खटकता रहा है। यों तो परियों और राजा-रानियोंके किस्सोंसे भरी कअी पत्रिकाअें बाहरसे आकर मध्यप्रदेशमें बिकती रही हैं। पर अुनसे देशके बालकोंको आगे चलकर जीवनकी जिम्मेदारियाँ अुठानेमें मदद मिल सकेगी, अैसी आशा नहीं की जा सकती थी। मध्यप्रदेश शिशु कल्याण परिषद् ने बच्चोंके मन और मस्तिष्कको स्वस्थ भोजन देकर पुष्ट बनानेका जो प्रयत्न अिस 'बालगोपाल' द्वारा आरंभ किया है, वह वस्तुतः सराहनीय है। यह पत्रिका अगस्त १९५४ से प्रकाशित हो रही है। पिछले तीन महीनोंमें अिस पत्रिकाने काफी प्रगति की है। पत्रिकामें बच्चोंके लिअे शिक्षा-प्रद अेवं रोचक कहानियाँ, साधारण ज्ञानकी अभिवृद्धिके लिअे नगरों, देशों पशु-पक्षियों आदिके सम्बन्धमें ज्ञान-वर्द्धक लेख, बच्चोंको प्रेरणा देनेवाली कविताअें प्रचुरमात्रामें होनेके साथ-साथ अभिभावकों और सामाजिक कार्यकर्ताओंके लिअे बच्चोंके लालन-पालन और अुनकी शिक्षा-व्यवस्था तथा चरित्र सुधारमें सहायता प्रदान करनेवाले लेख भी प्रकाशित होते हैं।

अन्य अंकोंकी अपेक्षा मार्च १९५६ से पत्रिका-की सजधज और सामग्रीमें और भी अधिक सुधार हुआ है। कहानियों, कविताओं और लेखोंका स्तर अधिक सुधरा है और वे बच्चोंके लिअे अधिकसे अधिक सरल और सुलझी भाषामें लिखी जाने लगी है। पहिलेके अंकोंमें भाषाकी कुछ क्लिष्टता तथा सामग्रीके चुनावमें कुछ असावधानी पाअी जाती है।

अगस्त, १९५६ का स्वाधीनता अंक तो वस्तुतः बहुत ही सुन्दर निकला है। स्वतंत्रता, तत्सम्बधी भारतके आन्दोलन तथा अुक्त आदोलनमें बच्चोंके भागके सम्बन्धमें बहुत ही सरल अेवं रोचक ढंगसे जानकारी दी गअी है जिससे बच्चे अुनके सम्बन्धमें आसानीसे जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। अिस अंकमें "आजादी क्या है," "१५ अगस्त," "स्वतंत्रता आदोलनमें बच्चोंका स्थान," आदि लेख, "मित्रका मूल्य," "भगवानके बच्चे," "वर्षाकी कहानी" आदि कहानियाँ तथा प्रायः सभी कविताअें बहुत ही ज्ञानप्रद, शिक्षाप्रद और रोचक हैं।

यह पत्र छपाअी-सफाअीकी दृष्टिसे भी बहुत अच्छा निकल रहा है। हमें आशा है, मध्यप्रदेश शिशु-कल्याण परिषद्के अिस प्रयासको पूरे देशसे सहयोग प्राप्त होगा।

—देवव्रत अधिकारी

संसारको चुनौती—लेखक-प्रो. रामचरण महेन्द्र अेम. अे. प्रकाशक—विश्वेश्वरानन्द-वैदिक-संस्थान, होशियारपुर, मूल्य—दो रुपअे दस आने पृष्ठ-संख्या—२२०।

प्रस्तुत पुस्तकमें अँग्रेजीमें अुपलब्ध अनेक आत्म-सुधार-विषयक पुस्तकों जैसी अुपयोगी सामग्री मौलिक ढंगसे प्रस्तुत की गअी है।

मनोविज्ञानके अनुसार दैनिक जीवन और व्यवहारमें आनेवाली अनेक समस्याओंको विद्वान् लेखकने नवीन प्रकारसे चित्रित किया है। हिन्दीमें अिस प्रकारका प्रामाणिक विद्वत्ता-पूर्ण मनोवैज्ञानिक विवेचन बहुत कम है। अिस पुस्तकसे हिन्दीमें अेक बड़ी कमी की पूर्ति होती है। शैली सरल सुबोध है, विचार मौलिक और प्रेरक हैं और विषय-चयन सर्वथा नवीन। कुल मिला-कर प्रस्तुत पुस्तक प्रत्येक अुन्नति चाहनेवाले व्यक्तिके लिअे बहुमूल्य है।

विजअी कौन ? अिच्छा शक्तिकी दृढ़ता, विचार-पूजा, मनका पलायनवाद, आपका जीवन, भावुकता आदि लेख अत्यन्त ही पथ प्रदर्शक है।

श्री महेन्द्रजी कोटाके हर्बर्ट कालेजमें अँग्रेजीके प्राध्यापक होते हुअे भी हिन्दीकी सेवामें निरत हैं यह प्रसन्नताकी बात है। आवरण और छपाअी भी सुन्दर है।

साठ पुस्तकोंके लेखक प्रो० महेन्द्रजीकी अिस पुस्तकका पाठकोंमें स्वागत होगा अैसा हमारा विश्वास है।

—परमेश्वर द्विवेदी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिस राज्यके नव निर्माणका सु-स्वागतम् !

अभी ९ वर्ष हुअे, जब दो सौ साल तक चलते रहे राष्ट्रीय संघर्ष और महान् बलिदानोंके बाद भारतको स्वतत्रता मिली, अुसका संविधान बना। और गत १९४७के पश्चात् विकासके पथपर भारत अग्रसर हुआ—बहुत कुछ आगे बढ़ा। जहाँ संविधानने भारतकी विभिन्न भाषाओंके संरक्षणको माना वहाँ देशको सीक्युलर राज्ज या धर्म-निरपेक्ष भारत भी घोषित किया। साथ ही भाषावार प्रान्त या प्रादेशिक राज्य पुनर्गठनका भी सूत्रपात किया। अिस पुनर्गठनके भीतर बहुत ही अच्छी भावना रही, पर अिसके साथ ही, देशमें अेक छोरसे दूसरे छोर तक शान्ति भंग हो गअी। देश-विदेशमें भारतकी प्रतिष्ठा को, अेकताको बहुत गहरी ठेस लगी। अैसा लगता था कि भाषा और साहित्य, सभ्यता और तहजीबके नामपर भारतमें प्रचण्ड अशान्ति न फैल जाये। झगड़ा-फसाद, मारपीट, गड़बड़ी खूब मची। और अिस दरमियान अेक नया मजहबी विचारोंका धार्मिक आन्दोलन भी चल पड़ा और अिसने भी अेक छोरसे दूसरे छोरतक अशान्ति मचादी। प्रान्तीयता, साम्प्रदायिकता, फिरकापरस्ती, मज़हबपरस्ती या अिसी तरहकी कोअी दूषित मनोवृत्ति कभी हितकर साबित नहीं हुअी देशके हकमें।

हम चक्करमें पड़जाते हैं कि क्या कोअी भाषा किसी भाषाको दबा देती है? खुदाकी अिबादतके लिये तहलका या हंगामा मचाकर क्या सचाअीका गला दबोचा जा सकता है? अेक दूसरे पड़ोसीकी अिज्जत प्यार और विश्वासको ठुकराया जाता है? मजहब कभी आपसमें बैर करना नहीं सिखाता। खैर जो कुछ हुआ हम मनुष्यताके नाते यह सब कटुता भूल जावें। और अेक हृदय होकर, बुद्धिपूर्वक, सहृदयतापूर्वक आज १ नवम्बरके सुप्रभात —सुनहरे सवेरेका स्वागत करें!

अिधर नये मध्यप्रदेश राज्यका विशाल निर्माण हो रहा है और दूसरी ओर महाराष्ट्र, गुजरात, सौराष्ट्र, कच्छ और विदर्भका समन्वय कर अेक बहुत ही बड़ा भव्य बम्बअी जैसा वैभवशाली द्वि-भाषी महान् राज्य प्रभातके अुज्ज्वल क्षितिजपर अुदय हो रहा है। हमारे ये साहस और औदार्य भरे शक्तिशाली नेता अेक-हृदय होकर अिस सुन्दर, संस्कारयुक्त बुद्धि, वाङ्मय, कला, सम्पन्न विशाल बम्बअी राज्यका अुत्कर्ष साधन करेंगे और अिसे अुन्नति तथा विकासके पथपर अग्रसर करेंगे। मराठी, गुजराती और हिन्दी-भाषी अेक दूसरेके अत्यन्त निकट आअेंगे, और ये भाषाअें समृद्ध होंगी, शासन समदर्शी होकर अिनको प्रश्रय देगा। हम अेक दूसरेकी अिज्जत करेंगे—अेक दूसरेका प्यार करेंगे और विश्वास करेंगे। भारतकी अेकता, अिकाअी और शान्ति बनाये रखनेके लिअे हम जी-जान निछावर कर देंगे। हम अिस विचारके प्रबल समर्थक हैं, साथ ही हमारा दृढ़ विश्वास भी है कि कोअी भाषा, साहित्य अथवा लिपि किसी दूसरी भाषा, साहित्य, संस्कृति और सभ्यताका अुच्छेदन नहीं करती। कमसे कम भारतीय भाषाअें तो कभी नहीं। आवश्यकतानुसार हमें अपने दृष्टिकोण बदलना है।

हिन्दीके बारेमें भी हमें अपने दृष्टिबिन्दुको निर्मल और अुदार बनाना है। यह अराष्ट्रीय हिन्दी, वह राष्ट्रीय हिन्दी, यह अुत्तर देशीय हिन्दी और वह दक्षिण देशीय हिन्दी—अिस तरह कोसते, दाँत पीसते और हथेली मसलते नहीं बैठे रहना है। राष्ट्रभाषा हिन्दी तो अुसी दिन राष्ट्रीय बन गअी थी, जिस दिन हिन्द देशने दो सौ बरस पहले आजादीका जंग छेड़ा, खुसरो, रहीम और मलिक महम्मदने जिसमें लिखा, अ-हिन्दी भाषी—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दयानन्द, तिलक, गांधी और रवीन्द्रने हिन्दीको राष्ट्रभाषा माना और ९०% प्रशित अहिन्दी भाषी ही जिसके निर्माण और प्रसारमें सेवाभावसे लगे हुअे हैं। हमारे प्रधानमंत्री प्रियदर्शी पंडित जवाहरलालने हिन्दीकी अनन्त शक्तिको पहचानकर ही अेक दिन कहा—'हिन्दी अपनी ताक़तसे बढ़ेगी!'

आप और हम हिन्दीकी शक्तिका अन्दाजा सहज ही लगा सकते हैं। भाषा हो, चाहे साहित्य हो, धर्म हो या संस्कृति, अुसकी कट्टरताका हमारे अिस नवोदित बम्बअी द्विभाषी राज्यमें शीघ्र ही नामोनिशान बाकी न रहे। बम्बअीमें मराठी–गुजराती–हिन्दीका त्रिवेणी-संगम तीर्थराज शीघ्र बने!

—ह० श०

× × ×

जयपुरमें सातवाँ राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलन :

हर्षकी बात है कि ता. १८, १९ को जयपुरमें सातवाँ अ. भा. राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलन सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। भव्य विशाल मार्ग तथा भव्य सुन्दर भवनोंके कारण जिसे भारतका पेरिस कहा गया है, अुसका अपना भी अेक आकर्षण था, जिसके कारण प्रतिनिधियोंमें जयपुर जानेका बड़ा अुत्साह था। परन्तु बम्बअी प्रदेशकी शालाओंमें छुट्टियाँ आरम्भ नहीं हुअी थीं अिसलिअे बहुतसे शिक्षक–प्रचारक जयपुर सम्मेलनमें भाग न ले सके। फिर भी प्रतिनिधियोंकी संख्या पहलेके सभी सम्मेलनोंसे अधिक थी, यह अिस सम्मेलनकी दिन-प्रतिदिन बढ़नेवाली लोकप्रियताका प्रमाण है।

सम्मेलनके सभापति थे सेठ श्री गोविन्ददासजी। अक्टूबरके अिसी महीनेमें सारे हिन्दी-जगत्में अुनकी हीरक-जयन्ती मनाअी जा रही थी, यह सुवर्णमें सुगन्ध जैसा योग था। केन्द्रीय गृह-मन्त्रालयके अुप-मन्त्री श्री दातार ने सम्मेलनका अुद्घाटन किया। अपने अुद्घाटन-भाषणके साथ अुन्होंने अेक परिशिष्ट भी जोड़ दिया था जिसमें हिन्दीके लिअे सरकार द्वारा किअे गअे अथवा किअे जानेवाले कार्योंकी रूपरेखा आँकी गअी थी। अुनका भाषण तर्कपूर्ण और परिश्रमपूर्वक तैयार किया गया प्रतीत होता है। सरकारका पक्ष अुन्होंने अत्यन्त सामर्थ्यपूर्ण भाषामें प्रतिपादित किया है।

सेठ श्री गोविन्ददासजीने अपनी प्रबल वाणीमें हिन्दीके कार्यमें केन्द्रीय शिक्षा-मन्त्रालयकी शिथिलताका अच्छा चित्र खींचा और शिक्षा-मन्त्रियोंके सम्मेलनकी भर्त्सना की।

सम्मेलनका सबसे मधुर और प्रभावशाली कार्य था प्रज्ञाचक्षु श्री सुखलालजी संघवीका सम्मानकर अुन्हें गांधी-पुरस्कारका १५०१) प्रदान करना। श्री सुखलालजी प्रज्ञाचक्षु होनेपर भी दर्शन-शास्त्रके प्रकाण्ड पण्डित हैं और जैन-दर्शन तो अुनका अपना विषय ही है। अुन्होंने हिन्दीमें बहुत लिखा है और अच्छा लिखा है। अुन्होंने अपने भाषणमें अेक बातपर विशेष बल दिया कि हिन्दीमें अच्छे मौलिक ग्रन्थोंकी रचना होनेपर हिन्दीतर भाषी विद्वान् अुसके प्रति अधिक आकर्षित होंगे। शास्त्रीय तथा साहित्यिक अूँचे प्रकारके मौलिक ग्रन्थोंसे ही हिन्दी समृद्ध होगी।

सम्मेलनमें प्रस्ताव तो बहुत थोड़े किअे गअे परन्तु वे सब बड़े महत्वके थे। अेक प्रस्तावके द्वारा हिन्दी ही देशकी राष्ट्रभाषा और राजभाषा हो सकती है अिसपर जोर दिया गया और किसी भी विदेशी भाषाको अुस स्थानपर कायम रखनेकी किसी भी प्रवृत्तिका विरोध किया गया। अेक दूसरे प्रस्तावके द्वारा २–३ अगस्तके शिक्षा-मन्त्रियोंके सम्मेलनके निर्णयोंकी निन्दा की गअी। परन्तु सबसे महत्वपूर्ण प्रस्ताव अिस सम्मेलनने जो किया है अुसे हम यहाँ ज्योंका त्यों अुद्धृत कर देना ही अुचित मानते हैं। वह प्रस्ताव अिस प्रकार है:—

"भारतकी मुख्य-मुख्य प्रादेशिक भाषाओंके विद्वान् तथा साहित्यिक अेक दूसरेके निकट सम्पर्कमें आकर साहित्यिक आदान-प्रदान तथा गोष्ठी कर सकें और समस्त भारतके लिअे अेक सामान्य वैज्ञानिक तथा पारिभाषिक शब्दावली तैयार करनेकी भूमिका बना सकें अिसके लिअे भिन्न-भिन्न प्रादेशिक भाषाओंके विद्वानों तथा साहित्यिकोंका अेक सम्मेलन बुलानेकी अत्यन्त आव-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्यकता प्रतीत हो रही है। अतः अिस सम्मेलनका आग्रह है कि अुपरोक्त अुद्देश्योंकी पूर्तिके लिअे विभिन्न प्रदेशोंके वैज्ञानिकों अेवं साहित्यिक प्रतिनिधियोंका अेक सम्मेलन दिल्लीमें शीघ्र ही बुलाया जाय। राष्ट्रभाषा प्रचार समितिसे अनुरोध है कि वह अपने दिल्ली-कार्यालयके द्वारा अिस दिशामें प्रयत्न आरम्भ करे।"

सब भाषाओं के लिअे सामान्य वैज्ञानिक तथा पारिभाषिक शब्दावली तैयार करनेका प्रश्न बड़ा ही महत्वपूर्ण प्रश्न है। हिन्दीतरभाषी कअी विद्वानोंने अिसके लिअे आशा प्रकट की है। परन्तु अिसके लिअे कोअी प्रयत्न नहीं हो रहा है। केन्द्रीय शिक्षा-मन्त्रालयकी औरसे कुछ कार्य किया जा रहा है अवश्य परन्तु वह बहुत ही अल्प मात्रामें हो रहा है और वह अेकदेशीय भी है। हिन्दीकी अैसी शब्दावली केन्द्रमें तैयार करने से यह काम हो जायगा अैसी आशा रखना अुचित नहीं। अिसके लिअे सब प्रदेशोंके सहयोगकी आवश्यकता है और सबके संयुक्त प्रयत्नोंसे ही यह कार्य सफल हो सकेगा। अिसके लिअे अलग-अलग क्षेत्रोंमें कार्य करनेकी भी आवश्यकता होगी। आज जो शब्द कारीगरोंमें तथा वैज्ञानिक तथा यांत्रिक कारखानोमें विभिन्न भाषाओंमें प्रचलित है अुन्हें अेकत्र करनेकी आवश्यकता है। हमारा मानना है कि बहुतसे शब्द अैसे होंगे जो दो नहीं चार-पाँच भाषाओंमें भी सामान्य होंगे। अुन शब्दोंको यदि अुचित माना जाय तो प्रथम ग्रहण कर लेना चाहिअे। अुसके बाद नये शब्दोंके निर्माणका विचार किया जाय। अुसके लिअे भी विभिन्न भाषा-भाषी विद्वानोंकी सम्मतिसे कुछ नियम बना लेने होंगे। यह कार्य यदि किया जा सके तो वह बहुत बड़ा कार्य होगा और अिससे भाषांगत प्रादेशिकताको दूर करनेमें बहुत बड़ी सहायता प्राप्त होगी। अुपरोक्त प्रस्तावका यही अुद्देश्य है। परन्तु प्रस्तावमें जैसा सम्मेलन बुलानेकी आशा रखी गअी वैसा सम्मेलन किया जा सकेगा कि नहीं यह कहना आज कठिन है। अिसके लिअे हमें प्रतीक्षा करनी होगी कि विभिन्न भाषा-भाषी विद्वान् तथा साहित्यिक अिस प्रस्तावका कैसा स्वागत करते हैं।

जयपुरके सम्मेलनमें अेक नया परन्तु बहुत ही सुखद और मधुर कार्य सम्पन्न हुआ। अिस अवसरपर गत लगातार ३८ वर्षोंसे—१८ वर्ष मद्रास सभामें और २० वर्ष वर्धा-समितिमें—आजीवी राष्ट्रभाषा हिन्दीके सेवक श्रीहृषीकेश शर्माकी सेवाओंका सम्मान किया गया। यह राष्ट्रभाषाके तमाम प्रचारक तथा सेवियोंके हृदयकी बात थी। श्री शर्माजीने भी अुस अवसरपर अपना हृदय खोलकर अपने बन्धुओं तथा साथियोंके सामने रख दिया। अुस समय सारी सभाका वातावरण भावोद्रेकके कारण स्नेहसिक्त और शान्त-करुण बन गया था। हम पंडित हृषीकेशजीको बधाअी देते हैं और परमात्मासे प्रार्थना करते हैं कि वे राष्ट्रभाषाकी सेवा करनेके लिअे दीर्घायु हों।

—मो० भ०

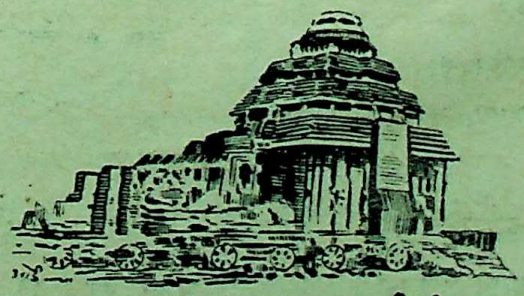

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीका स्वतंत्र मासिक--

"नया समाज"

पढ़िअे

देश-विदेशकी राजनीति, सांस्कृतिक अेवं कला-प्रवृत्तियोंकी चर्चा, साहित्य, समाज और पाठकोंके मतोंका विहंगावलोकन तथा सम-सामयिक गतिविधिपर विचार आदि अिसके प्रमुख अंग हैं।

वार्षिक ८) ★ अेक प्रति ।।।)

'नया समाज' कार्यालय,

अिण्डिया अेक्सचेंज (३ तल्ला)

कलकत्ता।

गुजरात प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी

साहित्यिक-त्रैमासिक-पत्रिका

"राष्ट्रवीणा"

सम्पादक : जेठालाल जोषी

विद्वानोंके चिंतन प्रधान लेख, गुजरातीके साहित्यिक, सांस्कृतिक, कला विषयक लेख, कविताअें, प्रवास वर्णन, परीक्षोपयोगी लेख, आदि ठोस सामग्रीके अलावा चयनिका, संस्कृति-स्रोत, आदि कअी स्तम्भ नियमित प्रकाशित होते हैं। पत्रिका जनवरी, अप्रैल, जुलाअी अेवं अक्टूबरमें नियमित प्रकाशित होती है।

वार्षिक मूल्य : ४) अेक प्रति : १)

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धाके सक्रिय प्रचारकों अेवं केन्द्र-व्यवस्थापकोंको पत्रिका (डाक-व्ययके ।।।) अतिरिक्त लेकर) आधे मूल्यमें भेजी जाती है।

गुजरात प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, कालूपुर, खजूरीकी पोल, अहमदाबाद-१।

:: युगचेतना ::

साहित्य, संस्कृति और कलाकी प्रतिनिधि मासिक पत्रिका

-: सम्पादन समिति :-

डा. देवराज, कुंवरनारायण, कृष्णनारायण कक्कड़, प्रतापनारायण टंडन, डा. प्रेमशंकर

वार्षिक ८), अर्धवार्षिक ४), १ प्रति १२ आना

पता :--

"युगचेतना" कार्यालय,

स्पीड बिल्डिंग, ला प्लास, लखनऊ।

मासिक पत्रिका

:: नया पथ ::

२२, कैसर बाग लखनऊ • वार्षिक ६) अेक प्रति ।।)

स्तम्भ--

चक्कर क्लब • साहित्य-समीक्षा

संस्कृति-प्रवाह • हमारे सहयोगी

लेख • कहानियाँ • कविताअें

--: सम्पादक :--

यशपाल ★ शिव वर्मा

राजीव सक्सेना

'नाटक अंक' की प्रति सुरक्षित कराअें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय साहित्यकी प्रतिनिधि-पत्रिका

राष्ट्रभारतीके प्रेमी पाठकोंसे निवेदन.

अिस नवम्बरका अंक आपके हाथमें है।

जो सज्जन ग्राहक हैं और 'राष्ट्रभारती' को नियमित पढ़ते हैं अुनसे हमारा यह निवेदन है:--

सूचना:—हमारा आगामी दिसम्बर ५६ का अंक विश्व-विद्यालयोंकी अुच्च हिन्दी-परीक्षोपयोगी विविध विषयक पाठ्य सामग्रीसे सुसज्जित होगा। 'विशारद', रत्न और अेम. अे. के छात्र अिसे न भूलें और तुरन्त ग्राहक बनें। यह अंक १ दिसम्बरको निकलेगा।

'राष्ट्रभारती' को अबतक जो कुछ सफलता और लोकप्रियता मिली है, यह अुसके प्रेमी पाठकों और कृपालु लेखकोंके स्नेह तथा सहयोग-दानका फल है। यदि आप चाहते हैं कि 'राष्ट्रभारती' राष्ट्रभाषाकी और विविध समृद्ध समग्र भारतीय साहित्यकी स्वावलम्बी होकर, अच्छी तरह सेवा करे तो आप—सबका हार्दिक सक्रिय सहयोग तुरन्त अुसे मिलना चाहिअे और वह अितना ही कि--

आप तो अिसके स्थाअी ग्राहक, पाठक, बने ही रहें, साथ ही आप अपने अिष्ट-मित्रों, परिचितोंमेंसे भी कम-से-कम दो नअे ग्राहक राष्ट्र-भारतीके लिअे अवश्य बना दें और मनीआर्डरसे ही प्रतिग्राहक ६) रु. चन्दा भिजवा दें।

हमें 'राष्ट्रभारती'को हिन्दी अेवं प्रादेशिक भाषाओंकी सेवाके लिअे शीघ्र ही पूर्ण स्वावलम्बी बनाना है। आअिअे, आप हमारा हाथ बँटावें।

रियायत :-- समितिके प्रमाणित प्रचारकों, शिक्षकों, कोविद, रा. भा. रत्न, विशारद और साहित्य-रत्नके विद्यार्थियों, केन्द्र-व्यवस्थापकों तथा सभी सार्वजनिक पुस्तकालयों, वाचनालयोंके लिअे और स्कूल-कालेजोंके लिअे केवल ५) वार्षिक चन्दा रखा गया है। अतः वे ५) रु. मात्र म० आ० से भेजें।

'राष्ट्रभारती' के प्रत्येक अंकका सामग्री-स्तर अूँचे धरातलका और पठन-मनन-चिन्तन योग्य रहता है। बाहरी तड़क-भड़कसे दूर, सादगी अुसकी अपनी विशेषता है।

पता:--व्यवस्थापक,

'राष्ट्रभारती', हिन्दीनगर, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रभाषा हिन्दी की श्रीवृद्धि के लिए

उत्तर प्रदेश शासन का अभिनव प्रकाशन प्रयास

जिसके अन्तर्गत

हिन्दी वाङमय के विविध अंग-उपांगों पर प्रायः तीन सौ मौलिक ग्रन्थों के प्रणयन एवं विश्व के महत्वपूर्ण ग्रन्थों के अनुवाद की पंचवर्षीय योजना। इस योजना में देश के लब्धप्रतिष्ठ विद्वानों एवं विशेषज्ञों का सहयोग प्राप्त है।

अब तक प्रकाशित ग्रन्थ :—

विषय	लेखक	पृष्ठ-संख्या	मूल्य
१--भारतीय ज्योति का इतिहास	डा० गोरख प्रसाद	२७२	४ रु०
२--तत्वज्ञान	,, दीवान चन्द	२०५	४ रु०
३--हिन्दू गणित शास्त्र का इतिहास (प्रथम भाग)	,, विभूति भूषण दत्त तथा ,, अवधेश नारायण सिंह	२३८	३ रु०
४--अरिस्तू की राजनीति (मूल ग्रीक से अनुवाद)	श्री भोलानाथ शर्मा	६४७	८ रु०
५--उत्तर प्रदेश में बौद्ध-धर्म का विकास	डा० नलिनाक्ष दत्त तथा श्री कृष्णदत्त बाजपेयी	३३८	६ रु०

अत्यन्त स्वच्छ छपाई, कपड़े की जिल्द और आकर्षक आवरण इन ग्रन्थों की अपनी विशेषता है। डिमाई आठ पेजी आकार में छपे ये नयनाभिराम ग्रन्थ किसी भी पुस्तक-कक्ष की शोभा बढ़ायेंगे।

--प्राप्तिस्थान--

उत्तर प्रदेश प्रकाशन, सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ

मुद्रक तथा प्रकाशक:—मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस--राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[बिहार, मध्यप्रदेश, भोपाल, सौराष्ट्र आदि राज्योंके शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत पत्रिका]

* अिस अंकमें कहाँ क्या पढ़ेंगे *

	लेखक	पृ. सं.
१. लेख :		
१. राजस्थानी भाषाकी अुत्पत्ति	प्रो. मोहनलाल जिज्ञासु, अेम. अे., अेल. अेल. बी.	७५१
२. प्रगीत काव्य-रूप	प्रा. कमलाकांत पाठक	७५६
३. अेकांकी नाटक : परिभाषा, तत्व अेवं विस्तार	प्रो. रामचरण महेन्द्र, अेम. अे.	७७९
४. राष्ट्रभाषाके लिअे राष्ट्रलिपि	श्री पां. ग. अडयालकर और श्री म. रा. सुब्रह्मण्यम्	७८७
५. कालिदास-साहित्यने वाचा ली	श्री लक्ष्मीशंकर व्यास	७९०
६. बंगलाके कुछ आधुनिक मुसलमान कवियोंकी कविता	श्री मन्मथनाथ गुप्त	७९७
७. आधुनिक हिन्दी काव्यपर अेक दृष्टि	श्री गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश'	८००
८. "धरतीके बोल"—अेक परिचय	श्रीं विजयमोहन शर्मा	८०५
९. आधुनिक ब्रजभाषा काव्यका विकास	प्रा. गणेशदत्त त्रिपाठी	८०९
२. कविता :		
१. गीत !	श्री देवप्रकाश गुप्त	७४७
२. शिशिरकी नर्तकी	श्री आसाराम वर्मा, साहित्य-रत्न	७४८
३. गीत !	श्री नर्मदाप्रसाद खरे	७५०
४. गीत !	डा. राजकुमारी शिवपुरी	७७८
५. आज आँख खुलते ही	सुश्री कीर्ति चौधरी	७८६
६. गीत !	श्री रज्जन त्रिवेदी	८०८
३. कहानी :		
१. मृत्युके स्वांग (गुजराती)	श्री मंजुलाल देसाअी	७६३
४. साहित्यालोचन	श्री अनिलकुमार, साहित्य-रत्न	८२०
५. सम्पादकीय	...	८२२

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

रियायत— समितिके सभी प्रमाणित प्रचारकों, केन्द्र-व्यवस्थापकों और स्कूल-कालेजों तथा सार्वजनिक पुस्तकालय-वाचनालयोंको अेक वर्षतक केवल ५) रु. वार्षिक चन्देमें मिलेगी।

पता—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट * * हृषीकेश शर्मा

वर्ष ६] दिसम्बर—१९५६ [अंक १२

गीत

—श्री देवप्रकाश गुप्त

किस तरह तुमको निहारूँ मैं।
किस तरह तुमको दुलारूँ मैं।

अेक टोना-सा हुआ मुझपर
रूप जब था चान्दसे अूपर
पन्थपर आशीषका कुंकुम
चातकीका प्यार था गुमसुम
आँसुओंकी राजधानीमें
किस तरह तुमको सँवारूँ मैं।
किस तरह तुमको निहारूँ मैं।
किस तरह तुमको दुलारूँ मैं।

रात अंगूरी न सो पाअी
गीतको तुम हो बहुत भाअी
गन्धकी करुणा हुअी विह्वल
अुठ रहा है धार-सा अंचल
तुम स्वयम् भागीरथी जैसी
किस तरह तुमको निखारूँ मैं।
किस तरह तुमको निहारूँ मैं।
किस तरह तुमको दुलारूँ मैं।

दर्दके स्वर रेशमी बन्धन
टिमटिमाती वर्ति-सी धड़कन
क्या पता कैसी पहेली हो
कल्पकी मोहिनी बेली हो
बाँसुरी चुप-चुप बिंधी जाती
किस तरह तुमको पुकारूँ मैं।
किस तरह तुमको निहारूँ मैं।
किस तरह तुमको दुलारूँ मैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिशिरकी नर्तकी

—श्री आसाराम वर्मा

ओ शिशिरकी नर्तकी
नूपुरोंसे बाण बरसाओ न हिमके
मत करो झंकार।
शीत धनु टंकार ॥

थी सुरक्षित
यह धरा जिसके तले
प्रज्वलित वह ढाल रविकी
ढल चुकी है
और
अब तुम पारधिन-सी
हिम गुफाओंसे निकलकर
ओढ़ कुहरेका कुटिल परिधान
भू-मृगीके प्राणका आखेट करने
वायुके द्रुत अश्वपर चढ़
कर रही हो
विश्वभर संचार।
ओ
शिशिरकी नर्तकी
नूपुरोंसे बाण बरसाओ न हिमके
मत करो झंकार।
शीत धनु टंकार ॥

पा तुम्हारी मौन आहट
मौन शुक-पिक
मौन सरिता
मौन है वनप्रांत
मौन जनपद शांत।
रुक गया युग
रुक गये हैं प्रगतिरथके प्रगत पहिये
पंख प्रतिभाके
हुये पाषाण
आह !
कितना क्रूर
आलिंगन तुम्हारा
पल्लवित वन-वल्लरीका
विहँसता-सा वक्ष
अपने वक्षसे कस
किया तुमने जरा जर्जर
पीत पतझर।
और
वे चुम्बन तुम्हारे ?
जो कि कमलोंके सुकोमल-से कपोलोंपर
छपे हैं
घाव दन्ताकार।
ओ
शिशिरकी नर्तकी
नूपुरोंसे बाण बरसाओ न हिमके
मत करो झंकार।
शीत धनु टंकार॥

री,
तुम्हारे आगमनसे
तप रहे हैं आग
कितने
और कितने
गूदड़ोंमें
दुलाओंमें
दुशालोंमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रणय-सपनोंकी सुनहरी घाटियोंमें
छिप रहे हैं
छिप रहे हैं
किन्तु दीना
वस्त्र हीना
करुण मानवता
ठिठुरकर
धूलकी सुनसान गलियोंमें मरणसे
कर रही अभिसार ।
ओ शिशिरकी नर्तकी
नूपुरोंसे-बाण बरसाओ न हिमके
मत करो झंकार ।
शीत धनु टंकार ।।

है तुम्हारा घोरतम आतंक
है सिसकती शांतिका साम्राज्य
किन्तु
फिर भी
स्वेद-सागरमें तरंगित
वे सरल
श्रमहंस
घोषणा निज सत्वकी कर
कर रहे विद्रोह
देखो–
पौषकी अिस थरथराती रातमें भी
कर रहे हैं सजग पहरा
ज्योतियों-सी
लहलहाती खेतियोंका
क्योंकि
गेहूँकी लजीली बालियाँ
नव-मानिकोंको प्रसव करना चाहती हैं
वह चना
वे मूंग
प्यारे वे अुड़द
पुखराज
पन्ने
और नीलमके सु-कण
शीघ्र ही
खलिहान विक्रमकी सभाके
सुकवि कालिदासके-से
रत्न बनना चाहते हैं;
चाहता है ब्रह्म
लेना
अन्नका अवतार
ओ
शिशिरकी नर्तकी
नूपुरोंसे
बाण बरसाओ न हिमके
मत करो झंकार ।
शीत धनु टंकार ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीत

--श्री नर्मदाप्रसाद खरे

यदि तुम मेरी बाँह गहो तो पथके शूल फूल बन जाएँ।

मधुप फूलसे, शलभ दीपसे,
जीवनका वरदान माँगते,
हृदय-हृदयसे, प्राण-प्राणसे--
जीवनका मधु-गान माँगते,
यदि तुम प्रतिपल संग रहो तो विहँसे स्वर्ग दाहिने-बाँएँ !

प्रणय-पुलक-विश्वास-प्यारसे
गीत अधूरा पूरा कर दो,
छलक-छलक, मेरी नस-नसमें
मुसकानोंकी मधुता भर दो,
यदि तुम मेरे साथ बहो तो दो तट स्वयं आप मिल जाएँ !

स्नेह-प्यारकी दो साँसोंसे
जीवन-दीपक जलता आया,
सुख-दुखके दो चक्रोंसे ही
जीवनका रथ चलता आया,
संग-संग यदि व्यथा सहो तो सारे दुख-सुखमें बँट जाएँ।

विभ्रम पथपर पथिक अकेला
फिर भी मंजिल तक जाना है,
सत्य बना युग-युगके सपने
गीत जागरणके गाना है,
यदि तुम जीवन-कथा कहो तो पृष्ठ सुनहले खुलते जाएँ !
यदि तुम मेरी बाँह गहो तो पथके शूल फूल बन जाएँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजस्थानी भाषाकी अुत्पत्ति

—प्रो० मोहनलाल जिज्ञासु

राजस्थानी भाषाके प्राचीनतम रूपको हृदयंगम करनेके लिअे हमारे लिअे संस्कृत (देववाणी) का अध्ययन करना नितांत आवश्यक है। भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे भारतीय शाखामें संस्कृत ही सबसे प्राचीन मानी गअी है। आजकलकी समस्त प्रान्तीय भाषाअें (द्राविड़ीके अतिरिक्त) संस्कृतसे ही निकली हैं। संस्कृतके अध्ययनसे निश्चय-पूर्वक कहा जा सकता है कि अिस देशमें वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रन्श और देशी-भाषाओंमें साहित्य लिखनेकी परम्परा क्रमबद्ध रूपसे चली आ रही है। प्रत्येक कालमें दो भाषाओंका प्रयोग होता है—अेक साहित्यिक और दूसरी व्यावहारिक। साहित्यिक भाषा तो व्याकरणके कड़े नियमोंका पालन करती हुअी शिक्षित-वर्गतक स्थिर हो जाती है पर व्यावहारिक भाषाका जनतामें स्वच्छंदतापूर्वक विकास होता रहता है। शनैः-शनैः व्यावहारिक भाषा परिमार्जित होकर साहित्यिक भाषा बन जाती है और अुसके स्थानपर थोड़े-बहुत अन्तरको लिअे हुअे प्रान्त-भेदके अनुसार किसी अन्य व्यावहारिक भाषाका प्रयोग होने लगता है। प्राचीन कालसे लेकर अर्वाचीन कालतक भाषाका यह क्रम चला आ रहा है।

भाषा-शास्त्रियोंका कथन है कि जिस समय आर्य जाति पंजाबमें आकर बसी, अुस समय अुसकी भाषा वैदिक संस्कृत थी। वैदिक संस्कृतका स्थान धीरे-धीरे लौकिक संस्कृतने ले लिया और अुसका विकास होने लगा। भाषामें परिवर्तन होना अेक प्राकृतिक नियम है। धीरे-धीरे लौकिक संस्कृतमें भी परिवर्तन होने लगा। अेक ओर यास्क, पाणिनि, कात्यायन, पतंजलि आदिने नियमों द्वारा भाषाको नितांत संयत तथा सुव्यवस्थित बनानेका प्रयत्न किया; दूसरी ओर साधारण लोग भाषाकी शुद्धताकी ओर ध्यान न देकर शिष्टमण्डलीसे दूर व्यावहारिक शब्दोंका प्रयोग करने लगे। लौकिक संस्कृत और बोलचालकी भाषामें भेद बतानेके लिअे अेकका नाम संस्कृत और दूसरीका नाम प्राकृत पड़ गया। आज हिन्दी और अुसकी बोलियोंके बीच जो सम्बन्ध है, सम्भवतः वही संस्कृत और प्राकृतमें अुस समय रहा होगा। कालान्तरमें प्राकृतके दो भेद हुअे—पहली प्राकृत और दूसरी प्राकृत। पाली सबसे पुरानी प्राकृत है, जिसमें बौद्ध साहित्यकी रचना हुअी है। अशोकके समयतक यही भाषा प्रचलित थी। पहली प्राकृतके समानान्तर दूसरी प्राकृत व्यावहारिक भाषा बनी रही। धीरे-धीरे देश-कालके अनुरूप प्राकृतके भी कअी भेद हो गअे, जिनमें शौरसेनी, मागधी, महाराष्ट्री, पैशाची, आवंतिक आदिके नाम अुल्लेखनीय हैं। जब अिन प्राकृत भाषाओंको भी व्याकरणके नियमोंमें बान्धा गया, तब शनैः-शनैः ये भाषाअें शास्त्रीय बनकर जन-साधारणसे दूर जा पड़ीं। भाषाके बहते हुअे 'निर्मल नीर' को रोकनेकी सामर्थ्य किसमें है? अिसीलिअे आगे चलकर देशमें अपभ्रंश भाषाओंकी धूम रही। वस्तुतः अपभ्रंश किसी अेक देशकी भाषा नहीं किन्तु मागधी, शौरसेनी, महाराष्ट्री, पैशाची और आवंतिक प्राकृत भाषाओंके अपभ्रंश या बिगड़े हुअे रूपवाली मिश्रित भाषाका नाम है। अपभ्रंश भाषाका प्रचार लाट (गुजरात), सुराष्ट्र, त्रवण (मारवाड़) दक्षिणी पंजाब, राजपूताना, अवन्ती, मन्दसोर, आदिमें था।[1] चारण कवि-कुल शिरोमणि राजशेखरने मरु, टक्क और भादानक प्रदेशकी भाषा भी अपभ्रन्श होना लिखा है।[2] गुजरातीके प्रसिद्ध विद्वान श्री. कन्हैयालाल माणकलाल मुन्शीने अिसकी सीमा गुजरातसे लेकर आसामतक बताअी है।[3] अितना निश्चय है कि

---

१ डा. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा—'मध्यकालीन भारतीय संस्कृति', पृ. १३७.

२ 'साप्रभंश प्रयोगा सकल मरु भुवस्टक भादानकश्य।'

३ अखिल भारत वर्षीय हि. सा. सम्मेलनके ३३ वें अधिवेशन, अुदयपुरका भाषण, पृ. ७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिन प्रान्तोंमें प्राकृतें बोली जाती थीं, अुनमें ही अुत्तर-कालमें प्रान्त विशेषकी अपभ्रन्शोंका प्रयोग होने लग गया था। राजस्थानमें अिस भाषाके रूप-श्रृंगारमें जैन-बन्धुओंकी सेवाअें सर्वथा स्तुत्य हैं। राजपूताना, मालवा, काठियावाड़ और कच्छके चारण-गीत अिसी भाषाके विकृत रूपमें लिखे गअे हैं। पुरानी हिन्दी भी अधिकांशमें अिसीसे निकली है। शोधसे पता चलता है कि ७ वीं शताब्दीके अन्तिम चरणमें अपभ्रन्श साहित्यकी भाषा बनने लग गअी थी। तांत्रिकों और योगमार्गी बौद्धोंकी साम्प्रदाअिक रचनाओंमें अिसका रूप देखा जा सकता है। १० वीं शताब्दीके अन्ततक यह भाषा अपने चरम अुत्कर्षको प्राप्त हो गअी थी। जैन-ग्रन्थकार देवसेन कृत 'श्रावकाचार' (९३३ अी.) में अिसका समुन्नत रूप पाया जाता है। वैसे तो १५ वीं शताब्दीतक साहित्यिक अपभ्रन्शका अस्तित्व खोजा जा सकता है, किन्तु यह अुसका अन्त-काल था। कोअी भी भाषा व्याकरणके कठोर पिंजरेमें बन्द रहकर अधिक दिनोंतक जीवित नहीं रह सकती। जब प्राकृतके सदृश अपभ्रन्श भी नियमोंमें बन्धकर स्थिर हो गअी तब अुसका प्राकृतिक प्रवाह जन-मनके कल कण्ठोंसे अुच्छवसित होने लगा। ११ वीं शताब्दीमें प्रान्त और काव्य-रीतिके भेदानुसार अपभ्रन्श देशी भाषाओंके रूपमें स्वच्छंद गतिसे प्रकट होने लग गअी थी।

देशी भाषाओंमें राजस्थानी भाषा अेक अत्यन्त प्राचीन अेवम् व्यापक भाषा है। अुत्तर भारतकी प्रान्तीय भाषाओंके सदृश अिसका विकास भी अपभ्रन्श भाषासे ही हुआ है, किन्तु अपभ्रन्शकी जितनी अधिक विशेषताअें राजस्थानीको मिली हैं, अुतनी अन्य किसी भी प्रान्तीय भाषाको नहीं। अिसलिअे अिसे अपभ्रन्शकी 'जेठी-बेटी' की संज्ञा दी गअी है। श्री नरोत्तमदास स्वामीने राजस्थानीको अपभ्रन्शसे पृथक करनेवाली प्रमुख विशेषताओंका अुल्लेख किया है।[1] जैनाचार्य हेमचन्द्रने अपने प्राकृत व्याकरणमें अपभ्रन्शके जो १७५ उदाहरण दिअे हैं, वे अिस अध्ययनके लिअे बड़े ही अुपयोगी हैं।[1] अुद्योतन सूरि कृत 'कुवलयमाला' (७७८ अी.) में भारतकी १६ प्रान्तीय भाषाओं तथा वहाँके निवासियोंकी विशेषताओंका माहात्म्य पदोंमें गाया गया है।[2] अिन देशी भाषाओंमें प्रान्तीय अन्तर स्पष्ट रूपसे झलकता है, किन्तु अेक दूसरेको समझनेमें कोअी कठिनाअी नहीं होती। यथार्थमें जितने प्रान्त थे, अुतनी ही देशी भाषाअें पनप रही थीं, किन्तु प्रान्तोंकी निश्चित सीमाका पता न होनेसे अिनके नामोंमें बड़ी गड़-बड़ी है। जबतक भारतमें विभिन्न प्रान्तोंकी यथार्थ सीमाका निर्धारण नहीं हो जाता, तबतक निश्चयात्मकरूपसे अिनके विषयमें कुछ कहना कठिन है। कुछ नाम तो बादमें जोड़े गअे प्रतीत होते हैं, अिसलिअे अिस बातका निर्णय करना अत्यन्त कठिन हो जाता है कि मरुभाषाकी अुत्पत्ति किस विकृत अपभ्रन्शसे हुअी है।

डा. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या अिस क्षेत्रकी अपभ्रन्शको सौराष्ट्री अपभ्रन्श, डा. ग्रियर्सन नागर अपभ्रन्श और श्री कन्हैयालाल माणकलाल मुन्शी गुर्जरी अपभ्रन्श मानते हैं। प्राचीन कालमें गुजरातके भिन्न भिन्न विभागोंके जो पृथक पृथक नाम अुपलब्ध होते हैं, अुनमें काठियावाड़का अुत्तरी भाग आनर्त तथा दक्षिणी भाग सौराष्ट्र कहलाता था। साबरमतीके आसपासका भू-भाग स्वभ्र तथा नर्मदा अेवम् ताप्तीके मध्यका देश लाट कहलाता था।[3] अिन नामोंमें राजस्थान अथवा अुसके भू-भागका कहीं पता नहीं है, अतअेव राजस्थानकी अपभ्रन्शको 'सौराष्ट्री' की संज्ञा देना भ्रमपूर्ण है। हाँ, गुजरातपर त्रिकूट लोगोंका राज्य अवश्य रहा है, जो अपनेको है (हय) कहते थे।[4] अुनकी राजधानी त्रिकुटा अब प्रसिद्ध नहीं, किन्तु अिसका वर्णन रामायण

---

१ देखिअे 'वेलि क्रिसन रुकमिणी' सम्पादन–ग्रन्थकी भूमिका

१ सम्पादक डा. पी. अेल. वैद्य, पृ. १४६–१७७

२ श्री. अगरचन्द नाहटा–'राजस्थानी जैन-साहित्य', शोध-पत्रिका, भाग ४, अंक ४, जून ५३, पृ. ९.

३ बाम्बे गजेटियर, भाग १, पृ. ११३–११८.

४ चिंतामणि वैद्य, 'मेडिवल हिन्दू अिन्डिया', भाग १, अध्याय ८, पृ. २५२.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और कालिदासके रघुवंशमें आया है। त्रिकूट लोगोंके राज्य-कालमें सौराष्ट्रीका प्रभाव काठियावाड़के दक्षिणी भाग 'सौराष्ट्र' में था, राजस्थानमें नहीं। भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे भी सौराष्ट्रीको गुजरातकी भाषा मानना अधिक युक्ति-संगत है। अक्षरोंकी बनावट और संवतका अुपयोग अिन्हींकी सम्पत्ति थी।[1] काठियावाड़ और गुजरातके जैनी बन्धु अपने धार्मिक ग्रन्थोंमें सौराष्ट्रीका ही प्रयोग करते थे और यह प्रयोग अबतक चला आता है। अतः अिस भाषाकी बनावटका सम्बन्ध गुजरातीसे है, राजस्थानीसे नहीं। आज बम्बअी प्रान्तको जो द्विभाषी राज्य बनाया गया है, अुसके मूलमें शायद यही भावना हो।

डा. ग्रियर्सन राजस्थानीकी जननी नागर अपभ्रन्श मानते हैं और अुनके पद-चिन्होंका अनुकरण करते हुअे राजस्थानी-विद्वानोंने भी अपनी जननीका बारम्बार 'सुमिरन' किया है, किन्तु यह नाम भी अस्पष्ट है। 'प्राकृत-सर्वस्व' के रचियिता मार्कण्डयने अपभ्रन्शक नागर, अुपनागर और ब्राचडमें विभाग किया है, जिनमें नागर या शौरसेनी अपभ्रन्श देशभेद होनेपर भी मुख्य था। अनेक विद्वान नागर अपभ्रन्शका आधार शौरसेनी प्राकृत मानते हैं और अिसलिअे वे नागर-शौरसेनीमें कोअी विशेष अन्तर नहीं मानते। नागर गुजरातका, ब्राचड सिन्धका और अुपनागर अिन दोनोंके बीचका प्रदेश माना गया है। १०–१२ वीं शताब्दी तक नागरने प्राकृतसे पृथक होकर अपने स्वतंत्र अस्तित्वको प्राप्त कर लिया था, परन्तु अिस समयकी जो रचनाअें अुपलब्ध होती हैं, वे केवल भाषा-विकासकी दृष्टिसे ही महत्वपूर्ण हैं। अिनमें विभक्ति, कारक-चिन्ह, क्रिया आदिके प्राचीन रूप देखनेको मिलते हैं। बहुतसे शब्द साहित्यिक प्राकृतके ढंगकी याद दिलाते हैं। अिसलिअे अिसे प्राकृताभास अर्थात् प्राकृतकी रूढ़ियोंसे बद्ध हिन्दी भी कहा जाता है। मिश्रबन्धुओंने लगभग अिसी कालको पूर्वारम्भिक (सन् ६४३–१२८६ अी.) नाम दिया है, जिसमें साहित्यिक रचनाअें नहींके बराबर हुअी हैं।[1] पं. गजराज ओझाने नागर या शौरसेनी अपभ्रन्शको अन्तर्वेद, व्रज, दक्षिणी पंजाब, टक्क, भदानक, मरु, त्रवण, राजपूताना, अवंती, पारियात्र, दशपुर, मन्दसोर और सौराष्ट्रकी साहित्यिक भाषा माना है।[2] श्री. मुन्शीने मध्यदेशकी शौरसेनी अपभ्रन्शको अुसकी देशभाषाका साहित्यिक रूप माना है।[3] आधुनिक समयमें अुत्तर पूर्व मध्यदेश और मथुराके आसपास शौरसेनी अपभ्रन्शसे मिलती-जुलती बोलचालकी भाषा अिसका अवशेष है। अिस शौरसेनी देशभाषाका अुदाहरण अुपलब्ध नहीं होता पर यह आकारान्त भाषा है। राजस्थानके कुछ भागपर भी अिसका प्रभाव था। कोअी आश्चर्य नहीं, चारणेतर जातियोंने चरित और कथाअें लिखकर अिसमें साहित्य-सेवा की हो। ९–१२ वीं शताब्दीतक अिसका रूप प्रायः अेक-सा है, किन्तु आगे चलकर अपनी पड़ोसी भाषाओंसे आदान-प्रदान करती हुअी ये विविध देशी भाषाअें इतनी क्षिप्रतासे भाग-दौड़ करने लगती हैं कि यद्यपि अुनके समझनेमें कोअी कठिनता नहीं होती तथापि अुन सबकी पृथक-पृथक विशेषताअें हैं। अितना होते हुअे भी अिन भाषाओंका अुद्गम स्थल अेक ही है, शायद अिसीलिअे विद्वानोंने अुत्तरकालीन अपभ्रंश, पुरानी हिन्दी, जूनी गुजराती या पुरानी राजस्थानीको पकड़कर अेक ही घाटपर पानी पिलानेका प्रयत्न किया है।

श्री. मुन्शीने राजस्थानकी अपभ्रन्शको 'गुर्जरी' की संज्ञा दी है, जो शुद्ध प्रतीत होती है, क्योंकि अिससे अुसके यथार्थ क्षेत्रका बोध साकार हो अुठता है। डा. श्यामसुन्दरदासने अिसे आभीरीके नामसे सम्बोधित किया है।[4] अिसी गुर्जरी अपभ्रन्शसे जो शौरसेनी प्राकृतकी दुहिता थी, राजस्थानी भाषाका अुद्भव हुआ है।

---

१ चिन्तामणि वैद्य, 'मेडिवल हिन्दू अिन्डिया', भाग १, अध्याय ८, पृ. २५३.

१ देखिअे, मिश्रबन्धु-विनोद, भाग १, भूमिका

२ ना. प्र. पत्रिका, भाग १४, अंक १, पृ. ९७.

३ अखिल भारतवर्षीय हि. सा. सम्मेलनके ३३ वें अधिवेशन, अुदयपुरका भाषण, पृ. ६

४ हिन्दी भाषाका विकास, पृ. १५.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राचीनता, व्यापकता अेवम् भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे अिसका अध्ययन अेक मनोरंजक विषय है।

'गुर्जरी' शब्द गुर्जर जातिका द्योतक है। अिसका वर्तमान रूप गुजरातमें है। पंजाबका गुजरात, गुजरानवाला तथा बम्बअीका गुजरात अिसके विगत गौरवकी याद दिलाता है। गुजरात अिस प्रदेशका नाम अिसलिअे प्रसिद्ध हुआ कि यहाँपर गूजरोंने दो-सौ वर्षतक बड़ी सफलतासे राज्य किया और अुनके अधीन रहनेसे यह देश गुर्जर या (गुजरोंसे रक्षित) कहलाया।[1] गुर्जर जातिके विषयमें भारतीय अेवम् पाश्चात्य विद्वानोंमें पर्याप्त मत-भेद है। 'गुर्जरोंका प्रारम्भिक अितिहास' के रचियिता कुंवर यतीन्द्रकुमार वर्मा पुरातत्ववेत्ताओंकी शोधका तर्कपूर्ण विवेचन करते हुअे अिस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि गुर्जर क्षत्रिय वर्णकी सन्तान हैं और यह धारणा नितान्त भ्रमपूर्ण है कि ये लोग विदेशी हैं। अपने मतकी पुष्टिमें अन्होंने शीर्षमापन शास्त्र और गोत्रादिक अितिहासकी ओर भी संकेत किया है।[2] गुर्जर ग्वाले (अहीर) हैं और भारतमें ये लोग बहुत बड़ी संख्यामें पाये जाते हैं। ये दूध, दही, घी आदिका व्यवसाय करते हैं, अतः अिन्हें विदेशी कैसे माना जाय? यह निर्विवाद सत्य है कि राजस्थानमें अिस जातिका आगमन पंजाबसे हुआ। जब हूणोंने सर्वप्रथम आक्रमण करके स्यालकोटमें अपना राज्य स्थापित किया, तब अुनसे पीड़ित होकर, गुर्जर शासकों अेवम् अिस जातिके लोगोंने अपने ढोरों(चौपायों)को लेकर दक्षिणोत्तर पंजाब और राजस्थानकी ओर बढ़ना आरम्भ किया।[3] अिस परिवर्तन अेवम् हूणोंकी लड़ाअीके कारण ये लोग अितिहासमें अमर हो गअे। राजा प्रभाकरवर्धनका गुर्जरोंको हराया जाना अैतिहासिक दृष्टिसे अेक महत्वपूर्ण घटना है। बाणके हर्षचरितमें गुर्जरोंका वर्णन अिसी पराजयके साथ आया है।[1] अेक अगुआ अेवम् लड़ाकू जाति होनेके कारण अिसने सिन्ध और मुलतानपर भी आधिपत्य स्थापित कर दिया। ५ वीं शताब्दीमें अिसने गुजरात तथा राजस्थानपर भी अपना सिक्का जमा लिया था।[2] शनैः शनैः अपने शौर्य-पराक्रमके द्वारा अिस जातिने अेक बृहत गुर्जर देशकी स्थापना की, जिसकी मुख्य राजधानी भीनमाल (५५० अी. के आसपास) थी। चीनी यात्री हुअेनसांग (६४० अी.)के भ्रमण-वृतान्तसे प्रकट है कि गुर्जर लोग (क्यू-चि-लो) जिनकी राजधानी भीनमाल (पी-ली-मो-लो) थी, गुजरात (वर्तमान मारवाड़)के शासक थे और अुनका राज्य जन, धन और सभ्यताकी दृष्टिसे चरमोन्नतिके झूलेपर झूल रहा था।[3] प्रसिद्ध अरब यात्री अलबरूनीके लेखसे (१०३० अी.) समस्त राजस्थानपर गुर्जर शक्तिका प्रभुत्व होना सिद्ध होता है। भीनमालसे आगे दक्षिणकी ओर भी अिन्होंने बड़े-बड़े राज्योंकी स्थापना की। राजस्थानके गुर्जर राजवंशके अतिरिक्त भड़ौंच, कन्नौज और अनहिलपाटणका राजवंश पृथक अध्ययनकी वस्तु है। प्रतिहार गुर्जरेश्वर सम्राटोंमें अनेक प्रतापी नरेश हुअे हैं, जिनमें मिहिरभोज, महेन्द्रपाल और महिपालको राजशेखरने आर्यावर्तका महाराजाधिराज कहा है।[4] राजस्थानमें मेवाड़ और गुर्जर या मारवाड़को अिन सम्राटोंका अुत्पत्तिस्थान समझना चाहिअे।

गुजरातकी तत्कालीन सीमासे गुर्जर जातिकी व्यापकताका अनुमान सहज ही में लगाया जा सकता है। गुर्जरोंके समयमें गुजरात अेक विस्तृत प्रदेश था और वर्तमान राजस्थानका अधिकांश भाग गुजरातमें सम्मिलित था। वर्तमान जोधपुरका अुत्तरसे दक्षिणतकका सारा पूर्वीय भाग गुजरातमें था। १० वीं शताब्दीतक

---

१ डा. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा- ना. प्र. पत्रिका, भाग १०, पृ. ३०६–३०७.

२ देखिअे पृ. १–३३ तथा परिशिष्ट.

३ चिन्तामणि वैद्य- मेडिवल हिन्दू अिन्डिया, अध्याय ६, पृ. ६९.

---

१ 'गुर्जर प्रजागरः प्रतापशील अिति प्रार्थना परनामा प्रभाकर वर्धनो नामराजाधिराजः' —बाणकृत हर्ष चरित, पृ. १७४.

२ व्ही. अे. स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑफ अिन्डिया, पृ. २८६.

३ बॉम्बे गजेटियर, भाग ९, पृ. ४७९.

४ राजशेखरकृत 'बालभारत', १, ७–८.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जोधपूर राज्यका अुत्तरसे दक्षिणतकका सारा पूर्वी भाग गुर्जर या (गुजरोंसे रक्षित देश) ही माना जाता था।[१] दक्षिण लाटके राठौड़ों तथा मारवाड़ अेवम् कन्नौजके प्रतिहार गुर्जर सम्राटोंकी घटनावलियोंसे पता चलता है कि गुजरात देशकी दक्षिणी सीमा लाट देशसे जा मिली थी, अिसलिअे जोधपूर राज्यका सारा पूर्वी भाग तथा अुसके दक्षिणमें लाट देशतकका वर्तमान गुजरात भी अुस समय गुर्जर देशके अन्तर्गत था और भीनमालमें गुर्जरोंका शासन रहनेसे अुनके राज्यकी सीमाके अनुसार अुस समय अिस मरुदेशका नाम गुजरात प्रसिद्ध रहा। वर्तमान समयमें राजस्थानके दक्षिणके जिस प्रदेशको गुजरात कहते हैं, अुसकी सीमा पालनपुर राज्यकी अुत्तरी सीमासे लेकर दक्षिणमें थाना जिलेकी अुत्तरी सीमातक है तथा पश्चिमका काठियावाड़ भी अिसमें सम्मिलित है।[२]

भाषाकी दृष्टिसे अीसाकी दूसरी और तीसरी शताब्दीमें अपभ्रन्श आभीरीके नामसे प्रसिद्ध थी और सिन्ध, मुलतान तथा अुत्तरी पंजाबमें बोली जाती थी। यह आभीरी अुन गुर्जर लोगोंकी ही भाषा थी, जो श्वेत हूणोंके समय अपने ढोरों (चौपायों)को लेकर भारतके दक्षिणमें आकर बस गअे थे। अिस प्रकार गुर्जरी भाषा अपने साथ आर्य जाति की अेक समृद्ध परम्पराको लेकर आअी थी, जिसका विस्तार १० वीं शताब्दीके अन्तमें पहुँचकर तो पश्चिमसे लेकर पूर्वमें मगधतक और दक्षिणमें सौराष्ट्रतक हो चुका था।[३] गुर्जर शासन-कालमें गुर्जरीका राजभाषा होना तथा अुसके प्रभावसे वहाँकी प्रचलित प्राकृत भाषाका रूप मन्द पड़ना कोअी आश्चर्यजनक बात नहीं है। 'कुवलयमाला' में गुर्जर और मरुका पृथक-पृथक अुल्लेख हुआ है, जिससे जान पड़ता है कि गुर्जर शक्तिका ह्रास होनेपर 'मरु' का सम्बन्ध अुत्तरी भागसे और 'गुर्जर'का सम्बन्ध दक्षिण भागसे रह गया था। वस्तुतः अिनसे तात्पर्य अेक ही भाषासे है, क्योंकि मरु प्रदेश गुर्जर साम्राज्यका अेक प्रमुख विभाग बनकर रहा है। गुर्जर शासन-कालकी मरुभाषा गुर्जरी कहलानेकी अुतनी ही अधिकारिणी है, जितनी गुजरात प्रदेशकी। आबू (अर्बुद) पहले मरु-मण्डल अिसलिअे कहलाया होगा। सारांश यह कि ५–८ वीं शताब्दीतक गुर्जर जातिके लोग अितिहासके सदृश भाषाके क्षेत्रमें भी अपनी अमिट छाप अपने नाम साम्यपर अुन-अुन प्रान्तोंमें छोड़ते गअे, जहाँ-जहाँ अुनका प्रभुत्व रहा। काश्मीरके गूजरोंकी बोली अिसका अवशेष है। यह निश्चित है कि यह अेक 'अड'कारान्त भाषा है। अिसके लोक-गीतका अेक नमूना देखिअे, जिसकी रचना १० वीं शताब्दीकी बताअी जाती है[१]—

अय पारों पारी ज्याँद्यां पैया, गाल सुणी जा खडोके।
बन्दी दुखाँ मारी, गले लगसाँ में रो–के।
चेडियांनी छे माअियाँ, चड मुकेनी महिने।
खबरां नहिं आअीयाँ, सजणी मोरके झिने।

अर्थात् जरा खड़े रहकर मेरी बात तो सुनो। मैं दुःखकी मारी हूँ, तेरे गले लगकर रोती हूँ। वे जबसे गअे हैं, बहुत महीने बीत गअे। तबसे कोअी खबर नहीं, वे जिन्दे हैं अथवा नहीं।

अिस प्रकार अैतिहासिक, भौगोलिक अेवम् भाषा वैज्ञानिक आधारपर राजस्थानीकी अुत्पत्ति गुर्जरी अपभ्रन्शसे होना सिद्ध होता है।

---

८ अेपिग्राफिका अिण्डिका. जि. ५, पृ. २११, टिप्पणी ३.

९ डा. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, ना. प्र. पत्रिका, भाग १०, पृ. ३०७.

१० डा. श्यामसुन्दरदास, हिन्दी भाषाका विकास, पृ. १५.

---

१ श्री. मुन्शी–अखिल भारतवर्षीय हि. सा. सम्मेलनके ३३ वें अधिवेशन, अुदयपुरका भाषण, पृ. ७.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रगीत काव्य-रूप

– प्रा० कमलाकान्त पाठक

प्रगीत अेक विशेष प्रकारका काव्य-रूप अथवा साहित्य-प्रकार है। छायावादी गीतिकाव्यको भक्तिकालके पद-साहित्यसे पृथक करनेके लिअे प्रधानतः गीतको 'प्र' (विशेष) अुपसर्गसे संयुक्त किया गया। गीत शब्दका अर्थ भी बदला। श्रव्य-काव्य या पाठ्यकाव्यकी अपेक्षा गीति-काव्यमें गेय-तत्व अधिक मात्रामें विद्यमान रहता है। गीति-काव्य श्रव्य-काव्यकी अपेक्षा अधिक संगीतात्मक होता है। पर प्रगीतमें यह शैलीगत या रूपगत भेद गौण हो गया। प्रमुखतः प्रगीत काव्य आत्माभिव्यंजक काव्यका पर्याय समझा जाने लगा। गीतिकाव्य और पाठ्यकाव्यका मौलिक अन्तर काव्य-वस्तु-परक अुतना नहीं था, जितना छंदोगतिका राग-रागनियोंके स्वर-तालके साथ सामंजस्यका। प्रगीत काव्यमें कवियों-की दृष्टि दूसरी ही वस्तुपर केन्द्रित थी। वे अन्तर्वृत्ति निरूपक या विषयी-प्रधान काव्यको बाह्यार्थ निरूपक या विषय-प्रधान-काव्यसे पृथक करनेके लिअे प्रगीत शब्दका व्यवहार करने लगे। आशय यह है कि गीत शब्दमें संगीत तत्वका अधिक आग्रह है और प्रगीत शब्दमें स्वानुभूतिकी व्यंजनाका। अिसका यह अर्थ नहीं है कि गीतिकाव्य स्वानुभूति-व्यंजन नहीं होता और प्रगीत-काव्यकी गेयता पाठ्य काव्यके समक्ष आ जाती है। अवश्य ही गीत-कारोंने संगीतात्मकताको प्रश्रय दिया है, और प्रगीतकारोंने स्वानुभूतिको। भक्तोंने राम और कृष्णकी कथाको अपने गीतोंकी अन्तर्धाराके रूपमें प्रायः रहने दिया है और अधिकांश छायावादियोंने राग-रागिनि-योंकी अवहेलना की है।

गीतिकाव्यको संस्कृत-साहित्य-शास्त्रमें पृथक काव्य रूप नहीं माना गया। अिसका कारण यही है कि संस्कृत-साहित्यमें साहित्यिक गीतोंकी पर्याप्त रचना नहीं हुअी। लोक-गीतोंके रूपमें अिसका प्रचलन अवश्य रहा। साहित्य-दर्पणकारने गेयपदका निर्देश रूपक–प्रकरणके अन्तर्गत किया है, और वह स्थितपाठ्य मात्र है। साहित्य-शास्त्रियोंने गीति-काव्यको केवल लास्यांग माना और अुसकी लक्षण-चर्चा नाट्य-शास्त्रमें आनुषंगिक रूपसे की गअी। यह साहित्यके क्षेत्रमें न गिना जाकर सम्भवतः संगीत कलाकी वस्तु समझा जाता रहा। अतअेव वहाँ प्रबन्धकाव्य और मुक्तकाव्यके भेदोपभेदोंका विवेचन होता रहा, गीति-काव्यकी पृथक लक्षण-चर्चा नहीं की गअी। जयदेवकी गीति-रचना तब हुअी, जब संस्कृतके साहित्य-शास्त्रमें नवोद्भावना न की जाकर, खण्डन-मण्डन करनेकी प्रवृत्ति प्रधान हो अुठी थी। वह आलंकारिकोंका टीका-युग था। लोक-भाषाओंमें प्रचुर मात्रामें साहित्य-रचना होने लगी थी। संस्कृतका मान था, पर वह रचना-क्षेत्रमें अपदस्थ हो रही थी। यही कारण है कि हिन्दीमें गीति-काव्यको प्रबन्ध-हीन अथवा निराख्यानक रचना होनेके कारण मुक्तकके खातेमें डालनेकी परम्परा दिखाअी पड़ती है। वस्तुतः मुक्तक पाठ्यकाव्यमें अन्तर्मुक्त हो जाते हैं।

मुक्तका अर्थ मुक्तेन मुक्तकम्––स्फुट या फुटकर रचना है। अिसके अन्तर्गत विषय-प्रधान रचना परि-गणित होती है। सुभाषित या सूक्तियां, नीतिके दोहे और कुंडलियाँ, श्रृंगारके कवित्त और सवैये आदि मुक्तक कहलाते हैं। मुक्तकका अर्थ ही पूर्वापर-सम्बन्ध रहित स्फुट छन्दोरचना है। मुक्तकका प्रत्येक छन्द अपने आपमें पूर्ण और स्वतन्त्र होता है। दो-दो, तीन-तीन, चार-चार, या पांच-पांच छन्दोंके समूह भी मुक्तक हो सकते हैं, पर अुनकी विशेष संज्ञाअें हैं, यथा युग्मक, सन्दानितक, कलापक और कुलक। मुक्तकके व्याख्या-ताओंने गेयताका गुण अिस काव्य रूपपर आरोपित नहीं किया। अतअेव गीत या प्रगीतको मुक्तकके हवाले करना ठीक नहीं जान पड़ता। विषय प्रधान निराख्यानक कविता भी मुक्त रचना नहीं कही जा सकती, फिर भावोच्छ्वास-मयी गेय रचना तो और भी बाहरकी वस्तु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। अंग्रेजीकी विवरणात्मक कविता जैसे खण्डकाव्य नहीं है, वह आख्यानक कविता कही जा सकती है, अुसी प्रकार हमें अन्य साहित्यिक प्रकारोंके गुणोंके अनुसार अुनका यथोचित वर्गीकरण करना चाहिअे।

मुक्तक काव्यके अन्तर्गत प्रायः वे रचनाअें परिगणित की जाती रही हैं, जो कथा-तत्वसे रहित हैं। अकथात्मक अथवा निराख्यानक रचनाओंमें प्रबन्धात्मकता नहीं दिखाअी पड़ती। अतअेव जो रचनाअें प्रबन्धतत्वसे निर्बन्ध या मुक्त रहीं, वे मुक्तक संज्ञासे अभिहित हुअीं। अुनमें पंच संधियों अथवा सन्ध्यंगोंकी योजना नहीं हो सकती थी। वे किसी भावको स्फुट रूपसे व्यंजित करती थीं। अुनमें विद्युच्छटा तो थी, पर बादलोंकी घटाका विस्तार नहीं। किन्तु जिस प्रकार निबन्ध, रेखा-चित्र और रिपोर्ताजमें भेद करनेकी आवश्यकता है, अुसी प्रकार छन्द-रचना या स्फुट पद्य, गीतिकाव्य, निराख्यानक कविताअें आदिमें भी। आशय यह है कि मुक्तक काव्यकी अियत्ता प्रबंध-सापेक्ष ही नहीं समझी जा सकती, गीतिकाव्यसे भी वह नितांत भिन्न वस्तु है।

हमारे यहाँ प्रगीतात्मक मुक्तक संज्ञा प्रचलित हो गअी है, मुक्तक विशेष्य हो गया और प्रगीत विशेषण। यह अिसलिअे किया गया कि प्रगीत रचनाअें प्रबंध तत्वसे रहित होती हैं। अुनका आकार-प्रकार नपा-तुला होता है, न अुनका अेक जैसा सांचा ही होता है। मुझे यह निवेदन करना है कि मुक्तककी विषय-प्रधानताको प्रगीतोंकी आत्मानुभूतिपर न थोपा जाय, अन्यथा बिहारी-सतसअी, कवितावली, अन्योक्ति कल्पदुम, रूबाअियाँ आदिको मुक्तक कहनेसे अुनका स्वरूप-बोध नहीं हो सकेगा। मुक्तक-काव्यका रचना-काल मुख्यतः श्रृंगार या रीतिकाल है और प्रगीत काव्य छायावाद-युगकी सृष्टि है। छायावादी कवि रीति-परम्पराका विरोधी भी रहा है। क्या प्रगीत शब्दमें अर्थ-बोध करानेकी कोअी नैसर्गिक कमी है कि अुसे मुक्तकके बिना अपूर्ण माना जाय? मुक्तकके द्वारा न संगीतात्मकताका बोध होता है और न आत्माभिव्यंजनाका। फिर अस्फुट करनेसे ही क्या लाभ? मुक्तक रचना-शैलीकी सर्वथा पृथक मर्यादा है। आत्म निवेदन अुसके कवि कर्मका लक्ष्य भी नहीं है। वस्तु-परक-मुक्तक और अनभूति-प्रवणप्रगीत प्रकृत्या भिन्न काव्य-रूप हैं।

प्रगीत काव्यका अुन सभी प्रकारकी काव्यात्मक रचनाओंसे तात्विक अन्तर दिखाअी पड़ेगा, जो विषय-प्रधान, वस्तून्मुखी या तटस्थ पर्यवेक्षण, संवेदन या भावना व्यापारकी सृष्टियाँ हैं, पर आत्मोन्मुखी और बहिर्मुखी प्रवृत्तियाँ अेक दूसरेसे सर्वथा असंपृक्त नहीं हैं। न कोअी व्यक्ति पूर्णतः आत्मोन्मुख होता है, न पूर्णतः बहिर्मुख। आंशिक अथवा आनुपातिक आधिक्यके आधारपर ही अुसे किसी अेक वर्गमें परिगणित किया जा सकता है। प्रबन्ध-काव्यमें अन्तर्मुखी काव्य-प्रवृत्तियोंका भी विनियोग होता है, और प्रगीत काव्यमें बहिर्मुखी काव्यदृष्टिका भी, पर प्राधान्य नहीं होता। अिसी कारण प्रगीत काव्य आत्म-प्रधान काव्य माना जाता है। और प्रबन्ध-काव्य विषय-प्रधान काव्य। रामचरित मानसका वर्ण्य विषय कविकी आत्मानुभूतिके माध्यमसे अभिव्यंजित हुआ है और मीराके काव्यमें पदार्थ जगत् का सर्वांशतः निषेध नहीं है। कामायनीमें आकर दोनों वृत्तियोंका अेक संतुलन दिखाअी पड़ता है, पर अुसमें भी प्रगीतात्मकता समताकी भूमिपर नहीं है, वह प्रबन्धात्मकताकी अपेक्षा कहीं प्रधान हो गअी है। आशय यह है कि प्रगीतका वक्तव्य कविकी आत्मानुभूति होता है, पर अन्य काव्य-रूपोंका प्रतिपाद्य कोअी विषय-वस्तु अथवा कार्य-व्यापार। आत्मानुभूतिके अभावमें काव्यकी सत्ता ही नहीं रहेगी, पर प्रगीतमें अुसीकी मनः प्रक्रिया काव्यका विषय होती है और प्रबन्ध-रचनामें वह आनुषांगिक हो जाती है। प्रगीतका वर्ण्य प्रबन्धका व्यंग्य है और प्रबन्धका वर्ण्य प्रगीतका व्यंग्य। प्रगीतमें वस्तुमत्ता सांकेतिक, सौन्दर्योद्भावक और अनुभूतिका कारण मात्र होती है। प्रबन्धमें वस्तुमत्ता प्रधान, प्रतिपाद्य विषय और काव्यानुभूतिकी सृष्टि या कार्य होती है। कविकी अनुभूतिके साथ हमारा तादात्म्य स्थापित होता है और आह्लाद अथवा रसास्वादकी अुपलब्धि। पर प्रगीत भाव-चित्रण अथवा प्र-भावव्यंजनापर आश्रित है और प्रबन्ध विभाव-वर्णन अथवा चरित्र-चित्रण पर। यही कारण है कि आधुनिक प्रगीत काव्यकी विवेचनाके लिअे हमें रस-सिद्धान्त सोलह आना अुपादेय नहीं जान पड़ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि हम गीति-काव्यके विकासकी रूपरेखाको देख लें तो अिस काव्य-रूपके तत्वोंका निरूपण सरलता-पूर्वक कर सकेंगे। गीति-काव्यको साहित्यने जन-जीवनसे गृहीत किया है। आत्म-प्रकाशनके लिअे मनुष्य बराबर अिस साहित्य-विधाका अुपयोग करता आया है। साहित्यने कथा-कहानी और गीत ही अपने मूल रूपमें आदिम सभ्यतासे ग्रहण किअे हैं। अिनका विकास और संस्कार हुआ है, पर अिनके मौलिक चारुत्वका ध्यान भी कवियोंने रखा है। आधुनिक सभ्यतामें अिसे स्त्रियोचित गुण समझा जाने लगा है, पर गीत केवल नारी-भावना-की अभिव्यक्ति नहीं है, अुसमें जीवनकी तल-स्पर्शिता, अनेकवर्तिता और व्यापक सौन्दर्यकी अभिव्यंजना हुअी है। ओज, अुत्साह और पौरुषको मानवीय तथा राष्ट्रीय भूमिकामें अुपस्थित किया गया है।

गीतोंका अुद्गम वेद हैं, यह धारणा असत्य नहीं है। सामवेदको गेय-काव्य न माननेको कोअी कारण नहीं जान पड़ता। अुदात्त-अनुदात्त स्वरोंपर आधारित सामवेदकी ऋचाअें संगीत और आत्माभिव्यक्तिके सामंजस्यके अुत्कृष्ट अुदाहरण हैं। प्रत्येक देशके प्राचीन अितिहासमें अिस बातके प्रमाण अुपलब्ध होते हैं कि सर्वत्र वाद्ययन्त्रोंके साथ धार्मिक गीत और परवर्ती कालमें वीर-गीत गाअे जाते थे। समाजकी सहानुभूतिको अुद्रिक्त करनेके ये प्रमुख साधन थे। श्रीमद्भगवद्-गीताके नाममें गीत शब्दका महत्व स्पष्ट होता है। गीत-तत्व-मयी रचना ही तो गीता है। पर वहाँ अुसका लाक्षणिक अर्थ ही गृहीत है।

बौद्धोंकी थेरी गाथाओंमें गीति-तत्वका प्रसार दिखाअी पड़ता है। गाथा शब्दका अर्थ गीत होता है, पर ऋक् आध्यात्मिक स्तवन हैं और गाथा लौकिक प्रशस्तियाँ। संस्कृत-नाटकोंके अन्तर्गत भी संगीतका विधान है। प्राचीन महाकाव्योंको गेय काव्य भी कहा जाता था। वास्तवमें मेघदूत ही ऐसा काव्य है, जिसमें गीति तत्वका पूर्ण अुन्मेष प्रकट होता है। पर संस्कृत साहित्यमें या अिसके पूर्व गीति काव्यका यह रूप अविकसित है, जिसका भक्तिकालमें प्रकर्ष हुआ। संस्कृत नाटकोंमें केवल नाटकीय गीतोंके रूपमें अुसका साहित्यिक प्रयोग अुपलब्ध होता है। अपभ्रन्श कालमें गीत और पाठ्य-काव्यका अन्तर स्पष्ट हुआ। अिसका श्रेय नाथों और सिद्धोंकी आध्यात्मिक वाणीको है, जिसने पद-साहित्यका प्रवर्तन किया। अुन्होंने जातीय जीवनसे प्रेरणा ली थी, प्राचीन वाङमयसे नहीं। हिन्दीके आदि-कालमें वीर-गीतोंकी स्थिति भी दिखाअी पड़ती है, जो प्राचीन गाथाओंपर आधारित रहे हैं। अुनमें प्रेम और शौर्यकी व्यंजना हुअी है। सिद्धों और नाथोंने कथाका आधार नहीं ग्रहण किया और वीर-गीतोंमें वह स्वीकृत हुआ। अस्तु, हिन्दीके आदि कालमें आख्यानक और निराख्यानक दोनों प्रकारकी गीति-सृष्टियाँ होने लगीं। ये रचनाअें लोक-गीतोंकी पद्धतिसे प्रभावित थीं।

विशुद्ध गीति-काव्यके दो रूप दिखाअी पड़ते हैं, साहित्यिक गीत और साधकों या योगियोंके गीत। साहित्यिक गीतोंकी परम्परा जयदेवसे आरम्भ होती है। जयदेवने प्रेमकी व्यंजना की और राग-रागिनियोंका अुपयोग किया। शृंगारका शास्त्रीय रूप लेकर विद्यापति और चंडीदासने अिसी परम्पराका विकास किया। आध्यात्मिक गीतोंकी पद्धति निवृत्तिमार्गी सन्तोंने अपनाअी और अुसका परिपाक कबीरके काव्यमें अुपलब्ध हुआ।

मध्ययुगमें साहित्यिक गीतोंकी अिन श्रेणियोंके अतिरिक्त-कथाश्रित वीर-गीत, शृंगारिक और भक्तिपरक गीत तथा निर्गुणोपासनाके गीत—संगीतात्मक गीतोंकी अेक परम्परा लोक जीवनमें अक्षुण्ण थी। बैजू और तानसेनने अिसी परम्पराको स्वामी हरिदासके प्रसादसे शास्त्रीय रूप दिया। वह अेक ओर दरबारी हो गअी और दूसरी ओर सगुण भक्तोंकी नवनवोन्मेष-शील प्रतिभा और ज्ञान-हारा भक्ति धाराकी अभिव्यक्ति बनी। सूरदासने ब्रजभाषाके लोक-गीतों, संगीतज्ञोंके पदों और विद्यापतिके साहित्यिक कृष्णगीतोंको लेकर आत्म-द्रवमय अैसे गीतिकाव्यका प्रवर्तन किया, जो अभूतपूर्व था और जिसकी महती संभावनाअें अुन्हींकी रचनाओंमें प्रकट होने लगी थीं। साहित्यिक गीतोंका चरम अुत्कर्ष सूरकी गीति-कलामें चरितार्थ हुआ। मीराने आदर्श गीति-काव्यकी रचना की, पर अुनकी रचना साहित्यिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिमानोंको लक्ष्य करके नहीं चली। अुन्होंने लोक-प्रचलित गीति-काव्यका सहज रूप स्वीकार किया। सूरकी गीति-धारा घाटोंको निमज्जित करके बहनेवाली गहन प्रवाहिनी है, तो मीराकी कविता अुन्मुक्त निर्झरिणी। दोनोंमें आत्मीयताका भाव पराकाष्ठा पर पहुँचा हुआ दिखाअी पड़ता है। माधुर्यकी भावमयी सृष्टि करनेवालोंमें तुलसीदास, अष्टछापके कवि तथा भक्तिकाल और रीतिकालके अनेक भक्त हैं, तन्मयता जिनके काव्यकी सर्वोपरि विशेषता है।

भक्तिकालके अनेक कवियोंने अपने आराध्यकी लीलाओंका पदोंके माध्यमसे गान किया है। तुलसीकी गीतावली और सूरका सूर-सागर अिसके अुदाहरण हैं। वे रचनाअें जो पद-बद्ध या संगीतात्मक हैं, और जिनमें कवियोंकी आत्माभिव्यक्ति मुखर हुअी है, शुद्ध गीति-काव्यमें परिगणित हो जाती हैं। पर क्या अितिवृत्तका आधार लेकर रचे गये पद भी गीति-काव्य माने जाअेंगे? क्या घटना, प्रसंग या परिस्थितिकी योजना गीति-काव्यकी सीमामें सम्भव हैं? मैं समझता हूँ कि जो कवि कथा न कहकर अुसके मर्मस्पर्शी-स्थलका चित्रण अिस अभिप्रायसे करता है कि वह अपने मनोवेगोंको व्यक्त कर सके या अुस पात्रके अन्तस्तलको मनःस्थिति अुद्घाटित कर सके जिसके साथ स्वयम् तादात्म्य स्थापित कर चुका है, अथवा अुसकी अनुभूति पात्रकी मनःस्थितिसे अपृथक् है, तो वह रचना गीति-काव्यकी श्रेणीमें रखी जा सकती है,। गीति-काव्यमें अनुभूति, हार्दिकता और आवेगशील मनःस्थितिकी अभिव्यंजना ही तो की जाती है। स्पष्टतः हम गीति-काव्यमें कथाका अुतना ही अंश नियोजित कर सकते हैं, जो रागात्मक आत्माभिव्यक्तिमें बाधक न प्रमाणित हो। अतएव कथाका पदों या गीतोंमें सांकेतिक प्रयोग किया जा सकता है। वस्तु-वर्णनाके स्थानपर भाव-व्यंजनाको सजीव बनानेके प्रयोजनसे कथा-क्रमका अिंगित या निर्देश हो सकता है, पर वह केवल पीठिकाके रूपमें, जिसपर भाव अुभर सकें। गीतोंमें जितना अुपयोग रूप-चित्रण या प्रकृति-चित्रणका किया जा सकता है, अुतना ही घटना-चित्रण या कथा-संकेतका। तुलसी और सूरने यह किया भी। आधुनिक युगमें मैथिलीशरण गुप्त भी अिसी प्रकारकी गीति-रचना करते हैं। जहाँ कहीं अुन्होंने निर्दिष्ट सीमाका अतिक्रमण किया है, वहां अुनका गीति-काव्य क्षतिग्रस्त हुआ है। भक्ति-कालमें आकर गीति-काव्य कोमल-वृत्तियोंका काव्य हो गया। अुसमें परुष-भावनाअें नहीं समा सकीं। वीर-गीतोंमें यह बात नहीं थी, पर वहां गीतका ग्रहण पद्धति विशेष समझकर किया जाता था। वे आत्माभिव्यक्तिके साधन नहीं थे, अतअेव शुद्ध गीत भी नहीं थे।

आधुनिक युगमें व्यक्तिवादका प्रसार हुआ। व्रजभाषाके गीत मध्ययुगीन पद-परम्पराके नवीन विकास हैं, अुनमें प्रगीतत्वका सन्निवेश नहीं हुआ। भारतेन्दु हरिश्चन्द्रने भक्ति और राष्ट्र-प्रेमके गीत अुपस्थित किअे। श्रीधर पाठकने राष्ट्रीय-भावनासे प्रेरित होकर मातृभूमिका स्तवन किया। द्विवेदी-युगमें जब-तब राष्ट्रीय या जातीय-भावनाके गीत लिखे जाते रहे। प्रथम महायुद्ध आरम्भ होनेके समय हिन्दीमें गीति-काव्यके नये रूपका, जिसे प्रगीत कहा जाता है, प्रवर्तन हुआ। सांस्कृतिक नवचेतना ही अिसका कारण नहीं था, वरं अन्यान्य भाषाओंका काव्य-स्वरूप भी अिसकी प्रेरक शक्ति था, विशेषतः रवीन्द्रनाथका और अंग्रेजीका रहस्यवादी तथा रोमांटिक काव्य। प्रथम महायुद्ध और अुसके पश्चात् साम्राज्यवादकी दमन-नीति, राष्ट्रीय नवचेतनाका अुन्मेष तथा पूंजीवादी सभ्यताका आगमन, संयुक्त रूपसे हमारे यहां व्यक्तिवादी मनोदृष्टिकी स्थापनामें सहयोगी हुअे।

आधुनिक शिक्षा-दीक्षाका प्रभाव, नागरिक जीवनकी विषमताका अुद्भव और यान्त्रिक सभ्यताके प्रसारके कारण मध्य-वित्तश्रेणीके कवि व्यक्तिवादी मनोवृत्तिसे अभिभूत हो गअे। अवश्य ही अुन्होंने स्वच्छन्दिनी जीवन-दृष्टि अपनाअी और भावात्मक जीवनादर्शको भी सम्मुख रखा, पर वे रहे व्यक्तिवादी और आत्मोन्मुखी ही। प्रगीत-काव्य रूपके वे ही अुद्भावक, स्रष्टा और कलाकार हैं। अिनका श्रीगणेश सन् १३–१४ के लगभग हुआ और अिसके आविष्कारक हुए अुस समयके राष्ट्रीय मनोवृत्तिके कवि। अुन्होंने आत्माभिव्यंजनाका प्रकृत पथ पकड़ा और रहस्यवादी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवृत्तिके गीत भी लिखे। अी. सन् १९–२० के पश्चात् प्रगीतकी वास्तविक शक्तिके दर्शन हुअे, जब स्वच्छन्दचेता कल्पनाशील कवि अपने सौन्दर्य-बोधकी प्रगीतात्मक अभिव्यक्ति करने लगे। यह सौन्दर्य-बोध आध्यात्मिक दीप्ति-सम्पन्न होनेपर भी कहीं केवल जागतिक था और कहीं दार्शनिक। अैन्द्रिक धरातलपर अुसकी अभिव्यक्ति प्रायः सन् ३० के बाद होने लगी। वह अपरोक्ष अनुभूतिका काव्य था और व्यक्तिकी महत्ताका प्रतिष्ठापक।

सौन्दर्यानुभूतिकी स्वच्छन्द प्रक्रिया मर्यादावादी जीवन-दर्शनकी प्रतिक्रिया समझी जा सकती है। प्रगीत काव्य-रूपके निर्माणमें प्रत्यक्ष वस्तु-व्यापारको अनुभूतिके माध्यमसे प्रकट करनेका प्रयास दिखाअी पड़ता है। पूर्ववर्ती गीतिकाव्यमें भावाभिव्यक्ति विषयादिके विवरणोंको साधन बनाती थी। अतअेव प्रगीतोंमें सांकेतिक शैलीका व्यवहार अपरिहार्य हो गया। अिस काव्य-व्यापारमें स्थूल वस्तु सूक्ष्म भावचित्रके परिच्छदमें और सौन्दर्य प्रतिमान अरूपमयी विराट् सत्ताके छद्मममें व्यंजित होने लगे।

गुप्तजी मुख्यतः कथाकार हैं, पर अुन्होंने प्रगीत रचना भी की है। अुनके प्रगीत कथाश्रित हैं, कुछ स्वतन्त्र भी। पर वे प्रधानतः वस्तुनिष्ठ कलाकार हैं। अुनकी काव्यप्रवृत्तियाँ बहिर्मुखी हैं। गुप्तजी प्रगीत-रचना अुसके आरम्भिक समयसे ही कर रहे हैं, पर अुनकी भावव्यंजना वस्तुमूलक रही है। झंकारसे लेकर भूमि-भागतककी रचनाको देखें तो अुसमें प्रगीतकी प्रायः सभी विशेषताअें दिखाअी पड़ेंगी, पर छायावादी प्रगीतकारोंसे अुनकी यदि तुलना की जाय तो पार्थक्य भी स्पष्ट होगा। अुनके गीत भाव या सौन्दर्यकी सूक्ष्म चित्रण-पद्धतिके अुदाहरण नहीं हैं। कअी स्थलोंपर अुनकी पदावली गीति-काव्योचित नहीं जान पड़ती। वे कभी चमत्कार साधनको लक्ष्य बनाते हैं और कभी सिद्धान्त-प्रतिपादनको। सौन्दर्य-संवेदनकी अपेक्षा अुन्होंने जीवन मीमांसाको प्रश्रय दिया है। वे प्रमुख रूपसे प्रबंधकार हैं, अतअेव प्रगीत रचनामें वे वस्तुमत्ताको विस्मृत नहीं कर पाते। अुन्होंने प्राचीन और नवीन सभी पद्धतियोंके गीत लिखे हैं, प्रगीतोंका विषय-विस्तार भी किया है, पर आत्मविवृत्ति-पूर्ण रचनामें कम ही प्रवृत्त हुअे हैं।

प्रथम महायुद्धकी समाप्तिसे लेकर सन् ३० के आसपासतक अिस काव्य-रूपका वैभव-काल रहा है। सौन्दर्यवादी कवियोंने अिसे अपनाया। प्रसाद, निराला और पन्त, तीनों कवियोंने मुख्यतः प्रगीतका परिष्कार किया और अुसे भव्य-कलाका रूप प्रदान किया। प्रसादने प्रगीतात्मक खण्ड-काव्यकी सृष्टि की और भावोंका माधुर्य अर्जित किया। निरालाने नवीन छन्द-शिल्पका और कोमल तथा परुष भावाभिव्यक्तिका दार्शनिक रूप अुपस्थित किया। पन्तने पदावलीका परिमार्जन किया तथा आत्माभिव्यंजनाका प्रकृत मार्ग अपनाया। महादेवी-जीके आगमनके बाद प्रगीत संगीतात्मक हो गया और वह सर्वांशतः अन्तर्मुखी काव्य समझा जाने लगा। अिसी समय प्रायः प्रमुख छायावादी प्रौढ़िमें प्रवेश कर रहे थे। अुनका काव्य दार्शनिक सिद्धान्तोंसे ओत-प्रोत हो अुठा। यद्यपि रहस्यवादी प्रवृत्तियाँ अुनमें आरम्भसे ही थीं, पर अुन्हें स्पष्ट रूप तभी प्राप्त हुआ। कुछ कवि जीवनकी प्रत्यक्ष भूमिपर भी आ गअे। पंतकी मानववादी, प्रगतिवादी और अंतर चेतनावादी परिणतियाँ दिखाअी पड़ती हैं। निरालाका क्रमिक विकास भी अुलट गया। सन् ३० के पश्चात् प्रगीत काव्यमें मनोविज्ञानका अेक ओर प्रवेश हुआ और तुलसीदास तथा कामायनी जैसी रचनाअें लिखी गअीं। दूसरी ओर पन्त अुपदेशात्मकताको अपनाने लगे। बच्चनने प्रगीतको व्यक्तिगत निराशा और भोगवादकी भूमिपर अुपस्थित किया। प्रगीतको महादेवीजीने प्रतीकात्मक बनाया और बच्चनने सामान्य भाव-स्थितिकी भूमिका प्रदान की। राष्ट्रीय सांस्कृतिक विषयोंपर प्रगीत-रचना भी होती रही। अंचल, नरेन्द्र और आरसीने अतीन्द्रिय चित्रणके स्थानपर अैन्द्रिक और मांसलविवरणोंको प्रगीत-काव्यरूपमें नियोजित किया। अभिव्यक्तिको सहज और सरल बनानेके प्रयास होने लगे। गिरजाकुमार, नेपाली, केदारनाथ और परवर्ती नये कवियोंने अनेक रूपात्मक प्रयोग किये। अुन्होंने अप्रस्तुत-योजना, छन्द-शिल्प,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शब्द-संगीत, बिम्ब-विधान आदिको अपना लक्ष्य बनाया।

ज्यों-ज्यों कुंठित मनोवृत्तियोंकी अभिव्यक्ति प्रबल होती गअी, त्यों-त्यों प्रगीतात्मक रचनाअें सामाजिक जीवनके निकट आती गअीं। हिन्दीमें जब यथार्थवादी प्रवृत्तियाँ प्रबल हो अुठीं, तब प्रगीत-काव्य-रूपका आकर्षण कम हो गया। अन्तश्चेतनावादी, प्रयोगवादी या प्रमद्यवादी अिसे प्रयुक्त करते रहे हैं, । पर प्रगीतका वैभव-काल छायावाद युग ही था। दूसरा अुपयुक्त माध्यम न होनेके कारण आज भी अिसका प्रचलन है, पर प्रगीतका वास्तविक सौन्दर्य नष्टप्राय है। सामाजिक यथार्थवादकी कला आत्मोन्मुखी है ही नहीं। प्रयोग-वादी नवीन काव्य-प्रयोग कर रहे हैं, प्रगीत-रचना अुनका लक्ष्य नहीं है। प्रगीतके भीतर प्रतीकवादी, प्रकृतिवादी, बिम्बवादी, अति यथार्थवादी, अस्तित्ववादी, भविष्यत्वादी प्रवृत्तियाँ पनपती जा रही हैं। छायावाद-की सौन्दर्यानुभूतिको लेकर प्रगीतकी धारा प्रवाहित हो रही है, पर वह क्षीण और विरल है। प्रगीतका प्रयोग बराबर हो रहा है, पर अुसका भावोच्छ्वाससे लेकर सूक्ष्म सौन्दर्य-कल्पनामय और चिंतनशील गीतोंतक जो विकास दिखाअी पड़ा था, वह अपना गाम्भीर्य और मार्ग खो चुका है। काव्यमें अति-बुद्धिवादी तत्वोंका प्रवेश प्रगीत-कलाके ह्रासका प्रमुख कारण है। पंत और निरालाके नये प्रगीत वैयक्तिक वैशिष्ट्य समन्वित होते हुअे भी अपनी पूर्वकालिक कलाके समक्ष नहीं ठहरते। अिसका प्रमुख कारण यह है कि प्रगीतमें मनोभावोंकी जो सूक्ष्म और सप्राण विवृति होती रही है, वह आयात-साध्य नहीं है, न दुहराअी जा सकती है। स्वच्छन्द-जीवन-दर्शनका युग अब नहीं रहा। प्रगीत काव्य-रूप अब कोअी नअी परिणति प्राप्त करेगा। अुसके लिअे गान जैसे शब्दके आविष्कारकी आवश्यकता हो सकती है, जो अुसकी प्रवृत्तियोंका स्पष्ट निर्देश कर सके। पर नअी कविता न गीत है, न गान। वह तत्वबोधिनी हो गअी है। वह भाव-निष्ठ न रहकर, तथ्यपूर्ण हो गअी है।

प्रगीतके अिस विकास-क्रमको देख लेनेके पश्चात् अब हम अिसके अन्तर्भूत तत्वोंका विश्लेषण कर सकते हैं। आत्माभिव्यंजना प्रगीतका मूलभूत तत्व है। भावकी अेकातनता और तीव्रता भी आवश्यक है। प्रगीतमें भावना अुच्छ्वसित होती है, वर्ण्य नहीं होती। आत्मानु-भूति प्रगीतकी विषय-वस्तु है, जिसमें जितनी नवीनता, ताजगी और सचाअी होगी वह अुतनी ही आह्लादिनी होगी। प्रगीतमें यद्यपि सदैव राग-रागिनियोंका आश्रय नहीं लिया गया, पर काव्य-भावना और पदावलीकी लयात्मकतामें अविभाज्य समता, अेकता और समन्वयकी अुपादेयता असंदिग्ध समझी गअी। प्रभावान्विति होनी ही चाहिअे, पर प्रगीतमें न अेकाधिक भावनाकी स्थिति सम्भव है, न अुद्देश्य-बहुलताकी। गेय-तत्व अुसका परिच्छद है, भावावेग अंतःस्फुरण। प्रगीतकी पद-योजना लालित्य-पूर्ण हुआ करती है तथा कठोर भाव या परुष वृत्तियाँ अुसकी प्रकृतिके अनुकूल नहीं होतीं, अतअेव अुनकी न्यूनता रहती है, प्रगीत माधुर्यकी सृष्टि है। यह छायावादी काव्य-शिल्पका प्रधान काव्य-रूप है। छायावादियोंने संगीत तत्वका विनियोग करते हुअे अपनी व्यक्तिगत अनुभूतिकी प्रगीतात्मक अभिव्यक्ति की है। प्रगीतके माध्यमसे सांकेतिक सौन्दर्य-चित्र अंकत किअे गये। यह प्राकृतिक, लौकिक और अध्यंतरित या रूपात्मक सौन्दर्य-प्रतिमानोंकी संश्लिष्ट चित्र-योजनाकी पद्धति थी। सूक्ष्मचित्रण-कलाके द्वारा भावात्मक बिम्बविधान किया जाता था। संवेदना सौन्दर्यकी थी और कल्पना लोकोत्तर। स्थूल वर्णन और कठोर मनःस्थितियां दोनों ही प्रायः त्याज्य थीं। अन्तर्वृत्तियोंके शब्द-चित्र रमणीय अुपादानोंसे निर्मित होते हैं, और अुनके आलंबन भी मनोरम थे। दार्शनिक अनुबंधके साथ-साथ प्रगीतको माधुर्यका प्रतिबंध भी स्वीकृत हुआ। पदावलीका परिशोधन, परिमार्जन और संयमन अिस परिमाणमें किया गया कि नअी काव्य-भाषाका आश्चर्यो-त्पादक संस्कार सम्भव हुआ। प्रगीत-काव्यका भीतर और बाहर सब कुछ नअी कलासे व्युत्पन्न और नवीन जीवन-दृष्टिसे अनुप्राणित दिखाअी पड़ा। निरालाकी ओजमयी मुक्तवाणीने अुसकी सीमाका विस्तार भी किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रगीतकी परिभाषा क्या है? क्या अुसे व्यक्तिगत सीमामें तीव्र सुख-दुखात्मक अनुभूतिका वह शब्द-रूप ही कहा जाय, जो अपनी ध्वन्यात्मकतामें होंगे? क्या लोकगीत, सामूहिक गीत या समाजावदी गीत अिस श्रेणीमें आ जाअेंगे? अवश्य ही छायावादी प्रगीतकी अिसमें व्याख्या हो गअी है। गीतको रागमयी कल्पनाका अुद्वेलन कहा गया है। भावका लयात्मक स्फोट भी अिसी कथनकी पुनरुक्ति है। प्रगीतको हम लोक-सामान्य अनुभूतिसे पृथक् न रखते हुअे भी कहेंगे कि वह कविके सौन्दर्य संवेदनकी माधुर्य-पूर्ण आत्माभिव्यंजना है। सुगेयताको हम कविकी तल्लीनता या तन्मयताका परिणाम समझते हैं। सौन्दर्यानुभूतिके अपने प्रतिमान होते हैं और वे प्रगीतकी काव्य-वस्तु कहे जा सकते हैं। व्यक्तिवादके ह्रासके साथ-साथ प्रगीतकी अुपयोगिता भी कम हो रही है। दार्शनिक प्रवृत्तियों और अुदात्त भावनाओंके स्थानपर जब कभी यथार्थवादी विचार और कुंठित चितवृत्तियाँ साहित्यमें अुभरने लगती हैं, तब प्रगीतका स्वच्छन्द रूप रुग्ण जान पड़ता है, अुदाहरणार्थ बच्चनके गीत। वैयक्तिक चेतना जैसी होगी, प्रगीतकी सृष्टि भी अुसी प्रकारकी होगी। कविका आत्मतत्व कहिअे या व्यक्तित्त्व या अहंता प्रगीतका प्रजनन करती है। बौद्धिकताका आधिक्य भी प्रगीतको गरिष्ठ बना देता है। कल्पना शील या भावुक प्रकृति प्रगीत सृष्टिके लिअे अनिवार्य हुआ करती है। बुद्धिवादी व्यक्ति अुसे अुपदेश-निष्ठ या अलंकृत या सिद्धान्त-व्याख्या बना देगा, प्रकृत काव्य नहीं रहने देगा। बुद्धि-विशिष्ट प्रगीत तभी सम्भव हैं, जब वे आत्म-तत्वसे शून्य न हों, यथा निरालाके कतिपय गीत। प्रतिकूल अुदाहरणके रूपमें पन्तके अरविन्दवादी गीत रखे जाअेंगे। असंतुलन मनः तत्वका हो सकता है और जीवन-दृष्टिका भी। अति श्रृंगारिकता, रूपलिप्सा, या भोगैषणा दूसरे प्रकार असंतुलन है। कोरा भावावेश श्रेष्ठ प्रगीतकी सृष्टि नहीं करता, अन्यथा दिनकर और भगवतीचरण, प्रसाद और निरालासे बड़े प्रगीतकार माने जाते।

अिस निबन्धके अन्तमें हम प्रगीतोंका वर्गीकरण करना चाहेंगे। विषय, शैली और आकारकी दृष्टिसे प्रगीतके अनेक भेद हो सकते हैं। हिन्दीमें प्रगीतोंके विषयके अनुसार-प्रेमगीत, रहस्यवादी गीत, प्रकृतिगीत, शोक-गीत, जीवन-मीमांसाके गीत, राष्ट्रीय गीत, वीरगीत, यंग्यगीत आदि रूप दिखाअी पड़ते हैं। अंतरा-टेकसे युक्त प्रगीत सुगेय होते हैं और वे शुद्ध संगीतात्मक प्रगीत कहे जा सकते हैं। स्फुट प्रगीतात्मक कविताअें सामान्यतः प्रगीत कही जा सकती हैं। अुन्हींको प्रगीतात्मक मुक्तक कहनेकी परम्परा चल पड़ी, है। अुन्हें केवल प्रगीत कविता कहनेमें कोअी हानि नहीं है। आकारकी दृष्टिसे लघु, प्रलंब और मध्यवर्ती वर्ग स्थिर किये जा सकते हैं। शैलीकी दृष्टिसे समवेत-गीति, प्रगीति-प्रबन्ध, चतुर्दश-पदी, पत्रगीति, संबोध-गीति, गीति-नाट्य, अध्यवसित-गीति, संताप-गीति, प्रभृति वर्ग स्थिर होंगे। निश्चय ही अिन प्रकारोंमें अंग्रेजीके गीति-काव्यके अुन भेदोंका समावेश हो जाता है, जो प्रगीतकारोंके द्वारा प्रयुक्त हुअे हैं। भावों और चित्राणोंके आधारपर तथा मत या सिद्धान्तोंके अनुसार भी प्रगीतोंके कतिपय भेदोपभेद किअे जा सकते हैं।

आधुनिक काव्यमें छायावाद-युग अपने कलात्मक प्रकर्षके कारण हिन्दीमें अद्वितीय है। प्रगीत-काव्य अिसी युगकी साहित्यिक अुपलब्धि है। यही वह काव्य-रूप है, जिसमें नवयुगकी आत्मानुभूति अपने समस्त सौन्दर्य-संस्कारों और राष्ट्रीय अुपकरणोंके साथ सांस्कृतिक धरातलपर अवतरित हुअी है। प्रगीत काव्य व्यक्तिवादी स्वच्छंद जीवन-दर्शनका प्रतिफल है, पर यह महत् काव्यके लक्षणोंसे युक्त भी है। युगकी नव्य चेतना और कलाकी भव्य साधना दोनों ही प्रगीत काव्यमें नियोजित है। निश्चय ही प्रगीतका अद्यतन विकास अुसे तत्व-निरूपक गानके निकट ले जा रहा है। यह अुसकी नवीनतम परिणति है। क्या अुसमें भी कलात्मक श्रेष्ठ अुपलब्धियोंकी सम्भावनाअें निहित हैं? सामूहिक भावोंके प्रतीक साहित्यिक गीतोंकी अपेक्षा की ही जानी चाहिए। प्रगीत-कला आत्माभिनिवेशमयी है। अुसमें जीवनके व्यापक और सूक्ष्म सौन्दर्यकी प्राण-धारा ही तो दीख पड़ती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुजराती कहानी

मृत्युके स्वांग

—श्री मंजुलाल देसाअी

कौशाम्बीका अन्तःपुर वसन्तोत्सवके अुल्लासपूर्ण संगीतसे गूंज रहा था। महारानी झूलेपर मन्द मन्द झूल रही थीं।

महारानी हैं अवन्तीके प्रतापी राजा चन्द्रप्रद्योतकी तनया वासवदत्ता। अुनसे विवाह करनेके लिअे वत्सराज अुदयन कारागारमें रहे थे, और अिस प्रेमी युगलको भगा ले जानेके लिअे समर्थ मन्त्री श्री यौगंधरायण-को पागलका अभिनय करके बहुत बड़ा प्रपंच करना पड़ा था।

अिन दोनोंके प्रेमके सम्बन्धमें अनेक कथाअें प्रचलित हैं। विक्रमका संवत्सर आरम्भ होनेसे पहलेके समयका लोकमानस अिस युगलके प्रेमपर अुन्मत्त हो अुठा था।

विवाह हुअे वर्षों बीत गअे, फिर भी वासवदत्ताका सौन्दर्य सद्यः प्रफुल्ल कमल जैसा बना हुआ था। और स्वाधीन भर्तृका रूप-गर्व अुसके मुखपर चमक रहा था।

आज अुसके सुन्दर मुखपर क्रोधकी हलकीसी ललाअी दिखाअी दे रही है। अुसकी रमणीय भृकुटी कुटिलता धारण किअे हुअे है। सदा हँसते मुस्कराते अुसके नयनोंसे अग्निकी चिनगारियाँ निकलती प्रतीत होती हैं।

रानीने कहा: 'मन्त्री! यह पद्मावतीकी क्या बात है। जो सारे नगरमें फैली हुअी है?'

सामने चौकीपर बैठे हुअे मन्त्रीने हाथ जोड़कर अुत्तर दिया:

'मगधकी राजकन्याकी बात? अैसी अफवाहें तो चलती ही रहती हैं। परन्तु राजाके कानतक अुन्हें पहुँचानेकी किसकी हिम्मत होगी? आपके सिवा दूसरी स्त्रीकी बात करना स्वयं मृत्युका ही निमन्त्रण करना है।

वासवदत्ताके होठोंपर गर्वका स्मित फैल गया। अुसकी आंखें दमकने लगीं। 'मन्त्री! मैंने सुना है कि आप भी अिसमें दिलचस्पी ले रहे हैं?'

मन्त्री गम्भीर हो गया। अुसने कहा: महा-रानीजी! आपको यहां लानेवाला भी तो मैं ही था और आपपर, पिताका पुत्रीपर जैसा स्वत्व होता है वैसा मेरा भी तो स्वत्व है। आप तो जानती ही हैं कि आपकी सम्मति मिलनेपर भी महाराज अुसे स्वीकार न करेंगे। अिसलिअे आपसे परामर्श किअे बिना हम क्या कर सकते हैं?

'मेरी मौत लानेके लिअे भी मेरे साथ परामर्श करना होगा? मन्त्रीजी! सच ही आप बड़े अद्भुत व्यक्ति हैं!' अुसने व्यंग्य किया।

मन्त्रीने बड़ी गम्भीरतासे कहा—'आप यह तो जानती ही हैं कि आप दोनोंके सुख और भलाअीके सिवा मेरा दूसरा कोअी अुद्देश्य नहीं। आज आप दोनों मेरा पितातुल्य आदर करते हैं। नयी रानीके आनेसे मेरी स्थिति कुछ अधिक अच्छी होगी अैसी बात भी नहीं। अुस परिस्थितिमें मेरी स्थिति बिगड़ना ही अधिक सम्भव है। परन्तु महारानीजी! यदि आपको यह विश्वास हो कि राज-कुल और आपका दोनोंका हित किसमें है यह मैं समझता हूँ तो आप मेरी बातें धैर्यपूर्वक सुनें।' रानी सोचने लगी। मन्त्री सत्य कह रहा था। अुसकी बातपर सन्देह करनेका कोअी कारण नहीं था। अुसका कहना जो भी हो अुसे सुनना अुसका कर्तव्य है। झूलेको स्थिर करके अुसने मन्त्रीसे कहा—'आपकी सब बातें आप मुझे समझाकर कहें।'

गला साफ करते हुअे मन्त्रीने कहा, 'आपका विवाह हुअे आठ वर्ष हो गअे परन्तु अभी तक राजकुलमें कोअी सन्तान पैदा नहीं हुअी। जनताके मनमें अिससे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भय पैदा हो गया है। और पद्मावतीको सिद्धका वचन मिला है कि अुसका पति चक्रवर्ती नरेश होगा। मगधके प्रति शत्रुता रखना हमारे लिअे हानिकर बात होगी, क्योंकि हमसे वह बहुत अधिक बलवान है। यह सब बातें पद्मावतीके साथ विवाह सम्बन्ध जोड़नेके पक्षकी हैं। अिसके विरुद्ध अिन सबसे बड़ी अेक बात है। आपकी अनुमति मिलनेपर भी वत्सराज अिस सम्बन्धको कभी स्वीकार न करेंगे। आप अुनको दबाअें, जिद करें, रूठ जाअें फिर भी वे स्वीकार न करेंगे। अिसलिअे कभी न अकुलानेवाली मेरी मतिको भी आज कोअी मार्ग दिखाअी नहीं दे रहा है। मैंने तो अिस विचारका अेक प्रकारसे त्याग ही कर दिया है। आपको सुनानेके लिअे ही मैंने अिन बातोंको यहाँ रखा है, वरना मैंने तो अुस सम्बन्धमें विचार करना भी अब छोड़ दिया है।'

दोनों गम्भीर होकर सोच-विचारमें मग्न हो गअे।

\+ + +

अपने शयन-कक्षमें वासवदत्ता निद्रा ले रही थीं। दोपहरको मन्त्रीके साथ जो बातें हुअी थीं अुनपर विचार करते करते अुसे नींद आ गअी थी। नींदमें ही अुसके माथेपर बल पड़ने लगे। दुःस्वप्न देखनेके कारण अुसकी भंवें खिंचने लगीं। अुसके मुखपर वेदनाके चिह्न प्रगट होने लगे। छाती जोर-जोरसे धकड़ने लगी और ओठ खुल गअे। फिर स्वप्न मानों अनुकूल होता जा रहा हो, ये वेदनाके भाव कम होने लगे और अन्तमें केवल आश्चर्यके भाव ही मुखपर दिखाअी देने लगे।

दूसरे दिन सुबह शीघ्र ही मन्त्री बुलाअे गअे। वासवदत्ताके मुखसे रातके स्वप्नकी बातें अुन्होंने ध्यान-पूर्वक सुनीं।

'मन्त्री! मुझे रातमें स्वप्न आया कि मैं जलकर मर गअी हूँ और महाराजाका पद्मावतीसे विवाह हो गया।' मन्त्रीके मुखपर होनेवाले भाव-परिवर्तनोंको देखनेके लिअे वह कुछ क्षण रुक गअी। मन्त्री चकित होकर अिस अद्भुत नारीकी ओर देख रहा था। अुसने सोचा—स्वप्नकी बात सत्य नहीं होती। रानी आत्महत्या करके अपने पतिको चक्रवर्ती बनाना चाहती है। अरे! मैं स्वयम् कैसा मूर्ख हूँ। किसलिअे मैंने कल अुससे अैसी बात कही? अुसका हृदय फटने लगा। अुसका अंग-अंग काँप अुठा। अश्रुपूर्ण आंखोंसे अुसने कहा, 'महारानीजी! आप क्या आत्महत्या करनेकी बात सोच रही हैं? अेक हजार जन्मतक अेक हजार चक्रवर्ती पद मिलते हों तब भी वे तुच्छ हैं। अैसा मैं कभी न होने दूंगा। और यदि आप अैसा कुछ करेंगी तो अुसी क्षण मैं भी प्राण छोड़ दूंगा।' अपने भावोंको छुपानेके लिअे अुसने अपना मुख दोनों हाथोंसे ढँक लिया। अुसके कन्धे अूपर-नीचे अुठते-गिरते दिखाअी देने लगे।

रानीके हृदयके दुःखकी कोअी सीमा न रही। अिस तरह अिस पितातुल्य सहृदय पुरुषकी अुसने क्यों परीक्षा ली। वह खड़ी हो गअी। मन्त्रीके सिरपर हाथ रखकर अुसने कहा—'परन्तु मेरी बात तुम पूरी सुनोगे न?'

मन्त्रीने मस्तक हिलाकर कहा, 'अिससे विपरीत कोअी दूसरी बात होगी तो सुनूंगा। अन्यथा अिसी समय प्राण दे दूंगा।'

बड़ी नम्रतासे रानीने कहा, "पिताजी! जब हम अकेले होंगे तब मैं आपको अिसी तरह पुकारा करूंगी। मेरी बात अिससे सर्वथा भिन्न है।

मन्त्रीने अूपर देखा और आंखें पोंछी।

'पिताजी! स्वप्नकी पूर्णाहुति विचित्र थी। दंपतीको आशीर्वाद देनेके लिये मैं स्वयम् वहां अुपस्थित थी।' मन्त्रीकी आंखोंमें प्रसन्नता चमक अुठी। अुसने प्रशंसापूर्ण नेत्रोंसे रानीकी ओर देखा और पूछा जलकर मरनेमें मैं भी आपके साथ था या नहीं?'

'स्मरण नहीं है।' मुस्कुराते हुअे अुसने अुत्तर दिया। मन्त्रीने भी रहस्यभरा स्मित किया। और दोनों कोअी योजना बनाते हों अिस प्रकार अेक-दूसरेसे सटकर बातें करने लगे।

अचानक असंख्य पक्षियोंकी चीखें सुनाअी देने लगीं। धुअेंके बादलपर बादल अुठे। आगकी लपटें दिखाअी देने लगीं। जिनमें कुछ छोलदारियाँ जलकर राख होती दिखाअी दीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूरसे सैनिक दौड़ आये। अुन्होंने समीपकी अेक बावड़ीमेंसे जल लेकर आग बुझानेका प्रयत्न किया परन्तु आग काबूमें नहीं आअी।

'महारानीजी कहां है। रानीजी कहां है?' भय-विह्वल करुण-कातर पुकारें सुनाअी देने लगीं। सैनिकोंके मुखपर कालिमा छा गअी और वे अुन्मत्तसे बनकर आग बुझानेका प्रयत्न करने लगे। दासियाँ घबराहटके कारण सुध-बुध खोकर दौड़ने लगीं। वे निकट आते ही जमीनपर ढेर हो गिर गअीं।

आग धीरे-धीरे बुझ रही थी। जान जोखिम अुठाकर भी सैनिक जली हुअी छोलदारियोंमें घुस गअे। परन्तु कुछ हड्डियों तथा राखके सिवा अुन्हें वहां कुछ नहीं मिला।

सैनिकोंका नायक हाथमें कुछ जले हुअे अलंकार लेकर बाहर आया। अुसने अपना सिर पीट लिया और कहा हो चुका, रानीजी तथा मन्त्री दोनों जलकर भस्म हो गये। चारों ओर रोने-पीटनेकी आवाजें आने लगीं। + + +

दूर जंगलमें अेक अंधेरी पगडण्डीपर अेक वृद्ध तापस और अेक युवती तपस्विनी जा रहे हैं। ये दोनों मृत माने जानेवाले रानी और मन्त्री ही हैं।

मगधकी राजधानी राजगृहके निकटका तपोवन है। राजकुमारी पद्मावती तपोवन देखने आयी है। अठारह सालकी बालाका यह यौवन-प्रवेश काल है। सिद्धका वचन है कि अुसका पति चक्रवर्ती नरेश होगा। परन्तु अुसके मुखपर गर्वका कोअी चिह्न नहीं। अुसके सुमनोहर नयनोंमें मानवता तथा अनुकंपाके भावोंका अुद्रेक ही परिलक्षित होता है। विशाल भाल, गोरा और लम्बा-गोल मुख, प्रखर बुद्धि तथा राजकुलोचित गौरवसे दीप्त भारतके सर्वश्रेष्ठ नृपकी लाड़ली तनया होनेपर भी अुसमें छिछोरापन या मिथ्याभिमान जरा भी नहीं। तपोवनके निवासियोंकी आवश्यकताअें जाड़ेके आरम्भमें आवश्यक अन्न तथा वस्त्र जिन्हें चाहिअे अुन्हें बाँटनेके लिअे वह आज यहां आयी है।

कुलपतिके दर्शन करके जब वह लौटती है अुसके चारों ओर आश्रमवासियोंकी भीड़ लग जाती है। वह अुन सबको अुनकी आवश्यक वस्तुअें देकर सन्तुष्ट करती है।

कुमारी अपनी पालकीमें बैठकर जानेकी तैयारी करने लगी। परन्तु जानेसे पहले अेक हाथसे पालकीके डण्डेको पकड़कर कंचुकीसे बोली, 'कंचुकी, शंखनाद करके घोषणा करो कि कोअी बाकी तो नहीं रहा?'

शंखनाद हुआ और अुसके साथ ही कंचुकी बलन्द आवाजसे पुकार अुठा— 'आश्रमवासियों! जिस किसीको वस्त्र, कम्बल या अन्य किसी वस्तुकी आवश्यकता हो वह यहां पधारनेका कष्ट करें। मगधकी राजकुमारी अुसकी अभिलाषा पूरी करेगी।'

तीन बार अैसी घोषणा की जाती है। तीसरी बारकी घोषणाकी प्रतिध्वनि अभी शान्त नहीं हुअी थी कि आश्रमके बाहरसे अेक आवाज सुनाअी दी। 'ठहरिअे! मुझे अेक प्रार्थना करनी है।'

अेक तापस आश्रममें प्रवेश करता है। दीर्घ प्रवासके कारण अुसके वस्त्र धूलभरे हो गये हैं और अुसकी काया थक गअी है। अुसके साथ अेक युवती तापसी भी है। राजकुमारी कुतूहलपूर्ण दृष्टिसे अुन दोनोंको देखती है। दोनोंके मुखकी प्रभा छिपाअे नहीं छिपती। ये कोअी साधारण तापस नहीं यह वह समझ जाती है।

कुमारी पालकी छोड़ देती है। दोनोंको अेक शिलासनपर बैठनेका संकेत करती है और दासीको अुन्हें जल देनेकी आज्ञा देती है। अतिथियोंको अपनी थकान मिटानेका समय देनेके बाद वह अुन्हें अपनी आवश्यकता, जो भी हो, प्रकट करनेके लिअे कहती है।

यौगंधरायण (वही तापस वेश बनाये था) हाथ जोड़कर कहता है, कुमारी, मैं वंग देशका ब्राह्मण हूँ। मेरी अिस पुत्री अवन्तिकाका पति वर्षोंसे काशी चला गया है। मैं अुसे ढूंढ़नेके लिअे काशी जाना चाहता हूँ। जबतक मैं न लौटूं आप मेरी अिस पुत्रीको अपने पास रखनेकी कृपा करेंगी।'

अनजानी युवतीके संरक्षणका दायित्व अपने सिर-पर लेनेमें पद्मावतीका मन हिचकिचाया। कंचुकीने अुसके मनके भावोंको ताड़ लिया और अुसकी ओरसे अुत्तर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया:—"ब्रह्मदेव, अनजानी युवती और रूपवती ब्राह्मण बालाके संरक्षणका दायित्व लेना कोअी सरल नहीं। और कुमारीकी वय भी अैसा दायित्व ग्रहण करने योग्य नहीं है।"

अुस जमानेमें कूटनीतिमें अद्वितीय माना जानेवाला यौगंधरायण अैसे अुत्तरसे थोड़े ही दबनेवाला था। आकाशके प्रति दृष्टि करके अेक दीर्घ निश्वास छोड़ते हुअे अुसने कहा, अीश्वरेच्छा! अिस प्रदेशमें यदि हम अनजाने न होते तो आपके पास आते ही क्यों? और कुमारीजीकी वयका तो प्रश्न ही नहीं अुठता। सिंहका बच्चा जन्म ग्रहण करते ही पराक्रम करने लगता है। मगधकी राजकुमारीकी सहृदयता, बुद्धि तथा कर्तव्यनिष्ठाके बारेमें शंका करना भी पाप है। यदि कुमारीजीकी अिच्छा नहीं, तो कोअी बात नहीं। आपने शंखनादके साथ घोषणा की थी जिसे मार्गमें जाते हुअे मैंने सुना और मैं यहां आपके पास चला आया। 'बेटा।' वासवादत्ताकी ओर देखकर अुसने कहा, अभी और भटकना तेरे भाग्यमें है। अन्यथा मगधकी राजकुमारीकी घोषणा भी क्या कभी असत्य हो सकती है?

कंचुकी कुछ अुत्तर न दे सका। पद्मावतीके मुखपर किंचित् क्रोध और कुछ लज्जाकी ललाअी फूट पड़ी। अुसने वासवदत्ताकी ओर देखा।

भवभूतिने कहा है कि कोअी आन्तर हेतु ही, जिसे हम नहीं समझ सकते, परस्पर आकर्षणका कारण बन जाता है। अिस कथनके अनुसार अुन दोनोंके हृदयमें कोअी अकारण स्नेहका स्रोत फूट पड़ा।

पद्मावतीने स्वागतके लिअे हाथ बढ़ाया। राज्य-व्यवहारको समझनेवाली वासवदत्ताने अुस हाथका स्पर्श करके अुसे अपनी आंखोंसे लगाया और कुमारीकी पादवंदनाके लिअे नीचे झुकी। परन्तु बलपूर्वक अुसे रोकते हुअे पद्मावतीने कहा, 'बहन, ब्राह्मण क्षत्रियको वंदन करे यह अिष्ट नहीं। आओ, मेरे पास आओ। आजसे तुम मेरी बहन हुअी। वयमें तुम मुझसे बड़ी हो। अब तो तुम्हें ही मेरी देखभाल करनी होगी।'

वासवदत्ताके नयनोंमें आनंदाश्रु झलकते दिखाअी दिअे। अिस कुमारीको यदि अपना पति सौंप देना पड़े तो भी कोअी दुःखकी बात नहीं। सचमुच हमारा यह छल योग्य पात्रके लिये ही है।

यौगंधरायणने भी सन्तोषकी सांस ली। पद्मावतीका पति चक्रवर्ती हो या न हो परन्तु अैसी पत्नी पानेवाला भाग्यशाली तो अवश्य होगा।

वासवदत्ताको अपनी ओर खींचते हुअे पद्मावतीने यौगंधरायणसे कहा, 'पिताजी! अब आप सुखपूर्वक मेरे बहनोअीको ढूंढ़ने जा सकते हैं। जब आप लौटेंगे, आप अपनी अवन्तिकाको मेरे पास सकुशल ही पायेंगे। 'कंचुकीकी ओर घूमकर अुसने कहा, 'आर्य, अवन्तिकाके पिता अब मेरे भी पूज्य हैं। अुनको यात्रा करनेकी तमाम सुविधाअें कर देना अब आपका कर्तव्य होगा।'

यौगंधरायणका गला भर आया। गद्गद् हो अुसने कहा, राजकुमारीजी, तुम्हें तो सिद्धका वचन प्राप्त है। मैं अकिंचन हूं, तुम्हें क्या दे सकूंगा? परन्तु अपने जीवनमें मैंने यदि स्वार्थसे परार्थको ही अधिक प्रिय माना है तो मेरा आशीर्वाद है कि तुम्हारा पति चक्रवर्ती हो या न हो, तुम्हारा संसार सदा आनन्दमें ही बीते।

व्यवहार-कुशल कंचुकी बोल अुठा—'ब्रह्मदेव, आप चले जायँ, अुससे पहले अेक बात बता देना आवश्यक है। आपको लौटनेमें बहुत समय बीत जाय और अुससे पहले यदि कुमारीजीका विवाह हो जाय तो क्या करना होगा? बिना किसी प्रकारकी हिचकिचाहटके यौगंधरायणने अुत्तर दिया' कुमारीजी जो भी अुचित समझें करें। मैं अपनी अमानत लेनेके लिअे वे जहां भी होंगी वहां पहुंच जाअूंगा।

पद्मावतीके मुखपर सिन्दूरी रंग फैल गया, वह अेक ओर मुंह फेरकर कहने लगी, 'पिताजी! अवन्तिका वहां भी मेरे साथ होगी। अब आपको अुसकी चिन्ता करनेका कोअी कारण नहीं।'

वासवदत्ताने सजल नयनोंसे अपने वफादार मन्त्रीको विदा किया। कंचुकी द्वारा भेजे गये मनुष्यके साथ मन्त्री चला गया और वासवदत्ता कुमारीकी पालकीमें बैठ गअी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्द बहनेवाले स्रोतोंके कलरव-सी भूमिकाका संगीत समाप्त होता है और शहनाअियां बजने लगती हैं। वेद मन्त्रोंके अुच्चार होते हैं। विवाहके मंगल गीत गाये जाते हैं। अनेक दीपमालाओंसे प्रकाशित, महामूल्यवान आसनोंसे सुशोभित और रंगविरंगी वस्त्राभूषणोंसे भूषित नर-नारियोंसे ठसाठस भरा हुआ विवाह-मण्डप, कौशाम्बीके राजमहलके विशाल चौकमें शोभा दे रहा है।

वेदीके पास चौकियोंपर वर-वधूके रूपमें ये कौन बैठे हैं? अलंकार तथा पुष्पोंका गहरा श्रृंगार होनेपर भी पद्मावती तो शीघ्र ही पहचानी जा सकती है। परन्तु दुलहेकी मुखमुद्रापर ध्यान देना चाहिअे। अुसके मुखपर विवाहका आनन्द नहीं, अुसकी विशाल आंखोंमें विषादकी गहरी छाया स्पष्ट दिखाअी देती है। अुसमें अभी हाल ही में बीते बौरायेपनका किंचित् असर भी है। प्रसंगके अनुरूप गम्भीरता अुसके मुखपर दिखाअी देती है। विकट बीमारीकी खाट छोड़कर अुठे हुअे बीमारकी तरह अुसके गाल बैठे हुअे हैं, शरीर कृश है और असह्य श्रमके कारण वह बार-बार पीठको मरोड़ता रहता है।

यह वत्सराज अुदयन है। वासवदत्ताके अकाल और करुण अवसानसे अुसे गहरा आघात पहुंचा था। वह कुछ समयके लिअे पागल-सा हो गया। सेनापति रुमण्वान और विदूषक वसंतकका सतत पहरा होनेके कारण अुसे आत्महत्या करनेका अवसर नहीं मिला। अुस दुःखद प्रसंगको अेक साल बीत जानेपर आज अुसने कुछ स्वस्थता प्राप्त की है और केवल राजनैतिक हेतुसे ही अिस विवाहको अुसने स्वीकृति दी है।

दुलहेकी अिस अुदासीनताकी छाया वधूके मुखपर भी पड़ रही है। प्रसंगके अनुरूप अुसमें स्वाभाविक लज्जाके साथ अुत्साहघातक अिस अुदासीनताकी छाया भी मिली हुअी है। परन्तु अुसे विश्वास है कि अपने सौन्दर्य तथा यौवनसे वह अपने पतिके हृदयको फिरसे अुल्लसित कर देगी। अिस प्रकार यह विवाह-कार्य समाप्त होता है।

राजाके विवाहके आनन्दोत्सवका घोष दूरपर सुनाअी दे रहा था। नागरिकोंको भोज दिया गया और गरीबोंको दान। सर्वत्र आनन्दका वातावरण व्याप्त था। राजाके अन्तःपुरमें सोहाग-रातकी तैयारियाँ चल रही थीं।

अवन्तिका पद्मावतीके साथ यहाँ आयी हुअी थी। वही आज पद्मावतीका श्रृंगार कर रही थी। अुसके रक्त कमलसे पदतलोंमें आलता लगाकर अुन्हें रंगा गया। कटितक लटकनेवाले लम्बे बालोंमें चमेलीका सुगंधित अुत्तेजक तेल लगाकर चोटी गूंथी गअी। माँगमें सिन्दूर भरा गया, अुसपर मोतीकी लर गूंथी गअी। और अूपरसे फूलोंके गजरे बांधे गये। आंखमें काजल लगाकर अुसके गालपर नन्हासा डिठौना भी लगाया गया। अुसके माथेपर मनोहर चन्द्रक लटकता था।

अुसके सुकोमल देहको सर्वोत्तम वस्त्रोंसे सजाया गया। केसररंगी तंग चोलीसे अुसका वक्षःस्थल ढंका हुआ था और अुसपर मोतीकी मालाअें झूल रही थीं। चीनसे मंगाये गये आसमानी रंगके रेशमका रत्नखचित घांघरा अुसने पहना था और अुसपर महीन जरी कामकी कुसुम्बी रंगकी ओढ़नी ओढ़ी थी। अुसको नूपुर तथा रत्न मेखला पहनाअी गअी। अिस प्रकार वह षोड़श श्रृंगार से सजा दी गअी।

\+ \+ \+

अपने ही पतिके पास भेजनेके लिअे सपत्नीको सजाते हुअे वासवदत्ताके हृदयमें कैसे-कैसे भाव पैदा हुअे होंगे? स्त्रीके लिअे स्वाभाविक अीर्ष्यासे क्या अुसने अपने दांत न पीसे होंगे? अपनी ही बनाअी योजनाको अिस प्रकार सफल होते देखकर क्या अुसे अपनेपर ही क्रोध न आया होगा। आज पद्मावतीकी अिस विलास-रात्रिकी कल्पना करके अुसे अपनी सोहागरातका स्मरण न हुआ होगा? सम्भवतः अिसी कारण अुसने सर्वप्रथम पद्मावतीके पैरोंपर आलता लगाना पसन्द किया था क्योंकि अिसकेलिअे अुसे अपना मुख नीचेकी ओर झुकाये रखना पड़ा और अुसके मुखके भावोंको कोअी भी न देख सकता था।

जो भी हो, अुसने बड़े कौशलसे अपना संयम रखा था। फिर भी अपने मनका क्षोभ वह पद्मावतीसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छिपा न सकी। आलता लगाते समय अुसके हाथ काँप रहे थे। चोली बांधते समय अुसने आवश्यकतासे अधिक बल लगाया था। कटिमेखला लिअे वह थोड़ी देरके लिअे स्तब्ध-सी खड़ी रही। और जब अुसने रक्षा-माला बांधी तब अुसकी आंखोंमें आंसू चमक रहे थे।

पद्मावतीने माना कि अवन्तिकाको अपने पतिका स्मरण हो आया है। अभिलाषभरी मुग्धाके हृदयमें अुठनेवाले अरुध्य भावोंसे भरी पद्मावतीके हृदयमें अनुकंपाके भाव अुमड़ आअे। अुसने अवन्तिकाका चिबुक पकड़कर अुसका मुख अूपर अुठाया।

"बहन!" पद्मावतीने बड़े प्रेमसे कहा, 'घरकी याद आअी। नहीं? पिताके भी कुछ समाचार नहीं मिले, अिससे दिलमें दर्द हो रहा है, नहीं?'

अपनी अैसी दुर्बलतापर क्रोध करती हुअी अवन्तिका तुरन्त ही संभल गअी। वह मुस्कुरायी—अुसी तरह जैसे कोअी परीक्षामें अनुत्तीर्ण अपनी निष्फलताको छिपानेके लिअे हंसता है। अुसने कहा, "कुमारी! भूल हुअी! रानी! आज अैसे विचारोंके लिअे समय कहां? अभी तो आपके नये जीवन-प्रवेशका ही विचार करना चाहिअे।'

पद्मावतीने किंचित् लज्जा अनुभव की। अवन्तिकाको अपने पास खींच लिया और बोली—फिर भी बहन याद तो आती ही है। किन्तु किया क्या जाय? तुम्हारे पति और पिताको ढूंढ़नेके लिअे आदमियोंको भेजनेका कल ही प्रबन्ध करेंगे। मेरे सुखमें यदि मैं तुम्हारे दुःखोंको भूल जाअूं तो मेरा यह कार्य धिक्कारके योग्य होगा।' कुछ संकोचके साथ फिर अुसने कहा,—'तुम ब्राह्मण हो और मुझसे वयमें भी बड़ी हो, अिसलिअे मैं तुम्हें आशीर्वाद तो नहीं दे सकती किन्तु अीश्वरसे मेरी प्रार्थना है कि मन, वचन तथा कायासे मैंने कभी किसीका भी अहित न किया हो तो अुस पुण्यके प्रतापसे तुम्हारे मनके तापका शमन हो, तुम्हारे प्रियजन तुम्हें प्राप्त हों।'

भावोद्रेकके कारण अुसका स्वर कंपित था। अवन्तिकाके नयनोंमें अश्रु चमकने लगे। अुसने मनमें विचार किया। यह सरल हृदया बाला क्या मांग रही है? मुझे पहचानती-नहीं अिसलिअे कैसी अिच्छा कर रही है। आज ही जब पतिके साथ अुसका प्रथम समागम होनेवाला है, अपनी ही सौतको अपना पति लौटा देनेकी ही तो वह प्रार्थना कर रही है? अैसे विचित्र संयोगको देखकर अवन्तिका मन-ही-मन मुस्कुरा रही थी और अिसके कारण वह पूरी स्वस्थ भी हो गअी थी।

पद्मावतीके माथेपर हाथ फेरते हुअे अुसने कहा, 'आपकी आशीस अवश्य सफल होगी। परन्तु अब चलिये देर हो रही है।'

संकोच, लज्जा तथा क्षोभके कारण पद्मावतीका अंग-अंग कांप रहा था फिर भी वह खड़ी हो गअी।

अवन्तिकाने अेक थालमें पूजन सामग्री, फूलहार, मेवा तथा ताम्बूल आदि मुखशुद्धिकी सामग्रीसे भरी हुअी कटोरियाँ सजाअीं और अुसके शयन-गृहतक अुसके साथ गयी। शयन-गृहके द्वारतक पहुंचनेपर अन्दरसे झूलेकी आवाज सुनाअी दी। 'अरे, राजा तो यहाँ पहले आ ही पहुंचे हैं!'

पद्मावतीके पैर स्तंभित हो गअे। अुसका हृदय बड़े वेगसे धड़कने लगा, अुसका अंग-अंग कांपने लगा। अुसके मुखपर पसीनेकी बूंदें झलक अुठीं।

नववधूकी अिस व्याकुलताको अवन्तिका समझ गअी। अुसने अपने हाथका थाल संभालकर अेक चौकी-पर रख दिया। पद्मावतीको अपने पास खींचकर अुसका मुख पोंछा। हलके आलिंगनमें अुसे दबाकर अुसके गालोंपर हाथ फेरा। प्रेम-भरा अेक चुंबन अुसके गालपर लिया और अुसकी पीठपर हाथ फेरते हुअे कहा, 'मेरी पगली बहन! अिसमें घबड़ानेकी क्या बात है? आज ही तो तेरा जन्म सफल होनेवाला है। घबरा क्यों रही है?'

पद्मावतीका क्षोभ कुछ कम हुआ। फिर भी भयविकम्पित हिरनी-सी अुसकी आंखें तथा अुछलती हुअी अुसकी छाती अुसके मुग्धा होनेकी साक्षी दे रहे थे। वह अपने वस्त्रोंको ठीक करके अपने केशोंको संभाल रही थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवन्तिका अेक हाथमें थाल अुठाकर दूसरे हाथसे अब अुसे शयन-गृहके द्वार तक खींच ले गअी। द्वारपर खड़ी होकर अुसके सिरपर हाथ रखा। 'सुखी हो' कहकर थाल अुसके हाथमें रख दिया।

थाल लेते समय पद्मावती जरा हिचकिचाअी। अन्दर झूला स्थिर हो गया और द्वारकी ओर आते हुअे पैरोंकी आवाज सुनाअी देने लगी।

अब अवन्तिका घबराने लगी। नववधूका नूपुर झंकार राजाने निश्चय ही सुन लिया था। फिर आनेमें विलंब होनेके कारण अधीरता अथवा कुतूहलसे वे स्वयं द्वारकी ओर आ रहे थे। वे द्वार खोलकर यदि अुसे देख लेंगे तो क्या होगा? आगे या पीछे अुसे प्रकट होकर अपना परिचय तो देना ही होगा। परन्तु अभी वह पहचान ली जायगी तो अुसका कैसा बुरा परिणाम होगा? राजा अुसे पहचानकर न जाने क्या क्या अुत्पात खड़े करेंगे? अिससे पद्मावतीकी जीवन-नौका ही शायद न जाने कहां भटक जाय?

अेक निमिषमें ही अुसे अैसे कअी विचार हो आये। अुसने अपना दुपट्टा आगे खींचकर माथा ढंक लिया। पद्मावतीको बलपूर्वक द्वारके अन्दर धकेलकर द्वार बंद कर दिये और वह निकट ही में अपने निवास कक्षकी ओर दौड़ गअी।

द्वारकी ओर आते हुअे राजाकी दृष्टि अधखुले द्वारमेंसे अुसपर पड़ी। अुसका मुख तो वे देख न सके, शरीरके अेक भागपर ही अुनकी दृष्टि पड़ी। फिर भी अुसके अंग विन्यासमें अुन्हें कुछ परिचितताका भास हुआ।

'यह कौन थी? देवी?' अवन्तिकाके अेकाअेक दिये गये धक्केसे पद्मावतीके पैर लड़खड़ा गये। अुसे राजाने संभाल लिया और अुसके हाथोंसे थाल लेते हुअे पूछा, 'मुझे कोअी परिचिता-सी प्रतीत होती है।'

नीची नजरोंसे तथा मन्द कंपित स्वरमें पद्मावतीने अुत्तर दिया 'मेरी धर्मकी बहन है। मेरी सखी है, बंगदेशकी ब्राह्मण बाला।'

वत्सराजने भृकुटि कुंठित करते हुअे सिर हिलाया। पद्मावतीको झूलेकी ओर ले जाते हुअे अुसने कहा, 'अुसकी छटा तथा चाल मुझे किसीका स्मरण दिला रही है।'

परन्तु झूलेके पास पहुंचते ही वार्तालाप पूरा हुआ और वे अेक दूसरेका निकट परिचय प्राप्त करनेमें तल्लीन हो गये।

अवन्तिका अपने कक्षमें दौड़ती हुअी आअी और धड़कते हुअे हृदयसे शय्यामें जा पड़ी। अपनी योजना सफल हुअी अिसका आनन्द तो अुसका कहांका कहां अुड़ गया था। हृदयमें मानो आग जल रही हो, अपने ही हाथोंसे वह अुसे जोरसे दबा रही थी। अदम्य अुत्तेजनाके कारण अुसका रोम-रोम जल रहा था। अुसकी आँखें प्रचण्ड अग्नि-सी चमक रही थीं। अुसके दांत नीचेके होठको कुचल रहे थे।

तुरन्त ही अुसने करवट बदली। तकियेको अपनी बाहोंमें भरकर पीस डाला, फिर अुसीमें अपना मुंह छिपाकर, मुंहमें कपड़ा दबाये हिचकियां भर-भरकर रोने लगी।

अिस प्रकार करवटें बदल-बदलकर अुसने सारी रात बिता दी। यदि वह आठ-दस दिन अपनेको संभाल सके और पद्मावतीको पतिके हृदयमें स्थान प्राप्त कर लेनेका समय दे तो फिर प्रकट होनेमें कोअी आपत्ति नहीं। परन्तु पद्मावतीका अुसपर जो अितना अुत्कट प्रेम है, वही अुसके गुप्त रहनेमें सबसे बड़ी बाधा है। सुबह होते होते आवेग कम होनेपर अुसे नींद आ गयी।

× × ×

राजा अपने शयन-कक्षमें रोग शय्यापर लेटा हुआ है। कल शिकारसे लौटनेपर अुसे तीव्र ज्वर हो आया है और आज दोपहरसे तो ज्वर बहुत ही तीव्र हो गया है।

रानी स्वयं परिचर्या कर रही है। वैद्योंकी सूचनानुसार अुपाय किअे जा रहे हैं। राजा बेहोशीमें है।

अैसे समयमें अवन्तिका कैसे दूर रह सकती थी? वह भी राजाकी दृष्टिसे दूर रहकर पलंगकी अेक ओर नीचे बैठी है और पद्मावतीको आवश्यकतानुसार चीज-वस्तुअें देती रहती है।

कुछ देरके बाद राजाको कुछ शान्ति मिली। पद्मावती सारी रात जागती रही है। अुसने कहा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'बहन तुम तो बैठी हो न? मैं जरा लेट जाती हूं। महाराज जागें या कुछ मांगें तो मुझे जगा देना।' यह कहकर वह निकटमें पड़े पलंगपर लेट गयी।

अवन्तिका अुठकर राजाके सिरहाने जा बैठी। अुसके सरपर रखी हुअी आंवलेकी वस्त्र-पट्टी अुसने ठीक की। राजा बेहोशीमें ही बोल अुठा।' 'वासु, वासु।'

वासवादत्ताका हृदय फट रहा है। अब भी राजा अुसे भूला नहीं। पद्मावतीने ठीक ही तो कहा था कि जागृतावस्थामें तो राजा अुसके साथ बड़ा प्रेमका व्यवहार करते हैं परन्तु नींदमें वह पहली रानीको ही बार-बार याद करते रहे हैं। नये विवाहके बाद भी अुसका स्वास्थ्य जैसा चाहिअे वैसा बन नहीं पाया था।

पतिका मुरझाया हुआ मुख देखकर अुसके हृदयमें व्यथा होने लगी। अैसे प्रेमी पतिके साथ अुसने किस लिये अैसा प्रपंच किया। केवल अेक सिद्धके वचनके कारण? किसलिये अुसने अुसके स्नेहार्द्र हृदयको दुःखमें जलनेके लिये छोड़ दिया। अुसके मुखसे अेक अुष्ण निश्वास निकल पड़ा।

राजा और भी अधिक अस्वस्थ हो रहा था। वह अपने सिरको अिधर-अुधर रगड़ रहा था। अवन्तिकाने अुसके सिरपर हाथ फेरा। मानो अमृतका स्पर्श हुआ हो, राजा शान्त हो गया। अुसने अपना हाथ हटा लिया। और बेहोशीमें ही राजा अुसके हाथको ढूंढ़नेके लिये अपना हाथ माथेपर घुमाने लगा। वह सिर हिला रहा था। वासवदत्ताने पुनः अपना हाथ अुसके माथेपर रख दिया।

मूंदे हुअे नयनोंसे ही राजाने अुस हाथको पकड़ लिया और अुसे शान्तिकी निद्रा आ गअी।

दो घड़ीबाद पद्मावती जाग्रत हुअी। अवन्तिका अपना हाथ छुड़ाकर वहांसे हट गअी। रानी अुसके स्थानपर जा बैठी।

निद्रामें ही राजा बोलने लगा। 'वासु! सत्य ही तुम आ गयीं।" कहकर अुसने नयन खोले और पद्मावतीको देखकर पूछा, 'रानी, वासु कहां है?'

पद्मावतीकी आंखोंमें आंसू बहने लगे। वह अुदारहृदया है अिसलिये अुसे वासवदत्तापर राजाका प्रेम देखकर दुःख नहीं होता। अैसे प्रेमी पतिके प्रति अुसके हृदयमें करुणा अुमड़ आअी। "नाथ, बड़ी बहन यहां कैसे आयेंगी? परन्तु वे भी वहां स्वर्गमें बैठी आपकी ही चिन्ता करती होंगी।'

'नहीं, पद्मा! नहीं।' राजा चिल्ला अुठा। अभी हाल ही में तो अुसने मेरे माथेपर अपना हाथ रखा था। मैं क्या अुसका हाथ नहीं पहचानता?'

वह फिर बकवास करने लगा, "वासु, वासु! फिर चली गयी। तो फिर मैं यहां किसलिअे रहूंगा? अरे रे!' अुसने अेक दीर्घ निश्वास छोड़ा।

पद्मावतीकी आंखोंसे अश्रुधारा बह निकली। वह पतिकी छातीपर अपना सर रख देती है 'नाथ, नाथ! वासु बहनके अभावको पूरा करनेके लिये मैं भरसक प्रयत्न करूंगी। नाथ! मेरी ओर देखिअे। मैं मरकर भी यदि वासु बहनको जिला सकती तो अिसी समय अपने प्राण दे देती। आप जो कहें मैं करनेको तैयार हूं। परन्तु जरा मेरी ओर भी तो देखिये।"

वहां बैठी हुअी सब दासियां हिचकियाँ भर रही थीं। अवन्तिकाने पलंगके पायेको जोरसे पकड लिया। अुसका सारा शरीर थर-थर कांप रहा था।

महा प्रयत्नसे वत्सराज अपना होश संभाल सके। अुन्होंने आंखें खोलीं। पद्माके सिरपर हाथ फेरा और अुसकी अज्ञात सौतके प्रति अुसके हृदयके द्वेषहीन भावोंको देखकर अुसके प्रति अुनके हृदयमें ममता जागी। 'पद्मा, पद्मा! मुझे क्षमा कर। वासुके प्रति मेरा अितना प्रेम होनेपर भी मैंने तुम्हारा पाणिग्रहण किया और तुम्हारा द्रोह किया। फिर भी तुम्हें सुखी करनेके लिये मैंने भरसक सब प्रयत्न किअे हैं। परन्तु विवाहकी रात्रिमें तुम्हारी सखीको देखकर वासुका स्मरण हो आया। आज भी अुसकी विस्मृति नहीं हो सकी है।'

अितना बोलते-बोलते वह थक गया और हांफने लगा। अुसने अपनी आंखें मूंद लीं। पद्माने अुसका सिर अपनी गोदमें ले लिया और अवन्तिकासे चन्दन देनेके लिअे कहा।

लड़खड़ाती हुअी अवन्तिका खड़ी हो गयी और पद्मावतीको चन्दन पात्र दिया। अुसकी दृष्टि राजाके मुखपर पड़ी और अुसे चक्कर आने लगे। वह बैठ गअी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुसका हाथ राजाके हाथपर जा पड़ा। बेहोश राजाने अुसका हाथ जोरसे पकड़ लिया। "हां", वह बेहोशीमें ही बोलने लगा, "वासु का ही हाथ है, अब छोड़ूंगा नहीं।'

अवन्तिकाने अपना हाथ छुड़ा लिया। राजा अुन्मादमें ही अुठ बैठा। "चली गयी ?—" अेक चीख-सी अुसके मुखसे निकल पड़ी और फटी आंखोंसे वह देखने लगा।

पद्मावती बलपूर्वक राजाको अपनी गोदमें सुलानेका प्रयत्न करती है और करुणापूर्ण नेत्रोंसे अवन्तिका-की ओर देखती है।

अुसकी आंखोंमें विषाद और अनाथता देखकर अवन्तिकाके मस्तिष्कके मानो टुकड़े-टुकड़े हो गये। गुप्त रहनेका अुसका निश्चय विचलित हो अुठा।

'वासु, ओ पद्मा, वासु!" पद्मावतीकी गोदमें गिरकर बेहोश राजा दुःखकी पुकार करने लगे और अवन्तिकाके अंग-अंगमें बिजलीका-सा धक्का लगा। राजाके होठ काले पड़ने लगे और अुसके अंग शिथिल होते जा रहे थे।

अेक ही छलांगमें अवन्तिका पलंगके पास पहुंच गयी और राजाके हाथ हाथोंमें ले अुन्हें पुकारा, "प्राणेश्वर!"

पद्मावती स्तब्ध होकर यह देखती है। हिचकियां भरती हुअी दासियां आश्चर्यसे मूक बन जाती हैं। वत्स-राज यह कहते सुनाअी देते हैं, 'वासु!' सूखे होठोंपर जीभ फिराते हुअे अुन्होंने मूंदे नयनोंसेही कहा—'तुम आअी हो! सच ही तुम आअी हो।'

लज्जा, मर्यादा, शिष्टता, सब बन्धन टूट जाते हैं। पूर्णिमाकी चन्द्रिकान्विता रात्रिमें जब समुद्र करुण आनन्दसे नदीको पुकारता है तब नदी कैसे भी अंतराय क्यों न हो सबको क्या तोड़ नहीं देती ?

"हां, नाथ, सत्य ही मैं यहां हूँ।" अुसने अेकाअेक झुककर राजाके होठोंका दीर्घ चुम्बन किया और कहा, 'अब तो विश्वास हुआ न?'

वत्सराज हाथ बढ़ाते हैं, अवन्तिका अुन हाथोंमें समा जाती है। अेक पलके लिअे पतिको दृढ़ आलिंगन देती है। 'नाथ! अब तो यमराज भी हमें अलग न कर सकेंगे।"

अेक शान्तिका निश्वास छोड़कर वत्सराज थोड़ी देर यों ही पड़े रहते हैं। फिर अुन्होंने आंखें खोल दीं। अब ये आंखें चकर-चकर घूमती नहीं। फिर भी अुनमें कुछ दीवानेपनकी-सी घबराहट दिखाअी देती है। 'वासु!' अवन्तिकाका हाथ धीरेसे पकड़कर राजा अपने होठोंसे लगाता है और कहता है 'तुम आअी तो सही, परन्तु अब भागोगी नहीं न?'

अवन्तिका पद्माकी ओर देखती है। पद्मावती मानती है कि अुसके अपने सुहागकी रक्षाके लिये अवन्तिकाने यह सब किया है। वह करुणा-पूर्ण मुखसे अवन्तिकाकी ओर देखती है। अुसके मूक नयन अुसे यह अभिनय करते रहनेकी प्रार्थना करते हैं।

अवन्तिका राजाकी ओर घूमकर कंपित होठोंसे कहती है, "नहीं जाअूंगी, बस? अब आप सो जाअें। फिर बातें करेंगे।" वह राजाके माथेपर तथा नयनोंपर हाथ फेरती है।

'नहीं, नहीं, मुझे विश्वास नहीं।' राजा अब भी नींदकी बेहोशीमें बोल रहा था। दो बार आकर चली गयी। रोज रात्रिमें स्वप्नोंमें आकर चली जाती है। नहीं, नहीं।' वह सिर धुनता है और आवाज देता है, पद्मा, पद्मा!

पद्माका हृदय अुछल रहा है। आज ही राजाने अुसे अैसे प्यार भरे नामसे पुकारा था। वह शीघ्र ही अुसके पास पहुंच जाती है। पलंगकी पाटीपर शरीर झुकाकर राजाकी आंखोंसे अपनी आंखें मिलाती है। 'नाथ' यह अेक ही शब्द वह बोल सकी।

राजा अेक हाथसे अवन्तिकाका हाथ पकड़ते हैं। पद्माके मुख तथा माथेपर दूसरा हाथ फेरते हैं। 'पद्मु, देख यह तेरी बड़ी बहन। यमलोकसे मुझे बचानेके लिये लौट आयी है। अुसे जाने मत देना हां! तुम अुसे जाने न दोगी न?' यह कहकर वे अवन्तिकाका हाथ पद्माकी ओर खींच ले जाते हैं।

पद्मा अुस हाथको अपने हाथमें लेती है और कहती है 'मैं नहीं जाने दूंगी, नाथ! आवश्यकता होगी तो मैं जाअूंगी, परन्तु अिन्हें जाने नहीं दूंगी!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अब निश्चिन्त हुआ।' राजा बुदबुदाया और दोनोंकी गोदमें अेक अेक हाथ रखकर शान्त लेटा रहा।

वासवदत्ताने अपना दूसरा हाथ अुसके माथेपर फिराया, 'अब तो शान्ति हुअी। चलो अब सो जाओ!' छोटे बच्चोंको मानो समझा रही हो, आज्ञा दे रही हो, अुसने राजाको सो जानेके लिअे कहा। राजाने सन्तोषकी सांस छोड़ी और अुसे निद्रा आ गअी। धीरे धीरे वह गाढ़ निद्रामें सो गया।

\+ \+ \+

दो घड़ीके बाद वैद्यराज आअे। अुन्होंने राजाकी नाड़ी देखी। 'अरे! अेकदम अितने अच्छे हो गये!" आश्चर्यसे अुनके मुखसे यह शब्द निकले। 'रानीजी, कल तो महाराज चलने फिरने लगेंगे। अब चिन्ताका कोअी कारण नहीं। चमत्कार हुआ दिखाअी देता है।' आश्चर्यसे सिर डुलाते-डुलाते अुन्होंने कहा। पद्माने कृतज्ञतापूर्ण दृष्टिसे अवन्तिकाकी ओर देखा। अवन्तिकाने अपनी दृष्टि नीचे झुका ली।

औषध तथा कुछ सूचनाअें देकर वैद्य चले गये। राजा तो निःसीम सन्तोषके साथ गहरी नींद ले रहे थे।

राजाके सिरहाने जमीनपर बैठी-बैठी अवन्तिका नीची नजरोंसे पैरकी अंगुलियोंसे जमीनपर रेखाअें खींच रही थी।

पद्माने निकट जाकर अुसके कन्धोंपर हाथ रखा और कहा 'अवन्तीबहन! तुम्हारा ऋण किस जन्ममें चुका सकूंगी। तुमने तो मेरे सुहागकी रक्षा की है।'

अवन्तिकाने अुसकी ओर देखा। अुसके नयनोंमें विषाद भरा हुआ था। अुसके मनमें अुग्र मन्थन चल रहा था। बात करने योग्य अुसकी मनःस्थिति न थी। 'बहन बातें फिर करेंगे।' नाकपर अंगुली रखकर अुसने धीरेसे कहा। महाराज बिल्कुल स्वस्थ न हो जायँ तब तक मौन रहना ही अच्छा होगा।

सन्ध्याके बाद राजाने नयन खोले। 'पद्मु! वासु! दोनों हैं न?' अुसने अर्ध जाग्रतिमें प्रश्न किया।

अवन्तिका शीघ्र पलंगपर बैठ गअी। राजाके सरपर हाथ रखा। पद्माका हाथ तो राजाके हाथमें था ही।

'हम दोनों हैं।' अवन्तिकाने अुत्तर दिया। 'अब तो आप अच्छे हो गअे हैं। परन्तु वैद्यने आपको बोलनेकी मनाअी की है। आजकी रात आप आराम ही करें।'

'आराम!' निस्तेज हँसी हँसते हुअे राजाने कहा। 'आज आराम कैसा? अब तो तुम लौट आयी हो। पद्मु, पद्मु! नगरमें घोषणा करवाओ कि सब लोग अुत्सव मनाअें।'

'आज नहीं। महाराज!' अवन्तिकाने दृढ़ता पूर्वक कहा। 'अभी तो आपको मेरी ही बात माननी होगी। कलतक प्रथम जैसे स्वस्थ बन जाते हैं न? दवा और दूध लेकर आप सो जाअें।' 'पद्मावती' मानो वह बड़ी रानी ही हो, अुसने बड़ी स्वाभाविकताके साथ पद्मावतीसे कहा 'महाराजको दवा दो।'

वत्सराजने कुहनीके बलपर कुछ अूंचे अुठकर कहा, 'वासु, तुम पहले थी वैसी ही आज भी हो। मुझे आज्ञा देती है, नहीं! परन्तु यह सादे वस्त्र तो अब बदल दो।'

'सब कल होगा।' अुसने संक्षिप्त अुत्तर दिया। और पद्माने अुन्हें वैद्यकी दी हुअी मात्रा दी।

'तेरी गोदमें सर रखकर ही दवा लूंगा।' राजाने छोटे बालक-सा हठ किया।

अवन्तिकाके मुखपर चित्र-विचित्र भाव दिखाअी देने लगे। अुसकी भवें कुछ सुकड़ गअीं। अुसने पद्माके मुखकी ओर देखा। पद्माने अुसे राजाकी अिच्छा तृप्त करनेका अिशारा किया।

किसी प्रकार अपने मनको दबाकर वह आगे आअी और राजाका सिर अपनी गोदमें ले लिया। अुसने कहा 'पद्मावती, दवा खिलाओ।'

पद्मावतीने दवा खिलाअी और फिर वह दूध ले आअी। राजाने अवन्तिकासे कहा 'दूध तुम पिलाओ।'

अवन्तिकाके होठपर मुस्कुराहट थी और कम्प भी था। 'अच्छा, नअी रानीको आप अधिक कष्ट देना नहीं चाहते!' व्यंगमें अुसने कहा। 'परन्तु मैं अुसे कब छोड़नेवाली हूं। पद्मा! अिधर आ और राजाजीको सहारा दो।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवन्तिकाके प्रति राजाके व्यवहारको देखते हुअे पद्माके हृदयमें यदि कुछ अीर्ष्याका भाव पैदा भी हुआ होता तो वह अुसके अिन शब्दोंसे नष्ट हो जाता। लज्जा-युक्त स्मित तथा कृतज्ञता भरे भावपूर्ण हृदयसे पद्माने अवन्तिकाकी ओर देखा और पलंगके सिरहानेपर जा बैठी। राजाने अुसके दाहिने कन्धेका सहारा लिया और बांअे हाथपर शरीरको टिकाकर दूध पिया, मुंह पोंछा और फिर दोनोंके सहारे शय्यामें लेट गअे।

'अब सो जाअिअे।' अवन्तिकाने कहा।

'मुझे नींद नहीं आ रही है। वासु! हम लोग अब बातें करें।'

'नहीं, अभी तो जो मैं कहूंगी वही करना होगा। दुर्बलताके कारण स्वस्थ होनेमें बहुत दिन लग जा सकते हैं। परन्तु कल ही तो हमें बाहर घूमने जाना है।'

'अच्छा', अुत्साह पूर्वक राजाने कहा। 'कल तुम्हारे पुनर्जन्मका अुत्सव मनाअेंगे। जैसा कि वसन्तो-त्सवके समय हम करते आअे हैं कल सारा दिन विहार करेंगे। अुद्यानमें फाग खेलेंगे। कल रंगरागमें ही सारा दिन बिताअेंगे। मैं और तुम . . . . . .

'और पदु नहीं?' किंचित् कठोरतापूर्वक अवन्तिकाने कहा 'अुसके लिये और अुसीके कारण तो मैं यहां आअी हूं, महाराज। जिस समय अुसका दिल जरा भी दुखा, अुसी क्षणमें यहांसे चली जाअूंगी। अिसलिअे सदा सावधान रहिअे।'

'नहीं, नहीं तुम जाना नहीं,' घबराकर राजाने कहा। 'और पदु भी मुझे प्रिय है, हाँ।' पद्माका हाथ अपने हाथमें लेकर अुसने कहा 'अुसके हृदयकी सरलता तथा अुदारताको क्या मैं नहीं समझता? परन्तु करूं क्या बहुत दिनोंके बाद तुम मिली हो अिसलिये तुम्हारे साथ अधिक बातें कर रहा हूँ। पदु! कुछ मनमें न लाना हाँ!' अुसने पद्माका हाथ अपने नेत्रोंपर दबाया।

'आप बहुत बातें कर रहे हैं। चलिअे अब शान्तिसे सो जाअिअे!' अवन्तिकाने कहा। राजाने, दोनोंकी ओर देखा। अवन्तिका समझ गयी। वह कुछ दूर हट गअी और बोली 'नहीं, अब पदुकी बारी है। पद्मावती पतिको सुला दो। मैं अिनके पैरोंके पास ही लेट जाती हूं। मेरा भी तो शरीर है।' यह कहकर वह पैतानेकी ओर खिसक गअी। खिसकते समय अुसने सूचक दृष्टिसे पद्मावतीकी ओर देखा। अुसने अपने अधरको कुछ आगे बढ़ाया और अपनी पीठ फेर ली।

पद्मा समझ गयी। राजाका मन अपनी ओर दृढ़ कर लेनेकी यह सूचना थी। लज्जासे वह लाल हो हो गअी। दासियाँ तो सब पहले से ही बाहर बैठी थीं। अवन्तिकाकी पीठ अुनकी ओर हुअी कि अुसने नीचे झुककर अेक चुंबन लिया और राजासे कहा, 'अब सो जाअिअे, नाथ!'

राजाने अुसकी गोदमें अपना हाथ रखा और कहा, 'हां, अब सो जाता हूं। परन्तु वासुको देखती रहना।'

\+ \+ \+

मध्यरात्रि बीतने तक दोनों सखियाँ चुपचाप बैठी रहीं। राजाका स्वास्थ्य अब अच्छा था अिसलिअे अेक परिचारकको बैठाकर दोनों फिर सो गअी।

पद्मावती समझती थी कि अवन्तिकाकी देहयष्टि तथा रूप वासवदत्तासे बहुत मिलते-जुलते होंगे, अिसीलिअे रोग-ग्रस्त राजाको भ्रांति हो रही है और अुसके प्राणोंकी रक्षा करनेके लिये अवन्तिका वासवदत्ताका स्वांग कर रही है। अपने सोहागकी अिस प्रकार रक्षा करनेके लिअे वह अुसके प्रति बड़ी कृतज्ञता अनुभव कर रही थी। पर-पुरुषको पति रूपमें स्वीकारकर अुसके प्रति पत्नीका बर्ताव बरतना अेक ब्राह्मण बालाके लिअे बहुत बड़ी आत्मबलि थी। परन्तु राजा जब सर्वथा स्वस्थ हो जाअेंगे और अवन्तिकाको पहचानने लगेंगे तब क्या होगा? अिसकी अब अुसे चिन्ता होने लगी। परन्तु जिस कुशलतासे अवन्तिकाने अिस प्रसंगको निभाया अुसे देखते हुअे अुस समय भी राजाको होनेवाले आघातसे वह अुसकी रक्षा कर सकेगी। अुसने अपने मनको अिस प्रकार समझा लिया। दिन भर विचारोंके संघर्षसे अुसका मस्तिष्क थका हुआ था। अुसे नींद आ गयी। अवन्तिकाके मस्तिष्कमें अलग ही विचार चल रहे थे। अपनी मूल योजनाके अनुसार पद्मावतीका संसार अच्छी तरह चलने लगे अुसके बाद ही अुसे अपनेको प्रकाशमें लाना चाहिये। परन्तु अभी तो राजाके मनपर मेरा अपना ही अधिकार बना हुआ है। कल राजा यदि अुसका स्वीकार कर लेगा तो फिर पद्मावतीका संसार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नष्ट हो जायेगा। संजोग तो सब अैसे ही दिखाअी देते हैं। अैसे समयमें मुझे क्या करना चाहिअे?

रातको देर तक वह योजनाअें बनाती बिगाड़ती रही। अन्तमें अुसने अेक निश्चय कर लिया और आंखें मूंद लीं।

और प्रातःकालमें मुर्गेकी आवाज सुननेसे पहले ही वह अुठ बैठी। पद्मावती शान्तिसे सो रही थी। वह अुसके निर्दोष तथा सुन्दर मुखको देखती रही। 'अभिलाषा भरे तेरे हृदयको मैं हताश न करूंगी।' अुसने कहा, 'परमात्मा मुझे बल दे।' वह वत्सराजके पलंगके पास गअी।

राजा बिल्कुल स्वस्थ मनुष्यकी तरह नींद ले रहे थे। अुनके मुखपर सन्तोषकी गहरी छाया थी।

कुछ क्षणोंके लिये वह पतिके मुखको देखती रही। अेक बार वह अुसे छोड़कर चली गअी थी। आज फिर वह अुसे छोड़कर जा रही है। अुसके हृदयमें सहस्र बिच्छुओंके डंककी-सी वेदना होने लगी।

अुसने चारोंओर नजर घुमाअी। परिचारक निद्रावश था, अुसकी नाक बोल रही थी। कमरेमें अेकांत था। चमेलीके तेलका दीपक मन्द-मन्द प्रकाश दे रहा था। राजा कोअी रमणीय स्वप्न देख रहा था अिसलिये अुसके होठ मुस्कुरा रहे थे।

अेक वर्षसे दबाअी हुअी अुसकी प्रीति अुसके रोम-रोमसे प्रकट होने लगी। सौन्दर्य तथा स्नेहकी मूर्ति, मानो स्वयम् भगवान अनंगका अवतार हो, अैसे अिस पतिका वह कैसे त्याग कर सकती है? हृदयके अन्दरसे निश्वास आया। आँखोंमें अुन्माद दिखाअी दिया। अुसका शरीर पतिकी ओर ढुलकने लगा। अुसका मुख राजाके मुखका स्पर्श कर ही रहा था कि राजा स्वप्नमें बोल अुठा 'वासु!'

विचार-तरंगोंका वेग असह्य था। वह झुक गअी। राजाके पलंगपर अुसने राजाका चुंबन लेनेके लिअे मुखको आगे बढ़ाया और स्वप्नग्रस्त राजा बोल अुठा 'वासु! मैं तुम्हारा ही हूं, हां।'

अिसी विकट क्षणमें अुसे पद्माका स्मरण हो आया। मनमें अुठते विचारोंकी अुत्तेजना शान्त हो गअी। 'अरे! मैं क्या करने जा रही थी। मेरे सब शुभ निश्चयोंका क्या हुआ?' वह अपने मनको कड़ा करके वहांसे हट गअी। परन्तु अुसी समय दो अुष्ण आँसू अुसकी आंखोंसे ढुलक पड़े और राजाके मुखपर जा गिरे।

राजा अर्ध-जाग्रत अवस्थामें आ गअे। यन्त्रवत् अुन्होंने हाथ बढ़ाया। अवन्तिका वहांसे हट रही थी अुसके गलेमें वह जा पड़ा। अब वह पूर्ण जाग्रत हो गया था। अुसने अुसे पहचान लिया और बलपूर्वक खींचकर अुसका दृढ़ आलिंगन किया।

साल भरके बाद सुखके समुद्रमें डूबकर वह त्रिकाल को भी अेक प्रहर तक भूल गअी। परन्तु अितनेमें ही मुर्गेकी आवाज सुनाअी दी। वासवदत्ता होशमें आअी।

"राजन्! छोड़िअे मुझे।" अभी भी अतृप्त, चुंबनोंकी झड़ी बरसानेवाले राजासे अुसने कहा, 'अभी कल तो आप शय्यामें थे।'

राजाके मुखपर परम आह्लादकी ज्योति चमक रही थी, अधीरताके कारण अुसके अंग-अंग कांप रहे थे और परम असन्तोषसे अुसका हृदय अुछल रहा था। परन्तु वह अेक विशेष स्वरमें दी गअी वासवदत्ताकी आज्ञा माननेका आदी था। वह अितना ही बोल सका, 'जैसी तुम्हारी अिच्छा।'

पतिके मुखपर अपना कोमल हाथ फेरकर अुसने अुसके आवेगको शान्त किया। 'अब सो जाअिअे, आज आपको विलम्बसे अुठना होगा।'

अुषःकालके शीतल समीरका अेक झोंका आया। अुसने पतिको अेक करवट सुलाकर अूपरसे लिहाफ ओढ़ा दिया और सो जानेके लिअे कहा।

आज्ञापालक बालककी तरह राजा सो गअे। कुछ देरतक वह वहां बैठी रही और राजाके सरपर हाथ फिराती रही। राजा नींद ले रहा है अिसका निश्चय होते ही वह खड़ी हो गअी। अुसने अुसका चरण स्पर्श करके हाथ अपने माथेसे लगाया। वह अपने मनमें कहने लगी, यह हमारी आखिरी मुलाकात है, नाथ! मेरा प्रथम छल तो आप क्षमा कर देते। परन्तु अिस बारका मेरा यह द्रोह आप कभी माफ न कर सकेंगे। परन्तु मैं करूं भी तो क्या करूं? पद्माका द्रोह कैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर सकती हूं ? अुसकी आशाओंको नष्ट करके मैं किस जन्ममें अुस पापसे मुक्ति पा सकूंगी ? अिसलिअे कर्तव्य पालन द्वारा, आपके नामका जप करते हुअे यदि मैं यह देह छोड़ दूंगी तो क्या वह अच्छा न होगा ? फिर तो अनेक जन्मोंतक कोअी भी हमें अलग न कर सकेगा।

वह पैतानेसे अुठकर जाना चाहती थी। परन्तु पैरोंको मानो लकवा मार गया हो, वे सुन्न पड़ गअे थे। शरीरकी तमाम नसें टूट रही थीं। परन्तु वह अवन्तिका के राज्यकुलकी कन्या थी। अति प्रयत्नपूर्वक वह अपने अन्तर्द्वन्द्वपर अधिकार प्राप्त कर सकी। मैंने अपने ही हाथोंसे अपने संसारको दावाग्निके अर्पण किया है। अुसका परिताप भी तो अब मुझीको सहन करना होगा। अिसमें मैं पद्माको कैसे जला सकती हूं। और वह जड़ बने हुअे पैरोंको खींचती हुअी वहांसे चली गअी।

द्वारतक पहुंचकर वह फिर रुक गअी। अुसने पतिकी ओर देखा। दीपकका मन्द प्रकाश अुसके मुखको प्रकाशित कर रहा था। वह प्यासी आंखोंसे पतिके मुखकी ओर आधी घड़ी तक देखती रही। अुसके शरीरमें भयानक दाह हो रहा था। समुद्र मंथनसे प्राप्त हलाहलको पान करनेपर शंकरको सम्भवतः अैसे ही दाहका अनुभव हुआ था।

पियु-प्यासे अपने नयनोंको वह फेर लेती है। चौखट लांघते ही अुसे चक्कर आने लगे। पांच क्षणोंतक वह द्वारको पकड़कर खड़ी रही। पैर काबूमें नहीं, घुटने मानो मुड़-मुड़ जाते थे। वह जमीनपर फिसलकर गिर पड़ी।

जोर-जोरसे हृदयपर वह मुष्ठि प्रहार करने लगी। स्वयं नष्ट किअे हुअे अपने भाग्यपर वह अपना माथा कूटने लगी। आँखोंसे दबे हुअे ज्वालामुखीके लावा रससी अश्रुधार वह निकली और सदासे अनेक यातनाअें सहनेवाली धराको यदा कदा ही आनेवाली रुलाअीकी हिचकीसी अेक हिचकी अुसके गलेमेंसे निकल पड़ी।

दूर-दूर बागमें मोरकी केका सुनाअी दी। अुसकी तन्द्रा दूर हो गअी। युगान्तरमें शेषनाग जिस प्रकारकी अेक भारी सांस छोड़ता है अुसी प्रकारका अेक निश्वास छोड़कर वह खड़ी हो गअी। जो भी करना है अुसके लिअे अब बहुत थोड़ा समय बाकी है।

समझ-बूझकर मृत्युकी ओर दौड़ जानेवाले वीरकी तरह अुसके अंग-अंगमें असाधारण स्फूर्ति पैदा हो गअी। शीघ्रतापूर्वक अपने कमरेमें पहुंचकर आधी घड़ीमें ही प्रवासके लिअे अुसने सब तैयारियां कर लीं और प्रवासीका वेष बनाकर पद्माके पास जा पहुंची।

पद्माका मुख देखते ही अुसका अन्तर-दाह कुछ शान्त हुआ। 'ठीक ही तो है। मेरे जानेसे यह तो' सुखी होगी। और वह जब यह सब समझने लगेगी, मेरा स्मरण तो अवश्य करती रहेगी। मेरा बलिदान-आत्म-त्याग व्यर्थ नहीं जाअेगा।

प्रतीत होता है पद्माको अगले दिनका स्वप्न दिखाअी दे रहा है। अुसका विषाद अेक क्षणमें बदलकर आश्चर्य तथा निश्चिन्तताके भाव बन जाते हैं। वह राहतकी अेक आह भरते हुअे स्वप्नमें प्रलाप करती हुअी सुनाअी देती है, अबु, बहन ! मा-जाअी सगी बहन भी जो तुमने किया कर न सकेगी।

स्वप्नमें की गअी अपनी प्रशंसा सुनकर अवन्तिकाका दुःख सम्पूर्ण शान्त हो गया। अिस बालाके प्रति अुसके हृदयमें प्रेम अुमड़ पड़ा। अुसके गालपर हाथ फेरते हुअे अुसने कहा 'पदु ! बहन ! अुठो।' आज ही अुसने अुसे पदु कहकर पुकारा था।

पद्मा घबड़ाकर अुठ बैठी। अर्ध-जाग्रत अवस्थामें वह दीवानी-सी अपनी आँखें मलने लगी। और जाग्रत होनेपर अवन्तिकाका प्रवास-वेष देखकर वह फटी हुअी आंखोंसे अुसे देखती है।

अवन्तिका अुसके पास बैठ गअी। अुसकी पीठपर हाथ फेरते हुअे अुसने कहा, 'बहन ! मुझे आज्ञा दो। अब मुझे यहां रहना नहीं चाहिअे।'

पद्मावतीने मूढ़की तरह थोड़ी देर अुसकी ओर देखा। अवन्तिकाके अैसे अकल्पित प्रस्तावसे अुसकी बुद्धि स्तम्भित हो गअी थी।

बड़े ही प्रेमसे अुसका गाल सहलाते हुअे अवन्तिकाने फिर कहा, 'पदु ! आज पहली और अन्तिम बार तुम्हें मैं 'तुम' से कह रही हूं। क्षमा करना। परन्तु मेरा तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह अधिकार है। मैं जा रही हूं। तुम मुझे कभी याद तो करोगी न?'

पद्मावती सम्पूर्ण सुधिमें आ गयी थी। 'तुम जाती हो? किसलिअे? कल ही तो तुमने मेरे सोहागकी रक्षा की है और आज मुझे छोड़कर जा रही हो?'

ममतापूर्वक पद्माका हाथ अपने हाथमें लेकर करुणार्द्र स्वरमें वासवदत्ताने कहा, 'तुम्हारे सोहागमें कोअी न्यूनता न रहे अिसलिअे तो जा रही हूँ। कल जो प्रसंग हुआ अुसके बाद यदि मैं यहां रहूंगी तो न मालूम क्या-क्या अुत्पात होंगे।

'परन्तु तुम्हारे जानेसे क्या ये अुत्पात न होंगे? महाराजा तो तुम्हें वासवदत्ता ही मानते हैं। अुन्होंने मुझे तुमपर नजर रखनेको कहा है। कल यदि वे तुम्हें नहीं देखेंगे तो न मालूम क्या कर बैठेंगे? मैं अुन्हें क्या अुत्तर दूंगी?'

'यह भी क्या मगधकी राजकुमारीको सिखाना होगा?' कृत्रिम हास्य करती हुअी अवन्तिका कह रही थी। 'अुनसे कहना कि वासवदत्ता स्वर्गसे अेक ही दिनकी छुट्टी लेकर आअी थी। अुसे देवदूत लेनेके लिअे आअे थे अिसलिअे अुसे जाना पड़ा। अब वह वहाँसे पूरी छुट्टी लेकर जरूर लौट आअेगी।'

पद्माका मस्तिष्क अब अच्छी तरह कार्य कर रहा था। 'अैसी बात भी कहीं चल सकती है? और महाराज अुसपर क्या कभी विश्वास करेंगे?' अुसका मन अुत्तेजित हो अुठा। 'बहन! मैं जानती हूँ कि तुमने जो किया वह कोअी नहीं कर सकता। तुम जाना चाहती हो तो मैं तुम्हें रोक भी नहीं सकती। पुनः कलकी तरह स्वांग करनेको मैं तुम्हें कभी नहीं कह सकती। परन्तु मैं तुम्हें अैसे कैसे जाने दूंगी? क्या तुम मुझे अैसी कृतघ्न मानती हो?'

अपने द्रवित हृदयको दृढ़ करके अवन्तिकाने कहा 'बहन। कलके प्रसंगपर ही तो विचार करो। मैं अब राजाकी दृष्टिको कैसे सहन कर सकूंगी? मैं अुनके आगे कैसे जा सकूंगी?'

"महाराजाने तो बेहोशीमें ही तुम्हें वासवदत्ता माना था न? जब होशमें आयेंगे वे अपनी भूल समझेंगे। और अुनकी जीवन-रक्षाके लिअे किया गया छल समझने योग्य वे अुदार तो हैं ही।" पद्मावतीने नम्रतापूर्वक अुत्तर दिया।

'वे अुदार हैं अिससे अिन्कार नहीं।' विचार कर अवन्तिका बोल रही थी। 'परन्तु कल अधिक छूट ली गअी थी। अिसलिअे अब अुनकी दृष्टि समक्ष मेरे जानेसे अनर्थ ही होगा।'

अेक क्षणके लिअे पद्मावतीके मुखके भाव कठोर हो गअे। 'तुम जो कह रही हो अुसका अर्थ मैं क्या समझूं? बहन! महाराजा विलासी तथा रसिक अवश्य हैं परन्तु वे परस्त्री लोलुप नहीं। जब वे यह मानेंगे कि तुम अुनके लिये परदारा हो तो फिर तुम्हें किसी भी प्रकारका भय नहीं रहेगा।'

अवन्तिकाने देखा कि अब पद्मावतीके समक्ष दिल खोलकर बात करनी होगी। अन्यथा अुसके मनमें रोष बना रहेगा। अेक क्षणके लिये वह रुक गयी फिर बोली, 'यही तो सबसे बड़ी आपत्ति है, बहन! मैं परदारा नहीं हूँ।'

स्थिर जमीनपर खड़े रहनेवालेके पैरोंके पास ही अचानक जमीनमें कोअी दरार पड़ जाय और जिस प्रकार वह भय विह्वल हो जाता है अुसी प्रकार पद्मा भी विह्वल हो अुठी। 'क्या कहा? तुम क्या कहती हो?' वह कराह अुठी।

करुणापूर्ण स्मित करते हुअे अवन्तिकाने कहा, 'मेरे शब्द क्या स्पष्ट नहीं? पद्मा, मेरी लाड़ली। मैं अवन्तिका नहीं, वासवदत्ता ही हूं।'

बिना मेघके आकाशमेंसे अेकाअेक बिजली गिरे और जैसे भाव मनमें पैदा होते हैं, पद्मावती भी वैसे ही भावोंका अनुभव कर रही थी। 'तुम, तुम क्या वासवदत्ता ही हो?

'कहती तो हूं,' अब भी अुसी करुण स्मितके साथ अुसने अुत्तर दिया। 'और अिसीलिअे मुझे अब यहांसे चले जाना चाहिये।'

'परन्तु यह सब क्या है, तुम मुझे समझाकर न कहोगी।' पद्मा अब भी पूरी तरह स्वस्थता प्राप्त नहीं कर सकी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अभी समय नहीं, बहन! परन्तु देखती नहीं हो कि महाराजको मुझपर कितना प्रेम है। बेहोशीमें भी मेरा हाथ पहचानते हैं और स्वप्नमें भी मेरी झंखना करते रहते हैं। बहन! मुझे जाने दो, नहीं तो तुम्हारा संसार बिगड़ जाअेगा।

पांच क्षण दोनों शान्त रहे। पद्माका दिमाग बड़ी तेजीसे विचार कर रहा था। 'और यह जाननेके बाद मैं तुम्हें जाने दूंगी? यह कभी हो सकता है?'

'—तुम मुझे क्या समझ रही हो?'

'पद्मे! अिस प्रकार अुत्तेजित क्यों हो रही हो? मेरे जानेमें तुम्हारा हित है। मुझे रोककर तुम स्वयम् अपने पैरोंपर ही कुठाराघात करोगी।'

\+ \+ \+

अुस समयके भारतके दो श्रेष्ठ राजकुलोंकी पुत्रियोंमें अिस प्रकार खानदानी स्पर्द्धा हो रही थी।

अश्रुभरे नयनोंसे पद्माने कहा, 'तुम न होती तो कल मेरा सोहाग अुजड़ जाता। तुम्हारे जानेपर मेरा हृदय शुष्क बन जाअेगा। तुम्हारे रहनेसे मेरा क्या बिगडनेवाला है?'

प्यारसे अुसे अपने पास खींचकर वासवदत्ताने कहा, 'तेरा क्या बिगड़ेगा? पगली! अभी बालक ही है। मैं रहूंगी तो तेरा सर्वस्व चला जाअेगा। यह पति तेरा न होगा। मेरा ही हो जाअेगा। तेरे सब मनोरथ मनमें ही रह जायेंगे। अिसलिअे मुझे जाने दो।'

अप्रतिम गौरव भरे पद्मावतीके मुखके भावोंमें परिवर्तन होने लगा। अुसके मुखपर स्वेच्छापूर्वक बलिदान देनेवालोंका तेज चमक अुठा। अुसने लपककर वासवदत्ताका हाथ पकड़ लिया।

'भले ही मेरे मनोरथ सब नष्ट हो जाअें। तुम्हीं से तो अुनके जीवनकी रक्षा हो सकी। तुम्हारे रहनेपर अुनके हृदयमें यदि मुझे स्थान नहीं मिलेगा तो अुनके चरणमें तो स्थान मिलेगा ही, बहन! बड़ी बहन! मैं तुम्हें कभी नहीं जाने दूंगी।'

अुसके प्रेम और कुल-भावनाको देखकर वासवदत्ताकी आंखोंमें पानी भर आया, अुसका गला घुटने लगा। फिर खंखारकर अुसने कहा 'तुम्हारे जैसी स्नेहभरी बहनके संसारमें मैं कैसे आग लगाअूंगी? अैसा करनेपर किस जन्ममें मैं पापमुक्त हो सकूंगी? बहन! मेरी बात मान लो। हठ न करो! मुझे जाने दो। मैं यहां रहकर यदि तुम्हारा संसार नष्ट करूंगी तो आर्यावर्त के संसार-केन्द्र अवन्तिकाके लिअे वह बड़ी लज्जाकी बात होगी। अिसलिअे समझ जाओ। मुझे जाने दो।' पद्मासे अपना हाथ छुड़ाकर वह जाने लगी।

'बड़ी बहन!' अति कम्पित स्वरमें पद्मावतीने कहा, 'तुम अवन्तिकी हो तो मैं भी मगधकी हूं। जिस प्रदेशमें विदेह जनकोंकी परम्परा चली थी। जहां सीता, अुर्मिला और माण्डवीने जन्म ग्रहण किया था वहां मैंने भी जन्म लिया है। हम भी अपना सर्वस्व मिटा सकते हैं। अिसलिअे मैं तुम्हें जाने नहीं दूंगी।'

वासवदत्ता भी अपने निश्चयमें दृढ़ थी। अैसे प्रेम और भावका अनुचित लाभ कैसे लिया जा सकता है? 'आज तो मैं जाअूंगी ही। तुम स्वस्थ होकर विचार करना। मैं तुम्हें कल फिर मिलूंगी।'

पद्माका नाजुक चिबुक जोरसे कानपर चिपक गया था अुसकी आंखोंमें भयंकर निश्चयका प्रकाश दिखाअी दिया। 'अितना कहनेपर भी तुम नहीं मानती! अच्छा। जाओ। परन्तु पहले यह देखकर जाओ कि मगधकी राजकन्यायें भी स्वार्पण तथा समर्पणके पाठ पढ़ी हैं।'

वासवदत्ता अुलझनमें पड़कर खड़ी रह गअी। पद्मा शीघ्रतापूर्वक दीपकके पास दौड़ गयी और हाथमें दीपक लेकर कहने लगी, 'तुम्हारे लिअे तड़पनेवाले पतिके पास रहनेमें मेरे दुःखकी शंका ही तो विघ्न रूप है। लो, मैं तुम्हारी शंकाका मूल ही नष्ट किअे देती हूं।' यह कहकर अुसने दीपकपर अपना वस्त्र धर दिया।

अुलझनमें पड़ी हुअी वासवदत्ता चौंक अुठी। दौड़कर पद्माके पास जा पहुंची और जलते हुअे वस्त्रको हाथोंसे मसल डाला और कहा: 'अैसा भी कहीं कोअी करता है?'

सद्भाग्यसे चीनी रेशमका वस्त्र था। अिसलिअे वह अधिक जला न था। दोनोंमेंसे अेककी भी कुछ हानि नहीं हुअी। परन्तु विचारोंके असह्य आवेगके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण पद्मावती बेहोश होकर गिर पड़ी थी। वासवदत्ता रोने लगी। पद्मा! ओ पद्मा! तुम्हें क्या हो गया?'

पीछे द्वारपरसे अेक संस्कार सम्पन्न स्वर सुनाअी दिया, 'क्यों, दोनों बहनोंने सुबह-सुबह यह क्या रार मचा रखी है।"

वासवदत्ता चौंककर पीछे देखने लगी। द्वारमें ही वत्सराज खड़े हैं। वासवदत्ताने साड़ीको माथेपर आगे खींच लिया और बातपर पडदा डालनेके लिये कहने लगी, 'कुछ था तो नहीं, पद्मावती जरा अस्वस्थ हो गअी है।'

वत्सराजने मर्मयुक्त हास्य किया और कहा, "'अब भी मेरे साथ छल करोगी? मैं कबसे यहां खड़ा हुआ तुम्हारी बातें सुन रहा था।'

पद्मावतीने आंख खोली और पूछा, 'बड़ी बहन, अब तो न जाओगी?'

वासवदत्ताके आँसू दरियाकी तरह बहने लगे। पद्माको हृदयसे लगाकर अुसने कहा 'तुम्हें छोड़कर मैं कहां जाअूंगी, मेरी लाड़ली? तुम्हारा दिल दुखाकर कैसे मेरा निस्तार होगा?'

अिन दोनों सपत्नियोंका अद्भुत स्नेह देखकर वत्सराजने अपनेको बड़ा भाग्यशाली माना। अुसकी आंखोंमें भी पानी भर आया। वह दोनोंके पास बैठ गया और दोनोंके हाथ अपने हाथमें ले लिया।

तीनोंमेंसे अेककी भी वाचा नहीं निकल रही थी।

भावोंके प्रबल आविर्भावमें ही यह हृदय-त्रिपुटी परम अैक्य, परम संवेदना तथा परम सुखका अनुभव करती रही।

गीत

—डा. राजकुमारी शिवपुरी

कल्पित सपनोंसे गूंथूंगी
अपने जीवनके मधुर तार
मुझको तो अमर बनाना है
अपरिचित तेरा अमिट प्यार!

हो गअे अेक ये देह-प्राण
हिम आतप मुझको तो समान
अुरने झेली ज्वाला महान्
मेरी सुधियाँ कितनी अजान!
धुँधले दिगंतके कोनेसे
सौरभ ले अुड़ता जब समीर
कितने पराग रूपी संदेस
सिहरनसे हो जाते अधीर!

मचले पड़ते अधखुले नयन
हो जातीं तब पलकें भारी
तप-तपकर अन्तर मेघोंका
करता गलनेकी तैयारी!
सांसोंके झीने डोरेमें
गूँथूँ आँसू, मुक्ता वारूँ
अिस प्राण-क्षितिज-गोधूलीमें
फिर अपनापन कैसे हारूँ!

सुधिपर सपनोंसे छा जाते
झरते नभसे करुणाके कण
फूलोंपर शबनमने वारे
आँखोंसे कितने ही सावन!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेकांकी नाटक : परिभाषा, तत्व अेवं विस्तार

--प्रो॰ रामचरण महेन्द्र

अेकांकीकी टेकनीक नवीन होनेपर भी पर्याप्त अुन्नत हो चुकी है। अनेक मूल तत्वोंके विषयमें मत स्थिर हो चुके हैं, कुछके विषयमें टेकनीक सम्बन्धी नवीन प्रयोग निरन्तर चल रहे हैं। अेकांकी टेकनीकके सम्बन्धमें अनेक वादविवाद अुठ चुके हैं, तथा अुनका समाधान भी किया जा चुका है। अिससे स्पष्ट है कि नाट्यकारोंका ध्यान अेकांकी टेकनीकके परिष्कारकी ओर है।

पूरा नाटक मानव-जीवनका सर्वांगीण चित्र है, जिसमें विस्तारसे जीवन-समस्याओंपर विचार और चरित्र-का विश्लेषण किया जाता है। कुछ आलोचकोंका विचार है कि अेकांकी बड़े नाटकका ही संक्षिप्त स्वरूप मात्र है। यह मत मान्य नहीं है, क्योंकि दोनोंमें आकार मात्रका ही अन्तर नहीं है, कुछ मौलिक भेद भी हैं। अेकांकी और बड़े नाटक दोनोंकी पृथक-पृथक् विशेषताअें हैं।

पांच अंकोंवाला पूर्ण नाटक मानव-जीवनकी क्रमबद्ध विवेचना है। सम्पूर्ण जीवनका चित्र होनेके कारण अुसमें परिधिका विस्तार होता है, अभिनयमें समय भी अधिक लगता है। अनेक महत्वपूर्ण स्थल, छोटे-छोटे दृश्य, भांति-भांतिकी कटु, मृदु परिस्थितियाँ, पात्रोंका जमघट और अनेक अंक मिलते हैं। लम्बे कथोपकथन, वर्णन बाहुल्य, कथा-विस्तार, चरित्र-विकास, संगीतका प्रयोग, स्वगत, अिकाअियों (Units) की अवहेलना, धीमा प्रवाह, बड़े नाटकको मानव-जीवन और समाजका विस्तृत चित्र बनाते हैं। अेकांकीमें प्रायः हम अिन तत्वोंको पसन्द नहीं करते।

अेकांकी मानव-जीवनके अेक पहलू, या अुद्दीप्त क्षणका चित्र है। अिसका निर्माण अेक मूल विचार (Idea) अेक विशेष समस्या (Problem), अेक सुनिश्चित सुकल्पित निर्दिष्ट लक्ष्य (Aim) अेक ही महत्वपूर्ण घटना और विशेष परिस्थितिपर ही हो सकता है। यह अुसी घटना या परिस्थितिमें विकसित होकर प्रारम्भ और विकसित होता है।[1] साथ ही अुसके द्वारा यह घटना फैलकर विशेष प्रभाव-साम्य प्राप्त करती है। सफल अेकांकीको अेक निर्दिष्ट प्रभाव दर्शकोंके मनपर छोड़ना चाहिअे।[2] यदि अेकांकी चरित्र-प्रधान है, तो अेकांकीकारको चाहिअे कि वह मुख्य पात्र, या पात्र-वर्गको अुभारकर अुसके चरित्रकी विशेषताअें भली भांति दिखा दे। अेकसे अधिक घटना या जीवनके अनेक पहलुओंपर वह अेक साथ प्रकाश नहीं डाल सकता। अेकांकीमें

---

1. "The One Act Play, by its nature and the rigid restrictions of medium, has to confine itself to a single episode or situation, and this situation, in turn, has to grow and develop out of itself." Walter Priehard Eaton.

2. "It should aim at making a single impression; should possess singleness of situation, and should concentrate its interest on a single character or group of characters,"– Sydney Box. "The Technique of One Act Play".

"Nor is he at liberty to display the many sided-ness of character by evolving various situations which will fest the relations of his characters. The One Act Play form is not one which lends itself easily to much subtlety of characterization. It is essentially concentrated and single of purpose, and for this reason imposes the strictest discipline upon the playwright who makes use of it." —Ibid)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोअी अप्रधान प्रसंग, गौण घटना, या व्यर्थके पात्रोंके जमघटको स्थान नहीं मिलता। "विस्तारके अभाव में प्रत्येक घटना कलीकी भांति खिलकर पुष्पकी भांति विकसित होती है। अुसमें लताके समान फैलनेकी अुच्छृंखलता नहीं है।"

अेकांकीमें दो तत्व अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं:—१. अेकता या यूनिटी, २. संक्षिप्तता। प्रथमतत्व अेकतासे तात्पर्य यह है कि अेकांकीकार जीवनका जो पक्ष चित्रित करे, अुसी ओर सब कथोपकथन केन्द्रित होते चले जाअें, अुसीपर सब पात्र प्रकाश डालें। अेकांकीका किसी प्रकारका वस्तु-भेद सह्य नहीं है। अुसके समस्त कथासूत्र अिसी महत्वपूर्ण घटना या अुद्दीप्त क्षणपर अेकाग्र हो जाअें। व्यर्थके विषय या पात्र आकर प्रभावसाम्य और वस्तुके अैक्यको खण्डित न करें। काल, स्थान, तथा कार्यकी अिकाअियोंका पूर्ण निर्वाह हुअे बिना सफल अेकांकीकी रचना सम्भव नहीं है। दूसरा तत्व छोटी परिधि या संक्षिप्तता है। कमसे-कम समयमें सब कुछ स्पष्ट कर देना अेकांकी की विशेषता है। जीवनके अुद्दीप्त क्षणके निदर्शनमें मितव्यय तथा चातुर्य अनिवार्य है। यदि विस्तार हुआ, तो अेकांकी ५ मिनटसे ३०–४० मिनटके समयमें वर्षोंकी घनीभूत पीड़ा नहीं अुभार सकेगा। जटिल कथावस्तु या अधिक पात्रोंके चरित्र-चित्रणके लिये विस्तृत परिधि, अधिक विस्तार और समय चाहिये। यह अेकांकीमें सम्भव नहीं। अेकांकीकारकी कलाका कौशल अिसीमें है कि वह कमसे कम समयमें जीवनका सजीव तथा स्वाभाविक चित्र अुपस्थित कर दे।[1]

जीवनका जो पहलू स्वाभाविक रूपसे अल्पकालमें चित्रित न किया जा सके, वह अेकांकीकी परिधिसे बाहर है। अेकांकीकी गति धीमी या तीव्र हो सकती है, किन्तु यह आवश्यक है कि वह वास्तविक जीवनसे अितना हटा न रहे, कि अुसकी स्वाभाविकता और यथार्थवाद को हानि पहुंचे। ज्यों-ज्यों अेकांकीकी चरम सीमा या क्लाअिमेक्स, महत्वपूर्ण घटना, अुद्दीप्त क्षण, या विशेष परिस्थिति आअे, त्यों-त्यों अुसे विकसित होकर अेकता, अेकाग्रता, और आकस्मिकतासे गुँफित होते रहना चाहिअे। वह निरन्तर कौतूहल और जिज्ञासासे परिपूर्ण रहे। अन्तमें, समस्त सूत्रोंका संगुफन हो जाय, जिसमें विषय, समस्या, या विशेष परिस्थिति पूरी तरह स्पष्ट हो जाअे।[2]

अेकांकीका आविष्कार रंगमंचकी आवश्यकताको सामने रखकर हुआ है। अतः अभिनय तत्वका विशेष महत्व है। अेकांकीकारको रंगमंचकी आवश्यकताओं तथा निर्बलताओंका पूर्ण ध्यान रखना चाहिअे। रंगमंचकी सुविधाओंसे वह प्रभावोत्पादकतामें अभिवृद्धि कर सकता है। रंगमंचके द्वारा वह जनताकी भावनाओंको अधिकाधिक आन्दोलित करे और अुसकी अपील विशद, पूर्ण, और सजीव हो। साहित्यकार अेकांकीका माध्यम अिसीलिअे चूनता है, क्योंकि वह रंगमंचकी निजी विशेषताओंका अुपयोग करना चाहता है। अुसे अैसी कथा-वस्तु या परिस्थिति संजोनी चाहिअे जिससे रंगमंचकी कठिनाअियाँ कोअी अड़चन अुपस्थित न कर सके और देशकालके अनुसार अुचित वातावरणका निर्माण हो सके।[3]

---

1. The time factor is important; while the speed of action may be accelerated or retarded, it must not be so far from that of real life that it is wholly rejected.—Percival Wilde, "Construction of the One Act Play."

2. The play itself must build, becoming more interesting as it develops or the audience will be bored; and it must end, finally at a moment which is neither too early, nor too late and with a state of affairs which is correct and satisfying."
—(Ibid)

3. Since the stage does certain things superbly well, it is the duty of the craftsman to make use of its capabilities from one end of the keyboard to the other; to appeal to emotions, since that is its natural gesture; to be vivid, powerful and direct. He has chose the Play form because it can cope with his material; it is for him to exploit it."
—(Ibid)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधारभूत रचना तत्व : प्रथम तत्व वस्तु निरूपणका है। अेकांकीकी कथावस्तुके चार भाग होते हैं, १. निरूपण, २. अवरुंधन, ३. अुत्कर्ष तथा ४. अपकर्ष। ये कथावस्तु या प्लाटके क्रमिक विकासके विभिन्न स्तर हैं। अिनमें होती हुअी धीरे-धीरे कथावस्तु अपना विकासक्रम पूर्ण करती है और विशेष प्रभाव अुत्पन्न करती है। निरूपण (Exposition) से कथानकका प्रारम्भ होता है। अेकांकीका प्रारम्भ अिस कोतूहलसे किया जाअे कि दर्शकोंका ध्यान कथानकमें खिंच जाये। वे अधिकाधिक अुसमें तन्मय हो जाअें और घटनाके क्रमके नियोजनमें दिलचस्पी लेने लगें।[4] कथानकका प्राण विस्मय और भविष्य विषयक जिज्ञासा है। कुशल अेकांकीकार घटनाओंको अिस प्रकार सजाता है कि कथानकके क्रमिक विकासका संक्षय, कुतूहल अेवम् विस्मय द्वारा विकास होता रहे। अिसमें विस्मयके साथ जिज्ञासाका प्रथम खिंचाव रहता है। अेकांकीकारको नाटकीय पृष्ठभूमि, पात्र परिचय, मूल समस्या संकेत, परिस्थिति निर्माण, विभिन्न सूत्रोंका परिचय देने आवश्यक हैं। जहां बड़े नाटकोंमें यह कार्य प्रथम अंक या प्रारम्भिक तीन चार दृश्योंमें देने होते हैं, वहां अेकांकीमें यह प्रारम्भिक रंगसूचनाओं तथा कथोपकथनमें होता है। पात्रोंके नाम अित्यादि भी अिसीमें स्पष्ट किअे जाते हैं।

दूसरा तत्व अवरुन्धन (Conflict) है। पात्रोंके आन्तरिक या बाह्य द्वन्द्व स्वरूप कुछ नाटकीय स्थलोंका निर्माण होता है। प्रायः पात्रोंके दो वर्ग हो जाते हैं। जिनमें परस्पर संघर्ष चलता है और अेकांकी जिज्ञासा, कौतूहल और विस्मय अेकत्रित करता हुआ विकसित होकर अुत्कर्ष (Climax) की ओर अूंचा अुठने लगता है। अुत्कर्ष भागमें भावों या विचारों या नाटकीय स्थलोंका, अथवा पात्रोंका द्वन्द्व अेक अूंचे स्तरपर चित्रित किया जाता है। कथानकमें निरन्तर गति होती है और वह धीरे-धीरे जोर पकड़ता हुआ अुच्चतम नाटकीय स्थिति-पर पहुंच जाता है। अुत्कर्ष स्वाभाविक होना चाहिये तथा अुसकी प्रगति निरूपण और अवरुन्धनके स्थलोंसे होती हुअी भावोंकी चरम सीमाकी ओर अग्रसर होनी चाहिये। सबसे महत्वपूर्ण भाव, समस्या, अुद्दीप्त क्षण को आगे बढ़ना चाहिअे तथा गौण भावोंकी समस्याओंको नीचे छोड़ देना चाहिये।

अपकर्ष (Resolution) एकांकीका अन्तिम स्थल है, जहां समस्याकी गुत्थी खुल जाती है तथा मुख्य भाव, विचार अथवा कथानकका अन्तिम स्वरूप प्रकट हो जाता है। विस्मयका अन्त हो जाता है। अपकर्षका प्रधान गुण स्वाभाविकता और मनो-वैज्ञानिक सत्यता है। सम्पूर्ण कथावस्तुका निर्माण अिस प्रकार किया जाअे कि अुसमें विस्मय, जिज्ञासा, संघर्ष और कुतूहलका समावेश हो।

पात्रः अेकांकीमें पात्रोंकी संख्या न्यून रहनी चाहिये। अधिक पात्र होनेसे अुनका स्वाभाविकतासे चरित्र-चित्रण नहीं हो पाता। कथानकमें भी जटिलता अुत्पन्न हो जाती है। गौण पात्र भी मुख्य पात्रकी चारित्रिक विशेषताओंको अुभारने या नाटकीय परिस्थिति-को विकसित करनेमें सहायक होकर ही अेकांकीमें स्थान पा सकते हैं। गौण पात्र अुत्तेजक, माध्यम, सूचक, या प्रभाव व्यंजकताके कार्य कर सकते हैं। अुत्तेजक पात्र कथावस्तुको सजीवकर आगे बढ़ाता है, माध्यम पात्र मुख्य पात्रके विचारोंको स्वगत होनेसे रोकनेके काममें लिया जाता है, सूचक पात्र नाटकोपयोगी सूचनाअें देता है, प्रभाव व्यंजक पात्र कहीं-कहीं रहस्यमय अिंगित संकेत, या भूमिकाकी भांति अुपस्थित होते हैं। कहीं कहीं अुन चारों कार्योंके लिये किसी पदार्थ अथवा किसी प्राकृतिक व्यापारका भी अुपयोग कर लेता है। कहीं-कहीं पात्रोंका मनोविज्ञान अेकांकीका कथावस्तु बनता है तथा नाटककार अुसके मनके अतल गह्वरोंको आलोकित कर देता है।

कथोपकथनः अेकांकीका प्राण कथोपकथन या सम्भाषण है। अिसके द्वारा अेकांकीका कथासूत्र आगे बढ़ता है, पात्रोंके चरित्र सम्बन्धी गुण व्यक्त होते हैं, और कथा-सूत्र विकसित होकर अुनमें तनाव आता है। कथोपकथनोंमें अनावश्यक विस्तार नहीं होना चाहिये;

4. "The chief perhaps the only quality of short play's opening is that it must capture the audience's interest,"—Sydney Box "The Technique of the One Act Play".

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न वे व्याख्यान, अुपदेश, शुष्क वाद-विवाद या अति साहित्यिक होकर दुरूह हो जाअें। अुनमें पात्रोंके चरित्र वय, सामाजिक स्थिति और शिक्षाके अनुकूल सहज स्वाभाविकता होनी चाहिअे। "यह संक्षिप्त, मर्म स्पर्शी, वाक्-वैदग्ध्य-युक्त चरित्रकी चारित्रिकताको प्रकट करनेवाला तथा अेकांकीके सूत्रको आगे बढ़ानेवाला होना चाहिये। बहुधा अेकांकी कथोपकथनोंमें होकर समस्त गति और शक्ति संचित करता हुआ क्लाअिमेक्सपर पहुंचता है। अथवा सम्भाषणमें ही परि-समाप्ति पा लेता है।"[1] संक्षिप्त परिधि होनेके कारण अेकांकीकार प्रत्येक शब्दको नाप तोलकर रखता है।[2] कमसे-कम शब्दोंमें अेकांकीकारको अधिकसे अधिक भाव व्यक्त करने, वातावरणका निर्माण करने तथा नाटकीय परिस्थितिको चित्रित करना चाहिये। स्वाभाविकताकी रक्षाके लिये स्वगत कथनका प्रयोग नहीं होना चाहिअे। अिस अस्वाभाविकतासे बचनेके लिअे अेकांकीकार टेलीफोनपर बातचीत, या कभी-कभी जड़ पदार्थों या पशु-पक्षियोंको माध्यम बनाकर निज मन्तव्य प्रकट करता है।

रंगमंच निर्देश : (Stage Directions) अिनकी सहायतासे नाटकत्वका रूप प्रतिष्ठित, प्रभाव अुद्दीपत, पात्रोंकी रूप कल्पना स्थिर और रंगमंचकी सम्पूर्ण व्यवस्था पाठकों या निर्देशकोंको समझायी जाती है। आधुनिक अेकांकीकार प्रारम्भिक रंगसूचनाओंसे समस्या, स्थिति, पूर्वकथा, या पात्रोंकी मुख मुद्राअे अभिव्यक्तकर अेकांकीके अुद्घाटन या प्रारम्भका कार्य लेता है। रंगमंचकी व्याख्या स्पष्ट करनेके लिये कहीं-कहीं अत्यन्त विस्तृत योजनाअें अेकांकीके प्रारम्भमें दी जाती हैं। घटना प्रारम्भ होनेसे पूर्वका आवश्यक अितिहास भी अिसीमें दे दिया जाता है। पाश्चात्य अेकांकीकारोंने अिस दिशामें यहांतक अुन्नति की है कि वे स्टेजके पूरे प्रबन्धका अेक मानचित्रतक दे देते हैं। कुछ अेकांकीकार पाठकोंकी कल्पना अुद्दीप्त करनेके लिअे केवल प्रभाव व्यंजक और तीखे संकेतोंका अुपयोग करते हैं। अिनसे अेकांकी सुपाठ्य बन जाता है और अभिनयमें भी सहायता प्राप्त होती है।

प्रभाव अैक्य : वातावरण तथा भाव-व्यंजना द्वारा अेकांकीकार अेक विशेष प्रभाव अपने दर्शकोंपर छोड़ना चाहता है। सम्पूर्ण अेकांकी अिसीकी ओर चलता है यदि कोअी अेकांकीकार निर्दष्ट प्रभाव अुत्पन्न करनेमें सफलता प्राप्त कर लेता है या जिस समस्याके विवेचनसे वह चला था, अुसका हल सुझा देनेमें सफलता प्राप्त करता है, तो अुसके कलात्मक सौन्दर्यमें किसे सन्देह हो सकता है। अिस प्रकार अुपर्युक्त तत्वोंके द्वारा हम अेकांकीकी सफलता या असफलता ज्ञात कर सकते हैं।

अेकांकीका नाटकसे सम्बन्ध

अेकांकीका नाटकसे वही सम्बन्ध है, जो कहानीका अुपन्याससे अथवा खण्डकाव्यका महाकाव्यसे। नाटकमें जीवनका विस्तार, लम्बाअी, और परिधिका विस्तार है, क्षेत्र जीवनकी भांति सुविस्तृत है। अेकांकीका क्षेत्र सीमित है, परिधि संकुचित है और जीवनका अेक पहलू ही चित्रित करनेका अल्प-काल है। अेक समुद्रकी भांति दीर्घ है, तो दूसरा बिन्दुकी भांति संक्षिप्त। नाटककार अवकाशके क्षण चाहता है जिनमें वह मानव-जीवनकी अनेक जटिल समस्याअें प्रस्तुत कर सके। अेकांकी थोड़ेसे समयमें मानव-जीवनकी अेक झांकी मात्र दे देता है। किसी विशेष पहलूपर प्रकाश डालता है। नाटकमें जीवनकी बहुज्ञता, अनेक रूपता और घटना-बाहुल्य है। अेकांकीमें अेक रूपता, अेक समस्या, अेक पहलू या या जीवनका अेक अुद्दीप्त क्षण है। अेकांकीमें मितव्यय और संक्षिप्तताका महत्व है। अेकांकीके कथानक सरल होते हैं। अुनमें अेक-सूत्रता, अेकता, अेकाग्रता अनिवार्य है। नाटकमें कथानक जटिल होता है और छोटी सहायक घटनाओंको स्थान प्राप्त हो जाता है।

---

१. डा० सत्येन्द्र हिन्दी अेकांकी तत्व विवेचन पृष्ठ १३७.

2. "You have a painfully small number of words with which to accomplish a large effect—for events must in general be large on the stage. Therefore every word must count;"—Walter Prichard Eaton. "The Technique of One-Act Play."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अेकांकीमें केवल अेक ही घटना, अेक ही महत्वपूर्ण पहलू या परिस्थिति रह सकती है। नाटकमें कथानकके चारों भाग स्पष्ट रहते हैं, अेकांकी प्रायः संघर्ष स्थलसे प्रारम्भ होता है और शीघ्र ही गति पकड़कर चरम सीमाकी ओर अग्रसर होता है। नाटककी गति धीमी होती है, अेकांकीमें वेग सम्पन्न प्रवाहका महत्व है।

अेकांकीका प्राण कथोपकथन है। नाटकमें घटनाओंकी व्यंजना, चरित्र-चित्रण, कार्य व्यापार और लम्बे चौड़े स्टेजकी प्रमुखता है। अेकांकीमें मितव्यय द्वारा यह कार्य करने पड़ते हैं। नाटकके कथोपकथन लम्बे विवेचन प्रधान और स्वगतसे परिपूर्ण हो सकते हैं। अेकांकीका कथोपकथन संक्षिप्त, मर्मस्पर्शी तथा चरित्रकी विशेषताअें प्रकट करनेवाला होता है। अिन्हींकी सहायतासे कथानकका विकास, परिस्थिति, और वातावरणका निर्माण होता है। अेकांकीमें स्वगतका स्थान नहीं। बड़े नाटकमें पात्रोंकी संग्रह संख्या यथेष्ट रहती है। मुख्य पात्रोंके साथ गौण पात्र भी अपना महत्व रखते हैं। अेकांकीमें पात्रोंकी संख्या कमसे-कम रखी जाती है।

अेकांकीमें संकलन त्रयका होना महत्वपूर्ण है। यही अुसे जीवनका यथार्थवादी चित्र बनाता है। अेक समयमें, अुतने ही वक्तमें, होनेवाली घटनातक परिमित रहनेसे वह जीवनका स्वाभाविक टुकड़ा बनता है। बड़े नाटकमें संकलन-त्रयका निर्वाह आवश्यक नहीं।

अेकांकियोंके भिन्न-भिन्न प्रकार : अेकांकियोंको निम्न वर्गोंमें विभाजित किया जा सकता है, १. सुखान्त अेकांकी, २. दुखान्त अेकांकी, ३. प्रहसन, ४. फैंटसी, ५. गीतिनाट्य या ओपेरा, ६. झांकी, ७. संवाद या सम्भाषण, ८. मोनोड्रामा, ९. रेडियो-प्ले अित्यादि।

सुखान्त अेकांकीका अुद्देश्य लगभग वही है जो बड़े सुखान्त नाटकका होता है। केवल अुसकी परिधि संक्षिप्त है। अल्पकालमें ही वह कोअी आनन्ददायक क्षण या समस्या प्रस्तुत करता है। अिसी प्रकार दुखान्त अेकांकी किसी दुख-पूर्ण क्षणको अुद्दीप्त करता है। अिन दोनोंका निर्माण प्रायः किसी विशेष समस्याको लेकर किया जाता है। अतः अिन्हें समस्या अेकांकी या प्रोब्लम प्ले भी कहते हैं। हिन्दीके अधिकांश अेकांकी अिसी वर्गके हैं।

प्रहसन या फार्सका अुद्देश्य समाजकी किसी त्रुटि, रूढ़ि, कमजोरी या पात्रके चरित्रके किसी दुर्गुणको प्रकाशमें लाकर अुपहासकी वस्तु बना देना है। अिसमें नाट्यकारका अुद्देश्य हंसना तथा दूसरोंको हंसाकर समाज-सुधार करना होता है। फेंटेसी अेकांकीका अति नाटकीय रोमांटिक स्वरूप है, जिसका ताना बाना स्वप्नसे बना हुआ होता है। गीति-नाट्यमें माध्यमका अन्तर है। कविता या गीतोंके काव्यमें माध्यमसे कल्पना और भाव-प्रकाशन द्वारा अेकांकीकार किसी भावपूर्ण स्थल या घटनाका चित्रण करता है। झांकीमें केवल अेक संक्षिप्त दृश्यमें तीनों अिकाअियोंका निर्वाह करते हुअे किसी अुद्दीप्तक्षणको चित्रित कर दिया जाता है। सम्भाषण अेकांकीका प्रारम्भिक स्वरूप है, जिसमें दो पात्रोंके कथोपकथन द्वारा किसी सिद्धान्तका प्रतिपादन किया जाता है। मोनोड्रामामें केवल अेक पात्र स्वगतके रूपमें किसी पूर्व घटना या आप-बीती व्यक्त करता है। स्वयम् ही अभिनय करता जाता है। रेडियो-प्ले ध्वनिके अुतार चढ़ावसे अभिव्यक्ति करते हैं। अिनमें अिकाअियोंके पालनकी प्रायः आवश्यकता नहीं होती।

विषयोंके अनुसार भी हम अेकांकियोंके वर्ग बना सकते हैं, जैसे १. सामाजिक, २. पौराणिक, ३. अैतिहासिक, ४. राजनैतिक, ५. साहित्यिक अित्यादि। छाया नाटक भी अेक प्रकारके अेकांकी ही हैं। अंग्रेजीमें अेक और भी प्रकार मिलता है, जिसे काकनी कहते हैं। अिनमें मजदूरोंकी विकृत भाषाका प्रयोग किया जाता है। मूल वृत्तिके आधारपर डॉ. सत्येन्द्रने ये भेद किअे हैं: १. आलोचक अेकांकी, जो कमजोरियोंको अुभारते हैं; २. विवेकवान अेकांकी, जिनमें अलोचना प्रत्योलोचनाकी जाती है, ३. भावुक अेकांकी, जिनमें भावुकता अधिक रहती है, ४. समस्या अेकांकी, ५. अनुभूतिमय, ६. व्याख्यामूलक, ७. आदर्श मूलक, ८. प्रगतिवादी अेकांकी नाटक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक अेकांकी लेखक तथा अुनकी विशेषताअें

१—डाक्टर रामकुमार वर्मा

हिन्दी अेकांकी क्षेत्रमें पाश्चात्य टेकनीक अेवम् विचारधाराका अध्ययन अेवम् मौलिक प्रतिभा लेकर जो नाट्यकार अवतीर्ण हुअे हैं, तथा जिन्होंने अपने मौलिक प्रयोगों तथा कलात्मक समन्वयसे हिन्दी-अेकांकीको पाश्चात्य अेकांकी साहित्यके समकक्ष पहुंचाया है, अुनमें डा. रामकुमार वर्मा क्रान्तिकारी हैं। डा. वर्माने अपने युगान्तकारी प्रयोग अुस कालमें प्रारम्भ किअे थे, जब हिन्दी अेकांकी पुरानी संस्कृत प्रधान शैलीपर धीमी गतिसे चल रहा था।

डा. वर्माने अेकांकियोंमें पाश्चात्य टेकनीकके प्रयोग प्रारम्भ किअे थे, जो सर्वथा अभूतपूर्व और मौलिक थे। अेक लम्बे दृश्यमें सम्पूर्ण घटनाओंको घनीभूतकर पात्रोंका चरित्रचित्रण, परिष्कृत रंग सूचनाओंका प्रयोग, मनौवैज्ञानिक विश्लेषण वर्माजीकी निजी विशेषताअें हैं। वर्माजीने प्रगतिशीलतासे हटकर सामाजिक यथार्थको ही अपनाया है। वे रोमांस पसन्द कर सकते हैं, किन्तु अुसी सीमातक जबतक कि वह वास्तविक रहे। जीवनके जिन मार्मिक पहलुओंपर अुन्होंने अपने नाटकोंमें प्रकाश डाला है, वे कल्पनाकी रंगीनीसे अनुरंजित नहीं हैं, यथार्थवादी हैं। अुनके नाटकोंकी स्थितियाँ, आज हमारे समाजमें सर्वत्र व्याप्त हैं। समाजके लिअे कल्याणकारी साहित्यके निर्माणमें अुन्हें विश्वास है। अुनका नाट्य-साहित्य यथार्थवादी होते हुअे भी भावनाओंके केन्द्रमें संचित होकर हृदयका परिष्कार करता है। स्वभावतः कवि होनेके कारण वे अेकांकियोंमें काव्यका भी हलका प्रयोग करते हैं और नीरसताको बचाते हुअे अुन्होंने सरस प्रगतिवान कथोपकथनोंका प्रयोग किया है।

अुनके सबसे सफल अेकांकी अैतिहासिक आदर्शवादसे परिपूर्ण हैं। भारतीय संस्कृतिकी पृष्ठ-भूमिपर आपने मनोविज्ञानकी शैलीमें भारतीय अितिहास विशेषतः हिन्दु-युगके वीरोंको चित्रित किया है। अुन्होंने अैसे आदर्शवादकी प्रतिष्ठा की है, जो व्यावहारिकतासे, ओत-प्रोत है। प्रत्येक पात्रको अपना मन्तव्य प्रकट करनेका पूरा पूरा अवसर दिया है। प्रत्येक नाटककी पृष्ठभूमि (historical background) बहुत सुन्दर और अितिहास-सम्मत है।

२—श्री अुपेन्द्रनाथ 'अश्क'

अश्कजीका क्षेत्र सामाजिक है। अुनके अेकांकी भारतीय समाजके अनेक अच्छे-बुरे, कडुवे-मीठे पहलुओंके अध्ययन हैं। अुन्होंने हमारे समाजकी अनेक कमजोरियां अुभारी हैं। अश्कजीका अेकांकी तीन भागोंमें विभक्त किया जा सकता है १. सामाजिक विद्रूपताओं, रूढ़ियों, पारिवारिक पद्धतिपर व्यंग्य, अन्धानुकरणके प्रति घृणा, २. सांकेतिक प्रतीकात्मक शैलीमें लिखे गअे अेकांकी, ३. मनोवैज्ञानिक अेकांकी। तीनों प्रकारके अेकांकियोंमें व्यंग्यका अच्छा प्रयोग है। अश्क समाजके आलोचक ही नहीं मार्ग-दर्शक भी हैं। परोक्ष रूपमें आप यह संकेत करते हैं कि समाजकी पुरानी हानिकारक जीर्ण रूढ़ियाँ, व्यवस्था, रीति-रिवाज, थोथी विचारधारा समयके अनुसार ढूंढ़नी चाहिअे। जिन्होंने अुनके "कैद" और "अुड़ान" अेकांकी पढ़े हैं, वे अिस तत्वकी सत्यता समझ सकते हैं। "अश्क" के पात्र प्रधानतः मध्यवर्गके हैं। अिनमें कवि, डाक्टर, समाजके नेता, वकील हैं। नारी पात्रोंमें शिक्षित फैशनेबिल रोमांटिक युवतियोंसे लेकर पुराने टाअिपकी दलित, पीड़ित नारियाँ, परवशता और पराधीनतामें अवरुद्ध आत्माअें हैं। अुन्होंने भिन्न भिन्न प्रकारके पात्रोंके अध्ययन प्रस्तुत किअे हैं। "अश्क" जीके नाटक मुख्यतः रंगमंचके लिअे लिखे गअे हैं। रेडिओके लिअे भी अुन्होंने विशेष रूप कुछ नाटक तैयार किअे हैं। ये जीवनके सच्चे चित्र प्रस्तुत करते हैं। अतः अिनमें नाटकीयता और वास्तविकता प्रचुरतासे है।

३—श्री अुदयशंकर भट्ट

भट्टजीने बहुमुखी प्रतिभा लेकर हिन्दी अेकांकी जगतमें प्रवेश किया है। आपके अैतिहासिक, सांस्कृतिक और सामाजिक नाटक—प्राचीन टेकनीकको तोड़कर नअे जीवन और आधुनिक समाजके यथार्थवादी चित्र हैं। नअे अेकांकी "पर्देके पीछे" संग्रहमें अुन्होंने बड़े व्यंग्यात्मक ढंगसे विद्युत-प्रकाश डाला है। हिन्दी नाट्य साहित्यको भट्टजीके भाव-नाट्य (जैसे "विश्वामित्र", "मत्स्यगंधा", "राधा", "कालीदास", अेक अभूतपूर्व देन है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"प्रसाद" जीके बाद भाव-नाट्यकी परम्परामें भट्टजीका स्थान सर्वोच्च है।

भट्टजीने समाजकी नाना समस्याअें अुभारी हैं। सांस्कृतिक दृष्टिकोणसे विशेष अध्ययन कर नअे प्रकारके गवेषणात्मक अेकांकियोंको जन्म दिया है। "आदिम-युग", "प्रथम विवाह", "मनु और मानव" "कुमार संभव" अित्यादि अेकांकी प्रारम्भिक आर्य संस्कृतिके सफल चित्र हैं। प्राचीन भारतीय जीवन और संस्कृतिसे लेकर आजतककी समाजकी अुथल-पुथल आकुल अभि-व्यक्तियाँ, और सामाजिक समस्याअें अिनमें मुखरित हुअी हैं। अुसका दृष्टिकोण अेक निष्पक्ष साहित्यिकका है।

४—श्री भुवनेश्वरप्रसाद

जिन अेकांकी नाटकोंपर अंग्रेजी साहित्य अेवम् टेकनीकका सीधा प्रभाव पड़ा है और जो विचारोंतकमें पाश्चात्य दृष्टिकोणसे प्रभावित हैं, अुनमें श्री भुवनेश्वर प्रसाद प्रमुख हैं। आपका अेकांकी संग्रह "कारवाँ" हिन्दी अेकांकी जगतमें नअी शक्तिका चिन्ह था। जितनी विद्रोहकी भावना अिनके अेकांकियोंमें मौजूद है, वह किसीके पास नहीं है। अुन्होंने विषयकी नवीनता, नअी पाश्चात्य समस्याओंका हिन्दीमें प्रवेश कराकर हिन्दु समाजमें अेक क्रान्ति अुत्पन्न कर दी। भुवनेश्वर प्रगतिवादके पुजारी हैं। अुन्होंने अपने अेकांकियोंमें समाज-की आँखोंके नीचे होनेवाले नाना अत्याचारोंका दिग्द-र्शन कराया है लेकिन जिन यौन विकृतियों तथा अनुचित वैवाहिक सम्बन्धोंके चित्र अुन्होंने खींचें हैं, वे भारतके लिअे सर्वथा नअे हैं। अुन्होंने सभ्य और शिक्षित पात्रोंके अन्तर्मनको अुघाड़कर यौन-क्षुधासे पीड़ित पात्रोंको प्रस्तुत किया है।

५—श्री लक्ष्मीनारायण मिश्र

मिश्रजीके अेकांकियोंमें "प्रसाद" जीकी पलायन-वादी प्रवृत्तिके प्रति विद्रोहकी भावना है। वे वस्तुवादी हैं। ठोस संसारकी नाना समस्याओंसे प्रभावित यथार्थके प्रति अुन्मुख हैं; निरर्थक कल्पना, अधिक काव्य-मय अभिव्यंजना, कोरी भावुकता अथवा पलायनके प्रति अुनकी कोअी आस्था नहीं। "प्रसाद" जीके पश्चात् मिश्रजीके नाटकोंमें हमें प्रथम बार अेक तीव्र बलवती विचारधारा, भारतीयताके प्रति सम्मान, अेक वेदनामिश्रित तिलमिलाहट, मनोवैज्ञानिक, अन्तर्दृष्टि, समाज तथा नअी परिस्थितियोंके प्रति अेक मार्मिक किन्तु गम्भीर व्यंग्य अुपलब्ध है। मिश्रजीका बुद्धिवाद योरपसे प्रभावित नहीं है, प्रत्युत अुनके संस्कार भारतीय हैं।

६—श्री जगदीशचन्द्र माथुर

माथुर साहबका अेकांकी साहित्य आधुनिक सभ्य जगतकी समस्याओंसे सम्बन्धित है। आजके छोटे-बड़े मसलोंका यथार्थवादी किन्तु व्यंग्य मिश्रित शैलीमें चित्रण करनेमें वे कुशल हैं। प्रत्येक पात्रका अेक स्वतन्त्र व्यक्तित्व और चारित्रिक विशेषताअें हैं। "ओ मेरे सपने" नअे संग्रहके प्रहसनोंमें अुन्होंने सभ्य समाजका खूब मजाक अुड़ाया है। "शारदीया" अुनका नवीनतम वातावरण प्रधान अेकांकी है। अिनके अेकांकी "खण्डहर" का वातावरण बड़ा सुन्दर रहा है। बुद्धि और हृदयके दोनों ही पक्षोंका अुचित समन्वय तथा रंगमंचकी आवश्यकताओंका पूरा निर्वाह पाया जाता है।

७—श्री भगवतीचरण वर्मा

वर्माजीके अेकांकियोंमें नग्न यथार्थवादका चित्रण है और स्थूलसे सूक्ष्मकी ओर संकेत है; आदर्शसे यथार्थकी ओर संकेत है। अुन्होंने हमें कठोर जगतकी वास्तविकताका अच्छा परिचय कराया है। चित्रपट और रेडिओ जगत्का अच्छा परिचय होनेके कारण अुनके नाटकोंमें नाटकीय स्थितिकी पकड़ बड़ी अच्छी है। अुनका "सबसे बड़ा आदमी" ड्रामेटिक सस्पेन्सका अच्छा अुदाहरण है। "तारा" अतुकान्त छन्दमें लिखा गया है। वर्माजीकी सबसे बड़ी सफलता अुनके कथोपकथनोंमें है। भाषा सजीव है। ओजस्विनी और प्राणवती फड़कती हुअी शैली, तीव्र व्यंग्य और रस-प्रवणता अुनमें पाअी जाती है।

८—श्री विष्णु प्रभाकर

श्री विष्णुजी मानव-वादी अेकांकीकार हैं। मानवके प्रति अुन्हें सच्ची और हार्दिक सहानुभूति है। राजनैतिक सामाजिक और मनोवैज्ञानिक प्रायः सभी प्रकारके सफल अेकांकियोंका निर्माण कर रहे हैं।

अिनके अतिरिक्त श्री हरिकृष्ण प्रेमी, श्री प्रभाकर माचवे, श्री पृथ्वीनाथ शर्मा, सत्येन्द्र शरत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और श्री सद्गुरुशरण अवस्थी भी सुन्दर अेकांकियोंकी रचना कर रहे हैं।

अेकांकी क्रियाशील साहित्यकारके मस्तिष्कका चमत्कार है। कम-से-कम समयमें यह अधिक-से-अधिक जनताको स्वस्थ मनोरंजन प्रदान कर देता है। सेटिंग और अभिनयमें सरलता रहती है और व्यय भी अधिक नहीं होता। अभिनयकी शिक्षा और किसी बातके प्रचारके लिअे भी यह अच्छा साधन रहता है। पाश्चात्य टेकनीकपर हमारे यहां भी नअे-नअे प्रकारके अेकांकियोंका निर्माण हो रहा है। जनताकी अभिरुचि षट्रसयुक्त अेकांकी, प्रहसन, रेडिओ प्ले, रूपक, फीचर अित्यादि-की ओर विशेष रूपसे हो रही है। रेडिओपर प्रसारके तथा कालेजों-स्कूलोंमें अभिनयके लिअे अच्छे अेकांकियोंकी निरन्तर मांग होती रहती है। हिन्दी साहित्यने गत १०–१५ वर्षोंमें अेकांकियोंमें बड़ी अुन्नति की है।

डा. रामकुमार वर्माके शब्दोंमें, "साहित्यके अन्य माध्यमों—कविता, कहानी, अुपन्यास, नाटक, निबन्ध, समालोचना, आत्मकथा, संस्मरण, यात्रा विवरणमें अेकांकी ही सबसे शक्तिशाली माध्यम है। रंगमंचकी अनुपस्थितिमें अथवा चित्रपटकी सस्ती लोकप्रियताने अेकांकीके विधान और अुसकी आकर्षण शक्तिको आत्म-सात् करनेमें अपनेको असमर्थ पाया है। अतः अेकांकी अपने नअे विधानको लेकर अपने सम्पूर्ण आकर्षणके साथ हिन्दीमें अवतरित हुआ है। रंगमंचकी अुलझनोंसे दूर रहते हुअे भी दृश्यके आकर्षणकी विशेषता अिसमें सुरक्षित है। आजके व्यस्त जीवनमें अेकांकीने कमसे-कम समयमें अधिकसे अधिक अनुरंजनका अुत्तर-दाअित्व अपने अूपर लिया है। घटनाओं और समस्याओंके पारस्परिक अन्तर्व्यापी नैकट्यको दूरकर जीवनकी पृष्ठभूमिपर प्रत्येक घटना और समस्याका स्वाभाविक अुभार प्रस्तुत करना अेकांकीका ही कौशल है। मंचका सरलीकृत आकर्षण, कम समयमें अधिकसे अधिक अनु-रंजन, घटना और पात्रोंकी दृश्य-स्पर्शिनी क्रिया और प्रतिक्रिया और जीवनकी अूँचाअी देखनेका नेत्रोत्तोलन अेकांकीमें ही है।"

आज आँख खुलते ही

: सुश्री कीर्ति चौधरी :

आज आँख खुलते ही
किरन अेक शर्मीली सिरहाने आ डोली
झोंकेकी मलयवात
बड़े निकट अस्फुट स्वरमें
जैसे कुछ बोली
देखा तो जाने क्यों जान पड़ा
सुबह नहीं मेरी है
किसने यह जादूकी छड़ी यहाँ फेरी है
दीवारें और.....और .....
अजब अजब लगता है सभी ठौर
धीरेसे अुठकर
अपनी ही अंजलिमें अपना मुख धर
मैंने बहुत देर अपनेसे प्यार किया
कमरेमें जैसे हो अतिथि कोअी
वैसी ही मुद्रामें अुठ
सूनेपनको सत्कार दिया
चंचल पगोंसे चल
खिड़की दरवाजोंके पार झांक
जाने.. क्या देखा...क्या जाना
कागजपर निरुद्देश्य
रेखाअें खींच बहुत हर्षित
जाने किस मूरतको पहिचाना
और तभी कोअी ज्यों खिलती है अकस्मात्
कअी दिनों बाद
लगा आज नहीं खाली हूँ
कोअी नहीं और बात
निश्चित ही--
कुछ अच्छा लिखनेवाली हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* राष्ट्रभाषाके लिअे राष्ट्रलिपि

—श्री पां. ग. अड्यालकर और म. रा. सुब्रह्मण्यम्

भारतीय संविधान धारा ३४३ (१) के अनुसार भारतीय गणतन्त्रकी राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा लिपि देवनागरी मानी गअी है। अिस प्रकार संविधानमें भाषाके प्रश्नपर सुस्पष्ट अेवम् निर्विवाद मत प्रदर्शित किया गया है। लिपिके विषयमें भी अिस प्रकार स्पष्टीकरण-की नितान्त आवश्यकता रही है। यहाँ यह निर्देश करना जरूरी है कि किसी भी भाषामें वर्णमाला व लिपि भाषाको साकार बनानेके दो प्रमुख अंग हैं। अिसलिअे जब हम देवनागरी लिपि कहते हैं तब देवनागरी वर्णमाला (alphabet) या लिपि (Script) यह प्रश्न ज्योंका त्यों शेष रह जाता है। अिस लेखमें हम लेखक-द्वयने अपने विचार व कुछ ठोस मननीय सुझाव भारतीय शिक्षा-शास्त्रियों तथा लिपि सुधार समितिके सदस्योंके लिअे दिअे हैं।

वर्णमालासे तात्पर्य "अ' से 'औ' तक तथा 'ऋ' आदि ११ स्वर तथा क्-, च्-, ट्-, त्-, प्- वर्गोंके २५ व य्, र्, ल्, व्, श्, ष्, स्, ह्, आदि ३३ व्यंजनोंके अुच्चारण से है। अिसे हम देवनागरी वर्णमाला कहते हैं। लिपिसे तात्पर्य वर्णमालाके वर्णोंको लिपिबद्ध करनेकी प्रणालीसे है। 'क, का' अथवा 'Ka, Kā' आदि अिसे लिखनेके कअी प्रकार हो सकते हैं।

हमारे देशमें अुत्तर तथा दक्षिण भारतमें वर्ण-मालामें साम्य होनेपर भी लिपिभिन्नता समान रूपसे पाअी जाती है। अुत्तर भारतकी पंजाबी, हिन्दी, मराठी, गुजराती, बंगला, अुड़िया, असमिया आदि भाषाओंकी प्रकृतिमें साम्य होनेपर भी लिपि अेक न रह सकी। अुसी प्रकार दक्षिण भारतकी तमिल, तेलगु, मलयालम्, कन्नड आदि चार भाषाओंकी प्रकृति व वर्णमालामें साम्य होनेपर भी लिपि-वैचित्र्य पाया जाता है और अेक लिपि दूसरीसे मेल नहीं खाती। अिस प्रकार हमारे देशके प्राचीन शिक्षाशास्त्रियोंको अेकमेव वर्णमाला मान्य होनेपर भी कोअी लिपि समान रूपसे मान्य न हो सकी। देशका लिपि-वैचित्र्य अिस बातका प्रमाण है। यही कारण है कि हमारी देवनागरी लिपि (न कि देवनागरी वर्णमाला) में आमूलाग्र परिवर्तनकी आवश्यकता बिलकुल आदिकालसे ही प्रतिभासित होती रही है और आज भी वह समस्या ज्यों-की-त्यों है। आजतक सर जार्ज ग्रियर्सन तथा अन्य पाश्चमात्य विद्वानोंने जो देवनागरी लिपिकी सर्वश्रेष्ठता मानी है वह भी वर्णमालाके नामपर ही हो सकती है न कि लिपिकी शैलीपर।

जहांतक लिपिका सवाल है देवनागरी लिपिमें सदा सरलताका अभाव रहा है। संयुक्ताक्षरोंकी क्लिष्टता ज्यों-की-त्यों बनी है। संयुक्ताक्षरोंके नियमोंको कितना भी नियमबद्ध बनाया जाय अपवादोंकी अेक लम्बी परम्परा विद्यमान रहती है। लिपिशास्त्रियोंके अनुसार लिपिका विकास प्रायः 'कलम बिना अुठाअे लिखनेकी शैली' पर हुआ है। देवनागरी लिपिमें नितान्त अिस बातका अभाव रहा है। अक्षरोंके अूपरकी सरल, सीधी रेखाअें बिलकुल अनावश्यक हैं पर न होनेसे अक्षरोंका स्वरूप अेवम् सौष्ठव कुछ 'भग्नकाय' सा प्रतीत होता है। अुसके अतिरिक्त टायपिंग, प्रिंटिंग, पुनर्मुद्रण आदि यांत्रिक कार्योंके लिअे भी यह पूर्णतया अनुपयुक्त है। आजतक देवनागरी में अेक भी अैसा स्टैंडर्ड टाअिपरायटर नहीं है जिसमें सुधारकी गुंजाअिश न हो; क्योंकि ११ स्वर व ३३ व्यंजनोंको छोटेसे यन्त्रमें कुशलतासे रखना अेक भगीरथ प्रयास ही होगा। क्, च्, ट्, त्, प् व ग्, ज्, ड्, द्, ब्के अतिरिक्त अिन्हीं अुच्चारणोंपर अवलम्बित aspirates ख्, छ्, ठ्, थ्, फ् व घ्, झ्, ढ्, ध्, भ् के लिअे भिन्न अक्षरोंकी वास्तवमें आवश्यकता ही प्रतीत नहीं होती। अुसी प्रकार, ङ्, ञ् ये दो अनुनासिक भी आसानीसे लुप्त किअे जा सकते हैं। शब्दलेखनकी त्रुटि भी कुछ कम महत्वपूर्ण नहीं है। जब हम 'हाथ, रस, कलश, झंप.' आदि कोअी भी अकारान्त शब्द कहते हैं तब क्रमशः

* अिसके साथ 'राष्ट्रलिपिका प्रश्न' शीर्षक सम्पादकीय टिप्पणी अवश्य पढ़ें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'भ, स, श, प' पूर्ण होनेपर अुनका अुच्चारण अुसप्रकार नहीं होता जैसा होना चाहिअे। अुनमें स्वर होनेका आभास ही नहीं मिलता। अिसके सिवाय मात्राअें निश्चित व संख्यामें थोड़ी होनेके कारण भारतकी ही अन्य भाषाअें ज्यों-की-त्यों लिखी जानेकी क्षमता अिस लिपिमें नहीं है। तब विदेशी भाषाओंकी बात ही अलग रही।

अिस प्रकार देवनागरी लिपिकी न्यूनता प्रकाशित करनेपर यह आवश्यक हो जाता है कि अिस प्रकारकी अेक अैसी लिपि बनाअी जाय जिससे अधिकतर भारतीय परिचित हों और जो लिपि अत्यन्त सरल परिपूर्ण हो। अुसमें देवनागरी वर्णमालाको व्यक्त करनेकी पूरी क्षमता हो। अैसा होनेपर भारतीय भाषाओंके लिअे अेक सर्वमान्य लिपि मिल जाअेगी क्योंकि वर्णमाला सभी भारतीय भाषाओंके लिअे अेक ही है। यदि सम्भव हो तो अैसी लिपिमें विदेशी, वैज्ञानिक व प्रावैधिक (technical) शब्द सहज ही में व्यक्त करनेकी क्षमता हो और वह टायपिंग, प्रिन्टिंग, पुनर्मुद्रण आदि कार्योंके लिअे भी सुलभ हो। अैसा होनेसे राष्ट्रभाषा हिन्दीके साथ-साथ भारतीय भाषाओंकी कठिनाअी व अन्तर्भाषीय विवाद अेकदम समाप्त हो जाअेंगे। अेतअेव हमारे देशमें अेक सर्वजन सुलभ, सरल, व परिपूर्ण लिपिकी आवश्यकता प्रतीत होती है।

हमारे विचारसे यह पूर्ति **रोमन लिपि**के द्वारा पूरी हो सकती है। अुसके सद्यः स्वरूपको कुछ बदलकर रखनेसे वह हमारी आवश्यकता पूरी कर सकती है। अिसके साथ नत्थी राष्ट्रलिपिचित्र देखनेसे यह स्पष्ट होगा। अिसमें 'अ, आ' के लिअे 'a, ā,' 'अि', अी' के लिअे 'i, ī,' 'अु अू' के लिअे 'u, ū' व 'औ' के लिअे 'au' लिखा जायगा। अिन पांच 'a, i, u, e, o,' स्वरोंमें अुच्चारणके अनुसार स्टैंडर्ड परिवर्तन होनेकी पूरी गुंजाअिश है। व्यंजनोंमें 'क्, ग्, च्, छ्, फ्, व्:' के लिअे सदा 'k, g, c, ch, ph, v' आअेंगे; ट् वर्गके व्यंजनोंके लिअे (अनुनासिकको छोड़कर) 't' व 'd' का अुपयोग नीचे बिंदी देकर किया जाअेगा जिससे 'त् (t), ट् (ṭ), द् (d), ड् (ḍ)' का भेद स्पष्ट हो जाअेगा; 'न्, ण्' के लिअे क्रमशः 'n, ṇ' का प्रयोग होगा; 'श, ष्, स्' के लिअे 's', ṣ, s' का प्रयोग होगा। अरबी, फारसीके शब्द भी ज्यों-के-त्यों लिखने हों तो 'f, q, z' का अुपयोग क्रमशः 'फ़, क़, ज़' के लिअे किया जा सकेगा। अिस प्रकार देवनागरी वर्णमालाको लिपिबद्ध करनेकी सुगम, सरल पद्धति अिस रोमनसे सम्बन्धित लिपिसे प्राप्त हो सकेगी।

अिस प्रकारकी जो लिपि तैयार होगी अुसे हम रोमन लिपि नहीं कह सकते क्योंकि अंग्रेजी भाषामें भी अिस लिपिका अितनी सुगमतासे प्रयोग नहीं होता। चाहे तो हम अिसे 'राष्ट्रलिपि' नामसे गौरवान्वित कर सकते हैं। हमारी प्रान्तीय भाषाओंका आजका साहित्य देखिअे। नाटक, लघुकथा, आलोचना, निबन्ध, अेकांकी सभी शैलियोंमें हमने पाश्चात्य देशोंकी हूबहू नकल करनेकी रत्तीभर भी कसर न रखी। फिर हमें लिपिके लिअे सतर्कतासे मार्गदर्शनके लिअे रोमन लिपिकी ओर देखना यत्किंचित भी हेय प्रतीत नहीं होना चाहिअे।

सर्वप्रथम यह राष्ट्रलिपि अत्यन्त सरल होगी जिससे रोमन लिपिका न्यूनतम ज्ञान रखनेवाला कोअी भी व्यक्ति सहज ही में ग्रहण कर सकता है। अिस प्रकार माध्यमिक स्कूलोंमें पढ़नेवाले विद्यार्थी अिसे अविलम्ब प्रयाससे समझने लगेंगे। यह लिपि आसानीसे लिखी जा सकती है। अिसमें अूपरी आड़ी रेखाका न कोअी विवाद है और न संयुक्ताक्षरोंका। बिना कलम अुठाअे लिखनेके लिअे यह सर्वश्रेष्ठ है ही। Aspirates के लिअे अलग व्यंजनोंकी आवश्यकता नहीं। 'ङ, ञ्' सदाके लिअे हटा दिअे जाअेंगे। अकारान्त शब्दोंके लिअे आखरी वर्णोंके 'अ' कार की ('a' लिखनेकी) अलगसे आवश्यकता न होगी। स्वर संख्यामें थोड़े अवश्य हैं पर अुनमें परिवर्तन व अुच्चारणके अनुसार हेरफेरकी पूरी गुंजाअिश है। अिस प्रकार टायपिंग, प्रिन्टिंग व पुनर्मुद्रण आदि यांत्रिक कार्योंके लिअे भी यह लिपि सुलभ होगी। अिसके अतिरिक्त आधुनिक रोमन लिपिके २६ वर्णोंमेंसे २ वर्ण (x, w) कम होकर हमारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रलिपिके लिअे केवल २४ वर्णोंकी आवश्यकता होगी। अिसमें केवल बिंदी (.) व अक्षरोंके अूपरकी आड़ी (—) रेखाके लिअे स्थान देना होगा। यह कार्य अत्यन्त सरल है।

अिस प्रकारकी राष्ट्रलिपिका अुपयोग डा. राधाकृष्णन तथा अन्य शिक्षाशास्त्रियोंने संस्कृत तथा अन्य भाषाओंको लिपिबद्ध करनेके लिअे कुछ हदतक किया है। अिसके अतिरिक्त भारतीय अितिहास व भूगोलके कअी शब्द तथा करोड़ों भारतीय नाम, व अुपाधियाँ भी रोमन तथा तत्सम्बन्धित लिपिमें वर्षोंसे लिखे और समझे जा रहे हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि 'राष्ट्रलिपि' रोमन लिपिकी वह आवृत्ति होगी जो सर्वथा भारतीय भाषाओंकी प्रकृतिके अनुकूल सिद्ध होगी।

अिस प्रकारकी राष्ट्रलिपिमें न केवल हिन्दी ही आसानीसे लिखी जाअेगी अपितु भारतीय गणतन्त्रके संविधानमें सम्मानित प्रायः समस्त भाषाअें लिखी जा सकेंगी। अर्थात् अन्तर्भाषीय लिपि साधारण हो जायगी व अिस प्रकार प्रान्तीय भाषाओंका विवाद जो आजकल जोर पकड़ रहा है, अेकदम समाप्त होगा। आजकल वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावलिका बड़ा भारी प्रश्न अुपस्थित हो रहा है। स्टैंडर्ड सर्वमान्य शब्दावलि बननेपर भी विभिन्न लिपियोंमें लिखी जानेके कारण सभ्य भाषाभाषियोंके लिअे अेकदम अनभिज्ञ हो जाती है। 'राष्ट्रलिपि' के आत्मीकरणसे यह कार्य सुलभ हो जाअेगा। रसायनशास्त्र (chemistry) के सूत्र (formulae) भी अपरिवर्तित रूपमें आसानीसे लिखे जाअेंगे।

हम दोनोंका अुद्देश्य किसी व्यक्ति या संस्थापर टीकाटिप्पणी करनेका बिलकुल नहीं है। हमने अपने मौलिक सुझाव मात्र भारतीय शिक्षाशास्त्रियोंके लिअे यहाँ अंकित कर दिअे हैं जिससे महान गौरवशाली राष्ट्रकी अेकता प्रान्तीय भाषा व राष्ट्रभाषाके कार्यारूढ़ होनेपर भी सदैव अखण्डित रहेगी।

(Lipi Chart) लिपि फलक

a	ā	i	ī	u	ū	e	ai	o	au	am	ah
अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
k	kh	g	gh								
क्	ख्	ग्	घ्								
c	ch	j	jh								
च्	छ्	ज्	झ्								
ṭ	ṭh	ḍ	ḍh	ṇ							
ट्	ठ्	ड्	ढ्	ण्							
t	th	d	dh	n							
त्	थ्	द्	ध्	न्							
p	ph	b	bh	m							
प्	फ्	ब्	भ्	म्							
y	r	l	v			s'	ṣ	s	h		
य्	र्	ल्	व्			श्	ष्	स्	ह्		

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कालिदास–साहित्यने वाचा ली

— श्री लक्ष्मीशंकर व्यास

अमर साहित्यमें मोहक ध्वनि, मादक व्यंजनाके साथ होता है मधुर संगीत! यही शाश्वत साहित्य कोटि-कोटि जनोंमें नव-भावना और नवीन प्रेरणाअें देता आया है। महाकवि कालिदासकी पीयूषवर्षिणी वाणी, सहस्रों वर्षोंसे साहित्य-अमृतका पान कराती आअी है। अिसी अमृत-पुत्रकी कृतियां आज मुखर होकर अपने रहस्य स्वयम् अनावृत्त करती हैं और प्रकट करती हैं अपनी विशेषताअें। कालिदासकी अमर कृतियोंने आज वाचा ली है!

ऋतुसंहार

मैं महाकविका छः सर्गोंका लघु काव्य हूँ। ग्रीष्मसे प्रारम्भकर वसन्तके वर्णनसे मेरी परिसमाप्ति की गअी है। प्रथम पांच सर्गोंके छन्दोंमें तो समानता है, पर छठा सर्ग है विविध छन्दोंसे युक्त। सर्गके प्रारम्भिक श्लोकमें वस्तु निर्देश और प्रति सर्गान्तमें है मंगलाचरण। प्रथम दो सर्गोंमें अट्ठाअीस-अट्ठाअीस, तृतीयमें छब्बीस, चतुर्थमें अुन्नीस, पंचममें सोलह और अन्तिम सर्गमें हैं सबसे अधिक तथा विविध सैंतीस श्लोक। प्रियाको सम्बोधितकर कविने अिसमें पूरे वर्षकी प्राकृतिक सुषमाकी छवि अंकित कर ली है और चित्र खींच दिया है—विभिन्न ऋतुओंमें प्रकृतिके रमणीय व्यापारोंका तथा अुनसे पड़नेवाले मानव मनपर प्रभावोंका—नव-नव प्रेरणाओंका। लीजिअे, प्रस्तुत है अिनकी अेक झलक!

लीजिअे ग्रीष्म आ गया। सूर्यकी किरणें प्रखर हो अुठीं, चन्द्रमाकी शीतलता सुख देने लगी, जलाशयका जल क्षीण होने लगा और सन्ध्याकाल रमणीय हो गया। महाकविके शब्दोंमें—

प्रचण्ड सूर्यः स्पृहरणीय चन्द्रमाः
सदावगाह–क्षत–वारिसंचयः।
दिनान्तरम्योऽभ्युपशान्त मन्मथो
निदाघकालः समुपागतः प्रिये ॥

अिस निदाघकालमें पशु-पक्षी भी अपना वैरभाव भूल बैठे हैं। तप्त किरणोंसे तापित, हांफता हुआ टेढ़ी गतिवाला सर्प, मुंह नीचा किअे, मोरकी छांहमें जा बैठता है। सूर्यके तापसे त्रस्त मुंह बाअे, जीभ लपलपाता सिंह, निकटवर्ती हाथियोंको नहीं मारता। बनैले हाथी, सिंह तथा अन्य परस्पर विरोध वाले पशु, मित्रोंकी भांति अूंचे कछारवाली नदियोंके किनारे जा-जा सो रहे हैं। और अिसी समय जल कमल समूहोंसे भर जाते हैं। गुलाबकी सुगन्ध सुहावनी जान पड़ती है। जलका छिड़काव सुखदायक हो जाता है और चन्द्रमाकी किरणें सेवनीय हो जाती हैं। यही तो अिन शब्दोंमें कहा है—

कमल वन चिताम्बुः पाटलामोदरम्यः
सुख सलिल निषेकः सेव्य चन्द्रान्शुहारः।

ग्रीष्मके बाद वर्षा आअी। नीलकमलकी कान्तिवाले बादलोंसे आकाश आच्छादित हो गया। प्यासे पपीहोंकी प्रार्थना अब पूरी होनेको है। मयूर–मयूरीके समूह नृत्य करने लगे हैं। धरती शस्य श्यामला हो अुठी है। कोमल अंकुर वाले घासोंसे युक्त विन्ध्याचलके वनसमूह, नूतन पल्लवयुक्त वृक्षोंसे विभूषित हो गअे हैं। काले मेघोंसे युक्त रात्रिके अन्धकारमें अभिसारिकाअें अपनी मार्गभूमिको बिजलीके प्रकाशसे देखती हुअी, बड़ी अुत्कण्ठापूर्वक अपने प्रेमियोंसे मिलने जा रही हैं। अिन्द्रधनुषकी शोभासे युक्त विद्युत और जलभरे मेघ बड़े मनोहर लगते हैं। अिन दिनों स्त्रियां, कदम्बके नवीन केसरों तथा केतकीकी माला सिरपर और अर्जुन वृक्षकी मंजरियोंके आभूषण कानोंपर धारण करती हैं। नवीन जल सिंचित तापहीन वन प्रान्त, कुसुमित कदम्बोंसे प्रमुदितसा, पवन-कम्पित शाखायुक्त वृक्षोंसे नृत्य करता-सा और केतकीकी कलियोंके खिलनेसे मुक्तहास करता प्रतीत हो रहा है।

अुधर देखिअे, नवोढ़ा नाअिकाकी शरद् ऋतु भी आ पहुंची। अपनी पूरी सज-धज और आकर्षण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहित। खिले कमल जैसी मुखवाली, कासका शुभ्र वस्त्र धारण किअे, अुन्मत्त हंसोंकी ध्वनि जैसा नूपुर-निनाद करती हुअी, पीतवर्णके धान-सदृश सुकोमल शरीर और मनोहर आकृतिवाली। यही रूप तो महाकविने अिन शब्दोंमें अंकित किया है—

काशांशुका विकच पद्ममनोज्ञ वक्त्रा
सोन्माद-हंसरव-नूपुरनाद-रम्या।
आपक्वशालिललिता तनुगात्रयष्टिः
प्राप्ता शरन्नववधूरिव रम्यरूपा॥

कासके पुष्पोंसे पृथ्वी, चन्द्रमासे रात्रि, हंसोंसे सरिता कूल, श्वेत कमलोंसे सरोवर, पुष्पोंके भारसे नत वृक्षोंसे वन प्रान्त तथा मालती पुष्पोंसे अुपवन अुज्वल और धवल हो गअे हैं। युवक-युवतियोंमें नवीन अुत्साह भर गया है। परिपक्व धानोंसे ढके भूमिभाग, सुखसे बैठे गाय-बैलोंसे सुशोभित और हंस-सारसआदि जलपक्षियोंसे शब्दित हैं। गांवोंके अैसे सीमा-प्रान्त मनुष्योंके हृदयमें आनन्दकी धारा अुत्पन्न कर देते हैं।

शरत्काल बीता और आ गया हेमन्त। कमल वनकी शोभा नष्ट हो गअी। पाला पड़ने लगा। धान पक गअे। नअे पुष्प और पल्लवोंसे रमणीय हेमन्त काल आ गया। नीलकमलसे सुशोभित, हंसोंकी पंक्तिसे युक्त, सेवारोंकी शोभा सहित सरोवर आकर्षक लगने लगे।

हेमन्तके पश्चात् शिशिर ऋतु आअी, जिसमें धान तैयार हो जाते हैं और पृथ्वी सरस औखोंसे ढक जाती है। अिसके बाद ही आता है ऋतुराज बसन्त। अुस समयकी शोभाका क्या कहना—

द्रुमाः सपुष्पाः, सलिलं सपद्मं,
स्त्रियः सकाम्याः, पवनः सुगन्धिः।
सुखाः प्रदोषा दिवसाश्च रम्याः
सर्वं प्रिये चारुतरं वसन्ते॥

वृक्ष और लता-वल्लरियोंमें पुष्प आने लगते हैं तथा जलाशयोंमें कमलदल शोभित होने लगते हैं। जन-जनमें राग-अनुराग अुत्पन्न होता है। वायु सौरभसे मादक हो जाता है और सन्ध्याकी शोभा दर्शनीय हो जाती है। वसन्त ऋतुमें मोहक वातावरण चतुर्दिक छा जाता है। अिसी समय दक्षिण पवन चलता है और आम्र मंजरियोंपर गुंजार करते हुअे भ्रमर वसन्तागमनकी सूचना देते हैं तथा कोकिल प्रेमका सन्देश देती है।

मेघदूत

मुझे अिस बातका गर्व-गौरव है कि मेरे सृष्टा महाकवि कालिदासको जिन दो कृतियोंके कारण विश्व-ख्याति प्राप्त हुअी, अुनमें अेक मैं भी हूँ। मुझे साहित्य मर्मज्ञोंकी परम्परा तो खण्ड-काव्यकी संज्ञा देती है पर आधुनिक साहित्यके रसज्ञ गीतिकाव्य भी कहने लगे हैं। जो हो, मेरे अेक सौ बत्तीस पद्योंके कलेवरमें महाकविने प्रकृति सौन्दर्य, प्रेम, विरह, श्रृंगार अेवम् शोभाका अद्वितीय रस अुंड़ेल दिया है। यह अप्रतिम और अलौकिक है। पूर्व-मेघ और अुत्तर-मेघ मेरे दो खण्ड हैं। प्रथममें काव्य-कलाका कल्पनापक्ष है तो द्वितीयमें भावनापक्ष। मेरी कथा कुछ यों है—अलकापुरीमें कुबेरके यहां कार्य करनेवाला अेक यक्ष अहर्निश अपनी प्रियाके ध्यानमें निमग्न रहता है। कुबेरके यहां काम तो वह करता था, पर मन अुसका यक्षिणीके पास ही रहता है। अिस बेसुधीमें हुअी भूलके कारण कुबेरने अुसे शाप दिया—अेक वर्षतक पत्नीसे पृथक, दूर देशमें निष्कासितकी भांति रहनेका। शापके दुःखद दिवसोंको बिताता हुआ यक्ष 'आषाढ़स्य प्रथम दिवसे' के सहसा मेघमण्डलको देखकर अपना विरह निवेदन करता है। अपनी प्रियाका स्मरण करते हुअे वह मेघसे प्रार्थना करता है कि अलकापुरी जाकर वह अुसका सन्देश पहुंचा दे। रामगिरिसे अलकापुरीतकका मार्ग, वह मेघको काव्यमय ढंगसे बताता है।

मेघको दूत बनाकर भेजनेवाला मयूर, अुसे बताता है कि मार्गमें जन-पद वधुओंकी सरस आंखों द्वारा अुसका स्वागत होगा। अुसका गर्जन सुनकर मानसरोवर जानेको अुद्यत राजहंस अपनी चोंचमें कमल नाल लिअे हुअे कैलाश पर्वततक अुसके साथ-साथ आकाशमें अुड़ते हुअे जाअेंगे। यक्ष मेघसे कहता है—पहले मार्ग समझ लो, फिर मैं अपना प्यारा सन्देश भी बता दूंगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यक्ष बताता है कि किस प्रकार अिन्द्र-धनुष्यसे मेघका सांवला शरीर सौन्दर्ययुक्त हो अुठेगा। किस प्रकार किसान अुसे देख पुलकित-हर्षित हो जाअेगा और आम्रकूट पर्वतपर अुसकी कैसी आवभगत होगी। यहांसे चलनेपर अुसे विन्ध्याचल पर फैली रेवा नदी मिलेगी—जिसका जल जामुनकी कुंजोंसे बहता है और गज-मदसे सुवासित रहता है। यहांका जल पीकर, हे मेघ, जब तुम मार्गमें जलवर्षण करते आगे बढ़ोगे तो चातक तथा पंक्ति बाँधकर अुड़ती हुअी बगुलियां तुम्हारा मार्ग बना देंगी। दशार्ण देशकी राजधानी विदिशामें तुम्हें विलासके सभी प्रसाधन प्राप्त होंगे और नृत्य करती हुअी लहरों-वाली वेत्रवती नदीके तटपर गर्जनकर जलपानमें असीम आनन्द मिलेगा। फिर तुम्हें मिलेगी "नीच" नामकी वह पहाड़ी, जहां प्रेमी और विलासी मधुरात्रि व्यतीत करने जाते हैं। फिर आअेगी महाकालकी अुज्जयनी नगरी। वहां तुम सन्ध्याकी आरतीमें अपने गर्जन-तर्जनसे योग देना और रात्रिके ताण्डव नृत्यका भी आनन्द लेना। यहांसे चलनेपर गम्भीरा नदी होते हुअे तुम देवगिरि पहुंचोगे जहां स्वामी कार्तिकेयके मोर तुम्हें देखकर नाच अुठेंगे। चर्मण्यती पारकर दशपुरकी ओर बढ़ना और ब्रह्मावर्त देशपर अपनी शीतल छाया करते हुअे महाभारतकी भूमि कुरूक्षेत्रकी ओर जाना। कुरूक्षेत्र-से कनखलकी ओर बढ़ना, जहां हिमालयकी घाटियोंसे अवतीर्ण गंगाकी कलकल निनादिनी शुभ्र फेनिल धारा स्वर्गके मार्गका संकेत करती है। यहांसे तुम हिमालयके शिखरोंकी ओर बढ़ते जाना और कौंचरंध्रमेंसे होकर अुत्तरकी दिशामें जाना, जिसमें होकर हंस मान-सरोवरकी ओर जाते हैं। यहांसे अूपर अूठते ही तुम अुस कैलाश पर्वतपर पहुंचना जो शिवकी लीलाभूमि है। यहां पहुंच तुम अुस मानसरोवरका जल पीना जिसमें सुवर्ण कमल खिला करते हैं। अिसी कैलाश पर्वतकी गोदमें अलकापुरी स्थित है, जिसके अूंचे-अूंचे भव्य भवन, दूरसे ही दिखाअी पड़ते हैं।

वैभव-विलासकी सौन्दर्यपुरी अलकाका वर्णन करते हुअे यक्षने मेघसे कहा—अलकापुरीके अूंचे भवन तुम्हारे ही सदृश्य हैं। वहांकी कुलवधुअें विविध पुष्पोंसे अपना श्रृंगार करती हैं। वहां बारहमासी कमल फूलते हैं और रातें सदा चन्द्रमाके शुभ्र प्रकाशसे युक्त रहती हैं। यौवनके हास-अुल्लासका जहां अनवरत क्रम चला करता है। जहांके पथपर, सूर्योदयके समय, गिरे हुअे मन्दार पुष्प, कानोंसे खिसके कनक-कमल, हारोंसे टूटे हुअे बिखरे मोती रातमें कामिनियोंके अभिसारकी सूचना देते हैं। कुबेरके भवनके अुत्तरकी दिशामें अिन्द्र-धनुष्यके समान गोल फाटकवाला घर ही मेरा निवास है जिसके पास अेक छोटासा कल्पवृक्ष दिखाअी देगा। वहां पहुंचकर धरतीपर करवट लेती मेरी विरह-विदग्धा प्रियाके पास जाना और अुससे कहना—मैं तुम्हारे पतिका प्रिय मित्र मेघ, तुम्हारे पास अुनका सन्देश लेकर आया हूँ। तुम्हारा वियोगी साथी रामगिरिमें कुशलसे है और तुम्हारी कुशल जानना चाहता है। देखो! आगामी देवोत्थान अेकादशीको जब विष्णु भगवान शेषनागकी शैय्यासे अुठेंगे, अुसी दिन अुसका शाप भी बीत जाअेगा। यक्षिणीका स्वरूप वर्णन करते हुअे वह कहता है कि सुन्दरतामें अुसके समान कोअी नहीं। ब्रह्माकी वह सर्वश्रेष्ठ कृति है:—

> तन्वी श्यामा शिखरि दशना पक्वबिम्बाधरोष्ठी
> मध्ये क्षामा चकित हरिणीप्रेक्षणा निम्ननाभिः।
> श्रोणीभारादलसगमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्यां
> या तत्र स्याद्युवति विषये सृष्टिराद्येव धातुः।।

यक्षकी ये बातें सुन मनचाहा रूप धारण करने वाला वह बादल, रामगिरिसे अलकापुरी पहुंचा और बताअे हुअे चिन्होंसे यक्ष भवनमें गया। अुसने यक्षिणी से वह प्यार-पगा सन्देश सुनाया, जिसे सुन यक्षिणी फूली न समाअी। अुधर कुबेरको जब यह अितिवृत विदित हुआ तो अुसने यक्षको शापमुक्त कर दिया।

कुमार सम्भव

महाकवि कालिदासके दो महाकाव्योंमें अेक मैं हूं। प्रारम्भमें मेरे आठ ही सर्ग थे, पर बादमें मेरा कलेवर सत्रह सर्गका हो गया। मूलके आठ सर्गोंपर ही मल्लिनाथने टीका लिखी, अिससे अुक्त तथ्य स्पष्ट हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही नहीं, कुमारसम्भव का प्रतिपाद्य भी अुस सीमाको यहीं स्पर्श लेता है, जहांसे अिस बातका स्पष्ट संकेत मिल जाता है कि अब कुमारका जन्म होगा। शिव-पार्वतीकी प्रणय-कथा तथा पार्वतीकी गहन तपस्याका सुपरिणाम ही मेरी मुख्य कथा वस्तु है। प्रथम सर्गका हिमालय-वर्णन, तृतीय सर्गमें वसन्त-वर्णन, चतुर्थमें शिवके त्रिनेत्रसे कामदेवके भस्मावशेष होनेपर रतिविलाप तथा पंचम सर्गमें पार्वतीकी कठोर साधना अेवम् पार्वती तथा ब्रह्मचारी रूपमें शिवका संवाद, मेरे दो अत्यन्त रसपूर्ण और महत्वपूर्ण स्थल हैं।

सम्पूर्ण काव्यकी कथाका संक्षिप्त सूत्र अिस प्रकार है—हिमालयके यहां पार्वतीजीका जन्म होता है। अुधर ब्रह्माके वरदानसे तारकासुरने तीनों लोकोंपर दानव राज्यका आधिपत्य कर लिया था। देवगण त्रस्त थे और अिन्द्रके प्रभुत्वकी समाप्ति हो चुकी थी। जब देवताओंने ब्रह्मासे बड़ा अनुनय-विनय किया तो अुन्होंने बताया कि भगवान शंकरका पुत्र ही तारकासुरका वध कर सकता है। पर यह कैसे सम्भव था? कठोर साधनामें संलग्न शिवमें काम भावना अुत्पन्न करने, अिन्द्रकी आज्ञासे कामदेव रतिसहित अपनी सम्पूर्ण शक्ति लेकर गया। जब भगवान शंकरने अपने योग साधनमें यह विघ्न पड़ते देखा तो त्रिनेत्रसे कामदेवको भस्म कर डाला। अिसके पश्चात् प्रारम्भ होती है पार्वतीकी कठोर तपस्या। अिससे द्रवीभूत हो शंकर स्वयम् ब्रह्मचारीका रूप धरकर अुनकी परीक्षा लेने आते हैं और अुमाकी तपस्या सफल होती है। शंकर-पार्वती परिणय होता है और होता है स्वामी कुमारका जन्म। यही स्वामी कार्तिकेयके रूपमें देवताओंकी सेनाका नेतृत्व करते हैं जिससे तारकासुरका वध होता है और होता है स्वर्गपर पुनः अिन्द्रका आधिपत्य।

मेरे प्रथम सर्गमें हिमालय वर्णन अत्यधिक सुन्दर बन पड़ा है और अिसकी प्रशंसा संसारके सभी काव्य-मर्मज्ञ करते हैं। अेक-दो अुदाहरण आप भी देखिअे—

अत्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरौ तोयनिधीव गाह्य स्थितः पृथिव्या अिव मान दण्डः।

भारतके अुत्तरमें देवताके समान पूजनीय महान पर्वत हिमालय है, जो पूर्व अेवम् पश्चिमके समुद्रोंतक विस्तृत है। अैसा प्रतीत होता है कि अिसका निर्माण, पृथ्वीको नापने-तौलनेके लिअे मानदण्डके रूपमें हुआ है। असंख्य रत्न-अुत्पन्न करनेवाले हिमालयमें हिमसे अुसकी शोभा कम नहीं हुअी प्रत्युत् चन्द्र कलंककी भांति शोभित है। अिसके अनेक शिखरोंपर गेरू आदि धातुओंकी बहुरंगी शिलाअें हैं जिनका बिम्ब बादलोंपर पड़नेसे सान्ध्यकालीन दृश्य अुपस्थित हो जाता है। अिससे अप्सराओंको भ्रम हो जाता है और वे समयके पूर्व ही संगीत-नृत्यके निमित्त प्रसाधन-आरम्भ कर देती हैं। अिसके शिखर अितने अूंचे हैं कि मेघ नीचे ही रह जाते हैं। फल यह होता है कि नीचे वर्षा होती रहती है और अूपरके शिखरपर सूर्य चमकता रहता है। यहां अन्धकारमें प्रकाश करनेवाली वनस्पतियां होती हैं और वनश्रीकी शोभा देखते ही बनती है। अिसके अुत्तुंग शिखरोंके सरोवरोंमें खिलनेवाले कमलोंको स्वयम् सप्तर्षिगण पूजन-अर्चनके लिअे ले जाते हैं। शेषको सूर्य अपनी किरणें अूंची कर खिलाता है। महाकविके शब्दोंमें—

सप्तर्षि-हस्तावचितावशेषाण्यधो विवस्वान्परिवर्तमानः
पद्मानि यस्याग्रसरोरुहाणि प्रबोधयत्यूर्ध्वमुखैर्मयूखैः

रघुवंश

कालिदासके काव्योंका सिरमौर और स्वर्णकलश होनेका मुझे ही सौभाग्य प्राप्त है। यह मेरी गर्वोक्ति नहीं, सहज अभिव्यक्ति है। रघुवंशकी गौरव-गाथाका वर्णन मेरे ही अुन्नीस सर्गोंके वृहत् कलेवरमें हुआ है, जिसमें कुल मिलाकर चौदह सौ चार श्लोक हैं। सच पूछिअे तो मैं चरित्रोंकी मनोहारी चित्रशाला हूं जिसमें दिलीप, रघु, अज और रामके चित्र अत्यधिक अुदात्त और लोकरंजक हैं। कहना न होगा कि अिनमें रामका स्वरूप सर्वश्रेष्ठ है। मेरे प्रथम दो सर्गोंमें पुत्रविहीन राजा दिलीपकी नन्दिनी सेवाका त्याग-तपस्यापूर्ण चित्रण है। तृतीयसे अष्टम सर्गतक रघुकी वीरता और दान-शीलताके भव्यचित्रके साथ अज अिन्दुमती स्वयंवर तथा अनेक प्रेम और विरहके करुण प्रसंग हैं। नवम् सर्गमें दशरथ और दससे पन्द्रह सर्गोंमें रामके अुदात्त चरित्रका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोहारी अेवम् अत्यन्त प्रभावकारी चित्रण है। शेष चार सर्गोंमें कुशसे लेकर अग्निवर्णतकके बाअिस राजाओंके वर्णन अेवम् विवरण हैं। प्रतापी राजा दिलीपके त्याग-तपस्यापूर्ण जीवनकी कठोर साधनासे प्रारम्भकर तथा अग्निवर्णके विलासमय जीवनकी झांकी दिखाकर मेरे करुण अन्तका अेक विशेष सन्देश है। भौतिकताके चरम लक्ष्यपर पहुंचकर भी आध्यात्मिकताके बिना हमारा जीवन सुखी अेवम् समृद्ध नहीं हो सकता। अिसका पालन करनेपर दिलीपके प्रतापी वंशधरोंकी भांति वर्धमान कीर्ति अेवम् गौरव प्राप्त होगा और विपरीत चलनेपर अग्निवर्ण जैसा भौतिक अेवम् विलासमय जीवन पतन तथा करुण अन्तकी ओर।

मेरे अुन्नीस सर्गोंमें सौन्दर्य-प्रेम, शौर्य-वीर्य, क्षमा-दया, प्रेम-विरहके अनेकानेक प्रसंग भरे पड़े हैं। समझमें नहीं आता है किसे सुनाअूं और किसे न सुनाअूं। सभी तो काव्य-रससे भरे-पूरे और सौन्दर्य-श्रृंगारसे छलके पड़ते हैं। अेक ओर राजा दिलीपकी नन्दिनी-सेवाकी संलग्नता और तपस्या है तो दूसरी ओर रघु अज और रामके पराक्रम अेवम् प्रेमके सरस भावसे ओत-प्रोत प्रसंग हैं। सम्प्रति मैं अपने अेक प्रसिद्ध कथा-प्रसंग अिन्दुमती स्वयंवरका अेक चित्र अुपस्थितकर विराम लूंगा।

अिस स्वयंवरकी शोभा निराली थी। सजे मंचोंपर बैठे राजागण, विमानोंपर बैठे देवगण जैसे प्रतीत हो रहे थे। जब अज स्वयंवर मण्डपमें पहुंचे तो वे साक्षात कामदेवके समान प्रतीत हो रहे थे। अिन्हें देख राजाओंने अिन्दुमतीको पानेकी आशा छोड़ दी। अुधर विवाहका वेश धारण किअे अिन्दुमतीका आगमन होता है। वह कन्या ब्रह्माकी रचनाका अुत्कृष्ट निदर्शन थी, जिसकी ओर सैकड़ों नेत्र केन्द्रित थे। सभीके मन तो अुसके पास चले गअे थे और मंचपर रह गअे थे अुनके शरीर-मात्र। वर चुननेके लिअे मण्डपमें आअी सौन्दर्यकी साक्षात् प्रतिमूर्ति अिन्दुमतीके प्रति विभिन्न राजाओंकी भाव-भंगिमाअें तथा चेष्टाअें गम्भीर अर्थोंको व्यक्त करने लगीं। अिन चेष्टाओंकी अभिव्यक्तिके माध्यमसे अुनका सजीव शरीर और भावनाओंसे स्पंदित-आन्दोलित अन्तस् स्पष्ट हो अुठा। अिसी बीच राजाओंके वंशोंके वृतकी अन्तःपुरकी सचतुर प्रतिहारी सुनन्दा, अिन्दुमतीको विभिन्न नरेशोंके निकट ले जाती है और अुनका रूप-गुण-गौरव वर्णन करती है। यह सुनती जिन राजाओंको छोड़ती हुअी अिन्दुमती आगे बढ़ती है अुनकी क्या दशा होती है, यह महाकविके शब्दोंमें सुनिअे—

संचारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिम्वरा सा।
नरेन्द्र मार्गाट्ट अिव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः॥

रात्रिको जब दीपक लेकर हम चलते हैं तो राज-पथके जो भवन पीछे छूटते जाते हैं वे अन्धकारमें पड़ जाते हैं, ठीक अिसी प्रकार जिन नरेशोंको छोड़ अिन्दुमती आगे बढ़ गअी, अुनके मुख श्याम और शोकग्रस्त हो गअे! जब वह रघुके सौन्दर्यवान् पुत्र अजके पास पहुंचती है और अुनका वंश-वर्णन सुनती है तो संकोच छोड़ अपने हँसते हुअे नेत्रसे दृष्टिपात करती हुअी सुनन्दा द्वारा वरमाला पहनाती है। नगरनिवासी कह अुठते हैं-यह तो चांदनी और चन्द्रमाका मेल हुआ। स्वयंवर मण्डपमें अेक ओर अजके पक्षवाले हंसते हुअे खड़े थे तो दूसरी ओर अुदास मुखवाले अन्य राजा। स्वयंवर मण्डप अुस सरोवरके समान लग रहा था जिसमें प्रभातकालमें कमल खिल रहे और कुमुदिनी मुंदी हुअी खड़ी थी।

अभिज्ञान शाकुंतल

मेरी रचनाकर महाकवि कालिदास अमर हो गअे और मुझे भी अमरत्व प्रदान किया। सरस्वतीके अुसी वरदपुत्रकी वाणीका मैं प्रसाद हूं। अपने सौन्दर्यपर स्वयं विमुग्ध हूं तो अपनी विश्वविश्रुती प्रशंसाके लिअे लज्जाशील भी। मेरे काव्य सौन्दर्यको समस्त संसारके साहित्य प्रेमियोंने मुक्तकण्ठसे सराहा है, यह मेरे लिअे गर्वकी वस्तु है। प्राच्य ही नहीं, पाश्चात्य देशके लोगोंने भी मेरे काव्य सौन्दर्यकी प्रशंसा की है। अेकने तो मुझे 'पृथ्वीपर स्वर्ग' जैसी अलौकिक वस्तुकी संज्ञा दी है। मैं क्या हूं, जो कुछ हूं, आपके सम्मुख हूं। महाकविकी कृति हूं। भारतके सौन्दर्य और प्रेम भावनाकी प्रतीक हूं। आध्यात्मिक और भौतिक जीवनकी गंगा-यमुना हूँ। काव्योंमें नाटकको सुन्दर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहा गया है और नाटकोंमें सर्वसुन्दरकी संज्ञा मुझे ही दी गअी है।

मेरे माध्यमसे प्रेम, श्रृंगार तथा प्राचीन भारतीय नागरिक अेवम् तापस जीवनकी सुन्दर झलक दी गअी है। पर मेरे निरूपण और आयोजनका सबसे महत्वपूर्ण सन्देश है–मनुष्य तथा प्रकृतिका तादात्म्य अेवम् पारस्परिक सहयोग। विश्वामित्रकी तपस्या भंग करनेके लिअे आअी मेनका, कन्या अुत्पन्न होते ही अुसे वनमें छोड़ स्वर्ग चली जाती है। अुसका पोषण वनके पक्षी अुस समयतक करते हैं जबतक कण्व ऋषि अुसे अपने आश्रममें नहीं ले जाते। पक्षियों द्वारा पोषित कन्याका नामकरण वे शकुन्तला रखते हैं। अनुसूया और प्रियंवदा अुसकी दो सखियां हैं और माधवी, अतिमुक्तक और नवमालिका लताअें भी अुसे अति प्रिय हैं। बकुल, केसर तथा सहकारके वृक्षोंके अतिरिक्त आश्रमके अन्य पशु-पक्षी भी अुसके साथी हैं। अिन सभी को तत्परतासे पालना और अुनका पोषण अुनका कर्तव्य था। अिसी पवित्र और सौन्दर्यपूर्ण वातावरणमें शकुन्तला युवती होती है और आखेटके लिअे आअे राजा दुष्यन्तसे गान्धर्व विवाह कर लेती है। अेक दिन जब वह अपने प्रियके ध्यानमें निमग्न थी, दुर्वासा ऋषि आ धमके। अपने निरादरपर अुस क्रोधी मुनिने शाप दे दिया–'जिसे तू याद कर रही है, वह तुझे भूल जाअेगा।' और यही हुआ भी। दुष्यन्तकी राजसभामें पुत्रको जन्म देनेवाली शकुन्तला जब पहुंचती है तो राजा अुसे नहीं पहचानता। अुसके नामकी अंगूठी शकुन्तलाकी अुंगलीसे मार्गमें ही गिर चुकी है। निरादृता शकुन्तला मारीच मुनिके आश्रममें जाती है और वहां अुसे भरत जैसा चक्रवर्ती पुत्र होता है। अंगूठी मिलती है और दुष्यन्तको सब कुछ स्मरण हो जाता है। अन्तमें दुष्यन्त-शकुन्तलाका सुखद मिलन होता है।

मेरी कथा सात अंकोंमें वर्णित है पर मेरा चतुर्थ अंक और अुसके चार श्लोक अत्यधिक सुन्दर बन पड़े हैं। अब मैं अिन्हींकी कुछ चर्चाकर अपना कथन समाप्त करूंगा। शकुन्तलाको पतिगृह विदा किया जा रहा है। अिस करुण अवसरपर आश्रमके निवासियोंके अतिरिक्त तरु-लता, वनदेवी और पशु-पक्षी भी शोकमग्न हैं और शकुन्तलाकी विदाअीके अवसरपर अपनी भेंट अुपस्थित कर रहे हैं–अपूर्व स्नेह और प्रेम-सहित। कण्व मुनि जैसे सिद्ध भी, अिस अवसरपर करुणापूर्ण हो गअे हैं और वन देवता तथा तपोवनके वृक्षोंसे कहते हैं––

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या
नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।
आद्ये वः कुसुम प्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः
सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्॥

जो शकुन्तला वृक्ष-लतामें जलसिंचन किअे बिना स्वयम् जल न ग्रहण करती थी, जो आभूषणप्रिय होनेपर भी तुम्हारे स्नेहवश, तुम्हारे पत्र-पुष्पोंको नहीं तोड़ती थी, जो तुम्हारी नव कलिकाओंको देख फूली नहीं समाती थी, वही शकुन्तला आज अपने पतिके घर जा रही है। तुम सभी प्रेमसे अिसे विदा दो।

मालविकाग्निमित्र

अमर नाटककार और रसमिद्ध कवि कालिदास द्वारा रचित नाटक-त्रयमें मैं भी अेक हूं। मेरा स्वरूप पांच अंकोंका है और अिसमें विदिशाके राजा अग्निमित्र तथा सौन्दर्य संगीत और नृत्यकी मूर्ति मालविकाके प्रेमकी कथा वर्णित है। यों तो नाटककी सम्पूर्ण कथा श्रृंगार वियोगसे ओतप्रोत है–पर नृत्यके समय मालविकाकी सौन्दर्यमूर्ति जिस प्रकार सजीव हो अुठती है, वह दर्शनीय है। शर्मिष्ठाके मध्यमलयकी चौपदीमें छलिक अभिनय-का संगीत अेवम् नाट्य जब मालविका अिन शब्दोंमें प्रारम्भ करती है तो अग्निमित्रका मन मयूर नाच अुठता है:–

दुर्लभ प्रिय है, हृदय ! छोड़ दे तू मिलनेकी आशा,
पर क्यों बायां नैन फड़कता, कुछ-कुछ लेकर आशा।
बहुत दिनोंपर देख रही हूँ; पर कैसे अपनाअूं।
नाथ ! विवश हूँ पर अपनी ही समझो, मैं बलि जाअूं॥

राजा मन-ही-मन मालविकाके रूपको देखकर कह अुठता है–वाह यह तो सिरसे पैरतक सर्वांगसुन्दरी है। अिसके विशाल नेत्र, शरद्चन्द्रकी तरह देदीप्यमान अुसका मुखमण्डल, कन्धोंपर तनिक झुकी भुजाअें, अुठ-अुभरता वक्ष, चिकनी कोख, कमनीय कटि, पुष्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नितम्ब और थोड़ी झुकी हुअी दोनों पैरोंकी अंगलियां। बस अैसी जान पड़ती है कि अिसका शरीर अिसके नाट्य-गुरू गणेदासजीके कहनेपर ही गढ़ा गया हो।

विक्रमोर्वशी

मेरे नाट्यकी कथावस्तु भी पांच अंकोंमें ही प्रदर्शित है। राजा पुरुरवा और अुर्वशीके प्रणय अेवम् विरह निवेदनकी मार्मिक कथा मैं अपने अन्तरालमें अंकित किअे हूं। सूर्यकी अुपासनाकर आकाशसे लौटते समय पुरूरवाको विदित होता है कि राक्षस अुर्वशीको बलपूर्वक हरण कर ले गअे हैं। वह तत्काल अुनका पीछाकर अुस अनिंद्य सुन्दरीको अपने रथपर मूर्छित अवस्थामें ही अप्सराओंके अुस समूहमें पहुंचा देता है जो अुसके वियोगमें दुःखित हैं। रथमें ही जब अुर्वशीको चेतना आती है तो वह अपने अुद्धारक और परम सौन्दर्यवान् पुरूरवापर मुग्ध हो जाती है। राजा भी अुसपर मोहित होकर वियोग वेदना सहता है। मिलन-विरहकी आंख-मिचौनी, अन्तमें दोनोंके स्थाअी मिलनमें परिणत होती है। लीजिअे अिसकी कथाका अेक प्रसंग--

प्रमदवनमें विरह वेदनासे विदग्ध पुरुरवा जब अुर्वशीके ध्यानमें ही मग्न था कि आकाश मार्गसे अुर्वशी अपनी सखी चित्ररेखाके साथ वहां अवतरित होती है और कहती है–महाराजकी जय हो!

अग्निमित्र--सुन्दरी! जो 'जय' शब्द तुमने सहस्र नेत्रवाले अिन्द्रको छोड़कर आजतक किसी दूसरे पुरुषके लिअे नहीं कहा था, वह आज तुमने मेरे लिअे कह दिया, अिसलिअे सचमुच मुझे आज जय मिल गअी।

स्वर्गलोकमें भरतमुनिके अष्ट रसपूर्ण लक्ष्मी-स्वयंवर नाटकका प्रसंग भी अत्यन्त अलौकिक है जिसमें पुरूरवाके प्रेममें पगी, अपने नाट्याभिनयमें 'पुरुषोत्तम' के स्थानपर 'पुरुरवा' कह बैठती है और अुसे शापित होते-होते अिन्द्र बचा लेते हैं तथा अपने सहायक अेवम् मित्र पुरूरवा और अुर्वशीके प्रेमको सफल बनानेमें सहायक होते हैं। गन्धमादन पर्वतपर पुरूरवा–अुर्वशीका विहार तथा वियोग, मेरे नाट्यमें अत्यन्त मार्मिक अेवम् श्रृंगार रससे ओत-प्रोत है। और अन्तमें भरतवाक्यके अन्तर्गत महाकविकी कामना भी कुछ कम महत्वपूर्ण नहीं, जिसमें वे लक्ष्मी-सरस्वतीका पारस्परिक विरोध दूर करनेकी याचना करते हैं और कहते हैं कि सज्जनोंके कल्याणके लिअे ये दोनों अेक साथ रहने लगें--

परस्परं विरोधिन्योरके संश्रय दुर्लभम्।
संगतं श्री सरस्वत्योर्भूतयेऽस्तु सदा सताम्।

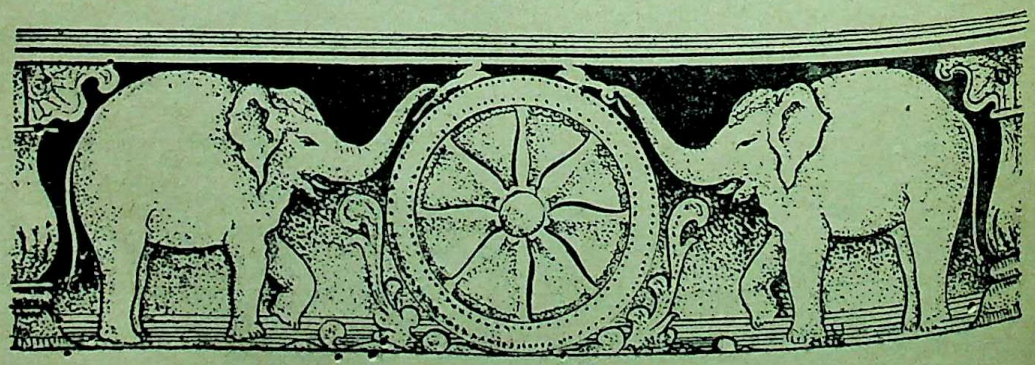

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंगलाके कुछ आधुनिक मुसलमान कवियोंकी कविता

—श्री मन्मथनाथ गुप्त

भारतके दो टुकड़े होनेके साथ-साथ बंगालके भी दो टुकड़े हो गअे। जब अिस प्रकार बंगालके दो टुकड़े किअे गअे, तो बहुतसे लोगोंके मनमें यह शंका हुअी कि कहीं अिसके फलस्वरूप पूर्व बंगाल या पूर्वी पाकिस्तानकी भाषा बदल न जाअे।

बात यह है कि स्वयम् पूर्व बंगालमें कुछ अैसे लोग मौजूद थे, जो अुर्दूको पूर्व बंगालकी भाषा बनाना चाहते थे। मजेकी बात यह है कि अैसे अुत्साही लोगोंमें कअी अैसे लोग भी थे, जिनको अुर्दूका अलिफ-बे भी नहीं आता था। पर अिससे अुत्साहमें क्यों फर्क आता? जब हिन्दीके लिअे अुत्साह दिखानेवाले लोगोंमें पंजाबके सैकड़ों अैसे लोग हैं, जो अबतक अुर्दूके ही अखबार पढ़ते हैं, तो फिर अुत्साहकी कोअी सीमा-रेखा कैसे मानी जाअे?

अैसे अुत्साही लोगोंने पूर्व बंगालमें बहुत चेष्टा की कि अुर्दू चल जाअे। स्वयम् जिन्ना साहबने अिसके लिअे पूर्व बंगालकी यात्रा की, पर काम किसी तरह नहीं बना और बंगलाके लिअे जन-आन्दोलन चल पड़ा। पाकिस्तानकी सरकारमें पश्चिम पाकिस्तानके लोगोंकी ही पहले-पहल प्रधानता रही। सारे अूंचे कर्मचारी पश्चिम पाकिस्तानसे ही भेजे जाते थे, जो पूर्व पाकिस्तानियोंको बहुत घृणाकी दृष्टिसे देखते थे।

अब मजेकी बात यह थी कि पाकिस्तानमें आबादीकी दृष्टिसे पूर्व पाकिस्तानियोंकी ही प्रधानता थी। अिस प्रकारसे आर्थिक, सामाजिक तथा अन्य कारणोंसे पूर्व पाकिस्तान और पश्चिम पाकिस्तानमें प्रतिस्पर्धाकी भावना बढ़ी, जिसका नतीजा यह हुआ कि बंगला भाषाके आन्दोलनको जोर पहुँचा।

और भी नतीजे हुअे। कुछ नतीजे अैसे हैं, जो शायद आगे चलकर हों, पर यहाँ अुनके अुल्लेखकी आवश्यकता नहीं है। बंगला भाषाके लिअे आन्दोलन जन-आन्दोलन विशेषकर छात्र-आन्दोलनका अविच्छेद्य अंग बन गया। राजनीतिक दलोंने भी अिसे बल पहुंचाया। धीरे-धीरे यह आन्दोलन अितना बढ़ गया कि सरकारकी ओरसे अिसका विरोध आरम्भ हो गया। पर लगभग साढ़े तीन करोड़ लोगोंकी आशा और आकांक्षा अिस तरह पैरोंतले कुचली नहीं जा सकती थी।

सारे पूर्वी पाकिस्तानमें जुलूस निकलते रहे और सभाअें होती रहीं। अिस सम्बन्धमें कुछ अप्रासंगिक होते हुअे भी यह बता दिया जाअे कि पूर्व बंगालके लोग हमेशासे अधिक जोशीले रहे हैं और अविभक्त बंगालके क्रान्तिकारी आन्दोलनमें पूर्व बंगालके लोगोंका बड़ा भारी हिस्सा रहा है।

अैसे लोग आसानीसे दबाअे नहीं जा सकते थे। जब छात्रोंका अेक जुलूस "बंगला पाकिस्तानकी राष्ट्र-भाषा हो" के नारे लगाता हुआ सचिवालयकी ओर बढ़ रहा था, तो अुसपर गोली चलाअी गअी और पांच मुसलमान युवक शहीद हो गअे। अब तो आन्दोलन और भी भयंकर हो गया। अबतक अिस आन्दोलनको अेक ही बातकी कसर थी, पर शहीदोंका खून मिलनेसे अब वह भी कसर दूर हो गअी।

थोड़ेमें अिसका नतीजा यह हुआ कि बंगला पूर्व पाकिस्तानकी सरकारी भाषाके रूपमें स्वीकृत हो गअी, अिसके अलावा वह अखिल पाकिस्तानकी दो राष्ट्र-भाषाओंमें अेक राष्ट्रभाषा हो गअी। अिसीलिअे बंगला भाषा, और यह भी कहना चाहिअे साहित्यके अितिहासमें अुक्त पांच शहीदोंका स्थान बहुत ही अूंचा है। यदि सच कहा जाअे तो अिन लोगोंके त्यागके कारण ही बंगला भाषा अिस समय सात करोड़ लोगोंकी मातृभाषा है। अिन लोगोंने साढ़े तीन करोड़ लोगोंका दिल बंगला भाषाके लिअे फिरसे जीत लिया। अस्तु।

पूर्व बंगालमें भी बराबर बंगलामें पुस्तकें और पत्र-पत्रिकाअें निकल रही हैं और कअी अच्छे लेखक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मौजूद हैं। पूर्व बंगालके कहानी लेखकोंके अेक कहानी-संग्रहको देखकर कुछ लोगोंने यह आशा प्रकट की थी कि बंगला साहित्यमें जो थोड़ा बहुत गतिरोध दिखाअी देता है, वह अुधरसे आअी हुअी हवासे ही दूर होगा।

देशके टुकड़ोंमें बंट जानेसे अिधरके बंगला भाषियोंमें और अुधरके बंगला भाषियोंमें जो मनमुटाव-सा आ गया था, वह बहुत कुछ दूर हो रहा है। अब दोनों तरफके लोग अिस सत्यको धीरे-धीरे मानते जा रहे हैं कि दो राष्ट्र होते हुअे भी अेक भाषा होना कोअी अनहोनी बात नहीं है। आस्ट्रिया और जर्मनीकी भाषा जर्मन है, बेल्जियम और फ्रांसकी भाषा फ्रेंच है, अित्यादि अित्यादि। स्वयम् अंग्रेजी भाषी जिनसे हमारा अधिक परिचय रहा है, कअी राष्ट्रोंमें बंटे हुअे हैं।

अिसलिअे यदि बंगला सीमान्तके अिस ओर और अुस ओर दोनों देशोंमें बोली और पढ़ी लिखी जाती है, तो अिसमें कोअी आश्चर्यकी बात नहीं है। अब अिस लेखमें अभी हालमें प्रकाशित बंगला पत्रिकाओंकी पूजा संख्यामें (दशहरेके अवसरपर) प्रकाशित कुछ मुस्लिम कवियोंकी कविताअें पेश की जाअेंगी। यह द्रष्टव्य है कि अिन लोगोंने अपनी भाषाको अरबी या फारसी शब्दोंसे क्लिष्ट बनानेकी चेष्टा नहीं की है।

अिस समयके बंगाली मुसलमान कवियोंमें श्री हुमायूं कबीर ही प्रमुख हैं। पर अुनकी कविता हम अन्तमें देंगे। पहले मोहम्मद महफूजुल्लाकी अेक कविता लीजिअे:—

सुदूर अरण्य थेके मेसे आसे सुरेर झंकार,
बसन्त रात्रिर तीरे तन मन भरे वेदनाय,
भुलेछि प्रकृति प्रेम दीर्घ दिन, तार प्रतीक्षाय
स्वप्नजाता मायाविनी व्यथा दिअे गेछे बार-बार

"सुदूर अरण्यसे सुरका झंकार तिरता हुआ आता है। वसन्त रात्रिके तटपर तन मन वेदनासे भर जाते हैं। अुसकी प्रतिक्षामें बहुत दिनोंसे प्रकृतिका प्रेम भूल गया हूँ। स्वप्नमें आअी हुअी मायाविनी बार-बार अेक ही निमेषमें हृदयके अवरुद्ध द्वारको खोलकर व्यथा दे गअी है। मैं नहीं जानता कि चांदनीसे सने हुअे अुसके शुभ्र अंग प्रत्यंग कैसे हैं, या कि वह जंगली फूल ही है। केवल अुसके देहके अैश्वर्यने स्वप्नके आलोकमें मेरी आंखको मुग्ध किया है।

वह क्षण वसन्त आज पृथ्वीपर फिर अकेले लौट आया, पर स्वप्नमें देखी हुअी वह परिचिता नारी नहीं आअी। चांदनीसे कातर मन भूल गया है कि अरण्यका सुर बहुत युग-युगान्ततक अुसकी प्रतीक्षामें ध्यान-मग्न है। बस वह अकेली अेक दिन सुदूर स्वप्नके अरण्य तटपर विलीन हो गअी है, अैसे मानो जैसे वह कोअी शुभ्र रेखा हो।"

अेक और मुस्लिम कवि अशरफ सिद्दीकीकी कविता ली जाअे। वे लिखते हैं:—

केंदो ना केंदो ना मा गो, अअी देखो आकन्दर मूल
अेखनो कंटके मोड़ा। सन्यासी तो बलेछे तोमाके
कंटक फूल होबे। अेअी नदी बअिबे अुजान।

अर्थात् माँ रो मत! वह देख आकन्द वृक्षकी जड़ें अभीतक कांटेमें मुड़ी हुअी हैं। सन्यासीने तुम्हें तो बताया है कि यह कांटा फूल बनकर रहेगा और यह नदी अुद्गमकी ओर बहेगी। प्रत्येक दिशामें लाल और नीले कमल कृपाण अुठाकर खड़े होंगे, अेक आँखवाले राजाकी भूल धीरे-धीरे मिट जाअेगी। देखो मोहसे मुक्त आत्मशक्ति आज आकन्द वृक्षकी शाखामें किस शौर्यसे काँप रही है। सूर्य भयसे अकड़सा रहा है। ससागरा पृथ्वी भय-चकित होकर दूरकी ओर घूर रही है। नील आकाश सफेद पड़ गया, पैरों-पैरोंमें आंधीकी तुरही बज रही है। वह सुनो नगाड़ा बज रहा है, माँ रोओ मत, फूल खिला है। आज देखो जनता-रूपी समुद्र और नदी अुद्गमकी ओर बह रही है।"

यह स्पष्ट है कि अशरफ सिद्दीकी वर्तमान समाज व्यवस्थासे असन्तुष्ट हैं, पर वे समझते हैं कि जनता जग चुकी है और वह अपने अधिकार लेकर ही रहेगी। अिस कविताकी भाषामें कोअी अैसी बात नहीं है, जिससे कि किसी प्रकार यह कहा जा सके कि यह अेक मुसलमानकी लिखी हुअी है।

अब हम अन्तमें श्री हुमायूं कबीरकी कविताका कुछ अंश मूल सहित यहाँ प्रकाशित करते हैं:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शेष होलो यौवनेर दिन
अतृप्त आकांक्षा यत, यत छिल दुःसह दुराशा
आजी हेमन्तेर श्रान्त गोधूलिर स्तिमित आलोके
विषण्ण दिगन्त शेषे प्रियमान छाया मूर्तिसम
विलीन हअिया आसे।

अर्थात् यौवनके दिन अब समाप्त हुअे। जितनी अतृप्त आकांक्षाअें तथा दुःसह दुराशाअें थीं, वे आज अिस विषाद भर क्षितिजके अन्तमें हेमन्तकी श्रान्त गोधूलिकी धीमी रोशनीमें छायामूर्तिकी तरह विलीन होती हैं।

"छः ऋतुओंने जीवनके सारे वर्षमें केलि की है, किशोरावस्था वसन्तकी तरह स्वप्नातुर आंखोंको भर करके पुष्पित चेतना लाअी थी। धरतीकी धूल, वर्ण, छन्द रूप, रस, गन्धमें आनन्दसे पूर्ण हो गअी थी। यौवन रूपी ग्रीष्म ऋतुकी जलनमें कुहासे भाग गअे। परम पुलकमें दुस्सह वेदना भी मिली हुअी थी। हृदयके रन्ध्र-रन्ध्रमें तीव्र अुन्मादकी भावना व्याप्त थी। जब सहनकी सीमा रेखाको अतिक्रमकर चित्त विभ्रान्त और विवश हो गया, अुस समय अस्तित्वके शेष प्रान्तमें अन्तर्दाहको मिटानेके लिअे श्रावणका दुर्वार वर्षण अेकाअेक शुरू हो गया।

"निष्ठुर सृष्टिके बीचमें कठिन पाषाणके बन्धनोंमें करुणाकी फल्गुछाया किस सुप्तिके अन्दर गुप्त थी? किसके अिंगित स्नेहके प्रलेपकी तरह अन्तरकी जितनी तीव्र ज्वाला जैसे मन्त्रसे लुप्त हो गअी? जाग्रत चेतनाके स्तरमें दुःखका दहन बुझ आता है, फिर भी अवचेतनामें व्यथा छायाकी तरह जागती रहती है। स्नेह, ममता, प्रीतिके अन्दर शान्त दीर्घछन्दा सुर बजता रहता है। शरत्के जलहीन मेघमें दीप्ति है, दाह नहीं है। बिजली चकाचौंध कर देती है, पर वज्रका रुद्र निर्घोष नहीं है। जीवनकी स्रोतधारा अपनी परिपूर्णतामें अवसन्न होकर कहीं पर समाप्तिका अिंगित खोजती है।"

अिस प्रकारसे जो थोड़ेसे नमूने पेश किअे गअे, अुनसे यह स्पष्ट है कि बंगला भाषा अेक और अविभाज्य है। यदि बंगालके मुसलमान अरबी, फारसी, तुर्की और अुर्दू पढ़ें, तो अुससे बंगला साहित्यको ही लाभ होगा। अुसका अधिकसे अधिक स्वागत करना चाहिअे।

आज बंगालके सुलझे हुअे लोग अिन बातोंको अच्छी तरह समझते हैं। राजनैतिक अुथल-पुथलोंका भाषाओंपर प्रभाव पड़ता है, पर यदि भाषामें शक्ति है और अुसका आधार बिल्कुल तहस-नहस नहीं कर दिया गया है, तो अिन अुथल-पुथलोंसे अुसे लाभ ही पहुंचता है। भारतके विभाजनसे जिन भाषाओंपर विशेष प्रभाव पड़ा है, वे हैं पंजाबी, सिन्धी, अुर्दू और बंगला। पंजाबी अुर्दू और हिन्दीके पाटोंमें दबकर मरती-सी नजर आ रही थी, पर अब अुसका संकट टल गया है। दोनों पंजाबोंमें पंजाबीकी चर्चा हो रही है। अभी सिन्धीका संकट पूरी तरह टला नहीं। अुर्दू, यहां पाकिस्तानकी अुर्दूसे मतलब है अपने आधारसे अलग हो जानेके कारण कृत्रिम सहायताओंका सहारा लेनेके लिअे बाध्य है, पर बंगलाके सम्बन्धमें यह कहा जा सकता है कि वह पहलेसे शक्तिशाली होकर आगे बढ़ रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक हिन्दी काव्यपर अेक दृष्टि

—श्री गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश'

संस्कृत साहित्यका अध्ययन करते समय पाठकको सामान्यतः यह अनुभव होगा कि अुसमें अेक स्वतन्त्र मानव-समूहके मनोभाव अंकित हुअे हैं। किन्तु हिन्दी काव्यका अध्ययन करनेवालेकी अिससे विपरीत धारणा हो सकेगी; कारण यह है कि हिन्दू जातिके जीवन-मरण-संघर्ष अेवम् राजनैतिक पराभवके वातावरणमें अुसका सृजन हुआ। वीरगाथा कालीन काव्य ही में नहीं, भक्तिकालीन अेवम् रीतिकालीन काव्यमें भी जीवनकी तीव्र प्रति क्रियाअें प्रतिबिम्बित हैं। रहा आधुनिक हिन्दी काव्य, सो अुसमें तो अुक्त प्रवृत्तिका और भी अधिक मात्रामें समावेश हुआ है। यहाँ हम आधुनिक हिन्दी काव्यपर ही अेक दृष्टिपात करनेका प्रयत्न करेंगे।

आरम्भ ही में हमें मानव-जीवन अेवम् साहित्यके पारस्परिक सम्बन्धोंका मूल्यांकन कर लेना चाहिअे और यह समझ लेना चाहिअे कि मानव-जीवनका विकास हमारा साध्य है और अुसके लिअे साहित्य-सृजन अेक साधन मात्र है। हमारे जीवनमें अेक ओर पंक है तो दूसरी ओर पंकज भी है; पंकजको जन्म देने ही में पंककी सार्थकता है। यह प्रकृत सत्य यदि साहित्यमें स्वस्थ रीतिसे झलकाया जाय तो पंकके अस्तित्वको अस्वीकार न करके भी हमारा मन पंकजके सौन्दर्य, सौरभसे प्रफुल्ल हो जाअेगा; अिसके विपरीत यदि पंकजका सम्मान घटाकर पंककी ही प्रतिष्ठा बढ़ाअी जाअेगी, तो अुसकी दुर्गन्धि हमें खिन्न बनाअे बिना नहीं रहेगी। हिन्दीके रीतिकालीन काव्यमें भी काव्यकी विशेषताअें हैं, अिसमें सन्देह नहीं; किन्तु वह पंकजके समीप न पहुंचकर पंकके अधिक समीप पहुंच गया है और कहीं-कहीं तो पंक ही में निमज्जित हो गया है। अपने अिस रूपमें अुसने साधन मात्र होकर रहनेका अपना प्रकृत अधिकार त्याग दिया है और बलपूर्वक मानव-जीवनके सिरपर अपना आसन जमा लिया है। अिस अप्रकृत अवस्थाके प्रति विद्रोहका भाव लेकर ही आधुनिक हिन्दी काव्य खड़ा हुआ है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्रने जीवनको प्रगति देनेके अभिप्रायसे काव्यमें देशभक्ति-तत्वका समावेश किया; अिसी संक्रमणको लेकर आधुनिक हिन्दी-काव्यकी प्राण-प्रतिष्ठा हुअी है।

अध्ययनकी सुविधाके लिअे हम आधुनिक हिन्दी काव्यको दो भागोंमें विभाजित कर सकते हैं—(१) भारतेन्दु हरिश्चन्द्रसे लेकर बाबू मैथिली शरण गुप्तके काव्यतक; (२) बाबू जयशंकर प्रसादसे लेकर श्री. अज्ञेयकी रचनाओं तक। दोनो ही विभागोंमें मानव-जीवनके विकासको अग्रसर करनेके लिअे स्वस्थ प्रतिक्रियाअें किस प्रकार अुठती रही हैं, अिसका विश्लेषण करके हमें देखना चाहिअे कि वर्तमान समयमें हमारी स्थिति कहां है।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्रने भारतीय मानवकी पराधीन परिस्थितिकी ओर कवियोंका ध्यान तो आकृष्ट किया, किन्तु काव्य-भाषाके सिंहासनपर व्रजभाषा ही को विराजमान रखा। हिन्दी गद्य-भाषाको वे अेक नअे सांचेमें ढ़ाल चुके थे और सम्पूर्ण हिन्दी जगत्में अुसका स्वागत किया था। किन्तु अुनके सामने यह समस्या नहीं अुपस्थित हुअी थी कि हिन्दी गद्य और पद्यकी भाषाओंमें अुतना अन्तर न होना चाहिअे जितना व्रज-भाषा अेवम् गद्यकी खड़ी बोलीमें है। अतः आचार्य द्विवेदीके नेतृत्वमें अेक स्वस्थ प्रतिक्रिया हुअी, जिसने वर्णनीय विषय और विचार-धाराके क्षेत्रमें भारतेन्दुकी देनको स्वीकार करके भी यह स्पष्ट रूपसे घोषित किया कि खड़ी बोली ही में हिन्दीकी कविता होनी चाहिअे। 'सरस्वती' का सम्पादन हाथमें आनेपर द्विवेदीजीने अुसमें खड़ी बोलीकी कविताअें ही प्रकाशित करनेकी अपनी नीति बना ली। भारतेन्दुके अभिन्न सखा पं. बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' तथा श्री. अम्बिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दत्त व्यास, श्री. प्रतापनारायण मिश्र आदिका समय व्यतीत हो चुका था और अुत्तरवर्ती व्रजभाषा कवियोंमेंसे अधिकांशको, समयकी गतिको पहचान कर, खड़ी बोलीकी आराधनामें प्रवृत्त होना पड़ा। अिनमें पं. श्रीधर पाठक, पं. नाथूराम शंकर शर्मा, पं. अयोध्या-सिंह अुपाध्याय, पं. रामचरित अुपाध्याय, श्री. गया प्रसाद शुक्ल सनेही आदिका नाम लिया जा सकता है। ये वे लोग थे जिन्होंने व्रजभाषामें अच्छी कविताअें लिखी थीं। किन्तु बादको अेक अैसा दल तैयार हो गया जिसने आरम्भसे ही खड़ी बोलीमें काव्य-रचना की। अिनमें बाबू मैथिलीशरण गुप्त, श्री. बदरीनाथ भट्ट, ठाकुर गोपाल शरण सिंह, श्री. मुकुटधर पाण्डेय आदि अुल्लेख-योग्य हैं। खड़ी बोलीके अिन सभी कवियोंने सामयिक विषयोंपर स्फुट रचनाअें कीं, किन्तु अिनमेंसे कुछने प्रबन्ध काव्य भी लिखे। पं. अयोध्यासिंह अुपाध्याय हरिऔधने 'प्रियप्रवास' तथा बाबू मैथिली-शरण गुप्तने 'साकेत' नामक महाकाव्योंकी रचना की। यहाँ यह अुल्लेख योग्य है कि अुक्त दोनों ही कवियोंकी आस्था 'अवतारवाद' पर होनेपर भी बुद्धिवादी दृष्टिकोणके कारण 'प्रियप्रवास' में श्रीकृष्ण महापुरुषके रूपमें अंकित हुअे हैं। तथा भक्तिवादी दृष्टिकोणके कारण 'साकेत' में श्रीरामचन्द्र परब्रह्मके अवतारके रूपमें ही चित्रित हुअे हैं। आगे चलकर साहित्यमें बुद्धिवादी दृष्टिकोण ही की अधिक मान्यता हुअी। 'साकेत' के सम्बन्धमें अितना और कह देना आवश्यक है कि भक्तिवाद अुसके बाह्य आवरण ही तक सीमित रह गया; काव्यके भीतर लौकिक प्रवृत्तियोंकी चपलतासे वह मुक्त नहीं रह सका है। देशभक्तिपूर्ण स्फुट कविताअें लिखनेवालोंमें 'सनेही' जी अुल्लेख योग्य हैं। श्री मुकुटधर पाण्डेय, श्री. बदरीनाथ भट्ट आदिने मनुष्य और मनुष्येतर तत्वोंके बीच रागात्मक भावके विकासकी ओर भी ध्यान दिया।

यह स्मरण रखने योग्य है कि भारतेन्दु द्वारा प्रवर्तित आदर्शवादकी, आचार्य द्विवेदी दवारा पूर्ण रूपसे पुष्टि हुअी। यह पुष्टि अुस छोरतक पहुंच गअी जहाँसे काव्यके कला पक्षकी अुपेक्षा स्पष्ट रूपसे प्रकट होने लगी। अुक्त आदर्शवादी शासनकी कठोरता यहाँ तक बढ़ी कि बहुत पहले की, व्रजभाषामें लिखित हरिऔधजीकी श्रृंगारिक रचनाओंको 'रस-कलस' नामक रीति-ग्रन्थ ही में समाविष्ट होकर प्रकाश मिल सका। 'प्रियप्रवास' में संयोग श्रृंगारका नाम नहीं है और विप्रलम्भ श्रृंगारको भी अत्यन्त संयत और मर्यादित होकर रह जाना पड़ा है। फिर भी यह कहा जा सकता है कि द्विवेदी कालीन, रुक्षता, शिक्षात्मकता, अितिवृत्तात्मकतासे मुक्त होनेके लिअे अुसने अेक क्षीण प्रयत्न किया। अन्य कअी दृष्टियोंसे भी 'प्रियप्रवास' ने हिन्दी-काव्य जगत्में विद्रोहका झण्डा खड़ा किया—अुसने संस्कृत छन्दोंके प्रयोगका मार्ग परिष्कृत करनेके साथ-साथ अन्त्यानुप्रासहीन कविताकी ओर हिन्दी कवियोंका ध्यान आकर्षित किया। अेक ओर तो 'प्रियप्रवास' ने द्विवेदी कालीन समस्त साहित्यिक क्रियाशीलता, सम-संयम, समत कर्मप्रेरणाका प्रतिनिधित्व किया, दूसरी ओर अपने प्रबन्धात्मक ढांचेके भीतर भी, अन्य कवियोंके स्फुट गीतिकाव्यात्मक प्रयत्नोंके साथ सहयोग करके आगामी युगका बीज भी धारण किया। अिस दृष्टिसे 'प्रियप्रवास'का अैतिहासिक महत्व बहुत अधिक है।

'प्रियप्रवास' के सम्बन्धमें मैंने अभी जो कुछ कहा है अुससे स्पष्ट है कि वह द्विवेदी कालीन काव्यादर्शका आंशिक प्रतिनिधित्व ही करता है, अुसकी गतिशीलता ही अुसके पूर्ण प्रतिनिधित्व-विषयक अधिकार-ग्रहणमें बाधक है। सामयिक स्फुट कविताओंके अतिरिक्त यदि हमें अुक्त काव्यादर्शके प्रतिनिधि काव्योंकी खोज हो तो अिस प्रसंगमें बाबू मैथिलीशरण गुप्तके 'रंगमें भंग', 'जयद्रथ-वध', 'भारत-भारती' तथा पं. रामचरित अुपाध्यायके 'रामचरित चिन्तामणि' नामक महाकाव्यका नाम लिया जा सकता है। संवत् १९७२के लगभगतक काव्य-सृजनके क्षेत्रमें नेतृत्व गुप्तजीके हाथमें रहा और यद्यपि 'साकेत' में द्विवेदी कालीन अनेक प्रवृत्तियोंकी छाप है, जिन्हें ध्यानमें रखकर ही हमने 'प्रियप्रवास' के साथ अुसकी अभी चर्चा की है, तथापि अुसे भी द्विवेदी-कालीन काव्यादर्शका आंशिक प्रतिनिधि ही मानना ठीक होगा; अिस सम्बन्धमें 'प्रियप्रवास' और अुसमें यही अन्तर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहेगा कि जहाँ 'प्रियप्रवास' ने नेतृत्वकी सम्भावना रखी, वहाँ 'साकेत' ने प्रचलित साहित्यिक प्रवृत्तियोंका अनुगमन मात्र किया।

व्रजभाषा और खड़ी बोलीमें लिखी जानेवाली कविताओंके आधारपर प्रथम काल-विभागके दो अुप-विभाग निस्सन्देह हुअे, किन्तु अिन अुपविभागोंमें किसी प्रकारकी विजातीयता नहीं थी; अिसके विपरीत द्वितीय काल-विभागके अिन तीन अुपविभागोंकी यहाँ चर्चा की जाअेगी अुनमें विजातीयताकी प्रवृत्ति दिखाअी पड़ती है। अिन तीन अुपविभागोंका सम्बन्ध छायावाद (सं. १९७३ से सं. १९९५ के आसपास तक) प्रगतिवाद (सं. १९९६ से सं. २००७ के आसपास तक) और प्रयोगवाद (जो वर्तमान समयमें प्रचलित है) से है। छायावादके विरोधी तत्व प्रगतिवाद और प्रयोगवाद दोनोंमें मिलते हैं। रहस्यवादके अर्थमें छायावादका आधार आध्यात्मिक है; यह न होनेपर भी मानसिक वृत्तियोंके चित्रणमें रत होनेके कारण वह अन्तर्मुखी तो है ही। छायावादकी अिन दोनों ही विशेषताओंका विरोध प्रगतिवाद और प्रयोगवादमें है। 'प्रगतिवाद' का 'छायावाद' से और 'प्रयोगवाद' का 'छायावाद' से जितना विरोध है अुतना ही विरोध 'प्रगतिवाद' का 'प्रयोगवाद' से भी है, यद्यपि अिन दोनोंमें अितनी समानता अवश्य है कि ये मूलतः भौतिक आधारोंको प्रधानता देते हैं। अिसलिअे अिन तीनों ही वादोंको हमें समझ लेनेकी आवश्यकता है।

छायावादकी अुत्पत्तिकी चर्चा करते हुअे आचार्य शुक्लने कहा है कि प्रायः अीसाअी सन्त भावावेशकी स्थितियोंमें पहुंचकर अीश्वरसे जो तथाकथित सम्पर्क और अुसके परिणाम-स्वरूप आध्यात्मिक सन्देश प्राप्त किया करते थे, अुसे जटिल संकेतों और प्रतीकोंकी सहायतासे वे अस्पष्ट रूपमें अपने भक्तोंके सामने प्रस्तुत करते थे। बंगालके ब्रह्म-समाजमें अिसका प्रवेश होनेपर अिसे छायावाद नाम मिला। महाकवि रवीन्द्रनाथकी गीति–विशिष्ट कविताओंमें प्रतीक-विधान-की अधिकताके कारण जो अस्पष्टता आअी अुसे व्यक्त करनेके लिअे वे छायावादी कही गअीं। वि. संवत् १९७० में योरपका सम्मानित नोबेल पुरस्कार अुन्हें मिला, जिससे अुनकी काव्यशैलीका प्रभाव हिन्दीके अुन नवीन कवियोंपर भी पड़ा जो अंग्रेजी साहित्यसे अथवा बंगला भाषाके माध्यमसे बंग साहित्यसे परिचित थे और नवीन काव्य-शैलीके स्वागतके लिअे अुत्सुक थे। छायावादके प्रतीक-विधानको अन्य कअी विशेषताओंका सहयोग प्राप्त हुआ; ये थीं प्राकृतिक तत्वोंपर मानव-भावारोप, अमूर्त अुपमान तथा अरूपात्मक संज्ञाओं आदि की योजनाअें। अपने सीमित अर्थमें छायावाद रहस्यवादका पर्यायवाची माना गया, किन्तु व्यापक अर्थमें समस्त प्रेमकाव्यको भी अुसने अपने भीतर समेट लिया।

छायावादके अुत्थानके पूर्व हिन्दी काव्य रहस्यात्मक रचनाओंसे रहित नहीं था; अिस कथनके प्रमाणमें कबीर, जायसी आदि अनेक कवियोंकी कृतियां अुप-स्थित की जा सकती हैं। अुनकी यह प्रमुख विशेषता रही है कि वे जीवनमें दुराचारके समर्थनकी प्रवृत्ति नहीं रखतीं। साधारणतया काव्य जितनी अूंचाअीतक ले जाता है, अुससे भी अूंचे ले जाकर मानव हृदयको लोकोत्तर आनन्दमें निमग्न कर देना ही अुनका लक्ष्य रहा है। किन्तु 'कलाके लिअे कला' अेवम् 'अभि-व्यंजना-वाद' से गंठबन्धन होनेके कारण छायावादी रचनाओंमें जीवनके प्रति अेक तटस्थताका भाव दिखाअी पड़ने लगा और कहीं-कहीं तो यह भी समझ पड़ा कि यह तटस्थताने केवल मनुष्यको अुद्योग, पुरुषार्थ आदिसे विरत बनानेके लिअे अुद्योगशील है, वरन जीवनकी मर्यादाओंपर भी प्रहार करना चाहती है। 'कलाके लिअे कला' सिद्धान्तकी तो यह घोषणा है कि कलाका सदाचारसे कोअी सम्बन्ध नहीं है, वह अुससे सर्वथा स्वतन्त्र है। रहा 'अभिव्यंजनावाद', सो वह निषाद के विरोधमें वाल्मीकिके करुणा-प्रवाह अेवम् वनाश्रमोंमें निवासी तपस्वियोंके पीड़क निशाचरोंके वधके लिअे दृढ़-प्रतिज्ञ रामके क्रोध, दोनो ही को कलाकी सामग्री मात्र मानता है। ये स्वयम् ही कलात्मक हैं–यह बात अुसे स्वीकृत नहीं है। वह अिन्द्रियगोचर समस्त वस्तुओं, भावों और कार्योंको स्थूल मानता है और अुक्त रसात्मक परिस्थितियों-को भी कल्पनाके साँचेमें ढालकर बारीक बना लेना चाहता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। स्पष्ट है कि काव्यमें जीवन-विकासकी प्रेरणाओं और स्रोतोंको यह 'वाद' महत्व नहीं देता। हाँ, स्वच्छन्दतावाद (Romanticism) ने छायावादमें सरसता और नवीनताका संचार किया; अुसका आश्रय लेकर छायावादी कवियोंने बँधी साहित्यिक परिपाटियोंके विरुद्ध अुचित विद्रोह किया।

'छायावाद' के प्रमुख कवि 'प्रसाद', पन्त, 'निराला' और श्रीमती महादेवी वर्मा हैं। प्रसादजीका 'कामायनी' नामक काव्य अेवम् पन्तजीका 'पल्लव' नामक गीतिकाव्योंका संग्रह—दोनों ही महान् कृतियाँ हैं, अपने-अपने क्षेत्रमें दोनों ही अनुपम हैं; अिन दोनोंमेंसे छायावादको अधिक प्रगति किससे मिली यह कहना कठिन है। किन्तु 'पल्लव' का प्रकाशन कामायनीके प्रकाशनसे बहुत पहले हुआ और अपनी क्रान्तिकारिणी भूमिका द्वारा अुसने ही रीतिकालीन अेवम् द्विवेदीकालीन काव्यादर्शके प्रति खुलकर विद्रोह किया। अिस दृष्टिसे छायावादी रचनाओंमें वह शीर्ष स्थानका अधिकारी हो जाता है।

जो हो, छायावाद जीवनके अत्यन्त सुकुमार और भावुकतापूर्ण अंगको ही व्यक्त कर सका, जीवनके कठोर अंशकी अभिव्यक्ति अुसके द्वारा नहीं हो सकी। अिस कारण छायावादके विरुद्ध प्रतिक्रिया हुअी और वह प्रतिक्रिया कितनी अुचित थी, यह अिसीसे प्रमाणित होता है कि स्वयम् निरालाजी तथा पन्तजी अुस प्रतिक्रियाको व्यक्त करनेवाले 'प्रगतिवाद' के नेता हुअे। 'प्रगतिवाद' कार्ल मार्क्स द्वारा प्रवर्तित साम्यवादकी साहित्यिक भुजा है; फलतः साम्यवाद-गत जीवन-दर्शनसे ही वह अनुप्राणित हुआ। छायावादकी सहानुभूति अधिकांशमें प्रकृतिसे थी, प्रगतिवादकी सहानुभूति मनुष्यसे हुअी। अुत्पादनके समस्त साधनोंपर अपनी अखण्ड सत्ता स्थापित करके पूंजीका अधिपति किस प्रकार अन्य मनुष्योंके परिश्रमका शोषण और अुनके द्वारा अर्जित धनका हरण करता है—यह परिस्थिति और अिसके निराकरणके लिअे किया जानेवाला संघर्ष दोनों ही क्रमशः सहृदयकी करुणा और अुसके समर्थनका आवाहन करते हैं, और काव्यके लिअे अुपयुक्त विषय अुपस्थित करते हैं। प्रगतिवादी रचनाओंमें लघुसे लघु व्यक्तिके प्रति सहानुभूति और समाजमें शोषणका जाल फैलानेवाले समस्त अनुपादक तत्वोंकी निन्दा अंकित होने लगी। निरालाजी और पन्तजीके अतिरिक्त जिन अन्य कवियोंने प्रगतिवादी रचनाअें लिखीं, अुनमें भगवतीचरण वर्मा, 'दिनकर', रामेश्वर शुक्ल अंचल, हरिवंशराय बच्चन, अुदयशंकर भट्ट आदि अुल्लेख-योग्य हैं।

कार्ल मार्क्सकी विचारधारामें रक्त-क्रांति द्वारा ही नव-युग-प्रवर्तन का लक्ष्य माना गया है। क्रांतिमें अपरिमित शक्ति है, अुसकी अग्निमें समस्त सामाजिक कलुषको जला डालनेका सामर्थ्य है, किन्तु समाजके कल्याणके लिअे अुसकी भी मर्यादा स्थापित होनेकी आवश्यकता है, जिससे क्रान्तिवादके साथ अनिवार्य रूपसे चलनेवाले वर्गवादकी चक्कीमें निरपराध व्यक्ति भी पिस न जाअे। जिस शासन-व्यवस्थामें अेक भी निर्दोष व्यक्तिपर अत्याचार सम्भव है, वह आदर्श नहीं कही जा सकती। अिस दृष्टिसे भारतीय विचारधारा, जिसके अेक अंगका प्रतिनिधित्व गान्धीवाद करता है, अभीष्ट लक्ष्य—सामाजिक कल्याण—के अधिक निकट है। यह अुल्लेख-योग्य है कि पन्तजी प्रगतिवादी होते हुअे हुअे भी रक्त-क्रान्तिके समर्थक नहीं हैं। काव्यकी आवश्यकताओंकी दृष्टिसे भी प्रगतिवाद सहृदयको पूर्ण सन्तोष प्रदान नहीं करता; सहृदयका यह अुचित प्रश्न हो सकता है कि अुसकी सहानुभूति केवल मनुष्य तक क्यों सीमित है, अुसका प्रसार अन्य प्राणियोंतक क्यों नहीं होता? यह ध्यान देने योग्य बात है कि छायावाद-युगमें आधुनिक हिन्दी काव्यकी जैसी प्रगति हुअी वैसी प्रगतिवादके युगमें नहीं हुअी। छायावादी कवियोंने हिन्दी भाषाकी वह रुक्षता बहुत कुछ दूर की जो द्विवेदी युगके पूर्वके तथा द्विवेदी युगके अुत्तराधिकार रूपमें अुन्हें प्राप्त हुअी थी। अुन्होंने अुसमें काव्योचित संस्कार किअे, कोमलता, सरसता, मधुरताका संचार किया। अिसके विपरीत प्रगतिवादी कवियोंने अिस कार्यको केवल आगे ही नहीं बढ़ाया, वरन् अुनमेंसे किसी-किसीने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषाका मान दण्ड नीचा किया, अरबी-फारसीके अनमेल, अलोकप्रिय, अकाव्योचित शब्दोंका सन्निवेश कर अुसकी सर्वांग-सुन्दरता भंग की और रचनामें अमर्यादित तत्वोंको स्थान दिया।

प्रगतिवादके विरुद्ध प्रतिक्रिया हुअी और अब अुसका अनुज प्रयोगवाद कार्यक्षेत्रमें आ गया है। प्रयोगवादको प्रगतिवादका अनुज कहना अिसलिअे सार्थक है कि अीश्वर भावनासे दोनोंको कोअी सरोकार नहीं है, अुनकी आधार-भूत विचार-धारामें अध्यात्मवादको कहीं स्थान नहीं है। जैसे प्रगतिवाद विदेशी विचार-धाराकी अुपज था, वैसे ही प्रयोगवाद भी विदेशी विचार-धाराओंसे प्रेरणा प्राप्त करता है। प्रयोगवादी कविता अपने आपको 'नअी कविता' के रूपमें विज्ञापित करने लगी है। 'नअी कविता' का दावा है कि वह अुस सम्बन्ध-सूत्रको पकड़ना चाहती है जो मानव व्यक्तिको मानवजाति अेवम् विश्वके शेष समस्त प्राणियोंके साथ मिला दे। अिसके लिअे वह दो दिशाओंमें अुद्योग करती है–(१) मानव व्यक्तिके मनको समझनेकी दिशामें, तथा (२) अैतिहासिक मानवके मनको समझनेकी दिशामें। अिन्हीं दोनों दिशाओंसे प्रयोगवादी कवि अपनी कविताके लिअे विषयोंका चयन करता है।

प्रयोगवादी कवितामें अेक बात यह अच्छी हुअी कि अुसमें प्रगतिवादकी अुस संकीर्णताका त्याग हो गया जिसकी प्रेरणासे पूंजीवादी और जनवादी दृष्टिकोणोंके आधारपर अपनेको विभक्त करके प्रगतिवादी कवि प्रत्येक विषयका वर्णन करता था। प्रयोगवादीका दृष्टिकोण अधिक व्यापक है। किन्तु अुसकी अेक कमीका अुल्लेख भी कर देना आवश्यक है–छायावादी कविकी सहानुभूति विस्तृत क्षेत्रमें जड़, चेतन, चर, अचर सभीके लिअे थी; प्रगतिवादीकी सहानुभूति मानव-श्रमिक तक सीमित रह गअी और अैसा जान पड़ता है कि समुद्रमें मोतीके लिअे डुबकी मारते-मारते प्रयोगवादी कवि थककर हृदय-रोग अथवा हृदयाभाव रोगसे पीड़ित हो गया तथा अुसकी सहानुभूति किसीसे भी नहीं रह गअी; वह बहुत अूंचे अुठता है तो कुछ बौद्धिक, चमत्कारिक तत्व देकर रह जाता है, न वह द्रवित होता है और न मानव हृदयको द्रवित करके अुसे प्रगति करनेके लिअे अुभाड़ना वह अपना काम ही समझता है। जब मनुष्य स्वार्थका पुतला बनता जा रहा है, दूसरोंपर आक्रमण करना जब अुसका स्वभाव हो रहा है तब कविको छोड़कर अुसकी दुर्बलताको कौन समझेगा और कौन संशोधन करके अुसको निर्मल बनावेगा? नअी कविताको अपना नाम सार्थक बनाना है तो अुसे केवल मनोरंजक काव्य ही की रचनाकी ओर ध्यान न देकर हृदय-द्रावक, शक्तिशाली काव्य-सृजनकी ओर भी अुन्मुख होना होगा। अभीतक तो अुसमें यह खेदजनक अभाव दिखाअी पड़ता है।

भाषा और छन्दरचनाके क्षेत्रमें तो प्रयोगवादी कविताअें अव्यवस्थाके लिअे आदर्श हो रही हैं। अेक प्रयोगवादी कविकी यह स्वीकारोक्ति है कि अंग्रेजी बंगला, अरबी, फारसी, रूसी, चीनी, जापानी आदिके तत्सम, अप्रचलित शब्द प्रयोगवादी कविताकी अेकही पंक्ति में दिखाअी पड़ सकते हैं। हिन्दी भाषाके विकासके लिअे प्रयोगवादी कविकी यह देन बाधक सिद्ध होगी अथवा साधक–अिसपर स्वयम् प्रयोगवादी कवियोंको विचार करना चाहिअे। जहाँ तक छन्द-प्रबन्धका प्रश्न है, अितनी निरंकुशता, अितना मनमानापन कभी देखनेमें नहीं आया।

भारतभूषण अग्रवाल, अज्ञेय द्वारा प्रकाशित तार-सप्तकके कवि हैं और अुन्हींका कहना है कि अधिकांश (प्रयोगवादी) रचनाअें दुरूह हैं और यति, गति, मात्रा, लय सम्बन्धी अनियमका अुनमें साम्राज्य है। किन्तु प्रयोगवादके विशिष्ट समर्थक, निकषके सम्पादक डा. धर्मवीर भारती तथा श्री. लक्ष्मीकान्त वर्माका कहना है कि 'दुरूहताका तो खाहमखाह तूमार बाँधा गया है।" जिन आलोचकोंका अुद्देश्य 'गुस्सा अुतारना' अथवा 'प्रहार करना' मात्र है, अुनका समर्थन न करते हुअे भी, अिन पंक्तियोंका लेखक नवीन साहित्यकारोंका अेक हितैषी होनेके नाते, यह अवश्य कहना चाहता है कि 'नअी कविता' की जड़ोंको अपने देशकी भूमिमें खोजो, अुसका प्रवाह जन-भाषामें ढूंढो और अुसकी सफलता सहृदयकी स्वीकृतिमें प्राप्त करो, नहीं तो 'नअी कविता' की यह सोनेकी चिड़िया, जो सदैवसे अुड़-अुड़कर दूसरोंके हाथोंपर जानेकी आदी रही है, आपके हाथसे अुड़ जाअेगी और फिर अूंची आवाजमें 'आ, आ' कहनेपर भी आपके हाथपर न आअेगी। संक्षेपमें प्रयोगवादी कविताअें विलायती पोशाक अुतारकर स्वदेशी वेष-भूषा धारण करें और अुन लोगोंकी बोली बोलें जिनकी अुन्हें सेवा करनी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"धरतीके बोल"—अेक परिचय

—प्रो० विनयमोहन शर्मा

हिन्दीके अुद्बुद्ध सृष्टा श्रीयुत "नलिन" के 'धरतीके बोल'पर दो शब्द लिखते हुअे मुझे अत्यन्त हर्ष हो रहा है। वे अेक अैसे साधनारत साहित्यिक हैं जो अपनी कृतियोंसे जन-मनको आलोकित कर स्वयम् अन्धकारमें लीन रहते हैं। अुन्होंने विचारोत्तेजक निबन्ध, व्यंग्यात्मक कहानियां, मार्मिक समीक्षाअें, हृदयस्पर्शिणी कविताअें आदि सभी कुछ लिखा। फिर भी प्रचारके प्रलोभनसे अपनेको आक्रान्त नहीं होने दिया। अुनका यह संयम अभिनंदनीय है, वन्दनीय है।

अिस काव्य-संग्रहका अभिधान—'धरतीके बोल' अिस बातका द्योतक है कि अिसमें 'धरती' की ही प्रकृत गन्ध है, अुससे परे किसी लोकका संकेत बिल्कुल नहीं है। पर वस्तुस्थिति सोलहों आने अैसी नहीं है। अुसमें धरतीके रूप, रस, गन्धके अतिरिक्त भी कुछ है जो मुखर न होकर भी संवेद्य है।

बीसवीं शती आधी बीत चुकी है। अिस अवधिमें कअी काव्यके वाद आँधी-से आअे और कुछ समय हहर कर चले गअे। प्रश्न यह है कि अिन 'वादों' के प्रयोगोंके बाद भी क्या कविताने सचमुच प्रगति की है? क्या वह अपनी प्राचीन परम्परासे सर्वथा अलिप्त हो सकी है? क्या अुसका 'नअी कविता' नाम सचमुच सार्थक है? अिंग्लैंडकी Poetry Book Society (पोअिट्री बुक सोसायटी) ने कुछ समय पूर्व अेक "New English Poetry" नामक संग्रह प्रकाशित किया था जिसकी, वहाँके समीक्षकोंमें यह प्रतिक्रिया हुअी कि यदि वह आजसे ४० वर्ष पूर्व भी प्रकाशित होता तब भी आधुनिक ही रहता। अेक समीक्षक पूछता है, "अिस संग्रहकी कविताओंमें हापकिन्सका प्रभाव कहां है? यीट्सकी धड़कन कहां है? पाअूंड अीलियट और ऑडनके अुच्छ्वास कहाँ हैं? प्रतीत होता है अद्यतन काव्यका सारा आन्दोलन बिना किसी चिन्हके समाप्त हो गया!"

डा. अेडविन मूरने अिंग्लैण्डमें 'नअी कविता' के युगकी समाप्तिके कारणोंकी समीक्षा की है। वे लिखते हैं कि "सन १९२० में अीलियटने 'वेस्टलैण्डमें" कविता की भाषा और रूप-विधानमें नव जीवन डालनेका प्रयत्न किया और सन् १९३० के लगभग जॉडेन, स्पेण्डर, लैविस आदिने कविताको सामाजिक और राजनीतिक आकांक्षाओंकी अभिव्यक्तिका माध्यम बनाया। पर कविताकी अपनी अेक परम्परा होती है जिसका क्रान्तिकारी प्रवृत्तियोंसे मेल नहीं खाता। परिणाम यह होता है कि नअे प्रयोगोंकी झकझोरनके बावजूद वह अपनी पुरानी परम्पराको पुनः प्रस्थापित करनेको प्रवृत्त होती है।" अिसका आशय यह हुआ कि कविताका मन 'जहाजके पंछी'की तरह घूम-फिरकर पुनः अपने 'स्थान' पर आकर सुख पाता है। आज आंग्ल-समीक्षक यह अनुभव नहीं करता कि अिंग्लैण्डकी कवितामें प्रयोग नामक कोअी नूतन प्रवृत्ति शेष है। आंग्ल काव्यमें नूतनताका सर्वप्रथम स्वर 'पुनरुत्थान'—युगमें सुनाअी दिया। वैज्ञानिक आविष्कारोंसे गर्वोन्नत मानवने अपने बाहुबलकी जय-घोषणा की, जिसका परिणाम 'मानवतावाद' का विकास हुआ। अुसके पश्चात् प्रथम महायुद्धकी भीषणताने काव्य-वस्तुको पुनः प्रभावित किया। खिन्नता, निराशा, घृणाके अुदय होते ही काव्यमें झुंझलाहट, व्यंग्य, घृणा आदिका अतिरेक परिलक्षित हुआ क्योंकि मानवके सुख-दुखका कारण नियति नहीं मनुष्य समझा गया। अुसीने विषमताकी दीवार खड़ी की अुसीने अपनी महत्वाकांक्षाओंकी पूर्तिके लिअे युद्धकी विभीषिका सृष्ट की। अीलियटके श्रद्धा और अध्यात्मिकवादके प्रति विद्रोह प्रदर्शितकर मनुष्यमें ही अपनी भौतिक समस्याओंका हल खोजनेका निर्देश किया। मानववादी कवियोंमें भी दो दल दीख पड़े। अेक व्यक्तिको भौतिक संकटका कारण मानकर अुसकी अुन्नतिके लिअे चिन्तित होने लगा, दूसरा समष्टिको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अुसका कारण मानकर सामाजिक चेतनाको अुद्दीप्त करनेके लिअे राजनीतिक दल विशेषका प्रचारक बन गया।

दूसरे महायुद्धने मानवको विज्ञान प्रसूत शक्तिमें राक्षसी वृत्तिके स्पष्ट दर्शन करा दिअे। तब मानवताके अस्तित्वकी रक्षाकी चिन्ताने कवियोंको यह अनुभव करनेके लिअे विवश किया कि विज्ञान जीवनको सुन्दर और शिवमय बनानेमें असमर्थ है। अुसने प्रकृतिपर भले ही विजय प्राप्त की हो; पर प्रकृतिके भीतर अन्तर्हित 'सत्य' की खोज करनेमें वह समर्थ नहीं हो रहा है। अैसा जान पड़ता है कि कवितामें अेक नया ज्वार अुठनेवाला है जो मानव-मनकी अुदात्त वृत्तियोंको सचेतन बनानेकी प्रेरणा देगा। व्यक्तिके अुदात्तीकरणके पश्चात् समाजमें हिंसा और अविश्वासका अस्तित्व ही नहीं रहेगा।

आधुनिक हिन्दी-कवितामें आधुनिकताका प्रथम अुन्मेष विदेशी ब्रिटिशसत्ताको सहन न कर सकनेकी भावनामें हुआ। विदेशी सत्ताके जुअेको फेंकनेके लिअे यह आवश्यक था कि अुसके प्रति जनतामें अनास्था अुत्पन्न कराअी जाय। देशको विदेशी प्रभावसे मुक्त बनाया जाअे। अतः कवियोंने अपने राष्ट्रकी पुरातन संस्कृतिके गीत गाअे और विदेशी रीति-रिवाज–संस्कारोंका मखौल अुड़ाया। हिन्दी-कवितामें आधुनिकताकी धारा मुख्यतः दो रूपोंमें प्रवाहित हुअी। अेक आन्दोलनात्मक थी जिसमें पराधीनताके अुन्मूलनके विविध अुपायोंका अुद्घोष था, दूसरी संस्कृति-संस्थापनात्मक जो मानवके शाश्वत सत्य और सौन्दर्यकी खोजमें प्रवृत्त हो अुसके मनोरम चित्र अंकित करनेमें रत थी। यूरोपमें होनेवाले महायुद्धोंका हमारे देशपर अिसलिअे प्रभाव पड़ा कि अुसमें हमारे शासकों—अंग्रेजोंने भी भाग लिया था। बेकारी, भुखमरी, चोरबाजारीने समाजको अेकदम झकझोर दिया। स्वाधीनताके पश्चात् भी अिन अभिशापोंकी छाया दूर नहीं हो पाअी। जनता अपनी सुखसमृद्धिके लिअे जिन मुखोंकी ओर जोह रही थी, और जिनके अिंगितोंपर अुसने स्वाधीनताके युद्धोंमें अपना सर्वोच्च होम किया था, वे जीवित देवता भी अब असमर्थ सिद्ध हुअे, तब अुसमें खीझ, झुंझलाहटका अतिरेक स्वाभाविक है। हिन्दी कवितामें जनताकी मनोवृत्तिकी प्रतिबिम्बना स्पष्ट है।

मानव जीवनमें विनाश और निर्माणकी क्रिया साथ-साथ चलती है। यही अुसके अिस्तित्वकी निशानी भी है। आजकी हिन्दी-कवितामें, यह सत्य है कि, निर्माणके तत्व कम दिखाअी देते हैं। अुसमें विनाशकारी तत्वोंका प्राधान्य है। अिसीसे अुसके स्थायित्वमें सन्देह पैदा होता है। छायावाद-युगमें दोनों तत्व विद्यमान थे। अेक राष्ट्रीय आन्दोलनके शंखनादपर मिटनेका आमंत्रण दे रहा था, दूसरा प्रेमकी वंशी-ध्वनिपर जीवनको 'सत्यम्' और 'सुन्दरम्' की ओर खींच रहा था।

आजकी नअी कविताको यदि जीवित रहना है तो अुसमें निर्माणकारी तत्वोंकी वृद्धि करनी होगी। मनुष्यको भौतिक सुखोंके अभावोंका ही भान कराते रहनेसे वह कभी सुखी नहीं हो सकता क्योंकि भौतिक सुखोंकी कोअी सीमा नहीं है, कविको अुसके भीतर लहरानेवाले स्नेह-सागरकी अनन्तताका भी भान कराना होगा जिससे वह अपने चहुँओरके वातावरणको अपने समान ही प्रेम करना सीख सके।

"धरतीके बोल" में विनाश और निर्माण दोनोंके स्वर गुंजित हो रहे हैं। कवि अपने युग, अपने वातावरणपर दृष्टिपात करता है तो वह नैराश्यसे भर जाता है, खीझ, तिरस्कार, घृणासे अभिभूत हो जाता है। स्वाधीनताके पश्चात वह देखता है—

"रैयतकी कमरें झुकीं, हुजूर सलाम वही–
पुलिसके मुँहपर 'साले नमकहराम' वही।
पी तिरस्कार मैं तो हूँ आज गुलाम वही–
पंजरपर सूखी खाल है, और है काम वही।
'स्वाधीन वतन' 'फुटपाथों' पर, बिखरी नारीकी नग्न लाज।"

अैसे दृश्य देखकर कविकी कल्पना सन् १९४२ की ओर मुड़ जाती है—

"आज बयालीसकी कुर्बानी पूछ रही–
जलनेवालोंकी करवट ले–
रात दिवानी पूछ रही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूछ रही सुनी माँगें, क्या सचमुच हम आजाद ?
आज बिथासे भरी जवानी पूछ रही।"

बम्बअीके कृष्ण मन्दिर–माधोबागके दृश्य भी कविने अंकित किअे हैं जिनमें मानवताके अपमानके आँसुओंकी आर्द्रता है।

'तीन तस्वीरें' में आजके युवक, कवि और नेताकी आदर्शहीनतापर तीखा व्यंग्य है:—

"युगदृष्टा कवि कौन है ? जो–
पान मुंहमें कर जुगाली-सी निराली,
गाल अपने गोल गप्पेसे फुलाकर
कमर लचका, दाँत चमका–
मुस्करा कुछ नअी दुलहिन-सा लजाकर,
वह सुकवि है, खांस गरदनसे नफीरीसे सुरीले सुर निकाले।

'जुहू रोड' का शब्द-चित्रण भी 'वस्तु' को आकार प्रदान कर रहा है। वहाँ समाजके सभी स्तरके 'पात्रों' का अभिनय हो रहा है। अिस 'संग्रह' के कविने समुद्री जीवनको अंकित कर हिन्दी-कवितामें अपूर्व विषयको प्रविष्ट किया है। मलयालममें समुद्री जीवनपर विविध और प्रचुर सुन्दर काव्य है, जो स्वाभाविक भी है। हिन्दी-कविका समुद्री जीवनसे लगाव नहीं रहा। प्राचीन कवियोंमें 'जायसी' ने समुद्री तूफान आदिका वर्णन किया है पर वह कल्पनासे अतिरंजित है। आधुनिक कवियोंमें श्री 'नलिन' के समुद्रतटीय जीवनके चित्र यथार्थ और मनोरम हैं। अिस दृष्टिसे 'असफल, नाविक, लौट आ–ओ सिन्धु, हम समुद्र साहसी' शीर्षक कविताअें पठनीय हैं।

साँझ हो रही है–तूफानकी लहरोंपर प्रलय मच रहा है। मछुआ अभीतक किनारेपर नहीं लौटा। अुसकी विरह–विदग्धा पत्नी अपलक क्षितिजकी ओर देख रही है। अुसका हृदय रह-रहकर रो अुठता है—

माँगके सिंदूरको कबतक रुलाओगे ?
क्या नहीं आँसू उमड़ते पोछ जाओगे ?

"अति स्नेह" सचमुच "पाप शंकी" होता है। वह देखती है–

फन पटकती उर्मियाँ अनजान सागरकी
बौखलाअी प्यास कढ़ती सिन्धुके उरकी
बिजलियोंपर चढ़ चपल तूफान बढ़ आया।
क्या न सुनते छटपटाती चीख अम्बर थी ?
शामकी सिमटी खड़ी आतंक-भारी लौट आओ।

तूफानके आगमनका चित्र कितना सजीव है। दिन भर समुद्रमें आन्धी-पानीसे संघर्ष लेनेपर भी मछुआ बिना मछलीके लौट रहा है। 'पछतावेकी सांझ' में अुसकी अन्तर्व्यथाका मर्मस्पर्शी अुच्छ्वास है।

कविमें सृष्टिके चल-अचल दृश्योंको शब्दोंमें बाँध लेनेकी अद्भुत क्षमता है। 'जुहू-तट' में अेक दृश्यके पश्चात् दूसरा दृश्य हमारी आँखोंके सामने चल-चित्रसा झूल जाता है। स्थितिशील चित्रोंमें 'पनिहारी' की अपनी अलग अदा है। 'रसभरी-शीशपर धरी गगरिया छलकाती' वह जाती है, जिसकी 'रुनन-झुन-झुन मन डोलने' लगता है।

"तुम हो तितली" आधुनिकताके रूप-स्वभावकी व्यंगपूर्ण झाँकी है। 'पूनमकी रात' के मादक क्षणोंमें प्रेमियोंका आलाप-प्रलाप प्रकृति और पुरुषकी अनन्यता का भान कराता है। 'मेघ-सन्देश' में मानों कालिदास का 'यक्ष' ही बोल रहा है।

हिममें स्नात 'पहाड़' हीरोंका धवल किरीट पहने कितना सुन्दर लग रहा है। कविने अुसकी पार्श्व-भूमिकी भी यथावत् तस्वीर खींची है। अिसमें भी कविने प्रकृति–पुरुषके चिर संगमके दर्शन किअे हैं। 'संग्रह' की कदाचित् नर्तकी सर्वश्रेष्ठ रचना है। आधुनिक कविताके सारे अुपकरण अुसमें विद्यमान हैं। प्रतीकात्मकता, गेयता, रूप-विधान, भाषा-सिंगार—सभी दृष्टिसे वह संग्रहकी ही नहीं, आधुनिक हिन्दी-साहित्यकी अुच्च-कोटिकी प्रतिनिधि-कविता कही जा सकती है। अुसकी कुछ पंक्तियाँ हैं—

वे चरण कि जिनसे छलक रहे मृदु स्वर-कंपन,
वे चपल चरण जिनमें लिपटी है मदिर पवन,
वे असम चरण कर रहे किरण सागर-मन्थन !
बह जाती जिनसे हेम, नदी वर्तुल शरीर,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो भूमि-भालपर खींच रहे कुंकुम लकीर ।
युग-युगमें धरती रूपी नर्तकी अनजान

दिशाओंमें चक्कर काटती जाती है–

सतरंगी दामन शून्य चक्र-सा रहा घूम,
आलोक-विकल अनजान दिशाअें रहा चूम ।
अगनित अिन्दुके धनुष घघरियाकी सरवट
जिनमें चपलाकी सजग लहर लेती करवट ।

कविने, जैसा कि अूपर कहा जा चुका है, युगके अुत्पीड़नको वाणी दी है, अुसमें अुसकी आकांक्षा, अुसके स्वप्न सभी साकार हो अुठे हैं। शिल्पकी दृष्टिसे भी "बोल" के गीत अपना वैशिष्ट्य रखते हैं। वे गीत-बद्ध हैं और गीत-मुक्त भी हैं, पर अुनमेंसे अेकमें भी लयकी कमी नहीं है। छन्द-मुक्त कवितामें भी शब्दके चयन-चातुर्यसे भावोंमें संगीत भर जाता है। कल्पनाओं-की अभिनवता गीतोंके आकर्षणकी अभिवृद्धि कर रही है। कवि सचमुच रूपक और अुपमाओंका धनी है।

वह कोरा भावुक नहीं, भावनाको सिंगारनेवाला "कलाकार" भी है जिससे अुसका प्रत्येक भाव शब्दोंके रंगोंसे सजीला हो कल्पनाका अेक सुन्दर चित्र अुपस्थित कर हमें आकर्षित करता है।

वह हमें संघर्षका भान कराकर ही मौन नहीं हो जाता, अुससे लोहा लेनेको भी प्रेरित करता है:—

जो ठहर, संघर्षसे डर,
जिन्दगीके पृष्ठ लग जांय गिनते,
वह निबल कैसे जिअेगा ?
आग जब जलती न आकुल धड़कनोंमें–
जिन्दगीका वह अमृत कैसे पिअेगा ?

जगत गतिशील है, वह किसीके लिअे नहीं रुकता- "कब किसीके वास्ते कोअी रुका है"—

क्यों रुकेगा ?
जिन्दगीका काफिला चलता रहा,
चलता रहेगा ?

'धरती' के जीवनके बाह्य और अभ्यन्तरको रूप और 'वाणी' देनेवाले ये गीत अमर हों, यही कामना है। हिन्दी कविताके वर्तमान निराशापूर्ण वातावरणमें अिस संग्रहका प्रकाशन अुसके सुन्दर भविष्यकी सुखद सूचना है।*

---

* जयनाथ "नलिन" के कविता-संग्रह "धरतीके बोल" की भूमिका।

गीत

: श्री रञ्जन त्रिवेदी :

कोयलकी बौराअी कूकोंमें,
आगतके गीत लहर लेते हैं,
प्रतिध्वनिके कोमलसे गुंजनमें,
सांसोंके तार मुखर होते हैं,
नीरव-सी राहोंमें खोया ऋतु वास रे,
जीवनकी टहनीपर आया मधुमास रे।

मनकी अनजानी अिन निधियोंमें,
स्मृतियाँ आ-आ मुस्काती हैं,
मादक-सी कम्पनकी सिहरनमें,
मंजुलतम प्रीत अुभर आती है,
चंचल-सी चितवनपर छाया कल हास रे,
जीवनकी टहनीपर आया मधुमास रे।

सतरंगी चाहोंका अिन्द्रधनुष,
आशाके नभपर छा जाता है,
आहोंकी धूम्रिल रेखाओंमें,
मेघोंका प्यार अुतर आता है,
रिमझिमकी बूंदोंमें आया लघु हास रे,
जीवनकी टहनीपर आया मधुमास रे।

यह ऋतु है स्वप्नोंकी नीलम-सी,
फूलोंकी मलयज अुकसाती है,
स्वप्नोंमें सत्योंका राग जगा,
मधुतामें रीत नअी आती है,
नअी मधुर तानोंपर गाया अुल्लास रे,
जीवनकी टहनीपर आया मधुमास रे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक ब्रज भाषा काव्यका विकास

--प्रा. गणेश दत्त त्रिपाठी

('भारतेन्दु' से कविरत्न सत्यनारायण तक)

वीर-गाथा कालमें जब ब्रजभाषाका साहित्यिक रूप बन रहा था तब किसीको यह कल्पना नहीं थी कि अेक क्षेत्रीय बोली विकसित होकर कुछ वर्षोंमें सारे भारतकी सर्वश्रेष्ठ भाषा हो जाअेगी। किन्तु परिस्थितियों अेवम् ब्रजभाषाके निजी गुणोंने अुसे भक्तिकालके अुद्भवतक देशकी प्रमुख साहित्यिक भाषा बना दिया था। चौदहवीं शताब्दीमें अिसका साहित्यिक रूप निखर चला था। भक्तिकालमें आन्तरिक और बाह्य दोनों रूपोंमें ब्रजभाषा विकसित हुअी। तथा रीतिकालतक पहुँचते-पहुँचते अिसने हिन्दी साहित्यपर अेक-छत्र राज्य जमा लिया था तथा हिन्दीकी अवधी, खड़ी, बुन्देलखण्डी आदि प्रान्तीय बोलियोंको छोड़कर ब्रजभाषाको तत्कालीन कवियोंने देशकी काव्य-भाषाके रूपमें स्वीकार कर लिया।[1]

लेकिन रीतिकालीन काव्य धारा, जब सामंती कुंठाओं अेवम् कामुक चेष्टाओंसे पंकित हो गअी तब अुसमें स्वाभाविक गतिका ऱ्हास हो चला। कविताका जो प्रवाह केशवदास और चिन्तामणि आदिने बहाया—देव और बिहारीके समयमें वह पूर्णताको पहुँचकर क्षीण होने लगा तथा पद्माकर और प्रताप साहि तक पहुँचते-पहुँचते अुसकी गति प्रायः मन्द हो गअी।[2] अपनी दुरूहता अेवम् रूढ़िवादिताके कारण वह जन-साधारणसे पृथक् हो चली थी। शब्दोंकी तोड़-मरोड़ने अुसकी दुरूहताको और भी बढ़ाया। चक्कव, भुवाल, ठायों, दीह, लोय जैसे अनेक प्राकृत अेवम् अपभ्रष्ट शब्दोंके नियमित प्रयोगोंने ब्रजभाषाको अरुचिकर बना दिया।[3]

अुन्नीसवीं शताब्दीमें धीरे-धीरे कविताका स्वरूप खोखला होता गया। कविगण अनुप्रास और यमक आदिका जाल फैलाकर 'दूरकी कौड़ी' लानेका प्रयास करने लगे। काव्य-परम्परा और रूढ़ियोंकी सहायतासे वे शाब्दिक अिन्द्रजालकी रचना करने लगे। जैसे 'प्रताप साहि' का प्रसिद्ध सवैया जोकि नायिका भेदकी दुरूह रूढ़ियों और काव्य-परम्परासे अपरिचित पाठकोंके लिअे अेक समस्या है—

> सीख सिखाअी न मानति हैं,
> बर ही बस संग सखीनके आवै।
> खेलत खेल नअे जलमें,
> बिना काम वृथा कत जाम बितावै॥
> छोड़िके साथ सहेलिनको,
> रहि कै कहि कौन सवादहि पावै।
> कौन परी यह बानि अरी!
> नित नीर भरी गगरी ढरकावै॥

अिसी प्रकार रीतिकालकी समाप्ति तथा नवयुगकी पूर्व-पीठिकासे पहले कुछ कवि अैसे थे जो अुसी पुरानी परिपाटीके पोषक थे। जिनमें श्री. प्रताप साहिजी, असनीके ठाकूर, बुन्देलखण्डी ठाकूर, रीवां नरेश रघुराज सिंहजी, गोपालचन्द्र (गिरिधरदास) आदि मुख्य थे। अिन लोगोंकी सीमा नाअिका भेद तथा आलंकारिकतासे आगे नहीं बढ़ पाअी थी। अुदाहरणार्थ ठाकुरका कवित्त देखिअे:—

> "कोमलता कंज ते गुलाब ते सुगंध लैके,
> चन्द ते प्रकास गहि अुदित अुजेरो है।
> रूप रति आनन ते चातुरी सुजोनन ते,
> नीर लै निवानन ते कौतुक निबेरो है
> 'ठाकुर' कहत यों सँवारयो विधि कारीगर,
> रचना निहारि जनचित होत चेरो है

---

१ राम बहोरी शुक्ल—"द्विवेदी अभिनन्दन ग्रन्थ" पृ. ५४९.

२ डा. श्यामसुन्दरदास "भारतेन्दु हरिश्चन्द्र" पृ. १०.

३ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल "हिन्दी साहित्यका अितिहास" पृ. ५८०.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कंचनको रंग लै सवाद लै सुधा को,
वसुधाको सुख लूटि कै बनायो मुख तेरो है"

अिसमें नायिकाके मुख-निर्माणके तत्वोंकी गणना कर दी है। भारतेन्दु बाबूके पिता 'गोपाल चन्द्र' की कविताका नमूना देखिअे:—

"जगह जड़ाअू जामें जड़े हैं जवाहिरात,
जगमग जोति जाकी जगमें जमति है !
जामें जदुजानि जान प्यारी जातरूप अैसी,
जग मुख ज्वाल अैसी जोन्ह सी जगति है
'गिरिधरदास' जोर जबर जवानी को है,
जोहि जोहि जलजा हू जीवमें जकति है
जगतके जीवनके जियको चुराये जोय,
जोये जो पिताको जेठ–जरनि जरति है।"

कविताके अुपमान, रूपक आदि सभी अिस प्रकारके हैं कि जो जन-जीवनसे बहुत दूर होते हुअे भी अस्वाभाविक कल्पनाओंके लिअे प्रयुक्त किअे जाते रहे हैं। अैसी रूढ़िगत अलंकारोंके भारसे दबी हुअी यह काव्य-भाषा प्रगतिके मार्गपर चलनेमें असमर्थ थी।[1] पं. बदरीनाथ भट्टके शब्दोंमें "भाषाके अितिहासमें अेक अैसा भी समय आता है जब असली कवित्व शक्ति न रहनेपर लोग बनावटी भाषामें कुछ भी भला-बुरा लिखकर शब्दोंकी खींचातानी दिखाते हुअे अपनी योग्यताका अिजहार करते हैं और चाहे जैसी अश्लील या अनर्गल बातको छन्दके खोलमें छिपा हुआ देख, लोग अुसीको कविता समझने और समझाने लगते हैं।"[2]

रीति कालीन कविताका थोथापन तब अधिक स्पष्ट रूपसे भारतीयोंकी समझमें आया जब वे अंग्रेजी साहित्य अेवम् संस्कृतिके सम्पर्कमें आअे। बिहारीका वाग्विलास जहाँ अुन्हें पहले चमत्कृत करता था वहीं अब अुपहासका विषय बन गया। कल्पना या भावनाके स्थानपर अब भारतीय विचारोंमें बौद्धिकताका समावेश हो रहा था। अिस बुद्धिवादके प्रभावसे जीवनकी यथार्थता स्पष्ट होने लगी थी। साहित्यमें जीवनका सत्य मुखरित होने लगा। प्राचीन कवि अधिकांशतः भावोंकी व्यंजना करते थे, सत्योंकी नहीं जैसे:—

"दूरि जदुराअी 'सेनापति' सुखदाअी देखौ
आअी ऋतु पावस न पाअी प्रेम पतियाँ
धीर जलधरकी सुनत धुनि धरकी औ,
दरकी सुहागिनकी छोह भरी छतियाँ
आअी सुधि बरकी, हिये में आनि खरकी
सुमिरि प्रान प्यारी वह प्रीतमकी बतियाँ
बीति औधि आवनकी, लाल मन भावनकी
डग भअी बावनकी सावनकी रतियाँ॥[1]

यहां कविने नाअिकाके विरहमें केवल अुसके हृदय-पक्षको लिया और अुसके विरह की गम्भीरताको पूरी तरहसे नाप-जोखकर रख दिया है। लेकिन बरसातमें दुखी होनेवाली गाँवकी नाअिका अपने व्यावहारिक जीवनमें किस प्रकारका कष्ट अुठाती है अुसपर कविने नहीं सोचा और न अुसकी टूटी झोंपड़ी या गीली लकड़ियोंपर जिनके धूंअेसे अुसके नेत्रोंसे आँसुओंकी धार अुमड़ पड़ती है कविका ध्यान गया है। लेकिन बुद्धिवाद और वैज्ञानिक दृष्टिकोणके प्रभावसे आधुनिक कवि यथार्थवाद की ओर झुके। जैसे—

रबी जहाँ सींची जावे, तहँ गोहूँ जौ लहरायँ
सरसों सुमन प्रफुल्लित सोहैं, अलिमाला मँडराय
प्रकृति मुकुल हरा धारणकर आनन अपना खोल
हाव भाव मानहुँ बतलावै ठाढ़ी करै कलोल
बरहा खोदत श्रमी कृषकवर, जल नहीं कहुँ कढ़ि जाय
खुरपी और फाँवरा कर गहि, क्यारी काटहिं धाय
चरसा गहैं 'राम आये' कहि गाय गीत ग्रामीन
जीवन हेत देत खेतन कहँ जीवन नित्य नवीन॥[2]

अिसी प्रकारका यथार्थवादी चित्रण और देखिअे:—

प्राचीन और आधुनिक साहित्यमें यह अन्तर है कि

---

१ डा. श्रीकृष्णलाल "आधुनिक हिन्दी साहित्यका विकास—भूमिका पृ. ९.

२ पं. बदरीनाथ भट्ट "वर्तमान हिन्दी काव्यकी भाषा" (सरस्वती, फरवरी १९१३)

१ "कवित्त रत्नाकर" महाकवि सेनापति।

२. पं. सत्यनारायण 'कविरत्न' (सरस्वती, जनवरी १९०४)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युग भुजा अुर बीच समेटि कै,
लखहु आवत गैयन फेरि कै
कँपत कँबल बीच अहीर हैं
भ म भूलि गअी सब तान है ॥[1]

प्राचीन साहित्यकी वर्णित वस्तुअें अपने मूलरूपमें अनुरंजक हैं तथा आधुनिक साहित्यमें वर्णित वस्तुओंका महत्व बुद्धिपर प्रभाव डालनेके लिअे है।[2]

आधनिक विचार धाराके प्रवर्तनमें भारतकी तत्कालीन परिस्थितिका बहुत बड़ा हाथ है। अुस समय हमारे देशकी आर्थिक व्यवस्थामें द्रुत गतिसे परिवर्तन हो रहे थे। दो-दो अकालोंके बाद सन् १८५७ (स. १९१४) के स्वतन्त्रता संग्रामकी असफलताने देशके जीवनमें निराशाकी व्यापक लहर फैला दी थी। 'कम्पनी शासन' की समाप्तिके बाद भारतीय अितिहासमें अेक नवीन शासनका प्रादुर्भाव हुआ जोकि सामंती तौर-तरीकेसे काफी भिन्न था। अिस शासनकी प्रणाली साम्राज्य-विस्तारकी भावनाका आधार लेकर चलती थी। शासकीय सहायता प्राप्तकरके अंग्रेज व्यापारी अिंग्लैण्डके मालको भारतमें खपाकर यहाँके व्यापारियों, व्यवसाअियों अेवम् सामान्य जनताको बुरी तरह लूट रहे थे। लेकिन भारतीय जनताका मानसिक क्षितिज छोटे-छोटे राज्यों अेवम् जातीयताके संकीर्ण दायरोंमें बंटा हुआ था। अिसीलिअे जब सारे देशसे अंग्रेजी राज्यको खोद फेंकनेके लिअे ५७ का स्वाधीनता संग्राम लड़ा गया तब राष्ट्रीय भावनाके अभावके कारण बहुतसे भारतीयोंने अंग्रेजोंका साथ दिया और विद्रोहको कुचलनेमें सहायता दी।[3] अिस विषम परिस्थितिमें जहाँ देशके अधिकांश लोग निराश हो गअे थे वहां कुछ अैसे तत्व भी क्रियाशील हो अुठे जो अिस निराशा अेवम् दीनताके घने कुहासेको छिन्न-भिन्न कर देनेके लिअे आतुर थे। सत्तावनके स्वतन्त्रता-संग्रामके पश्चात् जन-साधारणमें राजनैतिक जागृतिके अंकुर प्रस्फुटित होने लगे थे। अिस जागृतिका कारण अंग्रेजी शिक्षाका प्रसार था। अंग्रेजों द्वारा प्रारम्भ की गअी अिस नवीन शिक्षाका लाभ मुख्यतया मध्यश्रेणीके लोगोंने अुठाया, क्योंकि अिससे अुन्हें अपने जीवनकी अुन्नतिका अवसर प्राप्त होता था। अंग्रेज शासकोंको सरकारका संचालन करनेके लिअे अैसे कर्मचारियोंकी आवश्यकता थी, जो अुनकी भाषा समझते हों और जो छोटे राजकीय पदोंको संभालकर अुनके आदेशोंको कार्यान्वित करनेकी क्षमता रखते हों।[4] पर अंग्रेजोंने भारतमें नअी शिक्षाका सूत्रपात चाहे किसी भी अुद्देश्यसे किया हो, लेकिन यह सम्भव नहीं था कि अंग्रेजी साहित्यके विचारोंका भारतीयोंपर कोअी प्रभाव न पड़ता। भारतवर्षमें अंग्रेजी पुस्तकें और समाचार-पत्र धड़ल्लेसे आ रहे थे, अतअेव यूरोपमें चलनेवाले वैचारिक आन्दोलनोंके साथ भारत अनायास सम्बद्ध हो गया तथा जिन भावनाओंकी चोटसे यूरोपके मस्तिष्ककी शिराअें थरथरा रही थीं अुन भावनाओंकी चोट भारतको भी महसूस होने लगी।[5] गणित, भूगोल, अितिहास, रसायन शास्त्र, अिंजिनियरिंग, चिकित्सा शास्त्र, साहित्य आदिके आधुनिक विषयोंका ज्ञान प्राप्तकर लेनेके कारण भारतमें अेक अैसे शिक्षित वर्गका अुदय हुआ जिसके लोग जहां अेक तरफ सरकारी नौकरी पाकर अपने वैयक्तिक अुत्कर्षके लिअे अुत्सुक थे वहां साथ ही यह भी अनुभव करते थे कि भारतको भी अिंग्लैण्ड, फ्रान्स, जर्मनी आदि पाश्चात्य देशोंके समान अुन्नतिके पथपर आरूढ़ होना चाहिअे। अपने देशकी सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक दुर्दशाको ये तीव्रताके साथ अनुभव करते थे और अिस बातके लिअे अुत्सुक थे कि भारतमें भी नवयुगका सूत्र-पात हो तथा भारतीयोंका कार्य केवल अंग्रेजी सरकार रूपी यन्त्रका पुर्जा बनकर ही न रहे, अपितु अपने देशके शासन-सूत्रके संचालनमें भी अुनका हाथ हो।[6] अिस प्रकार सामाजिक, राजनैतिक और

---

१ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

२ डा. श्रीकृष्णलाल "आधुनिक हिन्दी साहित्यका विकास" भूमिका पृ. ६.

३ डा. सत्यकेतु विद्यालंकार "भारतीय संस्कृति और अुसका अितिहास" भाग २; पृ. ७७९.

४ वही –पृ. ७३९.

५ श्री रामधारी सिंह दिनकर "संस्कृतिके चार अध्याय" पृ. ४२०.

६ डा. सत्यकेतु विद्यालंकार "भारतीय संस्कृति और अुसका अितिहास" भाग २, पृ. ७४१.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धार्मिक क्षेत्रोंमें अेक नवीन चेतनाका प्रादुर्भाव हुआ। जिसके कारण ब्राह्म-समाज (१८२८ अी.), प्रार्थना समाज (१८६७), आर्य-समाज (१८७५), रामकृष्ण मिशन, थियासॉफिकल सोसायटी (१८७५), दक्खन अज्युकेशन सोसायटी (१८८४), सर्वेन्ट्स ऑफ अिन्डिया सोसायटी (१९०५) आदि अनेक संस्थाओंकी स्थापना हुअी।

नव जागृतिके अिस शंखनादने पिछली दो शताब्दियों-से दरबारी सीमाओंमें घिरी हिन्दी कविताको अुबारनेका प्रयत्न किया। आधुनिक व्रजभाषा कवितामें दो धाराअें प्रारम्भसे ही स्पष्ट हैं: (१) नवीन धारा, (२) पुरानी धारा

नवीन धारामें कविगण समाजकी बदलती हुअी परिस्थितियोंका सही मूल्यांकन करके अपनी भाषा और शैलीमें पर्याप्त परिमार्जन ला सके। भावों तथा विचारोंमें सर्वथा नवीन परम्पराका निर्माण करनेमें अिस धाराके कवि अग्रणी हैं। समाज सुधार, देशभक्ति, जाति-सुधार व अेकता आदिके साथ-साथ लोक-हित व मातृभाषाका अुद्धार आदि अिनके विषय थे। रीति-कालीन रूढ़ परम्पराओंका त्यागकर नवीन अुद्भावनाओंसे युक्त कविताओंकी रचना की जाने लगी। जैसे रीति-कालके कवियोंकी रूढ़िमें हास्यके आलम्बन केवल कंजूस ही चले आते थे; पर अब पुरानी लकीरके फकीर नअे फैशनके गुलाम, नोच-खसोट करनेवाले, अदालती अमले, चापलूस मूर्ख और खुशामदी रअीस, नाम या दामके भूखे देशभक्त अित्यादि। अिसी प्रकार वीरता-के आश्रय भी जन्म-भूमिके अुद्धारके लिअे रक्त बहाने-वाले, अन्याय और अत्याचारका दमन करनेवाले अितिहास प्रसिद्ध वीर होने लगे। अिस नअी धाराकी कविताके भीतर अिन नअे-नअे विषयोंके प्रतिबिम्ब आअे, वे अपनी नवीनतासे आकर्षित करनेके अतिरिक्त नूतन परिस्थितिके साथ हमारे मनोविकारोंका सामंजस्य भी घटित कर चले।[1] अिस धाराके प्रमुख कवि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र थे। अिन्होंने प्राचीन तथा नवीन दोनों ही परिपाटीकी कविताअें लिखीं। लेकिन वास्तविक झुकाव नवीनकी ओर था। अिनमें राष्ट्रीय और भक्तिकी भावना कूटकूटकर भरी थी। तत्कालीन शिष्ट समाजमें अंग्रेजी व अुर्दूकी ओर रुचि बढ़ रही थी, अिसीलिअे भारतेन्दुजीने अनेक स्थानोंपर स्वयम् जा-जाकर हिन्दीका प्रचार किया। वे प्रायः अपने भाषणोंमें कहा करते थे —

निज भाषाकी अुन्नति अहै सब अुन्नति को मूल।
बिन निज भाषा-ज्ञानके, मिटत न हियको सूल॥

अुनकी राष्ट्रीय भावना प्रारम्भमें राजभक्तिके रूपमें प्रगट हुअी। मिश्रमें भारतीय सेनाके शौर्यसे प्रभावित होकर "बिजयिनी विजय पताका या वैजयन्ती" में जो कुछ प्रशंसा की है अुसका आधार देशभक्ति किंवा राज-भक्ति था। लेकिन अुस समय जो साहस भारतेन्दु-ने दिखाया वह तत्कालीन कवियोंमें किसीसे नहीं बन पड़ा। अुस समय राष्ट्रीय भावनाअें पूर्णरूपसे विकसित नहीं हुअी थीं अिसीलिअे कअी कवियोंने '५७ के विद्रोहपर कुछ भी नहीं लिखा। तथा कुछने अुसे बड़ी अुपेक्षासे देखा। अेक कविने तो केवल 'गुबार' कहकर अुसकी महत्ता समाप्त कर दी।

गदर गनीम गुबार अुठ्यो संतावनमें सिगरे जग जानी
केते अनीति अनीत कियो सब हिन्द प्रजा हियमें भय आनी
त्यौं ही 'बिहारी' लियो कर सासन मेटि प्रजा दुख बेगि सयानी
जेहि अैसो विचार असीसैं सबै चिर जीवो सदा विक्टोरिया रानी॥[2]

अिसी प्रकार पं. प्रतापनारायण मिश्रने अिसे सेनाका बिगड़ना कहा था,

सन सत्तावन माँहि जबहिं कछु सेना बिगरी।
तब राजा दिसी रही सुदृढ़ है परजा सिगरी॥[3]

---

१ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल "हिन्दी साहित्यका अितिहास." पृ. ५८८

२ रसराज बाबू बिहारी सिंह "भारतेश्वरी भूषण" १८८७ अी.

३ पं. प्रतापनारायण मिश्र "ब्रेडला स्वागत" कविता १८८९ अी.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा—

धन्य ओसवी सन् अट्ठारह सौ अट्ठावन
प्रथम नवंबर दिवस सितासित भेद मिटावन।
अभयदान जब पाय प्रजा भारत हरषानी
अरु लहि तुमसी दयावती माता महारानी ॥

× × ×

देसी मूढ़ सिपाह कछुक लै कुटिल प्रजा संग
कियो अमित अुत्पात, रच्यो निज नासनको ढँग
बढ़्यो देसमें दुख, बनि गअी प्रजा अतिकातर
फेर्‌यो जब तुम दया दीठ भारतके अूपर ॥[1]

जहां भारतके अनेक कवि राजभक्तिमें ही देशभक्ति मानते थे वहां भारतेन्दुका स्वर कुछ पृथक दिखाअी दिया। अुन्होंने भी राजभक्ति प्रदर्शित की; लेकिन भारतके प्राचीन गौरवका स्मरण करते हुअे तथा वर्तमान दुःखी हालतपर क्षोभ प्रगट करते हुअे अुन्होंने नीलदेवी, भारत-दुर्दशा आदि नाटकोंमें अपने राष्ट्रीय स्वरको दृढ़तापूर्वक साधा है—

अँगरेज राज सुख साज भअे सब भारी
पै धन बिदेस चलि जात अिहै अति ख्वारी
ता अूपर महँगी काल रोग बिस्तारी
दिन-दिन दूने दुख देत अीस हा! हा!! री,
सबके अूपर टिक्कसकी आफत आअी
हा! हा!! भारत दुर्दसा न देखी जाअी!

अिसी प्रकार—

हाय वहै भारत भुव भारी, सबही विधितें भअी दुखारी
रोम ग्रीस पुनि निज बल पायो, सब विधि भारत दुलित बनायो
हाय पंच नद! हा पानीपत!! अजहुँ रहे तुम धरनि बिराजत
हाय चितौर निलज तू भारी, अजहुँ खरो भारतहिं मँझारी ॥[2]

अेक अुद्बोधन देखिअे—

अरे बीर अेक बेर अुठहु सब फिर कित सोअे
लेहु करन करवाल काढ़ि रन-रंग समोये
चलहु बीर अुठि तुरत सबै जय-ध्वजहि अुड़ाओ
लेहु म्यान सो खंग खींचि रन-रंग जमाओ
परिकर कटि कसि अुठौ बँदूकन भरि-भरि साधौ
सजौ जुद्ध-बानौ सबहि रन-कंकन बाँधौ।

× × ×

अुठहु बीर तरवार खींचि बाढ़हु घन संगर
लोह लेखनी लिखहु आर्य बल जवन-हृदयपर ॥

देशकी दुर्दशाको देखकर दुखी हृदयसे कवि कहीं भगवानको पुकार अुठता है, कहीं पराधीन भारतकी तत्कालीन अधोगतिपर क्षुब्ध हो अुठता है, कहीं भारतके दुख, दारिद्र्य और अंग्रेजों द्वारा भारतके आर्थिक शोषणपर सन्तप्त हो जाता है, कहीं प्राचीन गौरवका स्मरण करके देशवासियोंको संगठित होकर जाग अुठनेका अुद्बोधन देता है।

सोअत निसि बैस गँवाअी, जागो-जागो रे भाअी
निसिकी कौन कहै दिन बीत्यौ काल राति चलि आअी[1]

× × ×

कहाँ करुनानिधि केसव सोअे!
जागत नेक न जदपि बहुत विधि भारतवासी रोअे[2]

× × ×

रोवहु सब मिलि कै आवहु भारत भाअी
हा! हा!! भारत-दुर्दशा न देखी जाअी

× × ×

जहँ भअे शाक्य हरिचंद'स नहुषययाती
जहँ राम युधिष्ठिर वासुदेव सर्याती
जहँ राम करन अर्जुनकी छटा दिखाती
तहँ रही मूढ़ता कलह अबिद्या राती ॥[3]

भारतेन्दुकी प्रतिभा बहुमुखी थी। जहां अुन्होंने देशभक्तिकी भावना अेवम् राष्ट्रीय चेतनासे अनुप्राणित

---

१ अुपाध्याय बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' "हार्दिक हर्षादर्श" (महारानी व्हिक्टोरियाके राज्यारोहणपर)

२ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र "विजयिनी विजय वैजयन्ती।"

१ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र "नीलदेवी" छठा अंक

२ ..... वही ... आठवां अंक

३ "भारत दुर्दशा"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओजपूर्ण कविताअें लिखीं वहीं भावपूर्ण, सरस अेवम् भक्तिभावनासे भरी कविताओंमें रीति कालीन किसी भी कविसे पीछे नहीं रहे। सूरके समान ललित पद देखिअे—

सखीरी देखहु बाल विनोद !
खेलत राम-कृष्ण दोअू आँगन किलकत हँसत प्रमोद
कबहुँ घुटरुवन दौरत दोअू मिलि धूर धूसरित गात
देखि-देखि यह बाल चरित छबि जननी बलि-बलि जात ॥ [1]

बिहारीके दोहों-सा लालित्य देखिअे—

भक्त-हृदय वारिधि अगम, झलकत स्यामहि रंग।
विरह-पवन हिल्लोर लहि, अुमग्यो प्रेम-तरंग ॥ [2]

कवित्तोंकी रचनामें देव, मतिराम, घनानन्द, पद्माकर, रसखान, तोष आदिसे कम माधुर्य कहीं भी नहीं मिलेगा। साथ ही भावोंका सात्विक रूप जिसमें हृदयकी गहराअी अेवम् मार्मिकता सच्चे रूपमें भरी मिलती है। जैसे—

पहिले ही जाय मिले गुनमें श्रवन फेरि,
रूप सुधा भधि कीनो नैनहू पयान है।
हँसनि, नटनि, चितवनि मुसकानि सुघराअी,
रसिकाअी मिलि मति पय पान है ॥
मोहिं मोहिं मोहनमयी री मन मेरो भयो,
'हरीचंद' भेद ना परत कछु जान है।
कान्ह भअे प्रानमय, प्रान भअे कान्हमय,
हियमें न जानि परै कान्ह है कि प्रान है ॥ [3]

भाषा, भाव और गतिका लालित्य देखिअे—

भूली-सी भ्रमी-सी चौंकी, जकी-सी थकी-सी गोपी
दुखी-सी रहत कछू नाहीं सुधि देहकी।
मोही-सी लुभाअी कछु मोदक सो खाअे सदा
बिसरी-सी रहै नेक खबर न गेहकी ॥
रिस भरी रहै कबौं फूली न समाति अंग
हँसि-हँसि कहै बात अधिक अुमेहकी।
पूछेते खिसानी होय अुतर न आवै ताहि
जानी हम जानी यह निसानी या सनेहकी ॥ [4]

अिस प्रकार ब्रजभाषा-कविताको आधुनिक रूप देनेवाले महाकवि भारतेन्दु अेक ओर सूर और मीराकी प्रतिकृति हैं, दूसरी ओर बिहारीके प्रतिरूप हैं, तीसरी ओर रसखान और घनानन्दकी प्रतिच्छबि हैं तो चौथी ओर भावी क्रांतिके कवियोंके नेता भी हैं। अुन्होंने कविताके सभी कुंज-निकुंजोंमें विहार करके राजपथकी ओर जानेका सिंहद्वार भी खोला है। [5] अेक बात अवश्य है कि वे प्रकृतिकी गोदमें खुलकर नहीं खेल पाअे। मानवीय भावनाओंको प्रतिबिम्बित करनेमें ही अुनकी कविता सफल हुअी। वे मूलतः 'नर' प्रकृतिके कवि थे। बाह्य प्रकृतिकी अनंत रूपताके साथ अुनके हृदयका सामंजस्य नहीं पाया जाता। [6] 'सत्य हरिश्चन्द्र' में जिस गंगाका वर्णन किया गया है वह गंगा काशीके विशालकाय घाटोंके नीचे बहती हुअी गंगा है। वनस्थलीके बीचमें स्वच्छन्द बहती हुअी गंगाकी जलधाराका वह वर्णन नहीं है। [7] प्रकृतिका अिस रूपमें चित्रण करना तत्कालीन शहरी मनोवृत्तिका परिचायक है। भारतेन्दु मण्डलके प्रायः सभी कवियोंमें अुपरोक्त विशेषता रही है।

भारतेन्दु-युगकी विशेषताओंका अुल्लेख अधिकांशतः भारतेन्दुके काव्यके साथ ही हो गया है, किन्तु अुनके सहयोगियों द्वारा कुछ नवीन अुद्भावनाअें भी हुअीं जिनका संक्षिप्त परिचय आवश्यक है। भारतेन्दुने अनुवाद तथा मौलिक रूपमें १०० से भी अधिक ग्रन्थोंका प्रणयन किया। अिनके साथी पं. प्रतापनारायण मिश्र 'पद्यात्मक निबन्धों' की ओर प्रवृत्त हुअे, यद्यपि स्वंयम् भारतेन्दु अिस ओर नहीं बढ़े थे। मिश्रजीने देश-दशापर

---

१ प्रेम-मालिका
२ प्रेम-तरंग
३ प्रेम-माधुरी
४ वही
५ डा. सुधीन्द्र "हिन्दी कविताका क्रान्ति-युग" पृ. १०
६ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, "हिन्दी साहित्यका अितिहास" पृ. ५९०
७ श्री ब्रजरत्नदास "भारतेन्दु हरिश्चन्द्र" पृ. २३८.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आँसू बहानेके अतिरिक्त बुढ़ापा, गोरक्षा आदि विषय भी कविताके लिअे चुने, जिनमें कुछ विचार, कुछ भाव-व्यंजना और कुछ विनोद भी सम्मिलित रहता था। समाजमें अंग्रेजोंकी साहबीका भेदभाव किस प्रकार खटकता था अुसे देखिअे--

चलत जितै कानून अिहाँ, अुनकी गति न्यारी
जस चाहहिं तस फेरि सकहिं तन कहँ अधिकारी
बड़े-डड़े बारिस्टर बहुधा बकि बकि हारैं
पै हाकिम जन जस जिय चाहैं तस करि डारैं ॥

हास्य और विनोदमें हरगंगा, तृप्यंताम्, बुढ़ापा आदि प्रसिद्ध हैं। साथ ही--

"चहहु जो साचो निज कल्यान
तो सब मिलि भारत संतान
जयौ निरंतर अेक जबान
हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान।"

वाली 'हिन्दीकी हिमायत' भी बहुत प्रसिद्ध हुअी। अिस प्रकार आपसी फूटपर संकेत देते हुअे देशकी दशापर प्रकाश डाला--

भाय भाय आपसमें लरैं
परदेसिनके पायन परैं
यहै द्वेष भारत शशि राहू
घरका भेदिया लंका दाहू।[1]

पं. बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' ने विशेष अवसरोंपर अधिक लिखा है। लेकिन भारतकी दुर्दशा-पर भी काफी लिखा। जैसे--

पै कछु कहि न जाय दिननके फेर फिरे अब
दुरभागिन सों अित फैले फल फूट बैर सब।
भयो भूमि भारतमें महा भयंकर भारत
भये बीर बर सकल सुभट अेकहि सँग गारत ॥[2]

अिसी प्रकार समाजमें आनेवाली विकृतिकी खिल्ली भी अुड़ाअी--

अच्छर चार पढ़े अँग्रेजी बनि गये अफलातून
मिलहिं मेम तो हैं कैसे जैकर 'फियर फेस लाअिक न मून'
बिस्कुट केक कहाँ तूं पैव्यः चाभः चना भले ही भून
डियर 'प्रेमघन' हियर दया कर गीत न गाओ लैम्बून ॥

अिनकी कविताओंमें यति भंग प्रायः मिलता है।[3] पर ये अुसकी कोअी चिन्ता नहीं करते थे।

ठाकुर जगमोहनसिंह अपनी कविताको नअे विषयोंकी ओर नहीं ले गअे। पर प्राचीन संस्कृत काव्योंके प्राकृतिक वर्णनोंका संस्कार मनमें लिअे हुअे प्रेमचर्याकी मधुर स्मृतिसे समन्वित विन्ध्य प्रदेशके रमणीय स्थलोंको जिस अनुरागकी दृष्टिसे अुन्होंने देखा है, वह ध्यान देने योग्य है। अुसके द्वारा अुन्होंने हिन्दी काव्यमें अेक नूतन विधानका आयास दिया था। प्रकृतिको केवल अुद्दीपनका माध्यम बनाकर प्रयुक्त करना ही पर्याप्त नहीं है अपितु अुसके निजी सौन्दर्यका अुद्घाटन भी आवश्यक है। ठाकुरजीने अिसी अभावकी पूर्ति की।

बाबू बालमुकुन्द गुप्त पुराने सुधारवादी थे। वे अधिक अंशोंमें जातीय भावनाके पोषक कवि थे। "हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान' के अुपासक थे। वे नवीन जातीय सुधारोंके हिमायती नहीं थे। अुनकी अिच्छा थी--

हिय सों नाथ न बीसरै कबहु रामको राज।
हिन्दूपन पै दृढ़ रहै, निसिदिन हिन्दु समाज ॥[4]

तथा

अब मात दया कर देहु बर, लगि रहैं तुम्हरे चरन।
हिय सों न बिसारहिं हम कबहुँ अपनो साँचो हिन्दूपन ॥[5]

पं. अम्बिकादत्त व्यासने भी नअे-नअे विषयोंपर फुटकल कविताअें रचीं। कुछ विनोदके लिअे भी लिखा। पर ये अपरिवर्तनवादी या पुराणवादी थे। नवीन जातीय सुधारोंसे क्षुब्ध हो जाते थे। जैसे--

जाति भेदकी जगत विदित फुलवारी फूली।
ये ताहूको तोरि करन चाहत निर्मूली ॥

१--लोकोक्ति-शतक पृ. २.
२--"हार्दिक हर्षादर्श"
३-आचार्य रामचन्द्र शुक्ल-हिन्दी साहित्यका अितिहास पृ. ५९२।
४-श्रीराम स्तोत्र (१८९६ अी.)।
५-लक्ष्मी-स्तोत्र (१८९७ अी.)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यासजीके साथी बाबू 'रामकृष्ण वर्मा' थे। ये समस्या पूर्तिमें बड़े प्रसिद्ध हुअे। अिनका 'बिहारी विहार' बहुत बड़ा ग्रन्थ है; जिसमें बिहारीके दोहोंके भाव बड़ी मार्मिकतासें विकसित किअे हैं। डुमराँव निवासी पं. नकछेदी तिवारी (अजान), पं. विजयानन्द त्रिपाठी, लाला सीताराम बी. अे. 'भूप', पं. राधाकृष्ण द्रत्त आदि अिसी परम्पराके कवि थे।

पूर्णतः पुरानी धाराके कवि थे सेवक, महाराज रघुराजसिंह रीवाँ नरेश, सरदार, बाबा रघुनाथ दास राम सनेही, ललित किशोरी (साह कुन्दन लाल), राजा लक्ष्मणसिंह, लछराम (ब्रह्म भट्ट), गोविन्द गल्लाभाअी, नवीन चौबे आदि। लेकिन राय देवी-प्रसाद पूर्ण, दुलारेलाल भार्गव, पं. रामनाथ ज्योतिषी, नाथूराम शंकर शर्मा 'शंकर', लाला भगवानदीन, रामनरेश त्रिपाठी, रूपनारायण पाण्डे, हरिऔध, श्रीधर पाठक, रत्नाकर, सत्यनारायण कविरत्न, गयाप्रसाद शुक्ल सनेही, वियोगी हरि, पं. रामचन्द्र शुक्ल, केसरी सिंह बारहट, अुमाशंकर बाजपेअी 'अुमेश', रायकृष्णदास, आदि कवि ब्रजभाषामें मिश्रित परम्पराका निर्माण करने-वाले हैं। अर्थात् कुछ पुरानी और नवीन दोनों ही परिपाटीको लेकर चलते थे। ब्रजभाषामें पुरानी परिपाटी और खड़ी बोलीमें नवीन परिपाटीको लेकर चलते थे। ब्रजभाषामें पुरानी परिपाटीके लेखकोंने नवीन विषयोंको अवश्य अपनाया। अिस समय तक सारे देशमें अंग्रेजीके प्रभावसे अुदारताका समावेश हुआ। सामाजिक अेवम् धार्मिक संगठनोंने जनताके पुराने संस्कारोंका परिष्कार किया। नवीन तथा अर्वाचीनके सुन्दर समन्वयसे राष्ट्रीयताकी लहर जाग रही थी। जिसके सम्पर्कसे हिन्दू धर्ममें जाग्रतिकी अैसी लहर अुठी कि हिन्दुत्वका रोग ही दूर हो गया[1] तथा हृदयकी निश्चलतासे पूर्ण भक्तिकी भावनाका विकास हुआ जिनमें मार्मिकता कूट-कूटकर भरी दिखाअी पड़ती है। यह अवश्य है कि अिस कालके कवियोंने कवितामें नवजीवन तो डाला किन्तु अुनकी शक्ति मुक्तक रचनाओं व छोटे-छोटे पद्यात्मक निबन्धोंकी अवतारणा करनेमें लगी रही और वे नवीन विषयोंपर प्रबन्ध काव्य न लिख सके।[2] भारतेन्दुजीने हिन्दी काव्यको केवल नअे-नअे विषयोंकी ओर ही अुन्मुख किया, अुसके भीतर किसी नवीन विधान या प्रणालीका सूत्रपात नहीं किया। पुरानी कवितामें प्रबन्धका रूप कथात्मक और वर्णनात्मक ही चला आता था। या तो पौराणिक कथाओं व अैतिहासिक वृत्तोंको लेकर छोटे-बड़े आख्यानक काव्य रचे जाते थे जैसे पद्मावत, रामचरित मानस, रामचन्द्रिका, छत्र-प्रकाश, सुदामा-चरित्र, दानलीला, चीर-हरन-लीला आदि अथवा विवाह, मृगया, झूला, हिण्डोला, ऋतु विहारको लेकर वस्तु वर्णनात्मक प्रबन्ध। अनेक प्रकारके सामान्य विषयोंपर बुढ़ापा, विधिविडम्बना, जगत-सचाअी-सार, गोरक्षा, मातृ-स्नेह, सपूत, कपूत—कुछ दूरतक चलती हुअी विचारों और भावोंकी शिक्षित धाराके रूपमें छोटे प्रबन्धोंकी चाल न थी।[3]

अिसके साथ ही भारतेन्दु युगमें झलकनेवाली जातीय भावना क्रमशः कम होती गअी। क्योंकि अुन कवियोंका देशानुराग वास्तवमें सच्चा था। अपनी समझके अनुसार अुन्होंने सब कुछ होते हुअे भी आशाकी कुछ क्षीण किरणोंसे प्रेरित होकर अपने प्राचीन हिन्दू आदर्शोंको अेक बार फिर लौटाने, देशभरको अेक भाषा-के सूत्रमें बांधने तथा अपने समाजमें अच्छे-अच्छे भावोंके प्रचार द्वारा सुधार करने आदि अनेकानेक साधनोंको अपनाकर अुन्हें अपनानेके लिअे देशवासियोंको अुपदेश देना प्रारम्भ किया था। अतअेव भौगोलिक, अैतिहासिक, भाषा सम्बन्धी तथा कुछ अंशोंतक सामाजिक अेकताका राग अलापने, पूर्व गौरव तथा शक्तिका गान गाकर, वर्तमान दुर्दशाको देखकर दुःखमअी समवेदना प्रकट करने तथा अुत्सवादिके समय हर्षोल्लास दिखलाने, अपनी

१—रामधारी सिंह दिनकर "संस्कृतिके चार अध्याय" पृ. ४१८।

२—रामबहोरी शुक्ल "द्विवेदी अभिनन्दन ग्रन्थ" पृ. ५५०।

३—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल "हिन्दी साहित्यका अितिहास" पृ. ५८९।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा पराओ वस्तुओंमें भेद प्रकट करने तथा देशके लिअे ओश्वरसे मंगल कामना प्रदर्शित करनेसे सम्बन्ध रखनेवाली अिनकी कविताअें वास्तवमें जातीयतासे भरी हैं।[1] अिस प्रकारकी जातीयताका अन्त राष्ट्रीय चेतनाके विकाससे हुआ। नवीन परिपाटीके कुछ बादके कवि तो स्वतः राष्ट्रीय आन्दोलनोंके नेता भी हुअे जिनमें 'श्री वियोगी हरि' का नाम अग्रणी है। अिसी प्रकार सामाजिक और राष्ट्रीय चेतनाको जन सामान्य तथा अपने अनुयाअियोंमें फैलानेमें सतत रूपसे जागरूक रहनेवालोंमें पं. महावीर प्रसाद द्विवेदीका नाम अुल्लेखनीय है। यद्यपि अुन्होंने काव्यका माध्यम खड़ी बोलीको बनानेका कार्य सर्वाधिक किया है पर अुनके कविका वास्तविक रूप ब्रजभाषामें ही प्रगट हुआ। जैसे—

श्रीयुक्त नागरि निहारि दशा तिहारी।
होवै विषाद मन माँहि अतीव भारी॥
प्राकार जासु नभ-मंडलमें सभाने।
प्राचीर जासु लखि लोकप हू सकाने॥
जाकी समस्त सुनि संपतिकी कहानी।
नीचे नवाय सिर देवपुरी लजानी॥[2]

अुपरोक्त कविता संस्कृत वर्णवृत्तमें लिखी गअी है। आधुनिक कालमें ब्रजभाषा पद्यके लिअे संस्कृत वृत्तोंका व्यवहार सबसे पहले स्व. पं. सरयू प्रसाद मिश्रने रघुवंश महाकाव्यके पद्यबद्ध अनुवादमें किया था।

श्रीधर पाठकको हिन्दीमें प्रकृति-चित्रणको आलम्बन रूपमें प्रस्तुत करनेमें बड़ी सफलता मिली थी। अिनकी ब्रजभाषा बड़ी रसीली व प्रवाहमय होती थी। जैसे—

नाना कृपान निज पानि लिअे,
वपुनील वसन परिधान किअे।
गम्भीर घोर अभिमान हिये,
छकि परिजात-मधुपान किये॥

छिन-छिनपर जोर मरोर दिखावत,
पल-पलपर आकृति कोर झुकावत।
यह मोर नचावत, सोर मचावत,
स्वेत-स्वेत बग-पाँति अुड़ावत॥

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदीके प्रभावसे खड़ी बोलीने ब्रजभाषाका स्थान कवितामें ग्रहण कर लिया था। लेकिन यह धारा अनेक रूपोंमें निरन्तर प्रवाहित होती रही। कुछ कवि पुरानी परिपाटीपर चल रहे थे व कुछ नवीन। पुरानी परिपाटीके कवियोंमें बाबू जगन्नाथ दास रत्नाकरका स्थान बहुत अूंचा माना जाता है। अिन्होंने हरिश्चन्द्र, गंगावतरण तथा अुद्धवशतक नामक तीन अति सुन्दर काव्य लिखे। अंग्रेजीके 'पोप' के समालोचना सम्बन्धी प्रसिद्ध काव्य (Essay on Criticism) का रोला छन्दमें अच्छा अनुवाद किया। 'अुद्धव-शतक' में अिनकी कलाका चरम विकास हुआ है। पुरानी समस्त परम्पराओंका समन्वय अत्यन्त परिष्कृत रूपमें अिसमें मिलता है। अभिव्यंजना शैली तथा रचना-कौशलमें ये रीतिकालके समस्त कवियोंसे आगे बढ़ गअे हैं। शुद्ध टकसाली ब्रजभाषा यदि कहीं देखनेमें आ सकती है तो अिनके काव्यमें ही। अनुप्रास, यमक, श्लेष आदि अलंकारोंका सम्यग् प्रयोग गत्यात्मकता, चित्रात्मकता, मनोभावाभिव्यंजकता, सूक्ष्म पर्यवेक्षण, प्रेमकी अनन्यता, और अनिवर्चनीयता, सांकेतिकता, लाक्षणिक वैचित्र्य, प्रसाद, ओज और माधुर्य तीनोंकी समर्थ व्यंजना, गुण और रीतियोंका सफल अेवम् अधिकारपूर्ण प्रयोग, विरोधाभास, स्वभावोक्ति, दार्शनिकता, बौद्धिकता, तार्किकता, मनोवैज्ञानिकता, आदिसे परिपूर्ण 'अुद्धव-शतक' काव्य आधुनिक ब्रजभाषाकी अद्वितीय संपत्ति है। भाषा अेवम् भावका लालित्य जो कि चित्रमय हो अुठा है, देखिअे—

भेजे मन भावनको, अुधौके आवनकी
सुनि ब्रज गाँवनिमें पावनि जबै लगीं
कहै 'रतनाकर' गुवालिनिकी झौंरि-झौंरि
दौरि-दौरि नन्द-पौरि आवन तबै लगीं
अुझकि-अुझकि पद कंजनिके पंजनि पै
पैखि-पैखि पाती छाती छोहनि छबै लगीं

१—श्री. परशुराम चतुर्वेदी "मध्यकालीन श्रृंगारिक वृत्तियाँ तथा नव निबन्ध" पृ. १८३।

२—आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी "नागरी! तेरी यह दशा!!" (१८९८ अी.)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमकौं लिख्यौ है कहा, हमकौं लिख्यौ है कहा,
हमकौं लिख्यौ है कहा कहन सबै लगीं ॥

अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' पहले ब्रज-भाषामें लिखते थे। अनकी ब्रजभाषाकी रचनाअें 'रसकलश" में संग्रहीत हैं। कानपुरके राय देवीप्रसाद 'पूर्ण' पुराने कवियोंकी याद दिलानेमें समर्थ थे। श्री 'वियोगी हरि' ब्रजभाषा, ब्रजभूमि और ब्रजपतिके अनन्य अुपासक हैं। अिनकी भक्तिभावसे भरी कविताअें पढ़कर भक्तिकालका स्वरूप सामने आ जाता है। अिनका हृदय जितना सरल है भक्ति-भावना अुतनी ही गहरी। भक्तिप्रधान रचनाअें 'प्रेम-शतक', 'प्रेम-पथिक' और 'प्रेमांजलि' में मिलेंगी। पर राष्ट्रीय आन्दोलनोंमें सक्रिय भाग लेनेसे चरखेकी गूंज, चरखा-स्तोत्र, असहयोग वीणा आदिकी रचना की। साथ ही 'वीर-सतसअी' नामक अेक बड़ा काव्य दोहोंमें लिखा। अिसमें भारतके वीरोंकी प्रशस्तियाँ हैं। 'वीर-सतसअी' में वीर रसकी अपूर्व व्यंजना हुअी है जैसे—

जोरी नाँव सँग 'सिंह' पद करत सिंह बदनाम।
लैहौ कैसे सिंह तुम करि सृगालके काम ?

× × ×

या तेरी तरवारमें नहिं कायर अब आब।
दिन हू तेरो बुझि गयो, वामें नेक न ताब ॥

अिसी प्रकार बिहारीलालकी परंपरा व शैलीपर दोहे लिखनेवाले श्री दुलारेलालजी भार्गव हुअे। अिनके दोहोंमें भाषाकी सफाअी, भावोंकी प्रचुरता तथा प्रभाव अत्यधिक है। कुछ दोहोंमें देशभक्ति, अछूतोद्धार, राष्ट्रीय आन्दोलन अित्यादिकी भावनाका अनूठेपनके साथ समावेश किया हैं। अिनके दोहे 'दुलारे-दोहावली' में संग्रहीत हैं। अिन दोहोंका नमूना देखिअे—

झर सम दीजै देस हित झर-झर जीवन-दान।
रुकि-रुकि यों चरखा सरिस, देबौ कहा सुजान॥
गाँधी गुरु तें ज्ञान लै चरखा अनहद जोर।
भारत सबद तरंग पै बहत मुकुतिकी ओर॥

राय देवी प्रसाद पूर्ण 'ब्रजभाषा-काव्य परम्पराके अत्यन्त प्रौढ़ कवि थे। वे प्राचीन अेवम् नूतन दोनों ही विषयोंपर कविता करते थे। अिनकी रचनाओंका संग्रह 'पूर्ण-संग्रह' के नामसे प्रकाशित हो चुका है। पं. नाथूराम शंकर शर्मा नपे-तुले शब्दोंमें अर्थपूर्ण व्यंजना करनेमें अद्वितीय थे। अुनकी अुद्भावनाअें बड़ी अनूठी होती थीं तथा भाषा अति सुगठित अेवम् प्रवाहमय होती थी। वियोगका यह वर्णन देखिअे—

'शंकर' नदी नद नदीसनके नीरनकी,
भाप बन अम्बर तें अूँची चढ़ि जायगी।
दीनों ध्रुव-छोरन लौ पलमें पिघलकर
घूम घूम धरनि धुरि-सी बढ़ जायगी॥
झारैंगे अँगारे ये तरनि तारे तारापति
जारैंगे खमंडलमें आग मढ़ जाअेगी।
काहूविधि विधिकी बनावट बचैगी नहिं।
जो पै वा वियोगिनीकी आह कढ़ जाअेगी॥

अिनके अतिरिक्त सनेहीजी, रामनरेश त्रिपाठी, लाला भगवानदीनजी, पं. रूपनारायण पाण्डे, और पं. सत्यनारायण कविरत्नके नाम ब्रजभाषा कवियोंमें विशेष अुल्लेखनीय हैं। पं. वियोगी हरिके समान पं. सत्यनारायण कविरत्नने अपनी विशेष परिपाटी बनाअी। वह यह कि ये रीतिकालीन परम्पराको ग्रहण न करके या तो भक्तिकालके कृष्ण-भक्त कवियोंके ढंगपर चले हैं या भारतेन्दु-कालकी नूतन काव्य प्रणालीपर। अिनका रहना सहन, आचार-विचार अेकदम कृष्ण-भक्त कवियों जैसा था। जैसी सरल अिनकी वेश-भूषा थी वैसाही सरल अेवम् भाव-पूर्ण-जीवन। अिनकी ब्रजभाषाका स्वरूप अत्यन्त सजीव है। अिनकी विशेष अुल्लेखनीय रचना 'भ्रमर-दूत' है जोकि 'नन्ददास' के 'भँवरगीत' के ढंगपर लिखी गअी है। अेक विशेषताका समावेश अिसमें स्वतः हो गया है और वह है देशकी वर्तमान दशाका आभास। जैसे—

जे तजि मातृभूमि सों ममता होत प्रवासी
तिन्हें बिदेसी तंग करत दै विपदा खासी
नारी शिक्षा अनादरत जे लोग अनारी।
हे स्वदेस-अवनति प्रचंड-पातक-अधिकारी॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निरखि हाल मेरो प्रथम लेहु समझि सब कोओ ।
बिद्याबल लहि मति परम अबला सबला होओ ॥
लखो अजमाअि कै ।

अिसके साथ ही वात्सल्यपूर्ण हृदयकी भाव-पूर्ण व्यंजना, विरहका वेग आदिका निरूपण बड़ी कुशलतासे अिन्होंने किया है। जैसे—

"भयो क्यों अनचाहतको सँग ?"

तथा

लखि यह सुषमा-जाल लाल निजबिन नँदरानी ।
हरि सुधि-अुमड़ी घुमड़ीं तन अुर अति अकुलानीं ॥
सुधि बुधि तज माथौ पकरि, करि करि सोच अपार ।
दृगजल मिस मानहुँ निकरि बही बिरहकी घाट ॥
कृष्णा रटना लगी ।

कौने भेजौं दूत, पूत सों बिथा सुनावै ।
बातनमें बहराओ जाअि ताको यह लावै ॥
त्यागि मधुपुरीको गयो छाँड़ि सबनके साथ ।
सात समन्दर पै भयो दूर द्वारका नाथ ॥
जाअिगो को अुहाँ ।

अिस प्रकार ब्रजभाषा काव्यकी परम्परामें अनेक कवियोंने माँ-भारतीके चरणोंमें अपनी भाव-पुष्पांजलि समर्पित की जिसने भारतके भाव अेवम् विचारके आकाशमें छाअे कुहासेको हटानेमें यत्किंचित सहयोग दिया। आज भी अनेक कवि अिस सुमधुर भाषामें काव्य-रचनाकर हिन्दीके ललित-साहित्यकी श्री-वृद्धि कर रहे हैं।

गत १३ सितम्बरको नागपुरमें मध्यप्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके भवनका शिलान्यास महामहिम राष्ट्रपति डा. राजेन्द्रप्रसादजीने किया। राष्ट्रपति महोदय भवनकी आधारशिला रखते हुअे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सूचना—'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअे।)

राधा-कृष्ण—लेखक : राजेश्वरप्रसाद नारायण-सिंह, प्रकाशक : आत्माराम अेंड सन्ड, दिल्ली; पृष्ठ-संख्या १५७, दाम दो रुपया आठ आना।

अिस पुस्तककी भूमिका राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्तजीने लिखी है जिसमें पुस्तकके सम्बन्धमें कुछ लिखनेसे अुन्होंने अपने आपको बड़ी सफाअीसे बचा लिया है। यह पुस्तक कथा काव्य, प्रबन्ध काव्य, खण्डकाव्य, या काव्य संकलनमेंसे किस कोटिमें रखी जाअे यह अेक समस्या है। कथाका अभाव है अतः वह अूपर अुल्लेखित तीन श्रेणीयोंमें नहीं आती। फुटकर कविताओंका संकलन भी नहीं है।

प्रथम १२१ पृष्ठोंतक राधा मन-ही-मन अपनी विप्रलम्भ अवस्थापर विचार कर रही है। अुसे बार-बार कृष्णका ब्रजमण्डल छोड़कर चला जाना खटकता है, कृष्ण सम्बन्धी सारे मधुर संस्मरण स्मृतिपटलपर अुभर आते हैं यही सब राधाके मनोव्यापारके रूपमें कविने लिखा है। अिसके पश्चात शेष पृष्ठोंमें अुद्धवको सामने बिठाकर ब्रजमण्डल त्यागनेकी, कर्तव्य भावनापर प्रेम भावनाकी बलि चढ़ानेकी दुहाअी देते हैं। बस यही अिस काव्यमें अभिधा व्यंजक शैलीमें लिखा है। बरसों पहले स्व. 'हरिऔध' ने 'प्रिय प्रवास' लिखा, अुसके कुछ अंशोंको अिस पुस्तकके कविने फिरसे दुहरा लिया है। काव्य कौशलका अभाव खटकता है। अिस पुस्तकका कवि जिस विषय-वस्तुको जिस प्रकारकी भाषाके माध्यमसे व्यंजित कर रहा है अुससे वस्तु और भाषा काफी आगे बढ़ चुकी है। राधा जैसे सरस विषयपर हिन्दीमें थोड़ा परन्तु काफी लिखा गया है। लेखककी पुस्तक अिस दिशामें बहुत पिछड़ा प्रयास लगती है। रासका अुल्लेख करते हुअे राधा कविके शब्दोंमें कहती है....

मुक्तद्वार हो महारास की
यह शाश्वत मधुशाला।

अिसमें कृष्ण-गोपियोंके रासको 'महारासकी मधुशाला' कहना सांस्कृतिक रुचिके विपरीत है। वैसे ही कृष्णके निकल जानेको राधा कविके शब्दोंमें सम्बोधित करती है,

बनजारोंसे निकल चले वे
बीती ज्यों ही रात,

कृष्णके मथुरागमनको बंजारोंकी तरह निकल जाना कैसे कहा जा सकता है? क्या राधाके जमानेमें बंजारा जाति भारतमें विद्यमान थी?

फूल, बच्चा और जिन्दगी—लेखक : देवेन्द्र अिस्सर, प्रकाशक : साहित्य संगम लुधियाना, पृष्ठ-संख्या १६८, दाम तीन रुपअे।

देवेन्द्र अिस्सरकी सोलह कहानियोंके अिस संग्रहमें जीवनके व्यथा-ग्रस्त, पीड़ित क्षणोंका विवरण है। लेखकने अपनी प्रत्येक कहानीमें आधुनिक जीवनकी यन्त्रणापूर्ण स्थितियों, भयंकर निराशाओं और मौतकी परछाअियोंको बांधनेकी कोशिश की है। कोशिश में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अिसलिअे कह रहा हूँ कि अभी वह पूरी तरह सधकर कहानियोंमें जीवनके अिन क्षणोंको ढाल नहीं सका है।

अधिकांश कहानियां निराशाके दम घोटनेवाले माहौलसे अुठकर अैसी जगह समाप्त हो जाती है जहांसे लेखक कोअी मंतव्य नहीं प्रकाशित कर पाता। अैसी अनर्थमूलक निराशा जीवनको क्या दे सकती है? यदि जीवनका यही रूप चित्रित करना लेखकके लिअे जरूरी है तो फिर वह भाषाके माध्यमसे अैसे पैने नश्तर चुभाअे कि समाजका पाठकवर्ग तिलमिलाकर रह जाअे। लेखक दोनों दिशाओंकी अपेक्षा बीच ही में कहीं खो जाता है। 'चनारका पेड़', 'जीवन शून्य और मृत्यु', 'आनन्दा', 'ब्लैक मैजिक', 'कोअी भी अेक आदमी' अैसी ही कहानियां हैं। वैसे लेखकने अिन कहानियोंमें हलकासा संकेत कर दिया है जो मेरे विचारमें पर्याप्त नहीं है। अितनी बड़ी जीवन व्यापी व्यथाकी परिणतिपर हलकीसी खीझ अपर्याप्त है। 'फूल, बच्चा और जिन्दगी', 'मकानकी तलाश', 'जेल', 'मारग्रेट' आदि कहानियां अिस संग्रहकी सफल कृतियां हैं।

आशा है कहानीकार जीवनके अिस अंगपर अधिक सशक्त, पैनी तथा प्राणप्रद कथाकृतियां सृजनकर हिन्दीका भण्डार भरेगा।

—अनिल कुमार

राष्ट्रभारती-विज्ञापन दर

साधारण पृष्ठ	पूरा — ४०)	प्रतिबार	तृतीय कवर पृष्ठ	पूरा — ८०)	प्रतिबार
,,	आधा — २५)	,,	,,	आधा — ४५)	,,
द्वितीय कवर पृष्ठ	पूरा—१००)	,,	चतुर्थ कवर पृष्ठ	पूरा - १२०)	,,
,,	आधा — ५५)	,,	,,	आधा — ७०)	,,

राष्ट्रभारतीकी साअिज—९½"×७"

छपे पृष्ठकी साअिज—८"×६½"

तीनसे अधिक बार विज्ञापन देनेवालोंको विशेष सुविधा दी जाअेगी।

'राष्ट्रभारती'में अपने व्यापारका विज्ञापन देकर लाभ अुठाअिअे। क्योंकि यह कश्मीरसे लेकर रामेश्वरतक और जगन्नाथपुरीसे द्वारकापुरीतक हजारों पाठकोंके हाथोंमें पहुँचती है।

राष्ट्रभारती-अेजेन्सी

१. प्रतिमास कम-से-कम पाँच प्रतियाँ लेनेपर ही अेजेन्सी दी जाअेगी।
२. पाँच प्रतियाँ लेनेपर २०) प्रतिशत कमीशन दिया जाअेगा।
३. छहसे अधिक प्रतियाँ लेनेपर २५) प्रतिशत कमीशन दिया जाअेगा।
४. पाँचसे अधिक ग्राहक बना देनेवालोंको भी विशेष सुविधा दी जाअेगी।

विशेष जानकारीके लिअे आज ही लिखिअे :—

श्री प्रबन्धक, "राष्ट्रभारती" पो० हिन्दीनगर (वर्धा, म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

112552

निवेदन !

अिस दिसम्बरके अंकसे 'राष्ट्रभारती' का छठा वर्ष समाप्त हो जाता है। अिन पिछले ६ वर्षोंमें जिन मनस्वी मनीषी लेखकों और कवियोंने कृपादृष्टि रखकर अपनी रचनाअें भेजीं, हमारा अुत्साह बढ़ाया, राष्ट्रभाषा हिन्दी अेवं विभिन्न समृद्ध भारतीय भाषाओंकी सेवाके हेतु राष्ट्रभारतीका सम्मान किया, और हमें अपना हार्दिक सहयोग दिया, अुन सबके प्रति हम किन शब्दोंमें अपनी कृतज्ञता प्रकट करें? अुनकी रचनाओंका हमें अभिमान है। आशा और विश्वास है कि विद्वान् लेखक, कलाकार कवि और समर्थ समालोचक राष्ट्रभाषा हिन्दी और 'राष्ट्रभारती' के प्रति अपने अुच्च अुज्ज्वल अुत्तर-दायित्वको ध्यानमें रखकर हिन्दीके श्रेय और प्रेयकी साधनामें हमें अपना सहयोग देंगे। थोड़ेसे भयके साथ संकोचपूर्वक हम करबद्ध हो अुन सब बन्धुओंसे भी क्षमा-याचना करते हैं जिनकी रचनाअें नहीं प्रकाशित हो सकीं और हमने अुनके चित्तको विक्षुब्ध कर दिया। आशा है वे हमें क्षमा करेंगे। साहित्य-सेवाके क्षेत्रमें आज-कल जो दलबन्दियाँ चल रही हैं, हम अुनसे सदैव दूर रहे हैं और रहेंगे। राष्ट्रभारतीको हम सच्चे अर्थमें राष्ट्रभारती बनाना चाहते हैं। हमें पूरा विश्वास है कि विद्वानोंका सहयोग हमें मिलेगा।

साहित्य-सेवामें शील-संयम :

यह राष्ट्रभाषा हिन्दीके निर्माणका युग है। हिन्दीका संक्रान्ति काल है। भारतकी राष्ट्रभाषा शीघ्र ही अपनी समयावधिमें समृद्ध होकर राष्ट्रीय गौरव और वैभवको प्राप्त हो, यह हम सब चाहते हैं। हिन्दी अब केवल हिन्दीवालोंकी ही नहीं रह गअी, वह कश्मीरसे लेकर कन्याकुमारी और आसामकी कामाख्यासे लेकर सौराष्ट्रके सोमनाथ तक फैले हुअे अिस भारत राष्ट्रकी राष्ट्रभाषा बन रही है। यद्यपि हिन्दी राष्ट्रभाषाके पदपर प्रतिष्ठित की गअी है किन्तु अुसका पथ अब भी कण्टकाकीर्ण है। विभिन्न क्षेत्रोंसे और विभिन्न विद्वानों द्वारा हिन्दीकी अुपेक्षा और अँग्रेजीकी हिमायत की जा रही है। अैसे नाजुक समयमें हिन्दी सेवकोंका अुत्तरदायित्व और बढ़ जाता है। अुन्हें चाहिअे कि कैसी भी परिस्थितिमें अपने दिल और दिमागका सन्तुलन न खो बैठें—और राष्ट्रभाषाके अिस रचनात्मक कार्यमें पहलेसे भी अधिक सजग रहकर योगदान दें।

यह देखकर दुख होता है कि हिन्दी-संसारमें जितने गम्भीर वातावरणकी आज आवश्यकता है वैसा नहीं है। साहित्यकारोंमें दलबन्दियाँ हैं और ये दलबन्दियाँ संस्थाओंको भी दल-दलमें डाल रही हैं। हिन्दी संसारकी यह स्थिति दूसरोंकी दृष्टिमें अेक अुपहासका विषय है। हिन्दीवालोंको कम-से-कम अब तो सजग हो जाना चाहिअे।

हिन्दीका रथ चल रहा है। अिसको हमें निरन्तर अुच्च अुदात्त पथपर ले जाना है। हमारी जरा-सी असावधानीसे हिन्दीका रथ अुत्पथगामी हो जाअेगा। हिन्दीके रथको चलानेवाले हिन्दी-सेवक सचेत हों। साहित्यकार सचेत हों। साहित्य और साहित्यकारमें निहित शीलसौजन्यकी रक्षा हो। राष्ट्रभारतीके सातवें वर्षमें प्रवेश करते समय हम यही मंगल कामना करते हैं।

—हृ० श०

× × ×

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रलिपिका प्रश्न :

श्री अड्यालकर तथा श्री सुब्रह्मण्यम्की संयुक्त लेखनीसे लिखा गया 'राष्ट्रभाषाके लिअे राष्ट्रलिपि' शीर्षक लेख अिस अंकमें अन्यत्र छपा है। अुनका सुझाव है कि राष्ट्रभाषाके सम्बन्धमें जिस प्रकार हमारे संविधानमें स्पष्टीकरण किया गया है अुसी प्रकारका स्पष्टीकरण राष्ट्रलिपिके सम्बन्धमें भी होना नितान्त आवश्यक है। परन्तु वे भूल जाते हैं कि भारतीय संविधान धारा ३४३ (१) के अनुसार देवनागरी लिपिमें लिखी जानेवाली हिन्दीको ही राजभाषा—राष्ट्रभाषा स्वीकार किया गया है। अिसलिअे अब लिपिके सम्बन्धमें भी कोअी विवाद नहीं होना चाहिअे। परन्तु विवाद करनेवालोंके लिअे तर्ककी कोअी कमी नहीं होती। बालकी खाल निकालनेमें वे चतुर होते हैं और रोमन लिपिके समर्थक अधिकतर अंग्रेजी शिक्षाप्राप्त विद्वान हैं अिसलिअे वे सरलता-पूर्वक अपना आग्रह छोड़नेके लिअे कभी तैयार न होंगे। भाषा विशेषज्ञ डा. सुनीति बाबू जैसे विद्वान भी रोमनके समर्थक हैं परन्तु अुन्होंने अिस सम्बन्धमें आग्रह-पूर्वक कुछ लिखना अभी छोड़ दिया है। परन्तु दूसरे विद्वान तो अिस सम्बन्धमें कुछ-न-कुछ कहते तथा लिखते ही रहते हैं।

संविधानमें देवनागरी लिपिमें लिखी जानेवाली हिन्दीका स्पष्ट अुल्लेख होनेसे लिपिके सम्बन्धमें अब नअे सिरेसे कोअी बात सोचनेकी आवश्यकता नहीं है, परन्तु रोमनके समर्थकोंकी दलीलें कितनी प्रबल हैं और हमारी लिपिमें वे क्या दोष निकाल सकते हैं और अुनकी आलोचनामें कितना तथ्य है यह हमें अच्छी तरह समझ लेना चाहिअे। यही कारण है कि हमने अुपरोक्त लेखक-द्वयके लेखको 'राष्ट्रभारती' में स्थान दिया है। हमें अुनके तर्कोंका अुचित अुत्तर भी देना है और अुनके तर्कोंमें यदि कुछ तथ्य हो तो अुसका स्वीकार कर हमें अपनी लिपिको अधिक कार्यक्षम तथा अुपयोगी भी बनाना है।

यह सन्तोषकी बात है कि लेखक-द्वय हमारी वर्णमालाका स्वीकार करते हैं। रोमनके समर्थक सम्भवतः सभी विद्वान देवनागरी वर्णमालाका स्वीकार करते हैं क्योंकि वह वैज्ञानिक वर्णमाला है और अुसके अक्षरोंका सीधा सम्बन्ध अुच्चारणके साथ है। अुच्चारणको शुद्ध रूपसे प्रकट करनेमें हमारी वर्णमाला अत्यन्त कार्यक्षम तथा अुपयोगी सिद्ध हुअी है। अिसलिअे अुसका अिन्कार करना सम्भव नहीं है। पर वर्णमालाके अक्षरोंके चिन्होंके बारेमें आज जो नागरी अक्षर प्रचलित हैं अुनसे अुन्हें सन्तोष नहीं। हम भी मानते हैं कि हमारी वर्तमान आवश्यकताओंको देखते हुअे आज अक्षरोंके जो चिह्न प्रचलित हैं अुनसे किसीको भी पूर्ण सन्तोष न होगा। परन्तु अुसके स्थानपर जब वे रोमन अक्षरोंके चिह्नोंको सुझाते हैं तब हमें आश्चर्य भी होता है और दुख भी। अिसका भी कारण है। जैसे कुछ विद्वानोंको अंग्रेजीका मोह है अुसी प्रकार कुछ थोड़े विद्वानोंको रोमन अक्षरोंका भी मोह है। यही कारण है कि रोमन अक्षर शुद्ध अुच्चारणको प्रकट करनेमें नागरी जैसे कार्यक्षम और अुपयोगी नहीं और अुनकी अिस त्रुटिको वे स्वीकार करते हैं फिर भी वे रोमन अक्षरोंमें ही परिवर्तन करके अुसे कार्यक्षम बनानेके लिअे प्रयत्नशील हैं। नागरी अक्षरोंमें कुछ थोड़े प्रयत्नसे ही अुससे भी अधिक अुन्हें कार्यक्षम बनाया जा सकता है। पर यह बात अुन्हें कभी सूझती नहीं; और यदि सूझती भी है तो अुससे अुनके मनकी तृप्ति नहीं होती। अिसे हमारी भाषाओं, देश, तथा समाजका दुर्भाग्य ही कहा जा सकता है।

अब लेखक-द्वयके 'ठोस मनीय सुझावों' को देखें। ये सुझाव अूपरसे देखनेमें ठोस होनेपर भी अन्दरसे बिल्कुल खोखले हैं यह अुन्हें विचारपूर्वक परखनेका यत्किंचित प्रयत्न करनेसे ही स्पष्ट हो जाअेगा।

स्वरोंके सम्बन्धमें अुनका सुझाव है कि पांच स्वर जो रोमन लिपिमें हैं अुनपर बिंदी या रेखा देकर अुनसे ग्यारह या अुससे भी अधिक स्वरोंके अुच्चारण प्रकट किअे जा सकते हैं। परन्तु राष्ट्रभाषा प्रचार समिति तो अेक 'अ' स्वरको मानकर अुसपर मात्राअें लगाकर अुससे सब स्वरोंके अुच्चारणका कार्य ले रही है। यह हम स्वीकार करते हैं कि अुत्तर प्रदेशके अैसे बहुतसे अपरिवर्तन-वादी विद्वान तथा शिक्षा-निष्णात हैं जो अिस प्रकारके परिवर्तनको स्वीकार नहीं करते। अिस प्रकारके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिवर्तनसे नागरी लिपिमें कोअी अन्तर नहीं आता और बहुत सरलता हो जाती है और रोमन तथा अुसके अक्षरोंपर बिन्दी तथा आड़ी रेखाअें चढ़ानेकी झंझट भी मिट जाती है। लेखक-द्वयके सुझाअे रोमन व्यंजनोंमें कुछ अक्षरोंके लिअे दो-दो अक्षरोंका अुपयोग करना होगा जैसे ख, घ, छ, झ के लिअे। अिन अक्षरोंके लिअे देवनागरीमें अपने अलग चिन्ह हैं परन्तु अुन्हें कम करनेमें लेखक-द्वय सरलता देख रहे हैं। पर हमारी दृष्टिमें अुससे सरलता न होगी, कठिनाअी ही बढ़ेगी। ख, घ का शुद्ध अुच्चारण करनेमें अधिकतर गलतियां होंगी। कोअी क्ह, ग्ह अुच्चारण करेंगे और भाषामें विकृति आ जाअेगी। बिन्दु तथा रेखाओंसे अुच्चारणोंको बदलनेमें भी अिसी प्रकारकी कठिनाअियाँ आअेंगी। आज भी हिन्दीमें ज़रूरका जरूर हो गया है, क़ाफ़िलाका काफला हो गया है। और अुर्दूके बारेमें जैसा कहा जाता है, अिसमें भी बिन्दियोंका लिखना अक्सर छूट जाया करेगा। अिन बिंदियोंके छूट जानेके कारण जैसे वहां 'अजमेर गअे' का 'आज मर गअे' हो जाता है, वही बात रोमनमें लिखी हिन्दीमें भी होगी।

अिन लेखकोंका अेक और विचित्र तर्क है। वे कहते हैं कि 'हमारी प्रान्तीय भाषाओंका आजका साहित्य देखिअे। नाटक, लघुकथा, आलोचना, निबन्ध, अेकांकी सभी शैलियोंमें हमने पाश्चात्य देशोंकी हूबहू नकल करनेकी रत्तीभर भी कसर न रखी।' अिसीलिअे क्या वे रोमन लिपिकी भी नकल करनेकी सिफारिश कर रहे हैं? अिससे प्रतीत होता है कि नकलकी वृत्ति अिनके मनपर किस प्रकार अधिकार जमाअे हुअे है। साहित्यके अमुक प्रकारोंको आधुनिक आवश्यकताके अनुसार हमारे साहित्यमें अपनाया गया है अिसलिअे क्या हम अपनी लिपि तथा भाषा भी छोड़ देंगे? और अैसी नकलमें कोअी लाभ भी तो हो। रोमनके चिह्न हमारे देशकी प्रकृतिके भी अनुकूल नहीं। हमारी लिपिमें खड़ी रेखाओंकी अपेक्षा अर्धवृत्त रेखाओंका अुपयोग अधिक है और अुसीके कारण भारतकी भिन्न-भिन्न लिपियोंकी सृष्टि हुअी है। और 'ख, घ, छ, झ' को 'क' के साथ 'ह' (अेच्) मिलाकर लिखनेसे मुद्रणके कार्यमें भी कुछ सुविधा न होगी। हाथके कंपोजमें अुसके लिअे दों बार हाथ चलाना होगा और टंक-मुद्रणमें अुंगलीकी दो ठेस लगानी होगी। आज भी अंग्रेजीमें जहां डबल अेल होता है वहां अुसके लिअे अुसके खानेमें जुडा हुआ डबल अेल रखा जाता है। अुसी प्रकार 'ख' आदिके लिअे भी खाने रखने होंगे। फिर भी हम मानते हैं टंकमुद्रणमें तथा दूरमुद्रणमें कुछ सुविधा हो सकती है। परन्तु देवनागरीमें भी अुचित परिवर्तन करनेपर वह लिपि भी वैसे ही सुविधाजनक बनाअी जा सकती है। लेखक-द्वय यह भी भूल जाते है कि रोमन लिपिमें चार प्रकारकी--पहलीसे चौथी तककी लिपियाँ सीखनी पड़ती हैं। और हमारे देशकी सारी परम्परा बदलनेमें कितनी कठिनाअियाँ होंगी अुसका अुन्हें कुछ ख्याल नहीं। संयुक्ताक्षरोंके सम्बन्धमें भी भय रखनेकी आवश्यकता नहीं। अगले अक्षरको हलन्त करके अब संयुक्ताक्षर लिखनेकी परिपाटी स्वीकार कर ली गअी है।

हां, कलम अुठाअे बिना लिखनेकी अिस लिपिमें अधिक सुविधा होगी यह हम स्वीकार करते हैं। परन्तु हम अुसे बहुत बड़ा गुण नहीं मानते, विशेषकर अिस जमानेमें। वैसे तो गुजराती, मोड़ी आदि लिपियोंमें, जो देवनागरीसे अधिक भिन्न नहीं, बिना कलम अुठाअे बखूबी लिखा जा सकता है। परन्तु अिस प्रवृत्तिमें बहुतेरे लेखनकार्य सुवाच्य नहीं रहते और बिना अभ्यासके पढ़नेमें बड़ी कठिनाअी होती है। और अब जब टंकमुद्रण आदिका प्रयोग अधिकाधिक हो रहा है अिस प्रकार लिखनेकी प्रवृत्ति स्वयम् ही कम होती जा रही है। टंकमुद्रण, दूरमुद्रण अथवा मुद्रणमें तो कोअी अक्षरोंको मिलाकर लिखनेकी बात कहेगा नहीं। अर्थात् सुवाच्य और सुन्दर लिखना ही हमारा आदर्श होना चाहिअे।

अब यह प्रश्न है कि अन्तर-राज्य तथा अन्तर-राष्ट्रीय लिपिके विचारसे रोमनको स्थान देना क्या आवश्यक होगा? यूरोपके प्रभावके कारण आजतक रोमनका राज्य सब जगह चलता रहा है। हमारे देशके सैनिकोंमें भी अंग्रेजोंने यही लिपि चलाअी थी और मिशनरियोंने भी जहां-जहां वे गअे अिसी लिपिका प्रचार किया है। अलग-अलग प्रदेशोंकी भाषाओंको तो अुन्होंने सीखा, अुनमें कुछ काम भी किया परन्तु अधिकतर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अशिक्षितोंको अुन्होंने रोमन लिपि ही सिखाअी और अुसीका प्रचार किया। परन्तु अब अेशिया तथा आफ्रिकामेंसे अुनका प्रभाव कम हो रहा है। अभी अंग्रेजीका प्रभाव तो बाकी है परन्तु वह भी समय बीतते कम हो जाअेगा। अुस समय यदि हिन्दीको अवसर मिला तो भारतकी अन्तरराज्यीय भाषा तो वह होगी ही, पर प्रयत्न करनेपर, यह भी सम्भव है कि वह अेशिया-आफ्रिकाकी अन्तर-राष्ट्रीय भाषा भी बन जाअे। हिन्दीके साथ अुसकी देवनागरी लिपि भी जाअेगी। परन्तु अिसका आधार हमारी सेवाओंपर है। राष्ट्रके निर्माणमें हिन्दीका कितना अुपयोग होता है अुसपर अुसके विकासका आधार रहेगा और अन्तर-राष्ट्रीय क्षेत्रमें भारत शान्ति और सहयोगकी दिशामें कितनी सेवा कर सकता है और अपने पड़ोसी राष्ट्रोंकी अुन्नतिमें कितना और कैसा हाथ बँटाता है अुसपर हिन्दीके अन्तर-राष्ट्रीय रूपका आधार रहेगा। हिन्दी तथा देवनागरीको हमें अब निरर्थक विवादोंसे बचा लेना चाहिअे। अिसीमें देशका, राष्ट्रका तथा समाजका हित है।

—मो० भ०

'राष्ट्रभारती' के नियम और अुद्देश्य

१. 'राष्ट्रभारती' प्रतिमास १ ता० को प्रकाशित होती है।

२. 'राष्ट्रभारती' भारतकी विशुद्ध अन्तर-प्रान्तीय भाषा, साहित्य और संस्कृतिकी प्रतिनिधि पत्रिका है।

३. 'राष्ट्रभारती' का अुद्देश्य समस्त अुच्च भारतीय भाषाओंके प्राचीन अर्वाचीन साहित्यक भारतकी राष्ट्रभाषा हिन्दी द्वारा रसास्वाद कराना है, जिससे वह सब भारतीयोंकी अपनी वस्तु बन सके।

४. 'राष्ट्रभारती' का दृष्टिकोण प्रगतिशील, रचनात्मक, सर्व समन्वय—सर्वोदयकारी है। अिसमें विवादग्रस्त, राजनीतिक, साम्प्रदायिक, या दल-गत नीतिके लेख आदि प्रकाशित न होंगे।

५. 'राष्ट्रभारती' में हिन्दीके साथ साथ—

(१) असमिया (२) मणिपुरी (३) बंगला (४) अुड़िया (५) नेपाली (६) काश्मीरी (७) सिन्धी (८) पंजाबी (९) गुजराती (१०) मराठी (११) तमिल (१२) तेलुगु (१३) कन्नड़ (१४) मलयालम (१५) संस्कृत (१६) अुर्दू और अन्तर-राष्ट्रीय विदेशी साहित्यिक भाषाओंकी सुन्दर ज्ञानपोषक, मनोरंजक, सुरुचिपूर्ण श्रेष्ठ रचनाअें भी प्रकाशित होंगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीका स्वतंत्र मासिक--

"नया समाज"

पढ़िअे

देश-विदेशकी राजनीति, सांस्कृतिक अेवं कला-प्रवृत्तियोंकी चर्चा, साहित्य, समाज और पाठकोंके मतोंका विहंगावलोकन तथा सम-सामयिक गतिविधिपर विचार आदि अिसके प्रमुख अंग हैं।

वार्षिक ८) ★ अेक प्रति ।।।)

'नया समाज' कार्यालय,

अिण्डिया अेक्सचेंज (३ तल्ला)

कलकत्ता।

गुजरात प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी

साहित्यिक-त्रैमासिक-पत्रिका

"राष्ट्रवीणा"

सम्पादक : जेठालाल जोषी

विद्वानोंके चिंतन-प्रधान लेख गुजरातीके साहित्यिक, सांस्कृतिक, कला विषयक लेख, कविताअें, प्रवास वर्णन, परीक्षोपयोगी लेख, आदि ठोस सामग्रीके अलावा चयनिका, संस्कृति-स्रोत, आदि कअी स्तम्भ नियमित प्रकाशित होते हैं। पत्रिका जनवरी, अप्रैल, जुलाअी अेवं अक्टूबरमें नियमित प्रकाशित होती है।

वार्षिक मूल्य : ४) अेक प्रति : १)

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धाके सक्रिय प्रचारकों अेवं केन्द्र-व्यवस्थापकोंको पत्रिका (डाक-व्ययके ।।) अतिरिक्त लेकर) आधे मूल्यमें भेजी जाती है।

गुजरात प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, कालूपुर, खजूरीकी पोल, अहमदाबाद-१।

:: युगचेतना ::

साहित्य, संस्कृति और कलाकी

प्रतिनिधि मासिक पत्रिका

-: सम्पादन समिति :-

डा. देवराज, कुंवरनारायण, कृष्णनारायण

कक्कड़, तापनारायण टंडन,

डा. प्रेमशंकर

वार्षिक ८), अर्धवार्षिक ४),

१ प्रति १२ आना

पता :--

"युगचेतना" कार्यालय,

स्पोर्ट-बिल्डिंग, ला प्लास, लखनऊ।

मासिक पत्रिका

:: नया पथ ::

२२, कैसर बाग ● वार्षिक ६)

लखनऊ अेक प्रति ।।)

स्तम्भ--

चक्कर क्लब ● साहित्य-समीक्षा

संस्कृति-प्रवाह ● हमारे सहयोगी

लेख ● कहानियाँ ● कविताअें

--: सम्पादक :--

यशपाल ★ शिव वर्मा

राजीव सक्सेना

'नाटक अंक' की प्रति सुरक्षित कराअें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सस्ता साहित्य मंडल नई दिल्ली
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९५६ के हमारे नवीन प्रकाशन

(सूचना:— राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धाके प्रमाणित प्रचारक विभिन्न प्रांतोंमें अन पुस्तकोंका खूब प्रचार करें)

१. गांधी श्रद्धांजलि ग्रंथ	(सर्वपल्ली राधाकृष्णन्)	३)
२. धरती और आकाश	(छोटू भाओी मुथार)	१।)
३. देवदासी	(बोरकर)	२)
४. कित्तूरकी रानी	(अ० न० कृष्णराव)	२)
५. मेरी जीवन यात्रा	(जानकीदेवी बजाज)	२)
६. अुपनिषदोंका अध्ययन	(विनोबा)	१)
७. हमारा कानून	(रामस्वामी अय्यर)	५)
८. क्रांतिकी भावना	(क्रोपाटकिन)	२॥)
९. तुकाराम गाथा-सार	(सं० नारायण प्रसाद जैन)	२)
१०. पुण्यकी जड़ हरी	(आदर्श कुमारी)	१॥)
११. नव प्रभात	(विष्णु प्रभाकर)	१)
१२. ध्वनिकी लहरें	(ब्रह्मानन्द, नरेशवेदी)	१॥)

गांधीजीने कहा था

१३. खादी पहनो		।)
१४. शिक्षा अैसी हो		।)

संस्कृत साहित्य सौरभ

१५. रत्नावली	(कथासार)	।=)
१६. प्रियदर्शिका	(,,)	।=)
१७. वासवदत्ता	(,,)	।=)

समाज विकास माला

१८. सन्त ज्ञानेश्वर	।=)	१९. धरतीकी कहानी	।=)
२०. राजा भोज	।=)	२१. अीश्वरका मंदिर	।=)
२२. गांधीजीका संसार-प्रवेश	।=)	२३. ये थे नेताजी	।=)
२४. रामकृष्ण परमहंस	।=)	२५. कब्रोंका विलाप	।=)
२६. रामेश्वरम्	।=)	२७. समर्थ रामदास	।=)
२८. मीराके पद	।=)	२९. मिलजुलकर काम करो	।=)
३०. काला-पानी	।=)	३१. पावभर आटा	।=)

तुलसी राम कथा

३२. राम जन्म	।=)	३३. धनुष यज्ञ	।=)
३४. राम विवाह	।=)		

अिन तथा अन्य पुस्तकोंकी विशेष जानकारीके लिअे अेक कार्ड लिखकर हमारा विस्तृत सूची-पत्र मंगा लें।

पत्ता:—सस्ता साहित्य मंडल, नअी दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
रजिस्टर्ड नं० ना० १५

भारतीय साहित्यकी प्रतिनिधि-पत्रिका

राष्ट्रभारतीके प्रेमी पाठकोंसे निवेदन

जो सज्जन ग्राहक हैं और 'राष्ट्रभारती' को नियमित पढ़ते हैं अुनसे हमारा यह निवेदन है :--

गत जनवरी-१९५६ से राष्ट्रभारतीने छठे वर्षमें प्रवेश किया है। भारतके और देश-विदेशके भारतीय साहित्यके प्रेमी विद्वान् साहित्यकारोंने मुक्त-कंठसे 'राष्ट्रभारती' की प्रशंसा की और अुसमें लिखना शुरू किया।

'राष्ट्रभारती' को अबतक जो कुछ सफलता और लोकप्रियता मिली है, यह अुसके प्रेमी रसिक पाठकों और कृपालु लेखकोंके स्नेह तथा सहयोग-दानका फल है। यदि आप चाहते हैं कि 'राष्ट्रभारती' राष्ट्रकी, राष्ट्रभाषाकी और विविध समृद्ध समग्र भारतीय साहित्यकी स्वावलम्बी होकर, अच्छी तरह सेवा करती रहे तो आप सबका हार्दिक सक्रिय सहयोग तुरन्त अुसे मिलना चाहिअे और वह अितना ही कि--

आप तो अिसके स्थाअी ग्राहक, पाठक, बने ही रहें, साथ ही आप अपने अिष्ट-मित्रों, परिचितोंमेंसे भी कम-से-कम दो नअे ग्राहक राष्ट्र-भारतीके लिअे अवश्य बना दें और मनीआर्डरसे प्रतिग्राहक ६) रु. चन्दा भिजवा दें।

'राष्ट्रभारती' को हिन्दी अेवं प्रादेशिक भाषाओंकी सेवाके लिअे शीघ्र ही पूर्ण स्वावलम्बी बनाना है। आअिअे, आप हमारा हाथ बँटावें।

रियायत :-- समितिके प्रमाणित प्रचारकों, शिक्षकों, कोविद, राष्ट्र. रत्न, विशारद और साहित्य-रत्नके विद्यार्थियों, केन्द्र-व्यवस्थापकों तथा सभी सार्वजनिक पुस्तकालयों, वाचनालयोंके लिअे और स्कूल-कालेजोंके लिअे केवल ५) वार्षिक चन्दा रखा गया है। अतः वे ५) रु. मात्र म० आ० से भेजें।

पता:--व्यवस्थापक,

'राष्ट्रभारती', हिन्दीनगर, वर्धा

मुद्रक तथा प्रकाशक--मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस--राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

76039

Compiled
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri